॥ श्री कृष्ण शरणं मम ॥

पुराण उपवन का कल्पतरु

श्री कृष्ण चरितामृत

रचनाकर्त्ता

ज्योतिष वाचस्पति पंडित बजरंगलाल ज्योतिष शास्त्री
''दैवज्ञ रत्नाकर''
निवासी- कोटा (राजस्थान)

संकलन कर्त्ता

पंडित लक्ष्मण स्वरूप शर्मा
सहायक मंडल यांत्रिक अभियन्ता (सेवा...
पश्चिम रेलवे रतलाम

—※— प्रकाशक —※—

श्रीमती पुष्पलता शर्मा
"पुष्पायन"
३७, राजेन्द्र नगर, रतलाम ४५७००१, (म.प्र.)
दूरभाष (०७४१२) २३७८३८

॥ श्री कृष्ण शरणं मम ॥

निवेदन

'पुरा नवं भवति इति पुराणम्' — जो प्राचीन होकर भी नित्य नवीन है वह पुराण है'।
... के अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि ब्रह्माजी ने वेदों की ही भाँति पुराण विद्या का
... किया और तब वह ज्ञान परम्परा से वेद व्यास तक पहुँचा। उन्होंने लोक मंगल के लिये
... विद्या का प्रकाशन किया। वस्तुतः वह जनता जो वेदों के दुरूह अर्थ तक नहीं पहुँच पाती
..., उसके लिये पुराण अत्यंत उपयोगी रहे।

अठारह पुराणों में श्री मद्भागवत् महापुराण परम महत्वपूर्ण है। यह पुराण अपनी ज्ञान गरिमा
... द्वारा युगों से लोगों के चित्त को सम्मोहित करता आ रहा है। श्रीमद्भागवत को विद्वत्ता की
...टी एवं विद्या का अक्षय भंडार माना जाता है। यह पुराण अपने अनुपम काव्य सौंदर्य, शब्द
...र्य एवं अर्थ गांभीर्य के कारण पुराण उपवन में कल्पतरु के समान शोभित होता है।

भक्तों के लिये श्री मद्भागवत साक्षात् भगवान का स्वरुप है। इसमें सकाम कर्म, निष्काम
..., साधन भक्ति, साध्यभक्ति, वैधी भक्ति, प्रेमाभक्ति, मर्यादा मार्ग, अनुग्रह मार्ग, द्वैत, अद्वैत
... द्वैताद्वैत आदि का परम रहस्य अतीव मधुरता के साथ अभिव्यंजित हुआ है। यह ज्ञान सुधा
...वं भगवान के प्रेमरस का अथाह सागर है। यह आशीर्वादात्मक ग्रन्थ भी है। इसके अध्ययन
...नन तथा चिन्तन से लौकिक तथा पारलौकिक अनेक प्रकार की सिद्धियाँ प्राप्त होती है इसमें
... प्रकार के अमोघ प्रयोगों के उल्लेख हैं, जैसे "नारायण कवच" से समस्त विघ्नों का नाश
... विजय प्राप्ति, "पुसंवन व्रत" से समस्त कामनाओं की पूर्ति (स्कन्ध ६)। "गजेन्द्र
..." से ऋण मुक्ति तथा शत्रुओं से छुटकारा, "पयोव्रत" से मनोवांछित संतान की प्राप्ति
(स्कन्ध ८)।

श्रीमद्भागवत का काव्य सौंदर्य बेजोड़ है। कोमल, स्निग्ध, सरस तथा गंभीर पदावली इसकी प्रमुख विशेषता है। हृदय पक्ष की प्रधानता होने पर भी कलापक्ष कहीं पर दुर्बल नहीं है। मथुरा व द्वारका का वर्णन जितना कलात्मक है, उतना ही यथार्थ है भयानक युद्धों का चित्रण। ऋतु वर्णन में आध्यत्मिकता एवं प्रकृति सौंदर्य का पावन संगम है।

मानव का भाव सौंदर्य तथा मनोवैज्ञानिक चित्रण दशम स्कंध के उन स्थलों में अपनी चरम सीमा पर पहुंच गया है, जिन्हें गीत कहते हैं। वेणुगीत, गोपीगीत, युगल गीत, भ्रमर गीत तथा महिषी गीत, इन ललित गीतों में कवि की वाणी सहृदयों के हृदय में उस मोहक रस की रचना करती है, जिसे समालोचक "भागवतरस" के नाम से पुकारते हैं।

सम्पूर्ण विश्व के ऋषि, मुनिजन, विद्वज्जन इस बात से पूरी तरह सहमत है कि भव सागर से मुक्ति प्राप्ति हेतु श्रीमद्भागवत् ही परमोत्तम ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ में चार वेद, छःशास्त्र एवं अष्टादश पुराण का सार निहित है। वेद के गूढ़ आशय, वेदान्त रहस्य, सांख्य योग का सार, मीमांसा का विचार, न्याय का सिद्धान्त इस ग्रन्थ में दिखाकर सर्वोपरि भगवद्भक्ति की महिमा

वर्णन की है। चौवीस अवतारों का विस्तृत वर्णन एवं योगीराज श्रीकृष्ण चन्द्र भगवान के जन्म से लेकर गौलोक प्रस्थान तक सजीव चित्रण किया गया है जिसके श्रवण मात्र से प्राणीसव प्रकार के भवबंधन से मुक्त हो जाता है।

महर्षि वेद व्यास ने स्वयं इसकी रचना कर अपने व्यग्रचित्त को शांत किया। इसके श्रवणपान से राजा परीक्षित ने सात दिन में मोक्ष प्राप्त की, गोकर्ण का भ्राता धुन्धुकारी प्रेत योनि से मुक्त होकर वैकुण्ठ को गया। सूतजी के द्वारा शौनकादि इसे सुनकर मुक्त हुये। यह कथा अमृत है, संतप्त प्राणियों को जीवनदान करती है। समस्त पाप तापों को हरने वाली है, श्रवण मात्र से मंगल कारिणी है। जो पुरुप स्त्री भक्ति भाव से इस कथा को विस्तार से गाते है अथवा श्रवण करते हैं वे पूर्वजन्म में वहुत सा दान करने वाले हैं, वड़े पुण्यात्मा है। वे सभी इस जन्म में अपनी अभिलाषित मनोकामना को प्राप्त होते हैं।

श्री शुकदेवजी के मुख से निकसित श्री मद्भागवत रूपी सरिता अविरल जगत को पावन कर रही है।

आज कल प्रायः हर नगर एवं गाँव में आये दिन श्री मद् भागवत सप्ताह परायण होते रहते हैं। आदि काल से यह गूढ़ ग्रन्थ संस्कृत भाषा में है वाद में हिन्दी टीकाकरण किया गया। सरल सहज भाषा में उपलब्ध न होने के कारण अभी भी रामचरित मानस के सदृश यह ग्रन्थ जनमानस में इतना लोक प्रिय स्थान नहीं ग्रहण कर सका है।

जैसे दो तीन वर्ष का शिशु गन्ने को चवाकर उसका रस ग्रहण नहीं कर सकता किन्तु निचोड़े गए रस को सरलता से पीसकता है उसी प्रकार सामान्य जनों की सुगमता के लिए इस गूढ़ ग्रन्थ के रसपान हेतु रामचरित मानस के सदृश अत्यंत सरल रोचक एवं ओजस्वी शव्दों में चौपाई, दोहा, छन्द, सोरठा, में अनुवाद रूपी रस निचोड़ा गया है ताकि जन साधारण, सन्यासी, विद्वज्जन, शिक्षित, अल्पशिक्षित स्त्री पुरुप वालक, अमीर गरीव सभी वर्ग के लोग इसके रस पान का उचित लाभ ग्रहण कर सकें। शव्दों का चयन सहज भाषा में किया गया है। पठन पाठन के साथ ही अर्थ सरलता से समझ में आ जाता है।

यह अनुवाद श्रीमद्भागवत सप्ताह पारायण के माहात्म्य एवं द्वादश स्कंधों के आधार पर किया गया अनूठा प्रथम प्रयास है। आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास है कि यह ग्रन्थ शीघ्र ही जनमानस में विशाल वटवृक्ष का रूप लेगा। हर संभव प्रयास किया गया है कि कोई त्रुटि न रहे फिर भी किसी भी प्रकार की त्रुटि के लिये हम अपने विज्ञ पाठक महानुभावों से क्षमा प्रार्थना करते हैं और "**श्री कृष्ण चरितामृत**" विनम्र भाव से भगवान की सेवा में अर्पण करते हैं।

"पुष्पायन"
३७, राजेन्द्र नगर
रतलाम (म.प्र.)

विनीत

लक्ष्मण स्वरूप शर्मा

प्रेषक : सचिव,
पू.पाद जगद्गुरू शंकराचार्य महाराज

श्री द्वारका
शारदापीठम्
द्वारका . गुजरात. भारत
टॅलीफॉनः (०२८९२) ३४०६४, फॅक्स : ३४४५६

दिनांक : २४ - १२ - ०३
स्थान : द्वारका

स्वस्ति श्री लक्ष्मण स्वरूप शर्मा जी
पुष्पायन, ३७, राजेन्द्र नगर,
रतलाम (म.प्र.) ४५७००१

पूज्यपाद जगद्गुरू शङ्कराचार्यजी महाराज का
नारायणात्मक मङ्गल आशीर्वाद

आप द्वारा ११-१२-०३ का प्रेषित पत्र पाकर ज्ञात हुआ कि निकट भविष्य में आपके विद्वान पिता ज्योतिपाचार्य श्री बजरंगलालजी द्वारा अनूदित हिन्दी-पद्यात्मक-टीका शीघ्र प्रकाशित होने जा रही है।

यह जानकर परम प्रसन्नता का अनुभव हुआ क्योंकि श्री मद्भागवत महापुराण, सनातन-हिन्दु-धर्म ही नहीं प्रत्युत् समग्र वैदिक परम्परा रूपी परिपक्व आम्रफल का रसात्मक परिणाम है। अतः इस पवित्र कार्य से लोक व परलोक दोनों ही दृष्टियों से पुण्य की प्राप्ति होगी। ऐसे पावन कार्य के लिए पण्डितजी के लिए पूज्य गुरुजी की ओर से आशीर्वाद प्रेषित करते हुए हम उनके दीर्घायु व सुस्वास्थ्य हेतु भगवान द्वारकाधीश एवं भगवान चन्द्रमौलीश्वर से प्रार्थना करते हैं।

श्री द्वारकाशारदापीठाधीश्वर एवं बद्रीनाथज्योतिष्पीठाधीश्वर
जगद्गुरू शंकराचार्यजी महाराज की आज्ञा से

(स्वामी सदानन्द सरस्वती)
मंत्री श्री शारदापीठ, द्वारका

श्री कृपा

प्रभु प्रेमी संघ चेरीटेबल ट्रस्ट

मुख्यालय : प्रभु प्रेम आश्रम, जगाधरी रोड़, अम्बाला छावनी–१३३००६ (हरियाणा)
फोन : (०१७१) २६६६३३५, २६६६३६७

Website :
www.prabhuterm.org.in
www.hariharasram.org

email:
Prabhuterm@hotmail.com
hariharasram@hotmail.com

संस्थापक
जूनापीठाधीश्वर
आचार्य महामण्डलेश्वर अनन्तश्री विभूषित
स्वामी अवधेशानन्द गिरिजी महाराज

श्रीः कृपा

सम्माननीय श्रीयुत लक्ष्मण स्वरूपजी

सादर ॐ नमो नारायणाय !

आपका पत्र पाकर प्रसन्नता मिली।

आपके पूज्य पितु ने जीवन भर सहित्य सृजन कर समाज का उपकार किया। श्री मदभागवत पर उनका कार्य अनुकरणीय एवं स्तुत्य है। श्री कृष्ण चरिताऽमृत के प्रकाशन पर मेरी हार्दिक शुभकामनाएं।

सभी को सादर प्रभु स्मरण

शेष प्रभु कृपा

शुभेच्छु

आचार्य अवधेशानन्द ॐ

श्री हरिद्वार आश्रम
कनखल, हरिद्वार – २४९४०८ (उ.प्र.)
फोन: (०१३३४) २४६६७४

श्री मृत्युंजय मठ
डी ३७/६ टेढ़ी नीम, गोधुल्या चौक,
वाराणसी-२२१००१ (उ.प्र.) फोन: (०५४२) २३२७२०६

श्री मृत्युंजय मठ
मोटी छिपवाड़ा
बड़ौदा (गुजरात)

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

" अथ श्री कृष्ण चरितामृत "

विषयानुक्रमणिका प्रारम्भ

	विषय	पृष्ठ संख्या

श्री मद्भागवत माहात्म्य

अथ प्रथम स्कन्ध

अथ द्वितीय स्कन्ध

अथ तृतीय स्कन्ध

अथ चतुर्थ स्कन्ध

अथ पञ्चम स्कन्ध

अथ षष्ठ स्कन्ध

अथ सप्तम स्कन्ध

अथ अष्टम स्कन्ध

अथ नवम स्कन्ध

विषय	पृष्ठ संख्या
(१७) पुरुरवा के ज्येष्ठ पुत्र आयु के पुत्रों का वंश वर्णन।	४६
(१८) राजा नहुष के पुत्र ययाति चरित वर्णन।	४७
(१९) ययाति के द्वारा शोक व गृह त्याग वर्णन।	५२
(२०) पूरुवंश वर्णन, दुष्यंत भरत चरित वर्णन।	५३
(२१) भरतवंश में रन्ति देव चरित वर्णन।	५६
(२२) दिवोदास वंश वर्णन, ऋक्ष वंश में पांडवो की उत्पत्ति वर्णन।	५८
(२३) अनु, द्रुह्यु, तुर्वसु, यदुवंश वर्णन।	६३
(२४) विदर्भ के तीन पुत्रों का जन्म, रामकृष्ण तक अनेक वंश वर्णन।	६६

अथ दशम स्कन्ध (पूर्वार्द्ध)

अथ दशम स्कन्ध (उत्तरार्ध)

विषय	पृष्ठ संख्या
(५२) बलराम, श्री कृष्ण का द्वारका गमन, बलराम विवाह, रुक्मिणी द्वारा श्री कृष्ण को ब्राह्मण द्वारा संदेश भेजना।	१०
(५३) श्री कृष्ण का कुण्डिन पुर जाना, रुक्मिणी हरण वर्णन।	१२
(५४) यादवों के साथ संग्राम में चैद्यादिक राजाओं की पराजय, रुक्मिणी विवाहोत्सव वर्णन।	१६
(५५) प्रद्युम्न का जन्म, शम्बरासुर वध वर्णन।	१९
(५६) स्मयन्तक उपाख्यान, जाम्बवती और सत्यभामा का पाणिग्रहण वर्णन।	२३
(५७) सत्राजित वध , शतधन्वा वध स्मयन्तक मणि हरण, अक्रूर का पलायन वर्णन।	२५
(५८) श्री कृष्ण का कालिन्दी, मित्रविन्दा, सत्या, भद्रा लक्ष्मणा आदि से पाणिग्रहण वर्णन।	३०
(५९) मुर वध, भौमासुर वध, भौमासुर द्वारा हरण की गई सोलह हजार राज कन्याओं का विवाह, कल्प वृक्ष हरण वर्णन।	३२
(६०) रुक्मिणी की मान लीला, श्रीकृष्ण रुक्मिणी संभाषण वर्णन।	३६
(६१) श्री कृष्ण संतति वर्णन, अनिरुद्ध विवाह, रुक्मी वध वर्णन।	४२
(६२) ऊषा व अनिरुद्ध समागम, अनिरुद्ध का बन्धन वर्णन।	४६
(६३) श्री कृष्ण व बाणासुर संग्राम, ऊषा विवाह वर्णन।	४८
(६४) राजा नृग का उद्धार।	५१
(६५) बलराम का ब्रज गमन, यमुना कर्षण वर्णन।	५५
(६६) पौंड्रादिकों का वध, सुदर्शन चक्र से वाराणसी दहन वर्णन।	५८
(६७) बलराम द्वारा द्विविद वानर वध वर्णन।	६०
(६८) साम्ब विवाह, बलराम द्वारा हस्तिनापुर कर्षण वर्णन।	६२
(६९) नारद मुनि का द्वारका आगमन श्री कृष्ण की भिन्न–भिन्न कक्ष में भिन्न – भिन्न गृहस्थ लीला दर्शन।	६५
(७०) श्री कृष्ण की राजसूय यज्ञ देखने के लिए इन्द्रप्रस्थ जाने की इच्छा।	७२
(७१) उद्धव जी सम्मति से श्रीकृष्ण का इन्द्रप्रस्थ जाना, वहाँ मय सभा निर्माण वर्णन।	७३
(७२) राजसूय यज्ञ उपक्रम, पाण्डवों की दिग्विजय, भीमसेन द्वारा जरासन्ध वध वर्णन।	७६
(७३) जरासन्ध के मरने के पश्चात् सब राजाओं को कारागर से छुड़ाकर अपने अपने देश भेजना।	७८

विषय	पृष्ठ संख्या
(७४) राजसूय यज्ञ में भगवान की अग्रपूजा सभारम्भ, शिशुपाल द्वारा भगवान हेतु निन्दित वचन, शिशुपाल वध वर्णन।	८२
(७५) राजसूय यज्ञ के अन्त में अवभृथ स्नान महोत्सव, मय द्वारा निर्मित युधिष्ठिर की सभा में दुर्योधन की अवमानना वर्णन।	८५
(७६) शाल्व व यादवो का युद्ध वर्णन।	८७
(७६) भगवान द्वारा सौभ सहित शाल्व का विनाश।	९१
(७८) दन्तवक्त्र, विदूरथ वध, बलराम द्वारा सूत का शिरश्छेद वर्णन।	९२
(७९) बल्वल वध, सूत हत्या निवारण हेतु बलराम जी का तीर्थ भ्रमण वर्णन।	९४
(८०) सुदामा उपाख्यान, पत्नी की प्रेरणा से सुदाम का श्रीकृष्ण के पास जाना, श्री कृष्णद्वारा सुदामा का सत्कार वर्णन।	९७
(८१) सुदामा के तन्दुल चबाकर उसे त्रिलोकी की सम्पदा देना, सुदामा का वापिस अपनी नगरी आकर भगवान द्वारा दिये ऐश्वर्य प्राप्ति पर भगवान का वात्सल्य गुणगान वर्णन।	१००
(८२) श्री कृष्ण का सूर्य ग्रहण के समय कुरुक्षेत्र में जाना, वहाँ पर नन्दादिक, गोप गोपियों का मिलना।	१०४
(८३) श्री कृष्ण व युधिष्ठिर संगम, श्री कृष्ण की पत्नियों का द्रौपदी से अपने अपने विवाह वर्णन।	१०७
(८४) ऋषिगण द्वारा श्रीकृष्ण स्तुति, वसुदेव द्वारा यज्ञोत्सव वर्णन।	११२
(८५) देवकी की प्रार्थना पर श्री कृष्ण द्वारा अपनी माता के मृत पुत्रों को लाने का वर्णन।	११८
(८६) अर्जुन द्वारा सुभद्राहरण, भगवान द्वारा श्रुतदेव को प्रसन्न करना।	१२०
(८७) नारायण व नारद संवाद, वेदस्तुति वर्णन।	१२५
(८८) वृकासुर का वध, रुद्र महादेव का संकट मोचन वर्णन।	१३७
(८९) भृगुकृत त्रिदेव परीक्षण, सब देवों में विष्णु का श्रेष्ठ पाया जाना, अर्जुन के साथ महाकाल पुर जाकर ब्राह्मण के मृत पुत्रों को लाना।	१३९
(९०) संक्षेप में श्रीकृष्ण लीला, यदुवंशियों की असंख्याता का वर्णन द्वारका वर्णन।	१४४

अथ एकादशम स्कन्ध

(१) यदुवंशियों का विप्रशाप वर्णन।	१
(२) देवर्षि नारद द्वारा वसुदेवजी को उपदेश, निमि व नवयोगेश्वर संवाद रूप में भागवत धर्म व भागवत लक्षण का वर्णन।	४

अथ द्वादश स्कन्ध

***

॥ श्री कृष्ण चरितामृत पाठ विधि ॥

श्री कृष्ण चरितामृत का विधिपूर्वक पाठ करने वाले महानुभावों ,

पाठारम्भ के पूर्व श्री व्यासजी, शुक़देवजी, श्रीकृष्णचन्द्र भगवान एवं श्रीकृष्ण चरितामृत ग्रन्थ का सादर सविनय एवं भक्ति भाव से आवाहन, षोडशोपचार पूजन और ध्यान करना चाहिये। पाठ आरम्भ से पूर्व "ॐ नमो भगवते वासुदेवाय" इस द्वादशाक्षर मन्त्र एवं "ॐ क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजन-वल्लभाय स्वाहा" इस गोपाल मंत्र का १०८ बार जप करें एवं पश्चात् विनियोग करें।

अथ विनियोग:

ॐ अस्य श्रीकृष्ण चरितामृताख्य स्तोत्र मंत्रस्य नारद ऋषिः, बृहतीछन्दः, श्रीकृष्ण परमात्मा देवता, ब्रह्मा बीजम्, भक्तिः शक्तिः ज्ञान वैराग्ये कीलकम्, मम श्रीमद् भगवत्प्रसाद सिद्ध्यर्थे पाठे विनियोगः ॥

अथ ऋष्यादि न्यास:

'नारदर्षये नमः' शिरसि । 'वृहतीच्छन्दसे नमः' मुखे ।
'श्रीकृष्ण परमात्म देवतायै नमः हृदि। ब्रह्म बीजाय नमः गुह्ये।
'भक्ति शक्तये नमः' पादयोः ।
ज्ञान वैराग्य कीलकाय नमः नाभौ।
'श्रीमद् भगवत्प्रसाद सिद्ध्यर्थक पाठ विनियोगाय नम' सर्वाङ्गे।

हृदयादि न्यासः

ॐ क्लां हृदयाय नमः । ॐ क्लीं सिरसे स्वाहा ।
ॐ क्लं शिखायै वषट् । ॐ क्लैं कवचाय हुम् ।
ॐ क्लौं नेत्राभ्यां वौषट् । ॐ क्लः अस्त्राय फट् ।

अथ कर न्यासः

ॐ क्लां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः । ॐ क्लीं तर्जनीभ्यां नमः ।
ॐ क्लूं मध्यमाभ्यां नमः । ॐ क्लैं अनामिकाभ्यां नमः ।
ॐ क्लौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः । ॐ क्लः करतल कर पृष्ठाभ्यां नमः।

अथ ध्यानम्

कस्तूरीतिलकं ललाटपटले वक्षःस्थले कौस्तुभं
नासाग्रे वरमौक्तिकं करतले वेणुः करे कङ्कणम् ।
सर्वाङ्गे हरिचन्दनं सुललितं कण्ठे च मुक्तावली
गोपस्त्रीपरिवेष्टितो विजयते गोपालचूड़ामणिः ।।
अस्ति स्वस्तरुणीकराग्रविगलत्कल्पप्रसूनाप्लुतं
वस्तु प्रस्तुतवेणनाद लहरी निर्वाणनिंर्व्याकुलम् ।
स्रस्तस्रस्तनिबद्धनीविविलसद्गोपीसहस्रावृतं
हस्तन्यस्तनतापवर्गमखिलोदारं किशोराकृति ।।

इस प्रकार ध्यान करने के पश्चात श्रीकृष्ण चरितामृत का पाठ आरम्भ करें ।

॥श्री गणेशाय नमः ॥

॥ श्री राधा वल्लभो विजयते ॥

॥ श्री मद्भागवत् महिमा ॥

दोहा- **व्यास मुनि शुकदेव को, वन्दो वारम्वार ।**
गुरु गोवर्धन लाल के, पद पंकज हियधार ॥१॥ क
वरणों श्री मद्भागवत की, महिमा इस तौर ।
श्रोता गण मिलकर इसे, श्रवण करो कर गौर ॥१॥ ख
भरतखंड के वीच में, तीरथ रहे अनेक ।
तीर्थ नैमिषारण्य भी, उनमें पावन एक ॥१॥ ग

चौ- रहते वहाँ सूत मुनि राई । निज शिष्यन का संघ बनाई ॥१॥
एक दिवस श्री सूत दुआरे । जाकर शौनकादि मुनि सारे ॥२॥
सूत मुनि से वचन उचारे । भक्ति व ज्ञान बढ़ावन हारे ॥३॥
उन वृजचन्द कृष्ण की गाथा । श्रवण करावहु हे मुनि नाथा ॥४॥
वाढ़े श्रवण करे ते भकती । मिलही ज्ञान वाद में मुकती ॥५॥
आयो कलियुग घोर करारा । भयउ ज्ञान नष्ट अव सारा ॥६॥
क्रोध लोभ के अतिवश होई । सुख से रहे सके नहिं कोई ॥७॥
आठो पहर इसी में भारी । दुख से अति व्याकुल नर नारी ॥८॥
उनका कष्ट छुड़ाने कारन । कोई कथा करो मुनि वरणन ॥९॥
शौनकादि की यो सुन वाता । वोले सूत मुनी विख्याता ॥१०॥

दोहा- **धन्य धन्य तुम मुनिश्वरों, धन्य है प्रश्न तुम्हार ।**
जो तुमने आकर यहाँ, पूछा प्रश्न उदार ॥२॥ क
काल रूपी व्याल के, वदन परे है जोय ।
उनकी रक्षा करन को, शुक गाथा शुभ होय ॥२॥ ख

चौ- दीन्हो श्रृङ्गी शाप नृपाला । तज तव राज काज उस काला ॥१॥
आये भागीरथी किनारे । रिषि मुनि सह शुक वहाँ पधारे ॥२॥
वहँ शुक देव नृपति के ताँई । आकर तव यह कथा सुनाई ॥३॥
अमृत घट लेकर सुर सारे । शुक मुनि के नजदीक पधारे ॥४॥
अमृत घट यह लेउ मुनिशा । पान कराउ परीक्षित ईशा ॥५॥
विनिमय में हमको मुनि राऊ । हरि गाथामृत पान कराऊ ॥६॥
वोले शुक यह सुधा तुम्हारी । कवन भाँति भी नहि गुणकारी ॥७॥

इस अमृत का करहि जे पाना । सुर सम उसकी वय परमाना ॥८॥
विधि के एक दिवस के अन्दर । वदले जात चतुर्दश इन्दर ॥९॥
इस अमृत से भी अति भारी । हरि गाथा मृत वर गुणकारी ॥१०॥

दोहा— **दिवस सात सुनकर इसे, जीव अमर हो जात ।**
आवागम से छूटकर, मुक्ति पदारथ पात ॥३॥

चौ- नृपति परीक्षित किसी प्रकारा । करे न अमृत पान तुम्हारा ॥१॥
तुम समान ये नही विलासी । हरिगाथामृत का अभिलासी ॥२॥
सुनी कथा मृत सहित मुनीशा । शनकादिक से देव ऋषीशा ॥३॥
इतनी कथा श्रवण कर सारी । बोले शौनकादि तपधारी ॥४॥
दो घटिका से भी अधिकाई । रुकते नहिं नारद मुनिराई ॥५॥
फिर सप्ताह भागवत कैसे । श्रवण करी नारद कहु तैसे ॥६॥
उनका दरसन भी अधिकाई । होवत नही किसी के तांई ॥७॥
मिले मुनि नारद से कैसे । यह सप्ताह भयो कहँ जैसे ॥८॥
कहो हाल यह सर्व ऋषीशा । यों सुन बोले सूत मुनीशा ॥९॥
एक समै शनकादि ऋषीश्वर । गये बद्रिका आश्रम ऊपर ॥१०॥

दोहा— **जावत ही देखे वहाँ, नारद मुनी उदास ।**
तभी शीघ्र चारो ऋषी, गये उन्ही के पास ॥४॥

चौ. हे नारद तुम मलिन स्वरूपा । किस चिन्ता में वदन विरूपा ॥१॥
ऐसी कवन बात मुनिराई । जो न तुम्हार समझ में आई ॥२॥
उन प्रति नारद किये प्रणामा । बोले दीन बन्धु तपधामा ॥३॥
मोहीं जिसकी है अति चिन्ता । वरणन करों उसे भागवन्ता ॥४॥
काशी गोदावरी गया में । तीरथ राज प्रयागादिक में ॥५॥
सभी तीर्थ ऊपर कलियुग ने । ऐसे फँसा रहे नर इसने ॥६॥
सत्य दया तप दान अचारा । त्याग दिया मानव ने सारा ॥७॥
राखे उदर भरन की चिन्ता । बोले मानव झूठ अनन्ता ॥८॥
पाखंडी अरु होय अभागी । मात पिता सेवा सब त्यागी ॥९॥
स्त्री साला से बढ़ कर कोई । रिश्तेदार नहीं उन होई ॥१०॥

दोहा— **मात पिता को त्याग कर, सास ससुर से स्नेह ।**
राखे वे दोऊ जने, समझ उसे ही गेह ॥५॥

चौ—धन लालच में मानव परहीं । नीच वंश में बेटी वरही ॥१॥

म्लेच्छ शूद्र उन्नत अधिकाई । द्विज क्षत्री निज धर्म गँवाई ॥२॥
विप्र वेद के बेचन हारे । नहि उपवीत कंठ में धारे ॥३॥
पंडित देखो महिष समाना । करते तिय सह रमण महाना ॥४॥
सुत उत्पति में दक्ष दिखावे । मुक्ति उपाय नही उन भावे ॥५॥
बेचत केश कुलीना नारी । बेचत जनपद अन्न अनारी ॥६॥
वणिकन ने निज धर्म गँवाया । शूद्रन सेवा कर्म तजाया ॥७॥
धर्म कर्म से सभी विहीना । देख भयो मन मोर मलीना ॥८॥
इत उतदेख चरित ये सारे । आवा मथुरा यमुन किनारे ॥९॥
बात एक यहँ अचरजकारी । लखी रोत युवती इक नारी ॥१०॥

दोहा— **उसी समय दो वृद्ध नर, देखे पड़े अचेत ।**
देख रही चारों तरफ, निज रक्षक के हेत ॥६॥

चौ. देखा वहाँ मुझे उन जैसे । खड़ी होय बोली वह वैसे ॥१॥
मेरे बड़े भाग्य मुनिराया । आज आपका दर्शन पाया ॥२॥
थोड़ी देर ठहर कर मोरा । सुन लो दुःख अरे अति घोरा ॥३॥
उस नारी के जाय समीपा । कहा वचन मैने अनुरूपा ॥४॥
तुम हो कवन कहाँ से आई । सत्य कहो तुम मुझे सुझाई ॥५॥
दोउ पुरुष जो परे अचेता । इनका हाल कहो मोहि हेता ॥६॥
यों सुनकर बोली वह नारी । मुझे भक्ति बोलत संसारी ॥७॥
यह वैराग्य ज्ञान सुत मोरे । सत्य वचन कहुँ सन्मुख तोरे ॥८॥
पाँच सात दीखत जो नारी । गंगा यमुन सुरसती सारी ॥९॥

दोहा— **नारिन का धर रूप ये, सब सरिता मुनिराज**
आई मिलकर के यहाँ, मम सेवा के काज ॥७॥

चौ. द्रविड़ देश मम जन्म बखाना । करणाटक में भई सयाना ॥१॥
दक्षिण कुछ दिन कियो निवासा । गुर्जर आकर वृद्ध उदासा ॥२॥
वृन्दावन में जब मैं आई । मम वय तरुण भई मुनिराई ॥३॥
पर यें दोनों पुत्र हमारे । इन कलियुग वासिन के मारे ॥४॥
घोर पाप करने के हेतु । हो गय वृद्ध व और अचेतू ॥५॥
नही नेत्र ये दोउ उघारे । मुख से भी नहि वचन उचारे ॥६॥
यहि कारन चिन्तातुर भारी । रहूँ उदास मंहा दुखियारी ॥७॥
सुत बढ़े तरुणी हो माई । करते उसकी जगत हँसाई ॥८॥

नारी रूप भकति ने सारा । वरणा हाल सहित विस्तारा ॥९॥
तव मैंने निज मति अनुसारी । कहा भक्ति प्रति सोच विचारी ॥१०॥
दोहा— आवा कलियुग घोर ये सुनो वचन तू मोर।
रही नही मरजाद यह, इस कारण से तोर ॥८॥
चौ. वैराग्य ज्ञान को कलि में कोई । जानत नहीं जगत में दोई ॥१॥
केवल तू वृन्दावन आई । यही कारण प्रकटी तरुणाई ॥२॥
इस कारण ये पुत्र तम्हारे । परे अचेतन अति दुखियारे ॥३॥
वोली भकति सुनो मुनिराई । यह कलि ऐसा दुष्ट अन्याई ॥४॥
राजा ने कर इस पर दाया । क्यों इस खल का प्राण तजाया ॥५॥
इसके ऊपर करके दाया । सवका धर्म व कर्म नसाया ॥६॥
क्यों नहिं इसको वधे महीशा ।वोले तव यों देव रिषीशा ॥७॥
सुनो भक्ति तू वात हमारी । कलि में नृप देखा गुण भारी ॥८॥
इस कारण नृप वध नहिं कीन्हा । सोच विचार उसे तज दीन्हा ॥९॥
अन्य युगन में वर्ष हजारों । करते जप तप यज्ञ अपारों ॥१०॥
दोहा— तदपि न दरसन दे नहीं, निज भक्तन को आय ।
केवल कीतन करत कलि, करुणाकरमिल जाय ॥९॥
छन्द— मिल जाय नारायण उसे, कलि वीच कीर्तन जो करे ।
नाम लेकर प्रेम से, भवसिन्धु से वह नर तरे ॥
नाम ही कलि काल में, पापी जनों का अघ हरे ।
किन्तु कलियुग वासियों, से नाम लेना ना सरे ॥१॥
दान लेकर तीर्थ में, द्विज नाँहि प्रायश्चित करे ।
काम क्रोध व लोभ आदिक, से नही कोई परे ॥
कपट झूठ अपार लम्पटता, कलि में सव भरे ।
नष्ट हो कलि धर्म, हरि का नाम उच्चारण करे ॥२॥
दोहा— इतनी सुनकर भक्ति ने, कहा धन्य मुनिराज ।
वड़े भाग्य से होगये, दर्श तुम्हारे आज ॥१०॥क
करूँ दंडवत मैं तुम्हे, ऐसा करो उपाय ।
ज्ञान विराग जवान हो, अरू मम दुःख नसाय॥१०॥ख
चौ- अव तू तज दे चिन्ता सारी । वोले वचन मुनी हितकारी ॥१॥

कृष्ण चरण का कर तू ध्याना । सुमिरण भजन और गुणगाना ॥२॥
सब संकट के टारन हारे । वे ही एक मनोहर प्यारे ॥३॥
द्रुपद सुता का चीर बढ़ाया । दुःशासन का मान घटाया ॥४॥
गज ऊपर जब संकट आया । ग्राह मार गजराज बचाया ॥५॥
तू वैकुंठ नाथ की भारी । प्राणन से भी ज्यादा प्यारी ॥६॥
नीच जाति में भी तू जाकर । करें निवास तदपि वहँ आकर ॥७॥
टारहिं उसका संकट सारा । कर दें बाद उसे निस्तारा ॥८॥
सत त्रैता द्वापर के वासी । कर तप मख मुक्ती अभिलासी ॥९॥
कलि में पाय अनुग्रह तोरा । मिटे जीव का संकट घोरा ॥१०॥

दोहा— यहाँ ज्ञान वैराग्य की, कोय न पूछो बात ।
इस कारन बूढ़े भये, इन दोनों के गात ॥११॥

चौ. तेरा दुःख मिटाने हारा । करों उपाय अरी मैं सारा ॥१॥
प्रकटाऊँ जग में तव महिमा । तब बढ़ जाय तुम्हारी सीमा ॥२॥
जिनके हिय में वास तुम्हारा । उसका भी तुहि एक सहारा ॥३॥
पापी होकर भी मम द्वारा । देखत नहि वह किसी प्रकारा ॥४॥
पापी भी पाकर तव दाया । जावत मोक्ष धाम तज काया ॥५॥
जप तप व्रत मख कर अतिदाना । मिलते शीघ्र नहीं भगवाना ॥६॥
हरि भक्ति के करने हारे । रहते सदा हरी के प्यारे ॥७॥
जिन किय तप मख वर्ष हजारी । पावत वे हरि भक्ति अपारी ॥८॥
परमेश्वर जब होवत राजी । निज भक्ति देवत उन काजी ॥९॥
जप तप मख से भी अधिकाई । सर्वश्रेष्ठ निज भक्ति बताई ॥१०॥

दोहा— तब मेरे से भक्ति ने, कही बात इस तोर ।
हे नारद तुम धन्य हो, सब मुनियन शिरमोर ॥१२॥

चौ- यथा आपने हे मुनिराया । धीरज मुझको आप बंधाया ॥१॥
करो काम अब तुम इक ऐसो । जागे ज्ञान विरागय जैसो ॥२॥
तब मैंने वे बहुत पुकारे । तदपि नयन उन नहीं उघारे ॥३॥
तब श्रुति गीता पाठ सुनाया । तब जाके कहिं नयन खुलाया ॥४॥
करी चाह उठने के हेतू । निर्बल वश पुनि भये अचेतू ॥५॥
जब मैंने देखा यह हाला । चिन्ता कर मैं भयो विहाला ॥६॥
क्यों नहि उठते ज्ञान विरागा । यों चिन्ता मैं करने लागा ॥७॥

इतने में भइ वहँ नभवानी । क्यों चिन्तित एते मुनि ज्ञानी ॥८॥
जागे नहिं ये बिनु सत्संगा । करो खोज साधुन गुण चंगा ॥९॥
यह सुन वचन वहाँ से आया । पर कहिं साधु श्रेष्ठ नही पाया ॥१०॥

दोहा- इस चिंता में मुनीश्वरों, मन मुख भयो मलीन ।
इतने में तुम आ गए, चारों मुनी कुलीन ॥ १३ ॥

चौ. पाकर दरसन मुनी तुम्हारा । भयो मनोरथ पूरण सारा ॥१॥
ब्रह्मा के सुत अति बड़योगी । ज्ञानी बाल अवस्था भोगी ॥ २ ॥
कथा रूप धन पास तुम्हारे । रहते सदा मुनीव्रत धारे ॥३॥
जग में कोई भयो नहि ऐसो । महिमा गाय तुम्हारी जैसो ॥४ ॥
हरि के द्वारपाल दोउ भाई । जय अरू विजय नाम जिन गाई ॥५॥
कीन्हा पतन वहाँ से भारी । ऐसी शक्ति रही तुम्हारी ॥६ ॥
कीन्ही जैसी मो पर दाया । दरसन देकर हे मुनि राया ॥७॥
वैसी दया भक्ति के ऊपर । करऊ ज्ञान विराग जगाकर ॥८॥
चार वर्ण के मानव सारे । गावहिं यश मुनि राजु तुम्हारे ॥९॥
कलियुग वासिन का भी पावन । हों मन शुद्ध जो रहा अपावन ॥१०॥

दोहा - यों सुन नारद के वचन, बोले सनत कुमार ।
अब सब चिंता त्याग दो, नारद परम उदार ॥१४॥

चौ. जेते रहे हरि के दासा । उन सब में तुम्ही अति खासा ॥ १॥
भकती दुःख छुड़ावन हारा । उचित हिं होय उपाय तुम्हारा ॥२ ॥
गाये प्रथम ऋषी मुनि सन्ता । धर्म ज्ञान के पन्थ अनन्ता ॥३॥
हरि धाम के हेत बनाये । किन्तु उपाय कठिन ये गाये ॥४॥
अब तो गुरु भी मिले न ऐसे । जो इस पंथ चलावत वैसे ॥५॥
गाये ऋषी मुनीश्वर सन्ता । धर्म ज्ञान के पंथ अनन्ता ॥६॥
हरि धाम के हेतु बनाये । किन्तु उपाय कठिन ये गाये ॥७॥
अब तो गुरु भी मिले न ऐसे । जो इस पंथ चलावत वैसे ॥८॥
सुने भागवत मानव कोई । मिले राह सुन्दर अघ धोई ॥९॥
जो गाथा श्री शुक मुनिराई । नृपति परीक्षित हेत सुनाई ॥१०॥

दोहा - उसी कथा के श्रवण ते, भक्ति ज्ञान वैराग ।
इन सबका संकट हरे, नहीं अन्य कोई लाग ॥१५॥

चौ.-इसके श्रवण करे सब तोरा । बाढे मन हरि चरणन ओरा ॥१॥

या ते उत्तम अन्य उपाया । देखन में हमको नहिं आया ॥२॥
यों सुन नारद वचन सुनाये । श्रुति गीता के पाठ पढाये ॥३ ॥
करके कोशिश बहुत जगाये । तदपि नहीं वे दोउ उठ पाये ॥४॥
कथा भागवत को वे सुनकर । जागहि कवन भाँति हे मुनिवर ॥५॥
यों सुन बोले सनत कुमारा । कथा भागवत सब श्रुति सारा ॥६॥
एक एक इसके पद अन्दर । भरा सार वेद का सुन्दर ॥७॥
पय बीचे माखन ज्यों रहता । किन्तु विनाश्रम नहीं निकलता ॥८ ॥
तब लगि माखन स्वाद न आवे । पय बीचे वह नहीं लखावे ॥९ ॥
उसी तोर सब वेद पुराना । मथकर व्यास देव भगवाना ॥ १०॥

दोहा - लिखा भागवत ग्रंथ में, सब श्रुतियन का सार ।
जान बूझ क्यों भूलते, मूल श्लोक वह चार ॥ १६॥

चौ-नारायण ने विधि प्रति गाये । ब्रह्मा ने वहि तुम्हें सुनाये ॥१॥
तुमने वेद व्यास के कारन । कीन्हे श्लोक चार जो वरणन ॥२॥
व्यास देव ने कर विस्तारा । वरणा ग्रंथ भागवत सारा ॥३॥
वहि वरणन सबका दुख टारे । भव जल निधि के पार उतारे ॥४॥
यों सुन नारद दोउकर जोरी । मुनियन की कर विनय बहोरी ॥५॥
मो पर दया कीन्ह तुम भारी । वरणन कियो हाल दुखहारी ॥६॥
बिना भाग्य साधुन सत्संगा । मिलती नहि हरि कथा प्रसंगा ॥७॥
अब यह कहो मुनीश्वर मोहीं । ज्ञान भागवत मख कहँ होहीं ॥८॥
कवन युक्ति अरु कति दिन होहीं । वरणन करो मुनी यह मोहीं ॥९॥
यो सुन बोले सनतकुमार । प्रश्न मनोहर रहा तुम्हारा ॥१०॥

दोहा- गंगा तट हरिद्वार पर, सुन्दर उत्तम स्थान ।
करो वहां पर श्रेष्ठ ये, भगवत चर्चा ज्ञान ॥१७॥

चौ.-वहाँ घनी वृक्षन की छाया । हमको स्थान उचित वहि पाया ॥१॥
ज्ञान यज्ञ के चाहन हारे । रहते वहाँ मुनीश्वर सारे ॥२॥
कथा रूप मख करत तुम्हारे ।छूटे दुःख भक्ति के सारे ॥३॥
वैराग्य ज्ञान भी पा तरुणाई । उठहिं वृद्धता तज दोउ भाई ॥४॥
यों सुन नारद वचन उचारे । यह मख होय न बिना तुम्हारे ॥५॥
इस कारण मुनि साथ हमारे । चलें आप भी गंग किनारे ॥६॥
यों सुन वचन सभी ऋषिराई । चले बद्रिका धाम तजाई ॥७॥

हरीद्वार गंगा तट ऊपर । आये नारद संग ऋषीवर ॥८॥
जो ऋषि मुनि वहँ करे निवासा । कही बात यह जा उन पासा ॥९॥
हे रिषियों सुन बात हमारी । करें भागवत मख यहँ जारी ॥१०॥
दोहा- **कथा रूप अमृत जिसे, पीना हो यहँ आय ।**
समाचार यह सुनत ही, आये रिषि मुनिराय ॥१८॥
चौ.-भृगु वशिष्ठ च्यवनादिक सारे । देवल गौत्तम वहाँ पधारे ॥१॥
विश्वामित्र पराशर व्यासा । आये ऋषि मुनि नारद पासा ॥२॥
मूर्तिमान श्रुतियाँ सब आई । गंगादिक सब सरित सिधाई ॥३॥
नाग यक्ष किन्नर गंधर्वा । चौदह भुवन निवासी सर्वा ॥४॥
गाथामृत के पीने हारे । ज्ञान यज्ञ में सभी पधारे ॥५॥
होय मुदित नारद ने सबको । आदर सहित बिठाये उनको ॥६॥
वैष्णव और विरक्त अपारा । करने लगे सभी जयकारा ॥७॥
शंख धुनी चहुँ ओर सुनाई । भये मुदित सारे समुदाई ॥८॥
तब सुर चढ़कर निज निज याना । करने आय कथामृत पाना ॥९॥
ज्ञान रूप यज्ञस्थल ऊपर । करी वृष्टि पुष्पन की सुन्दर ॥१०॥
दोहा- **श्रोतागण सारे वहाँ, करने लगे विचार ।**
लीला हरि की कौन सी, वरणहिं सनतकुमार ॥१९॥
चौ.-अब बोले मुनि सनत कुमारा । करो कथामृत पान हमारा ॥१॥
अब तुमको वह कथा सुनावे । नृपति परीक्षित प्रति शुक गाये ॥२॥
महापुराण भागवत सारा । गाये श्लोक हजार अठारा ॥३॥
पढने और श्रवण ते याके । मुकती हस्त खड़ी रह जाके ॥४॥
कथा भागवत के सम कोई । अपर पुराण फलद नहि होई ॥५॥
जो फल वाजपेय मख द्वारा । वाजि मेघ ते किसी प्रकारा ॥६॥
काशी गया त्रिवेणी ऊपर । कुरु क्षेत्र गोदावरि पुष्कर ॥७॥
इनका फल अति स्वल्प बताया । कथा भागवत का अधिकाया ॥८॥
जब लगि लोग अरे संसारी । सुनहीं नहीं कथा अघहारी ॥९॥
तब लगि पूर्व जन्म के सारे । गर्जहि आकर पाप पहारे ॥१०॥
दोहा- **श्रवण करत अमृत कथा, पाप सर्व भग जात ।**
सूर्योदय से जिस तरह, कुहरा शीघ्र नसात ॥२०॥
चौ.-प्रतिदिन श्लोक एक या आधा । पढें भागवत तज सब व्याधा ॥१॥

सुने सुनावे मानव कोई । पावत मुक्ति पदारथ सोई ॥२॥
कोटि जन्म के पाप अपारा । जलकर भस्म होत वह सारा ॥३॥
ग्रन्थ भागवत को यदि लेकर । धर कंचन सिंहासन ऊपर ॥४॥
करें साधु वैष्णव प्रतिदाना । करे तेहि निज सम भगवाना ॥५॥
जिसने मानव का तन पाकर । कथा भागवत सुनी न सुन्दर ॥६॥
उस मानव का जीवन सारा । धृक धृक तेहि बारम्बारा ॥७॥
सुना न जिन यह महापुराना । जानो तेहि चाण्डाल सामाना ॥८॥
ऐसे सुत की जो महतारी । उससे वन्ध्या श्रेष्ठ पुकारी ॥९॥
कलि में मख तप धर्म व दाना । पूजन भजन नहीं भगवाना ॥१०

दोहा- **इस कारण पर ब्रह्म ने, धर कर व्यास स्वरूप ।**
मानव के कल्याण हित, रचि यह कथा अनूप ॥२१॥

चौ- जो कोइ सात दिवस परयन्ता । चितधर सुने कथा यह सन्ता ॥१॥
व्रत जप तप मख के फल सारे । करके प्राप्त जात हरि द्वारे ॥२॥
उद्धव ने हरि से सुनकर ज्ञाना । कलियुग के लक्षण सब जाना ॥३॥
हरि पद पंकज के कर ध्याना । बोले उद्धव वचन प्रमाना ॥४॥
एक बात प्रभु मुझे बताऊ । जब तुम निज वैकुंठ सिधाऊ ॥५॥
हो उद्धार जीव का जैसे । साधन कहो प्रभो मोहि वैसे ॥६॥
बोले कृष्ण मनोहर प्यारे । सुन उद्धव तुम वचन हमारे ॥७॥
अब तुम जाउ बद्रिका आश्रम । करके वहाँ तपस्या उत्तम ॥८॥
होवहिं मुकती वहाँ तुम्हारी । सुनु यह निश्चित बात हमारी ॥९॥
मोरे जाने के उपरन्ता । कहूँ एक साधन अघहन्ता ॥१०॥

दोहा- **यहाँ भागवत रुप इक, मूरति रहे हमारि ।**
सात दिवस सुनकर इसे, उतरे नर भव पारि ॥२२॥

चौ.- सच्चे मन से सुनहि जे ये हि । मम दर्शन हो हिय में तेही ॥१॥
यह पारायण जग सुखकारी । ये ही एक महा अघहारी ॥२॥
इसके सम नहिं अन्य उपाया । किसी शास्त्र ने नहीं बताया ॥३॥
माया जाल छुड़ावे जोई । साधन श्रेष्ठ यही एक होई ॥४॥
सनत कुमार महामुनि राया । पारायण सप्ताह सुनाया ॥५॥
अमृत रुप कथा के द्वारा । छूटा दुःख भक्ति का सारा ॥६॥
वैराग्य ज्ञान वे दोनों भाई । तज वृद्धापन पा तरुणाई ॥७॥

भये सचेत जो पड़े अचेता । उठ बैठे दोउ हर्ष समेता ॥ ८ ॥
उनका कर दरसन सब श्रोता । परमानन्द बीच खा गोता ॥ ९ ॥
हरे मुरारे जय गोविन्दा । गाये सब मिल कर सानन्दा ॥ १० ॥

दोहा— **भक्ति ज्ञान वैराग्य का, दरसन कर नर नार ।**
बढ़ी भक्ति उनके हिये, कलिदुख नसा अपार ॥२३॥

चौ- सात दिवस की सुन कर गाथा । भये मुदित सन्त मुनिनाथा ॥ १ ॥
जब सब वैष्णव सहित ऋषीशा । भये एक चित वहाँ मुनीशा ॥ २ ॥
तब वृन्दावन बीच बिहारी । प्रकटे आकर कृष्ण मुरारी ॥ ३ ॥
ओढ़े वे पीताम्बर सुन्दर । कुंडल मुकुट सुशोभित मनहर ॥ ४ ॥
केशर चन्दन तिलक लगाये । उद्धवादि निज संग लिवाये ॥ ५ ॥
प्रकटे ज्ञान यज्ञ में आकर । दीन्हों निज दरसन अति सुन्दर ॥ ६ ॥
कर दरसन सबने भगवाना । निज निज जन्म सफल अति माना ॥ ७ ॥
आवत लखे मनोहर प्यारे । ठाढ़े भये ऋषी मुनी सारे ॥ ८ ॥
देखा जब हरि को निज आगे । जय जय कार उचारन लागे ॥ ९ ॥
चन्दन के पुष्पन को लेकर । वर्षा करी हरी के ऊपर ॥१०॥

दोहा— **धूप दीप नैवेद्य से, पूजन कर उपरान्त ।**
शंखादिक बाजा बजा, किय प्रणाम श्रीकान्त ॥ २४ ॥

चौ— परमानन्द देख यह सारा । बोले नारद सोच विचारा ॥ १ ॥
सप्ताह यज्ञ जो किया यहाँ पर । जिन जिन कथा सुनी यह सुन्दर ॥ २ ॥
अति पुनीत होकर वे सारे । जा पहुँचे मुक्ति के द्वारे ॥ ३ ॥
सुनकर अब ये अमृत गाथा । आगे कौन कौन मुनि नाथा ॥ ४ ॥
उतरे जो भव सागर पारा । वर्णन करो उन्हें तुम सारा ॥ ५ ॥
यों सुन बोले सनतकुमारा । हे नारद सुन वचन हमारा ॥ ६ ॥
कलियुग के मानव अति पापी । दुष्ट अधर्मी महा सुरापी ॥ ७ ॥
कामी क्रोधी अनृतभाषी । लोभी लम्पट चौर असाखी ॥ ८ ॥
सुन सप्ताह कथा ये सारे । जावहिं निश्चय हरि के द्वारे ॥ ९ ॥
मात पिता की करे न सेवा । कलियुग बीच नहीं उन देवा ॥ १० ॥

दोहा— **धर्म कर्म से हीन जो, लोभ मोह लवलीन ।**
ठग ज्वारी परतिय रमें, सुन यह कथा नवीन ॥ २५ ॥

चौ— हो जायें भव सागर पारा । देखे नहीं कभी यम द्वारा ॥ १ ॥

सुनो एक अब कथा पुरानी । नदी तुंगभद्रा सब जानी ॥ २ ॥
एक नगर में उसके तट पर । रहता आत्मदेव इक द्विज वर ॥ ३ ॥
तेजवान पंडित गुणवन्ता । धर्मवान धनवान अनन्ता ॥ ४ ॥
नाम धुन्धुली उसकी नारी । महा कर्कशा क्रोधित भारी ॥ ५ ॥
रात दिना संसारी माया । फँसी रहे बीचे द्विज जाया ॥ ६ ॥
निजपति को देती दुखभारी । लड़े परोसिन ते वह नारी ॥ ७ ॥
हरि इच्छा ये ही मन जानी । रहता उसके संग द्विज ज्ञानी ॥ ८ ॥
भयो वृद्ध द्विज तदपि न कोई । उसके घर संतति नहि होई ॥ ९ ॥
दान धरम व्रत किये अनेका । भई संतति तदपि न एका ॥ १० ॥

दोहा— **आत्म देव ब्राह्मण तदा, मन में होय उदास ।**
चला गया वन के विषै, तज जीवन की आस ॥ २६ ॥

चौ. फिरत फिरत इक देखि तड़ागा । आवा वहँ पर विप्र अभागा ॥ १ ॥
व्याकुल होय तृषा के मारे । पियो नीर जा ताल किनारे ॥ २ ॥
कियो स्नान बाद द्विज राया । पुत्र हेतु चिन्तित जिस काया ॥ ३ ॥
पाछे हरि इच्छा अनुसारी । आवा सन्यासी श्रुति धारी ॥ ४ ॥
आत्मदेव ब्राह्मण ने भारी । देखा यति अतुलित तप धारी ॥ ५ ॥
निज समीप जब उसे बिठाया । तब द्विज से यति वचन सुनाया ॥ ६ ॥
कहो विप्र तुम होय उदासा । बैठे वन बीचे किस आसा ॥ ७ ॥
निज चिन्ता का कारण सारा । सुनना चहूँ तुम्हारे द्वारा ॥ ८ ॥
यों सुन वचन नयन भरि वारी । दोऊ कर जोरे गिरा उचारी ॥ ९ ॥
पूर्व जन्म में पाप अपारा । यतिवर भयो हमारे द्वारा ॥ १० ॥

दोहा— **इस कारण मेरे नहीं, भयो पुत्र यति राज ।**
यही सोच में आगया, मरने को वन आज ॥ २७ ॥

चौ — होवत पुत्र नहीं घर जासू । गिरत पितर नरकन में तासू ॥ १ ॥
जग में पुत्र नहीं हो जासू । जीवन होत अकराथ तासू ॥ २ ॥
उसके धन कुल पर धिक्कारा । उस नर का हो नहि निस्तारा ॥ ३ ॥
मोहीं पुत्र लालसा लागी । मैं हूँ किन्तू महा अभागी ॥ ४ ॥
पालन करूँ गाय घर भीतर । वह भी वन्ध्या होय बराबर ॥ ५ ॥
वृक्ष लगाऊँ यदि मैं कोई । वह भी फल दाता नहि होई ॥ ६ ॥
क्रय करके कोई फल लाऊँ । घर आवत सूखा तोहि पाऊँ ॥ ७ ॥

यों कह कर यति वर से वानी । कियो विलाप नयन भर पानी ॥ ८ ॥
तव द्विज को अति धीरज देकर । बोले महापुरुष वे यतिवर ॥ ९ ॥
पुत्र हेत मैं करूँ विचारा । तजो उदासपना द्विज सारा ॥ १० ॥
दोहा— **महापुरुष ने विप्र की, कर्म रेख सब देख ।**
बोला द्विज तव भाग्य में, सुत की परी न रेख ॥ २८ ॥
चौ — सात जन्म तक हे द्विज राई । सुत उत्पत्ति नहीं दिखाई ॥ १ ॥
रोदन कर क्यों प्राण गवाऊ । माया ममता दूर भगाऊ ॥ २ ॥
सुख तो कहीं जगत के अन्दर । दीखत नहीं मुझे हे द्विज वर ॥ ३ ॥
सुत से सुख कलियुग के माँही । सबको कहिं पर नहीं दिखाही ॥ ४ ॥
मात पिता की करे न सेवा । माने नहीं उन्हों का खेवा ॥ ५ ॥
साले ससुर तथा निज नारी । इन सबकी आज्ञा सिर धारी ॥ ६ ॥
माता पिता को दुख दे भारी । देवत सुत उनके प्रति गारी ॥ ७ ॥
सुत भ्राता नारी परिवारी । ये सब मतलब के व्यवहारी ॥ ८ ॥
तदपि न अन्त समय संसारी । माया वश होकर अति भारी ॥ ९ ॥
स्त्री सुत में मन हो लवलीना । करे न हरि का स्मर्ण कुलीना ॥ १० ॥
दोहा— **इस कारण जा नरक में, भोगे दुःख महान ।**
सुत इच्छा को त्याग कर, करो भजन भगवान ॥ २९ ॥
चौ — सुनि यों महापुरुष मम वानी । बोला आत्मदेव नादानी ॥ १ ॥
पुत्र सिवाय मुझे यतिराई । सूझत ज्ञान ध्यान कुछ नाँई ॥ २ ॥
इतनी कृपा करो यति मोपर । एक पुत्र मुझको तुम देकर ॥ ३ ॥
नहि तो आज तुम्हारे ऊपर । त्यागूँ प्राण सुनो हे यतिवर ॥ ४ ॥
ऐसी देख दशा सन्यासी । बोला द्विज से तजो उदासी ॥ ५ ॥
चित्रकेतु नामक महिधारी । दश हजार व्याही जिन नारी ॥ ६ ॥
तदपि पुत्र का सुख नहि पाया । आखिर यों ही प्राण तजाया ॥ ७ ॥
नृपति बहुत से सुत अभिलासी । पाई मृत्यु होय उदासी ॥ ८ ॥
सिद्ध मनोरथ होय न उनका । भाग्य हीन मानव हो जिनका ॥ ९ ॥
सारे श्रम निष्फल हो जावे । जो नर भाग्य हीन कहलावे ॥ १० ॥
दोहा— **इस कारण सन्तान की, चिन्ता तजो महान ।**
यों सुनकर द्विज ने कहा, हे यतिवर गुणवान ॥ ३० ॥
चौ. ज्ञान वारता एक तुम्हारी । लगती नहीं मुझे ये प्यारी ॥ १ ॥

करो कृपा मो पर यतिराया । पुत्र हेतु कुछ करो उपाया ॥ २ ॥
आग्रह देख विप्र का ऐसा । दियो एक फल सुत हो जैसा ॥ ३ ॥
हरी कृपा से तव घर अन्दर । होगा एक पुत्र अति सुन्दर ॥ ५ ॥
फल देकर के वह यति राया । द्विज सन्मुख ते कहीं सिधाया ॥ ६ ॥
आत्मदेव इत निज घर आया । निज पत्नी प्रति वचन सुनाया ॥ ७ ॥
इस फल के खाने से तेरे । होवहिं एक पुत्र घर मेरे ॥ ८ ॥
पत्नी प्रति यों कह द्विज राया । देकर फल वह कहीं सिधाया ॥ ९ ॥
उसी समय इक सखी सयानी । आ पहुँची उसकी पहिचानी ॥ १० ॥

दोहा— **बोली उससे ब्राह्मणी, सुनो सखी मम कान्त**
सुत उत्पत्ति के लिये, दियो एक फल शान्त ॥ ३१ ॥

चौ- हे सखि गर्भ रहे यदि मेरे । होहिं तदा दुःख मुझे घनेरे ॥ १ ॥
गर्भवती का जी मतलाता । भोजन भी खाया नहि जाता ॥ २ ॥
बैठी रहूँ सदा घर भीतर । छूटहिं संग सखिन का सुन्दर ॥ ३ ॥
होय न गायन वादन कोई । जनते समय महादुख होई ॥ ४ ॥
टेढ़ा होय कदाचित बालक । तो बन जाये प्राण विनाशक ॥ ५ ॥
अति कोमल सखि मोर शरीरा । कैसे सहूँ गर्भ की पीरा ॥ ६ ॥
कुशल समेत पुत्र यदि रोहीं । होवहिं तदपि कष्ट अति मोहीं ॥ ७ ॥
लालन पालन का दुखभारी । करे मूत्र मल वस्त्र बिगारी ॥ ८ ॥
इस दुर्गन्धी में सखि मोसे । रहा न जाय सत्य कहुँ तोसे ॥ ९ ॥
वन्धया अरु विधवा महतारी । इन कष्टन ने श्रेष्ठ पुकारी ॥ १० ॥

दोहा- **गर्भ दुःख इनको अरी, सखी सतावत नाँय ।**
इस दुख के कारन मुझे, भोजन भी न सुहाय ॥ ३२ ॥

चौ- मैं तो सखी नही फल खाऊँ । सत्य वचन ये तुझे बताऊ ॥ १ ॥
यों कह फल उसने नहिं खाया । एक तरफ उसको रखवाया ॥ २ ॥
पति से अनृत वचन सुनाया । मैने वह सुन्दर फल खाया ॥ ३ ॥
कुछ दिन बात वहाँ वहि नारी । द्विज पत्नी से वचन उचारी ॥ ४॥
हे भगिनी सच बात बताऊ । क्यों तू दुर्बल दुखी दिखाऊ ॥ ५ ॥
इसका क्या कारण कहु बहिना । सत्य वचन मोसे तुम कहना ॥ ६ ॥
द्विज पत्नी बोली तब बानी । बात सखी तुझसे क्या छानी ॥ ७ ॥
मेरा पति सुत प्रद फल लाया । पर वह फल मैने नहिखाया ॥ ८ ॥

पीड़ा अरे गर्भ की भारी । सह सकती नहि मैं सुकुमारी ॥ ९ ॥
पर मैंने पति से छल कीन्हा । खाया फल मैंने कह दीन्हा ॥ १० ॥
दोहा- **मेरे तो कुछ भी नहीं, अरी गर्भ की आस ।**
पति से अब मैं क्या कहूँ, यहि हित रहूँ उदास ॥ ३३ ॥
चौ- द्विज नारी का सुन यो कहना । बोली सखी वचन सुन बहना ॥ १ ॥
एक मास का गर्भ है मेरे । कह दे अरी पति से तेरे ॥ २ ॥
होवें पुत्र अरी जब मेरे । दे जाऊँ आकर घर तेरे ॥ ३ ॥
सबको तेरा पुत्र बताऊँ । मैं चुपके आ दूध पिलाऊँ ॥ ४ ॥
इसकी खबर कंथ को तेरे । नही परेगी सुनुवच मेरे ॥ ५ ॥
वह फल तुरत यहाँ ले आऊ । सन्मुख गैया इसे खिलाऊ ॥ ६ ॥
यों सुन वचन तदा द्विज नारी । होय मुदित मन में अति भारी ॥ ७ ॥
गैया को फल लाय खिलाया । उस सखि को घर बीच छिपाया ॥ ८ ॥
पुत्र जन्म अवसर जब आया । समाचार द्विज पास पठाया ॥ ९ ॥
पुत्र जन्म सुनकर निजकाना । आत्मदेव भए मुदित महाना ॥ १० ॥
दोहा- **मंगलाचार मनाय अरु, निज कुलदेव यजाय ।**
दियो दान बहुदक्षिणा, याचक विप्र बुलाय ॥ ३४ ॥
चौ. बोली धुन्धलि पति को टेरे । उतरत दूध नहीं सुनु मेरे ॥ १ ॥
मेरी सखी यहाँ जो आवे । उसके दूध उतरता जावे ॥ २ ॥
छै महिना का बालक तासू । पाई मृत्यु दुखित वह तासू ॥ ३ ॥
हे पतिदेव कहो तो जाऊँ । उसको यहाँ बुलाकर लाँऊ ॥ ४ ॥
आत्मदेव बोला यों सुनकर । ले आऊ उसको इस घर पर ॥ ५ ॥
किसी तरह बालक का पालन । करना हमको अरी सुभागन ॥ ६ ॥
इतनी बात विप्र की सुनकर । प्रकटी सखी तदा द्विज घर पर ॥ ७ ॥
नामकरण सुत का करवाया । धुँधकारी इति नाम रखाया ॥ ८ ॥
भयो मास दो का धुँधकारी । फल प्रताप ते सुन्दर भारी ॥ ९ ॥
गैया ने भी सुत इक जाया । मानव रूप कर्ण गौ पाया ॥ १० ॥
सोरठा - **मन में खुशी महान, देख उसे द्विज को हुई ।**
गौ समान लख कान, नाम धरा गौकर्ण उन ॥ १ ॥
चौ. पालन पोषण एक समाना । कियो विप्र ने निज सुत जाना ॥ १ ॥
जब दोउ बालक भये सयाने । धुंधकारी तो कहा न माने ॥ २ ॥

महा अधर्मी तस्कर ज्वारी । करने लगा कुकर्म अपारी ॥ ३ ॥
गोकर्णी पंडित अति ज्ञानी । धर्मात्मा मतिमान सुजानी ॥ ४ ॥
धुन्धलि पुत्र महा खलकामी । अति उद्दंड सुरापी नामी ॥ ५ ॥
वेश्यागमन बीच धन खर्चे । करे कुसंगत लोभिन लुच्चे ॥ ६ ॥
परधन अरु भोगे परदारा । मात पिता पीटे इक बारा ॥ ७ ॥
ले सामान गेह का सारा । बेचे पट बरतन बाजारा ॥ ८ ॥
वेश्या हेत दियो धन जाकर । देख दशा सुत की यों द्विजवर ॥ ९ ॥
बोला विप्र नयन भर वारी । ऐसे सुत ऊपर धिक्कारी ॥ १० ॥

दोहा- **ऐसे सुत से तो सदा, बचा रखे भगवान ।**
होना अनहोना दोउ, इसका एक समान ॥ ३५ ॥

चौ- ऐसा सुत तो अति दुख दाता । मैं तो श्रेष्ठ योंहि रह जाता ॥ १॥
इस जीवन से उत्तम मरना । दुःख दूर होवहि तब अपना ॥ २ ॥
तब द्विज का यो देख विचारा । तदा वचन गोकर्ण उचारा ॥ ३ ॥
करते पिता सोच क्यों इतना । जग बीचे कोई नहि अपना ॥ ४ ॥
सुख तो जग में कोय न पावे । दुख ही दुख चहुँ ओर दिखावे ॥ ५ ॥
राजा प्रजा धनी कंगाला । सबको लगा रहे दुख आला ॥ ६ ॥
तज कर यह संसारी माया । जिसने हरि से नेह लगाया ॥ ७ ॥
उसको त्याग सभी दुख पावे । ऐसा वेद शास्त्र बतलावे ॥ ८ ॥
इस कारण तजकर अज्ञाना । त्यागो ममता धन सुत माना ॥ ९ ॥
वन में जाय भजो भगवाना । सुख का साधन यही बखाना ॥ १० ॥

दोहा- **माया ममता मोह में, फँसे रहे जो कोय ।**
नरक बीच जाकर गिरे, बड़ी दुर्गति होय ॥ ३६ ॥ क
यों सुनकर गोकर्ण की, ब्राह्मण सुनकर बात ।
ज्ञान हुआ मन में उसे, माया मोह नसात ॥ ३६ ॥ ख

चौ- गौसुत के सुनकर यों वचना । मानूँ पुत्र सभी तव कहना ॥ १ ॥
तुमने उत्तम राय बताई । पर मोरे सन्मुख कठिनाई ॥ २ ॥
शिक्षा ज्ञान नहीं मैं पाई । करूँ काम क्या कानन जाई ॥ ३ ॥
जासे हो मेरा उद्धारा । करो कथा साधन वह सारा ॥ ४ ॥
फँसा हुआ मन पिता तुम्हारा । माया ममता बीच अपारा ॥ ५ ॥
माया ममता दूर भगाऊ । हरिपद पंकज नेह लगाऊ ॥ ६ ॥
वन में जाकर बैठ अकेले । करो भजन तज कर मन मैले ॥ ७ ॥

सुख प्राप्ति का सुन्दर साधन । यही बतावत पुरुष पुरातन ॥ ८ ॥
इस साधन द्वारा सुख पाकर । पहुँचो शीघ्र हरी के दर पर ॥ ९ ॥
आत्म देव सुनकर यह ज्ञाना । माया मोह तजा अज्ञाना ॥ १० ॥

दोहा- **वन में जाकर बाद में, हरि चरणन कर ध्यान ।**
देह त्याग कर बाद में, पायो पद निर्वान ॥ ३७ ॥

चौ- वन बीचे जब विप्र सिधायो । धुन्ध कारी तब निज घर आयो ॥ १ ॥
माँ से बोला आँख दिखाहि । गाड़ा द्रव्य कहाँ घर माँही ॥ २ ॥
बतला दे जल्दी तू मोहीं । करूँ हनन वरना मैं तोहीं ॥३॥
हो भयभीत तदा वह बोली । देऊँ प्रात द्रव्य भर झोली ॥ ४ ॥
यों कहके निज प्राण बचाया । देती कहाँ नहीं घर माया ॥ ५ ॥
सुत से डर कर वह द्विज नारी । आधी निशा देख अंधियारी ॥ ६ ॥
कूप बीच गिर प्राण गँवाया । यों सुत से निज पिंड छुड़ाया ॥ ७ ॥
जब गोकर्ण हाल यह जाना । उचित वहाँ रहना नहि माना ॥ ८ ॥
चले गये वे गेह तजाही । करने तीर्थ स्नान सुखदाई ॥ ९ ॥
गौसुत तो पंडित गुणवाना । सुख दुख शत्रु मित्र समाना ॥ १० ॥

दोहा - **रात दिवस सुमिरण भजन, करते हरि गुणगान ।**
कीन्हे तीर्थ अनेक वे, उत गोकर्ण महान ॥ ३८ ॥

चौ - जब गोकर्ण गये घर त्यागी । इत धुंधकारी रहा अभागी ॥ १ ॥
चौरी और ठगी कर भारी । वेश्या प्रति धन दे धुंधकारी ॥ २ ॥
एक दिवस वेश्या के घर पर । लाया धन वह दुष्ट चुराकर ॥ ३ ॥
जर जेवर जेता वह लाया । वेश्या के प्रति जाय थमाया ॥ ४ ॥
कीन्हों शयन वहीं धुंधकारी । रहा अचेत नींद में भारी ॥ ५ ॥
तब सब वैश्या के घर वारे । लगे सोचने मिलकर सारे ॥ ६ ॥
चोरी और ठगी कर भारी । अपर द्रव्य लावत धुंधकारी ॥ ७ ॥
कही पकड़ में यदि यह आये । इसके संग सजा हम पाये ॥ ८ ॥
इससे तो बेहतर यहि भारी । मारे हम सब मिल धुंधकारी ॥ ९ ॥
कभी कभी पकड़ा यह जावे । इसके संग मरण हम पावे ॥ १० ॥

दोहा- **कर विचार सबने यह, फाँसी गले लगाय ।**
धुंधकारी को गेह में, लटकाया उन जाय ॥ ३९ ॥

चौ- मरा न जब फंदे के द्वारा । ज्वलित काष्ठ ले मुख पर मारा ॥ १ ॥
खोद गर्त पाछे घर अन्दर । गाड़ा तेहि सभी ने मिलकर ॥ २ ॥
बहुत दिवस तक जब धुंधकारी । दीखा नहि आवत उस द्वारी ॥ ३ ॥
पूछन लगे पड़ोसिन जेते । धुंधकारी आवत जो येते ॥ ४ ॥
गयो कहाँ वह नही दिखाई । वेशवधू तब कहा बुझाई ॥ ५ ॥
गयो कहीं धंधा के खातर । यहि हित दीखत नहीं यहाँ पर ॥ ६ ॥
गणिका नही किसी से नेही । छीने धन प्राणन हर लेही ॥ ७ ॥
जिह्वा जिसकी अमृत रूपी । भरा पेट मे गरल अनूपी ॥ ८ ॥
धन लेने में माहिर रहती । प्रीति नहीं किसी से करती ॥ ९ ॥
मरकर प्रेत बना धुंधकारी । अब तो दुखित भयो अतिभारी ॥ १० ॥

दोहा- **गरमी वर्षा शीत अरु, भूख व प्यास सताय ।**
निज पापों को याद कर, मन में अति दुख पाय ॥ ४० ॥

चौ. उत गोकर्ण सुनी सब बाता । पायो मरण तुम्हारा भ्राता ॥ १ ॥
क्रिया कर्म भयो नहि तासू । गय गोकर्ण गया में आसू ॥ २ ॥
कीन्हा श्राद्ध वहाँ पर जाकर । जहँ जहँ जाते तीर्थन ऊपर ॥ ३ ॥
करते श्राध्द वहीं पर जाकर । विधिवत सुन्दर विप्र बुलाकर ॥ ४ ॥
तीर्थाटन करने उपरन्ता । आये घर गोकर्ण तुरन्ता ॥ ५ ॥
निशा बीच जब कियो विरामा । आइ जबै तृतीया यामा ॥ ६ ॥
आवा वहाँ तदा धुंधकारी । प्रेत रूप विकराल करारी ॥ ७ ॥
कबहूँ वृषभ गधा बन जाये । अज गज महिष स्वरूप दिखाये ॥ ८ ॥
प्रेत समझ कर मन में तेऊ । धीरज धर गोकर्ण कहेऊ ॥ ९ ॥
भूत व प्रेत पिशाची काया । तुम हो कवन कहाँ से आया ॥ १० ॥

दोहा - **गौ सुत की यह बात सुन, धुंधकारी दुख पाय ।**
करने लागा रूदन अति, पर बोला नहि जाय ॥ ४१ ॥

चौ. सुरभी श्रुति तब कीन्ह विचारा । बोल सके नहि येन प्रकारा ॥ १ ॥
मंत्रोच्चारण कर उन पाछे । छींटे दिये प्रेत के आछे ॥ २ ॥
बोला वचन तदा धुंधकारी । खोया ब्रह्मतेज मैं भारी ॥ ३ ॥
अगणित पाप किये दुखदाई । पड़कर अरे कुसंगति भाई ॥ ४ ॥
मारा डार गले में फंदा । जला दिया गणिका ने जिन्दा ॥ ५ ॥
इस कारण कुछ दाना पानी । मिलता नहीं मुझे सुनु बानी ॥ ६ ॥

पवन खाय मैं करूँ गुजारा । इस दुख से पाऊँ छुटकारा ॥ ७ ॥
हे भ्राता तुम वही उपाया । करो सुखद मो पर कर दाया ॥ ८ ॥
तब बोले धेनुज मृदुवानी । सुनो धुंधकारी मम बानी ॥ ९ ॥
गया आदि सब तीर्थन ऊपर । कीन्हें श्राध्द विधिवत जाकर ॥ १० ॥

दोहा- प्रेतपना छूटा नहीं, तदपि हे भ्रात तुम्हार ।
बोला धुंधकारी तदा, करदे श्राध्द हजार ॥ ४२ ॥

चौ- प्रेतपना छूटे नहि मेरा । कीन्हें मैंने पाप घनेरा ॥ १ ॥
ऐसो कोई कहो उपाई । जासे हो सब पाप नसाई ॥ २ ॥
तर जाऊँ भव सागर पारा । करो उपाय सोच यह सारा ॥ ३ ॥
बोले धेनुज वचन सुचारू । थोरे दिन कुछ धीरज धारू ॥ ४ ॥
होअहि जैसे तव उद्धारा । करूं उपाय वही मैं सारा ॥ ५ ॥
यो कह कर वह निशा गुजारी । भयो उदय दूसर तिमिरारी ॥ ६ ॥
भेंट करन तब नगर निवासी । आये धेनुज के अभिलासी ॥ ७ ॥
सह सम्मान यथोचित सारा । कीन्हा धेनुज ने सत्कारा ॥ ८ ॥
अब कुछ दिवस गये उपरन्ता । योगी महापुरुष बुध सन्ता ॥ ९ ॥
बुलवाये धेनुज ने सारे । उनसे पुनि यों वचन उचारे ॥ १० ॥

दोहा- साधु सन्त बुधगुण सुनो, मेरी एक हि बात ।
प्रेत योनि में आगयो, मर कर मेरो भ्रात ॥ ४३ ॥

चौ- मुक्ति का कुछ करो उपाया । बोले तदा सन्त मुनि राया ॥ १ ॥
पूजन आराधन जप ध्याना । करके भजो भानु भगवाना ॥ २ ॥
हे गोकर्ण उन्हीं से सारे । पूछो जाकर प्रश्न तुम्हारे ॥ ३ ॥
जैसी आज्ञा वे तोहिं देवे । वैसा साधन तुम कर लेवे ॥ ४ ॥
यों कहके धेनुज से सारे । सन्त मुनी निज गेह सिधारे ॥ ५ ॥
रवि का मंत्र उचारण करके । माँगा वर रवि से स्तुति पढ़के ॥ ६ ॥
मुक्त होय धुंधकारी जैसे । बतलाऊ रवि साधन वैसे ॥ ७ ॥
मंत्र प्रभाव भानु ने आकर । बोले उनसे दरसन देकर ॥ ८ ॥
वेद व्यास रचित धुन्धकारी । कथा भागवत सुनकर सारी ॥ ९ ॥
सात दिवस में मुकतीपावे । अपर उपाय नहीं दरसावे ॥ १० ॥

दोहा - भये मुदित गोकर्ण तब, सुन यह रवि की राय ।
योगी पंडित सन्त जन, निज गृह लिये बुलाय ॥ ४४॥

चौ- आये वहँ सब नगर निवासी । कथा श्रवण के जे अभिलासी ॥ १ ॥
बालक वृद्ध युवा वहँ आये । सुन सप्ताह यज्ञ हुलसाये ॥ २॥
एक बाँस ऊपर धुन्धकारी । जो था सात गाँठ का भारी ॥ ३ ॥
उस पर स्थित हो चित्त लगाई । लगा कथा सुनने सुखदाई ॥ ४ ॥
वैष्णव एक पुरुप को लाकर । श्रोता मुख्य उसे ठहराकर ॥ ५ ॥
अमृत रूपी कथा सुहाई । गाई धेनुन ने हर्षाई ॥ ६ ॥
प्रथम दिवस जब संध्या आई । कथा श्रवण कर लोग लुगाई ॥ ७ ॥
जाने लगे गेह जब अपने । बाँस ग्रन्थि टूटी लखि सबने ॥ ८ ॥
धुंधकारी बैठा था जिसमें । महा शब्द भयउ तब उसमें ॥ ९ ॥
सुनकर शब्द सभी नर नारी । विस्मित भये तदा वे भारी ॥ १० ॥

दोहा- **सप्त दिवस में ग्रन्थि सब, टूटी प्रथम समान ।**
नर नारी विस्मित भये, अचरज देख महान ॥ ४५ ॥

चौ-द्वादश स्कंध कथा सुन सारी । त्यागी प्रेत देह धुन्धकारी ॥ १ ॥
दिव्य स्वरूप चतुर्भुज धारी । हरि समान बन कर धुन्धकारी ॥ २ ॥
धारे पीताम्बर अति सुन्दर । धेनुज के सन्मुख अब जाकर ॥ ३ ॥
नमस्कार कर बारम्बारा । धेनुज प्रति यो वचन उचारा ॥ ४ ॥
मेरे सारे पाप हटाकर । मोहीं दुख से मुक्त कराकर ॥ ५ ॥
कीन्हा आप कृतारथ भारी । कथा भागवत अचरजकारी ॥ ६ ॥
पाप छुड़ाकर मुक्ति प्रदाता । इस सम अन्य नही सुनु ताता ॥ ७ ॥
जग रूपी दलदल में भारी । फँसे हुए मानव संसारी ॥ ८ ॥
कथा रूप इस तीरथ अंदर । करहि स्नान वे पावन होकर ॥ ९ ॥
माया मोह त्याग कर सारा । भवसागर से उतरहिं पारा ॥ १० ॥

दोहा— **इतने में उतरा वहाँ, नभसे एक विमान ।**
मुक्तामणि झालर लगी, सुन्दर लगा वितान ॥ ४६ ॥

चौ. धुंधकारी चढ़कर उस याना । कियो शीघ्र वैकुंठ पयाना ॥ १ ॥
हाल देख यह सब नर नारी । धेनुज से यों वचन उचारी ॥ २ ॥
शंका एक भई हम सबको । उत्तर देउ धेनुसुत हमको ॥ ३ ॥
पारायण सप्ताह बराबर । कीन्हा श्रवण सभी ने मिलकर ॥ ४ ॥
आवा क्योंकर एक विमाना । जेते श्रोता उतने याना ॥ ५ ॥
यह क्यों भेद भयो सुनभाई । यह सब कहो हमें समझाई ॥ ६ ॥

सुनो वचन श्रोतागण मोरे । यह संदेह रहा मन कोरे ॥ ७ ॥
कथा श्रवण में भेद बताया । कथा बीच जिन चित्त लगाया ॥ ८ ॥
फल की प्राप्ती उन्हीं को होई । माया ममता जिन्हें विगोई ॥ ९ ॥
कथा श्रवण करने तो आये । घर बीचे निज चित्त लगाये ॥ १० ॥

दोहा- नार पुत्र के मोह में, फँसा रहे मन जासु ।
कथा श्रवणका फल यह, किस विध मिलत न तासु ॥४७॥

चौं– श्रवण करहिं जब चित्त लगाई । मुकती सहज तासु मिल जाई ॥ १ ॥
श्रोतागण सुनकर यों वानी । अति लज्जित गलती निज मानी ॥ २ ॥
धेनुज प्रति अब वचन सुनाया । एक बार फिर करके दाया ॥ ३ ॥
पारायण सप्ताह सुनाकर । करो पार सबको भव सागर ॥ ४ ॥
तब गोकर्ण महा गुणवन्ता । पारायण सप्ताह तुरन्ता ॥ ५ ॥
श्रावण महिने बीच दुबारा । कियो शुरू मानव अघहारा ॥ ६ ॥
सबने कथा सुनी चितलाई । माया ममता मोह तजाई ॥ ७ ॥
आये नभ से कई विमाना । श्रोतागण हो मुदित महाना ॥ ८ ॥
धन्य धन्य कह करके सारे । धेनुज से यों वचन उचारे ॥ ९ ॥
धेनुज कृपा तुम्हारी पाकर । भये कृतारथ हम सब मिलकर ॥ १० ॥

दोहा- कथा पूर्ण जब हो गई, तदा कृष्ण भगवान ।
तज कर निज वैकुंठ को, प्रकट भये वहँ आन ॥ ४८ ॥

चौ- धेनुज को निज यान चढ़ाये । गये धाम निज संग लिवाये ॥ १ ॥
श्रोतागण भी येन प्रकारा । स्थित निज यानन इस तन द्वारा ॥ २ ॥
गऊ लोक में पहुँचे जाकर । पाई मोक्ष कथा यह सुनकर ॥ ३ ॥
पहुँचे यथा अयोध्या वासी । राम संग गौलोक अनासी ॥ ४ ॥
रवि विधु की जहँ गति नहि जाई । सुन यह कथा वहाँ नर जाई ॥ ५ ॥
कथा भागवत की जो महिमा । जप तप तीरथ की नहि गरिमा ॥ ६ ॥
श्रवण पाठ का फल हो जेता । दानादिक ब्रत का नहि वेता ॥ ७ ॥
महिमा अधिक सभी से बढ़कर । कथा भागवत की अति सुन्दर ॥ ८ ॥
कथा भागवत पढ़हिं जो कोई । कर्ण पुटों से पीवहि जोई ॥ ९ ॥
सफल मनोरथ सब हो जावे । अन्तकाल हरिधाम सिधावे ॥ १० ॥

दोहा- सुन महिमा श्री भागवत, यों नारद मुनिराय ।
कथा भागवत श्रवण की, विधि सब कहु समझाय ॥४९॥

चौं- इस सप्ताह यज्ञ के अन्दर । कवन वस्तु अर्थित हे मुनिवर ॥ १ ॥
यह मख होवहि कवन प्रकारा । यथा पूर्ण हो विधिवत्त सारा ॥ २ ॥
वरणन करो मुनीश्वर सारा । यों सुन बोले सनतकुमारा ॥ ३ ॥
पूछा प्रश्न य परम तुम्हारा । आवे भादव मास कुंवारा ॥ ४ ॥
कार्तिक मग्धर सुन्दर मासा । मिले श्रेष्ठ जब पंडित व्यासा ॥ ५ ॥
इनमें श्रवण करे जो कोई । महापुण्य पावत नर सोई ॥ ६ ॥
यों शुभ कर्म करे में कोई । नहीं जरूरत मुहूरत होई ॥ ७ ॥
पर सप्ताह श्रवण की इच्छा । हों तब देके मुहूरत अच्छा ॥ ८ ॥
इष्ट मित्र होय जो अपने । जाये उनके भी घर कहने ॥ ९ ॥
पारायण सप्ताह हमारे । घर पर है आवउ तुम सारे ॥१० ॥

दोहा- **वैष्णव साधु सन्त मुनि, ऋणी उदासी जोय ।**
इन्हे बुलाना उचित है, कथा यज्ञ जहँ होय ॥ ५० ॥

चौ.- घर उपवन या तीरथ ऊपर । करे व्यवस्था इनकी सुन्दर ॥ १ ॥
गाथा याग जहाँ करवावे । सुन्दर मंडप वहाँ बनावे ॥ २ ॥
सुन्दर कदली स्तंभ लगावे । ध्वजा पताका वहाँ फहरावे ॥ ३ ॥
बान्धे बन्दन बार मनोहर । करे अलंकृत सब विधि सुन्दर ॥ ४ ॥
पाणि ग्रहण यज्ञ में जैसे । करे सजावट मंडप वैसे ॥ ५ ॥
ऊँचा सिंहासन रखवावे । व्यास पुरुष को वहाँ बिठावे ॥ ६ ॥
वैष्णव सन्त वहाँ जो आये । भिन्न भिन्न आसन बिछवाये ॥ ७ ॥
स्नान ध्यान श्रोतागण करके । सुने कथा विधिवत चित धरके ॥ ८ ॥
करे कथा प्रारंभ सवेरे । करे न श्रोता वहाँ अबेरे ॥ ९ ॥
श्रोता मुख्य करे वह पूजन । प्रथम दिवस गणपति कर वन्दन ॥ १० ॥

दोहा- **विष्णु सहस के पाठ हित, एक विप्र विद्वान ।**
करे वरण उसका वहाँ, आकर के यजमान ॥ ५१ ॥

चौ- वह द्विज पूजे सालिग रामा । करे पाठ सहस हरिनामा ॥ १ ॥
एक एक कर नाम उचारण । करे हरी पर तुलसी अरपण ॥ २ ॥
करहीं प्रथम व्यास की पूजन । करें भागवत को पुनि वन्दन ॥ ३ ॥
यथा शक्ति वहँ भेंट चढावे । कर प्रणाम पुनि वचन सुनावे ॥ ४ ॥
कृष्ण और शुकदेव समाना । तुम साक्षात व्यास गुणवाना ॥ ५ ॥
दास जान कर मुझे दयालू । कहो भागवत कथा कृपालू ॥ ६ ॥

लागे कथा कहन जब व्यासा ।त्यागे तब संसारी आसा ॥ ७ ॥
कथा समाप्त होय उपरन्ता । कीरतन भजन करे भगवन्ता ॥ ८ ॥
दिवस रहे बाकी घटिचारी । तब लगि कथा रहे ये जारी ॥ ९ ॥
करे शीघ्रता कबहुँ न व्यासा । कहें कथा समझाकर खासा ॥ १० ॥

दोहा- **दोपहरी के मध्य में, दो घटिका विश्राम ।**
कर लेवे श्रोता सभी, लेकर के हरि नाम ॥ ५२ ॥

चौ– श्रोता और व्यास मिल सारे । करे दूध या फल आहारें ॥ १ ॥
सात दिवस तक एकहिं बारा । संध्या समय करे आहारा ॥ २ ॥
फल घृत दूध पान कर जोई । दिवस सप्त रह जाये कोई ॥ ३ ॥
अधिक पुण्य पावत नर सोई । निरभोजी रहहीं नहीं कोई ॥ ४ ॥
श्रोता महि ऊपर सो जावे । पत्रावलि में खाना खावे ॥ ५ ॥
दाल शहद अरु बासी भोजन । त्यागे इन्हें कथा के कारन ॥ ६ ॥
मेथी बैंगन अरु तरबूजा । उड़द पियाज लसुन खरबूजा ॥ ७ ॥
मूली गाजर कहु न खावे । कथा बीच आलस जो लावे ॥ ८ ॥
ज्यादा भोजन भी नहि पावे । नैना बीच नींद छा जावे ॥ ९ ॥
जब लगि कथा सुनै जो प्रानी । निन्दा चुगली भी नहि खानी ॥ १० ॥

दोहा- **क्रोध कपट छल छिद्र तज, करे लड़ाइ न काहु ।**
कथा श्रवण जब तक करे, श्रोता इन्हें नसाहु ॥ ५३ ॥

चौ– रजस्वला हो जाये नारी । कथा श्रवण की नहि अधिकारी ॥ १ ॥
म्लेच्छादिक मानव यदि कोई । बैठे सभा बीच नहि सोई ॥ २ ॥
कथा श्रवण की रुचि होतेही । बैठे दूर कथा सुन लेही ॥ ३ ॥
सत्य वचन श्रोता सब गावे । दया धर्म में चित्त लगावे ॥ ४ ॥
कथा बीच करे नहि शोरा । करे शोर लागे अघ घोरा ॥ ५ ॥
कथा सुनहि जे येन प्रकारा । पावे फल वह अपरम्पारा ॥ ६ ॥
सुने कथा यह वन्ध्या नारी । पावे वह सुत आज्ञाकारी ॥ ७ ॥
जिसका हो यदि गर्भ निपाता । उसको यह गाथा सुख दाता ॥ ८ ॥
कथा भागवत सुने जो कोई । पूर्ण मनोरथ उसके होई ॥ ९ ॥
प्रतिदिन कथा सुने उपरन्ता । तुलसी दल बाँटे अघ हन्ता ॥ १० ॥

दोहा- **कथा पूर्ण हो जाय तब, दिवस आठवें रोज ।**
दशम स्कंध के श्लोक से, करे होम द्विज भोज ॥ ५४ ॥

चौ- द्रव्य व वस्त्र व गौ महि भूषन । व्यास हेतु देवे शुभ बरतन ॥ १ ॥

सच्चे मन से कर उन पूजन । करें भेंट उनके प्रति अरपन ॥ २ ॥
प्रेम सहित तेहिं विदा कराई । जावे पहुँचाने घर तांई ॥ ३ ॥
सुने कथा यह जो नर नारी । मिलहीं उन्हें पदारथ चारी ॥ ४ ॥
यों कह गाथा सनत कुमारा । हे नारद तुम परम उदारा ॥ ५ ॥
होयें इच्छा यदि तुम्हारी । करें अपर पारायण जारी ॥ ६ ॥
नारद ने तब वचन सुनाया । धन्य भाग मोरे मुनिराया ॥ ७ ॥
कवन वारता या ते सुन्दर । करो अपर पारायण मुनिवर ॥ ८ ॥
कियो तदा प्रारंभ दुबारा । पारायण सप्ताह कुमारा ॥ ९ ॥
आये वहाँ ऋषीश्वर नाना । करने परम कथामृत पाना ॥ १० ॥

दोहा - आये श्री शुकदेव भी, भ्रमण करत इस बार ।
उठे तदा श्रोता सहित, नारद सनत कुमार ॥ ५५ ॥

चौ- सादर आसन पर पधराये । देख यज्ञ यह शुक हुलसाये ॥ १ ॥
सब श्रोतागण से यो बोले । सुनो कथा यह चित्त अडोले ॥ २ ॥
कथा रूप यह फल श्रुति रूपा । इस सम पूजा नहीं अनूपा ॥ ३ ॥
छिलका बीज रहित बतलाया । सुधा रूप रस खूबसमाया ॥ ४ ॥
इस कारण यह अमृत सुन्दर । करो पान श्रोतागण मिलकर ॥ ५ ॥
नारायण यह कथा सुनाई । चतुरानन प्रति अति सुखदाई ॥ ६ ॥
ब्रह्मा ने नारद को गाई । व्यास हेतु नारद बतलाई ॥ ७ ॥
मेरे पिता मुनीवर व्यासा । मुझे सिखायो यह इतिहासा ॥ ८ ॥
मोरे मुख द्वारा यह गाथा । सुनी परीक्षित मानव नाथा ॥ ९ ॥
सभी पुराणों में अघहारी । कथा भागवत पावन कारी ॥ १० ॥

दोहा- साधू सन्तन का यह, परम द्रव्य कहलात ।
सुरपुर में तपसी सभी, निशि दिन इसको गात ॥ ५७ ॥ (५६)

चौ- ब्रह्मलोक में ब्रह्मा गावे । शंकर को भी यह मन भावे ॥ १ ॥
लक्ष्मी गउलोक के अन्दर । करती गान कथा यह सुन्दर ॥ २ ॥
श्रोता लोगों से यह वानी । सुना रहे जब मुनि विज्ञानी ॥ ३ ॥
आये वहँ वैकुंठ निवासी । लक्ष्मी पति सह कथाभिलासी ॥ ४ ॥
सुरपति धनपति जलपति आये । ब्रह्मा उद्धव संग लिवाये ॥ ५ ॥
उनको देख सभासद सारे । कर प्रणाम जयकार उचारे ॥ ६ ॥
नारद मुनी हर्ष के मारे । नाचन लगे होय मतवारे ॥ ७ ॥

काया धव करताल वजाये । मंजीर वजा उद्धव हर्षाये ।। ८ ।।
इन्द्र मृदंग बजाकर सुन्दर । भये प्रेम में लीन तदन्तर ।। ९ ।।
देख प्रेम में सब लवलीना । बोले तब हरि भक्त अधीना ।। १० ।।

दोहा- जिसके मन में जो जँचे, माँगो वहि वरदान ।
तदा नारदादिक सभी, बोले हे भगवान ।। ५७ ।।

चौ- मिले आपके सुन्दर दरसन । याते परे कवन दुख भंजन ।। १ ।।
निज चरणन में भक्ति प्यारी । लागी रहे सदा सुखकारी ।। २ ।।
एवमस्तु कहकर भगवाना । भये वहाँ से अंतरध्याना ।। ३ ।।
सात दिवसि मख येन प्रकारा । भयो पूर्ण सानन्द दुवारा ।। ४ ।।
सूत मुनी से सुन यह गाथा । बोले शौनकादि मुनिनाथा ।। ५ ।।
नृपति परीक्षित को यह गाथा । कही कदा श्री शुक मुनि नाथा ।। ६ ।।
धेनुज औ मुनि सनत कुमारा । वरणा कवन समय विस्तारा ।। ७ ।।
यह सब कथना कहो मुनीशा । यों सुन बोले सूत ऋषीशा ।। ८ ।।
त्याग द्वारका तब वृजनन्दन । गये धाम निज जग दुखभंजन ।। ९ ।।
उसके वरस तीन शत अन्ता । नवमी भादव मास उगन्ता ।। १० ।।

दोहा- नृपति परीक्षित के प्रति, गाई शुक मुनि राज ।
पारायण दिन सात का, पूर्णभयो सब काज ।। ५८ ।।

चौ- दो सौ बरस बाद सुखदाई । धेनुज ने यह कथा सुनाई ।। १ ।।
कवि सम्वत रस नभ वसु आवा । नारद प्रति सनकादिक गावा ।। २ ।।
उसी कथा का वरणन सारा । तुमने सुना हमारे द्वारा ।। ३ ।।
अमृत रूप कथा अघहारी । प्रेम समेत सुने नर नारी ।। ४ ।।
मिल जावे उनको फल सारे । जावे अन्त मोक्ष के द्वारे ।। ५ ।।
पढ़ें पढ़ावें और सुनावे । अन्त काल वैकुंठ सिधावे ।। ६ ।।
विप्र पाठ कर विद्या पावे । क्षत्री युद्ध जीत घर आवे ।। ७ ।।
सुनै प्रेम से जो व्यापारी । पावे लाभ वणिज में भारी ।। ८ ।।
सुनकर शूद्र प्रेम से गाथा । करें कृपा उस पर यदुनाथा ।। ९ ।।
सुने इसे जो वन्ध्या नारी । पति सुत का सुख पावत भारी ।। १० ।।

दोहा— यह गाथा बजरंग ने, लघुमति के अनुसार ।
धरी तुम्हारे चरण में, लिखकर कृष्ण मुरार ।। ५९ ।।

।। इति श्री पद्मपुराणे उत्तरखण्डे श्री मद्भागवत माहात्म्य समाप्तोयं ।।

॥ श्री गणेशाय नमः ॥

॥ श्री राधा वल्लभो विजयते ॥

श्रीमद्भागवत प्रारम्भ

प्रथम स्कंध

श्लोक

वन्दे कृष्ण रमापतिं वृजपतिं गोपी पतिं गोपतिं ।
रामं श्यामं केशवं सुरपतिं मायापतिं यदुपतिम् ॥ १ ॥

मनहर छन्द- विघ्न के निवारी प्रभु, सङ्कट के हारी नाथ,
शिवसुत गण ईश, मूषे असवारी है ।
ऋद्धि अरु सिद्धि दोउ, चमर डुलावे फूल,
हाथ में त्रिशूल धर, अरि नाशकारी है ॥ १ ॥
आज गिरिजा के नन्द, काटो मेरे दुःख द्वंद
मम भयहारी मुख, एक दन्त धारी है ।
कहे बजरंग अङ्ग, सोहत सिन्दूर शुभ
रणत भँवर पति, पूजे नर नारी है ॥ २ ॥

दोहा- नर नारायण शुक गिरा, व्यास मुनिहि सिर नाय ।
वर्णो श्रीमद्भागवत, यदुपति होई सहाय ॥ १ ॥क
गंग यमुन गोदावरी, सिन्धु सरस्वती संग ।
बसहि तीर्थ सारे वहाँ, जहँ हो कथा प्रसंग ॥ १ ॥ख

चौ- वन्दों गुरु गोवर्धन चरणा । जासु कृपा मैं यह यश वरणा ॥ १ ॥
वर्णों शौनक सूत संवादा । सुनतहि जासु कटत भवफाँदा ॥ २ ॥
लघुनौका चढ़ि कवन प्रकारा । को नर गयउ सिन्धु के पारा ॥ ३ ॥
तिमि इस शास्त्र सिन्धु के पारा । कहो जाऊं मैं कवन प्रकारा ॥ ४ ॥
कवी न मैं नहि कविकर बालक । मैं हूँ हरि गुण प्रेम प्रचारक ॥ ५ ॥
कविता ज्ञान एक नहीं जाना । तुकवन्दी यह छन्द बखाना ॥ ६ ॥
कहीं दृष्टि आवहिं जो दोषा । तजहु क्षमा करि पंडित रोषा ॥ ७ ॥
कृष्ण वर्ण कागज किय कोरे । सत्य कहहुँ यह छन्द न मोरे ॥ ८ ॥

दोहा- सम्वत वसु निधि नन्द महि, शुक्ल पक्ष मधु मास ।
आठें तिथी अभिजित विषै, कीन्हों ग्रन्थ प्रकास ॥२॥क
जिमि ऋषि शौनक सूत का, भयउ सुखद संवाद ।
तिमि व्यासा कृत भागवत, का गाऊँ अनुवाद ॥२॥ख

चौ- क्षिति तल नैमिष तीर्थ सुहाई । रहते वहाँ सूत मुनिराई ॥ १ ॥
एक दिवस श्री सूत के द्वारे । शौनकादि मुनि जाकर सारे ॥ २ ॥
कहेउ सूत से मिल सब मुनिगन । वचन हमार सुनहु तुम सज्जन ॥ ३ ॥
व्यास समीप कियो तुम वासा । पढ़ेउ पुराण होय उल्लासा ॥ ४ ॥
यासे कृपा कर हमहिं बुझावो । प्रभु चरित्र सब हमें सुनावो ॥ ५ ॥
सूत मुनि तब बोले बुझाई । दश चतुभुवन रचे यदुराई ॥ ६ ॥
सब जीवों के पालन कारक । परब्रह्म निज तेज प्रकाशक ॥ ७ ॥
महादेव ब्रह्मादिक देवा । करते सब परमब्रह्म की सेवा ॥ ८ ॥

सोरठा- **महाप्रलय के अन्त, चैतन्य आत्मा जीव की ।**
होय तभी गच्छन्त, रमापति की ज्योति में ॥ १ ॥

दोहा- **नारायण का ध्यान धर, कहे सूत मुनिराय ।**
संसारी व्यवहार सब, झूँठा है जग माँय ॥ ३ ॥

चौ- बलवन्ती ईश्वर की माया । जिसने सारा जगत भुलाया ॥ १ ॥
यह शुक शास्त्र सर्व सुखदाता । लिख्यो धर्म सर्वश्रुति ज्ञाता ॥ २ ॥
सुनत इसे अघ ओघ नसावहिं । पापि पुरुष नहि यम घर जावहिं ॥ ३ ॥
ध्यान प्रथम युग द्वापर पूजन । त्रेता मख कलि नाम उच्चारण ॥ ४ ॥
होत ब्रह्म पद वास हिये में । श्रवण करत शुक ग्रन्थ जिये में ॥ ५ ॥
शुक मुनि जब यह कथा सुनाई । त्वरित परीक्षित मुक्ति पाई ॥ ६ ॥
अमृत रूपी फल इस तरु का । मुनि शुकदेव के मुख ते टपका ॥ ७ ॥
शुक मधु जानि वृक्ष फल खाई । तिमि शुकदेव मुनि मन भाई ॥ ८ ॥
यह सुकथा वैकुंठ नसैनी । अविचल भक्ति प्रदति सुख दैनी ॥ ९ ॥

दोहा- **शौनकादि कहने लगे, सुनहु सूत महाराज ।**
सर्व पुराणों को पढ़े, व्यास पास मुनिराज ॥ ४ ॥

चौ- शिष्य जानि हमको मुनिराई । तत्व शास्त्र सब देउ बताई ॥ १ ॥
संसारी जन जिसको सुनि के । भवसागर उतरे अघहनि के ॥ २ ॥
यह उपाय मुनीश सुनाऊ । सुनकर शीघ्र मुक्ति नर पाऊ ॥ ३ ॥
परिश्रम स्वल्प व अति फल होई । परम ब्रह्म परमेश्वर सोई ॥ ४ ॥
नाम लेत जिन होय उधारा । केहि कारण ले प्रभु अवतारा ॥ ५ ॥
देवकी गर्भ कृष्ण अवतारी । लीला कवन जगत विस्तारी ॥ ६ ॥
जब प्रभु कीन्ह गमन वैकुंठा । जिनकर नाम सुनत भव छूंठा ॥ ७ ॥
शरण रहेऊ तब किसके धर्मा । धारण धरे तजे सब कर्मा ॥ ८ ॥

दोहा- प्रेम भाव ते जो नर, सुनैं कथा भगवन्त ।
पञ्च विन्दु श्रुति अष्ट लख, योनि सहज छुटन्त ॥ ५॥क
ऋषिश्वरों की जब सुनी, इस प्रकार की राय ।
व्यास पुत्र का ध्यान धर, गये सूत हर्षाय ॥ ५ ॥ ख

छन्द- पद कमल वेदव्यास गुरु के , चित्त अपने ध्याय के ।
पुनि ईश लक्ष्मी को सुमिर के , सूत मुनि हर्षाय के ॥
कहने लगे ऋषि शौनकादिक से, कथा समझाय के ।
शुक शास्त्र में पर ब्रह्म लीला, सुनहु चित्त लगाय के ॥ ३ ॥

चौ- शुकदेव मुनि जब मातु उदरते । प्रकट भये तब चालेउ घर ते ॥ १ ॥
चलत पंथ शुकदेव विचारा । यहाँ न हों हरिभजन अपारा ॥ २ ॥
व्याह हमार सकल कर देंगे । यहि हित जा वन ईश भजेंगे ॥ ३ ॥
या ते लगे न भव की माया । यह विचार चाले मुनि राया ॥ ४ ॥
लखा हाल जब यह मुनि व्यासा । गयउ प्रेमवश सुत कर पासा ॥ ५ ॥
शुक से मुनि तब कहे पुकारी । सुनहु सुवन यह वात हमारी ॥ ६ ॥
तव शुक मुनि कानन में जाकर । बोले वच पितु से हर्षाकर ॥ ७ ॥
पुत्र पिता नहीं कोई की नारी । जन्मत मरत देह संसारी ॥ ८ ॥
आव गमन में फँसकर जीवा । मरत नहीं जिमि अमृत पीवा ॥ ९ ॥
गति संसार चलहि पितु कैसे । मानहु चाक कुलाल भ्रमै से ॥ १० ॥
धरेउ धीर सुनि सुतकर वानी । व्यास देव आये घर कानी ॥ ११ ॥
चलत गहन एक देखि तड़ागा । फुल्लित फूल सुसुन्दर वागा ॥ १२ ॥
सुर सुन्दरि तहँ चीर हटाई । जल क्रीड़ा करती हर्षाई ॥ १३ ॥

दोहा- शुकदेव मुनि को देखकर, करी नहीं कुछ लाज ।
व्यास वृद्ध को पेखि पुनि, धरा चीर "मुनिराज"॥ ६ ॥

चौ- दशा देखि यह व्यास विचारी । लाज न की शुक की इन नारी ॥ १ ॥
धरेउ अंग जब यह मोहि देखा । जाना भेद न क्या है विशेखा ॥ २ ॥
हाल जानि मन तव सुर नारी । दोउ कर जोरि के गिरा उचारी ॥ ३ ॥
परमहंस शुकदेव सयाने । नर नारी में भेद नहीं जाने ॥ ४ ॥
इस कारण प्रभु लाज न कीनी । आप देखि तन सारी पहिनी ॥ ५ ॥
व्यासदेव सुनि सुरतिय वानी । विगत मोह मद भयउ न ग्लानी ॥ ६ ॥
भवतारक शुकदेव मुनीशा । मुनिजन जाहि नवायत निज शीशा ॥ ७ ॥

छन्द- इतनी सुनि बातें मुनि अकुलाते, मलिन भया जिन आनन।
यहँ वृद्ध मुनीशा और ऋषीशा, ज्ञान भरा जिन पावन॥
इनकी ना उपमा करैन सुपुमा, मुनि शुक है लघुवाला।
बजरंग बढ़ाई करे मुनिराई, जाने नहिं कुछ हाला ॥ ४ ॥
हाल मन का जानिके, निज ज्ञान से तब सूत जी।
कहने लगे ऋषि शौनकादिक, से सुनो मुनि बात जी॥
कलि कलुष धोने के लिए, योगी मुनियों के गुरु।
शुकदेव स्वामी की कथा, भव सिन्धु से तारे धुरु ॥ ५॥

चौ- करहिं शंक जो यों मन माहीं। कहाँ पढ़े शुकदेव पढ़ाहीं ॥ १ ॥
जन्मत चले गये तप हेतू। उत्तर तासु सुनहु हम सेतू ॥ २ ॥
चर्चा ज्ञान की पूछी मुनि ने। ऋषीश्वरों से जाय बनी में ॥ ३ ॥
जान परा तब उनको सारा। भव भय भंजन ईश उदारा ॥ ४ ॥
विष्णु चरण में होय जो प्रेमा। वही है परम धरम जग क्षेमा ॥ ५ ॥
एक समै शुकदेव मुनीशा। नारद सन पूछेउ नव शीशा ॥ ६ ॥
नाथ ज्ञान ऐसो बतलाओ। रमापति पद प्रेम सुझाओ ॥ ७ ॥
नारद तब बोले मुस्काई। तव पितु सर्वदर्शी रिपिराई ॥ ८ ॥
व्यास समीप तुम पुछहु जाही। यह सुनि शुक गवने गृह माँही ॥ ९ ॥

दोहा- करे व्यास के पुत्र जा, निज पितु पद शिर नाय।
परम ब्रह्म से प्रेम का, देउ उपाय बताय ॥ ७ ॥

चौ- व्यास मुनि तब कहेउ बुझाई। नहीं भावगत समा उपाई ॥ १ ॥
यह सुनि श्री शुकदेव गुसाँई। करी भागवत केर पढ़ाई ॥ २ ॥
विरक्त महासुत व्यास सुज्ञानी। पितु समीप बहु दिन तक स्वामी ॥ ३ ॥
सुनत श्रवण मुख हरि गुण गाता। कर्ण रसायन मुक्ति प्रदाता ॥ ४ ॥
पूजा व्रत तप कर्म सुयोगू। करि-करि पावहिं शुभ गति लोगू ॥ ५ ॥
भक्ति समान धर्म नहीं दूजा। दान व तप नहीं तीरथ पूजा ॥ ६ ॥
अपर धर्म जो कोई करहीं। श्रम हों बहुत स्वल्प फल रहहीं ॥ ७ ॥
चित्त लगाय सुनहि शुक ग्रंथा। माया मोह तजहिं भव पंथा ॥ ८ ॥
प्रभु पद कमल भजत नर नारी। करत पाप क्षय भवभय हारी ॥ ९ ॥

दोहा- मुक्ति बनाने के लिए, प्रथम कथा अभ्यास।
करे प्रेम ते प्रतिदिन, बढ़त सदा सुख रास ॥ ८ ॥

चौ- जे व्रत यज्ञ धर्म जग माँही । ते सव ईश्वर बीच सिधाई ॥ १ ॥
जिमि वारिस जल जावत सागर । तिमि सव कर्म मिलत नटनागर ॥ २ ॥
निराकार आदि पर ब्रह्मा । वहि संसार रचेउ सव कर्मा ॥ ३ ॥
रूप विराट समान न दूसर । शयन करत अहिराज के ऊपर ॥ ४ ॥
कर्णनासिका शीश हजारा । रूप विराट सर्व संसारा ॥ ५ ॥
तासु नाभि ते पंकज फूला । निकसेउ जासु ब्रह्म जग मूला ॥ ६ ॥
प्रथम जन्म शनकादिक चारू । भयउ कोल दूसर अवतारूँ ॥ ७ ॥
तृतीयस यज्ञ पुरुष ले जन्मा । प्रकट कीन्ह सव मुनि मखकर्मा ॥ ८ ॥
अश्व ग्रीव श्रुति प्रभु अवतारा । पंचम नर नारायण धारा ॥ ९ ॥

दोहा- **कपिल देव मुनि का धरान्न, प्रभु षष्टम अवतार ।**
सप्तम दत्तात्रेय का, ऋषभ अष्ट करतार ॥ ९ ॥

चौ- वेन मथन ते पृथु नव होही । दशम मीन प्रकटे खर द्रोही ॥ १ ॥
सिंधु मथन एकादश कच्छप । द्वादश धनवन्तरि सुररक्षप ॥ २ ॥
रामदिशा मोहनी अवतारा । मनु सिंह भक्त जन तारा ॥ ३ ॥
वाण आसु वामन अवतारा । रसदिक भयउ हंस करतारा ॥ ४ ॥
अश्वभूमि नारद प्रिय द्रोही । अष्ट भूमि हरि गज हित होही ॥ ५ ॥
ऊन विंश परसू बलवाना । वीसहू रामचन्द्र भगवाना ॥ ६ ॥
वेद व्यास भयउ इक्कीसू । कृष्ण भये जगहित बाइसू ॥ ७ ॥
कालयवन कंसादिक वीरा । जरासंध पापी नृप चीरा ॥ ८ ॥
भार हटाय मही नटनागर । पार उतारे नृप भवसागर ॥ ९ ॥

सोरठा- **अवतार वुद्ध तेइस, सुनहु कथा मुनिराय यह ।**
कलकी हो चोईस, कलीकाल के अन्त में ॥ २ ॥

चौ- रामचन्द्र दशरथ के बाला । पूर्ण कला प्रकटे नन्दलाला ॥ १ ॥
जीवउद्धार करन के काजा । यह अवतार धर्‍यो वृजराजा ॥ २ ॥
जे ऋषि मुनिदेव जग माँही । तेही में परत ब्रह्म परछाही ॥ ३ ॥
माया द्वार ब्रह्म जग जाये । लीला जासु जानि नहीं पाये ॥ ४ ॥
मानव वहि जो प्रभु पहिचाना । निशी वासर भजही भगवाना ॥ ५ ॥
ईश सिवाय भरोस न दूजे । मोह छाँड़ि जग का प्रभू पूजे ॥ ६ ॥
श्री शुक ग्रन्थ जगत श्रुति सारा । वेद व्यास वर्णेउ विस्तारा ॥ ७ ॥

दोहा- हरिद्वार गंगा निकट, होय प्रेम में लीन ।
ऋषी मुनी के मध्य शुक, कहि यह कथा नवीन ॥१०॥

चौ- जब वैकुंठ गयउ वृजचन्दा । होवन लगी धरम की निन्दा ॥ १ ॥
सब शुभ कर्म गयउ संसारा । तब मुनि व्यास रच्यो श्रुति सारा ॥ २ ॥
धर्म रूप प्रकट्यो जग अन्दर । श्री शुक ग्रंथ सुखद हे ऋषि वर ॥ ३ ॥

दोहा- द्वैपायन के पास जब, पढ़े मुनि शुकदेव ।
चला गया मैं भी वहाँ, करन गुरु की सेव ॥ ११ ॥ क
गुरु कृपा से हे मुनि, भई भागवत याद ।
श्रवण सुखद है श्रवण से, रक्षक हे नरकाद ॥ ११ ॥ ख
शौनकादि कहने लगे, दोऊ कर को जोर ।
अवतारों का हाल सुन, बंधे प्रेम की डोर ॥ ११ ॥ ग

चौ- अब यह इच्छा भई मुनिराई । व्यास देव की कथा बनाई ॥ १ ॥
जासू लिखी मुनी प्रभु लीला । वरणों सो ही कथा मति शीला ॥ २ ॥
कवन ठौर किस युग में स्वामी । कही परीक्षित से मुनि ज्ञानी ॥ ३ ॥
यह सुनि सूत कहेउ विचारी । द्वापर अन्त व्यास अवतारी ॥ ४ ॥
पितु पाराशर सतवति माता । इन घर जन्म लियो उन ताता ॥ ५ ॥
सतयुग वर्ष लक्ष जन आयु । नभ श्रुति चन्द्र वर्ष त्रेतायु ॥ ६ ॥
दश गुण शत द्वापर परिमानू । अभ्र हस्त महि कलियुग जानू ॥ ७ ॥
एक समय करि नदि अस्नाना । व्यास मुनि देखेउ धरि ध्याना ॥ ८ ॥
जग विच नर अति पाप अधीना । लघु आयुष दुर्भग सुख हीना ॥ ९ ॥
क्यों कर होय जगत कल्याना । यह विचार मुनि निज मन ठाना ॥ १० ॥
आयु स्वल्प वेद हे भारी । मुनि मन यों निज बात विचारी ॥ ११ ॥
एक वेद के चारहु हिस्सा । ऋग्यजु साम अथर्व मुनीशा ॥ १२ ॥
पंचम वेद पुरानितिहासा । लिखेउ प्रेम ते मुनिवर व्यासा ॥ १३ ॥

दोहा- पैल मुनि ऋग्वेद धर, जैमिनी साम पठन्त ।
वैशम्पायन यजुष को, ऽथर्वण वेद सुमन्त ॥ १२ ॥

चौ- महाभारतादिक इतिहासा । मम पितु पढ़े प्रेम ते खासा ॥ १ ॥
शिष्य पढ़ाये जे मुनिराई । वहि जग शाख वेद कहलाई ॥ २ ॥
श्लोक लक्ष महाभारत माँहि । श्रवन सदा सुखदायक ताही ॥ ३ ॥

घन पुरान रच्यो मुनि व्यासा । नन्द द्विगुण महाभारतखासा ॥ ४ ॥
तदपि धीर नहिं मुनि मन आई । कवन ग्रंथ रचहूँ जग माँई ॥ ५ ॥
यह विचार सरस्वति तीरा । एक दिवस करते मुनि धीरा ॥ ६ ॥
तेहि समय नारद वहँ आये । वीन बजाते हरि गुण गाये ॥ ७ ॥

दोहा- **देव रिषीहिं विलोकि के, उठे व्यास पुलकाय ।**
आसन देकर प्रेम से, बैठाये हर्षाय ॥ १३ ॥

सोरठा- **चिन्तित देखि कहा, नारद ऋषि ने व्यास को ।**
बैठे मुनि यहाँ, क्या कारण किस रंज में ॥ ३ ॥

चौ- जिमि नर कठिन कार्य में पर के । महादुःख पावत बिन फलके ॥ १ ॥
एक वेद के चारउ वेदा । रच्यो तदपि तव मिट्यो न खेदा ॥ २ ॥
भारत इतिहास पउराना । जग बिच रच्यो शास्त्र तुम नाना ॥ ३ ॥
बहु खुश व्यास भयउ यह सुनकर । दोउ कर जोर कहे करुनाकर ॥ ४ ॥
तुम सम नारद को जग माँही । परब्रह्म पद जो मन लाही ॥ ५ ॥
अब तुम श्रेष्ठ उपाय बतावहू । सुनि मम चित्त शुद्ध हो जावहू ॥ ६ ॥
नारद ऋषि बोले यों सुनकर । सुनहु व्यास मन धीरज धरकर ॥ ७ ॥

दोहा- **प्रभु गुण थोड़ा सा लिखा, तुमने हे मुनिराय ।**
तीरथ जप तप योग व्रत, दान धर्म अधिकाय ॥ १४॥क
नियम लड़ाई देवता, संसारी का हाल ।
इस कारण ते दूसरा, रचो ग्रन्थ इस काल ॥ १४ ॥ ख

चौ- परम ब्रह्म पद चित्त लगाकर । नहि कोई रचा ग्रंथ तुम मुनिवर ॥ १ ॥
प्रभुपद तजहिं अपर जो भजते । परीश्रम बहुत स्वल्प फल लहते ॥ २ ॥
स्थिर फल तासु मनुज नहिं पावे । कुछ सुख भोग जन्म फिर आवे ॥ ३ ॥
ब्रह्म कथा जे चित्त लगावे । वे नर शीघ्र मुक्ति फल पावे ॥ ४ ॥
भव बिच भय अति दारुण दुःखा । भक्ति बिना नहीं उपजत सुखा ॥ ५ ॥
जेहि पुराण नटनागर लीला । उत्तम तासु समझु मुनि शीला ॥ ६ ॥
नटनागर गुण सागर लीला । वही प्रभु सर्व धर्म जगमूला ॥ ७ ॥
एहि हित रचहु ग्रन्थ तुम एकी । श्री हरिकृष्ण चरण सिर टेकी ॥ ८ ॥
गान करत नर हो भवपारा । सोई तुम ग्रंथ लिखउ श्रुतिसारा ॥ ९ ॥
भक्ति बिना नर जन्म अकारथ । सुनो ध्यान धर वचन ये सारथ ॥ १० ॥

प्रथम जन्म दासी मम माता । तासु प्रेम अति मोपर ताता ॥ ११ ॥
वेद वादि इक रहे ऋषि राई । करत वास तहँ मात गुसाँई ॥ १२ ॥
एक समै बरषा ऋतु आई । हरियाली चहुँ ओर सुहाई ॥ १३ ॥
वेद वादि इक झुन्ड विशाला । आयउ वास काज तेहि काला ॥ १४ ॥
तेहि पास जामे महतारी । करति प्रेम ते सेवा भारी ॥ १५ ॥
बाल अवस्था मैं उस काला । जाता मातु संग मुनि शाला ॥ १६ ॥
झूंठनता कर खा मुनिराई । पापहीन मैं भयो गुँसाई ॥ १७ ॥
कृष्णगान करता उन संगा । तेहि हित प्रेम व धर्म उमंगा ॥ १८ ॥
हरिगुण सुनत रजोगुण नासा । भयउ भक्ति कर मे मन आसा ॥ १९ ॥
चातुर्मास गयउ जब बीता । विदा भयउ तब रिषि पुनीता ॥ २० ॥
जावत मंत्र मोहि मुनि दीन्हा । होय प्रसन्न चित्त मैं लीन्हा ॥ २१ ॥
यहि वश होय ईश की माया । जानतु सकल भाव मुनिराया ॥ २२ ॥
यथा औषधी रोग नसावहिं । पाप पहाड़ ज्ञान तिमि ढहावहिं ॥ २३ ॥
ईश कृपा बिन पाव न भक्ति । भक्ति बिना नहि हो जग मुक्ति ॥ २४ ॥
बल श्रीकृष्ण मार ऋषिकेतू । वन्दन चित्त करहू भव हेतू ॥ २५ ॥
दिनकर अक्षर मंत्र बताया । जेहि कृपा मुनि ज्ञान मैं पाया ॥ २६ ॥
फिर मन में यह बात विचारी । जाय अरण्य भजूँ बनवारी ॥ २७ ॥

दोहा- **पर मातु मुझको प्रेम ते, तजे नहीं क्षण एक ।**
हरि इच्छा भावी प्रबल, रखी प्रभु ने टेक ॥ १५ ॥

छन्द- **एक दिन माता हमारी, दूध दोहन को गई ।**
राह में वह साँप के डसते, ही फोरन मर गई ॥
ग्राम के जब बालकों ने, हाल यह मुझसे कहा ।
ईश की माया प्रबल, भव सिन्धु से छूटा अहा ॥ ६ ॥

दोहा- **यह विचार करता हुआ, उत्तर दिशि उस काल ।**
चला गया मैं विपिन बिच, लांघत गिरि नदि नाल ॥१६॥

चौ- सिंह वराह रीछ गज बन्दर । साँभर नील, रोझ गिरि कन्दर ॥ १ ॥
करत गमन देखेउ उस वन में । कृष्ण कृपा ते डर्‌यो ना मनमें ॥ २ ॥
लागे नहीं कछु भूख पिपासा । व्यापि रही प्रभु चरणन आसा ॥ ३ ॥
फिरत फिरत निर्जन वन अन्दर । पीपल तरु इक नदि तट सुन्दर ॥ ४ ॥

तेहि अध बैठि गये मुनि भूपा । कियो ध्यान पर ब्रह्मस्वरूपा ॥ ५ ॥

छन्द- ध्यान करते सप्त दिन, बीते मुने मन बीच में ।
पाप सारे दूर हो, पावन हुआ तव नीच मैं ॥
ध्यान में भगवान ने, फिर दास को दर्शन दिये ।
शंख चक्र गदा व पंकज, चारू हाथों में लिये ॥ ७ ॥
बाल घूंघर ताप हारिन, मन्द मन्द सुहासितम् ।
कोटि सूर्य समान आनन, तेज पंकज लोचनम् ॥
श्याम गात सुमुकुट मस्तक, क्रीट कानन कुण्डलम् ।
वैजयन्ति माल गल विच, भुज प्रलम्ब सुशोभितम् ॥८॥

दोहा- दर्शन दे इस रूप से, प्रभु भये अन्तर्ध्यान ।
बहुत सोच करने लगा, मैं बालक अज्ञान ॥१७॥ क
चिन्ता तजहू पुत्र तुम, रहो भजन लवलीन ।
तेहि समय नभ ते सुखद, वाणी भई कुलीन ॥ १७॥ ख

चौ- अधिक प्रीति तव होय विशारद। यहि हित दर्श दियो हम नारद् ॥ १ ॥
जन्म अपर होवहिं मम दर्शन । मिलहुँ भजन हित तुम्हे हे सज्जन ॥ २ ॥
नभ वाणी पाछे एक वीना । मोहि प्रभु नारायण दीना ॥ ३ ॥
गावत भजन संग ले वीना । बीच ध्यान प्रभु हो लव लीना ॥ ४ ॥
बारं बार भई यह इच्छा । छूट जाय अब यह तन अच्छा ॥ ५ ॥
जब हुआ यह विचार हमारा । वह तन छुटा दिया कर तारा ॥ ६ ॥

सोरठा- भयउ जन्म मम बाद, ब्रह्मा के अंगुष्ठ से ।
रही मुझे सब याद, पूर्व जन्म के भजन वश ॥ ४ ॥

दोहा- क्षीर सुता पति के भजन, करने लगा दयाल ।
यहि हित में फँसता नहीं, माया के जंजाल ॥ १८ ॥

चो- भजन प्रभाव दर्श प्रभु कैसे । नेवत द्विज गृह आवत जैसे ॥ १ ॥
दर्शन इच्छा हो मन माँहि । तेहि समै प्रभु मे ढिंग आही ॥ २ ॥
दर्शन देवत है असुरारी । सुनहि सत्य यह बात हमारी ॥ ३ ॥
भ्रमण करउ मैं तीनउ लौका । नहि मनाही रहत विशोका ॥ ४ ॥
सुनहु व्यास यह सीख हमारी । लीला गुण बरणों बनवारी ॥ ५ ॥
चार श्लोक ब्रह्मा से सुनकर । आयो पास तुम्हारे मुनिवर ॥ ६ ॥

छन्द- सार श्लोकन चार का, विस्तार से वर्णन करो ।
मोह के जंजाल को, तजि सिन्धु भव में नापरो ॥
पशु पक्षि को खाने व पीने, के सिवा कुछ कामना ।
परब्रह्म की महिमा विना, नर तन के हो मालूम ना ॥९॥
मानवी तन पा भजन, भगवान का करता रहे ।
जीवन उसी का धन्य जग में, शास्त्र ज्ञाता यों कहे ॥
जन्म ले भगवान का, जो नर भजन करता नहीं ।
लक्ष चौरासी में पर कर, कष्ट वह भोगे सही ॥ १० ॥
नन्दलाल नटवर नन्द सुत, श्री कृष्ण केशीध्वंसनम् ॥
प्रेम से भजियो मुनि, जव होय मन यह पावनम् ॥
यह सीख दे चतुश्लोकि की, नारद वहाँ से हो विदा ।
वीणा बजाते प्रेम ते, वैकुंठ में गवने तदा ॥ ११ ॥

दोहा- कहे सूत श्री व्यास ने, कियो नदी पर स्नान ।
जाय वद्रिकाश्रम भये, लीन प्रभु के ध्यान ॥ १९ ॥

चौ- मैं हूँ जड़बुद्धि अज्ञाना । वे हैं परमब्रह्म भगवाना ॥ १ ॥
कवन प्रकार लिखूँ प्रभू लीला । यह विचार कियो मुनिशीला ॥ २ ॥
उसी समय प्रभु ने हिय अन्दर । दिये दरश आकर अति सुन्दर ॥ ३ ॥
दीन्ही शक्ति कृपा निकेतू । रच्यो व्यास ग्रंथ जग हेतू ॥ ४ ॥
पढ़हि प्रेम ते जो नर येही । जग माया नहि व्यापत तेहि ॥ ५ ॥
शौनक से कहे सूत मुनीशा । कौरव पांडव लड़े ऋषीशा ॥ ६ ॥
कुरूक्षेत्र में होकर क्रुद्धा । अष्टचन्द दिन भयो जुयुद्धा ॥ ७ ॥
एक लक्ष वसु शत गुण हत्थी । पंच लक्ष चतुशत गुण रत्थी ॥ ८ ॥
एक कोटि अस्सी लख घोड़ा । पैदल वसु युग राग किरोड़ा ॥ ९ ॥

दोहा- कुरूक्षेत्र के दरमियाँ, होय इकट्ठी फौज ।
भारत में संग्राम यह, भयउ अठारह रोज ॥ २० ॥

चौ – दिवस अठारह भयो व युद्धा । जूझि मरे सब महिकर क्रुद्धा ॥ १ ॥
एक उनशत पुत्र गंधारी । दिये भीम ने सकल पछारी ॥ २ ॥
पुनि दुर्योधन की वह जंघा । तोड़ि कियो प्रण पूर्ण अभंगा ॥ ३ ॥
द्रोण पुत्र आयउ उस काला । देखि नृपति की दशा विहाला ॥ ४ ॥
बचपन साथ रहे हम दोउ । कहो उपाय करूँ मैं सोउ ॥ ५ ॥

यह बच सुन बोल्यो भीमारी । सुनहू द्रोण सुत बात हमारी ॥ ६ ॥
भ्राता पुत्र न सेन की चिन्ता । पर पांडव जिवित जगमिन्ता ॥ ७ ॥
तब रहते यह सब मम वैरी । करे राज्य यह चिन्ता मेरी ॥ ८ ॥
यह सुनि कहेउ द्रौणि हर्षाकर । पाँचो पांडव का शिर हर कर ॥ ९ ॥
लाकर देऊँ तुम्हे नर राई । यह कह द्रोणि गयो घर आई ॥ १० ॥

दोहा- **रात अँधेरी का समय, कृत्या को ले साथ ।**
रुद्र पाठ करता हुआ, गया खड्ग ले हाथ ॥ २१ ॥

चौ– सोवत जहाँ दौपदी बालक । गयो वहाँ पांडव कुलघालक ॥ १ ॥
समझि पाँच पांडव वह उनको । शीश काटि दिय कुरू पति को ॥ २ ॥
गुरुसुत से तब कहे कुरु राई । यह सिर पांडव के नहि भाई ॥ ३ ॥
धोखा खाय द्रोपदी बालक । सिर तुम काटि दियो कुल घालक ॥ ४ ॥
प्रथम प्रसन्न हुआ दुर्योधन । पाछे रंजित होकर निजमन ॥ ५ ॥
हर्ष विषाद मध्य उस काला । प्राण छाँडि दीन्हे नरपाला ॥ ६ ॥
लखि कृपिसुत दुर्योधन हाला । दुखी होय मन में मुनि पाला ॥ ७ ॥
अर्जुन भीम कृष्ण के डर से । भाजि गयो द्रोणि सुत घर से ॥ ८ ॥
प्राण लेय भागा वह कैसे । सूर्य देवता शिव डर जैसे ॥ ९ ॥

दोहा- **सुत शिर काटन का जभी, सुना द्रोपदी हाल ।**
अति विलाप करके यह, शपथ करी उस काल ॥ २२ ॥

चौ.– अश्वत्थाम मरे नाहि जब तक । अनशन व्रत धारू मैं तब तक ॥ १ ॥
बोली अर्जुन से तुम जावहु । अश्वत्थाम मार घर आवहु ॥ २ ॥
यह सुनि वचन लियो धनु हत्था । गयो द्रोणि कर काटन मत्था ॥ ३ ॥
रथ चढ़ि कहेउ कृष्ण से अर्जुन । शीघ्र चलाहू वाजि प्रभु के स्यंदन ॥ ४ ॥
श्री प्रभु रथ तब हाँकत कैसे । विनता सुत नभ जावत जैसे ॥ ५ ॥
क्षण भर में द्रोणी सुत वीरा । जा पहुँचे अर्जुन बलवीरा ॥ ६ ॥
स्यन्दन लखि द्रौणि बलवीरा । ब्रह्मशक्ति छाँड़ि धरधीरा ॥ ७ ॥

छन्द - **विकराल ब्रह्मा बाण वह, अर्जुन के तीरे जब गया।**
कर जोय के श्रीकृष्ण से, बलवीर यों कहता भया ॥
यह अग्नि कैसी है प्रभो, दौड़ी चली जो आवती ।
संसार के जो जीव जन्तु, है उन्हें यह खावती ॥ १२ ॥

यह ब्रह्मशक्ति अश्वत्थामा, ने तजी जग नाशिनी ।
तू भी अपनी ब्रह्मशक्ति, त्याग दे भय हारिणी ॥
निज ब्रह्म वाण कराल छंड्यो, कृष्ण की यह वात सुन ।
तव दोउ शक्ति का हुआ, आपस में संगर घोरघन ॥१३॥
अश्व थामा शस्त्र को निज, फेंकना तो जानता ।
पर नहीं पीछा बुलाना, वीर उस को आवता ॥
मंत्रविद तुम मंत्र पढ़, उस अस्त्र को बुलवाईये ।
अश्वथामहि हनन करि, पुनि द्रौपदी ढिंग जाईये ॥ १४॥

दोहा- अर्जुन ने तव मंत्र पढ, लीन्हा अस्त्र बुलाय ।
रथ दौड़ा करके तभी, गहा द्रौणि को जाय ॥ २३ ॥

चौ– चित्त में दया धर्म की राहा । गुरु सुत जानि वधा नहि ताहा ॥ १ ॥
अर्जुन धर्म परीक्षा कारन । बोले वचन संत भय हारन ॥ २ ॥
आततायि जो षट् जग अन्दर । तेहि वधे वहि धर्म धुरन्दर ॥ ३ ॥
आततायि है अश्वत्थामा । येहि मार निज कीजे कामा ॥ ४ ॥
यह सुनि जिष्णु कहे कर जोरी । सुनहु सत्य संध वीनति मोरी ॥ ५ ॥
ब्राह्मण पाप करे यदि भारी । तदपि न वध के योग्य मुरारी ॥ ६ ॥
बांधि इसे हम द्रुपद सुता के । पहुचाये ढिंग मूर्तिमता के ॥ ७ ॥
जैसो हुक्म द्रौपदी देही । वही प्रतिक्रिया देऊँ में एही ॥ ८ ॥

सोरठा- गुरु सुत के कर पैर, वांधे अर्जुन ने जभी ।
द्रुपदसुता के नैर शीघ्र उसे लाया वहीं ॥ ५ ॥

दोहा- बँधा हुआ लखि गुरु सुमन द्रुपद सुता कर आह ।
घोर रूदन करने लगी दया धर्म की राह ॥ २४ ॥

चौ – मम प्रण पूर्ण कियो तुम नाथा । जो मम शत्रु गह्यो निज हाथा ॥ १ ॥
तुम द्रौण समीप पढे धनुवेदा । पूजित तासु सुवन तजु खेदा ॥ २ ॥
येही प्रचुर दंड असुरारी । देवहिं निज करमन अनुसारी ॥ ३ ॥
यहि कर मरत कृपी दुख कैसे । पावहिं बिन बालक मैं जैसे ॥ ४ ॥
ये ही वधे न जिये में बालक । यहि हित तजहू इसे द्विज पालक ॥ ५ ॥
यह सुनि धर्म नकुल सहदेवा । भे प्रसन्न सुनि वच यश लेवा ॥ ६ ॥
यह वच भीम लगा नहीं नीका । गदा टेकी महि सम्मत जीका ॥ ७ ॥
बोल्यो वचन भीम सुन भाई । प्रण करि नाहक कीन्हि हँसाई ॥ ८ ॥

दोहा- **ब्रह्म अंश व कर्म से, भयो विप्र यह हीन ।**
यही मारने की नहीं, हत्या लगे प्रवीन ॥ २५ ॥

चौ — शरणागत शयन किये औ बालक । तिय मद मत्त भक्त गुरुघालक ॥ १ ॥
आगि लगावे विष शठ देवे । गुरु निंदक ब्रह्मांश पचावे ॥ २ ॥
जो द्विज होय करे मद पाना । ताहि वधे कछु पाप न माना ॥ ३ ॥
यह सुनि वचन कहे बलभाई । द्रौपदि भीम धर्म नर राई ॥ ४ ॥
सब की आज्ञा के अनुसारी । करहु पूर्ण प्रण हे कर्णारि ॥ ५ ॥
शास्त्र वचन भी मृषा न होई । रहे प्रसन्न मन में सब कोई ॥ ६ ॥
यह सुनि अर्जुन कियो विचारा । यह उपाय करूँ कवन प्रकारा ॥ ७ ॥
बाल वधे ते भयो बलहीना । "शौनक" माथ मुंडा तब दीना ॥ ८ ॥
असि ते चीर माथ मणि लिन्ही । द्रुपद सुता के कर वह दीन्ही ॥ ९ ॥

दोहा- **अपर कथा कहुँ ऋषिगणों, सुनहु कृष्ण कर ध्यान ।**
धर्मराज श्रीकृष्ण की, आज्ञा शिर पर मान ॥ २६ ॥

चौ— जे जे लाश पड़ी रण माँही । वे सब दग्धि कुटुम्बिन जाही ॥ १ ॥
कर्म कियो सब सरिता तीरा । निज कर धारि गंग कर नीरा ॥ २ ॥
पति विहीन नारी उस काला । दुखी होय के रुदन कराला ॥ ३ ॥
सकल परस्पर पति गुण गाती । निज गृह गवन कियो बिलखाती ॥ ४ ॥
देखि दशा यह धर्म नरेशा । दारुण दुसह भयउ मन क्लेशा ॥ ५ ॥
कहहि धर्म निज दे धिक्कारा । अघ यह संग न तजहि हमारा ॥ ६ ॥
भई चूक मोसे यह भारी । जो कीधों यह रन "बनवारी" ॥ ७ ॥
पति विहीन मम वंश कि नारी । रोवत कल्पत निज मन भारी ॥ ८ ॥

दोहा- **इनके आँसू के गिरे, भीजे जे कण धूरि ।**
तावत् वर्षों तक करूँ, नरक वास भरपूरि ॥ २७ ॥

चौ— भीष्म पितामह मह गुरुवर द्रोणा । द्रौपदिपुत्र जयद्रथ कर्णा ॥ १ ॥
ये सब भयउ काल कलेवा । इन्हें मारि राज्य मैं लेवा ॥ २ ॥
यह अधर्म का राज्य न मोकू । लागत नीक न भ्रातृ विशोकू ॥ ३ ॥
यह सुनि श्रीकृष्ण व्यास ऋषि राई । बोले वचन सुनहु नरराई ॥ ४ ॥
रीति प्रथम ते यह चलि आई । पुत्र पिता निज भाई भाई ॥ ५ ॥
पृथ्वी राज सिंहासन हेतू । लरहिं मरहिं महि कटि नृपकेतू ॥ ६ ॥
पुनि अघ वारन को उस काला । वाजि मेध करते नरपाला ॥ ७ ॥

तुम भी पाप छुड़ावन हेतू । करहु यज्ञ पांडव कुलकेतू ।। ८ ।।
यह सुनि कहे युधिष्ठिर भूपा । सुनहु वचन हे ज्योति स्वरूपा ।। ९ ।।

दोहा- **भ्रातृ हनन कर अवनिपा, वनते आवत लाज ।।**
इस कारण धारूँ नहीं, राज ताज महाराज ।। २८ ।।

चौ– धोवन चहे पंक यदि कोई । कहु प्रभु दूर कवन विधि होई ।। १ ।।
मन समुझावन कारन स्वामी । कह्यो यज्ञ शास्तर अनुगामी ।। २ ।।
पशु अनेक यज्ञ के अन्दर । मरहि जासु लगि पाप भयंकर ।। ३ ।।
मेरे यज्ञ करे वनवारी । कल्पित सुखी न हो यह नारी ।। ४ ।।
मोहन तब बोले मुस्काई । चिन्ता तजहु भीम बड़भाई ।। ५ ।।
भीष्म पितामह बाणन शैया । पड़े हुये रन रंग रँगैया ।। ६ ।।
तेहि ढिंग चलहु विप्र ले साथा । जो वह कहे करहू नरनाथा ।। ७ ।।
नन्द सुवन की सुनि यह वाता । तिया संग ले चारिउँ भ्राता ।। ८ ।।

दोहा- **भीष्म पितामह थे जँह, प्राण मात्र अवशेष ।**
ऋषि मुनियों के सहित वहँ, पहुँचे धर्म नरेश ।।२९।।क
पांडव बाँये ऋषि मुनि, दाहिने संमुख श्याम ।
भीष्म पितामह के निकट, बैठे शोभा धाम ।।२९ ।।ख

चौ.– रिषिवर समाचार यह सुनिकर । वाल्मिकी भरद्वाज मुनिवर ।। १ ।।
परसुराम जावालि ऋषीशा। च्यवन वशिष्ठ मृकंड मुनीशा ।। २ ।।
विश्वामित्र सुमेध विशारद । आये ज्ञान श्रवन हित नारद ।। ३ ।।
दर्शन करिके श्री भगवाना । बड़े भाग्य बोले हम जाना ।। ४ ।।
कहे सूत तजि के सब भोगा । बैठे निज आसन सब लोगा ।। ५ ।।
तबहिं रोहिणीपति कुलनाथा । बोले वचन जोरि दोउ हाथा ।। ६ ।।
" भीष्म पितामह " राज्य के काजा । नहि नृप शीश धरत यह ताजा ।। ७ ।।
बन्धु विरादर विप्र सुभाई । हनन कियो यह युद्ध रचाई ।। ८ ।।

दोहा- **कहते है यह कुन्ति सुत, होय न पाप उद्धार ।**
तब तक मैं धारूं नहीं, कठिन राज्य का भार ।। ३० ।।

चौ.– भीष्म पितामह यह सुनि बोले । बचपन कष्ट बहुत नृप झेले ।। १ ।।
पितु तजि गमन कियो सुरधामा । तब ते दुःख झेले निशि यामा ।। २ ।।
कुरूपति दियो दुष्ट कुल छेदक । भीम सेन हित विष के मोदक ।। ३ ।।
सब धन धाम धरनि नृप तेरी । छीने धूत खेल रचि वैरी ।। ४ ।।

तेरह वर्ष दियो वनवासा । इही तुम्हार जिवत नहिं आसा ॥ ५ ॥
अर्जुन भीम बड़े बलवीरा । द्रौपदि सति तुम्हारे तीरा ॥ ६ ॥
निशिदिन कृष्ण सहायक जेही । कोटि वैरि नहि मार सके ही ॥ ७ ॥
होनहार जग में बलवन्ता । मेटि सके नहि विनु भगवन्ता ॥ ८ ॥
दुख सुख प्रथम जनम अनुसारी । भोगत सकल जगत नर नारी ॥ ९ ॥

दोहा- **अजर अजन्मा अजय अज, अलख अखंड अभेद।**
पर ब्रह्म महिमा अमिट, जान सकत नहिं वेद ॥ ३१ ॥

चौ- बिन हरि रुचि न मनोरथ पूरे । हर्ष व शोक तजहु नृप रूरे ॥ १ ॥
हर्ष विषाद शोक संतापा। सब हरि इच्छा ते तव व्यापा ॥ २ ॥
नारायण इच्छा के उपर । जो न रहे दुख पावे वही नर ॥ ३ ॥
रूप छिपाय त्रिलोकीनाथा। रहे सर्वदा अर्जुन साथा ॥ ४ ॥
जो न भजे नारायण नामा । जासू जन्म अकारथ कामा ॥ ५ ॥
जो तन जप तप पूजन करिके । करत सदा अर्पित श्री हरि के ॥ ६ ॥
तेहिकर नाम सुनहु नृप काना । शंकर धरहिं सदा हरिध्याना ॥ ७ ॥
नारद बीन बजा गुण गाते । फिरहि त्रिलोक न प्रेम अघाते ॥ ८ ॥

सोरठा- **करे ब्रह्म का ध्यान, कपिल देव मुनि निस दिवस ।**
करहिं सदा गुण ज्ञान, व्यास पुत्र शुकदेव रिषि ॥ ६ ॥

चौ.- आपद राज्य मोक्ष नय दाना । सर्व धर्म यह भीष्म बखाना ॥ १ ॥
हरि इच्छा समुझहु यह मन में । भगवत भजन करहु इस तन में ॥ २ ॥
पुनि बले सुनहु नर राजा । तजहु शोक सिर धारउ ताजा ॥ ३ ॥
गोत्र वधन की चिन्ता मन ते । दूर करहुँ पालहु प्रज तनते ॥ ४ ॥
यहि तव धर्म जगत नरराई । करहुं प्रजा पालन गृह जाई ॥ ५ ॥
और एक सुन धर्म नृपाला । कहउँ तुम्हे मैं होय विहाला ॥ ६ ॥
होय अधर्म जहाँ जग माहीं । करहिं मनाहिं धर्मविद ताही ॥ ७ ॥
कहे द्रोपदी यह सुनि बाता । कुरुपति दुःख दियो मोहि ताता ॥ ८ ॥

दोहा- **दुःशासन में कच गहि, ले पहुँच्यो दरबार ।**
कहाँ गयो तव ज्ञान यह, भीषम पाप निहार ॥ ३२ ॥

चौ. वचन द्रोपदी के यह सुनकर । बोले भीष्म सुनहु हे सतिवर ॥ १ ॥
अन्न अधर्मिन का मैं खाया । यहि हित सति यह ज्ञान भुलाया ॥ २ ॥
ज्ञानि मनुज पड़ि पापी संगत । तुरत हि बदल देत निज रंगत ॥ ३ ॥

फिरहि दशा विधि बहुरि की मोरी । देखिहूँ नैन श्याम पद तोरी ॥ ७ ॥
सुदिन सुधरी तात कब होइहि । मम सुत जिअत वदन विधु जोइहि ॥ ८ ॥

सौरठा- **राज्य न मोंहि सुहाय , मिलहिं विपत वनवास की ।**
दर्शन बिन यदुराय , राज्य सुख किस काम का ॥ ७ ॥

चौ.— द्रव्य मिलहि होय अभिमाना । बनहि न भक्ति भजन भगवाना ॥ १ ॥
दीनदयाल कृपाल गुणाकर । तव पद बिन तरहि न भवसागर ॥ २ ॥
ले आज्ञा रवि चन्द तिहारी । तम कर नाश करहि उजियारी ॥ ३ ॥
माँगहु मैं वरदान मुरारी । छूटहिं प्रेम सकल परिवारी ॥ ४ ॥
निशि दिन ध्यान धरों प्रभु तोरा । रहे अखंड प्रेम जिय मोरा ॥ ५ ॥
कुन्ति कथन सुनि कृपा निधाना । एवमस्तु बोले भगवाना ॥ ६ ॥
पुनि माया फेरी तेहि उपर । बिसरहिं तुम्हे न कहें मुस्काकर ॥ ७ ॥
अचल रहहु यह प्रेम तुम्हारा । जब लगि गंग जमुन जलधारा ॥ ८ ॥
बहु दिन भये मुझे यहँ आये । नहि संदेश द्वारका पाये ॥ ९ ॥

सोरठा- **चतुरंगी ले साथ, अर्जुन तुम श्री कृष्ण को ।**
धनुष धार कर हाथ, पहुँचा आवउ द्वारिका ॥ ८ ॥

दोहा- **नृपति युधिष्ठिर वचन ते, कृष्ण धनंजय मित्र ।**
विदा माँगि रथ चढ़ि गये, आगे सुनहु चरित्र ॥ ३८ ॥

चौ— समाचार पुरवासिन पाये । व्याकुल बिलखि वदन उठि धाये ॥ १ ॥
कंप पुलक तन नयन सुनीरा । गहे चरन अति प्रेम अधीरा ॥ २ ॥
कहि न सकत कछु चितवत ठाढे । मीन दीन जनु जलते काढे ॥ ३ ॥
कृष्ण वियोग विकल भये ठाड़े । जहँ तहँ मनहु चित्र लिखि काढ़े ॥ ४ ॥
सहि न सके नर श्याम विरहागी । चले लोग सब व्याकुल भागी ॥ ५ ॥
सबहिं विचार कियो मन माँही। प्रभु घनश्याम बिन सुख नाही ॥ ६ ॥
धन्य भाग बृज गोपिन सारी । उसी समय बोली इक नारी ॥ ७ ॥
जो प्रभु श्याम सुन्दर कर साथा । करत रास लीला गहि हाथा ॥ ८ ॥
वसु नभ चन्द राग महि रानी। रहत श्याम संग सुमुखि सयानी ॥ ९ ॥

दोहा- **अपर सखी कहने लगी, ऐसो को जग माँहि ।**
जो लखि छवि श्री श्याम की, चित्त न रहे लुभाय ॥३९॥

चौ— कहहि तृतीय वचन सप्रीती । सखि इन कोटि काम छवि जीती ॥ १ ॥
कहहु सखि अस को तनुधारी । जो न मोहि यह रूप निहारी ॥ २ ॥

श्याम गात कल कंज विमोचन । यह कंसा कालीमद मोचन ॥ ३ ॥
इस प्रकार कहि गजपुर नारी । सुमन वृष्टि तव प्रभु चर डारी ॥ ४ ॥
लखि सप्रीति सबहि समुझाई । पुनि कुन्ति पद प्रभु शिर नाई ॥ ५ ॥
रथ चढ़ि श्याम सुनहु मुनिराई । चले द्वारिका सब शिर नाई ॥ ६ ॥
कुन्ति देश कुंडिनपुर कस्मिर । पंचाल विदर्भ देश हो मुनिवर ॥ ७ ॥
जहँ विश्राम कियो अघहारी । दर्शन काज भीर भई भारी ॥ ८ ॥
सफल जन्म कियो लखि रूपा । भे अघहीन कढ़े भवकूपा ॥ ६ ॥
भूकर भार उतारन कारन । लियो जन्म जग में जग तारन ॥ १० ॥

दोहा- **धन्य भाग यदुवंशियन, लखत सदा प्रभुगात ।**
करहिं सकल सेवा सदा, प्रेम न हृदय समात ॥ ४० ॥

चौ– इस प्रकार कहि मग नर नारी । हर्षित सुमन वृष्टि कर भारी ॥ १ ॥
मग सुख देत सकल नर नारी । पहुँचे जबहि द्वारिका द्वारी ॥ २ ॥
पाञ्चजन्य कम्बू ले हाथा । तबहि बजाय दियो यदुनाथा ॥ ३ ॥
पुरवासी सुनि शंख अवाजा । आये जँह प्रभु स्वागत का जा ॥ ४ ॥
सड़क गली घर द्वार हथाई । इतर फुलेल तेल छिड़काई ॥ ५ ॥
नव अरु सात श्रृंगार सजाई । आरति साजि तिया कर लाई ॥ ६ ॥
जुवति भवन झरोकन लागी । निरखहिं श्याम रूप अनुरागी ॥ ७ ॥

दोहा- **हिय हर्षहि वर्षहि सुमन, सुमुखि सुलोचनि वृन्द ।**
दर्शन कर पुर नर सभी, हो गये परमानन्द ॥ ४१ ॥

हरिगीतिका छन्द-

भय परम अनंदा, लखि यदु चंदा, असुर निकंदा यदुवंशी।
दीनदयाला श्याम कृपाला, रिषिमुनि पाला अवतंशी॥
हर्षित नर नारी कहत पुकारी, सुनहु मुरारी ये वाता ।
इतने दिन स्वामी हम खल कामी, दर्श मिल्या नहि तव ताला ॥
भेटे भरि छाती कंस अराती, प्रेम न हृदय समाई ।
पुनि पितुमाता पद धरि माथा, पांडव जीत सुनाई ॥१७॥

सोरठा— **भे प्रसन्न सब कोय, विजय श्रवन ते श्रवण कर ।**
प्रेमलीन पुनि होय, कहन लगे घनश्याम सो ॥ ६ ॥

चौ- तुम बिन अंध भये हम कैसे । निशा होय चंदा बिन जैसे ॥ १ ॥
भई घनश्याम तिया सुखि कैसी । लखहि चकोर चंद्रमा जैसी ॥ २ ॥

रुक्मणी आदि सबै पटरानी । निज मंदिर ठाढी गुणखानी ॥ ३ ॥
बड़ सम्मान कियो नन्दलाला । करि श्रृंगार सर्व नृपवाला ॥ ४ ॥
रुप अनेक किये पुनि धारन । पहुँचे निज गृह भक्त उद्धारन ॥ ५ ॥
छोटे बडे द्वारका वासी । सवहिं सुख दीन्हो सुख रासी ॥ ६ ॥
श्रवन करन ते अपर पुराना । मिलहि न वहुदिन भक्ति निधाना ॥ ७ ॥
यह शुक शास्त्र सुने जो कोई । पाप खंड हो तीन विगोई ॥ ८ ॥

दोहा- **एक भाग इच्छा करत, दूसर जावत काल ।**
तृतीय श्रवन ते नष्ट हो, कहे सूत मुनिपाल ॥ ४२ ॥क
इधर द्वारिका आ गये, कृष्ण कन्हैयालाल ।
श्रवन कीजिये अव उधर, पांडव कुल का हाल ॥ ४२॥ख

चौ- धर्मराज नीति अनुसारी । करहि सदा परजा रखवारी ॥ १ ॥
करहि राज्य पर विना प्रभू के । दर्शन विन नहि भात विभू के ॥ २ ॥
हृदय ध्यान रखि चरन दयाला । राज काज करते नरपाला ॥ ३ ॥
जन्म परीक्षित का मुनिराई । सुनहु सकल अव चित्त लगाई ॥ ४ ॥
सुदिन सुनखत सुयोग सुवारू । लियो परीक्षित जन्म भुवारू ॥ ५ ॥
लेकर जन्म शिशु चहुँ ओरा । लगा देखने नन्दकिशोरा ॥ ६ ॥
मातुगर्भ लखा जो रूपा । कहां गयो वह वाल अनूपा ॥ ७ ॥
पर यह भेद लख्यो नहि काहु । नान्दी श्राद्ध नृपति उत्साहू ॥ ८ ॥
कियो मंगलाचार मनाकर । दियो दान भूदेव वुलाकर ॥ ९ ॥

दोहा- **कवि कोविद गुणवंत सव, ग्रह गति जान न हार ।**
वुलवाये नृप तभी, वोल्यो वचन भुँवार ॥ ४३ ॥

चौ- जन्म लग्न फल कहऊ विचारी । सुनहु गणक यह बात हमारी ॥ १ ॥
इन्ह कर नाम परीक्षित भूपा । हम सब कहत स्वमति अनरूपा ॥ २ ॥
धीर हिमाचल के सम आनहु । गंभीर पयाकर के सममानहु ॥ ३ ॥
सुर गुरु सम विद्या यह पढ़हीं । भोग विलास इन्द्र सम करही ॥ ४
दाता शंभू समा यह वालक । होहि सदा पांडव कुलपालक ॥ ५ ॥
बड परतापि अउर बलवाना । करहीं यह रैयत कल्याना ॥ ६ ॥
दे कलियुग पापि अधर्मिन दंडा । करहि राजरिषि यह अरिखंडा ॥ ७ ॥
अंत समय यक बाल रिषीश्वर । देहि शाप यहि धर्मधुरंदर ॥ ८ ॥
तक्षक नाग डसे जब याही । मृत्यु होय गंगा तट जाही ॥ ९ ॥

सोरठा- नृपवर होय उदास, गणकन से कहने लगे ।
सुनहु गणक अरदास, विप्रशाप मरिवो कु रहे ॥ १० ॥

चौ- साधु संतु रिपि महि सुर शायत । मरतु तासु नहिं मुकुति वियापत ॥ १ ॥
यह सुनि कहत गणक "नर राई" । करहीं यह रिपि मुनि सेवकाई ॥ २ ॥
तव कुल कमल भयो नहि ऐसो । ईश्वर भकत परीक्षित जैसो ॥ ३ ॥
यह सुनि मुदितु भये नरराई । विदा कियउ दे भेट दिवाई ॥ ४ ॥
कहहिं परस्पर पांडव भाई । वड़भागी ये सुत इक पाई ॥ ५ ॥
यहि ते जग होंहि नाम हमारा । इति कह भयउ प्रसन्न अपारा ॥ ६ ॥
भयो अव्द जव सप्त व्यतीता । हुआ परीक्षित गुण गोतीता ॥ ७ ॥
निशिदिन पांडव करे विचारा । देकर राज्य भजें करतारा ॥ ८ ॥

छन्द- मानि के धृतराष्ट्र आज्ञा, धर्म करते राज को ।
ध्यान था दिन रात उनको, दुख न हो धृतराष्ट्र को ॥
सेवा लखी यहि नृपति की, कुरुराज तव यो वोलता ।
राजन तुम्हारे साथ, शत्रुता नहीं मैं चाहता ॥ १८ ॥

दोहा- ईश्वर इच्छा के विना हरत न एकहु पात ।
मृत्यु सवन की यों लिखी तजहु शोच अव तात ॥ ४४॥

चौ- कहे युद्धिष्ठिर सुनहु हे ताता । मैं कर युद्ध जवहु घर आता ॥ १ ॥
होवत तवहि विचार ये मेरे । बन्द करहुँ यह युद्ध सवेरे ॥ २ ॥
चारि दिवस के जीवन कारन। भाई व बन्धु उचित नही मारन ॥ ३ ॥
मृत्यु बाद धरणी धन धामा । जावत साथ न सुत निज वामा ॥ ४ ॥
अस कहि कुरुपति से नरराई । विदा माँगि गवने शिर नाई ॥ ५ ॥
करहिं राज जव धर्म नरेसू । जीव जन्तु नहि पाव क्लेसू ॥ ६ ॥
हो इच्छा पय वर्षत नभते । विना काल फल फूल न फलते ॥ ७ ॥

दोहा- अजा बाघ इक घाट पय, पीते थे उस काल ।
सुखी भये वड़ छोट अव, आगे सुनहु हवाल ॥ ४५ ॥

सोरठा- एक वर्ष उपरान्त, मैत्रेय रिषि से विदुरवर ।
सुना युद्ध जव शान्त, गये हस्तिनापुर तवहि ॥ ११ ॥

चौ- फिरत फिरत यमुना के तीरा । पहुँचे मैत्ररिषी गृह विदुरा ॥ १ ॥
रिषिमुख ते सुनि कौरव नासा । धर्मतिलक सुनि भये उदासा ॥ २ ॥
सुख सम्मान धर्म नरराई । करत सुयोधन पितु सेवकाई ॥ ३ ॥

यह सुनि कहेउ विदुर करि खेदा । मन धृतराष्ट्र भयो नहि छेदा ॥ ४ ॥
राज्य सुवन शत गयउ नसाई । तदपि न विरत भयो मम भाई ॥ ५ ॥
भ्रात समीप अभी मैं जाऊँ । त्यागे मोह जगत जिमि ताऊँ ॥ ६ ॥
करहुँ उपाय वही मैं जाकर । यह कहि विदुर गये नृप आगर ॥ ७ ॥
वड़ सम्मान नृपति तब कीन्हो । दोउकर जोरि सुआसन दीन्हो ॥ ८ ॥

दोहा- **मेरे कुल में कृष्ण के, भक्त न तुम सम कोय ।**
करी कृपा इस दास पे, दियो दर्श आ मोय ॥ ४६ ॥

कुंडलिया छन्द—
दियो दर्श आ मोय, और गृह कियो पवित्रा ।
रहत प्रभू का नाम, करहिं सदा गुण गान विचित्रा ॥
कहे युधिष्ठिर भूप, भये हम दुखी घनेरे ।
तवहि कियो दुख दूर, विदुर तुम आकर मेरे ॥ १६ ॥

चौ— तीरथ कवन कियेउ तुम ताता । कहहु प्रभास क्षेत्र की वाता ॥ १ ॥
देकर राज गये यदुराई । तव ते सुधि न तात हम पाई ॥ २ ॥
सब तीरथ का विदुर कृपाला । सुनि नृप वचन कहेउ सब हाला ॥ ३ ॥
पर यदुवंश नाश नहि वरणा । अन्तरध्यान भये जिमि कृष्णा ॥ ४ ॥
अर्जुन कहहिं हाल सब आकर । मैं कहुँ तो दुखि होय धुरंधर ॥ ५ ॥
ऐसी वात कहउ नहीं कोई । जो सुनि वचन दुखी मन होई ॥ ६ ॥
नीति वचन मन नीक विचारी । हाल कह्यो नहि विदुर मुरारी ॥ ७ ॥
सुनि रनिवास विदुर घर आये । कियो प्रणाम न प्रेम अघाये ॥ ८ ॥

दोहा- **गवने घर धृतराष्ट्र कर, होकर विदुर अधीर ।**
कर प्रणाम पूछी कुशल, भरयो नैन में नीर ॥ ४७ ॥

छन्द- **नैन में भरि नीर तब, कौरव पिता करते अहा ।**
वहु कष्ट आकर के गिरा, तन पे हमारे भ्रात हा ॥
भाई तुम्हारे गमन पीछे, भाग्य मेरो फूटिगो ।
शत सुवन सारे नष्ट होकर, राज्य मेरो छूटिगो ॥ २० ॥
कहने लगे तब विदुर यों, श्रीश्याम की इच्छा यही ।
भूभार हरने के लिए,अवतार धारयो जग वही ॥
अब युधिष्ठिर किस तरह, पर प्रेम करते हैं तुम्हें ।
राजन सुनाओ हालसारा, श्रवन की इच्छा हम्हें ॥ २१॥

धर्मराज समान माता, औ पिता के जानते ।
अर्जुन भी मेरी प्रेम सेवा, कर सुखी मन मानते ॥
पर भीम मुझसे दुर्वचन कह, करके यो कहता अहा ।
राजगद्दी पर तुम्हारा, पुत्र जब बैठा रहा ॥२२॥
मोदक मिलाकर जहर के, भेजे वे मेरे खान को ।
पुनि बन्द कीन्हे लाख गृह, नाशन हमारी जान को ॥
दुःख वचपन में हमें दे, पालना अब चाहते ।
पापी तुम्हारे सम जगत में, अन्य हम ना जोहते ॥ २३॥

दोहा- वचन भीम का यह नहीं, मुझसे सहा न जाय ।
हाल श्रवन कर विदुर यह, कहेउ सोच मन माय ॥४८॥क
परमेश्वर माया प्रवल, आशा अउर सनेह ।
भई दशा यह भ्रात की, तदपि न त्यागहि गेह ॥४८॥ख
जैसे लोभी नर नहीं, तजे जीर्ण पट नेह ।
जरा युक्त नर भी तिमि, तजहिं न प्रीती देह ॥४८॥ग
ज्ञान सिखा इनको करूँ, जग माया से दूर ।
जासे ये भगवान के, भजन करे भरपूर ॥४८॥घ

सोरठा- हिय विचारि यह वात, कहे विदुर धृतराष्ट्र से ।
सत्य समझु मन भ्रात, भीमसेन का कथन यह ॥ १२॥

चौ- वास करहु पांडव गृह अन्दर । सो तुम्हार नहीं नीक कुरूवर ॥ १ ॥
जब तुम भोगत राज्य विशाला। भीमहिं कष्ट दियो विकराला ॥ २ ॥
आनि सभा बिच द्रौपदि नारी । तुम सब मिल खिंचावावत सारी ॥ ३ ॥
भीमसेन को जहर खिलाकर। लाक्षागृह में आग लगाकर ॥ ४ ॥
सब धन धाम द्यूत रचि छीन्हो । वर्ष त्रयोदश वन दुख दीन्हो ॥ ५ ॥
अब उन्ही से पालत निज तन । सो न नीक जानहु अपने मन ॥ ६ ॥
मोह माया परिके भे भृष्टा । सब सुत भयउ भ्रात तव नष्टा ॥ ७ ॥
बड़ी प्रबल परमेश्वर माया । जिसने तुमको आनि सताया ॥ ८ ॥

दोहा- सुवन हमें जिस भीम ने, तासु भ्रात तुम अन्न ।
खावत लाज लगे नहीं, कौरव पति मति छिन्न ॥ ४६ ॥

चौ- खावत अन्न भीम कर कैसे । कुकुर मार खाय पुनि जैसे ॥ १ ॥
भयउ वृद्ध तदपि तव भाई । जीवन आस बनी मन माँई ॥ २ ॥

तब तन भयो विरत न जगते । अमर रहो न सदा इस तनते ॥ ३ ॥
उत्तर खंड चलहु इस कारन । भजहु जाय वहाँ भक्त उद्धारन ॥ ४ ॥
ध्यान लगा हिय में प्रभु चरना । त्यागउ तन मग मुक्ति य वरना ॥ ५ ॥
अब परलोक विगारत क्यों कर । यह सुनि वचन कहत धृतराष्ट्र ॥ ६ ॥
वचन य सत्य सुनायउ मोंही । ध्यान यहि जिय मे मन होही ॥ ७ ॥
पर चख हीन रहे हम दोई । उत्तरखंड गमन किमि होई ॥ ८ ॥

सोरठा- **हमें तुम्हारी तात, सेवा करनी है उचित ।**
पकर हमारा गात, चलहु उत्तराखंड में ॥१३॥
गंधारी कुरूतात, विदुर वचन को मानि के ।
निकसे आधीरात, विन पूछे "नृपधर्म" से ॥१४॥

चौ- उत्तरखंड सहित गंधारी । कर गहि विदुर चले हिमधारी ॥ १ ॥
उधर भयो जब प्रात्तःकाला । कियो स्नान जब धर्म नृपाला ॥ २ ॥
नित्य नियम करि करन प्रणामा । गवन कियो कौरव पितुधामा ॥ ३ ॥
शून्य अगार देखि हिय अन्दर । कियो सोच अति धर्म धुरन्धर ॥ ४ ॥
लगे कहन लखि मे अपराधा । बूढ़ि मरे वे गंग अगाधा ॥ ५ ॥
लगे विलाप करन उस काला । पुनि संजय से बोले नरपाला ॥ ६ ॥
नयनहीन मम दोउ पितु माता । कहाँ गये हे संजय ताता ॥ ७ ॥
संजय कहे सुनहु नर नाथा । गे धृतराष्ट्र विदुर के साथा ॥ ८ ॥

दोहा- **संजय के यह सुनि वचन, हो रंजित नर पाल ।**
आयउ अपने भवन में, आगे सुनहु हवाल ॥ ५० ॥

चौ- नारद तेहि समय वहँ आये । करि प्रणाम नृपति हरषाये ॥ १ ॥
आसन दे विठलाये सादर । बोले तवहि नृपति गुण आकर ॥ २ ॥
कहाँ गये मम पितु अरू माता । सत्य कहउ हे मुनि विख्याता ॥ ३ ॥
यह सुनि वचन कहे मुनि नारद । अनृत जगत ये ज्ञान विशारद ॥ ४ ॥
लेकर जन्म जगत जो आवत । एक दिवस मृत्यु वह पावत ॥ ५ ॥
दुख सुख सर्व कर्म आधीना । तजहु सोच यह नृपति कुलीना ॥ ६ ॥
जग नर नार बालधन जाला । माया डोर बंधे नरपाला ॥ ७ ॥
कृपा करहि जेहि पर नटनागर । सो नर शीघ्र तरहि भव सागर ॥ ८ ॥

दोहा- **विदुर सीख ते विरत हो, गांधारी कुरुराज ।**
गयउ उत्तराखंड में, तप करने के काज ॥ ५१ ॥

चौ– हिमगिरि सप्तरिषीश्वर स्थाना । गयउ विदुर संग नीति निधाना ॥ १ ॥
करहिं जाय वहँ हिय प्रभुध्याना । दिवस सप्त तजहीं फिर प्राना ॥ २ ॥
तजी सकल इन जग मोहमाया । लाना नीक उन्हे नहीं राया ॥ ३ ॥
जो हरि भगति विमुख हों कोई । तेहिकर सोच नीक जग होई ॥ ४ ॥
जो नर दूर करहीं भव जाला । शोच वृथा जो भजहिं गउपाला ॥ ५ ॥
परम ब्रह्म सबके पति जानो । इसलिए न चिन्ता यह मन मानों ॥ ६ ॥
इस प्रकार समुझा रिषीराई । उसी समय अजलोक सिधाई ॥ ७ ॥
शिक्षा रिषि की मानि जग झूठा । जानी नृपति शोच सव छूठा ॥ ८ ॥
विदुरहिं धर्मराज अवतारी । कहहिं शास्त्र के जानन हारी ॥ ९ ॥

सोरठा- **इधर भये दिन सात, गाँधारीं कुरुराज ने ।**
ध्यान कियो वलभ्रात, त्यागी अपनी देह पुनि ॥१२ ॥

चौ– पाछे भ्रात कर्म कर पूरा । गवने तीर्थ करन श्री विदुरा ॥ १ ॥
उन्ही दिनों वसुदेव दुलारे । तजि निजपुरि गौलोक सिधारे ॥ २ ॥
जबते गय गऊलोक कृपाला। देखहिं अशुभ स्वप्न नरपाला ॥ ३ ॥
लोभ कपट क्रोधाधिक होकर । करहिं वैर नरनार परस्पर ॥ ४ ॥
पिता पुत्र अरु भाई बन्धू । लरहि परस्पर हो धन अन्धू ॥ ५ ॥
यह लक्षण लखि कलि नृप वाता । कहत वृकोदर से सुन भ्राता ॥ ६ ॥
गयउ द्वारिका अर्जुन भैया । समाचार हित कृष्ण कन्हैया ॥ ७ ॥
सौ नहि भ्रात अभी तक आवा । क्या कारन नहीं पत्र पठावा ॥ ८ ॥

दोहा- **दुष्ट विनाशन भव हरन, करन संत उद्धार ।**
तन धन इव मुनि मन अलि, लियो कृष्ण अवतार॥५२॥

छन्द- **भू भार हरने के लिये, अवतार लीन्हो विष्णु ने ।**
कंश केशि व पूतना हनि, धेनुकासुर कृष्ण ने ॥
रचि युद्धइस कुरूक्षेत्र का, अर्जुन के साथी वे वने ।
उस वीर द्वारा, भीष्म द्रोणाचार्य, कर्णादिक हने ॥२४॥
अव कार्य थोड़ा सा रहा है कृष्ण, का नरलोक में।
सम्पूर्ण करि उस कार्य को, पुनि जाहिंगे गउलोक में॥
हे भीम इस संसार में, लक्षण वुरे नित हो नये ।
सो आन पहुँचा है समय, वह देवरिषि जो कह गये॥२५॥

जिन श्यामसुन्दर की कृपा, से शत्रुओं को मारकर।
यह सर्व सुख अरु, राजसिंहासन मिला है वीरवर॥
जीय कंपित हो रहा, दिन रात मेरा उन विना।
वाँई भुजा अरू, नयन वाँया, फरकता है निशिदिना॥२६॥

दोहा- **प्रात पतंगि विलोकि के, गीदरि सम्मुख रोय।**
तन कँपित मन धड़कत, अति डर मालुम होय॥५३॥

चौ- गौ वलि वर्द व वाजि गयंदा। रोवहिं श्वान होय स्वच्छन्दा॥ १॥
निशि मँह बोलहिं घूक भयावन। हो भुचाल नभ चमकहि दामिन॥ २॥
नभते होय रक्त रज वृष्टि। होय अंधेर नहि दीखत सृष्टि॥ ३॥
भयो प्रकास पतंगिहि कमती। सब नदि नाल सीध नहि बहती॥ ४॥
अग्नि होत्रि जब आहुति देहें। होय प्रसन्न वह्नि नहि लैहे॥ ५॥
गौ अरू बैल करहिं नहि प्रीती। हो प्रसन्न पय वत्स न पीती॥ ६॥
मूर्ति सुरन की ते झरि स्वेदा। झूठ वदहि नर मानि न खेदा॥ ७॥
नर स्वभाव क्रोधाधिक होकर। भयो उदय केतु नभ ऊपर॥ ८॥

दोहा- **साधु रिषीश्वर संत जन, कर हिन भजन मुरारि।**
दीखहिं गजपुर उजर सम, होत न मंगल चारि॥५४॥

चौ- इन सब लक्षण ते हे भाई। कहऊँ सोचकर में मन माँई॥ १॥
श्यामसुन्दर वसुदेव दुलारे। तजि अवनि गौलोक सिधारे॥ २॥
इत्थं सोच करहिं नरपाला। अर्जुन आय गयउ उस काला॥ ३॥
उदासीन चित दोउ कर जोये। नृपपद शीश नाय पुनिरोये॥ ४॥
लखी हाल अर्जुन नर पाला। बोले नीक कहो गोपाला॥ ५॥
शूरसेन यदुवंशि व मामा। देवकि उग्रसेन बलरामा॥ ६॥
रतिपति रिष्यकेतु अरु उद्धव। साम्ब चारु अक्रूर सुयादव॥ ७॥
हैं सब नीक कुशस्थली भाई। यह उदासि किहि कारन छाई॥ ८॥

दोहा- **भगवत जगहित जन्म ले, आये सह वलराम।**
सभा सुधर्मा में अहो, शोभित शोभाधाम॥५५॥ क
रोग भयो या देह में, या पायो अपमान।
या भिक्षुक के कारने दियो न भोंजन दान॥५५॥ ख

चौ- या कोई विप्र बाल वृद्ध योगी। आयउ शरण तिहारे रोगी॥ १॥
उन रक्षा तुमने नहि कीनी। यहि हित भयउ वदन तव म्लीनी॥ २॥

या कहीं भोगि रजोयुत नारी । या कहिं युद्ध मध्य भई हारी ॥ ३ ॥
भोजन करत काल कोई आवा । तजकर तेहि अकेलहि खावा ॥ ४ ॥
या यदुपति मम कृष्ण पियारे । तजि अवनि गौ लोक सिधारे ॥ ५ ॥
यहि हित गति यह भई तव भाई । कहहु सत्य सब तजि विकलाई ॥ ६ ॥
अर्जुन यह सुन सब नृप वाता । कुछ नहिं कहत कहा नहीं जाता ॥ ७ ॥
पर धर ध्यान श्याम वर चरणा । कर विलाप हाल पुनि वरणा ॥ ८ ॥

दोहा- **हमही छल कर यदुपति, हो गये अन्तरध्यान ।**
जानि सके उनको नहीं, हम सब भे नादान ॥५६॥

चौ— मातुल सुवन जानि यदुराई । करी न उनकी हम सेवकाई ॥ १ ॥
जाना नहिं परब्रह्मस्वरूपा । अजित अनन्त अनादि अनूपा ॥ २ ॥
जगत प्रबल परमेश्वर माया । तेहि परि के ब्रह्म भुलाया ॥ ३ ॥
निशिकर सागर वर्ष हजारी । रहे तदपि वहँ मीन विचारी ॥ ४ ॥
लख्यो जीव इक सागर तेही । तिमि हम ब्रह्म लख्यो नहि येही ॥ ५ ॥
ले धनु हाथ छांडि बहु तीरा । तासु सहाय हने बड़ वीरा ॥ ६ ॥
तब यह समुझि रह्यो मन माँही । निज बल हनों युद्ध में याही ॥ ७ ॥
अब विश्वास भयो नृप मोकू । श्याम दया जीते सब लोकू ॥ ८ ॥
जब से तजि गौ लोक सिधारे । अबल भयो बिन कृष्ण पियारे ॥ ९ ॥
वहि अर्जुन वहि धनु वहि बाणा । वहि भुज जिन मारयो रन करणा ॥ १० ॥
जयद्रथ भीष्म पितामह आदि । मय महेश गंधर्व सुरादि ॥ ११ ॥

दोहा- **जीव सकल बल वीर नृप, लायो द्रव्य अटूट ।**
पर आज विना प्रभु राह में, ले गये तस्कर लूट ॥ ५७ ॥

छन्द- **सर्व धन अरु नार जेवर, जो प्रभु मोंहि दे गये ।**
लूट तस्कर जीत मुझको, द्रव्य सारा लेगये ॥
यहि हेतु भाई वदन, मेरे यह उदासी छा रही ।
अब अन्य विन भगवान के, रक्षक हमारा को नहीं ॥२७॥
युद्ध में कर्णादि वीरों, ने मुझे मारन चाहा ।
कर पीठ में मुझको खड़ा, घनश्याम आगे थे अहा ॥
पुनि धीर देकरि के मुझे, वह इस तरह कहते भये।
हे वीर धर कर धीर तीर ना, छोंड़ि अपना क्यो न ये ॥२८॥

भीष्म कर्ण जयद्रथादिक, सर्व योद्धा मृत है ये।
उनकी कृपा से घाव मेरे, वदन पर लगता न ये ॥
लरते समय करि खेद मन मे, इस तरह कहता अहा।
जल्दी चलाउ मित्र स्यन्दन, धीर क्यों यह कर रहा ॥२१॥

दोहा- सखे मित्र ऐसे वहु शब्द कहे अनजानि।
बुरा न माना तदपि प्रभु निज वालक मोहि जानि ॥५८॥

चौ- कौरव वचन मानि दुर्वासा। अर्द्ध राति आकर हम पासा ॥ १ ॥
भोजन माँगि लियो रिषिराई। तव प्रभु आकर करी सहाई ॥ २ ॥
यह सब बात याद जब आती। शोच रंजकर फटत छाती ॥ ३ ॥
शव समान भयो मम हाला। जब ते गय श्रीकृष्ण कपाला ॥ ४ ॥
भोजन शयन एक संग करिके। रहा सर्वदा साथ हरि के ॥ ५ ॥
विन घनश्याम मुकुन्द विहारी। अब रक्षा को करहिं हमारी ॥ ६ ॥
गये द्वारिका जब यदुराई। अस विचार कीधों मन माँई ॥ ७ ॥
सब जादव जग में बलवंता। ये दुख देहिं रिपीश्वर संता ॥ ८ ॥

दोहा- दुर्वासा ऋषि से दिला, इनको शाप कठोर।
नाश करूँ यदुवंश का, जो है छपन किरोर ॥५९॥

चौ- कर विचार प्रभु यों मन माँही। कियउ नाश तब शाप दिवाही ॥ १ ॥
तब यदुवंशि मरे जू कैसे। खावत छोट जीव वड़ जैसे ॥ २ ॥
लर कट कर मर मिटे परस्पर। छप्पन कोटि घटे यों नरवर ॥ ३ ॥
जब यह हाल याद मोहि आता। तासु समय मम जी घवराता ॥ ४ ॥
पर प्रभु ने दारुक के साथा। भेजि कहाई वात नरनाथा ॥ ५ ॥
धन तिय वालकादि को लेकर। अर्जुन जाहि गजाह्वय अंदर ॥ ६ ॥
गीता ज्ञान दियो मैं उनको। उस अनुसार झूठ लखि तन को ॥ ७ ॥
आत्महिं अजर अमर लखि साँची। माया मोह तजहु मन काची ॥ ८ ॥
ज्ञान समुभि वहि में मन अन्दर कियो संतोष सत्य व्रत धरकर ॥ ९ ॥

दोहा- अब जीवन में सुख नहीं, करहुँ तपस्या आप।
इस प्रकार कहि जिष्णु, ने कीन्हो घोर विलाप ॥ ६० ॥

चौ- सुनकर अर्जुन वचन कराला। करि विलाप बोले नरपाला ॥ १ ॥
अब धन धाम राज सुख जीवन। रूचत न बिन प्रभु के मे मन ॥ २ ॥
उचित न रहन यहँ अब भाई। देकर राज परीक्षित ताँई ॥ ३ ॥

चलहु बद्रिकाश्रम सब मिलकर । तजउ शरीर भजन कर यदुवर ॥ ४ ॥
यह नृप वचन मानि शर भैया । सर्व खबरि रनवास पठैया ॥ ५ ॥
तब कुन्ती द्रौपदी सब नारी । करि विलाप अति भई दुखारी ॥ ६ ॥
पुनि पद गिरवर कर वर ध्याना । तजे कुन्ति ने निज प्रिय प्राना ॥ ७ ॥
उपरोहित पुनि नृपति बुलाया । पौत्रहिं राज तिलक करवाया ॥ ८ ॥

दोहा- **पुनि इन्द्रप्रस्थ मथुरा नगर, वज्रनाभहि देह ।**
पाँचो भाई द्रौपदी, निकसे तज निजगेह ॥ ६१ ॥

सोरठा— **राजसि वस्त्र उतार, पहिन लंगोटी चादरी ।**
विप्रन दान अपार, देकरि के कीन्हों गमन ॥ १६ ॥

चौ- सुन्दर सुखद हिमाचल जाकर । हरि घनश्याम ध्यान मन धरकर ॥ १ ॥
सबते प्रथम नकुल तनु त्यागी । पुनि नृप आदि प्रभू अनुरागी ॥ २ ॥
विदुर प्रभास क्षेत्र में जाई । निज तन त्यागी दियो हे राई ॥ ३ ॥
इधर परीक्षित पाय सुराजही । कियउ नीति धरम से काजही ॥ ४ ॥
नृपति विराट पौत्रि के साथा । कियो विवाह गजाह्वय नाथा ॥ ५ ॥
सप्तद्वीप सगरी नवखंडा । कियो राज दे कलियुग दंडा ॥ ६ ॥
एतो खर्च कियो नृप यज्ञा । वर्णित कर न सकत जेहि प्रज्ञा ॥ ७ ॥
यज्ञ करत समय यक बारा । रह्यो न द्रव्य नृपति भंडारा ॥ ८ ॥
तब नृप कियो ध्यान यदुराई । मिल्यो द्रव्य अति तब नर राई ॥ ९ ॥

दोहा- **कलियुग को किस कारने, दियो दंड नरराज ।**
सब इच्छा पूरी करन, कहउ सूत मुनिराज ॥ ६२ ॥

सोरठा- **किये अधीन सब देश, सप्त द्वीप नृप जीति के ।**
भयउ विचार नरेश, कलियुग आयो जानकर ॥ १७ ॥

छन्द- **जो रहे निज राज बिच, कलि तो न हो परजा भला ।**
मन धार यह नरपाल पूनि, दिग जीतने को जब चला ॥
जेहि देश भूपति जावते, उस देश के नृप आयके ।
लखि तेज पुंज प्रताप अतुलित, भेंटते हर्षाय के ॥३०॥
अति नम्र हो कहने लगे, कुरुराज की जय कार सब ।
धन धाम धरणी कोष, सैनिक देदिये हो मुदित तब ॥
दिग् विजय कर इस तरह, कुरूक्षेत्र में आयो मुदित ।
इक वृषभ औ इक गाय, नीचे वृक्ष के देखे रुदित ॥३१॥

दोहा- वृषभ पाद अवशेष इक, दुबली पतली गाय ।
करत परस्पर बात ये, लखे परीक्षित राय ॥६३॥

सोरठा- दया धरम की राह, सुरभि वृषभ विलोकि के ।
खड़े रहे नर नाह, एक वृक्ष की ओट में ॥१३॥

चौ- बात श्रवण कीन्ही जब सारी । तब नृप निज मन भयउ दुखारी ॥ १ ॥
तेहि समय यक शूद्र भयावन । नृप सम भेष परम दुखदावन ॥ २ ॥
रथ चढ़ि सेन संग ले भारी । मस्तक मुकुट कृष्ण पटधारी ॥ ३ ॥
लिये लकुट आयउ वहँ तहवाँ । सुरभी वृषभ खड़े थे जहँवा ॥ ४ ॥
चरण प्रहार कियो शठ ऐही । लकुट मारि धमकावत तेही ॥ ५ ॥
रूप देखि भयभीत अकूता । आँसु बहाय कियो मलमूता ॥ ६ ॥
जब यह पाप लखा नरराई । कहत क्रोध करि धनुष चढ़ाई ॥ ७ ॥
सप्त द्वीप नवखँड प्रतिपाला । मैं हूँ दुष्ट दमन अरिघाला ॥ ८ ॥

दोहा- कवन देश नृप तुम बसहु, कहु यह पाप पहार ।
किहि कारन शिर धरहु निज, रे मति मन्द गँवार ॥६४॥

चौ- बिनु नृप समुझि मही मन माँही । जो दुख देत रह्यो तू याही ॥ १ ॥
यह अधर्म तज भज भगवाना । नहिं तो मारि निकारऊँ प्राना ॥ २ ॥
परीक्षितहिं लखि कलि बाहर आया । हो भयभीत खड़ा चुपचापा ॥ ३ ॥
पुनि नृप वदति वृषभ से बाता । तव पद खंड कियो को ताता ॥ ४ ॥
तुम कोई सुर होकर मोहि छलने । आयउ मोरि परीक्षा करने ॥ ५ ॥
तुम सम दुखि न लख्यो मैं कोही । अब कुछ कष्ट होहिं नहि तोही ॥ ६ ॥
तजहु शोच अब दोनो प्रानी । धरहु धीर तज कर मन ग्लानी ॥ ७ ॥
चौर कुकर्मी अधर्मि व बंडं । मैं तय्यार देन हित दंडं ॥ ८ ॥
जेहि नृप की रहे प्रजा दुखारी । तेहि गुण आश नाश होय भारी ॥ ९ ॥

दोहा- राज काज समाज सब, बिगरहि सुख सम्मान ।
लोक और परलोक दोउ, कीरति आयुर्ज्ञान ॥६५॥

चौ- तव पद कवन किये वृष नष्टा । तेहि खल करऊँ अभी कर भृष्टा ॥ १ ॥
विबुधपति यदि आ मम राजहि । करहिं प्रजालन का अब काजहिं ॥ २ ॥
तदपि धार कर धनु दंड दैंहो । सत्य कहऊँ नहि अपयश लैंहो ॥ ३ ॥
यह सुनि कहेउ वृषभ शिर नाई । पांडव वंश यही प्रभुताई ॥ ४ ॥
वचन वेद के हो लाचारा । तेहि न जानउ नृपति उदारा ॥ ५ ॥

भोगेउ फल कर्मन अनुसारी । जानहि वात सकल संसारी ॥ ६ ॥
प्रभु इच्छा ते दुःख सुख होंही । इत्थं कहत मनुज सब कोही ॥ ७ ॥
करहिं अधर्म दंड वहि पावे । तो विन इच्छा पाप न भावे ॥ ८ ॥
कोई कहे दुख देवत शत्रु । दुख नहि देत जगत में मित्रु ॥ ९ ॥

दोहा- **दुख सुख शत्रु मित्र सब, हों कर्मन अनुसारि ।**
तुन जानउ निज मतिहि से, जो दुख दियो भुँवार ॥६६॥

चौ– यह सुनि प्रभु पद करि हिय ध्यानी । जाने सकल कष्ट नृप ज्ञानी ॥ १ ॥
वृष वपु धर्म अवनि गौ रूपा । शुद्र रूप यह कलियुग भूपा ॥ २ ॥
सुरभी वृषहिं दियो दुख या ही । लखि निज मन प्रभु लोक सिधाई ॥ ३ ॥
याही हेतु करति महि चिन्ता । लखि कलियुग हि रही विलखन्ता ॥ ४ ॥
पापिहि नाम लिये अघ होही । यहि हित नाम लेत नही दोही ॥ ५ ॥
शोच दया तप टूटेउ पादा । रहेउ सत्य तेहि कलि देहि बाधा ॥ ६ ॥
करि विचार इमि कुलधर वीरा । पुनि गौ वृषहिं दियो उन धीरा ॥ ७ ॥
क्रोधवन्त धायउ तेहि मारन । तब कलि गिरेउ नृपति के पायन ॥ ८ ॥

दोहा- **दया धर्म नृप धार मन, नहि कीन्हेउ तव वार ।**
कलियुग से कहने लगे, पुनि नृप यों ललकार ॥६७॥

चौ– जहँ तक धर्मराज मम होहीं । तहँ तक वास नीक नहीं तोही ॥ १ ॥
जेहि देश तव होय निवासू । तेहि नृप करत तू धर्म विनासू ॥ २ ॥
तव मन कपट झूठ अहंकारा । लालच मोह काम बड़ भारा ॥ ३ ॥
जँह नर धरम करम लव लीना । यज्ञ दान व्रत भजन प्रवीना ॥ ४ ॥
ऐसे भरत खंड मम राजहि । तव निवास ते हहोत अकाजहि ॥ ५ ॥
जो न कथन मानउ यह मेरो । तो असि ते काटउँ शिर तेरो ॥ ६ ॥
तव करि विनय कहेउ कलि वानी । शरणागत रक्षक नृप ज्ञानी ॥ ७ ॥
सत त्रेता द्वापर कलिचारी । अवधि रची जग ब्रह्म विचारी ॥ ८ ॥
सो नृप तीन गयउ युग बीती । आयो अब कलि यहि जग रीति ॥ ९ ॥
एक जात पुनि दूसर आवत । जन्मत एक अपर मर जावत ॥ १० ॥

दोहा- **सप्त द्वीप नवखंड महि, हैं प्रभु तेरो राज ।**
कहँ जाकर मैं वसहुँ अब, कहउ नृपति सिरताज ॥ ६८॥

चौ– मेटि सकतु ना विधि कर अंका । सुनहु वचन मम यह रण बंका ॥ १ ॥
मम अवगुनहि दियो तुम ध्याना । गुण न एक नृप मे पहिचाना ॥ २ ॥

सतयुग पाप करहिं यदि एकहिं । तो सब राज प्रजा दुख देखहिं ॥ ३ ॥
त्रेता कियउ एक अपराधा । तो पावत वह ग्राम विवाधा ॥ ४ ॥
करत अधर्म तृतीय कुटुम्बा । पावत दंड लगे न विलम्बा ॥ ५ ॥
जो करहिं कलियुग अपराधा । देउँ अंग वहि मैं वड़वाधा ॥ ६ ॥
मानस पाप करत युग दूसर । मिलत तेहि नृप दंड भयंकर ॥ ७ ॥
मानसि पाप न पा कलि कोई । मानसि पुण्य करे फल होई ॥ ८ ॥

दोहा- **वर्ष सहस दश सत युगे, करि तप पा निर्वान ।**
त्रैता एक सहस विच, पावत नर भगवान ॥६६॥

सोरठा— **करि पूजन अरू ध्यान, द्वापर में सत वर्ष तक ।**
सुनहू नृपति सुजान, होत मनोरथ पूर्ण तव ॥१६॥

चौ— मेरे राज्य प्रभु यक नामा । लेवत तरत जगत गुणधामा ॥ १ ॥
करणन ते यह कर्ण रसायन सुनत प्रेमते हो वह पावन ॥ २ ॥
कारण देखि निज धर्म विचारी । वोले वचन सुन पाप प्रचारी ॥ ३ ॥
मदिरापान द्यूत हो जहँवा । वास करहु सुकृत हर तँहवा ॥ ४ ॥
वैश्या जीव हनन जँह होहीं । करहु वास तँह धर्म विद्रोही ॥ ५ ॥
सूम समीप होय धनकंचन । करत न दान धर्म जो विप्रन ॥ ६ ॥
इन तजि और जगह जो रहऊँ । तो तव हनन करूँ सत कहउँ ॥ ७ ॥

दोहा- **धर्मवान धनवान नृपहिं, अरु वल में अनुमान।**
दया धर्म जव यह तजे, तव हो मम कल्याण ॥ ७० ॥

चौ— यह विचार करकलि मन माँही । विदा होय निज ठाँव सिधाही ॥ १ ॥
जो जो स्थान दियो नृप ये ही । रहन लग्यो यह जाकर तेहीं ॥ २ ॥
कलियुग गमन किये उपरंता । निज गृह गयउ नृपाल तुरंता ॥ ३ ॥
जो भल चहे मनुज निज तनका । करो विचार सुजन इन सबका ॥ ४ ॥
इधर कली व परीक्षित गवने । उधर वृषभ सुरभी गय चरने ॥ ५ ॥
इधर सिंहासन आ नरराई । किय एकत्र रिषी द्विज राई ॥ ६ ॥
सर्व हाल वरणन यह कीन्हो । तव सबने उत्तर यो दीन्हो ॥ ७ ॥
नीक विचार कियो तुम राजन । दियो दंड जो कलियुग कारन ॥ ८ ॥

दोहा- **जीव हनन मदिरा पिवन, गणिका सेवन मन्द ।**
किये नृपति निजराज में, द्यूत खेल सव वन्द ॥७१॥

चौ— यथा शक्ति देवो सब दाना । करहु साधु सन्तन सन्माना ॥ १ ॥

महिसुर वेद शास्त्र गी निन्दा । करत दंड पावत मतिमन्दा ॥ २ ॥
इत्थं नृप ढूँढी पिटवाई । आगे सुनहु कथा चित्तलाई ॥ ३ ॥
जेहि प्रकार परीक्षित राजा । तजी देह सो कहुँ मुनिराज ॥ ४ ॥
नृप वन गमन कियो यक वारा । हने जीव तहँ घोर करारा ॥ ५ ॥
पुनि यक मृग देख्यों वन माँही । मार्यो शर निज धनुप चढ़ाही ॥ ६ ॥
भज्यो विकल हो शर के लागे । आगे मृग पाछे नृप भागे ॥ ७ ॥
आतप वात प्यास बड भारी । व्यापी नृप तव भयो दुखारी ॥ ८ ॥

दोहा- **भ्रमत भ्रमत भिंडी रिपि, के आश्रम में आय ।**
युगल जोरि करके कहा, मैं प्यासा मुनिराय ॥७२॥

चौ– पर उस समय भिंडी रिषिराई । निज प्राणन ब्रह्मांड चढ़ाई ॥ १ ॥
बैठे करत रहे प्रभु ध्याना । उन नृप कथन सुना नहीं काना ॥ २ ॥
प्रथम जीव हिंसा के कारन । कलियुग वास कियो आ नृपमन ॥ ३ ॥
धर्म धुरंधर हरिप्रिय सोई । तव वड क्रोध नृपति मन होई ॥ ४ ॥
मैं नव खंड भूमिपति होकर । जल याचन आयो रिपि के दर ॥ ५ ॥
रिषि नहि धूर्त समाधि लगाई । वैठ्यो यह आसन पर आई ॥ ६ ॥
सुनि मम वचन दियो नहि उत्तर । यह विचार कर मन निज भीतर ॥ ७ ॥
तव नृप एक मृतक ले नागा । डारेउ मुनि के कंठ विभागा ॥ ८ ॥
पर यह ध्यान रहे लवलीना । तेहि हित नृप सम्मान न कीना ॥ ९ ॥

दोहा- **डारि सर्प मुनि कंठ तव, आकर नृप निज थान ।**
मुकुट उतारेउ शीश ते, तव आयो मन ज्ञान ॥७३॥

चौ– मन में कहे तब होय उदासा । कंचन कलियुग केर निवासा ॥ १ ॥
सौ मैं कियो शीश पर धारन । पलट गई मति मृगया कारन ॥ २ ॥
सो मै रिषिगल डारेउ सर्पा । नृप पद भयो मोर मन दर्पा ॥ ३ ॥
भई समझ अव में मन अन्दर । कलि प्रतिक्रिया दई य भयंकर ॥ ४ ॥
भगवत विमुख होय गउ विप्रन । दे अति कष्ट तव आवत दुर्दिन ॥ ५ ॥
जो मैं आज विप्र दुख दीना । तेहि हित होहि द्रव्य वय छीना ॥ ६ ॥
इधर नृपति इमि करहि विचारा । करहिं वहाँ रिषि ध्यान अपारा ॥ ७ ॥
खेलत वँह एक मुनी कुमारा । आयउ भिंडिकंठ लखि कारा ॥ ८ ॥

दोहा- **श्रृंगि रिषि के निकट जा, वोल्यो ऐसी वात ।**
मृतक अहि ले नृपति ने, डार्यो गल तव तात ॥७४॥

सोरठा - कीन्हो क्रोध महान श्रृंगि रिषि यह वचन सुन ।
अज से पा वरदान वचन सिद्ध रखते वह ॥२०॥

हरिगीतिका छन्द—

भृकुटि कराला, नयन विशाला, थर थर कँपहि गाता।
नदि तट जाकर, कर पद धोकर, लेकर निजकर हाथा ॥
रिषि दिन अन्दर, तक्ष भयकर, डसहिं गजा ह्वय नाथा।
कियउ जो पापा, भोगउ श्रापा, लिख्यो दंड यहि तव माथा ॥२२॥
वैकुंठ पधारे, नंद दुलारे, यहि हित कलियुग के राजा।
हो मदमत्ता, गिनहि न संता, देवहि दुःख समाजा ॥
जिमि कोई श्वान, न करे प्रति पालन, पुनि काटहि वह तेही।
तिमि कलिवासी, नृपति विलासी, दारुण दुख यह देही ॥२३॥
परीक्षित राई, वड अन्याही, पांडव वंशि कहावहि ये।
विप्रहिं निर्व्ल, जानेउ यह खल, तेहि हित पाप कमावहि ये ॥
यों कह रिषिराई पितु नियराई, आयउ मुख य मलीना।
तव रिषि वाला, रुदन कराला, करहि चित्त हो अतिदीना ॥२४॥

दोहा- रुदन श्रवणकर सुवन का, खोलत रिषि निज नैन ।
कारन कहु इस रुदन का, वोले मुनि इमि वैन ॥७५॥

चौ— तव श्रृंगी निज गिरा उचारी । तव गल नृपति सर्प यह डारी॥ १ ॥
यहि हित रुदन कियउ मैं भारी । मुनि भिंडी यह कहेउ विचारी ॥ २ ॥
कुशापन देउ नृपति के काजा । यह सुनि श्रृंगि कहेउ मुनिराजा ॥ ३ ॥
इस अधर्म के कारन स्वामी । शाप दियउ यह अन्तर्यामी ॥ ४ ॥
दिवस सप्त बीते उपरंता । तक्षक डसहि नृप मरहि तुरंता ॥ ५ ॥
यह सुन भिन्डी भयउ उदासा । बोले वचन करत उपहासा ॥ ६ ॥
विप्र रिषि जेहि राज अनन्दा । विचरहिं वन अजसिंह स्वच्छन्दा ॥ ७ ॥
इस राजा की प्रजा सुखारी । लघु अपराध दियउ दंड भारी ॥ ८ ॥
धर्म धुरन्दर नृप के कारन । दियउ दंड तुम पाप प्रचारन ॥ ९ ॥

दोहा- पांडव कुल के वीच में, वचेउ यही अवशेष ।
कलियुग जिसके राज्य में, कर न सक्यो परवेस ॥७६॥

चौ— जब नृप आश्रम ये मम आया । एक पात्र जल मैं न पिलाया ॥ १ ॥
वैष्णव नृपहिं दियउ तुम शापा । सो यह भयउ जगत वड़ पापा ॥ २ ॥

धर्म साधु संतन का ये ही । अवगुन तजि गुन को वे लेही ॥ ३ ॥
सुत इस नृपहिं मरन उपरंता । करहिं मनुज जग पाप अनंता ॥ ४ ॥
उस अघ जड़ जग सुत तू होई । इत्थं कहहिं मनुज सब कोई ॥ ५ ॥
इस प्रकार निज सुत समुझाई । कियउ ध्यान प्रभु पुनि मुनिराई ॥ ६ ॥
बोले मम बालक अज्ञाना । कियो पाप क्षमहू भगवाना ॥ ७ ॥
जेहि देश नृप रहहिं न कोई । तस्कर पापि बहुत तँह होई ॥ ८ ॥

दोहा- यह विचार करके मुनि, कुर्मुक शिष्य बुलाय ।
बोले नृप के पास में, अभी पुत्र तू जाय ॥७७॥

सोरठा- दियो नृपति तव शाप, श्रृंगरिषि ने इस तरह ।
सो सचेत होउ आप, ऐ व्यापहिं मौत अकाल तव ॥२१॥

दोहा- द्रोण पुत्र ब्रह्मास्त्र वच, जो कलि कियउ अधीन ।
विप्र शाप से वह मरयो, सुन शौनक परवीन ॥७८॥

चौ- शिष्य वदन ते सुनि यह शापा । भयउ मुदित मन रहेउ न तापा ॥ १ ॥
पुनि पद कमल कृष्ण शिर नाई । दियउ राज्य जनमेजय ताँई ॥ २ ॥
ममता त्याग गंग तट जाकर । बैठेउ आसन दर्भ बिछाकर ॥ ३ ॥
करन लगेउ प्रभु चरनन ध्याना । तेहि अवसर आयउ रिषिनाना ॥ ४ ॥
अत्रि वशिष्ट पराशर व्यासू । च्यवन अरिष्ट नाम भृगु जासू ॥ ५ ॥
मेधा तिथि देवल भरद्वाजा । मैत्रेय और्व कवष रिषिराजा ॥ ६ ॥
विश्वामित्र उतथ्य व कुंभज । इन्द्र प्रमद गौतम जमदग्निज ॥ ७ ॥
सर्वरिषि निज शिष्य ले संगा । आयउ जहँ भागीरथि गंगा ॥ ८ ॥
करि पूजन पुनि पाँडवनन्दन । कहेउ वचन करि सब अभिनन्दन ॥ ९ ॥

दोहा- कीन्हि अनुग्रह दास पर, धन्य भयो मैं आज ।
विप्र शाप मेरे लिये, कियो पुण्य का काज ॥७९॥

चौ- मो पर कृपा करहू मुनि शीला । गान करहू प्रभु रस मयि लीला ॥ १ ॥
सब पद पंकज करहुँ यह विनती । भगवन भजन सप्तदिन बीती ॥ २ ॥
जब जब जन्म लेऊँ संसारहि । तब प्रभुपद हो प्रेम अपारहिं ॥ ३ ॥
संत संग मुनि मिलहिं सदोहीं । आशीर्वाद यह देवहुँ मोही ॥ ४ ॥
इस प्रकार कह वह नरराई । अनसन व्रत धारेउ सुखदाई ॥ ५ ॥
तेहि समै सुर बैठि विमाना । नभ आ करहिं प्रशंसा नाना ॥ ६ ॥
पुष्पवृष्टि की झरी लगाई । नभ दुंदुभि बाजी सहनाई ॥ ७ ॥

बोलहिं तबहि सर्व रिषिराई। निज निज मत तब नृपहि सुनाई ॥ ८ ॥

दोहा- **तीर्थ स्नान बड़ पुण्य है, कही एक यह बात।**
दूसर तब कहने लगे, करहु यज्ञ विख्यात ॥८०॥

चौ– कहहि तृतीय दान कर देऊ। अपर धर्म नहि जग समझेऊ ॥ १ ॥
चतुरथ कहहि मंत्र जप पूजन। करहु लक्ष्मीपति केर अराधन ॥ २ ॥
इत्थं कहहिं सकल मिलबानी। पर कोई बात ठीक नहि जानी ॥ ३ ॥
तब नृप कहेउ युगल कर जोरे। जो मत दयउ नीक मुनि मोरे ॥ ४ ॥
पर सब वस्तु इकट्ठी काजा। दिवस बहुत लागहि "रिषिराजा" ॥ ५ ॥
मोर मरन दिन सप्त रहेउ। यहि हित विधि ऐसीमोहि कहेउ ॥ ६ ॥
जो दिन सप्त मॉहि हो पूरन। यह सुनि रिषि सब लगे विचारन ॥ ७ ॥
तेहिकाल तिय बालक साथा। आवत गात भागवत गाथा ॥ ८ ॥

दोहा- **चारु नेत्र घनश्याम तनु, वय किशोर दिग्वस्त्र।**
भुज प्रलम्ब अवधूत सम, आये श्री शुक तत्र ॥८१॥

चौ– लखि शुक तेज तजी निज आसन। ठाढ़े सकल भये हित दर्शन ॥ १ ॥
शुक समाज बिच सोहहिं कैसे। उडुगन मध्य सुधाकर जैसे ॥ २ ॥
सादर पधराये सिंहासन। तब पूजन करि पांडवनन्दन ॥ ३ ॥
सीस नाय दोऊ कर जोरी। सुनहु सत्यसंध वीनति मोरी ॥ ४ ॥
नाथ दया कीन्ही बड़भारी। दियउ दर्श जो मरती बारी ॥ ५ ॥
विना भाग्य नहि मिलेही सज्जन। भयउ धन्य आज करि दर्शन ॥ ६ ॥
नाथ विरत संसारी माया। करहु दास पर हे मुनिदाया ॥ ७ ॥
भव के पार उतारन कारन। कहउ उपाय शीघ्र अघतारन ॥ ८ ॥

दोहा- **शृंगि रिषि के शाप ते, मरने में दिन सात।**
शेष रहे हैं प्रभो पुनि, छूटहिं यह गात ॥८२॥ क
मृत्युकाल के समय में, पूजन भजन व दान।
श्रवण स्मर्ण मैं क्या करूँ, कहु शुक कृपा निधान ॥ ८२ ॥ ख

चौ– गो दुह काल निवास तुम्हारा। रहही नाथ ग्रही आगारा ॥ १ ॥
यहि हित कहउ शीघ्र मुनिराई। जेहि प्रकार नर मुक्ति पाई ॥ २ ॥
हैं सुर लोग वयस परिमाना। नर का कलि में नहीं ठिकाना ॥ ३ ॥
जो जन अन्त समय नहीं सोचे। तेहि जानो हिंसक अजपोचे ॥ ४ ॥
नाम उचार न हो यम दूता। देवति त्रास करहिं मलमूता ॥ ५ ॥

मात पिता भ्राता सुत मरना । भय नहि लगत देखि निज नयना ॥ ६ ॥
लखि यह हाल मनहिं सुत नारी । माया मोह फँसे संसारी ॥ ७ ॥
कियउ दास पर अब प्रभु दाया । जो मन करी विरत यहँ आया ॥ ८ ॥

सोरठा— कहउ उपाय मुनीश, जन्म मरन के हनन हित ।
देहु मोहि वरुशीश, श्रवण अराधन जप विधि ॥२२॥

छन्द- क्या करूं सारी विधी, इस दास को समुझाईये ।
कोई भजन पूजन यजन, अरू दान को बतलाईये ॥
कोई कहे जप के लिये, कोई कहे तप कीजिये ।
युक्ती बताओ अब मुझे, मुक्ती बनाने के लिये ॥३५॥

दोहा- नृपति परीक्षित की कथा, श्रवण करहि नर नार ।
बजरंगी भगवत कृपा, पाकर हो उद्धार ॥८३॥क
गर्भवती नारी इसे, सुनहि जेते चित्त लगाय ।
गर्भ खंड होवत नहीं, भक्त पुत्र वह पाय ॥८३॥ख
कलुष हरनि मुक्ति प्रदा, भक्ति प्रदा सुख दैनि ।
भव तारनि भय हारिनि, यह वैकुंठ नसैनि ॥८३॥ग

इति श्री कृष्ण चरित्रामृते कलिमल विध्वंसने बजरंग कृत
श्री मद्भागवते महापुराणें पारम हंस्यां संहितायां समाप्तोऽयं प्रथम स्कंध ॥
हरि ॐ तत्सत्

॥ श्री गणेशाय नमः ॥

॥ श्री राधा वल्लभो विजयते ॥

श्रीमद्भागवत प्रारम्भ

द्वितीय स्कंध

श्लोक

सानन्दं सुखदं स्वयं, सुखनिधिं सत्यं परं सुन्दरं ।
शौरिं श्रीपति शम्बरारिजनकं, शान्तं स्वयभू हरिम् ॥
विष्णुं कृष्णं च शुद्धं यशुमतिसुतं, देवकीनंदनं विभुं ।
वन्देऽहं वृजनाथ पादयुगलं, गोविन्द गोवर्धनम् ॥१॥

दोहा- **निपट अयान सयान जन होहिं दया जेहि पाय ।**
वही कृष्ण आकर बसहु बजरंगी हिय आय ॥१॥क
नृपति परीक्षित वचन सुनि बोले श्री मुनिराय ।
मुक्ति बनाने के लिए सरल बताउँ उपाय ॥१॥ख

चौ– जो अज्ञानि मनुज प्रभु माया । जानि सके न हि हे नरराया ॥१॥
बूडि विलास सुख हो भ्रष्टा । इत्थं होइ सर्वजन नष्टा ॥२॥
बिन प्रभु दया कृपा सुख नाही । जग जन सकल पाई नहि ताही ॥३॥
आयुष निशि तिय संग नसावे । दिवस कार्य व्यापार गँवावे ॥४॥
समय अष्ट प्रहर नहि पावहिं ।क्षण भर एक प्रभुहिं नहि ध्यावहिं ॥५॥
जो मन माया मोह फँसावे । सब प्रकार वह नर दुःख पावे ॥६॥
झूठ सत्य कहि द्रव्य कमाके । पालहि निज परिवार खिलाके ॥७॥
लखि परिवार मरन निज नैना । मिलहि न पुरूष अहो चित्त चैना ॥८॥
जो जन जगत विरत नहि होते । अन्त काल वह खावत गोते ॥९॥
मृत्युपरांत बन्धु सुत भाई । कोई न आकर करत सहाई ॥१०॥

दोहा- **भरत खंड प्रभुकर भजन, पावहि पद निर्वान ।**
सफल जनम उन जनन का, "सार्वभौम गुणवान" ॥२॥

चौ– जो रिषि तजि संसारी माया । पूजन भजन करहिं यदुराया ॥१॥
भवसागर पार उतारन कारन । भगवत भजन समान न राजन ॥२॥
जो जन निज मन तजि सुत माया । होई विरक्त झूठ लखि काया ॥३॥
रहहि न वस्तु सदा संसारी । मृत्यु बाद जावहि नहि लारी ॥४॥
केवल जात अकेल जगत ते । तिय सुत बन्धु द्रव्य तजि देते ॥५॥

कहहिं श्रेष्ठ कवि कोविद ज्ञानी। सर्व पुरान भागवत बानी ॥६॥
कारन यहि चित्त देकरि ज्ञानी । सुनहि कथा प्रभुपंकज ध्यानी ॥७॥
निज पितु पास पढ़ेउँ मैं एही । सुनि नर आवगमन तजि देही ॥८॥

सोरठा— वेद शास्त्र का सार, समझहु श्री मद्भागवत ।
सुनतहि हो उद्धार, वैवश्वत की पाश ते ॥१॥

दोहा- जो जन तिय सुत मोह फँसि, सुनहि कथा यह नित्त।
हरि चरणों में प्रेम हो, होवहि चित्त विरत्त ॥२॥क
सुरगुण रिषिगण संतगण, हो जँह कथा समाज ।
सकल तीर्थ आवत तँह, कथा श्रवन के काज ॥२॥ख
मोक्ष काज श्री भागवत, सुनहु परीक्षित आप ।
पढ़हि प्रेम ते जो जन, कटे कोटि उन पाप ॥३॥ग

चौ— तुम यह जानि रहेउ निज मन में । दिवस सप्त रहे मोर मरन में ॥१॥
हो नहि भीत सुनहु नरराई । कथा भागवत चित्त लगाई ॥२॥
सुनहि प्रेम ते जो यह गाथा । होवहिं मोक्ष अहो नर नाथा ॥३॥
नृप खट्वांग नाम एक कोई । मुहूर्त एक तेहि मुक्ति सु होई ॥४॥
रहे तव मरन दिवस बहु साता । कारन कवन नृपति अकुलाता ॥५॥
फँसि निज माया मोह निजायू । वर्ष सहस लगि व्यर्थ वितायू ॥६॥
वे नर मृत्युकाल उपरंता । भोगहिं नरक कहहि इमि संता ॥७॥
मन संसार मोह तजि माया । वश रख भूत दशेन्द्रिय राया ॥८॥
रूप विराट करउ तुम ध्याना । रहे सब लोक तेहि भगवाना ॥९॥

दोहा— सकल लोक तेहि में बसे, करउ विराट का ध्यान ।
सुनहु कथा यह भागवत, अनृत जगतहि जान ॥४॥क
चरण ग्रन्थि जंघा सुतल, पाताल रसातल लोक ।
कटि नितम्ब जानउ नृपति, वितलातल भूलोक ॥ ४॥ख

चौ— नाभ अकाश ज्योति गन छाती । गल मह लोक भुजा शरघाती ॥१॥
जन तपलोक ब्रह्म मुख माथा । शिर दशि कर्ण रहेउ नरनाथा ॥२॥
सूरज नयन पलक दिन राती । यम रद नाक देवगदघाती ॥३॥
आनन वह्नि भुजा जल चरना । सब जग स्वाद जीभ नृप बरना ॥४॥
माया हँसी लोभ अधरोष्ठा । पीठ अधर्म लाज उपरोष्ठा ॥५॥
छाती धर्म मेघ सित कक्षा । रोम देह तरु मारुत श्वासा ॥६॥
गिरि तन अस्थि व उदर समुद्रा । वीरज जल मन लखहु य चन्द्रा ॥७॥

दोहा- परम ब्रह्म से मनुज भये, बुद्धि से भे अश्व ।
पशु कुरंगगन जंघ ते, स्वर से भय गंधर्व ॥५॥क
नख से रासभ उष्ट्र अरु, खच्चर खेचर जीह ।
पद किल्ली से वृक भये, यज्ञादिक भये हीह ॥५॥ख

चौ– रहहि ज्ञान मनुज तन अन्दर । करउ विराट ध्यान हे नृपवर ॥१॥
मन विराट जब होय लुभाना । पुनि लघु रूप करहु तुम ध्याना ॥२॥
प्रथम सृष्टि ब्रह्मा रचवाई । कियउ विराट ध्यान इमि राई ॥३॥
यही हेतु हो खुशी मुरारी । ब्रह्महिं स्मृती दयउ यह भारी ॥४॥
वेद विचार की शैली विचित्रा । समझहि मति हो जासु पवित्रा ॥५॥
जड़ बुद्धि चक्कर में परिके । विषय वासना युत हो भटके ॥६॥
सच्चा सुख न मिलहि जग किसको । माया लोक फँसँहि उस जन को ॥७॥
विज्ञ पुरूष है वह जग माँही । माया मोह जो दूर भगाहीं ॥८॥

दोहा- संसारी सुख भाग्यवश, बिन श्रमहिं मिल जाय ।
ज्ञानी मानव यह समझ, करहि भजन जग आय ॥६॥

चौ– शयन कार्य भू पर चलि जावे । तब पर्यङ्कक केहि काज बनावे ॥१॥
तोषक कार्य भुजा निज दैहे । पात्र काज अंजलि मिल जैहे ॥२॥
वस्त्रहीन तरु वल्कल धारहिं। क्षुधा लागि फलफूल सु खावहि ॥३॥
नदि जलवास होय गिरि कंदर । पूरन काज करे जगदीश्वर ॥४॥
पाकर धन होवत मदमत्ता । माया मोह फँसे न विरत्ता ॥५॥

दोहा- आत्म स्वरूप जो परम प्रिय, परम सत्य अनन्त ।
बड़े प्रेम आनन्द से, करहिं भजन उन संत ॥७॥

छन्द- भगवान के ही भजन से, अज्ञान का जब नास हो ।
जन्म मृत्यु के निवारण, श्यामपद बिच वास हो ॥
संसार रूपी यम नदी, परि कर्मजन्य व दुख को ।
जानकर भी ना विचारे, मनुज आतम सुख को ॥१॥

दोहा- निज तनु हृदयाकाश बिच, साधक करत यों ध्यान ।
शंख चक्र अम्बुजगदा, मंद मंद मुस्कान ॥८॥क
कनक भुजाबन्ध शोभिता, भुज पर वज्र जड़ीत ।
कंज समान विशाल चरव, केशर सम पटपीत ॥८॥ख

छन्द- रत्न मय सुन्दर मुकुट प्रभु, शीश पर शोभित रहा ।

तिलक भाल विशाल आनन, कर्ण कुंडल द्युति रहा ॥
योगीजनों के हृदयकंज की, कर्णिका पर चरत है।
एक रेखा है सुनेरी, हृदय पर श्रीवत्स है ॥२॥

दोहा- गल कौस्तुभमणि झलकती, वक्षस्थल वनमाल ।
कमर करधनी शोभती, चरणन नुपुर विशाल ॥६॥

चौ- लीलापूर्ण हास्य उन्मुक्ता । अनुग्रह वृष्टि करहिं प्रभुभक्ता ॥१॥
इस प्रकार मन स्थिर हो राजन । तव लौं करहु प्रभु पद चिन्तन ॥२॥
भगवत चरण कमल से लेकर । मुस्कान युक्त मुख सर्व अंग पर ॥३॥
क्रम से ध्यान करहु तुम राजन । दृश्य नहीं ये जगपति भगवन ॥४॥
निर्गुण सगुण विराजत रूपा । यह सब है जग ब्रह्मस्वरूपा ॥५॥
अनन्य प्रेममय भक्ति न होवहिं । तव तक स्थूल रूप से ध्यावहिं ॥६॥
योगीजन नरलोक जो तजहीं । मन देश काल विचार न करही ॥७॥

दोहा- स्थिर आसन पर वैठि कर, इंद्रिन को निज जीत ।
बुद्धि से मन रोक कर, करहु भजन में प्रीत ॥१०॥क
क्षेत्रन में क्षेत्रज्ञ को, आत्मा में कर लीन ।
आत्मा को पर ब्रह्ममें, धारन करें प्रवीन ॥१०॥ख

चौ- दशा शान्तिमय होवे जवहि । साधक योग यों साधे तवहीं ॥१॥
अव कर तव शेप तासु नहि रहता । त्रिगुण नाश योगी यों करता ॥२॥
जव यह स्थिति योगी करि लैहें। तासू जग नाशक काल डरे हैं ॥३॥
सब सुर तासु रहहिं आधीना । अमर प्राणि का कवन ठिकाना ॥४॥
तनासक्ति तजकर प्रभुध्याना । यहि विष्णुपद शास्त्र बखाना ॥५॥
ज्ञानदृष्टि बल करि चित शुद्धा । स्थित हो ब्रह्म रूप तजि क्रुद्धा ॥६॥
प्रथम गुदहिं दावि निज चरना । स्थिर होकर घवरावे चित ना ॥७॥
प्राणन नाभी बीच चढ़ाहीं । वहाँ से हृदय मध्य ले आहीं ॥८॥

दोहा- उदान वायु द्वारा पुनि, वक्ष स्थल ले जाय ।
शनै शनै योगी पुरुष, तालू मूल चढ़ाय ॥११॥क
सप्तरंध्र को रोकि के, भ्रकुटिन के विच लाय ।
सहस्रार में लेयके, प्रभु में स्थित हो जाय ॥११॥ख

सोरठा- सप्त रंध्र को भेद तनु, इन्द्रियादि को त्यागि दे ।
करे जगत को छेद, इस प्रकार योगी पुरूष ॥२॥

दोहा- ब्रह्मलोक में गमन का, योगी करे विचार ।
तो मन इन्द्रिन संग ले, निकसे तनु ते पार ॥१२॥

छन्द— वायू की भाँति योगीजन का सूक्ष्म, तनु होता अहा ।
विद्या तपस्या अउ समाधी, योगसेवी का कहा ॥
योगी सुषुमना मार्ग से, प्रस्थान ब्रह्म सुलोक को ।
करता प्रथम नभ मार्ग से, वह गमन अग्नो लोक को ॥३॥
शिशुमार नामक ज्योतिमय, नभ चक्र में पुनि आवता।
कर पार वह शिशुमार को, मह लोक में फिर जावता ॥
सिद्ध रिषि मुनियों के द्वारा, लोक वह वन्दित अहे ।
वास करते है वहाँ सुर, कल्प तक जीवित रहे ॥४॥

दोहा- प्रलय काल जब आवहि, भस्म देखि सब लोक ।
ब्रह्म लोक फिर जा बसे, जहाँ न व्यापहिं शोक ॥१३॥

चौ— करत वास तँह सिद्ध विमाना । वहाँ आयु ब्रह्मा परिमाना ॥१॥
हर्ष व शोक न दुख न बुढ़ापा । उद्वेग मृत्यु भय काहू न व्यापा ॥२॥
सत्यलोक पहुँचे जब योगी । निर्भय बसहिं परमपद भोगी ॥३॥
सत्व शरीर सुतत्व मिलाही । अधिष्ठान पुनि इन्द्रियाँ जाहीं ॥४॥
इत्थं करहि आवरण पारा । योगी करहिं प्रवेश अहँकारा ॥५॥
प्रकृति रूप परदे पुनि आई । आनन्द रूप योगी बन जाई ॥६॥
तब वह ईश्वर में मिल जाई । पुनि जग बीच जनम नही पाई ॥७॥
जो उत्तर पूछेउ नरराई । सो सब तुमहि मैं दयउ सुनाई ॥८॥
वेदोक्त द्विविध सनातन राहा । क्रम अरू सघ मुक्ति " नर नाहा" ॥९॥
इस प्रकार वर्णन मैं कीन्हा । वह चितलाय श्रवण तुम कीन्हा ॥१०॥

दोहा- संसारी कारागार में, पड़े हुए जो लोग ।
अनन्य प्रेम मय भक्ति का, पा न सकत वे भोग ॥१४॥ क
सर्वात्मा भगवान में, प्रेम प्राप्त हो जाय ।
सर्वश्रेष्ठ वहि धर्म है, कहत वेद यों गाय ॥१४॥ ख

चौ— चराचर हृदय विराजत ईश्वर । सर्वसाक्षि दृष्टा जगदीश्वर ॥१॥
जन सब समय करें हरि कीर्तन । श्रवण स्मर्ण अराधन पूजन ॥२॥
संत कथामृत बाँटत आई । क्यों नहिं पान करहु फिर जाई ॥३॥
चित्त ते विषय गरल हट जाई । शुद्ध होय प्रभुलोक सिधाई ॥४॥

कह शुकदेव सुनउ नरराया । मृत्यु समय क्या करहिं उपाया ॥५॥
उत्तर तासु सुनउ चित्त लाई । भिन्न भिन्न मैं कहुँ समुझाई ॥६॥
ब्रह्म तेज की होय जो कामना । करहिं बृहस्पति केर अराधना ॥७॥
इन्द्रिय तेज बढ़ावहिं जो नर । पूजन करहिं सदाहि पुरन्दर ॥८॥

दोहा- धन कामी वसु तेज हित, करहिं धनंजय सेव ।
अन्न हेतु अदीति की, स्वर्ग हेतु सुर देव ॥१५॥क
प्रजापतिन की पुत्र हित, माया लक्ष्मी काज ।
विश्वदेव की अर्चना, करहिं जे इच्छा राज ॥१५॥ख

चौ- प्रजा अनुकूल जो होय बनावन । करहु साध्यदेव आराधन ॥१॥
पुष्टि प्रतिष्ठा की हो चाहा । कर सेवा नभ महि नरनाहा ॥२॥
वय तिय सुन्दरता यश कामी । दत्र उर्वशी हुहू जगत्स्वामी ॥३॥
स्वारथ काज विरंची पूजन । कोपकाज कर वरुण अराधन ॥४॥
विद्याकामी शंकर भजहीं । दम्पत्ति प्रेमहित पूज उमा ही ॥५॥
धनोपार्जन हित भगवाना । वंशकाज पितरेश्वर ध्याना ॥६॥
बाधानाश काज भज यक्षन । बल काज मरुद्गण केर अराधन ॥७॥
राज हेतु मन्वन्तर स्वामी । नारायणहिं भजे निष्कामी ॥८॥
मोक्षकाज भजहिं जगदीशा । पावत पद वे परम महीशा ॥९॥

दोहा- भगवत भक्ति के करे, भव बन्धन कट जात ।
चित्त स्थिर हो आनन्द का, अनुभव वह नर पात ॥१६॥

चौ- जब शुकदेव कथा यह गाई । पाछे वया पूछा नरराई ॥१॥
हे सर्वज्ञ निपुण गुणधारी । कहउ सूत सब कथा विचारी ॥२॥
गायन करत कथा जनसंता । लीला रसमयि श्री भगवन्ता ॥३॥
शुक व परीक्षित दोउ जन्मते । भगवत लीन रहे सतसंगते ॥४॥
भय भोग व भोजन नींद विहारा । मल मूत्र त्याग पशु करत विचारा ॥५॥
मानव पशु बिच अन्तर ऐही । यह न ज्ञान रखता निज देही ॥६॥
कृष्ण कथा मृत सुना न काना । विवर समाँ वह शास्त्र बखाना ॥७॥
रसना लीला करत न गाना । भेक समान अफल तेहि माना ॥८॥

दोहा- जो शिर भगवत चरण बिच, झुके न क्षण भर एक ।
पट्ट वस्त्र युत हो तदपि, भार मात्र नहि नेक ॥१७॥

छन्द- **जो हस्त भगवत चरण सेवा, प्रेम से करते नहीं ।**
कंचन सु कंकन से विभूषित, शव समाँ जानो वही ॥
नयन पूरति तीर्थ नदि सर, का न दर्शन जो करें ।
मोर पंख समान निष्फल, जानियो उनको अरे॥५॥

दोहा- **प्रदक्षिणा भगवान की, जो पद करते नाँहि ।**
तरू से भी वह अधम है, कहे शास्त्र यों ताहि ॥१८॥

चौ– संत चरणरज सीस न धारी । सो नर जीवत मृतक पुकारी ॥ १ ॥
प्राण हीन जानउ जग किनको । तुलसी गंध न लीन्ही जिनको ॥ २ ॥
हृदय नहीं वह ब्रज समाना । श्रवण कीर्तन मन पिघला ना ॥ ३ ॥
नयन अश्रु छलकहि पुलकाई । कोटि पाप हो दूर पलाई ॥ ४ ॥
तव वच हृदय मधुरता आई । जो नृप को मुनि कथा सुनाई ॥ ५ ॥
सो संवाद सभी सुखदाता । वर्णउ आप सूत मुनि ताता ॥ ६ ॥
बोले मुनि पुनि वचन उदारा । सर्व सुखद शुभ सुन्दर वारा ॥ ७ ॥
शुद्ध बुद्धि नृप भगवत कृष्णा । भाव अनन्य समर्पित चरणा ॥ ८ ॥

दोहा- **तन तिय सुत धन भवन पसु, कमी नही नृप पास ।**
राज्य अकंटक करत पर, ममता रही न आस ॥१६॥

चौ– शुक वच सुन क्षण ममता त्यागी । मृत्यु काल लखि भयउ विरागी ॥ १ ॥
श्रवन करन महिमा जगदीश्वर । शुक से प्रश्न कियो पुनि नृपवर ॥ २ ॥
परम पवित्र सर्वज्ञ स्वरूपा । नाम लेत नाशहि भव कूपा ॥ ३ ॥
प्रभु निज माया द्वार जगत हू । किमि प्रकार रचते यह कहहू ॥ ४ ॥
रहस्यमयी संसारी रचना । भेद य जानत कार्य विरंचिना ॥ ५ ॥
किमि इस जग रक्षा संहारा । अनन्त शक्ति परब्रह्म उदारा ॥ ६ ॥
आश्रय शक्ति वे कैसी लेकर । खेल करहिं ब्रह्मांड बनाकर ॥ ७ ॥
अचिन्त्य अद्भुत हरि की लीला । समुझहि रहस्य वही मतिशीला ॥ ८ ॥
अवतार अनेक लेय बनवारी । धारण करत क्रमशः अघहारी ॥ ६ ॥
ब्रह्म तत्व वेदन मर्मज्ञ । मम संदेह निवारउ प्रज्ञ ॥ १० ॥
यह सुन वच शुक कर प्रभुध्याना । कथारंभ की मुनी प्रधाना ॥ ११ ॥

दोहा- **प्रभु पद पंकज युगल मम, कोटि कोटि परनाम ।**
उत्पत्ति स्थिति प्रलय की, लीला शोभा धाम ॥२०॥क
त्रिगुण शक्ति स्वीकार कर, ब्रह्मादिक धर रूप ।
सर्व चराचर के हृदय, शोभित हो सूरभूप ॥२०॥ख

चौ- स्वयं अनन्त महिमा अति भारी । वन्दो मै पद कंज मुरारी ॥१॥
सज्जन दुःख मिटाकर नाना । करिहुँ प्रभु उन प्रेम सुदाना ॥२॥
परमहंस आश्रम जो धारे । होत मनोरथ पूरन सारे ॥३॥
सज्जन दुर्जन एक समाना । काहु न पक्षपात प्रभु जाना ॥४॥
प्रेमिजन ही देखत उनको । भक्तिहीन छू सकत न इनको ॥५॥
ब्रह्म रूप निज धाम विहारी । वन्दों चरण कमल कंसारी ॥६॥
वन्दन स्मर्ण कीत तन पूजन । नाशत पाप श्रवण कर दर्शन ॥७॥
वंदों बार बार श्रीकृष्णं । ज्ञान युक्त नर ले जिन शरणं ॥८॥
निज तन तजहिं परत्राशक्ति । पावहिं बिन श्रम के वे मुक्ति ॥९॥
सुन्दर मंगलमय भगवाना । वन्दो जासु कीरति नाना ॥१०॥

दोहा- **तापस रिषि अरु दानि नर, सदाचारि यशवान ।**
मंत्रज्ञ मनस्वी तब लगि, नहि पावत निर्वान ॥२१॥क
जब लगि भगवत चरण बिच, स्मर्णे नहि निज देह ।
कल्याण कीरति युत प्रभु, को वन्दों कर नेह ॥२१॥ख

चौ- कंक किरात यवन आभीरा । आन्ध्र पुलिन्द पुल्कस खस कीरा ॥१॥
अपर पापि शरणागत आई । तजहि पाप मुकति वह पाई ॥२॥
सर्व शक्तिमानय भगवाना । वंदों पदपंकज कर ध्याना ॥३॥
ब्रह्मादिक शुद्ध चित्त स्वरूपा । चिन्तन करहि चकित हो भूपा ॥४॥
वैष्णव विष्णु मान अराधे । धार्मिक धरम सुमूरत साधे ॥५॥
भक्त लोग स्वामी बतलावे । ज्ञानीजन आत्म निज गावे ॥६॥
वैदिक नर कहे वेदस्वरूपा । तापस बतलावत तपरूपा ॥७॥
मुझ पर करहु अनुग्रह वृष्टि । रचना की जिनने यह स्रष्टि ॥८॥

दोहा- **सम्पत्ति की स्वामिनी लक्ष्मी के पति जोय ।**
भोक्ता फल दाता यजन, प्रजा के रक्षक सोय ॥ २२ ॥

चौ- यदूवंश लेकर अवतारा । हरत अतुल वसुमति कर भारा ॥१॥
सज्जन रक्षक प्रजापुपोषक । होउ प्रसन्न शत्रुकुल दोषक ॥२॥
पद पंकज रज शिर जो धारी । आत्म तत्व मन करे विचारी ॥३॥
दर्शन कर निज मति अनुसारी । करत रूप वरणन बनवारी ॥४॥
प्रेम सुमुकति लुटावन हारा । हो प्रसन्न मो पर करतारा ॥५॥
सृष्टि समय अंडज हिय माँही ॥ पूर्व कल्प की स्मृति दिलवाही ॥६॥

पंचतत्व तन कर निरमाना ।। जीवरूप धारत प्रभु नाना ।।७।।
श्रृंगार कलायुत षोडश विषयन । करत योग सब जगमय भगवन ।।८।।

दोहा- **मम वाणी निज गुणन ते, अलंकृत कर भगवान ।**
संत पुरुष मुख ते करत, ज्ञान सुधारस पान ।।२३।।क
तेजस्वी मुन व्यास के, चरण सरोज प्रणाम ।
सुन विराट ते जगत की, उत्पत्ति का काम ।।२३।।ख

चौ- वंदो विष्णु विधी संवादा । वेद सार की वह मर्यादा ।।१।।
पुनि ब्रह्मा नारद से गाई । कथानक वहि सुन पांडवराई ।।२।।
विधि से दिवस एक मुनि नारद । बोले वचन यों ज्ञानविशाद ।।३।।
लक्षण कहउ पिता संसारा । आधार कवन यह को विस्तारा ।।४।।
लीन होय किन किस अधीना । यह क्या वस्तु है कहउ प्रवीना ।।५।।
कर तल जलवत यह जग स्वामी । ज्ञान दृष्टि तव अन्तरयामी ।।६।।
मिलेहु य ज्ञान कहाँ तुव आई । आधार कवन स्थित है तव साँई ।।७।।
कवन रूप तव पति को होही । नाथ य गाथ सुनावहु मोही ।।८।।

दोहा- **पंच तत्व से जीव की, स्रष्टी करते जोय ।**
कैसी अद्भुत बात यह, सुनकर विस्मय होय ।।२४।।

चौ- अनायास लूता मुख जाली। करि निवास खेलति मतवाली ।।१।।
तेहि प्रकार निजाश्रय शक्ति । करते तुम प्राणिन उत्पत्ति ।।२।।
यद्यपि आप जगत करतारा । तदपि न ते मन आव विकारा ।।३।।
नाम रूप गुण ते जग जेते । लखत पदारथ सकल ये तेते ।।४।।
उंच नीच मध्यम नहि कोई । सत अरू असत पात नहि कोई ।।५।।
विधि तुम जगत नियन्ता होकर । करहु ध्यान किनका चित धर कर ।।६।।
यह सब गाथ कहउ समझाई । तुम ते अपर कवन प्रभु आही ।।७।।
हे सर्वज्ञ सकल जगदीश्वर । मम मन शंक भई यह सुर वर ।।८।।

दोहा- **नारद के ये वचन सुनि, कहे विरंचि समुझाय ।**
समीचीन सुन्दर सुखद, प्रश्न कियउ तुम आय ।। २५ ।।

छन्द- **अखिल अनन्त अनादि अज, अविकार वह साकार है।**
निज तेज से करके प्रकाशित, जो रचत संसार है ।।
तप योग यज्ञ व ज्ञान गति, सुर वेद नारायण परा ।
द्रव्य कर्म स्वभाव काल व, जीव जंतु अरु धरा ।।६।।

उनही प्रभु ने प्रथम जग रच, कर मुझे परकट किया।
उनही की माया ने मुझे यह, जगत गुरु पद आ दिया ॥
वसुदेव सुत भगवान को, मम बार बार प्रणाम है।
माया विमोहित होय नर, लेत्त न जिनका नाम है ॥७॥

चौ- रज सत और तमो गुण द्वारा। उत्पत्ति पालन अरु संहारा ॥१॥
वहि भगवान सकल जगदीश्वर। करहुँ ध्यान उनका निशि वासर ॥२॥
जब प्रभु एक रूप अधिकाई। करहि मनोरथ तब मुनि राई ॥३॥
भगवत शक्ति पाय पुनि काला। करहि क्षोभ गुण बीच निराला ॥४॥
करि रूपान्तर निजहि स्वभावा। कर्म से महततत्व प्रकटावा ॥५॥
महतत्व से तमस प्रधाना। अहंकार जिन कहहि सुजाना ॥६॥
तम ने तीन रूप यों पाया। तामस तमस विकारिक जाया ॥७॥
तामस शब्द युक्त नभ जाया। नभ से वात स्पर्श गुण पाया ॥८॥
भयो विकार वायु पुनि आई। रूप युक्त यह तेज सुहाई ॥९॥

दोहा- **दिशा आर्क वायु वरुण अग्नि इन्द्र प्रचेत।**
सात्विक से प्रकटे यह अशु हरि मित्र समेत ॥२६॥

चौ- कर्ण त्वचा नासा चख रसना। पंचज्ञान इन्द्रिय इन कहना ॥१॥
हस्त लिंग गुद चरण व वानी। पंचकर्म इन्द्रियाँ बखानी ॥२॥
राजस अहंकार से आकर। बनी यह दशऊ इन्द्रियाँ जाकर ॥३॥
सब भूतादिक हो बिलगाई। कर न सके ब्रह्मांड रचाई ॥४॥
भगवत्त शक्ति से प्रेरित होकर। पुनि भूतादिक मिले परस्पर ॥५॥
तब सदसत्वहिं कर स्वीकारा। रचेउ शरीर पुनि उभय प्रकारा ॥६॥
वर्ष सहस्रावधि जल माँही। रहेउ अचेतन अंड य आही ॥७॥
जीव रूप प्रभु अंड समायो। अचेतन ते चैतन्य कहायो ॥८॥
निकसेउ पुरुष वह अंड विदारी। वहहिं विराट पुरुष संसारी ॥९॥
सहस चरण भुज नयन व आनन। सहस सीस श्रुति सहस सुहावन॥१०॥

दोहा- **कटि विभाग ऊपर रहे, सप्त लोक अरू सात।**
कटि विभाग नीचे वसे, उन विराट के गात ॥२७॥क
पुरूषानन ब्राह्मण भये, भुज से क्षत्रिय आय।
जंघन ते पुनि वैश्यगण, पद से शूद्र कहाय ॥२७॥ख

चौ- चरनकमल भू लोक कहाया। नाभी भुव हद स्वर्ग बताया ॥१॥
ग्रीवा जन मह उरस सुहाया। तप स्तन सीस सत्य श्रुति गाया ॥२॥

कटि विच अतल लोक रचि लीन्हा । उरू से वितललोक पुनि कीन्हा ॥३॥
जानु सुतल अरु जंघ तलातल । गुल्फ महातल प्रपद रसातल ॥४॥
पाताल पादतल शास्त्र बरवाना । कियउ कल्पना इमि विज्ञाना ॥५॥
पद भूलोक भुव नाभी इनकी । स्वर्लोक शीश कल्पित की जिनकी ॥६॥
मुख विराट अग्नी प्रकटानी । सप्तधातु इन छन्द बखानी ॥७॥
रसना रसयुत जानहु नीरा । जानहु सकल प्राण समीरा ॥८॥
जासुघ्रान अश्विनी कुमारा । निशि अरु दिवस निमेष अपारा ॥८॥
आनन अनल अँबुपति जीहा । उत्पत पालन प्रलय समीहा ॥९॥
श्रवन दिसा नभ शब्द बखानी । सब मख स्पर्श वायु त्वच मानी ॥१०॥

दोहा- **केश मेघ मुख रोम पवि, भुजा जासु दिग्पाल ।**
कर पद नख शिल लोह नद, नदी नसन कर जाल ॥२८॥

चौ– उदधी उदर अस्थि गिरि जाना । जग मय प्रभु इन रूप बखाना ॥१॥
तुम मैं भव अरु सनतकुमारा । सुर नर नाग यक्ष नभ सारा ॥२॥
दानव दैत्य व भूत व प्रेता । सर्प पितर पशु सिद्धप जेता ॥३॥
जलचर थलचर नभचर सारे । विद्युत ग्रह नक्षत्र सितारे ॥४॥
लखत पदारथ जग में जेते । जानहु रूप विराट समेते ॥५॥
करत प्रकाश यथा रवि जग में । करहिं प्रकाश विराट यों सबमें ॥६॥
भूत भविष्यत वर्तमान के । रहत अंश सब में भगवान के ॥७॥

दोहा- **अमृत अभयपदेश की, महिमा अपरंपार ।**
जान सकत कोइ नहीं, इनका पारावार ॥२९॥क
अंशमात्र भगवान का, सकल विश्व आवास ।
पाद मात्र इन लोक में, प्राणी करत निवास ॥ २९॥ख
भूमि भुवहिं स्वपर मह, जन तप अरु सतलोक ।
जनादिक त्रय में वसत है, अमृत क्षेम अशोक ॥२९॥ग
ब्रह्मचारी जन लोक में, वानप्रस्थ तपलोक ।
सन्यासी सतलोक में वसतु जहाँ नहिं शोक ॥२९॥घ

चौ– ब्रह्मचर्य से होय उदासी । ते नर भूमि भुवस्वर्वासी ॥१॥
विद्या अउर अविद्या द्वारा । पावत मोक्ष भोग संसारा ॥२॥
यथा भानु निज तेज प्रकाशित । रहहिं न तदपि तेज के आश्रित ॥३॥
सकल वस्तु विच ब्रह्म समाया । रहहिं किन्तु वह उन विलगाया ॥४॥

भयो जनम मम नारद जा दिन । लोक सिवाय मिल्यों नही साधन ॥५॥
जासे होय यज्ञ तैयारी । तब मैने यह बात विचारी ॥६॥
यज्ञ हेतु साधन प्रकटाये । विराट अँग ते सकल बनाये ॥७॥
औषध पात्र व घृत रस लोहा । मृद जल वेद मंत्र व्रत सोहा ॥८॥
गति मति श्रद्धा अरु संकल्पा । तंत्र दक्षिणा नाम सुकल्पा ॥९॥
कर एकत्र वस्तु यह सारी । कीन्ह यज्ञ की मुनि तैयारी ॥१०॥
परम आत्मा यज्ञ स्वरूपा । यजन कियेउ उन ब्रह्म स्वरूपा ॥११॥
पाछे नारद तव बड़ भाई । प्रजापती नव चित्त लगाई ॥१२॥
कियउ विराट रूप आराधन । रचकर यज्ञ कियो मुनि याजन ॥१३॥

दोहा- **मनु ऋषि पितर व देवनर, दानव यज्ञ रचाय ।**
कियउ अराधन सकल यह, समय समय पर आय ॥३०॥

चौ- सकल विश्व भगवान स्वरूपा । प्राकृत अगुण सगुण अनुरूपा ॥१॥
प्रेरित करहिं मुझे जब भगवन । करहुँ जगत का मैं तब सरजन ॥२॥
प्रभु अधीन भव करहिं संहारा । पालहिं विष्णु रूप संसारा ॥३॥
मम समीप पूछेउ तुम आई । सुत सब गाथ य तुम्हें सुनाई ॥४॥
कारज कारन भाव अभावा । ईश्वर भिन्न काहु नहिं पावा ॥५॥
कदापि न होय मृषा मम वानी । कारन रहउँ सदा प्रभु ध्यानी ॥६॥
मन कबहुँ न कुमारग जावहिं । इन्द्रिय बीच विकार न आवहि ॥७॥
वेद मूरती तप मय जीवन । करहिं प्रजापति सब मम वन्दन ॥८॥

दोहा- **प्रथम योग द्वारा किया, मूल पुरुष का ध्यान ।**
तो भी नारद मैं नही, सका उन्हें पहचान ॥३१॥

चौ- एक मात्र भकती के द्वारा । भक्त लोग पावहिं करतारा ॥१॥
होय मुदित मन उन भगवाना । आत शरण जो कृपानिधाना ॥२॥
जनम मृत्यु छुड़ावन वारे । कल्याणरूप भगवान पुकारे ॥३॥
हारिथकै श्रुति जिन कर स्मरणन । करउँ वन्दना मैं उन चरणन ॥४॥
माया शक्ति अपार अनंता । गा न सके महिमा श्रुति संता ॥५॥
जिमि प्रकाश निज पाव न पारा । गौरव अकथ असीम अपारा ॥६॥
मैं अरु वामदेव तुम नारद । नहि जानत सत्यस्वरूप विशारद ॥७॥
अपरदेव पुनि कवन प्रकारा । जान सके क्योंकर करतारा ॥८॥
मोहित मति हम जान सकत को । प्रभु माया से निर्मित जग को ॥९॥
हम सब निजनिज मति अनुसारी । करहिं कल्पना उनकी सारी ॥१०॥

दोहा- हम केवल भगवान की, लीला करते गान।
किन्तु तत्व से जगत में, सके नहीं पहचान ॥३२॥

चौ- स्वयं अनादि अजन्मा निर्गुण। सत्य सनातन अद्धय पूरण ॥१॥
कल्प कल्प लेकर अवतारा। करहि सृष्टि रचना करतारा ॥२॥
मायाहीन एकरस सारा। करहिं पालना अरु संहारा ॥३॥
अन्तकरण इन्द्रीय शरीरा। करहि शान्त जब निज मुनिधीरा ॥४॥
पावत दर्शन उन मन भाये। असत पुरुष कबहुँ नहि पाये ॥५॥
नारद प्रथम तुम्हें बतलाया। अवतार विराट प्रथम कहलाया ॥६॥
कारज कारण काल स्वभावा। अहंकार मन भाव कुभावा ॥७॥
क्षिति जल पावक गगन समीरा। इन्द्रिय गुण ब्रह्मांड शरीरा ॥८॥
स्थावर जंगम जीव सुहाया। ये सब ईश्वर रूप कहाया ॥९॥

दोहा- मैं शंकर विष्णु अरु, दक्ष प्रजापति आदि।
तुम अरु तुम सम भक्त जन, है उन रूप अनादि ॥३३॥क
स्वर्पति खगपति नरपति, नागय सर्प पताल।
विद्याधर चारणपति, भूत प्रेत वेताल ॥३३॥ख

चौ- यक्षप राक्षप रिषि मुनिपाला। दैत्यप दानव मृगप कराला ॥१॥
ऐश्वर्य तेज इन्द्रिय बलवारी। क्षमायुक्त मन तनु बल सारी ॥२॥
वस्तु लखहिं जे रूप अरूपा। वे सब हैं परब्रह्म स्वरूपा ॥३॥
परम पुरूष के परम पवित्रा। लीलावतार की कथा विचित्रा ॥४॥
अब मैं कहुँ तुम्हें सब गाई। सुनत जिसे अघ होत पलाई ॥५॥
सावधान होकर तुम नारद। सुनहु चित्त दे कथा विशारद ॥६॥
सूकर रूप धरेउ महि तारण। आदिदैत्य हिरण्याक्ष विदारण ॥७॥
प्रलयकाल के जल विच जाकर। निज दाढ़ों पर भूमि उठाकर ॥८॥
यज्ञरूप सूकर तनुधारी। बाहर निकसे जबै खरारी ॥९॥
हिरण्याक्ष लड़ने तब आया। निज दाढ़ो से मार गिराया ॥१०॥

दोहा- रूचि पत्नी आकूति से, यज्ञरूप धर आप।
पाछे तीनों लोक के, हरण किये संताप ॥३४॥

चौ- जब प्रभु ने संकट जग टारा। तो मनु ने हरिनाम उचारा ॥१॥
तिया दक्षिणा से सुत जाये। सुयम नाम जो अमर कहाये ॥२॥
कर्दम देवहूति घर आकर। कपिलदेव अवतार कहाकर ॥३॥
मातहिं आतम ज्ञान बताया। सुनकर मात मोक्षपद पाया ॥४॥

पुत्र हेतु अत्रि तप कीन्हा । होय मुदित प्रभु उन वर दीन्हा ॥५॥
निजहिं दत्त करऊँ मुनि तोही । मृषा वचन मम कबहुँ न होही ॥६॥
अवसर पाय पुत्र मुनि पाये । दत्तात्रय जिन नाम कहाये ॥७॥
जिन पद कंज पराग पवित्रा । धरहि सीस निज सुनत चरित्रा ॥८॥
सहसबाहु अरू यदु नरराई । उभय रूप सिद्धि इन पाई ॥९॥

दोहा- **प्रथम सृष्टि निर्माण हित, जव मम भयो विचार ।**
तव मैं तप प्रभु का किया, योग मार्ग अनुसार ॥३५॥ क
निरन्तर तपहि विलोकि हरि, धर शनकादिक रूप ।
पूर्व कल्प के तत्व का, कीन्हा प्रकट स्वरूप ॥३५॥ ख

चौ– दुहिता दक्ष धर्म तियमूरत । जाये नर नारायण सुमुहूरत ॥१॥
इन सम तापस जग नहि कोई । कामसेन तप सकि न बिगोई ॥२॥
रोषदृष्टि शिव काम जलाई । कर न सके उर वहि नसाई ॥३॥
वही क्रोध जीतेउ दोउ भाई । पुनि उर काम वसहि किमि आई ॥४॥
कुटिल वचन सुनतेहि विमाता । पिता अंक तजि बाल अघाता ॥५॥
तब तप हेतु बीच बन आयो । हरि पद भज ध्रुवपद वह पायो ॥६॥
अधावधि रिषि अरु मुनिराई । करहिं प्रदक्षिणा ध्रुव गुण गाई ॥७॥
नरपति वैन कुमारगगामी । द्विज वच वज्र नष्ट भयो कामी ॥८॥
तनु ते तासु प्रथू अवतारा । बनकर पुत्र वेन नृप तारा ॥९॥

सोरठा– **प्रथू रूप भगवान, वसुधा को सुरभी वना ।**
कियो जगत कल्यान, दोहन कर सव औषधी ॥३॥

दोहा- **सुदेवी नृप नाभि से, रिषभदेव अवतार ।**
आसक्ति से हीन हो, इन्द्रिन मन को मार ॥३६॥क
निज शरीर में होय स्थित, समदर्शी सुरभूप ।
योग साधना उन करी, मूढ़ पुरूष धर रूप ॥३६॥ख

चौ– रिषभदेव चरित्र पुनीता । परमहंस पद कहहिं पुनीता ॥१॥
विग्रह यज्ञ वेदमय जासू । सर्व देव मय परम प्रकासू ॥२॥
हयग्रीव शुभ रूप बनाये । यज्ञपुरुष मम यज्ञ सिधाये ॥ ३ ॥
भकत मनोरथ पूरण आसा । वेद वाणि प्रकटी उन स्वासा ॥ ४ ॥
चाक्षुष काल अन्त जब आयो । सत्यव्रतहिं आ दर्श दिखायो ॥ ५ ॥
मीनरूप धर कर करतारा । प्रलय नीर से वेद उबारा ॥ ६ ॥

अमृत काज असुर सुर मिलकर । कियउ मथन जब क्षीर समुन्दर ॥ ७ ॥
कच्छपवपु धर कर प्रभु आये । मंदराचल निज पीठ उठाये ॥ ८ ॥

दोहा- **मुख विशाल भृकुटी भ्रमत, दंष्ट्रा उग्र अयाल ।**
अभयद अमर नृसिंह वपु, दानव दलन विशाल ॥३७॥

छन्द- **दानवेन्द्र हिरण्यकश्यप, हाथ लेकर के गदा ।**
भक्तसुत प्रहलाद के वध, काज वह आयउ तदा ॥
दानव दलन विशाल भाल, अयाल काल करालयं ।
नरसिंह, वपुधर भक्त रक्षक, आगये तजि आलयं ॥८॥

दोहा- **कनककशिपु कर पकरि हरि, पुन जंघन परि डारि ।**
अपने तीखे नखन से, दीन्हों उदर विदारि ॥३८॥क
सर विच गजपद ग्राह ने, पकर लियउ जब आय ।
खगपति पर चढ़कर हरि, लीन्हो भक्त बचाय ॥३८॥ख

चौ- अदिति पुत्र वामन तनुधारी । पहुँचे जाय बली नृपद्वारी ॥ १ ॥
तीन पाद भूमी ले छल से । नापि लियो सब जग निज बल से ॥ २ ॥
कियेउ शुक्राचार्य मनाई । तदपि न विचलित भे बलिराई ॥ ३ ॥
नारद प्रेमभाव ते राजी । हँस रूप धर कर तब काजी ॥ ४ ॥
धर्म भागवत का उपदेशा । ज्ञान तत्व अरू योग सुरेशा ॥ ५ ॥
तब हित नारद कियउ प्रकासू । भकति हीन नहि पालत तासू ॥ ६ ॥
हों जब मनवन्तर पलटाई । प्रभु मनुरूप धार तब आई ॥ ७ ॥
चक्र सुदर्शन सम मनुराई । निज प्रभाव दश दिशि फैलाई ॥ ८ ॥
दुष्ट पुरुष जब करत निचाई । देवत दंड तेहि मनुराई ॥ ९ ॥
मानव रोग निवारण हेतू । धनवन्तरि वपु धरि सुरकेतू ॥ १० ॥
सुरन हेतु पियूष पिलावा । यज्ञ भाग अवरूद्ध दिलावा ॥ ११ ॥
आयुर्वेद शास्त्र इन गायो । सब जग नाश रोग यश पायो ॥ १२ ॥

दोहा- **क्षत्रियापि मरजाद तजि, विप्रद्रोहि बन जात ।**
परसुराम अवतार धर, करहिं नृपों की घात ॥३९॥

चौ- निज कर धार परसु भयकारा । इक्कीस बेर उन करहि संहारा ॥१॥
मायापति हम पर करहि अनुग्रह । भरत लखन युत अरिहन विग्रह ॥२॥
इक्ष्वाकुवंश राम अवतारा । वचन मानि पितु वन पगुधारा ॥३॥
सीता सहित लखन सह रामा । पंचवटी पर कर विसरामा ॥४॥
ताहि समय लंकापति रावण । राम विरोध कियउ दुखदावन ॥५॥

त्रिपुर विमान जलावहि शंकर । तिमि लंकभस्महित निकट समुन्दर ॥६॥
पहुँचे सेन संग ले भारी । सीय वियोग दुखित असुरारी ॥७॥
व्यथित चित्त क्रोधाग्नि द्वारा । अरुण नयन भरे घोर करारा ॥८॥

सोरठा– **सर्प मगर अरु मच्छ, क्रोधानल की लपटते ।**
भये दुखी जब कच्छ, डर सागर मारग दयउ ॥४॥

चौ– युद्ध काज रावण जब आया । राम बाण ते गर्व नसाया ॥१॥
रामधनुष की सुन टंकारा । प्राण त्याग सुरधाम सिधारा ॥२॥
असुरांश भूप नृप भूमि विमर्दहिं । दुःख विनाश हेतु प्रभु आवहि ॥३॥
दुष्ट कंश नृप देवकि वसुदेवहीं । पितु आज्ञा तजि वन्दि बनावही ॥४॥
तब यदुवंश बीच अवतारा । नाशत राम कृष्ण भू भारा ॥५॥
चरित रहस्य तासू संसारी । समझ न सकहि कोई नरनारी ॥६॥
बचपन प्राण पूतना हरकर । वय मास तीन हनेउ शकटासुर ॥७॥
निज घुटनों के बल प्रभु चलकर । यमलार्जुन वृक्ष उखारेउ जाकर ॥८॥

दोहा- **कालिनाग विष ते हुआ, दूषित यमुना नीर ।**
ग्वाल बाल अरु वत्स जब, पीकर तजहिं शरीर ॥४०॥

चौ– तब प्रभु डारि सुधामय दृष्टि । जीवित करहिं अनुग्रह वृष्टि ॥१॥
कालियनाग तुरंत भगायो । यमुना जल यो सिद्ध बनायो ॥२॥
कालिय दमन अनन्तर ग्वाला । शयन किये निशि सह गोपाला ॥३॥
मूँज विपिन जब चारउँ ओरा । लपट अरण्य वह्नि वहँ घोरा ॥४॥
संकट दैखि सबै बृजवासी । सह बलराम कृष्ण सुखरासी ॥५॥
करहिं पान दावानल आई । नेत्र पिधाय यों प्राण बचाई ॥६॥
अलौकिक कर्म कियेउ भगवाना । शक्ति अचिन्तय अनन्त उन नाना ॥७॥
रजु कर धर यसुदा जब आई । बन्धन हित उन कृष्ण कन्हाई ॥८॥
उदर मध्य बाँधन वह लागी । तदपि न पूर भई रजु त्यागी ॥९॥
जमुहाई लेहिं जब कृष्ण कृपाला । उन मुख जग लखि यशुमति आला ॥१०॥
प्रथम यशोमति शंकित भयउ । प्रभु प्रभाव पाछे समझेउ ॥११॥

दोहा- **गिरि दरि बिच मयसुत जबहिं, बन्द कियउ बृजबाल ।**
वरुणपाश ते नन्द को, करहिं मोक्ष तत्काल ॥४१॥

चौ– दिनभर काम काज के कारन । धर थककर करहिं शयन जब बृजजन ।१॥
निशि बिच तब श्री कृपानिधाना । दिखलावहि उन हित निजधामा ॥२॥

वृजजन कृष्ण वचन सुनि काना । करहिं मनाहि इन्द्र मखवाना ॥३॥
तब वृज भूमि विनाशन हेतू। करहिं घोर वरषा सुरकेतू ॥४॥
वृजजन दुखी देखि भय त्राता । निजकर धरहिं गिरी दिन साता ॥५॥
आयुष सप्त वरष परिमाना । रहेउ तेहि समय भगवाना ॥६॥
निज कर गिरि प्रभु धारहिं कैसे । वृक्ष शिलींध्र शिशु निजकर जैसे ॥७॥
रास हेतु निशि विपिन विहारी । टेरहिं वंशि विधू उजियारी ॥८॥
मधुर वंशि सुनि गोप वधूटी । प्रेम विवश आवहिं घर छूटी ॥९॥
सेवक धनद हरण उन करहीं । चक्रधारि तब प्रभु सिर हरहीं ॥१०॥

दोहा- **धेनुक असुर प्रलम्ब वक केशी वृषभ महान ।**
शल तोषल चाणूर अरू, मुष्टिक गज वलवान ॥४२॥

छन्द— **वलवान कंस व कालयवन, भौम वानर वल्वला ।**
शिशुपाल शालव दंतवक्र, विदूर थादिक नृप खला ॥
नग्नजित्त के वृषभ सप्त व, शम्वरासुर दल दला ।
नृप पौंड्रुरुक्मी मागधादिक, मारहीं करि छलवला ॥९॥

दोहा- **काम्वोज मत्स्य कुरु कैकय, सञ्जय आदि नरेश।**
धनुष धारकर युद्ध हित, आपहि तजि निज देश ॥४३॥

चौ— बलराम भीम अर्जुन के द्वारा । वध निज धाम देहिं भय हारा ॥१॥
समय फेर हों वय मति कमती । वेद वचन समझहि नहि कुमती ॥२॥
तब प्रति कल्प व्यास प्रकटाई। करहिं वेद शाखा अलगाई ॥३॥
अमर शत्रु ले वेद सहारा । मम मायाकृत अदृश करारा ॥४॥
उस पुरवास करहिं सब आई । होय निडर पुनि लोक नसाई ॥५॥
बुद्धि विमोहन लोभ प्रचारन । बुद्ध रूप धरहीं जग तारन ॥६॥
पाखंड धर्म का करहिं प्रचारा । इत्थं सकल जगत भय टारा ॥७॥
भक्त लोग हरि कथा न करहिं । द्विजजन वेद मार्ग जब तजहीं ॥८॥
नृपति होय जब शूद्र समाना । स्वाहा स्वधा न सुनहीं काना ॥९॥

दोहा- **विष्णु यशस द्विज के गृह, धरहिं कलंकी रूप ॥**
कलियुग शासन करन हित, आवहिं वे सुरभूप ॥४४॥

चौ— हों जब काल सृष्टि निर्माना । तब तब प्रजापति ऋषि नाना ॥१॥
रक्षा काल समय जब आये । धर्म विष्णु मनु सुर नृप जाये ॥२॥
हों जब सृष्टि प्रलय लवलीना । रुद्र अधर्म क्रोध आधीना ॥३॥

दैत्य आदि रूप जग आई । प्रभु विभूतियाँ हो प्रकटाई ॥४॥
मानव रजकण गणहिं प्रभावा । किन्तु न पार शक्ति उन पावा ॥५॥
वामन ले अवतार खरारी । नापी जबहि त्रिलोकी सारी ॥६॥
उन अदम्य पद वेग प्रभावा । काँपि अध सत लोक ते आवा ॥७॥
प्रभु प्रभाव कोउ नहिं जाना । मैं भव शनकादिक मुनि नाना ॥८॥
शेष शारदादिक गुण गाई । अद्यावधि उन पार न पाई ॥९॥

दोहा- कपट भाव तजि पद कमल, होहिं विद्यावर आय ।
उस नर को भगवान की, माया नहिं सताय ॥४५॥

छन्द— भगवान की माया अरे मैं, और तुम भव जानते ।
प्रहलाद मनु मनु सुवन, सतरूपा प्रियवत मानते ॥
प्राचीन बर्हीं और ऋभु ध्रुव, इक्ष्वाकु रघुगय ।
अम्बरीष पुरूरवा मुचकन, आदि अमूर्तय ॥१०॥
जनक शत्तधनु भीष्म वलि, अनुगाधिसुत श्रुतकुलमणी।
रंतिदेव दिलीप सौभरि, पिप्पलाद शिवी गुणी ॥
जनक और उतङ्क देवल, भूरिषेण विभीषण ।
हनुमान अर्जुन औ परीक्षित, आर्ष्टिषेण विदूरण ॥११॥

चौ— ये सब माया के गुण गाये । प्रभू कृपा भव पार सिधाये ॥१॥
शुद्र हूण तिय भील कठोरा । पशु अरु पक्षि पापिनर घोरा ॥२॥
भगवत माया यदि ये जाने । तो निज मन यम भय नहिं आने ॥३॥
सदाचार पालन जो करहीं । फिर वे नर क्यों दुःख उठावहीं ॥४॥
जो शरीर तुम सुन्दर जाना । खावहिं स्यार काक अरु स्वाना ॥५॥
तो यह बन जावहीं पुरीषा । आग लगे न रहे अवशीषा ॥६॥
पड़ा रहे तो खावत कीड़े । दुर्गन्ध युक्त हो योंही बिगड़े ॥७॥
ऐसो तनु पाकर जो कोई । रटहिं न नाम अन्त दुःख होई ॥८॥

दोहा- शान्त अभय अरु एक रस, केवल ज्ञान स्वरूप ।
अमल असमता सत असत, सबसे पर प्रभुरूप ॥ ४६ ॥ क
लौकिक वैदिक शब्द वहँ, पहुँच सकै न कदापि ।
सब साधन सम्पन्न ते, कर्म सुफल न वियापि ॥ ४६ ॥ ख

चौ— माया सन्मुख जा नहिं पाती । भागत लाज खाय गुण गाती ॥१॥
आनन्द स्वरूप अशोक अनन्ता । लखहिंब्रह्मरूप उन सन्ता ॥२॥

संयमशील पुरुष निज मन को । करहिं समाहित स्थित हो उन को ॥३॥
भेद अभेद ज्ञान सुख साधन । रहत न रुचि उन भक्तन के मन ॥४॥
मेघ रूप से स्वयं प्रकाशित । इन्द्र रूप किमि करहिं विकाशित ॥५॥
सकल करम फल दें भगवाना । उन विन कवन करे कल्याना ॥६॥
मानव निज स्वभाव अनुसारी । करहिं कर्म प्रेरित असुरारी ॥७॥
पंचभूत हो जव विलगाई । तव शरीर यह होत नसाई ॥८॥
पुरुष अजन्मा इस तनु वासित । नभ समान नहि होत विनासित ॥६॥

दोहा- **विश्वोत्पत्ति की कथा, सुन नारद मुनिनाथ ।**
भिन्न भिन्न वर्णन करी, चतुराई के साथ ॥ ४७ ॥

चौ– कारज कारण भाव अभावा । भगवत भिन्न कोपि नहि पावा ॥१॥
किन्तु रहत वे इन विलगाई । पावत पार न श्रुति गुण गाई ॥२॥
भगवत वचन सुना में काना । भई भागवत जगत प्रधाना ॥३॥
प्रभु विभूति का वर्णन सारा । करहु प्रचार सहित विस्तारा ॥४॥
जेहि प्रकार सर्वाश्रय भगवन । सर्वस्वरूप हरि के पदकमलन ॥५॥
अनन्य प्रेम मय भकति सुधाकर । पावत नर सुख सव अघ हर कर ॥६॥
अचिन्त्य शक्ति माया का वर्णन । श्रद्धा सहित करहिं अनुमोदन ॥७॥
माया मोहित करहि न उसको । सुनहि कथा यह चित्त धरि जिसको ॥८॥

दोहा- **गुणातीत गुण कथन हित, विधि प्रेरित गुणवान ।**
विधि सुत किस हित ज्ञान यह, दिय शुक कृपा निधान ॥४८॥

चौ– कहु शुक ब्रह्म रूप तनुधारी । कथा सुमंगल पावनकारी ॥१॥
हे महाभाग कृष्ण मन धरिके । तजूँ कलेवर सुन गुण हरिके ॥२॥
हरि लीलामृत कथा जो सुनहि । निज रसना ते हरि गुण गुनही ॥३॥
तासु हृदय भगवाना निवासा । करथ मनोरथ पूरण आसा ॥४॥
कर्णरंध्र भक्तन हिय आई ।करहिं कृष्ण सव पाप नसाई ॥५॥
वर्षा विगत शरद के आये । मल तजि सलिल शुद्ध वन जाये ॥६॥
तजहिं शुद्ध मना सव क्लेशा । किन्तु न तजहिं चरण मथुरेशा ॥७॥
शरणाश्रय पथिक यथा नहीं तजही । शुद्धमना निशि दिन हरि भजहीं ॥८॥

दोहा- **पंचतत्व अरु जीव का, नहीं कोई सम्वन्ध ।**
किन्तु जीव तनु का मुने, करते वही प्रवन्ध ॥४६॥

चौ– कारन और अकारण इसका । जानत मर्म मुनि तुम सवका ॥१॥
प्रथम कहा मुनी तुमने मोकू । नाभ कमल ते रचना लोकू ॥२॥

याते समझ यही मन आई । जीव ब्रह्म नहि दोउ अलगाई ॥३॥
फिर क्या रही विशेषता इसकी । कृपा प्राप्त विधि रचना जग की ॥४॥
जासू नाभि कमल से पैदा । करहि दर्श विधि तजि निज खेदा ॥५॥
स्थित्युत्पत्ति प्रलय के हेतू । माया तजि सोवत सुरकेतु ॥६॥
विराट रूप में अंग कल्पना । लोक पाल लोकन की रचना ॥७॥
पुनि लोकपाल लोकन के रूपा । कल्पित कियउ विराट स्वरूपा ॥८॥
इनका अर्थ कहो मुनि मोही । मैं नही समझ सका नही दोही ॥९॥

दोहा- **कल्प विकल्प व काल का कहो मुनी कुल मान ।**
सुर नर खग मृग जीव की, आयु का परमान ॥५०॥

चौ– सूक्ष्म काल गति कवन प्रकारा । वरस मान स्थूल गति सारा ॥१॥
विविध कर्म ते जीव की जितनी । होवत मुनी कहो गति उतनी ॥२॥
फलस्वरूप त्रिगुण के मिलती । सुर नर देव योनि सब फलती ॥३॥
किन किन कर्म ते कवन शरीरा । पावत जगत बीच कहु तुम कीरा ॥४॥
भू, पाताल, दिशा, नभ, तारे । ग्रह, नदि, द्वीप, सिन्धु, गिरि, सारे ॥५॥
करहिं निवास इन्हो में जेते । किस प्रकार जनम ये लेते ॥६॥
आभ्यन्तर बहि ब्रह्मांड प्रमाना । ऋषि मुनि चरित जो शास्त्र बखाना ॥७॥
आश्रम वर्ण, धर्म , अवतारा । युग भेद, मान वरणउ मुनि सारा ॥८॥

सोरठा- **साधारण और विशेष, समझाकर के हे मुनि ।**
आपद, न्याय, नरेश, सकल धर्म वर्णन करो ॥५॥

चौ– संख्या तत्व व लक्षण रूपा । विधि योग अराधन ज्योतिस्वरूपा ॥१॥
योगेश्वर जो जग में जेते । विपुल योग पावत वे केते ॥२॥
कवन गति वे जावहि अन्ता । लिङ्ग शरीर भंग किमि संता ॥३॥
धर्मशास्त्र इतिहास पुराना । उपवेद वेद अभिप्राय बखाना ॥४॥
स्थित्युपत्ति प्रलय हो जैसी । वापी कूप स्मार्त विधि कैसी ॥५॥
वैदिक कर्म व काम्य सुकर्मा । साधन अर्थ काम अरु धर्मा ॥६॥
इन सबकी विधि हे मुनिराई । भिन्न भिन्न कहो समुझाई ॥७॥
प्रलयकाल प्रकृति लव लीना । तासु जन्म किमि किस आधीना ॥८॥
पाखंड होत मुनि कवन प्रकारा । बन्ध मोक्ष मन रूप विचारा ॥९॥

दोहा- **निज स्वरूप में होत स्थित, किस प्रकार पुनि जीव ।**
परम स्वतंत्र रहते सदा, भगवत करूणा सींव ॥५१॥

चौ– माया पति माया के द्वारा ।करहिं खेल यह कवन प्रकारा ॥१॥
साक्षी के सम माया तजकर । उदासीन हो जावत क्योंकर ॥२॥
यह सब कथा कहो मुनि राया । चरण शरण अब मैं तव आया ॥३॥
आप स्वयंभू ब्रह्म समाना । परम प्रमाण शास्त्रविदज्ञाना ॥४॥
अपर लोग निज परंपरागत । कहहिं बात वे सुनी सुनावत ॥५॥
कर्णरंध्र लीलामृत पीकर । लगी क्षुधा न मुझे हे मुनिवर ॥६॥
कुपित विप्रशाप अतिरिक्ता । निकले प्राण न मोर प्रभुक्ता ॥७॥
कहे सूत सुनो मुनिराया । करी विनय शुक से यों राया ॥८॥
भये प्रसन्न शुकदेव कृपाला । बोले वचन सुनो नरपाला ॥९॥
कथा भागवत वेद स्वरूपा । सुनहु चित्त देकर हे भूपा ॥१०॥

दोहा- **ब्राह्म कल्प प्रारंभ में, ब्रह्मा को भगवान ।**
कथा भागवत की वही, कही "नृपति गुणवान" ॥५२॥

चौ– स्वप्न पदारथ सम सम्बन्धा । दृश्य जीव का वहि अनुबन्धा ॥१॥
होत प्रतीति माया के कारण । स्वयं एक रस सम जग तारण ॥२॥
अनन्त रूप माया वश आई । अद्वय ये बहुरूप दिखाई ॥३॥
जब मायागुण में रम जावे । तब यह मम अरु तव बतलावे ॥४॥
काल और माया पर होकर । अनन्त स्वरूप में मोह नसाकर ॥५॥
करहि रमण जबै यह आई । आत्मा राम जीव बन जाई ॥६॥
ममाह भाव तजि पूर्ण उदासी । गुणातीत तब यह हो जासी ॥७॥
निष्कपट तपस्या से हो राजी । दियउ दर्श प्रभु उन ब्रह्माजी ॥८॥
परम सत्य परमारथ ज्ञाना । चतुरानन हेतु कहा भगवाना ॥९॥
वहि उपदेश कहूँ नरराई । सुनत सकल अघ होत पलाई ॥१०॥

दोहा- **आदि देव त्रय लोक गुरु, नाभ कमल पर बैठ ।**
सृष्टि रचने की करी जब इच्छा सुरजेठ ॥५३॥क
जिस ज्ञान दृष्टि से सृष्टि का हो सकता निर्मान ।
सो दृष्टि उनको नही मिली कमल पर आन ॥५३॥ख

चौ– तब विधि इमि मन करहिं विचारा । सृष्टि रचूँ मैं कवन प्रकारा ॥१॥
दिवस एक प्रलय जल अन्दर । कर्ण मार्ग सुनै दो अक्षर ॥२॥
स्पर्शकादि षोडस इक्कीसा । यह दोउ भूत्तू निधीनर ईसा ॥३॥
सुन तप शब्द विधि करहि विचारा । दर्शन हित जिन गिरा उचारा ॥४॥

चारहुँ ओर लखा उन राया । पंकज बिन वहँ कोई न पाया ॥५॥
तब विधि कमलनाल पकर कर । गयउ वर्ष सहस तक भीतर ॥६॥
पर कोई पार नहीं उन पाये । हार मान विधि ऊपर आये ॥७॥
बैठे कमल बीच कमलासन । तप हित लगा दियउ वे निज मन ॥८॥

सोरठा— **इन्द्रिय मन वश कीन, एक चित्त होकर विधि ।**
तप करने में लीन, सहस वर्ष पर्य्यन्त लौं ॥

चौ— दिव्य वर्ष सहस लो आई । कियउ स्वयम्भु तप सहि कठिनाई ॥१॥
तप प्रभाव लोक निर्माना । दई शक्ति उन कृपानिधाना ॥२॥
हो प्रसन्न निज लोक दिखावा । अपर लोक नहिं तासु परावा ॥३॥
रज तम सत्वकाल बल कोई । मोह क्लेश भय जँह नहिं होई ॥४॥
अर्चित सुर नर असुर समेता । करहिं वास हरिअनुव्रत केता ॥५॥
श्याम शुद्ध लोचन सम पंकज । पीताम्बर सुकुमार चतुर्भुज ॥६॥
अंग अंग सौंदर्य अनूपा । कोमल अति वर्चस्व स्वरूपा ॥७॥
मणि वैडूर्य जडित कर कंकन । कंज प्रवाल प्रभायुत भूषन ॥८॥
मस्तक मुकुट व कानन कुंडल । धरहि पैंजनी निजपद कोमल ॥९॥
गल बिच हार सुशोभित सुन्दर । जिस प्रकार बिजली घन नभ पर ॥१०॥

दोहा- **सुन्दर प्रमदा कान्ति युत, संतन दिव्य विमान ।**
शोभित चारों ओर यह, लोक मनोहर आन ॥५४॥ क
संयत रूपी मूर्तिमती, लक्ष्मी विभव अनेक ।
करती पूजा प्रेम ते, हरिपद निज शिर टेक ॥५४॥ ख

चौ— मा निज प्रियतम का गुण गावत । फिर बसंत अनुग मन भावत ॥१॥
श्रीपति यज्ञपति जगस्वामी । अखिल भक्तपति अन्तर्यामी ॥२॥
नन्द सुनंदादिक परिसेवित । इत्थं भयउ ब्रह्म विभु दर्शित ॥३॥
क्रीट मुकुट प्रभु सीस सुशोभित । कुंडल श्रुति गलमाल विमोहित ॥४॥
अरूण नेत्र प्रसन्न सुआनन । श्रुति भुज कर पीताम्बर धारन ॥५॥
श्रीवत्स सुशोभित वक्षस्थल पर । पूजित दैत्य व दानव सुरनर ॥६॥
सर्वोत्तम बहुमूल्य सुआसन । विराजमान सुखदाता दासन ॥७॥
पुरुष प्रकृति महतत्वहंकारा । मन इन्द्रिय शब्दादिक सारा ॥८॥
मूर्तिमती पचीस ये शक्ति । करत सर्वदा प्रभु की भक्ति ॥९॥

दोहा- **ज्ञान और वैराग्य श्री, कीरति धर्म विभूति ।**
रहत सर्वदा युक्त पट्, नित्य सिद्धि इन शक्ति ॥५५॥

चौ– वे सर्वेश्वर प्रभु अभग्ना । आनन्द रूप विच रहत निमग्ना ॥१॥
दर्शन करत तासु विधि हरदय । नयन प्रेम अश्रु उन छलकय ॥२॥
हो प्रसन्न पद पंकज परि के । कियउ प्रणाम जगतपति हरि के ॥३॥
निवृत्ति मार्ग ते पावत उनको । भक्त लोग भक्ति कर जिनको ॥४॥
हो प्रसन्न मन वे भगवाना । लखि विधि सृष्टि योग्य निर्माना ॥५॥
मंद मंद मुस्काकर राजन । विधि का पकर हस्त जगतारन ॥६॥
बोले वचन सुनहु ममवानी । वेद गर्भ तजकर मन ग्लानी ॥७॥
सृष्टि हेत जो तुम तप कीन्हा । तासु विलोकि दरस मैं दीन्हा ॥८॥
मन में कपट भावना रखकर । करहिं योग साधना जो नर ॥९॥

दोहा- **मुझको पा सकते नहीं, हो विधि तव कल्यान ।**
मन इच्छित तुम माँगहू, मुझसे अब वरदान ॥५६॥

चौ– जब लगि दर्शन मम नही पावे । कल्याण हेतु वह कष्ट उठावे ॥१॥
मम दर्शन बिन तुम तप कीन्हा । तासु हेतु दर्शन तुम दीन्हा ॥२॥
तप आत्मा अरु तप मम हृदय । तप से करउँ जगत का सृजय ॥३॥
तप से धारण पोषण सारा । तप से ग्रसहुँ सकल संसारा ॥४॥
तप मम शक्ति अचिन्तय अमोघा । तप बिन नष्ट न हो जग ओघा ॥५॥
कृपा विलोकि बोले चतुरानन । सर्व भूत अध्यक्ष हे भगवान ॥६॥
करउँ याचना अन्तरयामी । करहुँ माँग मम पूरण स्वामी ॥७॥
यद्यपि हो प्रभु आप अरूपा । जान सकूँ जिमि उभय स्वरूपा ॥८॥
सोहि कृपा प्रभु मो पर कीजे । यह वरदान दया कर दीजे ॥९॥
हे मायापति जग करतारा । हो संकल्प न व्यर्थ तुम्हारा ॥१०॥

दोहा- **उर्णनाभ सम जग यथा, स्थित्युत्पत्ति लय हेत ।**
क्रीड़ाकर क्रीड़ा करत, निज प्रकृति समेत ॥५७॥

चौ– परम मर्म जानन अभिलासा । भई पूर करु ज्ञान प्रकाशा ॥१॥
कृपा करो मुझ पर अब भगवन । करउँ सदा आज्ञा तव पालन ॥२॥
जो मैं करउँ सृष्टि निर्मानू । तो कर्तापन का अभिमानू ॥३॥
आवे नहि में मन हे भगवन । रहे सर्वदा तव पद में मन ॥४॥
हाथ पकर एक मित्र समाना । कियो स्वीकार मुझे निज जाना ॥५॥
अब वह शक्ति देउ प्रभु मोही । जासे जग उत्पत्ति होही ॥६॥

दोहा- **ब्रह्मा के यह वचन सुनि, इमि बोले भगवान ।**
अनुभव प्रेमाभक्ति अरु साधनयुत यह ज्ञान ॥५८॥

चौ– परम सु गोपनीय उपदेशा । श्रवण करहु मुझसे लोकेशा ॥१॥
जो मम लक्षण जे विस्तारा । रूप व गुण मम चरित अपारा ॥२॥
तासु तत्व तुम अनुभव करहूँ । सृष्टि पूर्व केवल मैं रहहूँ ॥३॥
मम अतिरिक्त न भाव अभावा । स्थूल व सूक्ष्म जगत नही पावा ॥४॥
जहँ यह सृष्टि रहत नही शेषा । वहीं पर मैं ही रहूँ अवशेषा ॥५॥
सृष्टि रूप विच होत प्रतीता । भविष्यत वर्तमान अतीता ॥६॥
वह सब जानहु विधि मम रूपा । सृष्टि बाद रह शेषस्वरूपा ॥७॥
यथारथ अवरणनीय पदारथ । मम अतिरिक्त न सत्य अकारथ ॥८॥

दोहा- **प्राकृत जल घट बीच विधु दिन मणि रूप अनेक ।**
पर वह सब मिथ्या रहे उनमें सत्य न एक ॥५९॥

चौ– प्राकृत घट जब कोई हिलावे । सूर चन्द्रमा एक न पावे ॥१॥
सूरज चन्द रहे बिच नाभा । तिमि जानहु विधि यह मम आभा ॥२॥
विद्यमान में होत प्रतीती । नभ बिच राहु समां मम नीती ॥३॥
तत्व रचित तनु तत्व प्रवेशा । करहिं न करत यथा लोकेशा ॥४॥
इमि इन प्राणिन के तनु जानों । करहुँ प्रवेश प्रवेश न मानो ॥५॥
गुरु बिन तत्व ज्ञान नही आवे । भक्ति हीन नहिं सिद्धि पावे ॥६॥
भक्त लोग करके मम भक्ति । पावत सिद्धि अन्त में मुक्ति ॥७॥
यह उपदेश कहा हम गाई । सुनेउ धात तुम चित्त लगाई ॥८॥
करहु सृष्टि निर्माण विधाता । कदापि न ते मन होई प्रमादा ॥९॥

दोहा- **कमलासन के कारने, देकर के यह ज्ञान ।**
अजय अजन्मा भक्तनिधि, हरिभय अन्तर्ध्यान ॥६०॥

चौ– कियउ पूर्ववत् जग निरमाना । पुनि ब्रह्मा मन धर हरि ध्याना ॥१॥
ब्रह्म सुवन बिच सब में अति प्रिय । परम भक्त नारद जो अद्धय ॥२॥
माया तत्व ज्ञान के कारन । विनय सुजनता संयम धारन ॥३॥
सेवा कियउ पिता की भारी । लखि सेवा सुत की श्रुति धारी ॥४॥
भयउ मुदित विधि ज्ञान विशारद । जब लखि हर्षित पितु मुनि नारद ॥५॥
पुरान भागवत दश लक्षण युत । नारद हेतु धात सुनावत ॥६॥
जो उपदेश प्रभु से पायो । नारद हित वहि ज्ञान बतायो ॥७॥
एक दिवस नारद मुनिधीरा । व्यास समीप सरस्वती तीरा ॥८॥
यही भागवत ज्ञान अनूपा । कहेउ व्यास हेतु तपरूपा ॥९॥

दोहा- **जगदुत्पत्ति विराट ते, और जो प्रश्न तुम्हार ।**
पुराण भागवत रूप में, सुनहु नृपति कलिमार ॥६१॥

चौ– कह शुकदेव सुनहु नरभूपा । कहुँ भागवत परम अनूपा ॥१॥
सर्ग विसर्ग निरोध व ऊती । ईशानु कथा मनवन्तर मुक्ती ॥२॥
स्थान व आश्रय हे नृप पोषण । रहत भागवत ये दश लक्षण ॥३॥
आश्रय निश्चयार्थ सुन राजन । अन्य विषय का कियउ ये वरणन ॥४॥
श्रुति अरु तात्पर्य अनुकूला । संतन सुगम रीति यह तउला ॥५॥
इन्द्रिय शब्दादिक शर तत्वा । अहंकार युत यह महतत्वा ॥६॥
इन उद्‌भव नृप सर्ग कहावे । विधिकर द्वारा जो जग जाये ॥७॥
कहहिं विसर्ग शास्त्र विद् येही । वैकुंठ विजय जो स्थिति समुझेही ॥८॥
प्रभु अनुग्रह पोषण जानहूँ । कर्म वासना ऊतिय मानहू ॥९॥

दोहा- **अवतार चरित ईशानु कथा , मन्वन्तर सद्धर्म ।**
जीव शक्ति सह हरि शयन, कहु निरोध यह कर्म ॥ ६२ ॥

चौ– अनात्म भाव तजि वास्तविक रूपा । परम ब्रह्म सम होत स्वरूपा ॥१॥
समझहुँ मुक्ति यही नर नाथा । आगे सुनहु आश्रय गाथा ॥२॥
चर अचर जगत की होत प्रतीति । पालन प्रलय और उत्पत्ति ॥३॥
तत्व बीच जिस होत प्रकाशय । वही पर ब्रह्म सभी का आश्रय ॥४॥
जीव रूप अरू देह परस्पर । रहहि सर्वदा तीनों मिलकर ॥५॥
होय तीन विच एक अभावा । अपर दोय उपलब्धि न पावा ॥६॥
रहहि तीन से जो अलगाई । जानहि इन्हें अरे नरराई ॥७॥
यह आश्रय तत्व तुम्हें बतलाया । इससे परे और नही पाया ॥८॥

दोहा- **निकसेउ अंड विदारि कर जब विराट भगवान ।**
निज निवास हित उन कियो जल सृष्टि निर्मान ॥६३॥

चौ– उस नर ने यह जो जल जाया । तेहि हेतु जल नार कहाया ॥१॥
उस निज रचित नार में वह नर । रहेउ बरस एक सहस बिताकर ॥२॥
जो नार बीच उन अयन बनाया । याते नारायण कहलाया ॥३॥
द्रव्य व काल कर्म स्वभावा । जीव आदि सत्ता उन भावा ॥४॥
करहिं अपेक्षा इनकी जोई । नहि अस्तित्व रहे उन कोई ॥५॥
वे भगवान सृष्टि से पहले । योग नींद से उठे अकेले ॥६॥
एक रूप से अधिक स्वरूपा । भई अभिलाष उन ज्योतिस्वरूपा ॥७॥

तब निज तेज त्रिधा उन कियउ । अध्यातम अधीदैव अधि भूतउ ॥८॥

दोहा- **विराट पुरूष का एक ही, तेजस तीन विभक्त ।**
किस प्रकार ते यह हुआ, आगे सुनहु चरित्त ॥६४॥क
चेष्ठित भयउ विराट जब, तासू अंत आकास ।
इन्द्रिय मन बल के सहित, तनु बल भयउ विकास ॥६४॥ख

चौ- उत्पन्न भयउ तनु ते नृप प्राणा । चलहि संग जिमि अनुव्रत राणा ॥१॥
प्राण प्रबल जब होत शरीरा । हो न सकत इन्द्रियाँ अधीरा ॥२॥
जब यह त्यागहिं दीरघ स्वासा । अनुभव भयउ क्षुधा परिप्यासा ॥३॥
खान पान इच्छा जब आई । तब विराट का मुख खुल जाई ॥४॥
मुख ते तालु तालु ते रसना । रसना कर्म स्वाद सब चखना ॥५॥
कथन हेतु वाणी प्रकटाई । वरूण वह्नि जिन देव कहाई ॥६॥
बहुत दिवस पुनि निर्मल नीरा । करहिं निवास विराज शरीर ॥७॥
श्वास वेग ते प्रकटी नासा । भई सूंघने की अभिलासा ॥८॥
वायु निवास नास पर आई । कर्म कहउ इन गंध उडाई ॥९॥

दोहा- **निज पर वस्तु विलोकने, की जब भई अभिलास ।**
किन्तु बदन में था नही, उनके ज रा प्रकाश ॥६५॥

चौ- तब रूप ग्रहण हित नयन प्रकासा । शब्द ग्रहण हित श्रवण व नासा ॥१॥
कियउ जो वेद प्रशंसा नाना । सुनी सकल वह पुरुष प्रधाना ॥२॥
मृदु लघु कठिन गुरु गरमाई । भई अभिलास व सीतलताई ॥३॥
त्वचा बदन पुनि उनके आई । तासु स्पर्शगुण सब बतलाई ॥४॥
भइ रोमावलि तनु उन कैसे । महि विदारि तरु निसरत जैसे ॥५॥
बाहर भीतर रहने वाला । रूप रहित गुण स्पर्श निराला ॥६॥
वायु प्रकट भयो पुनि आई । त्वचा इन्द्रिय तनु लिपटाई ॥७॥
कर्महितु अधिष्ठित दोउ कर । ग्रह शक्ति जिन देव पुरन्दर ॥८॥

दोहा- **अभिष्ट स्थान पर गमन की भई रुचि जब आय ।**
चरणेन्द्रिय के सहित प्रभु पद पर स्थित हो जाय ॥६६॥

चौ- स्वर्ग भोग रति सुवन कामना । भई विराट तनु लिंग स्थापना ॥१॥
प्रजापति देव अंग उपस्थिय । भयो काम इन दोउ आश्रय ॥२॥
मल त्याग काज गुदा प्रकटाई । सुर मित्र अंग पायू रचि आई ॥३॥
आश्रय दोउ होत मल त्यागा । भिन्न पायू यह करत विभागा ॥४॥

एक शरीर ते अपर शरीरा । गंतव्य काज भयो नाभी द्वारा ॥५॥
अपान मृत्यु नाभि ते आई । उभयाश्रय तनु होत नसाई ॥६॥
खान व पान रुचि जब पाई। कुक्षि व अंत्र नाड़ियाँ जाई ॥७॥
कुक्षि नाड़ि सह सागर सरिता । तुष्टि पुष्टि रहे जिन आश्रयिता ॥८॥

दोहा- **निज माया पर जब कियो, पुरुष विराट विचार ।**
मन इन्द्रिय विधु संग ले, हृदय लियो पुनिधार ॥६७॥

चौ- संकल्प कामना विषय सु याके । होत मनोरथ पूरण पाके ॥१॥
सप्त धातु क्षिति जल तेजसते । भयउ प्राण जल पवन अकासते ॥२॥
ग्रहण धर्म श्रवणादिक अवयव। जानत सदा रूप शब्दादय ॥३॥
अहंकार ते ये सब जाये । सकल विकार नृप मन कहलाये ॥४॥
बुद्धिकरत पदारथ ज्ञाना । नृप यह स्थूल रूप भगवाना ॥५॥
क्षिति जल तेज व वायु अकासा । अहंकार महततु प्रकृति खासा ॥६॥
परदे आठ लागे ये आके । स्थूल रूप दीखत है जाके ॥७॥
इन सबसे पर कृपा निधाना । अत्यन्त सूक्ष्म रूप भगवाना ॥८॥

दोहा- **निर विशेष अनादि अज, अव्यक्त व नित्य अनापि ।**
मन वाणी की पहुँच वहँ, होवत नही कदापि ॥६८॥

चौ- व्यक्त अव्यक्त सुक्ष्म अरू स्थूला । सुनायहु तोहि स्वमति अनुकूला ॥१॥
प्रभु माया शक्ति के द्वारा । होत प्रकाशित दोउ अपारा ॥२॥
विवेकि न ग्रहण करहिं इन दोही । निज शक्ति वह सक्रिय होही ॥३॥
सकर्म अकर्म परे भगवाना । धारहि नाम रूप क्रिय नाना ॥४॥
प्रजापति मनु रिषि चारण किन्नर । गंर्धव अप्सरा अरु विद्याधर ॥५॥
भूत पिशाच प्रेत जग जेते । खग मृग तरु गिरि उरग समेते ॥६॥
गुह्यक नाग व सर्प विनायक । कुष्मांड मातृका रक्षक गुह्यक ॥७॥
सुर नर असुर किम्पुरूष निराला । यातुधान सरिसरप विशाला ॥८॥
नाम रूप ते जे संसारा । भगवत स्वरूप लखहु उन सारा ॥९॥

दोहा- **चर अचर जरायुज अंडज, स्वेदज उद्भिज प्रान ।**
जलचर थलचर नभ चरा, मध्यम नीच महान ॥६९॥

चौ- शुभा शुभ योनि जीव जो जावत । निज निज कर्म हेतु वह पावत ॥१॥
सत्व देव रजगुण ते मानव । तम गुण नारकीय तनु पावत ॥२॥
जब गुण एक नयन गुण हारत । तब प्रति गति त्रय भेद बनावत ॥३॥
जग धारण पोषण को करतारा । सुर नर खग मृग धर अवतारा ॥४॥

करहि जगत का पोषण पालन । प्रलय काल रुद्र वपु धारन ॥५॥
करहिं लीन निज तनु जग कैसे । करहिं वायु घन मालहि जैसें ॥६॥
कह शुकदेव सुनहु नर नाथा । यों गावत संत लोग उन गाथा ॥७॥
किन्तु तत्व ज्ञानी जो होइ । इत्थं दर्श करे नहि कोई ॥८॥
प्रकृति प्राकृत जोय पदारथ । इनते पर परब्रह्म यथारथ ॥९॥

दोहा- **महा कल्प विकल्प का, विधी से किया बखान ।**
सब कल्पों में सृष्टि का, होवत यों निरमान ॥७०॥

चौ– महाकल्प बिच भेद इतोई । महत्तत्व आदिक इन होई ॥१॥
किन्तु विकल्प बीच यह धरती । होत विनाश नही यों रहती ॥२॥
केवल होत चराचर सारे । रूप नवीन सकल यह धारे ॥३॥
शौनकादि मुनि कहत पुकारी । सुनहु सूत अब बात हमारी ॥४॥
प्रथम कथा तुमने जो गाई। विदुरभक्त के सब मन भाई ॥५॥
अति प्रिय बन्धु कुटुम्बिन तजकर । गवने तीरथकाज विदुर वर ॥६॥
कहाँ भयो मुनि प्रेम विवादा । मैत्रय और विदुर संवादा ॥
जो तत्व विदुर ने पूछा उनसे । वह सब चरित कहो मुनि हमसे ॥७॥
बन्धू त्याग भयो केहि कारन । पुनः हस्तिनापुर उन आवन ॥८॥

दोहा- **ऋषियों का यह प्रश्न सुन, बोले सूत सुजान ।**
यही बात शुकदेव से, पूछी नृपगुणवान ॥७१॥

छन्द- **गुणवान नृप ने प्रश्न यह, शुक से कियो अति प्रेम से ।**
शुकदेव ने नृप हेतु गाथा, यह कही सब नेम से ॥
वहि गाथ तुमको हे मुने, मैं सब सुनाता हूँ अभी ।
हो सावधान व चित्त देकर, के सुनो इसको सभी ॥१०॥

दोहा- **विधि नारद सम्वाद यह, और विराट का हाल ।**
छूटहिं माया जाल भव, सुनतहि बजरंग लाल ॥ ७२ ॥क
अगाध सिन्धु सम यह कथा, मिलहि न पारावार ।
बजरंग लाल वरणन कियो, स्वमति के अनुसार ॥ ७२ ॥ख
पढै सुने जो प्रेम ते, पावहिं भक्ति अपार ।
हरि चरणों में प्रेम हो, होवहि भवके पार ॥ ७२ ॥ग

इति श्री कृष्ण चरित्रामृते कलिमल विध्वंसने बजरंग कृत — श्रीमद्भागवते
महापुराणें पारमहंस्यां संहितायां समाप्तोऽयं द्वितीय स्कंध ॥

हरिः ॐ तत्सत्

॥ श्री गणेशाय नमः ॥

॥ श्री राधा वल्लभो विजयते ॥

॥ श्री मद्भागवत प्रारंभ ॥

तृतीय स्कन्ध

श्लोक

यमान्या कुरूते वशं भवमिदं, वन्दे स्वयम्भूं विभुं ।
वन्दे सर्व सुरेश्वरं भयहरं, मायेश शान्ति प्रदम् ॥
वन्दे शेष महेश वन्दितपदं, वन्देऽभयं मोक्षदं ।
वन्देऽहं करुणाकरं यदुवरं, गोपालचूड़ामणिम् ॥

दोहा- **पुंडरिकाक्ष अमोघ हरि, नरसिंह रूप अनूप ।**
यज्ञ वराह दानव दलन, वन्दों उन प्रभु रूप ॥१॥

सोरठा - **वन्दो वारम्वार, व्यास देव शुक देव को ।**
कीन्ही कृपा अपार, वजरंगी निज दास पर ॥ १ ॥

दोहा- **गुरु ब्रह्मा गुरु विष्णु शिव, गुरु पर ब्रह्म स्वरूप ।**
सर्व चराचर जगत में वसत सदा गुरु रूप ॥२॥

चौ– वन्दो गुरुपद पदम परागा । धरत सीस जिन सब दुख भागा ॥१॥
वन्दन योग्य अमीचन्द प्रेता । दियउ प्रेरणा जिन मे चेता ॥२॥
द्वितीय स्कंध की कह कर गाथा । कहेउ परीक्षित से मुनि नाथा ॥३॥
प्रथम जो प्रश्न कियो नृप मोसे । उत्तर तासु सुनावहुँ तोसे ॥४॥
सुख सम्पत युत्त कुरु निज गेहा । विदुर गये वन तजि सब स्नेहा ॥५॥
ऋषि मैत्रेय पास वे गयउ । प्रश्न यहही उनसे पुनि कियउ ॥६॥
विदुर भक्त की महिमा राजन । पांडव दूत वने जव मोहन॥७॥
वे भगवान कृष्ण अखिलेश्वर । कुरुपति दुर्योधन का तजिघर ॥८॥
विदुर भवन विच वे प्रभु आये । निज घर लखि मन विना बुलाये ॥९॥

दोहा- **दोनों संतन का हुआ, परम सुखद सम्वाद ।**
वरणन कर मुझसे कहो, उस गाथा का वाद ॥३॥

चौ– कहते शुक सुन नृपति कुलीना । नृप धृतराष्ट्र जो नयन विहीना ॥१॥
पाप हेतु वह भयो अधर्मी । रहे सुवन उनके अघकर्मी ॥२॥
तासु संग मिल निज लघु भ्राता । बाल अनाथ हीन ताता ॥३॥
लाक्षा गृह बीच जलावन हेतू । भेज दियउ उन कुरु कुलकेतु ॥४॥

नृपति युधिष्ठिर की महारानी । द्रुपदसुता जो सुमुखि सयानी ॥५॥
दुःशासन खींच सभा बिच लायो । नहि कुरुराज मना करवायो ॥६॥
द्रुपद सुता कुंच कुंकुम धुलहिं । तासु कर्म रोवहिं अति बिलखई ॥७॥
कपट द्यूत रचि नृप दुर्योधन । पाँडूपुत्र युधिष्ठिर का धन ॥८॥
छीनेउ राज अधर्म सहेता । भेजे वन बिच भ्रात समेता ॥९॥

दोहा- **पांडव निज प्रण पूर्ण कर, आये वन ते लोट ।**
कियउ याचना दाय की, दियो न किन्तु नृप खोट ॥४॥

चौ- प्रेषित धर्म कृष्ण अखिलेश्वर । कहेउ सभा बिच जा वच हितकर ॥१॥
किन्तु कृष्ण कथन कुरू राजा । कियउ अनादर सकल समाजा ॥२॥
मानत कृष्ण वचन वह क्यों कर । भयउ नष्ट पुण्य वह कुरुवर ॥३॥
मंत्र हेतु पुनि विदुर बुलाये । आय विदुर कुरुपति समझाये ॥४॥
निज सम्मत्ति जो विदुर बताई । विदुर नीति वह जग कहलाई॥५॥
बोले विदुर सुनहु महाराजा । युधिष्ठिर भाग देहु उन काजा ॥६॥
अपराध असह्य सहे नृप तेरे । मानहु वचन नीक ये मेरे ॥७॥
अनुज सहित वह भीम वृकोदर । कृष्ण उरग सम क्रोधित होकर ॥८॥
तजहिं श्वास निज विनिमय हेतू । ते करहिं विनास सकल कुरुकेतू ॥९॥

दोहा- **नहीं भेद तुमको यह, अजित कृष्ण यदुराय ।**
निज जन सम उन जानि मन, आकर करहि सहाय ॥५॥

चौ- भूप सकल अवनी के भाई । किय अधीन निज उन यदुराई ॥१॥
जो सुर विप्र जगत बिच भ्राता । करत पक्ष उन तब नहि ताता ॥२॥
कृष्ण विमुख हरि अरि दुर्योधन । लखहु दोष मूरति इन राजन ॥३॥
कुल रक्षार्थ तजहु तुम ऐही । फिर कोई दोष नही तुम देही ॥४॥
विदुर वचन सुनि कर्ण दुशासन । शकुनि सहित नृप सुत दुर्योधन ॥५॥
भयउ क्रोध ते आग बबूला । फडकहिं होठ दुष्ट कुलशूला ॥६॥
करि लाल नेत्र विदुर विपरीता ।कहेउ वचन अपमान सहीता ॥७॥
दासी सुत यह बिना बुलाया । कारन कवन यहाँ पर आया ॥८॥
जासु अन्न यह खावत जीकर । उन प्रतिकूल ये बोलत क्यों कर ॥९॥

दोहा- **इस कुल में बस कर यह, करत शत्रु का काम ।**
नगर हस्तिनापुर बहि, करहु अभी इस बाम ॥६॥

चौ- सुना वचन यह बाण समाना । तदपि विदुर कुछ बुरा न माना ॥१॥
माया प्रबल जानि भगवाना । राज द्वारि रख निज धनु बाना ॥२॥

नगर द्वार ते वाहिर आये । निज कुटुम्ब गृह मोह नसाये ॥३॥
विदुर नगर तजि बाहर आवा । कौरव पुण्य सुसकल नसावा ॥४॥
तीरथ हेतु विदुर तजि निज घर । विचरहिं तीर्थ पाद श्री हरिहर ॥५॥
तीर्थ नगर गिरि विपिन निकुंजा । फूले सिंधुसरित सर कंजा ॥६॥
योगी भेष स्वछन्द विचरहिं । जासु स्वजन पहचान न सकहिं ॥७॥
कबहुँ न निज तनु करहि सजावा । स्वल्प पवित्र अहार वे पावा ॥८॥
शुद्ध वृत्ति जीवन निर्वाही । स्नान ध्यान व्रत तीरथ राही ॥९॥

दोहा- **सकल तीर्थ का भ्रमण कर, पहुँचे क्षेत्र प्रभास ।**
जाकर के वहँ पर सुना, कौरव दल का नास ॥७॥क
वेणु वह्नि रगड़ते , जिमि वन जरत विशाल ।
लड़कर आपस में वह, भयउ कलेवा काल ॥७॥ख

सोरठा- **करत राज तेहि काल, एक छत्र युधिष्ठिर ।**
सुनेउ सकल यह हाल, भयउ कलेवा काल ॥२॥

चौ– निज मन ते तजि सब सन्तापा । गयउ सरस्वती तट चुपचापा ॥१॥
त्रित उशना मनु वायु सुदासा । अग्नि असित गौ गुह प्रथुखासा ॥२॥
श्राद्ध तीर्थ भूचन्द सुहाई । कियउ स्नान वहँ जा विदुराई ॥३॥
त्याग प्रभास चले विदुराई । सौराष्ट्र देश सौवीर सुहाई ॥४॥
मत्स्य होय कुरू जांगल आये । समय पाय यमुना तट आये ॥५॥
परम भागवत शान्त स्वभावा । कृष्ण भक्त जिन सम नही पावा ॥६॥
सुर गुरु शिष्य उधव जिन नामा । हृदय लगाय मिले सह प्रेमा ॥७॥
पूछी कुशल सकल यदुवँशिन । बहुत दिवस भय जिन किय दर्शन ॥८॥
स्वयंभू मानि विनय अवतारा । रामकृष्ण हरन महि भारा ॥९॥

दोहा- **दुष्ट दलन जग सुख करन, मोहन यदु कुल भूप ।**
वासुदेव की कुशल कहु, उद्धव भक्त स्वरूप ॥८॥

चौ– वसुदेव कुशल तुम कहो सुनाई । चाहत कुरुकुल सदा भलाई ॥१॥
जो निज भाम भगिनि मन चाही । देवत वस्तु मुदित मन माँही ॥२॥
यदु वरूथपति सुत भगवाना । पूरव जन्म अंग जिन जाना ॥३॥
विप्र अराधन करि उन माता । पायहु तासु कुशल कहु ताता ॥४॥
तजि जिन सदा राज अभिलासू । कृष्ण दियउ सिंहासन जासू ॥५॥
वृष्णि भोज यादव अरू सातत्व । उग्रसेन नृप कहुं कुसलावत ॥६॥

सगुण शील जो पिता समाना । साम्ब महारथि अति बलवाना ॥७॥
रहेउ स्कंद के जो अवतारा । पूरब गर्भ उमा जिन धारा ॥८॥
व्रत सम्पन्न जाम्ब वति जाये । कहउ कुशल तुम उन मन भाये ॥९॥

दोहा- **अर्जुन से जिन पायउ, धनुर्वेद विज्ञान ।**
कुशल पूर्वक है न वह, गुण ग्राहक युयुधान ॥ ९ ॥

चौ- निश्पाप सफल्क पुत्र अक्रूरा । कहो सुमंगल उनका पूरा ॥ १ ॥
भगवज्जन दुर्लभ स्थिति पाई । कृष्ण चरण चिह्नित रज जाई ॥ २ ॥
प्रेम अधीर हो लोटन लागे । सकल पाप जेहि कारण भागे ॥ ३ ॥
अदिति समान देवकी माता । धरेउ गर्भ जिन वे सुरत्राता ॥ ४ ॥
भक्त मनोरथ पूरण कारी । हृदय चतूरथ तत्व पुकारी ॥ ५ ॥
उन अनिरुद्ध कुशल कहु मोसे । पूछहूँ सौम्य हे उद्धव तोसे ॥ ६ ॥
गद अरू चारुदेष्ण हृदीका । कहहु कुशल इन सबकी नीका ॥ ७ ॥
नृपति युधिष्ठिर कुशल सुनाहू । अर्जुन और कृष्ण जिन बाहू ॥ ८ ॥
मय रचित सभा लखि कौरव चंदा । वैभव देखि न भयो अनन्दा ॥ ९ ॥

दोहा- **गदा युद्ध में कुशल जो, दिखलावत कई दाँव ।**
धूजत धरणी धमकते, धरत जबै निज पाँव ॥१०॥

चौ- उरग समान भीम बड क्रोधी । कुरु प्रति द्वेष भयो अवरोधी ॥१॥
कपट किरात भेष शिव काला । भयहु चकित लखि जिन शर जाला ॥२॥
दियउ पाशुपत अस्त्र विनाशन । गांडीव धनुषधारी हित अर्जुन ॥३॥
यूथप कीर्ति वढ़ावन वारे । भयउ शान्त अब अरि जिन सारे ॥४॥
माद्रिपुत्र प्रथा जिन पाला । छीना राज्य शत्रु कर घाला ॥५॥
कुन्ति कुशल पूछों किमि आई । मृत सम रहत जु पांडु जुदाई ॥६॥
पांडु चरित जग रहहि असीमित । निज सुत हेतु यह प्रथा यह जीवित ॥७॥
होवत शोच अशोच घनेरे । उन धृतराष्ट्र प्रति मन मेरे ॥८॥
भ्रात पुत्र हेतू विद्रोही । दियउ न तासु भाग निरमोही ॥९॥

दोहा- **करत नरक का काम वह सुत अनुव्रत मम भ्रात ।**
हित चिन्तक मुझको कियो निजपुर ते निर्यात ॥११॥

चौ- किन्तु न खेद न विस्मय मोकू । भ्रमित करहिं मन वृत्ति लोकू ॥१॥
कृष्ण कृपा मम सब सन्देहा । नष्ट भयउ मन ते अब स्नेहा ॥२॥
हरि पदवी देखत सानन्दा । विचरहुँ गूढ़ होय स्वच्छन्दा ॥३॥

कौरव कियउ वहुत अपराधा । किन्तु दियउ नहिं हरि उन बाधा ॥४॥
कारन उन संग दुष्ट नृपाला । वध कर भूभय हरहिं कृपाला ॥५॥
मदमत्त होय तीन मद पाई । मुहू निज सेन भूमि कँपाई ॥६॥
जन्म अजन्मा उत्पथ नासी । अनुग्रह भक्त हेतु सुखरासी ॥७॥
अपर लोग गुण पार जो पाही । कर्म देह बन्धन नही चाही ॥८॥
शरणागत लोकप आज्ञाकारी । भक्त हेतु यदुकुल अवतारी ॥९॥

सोरठा— **जगपति ब्रह्मस्वरूप, अजय अजन्मा अजर की ।**
सुन्दर कथा अनूप, कहु उद्धव इस दास को ॥३॥

चौ— तुम जानत कृष्णाश्रय वाता । यही हेतु पूछहूँ मैं ताता ॥१॥
विदुरानन ते स्मृति हरि होवत । तनु रोमाञ्चित गल अवरोधित ॥२॥
उद्धव पंच वर्ष परमाना । खेलहि मूर्ति बना भगवाना ॥३॥
प्रात भोज हित मातु बुलाये । तदपि कलेउ काज नहीं आवे ॥४॥
विदुर सुवचन सुना जब काना । स्मर्ण भयउ हरिपद उन ध्याना ॥५॥
उमड़ी हृदय प्रेम की धारा । पाछे उद्धव वचन उचारा ॥६॥
कृष्ण सूर्य हे विदुर नसावा । काल स्वरूप उरग ग्रह खावा ॥७॥
शोभाहीन भये हम सारे । कृष्ण विना सब भये दुखारे ॥८॥
तासु कुशल मैं कहा सुनाऊँ । प्रभु विन चैन जरा नहीं पाऊँ ॥९॥

दोहा- **मानव लोक अभागि यह यादव लोक निकाम ।**
रहे निरन्तर वीच उन जानि सकै नहिं श्याम ॥१२॥

चौ— अमृतमय विधु सिंधु सिधावा । किन्तु मीन पहिचान न पावा ॥१॥
मनोभाव विद कुशल सक्रीड़ा । यादव उन संग रहे अब्रीड़ा ॥२॥
जाना उन वे वन्धु समाना । परम ब्रह्म सम नहि पहिचाना ॥३॥
विक्षिप्त चित्त माया प्रभु मोही । निन्दा व्यर्थ करहीं प्रभुद्रोही ॥४॥
निन्दा सूचक वाक्य उचारे । प्रभु का कुछ वे नांहि विगारे ॥५॥
वे प्रभु निज प्रति बिम्ब दिखाई । अन्तर्ध्यान भये अब आई ॥६॥
लीला योग्य देखि प्रतिबिम्बा । विस्मय जनक न जात विलम्बा ॥७॥
धर्म यज्ञ विच उन प्रभुताई । देखी सकल त्रिलोकी आई ॥८॥
जिन अनुराग न हास विनोदा । लीला देखन काज प्रमोदा ॥९॥

दोहा- **वृज तिय निज सब काज तजि, आकर प्रभु के पासु ।**
नैत्र पुत्तली सम खड़ी, रहहिन सुधवुध जासु ॥१३॥

चौ– सुर नर हेतु दैत्य दुख देही । भयउ अजन्मा जन्म स्नेही ॥१॥
अनन्त वीर्य अज शौरिज गेहू । तज अरि भय वृज भाज गयेहू ॥२॥
मात पिता पद कर अभिवन्दन । कहत वचन इमि देवकी नन्दन ॥३॥
सेवा भइन मात पितु तोरी । क्षमा करहु विनती यह मोरी ॥४॥
यह सब बात याद जब आती । होवत दुख फाटत मम छाती ॥५॥
कृष्ण पदारविन्द रज कोई । विस्मृत हेतु समर्थ न होई ॥६॥
राजसूयमख बिच प्रभुताई । अपशब्द वदत गति चेदिप पाई ॥७॥
देखा नयन विदुर तुम सोही । तद् वियोग सहन किमि होही ॥८॥

दोहा- **अर्जुन अस्त्र पवित्र हो, वीर युद्ध विच आन ।**
कृष्ण मुखाकृति पान कर, पायउ पद निर्वान ॥१४॥

चौ– समता तासु करत नहि कोई । त्रिगुणाधीश कहावत सोई ॥१॥
देखहु उन प्रभु की सेवकाई । उग्रसेन नृप पद बैठाई ॥२॥
सन्मुख तासु रहे प्रभु ठाढ़े । देव करहु आज्ञा मुख काढ़े ॥३॥
अहो पूतना मारन आई । निज कुच जहर लगा वह लाई ॥४॥
दूध छाँड़ि प्रभु जहर पिलाई । धात्रि समान गति वह पाई ॥५॥
मैं परम भक्त जानउँ उन असुरन । युद्ध बीच करके हरि दर्शन ॥६॥
तजही देह कटावत सीसा । चक्र सुदर्शन ते अवनीसा ॥७॥
भूमी भार उतारन कारन । कारागार कंस गये जग तारन ॥८॥
लोकेश विनय पद धर कर ध्याना । आयहु परम ब्रह्म भगवाना ॥९॥

दोहा- **कंस भीत वसुदेव ने, भेजेउ नन्दागार ।**
सवल चन्द महि वर्ष लो, वृज विच जगदाधार ॥१५॥

चौ– यमुना उपवन वत्स चरावा । करत सगोप खेल मन भावा ॥१॥
रोवत हँसत मुखाकृति नाना । निज कुमार लीला इमि नाना ॥२॥
वृज जन काज दिखा भगवाना । करहि मुदित उन निज जन जाना ॥३॥
प्राप्त वयाधिक गोधन चारी । करहि मुदित सब वेणु उचारी ॥४॥
इन्द्रमान भंग कर डारा । निज कर गोवर्धन गिरिधारा ॥५॥
शरद काल विधु किरण प्रकाशित । निशा बीच स्त्री मंडल शोभित ॥६॥
बलराम सहित मथुरापुर आये । कंस मारि पितुमातु छुड़ाये ॥७॥
शान्दीपनि उन वेद पढ़ाये । मुतसुत ला गुरु हेतु दिवाये ॥८॥

दोहा- **सब नृप देखत रह गये, गंधर्व विधी के साथ ।**
भीष्मक कन्या से वह, व्याह कियउ यदुनाथ ॥१६॥

कौरव कियउ वहुत अपराधा । किन्तु दियउ नहिं हरि उन वाधा ॥४॥
कारन उन संग दुष्ट नृपाला । वध कर भूभय हरहिं कृपाला ॥५॥
मदमत्त होय तीन मद पाई । मुहू निज सेन भूमि कँपाई ॥६॥
जन्म अजन्मा उत्पथ नासी । अनुग्रह भक्त हेतु सुखरासी ॥७॥
अपर लोग गुण पार जो पाही । कर्म देह वन्धन नही चाही ॥८॥
शरणागत लोकप आज्ञाकारी । भक्त हेतु यदुकुल अवतारी ॥९॥

सोरठा– **जगपति ब्रह्मस्वरूप, अजय अजन्मा अजर की ।**
सुन्दर कथा अनूप, कहु उद्धव इस दास को ॥३॥

चौ– तुम जानत कृष्णाश्रय वाता । यही हेतु पूछहूँ मैं ताता ॥१॥
विदुरानन ते स्मृति हरि होवत । तनु रोमाञ्चित गल अवरोधित ॥२॥
उद्धव पंच वर्ष परमाना । खेलहि मूर्ति वना भगवाना ॥३॥
प्रात भोज हित मातु वुलाये । तदपि कलेउ काज नहीं आवे ॥४॥
विदुर सुवचन सुना जव काना । स्मर्ण भयउ हरिपद उन ध्याना ॥५॥
उमड़ी हृदय प्रेम की धारा । पाछे उद्धव वचन उचारा ॥६॥
कृष्ण सूर्य है विदुर नसावा । काल स्वरूप उरग ग्रह खावा ॥७॥
शोभाहीन भये हम सारे । कृष्ण विना सव भये दुखारे ॥८॥
तासु कुशल मैं कहा सुनाऊँ । प्रभु विन चैन जरा नहीं पाऊँ ॥९॥

दोहा- **मानव लोक अभागि यह यादव लोक निकाम ।**
रहे निरन्तर वीच उन जानि सकै नहिं श्याम ॥१२॥

चौ– अमृतमय विधु सिंधु सिधावा । किन्तु मीन पहिचान न पावा ॥१॥
मनोभाव विद कुशल सक्रीड़ा । यादव उन संग रहे अव्रीड़ा ॥२॥
जाना उन वे वन्धु समाना । परम ब्रह्म सम नहि पहिचाना ॥३॥
विक्षिप्त चित्त माया प्रभु मोही । निन्दा व्यर्थ करहीं प्रभुद्रोही ॥४॥
निन्दा सूचक वाक्य उचारे । प्रभु का कुछ वे नांहि विगारे ॥५॥
वे प्रभु निज प्रति विम्व दिखाई। अन्तर्ध्यान भये अव आई ॥६॥
लीला योग्य देखि प्रतिविम्वा । विस्मय जनक न जात विलम्वा ॥७॥
धर्म यज्ञ विच उन प्रभुताई । देखी सकल त्रिलोकी आई ॥८॥
जिन अनुराग न हास विनोदा । लीला देखन काज प्रमोदा ॥९॥

दोहा- **वृज तिय निज सव काज तजि, आकर प्रभु के पासु ।**
नैत्र पुत्तली सम खड़ी, रहहिन सुधवुध जासु ॥१३॥

चौ- सुर नर हेतु दैत्य दुख देही । भयउ अजन्मा जन्म स्नेही ॥१॥
अनन्त वीर्य अज शौरिज गेहू । तज अरि भय बृज भाज गयेहू ॥२॥
मात पिता पद कर अभिवन्दन । कहत वचन इमि देवकी नन्दन ॥३॥
सेवा भइन मात पितु तोरी । क्षमा करहु विनती यह मोरी ॥४॥
यह सब बात याद जब आती । होवत दुख फाटत मम छाती ॥५॥
कृष्ण पदारविन्द रज कोई । विस्मृत हेतु समर्थ न होई ॥६॥
राजसूयमख बिच प्रभुताई । अपशब्द वदत गति चेदिप पाई ॥७॥
देखा नयन विदुर तुम सोही । तद् वियोग सहन किमि होही ॥८॥

दोहा- **अर्जुन अस्त्र पवित्र हो, वीर युद्ध विच आन ।**
कृष्ण मुखाकृति पान कर, पायउ पद निर्वान ॥१४॥

चौ- समता तासु करत नहि कोई । त्रिगुणाधीश कहावत सोई ॥१॥
देखहु उन प्रभु की सेवकाई । उग्रसेन नृप पद बैठाई ॥२॥
सन्मुख तासु रहे प्रभु ठाढ़े । देव करहु आज्ञा मुख काढ़े ॥३॥
अहो पूतना मारन आई । निज कुच जहर लगा वह लाई ॥४॥
दूध छाँड़ि प्रभु जहर पिलाई । धात्रि समान गति वह पाई ॥५॥
मैं परम भक्त जानउँ उन असुरन । युद्ध बीच करके हरि दर्शन ॥६॥
तजही देह कटावत सीसा । चक्र सुदर्शन ते अवनीसा ॥७॥
भूमी भार उतारन कारन । कारागार कंस गये जग तारन ॥८॥
लोकेश विनय पद धर कर ध्याना । आयहु परम ब्रह्म भगवाना ॥९॥

दोहा- **कंस भीत वसुदेव ने, भेजेउ नन्दागार ।**
सबल चन्द महि वर्ष लो, बृज विच जगदाधार ॥१५॥

चौ- यमुना उपवन वत्स चरावा । करत सगोप खेल मन भावा ॥१॥
रोवत हँसत मुखाकृति नाना । निज कुमार लीला इमि नाना ॥२॥
बृज जन काज दिखा भगवाना । करहि मुदित उन निज जन जाना ॥३॥
प्राप्त वयाधिक गोधन चारी । करहि मुदित सब वेणु उचारी ॥४॥
इन्द्रमान भंग कर डारा । निज कर गोवर्धन गिरिधारा ॥५॥
शरद काल विधु किरण प्रकाशित । निशा वीच स्त्री मंडल शोभित ॥६॥
बलराम सहित मथुरापुर आये । कंस मारि पितुमातु छुड़ाये ॥७॥
शान्दीपनि उन वेद पढ़ाये । मुतसुत ला गुरु हेतु दिवाये ॥८॥

दोहा- **सब नृप देखत रह गये, गंधर्व विधी के साथ ।**
भीष्मक कन्या से वह, व्याह कियउ यदुनाथ ॥१६॥

चौ– नासा भेदय वृषभ स्वयंवर । नाग्नजीति संग ब्याहे यदुवर ॥१॥
सत्य भाम प्रिय काज सिधाये । सुरपति जीति कल्पतरु लाये ॥२॥
भूमि विनय भौमासुर मारा । नृप पद तासु पुत्र दे डारा ॥३॥
देकर राज अन्तपुर आई । नृप कन्या जो वन्दी बनाई ॥४॥
उन संग प्रभु निज ब्याह रचाया । मुहूर्त एक नही देर लगाया ॥५॥
आत्म तुल्य दस दस सुत जाये । इमि प्रभु निज माया फैलाये ॥६॥
मुचकुन्द व भीम निमित्त बनावा । काल शाल्व मागध हनवावा ॥७॥
शम्बर द्विविद बाण मुर दन्ता । किय शिशुपाल विदूरथ अन्ता ॥८॥
कौरव पांडव सैन सजाई । कुरुक्षेत्र युद्ध भूमी कँपाई ॥९॥

दोहा- **भग्न जंघ दुर्योधन, गिर धरणि पर आय ।**
भये मुदित मन में नहीं, देख तेहि यदुराय ॥१७ ॥ क
अष्टादश अक्षौहिणी, दल वल के निज साथ ।
समरभूमि मे मर गये, भीष्म भीम के हाथ ॥१७॥ ख

चौ– यधापि भार अवनि नहि शेषा । किन्तु अभी यदुकुल अवशेषा ॥१॥
पूर्ण भार अवनि नहि गयउ । जहँ तक यदुकुल शेषय रहउ ॥२॥
होय विवाद परस्पर इनका । तभी विनाश होय यदुवन का ॥३॥
अपर उपाय वृथा सब होई । जीत सकै इनको जग कोई ॥४॥
यह विचार कर निजमन यदुवर । दियउ राज्य पुनि जाय युधिष्ठिर ॥५॥
अस्त्र दग्ध पुरू वंश बचावा । अश्वमेध त्रय धर्म करावा ॥६॥
वह भगवान द्वारका वासी । हो अकाम सब काम प्रकासी ॥७॥
स्निग्ध हास अवलोकन ठानी । करहि मुदित अमृतमय वानी ॥८॥
इमि बहु सम्वत्सर जब गयउ । तब विराग कृष्ण मन भयउ ॥९॥

दोहा- **खेल खेल मे एक दिन, भोज व यदुकुल वाल ।**
कुछ मुनियों का कर गये, अवहेलन निज काल ॥१८ ॥

चौ– कुपित मुनी प्रभु इच्छा पाई । दियउ शाप कुल होय नसाई ॥१॥
कतिपय मास बाद यदुसारे । अंधक वृष्णि भोज मतवारे ॥२॥
निज निज रथ चढ़ि दैव विमोहित । गयउ प्रभास क्षेत्र अधशोषित ॥३॥
सुर ऋषि पितर स्नान कर तर्पन । दियउ दान अतुलित वह विप्रन ॥४॥
कंचन रजत भूमि गउ कम्बर । शय्या रथ घोटक गज अम्बर ॥५॥
कन्या दासि चतुर्विध अन्नं । देकर कियउ प्रणाम शिर चरनं ॥६॥

पुनि विप्रन की आज्ञा पाई । यदुवंशी सब भोजन खाई ॥७॥
मदिरा पीकर हो मतवारे । वदत दुरुक्ति परस्पर सारे ॥८॥
मदिरा पान नशा अति छावा । सायंकाल समय जब आवा ॥९॥

दोहा- **वेणू मर्दन ते यथा, जरत अरण्य विशाल ।**
लड़ कट कर वह परस्पर, नष्ट भये तत्काल ॥१९॥

चौ– निज माया गति देख विचित्रा । सुरसति तट जो परम पवित्रा ॥१॥
कियउ आचमन जा यदुराई । चल दल जड़ बैठे पुनि आई ॥२॥
यह जो चरित कियउ भगवाना । प्रथम कहेउ मोहिं कृपा निधाना ॥३॥
उद्धव तू बदरीवन जाहू । कुशल नही अब यदुकुल याहू ॥४॥
यद्यपि जानेउ उन अभिप्राया । प्रभु वियोग नहि में मन आया ॥५॥
नाथ चरण अब हेरत हेरत । मै आयहुँ यहँ विचरत विचरत ॥६॥
आकर दर्श कियो यदुभूपा । श्याम व शुद्ध सत्वमय रूपा ॥७॥
पीताम्बर तनु श्रुत भुजिधारी । अरुण नयन श्रुति कुंडलधारी ॥८॥
वाम पाद ऊपर पद दूसर । बैठेउ पीपल अध वह यदुवर ॥९॥

दोहा- **परम भक्त कौषारवि, व्यास सखा उस काल ।**
निज इच्छा ते आगये, जहँ बैठे गोपाल ॥२०॥

चौ– प्रेमासत तब होय मुकुन्दा । विगत कियउ मम श्रम यदुचन्दा ॥१॥
मैत्रय सन्मुख वचन सुनावा । जानत उद्धव तव मन भावा ॥२॥
इसी हेतु दुर्लभ अति साधन । श्रवण करहु चित्त में एहि धारन ॥३॥
अन्त जन्म उद्धव यह तेरा । एकान्त भक्ति किय दर्शन मेरा ॥४॥
रचना काल सृष्टि जब आवा । यही ज्ञान विधि हेत सुनावा ॥५॥
कहहि श्रेष्ठ कवि कोविद ज्ञानी । ज्ञान भागवत मम मुखवानी ॥६॥
सुनि आदर युत भगवत वचना । तनु रोमाञ्चित पुलकित नयना ॥७॥
अश्रु बहाय कराञ्जलि धारे । तब उद्धव यों वचन उचारे ॥८॥
तव पद कमल भजहिं प्रभु जोई । दुर्लभ जगत वस्तु नहिं कोई ॥९॥

दोहा- **निस्पृह होकर भी प्रभो, करते कर्म अनेक ।**
होय अजन्मा किन्तु तुम, धरते रूप अनेक ॥२१॥

चौ– काल रूप शत्रु डर भाजे । छिप कर द्वारावती विराजे ॥१॥
स्वात्मा राम त्रिया संग रमही । लखि यह चरित सुधिय भ्रम परहिं ॥२॥
अखंड अबाध सर्वथा ज्ञाना । तव स्वरूप जग विच भगवाना ॥३॥

तदपि मोरमत पूछत नाना । अशक मूढ़वत हो भगवाना ॥४॥
मैं मन करहि विमोहित लीला । करहु कृपा अब करूणाशीला ॥५॥
विधि हेतु जो तत्व प्रकासा । श्रवण हेतु लगि मे मन आसा ॥६॥
हृदय भाव इति लखि यदुराई । निज स्वरूप स्थिति तब बतलाई ॥७॥
ज्ञान भागवत प्रभु मुख वानी । श्रवण करत सुधरे अभिमानी ॥८॥
कर प्रणाम प्रभु अब यहँ आयो । होय वियोगातुर घबरायो ॥९॥

दोहा- **प्रथम दर्श कर उन प्रभु, भयो परम आनन्द ।**
व्याकुल चित्त अब होरहा, तज पद आनन्द कन्द ॥२२॥

चौ- अब मैं विदुर यहाँ से जाऊँ । अरण्य बद्रिका बीच सिधाऊँ ॥१॥
नर नारायण जहँ सुर त्राता । कल्पान्त तीव्र तापस दोउ भ्राता ॥२॥
इति उद्धव जब वचन सुनाया । नाश कुटुम्ब दुसह दुख दाया ॥३॥
विदुर शोक शमनेउ निज ज्ञाना । भगवत इच्छा प्रबल बखाना ॥४॥
जावत काल विदुर इमि राजन । बोले वच वह परम सुहावन ॥५॥
उद्धव परम भागवत वानी । श्रवण हेतु रूचि में ललचानी ॥६॥
परम भागवत उद्धव यह सुन । बोले " विदुर " ज्ञान यह अघहन ॥७॥
भगवत कियेउ मोहि आदेशा । मैत्रय मुख ते सब संदेशा ॥८॥
पूछहू जाकर तुम विदुराई । यहि आदेश दियउ यदुराई ॥९॥

दोहा- **स्थित होकर यमुना पुलिन, कहि हरि कथा अनेक ।**
वदरी वन उद्धव गये, निशा विताकर एक ॥२३॥

चौ- नष्ट भये यादव सह रामा । हरि निज तनु तजि गे निज धामा ॥१॥
किमि प्रकार उद्धव रहे शेसा । यह सब गाथा सुनहु नरेशा ॥२॥
ब्रह्म शाप नासे जब यादव । किय विचार इमि निज मन माधव ॥३॥
मेरे बाद मदाश्रय ज्ञाना । उद्धव करहिं लोक हित ज्ञाना ॥४॥
मैं अरू उद्धव एक समाना । यह विचार प्रभु निज मन ठाना ॥५॥
यही हेतु उद्धव अवसेसा । रहेउ काल कुछ प्रभु आदेशा ॥६॥
बाद बद्रिकाश्राम जा उद्धव । धर समाधि पूजन उन माधव ॥७॥
कृष्ण चरित अरु प्रभु तनु त्यागा । उद्धव मुख सुन विदुर अभागा ॥८॥
विह्वल प्रेम हो रोवन लागे । सुनहु चरित-नृप अब तुम आगे ॥९॥

दोहा- **हरि द्वार गंगा पुलिन, मैत्रय मुनि आसीन ।**
प्रेमातुर जाकर उन्हें, पूछेउ विदुर प्रवीन ॥२४॥

चौ– कर्म करही सुख हेतू लोका । ते सुख पात न पावत शोका ॥१॥
इस संसार बीच जो कोई । कर्तव्य कर्म कहो मुनि सोई ॥२॥
कृष्ण विमुख जन अनुग्रह कारन । करहिं आप सम जग विच विचरन ॥३॥
जासु कर्म स्थित हरि हिय होही । वही ज्ञान बतलावहु मोही ॥४॥
रची सृष्टी जिमि त्रिगुण निधाना । ले अवतार चरित किय नाना ॥५॥
हृदय बीच जा स्थापित करके । शयन करहिं योगाश्रय धरके ॥६॥
सुर मुनि विप्र धेनु हितकारी । अवतार भेद लीला विस्तारी ॥७॥
तत्व भेद कल्पित किय लोका । लोकपाल सह लोक अलोका ॥८॥
प्रजा स्वभाव कर्म अरू रूपा । नाम भेद रचना अनुरूपा ॥९॥

दोहा- **कृष्ण कथामृत श्रवण पुट, पीकर इस जग बीच ।**
तृप्त होय जो नर नहीं, ऐसो को वह नीच ॥२५॥

चौ– भव अरु गृह रति छेदन हारी । वरणन करउ कथा सुखकारी ॥१॥
व्यासानन व्रत चरित अनेका । सुनकर तृप्त भयउ सविवेका ॥२॥
नारदादि मुनि संत समाजा । करहिं कीर्तन हरि जगकाजा ॥३॥
आवत कर्णरंध्र हरि कीर्तन । छूटहिं गेह व नेह कुटुम्बिन ॥४॥
श्रवण करत हरिकथा पुनीता । होय विरत घर तजहि विनीता ॥५॥
हरिगुण कीर्तन हेतु व्यासा । रचेउ महाभारत यहि आसा ॥६॥
भगवत कथा विमुख जो कोई । निष्फल वय व अशोच्य न सोई ॥७॥
यहि हेतु जगहित मुनिनाथा । श्रवण करावहु मे हरिगाथा ॥८॥
जगदुत्पत्ति स्थिति संहारा । कृष्ण चरित वरणउ मुनि सारा ॥९॥

दोहा- **मैत्रेय पुनि कहने लगे, सुनहु विदुर धरि ध्यान ।**
लोक अनुग्रह काज तुम, पूछत प्रश्न महान ॥२६॥

चौ– कुरुवर प्रश्न कियउ यह सुन्दर । तव समान भक्त नही यदुवर ॥१॥
मांडव्य शाप वश हो यमराजा । दासी व्यास संग तुव जाता ॥२॥
तत्व ज्ञान बतलावन तोही । जावत काल कहेउ प्रभु मोही ॥३॥
अनुक्रम ते अब मैं हरि लीला । वरणन करहुँ सुनो कुरूसीला ॥४॥
सृष्टि पूर्व रहे नहि कोई । नाना रूप प्रतीति न होई ॥५॥
सम्पूर्ण जीव की अन्तरात्मा । रहत अकेल प्रभु परमात्मा ॥६॥
सृष्टि पूर्व जग भगवद्रूपा । दृश्य नही कोई साक्षी स्वरूपा ॥७॥
द्रष्टा हरि पर दृश्य न आना । तब असन्त सम निजमन माना ॥८॥

सरजन कियउ बाद प्रभु माया । जासु होत यह जीव निकाया ॥६॥

दोहा- **समय फेर ते त्रिगुण मथि माया होत विकार ।**
इन्द्रिय अतीत चिन्मय प्रभु नर निजांश आकार ॥२७॥

चौ– जब प्रभु पुरुष रूप निज तेजा । चिदाभास माया बिच भेजा ॥१॥
माया महत्तत्व प्रकटाया । विज्ञान व सूक्ष्मरूप दर्शाया ॥२॥
चिदाभास गुण काल अधीना । प्रभु दृष्टीभर तासू विलीना ॥३॥
महत्तत्व रूपान्तर पाया । तासू अहं तत्व प्रकटाया ॥४॥
सत राजस तम त्रिगुण विकारी । सात्विक ते मन देव पुकारी ॥५॥
ज्ञान व कर्म इन्द्रियाँ राजस । सूक्ष्मभूत भये सब गुण तामस ॥६॥
तामस शब्द युक्त नभ जाया । नभ से वात स्पर्श गुण पाया ॥७॥
भयो विकार वायु पुनि आई । रूप युक्त यह तेज सुहाई ॥८॥
तेज तत्व ते रसमय पानी । जल ते गंधवती भू आनी ॥६॥

दोहा- **नभ बिच एक व वात दो , अग्नि त्रय जल चार ।**
भूमि पंच गुण बसत है, ये सब क्रमानुसार ॥२८॥ क
भिन्न भिन्न रहकर जबै, सृष्टि का निर्मान ।
करन सके यह भूत तब, विनय करी भगवान ॥२८॥ख

चौ– चरण कमल वन्दन हम करहीं । शरणागत ताप निवारक भजहीं ॥१॥
तव पद भजन बिना त्रय तापा । होवत नष्ट नहीं जन पापा ॥२॥
हेरत ऋषि श्रुति तव पद सारे । हम सब आये शरण तुम्हारे ॥३॥
जिन पद कमल हृदय धरते ही । बोधवान बनते तव स्नेही ॥४॥
ते पद कमल सुअभय प्रदाता । रहत बीच तनु तदपि न पाता ॥५॥
इन्द्रिय सुख से जिन मन क्षोभित । होत न उन नर ते पद दर्शित ॥६॥
कथामृत पान करहीं तब जोही । अन्तःकरण स्वच्छ उन होही ॥७॥
ते नर ज्ञान पाय हरिलोका । जावहिं देह त्याग सब शोका ॥८॥
माया जीत योग बल पूजे । श्रम ते पात मोक्ष नर दूजे ॥६॥

दोहा- **तव सेवा ते हो प्रभो विन श्रम मम निर्वान ।**
पावहिं पापी पुरुष भी, तजकर पाप निशान ॥२६॥

चौ– आदि देव हे दीनदयालू । निर्माण काज हम रचे कृपालू ॥१॥
सृजन हेतु हम रहे अशक्ता । कारन गुण हम सभी विभक्ता ॥२॥
ऐसी कृपा करहु अज हम पर । सौंपहि आप हेतु जग रचकर ॥३॥

अब निज ज्ञान बतावहु ऐसो । रचना करहिं जगत हम जैसो ॥४॥
आदि देव प्रभु पुरुष पुरातन । निर्विकार सब तनु बिच आसन ॥५॥
जासु होय ब्रह्मांड रचाई । करहु अनुग्रह हम पर आई ॥६॥
कहे मुनीश जगत पति धाई । रूप विराट कथानक गाई ॥७॥
महदादिक गति देखि अमीलित । काल शक्ति से हो प्रभु आश्रित ॥८॥
अहंकार महत्तत्व व भूता । मात्रा पंच मनेन्द्रिय सूता ॥९॥

दोहा- **इन सब गुण समुदाय, में हो प्रवेश भगवान ।**
सुप्त जीव अदृष्ट को, जागृत किय पुनि आन ॥३०॥

चौ- कर उद्योग प्राप्ति फल हेतू । मिला दिये वे गण जगकेतू ॥१॥
सब गण आ जब मिले परस्पर । रचेउ निजांश विराट पुरुषवर ॥२॥
जब निजांश हरि उन गुण आया । पाये फल मिल सब समुदाया ॥३॥
रहे चराचर जासु समाया । फल यहि तत्व विराट कहाया ॥४॥
वह विराट नर अन्तरयामी । रहे अंड बिच बहुदिन यामी ॥५॥
सहष वर्ष तक जल विच वासी । सकल जीव सह परम प्रकाशी ॥६॥
रचना करहि जगत की जोई । तत्व गर्भ कहलावत सोई ॥७॥
ज्ञान क्रियात्म शक्ति के आश्रित । इक दश तीन विराट विभाजित ॥८॥
ज्ञान शक्ति द्वारा अनुरूपा । हृदयावच्छिन्न चैतन्य स्वरूपा ॥९॥

दोहा- **प्राण अपान समान वृक, व्यान व नाग उदान ।**
कूर्म व देव धनंजय क्रिया शक्ति पहिचान ॥३१॥

चौ- आत्मशक्ति भौक्तृत्व रूप से । अध्यात्म दैव अधिभूत भेद से ॥१॥
धारेउ तीन रूप इमि आई । प्रथम जीव रूप कहलाई ॥२॥
प्रथम जीव होने के कारण । भयउ समस्त जीव का यह मन ॥३॥
प्रथम प्रकट भयउ प्रभु अंशा । जीव रूप धारण जग वंशा ॥४॥
आद्यावतार यहि हेतु कहाया । चराचर सकल भूत समुदाया ॥५॥
यहि ते होत ये सकल प्रकाशित । पुरुष विराट जगत विस्तारित ॥६॥
अध्यात्म भूत अधि देव रूप से । प्राण और हृदय स्वरूप से ॥७॥
तीन और दस एक प्रकारा । इमि विराट जगत विस्तारा ॥८॥
चैतन्य रूप से पुनि प्रभु आकर । प्रकाशित कियउ विराट जगाकर ॥९॥

दोहा- **प्रकाशित होत विराट, के प्रकटे देव स्थान ।**
करहुं निरूपण मैं विदुर, सुनहु लगाकर ध्यान ॥३२॥

चौ– प्रथम विराट भयउ मुख देशा । वाणी सह विति कियउ प्रवेशा ॥१॥
जासु जीव यह शब्द उचारे । तालु जीभ सह वरुण अधारे ॥२॥
रसना विषय रसज्ञ कहाया । बाद विराट नासिका जाया ॥३॥
दैव अश्विनी इन्द्रिय घ्राना । विषय गंध जो करती ज्ञाना ॥४॥
विकसित नेत्र भयउ पुनि आकर । रूप विषय चक्षुन्द्रिय दिनकर ॥५॥
त्वगिन्द्रिय स्पर्श वायु त्वग आना । श्रोत्रेन्द्रिय शब्द दिशा सह काना ॥६॥
पुनि विराट तनु त्वचा सुहाई । औषध सुर रोमेन्द्रिय जाई ॥७॥
विषय कंडु इनका कहलाया । लिंग विराट देह पुनि पाया ॥८॥
रेतस सहित प्रजापति आये । जासु जीव सुख आनन्द पाये॥९॥

दोहा- **मल त्याग हेतु इन गुद भई, सह मित्र देव अपान ।**
क्रय विक्रय काज विराट तनु , हस्तभ ये दो आन ॥३३॥

चौ– जानहु कर विच सुरपति स्थाना । गतीन्द्रिय सहित विष्णु पद आना ॥१॥
हृदय विराट देह तदन्तर । मनेन्द्रिय सहित चन्द्र कियउ घर ॥२॥
संकल्प विकल्प का करहिं विचारा । अहंकार तदन्तर धारा ॥३॥
वत्ति अहं सुर इन्द्र कहाया । विषयाभिमान इनका बतलाया ॥४॥
विज्ञान हेतु मति यह प्रभु जाई । चित्तेन्द्रिय देव विधि कहलाई ॥५॥
सीस स्वर्ग पद भू नभ नाभी । वसहिं देव नर भूत गणाम्भी ॥६॥
स्वर्ग वसहि सुर सतगुणधारी । अति रजगुण नर भू अवतारी ॥७॥
तमगुण सहित भूतगण बासा । रहहिं सर्वदा बीच अकासा ॥८॥
आनन विराट ते ब्राह्मण जाये । जो सब वर्णन के गुरू गाये ॥९॥

दोहा- **वाहु ते क्षत्री भये, वने प्रजा परिपाल ।**
वैश्य जंघ ते प्रकट के, कियउ जीविका जाल ॥३४॥

चौ– सेवा धरम काज पद जाये । वे नर जग विच शूद्र कहाये ॥१॥
आत्म शुद्धि हेतु यह चारी । पूजहिं हरि निज वृत्ति अनुसारी ॥२॥
विदुर विराट रूप यह सारा । वरणन कियउ स्वमति अनुसारा ॥३॥
रूप विराट जगत बिच कोई । वरणन हेतु समर्थ न होई ॥४॥
गुरु मुख श्रवण कियउ मैं जेती । कही स्वमति हरि कीरति तेती ॥५॥
हरि महिमा जनु अपरम्पारा । कोटि वर्ष नर पाव न पारा ॥६॥
प्रभु गुण हीन यथा मति गावत । श्रवण कीरतन किय हरि पावत ॥७॥
मायाविद भे जग अज्ञानी । हरि माया नहिं वे पहिचानी ॥८॥

निज माया बल प्रभु नहि जाना । अपर लोग का कहा ठिकाना ॥६॥

दोहा- **वाणी मन ते सुमिर नर, सके नहीं पहिचान ।**
करहुँ वन्दना पद कमल, केवल उन भगवान ॥३५॥

चौ- कह शुक देव सुनहु नर राजा । ऋषि मुख ते सुनि जन्म विराजा ॥१॥
व्यास देव सुत विदुर सुहानी । हो प्रसन्न बोले इमि वानी ॥२॥
निर्विकार निर्गुण भगवाना । बोध व शुद्ध स्वरूप महाना ॥३॥
क्रिया और गुण मेल अपारा । उन सह लीला कवन प्रकारा ॥४॥
आप कहें यदि बाल समाना । केवल खेल रहहि उन नाना॥५॥
किन्तु बालमन रहे मनोरथ । अन्य संग रुचि खेल यथारथ ॥६॥
नित्य तृप्त प्रभु सदा असंगी । किस विध क्रीड़ा करहि प्रसंगी ॥७॥
सृजन पालना जग संहरही । गुणमयि मायावश प्रभु करहिं ॥८॥
प्रभू ज्ञान का होत न लोपा । निज अरू पर वय काल प्रकोपा ॥९॥

दोहा- **साक्षि रूप भगवान का, माया साथ विलाप ।**
हो सकता क्यों कर यह , कर्मज दुर्भग ताप ॥३६॥

चौ- भयउ खिन्न अति मे मन ब्रह्मन । यहि अज्ञान कष्ट हे विद्धन ॥१॥
मम मन महा भयउ संदेहा । करऊँ दूर कृपा कर नेहा ॥२॥
कह शुकदेव सुनहु नरराया । विदुर वचन प्रेरित मुनिराया ॥३॥
हरि पद वन्दन करि मुस्काकर । बोले वचन सुनहु तुम कुरुवर ॥४॥
माया और तर्क के द्वारा । को नर पायउ उन हरि पारा ॥५॥
स्वप्न बीच जिमि निज शिर कटहिं । मृषा होय पर सत्य प्रतीतही ॥६॥
जल प्रति बिम्बित चन्द्र समाना । कम्पन धर्म न नाभ बखाना ॥७॥
मिथ्या धर्म की होत प्रतीति । जीव देह विच नतु प्रभु रीति ॥८॥
निवृत्ति धर्म द्वारा यह माया । भक्तियोग ते होत पलाया ॥९॥

दोहा- **त्याग विषय सब इन्द्रियाँ, निश्चल होय जगेश ।**
नर सुसुप्त सम जीव के, नष्ट होत सब क्लेश ॥३७॥

चौ- हरि गुण गावत श्रवण कलेशा । होत सकल दुःख नष्ट नरेशा ॥१॥
हृदय बीच पद कमल परागू । सेवा प्रेम न पात अभागू ॥२॥
कहे विदुर सुन तपोनिधाना । युक्ति युक्त इन वचन कृपाना ॥३॥
काटेउ सब संशय मम भगवन । भई दूर शंका सब मे मन ॥४॥
निज वश ईश व परवश जीवा । जानेउ सकल भेद मुनि सींवा ॥५॥

जीव यथा यह कष्ट उठाही । मुनिवर बात य ठीक सुनाहि ॥६॥
केवल प्रभु बहिरङ्गा माया । यह आधार लखा मुनिराया ॥७॥
मिथ्या स्वप्न समा निर्मूला । माया छाँडि नहीं जगमूला ॥८॥
इस जग बीच सुखी नर दोही । हत बुद्धि प्रभु पद भज जेहि ॥९॥

दोहा- **मध्यम श्रेणी के नर , पावत दुःख अनेक ।**
कृपा तुम्हारी भयउ यह, निश्चय मुझको एक ॥३८॥

चौ– अनात्म पदारथ है न यथारथ । केवल होत प्रतीति पदारथ ॥१॥
गई प्रतीति दूर मुनि मोरी । सेवा चरण कमल कर तोरी ॥२॥
निर्विकार माधव भगवाना । उत्कट प्रेम व हर्ष प्रदाना ॥३॥
प्रभु पद जग दुख नाशक होई । अपर उपाय जगत नहीं कोई ॥४॥
जानेउ मैं बड़ भाग्य मुनीशा । पायऊँ दर्श जो तोर ऋषीशा ॥५॥
संत समागम हरि पद देही । स्वल्प पुण्य नर पाव न ऐही ॥६॥
रहहि सर्वदा हरि गुण चर्चा । करहि संतजन प्रभु पद अर्चा ॥७॥
स्वल्प पुण्य नर जिसका होई । सेवा अवसर मिलहि न तोही ॥८॥
पूरव कथा मुनी तुम गावा । महदादिक हरितत्व रचावा ॥९॥

दोहा- **रच विकार उन अंश ते सरजेउ पुरुष विराज ।**
भये प्रवेश उसमें हरि, कहो गाथ मुनिराज ॥३९॥

चौ– सहस पाद उरू हस्त अलेदा । आदि पुरूष जिन वदत यों वेदा ॥१॥
सविकाश लोकविच विश्व वताया । दश विध प्राण स इन्द्रिय गाया ॥२॥
इन्द्रियाभिमानी सुर सारे । इन्द्रिय मन तनु बल जिन धारे ॥३॥
विराट विभूति सकल मुनि जेती । व्याप्त पुत्र पौत्रादिक तेती ॥४॥
जिमि विरंचि यह सृष्टि रचाई । प्रजापति सर्ग विसर्ग बनाई ॥५॥
मनु अरू मन्वन्तर पति के ते । वंशानु वंश्य चरित भये जेते ॥६॥
कह हु त्रिलोक प्रमाण मुनीपा । तिर्यक मानव सुर सरिसर्पा ॥७॥
पक्षि जरायुज अंडज स्वदेज । उदभिज कवन प्रकार रचेउ अज ॥८॥
गुणावतार अलौकिक लीला । वरणन करहु सभी मुनिशीला ॥९॥

दोहा- **कहु विभाग वर्णाश्रम, रूप व शील स्वभाउ ।**
वेद विकर्षण ऋषिन का, जन्म कर्म सव गाउ ॥४०॥

चौ– विस्तार यज्ञ योगकर ज्ञाना । साँख्य मार्ग कहु कृपानिधाना ॥१॥
पाखंड प्रवृत्ति जीवगति गाउ । धर्मार्थकाम अरु मोक्ष उपाऊ ॥२॥

कृषि वाणिज्य दंड अरु नीति । श्राद्ध व पितर सर्ग ग्रह स्थिति ॥३॥
स्थिति नक्षत्र नाभ विच तारे । दान व तप फल कहु मुनि सारे ॥४॥
यज्ञादि पूर्त फल धर्म प्रवासी । आपद धर्म कहहु सुखराशी ॥५॥
जे जे धर्म करे प्रभु राजी । कहु वह कर्म अनघ सब आजी ॥६॥
शिष्य पुत्र हितु दीनदयाला । वदत् अपूछत गुरु सब हाला ॥७॥
कति प्रति संक्रम होत मुनीशा । सोवत योग नींद जगदीशा ॥८॥
कवन तत्व करहीं प्रभु सेवा । होवहिं कवन लीन उन देवा ॥९॥

दोहा- **जीव तत्व परमेश्वर, प्रभु स्वरूप मुनि गाउ ।**
ज्ञानोपनिषद प्रतिपादित, गुरु शिष्य हेतु बतलाउ ॥४१॥

चौ– राग व भक्ति स्वतः नहिं आवत । माया मोहित जन नहीं पावत ॥१॥
मैं अबूझ पूछहूँ मुनिराया । हरि चरितामृत कहु करि दाया ॥२॥
जीव अभयप्रद सम नही आना । वेद व यज्ञ व तप नही दाना ॥३॥
कह शुकदेव सुनहु नरनाहू । विदुर प्रश्न सुनि इमि मुनि नाहू ॥४॥
हो प्रसन्न मन अति मुस्काये । बोले वचन सप्रेम सुहाये ॥५॥
सत्सेवनीय पुरुवंश विदुर वर । भक्त प्रधान लोकपति होकर ॥६॥
क्षण क्षण श्री हरि कीरति माला । करत नवीन काटि भव जाला ॥७॥
अब मैं मानव दुख विनाशन । कहुँ भागवत कथा सुहावन ॥८॥
कही शेष सनकादिक हेतू । सुनहु कथा यह मम मुख से तू ॥९॥

दोहा– **एक समय पाताल तल, अबाध अकुंठित ज्ञान ।**
आदि देव संकर्षण, करत वेद जिन ज्ञान ॥४२॥

चौ– निज आश्रय नारायण देवा । करत स्नेह युत मानस सेवा ॥१॥
अन्तर मुख वृत्तिन निज आत्मा । लीन नयन पंकज परमात्मा ॥२॥
ज्ञानि जनोपरि अनुग्रह कारन । खोलेहुए सुशोभित नयनन ॥३॥
तेहि समय सनकादि मुनीसा । निज प्रभु तत्व ज्ञान अभिलासा ॥४॥
पूछेउ प्रश्न यही उन आई । सोभित सहस मुकुट सिर सॉई ॥५॥
दीप्यमान उत्तमोत्तम मणियाँ ।जड़ित सहस कण जगमग कणियाँ ॥६॥
तासु चरण.निच कमल विशाला । सेवित सहस नागपति बाला ॥७॥
जटा कलाप गंग जल गीला । स्पर्श किये शनकादिक शीला ॥८॥
हो कृतज्ञ प्रेमामय वानी । पूछेउ प्रश्न यही मुनि ज्ञानी ॥९॥

दोहा- **निवृत्ति परायण मुनिन हित, संकर्षण भगवान ।**
कही कथा यह भागवत, पावन सुखद महान ॥४३॥

चौ– परम सील व्रत मुनि सांख्यायन । सनत कुमार कथा कहि पावन ॥१॥
सांख्यायन जे रहे मुनिराई । पराशर मुनिहि पुलस्त्य सुनाई ॥२॥
पुलस्त्य वचन ते बाद परासर । आदि पुराण कहेउ मोहि मुनिवर ॥३॥
श्रृद्धालु और निज अनुगत जानी । वही पुराण अब कहूँ बखानी ॥४॥
सृष्टि पूर्व यह जग जल बूढ़ित । हरि अहि शय्या रहत अरूढ़ित ॥५॥
तासु समय नहि क्रिया विकासित । ज्ञान शक्ति उन रहन प्रकासित ॥६॥
धरहिं जीव तनु निज तनु कैसे । अवरुद्ध अग्नि काठ विच जैसे ॥७॥
सोवत योग नींद जल भीतर । सहस चतुर्युग यावत प्रभुवर ॥८॥
काल शक्ति से प्रेरित होहीं । लोक सकल वे निज तनु जोही ॥९॥

दोहा- **लोक सृजन के वास्ते, आवत रचना काल ।**
हरि नाभी ते उस समय, प्रकटत कमल विशाल ॥४४॥

चौ– भानु समाँ वह कमल प्रकाशित । पद्म तेज ते वह जल चमकित ॥१॥
कमल बीच प्रभु आ अविनासी । अन्तरयामि रूप किय वासी ॥२॥
ब्रह्मरूप प्रभु कमल सुहाये । वदत स्वयम्भुव जिन श्रुति गाये ॥३॥
कमल कर्णिका बैठि विधाता । देखत नयन नजर नही आता ॥४॥
तब निज नयन फारि चहुँ ओरा । परिक्रम ग्रीव लखा नभ कोरा ॥५॥
प्रति दिशि देखन ते मुख चारी । भयउ चतुर्मुख वे श्रुति धारी ॥६॥
प्रलय नीर निसृत पद्मासन । पद्म लोक अरु तत्व निजात्मन ॥७॥
कमल पृष्ठ स्थित सोचत धाता । को मम पंकज जन्म प्रदाता ॥८॥
मैं हूँ कवन कहाँ से आया । आधार कवन मूल यह पंकज छाया ॥९॥

दोहा- **यो विचार निज मन विधि, कमल नार दरम्यान ।**
कियउ प्रवेश जलान्तर, वर्ष सहस परमान ॥४५॥

चौ– तदपि न कंज जनम निज ज्ञाना । कियउ चिन्तवन काल महाना ॥१॥
पाछे पंकज ऊपर आये । धर समाधि बहु काल बिताये ॥२॥
तदपि न कारण उन निज जाना । अन्त हृदय पुनि पायउ ज्ञाना ॥३॥
गौर मृणाल समाँ बिच नीरा । शेषशायि यक पुरुष शरीरा ॥४॥
सहस फणोपरि छत्र समाना । शेष सीस पर मुकुट सुहाना ॥५॥
मणि जड़ीत जिन कान्ति विशाला । नष्ट करहिं तम करत उजाला ॥६॥
पुरूष श्रेष्ठ वे निज तनु आभा । करत प्रकाश चहुँ दिशि नाभा ॥७॥
मरकत श्याम पीत पटधारी । गल वनमाल मुकुट सिर भारी ॥८॥

भुजा प्रलम्ब पद वंश समाना । तनु विशाल त्रय लोक निधाना ॥९॥

दोहा- **शुद्ध वेद विधि सहित नर, करत अर्चना जासु ।**
सर्वकामप्रद पद कमल, पावत वे जन तासु ॥४६॥

छन्द— **भ्रकुटि वक्र विशाल श्रुति वर, चलत कुंडल मंडितम् ।**
विम्बफल सम अरुण रंजित, होठ जिन अति शोभितम्॥
नयन पंकज नासिका वर, स्फटिक दंत अखंडितम् ।
रूप सुन्दर अति मनोहर श्याम तनु कच कुंचितम् ॥१॥

चौ— कदम्ब कुसुम केसर सम पीता । सुवर्ण मेखला रहत सोभिता ॥१॥
मोल हार वक्षःस्थल सोहा । श्री वत्स अपूर्व चिन्ह मन मोहा ॥२॥
केयूर अमोल जड़ित मणि वज्रा । भुज विशाल मनु शाख सहस्रा ॥३॥
रहत सर्प चन्दन तरु जैसे । लिपटे स्कंध शेषफण जैसे ॥४॥
अनन्त नागपति बन्धु समाना । चहुँ जलयुत गिरिवर जिमि आना ॥५॥
रहत अनेक जीव गिरि जैसे । चराचर आश्रय वे प्रभु वैसे ॥६॥
मुकुट अनेक शेष फण कैसे । मंडित हेम शिखर गिरि जैसे ॥७॥
कौस्तुभमणि वक्षःस्थल कैसी । मानो प्रकट गर्भ मणि जैसी ॥८॥
प्रभुगल वेद रूप अलि गुंजित । कीर्तिमयी वनमाल सुशोभित ॥९॥

दोहा- **सूर्य चन्द्र वायु अनिल नाहीं, पहूँच उन पास ।**
चक्र सुदर्शन आदि भी, करे सदा जिन आस ॥४७॥क
जग इच्छुक कमलासन, देखेउ कमल अकास ।
अनिल अनल अरू निज तनु, पाँच पदारथ खास ॥४७॥ख
देखेउ पंच पदारथ, इन अतिरिक्त न कोय ।
तव विधि प्रभु पद चित्त धर, की हरि स्तुति कर जोय ॥४७॥ग

चौ— बीते काल अनेक अनन्ता । जान सका अब मैं भगवन्ता ॥१॥
जीव धारि यह प्रभु जग जेते । गति स्वरूप नहिं जानत वेते ॥२॥
होवत वस्तु प्रतीत य जेती । स्वरूपते सत्य नही जनु वेती ॥३॥
माया गुण क्षुभित हेतु भगवाना । होत प्रतीत रूप तव नाना ॥४॥
चित्त शक्ति जब रहहि प्रकाशित । अज्ञ रूप तम तव नहि भासित ॥५॥
प्रकटेउ नाभ कमल मैं आवा । शत अवतार मूल कहलावा ॥६॥
कृपा हेतु सज्जन जन कारण । प्रथम कियउ प्रभु यहि तुम धारण ॥७॥
रूप अनूप तेज प्रचंडा । निर विकल्प आनन्द अखंडा ॥८॥

जग अतीत होत जगकारी । मैं शरणागत रूप तुम्हारी ॥६॥

दोहा- **इन्द्रिय अरु सब भूत गण, का है यह अधिष्ठान ।**
प्रभो आप में रम रहा, इस जग का कल्याण ॥४८॥

चौ- मैं हुँ उपासक तव भगवाना । सेवक हेतु दरस दिय ध्याना ॥१॥
नरकगामि विषयासत जीवा । करत निरादर प्रेम अपीवा ॥२॥
मंगल भुवन अंमगल हारी । जयति जयति जय जग सुखकारी ॥३॥
वेद स्वरूप समीर सुआना । ते पद कमल गंध निज काना ॥४॥
करहिं पान भक्तजन जोई । ते पद कमल अलग नही होई ॥५॥
वे जन पराभक्ति ले डोरी । बाँधत पाद पद्म कर जोरी ॥६॥
जब लगि पुरूष अभयप्रद चरणा । आत न त्याग गेह उपकरणा ॥७॥
तब लगि बन्धु गेह धन माया । लोभ व शोक सतावत काया ॥८॥

दोहा- **आग्रह असत अहंकृत, कपट क्रूरता पासु ।**
मोह दीनता देत दुःख, ते पद भजत न जासु ॥४९॥

चौ- कथा श्रवण विमुख जो होही । करत कुकर्म नष्ट मति सोही ॥१॥
जो जन सर्व अमंगलहारी । सुनहि न कथा सदा भयहारी ॥२॥
वात पित्त कफ भूख पिपासित । ऊष्ण व शीत समीर सुताड़ित ॥३॥
क्रोध दुसह अति कामविलासी । पीड़ित लखि मन होत उदासी ॥४॥
जब लगि जन देहादिक भावा । अहंकारयुत देखत आवा ॥५॥
जनम मरण बन्धन नही त्यागे । जानहु उन नर परम अभागे ॥६॥
तव प्रसंग विमुख ऋषि होई । जगत बीच फँसहि प्रभु द्रोही ॥७॥
करत काज दिन बीच अनेका । सोवत निशा बीच सिर टेका ॥८॥
टूटत नींद मनोरथ कारण । परत चैन नहि उन नर क्षण क्षण ॥९॥

दोहा- **अर्थ सिद्धिके दैव वश, विफल होत उद्योग ।**
नाथ आपका मार्ग गुण, श्रवण ते पावत लोग ॥ ५०॥

चौ- नाथ भक्त हिय कंज निवासी । भक्ति योग निसि दिवस विलासी ॥ १ ॥
पुण्य श्लोक प्रभु भक्त तुम्हारे । करत भजन जिस भाव तुम्हारे ॥ २ ॥
उन जन पर प्रभु अनुग्रह कारन । वही स्वरूप करत तुम धारन ॥ ३ ॥
सकल भूत ऊपर करि दाया । होत प्रसन्न यथा सुरराया ॥ ४ ॥
कामिक देववृन्द कर पूजित । होन मुदित उपहार अधारित ॥ ५ ॥
दान व यज्ञ तपादिक द्वारा । पात मनोरथ कामिक सारा ॥ ६ ॥

होत अकामि भजत तव जोई । पात अभय पद कष्ट न होई ॥ ७ ॥
अन्त काल हरि नाम उचारत । जनम अनेक पाप सब भाजत ॥ ८ ॥
वन्दों भुवन वृक्ष सुरत्राता । जासु स्कंध अज शंभु विधाता ॥ ९ ॥

दोहा- **प्रजापति मनवादि उप, शाख व शाख व जासु ।**
विश्व वृक्ष के बीच में, करते सदा निवासु ॥ ५१ ॥

चौ- लोक हेतु आराधन कारन । गायउ धर्म आप जग तारन ॥ १ ॥
किन्तु जीव इस ओर उदासी । करत निषिद्ध कर्म दुःखरासी ॥ २ ॥
पूजनरूप कर्मदत चित्ता । छेदत जीवन आस सुभीता ॥ ३ ॥
नेत्र परार्धकाल पर्यन्ता । समारूढ़ मैं रहुँ भगवन्ता ॥ ४ ॥
तदपि भीत होकर तव चरणन । प्राप्त हेतु तपता तप तारन ॥ ५ ॥
रीति नीति निज पालन कारी । देव मनुज खग तनु अवतारी ॥ ६ ॥
अनभि भूत नींदयुत होही । उदर बीच जग रख जल सोही ॥ ७ ॥
जो जन होत विमुख तव चरणन । निद्रा सुख उन हेतु प्रदर्शन ॥ ८ ॥
जासू नाभि कमल मैं जाया । वन्दों लोक जठरीकृत माया ॥ ९ ॥

दोहा- **सकल भुवन के हे सखा, देहू मोही वरदान ।**
रचूँ सृष्टि मैं पूर्ववत, करहु कृपा भगवान ॥ ५२ ॥

चौ- रहे सदा पद पंकज चित्ता । होत घमंड न सृष्टि निमित्ता ॥ १ ॥
नाभ कमल ते भयऊँ प्रकाशित । शक्ति विचित्र रूप विस्तारित ॥ २ ॥
वाणि न लोप होत मम पायी । खोलहु नयन कमल जलशायी ॥ ३ ॥
जगदुपत्ति हेतु दयालू । करहु अनुग्रह उठहु कृपालू ॥ ४ ॥
मधुर वचन ते सब मम खेदा । छेदहु दूर करहु सब भेदा ॥ ५ ॥
करि हरि कीर्तन इमि चतुरानन । भयहु शान्त जल भरि निज नयनन ॥ ६ ॥
कह मैत्रेय विदुर सुन आगे । विधि अभिप्राय जानि प्रभु जागे ॥ ७ ॥
विषण्ण वदन इमि देखि विधाता । बोले वचन तदा जगपाता ॥ ८ ॥
हो निशंक जग चहु विधाता । करहु अबार न आलसु ताता ॥ ९ ॥

दोहा- **जेहि काज हित प्रार्थना, की विधि तुम इस काल ।**
वह सब मैं बतला चुका, प्रथम तुम्हें सब हाल ॥ ५३॥

चौ- करहु तात तुम चित्त लगाई । पूजन सह भजु तजु विकलाई ॥ १ ॥
तपोपासना कियतजि शोका । दीखहिं हृदय बीच तव लोका ॥ २ ॥
भक्ति लीन हो निज तनु धाता । लोक सकल मुझ सह निज गाता । ३ ॥

दारु अग्नि इव जीव समाया। देखत मोंहि नसही दुख काया ॥ ४ ॥
इन्द्रिय भूत गुणाशय हीना। देखिहिं जीव सो मुक्ति विलीना ॥ ५ ॥
नाना कर्म शुद्धि अनुसारी। रचना जीव अनेक विचारी ॥ ६ ॥
तदपि देह तव श्रम नहि व्यापे। मयि निषद्ध मन रज गुण काँपे ॥ ७ ॥
जानत देही कदापि न मोकूँ। दियउ दर्श किन्तु मैं तोकूँ ॥ ८ ॥
कमल मूल बिच जाय विधाता। कियउ खोज मम आश्रय ताता ॥ ९ ॥

दोहा- **तपोपासना देख तव, मुदित भयो मम गात।**
यही हेतु दर्शन दियो, हिय विच आकर धात ॥ ५४ ॥

चौ- अभ्युदय अंकित कथा विधाता। कियउ स्तोत्र पढ़ मम तप ताता ॥ १ ॥
हृदय बीच दर्शन मम आवा। सब मम अनुग्रह यह फल पावा ॥ २ ॥
रहूँ मुदित तव ऊपर धाता। हो तव भद्र रचउ जग ताता ॥ ३ ॥
जो यह स्तोत्र पढ़हिं नर नारी। मुदित होऊ उन पर मैं भारी ॥ ४ ॥
यज्ञ व दान व तप अरु योगा। पावहिं फल मम प्रीति व भोगा ॥ ५ ॥
हूँ सब प्रिय तम सब घटवासी। करहु प्रेम अति मयि अविनासी ॥ ६ ॥
मयि लीन प्रजा यह सुनहु विधाता। रचो पूर्ववत यह जग ताता ॥ ७ ॥
प्रकृति पुरुष पति पंकज नाभा। कर अभिव्यक्ति जगत निज आभा ॥ ८ ॥
तिरोभूत भये प्रभुविधि आगे। नयन प्रेम जल तव विधि त्यागे ॥ ९ ॥

दोहा- **कहे विदुर भगवान जब, होगये अन्तरध्यान।**
तब विरंचि ने किस तरह, करी सृष्टि निर्मान ॥ ५५ ॥

चौ- इतर बात पूछी मुनिराया। वर्णन करहु क्रमश करि दाया ॥ १ ॥
संशय दूर होत मम सारे। तव मुख ते जो वचन उचारे ॥ २ ॥
प्रेरित तबै विदुर मुनिराई। कहे सूत सुन शौनकभाई ॥ ३ ॥
प्रश्न अनेक विदुर के आगे। ऋषि मैत्रेय उचारन लागे ॥ ४ ॥
भगवत वचन सुना जब काना। कियउ वरस सत तप विधि नाना ॥ ५ ॥
वायु प्रकंपित पंकज नीरा। लखा धात तब हृदय अधीरा ॥ ६ ॥
तपोवासना युत तब वाता। कियउ पान जल सहित विधाता ॥ ७ ॥
पद्म विशाल विलोकि विधाता। किय विचार इमि निज मन ताता ॥ ८ ॥
पूर्व विलीन त्रिलोक विलोकी। पद्म कोश रचूँ त्रयलोकी ॥ ९ ॥

दोहा- **पद्म कोश में कर गये, विधि प्रवेश तत्काल।**
लोक चतुर्दश कल्पना, कीन्ही पंकज नाल ॥ ५६ ॥

चौ- कर्म सकाम जगत जो करते । भू अरु भुव स्वलोकि विचरते ॥ १ ॥
रहहि कल्प पर्यन्त विलासी । भू अरु भुव स्वर्लोक निवासी ॥ २ ॥
करत अकाम कर्म नर ताता । महदादिक वह लोक सिधाता ॥ ३ ॥
मह जन तप सत लोक निवासी । रहत पराद्ध दोय सुखवासी ॥ ४ ॥
कहे विदुर बहुरुप कृपा ला । कालशक्ति का कहु सब हाला ॥ ५ ॥
सत्व आदि गुण का परिणामा । रहत व्यक्त महदादिक कामा ॥ ६ ॥
परत जान परिछिन्न समाना । आदि अंत जिन कोई न आना ॥ ७ ॥
वहि अव्यक्त काल कहलावा । ईश्वर जासु निमित्त बनावा ॥ ८ ॥
निज लीला ते जगत रचावा । पूरब जो हरि बीच समावा ॥ ९ ॥

दोहा- **अव्यक्त मूर्ति उस काल के, द्वारा वे भगवान ।**
प्रथक रूप प्रकटायउ, सुनहु विदुर धरि ध्यान ॥ ५७ ॥

चौ- आदि मध्य अरु अन्त समाना । रहत विश्व नहि अन्तर आना ॥ १ ॥
प्राकृतादि सर्ग सुन भाई । नव विध सर्ग शास्त्रविद गाई ॥ २ ॥
प्राकृत षट्त्रय वैकृत जानो । प्राकृत वैकृत दशम बखानो ॥ ३ ॥
आदि सर्ग जो महत कहाई । गुणत्रय तारतम्य हित जाई ॥ ४ ॥
दूसर अहंकार की सृष्टी । द्रव्य व ज्ञान क्रियोदय दृष्टी ॥ ५ ॥
भूत सर्ग तृतीय कहाई । रचहिं जो पंचतत्व समुदाई ॥ ६ ॥
ऐन्द्रिय सर्ग चतूरथ जाई । ज्ञान क्रियात्मक हेतु रचाई ॥ ७ ॥
पंचम सृष्टि सुनहु तुम भ्राता । सात्विक सुर इन्द्रिय अधिष्ठाता ॥ ८ ॥
षष्ठम सृष्टि अविद्या आनी । प्राकृत षट्यह सर्ग बखानी ॥ ९ ॥

दोहा- **लता वनस्पति औषधी, वीरुध द्रुम त्वक्सार ।**
षडविध सृष्टि य वृक्ष की, जड़ से करत अहार ॥ ५८ ॥

चौ- अष्टम खग मृग सर्ग कहाई । वसु विंशति जिन भेद बताई ॥ १ ॥
गौ अज महिष कुरंग वराहू । गवय मेष उष्ट्र रुरु याहू ॥ २ ॥
नव द्विशफ यह जीव कहाया । खर अश्व अश्वतर शरभ बताया ॥ ३ ॥
चमरी व गौर एक शफ जाना । नखी पंच अब करहु बखाना ॥ ४ ॥
श्वान श्रृगाल वृक व्याघ्र विलाई । शश शल्लक कपि गज मृगराई ॥ ५ ॥
कूर्म गीध मकरादिक जेते । थलचर जलचर जानउ ऐते ॥ ६ ॥
कंक गीध वट श्येन भलूका । सारस हंस व मोर उलूका ॥ ७ ॥
चक्रवाक अरु काक व भासा । जानउ भेद ये नभचर खासा ॥ ८ ॥

ज्ञान शक्ति नहि राखत स्थावर । करत स्पर्श वे अनुभव अन्दर ॥ ९ ॥

दोहा- **तिर्यग्योनि तामसी, रहत काल अज्ञान ।**
खानपान मैथुन शयन, करते सकल समान ॥ ५९ ॥

चौ- घ्राण मात्र पदारथ ज्ञानी । शक्ति विचारक ते अनजानी ॥ १ ॥
मानव सर्ग नवम यह गाई । स्त्री पुरुषात्मक एक कहाई ॥ २ ॥
बीच विषय सुख मानत ये नर । कर्म विलीन रज रहत अधिकतर ॥ ३ ॥
उभयात्मक सर्ग कुमार सुहाई । दैव विसर्ग विकृत कहलाई ॥ ४ ॥
देव पितर अरु असुर गंधर्वा । अप्सर यक्ष व राक्षस सर्वा ॥ ५ ॥
भूत व प्रेत पिशाच व किन्नर । सिद्ध व चारण अरु विद्याधर ॥ ६ ॥
ये दश सर्ग विरंचि जो जाई । कुरुवर सकल यह तुम्हें सुनाई ॥ ७ ॥
आगे सुनहु वंश मनवन्तर । कल्पकाल युग मान कुरूवर ॥ ८ ॥
कार्म अंश का अन्तिम भागा । जासु अंश नही होत विभागा ॥ ९ ॥

दोहा- **कार्म और समुदाय विच, होत न जासु सँयोग ।**
परमाणू उसको विदुर वदत वेद विद्लोग ॥ ६० ॥

चौ- परमाणु अनेक परस्पर मिलही । भ्रमवश उन नर एक प्रतीतही ॥ १ ॥
सुक्ष्माति सूक्ष्म अंश परिमानू । जो कार्य ऐक्यते परम महानू ॥ २ ॥
परमाणु देश नभ बीच सुभानु । लाँघत जानहु काल प्रमानु ॥ ३ ॥
परमाणु दोय अणु एक समाना । अणुत्रय ते त्रसरेणु वरवाना ॥ ४ ॥
त्रसरेणु तीन त्रुटि काल कहावा । त्रुटि शत वेध वेधत्रय लावा ॥ ५ ॥
लव त्रय निमिष काल हो एकी । निमिष तीन क्षण कहत विवेकी ॥ ६ ॥
शर क्षण काष्ठ काल परिनामा । काष्ट पंचदश लघु इक माना ॥ ७ ॥
लघू पंचदश ते घटि होही । मुहूर्त एक द्विघटि युत सोही ॥ ८ ॥
षट अरु सप्त घटी परिमाना । मानव पहर एक बुध जाना ॥ ९ ॥

दोहा- **ताम्र पात्र षट् पलमित, तासु मूल प्रदेश ।**
विंशति गुञ्जा स्वर्णकृत, चतुरंगुल शूल प्रवेश ॥ ६१॥

चौ- आवत सेर एक जल छेदा । डूबहिं जल विच हो घटि भेदा ॥ १ ॥
अष्टयाम मानव दिन राती । पक्ष पंचदश दिन निशि पाती ॥ २ ॥
सित अरु असित पक्ष यक मासा । जानहु पितर दिवस निशि खासा ॥ ३ ॥
मास दोय यक ऋतु कहलाई । ऋतु त्रय मेल अयन बन जाई ॥ ४ ॥
उत्तर अयन देव दिन होही । दक्षिण अयन निशासुर सोही ॥ ५ ॥

उभय अयन नर वर्ष कहावा । शत सम्वत नर आयुष गावा ॥ ६ ॥
परमाणु आदि सम्वत अवसाना । चालत भुवन कोश चहुँ भाना ॥ ७ ॥
सम्वत्सर परिवत्सर आदिक । अनुवत्सर वत्सर और इडादिक ॥ ८ ॥
सवन भानु गुरु चन्द्र सितारा । मास भेद यह पंच प्रकारा ॥ ९ ॥

दोहा- **मानव मोह निवृत्ति हित, धावत नाम सुभानु ।**
करहु अर्चना उन विदुर, काल रूप भगवानु ॥ ६२ ॥

चौ- मुनि मुख ते सुनि विदुर कृपालू । आयुष पितर देव नरहालू ॥ १ ॥
बोले विदुर जो वहित्रय लोकी । शनकादि ज्ञानिजन वसत विवेकी ॥ २ ॥
लखत जो योगमार्ग संसारा । गति उन कथन करहु तुम सारा ॥ ३ ॥
कह भार्गव निज मति अनुसारी । कृत त्रैता द्वापर कलि चारी ॥ ४ ॥
द्वादश दिव्य वर्ष अनुसारी । किये निरुपित यह युग चारी ॥ ५ ॥
चार तीन दो एक कृतादिक । क्रम ते सहम द्विगुण शत मानित ॥ ६ ॥
शत संख्य युक्त संध्या संध्यांशा । दोउ बीच युग काल निवासा ॥ ७ ॥
कृतयुग धर्म चतुष्पद् धारी । त्रेता तीन पाद गुणकारी ॥ ८ ॥
द्वापर पाप व पुण्य समाना । कलि केवल यक पाद प्रमाना ॥ ९ ॥

दोहा- **सहस चतुर्युग मानवी, दिवस एक कहलात ।**
निशा काल उतना विदुर, सोवत जासु विधात ॥ ६३ ॥

चौ- निशाकाल हो जब अवसाना । स्वत लोक विधि इमि प्रमाना ॥ १ ॥
दिवस एक विधि मनु दश चारी । भोगत काल वे निज निजबारी ॥ २ ॥
सत्तर एक चतुर्युग यावत् । भोगत मनु इक काल व तावत् ॥ ३ ॥
मनु मनुसुवन बीच मन्वन्तर । अवतार व इन्द्र व देव ऋषीश्वर ॥ ४ ॥
होत विदुर यह सब सम काला । गावा मैं दैनन्दिनि हाला ॥ ५ ॥
तिर्यङ् देव पितर नर सारे । कर्म प्रभाव जनम जग धारे ॥ ६ ॥
प्रति मनवन्तर धर अवतारा । करत दूर हरि भूमी भारा ॥ ७ ॥
जब विधि निज लीला संहारी । सोवत रचना तजिनिशि सारी ॥ ८ ॥
सूर्य चन्द्र रहित त्रय लोकी । होत प्रलय नहि रहत न एकी ॥ ९ ॥

दोहा- **संकर्षण मुख अग्नि ते भस्म भु आदि विलोक ।**
भृगु आदिक तब मह तजि, जावत सब जन लोक ॥६४॥

चौ- कल्प अंत जब सागर खारा । करत निमग्न सकल संसारा ॥ १ ॥
स्तूय मान जन लोक निवासिन । सोवत हरि जल विच शेषासन ॥ २ ॥

इत्थं दिवस निशा विधि जाता । जानहु परम आयु इमि धाता ।। ३ ।।
आयुष पूर्व परार्ध द्विधाता । पूरव विगत परार्ध य ताता ।। ४ ।।
ब्राह्म नाम कलप उन ताता । पूर्व परार्ध आदि लगि आता ।। ५ ।।
पूर्व परार्ध अन्त जब आवत । पद्म कल्प इन नाम कहावत ।। ६ ।।
अब वाराह कल्प यह आया । द्वितीय परार्ध आदि यह गाया ।। ७ ।।
रूप वराह धार हरि आवत । वाराह कल्प यहि हेतु कहावत ।। ८ ।।
यह द्विपरार्ध काल विधि अन्ता । होत निमेष समान अनन्ता ।। ९ ।।

सोरठा— सकल काल परमान, परमाणु आदि विधि अन्त लों।
भये सभी अज्ञान, वर्णन हेतु समर्थ जग ।। ४ ।।

चौ- पंचाशत जोजन कोटि प्रमाना । वहि ब्रह्मांड विशाल बखाना ।। १ ।।
आवरण आठ प्राकृत चहुँ ओरा । पुनि दश ऊपर रहत कठोरा ।। २ ।।
प्रभु अन्तरगत यह संसारा । परमानु समान रहत यह सारा ।। ३ ।।
रोम रोम ब्रह्मांड अनेकी । उन प्रभु पार न पात विवेकी ।। ४ ।।
सकल संतजन का यह धामा । हो न कदापि नष्ट अभिरामा ।। ५ ।।
इति ते काल रूप भगवाना । महिमा कियउ विदुर मैं गाना ।। ६ ।।
रचना प्रथम जो धात रचाई । मोसे सुनहु सकल चित लाई ।। ७ ।।
तामिस्र अंधतामिस्र व मोहा । महामोह तम पंच असोहा ।। ८ ।।
अज्ञान वृत्ति लखि इन वह धाता । मुदित न भयउ सुनहू कुरुभ्राता ।। ९ ।।

दोहा- शनक सनातन के सह, सनन्दन सनत्कुमार ।
निजमन ते रचकर विधि, बोले गिरा उचार ।। ६५ ।।

चौ- सुनहु सुवन सब मिल मम बाता । रचना करहु प्रजा सब भ्राता ।। १ ।।
किन्तु कथन विधि उन नहिं माना । रहे ध्यान तत्पर भगवाना ।। २ ।।
मोक्ष धर्म प्रभु भक्ति परायन । भये क्रुद्ध उन प्रति कमलासन ।। ३ ।।
क्रोध शान्त का कियउ उपाया । तदपि न रोक सके जगराया ।। ४ ।।
तेहि काल एक मन्यु कुमारा । विधि भ्रुव प्रकटेउ रुदित करारा ।। ५ ।।
रोदित बालक गिरा उचारी । मम नाम धाम विधि कुरु निरधारी ।। ६ ।।
बाल वचन सुनि कहत विधाता । त्यागहु रुदन करहु प्रज ताता ।। ७ ।।
दश अरु एक धाम तव नामा । करहु रुद्र मम पूरण कामा ।। ८ ।।

दोहा- हृदय व इन्द्रिय प्राण जल, वायु व अगन अकास ।
सूर्य चन्द्र तप मेदिनी, ये तव धाम निवास ।। ६६ ।। क

मन्यु मनु महिनस महा, शिव धृतवृत भव वाम ।
महाकाल ऋतुध्वज अरु, उग्ररेत तव नाम ॥ ६६॥ ख
धी वृत्ति उशना उमा, नियुत इरावति वाम ।
सर्पि सुधा अरु अम्बिका, दीक्षा इला तमाम ॥ ६६ ॥ ग

चौ- इन सब पत्नी संग लिवाई । करहु रुद्र तुम प्रजा रचाई ॥ १ ॥
सुन आदेश रुद्र भयकारी । निज स्वभाव सम प्रजा प्रचारी ॥ २ ॥
ग्रसित जगत चहुँ ओर सधाता । रुद्र सृष्टि लखि अति संख्याता ॥ ३ ॥
होय अमंगल जग विच जैसी । रचहुन सृष्टि रुद्र तुम वैसी ॥ ४ ॥
हो तव भद्र करहु तप ताता । जो है सकल जगत सुख दाता ॥ ५ ॥
सर्वभूत हिय गुफा निवासी । प्राप्त होत तपते सुख राशी ॥ ६ ॥
यह सुन वचन रुद्र तप हेतू । इलावृत विपिन गये वृषकेतू ॥ ७ ॥
पुनि ब्रह्मा दश सुवन सुहाये । मरीचि व अत्रि अंगिरा जाये ॥ ८ ॥
पुलह पुलस्त्य क्रतु भृगू वसिष्ठा । दक्ष व नारद पुत्र वरिष्ठा ॥ ९ ॥

दोहा- **कर ते क्रतु त्वच ते भृग, नारद उत संगात् ।**
नाभ पुलह मुख अंगिरा, अत्रि नैन दोउ जात ॥ ६७ ॥

चौ- विधि अंगुष्ठ दक्ष सुत जाये । प्राण वसिष्ठ सुवन विधि गाये ॥ १ ॥
सुत मरीचि मुनि मानस गाया । रिषि पुलस्त्य श्रुति युगवत लाया ॥ २ ॥
स्तन ते धर्म व पीठ अधर्मा । अधर्म ते मौत सुवन भय कर्मा ॥ ३ ॥
हृदय काम भ्रुव क्रोध अपारी । लोभ अधर मुख गिरा प्रचारी ॥ ४ ॥
मेद सिन्धु गुद निर्ऋति जाया । कर्दम सुवन भयउ विधि छाया ॥ ५ ॥
मन अरु देह ते जगत रचाई । कियउ विदुर विधि इमि चतुराई ॥ ६ ॥
सुता सरस्वती वेद विदांवर । अति सुकुमारि व लोक मनोहर ॥ ७ ॥
एक बार विधि लखि सुकुमारी । भये कामवश पाप प्रचारी ॥ ८ ॥
यह अधर्म मति लखि सुत सारे । निज पितु निमित ये वचन उचारे ॥ ९ ॥

दोहा- **सुता संग तुम हे प्रभो, करहु न दुस्तर पाप ।**
पूर्वापर में ना कियो कियो, काम जो आप ॥ ६८ ॥

चौ- करत न तेजवन्त यह कामा । होत अकीरति उन नर नामा ॥ १ ॥
करत संग जन जो आचरणा । मंगल होत करत अनुसरणा ॥ २ ॥
निज स्वरूप स्थित जग प्रकटाई । वन्दहुँ धर्म प्रपालक साँई ॥ ३ ॥
सकल सुवन सुनि वचन विधाता । त्यागा निज तनु व्रीडित धाता ॥ ४ ॥

त्यागेउ तनु विधि भयउ निहारा । कियउ ग्रहण वह दश दिशिसारा ॥ ५ ॥
दीखत अघावधि वह ताता । कृष्ण वर्ण कुहरा कहलाता ॥ ६ ॥
दिवस एक विधि करत विचारा । रचूँ लोक यह कवन प्रकारा ॥ ७ ॥
भयउ लोकपति मुख श्रुतिवेदा । चातुर्होत्र यज्ञ उपवेदा ॥ ८ ॥
धर्मपाद श्रुति आश्रम चारी । तद् वृत्ति विधि रची विचारी ॥ ९ ॥

दोहा- **पूर्वादिक मुख ते रचे,वेद और उपवेद ।**
सब पुराण इतिहास जिन, कहते पंचम वेद ॥ ६९ ॥ क
पूरब ऋग दक्षिण यजु, पश्चिम साम अथर्व ।
उत्तर मुख रचकर मुदित, कियउ धात नहि गर्व ॥६९॥ख

चौ- सकल वदन इतिहास पुराना । आयुर्वेद वेद धनुवाना ॥ १ ॥
संगीत व शिल्प वेद उन गावा । उवथ षोडसी चयन रचावा ॥ २ ॥
आप्त व अगनिष्टोम अतिराता । गोसव वाजपेय जगजाता ॥ ३ ॥
विद्या दान सत्य तप चारी । धर्मपाद आश्रम निर्धारी ॥ ४ ॥
बृहत् ब्राह्म सावित्र प्रजापत । आश्रम प्रथम वृत्ति निर्धारित ॥ ५ ॥
संचित शालीन शिलोञ्छ व वाता । गृहस्थ वृत्ति निर्धारित धाता ॥ ६ ॥
औदुम्बर वृत्तिय धात तृतीयस । फेनप बालखिल्य वैखानस ॥ ७ ॥
निष्क्रिय हंस बहूदक ताता । कुटीचक आश्रम श्रुति कुरुभ्राता ॥ ८ ॥
पूर्वादिक आनन यह जाई । दंड व आत्मकर्म कृषि गाई ॥ ९ ॥

दोहा- **प्रणव भये हृदयाम्बर, मुख ते व्याहृति चार ।**
त्वचते गायत्री भई उष्णिक विधि शिर वार ॥ ७० ॥

चौ- स्नायु अनुष्टुप् अस्थिय जगती । मज्जा पंकति प्राण व वृहत्ती ॥ १ ॥
त्रिष्टुप मा स छन्द विधि जाये । जीव स्पर्श तनु स्वर कहलाये ॥ २ ॥
इन्द्रिय ऊष्म व बल अन्तस्था । मिलकर वर्ण रचत सब ग्रंथा ॥ ३ ॥
निषाद ऋषभ गांधार व मध्यम । षड्ज व धैवत जानहु पंचम ॥ ४ ॥
शब्द व ब्रह्म स्वरूप विधाता। वैखरी प्रणव ते व्यक्त अव्यक्ता ॥ ५ ॥
लोक पितामह परे अनादि । भासत सकल देव तनु आदि ॥ ६ ॥
वेदादिक सप्त स्वरान्त रचाई । ये सब विधि मानस ते जाई ॥ ७ ॥
बाद अपर तनु धृत्वा धाता । सृष्टि हेतु मन कियो विधाता ॥ ८ ॥

दोहा- **भरी मरीच्यादिक ऋषि सृष्टि को, विस्तृत ना विधिजान।**
वृद्धि हेतु तब निज मन, चिन्ता कियउ महान ॥ ७१ ॥

चौ– प्रजा हेतु मैं बहुत उपाया। कियो किन्तु नहि दैव सहाया ॥ १ ॥
एवं विधि मन करत विचारा। निज स्वरूप भयो दोय प्रकारा ॥ २ ॥
रूप विभाग पुरुष इक नारी। स्वायंभुव मनु पुरुष प्रचारी ॥ ३ ॥
शतरुपा मनु तिया कहाई। मिथुत धर्म उन प्रजा बढ़ाई ॥ ४ ॥
मनु शतरूपा दो सुत जाये। उत्तानपाद प्रियव्रत कहलाये ॥ ५ ॥
देवहूति आकूती प्रसूती। त्रय कन्या उन गेह विभूती ॥ ६ ॥
रूचि हेतु आकूती व्याही। कर्दम देवहूति परणाई ॥ ७ ॥
प्रसूती दक्ष हेतु उन दयउ। जासे जगत पूर्ण सब भयउ ॥ ८ ॥
कह शुकदेव सुनहु नरनाथा। भार्गवमुख सुन पावन गाथा ॥ ९ ॥

दोहा- स्वायंभुव सम्राट प्रिय, पुत्र स्वयंभुव गाथ।
कहे विदुर तिय संग ल, कियो चरित मुनि नाथ ॥ ७२॥

चौ- आदि राज मनु चरित सुनाहू। भगवत चरण वसत हिय जाहू ॥ १ ॥
भक्त गुणानुश्रवण नर करही। मंगल होत अमंगल नसही ॥ २ ॥
कहत व्यास सुत पांडव नन्दन। कहत विदुर प्रति भार्गव नन्दन ॥ ३ ॥
बोले आदिराज तिय साथा। कर प्रणाम विधि पद धरि माथा ॥ ४ ॥
सर्वभूत गण जन्म प्रदाता। एक रूप जग वृत्ति सुदाता ॥ ५ ॥
तुम मम पोषक पिता विधाता। सेवा कवन करूँ तव ताता ॥ ६ ॥
पितु सेवा ते यश सुत पावे। अंत मोक्ष पद शीघ्र सिधाये ॥ ७ ॥
पितु सेवा जो सुत नहिं करहीं। रौरव नरक कल्प शत परही ॥ ८ ॥
पितु आज्ञा मानत सुत जोही। तासु अमंगल कबहुँ न होही ॥ ९ ॥

सोराठा- बोले इमि पुनि धात, स्वायंभुव के सुन वचन।
स्वस्ति होउ तव तात, मैं प्रसन्न तो पर सदा ॥ ५ ॥

चौ- पुत्र धर्म बड़ यही क्षितीसा। पितु आज्ञा धारहिं निजसीसा ॥ १ ॥
जानहु जगत येहि गुरु पूजा। याते अपर धर्म नहिं दूजा ॥ २ ॥
अब तुम निज तिय संग लिवाई। उत्पत्ति संतती कुरु सुखदाई ॥ ३ ॥
बनहु सकल भूमंडल पालक। भजहु यज्ञ करि हरि अरिघालक ॥ ४ ॥
हे मनु होउ प्रजा परिपालू। तो पर होवहिं ईश दयालू ॥ ५ ॥
जो नर पर हरि होत न तुष्टा। जानहु सकल तासु श्रम भृष्टा ॥ ६ ॥
लोकपति के वचन सुहाये। सुनि मनुराज हृदय अति भाये ॥ ७ ॥
प्रभु आज्ञा धारउँ निज सीसा। भगवन लोकपिता जगदीसा ॥ ८ ॥

प्रजा निवास हेतु मम स्वामी । स्थान बतावहु अन्तरयामी ॥ ६ ॥

दोहा- **मग्न मही प्रलयोदक, सर्व सत्व आधार ।**
प्रथम करो भगवन् तुम, इस भू का उद्धार ॥ ७३ ॥

चौ- कुरुवर स्वायंभुव सुनि वाता । नीर मग्न लखि भूमि विधाता ॥ १ ॥
करूँ उद्धार मैं कवन प्रकारा । इति विचार विधि निजमन धारा ॥ २ ॥
प्लाव्यमान भू गई रसातल । आवहिं केन प्रकार बहि जल ॥ ३ ॥
तीरथ कीर्ति अधोक्षज साँई । करुणा सिन्धु लोक सुखदाई ॥ ४ ॥
जासु नाभ ते मैं उन जाया । सोहि ईश मम करहिं सहाया ॥ ५ ॥
पूरण काम न हो मम उन बिन । इति विचार विधि करहीं निज मन ॥ ६ ॥
तेहि अवसर हे कुरू प्रधाना । भई छींक विधिवर अति माना ॥ ७ ॥
छींकत शिशु तब एक वराहू । निकसत नास रंध्र विधि पाहू ॥ ८ ॥
वदन जासु अंगुष्ठ प्रमाना । लखि वराह विधि अचरज माना ॥ ९ ॥

दोहा- **विधि देखत आकाश में, स्थित हो लोक वराहु ।**
गज प्रमाण क्षण भर भयो, चकित भये लखि ताहु ॥७४॥

चौ- मरीचि प्रमुख सब मुनी कुमारा । करत तर्कना विधि सह सारा ॥ १ ॥
भयउ अहो आश्चर्य महाना । निसरत नाक अंगूठ प्रमाना ॥ २ ॥
स्थूल शिला सम क्षण भर बाढ़ा । रूप वराह तोक नभ ठाढ़ा ॥ ३ ॥
भयउ मोर मन यह अनुमाना । बिन भगवान नहीं यह आना ॥ ४ ॥
इति विधि निजमन करत विचारा । गर्जेउ हरि तब घोर करारा ॥ ५ ॥
सुनि धुनि पुनि जन लोक निवासी । करहिं प्रार्थना तप सत वासी ॥ ६ ॥
विबुध उदय के हेत वराहा । गरजन करि गय नीर अथाहा ॥ ७ ॥
धूजत स्कंध देश नभ चारी । उच्च पुच्छ सित दंत करारी ॥ ८ ॥
तनु कठोर त्वच केश कठोरा । चमकत नयन तेज चहुँओरा ॥ ९ ॥

दोहा- **यज्ञ रूप भगवान वे, सूकर रूप विशाल ।**
प्रलयोदक के बीच में, कूद गये तत्काल ॥ ७५ ॥

चौ- तनु कठोर गिरि वज्र समाना । जासु काल जल कियउ पयाना ॥ १ ॥
फटत उदर सागर निज जाना । घोर शब्द अति मेघ समाना ॥ २ ॥
उताल तरंग मनु भुजा उठाई । वदत आर्तनाद जल राई ॥ ३ ॥
पाहि पाहि यज्ञेश्वर स्वामी । अखिल लोकपति अन्तरयामी ॥ ४ ॥
तब वराह खुर नीर विदारी । गये रसातल महि हितकारी ॥ ५ ॥

मग्न मही निज दंष्ट्र कराला । धारण कर महि चले विशाला ॥ ६ ॥
गदा हाथ निज आवत देखा । कठिन पराक्रम दैत्य विशेखा ॥ ७ ॥
तदवध कर हरि बाहर आये । गण्ड तुण्ड रक्ताङ्कित भाये ॥ ८ ॥
धरत दंत गज पंकजमाला । दंत कोटि भू धरी विशाला ॥ ९ ॥

दोहा- तमाल नील सम देख तनु, हो करवद्ध सधात ।
करत विनय अति प्रेम त, पुलकित कर निजगात ॥७६॥

चौ- जयति जयति जय अजित खरारी । जयति वेदत्रयि तनु असुरारी ॥ १ ॥
ते रोम गर्त सब यज्ञ विलीना । सकल जगत प्रभु तव आधीना ॥ २ ॥
यज्ञ रूप तव दर्श अधर्मी । पात सकत नहीं कभी कुकर्मी ॥ ३ ॥
त्वंचा छन्दकुश कच पद होता । नयन आज्य खाद्य विति होता ॥ ४ ॥
भक्षण पात्र उदर श्रुति चमसा । मुख स्रुक स्रुवं तव जानहु नासा ॥ ५ ॥
कंठ रंध्र ग्रह ढाड प्रणीता । गरदन उपसद मुख प्राशिता ॥ ६ ॥
प्रवर्ग्य जीभ सिर सम दो वी ती । सोमवीर्य प्रभु प्राण सुचीती ॥ ७ ॥
आसन तीन सवन रिषि धातु । सम्पूर्ण यज्ञ क्रतु रूप सुगातु ॥ ८ ॥
क्रियात्म ज्ञानप्रद मंत्र स्वरूपा । जयति जयति गुरु देव अनूपा ॥ ९ ॥

दोहा- मत्त गजेन्द्र जिमि पद्मिनी, धारत जो निज दन्त ।
दंष्ट्राग्र भूमि भूधर सहित, सोभित त्यों भगवन्त ॥ ७७॥

चौ- जगत निवास हेतु तुम ताता । स्थापित करहु शीघ्र महि माता ॥ १ ॥
वन्दहिं भूमि समेत खरारी । कियउ नाथ तुम भू उद्धारी ॥ २ ॥
जब निज वदन धुजावत ताता । लागत विन्दु केश जल जाता ॥ ३ ॥
तब जन तप सत लोक निवासी । होत पवित्र सकल अघनासी ॥ ४ ॥
माया योग विमोहित जो जन । करहु विश्व का मंगल भगवन ॥ ५ ॥
स्तूयमान हरि एवं रिषिवर । आनीत रसातल भू जल ऊपर ॥ ६ ॥
निज शक्ति से स्थिर करि कुरुवर । गय निज लोक तदा श्री हरिवर ॥ ७ ॥
यह हरि कथा जो सुनत सुनावत । होत मुदित प्रभु पाप नसावत ॥ ८ ॥
प्रभु प्रसन्न दुर्लभ कुछ नाहीं । भक्त लोक भज कर उन पाही ॥ ९ ॥

दोहा- भव हारिणी भगवत कथा, सुधा कर्ण किय पान ।
सो नर जग में धन्य है, दूसर पशू समान ॥ ७८ ॥

चौ- कौषा रवि वर्णित सुन गाथा । बोले विदुर जोर युग हाथा ॥ १ ॥
यज्ञ मूर्ति सूकर तनुधारी । हिरण्याक्ष वध कियो खरारी ॥ २ ॥

तव मुख ते सुनकर हरि गाथा । भयो तृप्त मे मन नही नाथा ॥ ३ ॥
दानवेन्द्र बल रहे अथाहू । कियो युद्ध केहि हेतु वराहू ॥ ४ ॥
वीर श्रेष्ठ पूछी तुम बाता । हरि अवतार कहुँ सुन ताता ॥ ५ ॥
जासु कथा ध्रुव बालकुमारा । मृत्यु सीस पद धरि तनु तारा ॥ ६ ॥
यह इतिहास देव हित धाता । गायेउ वहि सुन मम मुख ताता ॥ ७ ॥
कथा दक्ष दिति जिन नामा । संध्या समय पुत्र मन कामा ॥ ८ ॥
पति समीप गइ काम अघाई । हवन शाल कश्यप जँह आई ॥ ९ ॥

दोहा- **काम देव निज धनुष पर,धर कर वाण कराल ।**
वेधत मे मन हे पति, भई हाल वेहाल ॥ ७९ ॥

चौ- वैभव सौत सुवन लखि मोरे । होत डाह अति पति मन दोरे ॥ १ ॥
मो पर करहु अनुग्रह साँई । बाधत कामदेव अति आई ॥ २ ॥
तव समान पति पाकर नारी । निज यश करत लोक विस्तारी ॥ ३ ॥
पिता दक्ष पूछेउ इक काला । निज समीप बुला सब बाला ॥ ४ ॥
कवन पति तुम निज मन चाहू । पूछहुँ पृथक पृथक बतलाहू ॥ ५ ॥
तब प्रति भाव देखि निज ताता । दई त्रयोदश ते तनुजाता ॥ ६ ॥
कमल नयन मनोरथ मोरा । करहुँ पूर अब पद गहुँ तोरा ॥ ७ ॥
कामवेग अर्दित लखि नारी । कश्यप मुनि इमि गिरा उचारी ॥ ८ ॥
भीरु मनोरथ पूरहूँ तेरा । मानहु वचन सत्य यह मेरा ॥ ९ ॥

दोहा- **धर्मार्थ काम त्रय सिद्ध हो, उस पत्नी का काम ।**
कौन पूर्ण करता नहीं, ऐसो को जग वाम ॥ ८० ॥ क
जिमि नर चढ़कर पोत पर, जावत सागर पार ।
त्यों नर सब दुख से तरे, गृहस्थाश्रम को धार ॥८० ॥ख

चौ- मानिनि तिय अर्धाङ्ग कहावत । गेह सोंपि नर निर्भय विचरत ॥ १ ॥
इन्द्रिय अरि दुर्जय जग जाना । जीत सकत तिय आश्रय बाना ॥ २ ॥
दुर्गप अरि जिमि करत अधीना । नर तिय आश्रित होत कुलीना ॥ ३ ॥
विनिमय तव सम तिय उपकारा । देत सकत ना नर संसारा ॥ ४ ॥
प्रजा रूप रुचि पूरण तेरी । करूँ पूर्ण नहि करउँ अवेरी ॥ ५ ॥
धरहु धीर तुम घटि युग वामा । संध्या काल य घोर अकामा ॥ ६ ॥
फिरत रुद्र अनुचर इस काला । वृषभ भूतगण सह शिव आला ॥ ७ ॥
शव धूलि धूसर युत अंगा । मस्तक चन्द्र सुशोभित गंगा ॥ ८ ॥

सूर्य चन्द्र अरु अग्नि स्वरूपा । देखत नयन तीन सुरभूपा ॥ ९ ॥

दोहा- **कंचन वर्ण सुगौर तनु, देवर तव शिव वाम ।**
विचरण कर इस जगत में, देखत सबके काम ॥ ८१॥

चौ- निज अरु पर शिव भेद न जानत । अति प्रिय अति निन्दित नही मानत ॥ १॥
कर अनेक व्रत पालन वामा । चाहत कृपा सदा सुख धामा ॥ २ ॥
गावत ज्ञानी जन उन गाना । करत कृत्य शिव भूत समाना ॥ ३ ॥
दुर्भग नर शिव चरित विलोकि । हँसत सदा मन होवत शोकी ॥ ४ ॥
नारद ब्रह्मादिक ऋषि सारा । पावत शिव माया नहि पारा ॥ ५ ॥
इति दिति निज पति वचन सुहाये । वार वधू इत मन नहि भाये ॥ ६ ॥
तव कश्यप तिय जानि अकर्मा । भावि प्रबल लखि तजिनिज धर्मा ॥ ७ ॥
वन्दन किय सब देव मुनीशा । निज तिय संग रमण किय खीशा ॥ ८ ॥

दोहा- **कियो स्नान कश्यप मुनि, करि पुनि प्राणायाम।**
गायत्री का जप किये, सत्य सनातन धाम ॥ ८२ ॥

चौ-तासु कर्म दिति होय विलज्जित । पति समीप अधोमुख भाषत ॥ १ ॥
करहु क्षमा मम सब अपराधा । मम इस गर्भ न दें शिव बाधा ॥ २ ॥
कियो नाथ मैं शिव अपराधा । न्यस्त दंड धृत दंड अगाधा ॥ ३ ॥
नमो रुद्र शिव उग्र कराला । महादेव मीढुष महाकाला ॥ ४ ॥
देव प्रसन्न होय वह मोपर । करहु अनुग्रह मुझ पर पतिवर ॥ ५ ॥
इति दिति वच सुन कश्यप बोले । संध्या नियम निवृत्त करि हो ले ॥ ६ ॥
आज्ञालंघन शिव अपमाना । मुहूर्त दोष चित तुम नहीं माना ॥ ७ ॥
तव जठर अधर्मी जग दुखदाई । होवहिं पुत्र युगल खल आई ॥ ८ ॥
साधु सन्त अरु दीन अनाथा । मारहिं सुत तव ले खल साथा ॥ ९ ॥

दोहा- **जब रिषि मुनियों को अति, होवहिं मन में सोच ।**
तब हरि निज अवतार धरि, मारहिं निशिचर पोच ॥८३॥

चौ- भगवत कर सुत वध सुन काना । बोली दिति पति कृपानिधाना ॥ १ ॥
ममसुत क्रोधित ब्राह्मण द्वारा । होन कदापि नाथ संहारा ॥ २ ॥
ब्रह्म दंड दग्धित नर साँई । नरक बीच अपि ठाम न पाई ॥ ३ ॥
ब्रह्म दण्ड दग्धित नर जेते । जे जे जोनि जात दुःख सेते ॥ ४ ॥
कह कश्यप सुनु भामिनि बाता । शोक ताप जो ते मन जाता ॥ ५ ॥
यहिते पौत्र साधु तव होही । गावहिं जासु चरित सब कोही ॥ ६ ॥

जासु स्वभाव प्राप्त कर साधू । त्याग वैर वन जात अगाधू ॥ ७ ॥
होत मुदित जग जासु प्रसादा । हरि अति तुषित देखि मर्यादा ॥ ८ ॥
महाभागवत हो तव पौता । बहे अगाध भक्ति विच स्रोता ॥ ९ ॥

दोहा- **शीत स्वभाव अलम्पट, नहीं देह अभिमान ।**
सब जग दुख हर्ता वह, होहिं गुणन की खान ॥ ८४ ॥

चौ- झलकत कुंडल मंडित आनन । कमल नयन मन अमल सुहावन ॥ १ ॥
पौत्र तुम्हारा करहि प्रभुदर्शन । गावहिं भक्त लोग उन कीर्तन ॥ २ ॥
पौत्र भागवत सुन दिति काना । सुत वध हरि करते सुख माना ॥ ३ ॥
तेज काश्यपी दिति निज जठरा । वरिस एक शत धारेउ विदुरा ॥ ४ ॥
तेज काश्यपी जब तनु आया । अंधकार तब दस दिसि छाया ॥ ५ ॥
भीत होय इन्द्रादिक सारे । कियउ प्रार्थना जा विधि द्वारे ॥ ६ ॥
यद्यपि जानत सब तुम धाता । करहिं निवेदन हम मिल ताता ॥ ७ ॥
लोक नाथ जगपति सुर राया । पर अरु अपर भूत अभिप्राया ॥ ८ ॥
व्यक्त योनि गुण भेद गृहीता । निष्काम भाव तुम भक्त अधीता ॥ ९ ॥

दोहा- **श्वास जीत तव ध्यान धरि, होत पराभव नाहि।**
वाणी मन को जीतकर, पूजहि प्रभु पद आहि ॥ ८५ ॥

चौ- हरहु अमंगल मंगलकारी । विपति विदारण जगत विहारी ॥ १ ॥
गर्भ काश्यपि तेज कृपालू । तिमिर बढ़त दश दिशा दयालू ॥ २ ॥
हम सब मिलकर शरण तुम्हारी । आये रक्षा करहु हमारी ॥ ३ ॥
तब ब्रह्मा हँसि गिरा उचारी । सुनहु देव गण बात हमारी ॥ ४ ॥
सुर पूर्वज मम मानस पुत्रा । ऋषि सनकादिक चरित विचित्रा ॥ ५ ॥
एक समय वैकुंठ विशोका । निस्पृह फिरत गये सब लोका ॥ ६ ॥
लोक नमस्कृत वह हरि धामा । हरि सम रूप पुरुष निशि यामा ॥ ७ ॥
करत अराधन हरि पद सारे । निष्काम धर्म युत स्तोत्र उचारे ॥ ८ ॥
जहाँ शब्द गोचर भगवाना । काम पूर्ण तरु शोभित नाना ॥ ९ ॥
निश्रय नाम विपिन वँह शोभित । मूर्तिमान कैवल्य सुमोहित ॥ १० ॥

दोहा- **निज तिय संग विमान नभ, करत गान गंधर्व ।**
वासंतिक मकरन्दयुत, कुसुम गंध जँह सर्व ॥ ८६ ॥

चौ- कर्षित करहिं चित्त निज ओरा । रहहि न उन निज सुध बुध ब्योरा ॥ १ ॥
भृंग समूह उच्च स्वर गावत । हरिगाथा चहुँ ओर सुहावत ॥ २ ॥

चक्रवाक शुक सारस परवत । तित्तिर हंस मोर पिक गावत ॥ ३ ॥
मंद कुंद चंपक पुंनागा । उत्पल वकुल कमल भूनागा ॥ ४ ॥
आम्र कदम्ब व निम्ब कपित्था । जम्बु कनेर पनस तरु कत्था ॥ ५ ॥
नाना तरू सुगंधित मंडित । श्री हरि तुलसी सुगंध सुअर्चित ॥ ६ ॥
करत भक्त जन जिन तप नाना । होय मुदित अति मान प्रदाना ॥ ७ ॥
मरकत हेम विदुर मणि मंडित । देव विमान अनेक सुशोभित ॥ ८ ॥
स्फटिक भीति लक्ष्मी हरिधामा । देत वुहारि मुदित मीन कामा ॥ ६ ॥

दोहा- **तुलसी मंजर कर गहि, पूजत हरि पद मात ।**
विमलामृत जल वापिका, निज प्रतिविम्ब दिखात ॥ ८७॥

चौ- अर्थ कामयुत सुनत जे बाता । वह मतिभृष्ट वहाँ नहि जाता ॥ १ ॥
तत्वज्ञानयुत मानव जाती । हरि आराधन बिन नहीं पाती ॥ २ ॥
नर तनु पा हरि भजहिं अकामी । आवहि विष्णु लोक नहीं कामी ॥ ३ ॥
जो हरि आराधन ना करहीं । माया मोहित हो दुख भरहीं ॥ ४ ॥
यम नियम तजि कर हरि बाता । नयन अश्रु सह पुलकित गाता ॥ ५ ॥
सब अघ तज आवहि हरिधामा । पावहि प्रभुपद प्रेम ललामा ॥ ६ ॥
सुर पूर्वज सनकादिक सारे । दिवस एक वैकुंठ पधारे ॥ ७ ॥
भये मुदित वैकुंठ विलोकी । इन समान नहीं अन्य त्रिलोकी ॥ ८ ॥
मुनिषट् द्वार भेद गए आगे । सप्तम द्वार बीच भय त्यागे ॥ ६ ॥

दोहा- **मुकुट व कुंडल क्रीट धर, कर विच गदा विशाल।**
मत्त भ्रमर वनमालिका, भृकूटी वक्र कराल ॥ ८८ ॥

चौ- अरुण नयन समलंकृत देहा । फडकत नाक रंध्र नही नेहा ॥ १ ॥
जय अरु विजय नाम जिन गाये । द्वारपाल वैकुंठ बताये ॥ २ ॥
बिन पूछे मुनि अन्दर आये । जिमि षट् द्वार त्यांग मँह धाये ॥ ३ ॥
वात अश्रुति मुनी दिगम्बर । वृद्ध तदपि वय शर सम्वत्सर ॥ ४ ॥
जय अरु विजय वेत्र गहि हाथा । रोके जावत लखि मुनिनाथा ॥ ५ ॥
द्वारपाल जब करी मनाही । तब कुमार निज गिरा सुनाही ॥ ६ ॥
कपट कुटिलयुत विषम स्वभावा । यहाँ वास क्यों कर तुम पावा ॥ ७ ॥
विश्वनिवास विश्वपति अन्दर । काहू भेद नहि जानत बुधवर ॥ ८ ॥
करत जहाँ भगवान निवासू । वहाँ भेद क्यों होय अभासू ॥ ६ ॥

दोहा- **काम क्रोध मद लोभ की, होवे खान अपार ।**
तुम दोनों वहँ जा वसो, यँह नहिं काम तुम्हार ॥ ८६ ॥

चौ- अत्यज विप्रशाप सुनि काना । हरि अनुचर हिय अति भय माना ॥ १ ॥
रिषि पद परि दोउ दंड समाना । अति कात्तर मुख वचन न आना ॥ २ ॥
पुनि धरि धीर वदत दोउ भ्राता । उचित दंड पायउ हम ताता ॥ ३ ॥
मूढ़ योनि हम जावहिं सांई । करहु कृपा इतनी रिषि राई ॥ ४ ॥
भगवत स्मृति नाशक नहि होंही । यह वरदान देहु हम दोही ॥ ५ ॥
महापराध अनुव्रत जाना । आये लक्ष्मी सह भगवाना ॥ ६ ॥
हरि अनुव्रत आये प्रभु पाछे । जिनकर छत्र चमर लगि आछे ॥ ७ ॥
द्वारपाल अरु मुनि समुदाई । प्रेम कटाक्ष हृदय सुखदाई ॥ ८ ॥
पीत पद काञ्चीवन माली । गरुड़ स्कंध स्थापित करताली ॥ ९ ॥

सोरठा- **लक्ष्मी का मद दूर, भयो देख विग्रह हरि ।**
कोटि भानु समनूर, वर्णन को कवि कर सके ॥ ६ ॥

चौ- दर्शन कर हरि रूप अनूपा । करत वन्दना पुनि मुनि भूपा ॥ १ ॥
हरिपद कमल तुलसि मकरन्दा । करत पान मुनि भये अनन्दा ॥ २ ॥
नील कमल सम सुन्दर आनन । लब्ध मनोरथ किय पद वन्दन ॥ ३ ॥
अष्ट सिद्धि वैभव युत पूजित । होत कदापि प्रभो नहि मोदित ॥ ४ ॥
हे अनन्त तव चरित विचित्रा । वर्णन कियउ पूर्व विधि पित्रा ॥ ५ ॥
सो प्रभु आज नयन हम देखा । योग भक्ति श्रवणादि विशेषा ॥ ६ ॥
वीतराग मुनि पावत तोही । परमानन्द मगन मन होही ॥ ७ ॥
दुष्ट पुरुष हिय अन्तरयामी । करत निवास तदपि तुम स्वामी ॥ ८ ॥
ओझल रहत सदा खल सागे । आज सुशोभित वह हम आगे ॥ ९ ॥

दोहा- **कथा सार रसविद् नर, मोक्ष प्रसाद न चाहि ।**
कथा कीरतन के किय, हरिपद उन मिल जाहि ॥ ९०॥

चौ- जब हम प्रभु वैकुंठ सिधाये । तव लगि कोपि कष्ट न पाये ॥ १ ॥
यहाँ एक अपराध कृपालू । कियो आज हम दीन दयालू ॥ २ ॥
दियो शाप तव अनुव्रत हेतू । हरहु पाप वह हे जगसेतू ॥ ३ ॥
तासु पाप प्रभु जनम हमारा । हो वहि नीच वंश कर्तारा ॥ ४ ॥
हो असत्य यह कथन हमारा । कुरुपद पंकज प्रेम अपारा ॥ ५ ॥
विपुल कीर्ति करि दर्श तुम्हारे । भये कृतार्थ आज हम सारे ॥ ६ ॥
जिन पद कमल आज हम नेरे । सुर रिषि मुनि उन निज हिय हेरे ॥ ७ ॥
उन मुनि कथन श्रवण करि काना । बोले वचन वार भगवाना ॥ ८ ॥

जय अरु विजय पारषद मेरे । किय अपराध य आज घनेरे ॥ ६ ॥

दोहा- **नहीं कीन्ह परवाह मम, कियउ ये कृत्य जघन्य ।**
दियो दंड इन कारने वह, सब मुझे सुमान्य ॥ ६१ ॥

चौ- महिसुर परम देव मैं जाना । धरत सीस पद उन रज नाना ॥ १ ॥
कपट त्याग पूजत द्विज आई । होउ मुदित अति उन सुखदाई ॥ २ ॥
दूत हमार कियउ जो बाधा । जानत जिन सब मम अपराधा ॥ ३ ॥
कृत अपराध भृत्य यदि कोई । मालिक नाम अकीरत होई ॥ ४ ॥
द्विज अपराध करहि निज बाहूँ । काटहुँ मैं नहि देर लगाहूँ ॥ ५ ॥
द्विज पद पूचित माम विरत्तहीं । सेवत लक्ष्मी कदापि न तजहिं ॥ ६ ॥
पायसादि घृत युक्त पदारथ । करत विप्र मुख होम यथारथ ॥ ७ ॥
होवहुँ मैं उन पर अतिराजी । नहीं वीतिमुख करत सुयाजी ॥ ८ ॥
मम पादोदक जगत पुनीता । विप्रचरण रज धरहुँ विनीता ॥ ६ ॥

दोहा- **गौ ब्राह्मण मम देह हे, करत जो इनते वैर ।**
ना मानो कर देख लो, कबहुँ न उसकी खैर ॥ ६२ ॥

चौ- मम सम विप्रहि जो नही लखही । गीध चञ्चु ते उन तनु सखही ॥ १ ॥
मम सम जान विप्र किय पूजा । वह मम भक्त अन्य ना दूजा ॥ २ ॥
मम अभिप्राय न ये दोउ जाना । किय अपराध य विप्र अजाना ॥ ३ ॥
आवहिं स्वल्प काल मम पासा । इन प्रति आप बँधावहु आसा ॥ ४ ॥
अतिप्रिय वचन सुना जब काना । तृप्त भये नही मुनी सुजाना ॥ ५ ॥
करत तर्क ना सुन प्रभुवानी । अभिनन्दन निन्दा नहिं जानी ॥ ६ ॥
अमल भावना लखि भगवाना । करत प्रार्थना रिषि इमि नाना ॥ ७ ॥
तव अभिप्राय न हम पहिचाना । सर्वेश्वर परब्रह्म महाना ॥ ८ ॥
कहा नाथ जो तुम यह गाई । होउ मुदित मुझ पर सब भाई ॥ ६ ॥

दोहा- **नाथ बड़प्पन यह तुव, तुम महि सुर आराध्य ।**
लोक पितामह के गुरो, सब प्रकार प्रभु साध्य ॥ ६३॥

चौ- धर्म सनातन ले अवतारा । रक्षा करत हरत महि भारा ॥ १ ॥
अनुग्रह जासु योगि जन पाई । तरत मृत्यु ते योग रचाई ॥ २ ॥
अर्थि जासु पद रजसिर धरहीं । प्रभु पद प्रतिक्षण लक्ष्मी न तजही ॥ ३ ॥
करत प्रेम निज जन ते जेता । करहु न प्रेम रमा संग वेता ॥ ४ ॥
द्विज सुर धेनु प्रयोजन कारन । शौच दया तप कर तुम धारण ॥ ५ ॥

करत पालना त्रियुग चराचर। करहु अमल चित रज तम हरकर ॥ ६ ॥
वेद मार्ग हों नास कृपाला। द्विज कुल रक्षक होत दयाला ॥ ७ ॥
अनुचर हेत दंड जो दीन्हों। यह बड पाप नाथ हम कीन्हों ॥ ८ ॥
उचित दंड जो देवहु साँई। वह स्वीकार हमे सब आई ॥ ९ ॥

दोहा- **असुर योनि यह पावही, भजहीं क्रोध समाधि।**
मम समीप पुनि आवहीं, तीन जनम ये साधि ॥९४॥क
शयन कियो मैं एक दिन, निज मंदिर दरम्यान।
आई लक्ष्मी जब वँह, रोकी इनने आन ॥९४॥ख
तब लक्ष्मी के मन भयो, दुसह क्रोध अपार।
दियो शाप इन हेतु यह, जो तुम दियउ अवार ॥९४॥ग

चौ- दियो शाप जो मुनी कुमारा। नहीं दोष यह रहा तुम्हारा ॥ १ ॥
निर्मित कियो प्रथम मैं याही। यही हेतु यह शाप दिवाही ॥ २ ॥
भगवत वचन सुना इमि काना। कर प्रणाम हरि मुनि सुख माना ॥ ३ ॥
तजि वैकुंठ गये निज गेहा। होत मुदित अति प्रभु पद नेहा ॥ ४ ॥
मुनि सनकादिक गय उपरन्ता। अनुव्रत हित बोले भगवन्ता ॥ ५ ॥
हे जय विजय सुनो मम वानी। हो कल्याण तजो मन ग्लानी ॥ ६ ॥
बैर भाव ते भजकर मोहीं। ब्रह्मशाप ते तर तुम दोहीं ॥ ७ ॥
मम समीप आवहु तुम दोही। वसहु काल कुछ बन मम द्रोही ॥ ८ ॥
यह आदेश अनुव्रत हेतू। देकर गमन कियो जगसेतू ॥ ९ ॥

दोहा- **ब्रह्म शाप ते हत श्रिय, भृष्ट गर्व दोउ भ्रात।**
हरी धाम ते जब गिरे, तब ते यह उत्पात ॥ ९५ ॥

चौ- भ्राता दोउ जठर दिति आये। तासु तेज ते सब दुःख पाये ॥ १ ॥
स्थिति उद्भव लय जग हितकारी। करहि क्षेम मत करहु विचारी ॥ २ ॥
विधि मुख वचन श्रवण कर सारे। गये निज लोक देव दुखियारे ॥ ३ ॥
जब दिति जठर गये दोउ भ्राता। भये भूमि नभ बिच उत्पाता ॥ ४ ॥
बाद वर्ष सत दिति सुत जाये। भूमि संग सब गिरि कँपाये ॥ ५ ॥
उल्का पात सकल दिशि दमकत। बिन वर्षा बिजली नभ चमकत ॥ ६ ॥
भये उदय पुच्छल नभतारे। वायु दुसह चलि वृच्छ उखारे ॥ ७ ॥
व्योम तडित सह मेघ अपारा। नष्ट प्रभायुत सग्रह तारा ॥ ८ ॥

दोहा- **उल्लू काक श्रृगाल चहुँ, भय प्रद कर अति सौर।**
वमन कीन्ह मुखते अनल, शिवा लगावत दौर ॥ ९६॥

चौ- अति भयभीत सिंधु जलराई । उदर अनेक तरंग उठाई ॥ १ ॥
जीव जन्तु कुहराम मचाई । भागत फिरत व इत उत धाई ॥ २ ॥
गिरि दरि ते अति शब्द कठोरा । निसरत विदुर दिवस निसि घोरा ॥ ३ ॥
बिना पूर्णिमा मावस आये । चन्द्र दिवाकर राहु ग्रसाये ॥ ४ ॥
इत उत श्वान उच्च मुख रोवत । वन्य जीव आ ग्राम निवासित ॥ ५ ॥
कर्कश खर खुर भूतल खोदत । जाति शब्द सुनि उन प्रति डोलत ॥ ६ ॥
गर्दभ शब्द भीत खग भीड़ा । करत चिकार पड़त निज नीड़ा ॥ ७ ॥
घोष अरण्य बीच पशु सारे । तजहिं मूत मल शब्द करारे ॥ ८ ॥
गौ भयभीत रक्त पय पावत । बिना अनिल द्रुम महि पर आवत ॥ ९ ॥

दोहा- **सुर मूरत रोवत अति, हाड़ व माँस अँगार ।**
राध रूधिर रज बरसत, तोरण केतु अपार ॥ ९७ ॥

चौ- शनि भौमादिक क्रूर सितारे । लाँघहि बुध गुरु आकर सारे ॥ १ ॥
हो अति वक्र करत नभ युद्धा । सब प्रकार नहीं काल विशुध्दा ॥ २ ॥
लखि उत्पात प्रजा भयभीता । ब्रह्मपुत्र तजि जग लय चींता ॥ ३ ॥
आदि दैत्य दोउ गिरि सम बाढ़े । तनु कठोर लोहावत गाढ़े ॥ ४ ॥
हेम किरीट कोटि दिवि स्परशत । तनु विशाल दश दिशि आच्छादित ॥ ५ ॥
बाजु बन्द भुज कनक सुहाई । धरत कदम धरणी कँपाई ॥ ६ ॥
कटि तट काञ्चि पीत पट सुन्दर । जिस प्रकाश ते लज्जित दिनकर ॥ ७ ॥
कश्यप नाम करण उन गाये । कनककशिपु हिरण्याक्ष बताये ॥ ८ ॥

सोरठा - **गदा हाथ निज धार, अनुज जासु हिरण्याक्ष वह ।**
निज सम बली विचार गयो, स्वर्ग सुरपति भवन ॥७॥

चौ- दु:सह वेग स्कंध गदधारी । शौर्य वीर्य बल गर्वित भारी ॥ १ ॥
आवत दैत्य देख दुखयारे । हो अति भीत छिपे सुर सारे ॥ २ ॥
निज भुज बल ते अति दुखियारे । पौरुष हीन गुप्त सुर सारे ॥ ३ ॥
लगा विलोकन कश्यप नन्दन । अट्टहास कर की अति गर्जन ॥ ४ ॥
स्वर्ग त्याग पुनि बाहर आवा । जल क्रीड़ा हित सिन्धु सिधावा ॥ ५ ॥
सिंधु बीच जब निशिचर आवा । वरुण दूत जल चर भय पावा ॥ ६ ॥
अहत तदपि सब किये पलायन । असुर तेज ते तजि निज आसन ॥ ७ ॥
बरिस अनेक जलधि खल ठाढ़ा । मारहि लहर गदा अति गाढ़ा ॥ ८ ॥
वरुणदेवपुर बिच वह आई । जलपति देखि हँस्यो खल नाँई ॥ ९ ॥

सोरठा- देहु युद्ध का दान, कर प्रणाम बोल्यो असुर ।
दानव दैत्य महान, जीतेउ तुम समराङ्गण ॥ ८ ॥
चौ- राजसूय यज्ञ तुम कीन्हा । भेट सकल अरि तव हित दीन्हा ॥ १ ॥
शत्रु वचन सुन बाढेउ रोषा । किन्तु प्रबल लखि शमनेउ दोषा ॥ २ ॥
बोले वरुण देव सुत दानव । सम्प्रति शान्तिप्रेमि हम मानव ॥ ३ ॥
विष्णु समान जगत नहीं कोही । वही युद्ध बिच तोषहिं तोही ॥ ४ ॥
अब तुम विष्णु समीप सिधाहू । उन संग जाकर युद्ध रचाहू ॥ ५ ॥
होवहिं नष्ट गर्व सब तेरा । विष्णु समीप न लगे अबेरा ॥ ६ ॥
समर बीच कुक्कुर अरु कागा । खावहिं तनु यदि नहीं तुम भागा ॥ ७ ॥
तव सम गर्वि और बलवन्ता । धर अवतार हनहिं भगवन्ता ॥ ८ ॥
साधु सन्त द्विज सुरहित कारी । करहीं पूर्ण आशा तव भारी ॥ ९ ॥
दोहा- जलपति के यह वचन, सुन नारद वैन प्रमान ।
गयो रसातल लोक में, जहँ वराह भगवान ॥ ९८ ॥
चौ- दानव राज रसातल आवा । देखि वराह क्रोध अति छावा ॥ १ ॥
अट्टहास कर वह खल गर्जा । कर अपहास वदत अति तर्जा ॥ २ ॥
यह वन जीव अरे जल भीतर । आवा केन प्रकार यहाँ पर ॥ ३ ॥
अरे सूकराधम कँह जावत । हिरण्याक्ष मम नाम कहावत ॥ ४ ॥
मम सन्मुख तू भूमि उठाई । जावत कहाँ चौर की नाँई ॥ ५ ॥
लोक रसातल वासिन हेतू । रची भूमि विधि कृपा निकेतू ॥ ६ ॥
तजहु भूमि भजु ले निज प्राना । नातर मार निकारेउ जाना ॥ ७ ॥
मम परोक्ष तुम असुर सँहारे । गदा मारि सब चुकूँचुकारे ॥ ८ ॥
गदा मारि सिर फोरहु तेरा । रखहु भूमि मत करहु अबेरा ॥ ९ ॥
दोहा- जब तू मारा जायगा, रिषी देव निर्मूल ।
होवहिं अपने आपु सब, मिटहि हमारा सूल ॥ ९९ ॥
चौ- दुर्वचास्त्र पीडित भगवाना । लखि भय भीत अवनि मन जाना ॥ १ ॥
तेहि समये जल बाहिर आये । निज दंष्ट्रा पर भूमि उठाये ॥ २ ॥
झपटत ग्राह नीर गज पाछे । तिमि कश्यप सुत सजधज आछे ॥ ३ ॥
झपटा हरि अनुगत जब बाहर । बोला हरि प्रति लज्जा तजकर ॥ ४ ॥
उचित पलायन नहीं तव सूकर । यह सुनि वचन भूमिजल ऊपर ॥ ५ ॥
स्वाधार शक्ति से स्थापित करके । सब सुर मुनि जन का भय हरके ॥ ६ ॥

चंडमन्यु दानव प्रति बोले । हम वन गोचर तव हित डोले ॥ ७ ॥
तव सम ग्रामसिंह हम हेरत । काल रूप वन हम उन टेरत ॥ ८ ॥
मृत्युपाश तव होन जुदाई । मानही वीर न तव कथनाई ॥ ९ ॥

दोहा- **अरे दुष्ट मेरी गदा, ते होकर भयभीत ।**
कियो पलायन वदत इति, समर भूमि ना जीत ॥ १००॥

चौ- सो हम संग तुम वैर बढ़ाई । जासकते कहँ दानव राई ॥ १ ॥
मैं असमर्थ तदपि तव आगे । खड़ा दुष्ट अब सब भय त्यागे ॥ २ ॥
आँसू पोंछहु निज जन जाई । तजहु न निज प्रण करहु लड़ाई ॥ ३ ॥
जाना ना मैं तोर प्रभावा । यही हेतु सन्मुख ना आवा ॥ ४ ॥
हरि द्वारा एवं उपहासित । प्रचलित इन्द्रिय वह खल क्रुद्धित ॥ ५ ॥
कियो घात निज गदा उठाई । तिरछे हो प्रभु गदा बचाई ॥ ६ ॥
पुनि निज गदा भ्रमण कर एकी । क्रुद्ध होय दानव सिर फैंकी ॥ ७ ॥
आवत देख गदा निज सीसा । दानव तजेउ गदा अति खीसा ॥ ८ ॥
लरत झपट सरपट इमि नाना । करत प्रहार गदा मनमाना ॥ ९ ॥

दोहा- **विजय हेतु दोउ लरत, गदा युद्ध के भेद ।**
तनु में तीखी मारते, निसरत रुधिर व स्वेद ॥ १०१ ॥

चौ- मही निमित्त लरत लखि दोही । आवत ब्रह्मा रिषि संग सोही ॥ १ ॥
प्राप्त घमंड व अतिबलशाली । देखा विधि वह दैत्य कुचाली ॥ २ ॥
बोले हरि प्रति लोकविधाता । यह सुर नर मुनिजन दुखदाता ॥ ३ ॥
प्रबल भयउ खल मुझसे पा वर । दुखद और भय प्रद दानव वर ॥ ४ ॥
इस सम अन्य न वीर दिखाई । बाल समान खिलाहु न याही ॥ ५ ॥
निज प्रतिरथ अन्वेषण कारण । फिरत जगत बिच हे भयहारण ॥ ६ ॥
महा निरंकुश कर खल छल बल । महा घमंडी अतिरण कौशल ॥ ७ ॥
यावत संध्या काल यह आही । तावत मार गिरावहु याही ॥ ८ ॥
संध्या घोर काल यह आही । मारत मरत न यह दुख दाही ॥ ९ ॥

दोहा- **अभिजित नाम मुहूर्त यह, रह्यो जरा अवशेष ।**
मारहु सुर नर लोक हित, करहु न देर विशेष ॥ १०२ ॥

चौ- लोक पिता के वचन सुहाये । सुनि हरि के मन अतिवह भाये ॥ १ ॥
कर कटाक्ष विलोकि भगवाना । गदा प्रहार कि असुर पर नाना ॥ २ ॥
असुर गदा वह आवत देखी । तजी असुर निज गदा विशेषी ॥ ३ ॥

हरि कर गदा छूट भूगामी । अद्भुत कर्म कियो खल कामी ॥ ४ ॥
युद्ध धर्म का करत विचारा । निरायुध देख कियो न वारा ॥ ५ ॥
गदा हस्त पतित लखि सारे । रिषि सुर हाहाकार पुकारे ॥ ६ ॥
सुमरेउ हरि अब चक्र सुदर्शन । लगे देव हरि कुशल उचारण ॥ ७ ॥
मारहु दैत्य तजहू न एही । क्षण भर देर करहु मति नेही ॥ ८ ॥
धृत चक्र देख हरि आगे आवा । इन्द्रिय विकल क्रोध तनु छावा ॥ ९ ॥

दोहा- **रक्त नयन कर असुर वह, कट कटाय निज दन्त ।**
मम करते वच कर अधम, जान सकत तू अन्त ॥ १०३॥

चौ- इति कह वचन गदा ले हाथ । मारेउ सीस देश दनु नाथा ॥ १ ॥
गदा वेगते हरि पर आई । वाम पाद ते भूमि गिराई ॥ २ ॥
मोही जीतना यदि तू चाहू । तो हे खल निज गदा उठाहू ॥ ३ ॥
इति हरि वचन सुने जब काना । दिति सुत निज माना अपमाना ॥ ४ ॥
गदा त्याग त्रयशूल उठाया । झटपट हरि पर वह खल धाया ॥ ५ ॥
अम्बर विच चमकत लखि शूला । कियो चक्र ते हरि निर्मूला ॥ ६ ॥
कटत देख दिति सुत निज शूला । मुष्टि प्रहार कियो प्रतिकूला ॥ ७ ॥
भयो बाद खल अन्तरध्याना । वह प्रहार प्रभु कुछ नही जाना ॥ ८ ॥
हरि ऊपर माया फैलाई । जेहि देख सब लोक डराही ॥ ९ ॥

दोहा- **वायु प्रबल रज बरसत, नभ ते गिरत पखान ।**
केश व मूत्र पुरीष की, वर्षा भई महान ॥ १०४ ॥

चौ- अभ्र समूह भगण नहि दमकत । गिरि ते शस्त्र अनेकनि बरसत ॥ १ ॥
यातुधानि नगनि चहुँ ओरा । करधर शस्त्र मचावति सोरा ॥ २ ॥
यक्ष रक्ष चहुँ ओर दिखावा । मारहु काटहु वचन सुनावा ॥ ३ ॥
तब हरि चक्र सुदर्शन धारी । राक्षस माया सकल निवारी ॥ ४ ॥
दिति हिय कम्पन अब अति लागा । स्तन ते रुधिर झरत भय जागा ॥ ५॥
राक्षस माया जब प्रभु टारी । मुष्टि प्रहार कियो खल जारी ॥ ६ ॥
तब केशव एक मुष्टि प्रहारा । कर्ण प्रदेश लपक कर मारा ॥ ७ ॥
कर प्रहार खल भूमि गिरावा । जिमि नभते गिरि अवनी आवा ॥ ८ ॥
प्रभु प्रहार ते लोचन निर्गत । परिभ्रम तनु शिर कर पद खंडित ॥ ९ ॥

दोहा- **गिरा दैत्य जब अवनि पर, ब्रह्मा अरु सुर शर्व ।**
सुमन वृष्टि प्रभु पर करी, जयति जयति कही सर्व ॥१०५॥

चौ- असुर भाग्य वर्णन अति कीन्हा। इस सम मौत जगत को लीन्हा ॥ १ ॥
जेहि जोग कर जोगी ध्याहीं। किन्तु अन्त प्रभुपद नहीं पाहीं ॥ २ ॥
प्रभु पद बीच तजेउ यह प्राना। इस सम जगत बीच नहीं आना ॥ ३ ॥
पाय शाप सद्गति यह पाही। जन्म तीन निज धाम सिधाहीं ॥ ४ ॥
अखिल यज्ञ विस्तारक स्वामी। शुद्ध सत्वमय मंगल कामी ॥ ५ ॥
जग दुख दाता खल प्रभु नासा। कियो काम यह सुन्दर खासा ॥ ६ ॥
कह मैत्रेय विदुर हरि सूकर। अन्तरध्यान भये दनु वध कर ॥ ७ ॥
सूत कहे इमि भार्गव आनन। विदुर सुनी यह कथा सुहावन ॥ ८ ॥
भये विदुर अति खुश मन माँही। अपर चरित प्रति मति ललचाही ॥ ९ ॥

दोहा- **हरि भक्तन गाथा सुनत, होवत हर्ष अपार।**
हरि गाथा जो श्रवण करे, क्यों न मुदित संसार ॥१०६॥क
जिस प्रभु ने गज का, किया क्षण से बेड़ा पार।
ऐसे हरि को त्याग के, भजहि जो अन्य गँवार ॥ १०६॥ख
यह वराह भगवान का, पावन चरित अपार।
सुनहिं सुना वहि प्रेम ते, नासहि पाप पहार ॥ १०६ ॥ग
महापुण्य धन प्रद यश, वय वर्धक मन काम।
सुनत अन्त में जो जन, पावत वह हरि धाम ॥ १०६॥घ

चौ- शौनक कहे सुनहु मुनिराई। रची प्रजा मनु किमि महि पाई ॥ १ ॥
महाभागवत विदुर कहावा। कृष्णाश्रय सब विधि जिनधावा ॥ २ ॥
महिमा व्यास न्यून नहि जासू। तीर्थ स्नान मन पावन तासू ॥ ३ ॥
गंगा द्वार विदुर कुरु ताता। भार्गव मुख पूछेउ क्या बाता ॥ ४ ॥
हरि लीलामृत सुन कर काना। ऐसो को नर नहीं सुखमाना ॥ ५ ॥
क्षत भार्गव संवाद सुनाऊ। मुनिवर देर जरा नहि लाऊ ॥ ६ ॥
शौनक के यह वचन सुहाये। सुनि रिषि सूत हृदय हुलसाये ॥ ७ ॥
कहे सूत से शौनक राया। आदि वराह चरित मुनि गाया ॥ ८ ॥
सुनकर मुदित विदुर सुखमाना। पूछेऊ रिषि ते प्रश्न महाना ॥ ९ ॥

दोहा- **अव्यक्त मार्ग विद् हे मुनि, लोक पिता श्रुतिधाम।**
प्रजा हेतु रच कर सुवन, कियो कौन सो काम ॥ १०७॥

चौ- मरिचि आदि सुत विधि मनुराई। तिय व अतिय संग प्रजा रचाई ॥ १ ॥
यह सब श्रवण करत मुनि चाहूँ। करहु कृपा मुझ पर मुनि नाहूं ॥ २ ॥

कह मैत्रेय सुनहू कुरु राई । विस्तार सृष्टि मैं कहूँ सुनाई ॥ ३ ॥
अगम गति प्रभु कोई न जानी । निज निज मति अनुसार बखानी ॥ ४ ॥
प्रकृति त्रिगुण भगवान प्रधाना । भयो क्षोभ रज तत्व महाना ॥ ५ ॥
भेद तासु त्रय विदुर बतावा । सात्विक राजस तामस गावा ॥ ६ ॥
श्रुतिकर तत्व सकल इन जाया । मिलकर इक यक अंड रचाया ॥ ७ ॥
बरस अनेक अंड जल भीतर । कियो प्रवेश अंड बिच ईश्वर ॥ ८ ॥
विदुर विराट पुरुष वह गाया । तासु नाभि पंकज प्रकटाया ॥ ९ ॥

दोहा- **सहस भानु सम चमकत, कमल जीव संस्थान।**
उस नाभी पंकज विधि भये, लोक पिता गुणवान ॥१०८॥

चौ- ब्रह्मांड गर्भ रूप जल शायी । प्रभु विधि हिय बिच प्रकटे आई ॥ १ ॥
तब विधि पूर्व कल्प अनुसारी । नाम रूपमयी नियम विचारी ॥ २ ॥
संस्था लोक कीन्ह निर्माना । पाछे निज मन विधि अनुमाना ॥ ३ ॥
तामिश्र अंधतामिश्र व सोहा । महा मोहतम पंच असोहा ॥ ४ ॥
पांच प्रकार अविद्या मानी । विधि निज छाया ते प्रकटानी ॥ ५ ॥
तम मय तनु विधि मन नहि भाया । तजी देह वह निशि जग गाया ॥ ६ ॥
यक्ष व राक्षस जग भयकारी । भूख प्यास युत रजनी धारी ॥ ७ ॥
यक्ष व राक्षस भूख पिपासित । धाये विधि सन्मुख अति अर्दित ॥ ८ ॥
करहु न रक्षा खावहु येही । तब भयभीत करे विधि तेही ॥ ९ ॥

दोहा- **अरे यक्ष अरु राक्षसों, तुम सब मम सन्तान ।**
मुझको भक्षण मत करो, रक्षा करो समान ॥ १०९ ॥

चौ- भक्षण हेतु कहा जिन आवा । वे सब यक्ष जगत कहलावा ॥ १ ॥
करहु न रक्षा जिन मुख गावा । ते सब राक्षस लोग कहावा ॥ २ ॥
पुनि निज प्रभा देव विधि जाया । तजी प्रभा वह दिवस कहाया ॥ ३ ॥
दिवस रूप तनु सब सुर पाये । जघन देश असुर विधि जाये ॥ ४ ॥
कामासत हो असुर अधीरा । मैथुन काज कियो विधि तीरा ॥ ५ ॥
हो सभीत विधि कियो पलायन । गये शरण हरि के चतुरानन ॥ ६ ॥
दोउ कर जोर कहे प्रभु पाही । तवा देश यह प्रजा रचाही ॥ ७ ॥
ये सब मैथुन काज दयालू । आवत मोर समीप कृपालू ॥ ८ ॥
एक मात्र प्रभु सब दुख हारी । जो न शरण आवत दुःख धारी ॥ ९ ॥

दोहा- **यह सुन हरि बोले वचन, तजो धात यह देह ।**
तब ब्रह्मा निज तनु तजा, किया नहि कुछ नेह ॥ ११० ॥

चौ- परिणत भयउ रुप तनु बाला । सुदन्त सुनास रूप कुछ काला ॥ १ ॥
मद विह्वल चख कञ्ज करारी । कमर सुकाञ्चि सुशोभितसारी ॥ २ ॥
पंकज सम कोमल पद जासू । चलत नुपुर झनकारत तासू ॥ ३ ॥
कुच कठोर सुतुंग सुहाही । मिलहि निरन्तर अन्तर नाही ॥ ४ ॥
मधुर मधुर मुसकात किशोरी । नील अलकयुत वह अति भोरी ॥ ५ ॥
जिन लखि असुर भये सब मोहित । कहहिं परस्पर यह अतिशोभित ॥ ६॥
रूप अलौकिक धीरज कैसी । नई अवस्था दुलहन जैसी ॥ ७ ॥
कर वह तर्क असुर इति सारे । संध्या प्रति निज वचन उचारे ॥ ८ ॥
कहु रंभोरु कहाँ ते आई । कवन कर्म यँह को तुम जाई ॥ ९ ॥

दोहा- **रूप अनूप अमोल ते, तरसावत क्यों वाम ।**
जाति धर्म कुल भेद ते, नहीं हमें कुछ काम ॥ १११ ॥

चौ- कर दर्शन सुन्दरी तुम्हारा । बड़ सौभाग्य य भयो हमारा ॥ १ ॥
करि कन्दुक क्रीड़ा हर्षाई । दरसक मन तुम करत मथाई ॥ २ ॥
स्थिर नहीं चरण कमल तव बाले । कन्दुक निज कर जो तु उछाले ॥ ३ ॥
थकी भार उन्नत स्तन धारन । कटि तट क्षीण परीश्रम कारन ॥ ४ ॥
केश पास सुन्दर यह कैसा । मनहु कलंक चन्द्र बिच जैसा ॥ ५ ॥
इति विमूढ़ धी असुर गुमानी । करी ग्रहण निज तिय मनमानी ॥ ६ ॥
गंधर्व अप्सरागण सब जाये । हँसकर विधि निज कान्ति बनाये ॥ ७ ॥
प्रिय तनु कान्ति रूप विधि त्यागा । कियो ग्रहण गंधर्व विभागा ॥ ८ ॥
आलस ते विधि भूत पिशाचा । नग्न मुक्त कच मन नहीं राँचा ॥ ९ ॥

दोहा- **लोकपितामह जब तजी, जंभ रूप निज देह ।**
भूत पिशाचों ने वह, गृहण करी अति नेह ॥ ११२ ॥

चौ- शिथिल इन्द्रियाँ होवत जासू । निद्रा कहत शास्त्रविद् तासू ॥ १ ॥
झूठे मुख सोवत नर जेही । भूत पिशाच सतावत तेही ॥ २ ॥
ये सब कुरु उन्माद कहावत । हो अति क्लेश जीव दुःख पावत ॥ ३ ॥
पुनि ब्रह्मा निज बल ते जाये । पितर अगोचर साध्य कहाये ॥ ४ ॥
पितर कियउ वह ग्रहण शरीरा । बुधजन देत कव्य जिन नीरा ॥ ५ ॥
अन्तरधान शक्ति निज धाता । सिद्ध व विद्याधर तनु जाता ॥ ६ ॥
निज प्रतिबिम्ब विधाता जाये । पुरुष व किन्नर वह कहलाये ॥ ७ ॥
गावत वे निज ले तिय साथा । लोक पितामह की गुणगाथा ॥ ८ ॥

त्यागा विधि प्रतिबिम्ब शरीरा । ग्रहण कियो किन्नर धरधीरा ॥ ६ ॥

दोहा- निज सृष्टी वृद्धित नहीं लखि चिन्तित अति धात ।
निज अवयव फैलाप कर शमन किये घबरात ॥ ११३॥

चौ- होय क्रोध वश भये अधीरा । त्यागा विधि तव भोग शरीरा ॥ १ ॥
गिरत केश तनुते अहि जाये । कुञ्चित कर पद फण फैलाये ॥ २ ॥
सर्प नाग सब क्रूर स्वभावा । गलित केश ते यह प्रकटावा ॥ ३ ॥
एक बार विधि निज मनमाँही । सफल मनोरथ मनू रचाही ॥ ४ ॥
विधि ते मनु पौरुष तनु पावा । तव सब सुर विधि कीरति गाया ॥ ५ ॥
कर्त्ता विश्व जगतपति धाता । कियो काम सुन्दर यह ताता ॥ ६ ॥
रची सृष्टि जो तुम यह अतिवर । कर्म मखादि प्रतिष्ठित सुन्दर ॥ ७ ॥
एक समय विधि कियो विचारा । तप अरु योग समाधिन द्वारा ॥ ८ ॥
निज प्रिय संतति रिषि गण जाये । वे तप योग समाधि सुपाये ॥ ६ ॥

दोहा- स्वायंभुव मनुवंश का, गावहु मुनी चरित्र ।
धर्म मैथुनी ते यह सृष्टी, बढ़ी पवित्र ॥ ११४ ॥

चौ- उत्तानपाद प्रियव्रत सुत सोही । सप्तद्वीप महि भोगहि दोही ॥ १ ॥
दुहिता देवहूति तुम गाई । जो कर्दममुनि हित मनु परणाई ॥ २ ॥
कर्दम देवहूति सुत केते । दक्ष प्रसुति रुचि आकुति जेते ॥ ३ ॥
धातानन ते सुनि आदेशा । कर्दम मुनी सरस्वति देशा ॥ ४ ॥
बरस सहस दश हरिपद ध्याई । कियउ तपस्या सह कठिनाई ॥ ५ ॥
तप लखि हरि मुनि सन्मुख आये । दर्शन कर कर्दम मनु भाये ॥ ६ ॥
अर्क आभ विरजाम्बर सोही । कमल नयन मुनि मानस मोही ॥ ७ ॥
स्निग्ध नील अलकावलि साजे । मंदहास मुख मंदिर राजे ॥ ८ ॥
शंख चक्र गद अम्बुज धारी । सीस क्रीट कुंडल छविन्यारी ॥ ६ ॥

दोहा- आरुढ़ गरुड नभ स्थित हरि लखि, प्राप्त मनोरथ सीस।
क्षिति ऊपर धर कर्दम, कर कृताञ्जली ईस ॥ ११५ ॥

चौ- भगवन् तव दर्शन मम नैना । सफल होय मुख आत न वैना ॥ १ ॥
काम हेतु ते भजत जो पादा । वे मति मन्द मूढ नर ज्यादा ॥ २ ॥
ऋणत्रय दूरी हेतु अधीश्वर । मूरति धर्म विशुद्ध हे ईश्वर ॥ ३ ॥
करूँ समर्पण बलि तव हेतू । करहु आस सकल सुखसेतू ॥ ४ ॥
मैं हू नाथ तिया अभिलाषक । नमामि पाद तव काम प्रपूरक ॥ ५ ॥

लोक अनादर कर सब कोई । चरण छत्र आश्रित तव होई ॥ ६ ॥
काल रूप ते वे न डराही । सब प्रकार मंगल नर याही ॥ ७ ॥
यद्यपि काल चक्र जगधावत । किन्तु न भक्त लोग वय खावत ॥ ८ ॥
तुम हरि एक जगत विच गाया । पालहु सृजहु ग्रसहु निजमाया ॥ ९ ॥

दोहा- **शब्दादिक सम सुख हे प्रभो, करते हमें प्रदान।**
यद्यपि वे तुमको नहीं, भावत हे भगवान ॥ ११६ ॥

चौ- तदपि जगत की हेतु भलाई । प्रकट करति माया तव आई ॥ १ ॥
वन्दौं नाथ चरण युग पंकज । सेवत जिन शिव शेष व अंडज ॥ २ ॥
इति सुनि वचन सुधामय वाणी । बोले दीन बन्धु अनुदानी ॥ ३॥
रुचि तुम्हार प्रथम मैं जानी । कियो प्रबन्ध सकल मुनिज्ञानी ॥ ४ ॥
प्रजाध्यक्ष मम सेवा सार्थक । जावत नाहि कदापि निरर्थक ॥ ५ ॥
सप्तद्वीप पतिवर मनुराई । ब्रह्मावर्त वसत सुखदाई ॥ ६ ॥
मनु शतरूपा तिय संग लावहिं । काल्हि व परसों तवाश्रम आवहिं ॥ ७ ॥
शील गुणान्वित श्यामल लोचन । वय सुकुमारि कामिमद मोचत ॥ ८ ॥
हेरत पति अनुरूप मुनीशा । देवहि ते हितु मानव ईशा ॥ ९ ॥

दोहा- **यह नृप कन्या मनुसुता , तव तिय होवहिं श्रेष्ठ ।**
सकल मनोरथ पूर्ण कर सेवा करहिं यथेष्ठ ॥ ११७ ॥

चौ- सुपुत्री नव कन्या जावहिं । ऋषिगण उनते सृष्टि बढ़ावही ॥ १ ॥
सकल करमफल अर्पित मोही । पावहु अंत समय मुझ दोही ॥ २ ॥
समदरसी मुनि जगत कहाहू । निज पर बीच न भेद लखाहू ॥ ३ ॥
अंश कला तव वीरज द्वारा । क्षेत्र तुम्हार धरहुँ अवतारा ॥ ४ ॥
सांख्यशास्त्र का बनूँ प्रचारी । इति कह वचन विदुर बनवारी ॥ ५ ॥
गरड़ पक्ष उच्चारित सामा । बिन्दु सरोवर तज गय धामा ॥ ६ ॥
कर्दम विन्दु सरोवर ऊपर । करत प्रतीक्षा काल विदुर वर ॥ ७ ॥
निज पत्नी सह कन्या साथा । कंचन रथ चढ़िकर मनुनाथा ॥ ८ ॥
विन्दु सरोवर ऊपर आये । कर्दम आश्रम लखि सुत पाये ॥ ९ ॥

दोहा- **सरित सरस्वति वेष्ठित, विन्दु सरोवर स्थान ।**
जँह करदम निज भक्त पर, हो दयार्द्र भगवान ॥११८॥

चौ- त्यागा अश्रु विन्दु जिस भूपर । भयो स्थान वह बिन्दु सरोवर ॥ १ ॥
लता जाल युत तरु समुदाई । सेवित वह रिषि मुनि समुदाई ॥ २ ॥

सुखद द्रुमादि समूह सुहाई । षड्रितुफल वहु कुसुम दिखाई ॥ ३ ॥
हो उन्मत पक्षिगण नाना । नाचत मोर सुनृत्य विधाना ॥ ४ ॥
काक पालिका स्वर मधुगाये । गूँजत भृंगवृन्द मन भाये ॥ ५ ॥
चम्पक आम्र कदंब अशोका । कुंद कुटक मंदार विलोका ॥ ६ ॥
कंज करंज पनसफल भारी । वकुल कुसुम मधु गंध प्रचारी ॥ ७ ॥
जलमुर्ग व सारस हंस चकोरा । बतख काक जल कुस्त कठोरा ॥ ८ ॥
दादुर चक्रवाक् वक सारे । शब्द मनोरम मधुर पुकारे ॥ ६ ॥

दोहा- **शल्लकँ सूकर साँभर, मर्कट मृग वनराज ।**
नील नकुल लंगूर युत, रोझ गोह गजराज ॥ ११६ ॥

चौ- जीव अकेक बीच वन सोही । आश्रम देखि नृपति मन मोही ॥ १ ॥
त्तीर्थ प्रवेश कियो मनु आई । संग तिया निज सुता सुहाई ॥ २ ॥
देखे मुनि आश्रम आसीना । कमल नयनयुत जटिल मलीना ॥ ३ ॥
तप्यमान तप नाति कृशाही । प्रभु निज नयन विलोकेहु याही ॥ ४ ॥
उग्र प्रकाश मान मुख मोही । प्रांशु उटज नृप आवत जोही ॥ ५ ॥
सपदि नृपति तव उठे मुनीशा । समभिनन्ध पुर प्रणत असीसा ॥ ६ ॥
कृत् सत्कृत मुनि प्रभु आदेशा । बोले मनु प्रति वचन विशेसा ॥ ७ ॥
देव तवागम सतजन कारणा । प्रजा सुधारण असत विदारण ॥ ८ ॥

दोहा- **इन्द्र इन्दु वायु यम, धर्म व अगनि प्रचेत ।**
वसत नृपति के देह में, ये सब सूर्य समेत ॥ १२० ॥

चौ- नृपति जगति हरि रूप समाना । धारत प्रभु पालित बलनाना ॥ १ ॥
जो नृप रथ चढ़ि सेन सजाई । करत न महि मंडल विचराई ॥ २ ॥
वर्ण व आश्रम धर्म नसाई । होत न अरि कर अचिर भलाई ॥ ३ ॥
जेहि राज्य नृप चोर लुटेरा । जगत विनाश करत नही वेरा ॥ ४ ॥
सोवत जहँ नृप चोर लुटेरा । जगत विनाश करत नही वेरा ॥ ५ ॥
जो तुम देवहु मोहि आदेशा । सो स्वीकृत सब मुझे नरेशा ॥ ६ ॥
सुनि मुनि वचन मनू मन भाये । बोले पुनि मुनि प्रति हुलसाये ॥ ७ ॥
वेद प्रवर्तन रूचि हिय धारी । निज आनन ब्राह्मण तपकारी ॥ ८ ॥

दोहा- **विद्या छन्द व योगयुत, रचे अलम्पट धात ।**
रक्षा हित निज बाहु ते, सृजे क्षत्रियन गात ॥ १२१ ॥

चौ- विप्र हृदय क्षत्रिप्रभु अंगा । यही हेतु दोउ निकट प्रसंगा ॥ १ ॥

भये दूर संशय सब मोरे । दरसन कर शुभ मुनिवर तोरे ॥ २ ॥
बड़ा भाग्य यह मैं मनमाना । राज धर्म श्री मुख सुनि नाना ॥ ३ ॥
नृपति धर्म की शिक्षा देकर । कियो अनुग्रह यह अति मोपर ॥ ४ ॥
तव पद रज अति पूत मुनीसा । धन्य भयो धर कर निज सीसा ॥ ५ ॥
अब विज्ञापन मम मुख सुनहू । जो तुम जँचे उचित वह करहू ॥ ६ ॥
उत्तान पाद प्रिय व्रत वर अनुजा । सकल गुणालंकृत मम तनुजा ॥ ७ ॥
गुण वय शील अलंकृत मुनिवर । हेरत कुशल सुयोग्य सुखद वर ॥ ८ ॥
नारद मुख तव गुण सुनि नाना । निश्चय तोंहि पाते यह माना ॥ ९ ॥

दोहा- **श्रद्धा युत आनीत यह, मम कन्या मुनिराज ।**
करहु इसे स्वीकार तुम, गृहस्थाश्रम के काज ॥ १२२॥

चौ- आवत लक्ष्मी न तजे विरन्ता । फेरहि पुनि किमु काम प्रयन्ता ॥ १ ॥
प्राप्त अनादर कृपणहि याचे । यश अरु मान न तासू राचे ॥ २ ॥
व्याहु काज रुचि सुनि मुनि तोरी । सो तुम सुता ग्रहण करु मोरी ॥ ३ ॥
बोले कर्दम हे मुनिराई । ब्याह हेतु मम इच्छा पाई ॥ ४ ॥
सो सब सत्य मनोरथ मोरा । मानूँ वचन नृपति यह तोरा ॥ ५ ॥
दोउ अनुरूप उचित यह व्याहू । वैदिक सविधि सह नृप रचवाहू ॥ ६ ॥
ऐसो को जग में नर कोई । घर आवत लक्ष्मी वह खोई ॥ ७ ॥
अंग सुकान्ति विलोकित राया । लज्जित शोभा करत पलाया ॥ ८ ॥
एक बार तव सुता सुहाई । कंटुक निज करतल बिच लाई ॥ ९ ॥

दोहा- **हर्म्य पृष्ट क्रीड़ा करत, पायल पद झनकार ।**
विश्वावसु गंधर्व इस, चंचल नयनि निहार ॥ १२३ ॥

चौ- गिरे विमान अचेतन राई । वही यहँ विनय करत अति आई ॥ १ ॥
अहह जगत बिच कौन अभागा । रमणि रतन जेहि प्रिय नहीं लागा ॥ २ ॥
एक मांग तुमसे नृप मोरी । धारहिं गर्भ सुता यह तोरी ॥ ३ ॥
तब तक रहहूँ सदा इश पासा । तजहूँ बाद गेहाश्रम आसा ॥ ४ ॥
रिण त्रय दूर करत उपरंता । धरि संन्यास भजहूँ भगवन्ता ॥ ५ ॥
मुनि इमि कह कर भये चुपचापा । यह मत देवहूति प्रिय व्यापा ॥ ६ ॥
महिषि कुमारि दोउ की रुचि जानी । कर्दम सम कन्या गुण खानी ॥ ७ ॥
अतीव मुदित विधिवत परणाई । दियो दहेज अतुल नरराई ॥ ८ ॥
नयन नीर नहीं प्रेम अघाई । सह न सकै वह किन्तु जुदाई ॥ ९ ॥

दोहा- आजु पराई तुम भई, यों कह अश्रु वहाय ।
मुनि आज्ञा लेकर मनु, निज रथ गये सिधाय ॥ १२४॥

चौ- भार्या अनुग सहेत नृपाला । तीर सरस्वती लखि मुनि साला ॥ १ ॥
देखत संपद निजपुर आये । सुनी खबर पुरवासिन धाये ॥ २ ॥
आवत प्रजादेखि निज राजा । सन्मुख गये बजावत बाजा ॥ ३ ॥
प्रजा सहित नृप निजपुर आये । पुरी नाम बरहिस्मति गाये ॥ ४ ॥
धूजत अंग सुरोम वराहा । गिरे जहाँ कुश होत अथाहा ॥ ५ ॥
जासु दर्भ ते रिषिवर सारे । निज कर धर असुरादि सँहारे ॥ ६ ॥
यज्ञ रूप हरि को सब पूजत । जासू नाम सुनत अघ धूजत ॥ ७ ॥
कुश अरु कास रचित मनु आसन । स्थित हो पूजत पुरुष पुरातन ॥ ८ ॥
पुर प्रवेश किय तिय सहराई । भोगत भोग अतुल सुखदाई ॥ ९ ॥

दोहा- संगीय मान सतकीरति, सुरगायक सह नार ।
तदपि स्वयं हरिवर कथा, पीवत कर्ण अधार ॥ १२५॥

चौ- भोगत भोग किन्तु हरिमाया । मनु मन कबहुँन करत डिगाया ॥ १ ॥
ध्यावत सुनत रचत हरि कीरति । व्यर्थ दिवस उनके नहीं होवति ॥ २ ॥
कलि केवल हरि कथा अपारा । सुनत तरत भव वारिधि धारा ॥ ३ ॥
एवं कथा प्रसंग नृपाला । युग एक सप्तति बीतेउ काला ॥ ४ ॥
हरि आश्रम पाकर कुरु राई । मानसादि नहीं क्लेश सताई ॥ ५ ॥
पूछे मुनि जब धर्म अपारा । वरणे आदिराज तब सारा ॥ ६ ॥
आदीराज चरित मैं गावा । सुनत अकीरति कबहुँ न पावे ॥ ७ ॥
आदिनृप की कथा जो गावे । सुनत अकीरति कबहुँ न पावा ॥ ८ ॥
कुरुवर पिता गमन उपरन्ता । देवहूति मनु सुता तुरन्ता ॥ ९ ॥

दोहा- शौच व गौरव दम अरू, मधुवाणी अनुसार ।
मनोभाव पति का लखि, सेवा करत अपार ॥ १२६ ॥

चौ- कपट लोभ पद द्वेष तजाई । यथा भवानी भव सेवकाई ॥ १ ॥
सेवा करत काल बहु बीता । एक दिवस वह रिषी पुनीता ॥ २ ॥
व्रताचरण कृश निज तियजानी । कृपा पूर्ण बोले असबानी ॥ ३ ॥
तव सेवा अरु भक्ति लखाई । मैं प्रसन्न तो पर मनुजाई ॥ ४ ॥
निज प्रिय देह मदर्थ न जाना । सुख सुख काहु न तुम पहिचाना ॥ ५ ॥
तप समाधि योग कर पूजन । संपादित कियो प्रसाद मैं भगवन ॥ ६ ॥

मम सेवा तुम कीन्ह अलोभा । भयहू ते मन कबहुँ न क्षोभा ॥ ७ ॥
दिव्य दृष्टि देऊँ मैं तोही । जासे सकल जगत तू जोही ॥ ८ ॥
जो तू धर्म पतिव्रत धारा । सिद्धा होउ सकल संसारा ॥ ९ ॥

दोहा- **पतिव्रत धर्मा चरण में, अरी मानवी धन्य ।**
दुर्लभ सुख अब भोगहू, जो जग मिलहि न अन्य ॥ १२७ ॥

चौ- जब बोले कर्दम इमि बानी । निज पति योग कुशल पहिचानी ॥ १ ॥
निज पति प्रति बोली वह बानी । हास्य विलोक सलज्जित सानी ॥ २ ॥
पति प्रभाव जानूँ मैं तोरा । किन्तु देह अति दुर्बल मोरा ॥ ३ ॥
तव संग रमण स्वामि मन चाहू । रति समर्थ मम देह न याहू ॥ ४ ॥
नाथ उपाय करहु तुम ऐसो । रमण हेतु मम तनु हो जैसो ॥ ५ ॥
क्रीड़ा योग्य भवन निर्माना । करहु नाथ सुन्दर सुखदाना ॥ ६ ॥
विदुर प्रिया के प्रियहित यतिवर । रचा विमान योगबल सुन्दर ॥ ७ ॥
कामग सर्व मनोरथ कारी । मणियुत स्तंभ सदा सुखकारी ॥ ८ ॥
अद्भुत ध्वजा पताक अलंकृत । पुष्प अनेक पट्टपट राजत ॥ ९ ॥

दोहा- **खंड अनेक सुसज्जित, शय्या व्जयन अपार ।**
मरकत स्थलि विद्रुम मणि, वेदी रचित सुतार ॥ १२८॥

चौ- द्वार देहली विद्रुम निर्मित । खचित सुवज्र कपाट सुशोभित ॥ १ ॥
वज्रभीति विचित्र बिताना । तोरण हेम मनोहर नाना ॥ २ ॥
कृत्रिम हंस कपोत सुहाना । सम सजीव जो इत उत नाना ॥ ३ ॥
लखि सजाति बहु हंस कपोता । आवत गूँज करत जिमि होता ॥ ४ ॥
क्रीड़ास्थली शयन गृह आंगन । चौक व बैठक परम सुहावन ॥ ५ ॥
जेहि हेतु वह स्वयं विमाना । विस्मित करत सुकरदम नाना ॥ ६ ॥
देख मानवी सुन्दर गेहा । निज तनु कृश लखि मन नहीं नेहा ॥ ७ ॥
मनोभाव निज तिय पहिचानी । बोले वचन मुनीश्वर ज्ञानी ॥ ८ ॥
बिन्दु सरोवर कर तुम स्नाना । भीरु चढहु पुनि परम विमाना ॥ ९ ॥

दोहा- **मलिन वस्त्र युत मानवी, धूलि कीट सिर केश ।**
मलिनाङ्गी वह कृशस्तनी, पति के सुनि आदेश॥१२९॥

चौ- बिन्दु सरोवर बीच प्रदेशा । स्नान हेतु वह कियो प्रवेशा ॥ १ ॥
षोडस वय तनु गंध सुहाई । सन्मुख कन्या सहस दिखाई ॥ २ ॥
हाथ जोरि सब गिरा उचारी । हम चेरि मनुसुता तुम्हारी ॥ ३ ॥

इस प्रकार कह वह सब दासी । मर्दन करत तैल तनु रासी ॥ ४ ॥
निर्मल जल बिच स्नान कराया । भूषण अमोल युत पट पहराया ॥ ५ ॥
व्यंजन मधुर अनेक खिलावा । अमृत सम पय पान करावा ॥ ६ ॥
पुनि दर्पण तनु लखि मनु बाला । कुसुम अनेक गंधयुत माला ॥ ७ ॥
स्वच्छ वस्त्र तनु निर्मल सोहा । देखि रूप मुनि मानस मोहा ॥ ८ ॥
वे श्रृंगार माङ्गलिक चेरी । करत हासयुत मुदित घनेरी ॥ ९ ॥

दोहा- **अंग अंग आभूषण, सजा दियो वह चेरि ।**
स्नान करायो सीसते, तनिक न कीन्हि देरि ॥ १३० ॥

चौ- गले हार कंकन कर सोही । हेम नुपुर सोभित पद दोही ॥ १ ॥
कटी करधनी कंचन धारी । मणि अमोल गल हार सुखारी ॥ २ ॥
सुन्दर दन्त मनोहर आनन । भ्रुव कटाक्षमय पंकज नयनन ॥ ३ ॥
नील कुलक अवलि अति सुन्दर । मंगल द्रव्य सुसज्जित तियवर ॥ ४ ॥
निज प्रतिबिम्ब देखि वह दरपण । कियो याद निज प्रिय पति सुमिरण ॥ ५ ॥
तब निज सहचरि सहित लखाई । आये करदम वहँ रिषि राई ॥ ६ ॥
तेहि समय स्त्री सहस सहेता । प्राणनाथ सन्मुख लखि सेता ॥ ७ ॥
पति प्रभाव देखि मनुबाला । देवहूति विस्मित तेहि काला ॥ ८ ॥
कृत मंगल स्नान सुशोभित सारी । स्तनी रुचिर वक्षस्थल धारी ॥ ९ ॥

दोहा- **सेव्य मान विद्याधरी, निज तिय सहित विमान ।**
चढै मुनिश्वर करदम, पाछे विदुर सुजान ॥ १३१॥

चौ- कर्दम दासिन तिय सह याना । सोभित अम्बर चन्द्र समाना ॥ १ ॥
कुमुद फूल श्रृंगार सजाई । गुरुता न तिया अनुरक्त नसाई ॥ २ ॥
कियो वास बहुकाल विमाना । करत विहार वे धनद समाना ॥ ३ ॥
सीतल मंद सुगंध बयारी । चलत मेरु गिरि घाटि सुखारी ॥ ४ ॥
वैश्रृंभक सुरसन नन्दन बागा । पुष्प भद्र मानस स्मर जागा ॥ ५ ॥
स्वर्ग नदी स्वर लोक सुउतरत । मंगल ध्वनी निरन्तर गूंजत ॥ ६ ॥
नेक अनेक देवगण नारी । सेवित सिद्ध समूह अपारी ॥ ७ ॥
कामग यान विमानिक लाँघत । लोक अनेक वायुसम विचरत ॥ ८ ॥
प्रभुपद आश्रित होवत जोई । दुर्लभ तेहि वस्तु नहीं कोई ॥ ९ ॥

दोहा- **सकल व्यसन तजकर, नर प्रभुपद हो आधीन ।**
मिलहिं वस्तुत्रय लोक की, गावत सकल प्रवीन ॥१३२॥

चौ- सब महि मंडल निज तिय हेतू। इत्थं सकल दिखा मुनि केतू॥ १॥
पाछे निज आश्रम वे आये। तिया संग बहु वरिस बिताये॥ २॥
निज रेतस नवधा मुनिराई। धारण किये उदर मनु जाई॥ ३॥
रति सुख उत्सुक मनु कुमारी। बहुत बरस गत करत बिहारी॥ ४॥
किन्तु समय युग घटी समाना। बीताकाल गया नहीं जाना॥ ५॥
रमण करत शत वरिष व्यतीता। तब निज रेतस मुनी पुनीता॥ ६॥
नवधा तीय उदर किय धारन। सब संकल्प सिद्धि के कारन॥ ७॥
देवहूति नव कन्या जाई। एक साथ सुन्दर सुखदाई॥ ८॥
चारु अंग तनु उत्पल गंधा। भयो जासु सब जगत प्रबन्धा॥ ९॥

दोहा- **देवहूति ने एक दिन निज प्रण के अनुसार।**
जावत देखे निज पति सन्यासाश्रम धार॥ १३३॥

चौ- बाहर विस्मय अन्तरन्याकुल। होय अधोमुखि नैनन भर जल॥ १॥
बोली पति से हे मुनिराया। कियो नाथ प्रण कर दिखलाया॥ २॥
रहूँ नाथ शरणागत तोरी। रक्षा यहाँ करहीं को मोरी॥ ३॥
जब तुम चले जाहु बन नाथा। सुता अनाथ ब्याहूँ किन साथा॥ ४॥
विषय प्रसंग बहुकाल बितावा। जाना नहिं मैं तोर प्रभावा॥ ५॥
मैं यह कर्म उचित नहीं कीन्हा। अमृत त्याग गरल कर लीन्हा॥ ६॥
तव समान पति पाकर नारी। पात पदारथ जग बिच चारी॥ ७॥
तोर समाना पाय पतिनाथा। मुक्ति उपाय लियो नहीं हाथा॥ ८॥
प्रभु माया ते वञ्चित होई। विषय मार्ग वय व्यर्थ बिगोई॥ ९॥

दोहा- **धर्म ज्ञान वैराग्य तप, अरु सेवा भगवान।**
होन पतन जिस मनुज का, जीवन मृतक समान॥१३४॥

चौ- जब व्याकुल निज तिया लखाई। सुमिर कथन प्रभु तब॥ १॥
देवहूति प्रति गिरा उचारी। होउ दुखित मति राजकुमारी॥ २॥
गर्भ तुम्हार आसु भगवाना। प्रकटहिं जगत करहिं कल्याना॥ ३॥
करहु प्रेमते ईश्वर सुमिरन। तप सह दान व वश कर निजमन॥ ४॥
हृदय ग्रन्थि तव भेदहि सोही। दीन बन्धु सुखदायक सोही॥ ५॥
देवहूति निज पति सुनवानी। भजत प्रेम ते शारंगपाणी॥ ६॥
समय पाय पुनि वे भगवाना। यज्ञ काष्ठ बिच अग्नि समाना॥ ७॥
प्रकटे देवहूति घर आये। कर्दम वीरज आश्रय पाये॥ ८॥

वाद्य यंत्र समघन नभ गरजत । गंधर्व अप्सरा गण सब नाचत ॥ ८ ॥

सोरठा- **सब सुर कर जयकार, सुमन वृष्टि स्वर ते करे ।**
सीतल मंद बयार चलत मुदित दसहूँ दिशा ॥ ६ ॥

चौ- विन्दु सरोवर करदम आश्रम । सुरसति सरित सुबहति मनोरम ॥ १ ॥
दरसन साँख्य प्रचारक जानी । आवत धात संग मुनिज्ञानी ॥ २ ॥
करदम प्रति विधि वचन सुनाये । बोले सुतमम वचन सुहाये ॥ ३ ॥
धारण किये प्रेम से तेने । भाये मुनिवर वह सब मैंने ॥ ४ ॥
पुत्र धरम यहि बड़ मुनिराया । पिता वचन नही नटे नटाया ॥ ५ ॥
नव कन्या यह रही तुम्हारी । अर्पित करहु रिषिन इन सारी ॥ ६ ॥
इनते सर्ग अनेक सुबढ़हीं। जासे तव यश जग विस्तरहीं ॥ ७ ॥
आदि पुरुष नारायण राया । कपिल स्वरूप प्रकट यहँ आया ॥ ८ ॥
ज्ञान विज्ञान सुयोग प्रकारा । छेदहिं काम भावना सारा ॥ ६ ॥

दोहा- **अरी मानवी जठर ते, प्रकटे कपिल सुजान ।**
संशय ग्रन्थी मोह तव, छेदहिं ये भगवान ॥ १३५ ॥

चौ- सांख्याचार्य इन्हें जग गावे । सिद्धसमूहप यह पद पावे ॥ १ ॥
कीरति कपिल बढावहि तोरी । उक्ति असत्य कबहुँ नहीं मोरी ॥ २ ॥
बाद कुमार देवरिषि साथा । सत्य लोक गवने सुरनाथा ॥ ३ ॥
ब्रह्मा गमन बाद मुनि करदम । सब रिषि बुलवाये निज आश्रम ॥ ४ ॥
कला मरीचि हेतु निज कन्या । अत्रि हेतु अनुसूया धन्या ॥ ५ ॥
रिषि पुलस्त्य हितु हविभुल दीन्ही । पुलह आय गति निजकर लीन्ही ॥ ६ ॥
श्रृद्धा आङ्गीरस हित दीन्ही । ख्याति भृगु कृतु क्रिया अधीनी ॥ ७ ॥
मुनि वशिष्ठ अरुन्धति व्याही । शान्ति अथर्णव हेतु विवाही ॥ ८ ॥
कर विवाह मुदित मन भयहू । अतुलित धन कन्या हित दियहू ॥ ६ ॥

दोहा- **करदम आज्ञा सीस धर, निज तिय संग लिवाय ।**
चले मुनीश्वर सकल निज, आश्रम पहुँचे आय ॥१३६॥

चौ- मम गृह आये प्रभु अवतारी । करदम निज मन करत विचारी ॥ १ ॥
एकान्त जाय मुंनि कियो प्रनामा । बोले वचन सुनहू सुख धामा ॥ २ ॥
निज पातक ते जल संसारी । पावत दुःख जगत अति भारी ॥ ३ ॥
ज़न्म कोटि नर यतन कराही । तदपि नाथ दरसन नहीं पाही ॥ ४ ॥
योगी योग समाधि लगाई । दर्शन तुव हित करत उपाई ॥ ५ ॥

प्रियजन रक्षक वे भगवाना । विषयी जन अपराध न जाना ॥ ६ ॥
गेह मोर निज वचन प्रमाना । आये तुम प्रभु निज जन जाना ॥ ७ ॥
रूप अनूप भक्त प्रियकरी । धावत ज्ञानी शरण तुम्हारी ॥ ८ ॥
प्रकृति पुरुष परमेश्वर हेतू । वन्दन करूँ कपिल भवसेतू ॥ ९ ॥

दोहा- **पूर्ण मनोरथ ते पद, निज मन मानस धार ।**
सुमिरन निशिदिन मैं करूँ, गृह आसक्तिन मार ॥१३७॥

चौ- सुनि मुनि वचन कहे भगवाना । कथन उचित मु जो तुम ठाना ॥ १ ॥
प्रथम कही तुमसे मैं बाता । आयऊँ सत्य करन वह ताता ॥ २ ॥
जगविच तत्व प्रकाशन हेतु । लियो जनम ते घर मुनि केतु ॥ ३ ॥
ज्ञान मार्ग यह काल नसावा । यही हेतु मुनि मैं यहँ आवा ॥ ४ ॥
सुख पूर्वक अब तुम वन जाहू । भजहु मोक्ष हित देर न लाहू ॥ ५ ॥
आत्मा बीच लखो मम रूपा । पावहु अन्त मोक्ष मुनि भूपा ॥ ६ ॥
आत्म ज्ञान यह माता कारन । मोक्ष हेतु सब करूँ उचारन ॥ ७ ॥
ज्ञान विशाल श्रवन कर माता । उतरहिं भवसागर ते ताता ॥ ८ ॥
उक्ति कपिल की सुन मुनिराई । कर प्रदक्षिणा विपिन सिधाई ॥ ९ ॥

दोहा- **अहिंसामय संन्यास धर, रागद्वेष से हीन ।**
शरण गये भगवान की, करदम ऋषी प्रवीन ॥ १३८ ॥

चौ- अग्नि और आश्रम सब त्यागे । हो निसंग भू विचरण लागे ॥ १ ॥
कारज कारण रहे अतीता । निरगुण सगुण समा गोतीता ॥ २ ॥
प्रेम भक्ति करि सन्मुख आवा । परम ब्रह्म बिच चित्त लगावा ॥ ३ ॥
सुख अरु दुःख व ममता माया । अहंकार सब दूर भगाया ॥ ४ ॥
सर्वत्र एक पर ब्रह्म लखाई । हीन तरंग सिन्धु समताई ॥ ५ ॥
परम सुभगति भाव के द्वारा । हरि पद पंकज निजचित धारा ॥ ६ ॥
भये मुक्त सब बन्ध तजाई । सब प्राणिन निजजीव लखाई ॥ ७ ॥
इच्छा राग द्वेष ते हीना । सम बुद्धि सह भक्ति अधीना ॥ ८ ॥
पाछे वे करदम मुनिराई । आवा काल मोक्ष पद पाई ॥ ९ ॥

दोहा- **शौनकादि कहने लगे, कपिल देव भगवान ।**
निज माता के कारने, प्रकटायो जो ज्ञान ॥ १३९ ॥

चौ- योगीराज कपिल सुनि गाथा । तृप्त भये नहीं हम मुनि नाथा ॥ १ ॥
जेजे करम किये भगवाना । वे सब वरणहु सूत सुजाना ॥ २ ॥

शौनक वचन सूत सुन काना । वरणन लगे चरित मुनि पाना ॥ ३ ॥
पिता अरण्य गये उपरंता । कपिल मातु प्रिय काज तुरंता ॥ ४ ॥
विन्दु सरोवर बीच निवासी । मातु संग प्रभु वे सुखराशी ॥ ५ ॥
एक समय प्रभु कपिल समीपा । सुमिर वचन विधि मा मुनिभूपा ॥ ६ ॥
तत्वज्ञान पूछन वह लागी । इन्द्रिय विषय वासना त्यागी ॥ ७ ॥
ब्रह्मन दुष्ट इन्द्रियन श्रान्ता । जासु अन्धतम यह नर पाता ॥ ८ ॥
पार उतारक अन्ध तमारी । प्रकटे चक्षुरूप सुखकारी ॥ ९ ॥

दोहा- **अहंभाव इस देह में, होत दुराग्रह नाथ ।**
हरहु सकल करुणायतन, निज दल वल के साथ ॥१४०॥

चौ- प्रकृति और पुरुष जिज्ञासा । भई मोर मन हे प्रभु खासा ॥ १ ॥
आई शरण तोर मैं भगवन । करूँ वन्दना पुरुष पुरातन ॥ २ ॥
मानव मोक्ष बढ़ावन हारे । निज माता जव वचन उचारे ॥ ३ ॥
बोले वचन कपिल भगवाना । सुनो ज्ञान यह गूढ़ महाना ॥ ४ ॥
निष्ट स्वकीय योग सुख दाया । मुनिन हेतु मैं प्रथम सुनाया ॥ ५ ॥
वही ज्ञान बतलाअहुँ माता । सुनकर जासु मोक्ष नर पाता ॥ ६ ॥
अहो पुरुष चित विषय अधीना । बन्धन पात जगत लवलीना ॥ ७ ॥
मम तव भाव य होत नसाई । काम लोभ मल दूर भगाई ॥ ८ ॥
सुख दुःख त्यागहिं जब मन माता । तव समानता सव विधिपाता ॥ ९ ॥

दोहा- **भक्ति व ज्ञान विराग युत, जब यह मन हो जाय ।**
आत्मा अरु इस प्रकृति का, दृष्टा यह कहलाय ॥ १४१॥

चौ- भक्ति विना नर जनम वृथाही । प्रभुपद कमल कदापि न पाही ॥ १ ॥
कवि कोविद ऋषि अरु मुनि ज्ञानी । आसति संग वन्ध सम मानी ॥ २ ॥
सत संगति संतन की करिके । मोक्ष द्वार जावत नर हरिके ॥ ३ ॥
लक्षण संतन कर अस होही । शत्रु व मित्र परस्पर जोही ॥ ४ ॥
रहहिं दीन ऊपर अतिदाया । सदा लीन मम भक्ति उपाया ॥ ५ ॥
सहज शील अरु सहज स्वभाऊ । करहिं मान सज्जन चित लाऊ ॥ ६ ॥
मम हित तजहिं स्वजन निज भाई । सुनहिं कथा मम चित लगाई ॥ ७ ॥
अपर हेतु मम कथा सुनाई । हरहिं ताप त्रय अघ समुदाई ॥ ८ ॥
संत असंत संग नही रहही । जिमि रवि निशा साथ नहीं चलहीं ॥ ९ ॥
संतानन मम कथा सुपावन । सुनत होत रति भक्ति सुहावन ॥ १० ॥

दोहा- **मम लीला चिन्तन करत, होत विरक्त सुसन्त ।**
भक्ति व योग उपाय से, पावत इच्छित अन्त ॥ १४२॥

चौ- भक्ति व ज्ञान विराग सयोगा । येहि देह पावहिं मोहिं लोगा ॥ १ ॥
देवहूति बोली सुनि वानी । उचित भगति कर कहऊ निसानी ॥ २ ॥
पावहुँ जासु रूप प्रभु तोरा । साङ्ख्योग कर कहु सब ब्योरा ॥ ३ ॥
मैं अबला जिमि बिन श्रम जानू । करहु "कृपाकर" सकल बखानू ॥ ४ ॥
रिषिवर कहे सुनहु कुरुराया । मात प्रयोजन लखि मन भाया ॥ ५ ॥
जात सनेह कपिल मुनिराया । साँख्य व भक्ति वितानिति गाया ॥ ६ ॥
तजि जग विषय इन्द्रियाँ सारी । हरि पद कमल बीच रहे जारी ॥ ७ ॥
भक्ति श्रेष्ठ वहि सुनु तुम माई । भकुति समान मुकति नहीं गाई ॥ ८ ॥
जठर वह्नि जिमि अन्न पचावे । लिंग देह यह भकति नसावे ॥ ९ ॥

दोहा- **मम पद सेवा अभिरत, करत मुकति नहि चाह।**
मिलहि परस्पर भक्त ये, करत गान मम राह ॥ १४३ ॥

चौ- संत लखहिं मम रूचिर स्वरूपा । बोलहिं वचन सप्रेम अनूपा ॥ १ ॥
सुन्दर अंग प्रत्यंग सहेता । हास विलास मनोहर चेता ॥ २ ॥
इच्छाहीन संत जग जेते । पावत भकति मुकति मो सेते ॥ ३ ॥
अष्टसिद्धि वे संतन चाहत । हरिधाम इच्छा नहीं भावत ॥ ४ ॥
किन्तु धाम जब वे मम जाही । पात विभूति सकल मनचाही ॥ ५ ॥
प्रेमभावते हरि पद भजता । कालचक्र मम उन नहीं ग्रसता ॥ ६ ॥
स्त्री अरु पुत्र द्रव्य पशु गेहा । त्यागत भक्त लोक सब स्नेहा ॥ ७ ॥
करत सुभजन संत मम माता । मृत्युपाश ते ना दुख पाता ॥ ८ ॥
प्रकृति और पुरुष का स्वामी । मैं सर्वात्मा अन्तरयामी ॥ ९ ॥

दोहा- **मृत्यु रूप डर का नही, होत न मुझ बिन अंत ।**
मम पद तज अन्यत्र कहीं, मानत भय नहीं संत ॥१४४॥

चौ- चलत वायु मम भय से माता । मम भय भानु प्रकाश प्रदाता ॥ १ ॥
मम भय मेघ नीर बरसाता । मम भय मानि अगन जल जाता ॥ २ ॥
मम भय मृत्यु करत निज काजा । धरत भूमि मम भय अहि राजा ॥ ३ ॥
शान्ति हेतु योगीजन सारे । भकति व ज्ञान विराग सहारे ॥ ४ ॥
करत सुचरण कमल मम पूजा । सुन्दर मार्ग यही नहि दूजा ॥ ५ ॥
लक्षण तत्व व मोक्षद ज्ञाना । करूँ कथन अब सब विधि नाना ॥ ६ ॥

जासु जानि नर छूटहिं माता । गुण प्राकृत नही तेहि सताता ॥ ७ ॥
अनादि पुरुष यह निर्गुन माता । प्रकृति परे जो विश्व जगाता ॥ ८ ॥
वही पुरुष निज गुण मयि लीला । स्वीकृत करत प्रकृति मति शीला ॥ ९ ॥

दोहा- **गुण द्वारा अद्भुत प्रजा, रचना कर करतार ।**
भूलत अपने रूप को, लखि प्राकृत संसार ॥१४५॥क
प्रकृति गुणों द्वारा जभी, होत करम में लीन ।
कर्तापन अभिमान को, मानत मात प्रवीन ॥१४५॥ख

चौ- बन्धन भव माया कृत येही । पारतंत्रता बुध कहे तेही ॥ १ ॥
देहेन्द्रिय सुरवर्ग निमित्ता । मानत प्रकृति तेहि सब संता ॥ २ ॥
प्रकृति परे स्वाभाविक होही । सुख दुख भोग निमित नर सोही ॥ ३ ॥
बोली देवहूति जग कारण । प्रकृति पुरुष का कहु प्रभु लक्षण ॥ ४ ॥
सुनकर मातु वचन भगवाना । बोले कपिलदेव गुणवाना ॥ ५ ॥
त्रिगुण अव्यक्त व नित्य सदासत । प्रकृति प्रधान तेहि सब मानत ॥ ६ ॥
विंशति चारि तत्व हो जासू । सगुण ब्रह्म स्थान जनु तासू ॥ ७ ॥
विषय सभूत इन्द्रियाँ सारी । मन बुद्धि चित अरु हंकारी ॥ ८ ॥
तत्व विंशति चार ये जानो । एक काल पच्चीस बखानो ॥ ९ ॥

दोहा- **अमर कहत भगवान का, विक्रम काल प्रमान ।**
जासु जीव यह निशि दिवस, होवत भीत महान ॥१४६॥

चौ- होत प्रेरणा मानवि जाकी । प्रकृति बीच गति होवत याकी ॥ १ ॥
सो भगवान काल कहलावा । मानवि संत लोग इमि गावा ॥ २ ॥
बाहर कालरूप हिय जीवा । करत वास प्रभु करुणा सींवा ॥ ३ ॥
प्राप्त क्षोभ निज माया अन्दर । धरत वीर्य वह जब अखिलेश्वर ॥ ४ ॥
प्रकट करत प्रकृति तब माता । तेजपुंज महतत्व सुहाता ॥ ५ ॥
महत्तत्व जग हित निज लीना । पीवत अन्ध प्रलय कालीना ॥ ६ ॥
स्वच्छ शान्त गुणसत्व सहेता । प्रभु उपलब्धि स्थान जनु चेता ॥ ७ ॥
वासुदेव महतत्व समाना । भूत रूप बिच जानु महाना ॥ ८ ॥
अध्यात्म रूप बिच चित्त बताया । भेद उपास्य कृष्ण यह गाया ॥ ९ ॥

दोहा- **वैकारिक महतत्व ते, त्रिविध भयो अहँकार ।**
सात्विक राजस तामस, गावत सब संसार ॥ १४७ ॥

चौ- भूत व मन इन्द्रिय समुदाई । अहंकार ते प्रकट बताई ॥ १ ॥

इन्द्रिय भूत मनोभय माता। नाम अनन्त शास्त्र बतलाता ॥ २ ॥
सात्विक अहंकार मन जायो। संकल्प विकल्प वृत्ति जिन गायो ॥ ३ ॥
मन ततु इन्द्रिय ईश्वर माता। सब अनिरुद्ध नाभ ते गाता ॥ ४ ॥
तत्व बुद्धि राजस ते आई। संशय निश्चय स्मृति जिन जाई ॥ ५ ॥
राजस ते दश इन्द्रिय जाई। कर्म ज्ञान दो भेद कहाई ॥ ६ ॥
कर्म प्राण शक्ति मति ज्ञाना। तामस शब्द मात्र नभ माना ॥ ७ ॥
वक्ता ज्ञान व अर्थ प्रकाशक। सूक्ष्म शब्द लक्षण श्रुति ग्राहक ॥ ८ ॥
अवकाश भूत दाता बहि बाहर। करत निवास सदा यह हितकर ॥ ९ ॥

दोहा- **इन्द्रिय प्राण मनाश्रय, ये नभ वृत्ति जानु।**
शब्द मात्र नभ तत्व ते, वायु स्पर्शयुत मानु ॥ १४८ ॥

चौ- ऊष्ण शीत अरु मृदु कठिनाई। स्पर्श ते जान परत मनुजाई ॥ १ ॥
तरु शाखादिक चालन हालन। योग वियोग तृणादिक कारन ॥ २ ॥
गंध घ्राण प्रतियोग संयोगा। मरुत तत्व यह करत प्रयोगा ॥ ३ ॥
कान्ति रूप मात्र भई वाता। द्रव्याकृति गुणता स्थिति जाता ॥ ४ ॥
घोतन पचन व शीत नसाई। शोषण द्रव्य वृत्ति जसु गाई ॥ ५ ॥
विकृत स्वरूप तेज रस पानी। रस ग्राही जिह्वा जसु आनी ॥ ६ ॥
मधुर तिक्त कटु अमल कषाया। भौक्तिक विकृत एक रस जाया ॥ ७ ॥
क्लेदन पिंडन तृप्ति प्रदाता। निवृति तृषादि वृत्ति जल जाता ॥ ८ ॥
रस जल बीच विकृत जब आता। गंध भूमि घ्राणेन्द्रिय जाता ॥ ९ ॥

दोहा- **द्रव्य भेद ते गंध में, होत अनेकों भेद।**
मिश्रित गंध सुगंध मृदु, अम्ल व तीव्र प्रसेद ॥ १४९ ॥

चौ- प्रतिमादि रूप सगुण प्रभु भावा। आश्रय भूत भूमिगुण गावा ॥ १ ॥
श्रोत्र अकाश स्पर्श गुण वाता। तेजस चक्षु जीह जल जाता ॥ २ ॥
भूमि विशेष घ्राण गुण जाता। पंच तत्व उत्पत इमि माता ॥ ३ ॥
नभ गुण विधुकर वात व काला। तेज नीर श्रुति महिशर जाला ॥ ४ ॥
महदादिक तत्व अमेलित माई। कर न सकै ब्रह्मांड रचाई ॥ ५ ॥
सत्वादि काल अदृष्ट सहेता। कियो प्रवेश तबै जग केता ॥ ६ ॥
प्रभु प्रवेश तत्व जब क्षोत्रित। उठत अचेतन अंड जगत हित ॥ ७ ॥
भगवत स्वरूप यहि लोक वितानू। क्रम वृद्ध दशोत्तर नीर कृशानु ॥ ८ ॥
वात अकाश और अहँकारा। घेरित षद् आवरण प्रकारा ॥ ९ ॥

दोहा- **निकसि अंड ते वह नर, पुनि कियो अंड प्रवेश ।**
कियो छिद्र उस पुरुष ने, पुनि उस अंड प्रदेश ॥ १५० ॥

चौ- पुरुष विराट प्रथम मुख आया । वचन समेत अनल जिन जाया ॥ १ ॥
कियउ छिद्र दूसर सुन माता । इन्द्रिय घ्राण वायु सह जाता ॥ २ ॥
दर्शन हेतु नेत्र दो जाये । सूर्यदेव चक्षेन्द्रिय गाये ॥ ३ ॥
श्रवण हेतु करण दो जाया । दिशा सहित श्रोत्रेन्द्रिय गाया ॥ ४ ॥
भई विराट त्वचा तनु माता । रोमकेश सह औषधि जाता ॥ ५ ॥
बाद विराट लिङ्ग तनु जाया । वीरज नीर जासु प्रकटाया ॥ ६ ॥
मल त्याग हेतु गुदा निरमानी । वायु अपान मौत उस आनी ॥ ७ ॥
बाद विराट दोउ कर जाये । इन्द्र प्रवेश सवल तनु पाये ॥ ८ ॥
बाद विराट चरण युग जाये । सगति प्रवेश विष्णु कर पाये ॥ ९ ॥

सोरठा- **रूधिर सरित ले साथ, तनु विराट नाड़ी भई ।**
प्यास सुधा जल नाथ, सहित उदर पुनि प्रकटत ॥ १०॥

चौ- सिन्धु संग ले भूख पिपासा । उदर विराट बीच किय वासा ॥ १ ॥
बाद विराट हृदय सुन माई । मन मति अहंकार जी पाई ॥ २ ॥
चन्द्र ब्रह्म शिव अरु जीवात्मा । आत विराट हृदय निज कामा ॥ ३ ॥
देव सकल मिल करत अगाई । किन्तु विराट न उठे उठाई ॥ ४ ॥
बाद विराट उठावन कारन । निज निज छेदहिं गये जगावन ॥ ५ ॥
अनल वाणि मुख किये प्रवेसा । तदपि उठे न विराट प्रदेशा ॥ ६ ॥
वात घ्राण सह प्रविसेउ नासा । किन्तु विराट न उठे जरासा ॥ ७ ॥
चक्षु भानु सह नयन सिधाये । तदपि विराट न उठे उठाये ॥ ८ ॥
दिशा श्रोत्र सह कानन आये । तदपि विराट न उठे उठाये ॥ ९ ॥

दोहा- **रोम औषधी चर्म विच, जल रेतस सह शिश्न ।**
मृत्यु साथ अपान ले, गुद विच आवत भिन्न ॥ १५१॥

चौ- बल सह इन्द्र हस्त विच आये । गति सह विष्णु चरण सिधाये ॥ १ ॥
रक्त संग ले सरिता सारी । आत विराट पुरुष की नारी ॥ २ ॥
क्षुधा प्यास संग ले सागर । आत विराट पुरुष उदरागर ॥ ३ ॥
मन सह चन्द्र हृदय विच आये । तदपि विराट न उठत उठाये ॥ ४ ॥
हृदय बीच बुद्धि सह धाता । तदपि विराट उठत नहीं माता ॥ ५ ॥
अहँकार सह शिव उर आये । तदपि विराट न जगे जगाये ॥ ६ ॥

क्षेत्रज्ञ जीव सह उर जब आये । उठत विराट नीर अलसाये ॥ ७ ॥
मन मति प्राण इन्द्रियाँ माई । क्षेत्रज्ञ हीन नहीं सके जगाई ॥ ८ ॥
भक्ति विराग ज्ञान सहमाता । क्षेत्रज्ञ रूप हरेहु निज गाता ॥ ९ ॥

दोहा- **अविकार प्राप्त जब पुरुष मा, प्रकृति बीच आसीन ।**
सुख दुख गुण में लिप्त ना, रवि जल सम नहीं लीन ॥१५२॥

चौ- प्राप्त विकार पुरुष जब माई । प्राकृत गुण विच लगन लगाई ॥ १ ॥
कर्तापन जब हो अभिमाना । जगत चक्र विच करत पयाना ॥ २ ॥
प्रकृति प्रसंग कर्म निज दोषा । पात पक्षि सुर नर पशु कोषा ॥ ३ ॥
अनुपस्थित अरथ तदपि सुनु माई । आवागमन नहीं जीव नसाई ॥ ४ ॥
संत समाज कुमारग तजहीं । भकति विराग चित्तवश करहीं ॥ ५ ॥
यम दम योग पंथ हरि पूजन । श्रवण करत मम कथा सुहावन ॥ ६ ॥
सकल भूत निज तनु सम लखहीं । करत अवैर असत संग तजहीं ॥ ७ ॥
मौन व ब्रह्मचर्य व्रतधारी । बनत धरम वश सब उपकारी ॥ ८ ॥
लाभ अनिच्छ तुष्ट मित भोजन । करुणा शान्ति स निर्जन सेवन ॥ ९ ॥

दोहा- **त्यागत सच्चे संतजन, देह गेह आसक्ति ।**
जागृतादि से निवृत्त हो, करत सदा मम भक्ति ॥१५३॥

चौ- देखत शुद्ध य ब्रह्म स्वरूपा । अम्बर बीच यथा दिन भूपा ॥ १ ॥
होय उपाधि रहित वे संता । पूर्ण ब्रह्मपद पावत अंता ॥ २ ॥
जिमि जलस्थ दिनकर प्रतिबिम्बा । भीति आदि पर हो अवलम्बा ॥ ३ ॥
निज अभास मेल वह माता । अम्बर बीच लखा वह जाता ॥ ४ ॥
अरु जलस्थ प्रतिबिम्ब अकासा । होवत सूरज कर आभासा ॥ ५ ॥
त्रिविध अहंकार यह माता । मनेन्द्रिय देह झलक जनि जाता ॥ ६ ॥
पुनि प्रभु झलक युक्त अहँकारा । होत ज्ञान उस ब्रह्म अपारा ॥ ७ ॥
संत सुसुप्ति समय शब्दादिक । सूक्ष्मभूत इन्द्रियाँ मनादिक ॥ ८ ॥
अव्याकृत बीच होत लवलीना । रहत किन्तु नहीं इन आधीना ॥ ९ ॥

दोहा- **अहँकार के नाशते, भ्रमवश अपना अंत ।**
मानत अपने मन विषे, इस प्रकार जब संत ॥ १५४ ॥

चौ- नष्ट द्रव्य मानव जिमि माता । विवश नष्टवत निज तनु पाता ॥ १ ॥
यह सब बात मनन कर माता । आत्मानुमान करहु निजगाता ॥ २ ॥
बोली देवहूति गुणखानी । सुनि प्रभु कपिल देव मुख वानी ॥ ३ ॥

प्रकृति पुरुष नहीं प्रभु अलगाई । अन्योन्याश्रय रहत गुँसाई ॥ ४ ॥
यथा गंध अवनी अनुबन्धा । एवं प्रकृति पुरुष सम्बन्धा ॥ ५ ॥
कर्ता कर्म बन्ध जो पाता । गुण प्रकृति द्वारा वह आता ॥ ६ ॥
तत्व विचार करे नर कोई । जग बन्धन सब दूर बिगोई ॥ ७ ॥
किन्तु जगत से हो भयभीता । वापिस मरत फेर किमि रीता ॥ ८ ॥

दोहा- **निष्काम धर्म अति भकति से, योग व ज्ञान विराग ।**
इन उपकरणों से प्रकृति, तजहिं पुरुष का लाग ॥~~१५६~~॥ १५५

चौ- यथा अगनि अरणी से आवे । समय पाय तेहि अगनि नसाये ॥ १ ॥
नित प्रति दोष अनेकों दीखत । प्रकृति भुक्त भोगा इमि नासत ॥ २ ॥
मम महिमा स्थित नर यदि कोई । प्रकृति प्रभाव न व्यापत तोई ॥ ३ ॥
सुप्त पुरुष निद्रा के कारण । करत अनर्थ स्वप्न विच धारण ॥ ४ ॥
जागृत स्वप्न होत नहीं मोहा । विदित तत्व इमि मम मन जोहा ॥ ५ ॥
विदित आत्मतत्व मम माता । जात विराग मोक्ष पद पाता ॥ ६ ॥
जहाँ जाय वापिस नहीं आवे । पहुँच मृत्यु वहँ कबहुँ न पावे ॥ ७ ॥
अब लक्षण योग कहुँ मनु जाई । बीज अबीज द्विविध कहलाई ॥ ८ ॥
योग अबीज कठिन अति माता । योग सबीज कहुँ सुख दाता ॥ ९ ॥

दोहा- **होत मुदित मन अम्ब हे, सत्पथ पर वह जात ।**
अष्टाङ्ग योग का ज्ञान कर, मुक्ति मार्ग नर पाव ॥१५६॥

चौ- धर्माचरण करे निज शक्ति । अपर धर्म बीच रहे विरक्ति ॥ १ ॥
तज विधर्म पालन निज धर्मा । तत्वज्ञानिपद पूजन कर्मा ॥ २ ॥
मिलहि दैववश कर संतोषा । पालहिं सदाचार तजि दोषा ॥ ३ ॥
तज त्रिवर्ग धर्म मित भोजन । मोक्षधर्म रति कानन सेवन ॥ ४ ॥
तजें झूठ कपट कुटिलाई । धर्म अहिंसा सतपथ पाई ॥ ५ ॥
स्वाध्याय ब्रह्मचर्य तप शुचिता । हरिपद पूजन मौन अभीता ॥ ६ ॥
अस्तेय अर्थ संग्रहमित माता । आसन विजयि प्राण जयि जाता ॥ ७ ॥
इन्द्रिय दमन विषय कर हीना । रहे सदा प्रभु भक्ति विलीना ॥ ८ ॥
मूलाधार संधि एक देशा । मन सह चित्त लगावत ऐसा ॥ ९ ॥

दोहा- **इति यम नियम उपाय से, बुद्धि से मन जीत ।**
शुचि प्रदेश आसन स्थित, स्थिर तनु ऋजु निर्भीत ॥१५७॥

चौ- पूरक कुंभक रेचक द्वारा । शोधहिं प्राण मार्ग बहुबारा ॥ १ ॥
स्थिर कर चित जीते निज श्वासा । होवत योगि शुद्ध मन खासा ॥ २ ॥
प्राणायाम दोष तनु नासे । शक्ति धारणा पाप विनासे ॥ ३ ॥
संसर्ग अनीश्वर पाप नसावे । सब प्रकार जब मन स्थिर पावे ॥ ४ ॥
तब योगी नासाग्र विलोके । करे ध्यान प्रभु का मन रोके ॥ ५ ॥
मुख प्रसन्न रक्ताम्बुज लोचन । श्याम स्वरूप दुष्ट मदमोचन ॥ ६ ॥
शंख व चक्र गदाम्बुज धारी । श्री वत्स वक्ष कौस्तुभ गल न्यारी ॥ ७ ॥
अम्बर पीत पट्ट वनमाली । गुँजत मत्त भृंग सम काली ॥ ८ ॥
कंकन हार किरीट सुसोहा । अंगद भुज पैंजनि मन मोहा ॥ ९ ॥

दोहा- **झलकत काञ्चि कलाप कटि, भक्त हृदय आसीन ।**
दर्शनीय अति शान्त मन, नयनानन्द हसीन ॥ १५८॥

चौ- वन्दित जग वय षोडस वरसा । भक्त अनुग्रह आतुर दरसा ॥ १ ॥
कीर्तनीय यश परम पवित्रा । सुनत जासु भव पार चरित्रा ॥ २ ॥
हटहिं न कृष्ण बीच मन नाहीं । तब लगि योगि अंग सब ध्याहीं ॥ ३ ॥
दर्शनीय प्रभुलीला भारी । ध्यावहि सभी काल वनवारी ॥ ४ ॥
जब प्रभु विग्रह चित्त स्थित होहीं । एकैक अंग पुनि ध्यावहिं सोही ॥ ५ ॥
प्रथम चरण कमल कर ध्याना । ध्वज अंकुश पवि कंज निसाना ॥ ६ ॥
धौत पाद सरित वर गंगा । निकसत शिव धारी निज अंगा ॥ ७ ॥
धारण करत सीस शिव शंकर । कियो प्राप्त सुख अति गिरिजावर ॥ ८ ॥
दूसर ध्यान जानु युग करहीं । जिन निज अंक रमा नित धरहीं ॥ ९ ॥

दोहा- **विनता सुत के स्कंध पर, युग उरु सोभित मात ।**
लम्बायमान पीताम्बर, गुल्फोपरि सुहात ॥ १६० ॥ १५९

चौ– काञ्चि कलाप सुशोभित माता । बिम्ब नितम्ब ध्येय मन भाता ॥ १ ॥
विश्व निवास उदर बिच जाके । नाभि सरोवर ध्यावहिं याके ॥ २ ॥
जेहि सरोवर वास विधाता । लोक पद्म दिन पति सम जाता ॥ ३ ॥
लक्ष्मीवास करत जिस छाती । करे ध्यान योगी दिन राती ॥ ४ ॥
गल प्रदेश कौस्तुभमणि भूषित । धरहिं ध्यान मन ते तजि दूषित ॥ ५ ॥
लोक पाल जिन भुजा निवासा । शंख चक्र मन करहिं प्रकाशा ॥ ६ ॥
गदा शत्रु शोणित युत संगर । कौस्तुभ भूषित ग्रीव सुमिर नर ॥ ७ ॥

मकराकृत कुंडल चलित प्रकाशित। हरि कपोल मुख पंकज चिन्तित ॥ ८ ॥
कुन्तल वृन्द कुटिल मुख मंडित। उन्नत भ्रू युत नयन विलोकित ॥ ९ ॥

दोहा- **कृपा विपुल त्रय ताप हन, प्रभुचितवन चिरकाल।**
अश्रु सिंधु सब जगत का, शोषण सम महाकाल ॥१६०॥

चौ- भूमंडल कोटि मदन संमोहित। विपुल भाव योगीजन सेवित ॥ १ ॥
सुकान्ति ओष्ठ दशन अरुणाई। निज उर ध्यान करत जग साँई ॥ २ ॥
मानवि चित्त न कबहुँ चलाही। हृदय अकास बीच इमि ध्याही ॥ ३ ॥
इमि योगी हरि ध्यावत माई। प्राप्त भाव तनु अति पुलकाई ॥ ४ ॥
हृदय भक्ति ते द्रव अति होई। आनन्द मग्न हर्षित निज खोई ॥ ५ ॥
ध्याता ध्येय विभाग विरागी। सुख दुख अहँकार सब त्यागी ॥ ६ ॥
होत उपाधि देह निर्युक्ता। जीवन मुक्त होत इमि अन्ता ॥ ७ ॥
मद मदान्ध सम स्थित निजगाता। प्राप्ताप्राप्त न लोकत माता ॥ ८ ॥
सेन्द्रिय जीव पूर्व वश आता। स्वारंभ कर्म लों जीवन पाता ॥ ९ ॥

दोहा- **पुत्र पित से मनुज ज्यों, अलग दिखावत माय।**
देह आत्माभिन्न त्यों, परत लखाई आय ॥ १६१ ॥

चौ- इन्द्रिय देह हृदय ते माई। आत्मा रहत सदा अलगाई ॥ १ ॥
जीव ब्रह्म ना एक समाना। ब्रह्म भिन्न काहू नहि माना ॥ २ ॥
किन्तु देहविच जीव प्रकासे। जीव बीच यह तनु निज भासे ॥ ३ ॥
ज्वलित काष्ठ निसरित चिनगारी। धूम अग्नि सम नहि वह न्यारी ॥ ४ ॥
इमि सत असत प्रकृति सुन माई। गुण भेद प्रकार अलग दिखलाई ॥ ५ ॥
बोली देवहूति मनुजाई। प्रकृति पुरुष लक्षण प्रभु गाई ॥ ६ ॥
भकति योग मारग बतलाऊ। जीव विविध संसृति प्रभु गाऊ ॥ ७ ॥
जासु जान नर घर सब त्यागे। ईश्वर काल रूप कहु आगे ॥ ८ ॥
पतित जगत जन बोधन कारण। प्रकटे योग भानु अध हारण ॥ ९ ॥

दोहा- **देवहूति के वचन सुन, कपिल कहे मुस्काय।**
भक्ति योग बहु विध जनि, कहूँ तुम्हें समझाय ॥१६२॥

चौ- करत भक्ति हिंसा व्रतधारी। भकति तामसी शास्त्र पुकारी ॥ १ ॥
यश ऐश्वर्य विषय व्रत धारी। अर्चन करहिं सो राजस सारी ॥ २ ॥
पाप क्षयार्थ जगति यह गाई। अरपन कर मम पद मोहिं ध्याता ॥ ३ ॥
सात्विक भकति करम कर माता। श्रवण कीरतन नाम जपाई ॥ ४ ॥

भक्ति भेद इक्कासी माई । फल विहीन निर्गुण कहलाई ॥ ५ ॥
जावत गंग नीर जिमि सागर । मम गुण श्रवण सुकरहिं निरन्तर ॥ ६ ॥
मन गति मम पद दूर न जाही । निर्गुण भक्त मुकति नहिं चाही ॥ ७ ॥
आत्यचिन्तक भक्ति योग यह माई । जीव त्याग गुण ब्रह्म कहाई ॥ ८ ॥
क्रिया योग निज धर्म हमारा । दरसन स्पर्शन पूजन वारा ॥ ९ ॥

दोहा- **स्तोत्र वन्दना भूत विच, मम सम राखहिं भाव ।**
देह गेह आसक्ति का, मन में रखे न चाव ॥ १६३ ॥

चौ- बड़ सन्मान करहिं सब काला । तोषहिं दीन अनाथ कृपाला ॥ १ ॥
राखहिं भाव मित्रता माई । निज पर भेद न काहु लखाई ॥ २ ॥
यम दम नियम श्रवण संकीर्तन । जप तप योग संत जन सेवन ॥ ३ ॥
अहंकार तजि सरल स्वभावा । आर्य संग ते मन सुख पावा ॥ ४ ॥
शुद्ध चित्त हो इन उपकरणा । आवत अंत भक्त मम चरणा ॥ ५ ॥
वायु वेग जिमि गंध उड़ाई । प्राण बीच वह पहुँचे आई ॥ ६ ॥
तथा योगरत चित अविकारी । होत संत मम पद अधिकारी ॥ ७ ॥
सर्वभूत स्थित ईश्वर त्यागी । प्रतिमा बीच होत अनुरागी ॥ ८ ॥
सो नहिं मात उचित यह बाता । भस्म हवन सम वह फल पाता ॥ ९ ॥

सोरठा- **करे वैर पर गात, भेद दर्शि अभिमानि नर ।**
मन विच शान्ति न पात, सर्व देह में वास मम ॥ १० ॥

चौ- निन्दक भूत भूरि धन लेकर । पूजहिं मोहि सदा निशि वासर ॥ १ ॥
तदपि न मुदित होऊँ मैं माता । पर द्रोही मुँहि कबहुँ न पाता ॥ २ ॥
सर्वभूत स्थित मोहि न जाने । जब लगि मोहि न नर पहचाने ॥ ३ ॥
तब लगि प्रतिमादिक मम पूजन । करता रहे धरम निज पालन ॥ ४ ॥
जीव ब्रह्म विच भेद लखाई । पूजहिं दान समान मिताई ॥ ५ ॥
अजीव ते जीव प्रधान कहावे । सजीव सइन्द्रिय तरुवर गाये ॥ ६ ॥
तरु ते मत्स्य मत्स्य वर मधुपा । मधुकर ते वर जानहु सर्पा ॥ ७ ॥
सर्पादि बाद कफादि प्रधाना । अपद बाद बहुपद शुभमाना ॥ ८ ॥
बहुपद बाद चतुष्पद माई । चौपद श्रेष्ठ मनुज कहलाई ॥ ९ ॥

दोहा- **मनुज वीच श्रुति वर्ण शुभ, वर्ण वीच द्विज मान ।**
द्विजगण मँह वेदज्ञ वर, कर्ता अर्थ सुजान ॥ १६४॥

चौ- सब संदेह निवारक माता । नर अर्थज्ञ ते ऊपर भाता ॥ १ ॥
तिन मँह मुक्त संग शुभ होई । मुक्त संग ऊपर नहीं कोई ॥ २ ॥
समदर्शी जावत हरि धामा । आत नरक लेनहिं हरि नामा ॥ ३ ॥
जीव रूप भगवान विराजे । सब प्राणी तनु विच प्रभुगाजे ॥ ४ ॥
यह विचार कर निज मन माँही । करत प्रणाम सुप्रणत सदाही ॥ ५ ॥
वसु अंग योग भकति कर लच्छन । कियो मानवि तव प्रति वरणन ॥ ६ ॥
दोउ विच एक करहिं जो साधन । पावत सो नर पुरुष पुरातन ॥ ७ ॥
ये दोउ भगवत रूप समाना । परम प्रधान पुरुष यहि माना ॥ ८ ॥
वहि प्रभु काल रूप कहलावे । जासु जीव भय यह अति खावे ॥ ९ ॥

दोहा- विष्णु रूप यह कालमा, अन्तकरण विच आय ।
जीवहिं जीव लड़ाय के, करत विनाश उपाय ॥ १६५ ॥

चौ- शत्रु मित्र बान्धव सुत माता । काल रूप प्रभु सबहिं नसाता ॥ १ ॥
तनु उन्मत्त काल यह खावा । किन्तु स्वयं उन्मत्त न गावा ॥ २ ॥
चलत वात जब काल डराही । तपत भानु नभ विच भय खाही ॥ ३ ॥
बरसत इन्द्र काल से डरकर । करत चन्द्रिका निशिपति अम्बर ॥ ४ ॥
हो भयभीत भगण यह चलहीं । लता औषधि द्रुम सब फलहीं ॥ ५ ॥
सरिता काल भीत ले नीरा । तजहिं न मात सिंधु निज तीरा ॥ ६ ॥
काल भीत हो दामिनि दमकत । भूमि बीच जल कबहुँ न डूबत ॥ ७ ॥
आज्ञा मान काल नभ माई । परदे सात लगे चहुँ आई ॥ ८ ॥
ब्रह्मादिक जासु मान भय सारे । प्रति युग जग सर्गादि सुधारे ॥ ९ ॥

दोहा- सब जग अन्तक काल यह, जासु पात नहीं अंत ।
मानव ते मानव जनत, नासत बाद तुरंत ॥ १६६ ॥

चौ- बोले कपिल देव भगवाना । काल पराक्रम काहु न जाना ॥ १ ॥
अवलि मेघ जिमि वायु उड़ावत । तदपि पराक्रम तासु न जानत ॥ २ ॥
नर सुख हेतू करत उपाई । किन्तु काल उन करत नसाई ॥ ३ ॥
दुर्मति अध्रुव तनु ध्रुव माने । द्रव्य क्षेत्र गृह को स्थिर जाने ॥ ४ ॥
जावत जेहि जोनि यह प्रानी । हो न विरत वहँ अति सुख मानी ॥ ५ ॥
नारकीय भी तनु नहिं तजहीं । करत वास मन अति सुख लहहीं ॥ ६ ॥
आत्म नार सुत पशु गृह चाकर । मानत सकल मनोरथ फँसकर ॥ ७ ॥
पोषण हेतु सदा परिवारी । चिन्ता लगत निरन्तर भारी ॥ ८ ॥
एकान्त नार संभोग सुखादिक । सुखी होत शिशु सुन वचनादिक ॥ ९ ॥

दोहा- जब दुख आवत गेह में, कपट धरम को धार ।
प्रतीकार कर नर यह, होवत सुखी अपार ॥ १६७ ॥ क
जिनके पोषण ते नर, भोगत नरक हजार ।
हिंसाते पालन करे होवत, मुदित अपार ॥ १६७ ॥ ख

चौ- लक्ष्मी हीन कृपण हतभागी । उद्यम हीन जात पर माँगी ॥ १ ॥
सामर्थ्य हीन जब भरण कुटुम्बा । अधन श्वांस लेवत अतिलम्बा ॥ २ ॥
जब अशक्त निज पोषण होई । करत न स्त्री सुत आदर कोई ॥ ३ ॥
वृद्ध वृषभ का कृषक न आदर । करत यथा नहीं करत अनादर ॥ ४ ॥
तदपि जात नहि दुख बुढ़ापा । प्राप्त विरुप मरण मुख व्यापा ॥ ५ ॥
खान पान वह सह अपमाना । करत मात जिमि श्वान समाना ॥ ६ ॥
गेह पाल इव खाट बिछई । परत पौर विच सहि कठिनाई ॥ ७ ॥
निराहार अचेष्टित रोगी । एवं रहत जरा दुख भोगी ॥ ८ ॥
निकसत नयन अनिल ते बाहिर । कास श्वास बढ़ जावत जाहिर ॥ ९ ॥

दोहा- कफ से नाड़ी मार्ग का, हो जावत अवरुद्ध ।
घुर घुरात नर कण्ठ में, करत काल से युद्ध ॥ १६८ ॥

चौ- काल पाश गत लखि परिवारी । घेरत बन्धु पुत्र वधु नारी ॥ १ ॥
सन्मुख बैठि हाथ धरि माथा । रोत कुटुम्ब सकल इक साथा ॥ २ ॥
बोलत तदपि वदत वर नाहीं । गुरू वेदना व्यापत ताही ॥ ३ ॥
रोवत रहत सकल परिवारी । पात मरण तजि घर सुतनारी ॥ ४ ॥
तदा भीम यम दूत न देखत । त्रस्त हृदय मलमूत विमुञ्चत ॥ ५ ॥
तब यम दूत बांध गल पासा । दीर्घ मार्ग ले जावत खासा ॥ ६ ॥
यथा राज भट दंडित माता । न्याय गेह बिच गहि ले जाता ॥ ७ ॥
दूत तर्जना सुन कर पापी । भिन्न हृदय पथि अति दुःख व्यापी ॥ ८ ॥
भक्ष्यमाण कूकर अरु सूकर । सुमिरन करत पाप निज वह नर ॥ ९ ॥

दोहा- क्षुधा प्यास ते दुखित हो, तपत सूर्य की धाम ।
तप्त बालु के मार्ग में, जहाँ नहीं विश्राम ॥ १६९ ॥

चौ- जावत मार्ग पीठ पर खावत । होत अशक्त तदपि वह जावत ॥ १ ॥
यत्र तत्र मूर्छित अति श्रान्ता । गिरतन उठत अति वह दुख पाता ॥ २ ॥
यमपुर योजन मार्ग प्रमाना । लाख ऊन दस सहस समाना ॥ ३ ॥
यमपुर बीच दोय वा तीना । बीच घटी जावत दुख भी ना ॥ ४ ॥

भोगत यमपुर कष्ट अनेका । खात मांस निज तनु कहीं एका ॥ ५ ॥
श्वान गीध कहीं आँत विदारी । वृश्चिक सर्प ते पीड़ अपारी ॥ ६ ॥
दागत अनल बीच कहीं एकी । देह छेद गिरि ते कहीं फेंकी ॥ ७ ॥
नीर गर्त विच रोधहि एकी । गज पद घूँदहिं कहीं अनेकी ॥ ८ ॥
तामिस्र अंध रौरव अति भारी । पात यातना मिथ नर नारी ॥ ९ ॥

दोहा- **इस प्रकार यम यातना, पावत प्राणि अपार ।**
सुमिरण कर निज पाप को, पछतावत हर वार ॥ १७०॥क
भूत द्रोहि द्वारा यह, पोषित स्थूल शरीर ।
तज कर जावत नरक विच , भोगत पाप गंभीर ॥ १७०॥ख

चौ- नरक व स्वर्ग यहीं पर माता । सुख दुख जीव यहीं पर पाता ॥ १ ॥
नार देह निज पोषहि अंता । उभय त्याग फल भोग अनंता ॥ २ ॥
पालत अधर्म ते निज परिवारा । पावत चरम नरक अधिकारा ॥ ३ ॥
शूकर कूकर कीट पतंगा । वृश्चिक सरि सर्पादि भुजंगा ॥ ४ ॥
योनि भोग क्रम ते यह पायी । पात देह नर होत अपायी ॥ ५ ॥
पोषण हेतु जेहि परिवारा । जात नरक विच तजि सुतदारा ॥ ६ ॥
यह संसार स्वप्न की माया । भक्ति बिना नहि अन्य उपाया ॥ ७ ॥
" बजरंगी" जग की यह रीती । स्वारथ काज करहिं सब प्रीति ॥ ८ ॥
जीवत पिता पुत्र कर दंगा । मरत वाद पहुँचावत गंगा ॥ ९ ॥

दोहा- **जीवित जल पावत नहीं, मरे वाद जल देत ।**
कैसी जग की रीत है, सोचत नाहिं अचेत ॥ १७१ ॥

चौ- करदम सुत वोले इमि वानी । सुनो अम्ब अव देह कहानी ॥ १ ॥
प्रेरित दैव कर्म ते माता । जीव देह धर कर इमि आता ॥ २ ॥
मानव रैत कणाश्रय धारी । जावत उदर बीच यह नारी ॥ ३ ॥
निशा एक कल कल इति होही । पंच रात बुदबुद सम सोही ॥ ४ ॥
होत रात दश बेर समाना । वाद अंड पेशी परमाना ॥ ५ ॥
मास सीस, कर पद यह माता । अंग विभाग मास दो जाता ॥ ६ ॥
रोम अस्थि नख चाम प्रकासा । लिङ्ग छिद्र आवत त्रय मासा ॥ ७ ॥
सप्त धातु पुनि चातुर्मासा । पंचम पावत भूख पिपासा ॥ ८ ॥
षष्टम मास जरायु लपेटित । दक्षिण कूँख फिरत अति दुःखित ॥ ९ ॥

दोहा- **खान पान माता करे, खाय वढ़ावत देह ।**
गर्त मूत मल को वह, जानत अपना गेह ॥ १७२ ॥

चौ- खावत कीट होत क्षत अंगा । मूर्छित पावत कष्ट अभंगा ॥ १ ॥
उष्ण लवण अरु रूक्ष खटाई । भोजन मात तीक्ष्ण कटु खाई ॥ २ ॥
याते अंग वेदना पाई । वद्ध जरायु सहत कठिनाई ॥ ३ ॥
कुंडलि भूत अधोशिर प्रानी । रहत उदर विच मन पछितानी ॥ ४ ॥
प्राणी मात उदर विच कैसे । पंजर बीच रहत शुक जैसे ॥ ५ ॥
हो असमर्थ न अंग हिलावे । पूर्व जन्म स्मृति कर पछतावे ॥ ६ ॥
जन्म करम शत सूरत आई । पात कष्ट मन अति अकुलाई ॥ ७ ॥
गर्भवास सम दुख नहि आना । भूत भविष्यत बीच बखाना ॥ ८ ॥
मानवि आवत सप्तम मासा । लब्ध बोध वह रहत उदासा ॥ ९ ॥

दोहा- **सूति वात ते चलित, यह रहत नाहि इक ठौर ।**
विष्ठा कीट समान मा, जीव लगावत दौर ॥ १७३ ॥

चौ- सप्त धातुमय स्थूल शरीरा । वद्ध जीव वह होय अधीरा ॥ १ ॥
प्राप्त होय जब सप्तम मासा । लब्ध बोध वह रहत उदासा ॥ २ ॥
दीन वाणि दोऊ कर जोरे । उस प्रभु से इमि वचन उचारे ॥ ३ ॥
डारेउ मात उदर मैं आई । करहु नाथ मम आप सहाई ॥ ४ ॥
जिस हरि ने यह गति दरसाई । बन्दौं बार अनेक अधाई ॥ ५ ॥
तनु इन्द्रिय अरु हृदय स्वरूपा । माया कर्म वद्ध अनुरूपा ॥ ६ ॥
अविकारि अखंड विशुद्ध प्रबोधा । तप्त हृदय स्फूरित अनुरोधा ॥ ७ ॥
पंच भूत रचित यह देही । मिथ्यासम नहिं मानस ऐहि ॥ ८ ॥
मैं न नाथ तुमको पहिचाना । प्रकृति पुरुष पति जय भगवाना ॥ ९ ॥

दोहा- **ज्ञान मार्ग ते हे प्रभो, कटे न जग जंजाल ।**
नाम सुमर कर आपका, होवत जीव निहाल ॥ १७४ ॥

चौ- नष्ट स्मर्ण होवत वश माया । जग पथ जन्म क्लेश यह पाया ॥ १ ॥
ईश अनुग्रह बिन का युक्ती । निज स्वरूप भज पाऊँ मुक्ती ॥ २ ॥
ईश कृपा बिन ज्ञान अभावा । स्थावर जंगम विच प्रभु पावा ॥ ३ ॥
त्रैकालिक ज्ञान कियो मयि धारन । वन्दौं मैं त्रय ताप नसावन ॥ ४ ॥
तप्त देह जठारानल ताता । रक्त मूत मल कूप निपाता ॥ ५ ॥
निकसत हेत गिनहुँ निज मासा । बाहिर काढहु कब मुझ दासा ॥ ६ ॥
ऐसो ज्ञान बिना कर जोरी । दियो कृपा यह सब प्रभु तोरी ॥ ७ ॥

दीन बन्धु निज कृत उपकारा । हों प्रसन्न मो पर इस बारा ॥ ८ ॥
जग पशु पक्षि आदि यह सारे । सुख दुख अनुभव पात विचारे ॥ ९ ॥

दोहा- **शम दम साधन युत तनु, ज्ञान बुद्धि के साथ ।**
बाहर भीतर हृदय बिच, करूँ दर्श तव नाथ ॥ १७५ ॥

चौ- यद्यपि गर्भ बीच दुःख नाना । रुचि होत नहि बाहर आना ॥ १ ॥
प्रायः अंध कूप वहि आवत । प्राणिन हेत अविद्या व्यापत ॥ २ ॥
यहिं सब कर्म भोग भगवाना । तव पद पद्म हृदय बिच आना ॥ ३ ॥
करूँ भजन मैं दीन दयाला । आत्मोद्धार करूँ सब काला ॥ ४ ॥
बोले कपिलदेव सुन माता । एवं जीव स्तवन प्रभु गाता ॥ ५ ॥
दशम मास आवत जब माता । अधोमुख बाल प्रसव की वाता ॥ ६ ॥
तीव्र वेग ते बाहर काढ़त । होत अवाङ् सीस दुख पावत ॥ ७ ॥
पतित रक्त मूत वह धरनी । गति विपरीत हो ज्ञान विहीनी ॥ ८ ॥
रोवत किन्तु तासु अभिप्राया । जानत मात यों करत उपाया ॥ ९ ॥

दोहा- **स्तन्य हेत रोवत यह, व्यथा जान इमि मात ।**
स्तन्य पान करवाय के, मुदित होत सुलवात ॥ १७६॥

चौ- स्वेदज दूषित विस्तर सारा । कंडु अशक्त रोत बहुबारा ॥ १ ॥
मत्कुण मशक दंश तनु खावत । शैशव पंच बरस इमि जावत ॥ २ ॥
वय पौगंड बाद वह आवा । कष्ट अध्ययन निज मन पावा ॥ ३ ॥
इच्छित अर्थ सुलाभ न पाई । दीप्त मन्यु चिन्तातुर ध्याई ॥ ४ ॥
करत विरोध घमंड अपारा । कामी आत्म विनाश प्रकारा ॥ ५ ॥
पंच रचित तनु विविध प्रकारा । दुर्मति मन तव भाव अपारा ॥ ६ ॥
देह हेत करम करि माता । वद्ध देह संसृति यह पाता ॥ ७ ॥
शिश्नोदर कृत उद्यम कामी । असत मार्ग रमता निशि यामी ॥ ८ ॥
जावत नरक पूर्ववत् माता । सुमिरन करत नाँहि भव त्राता ॥ ९ ॥

दोहा- **सत्य शौच सम दम दया, असत साधुतिय संग ।**
मूढ़ अशान्त खंडित हिय, करत बुद्धि यश भंग ॥ १७७॥

चौ- तीय संग ते बन्ध व मोहा । अन्य संग ते होत न द्रोहा ॥ १ ॥
निज कन्या लखि मोहित धाता । मृगीरूप अनुधर मृग गाता ॥ २ ॥
स्त्री रूपी माया मन मोही । बिन नारायण बचहि न कोही ॥ ३ ॥
स्त्री माया कृत शक्ति अपारी । हारहिं जग जयि अरु बलधारी ॥ ४ ॥

पदाक्रान्त हो भ्रकुटि विलासा । साधक तजहिं सदा तिय आसा ॥ ५ ॥
नरक द्वार नारी अनुरूपा । तृणावर्त जिमि जानहु कूपा ॥ ६ ॥
आवत सेवादिक मिस नारी । जानहु मृत्युरूप बल धारी ॥ ७ ॥
मनुज यथा तिय संग नसाही । रहहिं नारि नर संग जुदाई ॥ ८ ॥
अंतकाल नर ध्यावहिं जेहि । दूसर जनम जात उस देही ॥ ९ ॥

दोहा- **अन्त समय में जो नर, करत नार का ध्यान ।**
पावत स्त्री योनी वह, रहत न परभव ज्ञान ॥ १७८ ॥

चौ- जी नर रूप विदित मम माया । मानत धन सुत पति सुखदाया ॥ १ ॥
मानवि पुरुष रूप यह माया । मृत्यु रूप जानहु दुख दाया ॥ २ ॥
लुब्धक गायन मृग जिमि मोही । पावत अंत मौत बन सोही ॥ ३ ॥
लिंग देह ते जी परलोका । करता कर्म त्याग यह लोका ॥ ४ ॥
अनुगत जीव देह यह गाई । भूत मनोमय इन्द्रिय माई ॥ ५ ॥
दोउ निरोध मरण कर लाई । दोउ उत्पत्ति जन्म मुनि गाई ॥ ६ ॥
जब अयोग्य यह स्थूल शरीरा । द्रव्य विलोकन हेत गँभीरा ॥ ७ ॥
मरण जीव का यह सब गाया । याते भिन्न जनम बतलाया ॥ ८ ॥
तव मम इति जब हो अभिमानी । बनत स्थूल तनु सब अनुमानी ॥ ९ ॥

दोहा- **जन्म जीव का ज्ञान पुनि, बतलाता हूँ माय ।**
जाको सुनकर के नर, भव सागर तर जाय ॥ १७९ ॥

चौ- नैत्र दोष ते सकल पदारथ । दीख सकै नहि मात यथारथ ॥ १ ॥
यद्यपि इन्द्रिय चक्षु निवासा । किन्तु रूप ना करत प्रकासा ॥ २ ॥
नयन इन्द्रियाँ रूप न देखहिं । जीव योग्यता कैसे रखहिं ॥ ३ ॥
स्थूल शरीर काम नहिं करहीं । सूक्ष्म शरीरहिं को जग पूछहीं ॥ ४ ॥
यही जीव की मौत बताई । किन्तु जीव मरता नहि माई ॥ ५ ॥
भीत दीनता मोह नसाई । कबहुँ न योगि मौत भय खाई ॥ ६ ॥
धीर जीव गति इमि मन मानी । मुक्त संग विचरत अनजानी ॥ ७ ॥
जनम मरण यह जीव न पावे । मानवि फिर क्यों तू भय खावे ॥ ८ ॥
ज्ञान विराग युक्त मति धारी । माया रचित लोक घर बारी ॥ ९ ॥

दोहा- **देहासक्ति त्याग कर, विचरत जो एकान्त ।**
सो नर यम भय खात ना, भव सागर तर जात ॥ १८० ॥

चौ- बोले कपिल देव मृदु बानी । निज निज धरम करत जो प्रानी ॥ १ ॥
धर्मकाम करता निज गेहा । करत वास प्रभु धर्म न स्नेहा ॥ २ ॥
पूजहिं यज्ञ प्रेम करि देवहिं । तरपन श्राद्ध पितर निज सेवहिं ॥ ३ ॥
चन्द्र लोक विच जा ये वसहीं । कर निवास वापिस यहिं आवहिं ॥ ४ ॥
शय्या शेष नाग हरि सोवत । तव लगि चन्द्र लोक लय होवत ॥ ५ ॥
शुद्ध चित्त अनासत धर्मा । करत समर्पित प्रभुपद कर्मा ॥ ६ ॥
निवृत्त धर्म ते निरहंकारी । पात पूर्ण हरि सूरज द्वारी ॥ ७ ॥
सत्य लोक प्रलय परयंता । करत वास वहँ विधि सह गंता ॥ ८ ॥
तत्व बीस ऊपर शर जेही । अंड नाश इच्छुक विधि येही ॥ ९ ॥

दोहा- **करत वास जब लग यह हो परार्ध दो काल ।**
तव लगि योगी वसत इस, ब्रह्मलोक विधि पाल ॥१८१॥

चौ- पावत मोक्ष घात सहमाता । अन्तकाल प्रलय जब आता ॥ १ ॥
भक्ति भाव करि उन हरि चरणा । चाहु मात तजि जग प्रभु शरणा ॥ २ ॥
वे प्रभु सब हिय कमल निवासी । दीन बन्धु दुखहर अविनासी ॥ ३ ॥
स्थावर जंगम जन्म प्रदाता । योगी और ऋषिन सह धाता ॥ ४ ॥
हो निष्काम सगुण प्रभु पावत । भेद दृष्टि जब उनमें आवत ॥ ५ ॥
कर्ताभिमान गुणव्यतिकर होही । आवत यथा पूर्व यह दोही ॥ ६ ॥
मरिच्यादिक निज योग प्रभावा । गुण विच व्यतिकर तव यह आवा ॥ ७ ॥
स्वाधिकार पावत यहँ आई । प्रलयवाद इमि करत भ्रमाई ॥ ८ ॥
कर्मासक्त चित्त जो प्रानी । काम्य व नित्य कर्म विच ध्यानी ॥ ९ ॥

दोहा- **गेहासत्त अजितेन्द्रिय, हरि गाथा से हीन ।**
असद् गाथ सुनते सदा, त्रैवर्गिक में लीन ॥ १८२॥

चौ- गुण बिच अवगुण जो नर हेरत । सूकर सम उसको सब टेरत ॥ १ ॥
पितरलोक दक्षिण पथ जाही । पुण्यनाश वापिस यहँ आही ॥ २ ॥
भक्ति भाव में हो लवलीना । भजहु मात तुम पुरुष प्रवीना ॥ ३ ॥
प्रभुपद भक्ति होत लवलीना । हो उन ज्ञान विराग अधीना ॥ ४ ॥
हरि विच निश्चल जब मन आही । इन्द्रिय वृत्ति विषमता नाहीं ॥ ५ ॥
तदा पुरुष निज जीवहिं रोकी । जीव बीच निज आम विलोकी ॥ ६ ॥
बाह्य वृत्ति युत इन्द्रिन द्वारा । होत भ्रान्ति वश विविध प्रकारा ॥ ७ ॥

ज्ञान मात्र ते एक ही माना । वह ईश्वर वहि ब्रह्म बखाना ॥ ८ ॥
निर्गुन ज्ञान रूप भगवाना । ब्रह्म एक सब मुनिवर माना ॥ ६ ॥

दोहा- **कपट मार्ग ही जगत ते, योग मार्ग फल मात ।**
कपट त्याग बिन योग का, कुछ नहिं पथ दर्शात ॥१८३॥

चौ- इन्द्रिय ज्ञान मार्ग ते माता । निर्गुण ब्रह्म एक दिखलाता ॥ १ ॥
किन्तु रहत वह प्रथक दिखाई । अहंकार इन्द्रिय त्रिगुणाई ॥ २ ॥
ये सब महतत्व ते आई । महतत्व ते नहिं अलगाई ॥ ३ ॥
एवं ब्रह्म एक कहलावे । योग भक्ति ते वह मिल जावे ॥ ४ ॥
ज्ञान ब्रह्म दर्शन यह माता । प्रकृति पुरुष का तत्व बताता ॥ ५ ॥
श्रृद्धालु भक्त निर्गुण योगी । पावत हरिपद तजि सब भोगी ॥ ६ ॥
क्षीरादि पदारथ जिमि निज नयना । श्वेत व स्पर्श शीत मधु रसना ॥ ७ ॥
दीखत रूप अनेक प्रकारा । किन्तु पदारथ नाहिं अपारा ॥ ८ ॥
एवं एक रूप भगवाना । दीखत शास्त्र मार्ग ते नाना ॥ ६ ॥

दोहा- **क्रिया यज्ञ तप पठन अरु, भक्ति विराग व दान ।**
निष्काम सकाम सुधार्य हरि, निर्गुण सगुन बखान ॥१८४॥

चौ- भक्ति योग अरु काल स्वरूपा । आवागमन जीव अनुरूपा ॥ १ ॥
संख्या तत्व विराग व ज्ञाना । कहा तोर प्रति परम सुहाना ॥ २ ॥
दुर्विनीत खल दम्भिक लोभी । दुराचारि हरि भक्त न शोभी ॥ ३ ॥
सुनत नाँहि संतन आदेशा । करहु मात मति उन उपदेशा ॥ ४ ॥
श्रृद्धालु भक्त विनयी अद्रोही । मम सेवा रत शुचि नर होही ॥ ५ ॥
विरत व शान्त चित्त अवरोधी । करत प्रेम प्राणिन अक्रोधी ॥ ६ ॥
सुनहि ज्ञान यह जो नित अम्बा । मम पद प्राप्त करहिं अविलम्बा ॥ ७ ॥
यह मैत्रेय कपिल सुनबानी । विगत मोह जननी मुनि ज्ञानी ॥ ८ ॥
ज्ञान प्रवर्तक कपिल प्रणामा । करत प्रार्थना करदम भामा ॥ ६ ॥

दोहा- **जठर जात प्रभु यह विधि करत गात तव ध्यान ।**
दरशन वह पावत नहीं जलशायी भगवान ॥ १८५ ॥

चौ- विधि ते करत जगत प्रकटाई । रहत आप उनते अलगाई ॥ १ ॥
जासु उदर यह जग स्थित सोही । युगान्त बीच प्रकृत शिशु होही ॥ २ ॥
पीत अंगुष्ठ सोत वटपाना । आये गर्भ मोर भगवाना ॥ ३ ॥
खल नाशक निज जन हितकारी । हो सूकर आदिक अवतारी ॥ ४ ॥

ज्ञानमार्ग प्रकाशन हेतू । धरत देह प्रभु यह जगसेतू ॥ ५ ॥
नाम तुम्हार श्वपच यदि कोई । करत कीरतन शुचि वह होई ॥ ६ ॥
यज्ञ योग्य होवहिं भगवाना । मैं कृतार्थ हरि निज मनमाना ॥ ७ ॥
जिस जिव्हा ने हरि गुण गायां । श्वपच होत वह श्रेष्ठ बताया ॥ ८ ॥
आर्य पुरुष हरि नाम उचारत । जप तप होम तीर्थ फल पावत ॥ ९ ॥

दोहा- **वेद गर्भ जय ब्रह्म सम, कपिल देव भगवान ।**
देकर के यह ज्ञान हरि, दूर कियो अज्ञान ॥ १८६ ॥

चौ- कह मैत्रेय विदुर कुरु भाई । सुनी प्रार्थना इमि मनुजाई ॥ १ ॥
बोले वचन कपिल गंभीरा । सत्य मार्ग नासत भव पीरा ॥ २ ॥
जो यह मार्ग बताया तोही । जीवन मुक्ति अचिर तव होही ॥ ३ ॥
ब्रह्मवादि सेवित मत मेरा । काटहिं जन्म मरण तन फेरा ॥ ४ ॥
सुगम मार्ग यह कर अवलम्बा । पावहु अचिर परम पद अम्बा ॥ ५ ॥
जो नर मम मत को नहिं मानत । ते नर नीच गति बिच जावत ॥ ६ ॥
कह मैत्रेय कपिल भगवाना । कर उपदेश मात प्रति ज्ञाना ॥ ७ ॥
निज जननी की अनुमति लेकर । गये कपिल निज आश्रम तज कर ॥ ८ ॥
कपिल मार्ग ते वह मनु बाला । करत स्नान आश्रम त्रयकाला ॥ ९ ॥

दोहा- **कुटिल अलक युत चीर पट, तप कारण कृश देह ।**
कर्दम की वह संपति, निस्पृह हो तजि गेह ॥ १८८ ॥

चौ- शय्या जो पय फेन समाना । दान्त अमोल पलंग सुहाना ॥ १ ॥
आसन कंचन सुन्दर नाना । स्वच्छ भीत मणि जड़ित महाना ॥ २ ॥
मणिमय निर्मित सुन्दरि नाना । जगमगात मणि दीप सुहाना ॥ ३ ॥
दिव्य वृक्ष सुन्दर सुखदाई । फल फूल अनेक लदे उन आई ॥ ४ ॥
करत विहंग मिथुन उद्याना । मस्त भ्रमर गुंजत वहँ नाना ॥ ५ ॥
प्राप्त हेत जेहि सुर तिय तरसत । तजा मानवी सब सुख हर्षित ॥ ६ ॥

दोहा- **पति वन गमन अनन्तर, सुत की रही न आस ।**
आतुर पुत्र वियोग ते मुख, कुछ भयो उदास ॥ १८८ ॥

चौ- यद्यपि आत्म ज्ञान सम्पन्ना । तदपि विकल वह भई महाना ॥ १ ॥
वत्स वियोग ते धेनु समाना । भई दीन वह दुखी महाना ॥ २ ॥
कपिल ध्यान करि निस्पृह जाता । तज चिन्ता हर्षित निज गाता ॥ ३ ॥
निज सुतोक्त भगवत वपु ध्याना । भक्ति योग वैराग्य सज्ञाना॥ ४ ॥

शुद्ध चित्त सर्व गत ध्याई । ब्रह्मरूप हरिपद मति लाई ॥ ५ ॥
क्लेश मुक्त विस्तृत गुण नासी । सुधि न देह कछु रहि न उदासी ॥ ६ ॥
तासु देह दासिन कर पोषित । धूसर धूलित तनु वह शोभित ॥ ७ ॥
यथा धूम सह पालक सोही । मुक्त सुकेश गताम्बर होही ॥ ८ ॥
वासुदेव चित्त लगा निरन्तर । सुधि न देह कुछ रहि निज भीतर ॥ ६ ॥

दोहा- **कपिलोक्त मार्ग ते हे विदुर, योग भक्ति को धार ।**
नित्य मुक्त पर ब्रह्म हरि, के पद गई सिधार ॥ १८६ ॥

चौ- सरित सिद्धिदा भई तन तासू । सेवा करत सिद्धजन जासू ॥ १ ॥
योगी कपिल देव भगवाना । त्यागा आश्रम अरु उद्याना ॥ २ ॥
अनुमति मात विदुर वह लेकर । प्रागोत्तर बीच गये खुश होकर ॥ ३ ॥
स्वागत कर वहँ सागर नाना । दियो स्वयं खुश होकर स्थाना ॥ ४ ॥
लोक शान्ति हित योग अपारा । साधहिं वे प्रभु कपिल उदारा ॥ ५ ॥
जयति सिद्ध चारण उचारे । सांख्याचार्य मनीश्वर सारे ॥ ६ ॥
जो पूछी मोसे कुरुराई । गाथा कपिलदेव मैं गाई ॥ ७ ॥
कपिल देव मत मनुज निरन्तर । सुनत सुनावहिं प्रभुचित धरकर ॥ ८ ॥
पात गरुड़ ध्वज की वह भक्ती । होत शीघ्र श्री हरिपद प्रीती ॥ ६ ॥

दोहा- **कपिल देव अवतार की, सुनहि कथा नर नार ।**
बजरंग लाल जगते विरत, हो भव सागर पार ॥ १६० ॥

छन्द- **पार जावत सिंधु भव के, गात सुनकर के यह ।**
पात हरि पद प्रेम पावन, पाप हर कर नर यह ॥
दीन वन्धु अनाथ पालन, सर्वगत प्रभु हे हरे ।
नाथ बजरंग लाल की भी, याद रखियो हे कुछ अरे ॥ २ ॥

दोहा- **गाथा स्कंध तृतीय की, पावन परम अपार ।**
वरणी बजरंग लाल ने, निज मति के अनुसार ॥ १६१ ॥

इति श्री कृष्ण चरितामृते कलिमल विध्वंशने बजरंग कृत श्री मद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां समाप्तोऽयं तृतीय स्कंधः

हरि ॐ तत्सत्

||श्री गणेशाय नमः ||

|| श्री राधा वल्लभो विजयते ||

|| श्री मद्भागवत् प्रारम्भ ||

चतुर्थ स्कंध

श्लोक

वन्दे देव महेश्वरं सुर वरं, वन्दे जगद्व्यापिनं
वन्दे शंभु कपर्दिनं कवचिनं, शान्तं शिवं शंकरम् ।
भस्मोद्धूलित विग्रहं स्वरमयं, वन्दे गिरीजेश्वरं ।
स्थाणुं सूक्ष्म तनुं भव भय हरं, गंगाधरं सात्विकम् ॥१॥

दोहा— **मनुशवरुपा ते विदुर, कन्या त्रय प्रकटाय ।**
देवहूति आकूति अरु, नाम प्रसूति कहाय ॥ १ ॥

चौ— मनु शत रूपा दो सुत जाये । प्रियव्रत पद उत्तान कहाये ॥ १ ॥
अनुमति शत रूपा की पाही । रूचि हेतु मनु आकुति व्याही ॥ २ ॥
धर्म पुत्रिका के अनुसारा । कीन्हा काम नृपति यह सारा ॥ ३ ॥
रुचि ते मिथुन संतति जाई । तासु पुरुष हरि यज्ञ कहाई ॥ ४ ॥
सुता दक्षिणा यह जो जाई । लक्ष्मी अंश प्रकट वह आई ॥ ५ ॥
यज्ञ रूप हरि को मनुराई । ले गये निज मंदिर हर्षाई ॥ ६ ॥
यज्ञ रुप हरि का मनुनाथा । कीन्ह विवाह दक्षिणा साथा ॥ ७ ॥

दोहा— **स्वह्न सुदेव रोचन विभु, इध्म च तोष प्रतोष ।**
भद्र शान्ति ईड़स्पति, कवि द्वादश संतोष ॥ २ ॥

चौ— यज्ञ दक्षिणा ये सुत जाये । कालमनु स्वायंभुव आये ॥ १ ॥
तुषित देव यह तब कहलावे । यज्ञ देव पति पद पर जावे ॥ २ ॥
सप्त ऋषिन पद विधि सुत याही । इत्थं निजनिज काल बिवाही ॥ ३ ॥
उत्तानपाद प्रियव्रत बलशाली । पुत्र सपौत्र वंश नहिं खाली ।। ४ ॥
करदम देवहूति तियंपाई । तासु कथा पूरब हम गाई ॥ ५ ॥
विधि सुत दक्ष प्रसूती पाई । संतति जासु त्रिलोकी छाई ॥ ६ ॥
करदम सुता नन्द हम गाई । तासु वंश सुनहूं कुरु राई ॥ ७ ॥
जार मरीचि कला बतलाई । कश्यप पूर्णिमान सुत जाई ॥ ८ ॥

दोहा— **इन दोनों के वंश ते, भयो जगत परिपूर्ण ।**
वंश कश्यपी स्कंध षट्, कहूँ, तुम्हें सम्पूर्ण ॥ ३ ॥

चौ- पूर्णिमान सुत दो कुरु जाये । विरज व विश्वग नाम बताये ॥ १ ॥
कन्या एक विदुर वह जाई । देवकुल्य इति नाम कहाई ॥ २ ॥
अपर जन्म गंगा वह गाई । विष्णु चरण जल ते प्रकटाई ॥ ३ ॥
अत्री पतनि नाम अनसूया । सुवन तीन सुयशस प्रसूया ॥ ४ ॥
सोमदत्त दुर्वासा जाये । ब्रह्म विष्णु शिव अंश बताये ॥ ५ ॥
विदुर कहे घर अत्रि मुनीशा । केहि हेतु आये त्रय ईशा ॥ ६ ॥
सुन मैत्रेय विदुर की वानी । बोले वचन मुनीश्वर ज्ञानी ॥ ७ ॥
करहु पुत्र तुम संतति रचना । कहे धात अत्रि प्रति वचना ॥ ८ ॥

दोहा- **लोक पिता के वचन सुन, अनुसूया के साथ ।**
ऋक्ष नाम कुल आद्रि पर, गये अत्रि मुनिनाथ ॥ ४ ॥

चौ- मंडित वृक्ष अशोक पलासू । नदी नाम निर्विन्ध्या जासू ॥ १ ॥
फूल अनेक लगे उन आई । कूजत खग तियसंग लिवाई ॥ २ ॥
शीतल नीर नाद चहुँओरा । देख विपिन आत्री अति घोरा ॥ ३ ॥
उष्ण शीत वातासन दोही । एक चरण ते स्थित वह होही ॥ ४ ॥
संयम कर चित प्राणायामा । वर्ष एक शत वह निशियामा ॥ ५ ॥
तप बिच स्थित हो अत्रि मुनीशा । करी प्रार्थना यों जगदीशा ॥ ६ ॥
जो जगदीश्वर हो वह मोही । आत्म तुल्य संतित दे सोही ॥ ७ ॥
उन जगदीश शरण मैं आवा । यह वरदान देहु मनभावा ॥८॥

दोहा— **मुनि शिर की योगाग्नि ते, तपत त्रिलोक विलोक ।**
विधि विष्णु शिव आ गये, अत्रि गेह तज लोक ॥५॥

चौ — तदा अत्रित्रय मूर्ति विलोकी । निज वाहन आरूढ़ अशोकी ॥१॥
हास्य वदन सह कृपा विलोकन । देख प्रसन्न कीन्ह मुनि पूजन ॥२॥
वासु कान्ति प्रति हत मुनि नयना । क्षुब्ध भये मुख आन न वचना ॥३॥
बाद मधुर वाणी कर जोरे । त्रय मूरति प्रति वचन उचारे ॥४॥
नाथ आप प्रति करूँ प्रणामा । जेहि सुमिरेऊँ मैं प्रभु निज कामा ॥५॥
मैं तो नाथ एक बुलवावा । कारण कवन नाथ त्रय आवा ॥६॥
मन ते परे रहत प्रभु सो ही । करी कृपा दर्शन दे मोंही ॥७॥
अत्रि वचन सुनि त्रय हँसि बोले । एक तत्व किय ध्यान अडोले ॥८॥
यही हेतु हम त्रय यहँ आवा । दर्श हमार न निष्फल जावा ॥९॥

दोहा— **अंश भूत त्रय मूर्ति के, होवहिं सुत तव गेह ।**
इति वर दे तीनों गये, मुनि पूजित करि स्नेह ॥६॥

चौ—ब्रह्म अंश सोम मुनि गेहा । विष्णु अंश दत्तात्रय देहा ॥१॥
शंभु अंश दुर्वासा जाता । अत्रि वंश गाया इमि ताता ॥२॥
नाम आङ्गिरस जो मुनि राई । श्रृद्धा नाम तिया निज पाई ॥३॥
सिनी वालि कुहू राका अनुमति । कन्या चार य कीन्ह प्रसूति ॥४॥
जासू नाम उतथ्य बृहस्पति । दो सुत जाये श्रृद्धा ते इति ॥५॥
पुलस्त्य हविर्भुवि युग सुत जाये । नाम अगस्त्य विश्रवा गाये ॥६॥
नाम विश्रवा जो तपधारी । इडपिडा केशिनी दो जिन नारी ॥७॥
पुत्र कुबेर सुइडपिड जाया । यक्षप पद जिन जग विच पाया ॥८॥
नाम केशिनी जो ऋषि नारी । रावण कुंभकरण बलधारी ॥९॥
पुत्र तृतीय विभीषण जाया । वंश पुलस्त्य विदुर इमि गाया ॥१०॥

दोहा- **ब्रह्म सुवन पंचम पुलह, गति तिय को वह पाय ।**
कर्मश्रेष्ठ वरियान अरु, सुवन सहिष्णु जनाय ॥ ७ ॥

चौ- क्रिया नार ते कृतु सुत जाये । साठ सहस जेहि सब बतलाये ॥१॥
ये सब बाल खिल्य कहलाये । ब्रह्म तेज तेजस्वी गाये ॥२॥
वसिष्ठ ऊर्जा ते सुत साता । चित्रकेतु उनमे वर ताता ॥३॥
चित्रकेतु उल्वण घूमाना । विर जा मित्र वसुभृघाना ॥४॥
सुत सुरोच सह मिलकर साता । अपर पत्नि ते कई सुत जाता ॥५॥
चित्ति अथर्व मुनी की नारी । प्रकटाये दध्यङ् तप धारी ॥६॥
ख्याती ते भृगु धात विधाता । श्री नामक एक कन्या जाता ॥७॥
आयति नियति नाम निजकन्या । दीन्ही धात विधातहिं सुधन्या ॥८॥
आयति धाता मिल सुत जाया । नाम मृकंड जगत कहलाया ॥९॥
सुत मृकन्द मार्कन्डय जाया । जासु चरित जग विदित बताया ॥१०॥

दोहा- **नियति विधाता मिल विदुर, प्राण नाम सुत पाय ।**
वेद शिरा इस प्राण से, यह भृगु वंश कहाय ॥ ८ ॥

चौ— भार्गव एक अन्य कवि गाया । कवि सुत उशना नाम बताया ॥१॥
करदम कन्या संतति गाई । सुनत जासु अघ होत नसाई ॥२॥
अजसुत दक्ष प्रसूति होई । षोडश कन्या इन घर होई ॥३॥
धर्म हेत तेरह उन दीन्ही । एक अग्नि समर्पित कीन्ही ॥४॥

भवछिद्भवप्रति दीन्हेउ एकी । पितरन हेत एक शिर टेकी ॥५॥
श्रद्धा मैत्रि दया ही तुष्टी । उन्नति क्रिया तितिक्षा पुष्टी ॥६॥
मेधा बुद्धि शान्ति अरु मूरत । भार्या धर्म य नाम उचारत ॥७॥
श्रद्धा ने शुभ सुत यक जायो । मैत्रि अनुग्रह गोद खिलायो ॥८॥
दया अभय निज अंक बिठायो । प्रश्रय ही सुन्दर सुत जायो ॥९॥
तुष्टि मोद सुन ललित ललामा । उन्नति सुमन दर्प जिन नामा ॥१०॥

दोहा- **बुद्धि अर्थ मेधा स्मृति, क्रिया यो सुख शान्ति ।**
क्षेम तितिक्षा पुष्टि स्मय, भये धर्म की कान्ति ॥ ९ ॥

चौ- मूरति धर्म तिया सुखदाई । नर नारायण रिषिवर जाई ॥१॥
धर्म गेह जब रिषि वर आये । विश्व अमंगल सकल नसाये ॥२॥
दिशा मुदित अति निर्मल वाता । सरिता सर गिरि अति सुखदाता ॥३॥
पुष्प वृष्टि नभझरी लगाई । वाद्ययंत्र बाजत सुखदाई ॥४॥
मुनिगण मिल सब स्तोत्र उचारे । किन्नर मंगल शब्द पुकारे ॥५॥
मंगल गान करत सुर नारी । करत नृत्य सुन्दर सुख कारी ॥६॥
ब्रह्मादिक सब करत प्रशंसा । जयति ईश मुनि मानस हंसा ॥७॥
माया ते जो प्रभु निज गाता । गंधर्व नगर इव नभ प्रकटाता ॥८॥
आये धर्म गेह अवतारी । परम पुरुष जय जयति खरारि ॥९॥
करहु दया अवलोकन हम पर । स्तुति तव देव एवं वह रिषिवर ॥१०॥

दोहा- **गये गंध मादन गिरि, यहि रिषि अबकी बार ।**
भूमिभार दूरी करन, कृष्णार्जुन अवतार ॥ १० ॥

चौ- अग्नि स्वाहा ते सुत पाये । पावक शुचि पयमान कहाये ॥१॥
शर श्रुति अग्नि भये इन गाता । पिता पितामह अरु त्रय भ्राता ॥२॥
नंद वेद संख्या इन गाई । मरुत समूह शास्त्र बतलाई ॥३॥
ब्रह्म वादि वैदिक सहधर्मा । पावत इच्छा फल करि कर्मा ॥४॥
अग्निष्यात्त दर हिषद् सोमय । पितर चार जानहु सह सोमय ॥५॥
साग्निक और निरग्निक दोही । स्वधा नाम पत्नी इन मोही ॥६॥
स्वधा गर्भ ते धारिणी यमुना । प्रकटी कुरु वर पंकज नयना ॥७॥
ब्रह्म वादिनी भइ दोउ बाला । याते चली नहीं कुल माला ॥८॥
शिवपत्नी सती सुत नहीं पावा । युवति योग करि देह जरावा ॥९॥
रहा दक्ष शिव प्रति प्रति कूला । देख सती भई आग बबूला ॥१०॥

दोहा- **शिव निन्दक निज तात पर, करके क्रोध अपार ।**
योगाग्नि में जल गई , भव चरणन चितधार ॥११॥

चौ- कहे विदुर यह कहो मुनीशा । शीलवान शिव वर जगदीशा ॥१॥
श्वसुर और जामात विरोधा । कारण कवन सती तनु क्रोधा ॥२॥
दक्ष अनादर कीन्हा कैसे । सती प्राण त्यागा मुनि जैसे ॥३॥
सो सब कथा कहो समुझाई । यह मुनि बात विचित्र सुनाई ॥४॥
विदुर वचन सुनकर मुनि बोले । सुनहु कथा कुरु चित्त अडोले ॥५॥
प्रजापति यज्ञ बीच एक बारी । आये रिषि मुनि सुर सहनारी ॥६॥
छटा देखि मंडप मन भायी । अग्नि आदि निज निज अनुयायी ॥७॥
दक्ष प्रजापति जब वहँ आये । तेज भानु सम अति हर्षाये ॥८॥
उठे देव सब किये प्रणामा । उठे नहिं शिव विधि गुण धामा ॥९॥
दक्षा प्रजापति सब सुर सत्कृत । स्थित आसन विधि कर नत मस्तक ॥१०॥

दोहा- **अनुत्थित शिवहिं विलोकि के, जल भुन गया शरीर ।**
अरूण नयन कर दक्ष वह, बोले वचन अधीर ॥१२॥

चौ- अग्नि सहित द्विज सुर मुनिराई । सुनहु वचन मम सभी सभाई ॥१॥
हो घमंड वश नहिं अज्ञाना । कहूँ उचित मैं वचन प्रमाना ॥२॥
यह शिव लोक पाल यश हानी । करत निलज्ज अहो मनमानी ॥३॥
अहंकार युत सत्पथ त्यागी । कपि सम नयन अहो हतभागी ॥४॥
सज्जन सम मम सुता सयानी । सावित्री सम जो मृगनयनी ॥५॥
मम पवित्र कन्या के साथा । अग्नि विप्र सन्मुख गहिहाथा ॥६॥
यही हेतु मम पुत्र समाना । उचित न अनुचित राखहिं ज्ञाना ॥७॥
उचित बात तो इसको दोही । उठ स्वागत करता खुश होही ॥८॥
करत प्रणाम पिता की नाई । किन्तु अरे यह शठ अन्याई ॥९॥
वचन मात्र ते भी मम आदर । किया नहीं यह अशुचि दिगम्बर ॥१०॥

दोहा- **भावी वश निज बालिका, अरुचि होत यहि दीन्ह ।**
शुद्रवेद इव मैं अरे, बुरो कर्म यह कीन्ह ॥१३॥

चौ- क्रिया भृष्ट पर धर्म विरोधी । भूत पिशाच संग अति क्रोधी ॥१॥
मरघट बीच करत यह वासा । रोवत नगन फिरत परिहासा ॥२॥
उन्मत सम शिर बाल बिखेरे । चिता भस्म कृत स्नान सवेरे ॥३॥
मुंडमाल धरि अस्थि विभूषण । शिव अपि अशिव भरे अतिदूषण ॥४॥

भाल पुंड्र त्रय शूल कराला । नयन तीन गल सर्प विशाला ॥५॥
मत्त मत्त जन प्रिय हितकारी । भूतपति चित्त दुष्ट अपारी ॥६॥
प्रमथ प्रेतपति तमगुणधारी । मंगल हीन अमंगलकारी ॥७॥
विधि प्रेरित साध्वी मम बाला । की अर्पन बिन देखेउ भाला ॥८॥
शिव निन्दक वह दक्ष विदुर वर । दियो शाप अति क्रोधित होकर ॥९॥
सुरगण सह जँह होवहि यागा । देवगणाधम पावन भागा ॥१०॥

दोहा- **कियो मना सबने वह, तदपि शाप शिव हेत ।**
देकर विधि सुत चल दिये, तज कर यज्ञ निकेत ॥१४॥

चौ- शिव निन्दक जब निज गृह गमना । सभाशान्त मुख आव न बचना ॥१॥
अग्रगण्य शंकर अनुयायी । दक्षशाप शिव प्रति दुखदायी ॥२॥
सुनकर क्रोध कियो अति भारी । नन्दीश्वर तब गिरा उचारी ॥३॥
दक्ष हेतु अरु उन अनुयायी । दियो शाप सब सभा सुनायी ॥४॥
मानत दक्ष देह शुभकारी । कियो बैर शिव प्रति अघधारी ॥५॥
परमार्थ विमुख होवहिं शिव द्रोही । जन्म मरण दुख उन अति होही ॥६॥
भूला यह निज आत्म स्वरूपा । साक्षात अरे यह पशु अनुरूपा ॥७॥
गृहाशक्त नित वनत सुधर्मी । भेद बुद्धि अतिभृष्ट अधर्मी ॥८॥

दोहा— **अज समान मुख पावहिं, तिय लम्पट अज्ञानि ।**
मूर्ख अविद्या को यह, विद्या सम अनुमानि ॥१५॥

चौ— शिव निन्दक अनुमोदक जेते । जन्म मरण दुख वचहि न वेते ॥१॥
मुग्ध चित्त करम रति होही । कर्म मार्ग भटकहि शिव द्रोही ॥२॥
दक्ष अनुसृत जे द्विजराई । भक्ष्य अभक्ष्य विचार तजाहि ॥३॥
तप विद्या व्रत धृत निज रोजी । करहिं न आत्म तत्व यह खोजी ॥४॥
धन तनु इन्द्रिय सुख प्रति कामी । माँगहि भीख व करत गुलामी ॥५॥
एवं द्विज कुल प्रति सुनि शापा । भृगु रिषि तनु अति क्रोध वियापा ॥६॥
दियोशाप दुस्तर मुनि स्वामी । जे शिव व्रतधर उन अनुगामी ॥७॥
चालहिं शास्त्र मार्ग विपरीता । पाखंड धर्म के हो आश्रयिता ॥८॥
शिव दीक्षा में करहिं प्रवेशा । भस्म अस्थि शिर राखहिं केशा ॥९॥
मन बुद्धि अरु शौच विहीना । आसव सुरा रहहीं आधीना ॥१०॥

दोहा- **वेद शास्त्र द्विज निन्दक, धर पाखंडी रूप ।**
वेद सनातन मार्ग का, तजकर सत्य स्वरूप ॥१६॥

चौ- जहाँ भूतपति करहिं निवासा । जाहू सत्य मार्ग तजि आसा ॥१॥
भृगु रिषि के सुनकर यह शापा । खिन्न हृदय कुछ शिव चुप चापा ॥२॥
निज अनुयायि संग कैलासी । निज आश्रम गवने सुख राशी ॥३॥
इधर प्रजापति यज्ञ रचाई । हरि पद पंकज चित्त लगाई ॥४॥
दश शत सम्बत्सर पर्यन्ता भयो यज्ञ यह पूरण अन्ता ॥५॥
करि प्रयाग अवभृथ स्नाना । गये मुदित पुनि सव निज स्थाना ॥६॥
विदुर श्वसुर जामाता विरोधा । चला काल बहु दोउ मन क्रोधा ॥७॥
देखा सब प्रकार विधि लायक । दक्षहिं कीन्ह प्रजापति नायक ॥८॥
जब अधिकार दक्ष यह पावा । अति अति मान हृदय बिच छावा ॥९॥

दोहा- **लियो जन्म जिस मनुज के, इस जग के दरम्यान ।**
प्रभुता पाकर के उसे, सदा भयो अभिमान ॥ १७ ॥

चौ- प्रथम दक्ष येक जग कीन्हो । किन्तु भाग शिव प्रति नहि दीन्हो ॥१॥
बृहस्पति सम अब यज्ञ रचावा । सुर मुनि सब प्रति निवत पठावा ॥२॥
रिषिमुनि पितर सिद्ध गंधर्वा । पत्नी समेत चले सर सर्व ॥३॥
कियो दक्ष उन अति सत्कारा । आये रिषि मुनि देव अपारा ॥४॥
सती विलोके व्योम विमाना । चले जात सुन्दर विधि नाना ॥५॥
जावत देव तिया निज याना । गले हार कुंडल वर काना ॥६॥
करत जात सब यज्ञ बड़ाई । पिता यज्ञ सुनि अति हर्षाई ॥७॥
बोली सती मनोहर वानी । श्वसुर प्रजेश शंभु गुण खानी ॥८॥
उन गृह यज्ञ महोत्सव भारी । जात सकल सुर सह निज नारी ॥९॥
पति सह मम भगिनी सब आहीं । बहु दिन ते जिनकी सुधि नाहीं ॥१०॥

दोहा- **नाथ आपके साथ मैं, चलूं पिता के गेह ।**
मात पिता द्वारा दिये, वह उपहार सनेह ॥१८॥

चौ- स्वीकृत करूँ वस्त्र अरु भूषण । चलहु नाथ नहि बात विलक्षण ॥१॥
माता भगिनी मिले परिवारी । बहुत काल बीता त्रिपुरारी ॥२॥
रिषिवर रचित यज्ञ शुभ दर्शन । मिलहिं वहाँ पर हमको भगवन ॥३॥
नाथ अजन्मा प्रभु अविनासी । माया ते शिव सदा उदासी ॥४॥
नार स्वभाव तत्व अनभिज्ञा । जानत स्वरूप नहिं तव मम प्रज्ञा ॥५॥
जन्म भूमि प्रति मम रुचि होही । चले नाथ हम मिलकर दोही ॥६॥
लखहू नाथ सम्बन्ध विहीनी । जात पति संग ये मृगनयनी ॥७॥

व्याप्त अभय यह व्योम विमाना । तात गेह कौतुक सुनि नाना ॥८॥
अस शिव को कन्या जग माँही । पिता गेह रूचि होव न जाही ॥९॥
पिता मित्र प्रभु निज गुरु गेहा । बिन बुलाय जावहि करि स्नेहा ॥१०॥

दोहा- **करहु देव इतनी कृपा, करुणामय मम नाथ ।**
मात पिता दरसन हित, चलूँ आपके साथ ॥१९॥

चौ– एवं सती वचन सुन शंकर दक्ष वचन कटु निज हियधर कर ॥१॥
सुन्दरि तुम जो वचन सुनाया । बन्धुगेह निज बिना बुलाया ॥२॥
यह मत तोर मोर मन भावा । उचित नाँहि यह बिना बुलावा ॥३॥
जहाँ क्रोध मद अति अहँकारा । दोष दृष्टि हो जहां अपारा ॥४॥
जावत वहाँ अति होवत हानी । सुनो वचन मम सुमुखि सयानी ॥५॥
विद्या तप धन वपु अभिमानी । गनहि न श्रेष्ठ तेज अज्ञानी ॥६॥
दुष्ट स्वजन संग कबहुँ न कीजे । चौथ चन्द्र सम उन तज दीजे ॥७॥
घर आवत जो निज महमाना । देखत वक्र दृष्टि उन नाना । ॥८॥
उस घर गमन कबहुँ मत कीजे । नर पुरीष सम उन तज दीजे ॥९॥
वक्र दृष्टि स्वजन सुन भाषण । ताडित मर्म दिवा निशि शोषण ॥१०॥

दोहा- **होत सती जैसी व्यथा, दुष्ट स्वजन सुन वैन ।**
वैसी हो नहि वाणते, नहीं रात दिन चैन ॥२०॥

चौ– सुन्दरि सत्य वचन यह मेरा । करत दक्ष तोहिं प्रेम घनेरा ॥१॥
तदपि आज मम आश्रित कारन । करहिं प्रेम नहि तोहि मन भावन ॥२॥
यह प्रजेश पद प्रति ना लायक । राखत भेद बुद्धि बन नायक ॥३॥
दैत्य झुंड जिमि हरी विरोधी । सज्जन स्मृद्धि लखि उन प्रति क्रोधी ॥४॥
समिति प्रजापति बीच अनादर । कियो आप जो कहा सतीवर ॥५॥
सुनौ साध्वी उत्तर तासू । सुन प्रतिकार होहिं तब जासू ॥६॥
सन्मुख गमन सति नरमाई । प्रणय आदि जे क्रिया बताई ॥७॥
होत परस्पर मानव द्वारा । तत्व ज्ञानि ना करत विचारा ॥८॥
ना अभिमानी प्राणि प्रति ज्ञानी । किन्तु नमहि वह शारंग पानी ॥९॥
मैं उन शुद्ध चित्त भगवाना । चिन्तन क्रिया करहु मनमाना ॥१०॥

दोहा- **सर्वत्र व्याप्त हरि के प्रति, है ये दक्ष अजान ।**
यही हेतु इसने सति, कियो मोर अपमान ॥२१॥

चो– दाक्षायणि मम नहि अपराधा । कहा दक्ष कटु वचन अगाधा ॥१॥
यद्यपि यह तव जन्म प्रदाता । तदपि शत्रुता राखत गाता ॥२॥
पिता बन्धु भगिनी परिवारी । लखहुन सति इन नयन उघारी ॥३॥
जाना वहां तोर नहिं नीका । कहा वचन जो नहीं अलीका ॥४॥
वचन अनादर कर यदि जाही । होय अमंगल मंगल नांही ॥५॥
निज जन ते यदि हो अवमाना । होत अकीरत मौत समाना ॥६॥
अंग नाश लखि दोउ प्रकारा । भये विदुर शिव मौन उदारा ॥७॥
इधर सती इच्छुक परिवारी । जावत भीतर कबहूँ बारी ॥८॥
रोत नेहवश विह्वल भारी । रोषित शिव प्रति भई अपारी ॥९॥
रोष पूर्ण शिव देखन लागी । मानो भस्म करहिं उर आगी ॥१०॥

दोहा- **शोक क्रोध ने तासु चित्त, कियो बहुत बैचेन ।**
स्त्री स्वभाव वश मूढ़ धी, माना ना शिव बैन ॥२२॥

चौ– दीर्घ सांस चलि चंचल चेता । गई त्याग शिव पिता निकेता ॥१॥
द्रुति जात अकेल भवानी । शिव आज्ञा निज मन नहि मानी ॥२॥
तब शिव अनुग वहां पर जेता । मद मणि मान वृषेन्द्र सहेता ॥३॥
शुक वन प्रिय कन्दुक अरु दरपन । अम्बुजादि सब क्रीड़ा साधन ॥४॥
श्वेत छत्र चामर ले माला । दुंदुभि शंख वेणु करताला ॥५॥
ढोल मृदंग बजा मतवाले । सती संग निर्भय अति चाले ॥६॥
हो वृषेन्द्र पर सती सवारी । पहुँची शीघ्र यज्ञ मुख द्वारी ॥७॥
विप्रन वेद पाठ प्रति होड़ा । कौन अधिक बोलहिं को थोड़ा ॥८॥
सुर मुनि विप्र वृन्द जहँ सोही । मंडप छटा देखि मन मोही ॥९॥
यज्ञ भवन जब गई भवानी । काहुँ न दक्ष त्रास सन्मानी ॥१०॥

दोहा- **आदर सह माता मिली, भगिनी मिली आ पास ।**
पिता बात पूछी नहीं, उल्टा भयो उदास ॥२३॥

चौ- माता मौसि दियो उपहारा । किन्तु सती मन सोच अपारा ॥१॥
सती जाय देखेउ पुनि यागा । देखा कहिं न शंभुकर भागा ॥२॥
करत दक्ष शिव का अपमाना । देखा जग्ग बीच मन माना ॥३॥
तब मानेऊ जो शंकर कहेऊ । प्रभु अपमान समुझि उर दहेऊ ॥४॥
प्रथम कष्ट उर नहि अस व्यापा । जस यह भयऊ महा परितापा ॥५॥
यद्यपि जग दारुन दुख नाना । सबसे अधिक जाति अपमाना ॥६॥

समुझि सो सतिहिं भयउ अतिक्रोधा। करहि भस्म मनु लोक असोधा ॥७॥
दक्षहिं कर्म मार्ग अभ्यासा। भयो गर्व यहि हेत प्रकासा ॥८॥
देखेऊ जब शिव का अपमाना। आये भूत प्रेत पति नाना ॥९॥
दक्ष हनन हेतु वह आये। किन्तु सती जा वह समझाये ॥१०॥

दोहा- **कहे सती अति क्रोध भर, कर निन्दा निज तात।**
शिव समान इस जगत में, नहीं कोई विख्यात ॥२४॥

चौ– प्रिय अप्रिय जग जासु न कोही। तात विरोध उचित नहिं तोही ॥१॥
तव सम नर देखहिं पर दोषा। करत ग्रहण नहि गुणि गण कोषा ॥२॥
गुण विच गुण दोषहिं विच दोषा। देखत कोई संत हिय कोषा ॥३॥
अणु सम पर गुण गिरिवत जाने। श्रेष्ठ संत व शास्त्र बखाने ॥४॥
बड़ अफसोस तात तव ऊपर। दोषारोपण संत जनों पर ॥५॥
करत लाज नहि आवत तोही। जासु वचन लाँघहि नहिं कोही ॥६॥
शिव दो अक्षर नाम कहाई। ऐत नाम अघ होत नसाई ॥७॥
यह शिव शंकर मङ्गलरुपा। तात अमंङ्गल तोर स्वरूपा ॥८॥
ब्रह्मानन्द सारविद् जासू। सेवत पाद कमल हिय वासू ॥९॥
करंत वयर शोभा नहिं तोरी। उचित वचन कहुँ नहिं वर जोरी ॥१०॥

दोहा- **जटा बिखेरे वह शिव, क्रीड़ा करत मशान।**
उन प्रति धारित भस्म को, धरहिं ब्रह्म भगवान ॥२५॥

चौ– सन्त शंभु श्रीपति अपवादा। सुनिअ जहाँ तहँ असि मरयादा ॥१॥
काटिय तासु जीभ बस आई। श्रवन मूंदि नत चलिय पराई ॥२॥
जगदातमा शंभु त्रिपुरारी। जगत जनक सबके हितकारी ॥३॥
अरे मन्द मति निन्दत तेही। तोर शुक्र संभव यह देही ॥४॥
वस्तु अखाद्य खात यदि कोई। वमन बिना उन शुद्धि न होई ॥५॥
तजिहऊँ तुरत देह येहि हेतु। उर धरि चन्द्रमौलि वृष केतू ॥६॥
रमण करत मुनि निज हिय आही। वेद निषेध वचन प्रिय नाहीं ॥७॥
यज्ञ याग शम दम जग जेते। शंकर नाहि कबहुँ इन शेते ॥८॥
ऐश्वर्य तात अव्यक्त हमारा। सेवित महापुरुष नर द्वारा ॥९॥
अणिमादिक सिद्धि नग ख्याता। मिलहिं न ते घर कबहूँ ताता ॥१०॥

दोहा- **दुष्ट स्वजन सम्बन्ध ते, आवत मोहीं लाज।**
शिव निन्दक बन दक्ष तुम, कियो नहिं प्रिय काज ॥२६॥

चौ– करहि जो महत पुरुष अपमाना । उन संसर्ग जन्मधिक माना ॥१॥
कबहूं शिव मोंहि हास्य पुकारे । दाक्षायणि इति नाम उचारे ॥२॥
दुखित चित्त होवहुँ तब भारी । निश्चित तजूँ देह यहि धारी ॥३॥
सती दच्छ प्रति इमि कह वचना । भई मौन उत्तर दिसि वदना ॥४॥
योग मार्ग विच चित्त लगाई । प्राण अपान नाभ विच लाई ॥५॥
बाद उठा उर वात उदाना । निज हिय ते भृकुटी विच आना ॥६॥
तजित देह इच्छुक निज गाता । धारी अगनि वायु कुरु ताता ॥७॥
चन्द्र मौलि पद अम्बुज ध्याई । योग अग्नि निज देह जलाई ॥८॥
सुनत न कान परत चहुँ ओरा । त्यागा प्राण सती यह सोरा ॥९॥
हाय दक्ष यह कीन्ह बुराई । निज कन्या प्रति नहीं भलाई ॥१०॥

दोहा- **जीव चराचर सब प्रजा, सभी दक्ष सन्तान ।**
देखो इसकी दुष्टता, कियो सती अपमान ॥२७॥

चौ– यहि प्रति सती प्राण निज त्यागा शिव द्वेषी यह परम अभागा ॥१॥
पावहिं ये दुष्कीर्ति महाना । भोगहिं अन्त नरक यह नाना ॥२॥
सति अपमानित प्राण तजाही । देखहु दुष्ट निवारेउ नाही ॥३॥
सती मरण लखि शिव गण धाये । निज निज आयुध ले मन भाये ॥४॥
दच्छहि नास हेत लखि सारे । तब भृगु रिषि निज मंत्र उचारे ॥५॥
दक्षिण कुंड आहुति दयहू । ऋभव नाम सुर तब प्रकटयहू ॥६॥
धाये वे सब शिवगण ऊपर । भागे तब निज प्राण बचाकर ॥८॥
भूत प्रमथ सह गुह्यक सारे । गये शरण शिव हो दुखियारे ॥९॥
निन्दित सती दक्ष के द्वारा । योग अग्नि ते निज तनु जारा ॥१०॥

दोहा- **सैन्य पलायन सब सुनी, नारद मुख भगवान ।**
कुछ चिन्तित होकर मन, कीन्हो क्रोध महान ॥२८॥

चौ– क्रुद्ध होय निज जटा उखारी । धुर्जटि शीघ्र भूमि पर डारी ॥१॥
जटा सकाश कृष्ण तनु जासू । तीन भानु त्रय नेत्र प्रकासू ॥२॥
काल दंष्ट्र आयुध कर नाना । ज्वलत अगनि सम केश महाना ॥३॥
मुंड माल गत विच भयकारी । करहिं स्पर्श अम्बर तनु धारी ॥४॥
प्रकट्यो वीर भद्रगण एकी । कही गिरा शिव पद शिर टेकी ॥५॥
कहहु नाथ वहि करूँ उपाई । यह सुनि कहे शंभु गिरि राई ॥६॥
वीरभद्र तू अंशज मोरा । मम गण बीच स्थल बड़तोरा ॥७॥

जात तात मति देर लगाहू । दक्ष सहित उस यज्ञ नसाहू ॥८॥
वीर भद्र सुन वचन मुरारी । अट्टहास कर गर्जेउ भारी ॥९॥
महा यमान्तक ले त्रयशूला । भयो क्रोध अति आग बबूला ॥१०॥

दोहा- **शिव परिकरमा कर वह, भूत प्रेत वेताल ।**
निज सेना लेकर गयो, यज्ञ भूमि तत्काल ॥२९॥

चौ– यजमान सदस्य व ऋत्विज देखी । उत्तर धूली उड़त विशेखी ॥१॥
कर चिन्ता इति कहने लागे । वात न चलत न चौर अभागे ॥२॥
समय गोधुली नहीं सुखदाई । प्रलयकाल वेला ना आई ॥३॥
अरे बतावहु यह रज कैसी । पता लगावहु यह हो जैसी ॥४॥
दक्ष तियादिक जेती नारी । उद्वेग चित्त हो गिरा उचारी ॥५॥
किया सती का जो अपमाना यह फल उसका ही अनुमाना ॥६॥
प्रलयकाल विच जब शिवशंकर । जटा खोल हो जात भयंकर ॥७॥
नाचत जब निज भुज फैलाही । शिव त्रिशूल दिग्गज विंधजाही ॥८॥
गरजन मेघ समान सुनतहीं । दिशा विदीर्ण सकल सब होवहीं ॥९॥
तेज असह इन भृकुटि विलासा । रूप भयानक करत प्रकासा ॥१०॥

दोहा- **अस्त व्यस्त तारागण, देखत दंष्ट्र कराल ।**
क्रोध मूर्ति शिव कुपित हो, आवत निश्चय काल ॥३०॥

चौ- शंकर कोपित जिस पर होही । मंगल कल पावत क्यों कोई ॥१॥
साक्षात विधाता हो शिवद्रोही । परम मार्ग वह कबहुँ न जोही ॥२॥
यों सब करत परस्पर बाता । भये अनेक वहाँ उत्पाता ॥३॥
वदन अनेक धरे शिव अनुचर । घेरी यज्ञ भूमि उन कुरुवर ॥४॥
पिङ्ग पिशङ्ग वभ्रु तनु वामन । मकर समान उदर जिन आनन ॥५॥
कोई पूरब वंश उखारा । पश्चिम वंश तोर महि डारा ॥६॥
पतनी शाला कोई विनासी । तोरेउ मंडप सन्मुख वासी ॥७॥
कियो मूत मल कुंड विगारी । अपर मेखला तीन उखारी ॥८॥
अग्नि शाल जाकर के कोई । पाकशाल सब खोद फिंकोई ॥ ९ ॥
तोरेउ कोई गेह यजमाना । यज्ञ पात्र तोरेउ कर नाना ॥ १० ॥

दोहा– **कोई बाँधत मुनिन को, अपर डरावहिं नार ।**
कोई देवन को पकड़, देवत दुःख अपार ॥ ३१।

चौ- मणीमान भृगु बाँधेउ आई । वीर भद्रगण दक्ष गहाई ॥ १ ॥
चन्डी गण पूषा गहि जीन्ही लीन्हो । नन्दी भग निज वश में कीन्हो ॥ २ ॥
सारे ऋत्विज देव सदस्य । प्रस्तर मार खाय तजि यग्य ॥ ३ ॥
श्रुवा हाथ भृगु करहिं जो होमा । वीरभ्रद खींचे हनुरोमा ॥ ४ ॥
दक्षानन निन्दित जब गिरिराई । तब भृगु दाढ़ी मूँछ हिलाई ॥ ५ ॥
कियो समर्थन दक्ष प्रजेशा । यही हेतु कतरे उन केशा ॥ ६ ॥
भगहिं भूमि पर दयउ पछारी । शिवगण उन दोउ नैत्र उखारी ॥ ७ ॥
निन्दित शिव प्रति नेत्र चलाई । कियो समर्थन भग वहँ आई ॥ ८ ॥
पूषा दशन तोर महि डारे । शिव प्रति इन निज दाँत निकारे ॥ ९ ॥
वीरभद्र निज खड्ग उठावा । दक्ष सीस ना कटे कटावा ॥ १० ॥

दोहा— **अस्त्र शस्त्र से दक्ष की, कटी त्वचा जब नाँहि ।**
वीर भद्र अचरज कियो, पुनि विचार हिय माँहि ॥ ३२॥

चौं- पशु समान पुनि कंठ मरोड़ा । दक्ष देह ते सिर उन तोड़ा ॥ १ ॥
प्रेत भूत बेताल पिशाचा । गणपति कर्म देख मन जाँचा ॥ २ ॥
वीर भद्र इत भई बड़ाई । दक्ष पक्ष मातम उत् छाई ॥ ३ ॥
यज्ञ स्थल सब आग लगाई । वीरभद्र कैलाश सिधाई ॥ ४ ॥
शिव पद पंकज निज सिर नाई । दक्ष यज्ञ सब कथा सुनाई ॥ ६ ॥
बोले वच शंभूत्रिपुरारी । हो न पराजय कबहुँ तुम्हारी ॥ ८ ॥
प्रकटी देह तोर मम गाता । यही हेतु अतिप्रिय मोंहि ताता ॥ ९ ॥
वीरभद्र गाथा तब कोई । सुनहि पराभव कबहुँ न होई ॥ १० ॥

दोहा- **वीरभद्र कैलास इत, सुनहु विदुर उत हाल ।**
होय पराजित रौद्रते, भये देव बेहाल ॥ ३३ ॥

चौ- प्रस्तर पट्टिश शूल कृपाना । छिन्न अंग सब सुर भय माना ॥ १ ॥
धात समीप गये सुर सारे । कर वन्दन सब हाल पुकारे ॥ २ ॥
विष्णु सधात जग्य तहि आये । होनहार यह प्रथम लखाये ॥ ३ ॥
देव वचन सुनकर कमलासन । सुनो देव मम कथन सुहावन ॥ ४ ॥
तेजवंत अपराध न छोटा । परम मार्ग ना मारग खोटा ॥ ५ ॥
किय अपराध अरे तुम सारे । लुप्त कियो शिव भाग पुकारे ॥ ६ ॥
अब तुम शिव पद पंकज जाहू । निज अपराध क्षमा करवाहू ॥ ७ ॥
कुपित शंभु यदि जो मन चाही । लोकपाल सह लोक नसाही ॥ ८ ॥

यज्ञ हेतु रुचि यदि मन चाही। करहु विनय उन सन्मुख जाही ॥ ९ ॥
उन शिव बल विक्रम परमाना। मैं तुम इन्द्र कदापि न जाना ॥ १० ॥

दोहा- **इस प्रकार कह कर विधि, सबहिं बँधाई आस।**
पितर प्रजेश सुह, मुनि सह गये बाद कैलाश ॥ ३४ ॥

चौ- योग सिद्ध सेवित सुर सर्वा। किन्नर गान करहिं गन्धर्वा ॥ १ ॥
मणि मय श्रृंग अपार सुहाई। द्रुम अनेक लता लिपटाई ॥ २ ॥
विचरत खग मृग इत उत नाना ॥ निर्झर करत अनेक सुहाना ॥ ३ ॥
रतिप्रद सिद्ध मनोहर नारी। निज प्रियतम सह करत विहारी ॥ ४ ॥
मोर शोर चहुँ ओर सुहाना। मस्त भ्रमर जहँ गावहिं गाना ॥ ५ ॥
कोकिल ध्वनि लागत अतिमीठी। नभचर वाणी वदत अनूठी ॥ ६ ॥
द्रुम शाखा अति उच्च सुहाई। खगहिं टेरि अनु शाख हिलाई ॥ ७ ॥
पारिजात मन्दार तमाला। सरल ताड़ कचनार रसाला ॥ ८ ॥
अर्जुन असन शाल युतसोही। गिरिवर सुन्दर सब मन मोही ॥ ९ ॥
आम्र कदम्ब निम्ब पुन्नागा। वकुल अशोक कुरव वर नागा ॥ १० ॥

दोहा- **पाटल चम्पा मालती, कुब्जक कंद अनूप।**
शतदल कंज इलायची, लता माधवी रूप ॥ ३५ ॥

चौ- वट पीपल तरु कटहल पाकर। भोज वृक्ष गूगल औदुम्बर ॥ १ ॥
महू प्रियाल आमलक भारी। राजपूग जामून सुपारी ॥ २ ॥
दंगुपि तिन्दुक इम्मलि नाना। विल्व खजूर लसोठ महाना ॥ ३ ॥
कपिथ रेणुका आल अपारा। आवत मधू गंध जिन द्वारा ॥ ४ ॥
तरुवर जात अनेक प्रकारी। वेणु कीचक झाड़ अपारी ॥ ५ ॥
पद्म कुमुद उत्पल कल्हारा। सरवर सोभित कई प्रकारा ॥ ६ ॥
पक्षि वृन्द सोभित जिन ऊपर। फिरहिं सिंह मृग चीता वानर ॥ ७ ॥
रीछ वराह शरभ अरु साही। नीलगाय मृग कृष्ण वृकाही ॥ ८ ॥
वन्य महिष कर्णान्त्र अपारा। जीव चतुष्पद कई प्रकारा ॥ ९ ॥
हय मुख एक पाद अहि बाधा। मृग मद फिरत वृक्ष लघु लाँघा ॥ १० ॥

दोहा- **लगी सरोवर तटपर, कदलिन स्तंभ कतार।**
गिरि के चारों ओर पर, नन्दा नदी अपार ॥ ३६ ॥

चौ- सरित पूत जल सति अस्नाना। भयो पवित अति परम महाना ॥ १ ॥
देख सभी सुर सुन्दरताई। भये मुदित अति करे बड़ाई ॥ २ ॥

रम्य पुरी अलका अति पावन । सौगन्धिक वन परम सुहावन ॥ ३ ॥
सौगन्धिक वन पंकज जँह नाना । जिन सर्वत्र सुगंध महाना ॥ ४ ॥
अलकनन्द नन्दा दोउ देखी । पुर बाहर बह रही विशेषी ॥ ५ ॥
तीर्थपाद श्री हरिपद धूरी । भई विदुर दोउ पावन पूरी ॥ ६ ॥
रति कर्शित सुर तिय किय स्नाना । प्रियतम पर जल उछ्रित नाना ॥ ७ ॥
करत स्नान कुच कुंकुम नूतन । धुलत पीत जल होत सुहावन ॥ ८ ॥
विगत तृषा गज सह निजनारी । गंध स्वाद ते पीवत वारी ॥ ९ ॥
तार हेम मणि जडित विमाना । उड़त विदुर अम्बर पर नाना ॥ १० ॥

दोहा- **अलकापुर को त्याग सुर, सौगन्धिक वन आय ।**
रंग विरंगे फूल फल, सुरतरु रहे सुहाय ॥ ३७ ॥

चौ- रक्त कंठ खग स्वर युत मंडित । कमल सहित सर नीर अखंडित ॥ १ ॥
षटपद स्वर मंडित चहुँ ओरा । करत मोर निज तिय सह सौरा ॥ २ ॥
वन कुञ्जर घर्षित हरिचन्दन । वात पुण्यजन लिय मन मन्थन ॥ ३ ॥
मणि वैडूर्य रचित सोपाना । वाणी उत्पल मालिनि नाना ॥ ४ ॥
एवं वन सौगन्धिक देखा । पास एक वट वृक्ष विशेषा ॥ ५ ॥
शत योजन तरुवर उँचाई । योजन शाख पिचेहत्तर गाई ॥ ६ ॥
रहहिं सर्वदा वँह शुभ छाया । वर्जित ताप अनीड लखाया ॥ ७ ॥
अन्तक तुल्य वहाँ आसीना । देखेशिव सुर क्रोध विहीना ॥ ८ ॥
सिद्ध मुनी सह सखा कुबेरी । सेवा करहिं सदा शिव घेरी ॥ ९ ॥
विद्या जप तप योग सहेतु । करहिं शंभु जग मंगल हेतू ॥ १० ॥

दोहा- **जटा अजिन भस्मीकृत, दंड सीस विधुरेखा ।**
संध्या काली मेघ तनु, चिन्ह तापसी देख ॥ ३८ ॥

चौ- सभा मध्य स्थित शंभु कुशासन । ब्रह्म सनातन ज्ञान सुहावन ॥ १ ॥
नारद हेत करत उपदेशा । वाम पाद उरु याम्य प्रदेशा ॥ २ ॥
अक्ष मालि मुद्रा किय तर्कित । वे शिव योग पट्ट के आश्रित ॥ ३ ॥
अनुभय ब्रह्म एक चित धारी । करते देखा सुर त्रिपुरारी ॥ ४ ॥
कियउ प्रणाम दोउ कर धारे । लोकपाल सह सुर मुनि सारे ॥ ५ ॥
सुर अरु असुर करत जिन वन्दन । धांत विलोकि हेत अभिवन्दन ॥ ६ ॥
उठे शंभु सिर कियो प्रणामा । शिव अनुवृत जेते हरि धामा ॥ ७ ॥
किये वन्दना मिलकर सारे । तब शिव प्रति विधि वचन उचारे ॥ ८ ॥

विश्वनाथ भगवान कृपालू । ब्रह्म अखंड हे दीन दयालू ॥ ९ ॥
शिव शक्ति रूप दोउ कर क्रीडाई । सृजतु पालेहु नासहु साँई ॥ १० ॥

दोहा- **वेद मार्ग प्रभु आपने, प्रकटायो जग बीच ।**
जो इसको माने नहीं, उस समान को नीच ॥ ३९ ॥

चौ- मङ्गल रूप महेश्वर स्वामी । करहिं काम जो शुभ निशियामी ॥ १ ॥
स्वर्ग मोक्ष देवहु उन ताता । करत कुकर्म नरक फल पाता ॥ २ ॥
यह व्यतिक्रम प्रभु कवन प्रकारा । नाथ आप तो परम उदारा ॥ ३ ॥
करहिं पदाम्बुज तव निज गाता । सत साधुन नहिं क्रोध सताता ॥ ४ ॥
मंद बुद्धि दुष्टाशय साधू । तव सम संत देन उन बाधू ॥ ५ ॥
कृक्ष अपराध मंद धी कोई । कृपा पात्र शिव तब वह होई ॥ ६ ॥
देशकाल प्रति मोहित चेता । भेद दृष्टि होवहिं जग जेता ॥ ७ ॥
यदि अपराध नाथ वह कहहीं । तुम सम संत दया उन धरहिं ॥ ८ ॥
सर्वज्ञ प्रभो सुर मुनि हित कर्ता । माया हीन अजय जग भर्ता ॥ ९ ॥
जासु चित्त माया श्रम जोही । कर्म मार्ग प्रति आसत होही ॥ १० ॥

दोहा- **बन जावत अपराध कुछ, भूल चूक आधार ।**
करहु कृपा करुणायतन, सब अपराध विसार ॥ ४० ॥

चौ- हे विश्व मूल चराचर भर्ता । सम्पूर्ण यज्ञ प्रभुपूरणकर्ता ॥ १ ॥
यज्ञ भाग के तुम अधिकारी । किन्तु दक्ष के दुष्ट अनारी ॥ २ ॥
याज्ञिक आप हेत तव भागा । नहिं दीनेउ वे परम अभागा ॥ ३ ॥
यही हेत उनको फल नाहीं । कियो नाथ तुम यज्ञ नसाही ॥ ४ ॥
यजमान नाथ अब जीवित होही । भगहिं नेत्र मिलहि प्रभु दोही ॥ ५ ॥
भृगु प्रति दाढ़ी मूँछ लगाहू । पूषहिं वापिस दन्त दिलाहू ॥ ६ ॥
भग्न गात्र ऋत्विज सुर सारे । आयुध पत्थर के जो मारे ॥ ७ ॥
कृपा नाथ तव होय निरोगा । यज्ञ शेष धन हो तव भागा ॥ ८ ॥
रहा यज्ञ हन् यज्ञ अधूरा । प्रभू भाग बिन होय न पूरा ॥ ९ ॥
नाथ कृपा ऐसी अब कीजे । आजहिं यज्ञ पूर्ण कर दीजे ॥ १० ॥

दोहा- **इति अजते अनुनीत भव, हँस कर बोले बैन ।**
माया मोहित मन्द धी, उन प्रति मोहि न चैन ॥ ४१ ॥

चौ- अज्ञ दक्ष जो किय अपराधा । करहुँ याद नहिं मैं उन बाधा ॥ १ ॥
हे अज सावधानि के कारण । दीन्हेउँ दंड घमंड निवारन ॥ २ ॥

दक्ष सीस जो अगिन जरावा । कहु ब्रह्मन वापिस किमि आवा ॥ ४ ॥
यही हेतु यह अजमुख होहीं । मित्र नेत्र ते भग जग जोही ॥ ४ ॥
पूषहिं पिष्ट अन्न जिन भावहिं । यजमान दन्त द्वारा वह खावहिं ॥ ५ ॥
यथा पूर्व सुर होवहिं सारे । जो मम भाग विशेष पुकारे ॥ ६ ॥
नष्ट भुजी याज्ञिक जे सारे । दैव वैद्य भुज काम सँवारे ॥ ७ ॥
हस्तहीन नर जो जगु माँही । पूषाहस्त ते काम चलाही ॥ ८ ॥
अजसमान भृगु दाढी मूँछा । पावहि ब्रह्मन् यह मम इच्छा ॥ ९ ॥
यह सुन सभी देव हर्षाये । धन्यवाद की झरी लगावे ॥ १० ॥

दोहा- **मुदित होय सब देवगण, शंभु संग ले धात ।**
यज्ञ स्थल प्रति आगये , सुनह विदुर करुतात ॥ ४२ ॥

चौ- किये देवजो शिव फरमाया । यज्ञ पशु शिर दक्ष लगा या ॥ १ ॥
कृपा दृष्टि जब रुद्र विलोकी । उठे दक्ष जिमि सुप्त अशोकी ॥ २ ॥
देखे सन्मुख शिव भगवाना । स्वच्छित अन्तकरण उन जाना ॥ ३ ॥
मृत कन्या कर याद अपारी । दुखित दक्ष निज हिय अति भारी ॥ ४ ॥
शिव गुण कथन दक्ष मति जाता । किन्तु प्रेम वश वचन न आता ॥ ५ ॥
शिव गुण कथन त्याग कपटाई । बोले दक्ष शंभु नियराई ॥ ६ ॥
मोहे नाथ दण्ड तुम दीन्हा । दंड रूप नहिं अनुग्रह कीन्हा ॥ ७ ॥
ब्रह्मा रूप धार तुम आये । विद्या व्रततप धर द्विज जाये ॥ ८ ॥
करहु नाथ उन विप्रन रक्षा । कहे वचन इति पुनि वह दक्षा ॥ ९ ॥
सभा बीच मैं हे भगवाना । कियो नाथ मैं अति अपमाना ॥ १० ॥

दोहा- **साभिमान बोले वचन, निन्दा करी अपार ।**
तदपि नाथ तुमने उसे, सब विधि दियेउ विसार ॥ ४३॥

चौ- निन्दा रूपी नरक अपारा । जावत मोहीं नाथ उबारा ॥ १ ॥
ऐसो गुण मुझ में ना कोई । देख जेहि मृड राजी होई ॥ २ ॥
निज उदारता ते हे भगवन । भये मुदित मो पर करुणात्यन ॥ ३ ॥
एवं निज अपराध क्षमाई । विधि आज्ञा याज्ञिक बुलवाई ॥ ४ ॥
कियो जग्य प्रारंभ प्रजेशा । सकल देव मुनि सहित द्विजेशा ॥ ५ ॥
भूत पिशाच जनित संसर्गा । करहि दूर द्विज दोष प्रसंगा ॥ ६ ॥
पुरोडास चरु कीन्ह तैयारी । तीन पात्र विच हेत मुरारी ॥ ७ ॥
किय यजमान ध्यान हरि आये । निज स्वरूप तप ते जलजाये ॥ ८ ॥

हरिवर खगपति पर आसीना । श्याम रूप तनु मेघ नवीना ॥ ९ ॥
कटि करधनि काञ्चिनी सोही । अम्बर पीत मनोहर मोही ॥ १० ॥

दोहा- **सीस मुकुट चमकत अति, कुंडल कर्ण विशाल ।**
शङ्ख चक्र अम्बुज गदा, खड्ग बाण शर ढाल ॥ ४४ ॥

चौ- अष्ट भुजा विच प्रभु यह धारे । तरु कनेर सम शोभित भारे ॥ १ ॥
वनमाला श्रीपति गल आई । श्री वत्स चिन्ह हिय बीच सुहाई ॥ २ ॥
कोटि काम छवि जिन पर मोही । व्यंजन चामर छातर सोही ॥ ३ ॥
कर दरसन शिव ब्रह्म प्रजेशा । सुन नर मुनि जन और सुरेशा ॥ ४ ॥
करि प्रणाम सब जन हर्षाये । पूजन कर सब स्तोत्र सुनाये ॥ ५ ॥
पूजन कीन्ह प्रथम यजमाना । धरी भेंट हर्षित अतिनाना ॥ ६ ॥
निज स्वरूप में हे भगवाना । बुद्धि अवस्था हीन प्रमाना ॥ ७ ॥
शुद्ध चिन्मय भेद न तोही । यही हेतु निज निर्भय जोही ॥ ८ ॥
माया ते भी प्रभु तुम हीना । तदपि पुरुष वपु किये प्रवीना ॥ ९ ॥
माया भीतर करहु प्रवेशा । कियो स्तोत्र इमि दक्ष प्रजेशा ॥ १० ॥

दोहा- **बोले ऋत्विज नाथ हम, फँस कर कर्म महान ।**
दुराग्रही होकर तुम्हें, सके नहि पहिचान ॥ ४५ ॥

चौ- कहे सदस्य आश्रयपद ताता । पीड़ित काम जगत पथ जाता ॥ १ ॥
पंकजनाथ पाद कब पाहीं । मंदबुद्धि हम काम सताही ॥ २ ॥
बोले रुद्र वरद मुनि ज्ञानी । पूजन करहिं सनेह अकामी ॥ ३ ॥
उन पद पंकज मम चित लागा । तदपि कहत जन मोहिं अभागा ॥ ४ ॥
सदाचार भ्रष्ट मोहिं कहही । किन्तु नाथ मोहि बुरी नहीं लगही ॥ ५ ॥
बोले भृगु प्रभु माया द्वारा । अज्ञनींद सोवत संसारा ॥ ६ ॥
आत्म ज्ञान में अति उपयोगी । तत्व ज्ञान नहि पावत भोगी ॥ ७ ॥
किन्तु नाथ रक्षक शरणागत । होउ मुदित अब मोपर दत चित ॥ ८ ॥
बोले विधि यह पुरुष अपावन । दरसन करहिं न पुरुष पुरातन ॥ ९ ॥
मायामय माया अतिरिक्ता । किन्तुनाथ जगमाया भक्ता ॥ १० ॥

दोहा- **बोले सुरपति हे विभो, अष्ट भुजी तव रुप ।**
सुरद्रोहिन संसार हित, अति शोभित जग भूप ॥ ४६ ॥

चौ- नयनानन्द करत सुरत्राता। सत्य स्वरूप न प्राकृत जाता ॥ १ ॥
ऋत्विज पत्नी मुनि इमि बोली । यहाँ नाथ सबकी मति डोली ॥ २ ॥

किंयो जग्य तव पूजन हेतु । किन्तु नसाय दयउ वृषकेतू ॥ ३ ॥
भयो यज्ञ यह नाथ अनाथा । अब निज दृष्टि ते करहु सनाथा ॥ ४ ॥
ऋषि बोले हे पुरुष पुरातन । चरित नाथ अद्‌भुत तव पावन ॥ ५ ॥
करहु कर्म किन्तु जग माँही । नहीं देव तुम उन बिलपटाही ॥ ६ ॥
सम्पत हेत पुरुष जेहि भजहीं वह लक्ष्मी तव पद नही तजहीं ॥ ७ ॥
बोले सिद्ध मनोहर बानी । मन रूपी गजवर मस्तानी ॥ ८ ॥
कथामृत रूप सरित अति आहीं । संसार ताप सुमरत यह नाहीं ॥ ९ ॥
जगत बीच ऐसो ना कोही । जासु प्रीय प्रभु कथा न होही ॥ १० ॥

दोहा- **वाणी यजमानी मधुर, अमृत सम रसखानि ।**
बोली सर्व समर्थ का, वन्दन कर सन्मानि ॥ ४७ ॥

चौ- तव पद पंकज की प्रभुखासा । करत चंचला निशदिन आसा ॥ १ ॥
वे पद पंकज में हिय माँही । करहीं वास सुखधाम सदाहीं ॥ २ ॥
लोकपाल कहे लोक अनंता । करत निवास नाथ हिय अंता ॥ ३ ॥
योगेश्वर कहे पुनि मुस्काई । भेद अभेद हरे अलगाई ॥ ४ ॥
देखहिं निजपर एक समाना । उन सम प्रिय तुम काहु न माना ॥ ५ ॥
तोर अनुग्रह भक्तजनों पर । करहिं वन्दना हम सब मिलकर ॥ ६ ॥
सरजन पालन और लयाई । निज माया त्रिमूरति जाई ॥ ७ ॥
अरे भेद मति हे भगवाना । हों प्रसन्न हम पर प्रभुनाना ॥ ८ ॥
कहहिं वेद अब ब्रह्म स्वरूपा । शुद्ध सत्वमय निरगुन रूपा ॥ ९ ॥
तत्व नाथ हम तव नहिं जाना । शिव ब्रह्मादिक रहे अजाना ॥ १० ॥

दोहा— **जयति विष्णु अनुपम हरे, वन्दो ज्योति स्वरूप ।**
अग्नि देव कहने लगे, तव प्रभु रूप अनूप ॥ ४८ ॥

चौ- ज्वलित होउँ हरि तेज प्रकाशा । यज्ञ बीच घृत मिश्रित खासा ॥ १ ॥
देऊँ हवि मैं देवन हेतु । वन्दों पद पंकज सुरकेतू ॥ २ ॥
बोले देव प्रलय जब आहीं । उदर बीच रख जग सो जाहीं ॥ ३ ॥
वही विष्णु आज प्रत्यक्षा । आये जग्य बीच इस दक्षा ॥ ४ ॥
गंधर्व लोग सब वचन उचारे । मरिच्यादिक देव ऋषि मुनि सारे ॥ ५ ॥
अंशांश अंश हम सब इन माना । क्रीडामाण्ड यह जगत बखाना ॥ ६ ॥
करे प्रणाम विष्णु हम सारे । पुनि विद्याधर वचन उचारे ॥ ७ ॥
पुरुषार्थ प्राप्त साधन युत होही । मम जप करत यूँ माया मोही ॥ ८ ॥

पुत्रादि प्राप्त दुर्मति दुख पाही । किन्तु कथामृत पीवत नाहीं ॥ ९ ॥
बोले विप्र संत भय हारी । यज्ञ बीच वस्तु जे सारी ॥ १० ॥

दोहा- **हरि अग्नि समिधा कुशा, मंत्र पात्र यजमान ।**
स्वधा सोम रस घृत मधु, ऋत्विज सह महमान ॥ ४९ ॥

चौ- है सब रूप ये नाथ तुम्हारे । संकल्प यज्ञ दोउ तुम्ही पुकारे ॥ १ ॥
रूप वराह रसातल जाही । निज दंष्ट्रा पर भूमि उठाही ॥ २ ॥
यथा कमलनी मत्त गयंदा । काटा नाथ भूमि का फंदा ॥ ३ ॥
यज्ञेश्वर तव कीर्तन करही । यज्ञ बीच विघ्न नहि परही ॥ ४ ॥
दक्ष यज्ञ सत्कर्म विनाशा । यही हेतु प्रभु दर्शन आसा ॥ ५ ॥
यज्ञ बीच अब आप पधारे । करें वन्दना हम मिल सारे ॥ ६ ॥
स्तूयमान इमि हरि विश्वेशा । आय मुदित कुरु जाय प्रदेशा ॥ ७ ॥
सर्वात्मा भगवान दयालू । बोले वच प्रति दक्ष कृपालू ॥ ८ ॥
मैं ब्रह्मा शिव एक समाना । कारण जगत परम प्रिय माना ॥ ९ ॥
त्रयात्मिक माया कर स्वीकारा । सृजन पालना करूँ सँहारा ॥ १० ॥

दोहा- **ब्रह्म रुद्र मेरे प्रति, राखहिं जो नर भेद ।**
वह अज्ञानी जगत की, होय नरक में कैद ॥ ५० ॥

चौ- सब जीवन में रुप हमारा । हमसे परे जगत नहि न्यारा ॥ १ ॥
जिमि शिर चरण हस्तअलगाई । किन्तु देह ते ना बिलगाई ॥ २ ॥
मम प्रिय भक्त जगत में जेते । प्राणि मात्र में भेद न लखते ॥ ३ ॥
ब्रह्मा विष्णु व शंभु समाना । जीव रूप हमहीं सब नाना ॥ ४ ॥
इन प्रति राखहिं जो नहि भेदा । पात शान्ति वह पात न खेदा ॥ ५ ॥
एवं हरि का पा आदेशा । पूजा कीन्हेउ दक्ष प्रजेशा ॥ ६ ॥
यज्ञावशेष ते शंकर पूजन । कियो दक्ष हो हर्षित निजमन ॥ ७ ॥
यज्ञ पूर्ण कर मंगलकारी । अवभृथ स्नान कियो सुखकारी ॥ ८ ॥
मति धरम प्रति सदा प्रजेशा । इति देवादिक दे उपदेशा ॥ ९ ॥
बाद देव सब स्वर्ग सिधाये । ऋषि मुनि सकल गेह निज आये ॥ १० ॥

दोहा- **दक्ष सुता निज देह तज, गिरि हेमाचल गात ।**
जन्म लियो मैना उदर, सुनी विदुर यह बात ॥ ५१ ॥क
दक्ष सुता पुनि अम्बिका, अपर जनम पुनि पाय ।
भई भवानी जगत में, भव प्रति व्याह रचाय ॥ ५१ ॥ख

दक्ष यज्ञ विनाश यह, शंकर चरित अपार ।
उद्धव मुख मैंने सुना, अरे विदुर एक बार ॥ ५१ ॥ग
शिव चरित्र पावन अति, नासहिं पाप पहार ।
यश आयुष कारक यह, पावन बुद्धि अपार ॥ ५१ ॥ घ
भक्ति भाव से नित प्रति, पढ़हिं सुनहिनर नार ।
जगत वासना त्याग कर, जावत भव के पार ॥ ५१ ॥ङ

चौ- सनकादिक नारद यति रिपुवर । अरुणि हंस ब्रह्मसुत कुरुवर ॥ १ ॥
नैष्ठिक ब्रह्मचर्य व्रत धारा । गृहस्थ धर्म ना किये प्रचारा ॥ २ ॥
धाता पृष्ठ सुवन यक जायो । नाम अधर्म जासु सब गायो ॥ ३ ॥
नारि अधर्म मृषा कहलाई । माया दंभ सुवन दोउ भाई ॥ ४ ॥
निऋतिं अपुत्री इन ले गयउ । शठता लोभ जन्म इन दयेउ ॥ ५ ॥
इनते क्रोध व हिंसा आई । कलि व दुरुक्ति ये दोउ जाई ॥ ६ ॥
दोउ मेल भय मृत्यु बताया । निरय यातना ये दोउ जाया ॥ ७ ॥
यह अधर्म का वंश त्रिवारा । सुनहि गुनहि त्याजहि मल सारा ॥ ८ ॥
इनको त्यागहि पुण्य अपारा । पावहिं विदुर सकल संसारा ॥ ९ ॥
पुण्य वंश स्वायंभुव गाऊँ । ध्रुव चरित्र अब तुम्हें सुनाऊँ ॥ १० ॥

दोहा- **उत्तानपाद प्रियव्रत दोउ, नृप मनु की संतान ।**
विष्णु अंश ते ये विदुर, प्रकटे जग में आन ॥ ५२ ॥

चौ- उत्तानपाद गृह कुरु युग रानी । सुनिति सुरुचि जिन नाम बखानी ॥ १ ॥
पट्ट महीषी ध्रुव की माता । उन प्रति प्रेम नृपति नहि जाता ॥ २ ॥
रानि सुरुचि नृप को अतिप्यारी । तासु सुवन उत्तम गुणधारी ॥ ३ ॥
एक दिवस नृप होय निःशंका । सुरुचि पुत्र उत्तम निज अंका ॥ ४ ॥
रखकर किय नृप प्यारा दुलारा । आये वहँ तब ध्रुव सुकुमारा ॥ ५ ॥
नृपति गोद प्रति वह ललचाया । किन्तु नृपति नहिं अंक बिठाया ॥ ६ ॥
गोद हेतु जब ध्रुव ललचाया । रानि सुरुचि के मन नहि भाया ॥ ७ ॥
ईर्षा सह ध्रुव प्रति वह रानी । नृपति सुनाय कहत अभिमानी ॥ ८ ॥
अरे वत्स तुम नरपति आसन । बैठन जोग नही मन भावन ॥ ९ ॥
जन्म तोर उदर मम जाता । तब यह आसन ध्रुव तू पाता ॥ १० ॥

दोहा- **अपर मात के उदर तू, लियो जन्म सुकुमार ।**
यही हेतु नृप गोद निज,धरे उन सोच विचार ॥ ५३ ॥

चौ- हो न मनोरथ दुर्लभ पूरा । रहहि वत्स यह सदा अधूरा ॥ १ ॥
रुची होय यदि नृप सिंहासन । तो तपकर भजु पुरुष पुरातन ॥ २ ॥
कृपा प्राप्त उदर मम आवहिं । तब यह सिंहासन तू पावहिं ॥ ३ ॥
दुरुक्ति विद्ध विमात कुमारा । सर्प समान करत फुंकारा ॥ ४ ॥
पितहिं त्याग रोवत चुपचापा । मात समीप गयो दुख व्यापा ॥ ५ ॥
फड़कत होठ मात ध्रुव देखा । सिसक सिसक अति रोवत पेखा ॥ ६ ॥
कियो प्रेम निज गोद बिठाया । पूछेउ तब ध्रुव सभी सुनाया ॥ ७ ॥
सौत वचन सुन अति दुखपाई । ज्वलित वल्लरी सम मुरझाई ॥ ८ ॥
टूटा धीरज कियो विलापा । पंकज नयन नीर अति व्यापा ॥ ९ ॥
निज दुख अन्त न कहीं दिखाया । दीर्घ साँस ले वचन सुनाया ॥ १० ॥

दोहा- **अमंगल की इच्छा नहीं, करहु पुत्र यह हेत ।**
स्वयं कष्ट पावत वह, अन्य हेत दुख देत ॥ ५४ ॥

चौ- सुरुचि वचन जो निज मुख बोली । कहा उचित सुत निज हिय तोली ॥ १ ॥
अरे मोहिं निज नार बतावत । नृप मन लाज पुत्र अति आवत ॥ २ ॥
मंदभागिनी उदर तुम्हारा । भयो जनम हे ध्रुव सुकुमारा ॥ ३ ॥
राज्यासन प्रति ते रुचि जाता । करहु वही जो कहा विमाता ॥ ४ ॥
द्वेष भाव तजु भजु हरिपादा । प्रभू भजन कर तव परदादा ॥ ५ ॥
पारमेष्ठि पद पायहु जेही । करहिं वन्दना मुनि जन तेही ॥ ६ ॥
अरे पितामह जो मनु तेरे । भूरि दक्षिणा यज्ञ घनेरे ॥ ७ ॥
कर हरि आराधन मन भाया । स्वर्गादिक सब सुख उन पाया ॥ ८ ॥
अरे पुत्र तुम चित्त लगाकर । करो भजन उन जगपति ईश्वर ॥ ९ ॥
हरी बिना नहीं अन्य तुम्हारा । दुख छेदहिं तव ध्रुव सुकुमारा ॥ १० ॥

दोहा- **कुरुवर माता के उचित, वचन यथारथ मान ।**
पिता नगर को त्याग कर, ध्रुव वन कियउ पयान ॥५५॥

चौ- जावत ध्रुव मुनि नारद देखा । आये वँह मन हर्ष विशेषा ॥ १ ॥
करत विचार मुनी मन माँही । क्षत्रि प्रभाव देख अधिकाई ॥ २ ॥
वचन विमात असत सुन काना । बालक होत बुरा यह माना ॥ ३ ॥
ध्रुव शिर हाथ धरहिं मुनि बोले । जावत पुत्र कहाँ बिन तोले ॥ ४ ॥
अपमान मान बालक नहि जाने । खेलकूद प्रति वे सुख माने ॥ ५ ॥
अपमान मान बालक का कोई । करहि तदपि दुख उन नहीं होई ॥ ६ ॥

सुख दुख पावत नर जग जेते । कर्म प्रभाव अरे वह शेते ।। ७ ।।
ईश्वर कृपा बिना जग माँही । उद्यम फल कोउ पावत नाहीं ।। ८ ।।
इस जग बीच नहीं फल नीका । विन संतोष रहे सब फीका ।। ९ ।।
मात वचन सुन ध्रुव तू आया । दुराराध्य ईश्वर वह गाया ।। १० ।।

दोहा- **जिस मारग को ऋषि मुनि, धर कर जनम अपार ।**
खोजहि तदपि न वह मिले, गए पुत्र सब हार ।। ५६ ।।

चौ- जाहु न वन अब निज घर जाहूं । यह विचार ना मन अपनाहू ।। १ ।।
यथा परिस्थिति सन्मुख आये । हो संतुष्ट उसे अपनाये ।। २ ।।
देख गुणाधिक होवहिं राजी । अगुण विलोकि कृपा सुख साजी ।। ३ ।।
करहुँन कबहु अगुणि अपमाना । धरहु मित्रता होत समाना ।। ४ ।।
वचन तोर प्रति कहेउ विमाता । धरहु न ध्यान व्यर्थ की बाता ।। ५ ।।
सब दुरुक्त मन ते कर दूरी । जाहु गेह वय जब हो पूरी ।। ६ ।।
श्रेय काज तब तुम बन आहू । उन हरि चरण कमल चित लाहू ।। ७ ।।
बोले ध्रुव हे नारद ताता । सुख दुख से चंचल चित जाता ।। ८ ।।
नाथ पंथ यह उन प्रति लागू । मो समान जो होय अभागू ।। ९ ।।
आवत दृष्टि यहाँ नहिं तेही । श्रेय मार्ग यद्यपि मुनि एही ।। १० ।।

दोहा- **क्षत्रि वंश वश प्रकृति, ऊझड़ उग्र सुभाउ ।**
ये बातें मुझको नहीं, भावत है मुनि राउ ।।५७ ।।

चौं- छेदित दुर्वच शर मुनिराई । नाथ सीख नहि मोहिं सुहाई ।। १ ।।
जाना चाहुँ नाथ उस पद पर । होय त्रिलोकी में सब ऊपर ।। २ ।।
आज दिवस जो पद नहिं पाया । वही उपाय कहो मुनिराया ।। ३ ।।
भानु समान लोक हितकारी । फिरत नाथ वीणा कर धारी ।। ४ ।।
ऐसो सुगम मार्ग हो कोही । विधि सुत शीघ्र सुनावहु मोही ।। ५ ।।
यह सुनि वचन कहे मुनि नारद । होय मुदित अति ज्ञान विशारद ।। ६ ।।
वत्स तोर जननी जो गावा । उचित मार्ग वहि मे मन भावा ।। ७ ।।
जाहु पुत्र अब चित्त लगाई । वासुदेव पद भजु सुखदाई ।। ८ ।।
धर्म व अरथ काम अभिलासी । सेवत वह हरिपद अविनासी ।। ९ ।।
यमुना तट मधुवन सुखदाई । करत निवास वहाँ हरि आई ।। १० ।।

दोहा- **कालिन्दी निरमल जल, कर त्रिकाल अस्नान ।**
नित्य कर्म से निवृत्त हो, स्थिर मन आसनआन ।। ५८।।

चौ- प्राणायाम मनोमल त्यागी । मन ते हरिपद बन अनुरागी ॥ १ ॥
करहु ध्यान हे ध्रुव सुकुमारा । मुदित वदन जिनरूप अपारा ॥ २ ॥
भ्रुव कपोल नयन शुभनासा । तरुण अंग रमणीय सुहासा ॥ ३ ॥
सुखकर शरणाश्रय घनश्यामा । श्री वत्स अंक पीताम्बर जामा ॥ ४ ॥
शंख व चक्र गदाम्बुज धारी । गल बनमाल व कौस्तुम भारी ॥ ५ ॥
कुंडल किरीट केयूर सुहावन । कंकणादि भूषण मन भावन ॥ ६ ॥
कटि करधनी कंचन नूपुर । दर्शनीय मन नयन हरष कर ॥ ७ ॥
भक्तहृदय बिच सदा विराजे । नाम लेत जिन यम भय भाजे ॥ ८ ॥
उन हरि प्रति ध्रुव चित्त लगाहू । ध्यान पुत्र अन्यत्र न लाहू ॥ ९ ॥
जाप मंत्र सुन ध्रुव सुकुमारा । सप्त रात्रि जप करत अपारा ॥ १० ॥

दोहा- **द्वादश अक्षर के पढ़े, हरि पद निज चित धार ।**
दरसन कर सकता अरे, नभचर सिद्ध कुमार ॥ ५९ ॥

चौ- द्वादश अक्षर मंत्र प्रकारा । पुष्प मूल फल तुलसी द्वारा ॥ १ ॥
मिलहिं जो देशकाल अनुसारी । पूजहु हरिपद प्रेम अपारी ॥ २ ॥
मूरति भूमि व नीर बनाई । पूजहू वन्य पदारथ लाई ॥ ३ ॥
हरि अवतार करहु नित चर्चा । प्रभुपदपंकज ध्रुवकर अर्चा ॥ ४ ॥
वन्य मूल फल परिमित खाहू । मनन शील चित्त शान्त बनाहू ॥ ५ ॥
द्वादश अक्षर पढ़कर पूजन । बाद कुमार करो हरि वन्दन ॥ ६ ॥
काय वचन मन पूजित नाना । करहिं आस सभी भगवाना ॥ ७ ॥
इन्द्रिय रत यदि होय विरत्ता । सत संगति करहीं प्रभुभक्ता ॥ ८ ॥
भक्ति योग करि हरि को पूजहिं । अंतकाल मुक्ति फल पावहिं ॥ ९ ॥
एवं नारद वचन सुनावा । कर प्रणाम ध्रुव मधुवन आवा ॥ १० ॥

दोहा- **ध्रुव मधु वन इत चल दिये, उत नारद नृप पास ।**
जाकर के कहने लगे, क्यों तुम नृपति उदास ॥ ६० ॥

चौ- शुष्क वदन नृप तोर दिखावा । दीर्घ क्षोच उर क्यों कर छावा ॥ १ ॥
उत्तान पाद बोले मुनिराया । पंच वरष मम सुवन सुहाया ॥ २ ॥
माता सहित कियो निर्वासित । यहि कारण मम मन नहिं हर्षित ॥ ३ ॥
क्षुधित श्रान्त वह मन दुख पाही । वन्य जीव कहीं उन नहिं खाहीं ॥ ४ ॥
स्त्री लम्पट अति मैं दुष्टात्मा । आवा बाल गोद मम कामा ॥ ५ ॥
प्रेम सहित मैं अंक न लीन्हो । वचन मात्र सत्कार न कीन्हों ॥ ६ ॥

बोले नारद सुन वच मोरा । श्री हरि रक्षित नृप सुत तोरा ॥ ७ ॥
करहु न सोच अरे मन राजा । होवहिं पुत्र न तोर अकाजा ॥ ८ ॥
करहिं कर्म अति दुष्कर भारी । जासे सब जग यश विस्तारी ॥ ९ ॥
जो पद लोकपाल नहि पावे । सो पद पाय शीघ्र घर आवे ॥ १० ॥

दोहा- **इति नारद के वचन सुन, उत्तान पाद नृप तात ।**
राजश्री अपमान कर, सुत प्रति चिन्ता जात ॥ ६१ ॥

चौ- इत ध्रुव मधुवन अन्दर आवा । निशा विदुर वह योंही बितावा ॥ १ ॥
नारद मुनि जो मंत्र बतावा । पढ़ हरि पूजन कर सुख पावा ॥ २ ॥
तीन तीन निशि अंतर पाई । बदरी और कपिथ फल खाई ॥ ३ ॥
पूजन कर यक मास बिताया । अपर मास जब कुरुवर आया ॥ ४ ॥
षट षट दिन तृण पर्ण पुराना । दूसर मास कृतान्न बिताना ॥ ५ ॥
नव नव दिन जल पी सुकुमारा । हरिपद चित त्रय मास गुजारा ॥ ६ ॥
द्वादश द्वादश दिवस समीरा । खाय चतूरथ मास गुजारा ॥ ७ ॥
श्वास जीत प्रभु चरनन ध्याना । कीन्हेउ ध्रुव तप कुरु इति नाना ॥ ८ ॥
आयउ कुरुवर पंचम मासा । एक चरण स्थित जीतेउ श्वासा ॥ ९ ॥
वह ध्रुव वहँ तब लागत कैसा । एक जगह पर स्थित गिरि जैसा ॥ १० ॥

दोहा- **प्राण इन्द्रियन जीत ध्रुव, करत ब्रहम का ध्यान ।**
देखहिं सब जग ब्रह्ममय, इति तप कियउ महान ॥ ६२॥

चौ- ध्रुव तप लखि त्रय लोक कँपावा । एवं वह हरि जब हिय लावा ॥ १ ॥
एक पाद ध्रुव रहे स्थिर ताही । तदङ्गुष्ठ पीडित महि नाही ॥ २ ॥
श्वास विरोध जगत यह सारा । प्राण निरोध ते व्यथित अपारा ॥ ३ ॥
तब सब देव भये भयभीता । गये शरण हरि मन अति चिन्ता ॥ ४ ॥
कहे देव प्रभु प्राण निरोधा । कारण नाथ भयो ना बोधा ॥ ५ ॥
करहु उपाय यथा दुख त्यागे । देव वचन सुन कहे प्रभु आगे ॥ ६ ॥
डरहू न देव तजहु भय सारा । प्राण निरोध भये जिस द्वारा ॥ ७ ॥
करत घोर तप ध्रुव सुकुमारा । हो निवृत फिरहिं निज द्वारा ॥ ८ ॥
जाहु देवगण तुम निज स्थाना । प्राण निरोध हेतु नहि आना ॥ ९ ॥
हरी वचन सुन निर्भय सारे । तजि चिन्ता सुर स्वर्ग सिधारे ॥ १० ॥

दोहा- **तेहि समय हरिवर विदुर, होय गरुड़ असवार ।**
मधुवन में वह आ गये, जँह पर ध्रुव सुकुमार ॥ ६३ ॥

चौ- भक्त हृदय कुरु हरी सिधाये । अन्तरध्यान होय बहि आये ॥ १ ॥
जब निज हिय दरसन नहिं पावा ॥ खोले ध्रुव निज नयन अघावा ॥ २ ॥
सनमुख ध्रुव प्रभु देखे ठाढ़े । दरसन किये खोल दृग गाढ़े ॥ ३ ॥
दोउ कर जोर सीस महि नाये । कियो प्रणाम मुख वचन न आये ॥ ४ ॥
सर्व हृदय स्थित हरि ध्रुव देखा । निज गुण अकथनीय विशेषा ॥ ५ ॥
ध्रुव कपोल हरिशंख छुवावा । तब मन प्रकटेउ ज्ञान प्रभावा ॥ ६ ॥
भक्ति भाव युत ध्रुव सुकुमारा । हरि प्रति तब निज वचन उचारा ॥ ७ ॥
जो प्रभु किय मम हृदय प्रवेशा । स्वपित वचन मम इन्द्रिय देशा ॥ ८ ॥
करों प्रणाम जिन जागृत कीन्हें । अखिल शक्ति धर दुख हर लीन्हे ॥ ९ ॥
माया ते प्रभु जगत रचावा । हो प्रवेश बहुरूप दिखावा ॥ १० ॥

दोहा- **प्राप्त ज्ञान हरिशरण जग, देखत ब्रह्म स्वरूप ।**
जो कृतध्न मतिमन्द ना, भजहिं परहिं भवकूप ॥ ६४ ॥

चौ- जनम मरण प्रभु छेदन हारे । स्वारथवश नर नाम उचारे ॥ १ ॥
उन सम मूढ़ न जग विच कोही । पात न मोक्ष अहो प्रभु सोही ॥ २ ॥
पाद पद्म ध्यान तव नाथा । होत निवृत्ति श्रवण ते गाथा ॥ ३ ॥
निज मन मस्त रहे जो कोही । पात निवृत्ति हरे नहिं सोही ॥ ४ ॥
करहु कृपा यह साधु प्रसंगा । भक्ति तोर हरि पाउँ अभंगा ॥ ५ ॥
तासु नाथ भव सागर तरिहों । पान कथामृत कर मल तजिहों ॥ ६ ॥
सुत परिवार गेह धनदारा । तजहिं भक्त भजहीं भरतारा ॥ ७ ॥
तोर विराट रूप में जानूँ । ब्रह्मरूप अज नहिं पहचानूँ ॥ ८ ॥
सुर मुनि पार जासु नहिं पाही । जावत शब्द जहाँ पर माँही ॥ ९ ॥
धर कल्पान्त उदर जग ताता । सोवत शेषतुल्य सुरत्राता ॥ १० ॥

दोहा- **जिन नाभी पंकज विधि, प्रकटे जग करतार ।**
वन्दौं उन भगवान को, निज हिय वारम्बार ॥ ६५ ॥

चौ- नित्य मुक्त शुद्ध जगदीशा । पालन काज भये हरि ईशा ॥ १ ॥
विविध शक्ति विद्यादिक सारी । होत अचानक प्रकट तुम्हारी ॥ २ ॥
उन आनंद कन्द अविकारी । जाऊँ शरण संत भयहारी ॥ ३ ॥
कामी जन भी सेवहीं तोहीं । भय संसार न उन नर होहीं ॥ ४ ॥
ध्रुव मुख ते इमि वचन सुहाये । भये मुदित सुनि हरि श्रुति गाये ॥ ५ ॥
उत्तानपाद सुत ध्रुव वच मोरे । सुनहु मनोरथ करहूँ तोरे ॥ ६ ॥

ग्रह नक्षत्र व चक्र सितारे । ज्योतिष चक्र बीच ध्रुव धारे ॥ ७ ॥
मेढ़ी विच वृष चक्र समाना । धर्म अग्नि कश्यप मुनि नाना ॥ ८ ॥
करहिं प्रदक्षिणा ध्रुव पद सारा । सो पद तोर हेतु निरधारा ॥ ९ ॥
कल्प अवान्तर कोय न वचहीं । किन्तु पुत्र ध्रुव पद नहिं नसहीं ॥ १० ॥

दोहा- **वन में जावहिं तव पिता, देकर तोहीं राज ।**
वर्ष सहस छत्तीस तुम, करहिं राज का काज ॥ ६६ ॥

चौ- मृगया बीच नष्ट तव भ्राता हेरन जाहिं विपिन उस माता ॥ १ ॥
कानन अनल जरहिं उस गाता । यज्ञ अनेक करहिं जग पाता ॥ २ ॥
भोगहिं भोग अनेक कुमारू । अन्त काल मम चरण सिधारू ॥ ३ ॥
पाछे सप्त रिषिन के ऊपर । लोक नमस्कृत वह अति सुख कर ॥ ४ ॥
अम्बर बीच मोर ध्रुव स्थाना । करहुँ पुत्र वहँ बाद पयाना ॥ ५ ॥
ध्रुव प्रति इमि कहि वचन सुहाये । गरुड़ध्वज निज धाम सिधाये ॥ ६ ॥
प्राप्त मनोरथ इत ध्रुवराया । नाति प्रीत मन निज पुर आया ॥ ७ ॥
कहे विदुर ध्रुव हरि पद पाकर । भयो मुदित अति वह नहिं क्यों कर ॥ ८ ॥
सुमिर विमातु वचन शर चेता । ध्रुव नहिं चाहि मुकति अस हेता ॥ ९ ॥

दोहा- **नृप सुत ध्रुव वह निज मन, कुरुवर करत विचार**
शनकादिक वहु जन्म ले, हरिपद पात अधार ॥ ६७ ॥

चौ- सो पद पायऊँ मैं षट मासा । मन्द बुद्धि मम देखु दुराशा ॥ १ ॥
भव छिद पाद मूल मैं आवां । किन्तु मोक्ष पद मन नहिं भावा ॥ २ ॥
नारद सीख प्रथम मोंहि दीन्ही । किन्तु मोर मति सुर हर लीन्ही ॥ ३ ॥
आत्मा त्याग जगत ना दूजे । स्वप्न खोट लखि नरजिमि धूजे ॥ ४ ॥
असत्य स्वप्न मम मोहित माया । माना भ्रातहिं अरिसम काया ॥ ५ ॥
व्यर्थ द्वेष कर हृदय जलावा । मन्द बुद्धि मन बहुत कुढ़ावा ॥ ६ ॥
अरे कीन्ह मैं ईश अराधन । मिले मोंहि वे पुरुष पुरातन ॥ ७ ॥
नासवान वस्तु मैं माँगी । मुक्ति पदारथ नहीं अभागी ॥ ८ ॥
निजानन्द जो करहिं प्रदाना । लियो उच्चपद वश अभिमाना ॥ ९ ॥
मरणासन्न जगत नर कोही । याचत औषध फल नहिं होही ॥ १० ॥

दोहा- **सार्वभौम सम्राट को, याचक यथा रिझाय ।**
माँगहि कौड़ी एक तो, सब श्रम निष्फल जाय ॥ ६८ ॥

चौ- मन्द भागि मो सम ना कोई । माँगा राज्य मोक्ष पद खोई ॥ १ ॥
कुरुवर तुम सम जग नर जेते । हरि सेवा बिन अन्य न सेते ॥ २ ॥
इत उत्तानपाद सुनि काना । ध्रुव आवत निजपुर दरम्याना ॥ ३ ॥
सहसा नृप विश्वास न आया । सुमिरेउ नारद वच मुनि राया ॥ ४ ॥
तब नृप निज गल हार उतारा । मुदित होय दीन्हेउ हरकारा ॥ ५ ॥
श्रेष्ठ अश्व रथ नृप सजवाई । संग अमात्य बन्धु द्विज राई ॥ ६ ॥
गयेउ पुत्र निरीक्षण हेतु । शंख दुंदुभि घोष सहेतु ॥ ७ ॥
सुरूचि सुनीति उत्तम सह दोही । शिविका चढ़ि गवनी खुश हो ही ॥ ८ ॥
नगर समीप ध्रुवहिं लखि राजा । उतरेउ स्यन्दन ते अति लाजा ॥ ९ ॥
विह्वल प्रेम नयन भरि पानी । किय आलिङ्गन सुत नृप ज्ञानी ॥ १० ॥

दोहा- **वार वार सिर सूंघ के, नृपमन मुदित अपार ।**
स्नान करायो सुवन को, प्रेमाश्रु की धार ॥ ६९ ॥

चौ- पाछे ध्रुव पितु मातु प्रणामा । कियो विदुर वह ले हरि नामा ॥ १ ॥
सुरुचि विमातु नयन भर वारी । गद गद हो निज गिरा उचारी ॥ २ ॥
होय मुदित ध्रुव गोदी लीन्हा । जीवहु सुत यह आशिष दीन्हा ॥ ३ ॥
जापर कृपा करहिं यदुराई । नमहिं शत्रु उस सन्मुख आई ॥ ४ ॥
उत्तम ध्रुव दोउ मिले परस्पर । विह्वल प्रेम नयन जल भर कर ॥ ५ ॥
सुनीति तदन्तर निज सुत भेटी । कर आलिंगन सब दुख मेटी ॥ ६ ॥
स्तन ते बही दूध की धारा । नयन कमल जल बहे अपारा ॥ ७ ॥
पुरजन करत प्रशंसा नाना । सुनिति भाग्य का करहिं बखाना ॥ ८ ॥
नष्ट पुत्र पायहु तुम रानी । सब दुख दूर विगत मन ग्लानी ॥ ९ ॥
निश्चय पूजेउ तुम भगवाना । करहिं पुत्र परिजन कल्याना ॥ १० ॥

दोहा- **भ्राता सह ध्रुव को विदुर, कियो गजी असवार ।**
चले मही पति नगर में, निजमन मुदित अपार ॥ ७० ॥

चौ- राजमार्ग सुन्दर सुखदाई । इतर फुलेल तेल छिड़काई ॥ १ ॥
सह फल कदली स्तंभ बँधावा । मकराकृति द्वार अनेक रचावा ॥ २ ॥
शोभित वृक्ष सुपारी भारी । कलस समेत दीप सब द्वारी ॥ ३ ॥
पल्लव आम्र पुहुप वर माला । वस्त्र व मुक्तावली निहाला ॥ ४ ॥
नगर द्वार अरु कोट प्रकोटा । लगे विदुर अति सुन्दर गोटा ॥ ५ ॥
नगर चौक गलि हाट अटारी । राजमार्ग किय साफ बुहारी ॥ ६ ॥

गोपुर कोट कंगूर सुहाना । दमकत शिखर विमान समाना ॥ ७ ॥
खील व चाँवल पुष्प बिखेरी । सजी मांगलिक वस्तु घनेरी ॥ ८ ॥
यत्र तत्र पुर नारि अपारा । चली विलोकन तजि घर द्वारा ॥ ६ ॥
वात्सल्य भाव से आशिष देही । भई मुदित अति ध्रुव प्रति स्नेही ॥ १० ॥

दोहा- **अक्षत जल दधि दूरवा, सरसों श्वेत अपार ।**
वरषा फल अरु पुष्प की, करत प्रजाजन नार ॥ ७१ ॥

चौ- सुनत सुगीत मनोहर नाना । पिता भवन ध्रुव कीन्ह पयाना ॥ १ ॥
महामूल्य मणि लडिन जडावा । राज भवन सज्जित ध्रुव आवा ॥ २ ॥
पिता भवन ध्रुव वसहिं कैसे । स्वर्ग लोक विच सुर रहे जैसे ॥ ३ ॥
शय्या जहँ पय फेन समाना । दान्त पलंग अमोल महाना ॥ ४ ॥
कामदार परदे वर आसन । वस्तु अनेक सुशोभित कंचन ॥ ५ ॥
स्फटिक भीति मणि जडित महाना । मूर्ति रतन निरमित तिय नाना ॥ ६ ॥
मणि प्रदीप जिनकर वर साजे । रम्य विचित्र अमर द्रुम राजे ॥ ७ ॥
गावत मत्त भ्रमर चहुँ ओरा । उपवन विच पिक मोर चकोरा ॥ ८ ॥
मणि वैडूर्य रचित सोपाना । निरमल नीर वापिका नाना ॥ ६ ॥
ध्रुव प्रताप देखि नरराया । विस्मय परम भयउ मनुजाया ॥ १० ॥

दोहा- **युवा अवस्था में कुरु, ध्रुव जव कियउ प्रवेश ।**
देख प्रजा अनुराग तव, निज मन मुदित नरेश ॥ ७२ ॥

चौ- दियो राज्य ध्रुव प्रति वह राजा । वृद्ध विरत्त होय तप काजा ॥ १ ॥
विपिन बीच वह गयो नरेसू । प्रभु पद सुमिरेउ तजि सब क्लेसू ॥ २ ॥
इत शिशुमार प्रजापतिबाला । कीन्ह ब्याह ध्रुवलखि शुभ काला ॥ ३ ॥
नाम भ्रमि सुन्दर सुखदाई । कल्प व वत्सर दो सुत जाई ॥ ४ ॥
अपर नारि ध्रुव इला सुहाई । वायू सुता संत सब गाई ॥ ५ ॥
उत्कल नाम पुत्र यक कन्या । इला गर्भ ते प्रकटी धन्या ॥ ६ ॥
कियो व्याउ नर उत्तम भाई । मृगया काज हेमगिरि आई ॥ ७ ॥
बलवान यक्ष कर भयो निपाता । खोजत तेहि मरी वनमाता ॥ ८ ॥
सुना भ्रात वध ध्रुव जब काना । धनुष धार किय क्रोध महाना ॥ ६ ॥
रथ चढ़ि ध्रुव उत्तर दिशि गयउ । यक्ष भूत युत अलका देखऊ ॥ १० ॥

दोहा- **जाय बजायो शंखनिज, भयो सोर नभ घोर ।**
यक्ष तिया सुन शब्द वह, त्रस्त भई चहुँ ओर ॥ ७३ ॥

चौ- सुन निनाद निज शस्त्र उठाये । यक्ष सकल मिल ध्रुव प्रति धाये ।। १ ।।
आवत यक्ष तदा ध्रुव देखा । चढ़ा बाण निज धनुष विशेषा ।। २ ।।
एक एक मारेउ त्रय बाना । अयुत त्रयोदश यक्ष निशाना ।। ३ ।।
निजमन यक्ष पराजित माना । कर ध्रुव कर्म प्रशंसा नाना ।। ४ ।।
द्विगुण बाण उन ध्रुव प्रति त्यागे । फरसा परिघ व प्रास अभागे ।। ५ ।।
शक्ति भुसुन्डि त्रिशूल चलावा । अयुत त्रयोदश मन घबरावा ।। ६ ।।
वर्षा शस्त्र न रथ ध्रुव दीखत । यथा नीर धारा ते परवत ।। ७ ।।
सिद्ध देव गण नभ पर सारे । ध्रुव लखि हाहाकार पुकारे ।। ८ ।।
सूरज सम यह मानव राजा । बूढ़ेउ सागर यक्ष समाजा ।। ९ ।।
भये मुदित रण यक्ष विशेषा । जब ध्रुव रथ उन एवं देखा ।। १० ।।

दोहा- **तेहि समय ध्रुव रथ विदुर, काटि यक्ष शर जाल ।**
प्रकटेउ जैसे सूर्य नभ, कर निहार का काल ।। ७४ ।।

चौ- तब ध्रुव करि निज धनु टंकारा । कर मन में अति क्रोध अपारा ।। १ ।।
घन अवलिहिं जिमि अनिल विदारे । बाण मारि उन अस्त्र निवारे ।। २ ।।
नृपति चाप निर्मुक्त अपारी । बाण यक्ष तनु त्राण विदारी ।। ३ ।।
किये प्रवेश यक्ष तनु ताता । छिन्न भिन्न भये मही निपाता ।। ४ ।।
इन्द्र वज्र जिमि गिरी समाता । इमि ध्रुव बाण यक्ष तनु आता ।। ५ ।।
ध्रुव शर कटि सीस कुरु ताता । कुंडल मंडित यही निपाता ।। ६ ।।
जानु ताल सम वलय विभूषित । कर वर हार भुजा बन्ध शोभित ।। ७ ।।
समर भूमि वह वीर लुभानी । लागत कुरुवर महासुहानी ।। ८ ।।
हत अवसेस यक्ष ध्रुव बाना । अवयव छिन्न भिन्न निज जाना ।। ९ ।।
समर भूमितजि जीव बचाई । भाजत जिमि गज भय वनराई ।। १० ।।

दोहा- **समर विलोके जब नहीं, अस्त्र शस्त्र अरि हाथ ।**
पुर देखन की तब करी, इच्छा ध्रुव नर नाथ ।। ७५ ।।

चौ- किन्तु कियउ नहीं पुरी प्रवेशा । सारथि प्रति तब कहे नरेशा ।। १ ।।
यह मायावी यक्ष व दानव । रुचि इनकी नहिं जानत मानव ।। २ ।।
निज विचित्र रथ बैठे राई । सावधान निज धनुष चढ़ाई ।। ३ ।।
तेहि समय सागर सम भीषण । अनिल शब्द व्यापेउ समराङ्गण ।। ४ ।।
उड़त धूल नहि दिशा दिखाये । मेघ समूह व्योम बिच छाये ।। ५ ।।
भयप्रदशब्द सहित नृप दामन । चमकत अम्बर बीच भयावन ।। ६ ।।

नभते पीप रक्त कफ खेहा । वरसत चरबि व मूत्र प्रमेहा ।। ७ ।।
नभते गिरत कबन्ध अपारा । गदा परिघ मूसल तलवारा ।। ८ ।।
अम्बर पर गिरि एक दिखावा । आवत पाहन वृक्ष लखावा ।। ९ ।।
सर्प व्याघ्र गज सिंह अपारी धावत समर भूमि भयकारी ।। १० ।।

दोहा - **प्रलय काल सम सिन्धु निज, भीषण गरजन साथ ।**
चहुँ और वढ़ता हुआ, देखा ध्रुव नर नाथ ।। ७६ ।।

चौ- एवं यक्ष असुर निज माया । किय उत्पात बहुत भय दाया ।। १ ।।
जेहि देखि कायर मन काँपे । किन्तु वीर मन भय नहि व्यापे ।। २ ।।
देखि मुनिगण ध्रुव पर माया । आये वे तब ध्रुव नियराया ।। ३ ।।
करहिं कामना मंगल कारी । ध्रुव प्रति मुनि निज गिरा उचारी ।। ४ ।।
उत्तानपाद सुत तव कल्याना । शरणागत भय भञ्जन भगवाना ।। ५ ।।
शाङ्गपणि ले धनु निज हाथा । नासहिं तोर शत्रु नर नाथा ।। ६ ।।
जिनकर नाम कीरतन करही । दुस्तर मृत्यु ते नर तरहीं ।। ७ ।।
सुनि मुनि वच निज धनुष उठावा । नारायण शर नृपति चलावा ।। ८ ।।
गुह्यक निरमित माया सारी । ज्ञान उदय जिमि क्लेश विदारी ।। ९ ।।
भई नष्ट कुरुवर तेहिकाला । नारायण निरमित शर जाला ।। १० ।।

दोहा- **उस नारायण अस्त्र ते, निकसे वाण अपार ।।**
अरि सेना में घुस गये, जिनकी तीखी धार ।। ७७ ।।

चौ- हंस पक्ष कंचन फल वारे । निकसे वाण अनेक करारे ।। १ ।।
जिमि मयूर केकार व कारी । करत प्रवेश अरण्य मँझारी ।। २ ।।
साँय साँय करके सब बाना । चले शत्रु प्रति ठीक निशाना ।। ३ ।।
समर भूमि जब गय ध्रुव बाना । यक्ष असुर सब निज भय माना ।। ४ ।।
कुपित होय ध्रुवपति वह धाये । उन्नत फणि जिमि खगपति पाये ।। ५ ।।
नृपति बाण उन लगे करारे । गुह्यक छिन्न भिन्न भये सारे ।। ६ ।।
उदर बाहु धड़सीस अपारा । समर भूमि ध्रुव शर कियो न्यारा ।। ७ ।।
तजकर तनु सत लोक सिधारे । मंडल अर्क भेद वह सारे ।। ८ ।।
निरपराध जब यक्ष अपारा । भये विनाश विदुर ध्रुव द्वारा ।। ९ ।।
तब मनु ऋषिन संग वहँ आये । बोले ध्रुव प्रति वचन सुहाये ।। १० ।।

दोहा- **क्रोध नरक का द्वार है, दर्प पाप का मूल ।**
निरपराध सब गुह्यक, करहु न इन निरमूल ।। ७८ ।।

चौ- कर्म कुलोचित नही हमारा । निन्दित जो सत मानव द्वारा ॥ १ ॥
कियो यक्ष वध तुम यँह आई । उचित न्याय नहिं यह सुखदाई ॥ २ ॥
यक्ष एक तव किय अपराधा । मारेउ किन्तु बहुत शर साधा ॥ ३ ॥
मार्ग श्रेष्ठ नहि तव हे बेटा । करत साधु नहिं कारज हेटा ॥ ४ ॥
दुराराध्य हरि का कर पूजन । पायउ हरि पद परम सुपावन ॥ ५ ॥
साधु चरित शिक्षा प्रति होही । निन्दित कर्म न निज मन मोही ॥ ६ ॥
बड प्रति क्षमा नीच प्रति दाया । सम प्रति मैत्री भाव उपाया ॥ ७ ॥
राखत भाव सदा नर ये ही । होत प्रसन्न जगत पति तेही ॥ ८ ॥
नहीं होत जब प्रभु प्रतिकूला । नर प्राकृत गुण ते निरमूला ॥ ९ ॥
जीवन मुक्त होय हरि शरणा । पात ब्रह्मपद इन उपकरणा ॥ १० ॥

दोहा- **देहादिक के रूप में, परिणत होकर भूत ।**
कहत विदुर से भार्गव, नर तिय करत प्रसूत ॥ ७९ ॥

चौ- सुरन प्रसंग करत नर नारी । प्रकटत अन्य पुरुष तिय सारी ॥ १ ॥
इस भगवत माया के द्वारा । चालत सृष्टि चक्र इमि सारा ॥ २ ॥
निमित मात्र केवल कहलावे । हरि आश्रय यह जगत भ्रमावे ॥ ३ ॥
समय सुवन जब पलटा खावत । गुण प्रवाह न्यूनाधिक आवत ॥ ४ ॥
प्रभू शक्ति बिच अन्तर आवे । विषय शक्ति से सृष्टि रचावे ॥ ५ ॥
स्वयं अकर्ता अन्तक होही । रचत जगत नाशत ध्रुव सोही ॥ ६ ॥
काल शक्ति प्रभु गहन अपारा । जान सकै नहिं ऋषि मुनि सारा ॥ ७ ॥
जन से जन पैदा प्रभु करहीं । सदा मृत्यु से मृत्युहिं हनहीं ॥ ८ ॥
अनंत अंनादि स्वयं वह रहहीं । निज पर पक्ष न वे प्रभु गनहीं ॥ ९ ॥
अनिल वेग जिमि धूरि उडाहीं । कर्म ते जीव काल गति पाहीं ॥ १० ॥

दोहा- **निज निज कर्म प्रभाव ते, सुख दुखादि फल भोग ।**
भोगहिं जग में हे ध्रुव, इस प्रकार सब लोग ॥ ८० ॥

चौ- बन्धन प्राप्त जीव भगवाना । वृद्धि नाश वय करत विधाना ॥ १ ॥
रहत किन्तु वे इन अलगाया । निज स्वरूप बिच स्थित हरिराया ॥ २ ॥
कहत कितैक कर्म इन राया । वदत कितैक स्वभाव निकाया ॥ ३ ॥
कर्म व काल कितैक बतावत । शक्ति अनेक इन्हीं ते आवत ॥ ४ ॥
कर्म कवन हरि करना चाही । कोई जान सकत उन नाहीं ॥ ५ ॥
भ्राता तोर यक्ष नहीं मारा । जन्म मृत्यु ईश्वर निरधारा ॥ ६ ॥

निज माया हरि जगत रचाहीं । माया के संग विश्व नसाहीं ॥ ७ ॥
तदपि ईश माया पर गाया । होत न जन्म मृत्यु इन राया ॥ ८ ॥
सर्वात्मा हरि की ध्रुव शरणा । तजि सब क्लेश जाहु प्रभु चरणा ॥ ९ ॥
बरष पंच वय जब बन गयउ । तप कर हरि आराधन कियउ ॥ १० ॥

दोहा- **त्रय लोकों से ऊपर, पायउ तुम ध्रुव स्थान ।**
सरल हृदय में हे रहू, उन निरगुण भगवान ॥ ८१ ॥

चौ- ब्रह्म दृष्टि उन हेरहु काया । भक्ति करत हरि भेदहिं माया ॥ १ ॥
यथा औषधीरोग नसावा । तजहु क्रोध सुत ज्ञान प्रभावा ॥ २ ॥
क्रोध श्रेय घातक जग जाना । क्रोध युक्त नर हो न महाना ॥ ३ ॥
क्रोध व्याप्त पुरुष इस लोका । प्राप्त अनादर हो न अशोका ॥ ४ ॥
हो न क्रोध वश यहि हित पंडित । सुनो सीख मम ध्रुव कुल मंडित ॥ ५ ॥
जे तुम यक्ष बीच रण मारे । नहि भ्राता वध कारक सारे ॥ ६ ॥
धनद गिरीश सखा यह राजा । कियो आप इन महा अकाजा ॥ ७ ॥
नम्र वचन सुत अनुनय द्वारा । करहु मुदित इन तजि दुख सारा ॥ ८ ॥
महापुरुष का किये अकाजा । होत नष्ट कुल मानव राजा ॥ ९ ॥
इमि निज पौत्रहिं मनु समुझाई । निजपुर गय सह ऋषि मुनीराई ॥ १० ॥

दोहा- **उत मनु गवने निजपुर, त्यागा ध्रुव इत क्रोध ।**
समर भूमि में हे विदुर, तजकर सभी विरोध ॥ ८२ ॥

चौ- देखे धनद क्रोध ध्रुव त्यागे । आये समर भूमिध्रुव आगे ॥ १ ॥
किन्नर यक्ष करहिं जिन गाना । ध्रुव प्रति बोले वचन सुहाना ॥ २ ॥
क्षत्रिय पुत्र सुनो मम बानी । मैं प्रसन्न तो पर गुण खानी ॥ ३ ॥
क्षत्रिय प्रति अति दुस्त्यज रागा । मनु आदेश बैर तुम त्यागा ॥ ४ ॥
नहि तुम समर यक्ष संहारे । तव भ्राता नहि यक्षन मारे ॥ ५ ॥
किन्तु काल गति बड़ कठिनाई । जन्म मृत्यु प्राणिन इन आई ॥ ६ ॥
तव मम पुरुष करहिं जो कोई । अनृत मति उनकी यह होई ॥ ७ ॥
बन्धन सुख दुःख जगत प्रदाता । काल रुप हरि और न भ्राता ॥ ८ ॥
अब ध्रुव निज घर पर तुम जाहू । भव छिद हरि पद चित्त लगाहू ॥ ९ ॥
माँगउ मोसन वर मन चाही । तजि संकोच निडर मन माँही ॥ १० ॥

दोहा- **यक्षराज कुबेर ने वर माँगन के काज ।**
आग्रह कीन्हा हे विदुर बोले तब ध्रुवराज ॥ ८३ ॥

चौ- हरिपद अचल भक्ति मम होहीं । होत पारभव नर करि जोही ॥ १ ॥
ध्रुव वच सुन इमि गुह्चक राई । देकर अचल भक्ति सुखदाई ॥ २ ॥
निज पुर प्रतिगय गुह्यक राया । इत ध्रुव निजपुर बीच सिधाया ॥ ३ ॥
भूरिदक्षिणा युत मक कीन्हे । निजपुर बीच सभी सुख दीन्हे ॥ ४ ॥
प्रभु पद भक्ति चित्त निज धारी । सर्वभूत हरि रुप निहारी ॥ ५ ॥
द्विज गुरु भक्त दीन अनुरागी । रक्षक धर्म शील गुण भागी ॥ ६ ॥
पिता समान प्रजा उन मानत । करत राज ध्रुव सब सुख देवत ॥ ७ ॥
नव चौगुण कुरु सहस वरीसा । कियो राज भूपर ध्रुव ईशा ॥ ८ ॥
याग बहुत कर काल बितावा । वैभव योग पुण्य फल पावा ॥ ९ ॥
माया रचित विश्व मनमानी । सब जंजाल स्वप्न समजानी ॥ १० ॥

दोहा- **निज सुत उत्कल के प्रति, दियो राज महाराज ।**
गये वद्रिका श्रम वह, तप करने के काज ॥ ८४ ॥

चौ- देह मित्र सुत तिय परिवारी । कोम राज्य सेना तजिसारी ॥ १ ॥
कर मज्जन आसन स्थित राया । रूप विराट स्थूल मन धाया ॥ २ ॥
कर हरि भक्ति निरन्तर ताता । गत घमंड पुलकित निज गाता ॥ ३ ॥
सुधि न देह हरि भक्ति प्रभावा । नयन प्रेम अश्रू छलकावा ॥ ४ ॥
तेहि समय एक सुन्दर याना । निज समीप आवत ध्रुव जाना ॥ ५ ॥
उदित निशापति सम वह याना । जिस प्रकास तम करत पयाना ॥ ६ ॥
बीच विमान चतुर्भुज श्यामा । कुंडल हार किरीट ललामा ॥ ७ ॥
भुज भुज बन्ध व पंकज नयना । वय किशोर वदत मृदु वचना ॥ ८ ॥
नन्द सुनन्द नाम जिन गाया । आये ध्रुव सन्मुख सुनु राया ॥ ९ ॥
हरि पारसद इन दोउ ध्रुव जानी । कियो प्रणाम जोरि युग पानी ॥ १० ॥

दोहा- **कृष्ण चरण विच चित्त जिन, उन ध्रुव प्रति निज चैन।**
वोले नन्द सुनन्द तव, सुनहु नृपति सुख दैन ॥ ८५ ॥

चौ- हो तव भद्र सुनहु नर राई । कियो पंच वय तप कठिनाई ॥ १ ॥
यही हेतु हरि सम्पत्ति राया । उन पद बीच लेन तोहि आया ॥ २ ॥
हरि पारसद जानहु हम ताता । नन्द सुनन्ट नाम दोउ भ्राता ॥ ३ ॥
दुर्जय हरिपद तुम नृप जीता । अपर लोग जिस प्रति रह रीता ॥ ४ ॥
ऋषि वर सप्त न वहँ पर पहुँचत । केवल रहत अधः अवलोकत ॥ ५ ॥
सूरज चन्द्र आदि ग्रह तारा । करत परिक्रम जिस पद सारा ॥ ६ ॥

जो जग वंध विष्णुप्रद माना । हरि प्रेषित इस चढ़हु विमाना ॥ ७ ॥
एवं वचन सुना निजकाना । कर प्रणाम सह मुनिन विमाना ॥ ८ ॥
नन्द सुनन्द सहित हरि याना । पूजेउ ध्रुव मन मुदित महाना ॥ ९ ॥
ऊपर यान चढ़न जब लागे । आये मृत्यु देव ध्रुव आगे ॥ १० ॥

दोहा- **अंगिकार मुझ को करो, कहे मृत्यु ने वैन ।**
तव ध्रुव वोले क्षण भर, करहु काल कुछ चैन ॥ ८६ ॥

चौ- सुमिरेउ हरिपद इमि कहि राया । मृत्यु सीस निज चरण रखाया ॥ १ ॥
चढ़े विमान जबै ध्रुवराई । नभ दुंदुभि बाजी सहनाई ॥ २ ॥
करत गान गंधर्व अपारा । कुसुम वृष्टि भई बहुत प्रकारा ॥ ३ ॥
जावत स्वर्ग लोक ध्रुवराया । तब निज मात स्मर्ण मन आया ॥ ४ ॥
जो निज मात यहाँ पर रहहीं । दुर्गम स्वर्ग लोक नहिं फलहीं ॥ ५ ॥
हरि सेवक ध्रुव मन गति जानी । मेटहु नृप मन की सब ग्लानी ॥ ६ ॥
माता तोर गई ध्रुव आगे । यह कहि तेहि दिखावन लागे ॥ ७ ॥
जावत माता अमर विमाना । भये विदुर ध्रुव मुदित महाना ॥ ८ ॥
ध्रुव विमान बिच अम्बर आया । देखे सूर्य आदि ग्रह राया ॥ ९ ॥
इत उत स्थित सुर निज निजयाना । पुष्प वृष्टि करि कीरति गाना ॥ १० ॥

दोहा- **मुनि मंडल को पार कर, त्रयलोकी के पार ।**
हरी धाम विच ध्रुव गये, अविचल गति इमि धारा ॥८७॥

चौ- दिव्यधाम निज तेज प्रकाशित । जासु तेज त्रय लोक सुभासित ॥ १ ॥
करहिं जीव पर जो जन दाया । निशि दिन कर्म करहिं शुभ राया ॥ २ ॥
शान्त शुद्ध समदर्शी होहीं । प्राणिन बीच रूप हरि जोहीं ॥ ३ ॥
अच्युत प्रियहिं जगत नर जेते । समझत निज बान्धव सम तेते ॥ ४ ॥
ते नर अच्युत पद पर जाहीं । अन्यलोग जावत जहँ नाहीं ॥ ५ ॥
सुत उत्तानपाद इतिराया । भगवदभक्ति निपुण जग गाया ॥ ६ ॥
लोक तीन चूडामणि जाता । फिरत वृषभ मेढ़ी चहुँ भ्राता ॥ ७ ॥
गंभीर वेग उस लोक सहारे । फिरत निरन्तर ये सब तारे ॥ ८ ॥
ध्रुव प्रभाव नारद मुनिराई । देखा जब निज वीण बजाई ॥ ९ ॥
सत्र प्रचेतस बीच सुहाई । गाये श्लोक तीन इति राई ॥ १० ।

दोहा- **सुत सुनीति ध्रुव का महा, विक्रम जानन जोग ।**
हो समर्थ योगी नहीं, फिर क्यों नरपति लोग ॥ ८८ ॥

चौ- वाणी वज्रविद्ध ध्रुवराया । वरष पंच वय बन विच आया ॥ १ ॥
मम आदेश मान तपधारी । जीते विष्णु भक्त भयहारी ॥ २ ॥
जो पद इस जग में ध्रुव पाया । पा न सकै नर कोटि उपाया ॥ ३ ॥
पूछा जो ध्रुव चरित सुहावन । गाया विदुर तोर प्रति पावन ॥ ४ ॥
सुखद व स्वर्ग पुण्य प्रद भारी । यश आयुष दाता अघहारी ॥ ५ ॥
सुनहिं चरित यह बारम्बारा । पावहिं भक्ति क्लेश तजि सारा ॥ ६ ॥
सुनत शील गुण आवत तन में । पात उच्च पद गुणकर मन में ॥ ७ ॥
तेज व मान बढ़ावन वारा । चरित पवित्र अमंगल हारा ॥ ८ ॥
सायं प्रात्त सभाविच कोही । अमा पूर्णिमा द्वादशी होही ॥ ९ ॥
दिन क्षय श्रवण योग व्यतिपाता । दिवश अर्क संक्रम जब आता ॥ १० ॥

दोहा- **सुनहि सुनावहिं ध्रुव चरित, पावत सिद्धि विशाल ।**
करहिं अनुग्रह देव सब, उस जन पर तत्काल ॥ ८९ ॥

चौ- ममता मात गेह तजि माया । तजे बाल क्रीडन कुरुराया ॥ १ ॥
गयो शरण हरि की सुखदाई । ध्रुव गाथा यह तव प्रति गाई ॥ २ ॥
कहे सूत शौनक मुनिराया । मैत्रेय मुख ध्रुव चरित सुहाया ॥ ३ ॥
सुनकर विदुर मोद मन छाया । पूछा प्रश्न बाद कुरु राया ॥ ४ ॥
कुल प्रचेत कवन मुनि जाता । कीन्हा कवन ठौर मख ताता ॥ ५ ॥
महाभक्त नारद मुनिराई । जिन पूजन विधि हरि की गाई ॥ ६ ॥
प्रचेता यज्ञ बीच मुनि नाथा । की वरणन निज मुख हरि गाथा ॥ ७ ॥
वह सब नाथ सुनायहु मोहीं । तव वच सुन मन तृप्त न होई ॥ ८ ॥
कह मैत्रेय सुनहु कुरु राई । ध्रुव तिय नाम इडा सब गाई ॥ ९ ॥
उत्कल नाम पुत्र यक पाया । पिता राज्य उसको नहीं भाया ॥ १० ॥

दोहा- **शान्त चित्त वह जन्म से, आसक्तिन से हीना ।**
समदर्शी आनन्द मय, प्रभु भक्ति में लीन ॥ ९० ॥

चौ- कर्म मलाशय सभी जलावा । योग अग्नि अघ सकल नसावा ॥ १ ॥
प्राणी बीच ब्रह्म लखिराया । निज पर भेद चित्त नहिं लाया ॥ २ ॥
वधिर अन्ध उन्मत्त महाना । रहत मूक जड़ रूप समाना ॥ ३ ॥
फिरत पन्थ साधारण स्थाना । परिजन पुर जन जब इमि जाना ॥ ४ ॥
लघु पत्नी ध्रुव की भ्रमिनामा । सुवन तासु वत्सर गुण धामा ॥ ५ ॥
दियो राज्य वत्सर सब राई । वत्सर तिय स्वर्वीथि कहाई ॥ ६ ॥

वत्सर स्वर्वीथी सुत जाये । जिनके नाम सकल इमि गाये ॥ ७ ॥
पुष्पार्ण तीग्मकेतू इष ऊर्जा । वसु जय सुत षट् अन्य न दूजा ॥ ८ ॥
दोषा और प्रभा दो नारी । भई पुष्पार्ण शील व्रतधारी ॥ ९ ॥
प्रभा से पुत्र तीन यह पाया । प्रात मध्य सायं कहलाया ॥ १० ॥

दोहा- **व्युष्ट निशीथ प्रदोष यह, दोषा के सुत तीन ।**
पुष्करिणी अरु व्युष्ट से, सर्व तेज सुत दीन ॥ ९१ ॥

चौ- सर्वतेज आकूती मिलहीं । चक्षु संज्ञ मनु सुत यक जनहीं ॥ १ ॥
मनु नड्वला सुत इमि जाये । पुरू कुत्स, त्रित, धूम, बताये ॥ २ ॥
सत्यवान, धृतव्रत अतिराता । अग्निष्टोम, शिपि, उल्मुक भ्राता ॥ ३ ॥
सह प्रघुम्न, य रुद्र समाना । मन सुत जगत बीच किय गाना ॥ ४ ॥
उलमुक पुष्करिणी मिल जाये । अंग सुमन ख्याति क्रतु गाये ॥ ५ ॥
सहित अंगिरा गय षट्भाई । महीषी अंग सुनीथा गाई ॥ ६ ॥
पुत्र वेण पापी जिन जाया । जासु दोष अंग बन आया ॥ ७ ॥
दियो वेण प्रति मुनिगणशापा । प्राण हीन वह भूतल व्यापा ॥ ८ ॥
दक्षिण भुज उस मुनि मथ डारी । अस भुज ते प्रथु भये अवतारी ॥ ९ ॥
बोले विदुर अंग नृप साधू । भयो वेण क्यों प्रजा विवाधू ॥ १० ॥

दोहा- **पापी नृप की भी प्रजा, रखती उसका मान ।**
केहि कारण मुनिगण दियो, नृप को शाप महान ॥ ९२॥

चौ- अंगराज बन बिच क्यों गवहू । सुत का कष्ट कवन उन भयहू ॥ १ ॥
वेन चरित्र मोहिं मुनिराई । करहू नाथ यह सब समुझाई ॥ २ ॥
कह मैत्रेय सुनो कुरु राया । अश्व मेघ नृप अंग रचाया ॥ ३ ॥
यज्ञ बीच रिषी मुनी पधारे । किये देव आवाहन सारे ॥ ४ ॥
पर नहिं यज्ञ देव यक आया । तप रित्विज विस्मित निज काया ॥ ५ ॥
कहे अंग से रित्विज सारे । सुनो नृपति तुम वचन हमारे ॥ ६ ॥
श्रृद्धा सह हम खीर बनाई । किन्तु देव नहिं करत गृहाई ॥ ७ ॥
कारण नृप हम यह ना जाना । द्विज वचन सुन नृप खिन्न महाना ॥ ८ ॥
यज्ञ सदस्यन ते तब राजा । कियो सुरन मैं कवन अकाजा ॥ ९ ॥
क्यों ना देव यहाँ पर आही । कवन काज निज भाग न पाही ॥ १० ॥

दोहा- **कहे सदस्य अंग से, ना इस भव का पाप ।**
पूर्व जन्म के पाप वश, रहे अपुत्री आप ॥ ९३ ॥

चौ- करो नृपति अब वही उपाऊ । जासे पुत्र रत्न तुम पाऊ ।। १ ।।
पुत्र कामना प्रति अब राजा । करहु यज्ञ हरि सारहिं काजा ।। २ ।।
यज्ञ बीच जब हरी सिधावहिं । आवहिं सुर सब बिना बुलावहिं ।। ३ ।।
तब सब देव भाग निज लेहीं । होय मनोरथ पूरण तोही ।। ४ ।।
करहीं कामना जो नर मन में । करहिं पूर उसको हरि क्षन में ।। ५ ।।
इति विचार कर विप्र व राजा । पुरोडाश दिय हरि सुत काजा ।। ६ ।।
तदा अगनि विच पुरुष विशेषा । कंचन पात्र खीर लिय देखा ।। ७ ।।
तब नृप याजक अनुमति पाई । निज कर पायस ले सुखदाई ।। ८ ।।
सूँघी प्रथम बाद तिय काजा । दीन्ही प्रेम सहित वह राजा ।। ९ ।।
खात खीर भई गर्भ निसानी । पूर्णकाल सुत जायेउ रानी ।। १० ।।

दोहा- **वह बालक माता मह, मृत्यु अनुव्रत जात ।**
भयो अधर्मी हे विदुर, करत मृगादिक घात ।। ६४ ।।

चौ- रौद्र कर्म देख जन सारे । आत वेन इत सभी पुकारे ।। १ ।।
क्रीड़ाकाल वेन बन हिंसक । पशु समान मारहिं पुर बालक ।। २ ।।
सुवन दुष्ट लखि नृप समझाहीं । सीख एक ना उस मन आही ।। ३ ।।
मन विचार तब नृपति अपारा । करत विदुर पुनि बारम्बारा ।। ४ ।।
वह नर जगतबीच बड़भागी । कुपुत्रज क्लेश न हरि अनुरागी ।। ५ ।।
दुष्ट पुत्र यदि जिस घर होही । यश ऐश्वर्य धर्म सब खोही ।। ६ ।।
आधि व्याधि ते होन निरोधा । अन्त नाश जब होत विरोधा ।। ७ ।।
बन्धन देह मोह सुत गाया । जेहि हेतु गृह हो दुख दाया ।। ८ ।।
दुष्ट पुत्र सत सुत तें भागी । जेहि नर तजि गृह होत विरागी ।। ९ ।।
एवं वह नृप होय दुखारी । मध्य निशा विच उठ तजि नारी ।। १० ।।

दोहा- **निज मंदिर तज कर वह, वन विच गयउ सिधार ।**
प्रात पुरोहित मंत्रिगण, हेरहिं दुखित अपार ।। ६५ ।।

चौ- जब नृप विपिन बीच ना पाये । करत रुदन सब पुरी सिधाये ।। १ ।।
रिषिन हेतु सब कथा सुनाई । मिले विपिन नाही नरराई ।। २ ।।
प्रजा क्षेम चिन्तक रिषि सारे । नृप अभाव लखि मनुज दुखारे ।। ३ ।।
मंत्री मात सुनीथ बुलावा । कियो वेन नृप दुष्ट स्वभावा ।। ४ ।।
तब सब तस्कर भये दुखारे । यथा सर्प भय मूषक सारे ।। ५ ।।
शासक वेन अतीव कठोरा । राज लक्ष्मी पाकर मद घोरा ।। ६ ।।

करत साधु–द्विज गण अवमाना । अंकुश हीन गजेन्द्र समाना ॥ ७ ॥
एक समै स्यन्दन सजवाई । पृथ्वी भ्रमण गयो नर राई ॥ ८ ॥
भेरी घोष कियो नर राजा । करहु न दान धर्म मख काजा ॥ ९ ॥
करहिं जो दान यज्ञ मम राजू । देवहुँ दंड भयद उस काजू ॥ १० ॥

दोहा- **मंत्री मुनिगण वेन का, देख चरित्र कठोर ।**
वदत परस्पर इस तरह, यह नृप पापी घोर ॥ ९६ ॥

चौ- राजा यदि तस्कर जँह होही । प्रजा तेहि सुख पाव न कोही ॥ १ ॥
अराजक भय हम मिलकर सारे । कियो वेन नृप बिना विचारे ॥ २ ॥
यथा सर्प प्रति दूध पिलाई । पोषक प्रति वह हो दुखदाई ॥ ३ ॥
एवं प्रकृति दुष्ट यह वेना । पाव न प्रजा राज्य इस चैना ॥ ४ ॥
पालक ना यह प्रजा विनाशक । तदपि शान्त हम सभी अभी तक ॥ ५ ॥
अब हम येहि जाय समुझावे । पातक जासु हमहिं ना आवे ॥ ६ ॥
यदि ना मानहिं वचन हमारा । करें भस्म निज तेज करारा ॥ ७ ॥
इतिविचार कर रिषि मुनिराई । निज शरीर विच क्रोध छिपाई ॥ ८ ॥
वेन समीप गये मिल सारे । कहे वचन सुन्दर सुखकारे ॥ ९ ॥
हम जो वचन कहें नरं राई । देहु ध्यान उस पर चित्त लाई ॥ १० ॥

दोहा- **तव आयु श्री कीरति, बल वृद्धि कर तात ।**
मन वाणी तनु बुद्धि ते, करे धर्म जो भ्रात ॥ ९७ ॥

चौ- शोक रहित स्वर्गादिक लोका । पात अनन्त मोक्ष निःशोका ॥ १ ॥
कीरति भृष्ट होत वह राजा । धर्म नष्ट ते होय अकाजा ॥ २ ॥
यदि नृप दुष्ट मंत्रि जिस तस्कर । पात प्रजा तब दुःख भयंकर ॥ ३ ॥
पावत ना सुख वह कहिं राजा । करत न्याय अनुकूल न काजा ॥ ४ ॥
निज निज धर्म प्रजा जिस राजू । पालहिं उस नृप हो न अकाजू ॥ ५ ॥
होत मुदित उस पर भगवाना । पात पदारथ वह मन माना ॥ ६ ॥
विश्व निवास ईश के ईश्वर । लोक सपाल देत जिन बलिवर ॥ ७ ॥
लोक सपाल व यज्ञ नियन्ता । वेद त्रयीमय धन तप कन्ता ॥ ८ ॥
करत सुयज्ञ मुदितु सब देवा । देत मनोरथ नृप प्रति शैवा ॥ ९ ॥
यहि हेतु उन मत अपमाना । करहु बंध नहिं यज्ञ विधाना ॥ १० ॥

दोहा- **महा मूर्ख तुम लोग हो, बड़े खेद की बात ।**
नहीं धर्म जो तुम कहा, वदत वेन इमि ता त ॥ ९८ ॥

चौ— तजि वृत्तिद पति जार समाना । तुम इस जगत अन्य पति माना ॥ १ ॥
भूत रूप ईश्वर नहिं मानत । इह परत्र वह क्षेम न पावत ॥ २ ॥
कवन जग्य पुरुष जगपाता । जासु तुम्हार भक्ति यह जाता ॥ ३ ॥
विष्णु विरंचि महेश सुरेशा । वायु धनद रवि अमन यमेशा ॥ ४ ॥
क्षिति पर्जन्य सोम-जलराई । करत वास नृप तनु सब आई ॥ ५ ॥
शायद वरद विबुध जग जेते । नृपति देह बाहर नहिं वेते ॥ ६ ॥
सर्व देव मय नृप कहलावे । वेद पुराण शास्त्र इति गावे ॥ ७ ॥
यह मत्सर अब करो तजाई । करहु कर्म पूजहु मोहि आई ॥ ८ ॥
सब बलि अर्पित करो हमारे । मो सम कौन अराध्य तुम्हारे ॥ ९ ॥
रिषि द्विज वचन वेन नहीं माना । कियो घोर नृप उन अपमाना ॥ १० ॥

दोहा— **तब सब रिषि गण है विदुर, कीन्हों क्रोध अपार ।**
मंगल भृष्ट व भृष्टमति, प्रकृति दुष्ट अघकार ॥ ९९ ॥

चौ— कुछ दिन जीवित रहे संसारा । करहिं भस्म नृप यह जग सारा ॥ १ ॥
मारहु मारहु येहि मिल सारे । नृपति योग्य यह नहीं हमारे ॥ २ ॥
जासु कृपा ते जग जस पावे । उन हरि निन्दा यह खल गावे ॥ ३ ॥
ऐसो को जग में नर होही । वेन बिना हरि निन्दक द्रोही ॥ ४ ॥
प्राप्त मनु तब मुनिगण सारे । इति विचार हुं शब्द उचारे ॥ ५ ॥
सुना शब्द नृप मुनिगण आनन । प्राण हीन हो तजि सिंहासन ॥ ६ ॥
गिरा धरणि पर वह नर राई । पुनि स्वाश्रम गवने मुनिराई ॥ ७ ॥
मात सुनीथा इत शोकाकुल । सुत तनु राखेउ निज विद्याबल ॥ ८ ॥
एक दिवस मुनि सुरसति तीरा । करत कथा मज्जन कर नीरा ॥ ९ ॥
लोक भयंकर बड उत्पाता । देखे चहुँ ओर दुखदाता ॥ १० ॥

दोहा- **करत विचार मुनिगण तब, रक्षक भू नहिं कोय ।**
तस्कर दस्युन से कहीं अरे अभद्र न होय ॥ १०० ॥

चौ- एवं करहिं मुनीश विचारा । तेहि काल पुरजन धनसारा ॥ १ ॥
लूटा विदुर दस्युगण घोरा । भागी प्रजा मचावत सोरा ॥ २ ॥
उनपद उठी धूल मुनिराई । अम्बर बीच लखि अतिछाई ॥ ३ ॥
लगे विचारन तब मुनिराई । बिन नृप देश अराजकताई ॥ ४ ॥
शक्ति विहीन राष्ट्र यह जाता । करत दस्यु तस्कर उत्पाता ॥ ५ ॥
हम निज तेज तपोबल द्वारा । रहत समर्थ न कियउ निवारा ॥ ६ ॥

समदर्शी अरु शान्त स्वभाहू । कृपा दीन ऊपर जिन नाहू ॥ ७ ॥
होत नष्ट तप द्विज का कैसे । वहुत भग्न घट ते जल जैसे ॥ ८ ॥
अंगवंश यह नाश न होही । भगवत भक्त नृपति इस सोही ॥ ९ ॥
इति विचार मन रिषि मुनि सारे । राजभवन सह द्विजन पधारे ॥ १० ॥

दोहा- **वेन देह उरु का मथन, किये आप मुनिनाहु ।**
काकवर्ण ह्रस्वांङ्ग तनु, ह्रस्व पाद लघु वाहु ॥ १०१ ॥

चौ- ताम्र सुकेश महाहनु ताता । नाशा वक्र नयन जिस राता ॥ १ ॥
प्रकटा पुरुष उरु ते ऐकी । कहत वचन वह महि शिर टेकी ॥ २ ॥
करुँ काम मैं कवन मुनीशा । वहाँ निषाद इति कहे रिषीशा ॥ ३ ॥
वेन कुपाय जगत दुख दाता । भयो निषाद वही कुरु भ्राता ॥ ४ ॥
वंशज उन नैषाद कहाया । गिरि अरण्य आश्रम उन पाया ॥ ५ ॥
कुरुवर बाद भुजा उस राजा । किये मथन मिल मुनी समाजा ॥ ६ ॥
मंथन करत मिथुन इक पाया । भये मुदित लखि उस रिषि राया ॥ ७ ॥
बोले वचन मुदित मन होही । विष्णु कला प्रकटे यह दोही ॥ ८ ॥
पुरुष य विष्णु अंश यह बाला । प्रकटी लक्ष्मी अंश कृपाला ॥ ९ ॥
प्रथम सुयश यह करहिं प्रचारी । प्रथू नाम नृप जग सुखकारी ॥ १० ॥

दोहा- **सुन्दर गुण आभूषण, भूषित सुन्दर दन्त ।**
अर्चि नाम विख्यात यह, भजहिं प्रथुहि निजकंत ॥१०२॥

चौ- साक्षात विष्णु अंश पृथु जाये । रक्षा लोक हेतु यहँ आये ॥ १ ॥
अर्ची रूप निरन्तर नाना । तत्पर सेवा जो भगवाना ॥ २ ॥
नित्य सहचरी लक्ष्मी आई । सुनो विदुर आगे चित लाई ॥ ३ ॥
करहीं विप्र प्रशंसा नाना । गंधर्व लोग करते गुण गाना ॥ ४ ॥
सिद्ध लोग सह ले निजनारी । सुमन वृष्टि प्रभु ऊपर डारी ॥ ५ ॥
करत अप्सरा नृत्य अपारा । बजी दुंदुभि ढोल नगारा ॥ ६ ॥
स्वर्ग लोग सुर शंख बजाये । सब रिषि देव ब्रह्म वहँ आये ॥ ७ ॥
सव्य हस्त ब्रह्मा प्रथु देखा । विष्णु चिन्ह परी जिन रेखा ॥ ८ ॥
पंकज रेख पाद युग देखी । माना विधि हरि कला विशेषी ॥ ९ ॥
रेखा चक्रन भेदत कोई । विष्णु अंश प्रकट वह होई ॥ १० ॥

दोहा- **वेद वादि ब्राह्मण कियो, अब अभिषेक निबन्ध ।**
तब सब वस्तु के लिये, पुरजन करत प्रबन्ध ॥ १०३ ॥

चौ- सरिता सर गिरि सागर नाना । गौमृग पक्षी सर्प महाना ॥ १ ॥
भूमि स्वर्ग के सब मिल प्रानी । दई भेंट प्रभु प्रति मन मानी ॥ २ ॥
जब अभिषिक्त भये महराजा । सोभित अगनि समान समाजा ॥ ३ ॥
दियउ धनद कंचन सिंहासन । बायू दीन्ह आय दोउ व्यँजन ॥ ४ ॥
गिरा हार गल प्रथु पहिराया । जल पति श्वेत छत्र सुख दाया ॥ ५ ॥
धर्म कीरती मयि यक माला । इन्द्र मुकुट यम दंड कराला ॥ ६ ॥
ब्रह्मा कवच व विष्णु सुदर्शन । लक्ष्मी संपति त्वष्टा स्यंदन ॥ ७ ॥
असि दश चंद्र रुद्र नृप कारन । दई अम्बिका चर्म सुहावन ॥ ८ ॥
अगनि आजगव धनुष विशाला । दीन्हे सूरज बाण कराला ॥ ९ ॥
सोम अश्व भू पादु खड़ाऊ । अम्बर पुष्प माल मन भाऊ ॥ १० ॥

दोहा— **गान वाद्य नाटक कला, खेचर अंतर ध्यान ।**
रिषि आशिष सागर दियो, आत्मज शंख महान ॥१०४॥

चौ- सागर सरिता गिरिवर जेता । स्यन्दन मार्ग दियो प्रथु हेता ॥ १ ॥
मागध सूत वन्दि गण आये । तब हँस कर पृथु वचन सुनाये ॥ २ ॥
मागध सूत वन्दिगण सारे । सुनो सत्य यह वचन हमारे ॥ ३ ॥
नहीं स्पष्ट गुण अभी हमारे । करहु स्तोत्र किन गुणन सहारे ॥ ४ ॥
स्तव्य एक भगवान कहाया । उत्तम श्लोक नाम जिन गाया ॥ ५ ॥
होय स्पष्ट गुण काल बिताना । तब भर पेट करहु यश गाना ॥ ६ ॥
शिष्ट पुरुष हरि गुणानुवादा । करहिं सदा नहि तुच्छ विवादा ॥ ७ ॥
बुद्धिमान ऐसो को होई । सुनहि अगुण निज कीरति जोही ॥ ८ ॥
लज्जा शील उदार अपारा । सुनहि न निज कीरति विस्तारा ॥ ९ ॥
कर्म अगोचर अभी हमारा । करों बालवत् क्यों विस्तारा ॥ १० ॥

दोहा- **इति बोले जब विदुर यह, मुनि प्रेरित गुणवान ।**
गायक होकर मुदित यश, करने लगे बखान ॥ १०५ ॥

चौ- देव वर्य महिमा अनुवर्णन । नहिं समर्थ हम सब गायक गण ॥ १ ॥
तव यश ब्रह्मादिक मुनि सारे । गात बुद्धि परती भ्रम भारे ॥ २ ॥
हरीअंश मुनि प्रेरित ताता । तोर कर्म गावत मुद गाता ॥ ३ ॥
रक्षक धरम नाथ शठ घाती । जिनकी पाप बीच मति जाती ॥ ४ ॥
सर्व लोक पालहिं निजगाता । धारण करहु आप पृथु ताता ॥ ५ ॥
आवत काल द्रव्य तुम लेहू । समय पाय पुरजन प्रति देहू ॥ ६ ॥

सार्वभूत विच भानु समाना । तोर प्रताप तपै यह नाना ॥ ७ ॥
क्षमा वीच नृप भूमि समाना । करहु सदा पुरजन कल्याना ॥ ८ ॥
वर्षा जबै इन्द्र ना करहीं । जब बिन प्रजा अरे नृप मरहीं ॥ ९ ॥
करहु वृष्टि तब आप सुखारी । रक्षक होय प्रजा परिवारी ॥ १० ॥

दोहा- **चन्द्र वदन ते लोक प्रति चन्द्र समां सुखदाउ ।**
कार्य आपके गुप्त सब होवहिं जगत अथाउ ॥ १०६ ॥

चौ- सब धन गुप्त रहे नृप तेरा । गुण अनन्त यश बढ़ै घनेरा ॥ १ ॥
प्रकट रुप प्रथु वरुण समाना । ज्ञान सिंधु बल बुद्धि निधाना ॥ २ ॥
वेन रुप अरणी तुम जाये । शत्रु कदापि पास ना आये ॥ ३ ॥
मूत पीप अंतर बहि व्यापक । विचरहिं वायु समां सुखदायक ॥ ४ ॥
दंडनीय यदि अरि सुत नाहीं । नृपति दंड नहिं तेही दिवाही ॥ ५ ॥
दंडनीय यदि निज सुत होही । पावहिं दंड बचाव न कोही ॥ ६ ॥
मानस उत्तर परवत यावत । चालहिं स्यन्दन चक्र यथा रथ ॥ ७ ॥
करे मुदित महि सकल समाजू । निज चरित्र ते यह प्रथु राजू ॥ ८ ॥
दृढ़व्रत सत्यसंध बडभागी । भूत शरण्य दीन अनुरागी ॥ ९ ॥
मातृ भक्ति पर तिय सत किंकर । निज सम लागहिं इन प्रिय तनुधर ॥ १० ॥

दोहा- **देहिं असाधुन दंड यह, साधुन का उद्धार ।**
प्रत्यक्ष हरी के अंश ते, लीन्हों ये अवतार ॥ १०७ ॥

चौ- आत्तचाप स्यन्दन सजवाई । उदयाचल अस्ताचल ताँई ॥ १ ॥
करहिं गमन भूमंडल पाले । यथा भानु अम्बर बिच चाले ॥ २ ॥
लोकपाल सह नृप गण सारे । देहि इन्हें बलि जयति पुकारे ॥ ३ ॥
सुरभी रुप मही यह दोहीं । प्रजा प्रजापति वृत्ति कर दोहीं ॥ ४ ॥
धनुष कोटि ते गिरि न उठाई । करहिं भूमि सम जिमि सुरराई ॥ ५ ॥
फिरहिं भूमि यह धनुष उठाहीं । भाजत इत उत असत अघाहीं ॥ ६ ॥
विपिन बीच भय ते मृगराई । भाजत मृग जिमि पूँछ उठाई ॥ ७ ॥
अश्वमेध शत सुरसति तीरा । निज तिय संग करहिं नृप धीरा ॥ ८ ॥
अश्वमेध शत सुरपति आवे । घोटक हरण करहिं दुख पावे ॥ ९ ॥
विमल ज्ञान मुनि सनत कुमारा । देवहि प्रथु प्रति परम उदारा ॥ १० ॥

दोहा- **यत्र तत्र पुरजन सब, गावहिं इनकी गाथ ।**
दशों दिशा को जीत कर, करहिं राज्य नर नाथ ॥ १०८॥

चौ- करहिं न इन नृप कोई विरोधा। हों न कहीं इन अनुमति रोधा ॥ १ ॥
देव असुर सब मान प्रभावा। करहिं विपुल वरणन इन भावा ॥ २ ॥
वन्दी जन जब इमि गुण गाये। कर्म बखान किये हुलसाये ॥ ३ ॥
तब प्रथु मागध सूत सुजाना। सह आदर दीन्हों धन नाना ॥ ४ ॥
ब्राह्मण भृत्य अमात्य पुरोधा। यथा काम तोषे नृप योधा ॥ ५ ॥
कहे विदुर धरणीगौ रूपा। करण कवन दुही प्रथु भूपा ॥ ६ ॥
कैसा वत्स दोहिनी कैसी। क्यों कर भू समतल यह जैसी ॥ ७ ॥
सुरपति हरण कियो हय कैसे। दियो कुमार ज्ञान नृप जैसे ॥ ८ ॥
आवत अंत कवन गति पाये। सब प्रथु चरित कहो मन भाये ॥ ९ ॥
किय अभिषिक्त यदा प्रथुराजा। अन्न हीन क्षिति मंडल जाता ॥ १० ॥

दोहा- **भूख प्यास ते हो दुखी, प्रजा गई प्रथु पास।**
जठरानल ते तप्त हम, बोले वचन उदास ॥ १०९ ॥

चौ- यही हेतु हे नरपत तेरे आये शरण सभी दुख घेरे ॥ १ ॥
करहु उपाय नाथ अब ऐसो। मिलहिं अन्न जल पुरजन जैसो ॥ २ ॥
प्रजा दीन वच सुन निज काना। प्रथु नृप कीन्हों ध्यान महाना ॥ ३ ॥
जाना कारण दुख नर राई। उठे क्रुद्ध हो धनुष चढ़ाई ॥ ४ ॥
भूमि हेतु मारन वह धाये। भागी महि गौ रुप बनाये ॥ ५ ॥
कँपाय मान निज पूँछ उठाई। गई जहाँ वहीं देखे राई ॥ ६ ॥
नयन रक्त शर धनुष चढ़ावा। देखा जिन पाछे नृप आवा ॥ ७ ॥
ब्रह्म धाम शिव पुर सब लोका। गई भूमिना भई अशोका ॥ ८ ॥
निज त्राता कोई न पाया। आई पास पृथु नरराया ॥ ९ ॥
त्राहि त्राहि धर्मज्ञ कृपाला। जय शरण्य प्रभु दीन दयाला ॥ १० ॥

दोहा- **सर्व भूत पालक प्रभो, केहि कारण धनुधार।**
निष्पापा इस नारि को, मारन को तैयार ॥ ११० ॥

चौ- कृत अपराध पाप यदि भारी। तदपि नाथ वध योग्य न नारी ॥ १ ॥
सुदृढ नौका रूप समाना। सर्व विश्व मम आश्रय माना ॥ २ ॥
मोंहि मारि निजपुर परिवारी। रखहु नीर किमि प्रजा मारी ॥ ३ ॥
बोले प्रथु वसुधे सुन बाता। मम शासन तू वे मुख जाता ॥ ४ ॥
यही हेतु मारउँ मैं तोही। अब नहिं तोहिं बचावहिं कोही ॥ ५ ॥
खावत सदा घास गौ बाँटा। दूध देत ना जो यक छाँटा ॥ ६ ॥

उस दुष्टा प्रति दंड न बेजा। अरी खोट मति दूषित भेजा ॥ ७ ॥
औषधि बीज धात निरमाना। किये लीन निज उदर महाना ॥ ८ ॥
प्रजा अन्न बिन यह सब मरहीं। तदपि भूमि तू उन नाहि तजहीं ॥ ९ ॥
छिन्न भिन्न कर अब निज बाना। आमिष तोर बचावहुँ प्राना ॥ १० ॥

दोहा- **यद्यपि तिय पर वीर जन, हाथ उठावत नाँय।**
तदपि दुष्टमति नर तिय, प्रजा जासु दुख पाय ॥ १११॥

चौ- इन मारे लागहिं नहिं पापा। नहिं मारे लागहिं जन शापा ॥ १ ॥
तिल सम खंड खंड मैं करिहों। प्रजा योग बल ते मैं धरिहों ॥ २ ॥
क्रोध मूर्ति नृप काल समाना। देख नृपहिं महि अति भय माना ॥ ३ ॥
बोली दीन वचन कर जोरी। सुनहु सत्यसँध वीनति मोरी ॥ ४ ॥
जय शरण्य अभयद अघहारी। परम पुरुष पावन सुख कारी ॥ ५ ॥
निज माया अवतार अपारा। रुप गुणात्मक नाथ तुम्हारा ॥ ६ ॥
प्राणिन प्रति जिन भूमि रचावा। वही धात मोहिं मारन धावा ॥ ७ ॥
अब मैं शरण कवन प्रभु जाऊँ। आई शरण नाथ तव पाऊँ ॥ ८ ॥
सरजेउ पूर्व चराचर सारो। धर्म लीन पृथु मोंहि क्यों मारो ॥ ९ ॥
पालक पोषक कृपा निधाना। ईश्वर करतब कोई न जाना ॥ १० ॥

दोहा- **पूर्व काल में हे अज, धर सूकर अवतार।**
लोक रसातल से प्रभो, लीन्ही धरा अबार ॥ ११२ ॥

चौ- सूकर रुप मही जल ऊपर। नौका रुप धरी खल हन कर।
रक्षक बने प्रजा के ताता। सो हरि आज पृथू तनु जाता ॥ २ ॥
पय निमित्त वही प्रथु आजी। मारत मोहीं होय अराजी ॥ ३ ॥
तव चरित्र प्रभु कोई न जाना। बन्दौं बार बार भगवाना ॥ ४ ॥
एवं भूमि प्रथु स्तुति कीन्हीं। बोली वचन नयन अध कीन्हीं ॥ ५ ॥
करहु क्रोध शमन हे राजन। सुनहु नाथ मम मुख विज्ञापन ॥ ६ ॥
सुमति मान नर भ्रमर समाना। संग्रह करत सार मन माना ॥ ७ ॥
पूर्व काल बिच सभी उपाया। तत्व ज्ञानि मुनि जन बतलाया ॥ ८ ॥
उन उपाय ते सब सुख आये। करत अनादर अर्थ न पाये ॥ ९ ॥
पूर्वकाल औषधिं विधि जाई। असर अधृत व्रत करत नसाई ॥ १० ॥

दोहा- **लोकपति जो आप सम, करत अनादर मोर।**
यही हेतु सारी प्रजा, बनी नाथ यह चोर ॥ ११३ ॥

चौ- यज्ञ वस्तु इन प्रति सब खाई । देखि नाथ मैं उदर छिपाई ॥ १ ॥
बहुत काल बीते मम गाता । जीर्ण शीर्ण अब वह सब जाता ॥ २ ॥
पूरब ऋषि मुनि कहा उपाया । करहु देर अब वहिं सुखदाया ॥ ३ ॥
खाद्य वस्तु हेतू नृप तोहीं । बल वृद्धि प्राणिन जिमि होहीं ॥ ४ ॥
करहु वीर तदवीर बताऊँ । जासे अन्न बहुत उपजाऊँ ॥ ५ ॥
करहु उपाय नाथ अब ऐसा । दोहन पात्र वत्स मम जैसा ॥ ६ ॥
करहु कल्पना दोहन कर्ता । समतल करहु मोहिं अब भर्ता ॥ ७ ॥
यथा मेघ जल स्थिर में ऊपर । वही उपाय करहु हे नृप वर ॥ ८ ॥
इति भू वचन सुना पृथु काना । कियो वत्स तब मनु गुणवाना ॥ ६ ॥
दोही निजकर औषध सारी । भई प्रजा सब जासु सुखारी ॥ ६ ॥
प्रभु सम अन्य विज्ञ जन आये । दोहे सकल पदारथ भाये ॥ १० ॥

दोहा- **रिषि मुनि इन्द्रिय पात्र, में सुर गुरु वत्स बनाय ।**
पृथ्वी देवी ते दुहा, वेद रुप पय आय ॥ ११४ ॥

चौ- सब सुर सुरपति कीन्हेउ वाछा । कंचन पात्र वीर्य बल आछा ॥ १ ॥
दानव दैत्य वहाँ पर आये । लोह पात्र निज हाथ उठाये ॥ २ ॥
वत्स श्रेष्ठ प्रहलाद बनाया । दोही आशव मदिर भाया ॥ ३ ॥
गंधर्व अप्सरा मिलकर आये । पद्म पात्र निज हाथ उठाये ॥ ४ ॥
नृप विश्वावसु वत्स बनावा । दोहेउ मधु संगीत सुहावा ॥ ५ ॥
कपिलहिं वत्स सिद्ध सब कीन्हा । अम्बर पात्र सिद्धिगुण लीन्हा ॥ ६ ॥
पितर अर्यमा वत्स बनावा आम पात्र पय कव्य दुहावा ॥ ७ ॥
अम्बर गमन सुविधा सारी । लीन्ही विद्याधर गुणकारी ॥ ८ ॥
मायि मयासुर वत्स बनाया । संकल्प रुप माया बल पाया ॥ ६ ॥
रुद्र वत्स कर भूत कराला । दोहत रक्तहि पात्र कृपाला ॥ १० ॥

दोहा- **सर्प नाग गण हे विदुर, तक्षक वत्स बनाय ।**
मुख रुपी निज पात्र में, विष पय दोहत आय ॥११५॥

चौ- पशुगण शिव वृष वत्स बनावा । पात्र अरण्य घास पय पावा ॥ १ ॥
व्याघ्र केहरी वत्स बनावा । निज निज तनु पय माँस दुहावा ॥ २ ॥
खेचर खग पति वत्स रचाये । कीट फलादि रुप मय पाये ॥ ३ ॥
बन द्रुम वत्स बना वट भारी । इस मय पय निज निज तनु धारी ॥ ४ ॥
सब गिरि वत्स हिमाचल लावा । स्वर्ण धातु गैरादिक पावा ॥ ५ ॥

एवं सब निज निज ले प्याला । दोहत काम दुधा पृथु पाला ॥ ६ ॥
पात्र व वत्स भेद भये जेते । क्षीर भेद भये कुरु वेते ॥ ७ ॥
भये मुदित अब पृथु गुणखानी । पृथ्वी निज पुत्री सम मानी ॥ ८ ॥
काम कोटि गिरि श्रृंग खारा । कीन्हा महि मंडल सम सारा ॥ ९ ॥
यथा योग्य जन स्थान निवासा । रचे ग्राम पत्तनपुर खासा ॥ १० ॥

दोहा- **दुर्ग व घोष व व्रज अरु, सेन निवास स्थान ।**
खेट व खर्वट सब रचे, पृथु नरपति गुणवान ॥ ११६॥क
पृथू पूर्व पुर ग्राम की, रही कल्पना नाँहि ।
प्रजा सभी भय रहित हो, वसे राज्य प्रथ माँहि ॥११६॥ख

चौ- ब्रह्मावर्त क्षेत्र सुखदाई । सुरसति सरिता पूरब जाई ॥ १ ॥
एक समै पृथु नृप गुण ज्ञानी । अश्वमेध शत प्रण मन ठानी ॥ २ ॥
पृथु नृप यज्ञ महोत्सव देखा । सुर पति मन नहि हर्ष विशेषा ॥ ३ ॥
जहाँ ब्रह्म शिव सह हरि आये । गंधर्व अप्सरा मुनि हुलसाये ॥ ४ ॥
विद्याधर अरु दैत्य व दानव । नन्द सुनन्द व गुह्यक मानव ॥ ५ ॥
कपिल दत्त शनकादिक नारद । यज्ञ भूमि बिच ज्ञान विशारद ॥ ६ ॥
कामधेनु वपु धर महि आई । यज्ञ हेतु वस्तु सब लाई ॥ ७ ॥
गोरस अन्न क्षीर दधि लाई । सरिता मुदित बहत सुखदाई ॥ ८ ॥
फूले तरु फल लगे अपारा । करत भृंग जिन पर गुंजारा ॥ ९ ॥
अन्त चतुर्विध गिरिवर लाये । सागर आकर रतन बिछाये ॥ १० ॥

दोहा- **लोक पाल सह लोक, सब आय उपायन दीन्ह ।**
यह प्रभाव प्रथु का लख, सुरपति मन दुख कीन्ह ॥११७॥

चौ- अश्वमेघ शत पाखंड भेषा । हरण कीन्ह जग अश्व विशेषा ।
अम्बर सुरपति जावत देखा । मुनि अत्रि निज नयन विशेषा ॥
अत्रि प्रेरित पृथु सुत धावा । ठहर ठहर इति वचन सुनावा ।
भस्म देह सिर जटा बढ़ायें । धार्मिक जानि न बाण चलाये ।
वापिस आवत राजकुमारा । देखा अत्रि परम उदारा ॥
सुरपति यज्ञ विघन कर भ्राता । जीवहु इसे तजहु नहि ताता ।
मुनि वचन सुन राजकुमारा । ताना धनु निज कुद्ध अपारा ।
धाये सुरपति अनु वह कैसे । गृधराज रावण प्रति जैसे ॥

तदा अश्व निज रूप तजाई । अन्तरध्यान भये सुरराई ।
लेकर तब हय राजकुमारा । आये शीघ्र पिता जग द्वारा ।

दोहा- **पृथु सुत का अद्भुत यह, कर्म देख रिषि राय ।**
दियो नाम विजिताश्व सब निज मन अति हर्षाय ॥११८॥

चौं- कंचन रशना सह सुरराया । आकर पुनि वह अश्व चुराया ॥ १ ॥
अत्री मुनि पुनि अम्बर जावत । पृथु सुत प्रति सुरपतिहि दिखावत ॥ २ ॥
कर कपाल खट्वाज लखाई । तजा तीर ना सुत पृथु राई ॥ ३ ॥
अत्री मुनि पुनि प्रेरित कीन्हा । तब पृथु सुत निजकर धनु लीन्हा ॥ ४ ॥
तजि हय निज तनु अन्तरध्याना । तेहि क्षण मधवा बलवाना ॥ ५ ॥
वीर अश्व ले वापिस आवा । पिता चरण पंकज सिर नावा ॥ ६ ॥
किये रूप हरि जे हय हेतु । पाप खंड जनु कुरु कुल केतू ॥ ७ ॥
बहुत बार इमि इन्द्र अपारा । धरे रुप त्यागे हर बारा ॥ ८ ॥
उन पाखंडन प्रति भ्रम पाये । नास्तिक मत वे नर फैलाये ॥ ९ ॥
नग्न रक्त पट धारण करहीं । निज कर बीच कपालन धरहीं ॥ १० ॥

दोहा- **धर्म नहीं उपधर्म यह, ऊपर सुन्दर गात ।**
अपना पक्ष बचाय ये, करत युक्ति से बात ॥ ११९ ॥

चौ- भ्रमवश नर नहि धर्म विचारा । वास्तव यह उपधर्म प्रकारा ॥ १ ॥
तदा कुपित पृथु भये अपारा । मधवा वध प्रति धनुष संभारा ॥ २ ॥
तब रित्विज सब किये मनाही । याग पशू तजि अन्य बधाही ॥ ३ ॥
जोग्य नाहिं तुम को नर नाथा । अब हम मिलकर सब यक साथा ॥ ४ ॥
होमहिं मख नाशकहिं तुम्हारे । देखु मंत्र बल अभी हमारे ॥ ५ ॥
इस प्रकार कह रित्विज सारे । होमहिं इन्द्रहि श्रुव कर धारे ॥ ६ ॥
तेहि काल विधि वहाँ पधारे । किये मनाही रित्विज सारे ॥ ७ ॥
अरे याजकों उचित न जाता । करत इन्द्र वध जो मख गाता ॥ ८ ॥
जानहु सुरपति हरि अवतारा । करहु अराधन जिन मखद्वारा ॥ ९ ॥
वे सब सुर सुरपति के अंगा । करत याग ते तुम इन भंगा ॥ १० ॥

दोहा- **पृथु के मख अनुष्ठान में, किये विघ्न के काज ।**
धर्म हीन पाखंड पथ, फैलाये सुरराज ॥ १२० ॥

चौ- कछु न इन्द्र विरोध अपारा । पाखंड मार्ग अति करहिं प्रचारा ॥ १ ॥
एकहीन शत कृतु पृथु होहीं । प्रथु प्रति धात वचन कहे सोही ॥ २ ॥

राजन मोक्ष धरम कर ताता । तोहिं जरूरत जग्य न ताता ॥ ३ ॥
होवहि मंगल नृपति तुम्हारा । इन्द्र आप दोउ हरि अवतारा ॥ ४ ॥
इन्द्र हेतु तव क्रोध न ताता । चिन्ता याग अकारण जाता ॥ ५ ॥
सो न उचित तजहू एही ताता । काम बिगारत जासु विधाता ॥ ६ ॥
सो नहि कबहुँ सफलता पाता । करहुँ वन्द मख अब सुन ताता ॥ ७ ॥
करहु न वन्द यज्ञ यदि राजा । धर्म हास ना रुके समाजा ॥ ८ ॥
इन्द्र रचित पाखंड अपारी । खिंची जात जनता यह सारी ॥ ९ ॥
रक्षा हेत धरम तुम ताता । विष्णु अंश ते वेनज जाता ॥ १० ॥

दोहा- **अपने इस अवतार का, लक्ष्य विचारउ आप ।**
भृगु आदिक इन मुनिन का, पूरहु प्रण तजि ताप ॥१२१॥

चौ- माया सुरपति पंथ प्रकासा । करहु पृथू उस पंथ विनासा ॥ १ ॥
लोक पिता इति पृथु समुझाया । तजा यज्ञ आग्रह नर राया ॥ २ ॥
इन्द्र संग पुनि मेल मिलापा । कियो नृपति तजि सब संतापा ॥ ३ ॥
कीन्हो नृप अवभृथ असनाना । दिये देव सब उन वरदाना ॥ ४ ॥
प्राप्त दक्षिणा विप्र समाजा । आशीष अमोघ दई नृप राजा ॥ ५ ॥
पितर देव रिषि मानव नाना । पूजे पृथुवर दान व माना ॥ ६ ॥
पृथु पूजित आशिष दे सारे । निज निज धाम सभी पगु धारे ॥ ७ ॥
इन्द्र सहित हरि यज्ञ पधारे । पृथु प्रति मुदित हो वैन उचारे ॥ ८ ॥
यज्ञ भंग कीन्हेउ जिन आई । माँगत इन्द्र क्षमा यह राई ॥ ९ ॥
सुधिय साधु इस लोक नरेशू । करहिं भूत प्रति बैर न क्लेसू ॥ १० ॥

दोहा- **आत्मा अजर अनादि लख, करत प्राणि सन्मान ।**
ते नर जग में धन्य है, वही शूर बलवान ॥ १२२ ॥

चौ- मोहित सुर माया तब जैसे । बचहीं अन्य लोग फिर कैसे ॥ १ ॥
माया रचित गेह सुत नारी । ममता बुध नहि राखत भारी ॥ २ ॥
आत्मा शुद्ध एक रस ताता । जानत पुरषहिं स्थित निज गाता ॥ ३ ॥
हो देहस्थ तदपि नहि मानव । होत लिप्त गुण बीच न पावन ॥ ४ ॥
सह निज धर्म ते नित्य निराशी । भजहिं भक्तियुत मो अविनाशी ॥ ५ ॥
पावत शान्ति मिलहिं सुख राशी । तनु इन्द्रिय सुख सदा उदासी ॥ ६ ॥
जे मम पद विच चित्त लगावे । संपद विपद न वे घबरावे ॥ ७ ॥
अब तुम सुख दुःख मान समाना । करहु प्रजा परिजन कल्याना ॥ ८ ॥

प्रजा पाल नृप जो जग जाता। सो नृप सदा श्रेय फल पाता ॥ ९ ॥
इह पर लोक प्रजा कृत सुकृत। तासु षष्ट अंश नृप पावत ॥ १० ॥

दोहा- **जिस नृप के निज राज की, होवत प्रजा दुखारि।**
प्रजा जनों के शाप वश, भोगत नरक हजारि ॥ १२३॥

चौ- करहु प्रजा का तुम नृप पालन। तोर पास शनकादिक राजन ॥ १ ॥
आवहि थोरे बाद कृपाला। देहिं तोर प्रति ज्ञान विशाला ॥ २ ॥
करत मोहिं वश जो दे चेता। करहुँ सुलभ सब उस नर हेता ॥ ३ ॥
सुलभ न मैं तप जग्य रचाई। जेता सुलभ भक्ति किये राई ॥ ४ ॥
मानवेन्द माँगहु वर मोसे। रखहु न भेद अरे नृप तोसे ॥ ५ ॥
जब इति वचन कहे हरि राया। पृथु पद पंकज सीस नवाया ॥ ६ ॥
सुरपति निज कर्मन अनुसारी। भये विलज्जित निज मनधारी ॥ ७ ॥
तब पृथु इन्हहिं गले लगावा। पूर्व बैर सब दूर भगावा ॥ ८ ॥
विश्वात्मा भगवान कृपालू। पूजे पद पृथु दीनदयालू ॥ ९ ॥
भक्ति भाव में लीन अपारा। प्रभु पद पंकज पृथु कर धारा ॥ १० ॥

दोहा- **तब पृथु लखि हरि वर चले, पर ना किये प्रयान।**
वात्सल्य भाव से हे विदुर, खडे रहे भगवान ॥ १२४ ॥

चौ- सुहृद साधुजन के भगवाना। चाहत कमल नयन नहिं जाना ॥ १ ॥
आदिराज तब चख भरवारी। करन सकै दरसन बनवारी ॥ २ ॥
गदगद कंठ वचन नहिं आवा। किय हरि आलिंगन सुख पावा ॥ ३ ॥
खड़े रहे ज्यो के त्यो राई। प्रभु पद पंकज सीस झुकाई ॥ ४ ॥
अश्रू पोंछि बाद नरनाथा। देखे गरुड़ स्कंध हरि हाथा ॥ ५ ॥
बोले नृपति नयन भर पानी। भव बन्धक वर मुनिजन ज्ञानी ॥ ६ ॥
माँगत नाँहि कदापि कृपालू। मोक्ष नाथ हे दीन दयालू ॥ ७ ॥
हरि कीरतन श्रवणादिक जैसा। मिलत न मोक्ष वीच सुख वैसा ॥ ८ ॥
माँगहु नाथ यही वरदाना। होवहि गात अयुत मम काना ॥ ९ ॥
सुनहु नाथ जिनते हरि गाथा। यहि वरदान देहु मोहिं नाथा ॥ १० ॥

दोहा- **तव पद पंकज वायु ये, देत कुयोगिन ज्ञान।**
इच्छा मुझको हे प्रभो, नहीं अपर वरदान ॥ १२५ ॥

चौ- मंगल प्रद मंगल कर गाना। पशु बुद्धि नर सुनहि जे काना ॥ १ ॥
होत तृप्त वह भी निज गाता। तो फिर गुणि क्यों तृप्त न जाता ॥ २ ॥

लक्ष्मी सम पदु पदुम परागी । भजूँ नाथ सब दिन अनुरागी ॥ ३ ॥
एक बातु प्रभु सुनु मनु मोरी । झगरा करहीं न लक्ष्मी तोरी ॥ ४ ॥
जग जननी संग होय लराही । करहु नाथ मम पक्ष सदा ही ॥ ५ ॥
भक्त समर्पित स्वल्प पदारथ । मानत बहुकर नहीं अकारथ ॥ ६ ॥
साधू जन पाकर भी ज्ञाना । करत भजन पद पंकज नाना ॥ ७ ॥
नहिं हरि स्मर्ण किये फल होहीं । लाख उपाय करे हरि द्रोही ॥ ८ ॥
कहा नाथ माँगहु वरदाई । यह वाणी जग मोहिनि गाई ॥ ६ ॥
वाणी जाल नाथ यह तोरा । घोटहिं कहीं गला नहिं मोरा ॥ १० ॥

दोहा- **गिरा तुम्हारी ते बँधा, मोह जाल नर जात ।**
भव भन्धन के भँवर में, पड़ा रहे दिन रात ॥ १२६ ॥

चौ- गिरा तोर प्रभु बद्ध न जाता । मोह जाल नर फिर किम आता ॥ १ ॥
सर्व समर्थ नाथ तव माया । वास्तविक रूप ते करत जुदाया ॥ २ ॥
स्त्री सुत बीच मोह वश ताता । करत प्रेम मानत सुख दाता ॥ ३ ॥
किन्तु नाथ तुम पिता समाना । करो मोर हित दीन निधाना ॥ ४ ॥
प्रथू स्तोत्र इति सुनकर काना । बोले दीन बन्धु भगवाना ॥ ५ ॥
मम पद भक्ति सदा नृप तोरी । व्यापहिं माया तोहिं न मोरी ॥ ६ ॥
करहि सदा मम आज्ञा पालन । पावत सब सुखजग बिच वह जन ॥ ७ ॥
पूजित पृथु पुनि लोक ललामा । गये विधुर वे हरि निज धामा ॥ ८ ॥
गंधर्व सिद्ध चारण मुनि जेता । मनुज अप्सरा उरग सहेता ॥ ६ ॥
देव पितर खग भूतप आये । नृप पूजित निज धाम सिधाये ॥ १० ॥

दोहा- **उत हरि सह हरिवर गये, इत पृथु मुदित अपार ।**
कर प्रणाम देवन प्रति, निजपुर गये सिधार ॥ १२७ ॥

चौ- सुनहु विदुर पुर कौन प्रकारा । मुक्ता सुमन माल लगि द्वारा ॥ १ ॥
कंचन तोरण दीपक धूपा । कंचन अगर व अक्षत पुष्पा ॥ २ ॥
यव अंकित लाजा पुर अंर्चित । कदली स्तंभ पूग तरु शोभित ॥ ३ ॥
पल्लव माला ध्वजा अपारी । करहिं प्रवेश नृपति पुर द्वारी ॥ ४ ॥
पुरजन [illegible]या मंगलकारी । दधि आदिक निज निज कर धारी ॥ ५ ॥
सब उपहार नृपति प्रति देही । भये मुदित पुरजन लखि तेही ॥ ६ ॥
शंख मृदंग दुंदुभी बाजी । गये भवन निज पृथु मन राजी ॥ ७ ॥
पुरजन देशवासि जो आये । कर अभिनन्दन सब सुख पाये ॥ ८ ॥

होय स्वयं पृथु निजमन राजी। दीन्हो वर परजागण काजी ॥ ९ ॥
सिंहासन स्थित हो नरराई। कीन्हों राज्य प्रजा सुखदाई ॥ १० ॥

दोहा- **कहे सूत शौनक मुनि, पृथु यश सुन कुरु भ्रात।**
कौषारवि सन्मान कर, फिर पूछी इमि बात ॥ १२८ ॥

चौ- अभिषे जब विप्र समाजा। कियो पृथू किमि मुनि नृप काजा ॥ १ ॥
ऐसो कौन मनुज जग माँही। पृथु कीरति सुनि खुश हो नाँही ॥ २ ॥
अद्यावधि जिन कीरति भारी। गावत सकल नृपति गुणकारी ॥ ३ ॥
शुद्ध कर्म उनका मुनि गाऊ। जिन कीरति जग बीच अपाऊ ॥ ४ ॥
बोले मुनि सुन अब कुरु भ्राता। जब जग बीच पृथु नृप जाता ॥ ५ ॥
गंग जमुन बिच अन्तर वेदी। करत निवास नृपति अघ छेदी ॥ ६ ॥
भोगत भोग प्रजा सुख दाता। सप्त द्वीप बिच वहि नृप जाता ॥ ७ ॥
ब्राह्मण वैष्णव कुल दोऊ त्यागी। शासन करत प्रजा अनुरागी ॥ ८ ॥
एक समय पृथु प्रजा सुखारी। दीक्षा महा सत्र नृप धारी ॥ ९ ॥
वहाँ देव मुनि विप्र समाजा। आये सत्र हेत रिषि राजा ॥ १० ॥

दोहा- **जिमि तारा विच चन्द्रमा, उदित होत नभ आत।**
त्यों समाज विच नृप पृथु, ठाढे सब दर्शात ॥ १२९ ॥

चौ- लम्ब बाहु उन्नत अति गोरे। कमल नयन सुस्मित मुख भोरे ॥ १ ॥
वक्षस्थल विस्तीर्ण अपारी। नासा सुघड़ सुदन्त कतारी ॥ २ ॥
धारे कृष्ण कुरंगन छाला। अम्बर पीत धरे नरपाला ॥ ३ ॥
कम्बु कंध कच स्नेहित भाये। दर्भहस्त शोभा शुभ पाये ॥ ४ ॥
खड़े पृथू सब पुर जन देखे। बोले तव नृप वचन अनोखे ॥ ५ ॥
सुनौ सभ्य गण वचन हमारा। प्रभू सुमंगल करे तुम्हारा ॥ ६ ॥
महापुरुष जो यहाँ पधारे। सुनौ कृपा कर वचन हमारे ॥ ७ ॥
सज्जन जन सन्मुख अभि प्राया। प्रकटाये दुख होत न काया ॥ ८ ॥
पावत वह नर धरमु अपारी। गावत जो निज सभा विचारी ॥ ९ ॥
प्रजा दंडधर मोहि बनावा। रक्षक वृत्ति प्रबन्धक गावा ॥ १० ॥

दोहा- **ब्रह्मवादि मुनि गण सभी, कीन्हो पंथ विचार।**
उसको नृप धारण करे, न्याय नीति अनुसार ॥ १३० ॥

चौ- वहि नृप पूर्ण मनोरथ पाता। सब सुख भोग मोक्षपद जाता ॥ १ ॥
जो नहिं न्याय नीति अनुसारी। लेवत कर नृप पाप प्रचारी ॥ २ ॥

निज ऐश्वर्य नाश वह करहीं । जो न प्रजाजन का दुख हरहीं ॥ ३ ॥
विनय एक मैं सबसे करहूँ । दृष्टि दोष तुम सब परिहरहू ॥ ४ ॥
निज निज धर्म अधोक्षज सुमिरन । करहु सदा निज कर तव पालन ॥ ५ ॥
ऐतो अनुग्रह मोरे ऊपर । करो प्रजा पुरजन सब मिलकर ॥ ६ ॥
पुण्य काज बिच सभी रिषीशा । करो समर्थन सुर मुनि ईशा ॥ ७ ॥
कर्त्ता उपदेष्टा व समर्थक । पावत तीनों फल सम सार्थक ॥ ८ ॥
यदा नाथ ईश्वर अघहारी । देवत फल करमन अनुसारी ॥ ९ ॥
इह परलोक तेजमय देही । पावत अधिकारी हरि स्नेही ॥ १० ॥

दोहा- **उत्तान पाद प्रिय व्रत मनु, अंग व ध्रुव महिनाथ ।**
अज शिव बलि प्रह्लाद सब, भये कृत्य इस पाथ ॥१३१॥

चौ- यह मत सब सम्मत सुखकारी । जेहि जानत पावत फल चारी ॥ १ ॥
हैं जग शोचनीय कुछ राजा । वैन समाँ दुख देत समाजा ॥ २ ॥
नाहीं यह मत उन मन भावा । पाप बीच जिन प्रेम बढ़ावा ॥ ३ ॥
हरि पद सेवा जिन रुचि जाता । सो तापस मल दूर भगाता ॥ ४ ॥
कृष्ण चरण आश्रय जो पाये । आवगमन सब क्लेश नसावे ॥ ५ ॥
कपट त्याग भजे भगवाना । काया मन वच गुणमति नाना ॥ ६ ॥
शुद्ध अगुण प्राकृत विज्ञानी । कर्म मार्ग जिन यज्ञ निसानी ॥ ७ ॥
यज्ञ रूप विष्णु भगवाना । गावत शास्त्र व वेद पुराना ॥ ८ ॥
परमानन्द स्वरूप अपारी । होवत मति जब विषय अकारी ॥ ९ ॥
यज्ञ व याग क्रिया फल द्वारा । दीखत जगत अनेक प्रकारा ॥ १० ॥

दोहा- **अहो प्रजा गण आप यदि, सब मिलकर निशियाम ।**
करहु अनुग्रह मुझ पर, लेकर के हरि नाम ॥ १३२ ॥

चौ- क्षमा शील तप ज्ञान अपारी । ब्राह्मण वैष्णव सदा सुखारी ॥ १ ॥
यदि सुख संपति जो तुम चाहू । करहु भगति इन पद चित लाहू ॥ २ ॥
नृप कुल तेज प्रभाव न येही । व्यापिहिं यदि नासत निज देही ॥ ३ ॥
जासु चरण वन्दित भगवाना । स्थिर लक्ष्मी यश पाये नाना ॥ ४ ॥
सेवा विप्र किये हरि राजी । विप्र द्रोह ते होत अकाजी ॥ ५ ॥
अब तुम सब ब्राह्मण कुल पूजन । करो सदा द्विज पद अभिवन्दन ॥ ६ ॥
सेवत नित्य ब्रह्म कुल जोई । चित्त शुद्ध हो पाप बिगोई ॥ ७ ॥
ज्ञानादिक आश्रय बिन सेही । तदपि मोक्ष फल पावत तेही ॥ ८ ॥

अनन्त विप्र मुख आहुति दाता । अगनि होम किय क्या फल पाता ॥ ९ ॥
जो द्विज नित्य समाधि लगाई । धारहिं वेद ब्रह्म हिय लाई ॥ १० ॥

दोहा- **उन द्विज वन्दन की सदा, पद पंकज की धूरि ।**
धारहुँ मैं निज मुकुट पर, जासु पाप सब दूरि ॥ १३३ ॥

चौ- श्रेष्ठ ब्रह्मकुल गोकुल सारे । भक्त सहित हरि जग रखवारे ॥ १ ॥
रहे मुदित मो पर हितकारी । इति पृथु वचन कहे सुखकारी ॥ २ ॥
तब सब पितर देव द्विज नाना । साधुवाद किय मुदित महाना ॥ ३ ॥
जासु वंश सुत उत्तम जाता । जीतहिं पुण्य लोक उस ताता ॥ ४ ॥
सुनी वेद वाणी यह जेती । कीन्ही सत्य नृपति तुम वेती ॥ ५ ॥
नृपति वेन हत विप्रन शापा । गयो नरक ना तोर प्रतापा ॥ ६ ॥
कनककशिपु हरि निन्दक गाया । सुत प्रताप ते नरक न पाया ॥ ७ ॥
हरि प्रति भगति नृपति अति तोरी । जीउ नाथ तुम वरिस किरोरी ॥ ८ ॥
तुम सम पाय नाथ हम नाथा । भई प्रजा सब तौर सनाथा ॥ ९ ॥
नहि शिक्षा यह अचरजकारी । महा पुरुष सब होत उदारी ॥ १० ॥

दोहा- **आजु नाथ तुमने सभी, कियो दूर अंधियार ।**
विबृद्ध सत्व हम तुम प्रति, वन्दहिं वारम्वार ॥ १३४ ॥

चौं - पुरजन प्रति पृथु वचन सुनाये । तेहि काल शनकादिक आये ॥ १ ॥
तेज सूर्य सम चार मुनीशा । नभ उतरत देखे नर ईशा ॥ २ ॥
देखे वे अनुचर सह राजा । प्राप्त प्राण इव दरशन काजा ॥ ३ ॥
उठे नम्र हो मुदित अपारा । पद पंकज पूजे विधि द्वारा ॥ ४ ॥
ले चरणोदक सीस चढ़ाये । सिंहासन सब मुनि पधराये ॥ ५ ॥
बोले पृथु इमि वचन सुहाया । कवन पुण्य कीन्हों मुनिराया ॥ ६ ॥
दर्शन दुर्लभ नाथ तुम्हारे । सो मुनि आये पास हमारे ॥ ७ ॥
विप्र वंश की यहि मनुसाई । जिन पर कृपा करहि द्विजराई ॥ ८ ॥
अनुचर सह शिव विधि भगवाना । होत मुदित उस नर परनाना ॥ ९ ॥
इह परत्र कछु दुरलभ नाँही । जापर कृपा करहिं द्विज जाही ॥ १० ॥

दोहा- **जिस गृहस्थ के गेह में, तुम सम पूजे जात ।**
अधन होत वह धन्य है, भाग्यवान कहलात ॥ १३५ ॥

चौ- जिस घर संत चरण नहि आवे । सो घर सर्प निवास कहावे ॥ १ ॥
स्वागत होउ मुनीश तुम्हारा । बालावय ते तुम व्रत धारा ॥ २ ॥

भव दुख पतित कर्म अनुसारी । कुशल कहाँ मुनि होय हमारी ॥ ३ ॥
कहा कुशल पूछहिं मुनिराया । करहु रमण तुम जीव निकाया ॥ ४ ॥
कुशल व अकुशल वृत्ति स्वरूपा । जीते आप इन्हें मुनि भूपा ॥ ५ ॥
कल्याण मार्ग इस भव विच होई । सो सब देव सुनायहु मोंही ॥ ६ ॥
भक्त अनुग्रह कारन स्वामी । विचरहु सिद्ध रूप निशियामी ॥ ७ ॥
श्रुति प्रिय वचन नृपति इति गाये । सुनकर वे मुनि मन हुलसाये ॥ ८ ॥
बोले वच अब सनत कुमारा । महाराज तव प्रश्न उदारा ॥ ९ ॥
श्रोता वक्ता जिन प्रिय आगम । देत मान्यता संत समागम ॥ १० ॥

दोहा- **हरि कीरति प्रति तव मति, सो मन मैल नसात ।**
शास्त्र बीच शुभ मार्ग का, साधन बहुत दिखात ॥१३६॥

चौ- गुरु अरु शास्त्रवचन विश्वासा । भगवत धर्म तत्व जिज्ञासा ॥ १ ॥
चर्चा धर्म कथा भगवाना ।श्रद्धा सह वैराग्य निदाना ॥ २ ॥
ज्ञान योग निष्ठा हरि सेही । करत कीरतन सदा सनेही ॥ ३ ॥
धन इन्द्रिय सुख भोग तजाये । विषय बीच नहि प्रेम लगाये ॥ ४ ॥
जे नर होय विषय लवलीना । उन प्रिय वस्तु न होत अधीना ॥ ५ ॥
हरि गुण रुप सुधामृत पाना । करत सदा संतुष्ट निधाना ॥ ६ ॥
तृष्णाहीन अहिंसा धारी । यम सह नियम अनिन्दाकारी ॥ ७ ॥
द्वँद्व निरीह क्षमा व्रत धारी । संत समागम सदा सुखारी ॥ ८ ॥
ये उपकरण विराग प्रदाता । निरगुण ब्रह्म बीच रति जाता ॥ ९ ॥
ब्रह्म बीच जब प्रीति अपारी । मानव ज्ञान विराग प्रचारी ॥ १० ॥

दोहा- **वैराग ज्ञान के वेग ते, पांडव भूत प्रधान ।**
जीव हृदय को दग्ध कर, तजे कष्ट की खान ॥ १३७ ॥

चौ- होत उपाधि हीन जब मानव । अंतर बहि कुछ करत न अनुभव ॥ १ ॥
स्वप्न बीच जिमि वस्तु अनेका । जागृत बीच न दीखत ऐका ॥ २ ॥
यथा विश्व जल दरपन भेदा । रुप बिम्ब प्रतिबिम्ब विभेदा ॥ ३ ॥
जल दरपन जब होत अभावा । दीखत एक रूप नहि आवा ॥ ४ ॥
इन्द्रिय विषय लीन नर चेता । बुद्धि विचार शक्ति हर लेता ॥ ५ ॥
होत विचार शक्ति जब हीना । रहत न स्मृति उस पुरुष अधीना ॥ ६ ॥
स्मृति क्षय ज्ञान नष्ट हो जावे । ज्ञान भृष्ट निज आत्म नसावे ॥ ७ ॥
आत्म भृष्ट ते स्वारथ नासे । स्वार्थ नाश ही दुःख प्रकासे ॥ ८ ॥

भृष्ट होय नर ज्ञान विग्याना । पावत स्थावरादि तनु नाना ॥ ९ ॥
अज्ञान मोह ते तरना चाहू । विषय संग सब दूर भगाहू ॥ १० ॥

दोहा- **विषय संग श्रुति वर्ग की, प्राप्ति सदा नसात ।**
वेद वर्ग में मोक्ष ही, सर्व श्रेष्ठ कहलात ॥ १३८ ॥

चौ- वर्ग तीन विच यम भव पावे । काल चक्र सब कुशल नसावे ॥ १ ॥
प्रकृति बीच गुण क्षोभ तदन्ता । उत्तम अधम पदार्थ नसन्ता ॥ २ ॥
तनु इन्द्रिय बुद्धि अरु प्राना । आवृत स्थावरादि अभिमाना ॥ ३ ॥
सब प्राणिन बिच ईश प्रकाशित । उन प्रति भाव करहु नृप अरपित ॥ ४ ॥
यह प्रपंच मायाभय जासू । कारज कारण रूप प्रकासू ॥ ५ ॥
जासु पाद बिच भक्ति रखाई । छेदहिं हृदय ग्रन्थि मुनिराई ॥ ६ ॥
भजहु निरन्तर उन भगवाना । वासुदेव हरि दया निधाना ॥ ७ ॥
मनेन्द्रिय ग्राह वसहिं भव सागर । करहिं न पार योग किय दुष्कर ॥ ८ ॥
हरिपद पंकज नाव बनाई । जाहु पार भव सागर राई ॥ ९ ॥
ब्रह्मपुत्र मुनि सनत कुमारा । निज मुख ते इमि तत्व उचारा ॥ १० ॥

दोहा- **तब पृथु नृप बोले मुदित, होकर विदुर अपार ।**
प्रथम प्रभू ने मुझ पर, कीन्ही कृपा पधार ॥ १३९ ॥

चौ- कृपापूर्ण कारण उस ताता । कियो आगमन यहँ श्रुति भ्राता ॥ १ ॥
नाथ आप सब बड़े दयालू । कियो काम सम्पन्न कृपालू ॥ २ ॥
कृपा काज इस कहो मुनीशा । कवन दक्षिणा देउँ रिषीशा ॥ ३ ॥
प्राण देह सुत सुखद अगारा । राज सैन्य महि कोश अपारा ॥ ४ ॥
ये सब नाथ आपके जानो । देव इन्हें मोरे मत मानों ॥ ५ ॥
सेनय राज्य दंड विध शासन । है अधिकार वेद विद विप्रन ॥ ६ ॥
विप्र पदारथ अपर न खाता । धारत वस्त्र सदा निज गाता ॥ ७ ॥
दान वस्तु अपनी ही देवत । अपर वस्तु वह कबहुँ न लेवत ॥ ८ ॥
ऐसो कौन भयो जग देही । विप्र हेतु जो देत सकेही ॥ ९ ॥
विप्र कृपा पाकर हम सारे । खावत केवल अन्न विचारे ॥ १० ॥

दोहा- **जिनके द्वारा ब्रह्म का, करते सभी विचार ।**
उन विप्रन का हम करें, कैसे प्रत्युपकार ॥ १४० ॥

चौ- आदि राज पूजित मुनिज्ञानी । करत प्रशंसा नृप गुण खानी ॥ १ ॥
गगन मार्ग गमने श्रुति भ्राता । आगे सुनहु कथा कुरु ताता ॥ २ ॥

पा आत्मोपदेश पृथु राजा । एक चित्त निज आत्म विराजा ॥ ३ ॥
प्राप्त मनोरथ सम निज काया । भयो मुदित वेनज नर राया ॥ ४ ॥
देश व काल शक्ति अनुसारी । ब्रह्म समर्पित कर्म प्रचारी ॥ ५ ॥
करत कर्म नरपति जग जेते । करत समर्पित हरि प्रति वे ते ॥ ६ ॥
प्रकृति परे निज जीव लखाई । निज गृह वास करत नरराई ॥ ७ ॥
इन्द्रि विषय सब दूर भगाई । करत ज्ञान ते कर्म कमाई ॥ ८ ॥
अर्चि नाम तियते पृथु राया । सुवन पाँच पाये सुखदाया ॥ ९ ॥
विजित अश्व अरु धूमर केशा । हर्यक्ष द्रविण वृक पाय नरेशा ॥ १० ॥

दोहा- **जग प्राणिन रक्षा प्रति, लोक पाल गुण धार ।**
मन प्रिय हित कर वचन से, करते प्रजा सुधार ॥ १४१॥

चौ- पृथु धन ग्रहण त्याग सम भानू । कठिन तेज नृप यथा कृशानू ॥ १ ॥
दुर्जय जानहु इन्द्र समाना । इष्टद स्वर्ग क्षमा महि माना ॥ २ ॥
तप्त काम पर्जन्य समाना । सागर सम दुर्बोध महाना ॥ ३ ॥
शिक्षा मम सम धीरज मेरू । धनी बीच जिमि रहे कुबेरू ॥ ४ ॥
गुप्त अर्थ बिच जिमि जलराई । गमन शक्ति यथा अनिलाई ॥ ५ ॥
शिव सम तेज असाध अपारी । सुन्दर काम समाँ तनु धारी ॥ ६ ॥
वीर सिंह वत्सल मनु मानूँ । ब्रह्म वाद सुर गुरू समानूँ ॥ ७ ॥
गौ गुरु विप्र तुल्य निजराया । प्रभुता ब्रह्म समाँ सब गाया ॥ ८ ॥
भगवत भक्त भक्ति व्रतधारी । लज्जा शील विनय उपकारी ॥ ९ ॥
यथा राम विमल यश धारी । करत प्रवेश संत श्रुति द्वारी ॥ १० ॥

दोहा- **उस प्रकार पृथु नृपति की, कीरति विमल अपार ।**
सत पुरुषों के कर्ण में, करती सदा गुँजार ॥ १४२ ॥

चौ- दिवस एक निज देख बुढ़ापा । बोले पृथु निज मन चुप चापा ॥ १ ॥
जेहि काज मैं यहँ पर आया । सो सब काम पूर्ण कर पाया ॥ २ ॥
प्रभु आदेश दियो जो मोहीं । सब प्रकार पालन किय ओही ॥ ३ ॥
इति विचार कर निज मन राजा । दियो राज निज आत्मज काजा ॥ ४ ॥
प्रजा बिलखती तज कर सारी । गये विपिन संग ले निज नारी ॥ ५ ॥
जाकर वानप्रस्थ व्रत धारा । कीन्हों तप आरंभ अपारा ॥ ६ ॥
कन्द मूल फल पर्ण अहारा । रहे नीर अरु वायु अधारा ॥ ७ ॥
किये पंच तप ग्रीषम काला । झेलत वर्षा नीर भुआला ॥ ८ ॥

मग्न कंठ जल शिशिर सुठाढ़ा । कीन्हो पृथु नृप तप अति गाढा ॥ ९ ॥
प्राण जीत किय कृष्ण अराधन । भूमि शयन वल्कल कर धारण ॥ १० ॥

दोहा- **तप प्रभाव ते कर्म मल, नस कर चित्त विशुद्ध ।**
प्राणायामों से सभी, भई इन्द्रियाँ रुद्ध ॥ १४३ ॥

चौ- कटे वासना बन्धन सारे । शीत ऊष्ण दुख सहे अपारे ॥ १ ॥
दियो ज्ञान जो सनत कुमारा । हरि पूजन की उसी प्रकारा ॥ २ ॥
भई भक्ति अति प्रभु पद पंकज । ज्ञान विराग बढ़ेउ दुख भंजक ॥ ३ ॥
हृदय ग्रन्थि छेदेउ तब राया । ज्ञान विराग अपारसहाया ॥ ४ ॥
जब लगि विष्णु कथा नहि भावे । तब लगि योग न मोह नसावे ॥ ५ ॥
आत्मा बिच निज आत्म लगाई । ब्रह्म भूत पृथु देह तजाई ॥ ६ ॥
प्रथम चरण ते निज मलद्वारा । दाबेउ पृथु नृप परम उदारा ॥ ७ ॥
शनै शनै खींचेउ पुनिवाता । मूल दंड ते ऊपर गाता ॥ ८ ॥
नाभ हृदय छाती गल सीसा । स्थिर किय ब्रह्मरंध्र नर ईशा ॥ ९ ॥
तजी वासना अब संसारी । भोग लालसा सिद्धि अपारी ॥ १० ॥

दोहा- **वायू वायू में मिला, निज तनु मही मिलाय ।**
तेज तेज में लीन कर, अम्बर अम्बर लाय ॥ १४४ ॥

चौ- इन्द्रिय छिन्द्र अकाश मिलाई । तनु रसांश चल बीच विलाई ॥ १ ॥
क्षिति जल बिच जल तेज प्रकासा । तेज वायुबिच वायु अकासा ॥ २ ॥
इन्द्रिय विषय मुनीश्वर गाये । महतत्व बिच वे सब आये ॥ ३ ॥
जीव बीच महतत्व मिलावा । ब्रह्म बीच पुनि जीव सिधावा ॥ ४ ॥
एवं पृथु नृप देह तजाई । आगे कथा सुनहु कुरुराई ॥ ५ ॥
अर्चिनाम सुकुमारी नारी । पति सेवा हित विपिन सिधारी ॥ ६ ॥
धर पति धर्म करति पति सेवा । खावत कन्द मूल फल मेवा ॥ ७ ॥
भूमि शयन वलकल तनु धारी । विपिन दुख कुछ नहीं विचारी ॥ ८ ॥
मृतक पतिहिं लखि करत विलापा । चिता रची गिरि पर चुपचापा ॥ ९ ॥
मृतक कर्म कीन्हों पुनि रानी । कीन्हों स्नान नयन भर पानी ॥ १० ॥

दोहा- **पति हेतू दे अंजली, देवन सीस नवाय ।**
तीन परिक्रमा कर चिता, पति पद ध्यान लगाय ॥१४५॥

चौ- अग्नि प्रवेश कीन्ह महारानी । पति अनुगमन देख वरदानी ॥ १ ॥
आई सुर तिय वहाँ अपारी । भई मुदित निज पति सह सारी ॥ २ ॥

पुष्प वृष्टि मंदर गिरि ऊपर । ढोल मृदंग बजाय करी सुर ॥ ३ ॥
बोली देव तिया हरषाई । धन्य धन्य की झरी लगाई ॥ ४ ॥
अहो धन्य यह पृथु महारानी । कीन्ही पति सेवा मन वानी ॥ ५ ॥
सेवत रमा समाँ पति पाँवा । किंचित कष्ट न मन यह लावा ॥ ६ ॥
अरे लाँघ हमको यह रानी । गइ पतिलोक बीच गुण खानी ॥ ७ ॥
आयुष अल्प जगत जे मानव । करत साधना हरिपद अनुभव ॥ ८ ॥
कोइ वस्तु नहि दुरलभ तेही । विषय वासना तज हरि स्नेही ॥ ९ ॥
मोक्ष साधना तनु नर पावा । विषय बीच जो चित्त लगावा ॥ १० ॥

दोहा- **नर तन पाकर विषय में, जे निज चित्त लगाय ।**
ते नर पामर पाप मय, आत्मा हन गति जाय ॥ १४६॥

चौ- सुनत कीरति इति निज रानी । गई पति लोक अर्चि गुण खानी ॥ १ ॥
भगवत रुप नृपति पृथु पावा । यह पृथु चरित तोर प्रति गावा ॥ २ ॥
पृथु नृप चरित पाठ जो गावे । श्रृद्धा सह जो सुनै सुनावै ॥ ३ ॥
पृथु पद पर वह मनुज सिधावे । ब्राह्मण तेजवन्त बन जावै ॥ ४ ॥
क्षत्रिय भूमि नाथ पद पाही । वैश्य पण्य अति लाभ कमाही ॥ ५ ॥
श्रेष्ठ मार्ग पर शूद्र सिधावे । हरिपद भगति विदुर वह पावे ॥ ६ ॥
तीन बार सुनकर नर नारी । पावत पुत्र व द्रव्य अपारी ॥ ७ ॥
सुनत मूर्ख नर पंडित जाता । सब प्रकार मंगल फल पाता ॥ ८ ॥
सुनकर पात पदारथ चारी । यश आयुषप्रद अशुभ निवारी ॥ ९ ॥
कलिमल हरनि सदा सुख दैनी । विष्णु लोक प्रति यही नसैनी ॥ १० ॥

दोहा- **जो राजा विजयाभिमुख, सुनकर जावत ऐहि ।**
सब शत्रु वश होयकर, देवत वलि झट तेहि ॥ १४७ ॥

छन्द - **वलि देहिं अरि झट आयकर, उस नृपति के प्रति हे विदुर ।**
जिमि आनकर सब भूप गण, पृथु सामने हरसाय कर ॥
तज वासना जो सुनहिं गुनहीं , औ सुनावहिं जो नर ।
इस सिंधु भव से पार तर कर, जात हरि पद कंज फिर॥ १ ॥

दोहा- **पृथु चरित्र जो प्रति दिन, हरि पद चित्त लगाय ।**
सुनहि प्रेम ते जो नर, भगवत गति वह पाय ॥ १४८ ॥

चौ- कहं मैत्रेय सुनहु कुरु भ्राता । जित हय नाम पृथु सुत ताता ॥ १ ॥
नृप कनिष्ट भ्राता रहे चारी । उन प्रति राज दियो बटवारी ॥ २ ॥

हर्यक्ष हेतु प्राची दिलवाई । धूम्रकेश प्रति याम्य बताई ॥ ३ ॥
पश्चिम देश नृपति वृक कीन्हो । उत्तर देश द्रविण प्रति दीन्हो ॥ ४ ॥
विद्या अन्तर धान अपारी । सीखेउ सुर पति से सुखकारी ॥ ५ ॥
तब ते अन्तरधान कहायो । नृप विजिताश्व नाम यह पायो ॥ ६ ॥
विजित अश्व शिखंडिनि जाये । शुचि पवमान व पावक पाये ॥ ७ ॥
वसिष्ठ शाप इन अगनिन कीन्हो । यहि हित जन्म इन्हें यहँ लीन्हो ॥ ८ ॥
योग मार्ग ते आगे जाकर । अग्नि रुप यह बने विदुरवर ॥ ९ ॥
हय जित गेह नभस्वति रानी । हविर्धान सुत जायेउ आनी ॥ १० ॥

दोहा- **राज वृत्ति दारुण लखि, हविर्धान गुणवान ।**
दीर्घ यज्ञ मिष कर वह, तजी राज की शान ॥ १४९ ॥

चौ- कर हरि आराधन हविधाना । पायो लोक विष्णु भगवाना ॥ १ ॥
हविर्धानि ते नृप हविधाना । पाये षट् सुत अति गुणवाना ॥ २ ॥
बृर्हीषद् गय शुक्ल व कृष्णा । जितव्रत सत्य नाम जिन वरणा ॥ ३ ॥
वृहतपुत्र बर्हीषद गाया । कर्म काण्ड बिच कुशल बताया ॥ ४ ॥
पद प्रजेश का उन नृप पाया । लगातार हरि यजन रचाया ॥ ५ ॥
प्राची अग्र कुशा फैलाई । पाटी भूमि सभी नरराई ॥ ६ ॥
आगे चल कर वह नरराया । प्राचीनवर्हि इति नाम कहाया ॥ ७ ॥
सागर कन्या शतद्रुति नामा । कियो ब्याउ नृप वर गुण धामा ॥ ८ ॥
चारु अंग आनन अति भोरी । नासा शुक सम वयस किसोरी ॥ ९ ॥
सागर कन्या ब्याउ रचावा । अग्नि वेदि पर भँवर दिलावा ॥ १० ॥

दोहा- **अग्नि देव लख नृप सुता, मोहित भये अपार ।**
यथा शुकी को देक कर, पूरब भयो विकार ॥ १५० ॥

चौ- देख नवोढ़हिं नर गंधर्वा । मोहित भये असुर सुर सर्वा ॥ १ ॥
प्राचीन बर्हि की शत द्रुति रानी । जाये दश सुत तप गुण ज्ञानी ॥ २ ॥
तुल्य नाम व्रत सब तप धारी । नाम प्रचेता जगत पुकारी ॥ ३ ॥
पिता एक दिन पास बुलाये । सृष्टि हेतु पितु आज्ञा पाये ॥ ४ ॥
सिन्धु बीच जब किये प्रवेशा । मारग जाते मिले गिरेशा ॥ ५ ॥
शिव मुख ते सुन कर विधि सारी । अयुत वर्ष कीन्हों तप भारी ॥ ६ ॥
कियो ध्यान जप हरि पद पूजन । जीत इन्द्रियाँ वश कर निज मना ॥ ७ ॥
नृप सुत शिव संगम मुनि कैसे । दियो ज्ञान उन प्रति शिव जैसे ॥ ८ ॥

सो सब नाथ सुनावहु मोही । शिव संगम नर दुर्लभ होही ।। ९ ।।
नित हर शक्ति साथ ले ताता । विचरत लोक हेतु सुखदाता ।। १० ।।

दोहा- **विदुर वचन सुनकर मुनि, बोले सभी प्रचेत ।**
पिता वचन निज सीस धर गये तपस्या हेत ।। १५१ ।।

चौ- दिशा पश्चिमी सागर आये । पथ बिच एक सरोवर पाये ।। १ ।।
सागर सम विस्तीर्ण अपारी । फूले नील कंज मनहारी ।। २ ।।
चक्रवाक अरु सारस हंसा । करत शब्द सुनकर सह वंशा ।। ३ ।।
वृक्ष लता शोभित अति सुन्दर । गावत मत्त भ्रमर जिन ऊपर ।। ४ ।।
सरवर बीच मनोहर गीता । सुनकर विस्मय भये प्रचीता ।। ५ ।।
तदा प्रचेता उस सर भीतर । देखे निकसत शिव सह अनुचर ।। ६ ।।
तप्त हेम सम सुन्दर काया । नीलकंठ त्रय लोचन भाया ।। ७ ।।
सहसा दरशन कर सुख धामा । नृप सुत शिव प्रति किये प्रणामा ।। ८ ।।
तब शरणागत जन भय हारी । बोले वचन शंभु त्रिपुरारी ।। ९ ।।
सुत प्राचीनबर्हि तुम सारे । नसें अमंगल सभी तुम्हारे ।। १० ।।

दोहा- **कृपा तुम्हारे पर अति, मेरी रही अपार ।**
यही हेतु दरसन दियो, आकर सह परिवार ।। १५२ ।।

चौ- नृपसुत जो तुम करना चाहू । सो सब जावहु करन ताहू ।। १ ।।
जे नर वासुदेव प्रिय होही । सो नर मोरे परम सनेही ।। २ ।।
जे निज धर्म कर्म अनुसारी । पालत आश्रम धर्म अपारी ।। ३ ।।
जन्म बाद शत विधि पद पावे । अधिक करे मम पास सिधावे ।। ४ ।।
भक्त अनन्य हरी भगवाना । पावत वैष्णव धाम महाना ।। ५ ।।
तुम भगवत प्रिय मम प्रिय जाता । सुनो स्तोत्र मम मुख विख्याता ।। ६ ।।
बद्ध अंजली उन प्रति हेतु । स्तोत्र उचारे इमि वृष केतू ।। ७ ।।
तव उत्कर्ष उच्च भगवाना । करत आत्मविद का कल्याना ।। ८ ।।
निज आनन्द लाभ हित जाना । उससे होवहिं मम कल्याना ।। ९ ।।
परमानन्द रूप नित ताता । जय हरि आत्म स्वरूप विधाता ।। १० ।।

दोहा- **वासुदेव कूटस्थ जय, शान्त स्वरोचिष नाथ ।**
कमल नाभ मुकुन्द प्रभु, गाव जगत तव गाथ ।। १५३ ।।

चौ- दुरन्त व अन्तक सूक्ष्म अपारी । संकर्षण जग बोध खरारी ।। १ ।।
जय रतिनाथ मदन मन जेता । जय प्रद्युम्न मार झषकेता ।। २ ।।

जय अनिरुद्ध पूर्ण प्रभु भानू। पाप जलावन हेतु कृशानु ॥ ३ ॥
स्वर्ग व मोक्ष द्वार तुम दाता। अन्न रुप जय सोम प्रदाता ॥ ४ ॥
नीर रूप भूरूप अरूपा। जयति विराट रूप नभरूपा ॥ ५ ॥
स्वर्ग प्रवृत्त निवृत्त प्रदाता। धर्म विपाक मृत्यु दुख दाता ॥ ६ ॥
जय सर्वज्ञ कर्म फल दाता। कृष्ण साँख्य योगेश्वर त्राता ॥ ७ ॥
शक्ति तीन सहेत पुरारी। ज्ञान क्रिया के रूप अपारी ॥ ८ ॥
आकृति रूप विभूति वाचा। जय पुराण पुरुषोत्तम साँचा ॥ ९ ॥

दोहा- **प्रभो आपके दरश की, आसा लगी अपार।**
रूप अनूपम निरख कर, जावे भव के पार ॥ १५४ ॥

चौ- वर घनश्याम दीर्घ चतुबाहू। आनन रुचिर कमल चखजाहू ॥ १ ॥
द्विज पंक्ति मन मोहिनी जाता। गोल कपोल अमोल सुहाता ॥ २ ॥
सुघड़ नासिका सुन्दर भौंही। शोभित सम कानन पुट दोही ॥ ३ ॥
मनहर मुख मुस्कान निराली। कृष्ण वर्ण अलकें घुँघराली ॥ ४ ॥
लटकत कुंडल मुकुट मनोहर। कटी मेखला कंकन कर पर ॥ ५ ॥
कमल कुसुम केशर सम पीता। वस्त्र मनोहर उज्वल शीता ॥ ६ ॥
गले हार आभूषण साजे। शंख व चक्र गदाम्बुज राजे ॥ ७ ॥
कौस्तुभ मणि कारण वनमाली। छटा देव तव महा निराली ॥ ८ ॥
वक्षस्थल श्रीवत्स सुसोही। लखि जिस रूप कसौटी मोही ॥ ९ ॥
चल दल पात समान तुम्हारा। विश्व निवास उदर निरधारा ॥ १० ॥

दोहा- **नाथ आपका विग्रह, करे भक्त भय दूरि।**
निज सिर पर धारें सदा, पद पंकज की धूरि ॥ १५५ ॥

चौ- तव नख निकसत काँति अपारा। नासत जीव हृदय अहँकारा ॥ १ ॥
रहे सदा जो भक्त सहारे। करें देव वहि दर्श तुम्हारे ॥ २ ॥
आत्म शुद्धि इच्छा अभिलासी। ध्यावहिं रुप सदा सुखरासी ॥ ३ ॥
यद्यपि दुर्लभ दरस तुम्हारा। भक्ति करे नहि लगत अबारा ॥ ४ ॥
निर्जन भक्ति अराधन कारी। स्वर्ग मोक्ष इच्छा नहि धारी ॥ ५ ॥
जो जन चरण शरण प्रभु जावे। तेहि काल ना कबहुँ सतावे ॥ ६ ॥
हरि प्रेमी जन संगति पावे। अर्ध निमेष व निमिष वितावे ॥ ७ ॥
तुलना स्वर्ग व मोक्ष न जासू। विष्णु भक्त पद प्रेम प्रकासू ॥ ८ ॥

भक्त समागम होउ हमारा । यही अनुग्रह नाथ तुम्हारा ॥ ९ ॥
भक्ति करे चित निरमल जाता । बाह्य विषय बिच ना भटकाता ॥ १० ॥

दोहा- **देखहि मुनि तव तत्व सब, जिस ततु विश्व प्रकाश ।**
जो निज माया से करे, इस जग का आभास ॥ १५६ ॥

चौ- धरत अनेक रूप तव माया । करो काम तुम यही सहाया ॥ १ ॥
भेद बुद्धि माया के कारन । आवत अपर जनों के ही मन ॥ २ ॥
किन्तु नाथ मन किसी प्रकारा । आवत कबहुँ न कोई विकारा ॥ ३ ॥
हम स्वतंत्र जानत प्रभु तोही । माया असर कबहुँ नहि होही ॥ ४ ॥
जे योगी निज क्रिया कलापू । पूजहिं श्रृद्धा सह पद आपू ॥ ५ ॥
वे ही वेद शास्त्र के साँचे । जानहु पंडित और न बाँचे ॥ ६ ॥
आदि पुरुष अनुपम प्रभुमाया । सृष्टि पूर्व सोवति तव छाया ॥ ७ ॥
आदि शक्ति यह प्रभो तुम्हारी । करती रज सत्वादिक जारी ॥ ८ ॥
निज शक्ति ते रच पुर चारी । करत निजांश प्रवेश अपारी ॥ ९ ॥
यथा भ्रामरी मधु आस्वादन । भोगत त्योंही तुम उन विषयन ॥ १० ॥

दोहा- **अंडज पिंडज स्वेदज, उदभिज ये पुर चार ।**
ब्रह्म अंश इनमें बसे, सोही जीव विचार ॥ १५७ ॥

चौ- प्रलय काल जगत में आता । प्रखर असह्य वेग दुखदाता ॥ १ ॥
विचलित भूतहिं भूत कराही । करत नाथ सब लोक नसाही ॥ २ ॥
यथा वायु मेघन के द्वारा । करहि नष्ट नभ मेघ अपारा ॥ ३ ॥
कामुक अरु उन्मत्तहिं ग्रसहीं । यथा सर्प मूषक मुख रखहीं ॥ ४ ॥
काल रूप भय ते घबरावे । क्यों नहि चरण शरण तव आवे ॥ ५ ॥
जिन पद पंकज अरचहि धाता । मनु शिव नारद जिन गुण गाता ॥ ६ ॥
यह सब विश्व रुद्र भय खावे । हरि पद तज कहिं अभय न पावे ॥ ७ ॥
हे नृप नंदन सुनो प्रचेतू । सर्व भूत स्थित हरिपद हेतू ॥ ८ ॥
ध्याहु गुनहु जपहु यह गाथा । पूजहु चरण कमल भवनाथा ॥ ९ ॥
यही स्तोत्र सब करो उच्चारन । एक चित्त कर मुनि व्रत धारन ॥ १० ॥

दोहा- **सृष्टि के निरमाण हित, सभी प्रजापति हेतु ।**
यही स्तोत्र पूरब विधि, गायउ सुनौ प्रचेतु ॥ १५८ ॥

चौ- प्रजा सर्ग प्रेरित विधि कीन्हा । हम सब हेतु स्तौत्र यह दीन्हा ॥ १ ॥
रची सृष्टि हम विविध प्रकारा । पढ़ कर इसी स्तोत्र के द्वारा ॥ २ ॥

योगादेश स्तोत्र जो कोई । पढ़कर अचिर रमा प्रिय होई ॥ ३ ॥
श्रृद्धा सहित पढहि जो कोई । दुराराध्य हरि पद प्रिय होई ॥ ४ ॥
सब ज्ञानन विच यह शुभ ज्ञाना ॥ पात श्रेठता पढ़हिं सुजाना ॥ ५ ॥
चढ़कर नौका ज्ञान अपारा । व्यसन सिंधु ते जावहिं पारा ॥ ६ ॥
जे जे करहिं कामना मानव । सो सब पावत कर इस अनुभव ॥ ७ ॥
श्रृद्धा सहित जो प्रातः काला । सुनहिं सुनावहिं होय निहाला ॥ ८ ॥
बन्धन कर्म तजहि वह सारे । जो नित प्रति यह स्तोत्र उचारे ॥ ९ ॥
रुद्र गीत यह पढ़कर सारे । करहु तपस्या हरि चित धारे ॥ १० ॥

दोहा- **हे नृप नन्दन तुम सब, जपो एक चित धार ।**
पावहु अंत मनोरथ, जावहु भव के पार ॥ १५९ ॥

चौ- नृप नन्दन प्रति इति आदेशा । देकर शंभु गये निज देशा ॥ १ ॥
रुद्र गीत जप किये प्रचेता । गये नीर विच ये तप हेता ॥ २ ॥
अयुत वर्ष कीन्हो तप भारी । आगे सुनह कथा शुभकारी ॥ ३ ॥
नृप प्राचीनबर्हि कुरुताता । कर्म मार्ग प्रति अति रति जाता ॥ ४ ॥
कर्म मार्ग आसक्त नृपालू । देखे नारद दीन दयालू ॥ ५ ॥
नृप समीप नारद मुनि आये । देख नृपति मन अति हुलसाये ॥ ६ ॥
पूजन कीन्हीं विविध प्रकारा । पाछे नारद वचन उचारा ॥ ७ ॥
कर्म मार्ग में तव कल्याना । नृपवर मैं न कदापि माना ॥ ८ ॥
कर्म मार्ग विच मोक्ष स्वरूपा । पाउ कदापि न तुम नर भूपा ॥ ९ ॥
नारद के सुन वचन दयालू । मुनि प्रति बोले तदा नृपालू ॥ १० ॥

दोहा- **कर्म मार्ग अपविद्ध धी, जानहु नहि कल्यान ।**
करहु कृपा अब मुनि मुझे, देहु मोक्ष का ज्ञान ॥ १६० ॥

चौ- संसार मार्ग भटकत जो कोही । कल्याण पंथ पावत नहीं सोही ॥ १ ॥
बोले नारद सुनो नृपालू । मोक्ष मार्ग काटत भव जालू ॥ २ ॥
यज्ञ बीच जे पशु तुम मारे । देखो नभ तव बाट निहारे ॥ ३ ॥
लोह सींग छेदहिं तव गाता । पर भव बीच तोर नहि त्राता ॥ ४ ॥
कहूँ एक इतिहास पुरानू । नृपति पुरंजन चरित बखानू ॥ ५ ॥
देकर ध्यान सुनो नर राई । होवहिं सब संदेह नसाई ॥ ६ ॥
नाम पुरंजन नृप एक जाता । अविज्ञात सखा तासू सुखदाता ॥ ७ ॥
एक दिवस कर मित्र जुदाई । निज निवास पुर हेरत राई ॥ ८ ॥

भूतल बीच फिरहिं नर राया । किन्तु एक पुर श्रेष्ठ न पाया ॥ ९ ॥
फिरत एक दिन भूतल राया । हिम गिरि दक्षिण भाग सिधाया ॥ १० ॥

दोहा- **सब लक्षण सम्पन्न वहँ, देख नगर नवद्वार ।**
नृपति पुरंजन के मन, आयो हर्ष अपार ॥ १६१ ॥

चौ- कोट प्रकोट मनोहर नाना । खाई शीतल नीर पयाना ॥ १ ॥
द्वार द्वार तोरण शुभकारी । उपवन फूले वृक्ष हजारी ॥ २ ॥
कंचन रजत लोह मय जासू । करत भवन पर शिखर प्रकासू ॥ ३ ॥
मुक्ता मरकत मणि अरुणाई । नील स्फटिक वैडूर्य जडाई ॥ ४ ॥
भवन देहली चौक सुहाई । भोगवती सम सोभित पाई ॥ ५ ॥
सभा भवन नृप पथ सुख दाया । क्रीडास्थल आपण मन भाया ॥ ६ ॥
विश्राम स्थल और सराई । ध्वजा पताका जहाँ लगाई ॥ ७ ॥
पुर बाहर उपवन सुखदाई । वल्लरि दिव्य वृक्ष मन भाई ॥ ८ ॥
बीच सरोवर एक लखाया । कूँजत जहँ द्विजगण समुदाया ॥ ९ ॥

दोहा- **सरवर तट के वृक्ष की, शाखा सुन्दर पात ।**
रितु बसन्त की अनिल ते, रहे झकोरे खात ॥ १६२ ॥

चौ- करत अनेक भ्रमर गुंजारा । निज तिय संग होकर मतवारा ॥ १ ॥
वन्य जीव जहँ मुनिव्रत धारी । इत उत फिरत न बाधाकारी ॥ २ ॥
बार बार कोकिल ध्वनि होही । सुनत बटोहिन का मन मोही ॥ ३ ॥
इत उत भ्रमण करत नरराया । उस अद्भुत बन बीच सिधाया ॥ ४ ॥
आवत देखी एक किशोरी । कामरूपिणी आनन भोरी ॥ ५ ॥
सेवक दस उसके संग आये । प्राचेन तीय शत नायक गाये ॥ ६ ॥
पंचसीस अहि बैठ दुआरे । रक्षक उसपुर फन फटकारे ॥ ७ ॥
कामिनि नई अवस्था आई । मुश्किल ते वय षोडस पाई ॥ ८ ॥
हेरत वह निज हित पति सुन्दर । तासु द्विजावलि नाक मनोहर ॥ ९ ॥
मुख मनहर अति गोल कपोला । कानन कुंडल बडे अमोला ॥ १० ॥

दोहा- **कटि तट कंचन करधनी, देह श्याम पट पीत ।**
नूपुर की झनकार सुन, मुनि मन हो विपरीत ॥ १६३॥

चौ- गज गामिनी ढाँकति वह वश लाजा । समवर्तुल स्तन दोउ पट साजा ॥१ ॥
प्रेम वेग वश भृकुटि शरासन । चंचल मीन रुप दोउ नयनन ॥ २ ॥
प्रणय कटाक्ष रुप शर त्यागे । हृदय पुरंजन विह्वल लागे ॥ ३ ॥

घायल हृदय पुरंजन राजा । पूछत सुन्दरि से तज लाजा ॥ ४ ॥
कंज पलाश नयनि बतलाहू । कवन नाम तव तात कहाहू ॥ ५ ॥
आई कवन ठौर ते बाला । उपवन बीच कहो सब हाला ॥ ६ ॥
केहि काज उपवन तुम आई । संग रुद्र भट क्यों कर लाई ॥ ७ ॥
नार अनेकनि संग तुम्हारे । कहो हाल सुन वचन हमारे ॥ ८ ॥
रमा सरस्वती और भवानी । तुम तीनों बिच कौन बखानी ॥ ९ ॥
रमा रूप तुम धर कर आती । कंज फूल कर क्यों ना लाती ॥ १० ॥

दोहा- **एकान्त वास कर मुनि सम, खोजत क्या पतिधाम ॥**
प्राण नाथ पाकर तुझे, होवहिं पूरण काम ॥ १६४ ॥

चौ- उमा रमा लज्जा नहीं होही । चरण तोर भूस्पर्श न दोही ॥ १ ॥
यदि षोडसी सुर तिय जाता । तोर पाद भू स्पर्श न पाता ॥ २ ॥
तोहिं देख मोहिं काम सताये । करहु अनुग्रह मो संग आये ॥ ३ ॥
सुन्दर भ्रू लोचन तव आनन । सुन्दरि सफल बनूँ कर दरसन ॥ ४ ॥
कृष्ण वर्ण अलकावलि आनन । मधु मनहर निकसत तव वचनन ॥ ५ ॥
किन्तु लाज वश मेरी ओरा । करती ना मुखड़ा वह तोरा ॥ ६ ॥
होय पुरंजन नृपति अधीरा । करी याचना सुन्दरि तीरा ॥ ७ ॥
हँसकर मुदित तबै निज गाता । बोली नृपप्रति वच सुखदाता ॥ ८ ॥
मम तव कर्ता गौत्र न नामा । जानूँ ना नृप पूरण कामा ॥ ९ ॥
निरमित करी पुरी जिन आई । जानूँ नाम नहीं उन राई ॥ १० ॥

दोहा- **प्रियवर ये नर मम सखा, स्त्रियाँ सहेली मोर ।**
सत्य वचन जानों यह, असत न भाषउँ तोर ॥ १६५ ॥

चौ- जब मैं सोवत हूँ नरपाला । जागत नाग रहे रखवाला ॥ १ ॥
जो तुम नृपवर यहाँ पधारे । भई मुदित मन तुम्हें निहारे ॥ २ ॥
जे जे विषय चाहु तुम राया । करूँ प्रकाशित सब मन भाया ॥ ३ ॥
इस पुर आश्रित होकर राया । मम संग भोग करो करि दाया ॥ ४ ॥
करे वर्ष शत आनन्द दोहीं । करो पूर्ण इच्छा मन होही ॥ ५ ॥
भला आपको तज कहँ जाहूँ । किस नरपशु संग रमण कराहूँ ॥ ६ ॥
गृहस्थाश्रम सुख यति नहि जाने । सुत धन धाम न सुख पहिचाने ॥ ७ ॥
गृहस्थाश्रम इस भव सुखकारी । पितर देवरिषि नर हितकारी ॥ ८ ॥

ऐसी कौन तिया जग माँही । तो सम पति पाकर खुश नाँही ॥ ९ ॥
अरे महाभुज भुजा तुम्हारी । फँसहि न कौन जगत बिच नारी ॥ १० ॥

दोहा- **इति विचार कर निजमन, उस पुर किये प्रवेश ।**
नार पुरंजनि के सह, कीन्हो भोग नरेश ॥ १६६ ॥

चौ- बरस एक शत भोग विलासा । किये तदपि नहिं पूरण आसा ॥ १ ॥
इत उत गायक गण मधुताना । गावत कीरति नृप की नाना ॥ २ ॥
ग्रीष्मकाल बिच नदी प्रवेशा । नारिन सह वह करत नरेशा ॥ ३ ॥
सात द्वार इस पुर के ऊपर । रहे द्वार दो नीचे आकर ॥ ४ ॥
द्वार पाँच पूरब पुर राजा । दक्षिण उत्तर दो दरवाजा ॥ ५ ॥
पश्चिम दिशा द्वार दो माना । द्वार नन्द इमि किये बखाना ॥ ६ ॥
पूर्व द्वार एकत्र बनाये । आविर्मुखि खद्योत कहाये ॥ ७ ॥
घूमत सखा संग ले जाता । जनपद विभ्राजित नृप आता ॥ ८ ॥
नलिनि नालिनि नामक द्वारा । सखा संग अवधूत अपारा ॥ ९ ॥
सौरभ जनपद बीच सिधावे । आगे द्वार मुख्य यक आवे ॥ १० ॥

दोहा- **रसज्ञ और वह विपण संग, वहुदन आपण देश ।**
जावत नृपति पुरंजन, सुन प्राचीन नरेश ॥ १६७ ॥

चौ- पितृहु नाम द्वार जो यामी । श्रुत धर सह पंचाल सुगामी ॥ १ ॥
देवहु नाम जो उत्तर द्वारा । पंचाल न जावत लगे अबारा ॥ २ ॥
आसुरि नाम द्वार अधजाता । दुर्मति सह ग्रामक पुर आता ॥ ३ ॥
निरति नाम पश्चिम दरवाजा । लुब्धक सह वैशस पुर राजा ॥ ४ ॥
रहे नागरिक उस पुर माँही । दो अंधे पकरे नृप आही ॥ ५ ॥
निर्वाक नाम पेशस्कृत गाये । ये दोउ सेवक नृपति बनाये ॥ ६ ॥
करत काम वह नरपत कोही । राय बिना इनकी नहीं होही ॥ ७ ॥
नृपति पुरंजन कहीं सिधावे । सदा साथ इनको ले जावे ॥ ८ ॥
विशुचीन संग जब वह नर राया । अन्तः पुर आवत सुखदाया ॥ ९ ॥
मोह प्रसाद व हर्ष अपारी । लखि निज सुत अरु लखि निज नारी ॥ १० ॥

दोहा- **कर्मासक्त पुरंजन, स्त्री सम करत अपारि ।**
करत आचरण वह अबुध, कामात्मा अविचारि ॥ १७८ ॥ १६८

चौ- करत काम जे जे वह रानी । वही काम करता अज्ञानी ॥ १ ॥
करत पान मदिरा वह नारी । तो खुद पीता नृपति अपारी ॥ २ ॥

गावति रोवति हँसती रानी । गात रोत हँसता अभिमानी ॥ ३ ॥
कबहुँ कबहुँ वह दौर लगाही । तो कबहूँ पीछे नृप नाँही ॥ ४ ॥
यदि बैठती महि पर रानी । तो यह भी बैठे अभिमानी ॥ ५ ॥
कभी खड़ी यदि वह हो जावे । तो यह भी झटपट उठ धावे ॥ ६ ॥
करती शयन कभी वह बाला । करत शयन उस संग नृपाला ॥ ७ ॥
करत प्रलाप कभी वह नारी । पीछे कैसे रहे शिकारी ॥ ८ ॥
सुनति देखती सूँघति जैसे । सुनत व देखत सूँघत वैसे ॥ ९ ॥
करति शोच तो सोचत येही । करत स्पर्श तो स्पर्शत जेही ॥ १० ॥

दोहा- **नारी से वञ्चित वह, क्रीड़ा हिरण समान ।**
बनकर अनुकरणी सदा, करे उसी का ध्यान ॥ १६९ ॥

चौ- प्राचीनबर्हि से नारद बोले । नार संग इमि नृप मन डौले ॥ १ ॥
एक समय वह नृपति पुरंजन । धनुष विशाल कवच तनु कंचन ॥ २ ॥
अक्षय तरकस धारण कीन्हें । सेनापति ग्यारह संग लीन्हें ॥ ३ ॥
पाँच अश्व निज रथ जुतवाये । पंचपृस्थ वन नृपति सिधाये ॥ ४ ॥
ईष दंड दो दो रथ पाया । तीन दंड ध्वज धुर इक गाया ॥ ५ ॥
पंच डोरियाँ एक लगामा । एक सारथी स्थान ललामा ॥ ६ ॥
आयुध पाँच जूड़ियाँ दोही । परदे सात बीच रथ सोही ॥ ७ ॥
जावत रथ गति पाँच प्रकारा । साज बाज सब लगे पियारा ॥ ८ ॥
बुद्धिमती तिय गेह बिहाई । मृगया काज गये नरराई ॥ ९ ॥
तब निज धनु नृप बाण चढ़ाई । मारे वन गोचर समुदाई ॥ १० ॥

दोहा- **आसुरि वृत्ति बढ़ रही, चित अति भयो कठोर ।**
दया शून्य होकर वह, करे विपिन में दौर ॥ १७० ॥

चौ- वन्य जीव निरदोष नसाये । पशु हिंसा नहिं शास्त्र बतावे ॥ १ ॥
कुदरति प्रवृति निवारण कारन । नियम बनायउ ये सब शास्त्रन ॥ २ ॥
अमिष बीच प्रेम यदि राजा । दर्शित शास्त्र कर्म के काजा ॥ ३ ॥
पशु वध करहिं जरूरत जेता । किन्तु न व्यर्थ वधहिं पशु एता ॥ ४ ॥
एवं नियत करम जो करहीं । ते नर कबहुँ पाप ना परहीं ॥ ५ ॥
नियम लाँघही यदि जग कोई । पावहिं अधम योनि नृप ओही ॥ ६ ॥
पुरंजन बाण हते मृग भालू । महिष व शशक वराह करालू ॥ ७ ॥
नीलगाय रुरु शल्य अनेकी । मारे वन्य जीव शर फेंकी ॥ ८ ॥

भूख प्यास ते श्रान्त नृपाला। आये घर तज विपिन कराला ॥ ९ ॥
कियो स्नान भोजन नरपाला। कर विश्राम बाद कुछ काला ॥ १० ॥

दोहा- **चन्दनादि से देह को, सजा धजा कर खास।**
काम व्याप्त होकर गया, निज रमणी के पास ॥ १७१॥

चौ- किन्तु न निज मंदिर लखि रानी। पूछेउ सखि से नृप नादानी ॥ १ ॥
इस घर सम्पति पूरव जैसी। लगत न आज सुहावनि वैसी ॥ २ ॥
पति अनुरागिणी नार व माता। जासु गेह ये दोउ न जाता ॥ ३ ॥
चक्र हीन रथ सम वह गेहा। उस घर ठहर सकै क्या नेहा ॥ ४ ॥
जो दुख सिन्धु से तारत मोही। सो मम ललना कहाँ बिछोही ॥ ५ ॥
नृपति पुरंजन की सुन वानी। कहे दासियाँ हम नहि जानी ॥ ६ ॥
हे नर नाथ आज महारानी। ना जाने क्या निज मन ठानी ॥ ७ ॥
शयन गेह विच विना बिछौने। परी भूमि वह लग रहि रौने ॥ ८ ॥
वर्हीषद प्रतिभाषत नारद। पुरंजन नृप अज्ञान विशारद ॥ ९ ॥
भूपर परी लखी महारानी। अस्त व्यस्त होकर मनमानी ॥ १० ॥

दोहा- **अति व्याकुल होकर वह, आया सुन्दरि तीर।**
दुखित हृदय से पूछता, भर नैनन में नीर ॥ १७२ ॥

चौ- सुन्दरि चरण गहे नरपाला। करो कृपा मो पर अब वाला ॥ १ ॥
पाछे नृप निज गोद उठाई। बोले वचन हृदय विकलाई ॥ २ ॥
कियो पुण्य तुम अति हे सुन्दर। मानत तोर पति तव ईश्वर ॥ ३ ॥
अकृत पुण्य सेवक वह माना। कृत अपराध न दंड बखाना ॥ ४ ॥
सेवक प्रति स्वामी का शासन। शिक्षा हेतु न और प्रयोजन ॥ ५ ॥
शिक्षा हेतु दंड तव तुम दीन्हा। और प्रयोजन कुछ नहि चीन्हा ॥ ६ ॥
सेवक प्रति तव परम अनुग्रह। करहुँ सुन्दरि अब मैं आग्रह ॥ ७ ॥
मैं सेवक तुम स्वामिनि मोरी। मोपर कोप उचित नहि तोरी ॥ ८ ॥
अरी मनस्विनी क्रोध अपारा। करहु कृपा मन ते कर न्यारा ॥ ९ ॥
मनहर निज मुख तो दिखलाहू। भामिनी देर जरा ना लाहू ॥ १० ॥

दोहा- **भ्रमर पंक्ति अलकावली, करे मात यह तोर।**
मधुर वचन सुनकर अरी, मोहित हो मन मोर ॥ १७३॥

चौ- कियो यदि कोई अपराधा। कहो शीघ्र मो बाधत बाधा ॥ १ ॥
विप्र वंश तजि और तुम्हारा। किय अपराध सो शत्रु हमारा ॥ २ ॥

जाकर अभी दंड में देहूँ । कोई न तेही वचा सकेहू ॥ ३ ॥
मो मन यह कछु समझ न आई । किय कसूर प्रभु भक्त तजाई ॥ ४ ॥
तीन लोक अरु बाहर कोई । कर अपराध सुखी रह जोई ॥ ५ ॥
तव मुख कभी तिलक कर हीना । देखा कबहुँ न क्रोध अधीना ॥ ६ ॥
भीषण स्नेह शून्य ना पाया । अरी उदास और मुरझाया ॥ ७ ॥
मैं नहि देखे कबहुँ तुम्हारे । शोकाश्रु सुन्दर स्तन धारे ॥ ८ ॥
बिम्बा फल सम अधर तुम्हारे । लालीहीन न लखे बिचारे ॥ ९ ॥
ऐसो कौन कियो मैं तेरो । अरी बता अपराध घनेरो ॥ १० ॥

दोहा- **एक बात मोहीं प्रिये, अभी आगई याद ।**
मृगया के कारन गयो, तोसे बिन फरियाद ॥ १७४ ॥

चौ- इसी हेतु यदि हो नाराजी । करो क्षमा अब होवउ राजी ॥ १ ॥
आगे मैं नहीं जावहुँ तोहू । छोड़ अरी अब तो खुश होहू ॥ २ ॥
निश्चय मैं अपराधी तेरा । निज जन जान हरो दुख मेरा ॥ ३ ॥
कुसुमायुध ते होय अधीरा । रहे सदा जो अपने तीरा ॥ ४ ॥
उस निज प्रिय पति को प्रिय नारी । करति ग्रहण नहिं कौन अनारी ॥ ५ ॥
कीन्हें हाव भाव इमि राया । तब कहिं रानी वश कर पाया ॥ ६ ॥
सुन्दरि नृपहिं करहिं आनन्दित । वह भी स्वयं भई अति हर्षित ॥ ७ ॥
किये स्नान नृप विविध प्रकारा । किये मांगलिक वर श्रृंगारा ॥ ८ ॥
नृपहि मनोहर मुखड़ा वाली । राज महीषि अति मतवाली ॥ ९ ॥
आदर युत निज कंठ लगावा । तब कहिं जाकर नृप हरसावा ॥ १० ॥

दोहा- **मन अनुकूल रहस्य की, कर बातें एकान्त ।**
मोहित ऐसा हो गया, जिसका नहिं कुछ अन्त ॥ १७५॥

चौ- काल रूप आयुप सब नासी । स्त्री लम्पट फिर भी न उदासी ॥ १ ॥
मद विह्वल होकर नरराई । निज तिय भुज पर सीस रखाई ॥ २ ॥
महामूल्य शय्या के ऊपर । शयन करे वह सारे दिन भर ॥ ३ ॥
रमणि रतन ही जीवन का फल । और बात इस जग में निष्फल ॥ ४ ॥
आवृत होकर नृप अज्ञाना । आत्मा ब्रह्म न वे पहिचाना ॥ ५ ॥
कामातुर चित इसी प्रकारा । समय नसावा करत विहारा ॥ ६ ॥
नृपति पुरंजन की सु जवानी । आधे क्षण सम जात न जानी ॥ ७ ॥
ग्यारह सौ सुत नृप सुख दाता । शत एक और दस कन्या जाता ॥ ८ ॥

कन्या मात पिता यशकारी । गुण अरु शील अपार उदारी ॥ ९ ॥
सब का नृपवर किय बिवाऊ । उचित योग्य वर वधु लखिराउ ॥ १० ॥

दोहा- **एक एक सुत के सुखद, शत शत सुवन सुखार ।**
बाद पुरंजन वंश की, वृद्धि भई अपार ॥ १७६ ॥

चौ- इति नृपवर पंचाल नरेशा । मोह पाश जिनकंठ प्रदेशा ॥ १ ॥
एक बार कीन्हों नृप घोरा । पशु हिंसा मय यज्ञ कठोरा ॥ २ ॥
पूजे देव पितर अरु भूतप । विविध कामना हेतू वे नृप ॥ ३ ॥
इमि कुटुम्ब आशक्त नृपाला । आयो जरा रूप अब काला ॥ ४ ॥
चंड वेग जिन नाम कहावे । गंधर्व राज जिनको बतलावे ॥ ५ ॥
श्वेता कृष्णा नार विख्याता । स्त्री तीन सौ साठ विधाता ॥ ६ ॥
सह गंधर्व तीन सौ साठी । धायो चंड वेग पुर गाँठी ॥ ७ ॥
पुर रक्षक अहि संग अपारा । भयो युद्ध उन घोर करारा ॥ ८ ॥
शत सर्पन सम लडा अकेला । भयो क्षीण नहि सका धकेला ॥ ९ ॥
इत नृप करत अनेक विचारा । उत गंधर्व नगर सब जारा ॥ १० ॥

दोहा- **इतने पर भी राष्ट्र का, नृप नहिं किया विचार ।**
विषय भोग में रम रहा, मोह रूप परिवार ॥ १७७ ॥

चौ- बर्हिष्मन सुन मम यक बाता । कहि नृप से वह नारद ताता ॥ १ ॥
काल सुता जग में दुखदाई । निज वर करति तलाशी आई ॥ २ ॥
करता कौन उसे स्वीकारा । वह दुरभागिनि इस संसारा ॥ ३ ॥
भटकत मोहिं मिली पथ माँही । मोहि देख बोली दुख दाही ॥ ४ ॥
हम तुम ब्याह करे दोउ आई । तब मैं कीन्हो तुरत नटाई ॥ ५ ॥
दियो शाप वह मो प्रति हेतू । एक ठौर नहि रहु मुनि केतू ॥ ६ ॥
तब मैं एक उपाउ बतावा । भय समीप उसको भिजवाया ॥ ७ ॥
मान वचन गई भय समीपा । जाकर वरण कियो मति रुपा ॥ ८ ॥
तदाकाल कन्या पति हेतू । बोली वचन यवन कुल केतू ॥ ९ ॥
तोहिं नाथ मैं पतिकर माना । करहुँ विनय इस पर देउ ध्याना ॥ १० ॥

दोहा- **संकल्प जीव प्रति वर अहो, कबहुँ न निष्फल जात ।**
लोक शास्त्र की दृष्टि से, देय वस्तु नहि दात ॥ १७८ ॥

चौ- शास्त्र दृष्टि अधिकारी होही । लेवत दान यदि नही कोही ॥ १ ॥
जानों मूढ़ दुराग्रही दोहीं । चिन्ता करत योग्य वह होही ॥ २ ॥

जग विच बड़ा धरम यहि माना । देवत दीन जनों पर ध्याना ॥ ३ ॥
काल सुता के वच सुन काना । सोचा यवनराज बलवाना ॥ ४ ॥
गुप्त कार्य यक रहा विधाता । इस बिन पूरण नहीं दिखाता ॥ ५ ॥
बोले वचन श्रवण कर राजा । मैने योग्य दृष्टि तव काजा ॥ ६ ॥
निश्चय कियो पति तव हेतू । उस पर ध्यान जरा अब देतू ॥ ७ ॥
तू जग बीच अमंगलकारी । करहिं न कोहि तोहिं स्वीकारी ॥ ८ ॥
अब मम सेना सह तू जाहू । प्रजा विनाश अरी करवाहू ॥ ९ ॥
यह प्रज्वार नाम मम भ्राता । मो सँग भ्राता का रख नाता ॥ १० ॥

दोहा- **मैं तुम दोउन के सह, अस्फुट गति के साथ ।**
भय प्रद सेना संग ले, विचरूँगा जग पाथ ॥ ~~१२९~~ १७९ ॥

चौ- बोले नारद सुन भूधारी । यवन राजभय आज्ञाकारी ॥ १ ॥
सैनिक इस भूतल पर आये । प्रज्वार व काल सुता संग लाये ॥ २ ॥
इत उत लगे विचरने सारे । देत प्रजा को कष्ट अपारे ॥ ३ ॥
एक बार वे मिल कर सारे । नृपति पुरंजन पुरी सिधारे ॥ ४ ॥
वृद्ध सर्प से वह पुर रक्षित । सब सुख सामग्रिन से सज्जित ॥ ५ ॥
कन्या काल वहाँ पर आई । भागे पुर के लोग लुगाई ॥ ६ ॥
नव द्वारन ते किये प्रवेशा । देत यवन पुर प्रजा कलेशा ॥ ७ ॥
नृपति पुरंजन अति अभिमानी । भयो ताप बहुविध मनमानी ॥ ८ ॥
कीन्हा काल सुता आलिंगन । भई नष्ट शोभा सब नृप तन ॥ ९ ॥
इत गंधर्व यवन मिल सारा । उस नृप का ऐश्वर्य उजारा ॥ १० ॥

दोहा- **निजपुर देख विशीर्ण नृप, पुत्र पौत्र अरु भृत्य ।**
प्रतीकूल होकर सभी, किय अपमान अमात्य ॥ १८०॥

चौ- इत नारी मुख बोलत नाँही । काल सुता उत भर नृप बाँही ॥ १ ॥
करत उपाय अनेक प्रकारा । सब विध अब तो वह नृपहारा ॥ २ ॥
राष्ट्र सकल शत्रुन वश कीन्हा । नृष्ट भृष्ट सारा कर दीन्हा ॥ ३ ॥
ये सब देख पुरंजन भारी । डूबे चिन्ता बीच अपारी ॥ ४ ॥
अब ना कोई रहा उपावा । काल सुता सब खून सुखावा ॥ ५ ॥
भोग लालसा से वह हीना । चित केवल स्त्री पुत्र अधीना ॥ ६ ॥
भई दशा नृप की जब ऐसी । रक्षा हेत ठौर अब कैसी ॥ ७ ॥
पुर त्यागन प्रति नृप रुचि नाही । वाध्य होय पुर दियो तजाई ॥ ८ ॥

इत गंधर्व यवन मिल सारे । धाये नृप ऊपर मतवारे ॥ ९ ॥
यवन राज भयके बड भाई । प्रज्वार नाम भ्राता सुखदाई ॥ १० ॥

दोहा- **जारा नगर अनाथ सम, कोय बचावन हार ।**
सन्मुख आये एक ना, उस पुर के रखवार ॥ १८१ ॥

चौ- स्त्री सुत सेवक उस पुर वासी । नृपति पुरंजन दुखी उदासी ॥ १ ॥
काल सुता वश नगर लखाया । रक्षक नाग महा दुख पाया ॥ २ ॥
सर्प गेह पर भी अधिकारी । हुए यवन भय आज्ञाकारी ॥ ३ ॥
अब प्रज्वार सर्प पर धावा । किन्तु न पुर वह सके बचावा ॥ ४ ॥
अनल तरू कोटर सम नागा । भागेउ वह अहि परम अभागा ॥ ५ ॥
अंग अंग आई शिथिलाई । सब शक्ति गंधर्व नसाई ॥ ६ ॥
देखा शत्रुन भागत नागा । रोका तब वह रोवन लागा ॥ ७ ॥
गेहासक्त पुरंजन राऊ । देह गेह मैं ममपन भाऊ ॥ ८ ॥
बुध्दि हीन वह नृप अति जाता । अंत समय रोकर पछताता ॥ ९ ॥
निज पुत्री सुत पौत्र जमाई । सेवक अरु गृह कोष तजाई ॥ १० ॥

दोहा- **किन्तु न ममता मोह इन, तजे नाँहि नर राय ।**
रात दिवस चिन्ता महा, उनको यही सताय ॥ १८२ ॥

चौ- अरे हाय मम प्राण पियारी । तोर समीप कुटुम्ब अपारी ॥ १ ॥
जब पर लोक बीच मैं जाहूँ । कैसे करहीं इन निरवाहू ॥ २ ॥
खावहिं चिन्ता यही अपारी । अरे सहाय हीन यह नारी ॥ ३ ॥
मम बिन भोजन इन नहि खाया । मम बिन स्नान कभी नहि पाया ॥ ४ ॥
नित सेवा करती यह मेरी । करती नाँहि जरा यह देरी ॥ ५ ॥
जब मैं करता क्रोध अपारा । थर थर काँप नयन जल धारा ॥ ६ ॥
जब मैं झिड़कत इसे कदापि । भय खाकर रहति चुपचापि ॥ ७ ॥
इसका मोहिं भरोसा भारी । होती भूल कदापि हमारी ॥ ८ ॥
झटपट चेतावति यह नारी । इसका मोपर स्नेह अपारी ॥ ९ ॥
जब मैं कभी विदेशन आता । कंटक सम सूखा तनु पाता ॥ १० ॥

दोहा– **अरे वीर माता यह, सदा वीर इन जाय ।**
मेरे मरने बाद यह, कैसे गृहस्थ चलाय ॥ १८३ ॥

चौ- जब मैं चला यहाँ से जाहूँ । किस विध जीवन धारण याहूँ ॥ १ ॥
रहे सदा जो मोर सहारे । ये सब पुत्री पुत्र हमारे ॥ २ ॥

खंडित नौका पथिक समाना । रोवहिं व्याकुल होकर नाना ॥ ३ ॥
यद्यपि ज्ञान दृष्टि से सोचू । उचित नहीं था उस नृप पोचू ॥ ४ ॥
किन्तु मोहवश नृपति पुरंजन । दीन बुद्धि से वह अपने मन ॥ ५ ॥
स्त्री अरु पुत्रादिक प्रति जाता । शोका कुल नृप वर निज गाता ॥ ६ ॥
इत इमि शोच करत नरपाला । यवन राज भय नाम कराला ॥ ७ ॥
तेहि समय नृप सन्मुख आया । बाँधन हेतु पुरंजन काया ॥ ८ ॥
यवन लोग जब पशू समाना । बाँध ले गये वे निज स्थाना ॥ ९ ॥
जावत नृप अनुचर अति आतुर । गये साथ उस अनु शोकातुर ॥ १० ॥

दोहा- **यवनों से रोका हुआ, वह अहिपुर को त्याग ।**
उस नृप के पीछे लगा, कोसत अपने भाग ॥ १८४ ॥

चौ- जावत सकल नगर छिन भिन्ना । पाछे निज कारण लवलीना ॥ १ ॥
इति यह यवन राज बलधारी । खींचे नृपति सहित परिवारी ॥ २ ॥
तदपि हौस नृप कबहुँ न आवा । प्राचीन मित्र अविज्ञात भुलावा ॥ ३ ॥
जो नृप यज्ञ बीच पशु मारे । छेदत नृप तनु श्रृंग कुठारे ॥ ४ ॥
इत्थं वह नरपति अज्ञानी । अंध अपार मगन दुख जानी ॥ ५ ॥
स्त्री संग दूषित दुर्गति पाई । अंत समय चित रहा लुगाई ॥ ६ ॥
जन्म दूसरा अब नृप धारा । नृप विदर्भ गृह गयो विचारा ॥ ७ ॥
नाम पुंरजन नृप विख्याता । नृप विदर्भ गृह कन्या जाता ॥ ८ ॥
भई विवाह जोग्य जब बाला । करी घोषणा तब नरपाला ॥ ९ ॥
जे नृप शत्रू नगर विजेता । देवहुँ यह कन्या उस हेता ॥ १० ॥

दोहा- **पांडय देश नृप मलयध्वज, जीते समर महान ।**
वैदर्भी के संग, कीन्हो व्याह विधान ॥ १८५ ॥

चौ- जाये वैदर्भी सुत साता । श्याम नयन एक कन्या जाता ॥ १ ॥
द्रविड़ देश के ये अधिकारी । सातों पुत्र बड़े बलधारी ॥ २ ॥
एक एक अरबुद सुत जाये । इन वंशज जग में अतिछाये ॥ ३ ॥
मनवन्तर अन्त काल तक सारे । भोगहि भूमि व भोग अपारे ॥ ४ ॥
पाँड्यप सुता महाव्रत शीला । व्याही कुंभज रिषिगुण शीला ॥ ५ ॥
दृढच्यु नाम पुत्र वह जाये । दृढ़च्युत इध्मवाह सुत पाये ॥ ६ ॥
पान्ड्य देश मलयध्वज राजा । पुत्र न हेतू भूमि विभाजा ॥ ७ ॥
गये कुलाचल तप के कारन । जाकर कीन्हो कृष्ण अराधन ॥ ८ ॥

गेह पुत्र तजि मोह तमामी । यथा चन्द्रिका विधु अनुगामी ॥ ९ ॥
गई साथ नृप के महारानी । सरिता जहाँ तीन सुखदानी ॥ १० ॥

दोहा- **तामापर्णि वटोदका, चन्द्रवसा के नीर ।**
करते प्रतिदिन मलयध्वज, स्नान भजन इन तीर ॥१८६॥

चौ- कंद बीज फल फूल व पाना । करत गुजर रवा नृपति सुजाना ॥ १ ॥
कीन्ह तपस्या घोर अपारी । सूखा वदन मनोहर भारी ॥ २ ॥
सम दृष्टि रख कर नरराई । सहते शीत उष्ण अनिलाई ॥ ३ ॥
भूख प्यास अप्रिय प्रिय द्रोही । सुख दुख सारे दूर विगोही ॥ ४ ॥
सभी वासना तप ते जारी । आत्मा ब्रह्मबीच निज धारी ॥ ५ ॥
दिव्य वरष शत स्थाणु समाना । निश्चल बैठें एक ही स्थाना ॥ ६ ॥
हरि पद प्रेम सुदृढ जब जाता । शरीरादि का भान न भाता ॥ ७ ॥
हरि स्वरूप गुरु मुख दिये ज्ञाना । जासे ब्रह्म रुप पहिचाना ॥ ८ ॥
आत्मा बीच ब्रह्म लखि राया । भये शान्त सब विध तजि राया ॥ ९ ॥
वैदर्भी सब भोग तजाई । सेवत प्रेम सहित उनराई ॥ १० ॥

दोहा- **चीर वस्त्र धारण करत, करती व्रत उपवासु ।**
तनु कृश वेणी भूत शिर धूमिल धूसर जासु ॥ १८७ ॥

चौ- जाना ना पति किये पयाना । करती सेवा पूर्व समाना ॥ १ ॥
स्थिर आसन बैठे नर राई । किन्तु प्राण उन किये पलाई ॥ २ ॥
एक दिवस सेवा महारानी । करते देख शीत पद पानी ॥ ३ ॥
तब निज चित व्याकुलता छाई । यूथ भ्रष्ट मृग तिय सम पाई ॥ ४ ॥
कियो शोक वैदर्भी भारी । रोवत ऊँचे शब्द पुकारी ॥ ५ ॥
उठो राजरिषि करहु न देरी । पालहु भूमि दस्यु गण घेरी ॥ ६ ॥
कर विलाप इति वह महारानी । पति पद गिरी भूमि अकुलानी ॥ ७ ॥
तदा दारुमयि चिता रचाई । उस पर निज पति देह रखाई ॥ ८ ॥
कियो रुदन पुनि आग लगाई । अनिल प्रवेश हेत मन आई ॥ ९ ॥
उसी समय यक मित्र पुराना । आवत देखा ब्रह्म समाना ॥ १० ॥

दोहा- **आकर उस रोती हुई, अबला को समझाय ।**
मधुर वचन अति प्रेम से, बोले वे द्विजराय ॥ १८८ ॥

चौ- नाम बताहू जनक तुम्हारे । अरी नाम तव कहा पुकारे ॥ १ ॥
सुप्त पुरुष यह कवन तुम्हारा । करती जासू सोच अपारा ॥ २ ॥

क्यों नहि जानत नाम हमारा । वही मित्र मैं रहूँ तुम्हारा ॥ ३ ॥
जिसके साथ प्रथम तू रहती । क्यों नहीं याद अरे तू करती ॥ ४ ॥
सखे नाम अविज्ञात हमारा । रहा दिवस कई साथ तुम्हारा ॥ ५ ॥
महि पर भोग भोगने हेता । आयो तज कर मोंहि अचेता ॥ ६ ॥
अरे आर्य मैं अरु तुम दोही । मानस अपन हंस वर होहीं ॥ ७ ॥
सहस वरस तक हम तुम भ्राता । रहे निवास स्थान बिन ताता ॥ ८ ॥
विषय भोग इच्छा तुहिं आई । आयो यहँ तू मोहिं तजाही ॥ ९ ॥
स्त्री निर्मित पुर यहँ तुम देखा । उपवन शर जित बीच विशेषा ॥ १० ॥

दोहा- **नन्द द्वार अरु पाल एक, रहे तीन प्राकार ।**
पाँच हाट छः वैश्य कुल, जासु स्वामिनी नार ॥ १८९॥

चौ- इन्द्रिय पाँच विषय महाराजा । उपवन पाँच रहे पुर काजा ॥ १ ॥
इन्द्रिय छिद्र द्वार नव जानों । तेज अन्न जल कोट बखानों ॥ २ ॥
मन अरु ज्ञान इन्द्रियाँ पाँची । सुनौ वैश्य कुल से षट साँची ॥ ३ ॥
क्रिया शक्ति यह पंच बजारी । बुद्धि शक्ति स्वामिनी नारी ॥ ४ ॥
ऐसे पुर बिच किये प्रवेशा । निज स्वरूप भूलत यह भेशा ॥ ५ ॥
उस पुर स्वामिनि के वश आई । निज स्वरूप भूले तुम आई ॥ ६ ॥
इसी हेतु यह दुरगति तेरी । मानहु सत्य उक्ति यह मेरी ॥ ७ ॥
नृपति विदर्भ सुता तुम नाही । ना मलयध्वज तव पति पाही ॥ ८ ॥
नव मुख पुर रुँधेउ तुम आही । पुरंजनि के पति भी तुम नाही ॥ ९ ॥
पूर्व जन्म तुम निज नर माना । अपर जन्म तुम नार बखाना ॥ १० ॥

दोहा- **यह सब माया मैं रची, निज स्वरूप पहचान ।**
हम दोनों तो हंस हैं, नहि अन्तर कुछ मान ॥ १९० ॥

चौ- मैं तुम दोऊ एक समाना । सुधि जन अंतर काहु न मान ॥ १ ॥
दरपण बीच पुरुष निज रूपा । देखत जैसे होय स्वरुपा ॥ २ ॥
यहि अंतर तव मन विच भ्राता । अनुभव कर अब तो तुम ताता ॥ ३ ॥
हंस रूप न यों समझावा । मानस हंस बोध कर पावा ॥ ४ ॥
स्मर्ण शक्ति पाछी जब आई । जाना तब वह मित्र जुदाई ॥ ५ ॥
बोले नारद हे मुनिराया । गुप्त ज्ञान यह ते प्रति गाया ॥ ६ ॥
अरे परोक्ष रुप यह गाथा । लागत अतिप्रिय उन जग नाथा ॥ ७ ॥
प्रकट ज्ञान मैं तव प्रति गाता । तो तू समझ जरा नहि पाता ॥ ८ ॥

सुन नारद के वचन सुहाये । नृप प्राचीनबर्हि इति गाये ॥ ९ ॥
मोहित कर्म अहो भगवाना । सम्यक तोर वचन नहि जाना ॥ १० ॥

दोहा- **ज्ञानी जन ही ज्ञान की, बातें सब पहिचान ।**
मो समान नर मंदधी, समझ परे नहि ज्ञान ॥ १६१ ॥

चौ- अब तुम वदहु स्पष्ट मुनिनाथा । यह परोक्ष रूप सब गाथा ॥ १ ॥
बोले नारद सुन नरराया । नृपति पुरंजन जीव कहाया ॥ २ ॥
एक दोय अरु तीन व चारा । अपद बहूपद सभी प्रकारा ॥ ३ ॥
वास हेतु निज पुरी रचाया । याते नाम पुरंजन गाया ॥ ४ ॥
अविज्ञात सखा जो इस का भाई । सो नृप ईश्वर नाम कहाई ॥ ५ ॥
नाम और गुण कर्मन द्वारा । पावत वह ना किसी प्रकारा ॥ ६ ॥
प्राकृत विषय भोग रुचिजाता । जीव अन्य तनु बीच न जाता ॥ ७ ॥
लगे मानवी देह सुखारी । युग पद युग कर नव मुख द्वारी ॥ ८ ॥
नार पुरंजनि बुद्धि विचारी । ममपन भाव करे नित्त जारी ॥ ९ ॥
विषय वासना भोग अपारा । देत आश्रय सभी प्रकारा ॥ १० ॥

दोहा- **सखा पुरंजनि के दस, ये सब इन्द्रिय जान ।**
ज्ञान और सब कर्म की, करती जो पहचान ॥ १६२ ॥

चौ- इन्द्रिय वृत्ति सहेली गाई । पाँच प्राण फणयुत अहिराई ॥ १ ॥
इन इन्द्रिय ऊपर जो नायक । जनूँ ग्यारवाँ मन सब लायक ॥ २ ॥
पाँच विषय जानहु पंचाला । जासु बीच पुर नव दरवाला ॥ ३ ॥
दो दो स्थान द्वार यक गाये । नयन नासका कर्ण कहावे ॥ ४ ॥
इन सह मुख लिंग गुदा मिलाई । नर तनु ये जब द्वार कहाई ॥ ५ ॥
नयन नाक मुख पूरब द्वारा । दक्षिण श्रुति दक्षिण दरवारा ॥ ६ ॥
द्वार उत्तरी श्रुति जनु जेही । लिंग गुदा पश्चिम दर देही ॥ ७ ॥
खद्योत व आविर्मुखि दो नैना । लखत पुरंजन इन निज सैना ॥ ८ ॥
नालिनिनलिनि नासा दोही । गंध ज्ञान जिनते इन होही ॥ ९ ॥
घ्राण वायु जानहु अवधूता । मुख्य द्वार मुख बीच प्रसूता ॥ १० ॥

दोहा- **वाणी इन्द्रिय ही विपण, रस विद रसना जान ।**
कर्ण दक्षिणी पितृहू, देवहू उत्तर कान ॥ १६३ ॥

चौ- प्रवृत निवृत शास्त्र ये दोही । ये पंचाल राष्ट्र नृप होही ॥ १ ॥
द्वार आसुरी लिंग बखाना । निर्ऋति द्वार गुदा जग जाना ॥ २ ॥

रहे अंध दो कर पद मानों। हृदय अंतपुर ही तुम जानो ॥ ३ ॥
विशूचीन मन सचिव कहाये। मोह प्रसाद जीव जिन पाये ॥ ४ ॥
पावत मति जिमि स्वप्न विकारा। त्योहीं जीव करे स्वीकारा ॥ ५ ॥
कहा देह रथ अरे नृपाला। ज्ञान इन्द्रियाँ अश्व निराला ॥ ६ ॥
पाव पुण्य दोउ चाक समाना। मन बागडोर मति चालक माना ॥ ७ ॥
ध्वजा तीन गुण सुख दुख जूरी। विषय पाँच कही शस्त्र जरूरी ॥ ८ ॥
हृदय बैठने का शुभ स्थाना। सप्त धातु परदे, इस आना ॥ ९ ॥
कर्म इन्द्रियाँ पाँच प्रकारी। इस रथ की गति न्यारी न्यारी ॥ १० ॥

दोहा-रथी रुप यह जीव नृप, देह रुप रथ पाय।
मृग तृष्णा सम वासना, के प्रति दौर लगाय ॥ १६४ ॥

चौ- इन्द्रिय ग्यारह सेना जासू। विषय भोग ही मृगया तासू ॥ १ ॥
सम्बत काल रूप ही भारी। चंड वेग इस नाम पुकारी ॥ २ ॥
अनुचर जासु तीन सौ साठा। जानहुँ दिवस अरे अति बाँठा ॥ ३ ॥
पत्नी उनकी इनहि समाना। शुक्ल व कृष्ण निशा सब जाना ॥ ४ ॥
चले सदा इनको ही चाको। रोक सकै नहि जीवन झाँको ॥ ५ ॥
बारी बारी चक्र चलावत। आयु सब की यही नशावत ॥ ६ ॥
जरा काल कन्या नृप जाता। पुरुष सदा उससे भय खाता ॥ ७ ॥
मृत्यु स्वरूप यवन पतिराई। काल सुता जिन बहिन बनाई ॥ ८ ॥
आधि व व्याधी सैन सजाई। करै जगत यह काल नसाई ॥ ९ ॥
प्रज वार नाम नृप का बड़ भ्राता। शीत ऊष्ण ज्वर यह कहलाता ॥ १० ॥

दोहा- इस प्रकार नृपजीव यह, आच्छादित अज्ञान।
मानव तनु शत वर्ष तक, भोगत कष्ट महान ॥ १६५ ॥

चौ- मैं मेरे पनबँध अभिमाना। करत लालसा कर्म महाना ॥ १ ॥
यद्यपि जीव स्वयं परकासी। किन्तु न जानत उस अविनासी ॥ २ ॥
जब तक भटकत योनि अपारा। करत कर्म त्रय गुण संसारा ॥ ३ ॥
सत रज तम करमन अनुसारी। होवत उसी लोक अधिकारी ॥ ४ ॥
कभी पुरुष कभी तिया नपुंसक। देव मनुज तनु कबहुँ हिंसक ॥ ५ ॥
पीडित भूख य श्वान समाना। घर घर विचरच ताडित नाना ॥ ६ ॥
उच्च नीच तनु करे भ्रमाही। काम व्याप्त यह जीव सदाही ॥ ७ ॥
भोगत फल करमन अनुसारी। ऊँच नीच पथ अपरंपारी ॥ ८ ॥

दुख वियोग नहि एक उपाया । एक जात दुख दूसर आया ॥ ९ ॥
यथा पुरुष निज सीस अपारी । वहन करत पुनि गाँठ उतारी ॥ १० ॥

दोहा- **धरहिं गाँठ नर सीस की, निज कंधन पर लाय ।**
कहु बोझा उस मनुज को, क्यों नहि अरे सताय ॥१६६॥

चौ- एवं नर दुख येक तजाहीं । आकर दूसर दुख सताही ॥ १ ॥
कर्म उपाय करम नहि होही । अज्ञान मार्ग मिलते ये दोही ॥ २ ॥
कर्म और कर्मन फल दोही । सदा अविद्या युत ये होही ॥ ३ ॥
सुपन बीच जिमि सभी पदारथ । यद्यपि दीखत नयन यथारथ ॥४ ॥
अरे सोचकर देखहु ताता । अज्ञान नींद टूटे नहि पाता ॥ ५ ॥
अज्ञान नींद जब तक नहिं टूटे । तब तक जन्म मरण नहिं छूटे ॥ ६ ॥
होवहि जब तक ज्ञान विहीना । पावत संसृति नई नवीना ॥ ७ ॥
नासहिं जब यह निज अज्ञाना । पावत भक्ति हरिपद नाना ॥ ८ ॥
हरि भक्ति पाकर यह मानव । करता ज्ञान विराग अनूभव ॥ ९ ॥
हरिगाथा आश्रय रहे भक्ति । सुन प्राचीनवर्हि मम उक्ति ॥ १० ॥

दोहा- **यही हेतु हरि की कथा, सुनहु गुनहु धरि ध्यान ।**
भक्ति योग ते स्वच्छ जो, उन भक्तन के स्थान ॥१६७॥

चौ- उन भक्तन के मुख ते निरगत । करहू पान कथामय अमृत ॥ १ ॥
हरि गाथा रूपी यह अमृत । कर्ण मार्ग ते जो नर पीवत ॥ २ ॥
क्षुधा प्यास भय शोक व मोहू । बाधा कुछ ना व्यापत सोहू ॥ ३ ॥
इन सब कारण ते सुखदाता । हरि कथामृत प्रीति न जाता ॥ ४ ॥
जन्म जन्म करमन वश होही । भटकत भव सिन्धु बिच सोही ॥ ५ ॥
जे हरि नाम सुनै नहि काना । सो नर जन्म वृथा ही माना ॥ ६ ॥
सनकादिक दक्षाणिक सारे । ब्रह्मा शिव मनु नाम उचारे ॥ ७ ॥
अत्रि मरीचि अंगिरा नारद । भृगु वशिष्ठ ये ज्ञान विशारद ॥ ८ ॥
विद्या तप व समाधि लगावा । देखत तदपि न देखत पावा ॥ ९ ॥
वेद मार्ग का अति विस्तारा । महा कठिन जो पावत पारा ॥ १० ॥

दोहा- **वेद उपासक मंत्र पढ़, करते भजन अपार ।**
तदपि नृपति उस ब्रह्म का, पाव न पारावार ॥ २०२ ॥ १६८

चौ- जिन पर कृपा करहिं हरि आही । कर्म मार्ग ते मति तजाही ॥ १ ॥
कर्म मार्ग में हो न निहाला । वृथा कर्म मत कर नरपाला ॥ २ ॥

धूम्र बुद्धि निज वेद प्रवीना । तत्व न जानत वेद अधीना ॥ ३ ॥
आत्म तत्व वे जानत नाहीं । जहाँ विराजत हरि अघदाही ॥ ४ ॥
पूर्व अग्रमुख दर्भ बिछाई । पाटेउ तुम महि मंडल राई ॥ ५ ॥
पशु अनेक वध यज्ञ रचावा । अति घमंड नृप तव मन आवा ॥ ६ ॥
कर्म स्वरूप न जानेउ राया । कर्म वही जिस कर हरि पाया ॥ ७ ॥
विद्या कर्म सत्य वहि भया । करते ही हरि प्रेम लगाया ॥ ८ ॥
वही वर्ण वहि कुलवर आश्रम । हरि हेतु जो करहिं परिश्रम ॥ ९ ॥
तनधर जीव पति हरि जानो । हरिहिं सबके प्रिय तुम मानो ॥ १० ॥

दोहा- **अणु मात्र भय का नहीं जिस हरि में संचार ।**
वहि ज्ञानी वहि है गुरु, जानहि हरि अवतार ॥ १९९ ॥

चौ- बोले नारद प्रश्न तुम्हारे । उत्तर दीन्हे हम नृप सारे ॥ १ ॥
गुप्त ज्ञान यक और सुनाहूँ । धरहु ध्यान उस पर नर नाहू ॥ २ ॥
पुष्प वटिका एक कुरंगा । मृगी संग यह करत प्रसंगा ॥ ३ ॥
पाछे इसके खड़ा कसाई । उधर भेड़िया ताक लगाई ॥ ४ ॥
कुरंग किन्तु नृप बेसुध कैसा । रह मदमत्त द्रव्यपति जैसा ॥ ५ ॥
एक बार तुम लखहु कुरंगा । यही दशा नृपवर तुव संगा ॥ ६ ॥
यह मृत हरिन प्राय तुम जानो । देख दशा निज मन अनुमानो ॥ ७ ॥
तिय देखत लागत अति सुन्दर । सूखत तन तब लगति भयंकर ॥ ८ ॥
पुष्पवाटिका इन तिय आश्रम । करते तुम जिस बीच परीश्रम ॥ ९ ॥
गंध मधुर युत कुसुम स्वरूपा । क्षुद्र सकाम कर्म फल रूपा ॥ १० ॥

दोहा- **जीभहिं लागहिं अति प्रिय, भाँति भाँति के भोज ।**
जननेन्द्रिय की वासना, करते पूरण रोज ॥ २०० ॥

चौ- हेरत तुच्छ पदारथ राजा । घिरे रहो तुम तिया समाजा ॥ १ ॥
निज मन बाँधा उन मँह जाई । स्त्री सुत भाषण मधुर सुहाई ॥ २ ॥
ये ही मधुर भ्रमर गुंजारा । वहे कान आसत उस धारा ॥ ३ ॥
काल अंश दिन रात तुम्हारी । सन्मुख वृक समुदाय अपारी ॥ ४ ॥
आयुष नासहिं हे नृप तोरी । फिर भी रहते मस्त किशोरी ॥ ५ ॥
गुप चुप पीछे लगा शिकारी । काल रूप छिप बाण करारी ॥ ६ ॥
छेदहिं हृदय तुम्हारा राजा । उस मृग सम हो तोर अकाजा ॥ ७ ॥
उस मृग सम निज स्थिति लखि राया । अन्त हृदय चित करहु उपाया ॥ ८ ॥

कामी पुरुष जहाँ पर वाता । कवहुँ भूल वहँ जाउन ताता ॥ ९ ॥
तज गृहस्थ जावहु हरि शरणा । तज सब विषय भजहु हरिचरणा ॥ १० ॥

दोहा- **प्राचीन वर्हि वोले मुनि, गुप्त ज्ञान यह मोय ।**
नाथ आपने कह दिया, अव संशय यक होय ॥ २०१॥

चौ- यह जो ज्ञान आप फरमावा । क्यों ना मेरे गुरु मम गावा ॥ १ ॥
ज्ञान उन्हें शायद नहि आवत । यदि आवत पुनि क्यों न सुनावत ॥ २ ॥
मुनी लोग भी सुन यह ज्ञाना । मोहित हो जावत मन आना ॥ ३ ॥
इन्द्रिय वृत्ति जहाँ मुनि राई । करती काम जरा नहि आई ॥ ४ ॥
वेद वचन में किये विरोधा । उपाध्याय यह कवहुँ न सोधा ॥ ५ ॥
वेद करम पर वा परज्ञाना । ये सब मर्म न वे पहिचाना ॥ ६ ॥
अव सब शंका दूर तजाई । एक बात पुनि मे मन आई ॥ ७ ॥
करहु उसे निवृत मुनिराया । वेद वादि यक कथन सुनाया ॥ ८ ॥
करत कर्म नर जिसके द्वारा । तजहिं स्थूल तनु इस संसारा ॥ ९ ॥
पर भव करमन देह रचाही । भोगत फल उससे वहँ जाही ॥ १० ॥

दोहा- **रहे दृश्य नहि एक क्षण, कर्म किये इस ठौर ।**
परमव में कैसे रहे, फल देवन की दौर ॥ २०२ ॥

चौ- बोले नारद सुन नरवीरा । मन प्रधान यह लिंग शरीरा ॥ १ ॥
करत कर्म जन येहि सहाया । मृत्यु वाद जावत इस साया ॥ २ ॥
गुप्त रुप से परभव माँहि । भोगत स्वयं वहाँ फल जाही ॥ ३ ॥
स्वप्न अवस्था वीचे मानव । जीवित तनु ते करे न अनुभव ॥ ४ ॥
जीवित तनु का तजि अभिमाना । धरहिं भिन्न वा रुप समाना ॥ ५ ॥
संस्कार मन के तुम देखो । भोगत फल नर कर्म विशेषो ॥ ६ ॥
यही वात पर भव विच लागू । मन द्वारा यह जीव अभागू ॥ ७ ॥
यह मम पुत्र पौत्र अरु नारी । यों सब मन से जीव पुकारी ॥ ८ ॥
उनके पाप पुण्य भी सारे । यही जीव अपने शिर धारे ॥ ९ ॥
करत करम पुनि पर भव जाये । जाहि वहाँ करमन फल पाये ॥ १० ॥

दोहा- **चेष्टा कर्मन से यथा, होवत चित अनुमान ।**
मन वृतिन से भी तथा, होवत परभव ज्ञान ॥ २०३ ॥

चौ- जो वस्तु तनु कवहुँ न देखी । अश्रुत अदृष्ट अभुक्त विशेषी ॥ १ ॥
सो सब सुपने देत दिखाई । कर अनुमान इसी से राई ॥ २ ॥

कियो जीव पूरव अनुमाना । होवत यहँ सुपने उन ज्ञाना ॥ ३ ॥
प्रथम न अनुभव यदि ये पाता । कबहुँ न उनको यहाँ लखाता ॥ ४ ॥
मन ही मानव का सुन ताता । भूत भविष्यत रूप दिखाता ॥ ५ ॥
कभी कभी सुपने विच राही । अश्रुत अदर्श वस्तु दिखला ही ॥ ६ ॥
देश काल क्रियाश्रय आये । सो सब निन्द्रा दोष कहावे ॥ ७ ॥
अनुभव इन्द्रिय योग्य पदारथ । मन सन्मुख जो आत यथारथ ॥ ८ ॥
भोग रुप धर कर वे आवे । भोग बाद वे सभी सिधावे ॥ ९ ॥
ऐसो कोई पदारथ नाहीं । नहीं इन्द्रियाँ अनुभव जाही ॥ १० ॥

दोहा- **मन से ही इस जीव को, होत पदारथ भान ।**
सभी जीव के हृदय में, वसे नृपति मन आन ॥ २०४ ॥

चौ- भगवत चिन्तन में लग पावे । शुद्ध सत्व में स्थित हो जावे ॥ १ ॥
हरि संसर्ग होत नृप सारा । पात भान ये विश्व अपारा ॥ २ ॥
राहु दृष्टि विषय नहि जाता । तदपि चन्द्र संग देखन आता ॥ ३ ॥
मन बुद्धि इन्द्रिय समुदाई । ममपन भाव न जीव तजाई ॥ ४ ॥
सुसुप्ति मूरछा अरु उपतापा । तजे घमंड न रहे विपापा ॥ ५ ॥
स्पष्ट तरुण वय लिंग शरीरा । ग्यारह इन्द्रिय सह नर वीरा ॥ ६ ॥
किन्तु बाल गर्भस्थ न राई । लिंग शरीर विकाश न पाई ॥ ७ ॥
यही हेतु वह दीखत नाही । दर्श योग जिमि विधु छिप जाही ॥ ८ ॥
विद्य मानता सुपना आवे । वस्तु की कुछ नहीं लखावे ॥ ९ ॥
जगत बीच जे रहे पदारथ । स्वप्न समावह अरे अकारथ ॥ १० ॥

दोहा- **तदपि अविद्या के वश, होकर मनुज गँवार ।**
उस वस्तु से प्रेमकेर, कैसे हो भव पार ॥ २०५ ॥

चौ- त्रिवृत षोडश विस्तृत सारा । रचित पंच तन्मात्र प्रकारा ॥ १ ॥
त्रिगुण मयि यह लिंग शरीरा । यहि चैतन्य शक्ति युत वीरा ॥ २ ॥
यही जीव कहलावत राया । यही देह से देह रचाया ॥ ३ ॥
हर्ष व शोक व दुख सुख सारा । अनुभव होवत इसके द्वारा ॥ ४ ॥
घास कीट तृण अन्य गहाई । त्यागहि पूरव तृण समुदाई ॥ ५ ॥
मरण काल जब आवत ताता । पूरब तनु अभिमति न तजाता ॥ ६ ॥
वन्ध मोक्ष कारण नृप जाना । प्राणिन का मन ही अनुमाना ॥ ७ ॥
इन्द्रिय जनित भोग कर सुमिरन । करत कर्म नर उन हित राजन ॥ ८ ॥

उन करमों के वश नर आही । करम अविद्या वश फँस जाही ॥ ९ ॥
देखो सब जग आत्म समाना । करहु भजन हरिपद धरि ध्याना ॥ १० ॥

दोहा- **ईश्वर अरु इस जीव की, नारद गति दिखलाय ।**
विदा माँग नृप से गये, सिद्ध लोक हरसाय ॥ २०६ ॥

चौ- इत नृप निज सुत पास बुलाये । प्रजा भार देकर हरसाये ॥ १ ॥
प्राचीनवर्हि कपिलाश्रम आये । विषय सभी नृप दूर भगाये ॥ २ ॥
भक्ति सहित हरि प्रेम लगाये । हरि समानता पुनि नृप पाये ॥ ३ ॥
यह अध्यात्म ज्ञान की गाथा । गाई नृप प्रति नारद नाथा ॥ ४ ॥
जो यह गाथा सुनहिं सुनावे । लिंग देह वह शीघ्र नसावे ॥ ५ ॥
देव रिषी मुख निरगत वानी । हरि भक्ति यश विस्तृत जानी ॥ ६ ॥
जो नर पदहिं प्रेम ते येही । होवत वह हरिचरण सनेही ॥ ७ ॥
मुक्त बन्ध होवत इस द्वारा । भटकत नर नहिं इस संसारा ॥ ८ ॥
यह अध्यात्म ज्ञान कुरु राया । श्री गुरु मुख ते मैने पाया ॥ ९ ॥
समझहिं नर जब इसका आशय । देहाभिमानी सब होत पराजय ॥ १० ॥

दोहा- **किस प्रकार पर लोक में, जीव करन फल पात ।**
इस गाथा को समझकर, सब संशय मिट जात ॥ २०७ ॥

चौ- बर्हिष सुत दस मुनी प्रचेतू । रुद्र गीत गाकर हरि हेतू ॥ १ ॥
बोले विदुर कहो मुनिराई । कवन सिद्धि वे नृपसुत पाई ॥ २ ॥
निज इच्छा शिव आकर तेही । करी कृपा जिनपर बन स्नेही ॥ ३ ॥
मुक्ति में नहीं उन्हें रुकाई । किन्तु मुक्ति करब सब भाई ॥ ४ ॥
कवन काम कीन्हो मुनिराया । कहहु कृपा कर मुझ पर दाया ॥ ५ ॥
बोले मुनि हे विदुर प्रचेता । गये सिन्धु विच वे तप हेता ॥ ६ ॥
जाप यज्ञ कीन्हों सब भाई । अयुत वर्ष वय बीच बिताई ॥ ७ ॥
पुरुष पुराण नरायण देवा । लखकर मुदित भये उन सेवा ॥ ८ ॥
विग्रह सौम्य सामने आये । प्रभु दर्शन कर वे सुख पाये ॥ ९ ॥
निज मन वे सब अति हरसाये । तप श्रम उन सब दूर भगाये ॥ १० ॥

दोहा- **आरुढ़ गरुड पीताम्बर, मणिग्रीव निज धार ।**
मेरु श्रृङ्ग अम्बुद इव, शोभा अपरंपार ॥ २०८ ॥

चौ- कंचन व पूर्ण विभूषण सोहा । सीस मुकुट सुन्दर मन मोहा ॥ १ ॥
आयुध अष्ठ भुजा विचधारी । सेवित अनुचर सहित अपारी ॥ २ ॥

साम ध्वनि करते गुण गाना । खगपति निज पंखन ते नाना ॥ ३ ॥
हृदय सुशोभित प्रभु वनमाला । करती मनु लक्ष्मी संगचाला ॥ ४ ॥
प्रकटे आदि पुरुष वहँ आई । तपसिन प्रति पुनि वचन सुनाई ॥ ५ ॥
सुनो नृपतिनन्दन तुम सारे । लेवहु अब वरदान हमारे ॥ ६ ॥
देख परस्पर प्रेम तुम्हारा । भयो मुदित मन मोर अपारा ॥ ७ ॥
होवहु अब कल्याण तुम्हारा । बढ़े परस्पर प्रेम अपारा ॥ ८ ॥
सुमरहि जो नर नाम तुम्हारा । हों भ्राता विच प्रेम अपारा ॥ ९ ॥
संध्याकाल अरे जब आवे । रुद्र गीत का पाठ सुनावे ॥ १० ॥

दोहा- **उस नर को नृपनन्दनों, सद्बुद्धि अरु ज्ञान ॥**
मैं अभिष्ट वर को सदा, करता रहूँ प्रदान ॥ २०९ ॥

चौ- आदेश पिता को जो तुम माना । मिलहिं कीरती तुम्हें महाना ॥ १ ॥
सुवन एक विश्रुत जिन नामा । पावहु तुम सब पूरण कामा ॥ २ ॥
वह हिरण्यगर्भ सम होही । रच संतान भरे जग सोही ॥ ३ ॥
नाम अप्सरा इक प्रम्लोचा । रूप अपार रति मदमोचा ॥ ४ ॥
रिषी कँडु सह संग कराई । कन्या रतन एक वह जाई ॥ ५ ॥
वह वृक्ष न विच छोड़ सिधाई । सो कन्या सब वृक्ष गहाई ॥ ६ ॥
जब कन्या अति रोदन ठानी । देख चन्द्र करुणा मनमानी ॥ ७ ॥
तब पीयूष वर्षिणी तेही । निज तरजनि उस मुख विच देही ॥ ८ ॥
उस कन्या संग ब्याह रचाहू । अरे प्रचेत देर नहि लाहू ॥ ९ ॥
एक हि धर्म एक वृत धारी । एक रूप एक नाम पुकारी ॥ १० ॥

दोहा- **इस कारन तुम सवन का, होवहिं एकहि ब्याह ।**
इस नारी को साथ ले, भोगो भोग अथाह ॥ २१० ॥

चौ- अरे वर्ष दश लक्ष मिलाई । भोगहु भोग सभी मिल भाई ॥ १ ॥
कृपा दृष्टि तुम पर मम भारी । करो भक्ति मिल भ्रात हमारी ॥ २ ॥
बाद भक्ति करके सब भाई । पावहु मम पद मम गुण गाई ॥ ३ ॥
गेह बीच बस कर भी कोई । नाम लेय मम समय वष तोही ॥ ४ ॥
सो घर बन्धन हेतु न जाता । पाय मोहिं सब दुःख नसाता ॥ ५ ॥
एवं हरि के वच सुन काना । करत प्रचेता प्रभु गुण गाना ॥ ६ ॥
दोउ कर जोरे वचन उचारे । करो नाथ दुख दूर हमारे ॥७॥
जय भव क्लेश विनाशक त्राता । उर गोचर मन वच ते जाता ॥ ८ ॥

शुद्ध शान्त पर ब्रह्म स्वरूपा । ब्रह्म शिव मूरति रूपा ॥ ९ ॥
वासुदेव जय कृष्ण कृपालू । कमल नाभ वनमालि दयालू ॥ १० ॥

दोहा- **जय पीताम्बर धर हरि, जय सब भूत निवास ।**
शुद्ध सत्व हरिमेधस, कमल पाद जग भास ॥ २११ ॥

चौ- सर्व क्लेश क्षय रूप अनूपा । दियो दरस आ ज्योति स्वरूपा ॥ १ ॥
यासे बढ़कर कृपा अपारी । होवहिं हम पर कहा तुम्हारी ॥ २ ॥
मंगल कर प्रभु दीन अनाथू । उचित कृपा यह तव जगनाथू ॥ ३ ॥
सर्व भूत हिय स्थित भगवानू । सब अभिप्राय हमारे जानू ॥ ४ ॥
होवहिं जो रुचि नाथ तुम्हारी । वहि वर देहू संत भयहारी ॥ ५ ॥
किन्तु एक वर हम प्रति देहू । तोर चरण विच भक्ति रहेहू ॥ ६ ॥
पारिजात पाकर जिमि भृंगा । अन्य वृक्ष का कर हिन संगा ॥ ७ ॥
सौ तव चरण प्राप्त कर साँई । माँगहि कौन वस्तु सब भाई ॥ ८ ॥
नाथ जगत हम सभी भ्रमावें । तब तक संत संग हम पावें ॥ ९ ॥
भगवत भक्त संग लव एकी । स्वर्ग मोक्ष सम गनन विवेकी ॥ १० ॥

दोहा- **स्वच्छ कथा सत संग में, होवहिं नाथ तुम्हारा ।**
वैर भाव सब दूर हो, हरि गाथा को धार ॥ २१२ ॥

चौ- होत प्राणि मन नहि उद्वेगा । तृषा मृषा नसती अति वेगा ॥ १ ॥
मुक्त संग जो संत समाजू । करत स्तोत्र सब हरि पद काजू ॥ २ ॥
संत समागम यह भवभीता । लगहि न सुन्दर क्या हरि गीता ॥ ३ ॥
क्षण भर हम शिव किये प्रसंगा । पाये वैध काल हर संगा ॥ ४ ॥
किये समाहित चित्त अधीता । वृद्ध विप्र गुरु पाद पुनीता ॥ ५ ॥
तव संतोष काज इन सेवा । होवहिं नाथ जगत सुख देवा ॥ ६ ॥
मनू स्वयंभू शिव भगवाना । पारावार तोर नहि जाना ॥ ७ ॥
तप अरु ज्ञान शुद्ध चित जोही । करत प्रार्थना निश दिन तोही ॥ ८ ॥
सम पर शुद्ध सत्व भगवाना । करहि प्रणाम पुरुष हम नाना ॥ ९ ॥
इति प्रचेत स्तुत हरिवर देही । गै निज धाम मुदित अति स्नेही ॥ १० ॥

दोहा- **बाद प्रचेता सिन्धु ते, बाहर किये प्रयान ।**
भये कुपित तव वे अति ,तरु व्याप्त महि जान ॥ २१३॥

चौ- मुख ते मारुत अनल प्रकाशा । लगे जलावन तरु दश आशा ॥ १ ॥
दह्यमान तरु देख विधाता । गये समीप प्रचेतन धाता ॥ २ ॥

तरुअन ते वह कन्या लेही । क्रोध शान्त प्रचेतन देही ॥ ३ ॥
आज्ञा मान प्रचेता धाता । वार्क्षी नाम सुता तरु पाता ॥ ४ ॥
कियो ब्याह उस संग प्रचेता । कर निन्दा गण शंभु सहेता ॥ ५ ॥
दक्ष ब्रह्म सुत तज निज देहा । क्षत्रि वंश प्रकटे इन गेहा ॥ ६ ॥
चाक्षुष काल विदुर जब आवा । काल चक्र सब सृष्टि नसावा ॥ ७ ॥
विधि प्रेरित इन प्रजा रचाई । दक्ष नाम पदवी तब पाई ॥ ८ ॥
देखा सब प्रकार विधि लायक । दक्षहिं कीन्ह प्रजापति नायक ॥ ९ ॥
वरस लाख दश गय उपरंता । भयो प्रचेतन ज्ञान तुरंता ॥ १० ॥

दोहा- **वचन अधोक्षज सुमिर कर, निज भार्या सुत पास ।**
तज प्रचेत मिलकर गये , पश्चिम सागर पास ॥ २१४॥

चौ- जाजलि नाम जहाँ रिषिराई । तपकर महासिद्धि कुरु पाई ॥ १ ॥
ब्रह्मसत्र का कर संकल्पा । बैठे मन नहि रहा विकल्पा ॥ २ ॥
मन वच प्राण दृष्टि वश कीन्हा । आसन जीत ब्रह्मचित दीन्हा ॥ ३ ॥
सुर नर असुर वन्दनिय नारद । उन समीप गय ज्ञान विशारद ॥ ४ ॥
देखे नारद आत प्रचेता । किये प्रणाम उठे मुनि हेता ॥ ५ ॥
पूजन किये मुनी की सारे । बाद प्रचेता वचन उचारे ॥ ६ ॥
स्वागत होउ मुनीश तुम्हारा । बडे भाग्य प्रभु आज हमारा ॥ ७ ॥
भ्रमण आपका सूर्य समाना । करत जीव को अभय प्रदाना ॥ ८ ॥
हमको प्रथम दियो शिव ज्ञाना । गेहासत हो विस्मृति आना ॥ ९ ॥
सुनकर के वह हम मुनि ज्ञाना । तरहिं सिंधु भव कठिन महाना ॥ १० ॥

दोहा- **आत्म ज्ञान हम सब प्रति, वह मुनि करहु प्रकास ।**
यह सुन वचन प्रचेतन ,कहे वचन सुख भांस ॥ २१५॥

चौ- वही जनम वहि कर्म व वानी । आयु सकल वही हम मानी ॥ १ ॥
जासे होय सदा हरि पूजन । अन्य निरर्थक जानउ निज मन ॥ २ ॥
सावित्र व शौक्ल व याज्ञिक भाई । तप अरु श्रवण बुद्धि चतुराई ॥ ३ ॥
योग व साँख्य व वचन प्रकारा । त्याग व बलमति इन्द्रिय धारा ॥ ४ ॥
चित्त वृत्ति अरु न्यास पढ़ाई । नही निपुणता बीच भलाई ॥ ५ ॥
श्रेय मार्ग यह मन मत मानो । वही श्रेष्ठ पथ जगत वखानो ॥ ६ ॥
जिस पथ हरि पूजन सुखदाई । वही श्रेय मारग भय दाही ॥ ७ ॥
यथा नीर जड़ भीतर सींचत । शाखा स्कंध पात तरु पीवत ॥ ८ ॥

हरि पूजन ते उसी प्रकारा । अरचन होवत देव अपारा ॥ ९ ॥
प्रावट भानू नीर प्रदाता । ग्रीष्म काल चल सोसत जाता ॥ १० ॥

दोहा- **अरे प्रचेतो यह जग, हरि ते प्रकटे आत ।**
पाछे हरि में लीन हो, हरि से पृथक न जात ॥ २१६ ॥

चौ- करते अम्बर जिमि घन आभा । करते अंधकार पुनिनाभा ॥ १ ॥
तथा त्रिगुण मयि यह जग जाता । आवत हरि ते हरी समाता ॥ २ ॥
अब सर्वात्मा अन्तरयामी । आत्म भजु ते भज जग स्वामी ॥ ३ ॥
करहु सर्व संतन पर दाया । रहु संतुष्ट सदा निज काया ॥ ४ ॥
इन्द्रिय निग्रह करहु उपाया । होवत मुदित चरित हरिगाया ॥ ५ ॥
भक्त अधीन सदा भगवाना । हरि निज भक्त सदा प्रिय माना ॥ ६ ॥
भक्त हीय ते कबहुँ न न्यारे । जावंत वे हरि भक्त पियारे ॥ ७ ॥
धन यौवन शास्तर मदपाही । कृपा साधु संतन पर नाही ॥ ८ ॥
उल्टे बनहि साधु अपमानी । उन पूजन हरि कबहुँ न मानी ॥ ९ ॥
पूर्ण स्वरूप सदा भगवाना । करें सदा लक्ष्मी गुण गाना ॥ १० ॥

दोहा- **नृप सकाम अरु सुख की, नहिं उनको कुछ चाह ।**
ऐसे प्रभु भक्तन हिय, करते वास अथाह ॥ २१७ ॥

चौ- ऐसो को नर होय अनारी । कुछ क्षण तजहि संत भयहारी ॥ १ ॥
कह मैत्रेय विदुर इति ज्ञाना । किये वहाँ से मुनी पयाना ॥ २ ॥
सुन नारद के वचन सुहाये । सभी प्रचेता हरि गुण गाये ॥ ३ ॥
हरि पद भजन चरित गुण गाये । अन्त ब्रह्म पद सभी सिधाये ॥ ४ ॥
कह शुक सुन पांडव कुल केतू । उत्तानपाद वंश तव हेतू ॥ ५ ॥
अरे नृपति यह सब मैं गाया । प्रिय व्रत वंश सुनहु अब राया ॥ ६ ॥
आत्म ज्ञान नारद से आया । जो प्रियव्रत हरिधाम सिधाया ॥ ७ ॥
कौषारवि वरणित हरिगाथा । कुरुवर विदुर भयेउ सनाथा ॥ ८ ॥
भक्ति सहित हिय हरिपद धारी । पाछे मुनि प्रति गिरा उचारी ॥ ९ ॥
महायोगी करुणामय भारी । कियो पार तम नाथ अपारी ॥ १० ॥

दोहा- **इस प्रकार कह कर विदुर, भार्गव आज्ञा पाय ।**
निज बन्धुन से मिलन को,गजपुर गये सिधाए॥२१८॥क
अरे परीक्षित यह कथा, सुनकर के नर नार ॥ ।
आयुधन यश सद्गति, वैभव पाहिं अपार ॥ २१८ ॥ख

छन्द- सुनहु इन हरि भक्त, नृपतिन की कथा कर मन दमन।
पृथुचरित नर नित नेम से ,अरु दक्ष मख ध्रुव वन गमन ।।१।।
ब्रह्म ज्ञान अपार नारद, जीव बुद्धि का कहा ।
और नृप नन्दन प्रचेतन, की कथा गाकर अहा ।। २ ।।
इस लोक अरु परलोक,सुख परित्याग करके निजहिये।
भागवतही परमधन है, सुनहु इसको चित दिये ।।
जन्म चक्र विनाशिनी, त्रय ताप हारिणि यह कथा ।
औषधी भव रोग नाशिनी,अन्य इसके है वृथा ।। ३ ।।
कलि काल में इसका ही सेवन, श्रेष्ठ यों बजरंग कहे।
आयु धन यश कीरति, वैभव इसी से सब रह ।
काल रूपी दिवस वृक, सम आयु सब की हर रहे ।
उसने बचाने के लिये, श्री भागवत ही वीर है ।

दोहा- चतुर्थ स्कंध की यह कथा, पूरण बजरंग लाल ।
मार्गशुक्ल तिथि सप्तमी सम्वत चोइस साल ।। २१६ ।।

इति श्री कृष्ण चरितामृते कलिमल विध्वंशने बजरंग कृत् श्रीमद्भागवते महापुराणे
पारम हंस्यां संहितायां समाप्तोऽ यं चतुर्थ स्कंध : ।
हरिः ॐ तत्सत् ।

॥ श्री गणेशाय नमः ॥

श्री राधा वल्लभो विजयते।

श्री मद्भागवत प्रारंभ

पञ्चम स्कंध

श्लोक

वन्दे लोक पितामहं सुर वरं, वन्दे स्वयंभूं विभुं ।
वन्दे देव चतुर्मुखं जग करं, वन्देऽ भयं धातरम् ॥
वन्दे नाथ नृपालु नाभि तनयं, वन्दे कृपालुं हरिम् ।
वन्देऽहं करुणाकरं भव छिदं,वन्दे च योगीश्वरम् ॥ १ ॥

दोहा- **बोले शुक से कुरुपति, वैष्णव प्रिय व्रत राज ।**
गृहस्थाश्रम में किस तरह, फँसे कहो मुनिराज ॥ १ ॥

चौ- गृहस्थ बीच फँसकर यह जीवा । भूलत निज स्वरूप मुनि सींवा ॥ १ ॥
मुक्त संग प्रियव्रत सम नाहीं । गृहस्थ बीच मन कबहुँ न लाही ॥ २ ॥
महापुरुष जेते जगमाँही । बीच कुटुम्ब रुचि मति नाहीं ॥ ३ ॥
पुनि स्त्री पुत्र गेह आसक्ता । क्योकर मोक्ष कृष्ण अनुरक्ता ॥ ४ ॥
नृपति वचन सुन मुनि मुस्काये । बोले वचन तदा मन भाये ॥ ५ ॥
भगवत चरण प्रकाशित चेता । आवत विध्न तदपि नर जेता ॥ ६ ॥
निज मारग व कथा भगवाना । त्यागत नाहीं हरि गुण गाना ॥ ७ ॥
विष्णु भक्ति रत राजकुमारा । नारद मुख पा ज्ञान अपारा ॥ ८ ॥
परम तत्व बोध उन जाता । कृत संकल्प तदा निज गाता ॥ ९ ॥
ब्रह्माभ्यास बीच मम जीवन । रहे निरन्तर हरि पद मे मन ॥ १० ॥

दोहा- **आदि राज मनु वहँ गये, प्रियव्रत इति लखि ध्यान ।**
करहु राज्य का काज तुम, बोले मनू सुजान ॥ २ ॥

चौ- इति मनु वचन सुनै जब काना । शासन बीच पराभव माना ॥ १ ॥
शासन बीच प्रपंच अनेकी । भूलहिं फँस कर तत्व विवेकी ॥ २ ॥
राजगेह धन स्त्री सुत माया । यह विचार प्रियव्रत नहि भाया ॥ ३ ॥
प्रियव्रत देख विचार विधाता । रिषि सह सत्य लोक ते ताता ॥ ४ ॥
पथ बिच चन्द्र प्रकाश समाना । स्तूयमान सिद्धादिक नाना ॥ ५ ॥
द्रोणी मन्दर किये प्रकाशा । प्रियव्रत देखे आत अकाशा ॥ ६ ॥
तब मनु प्रिय व्रत ज्ञान विशारद । दोउ कर जोर खड़े मुनि नारद ॥ ७ ॥

करी प्रार्थना सब मिलि धाता । प्रिय व्रत से पुनि कहे विधाता ॥ ८ ॥
अमृत वचन कहूँ मैं ताता । मानहूँ सत्य असत्य न बाता ॥ ९ ॥
दोषारोपण ते न कदापी । कबहुँ न दीखत विश्व वियापी ॥ १० ॥

दोहा- **मैं ब्रह्मा शिव नारद, अउर तुम्हारे तात ।**
पराधीन होकर सभी, मानत जिनकी बात ॥ ३ ॥

चौ- नहीं जीव ऐसो जग माँही । तप विद्या बल योग रचाही ॥ १ ॥
उन निर्मित जो अनृत करहीं । चाहे बुद्धि अनेक निरखही ॥ २ ॥
सुख दुख जन्म मरण हित ताता । जीव समूह धरहिं निज गाता ॥ ३ ॥
रज्जु बंध जिमि चौपदा भारा । ढोवत नर का कई प्रकारा ॥ ४ ॥
वेद वाणि दृढ़ रजू बँधाई । करहि कर्म उन आज्ञा पाई ॥ ५ ॥
हम सब गुण करमन अनुसारी । जो योनि प्रभु ने स्वीकारी ॥ ६ ॥
करहिं तेहि हम स्वीकृत सारे । अरे व्यवस्था जो वह धारे ॥ ७ ॥
सुख दुख भोग करहि संसारी । नही दखल उस बीच हमारी ॥ ८ ॥
नयन हीन नर अँखियन हारे । चले मनुज के यथा सहारे ॥ ९ ॥
त्यों सब करते उस अनुसरणा । जो पथ हरि निज मुखते वरणा ॥ १० ॥

दोहा- **मुक्त संग अभिमान ते, जो नर होवत हीन ।**
प्रारब्ध शेष जब तक रहे, रहे देह आधीन ॥ ४ ॥

चौ- इन्द्रिय भोग बीच जिस ध्याना । घर वन दोऊ एक समाना ॥ १ ॥
षट् शत्रुन सह करत निवासा । उस नर की कहा राखहु आसा ॥ २ ॥
जित इन्द्रिय घर पर भी बसहीं । नेह गेह ते वह ना करहीं ॥ ३ ॥
मानव जिमि दुर्गाश्रय धारी । करहिं सकल शत्रुन संहारी ॥ ४ ॥
क्षीण शत्रु नर कहिं पर जावे । कोई कष्ट सन्मुख नहि आवे ॥ ५ ॥
एवं षट् इन्द्रय दुखकारी । जीत इन्हें नर बने सुखारी ॥ ६ ॥
पाछे वह घर वा वन विचरे । तो उस नर का कुछ ना बिगरे ॥ ७ ॥
हरिपद कमल सुदुर्ग सहारे । जीते तुम यह प्रियव्रत सारे ॥ ८ ॥
अब तुम भोगो भोग अपारा । करो बाद इन ते छुटकारा ॥ ९ ॥
उचित न युक्त संग मनु जाता । आत्म स्वरूप भजहु पुनि ताता ॥ १० ॥

दोहा- **लोक गुरु विधि जब इति, प्रियव्रत से कहि बात ।**
विधि आज्ञा शिर पर धरि, हर्षा कर निज गात ॥ ५ ॥

चौ- मनु निज सुत लख यह व्यवहारा । भये मुदित मन अपरंपारा ॥ १ ॥
पूजेउ आदिराज तव धाता । हरषित होकर के निज गाता ॥ २ ॥
प्रियव्रत नारद देखत धाता ॥ गये लोक निज बाद विधाता ॥ ३ ॥
इत मनु नारद आज्ञा धारी । प्रियव्रत प्रति सोंपी महि सारी ॥ ४ ॥
भये भोग से स्वयं निवृत्ता । गेहाश्रम विष जल आसक्ता ॥ ५ ॥
हरि चरणन विच चित्त लगाई । भोगत प्रियव्रत इति महि आई ॥ ६ ॥
रही विश्वकर्मा इक बाला । उस संग व्याह कियो नर पाला ॥ ७ ॥
बर्हिष्मति जिन नाम कहाया । जाये दस सुत उससे राया ॥ ८ ॥
आत्म समान शील गुण रूपा । रहे गेह सुन्दर उस भूपा ॥ ९ ॥
ऊर्जस्वती नाम एक बाला । जाई वर प्रियव्रत नरपाला ॥ १० ॥

दोहा- **आग्नीध्र व ईधम जिह्वरू, यज्ञ बाहु महावीर ।**
हिरण्यरेत धृत पृष्ठ व, सवन पुत्र गुण धीर ॥ ६ ॥

चौ- मेधातिथि कवि होत उदारी । दशम पुत्र कवि बडगुणधारी ॥ १ ॥
ये सब नाम अनल कर गाया । महावीर सपन कविराया ॥ २ ॥
तीनों ब्रह्मचर्य व्रत भारी । परम हंस आश्रम इन धारी ॥ ३ ॥
परम हंस आश्रम जिन पाये । परम ब्रह्म पद तीन सिधाये ॥ ४ ॥
अन्य नार प्रियव्रत की ताता । उत्तम ताम सरैवत जाता ॥ ५ ॥
ये मनवन्तर अधिपति गाये । एवं नृप प्रियव्रत सुत गाये ॥ ६ ॥
प्रियवृत रानी सहित अपारा । भोगेउ यह महि मंडल सारा ॥ ७ ॥
करत राज नृप को सुन राया । अर्बुद ग्यारह बरिस बिताया ॥ ८ ॥
मेरू परिक्रम करत अनन्ता । लोक अलोक अचल परयन्ता ॥ ९ ॥
आधे भाग प्रकाश अपारी । आधे रजनी रवि विस्तारी ॥ १० ॥

दोहा- **करता देखा सूर्य यों , दिन अरु रात विभाग ।**
सोचेउ तब निज मन वह, प्रियव्रत नृप बडभाग ॥ ७ ॥

चौ- होवहिं रजनी महि जिस भागा । करूँ दिवस मेटूँ तम रागा ॥ १ ॥
कर विचार प्रियव्रत मन माँही । हरि उपासना बल मन लाही ॥ २ ॥
रथ सम वेग तेजमय आवा । सात बार सूरज अनुधावा ॥ ३ ॥
धावा प्रियव्रत रथ पर कैसे । अपर सूर्य नभ पर रहे जैसे ॥ ४ ॥
इस रथ चक्र गर्त रहे साता । सप्त सिन्धु हे नृप वे जाता ॥ ५ ॥
गर्त दोउ बिच रही अपारी । सप्त द्वीप वह भूमि पुकारी ॥ ६ ॥

जम्बु प्लक्ष सेमल कुशराया । क्रौंच शाक अरु पुष्कर गाया ॥ ७ ॥
प्रथम द्वीप ते दूसर दूना । रहा प्रमाण नृपति नहि ऊना ॥ ८ ॥
क्षारोद व इक्षु रसोद सुरोदा । घृत क्षीरोद व दधि मण्डोदा ॥ ९ ॥
सप्तम सिन्धु शुद्ध जल धारी । सप्त सिन्धु जो नाम पुकारी ॥ १० ॥

दोहा- **सप्त सिंधु प्रति द्वीप की, खाई के सम जान ।**
प्रति सिंधु निज द्वीप सम, राखत अपना मान ॥ ८ ॥

चौ- प्रियवृत निज अनुगत सुत जानी । उन प्रति दीन्ह द्वीप रजधानी ॥ १ ॥
आग्नीध्रहिं जम्बुद्वीप नृप दीन्हा । ईध्मजिह्व प्लक्ष पति कीन्हा ॥ २ ॥
सेमल यज्ञबाहु प्रति दीन्हा । हिरण्यरेत सुत कुश पति कीन्हा ॥ ३ ॥
क्रौंच द्वीप घृत पृष्ठ नृपाला । मेधातिथि प्रति शाक विशाला ॥ ४ ॥
वीतिहोत्र पुष्कर पति भाया । सप्तद्वीप प्रियव्रत बटवाया ॥ ५ ॥
ऊर्जस्वती नाम जो बाला । शुक्र हेतु दीन्ही नरपाला ॥ ६ ॥
देवयानि कन्या इन जाई । आगे जासु कथा कहुँ राई ॥ ७ ॥
जितु षडगुण हरि चरण प्रभावा । रहे जगत जेते नर आवा ॥ ८ ॥
उन विच पुरुषारथ ये राई । कोई बात नहि अचरज पाई ॥ ९ ॥
हरि नाम अन्त्यज एक बारा । लेकर सद्य जगत उध्दारा ॥ १० ॥

दोहा- **अतुलनीय बल विक्रमी, वे प्रियव्रत महाराज ।**
हो विरक्त बोले अहो, बुरा किया मैं काज ॥ ९ ॥

चौ- मम विषयोलुप इन्द्रिन मोही । अविधा युक्त विषय विष होही ॥ १ ॥
अंध कूप डारेउँ मैं आवा । तिय क्रीड़ा मृग मुझे बनावा ॥ २ ॥
अरे मोहिं धिक् धिक संसारा । त्यागहुँ विषय भोग अब सारा ॥ ३ ॥
एवं प्रियव्रत भये विरक्ता । निज पुत्रन प्रति राज्य विभक्ता ॥ ४ ॥
तजी नरेश तदा निज रानी । नारद ज्ञान मार्ग मन ठानी ॥ ५ ॥
प्रियव्रत कियो कर्म जग अन्दर । करता कवन विना यह ईश्वर ॥ ६ ॥
सप्त सिन्धु जिनने प्रकटाये । प्राणिन सुख प्रति द्वीप बनाये ॥ ७ ॥
ऐश्वर्य स्वर्ग नरलोक पताला । नरक तुल्य माने नर पाला ॥ ८ ॥
साधू प्रिय बन कर नर राई । कीन्हीं विष्णु भक्ति सुखदाई ॥ ९ ॥
बोले शुक सुन पांडव नन्दन । तप संलगन भये नृप कानन ॥ १० ॥

दोहा- **जम्बु द्वीप के अधिपति, प्रियव्रत सुत प्रिय खासु ।**
पालहि परजा पुत्र सम, अग्नीध्र नाम नृप जासु ॥ १०॥

चौ- एक बार नृप मंदर गयऊ । पुत्र काम विधि पूजन कियऊ ।। १ ।।
पुत्र कामना धात लखाई । पूरवचित्ती पास बुलाई ।। २ ।।
सभा भवन निज गाती गाना । भेजी विधि जहँ नृपति सुजाना ।। ३ ।।
भोग हेतु वह गई समीपा । गई जहाँ बैठे अवनीपा ।। ४ ।।
देखा आश्रम उपवन सुन्दर । विविध निविड युत जहाँ तरुवर ।। ५ ।।
स्वर्ण लता फैली जिन डारी । बैठे स्थल चर जीव अपारी ।। ६ ।।
बोली मधुर मयूर उचारे । जल कुक्कुट कारंड अपारे ।। ७ ।।
कूजत जलचर सह कलहंसा । कमल युक्त सर सुन्दर वंसा ।। ८ ।।
ललित गमन पद न्यास प्रकारा । पद पद चरण नुपुर झनकारा ।। ९ ।।
तासु ध्वनी सुन राजकुमारा । देखा तब कुछ नयन उघारा ।। १० ।।

दोहा- **एक एक पुष्पन पर, जावत भ्रमरि समान ।**
सूँघत सुन्दर अप्सरा, देखी नृपति सुजान ।। ११ ।।

चौ- सुर अरु नर नयनन सुखकारी । गति विलास पूरण मनहारी ।। १ ।।
लज्जा क्रीड़ा अरु चपलाई । विनय युक्त चितवन मधुराई ।। २ ।।
वचन मनोहर अवयव अंगा । पुरुष हृदय विच काम तरंगा ।। ३ ।।
मनु प्रवेश हित द्वार बनाई । हँस हँस वचन कहत मन भाई । ४ ।।
अमृतमय मादक मुख बरसे । देख मधुरता मधुमन तरसे ।। ५ ।।
श्वास गंध हित हो मदमत्ता । आनन कमल भ्रमर आसत्ता ।। ६ ।।
जब वह निज पद शीघ्र उठावे । हिलत तासु कुच कुंभ सुहावै ।। ७ ।।
वेणी कटि सुकरधनी हिलही । तब मन महा सुहावनि लगही ।। ८ ।।
भयो कामवश तब वह राया । मत्त समान वचन इति गाया ।। ९ ।।
मुनि तुम कवन यहाँ किस हेतु । आये सब कहुं कृपा निकेतू ।। १० ।।

दोहा- **परम पुरुष श्री विष्णु की, माया तो तुम नाप ।**
ये दो धनु विन डोर के, क्यों धारण किये आप ।। १२ ।।

चौ- इनते कवन प्रयोजन तोरा । इनते घात करहु क्या मोरा ।। १ ।।
यह दो बाण बड़े तव पैने । दीखत शान्त कमल दल डैने ।। २ ।।
इस वन विचरण कर मुनिराई । किन पर तजहु इन्हें तुम आई ।। ३ ।।
अरे सामना करने वाला । इस वन बीचे नहीं तुम्हारा ।। ४ ।।
अरे पराक्रम यह तव मुनिवर । करें खेर हम जड़मति ऊपर ।। ५ ।।
नाथ परिक्रम शिष्य अपारी । करत अध्ययन शौर पुकारी ।। ६ ।।

सामगान कर रहे निरन्तर । करत अरे वह तो स्तुति ईश्वर ॥ ७ ॥
मुनि जिमि चलत वेद अनुकूला । परत वेणि ते सुन्दर फूला ॥ ८ ॥
इन पुष्पन को शिष्य तुम्हारे । सेवहिं यह शुभ शब्द उचारे ॥ ९ ॥
तव पद नूपुर पिंजर तीतर । किये बन्द जो इनके भीतर ॥ १० ॥

दोहा- **शब्द सुनाई आत है, नजर न तीतर आत ।**
तब नितम्ब पर आभ यह, कुसुम कदम्ब दिखात ॥ १३॥

चौ- चमकत मंडल सम अंगारा । जिमि नितम्ब ऊपर सम तारा ॥ १ ॥
वल्कल पट मुनि कहाँ तुम्हारे । क्या तुम रहहु दिगम्बर धारे ॥ २ ॥
द्विजवर तोर सींग दोउ सुन्दर । भरे हुये क्या इनके भीतर ॥ ३ ॥
महा अमोल रतन इन माँही । भरे अवश्य अरे तुम लाही ॥ ४ ॥
मध्य भाग तव कृश यहि हेतू । बहत भार इन रतन समेतू ॥ ५ ॥
अटकी नजर यहाँ पर मेरी । सत्य कहुँ मुनि सौगन्द तेरी ॥ ६ ॥
और सुभग इन सींगन ऊपर । लेप लाल यह कैसा सुन्दर ॥ ७ ॥
जासु गंध मम आश्रम सारा । भयो सुगंधित अरे अपारा ॥ ८ ॥
अरे मित्र वह देश तुम्हारा । करो वास जहँ सह परिवारा ॥ ९ ॥
वह मुझ को तुम जरा दिखाहू । अरे मित्र ना देर लगाहू ॥ १० ॥

दोहा- **जो निज वक्षस्थल धरे, अद्‌भुत अवयव खास ।**
उन पुरवासिन के जरा, दरसन की लगि आस ॥ १४ ॥

चौ- क्या भोजन हे मित्र तुम्हारा । सत्य कहो ना करो विचारा ॥ १ ॥
जासु खात तव मुख मुनिराई । हवन वस्तु सम गंध सुहाई ॥ २ ॥
अरे मित्र यक बात बताहू । कहिं तुम विष्णु कला तो नाहूँ ॥ ३ ॥
यही हेतु तव कानन ऊपर । पलकहीन मकराकृत कुंडर ॥ ४ ॥
सर समान सुन्दर तव आनन । जासु बीच चंचल दोउ नैनन ॥ ५ ॥
भय कॉपति दो मीन समाना । दन्त पंक्ति वर हंस प्रमाना ॥ ६ ॥
घुंघरावली अलकावलि तोरी । भ्रमर समान लगे मन मोरी ॥ ७ ॥
निजकर पंकज देकर थापा । भारत गेन्द उछालत आपा ॥ ८ ॥
इत उत धावति गेन्द तुम्हारी । करती चंचल नैन हमारी ॥ ९ ॥
येहि देख हलचल मन भारी । सखे हो रही पीर अपारी ॥ १० ॥

दोहा- **जटा जूट बाँका अरे, खुल कर बिखरा जाय ।**
इसे सखे तुम क्यों, नहीं अहो सँभालो आय ॥ १५ ॥

चौ- अजी धूर्त यह वायु अपारा । करत दूर कटि वस्त्र तुम्हारा ॥ १ ॥
तप नाशक तापस मुनि भूपा । पायोकिस तप रूप अनूपा ॥ २ ॥
आउ मित्र कुछ दिन मम संगा । करो तपस्या और प्रसंगा ॥ ३ ॥
जग विस्तार हेतु कहिं धाता । भेजेउ मम समीप तुम ताता ॥ ४ ॥
अव मैं त्यागूँ संग न तोरा । उलझा नयन और मन मोरा ॥ ५ ॥
चारु श्रृङ्गि जहँ मन हो तेरा । चलूँ वहाँ नहि करूँ अवेरा ॥ ६ ॥
मैं तो अनुचर रहूँ तुम्हारा । मत छोड़ो प्रिय साथ हमारा ॥ ७ ॥
मंगलमय सखियाँ ये तोरी । यह भी सदा संग रहे मोरी ॥ ८ ॥
एवं विनय कुशल वह राया । रति चातुर्य वचन मधुगाया ॥ ९ ॥
तव नृप के ऊपर वह मोही । वुद्धि शील गुण वय वपु जोही ॥ १० ॥

दोहा- **जम्बुद्वीप अधिपति सह, विधि प्रेषित वह नार ।**
भौम स्वर्ग सुख सम्पदा, भोगी वरष अपार ॥ १६ ॥

चौ– तासु गर्भ नृप नौ सुत जाये । नाभि श्रेष्ठ किम्पुरुष सुहाये ॥ १ ॥
हरी वर्ष इलावृत भाई । रम्यक हिरणमय कुरु राई ॥ २ ॥
भद्राश्व और इक पुत्र निराला । नाम जासु सुन केतूमाला ॥ ३ ॥
एक पुत्र प्रतिवर्ष जनाई । पुनि नृप तजि विधि लोक सिधाई ॥ ४ ॥
जम्बु द्वीप नव भाग वरावर । दीन्हे निज पुत्रन प्रतिनृप वर ॥ ५ ॥
प्रत्येक भाग वह वर्ष कहाया । निज निज सम जिन नाम वताया ॥ ६ ॥
विप्रचित्ति संग भोग अपारा । भोगे तदपि न किसी प्रकारा ॥ ७ ॥
जम्बुद्वीप पति तृप्त न जाता । रहा ध्यान अन्त तिय गाता ॥ ८ ॥
पाकर मरण गये उस लोका । विप्रचित्ति जहँ वसत अशोका ॥ ९ ॥
वाद पिता के वे नव भाई । मेरुसुता संग व्याह रचाई ॥ १० ॥

दोहा- **मेरुवति प्रति रुपवती, उग्रयदंष्ट्रि अपार ।**
लता और रम्या तथा, श्यामा सुन्दर नार ॥ १७ ॥

चौ- भद्रा देववीति गुण धारी । कियो व्याह क्रमते इन नारी ॥ १ ॥
नाभी पुत्र कामि सुन राजा । तिय सह यज्ञ पुरुष किय याजा ॥ २ ॥
शुद्ध भाव नृप का जव देखा । कीन्ही हरि तव दया विशेषा ॥ ३ ॥
अलंकार सव निज अंग धारे । यज्ञ बीच जग पुरुष पधारे ॥ ४ ॥
तेज अनूप चतुर्भुज धारी । रेशम अम्बर धर गिरधारी ॥ ५ ॥
उर वीचे श्रीवत्स विराजे । शंख व चक्र गदाम्वुज राजे ॥ ६ ॥

सीस मुकुट श्रुति कुंडल धारी । गले हार शोभित बनवारी ॥ ७ ॥
कंचन कटि सूत्र केयूरा । घूँघरयुत सोभित पद नुपूरा ॥ ८ ॥
भूषण भूषित कर हरि दर्शन । उठ सब रित्विज कीन्हा वन्दन ॥ ९ ॥
बोले पुनि रिषि पुरुष पुरातन । बसो नाथ तुम सब प्राणिन तन ॥ १० ॥

दोहा- **शिक्षा हमको यह मिली, सत पुरुषों से नाथ ।**
बार-बार पूजन करे, और नमावें माथ ॥ १८ ॥

चौ- ऐसो पुरुष कहिं नहि दीखहीं । ते स्वरूप वरणन कर सकहीं ॥ १ ॥
प्रकृति और पुरुष पर स्वामी । हे परमेश्वर अंतर यामी ॥ २ ॥
गुण मंगल मय परम विधाता । जन समूह दुख दुर्ग नसाता ॥ ३ ॥
करत भक्त अरपित जल पाना । तुलसी ते किय पूजन नाना ॥ ४ ॥
जैसे होउ प्रभो तुम राजी । वैसे तप अरु यज्ञन साजी ॥ ५ ॥
द्रव्य व काल अंग युत यागा । रहे नाथ तव नहि अनुरागा ॥ ६ ॥
किन्तु सकामी मनुज अभागी । करत मनोरथ साधन यागी ॥ ७ ॥
परम पुरुष ब्रह्मादिक स्वामी । परम श्रेष्ठ तुम अन्तरयामी ॥ ८ ॥
हम तो यह भी जानत नाहीं । परमानन्द अहो किस माँही ॥ ९ ॥
तोरी नाथ यथोचित पूजन । बनी नहीं हमसे कुछ वन्दन ॥ १० ॥

दोहा- **नाथ तत्व विद् नर जिमि, बिना बुलाये खास ।**
जावत करुणा वश वह, अज्ञानी के पास ॥ १९ ॥

चौ- आये तुम प्रभु उसी प्रकारा । पूरण हेतु मनोरथ सारा ॥ १ ॥
जग्य बीच दरसक गण जैसे । आये नाथ यहाँ तुम वैसे ॥ २ ॥
दियो नाथ यहि बड़ वरदाना । वरदायक विच आप महाना ॥ ३ ॥
नाभि जग्य विच जो तुम आये । ये वरदान न हम कम पाये ॥ ४ ॥
प्रभो आपके गुण गण नाना । परम सुमंगलमय भगवाना ॥ ५ ॥
ग्यान ज्वलित ग्यानाग्नि द्वारा । हिय द्वेषादिक मल सब जारा ॥ ६ ॥
जिन स्वभाव प्रभु आप समाना । करत निरन्तर मुनि गुण गाना ॥ ७ ॥
यही आप वर देवहु सबही । नाम निरन्तर हम तव रटहीं ॥ ८ ॥
खावत पीवत छींकत ठोकर । ज्वर मरणादि अवस्था भीतर ॥ ९ ॥
अरु जमुहाई संकट काला । रहे नाम तव दीन दयाला ॥ १० ॥

दोहा- **एक विनय हम सबन की, उस पर करहु विचार ।**
नृप नाभी तुम समसुत, चाहत जगदाधार ॥ २० ॥

चौ- साक्षात आप परमेश्वर ताता । मोक्ष स्वर्ग सब वस्तु प्रदाता ॥ १ ॥
ऐसी कवन वस्तु जग नाही । जो नहि देत सके प्रभु जाही ॥ २ ॥
यथा अधन जा धनद समीपा । मांगत खल भूषा तृण चीपा ॥ ३ ॥
त्योंही यह यजमान हमारा । मानत संतति परम सहारा ॥ ४ ॥
यही हेतु प्रभु कीन्ह अराधन । करके तुम सम संतति चिन्तन ॥ ५ ॥
नहीं कोई यह अचरज ताता । निज भक्तन प्रति सब कुछ दाता ॥ ६ ॥
मंदमति हम होय सकामी । तुच्छ काम हित हे जग स्वामी ॥ ७ ॥
कर आवाहन नाथ तुम्हारा । कियो अनादर अहो अपारा ॥ ८ ॥
किन्तु आप समदरसी साँई । करो क्षमा यह सभी ढिठाई ॥ ९ ॥
इति रित्विज किय हरि पद वन्दन । बोले तब वे करुणा क्रन्दन ॥ १० ॥

दोहा- **अरे ऋत्विजों यह महा, असमंजस की बात ।**
दुरलभ वर यह मांग कर, कीन्हीं मम संग घात ॥ २१॥

चौ- मो सम अन्य जगत ना दूसर । यही हेतु प्रकटूँ मैं नृप घर ॥ १ ॥
विप्रवचन मैं सभी प्रकारा । सत्य करूँ ना लगे अबारा ॥ २ ॥
द्विज कुल सदा रहे मम आनन । अंशकला प्रकटूँ नृप आँगन ॥ ३ ॥
मेरु देवी सन्मुख नृप से । कहकर वचन हरि अति हरसे ॥ ४ ॥
इस प्रकार कह कर भगवाना । भये उसी क्षण अन्तरध्याना ॥ ५ ॥
हुए मुदित हरि मुनिगण द्वारा । तब प्रभु नृप घर ले अवतारा ॥ ६ ॥
नृप नाभीप्रिय काज दयालू । प्रकटे नृप रनिवास कृपालू ॥ ७ ॥
नैष्ठिक ब्रह्मचारि यति सारे । धर्म दिगंबर यही प्रचारे ॥ ८ ॥
शुद्ध सत्व मय विग्रह जाता । नही कोई अचरज भरि बाता ॥ ९ ॥
सुमिरन नही परीक्षित तोही । रक्षा कीन्ह गर्भ तुव ओही ॥ १० ॥

दोहा- **कहे व्यास सुत हे नृप, नाभि नृप सुकुमार ।**
हरि लक्षण युत देख द्विज, मंत्री करत विचार ॥ २२ ॥

चौ- यही हमारे उपर शासक । लायक सदा प्रजा परिपालक ॥ १ ॥
देख शौर्य गुण सभी प्रकारा । ऋषभ देव नृप नाम पुकारा ॥ २ ॥
देख कीरति इनकी भारी । करी ईर्षा इन्द्र अपारी ॥ ३ ॥
वर्षा करी नहीं सुरराया । योग मार्ग इन जल बरसाया ॥ ४ ॥
निज इच्छा ते धर निज देही । हरि सुपुत्र लखि नृप अति स्नेही ॥ ५ ॥
विह्वल प्रेम सुगदगद वानी । वत्स पुत्र कहे निज सुत जानी ॥ ६ ॥

लालन पालन किये नृपाला । परम हर्ष मन जान निहाला ॥ ७ ॥
निज सुत ऊपर प्रीति विशेषी । सभी प्रजा गण की नृप देखी ॥ ८ ॥
ऋषभ देव प्रति दे निज राजू । रक्षा धर्म प्रजा जन काजू ॥ ९ ॥
निज सुत सोंपे विप्र अपारी । गये बद्रिकाश्रम सहनारी ॥ १० ॥

दोहा- **सेवा नर नारायण, करके नृपति सुजान ।**
समय पाय करके वह, पाये पद निरवान ॥२३॥

चौ- नाभि कर्म को नर आचरहीं । जासु कर्म लखि हरि अवतरहीं ॥ १ ॥
विप्र भक्त नाभी सम राया । इत उत खोजत कहिं नहि पाया ॥ २ ॥
जासु यज्ञ बिच महिसुर आये । मंत्र योग हरि दर्श कराये ॥ ३ ॥
ऋषभ देव इत गुरुकुल जाई । शिक्षा धर्म अनेकनि पाई ॥ ४ ॥
ले गुरु आज्ञा गेह सिधाये । उदर जयंती शत सुत जाये ॥ ५ ॥
ज्येष्ठ पुत्र भरत जिन जाता । भये श्रेष्ठ गुण योग विख्याता ॥ ६ ॥
प्रथम देश अजखंड कहावा । भरत नाम पर भारत गावा ॥ ७ ॥
भरत अनुज नव मुख्य कहाये । कुशावर्त जिन प्रथम बताये ॥ ८ ॥
इड़ावर्त मलय अरु केतू । ब्रह्मावर्त विदर्भ सहेतू ॥ ९ ॥
कीकट इन्द्र स्पर्क सुन ताता । भद्र सेन इति नव विख्याता ॥ १० ॥
कवि हरि अन्तरिक्ष कर भाजन । आविर्होत्र द्रुमिल पिपलायन ॥ ११ ॥

दोहा- **प्रवुद्ध द्रुमिल इति नव सुत, दर्शन दरसक जान ।**
इन सब की गाथा नृप, आगे करहिं बयान ॥२४॥

चौ- अनुज इकासि जयंति कुमारा । यज्ञ शील पितु भक्त अपारा ॥ १ ॥
कर्म प्रभाव विशुद्ध विनीता । भये विप्र वर वेद पुनीता ॥ २ ॥
ऋषभ देव रूपी भगवाना । करत धर्म अज्ञानि समाना ॥ ३ ॥
जे नर धर्म तत्व नहि चीन्हे । उन शिक्षा हेतू इन कीन्हे ॥ ४ ॥
करहि श्रेष्ठ नर जो आचरणा । करत लोक सब उस अनुकरणा ॥ ५ ॥
सकल धर्म यद्यपि वे जानत । वेद रहस्य रिषभ पहिचानत ॥ ६ ॥
तदपि विप्र दरसित पथ राई । पालहि भूमि प्रजा सुखदाई ॥ ७ ॥
किये यज्ञ शत नाभिकुमारा । द्रव्य काल वय देश प्रकारा ॥ ८ ॥
ऋषभ राज्य नर कुछ ना चाही । प्रभु अनुराग सिवा कुछ नाही ॥ ९ ॥
अपर वस्तु प्रति दृष्टि उठाही । अरे नृपति देखत नहि ताही ॥ १० ॥

दोहा- ऋषभ देव नृप एकदा, भ्रमण करत नर नाथ ।
पहुँचे ब्रह्मावर्त में, निज पुत्रन के साथ ॥२५॥

चौ- ब्रह्मरिषी जहँ रहे अपारा । कर एकत्र सभा मुनि सारा ॥ १ ॥
यद्यपि निज सुत सब गुणवन्ता । तदपि सुतन प्रति इति भगवन्ता ॥ २ ॥
शिक्षा दियउ संत भय हारन । अरु निज देश प्रजा परिपालन ॥ ३ ॥
ऋषभ देव बोले नरराई । सुनौ वचन मम सुत समुदाई ॥ ४ ॥
मृत्यु लोक में नर तनु पाई । विषय भोग में फँसहु न जाई ॥ ५ ॥
अरे भोग तो कूकर सूकर । पावत अहो सदा इस भूपर ॥ ६ ॥
नर तनु पाय दिव्य तप करहू । अन्त करण जासे शुचि रहहू ॥ ७ ॥
पात जीव पुनि ब्रह्मानन्दा । मिले भक्ति तब बाल मुकुन्दा ॥ ८ ॥
महापुरुष सेवा सुख दाता । अन्तकाल ये मोक्ष प्रदाता ॥ ९ ॥
विषयी संग नरक कर द्वारा । कहत शास्त्र सब इसी प्रकारा ॥ १० ॥

दोहा- महापुरुष लक्षण कहूँ, सुनो सभी चित लाय ।
शान्त और सम चित्त जो, क्रोध न निज मन लाय ॥२६॥

चौ- सदाचार युत सब हित चिन्तक । रहे सदा जो प्रभुपदरंजक ॥ १ ॥
तिय सुत सधन देह रुचि नाही । विषयीजन संग दूर तजाही ॥ २ ॥
लौकिक कारज सिर्फ सदा ही । हो प्रवृत्त नर तनु निरवाही ॥ ३ ॥
विषय वस्तु सब संग्रह करहीं । इन्द्रिय प्रीति हेतु मतु भरहि ॥ ४ ॥
बन प्रमत्त इनते कर पापा । पाप पाय तनु होवत तापा ॥ ५ ॥
जब लगि आत्म तत्व नहि जाना । होत पराभव तव अज्ञाना ॥ ६ ॥
जब लगि क्रिया बीच नर फँसहीं । कर्म वासना तब तक रहहीं ॥ ७ ॥
कर्म वासना ते तनु बन्धन । मिले भक्ति नहि करुणा क्रन्दन ॥ ८ ॥
तब लगि तनु का किसी प्रकारा । बन्धन ते नहि हो छुटकारा ॥ ९ ॥
स्वारथ वश होकर अज्ञानी । इन्द्रिया वृत्ति असत्य न जानी ॥ १० ॥

दोहा- तव स्वरूप स्मृति शून्य हो, मैथुन सुख नर पाप ।
सब प्रकार के ताप को, भौगे वह नर आप ॥ २७ ॥

चौ- मिथुनि भाव जो नर तिय जाये । हृदय गंथि वहि पंडित आये ॥ १ ॥
हृदय गंथि यह कठिन महाना । शिथिल होय यह पावत ज्ञाना ॥ २ ॥
मिथुनि भाव नरतिय जब नसहीं । तज घमंड बन्धन सब कटही ॥ ३ ॥
सब प्रकार के बन्ध नसाई । मुक्त संग हरि धाम सिधाई ॥ ४ ॥

ब्रह्म रूप गुरु अरु मय भक्ति । सुख दुख द्वंद्व सहन किये युक्ति ॥ ५ ॥
तप अरु तत्वन की जिज्ञासा । काम्य कर्म त्यागहि दुख आसा ॥ ६ ॥
किये कर्म मम अरपन करहीं । साधू संग कथा मम सुनहीं ॥ ७ ॥
करहिं कीरतन निशि दिन सारे । सब मिल कर मम नाम उचारे ॥ ८ ॥
प्राण इन्द्रियाँ मन को जीते । ब्रह्म शास्त्र अभ्यास न बीते ॥ ९ ॥
सर्वत्र भावना मेरी रखहीं । ब्रह्मचर्य व्रत योग सुरचहीं ॥ १० ॥

दोहा- **साधन अन्य प्रकार से, तजे सदा अभिमान ।**
हिय ग्रंथी को दूर कर, तजहि साधना आन ॥ २८ ॥

चौ- मन अनुराग और मम धामा । चाहत जो नर परम सुकामा ॥ १ ॥
पिता और गुरु नृप वर सोही । पुत्र शिष्य पुरजन प्रिय कोही ॥ २ ॥
कर्म बीच ना कबहुँ लगावे । यही सीख इनको दिलवावे ॥ ३ ॥
काम्य कर्म विच मनुज लगाहीं । जगत कूप सो तेहि गिराहीं ॥ ४ ॥
निज कल्याण हेतु अज्ञानी । चाहत अर्थ दुःख नहि जानी ॥ ५ ॥
यदि अज्ञानी सीख अनुसारी । चलहिं न कर्म लखहिं बड़भारी ॥ ६ ॥
तदपि क्रोध उन पर मत कीजे । बड़े प्रेम समझा उन दीजे ॥ ७ ॥
कबहुँ न कर्म प्रवृत मत कीजे । शिक्षा उन प्रति यहि तुम दीजे ॥ ८ ॥
कल्याण मार्ग कैसे कित होही । जान सकै इसको नहिं ओही ॥ ९ ॥
करहि कामना क्षण सुख हेता । ठानहिं बैर परस्पर केता ॥ १० ॥

दोहा- **भगवत भक्ति मार्ग में, जो नर सबहिं चलाय ।**
ओही सच्चा जगत में, स्वजन बन्धु कहलाय ॥ २९ ॥

चौ- हरी भक्ति उपदेश न दाता । मृत्यु फाँस ते नहीं छुडाता ॥ १ ॥
सो गुरु गुरुन कहावन जोगू । वह स्वजन नहि करो वियोग ॥ २ ॥
वह नहि पिता पिता जगमाँही । निज सुत हरि रत करहि जो नाही ॥ ३ ॥
वह माता माता नहि जानो । इष्टदेव वह इष्ट न मानो ॥ ४ ॥
वह पति पति जग में नहि माना । जो न करहिं हरि भक्ति प्रदाना ॥ ५ ॥
मैं नर तन इच्छा अनुसारी । ग्रहण कियो नाभि नृप द्वारी ॥ ६ ॥
यही हेतु मम पुत्र पियारे । तजो ईर्षा तुम मिल सारे ॥ ७ ॥
चलो ज्येष्ठ भरत अनुसारी । भरत भजन सेवा मम भारी ॥ ८ ॥
स्थावर जंगम प्राणिन जाता । गंधर्वादिक श्रेष्ठ कहाता ॥ ९ ॥
उन विच देव देव विच सारे । दक्षादिक अति श्रेष्ठ पुकारे ॥ १० ॥

दोहा- **दक्षादिक ते शिव वर, शिव ते ब्रह्मजान ।**
ब्रह्मा से मुझको अरे, जानो पुत्र महान ।। ३० ।।

चौ- एक बात मैं और बताऊँ । उसको ध्यान जरा तुम लाऊ ।। १ ।।
मो से विप्र श्रेष्ठ कहलावे । विप्र तुल्य नहि अन्य दिखावे ।। २ ।।
करहि विप्र मुख जो हवनादिक । सो मैं ग्रहण करूँ रसनादिक ।। ३ ।।
अग्नि होम किय मुदित न वैता । ब्राह्मण भोज करावत जैता ।। ४ ।।
वेद रूप मम मूरति धारे । सो ब्राह्मण मोहि बहुत पियारे ।। ५ ।।
शम दम सहनशीलता नाना । सत्य दया तप ज्ञान निधाना ।। ६ ।।
ये गुण आठ रहे जिन विप्रन । उनते बढ़ कर कौन सुपावन ।। ७ ।।
अरे विप्र तो मोसे आही । एक वस्तु भी माँगत नाही ।। ८ ।।
विप्र वंश सम निस्पृह कोई । जगत बीच दीखा नहि मोई ।। ९ ।।
सर्वभूत अरु विप्रन ऊपर । मम सम भाव रखहु सब मिलकर ।। १० ।।

दोहा- **मन वाणी अरु दृष्टि से, राखहिं मो सम भाव ।**
काल पाश को काट के, वह नर मम पुर आव ।। ३१ ।।

चौ- एवं ऋषभ देव भगवाना । दे पुत्रन प्रति शिक्षा नाना ।। १ ।।
परम भक्त ज्येष्ठ सुत जासू । भरत नाम सब जगत प्रकासू ।। २ ।।
सो नृप सिंहासन बिठलाया । भये विरक्त आप नरराया ।। ३ ।।
ऋषभ देव सब कुछ तजि गेहा । राखा कुछ भी नहीं सनेहा ।। ४ ।।
देह मात्र राखी निज पासा । पागल सम तनु नगन प्रकासा ।। ५ ।।
अग्नि होत्र अग्निन निज लीना । ब्रह्मावर्त देश तजदीना ।। ६ ।।
मूक अन्ध जड़ बधिर महाना । कियो भेष अवधूत समाना ।। ७ ।।
इत उत नगर ग्राम पुर आकर । खेट व खर्वट वाट शिविर वर ।। ८ ।।
वृज अरु घोष गिरीवन आश्रम । अनुपथ विचरत महा परिश्रम ।। ९ ।।
करहि तंग जिमि वन गज माँखी । देत दुष्ट दुख फेकत राखी ।। १० ।।

दोहा- **कबहुँ डरावहिं मारहीं, फैंकहिं धूरि अपारि ।**
मूत्र श्लेष्म पाषाण तृण, विष्ठा देवहि डारि ।। ३२ ।।

चौ- अधोवायु त्यागहिं उन आगे । पत्थर मार छोकरे भागे ।। १ ।।
खोटी खरी सुनावत नाना । तदपि ऋषभ कुछ बुरा न माना ।। २ ।।
तजी देह ममता उन सारी । स्थिर मन हो महि विचरन जारी ।। ३ ।।
यद्यपि कर पद कंधे छाती । भुजा लम्ब मुख ग्रीव सुहाती ।। ४ ।।

सुन्दर मुख जिन मधु मुस्काना । नेत्र नवीन सुकमल समाना ॥ ५ ॥
कान कपोल व नाक बराबर । लागत सुखद महा अति सुन्दर ॥ ६ ॥
लखि शोभा मुख ऋषभ अपारा । पुर तिय चित्त काम संचारा ॥ ७ ॥
मुख ऊपर सुन्दर घुँघराली । अलके लटक रही कुछ काली ॥ ८ ॥
लागत रिषभ मानवन कैसे । ग्रह गृहीत नर होवत जैसे ॥ ९ ॥
अजगर वृत्ति तदन्तर धारी । शायित खान व पान प्रचारी ॥ १० ॥

दोहा- **सोते सोते ही करे, मल अरु मूत्र अपार ।**
लिपट गये उस में वह, कीन्हों नहीं विचार ॥ ३३ ॥

चौ- तासु सुगंध पुरीष अपारी । फैली दस योजन तक सारी ॥ १ ॥
एवं गौ मृग काक समाना । खावत पीवत करत शयाना ॥ २ ॥
एवं नाना योग प्रचारी । ऋषभ देव भगवत अवतारी ॥ ३ ॥
तासु दृष्टि निरुपाधिक रूपा । सब प्राणिन निज आत्म स्वरूपा ॥ ४ ॥
उन हरि बीच भेद नहि जाना । सब पुरुषार्थ पूर्ण अवमाना ॥ ५ ॥
सब सिद्धि सेवाहित आई । वैहायसि व मनोजयि पाई ॥ ६ ॥
काय प्रवेश व अन्तर धाना । दूकर गृहिणि आदिक अरु नाना ॥ ७ ॥
अपने आपु वहाँ चलि आही । किन्तु रिषभ मन ते भि न चाही ॥ ८ ॥
बोले नृप यह कहु मुनिराई । निज इच्छा सिद्धि जब आई ॥ ९ ॥
आत्मा राम मुनी जो कोई । सिद्धि न क्लेश उन होई ॥ १० ॥

दोहा- **कर्म बीज जब जल गये, ज्ञानाग्नि से नाथ ।**
सब सिद्धि फिर ऋषभ ने,क्यों न धरी निज साथ ॥ ३४॥

चौ- सत्य कही तुम हे कुरु राई । किन्तु सुधी मन चंचलताई ॥ १ ॥
करे भरोसा कबहुं न ताता । मन विश्वास किये दुख पाता ॥ २ ॥
चित्त मित्रता कबहुँ न जोगू । नासत संचित यह तप योगू ॥ ३ ॥
मन विश्वास कियो शिवशंकर । रूप मोहिनी फँस गये जाकर ॥ ४ ॥
यथा पुंश्चलीपति वधकारी । त्यों मन नासत तप बलधारी ॥ ५ ॥
काम क्रोध मद लोभ अपारा । आवत मन के कारण सारा ॥ ६ ॥
इस प्रकार का यह मन राया । नहिं विश्वास योग्य यह गाया ॥ ७ ॥
अखिल लोकपति वर भगवाना । ऋषभ देव अवधूत समाना ॥ ८ ॥
सकल मुनिन तनु त्याग अपारा । शिक्षा दीन्ही विविध प्रकारा ॥ ९ ॥
बाद कलेवर त्यागन चाहा । भये मौन वे पुनि नर नाहा ॥ १० ॥

दोहा- **अभिन्न रुप देखन लगे, वे हरि को निजगात ।**
लिंग देह अभिमान से, भये मुक्त पुनि तात ॥ ३५ ॥

चौ- अभिमान यद्यपि त्यागा सारा । कुछ अभिमान भास के द्वारा ॥ १ ॥
ऋषभ देह विचरन महि लागी । एक ठौर नहि इत उत भागी ॥ २ ॥
दक्षिण कर्नाटिक कुटकादि । कौङ्क व वैङ्क जो देश अनादि ॥ ३ ॥
अरे दैववश विचरन लागे । गये कुटक गिरि उपवन आगे ॥ ४ ॥
अश्म कवल मुख लेकर सागे । ऋषभ देव नृप विचरन लागे ॥ ५ ॥
उन्मत समान केश निज खोले । होय दिगम्बर इत उत डोले ॥ ६ ॥
वायुवेग कम्पित वन वंशा । उठी उग्र दावानल अंशा ॥ ७ ॥
रिषभ सहेत विपिन सब जारा । प्रकटी पुनि चहुँ ओर अपारा ॥ ८ ॥
होहिं अधर्म वृद्धि कलिकाला । कौङ्कादि देश अरहन नरपाला ॥ ९ ॥
तज निज धर्म कुमति मन छाई । पाखंड पंथ तब वह फैलाई ॥ १० ॥

दोहा- **अरहन के पाखंड से, मोहित हो नर नार ।**
स्नान आचमन शौच सब, त्यागहिं पाप प्रचार ॥ ३६ ॥

चौ- केश उलंञ्छन कर नर नारी । निन्दक ब्राह्मण वेद अपारी ॥ १ ॥
अन्ध प्रणाली पर वे चलहीं । यज्ञ नाथ निन्दा अति करही ॥ २ ॥
स्वेच्छाकृत प्रवृति के द्वारा । पावहिं अंत नरक अधिकार ॥ ३ ॥
रज गुण व्याप्त मनुष्य अपावन । मोक्ष मार्ग सिखावन कारन ॥ ४ ॥
यहि हित भये ऋषभ अवतारी । जिन गुण गावत यों संसारी ॥ ५ ॥
सप्त दीप वति इस महि माँही । पुण्य भूमि भारत सम नाहीं ॥ ६ ॥
बसहिं यहाँ पर जो नर नारी । गावत चरित हरि अवतारी ॥ ७ ॥
प्रियव्रत वंश विमल यश धारी । प्रकटे जासु रिषभ अवतारी ॥ ८ ॥
जनम मरण त्यागहिं संसारी । मोक्ष धर्म जिन कियउ प्रचारी ॥ ९ ॥
ऐसो कौन मुनि जग माँही । ऋषभ देव मारग पर जाही ॥ १० ॥

दोहा- **अखिल वेद अरु लोक सुर, विप्र धेनु हित कार ।**
ऋषभ देव गाथा यह, पालक नासन हार ॥ ३७ ॥

चौ- जो नर यह मंगलमय गाथा । सुनहिं सुनावहि हे नरनाथा ॥ १ ॥
पावहिं वे हरिभक्ति अपारा । सुनकर ऋषभचरित ये सारा ॥ २ ॥
भक्तिसरोवर कर वे स्नाना । तजहिं नृपति जग ताप महाना ॥ ३ ॥
मुक्ति मार्ग तो सुलभ नृपाला । भक्ति मार्ग अति कठिन कराला ॥ ४ ॥

हरिपद भजन करहिं जो कोई । मुक्ति प्रदान करें हरि सोई ॥ ५ ॥
किन्तु न भक्ति सहज हरि दाता । मिलना भक्ति कठिन अतिताता ॥ ६ ॥
विषय भोग करि बेसुध जोई । उन मानव प्रति अति खुश होई ॥ ७ ॥
दियो ज्ञान जिन ऋषभ कृपाला । बन्दौं बांरबार नृपाला ॥ ८ ॥
नृपतिनभिनन्दन की गाथा । गाई तव प्रति कौरव नाथा ॥ ९ ॥
अब मैं चरित भरत का गाऊँ । अति विस्तार सहित बतलाऊँ ॥ १० ॥

दोहा- **ऋषभ देव ने भरत हित, नृप पद कियउ विचार ।**
परम भागवत भरत तव, पित आज्ञा शिरधार ॥ ३८ ॥

चौ- विश्व रूप कन्या गुणधारी । पञ्चजनी जिन नाम पुकारी ॥ १ ॥
कियो ब्याह उस संग नरेशू । निज शिर धर कर पितु आदेशू ॥ २ ॥
जाये पाँच पुत्र गुणवन्ता । निज समान वे नृप बलवन्ता ॥ ३ ॥
सुमति राष्ट्रभृत और सुदरशन । अवरण धूम्रकेतु गुण पावन ॥ ४ ॥
प्रथम देश अजखंड कहाया । भरत नाम पर भारत गाया ॥ ५ ॥
धर्मनिष्ठ निज भरत नृपालू । पिता समान प्रजापरिपालू ॥ ६ ॥
अग्नि होत्र नृपवर किय नाना । पूजेउ यज्ञेश्वर भगवाना ॥ ७ ॥
पुण्यरूप फल जे नृप लीन्हे । वे सब प्रभुपद अरपण कीन्हे ॥ ८ ॥
एवं कर्म विशुद्धि द्वारा । प्रभुपद भक्ति बढ़ी अपारा ॥ ९ ॥
एवं कोटि वर्ष पर्यन्ता । राज्य भोग यह नृपवर अन्ता ॥ १० ॥

दोहा- **निज पुत्रन प्रति संपति, दीन्ही यथा विभाग ।**
निज घर से वह चल दिये, सब सम्पति को त्याग ॥ ३९॥

चौ- हरिक्षेत्र पुलहाश्रम आये । मोह व ममता दूर भगाये ॥ १ ॥
पुलहाश्रम वासिन पर नाना । राखत प्रेम बहुत भगवाना ॥ २ ॥
मिलहिं आज भी वहँ भगवाना । भक्त समीप वे कृपा निधाना ॥ ३ ॥
शालिग्राम शिला से पूरन । नदी गंडकी जहाँ सुपावन ॥ ४ ॥
करत रिषिन आश्रम वह पावन । वृक्ष लता युत परम सुहावन ॥ ५ ॥
आश्रम बीच अनेक प्रकारा । कन्द मूल अरु फल उपहारा ॥ ६ ॥
पुष्प अनेक नीर अरु तुलसी । करते हरिपद पूजन हुलसी ॥ ७ ॥
पूजन कीन्ही इमि प्रकारा । भक्तियोग ते भरत अपारा ॥ ८ ॥
शिथिल हृदय पुनि ब्रह्मानन्दा । भये मग्न अति परमानन्दा ॥ ९ ॥
प्रेम युक्त नयन भरि बारी । अब पूजन भी सभी बिसारी ॥ १० ॥

दोहा- धृत भगवत व्रत नृप इमि, चर्म कृष्णमृग धार ।
करहिं स्नान त्रय काल वे, ममता सभी विसार ॥ ४० ॥

चौ- धूम्रवर्ण युत जटा कलापा । अद्रि नीर सह वक्र वियापा ॥ १ ॥
रोचमान नृप भरत अपारी । रवि संबंधिनि ऋचा उचारी ॥ २ ॥
उदित सूर्य मंडल विच राया । ध्यान सुपुरुष हिरण्मय लाया ॥ ३ ॥
बोले वचन भरत यह भानू । सकल करम फलप्रद यहि जानू ॥ ४ ॥
जगदुत्पत्ति स्थिति संहारा । कर प्रकाश महि मंडल सारा ॥ ५ ॥
नाशत पापपहार हमारे । चले शरण उनकी हम सारे ॥ ६ ॥
महानदी पर भरत नृपला । एक बार गय परम कृपाला ॥ ७ ॥
स्नान शौच कीन्हा वहँ राजा । बैठे आसन पर जप काजा ॥ ८ ॥
प्रहर एक तक सरिता तीरा । प्रण व जाप कीन्हो नृप धीरा ॥ ९ ॥
गर्भवती हरिणी इक प्यासी । आई नीर समीप उदासी ॥ १० ॥

दोहा- जल पीने जब वह लगी, कीन्ही सिंह दहाड़ ।
भागी जल को छोड़ कर, चढ़ नहिं सकी पहाड़ ॥ ४१ ॥

चौ- दुर्गम गिरि इत उत बनराई । एक तरफ सरिता भयदाई ॥ १ ॥
तीन ओर देखा निज काला । तब छलांग मारी मृगबाला ॥ २ ॥
गिरी कूद सरिता तट दूसर । मृगबाला वहँ तजा कलेवर ॥ ३ ॥
उडुयन काल योनि ते निरगत । गर्भ प्रवाह बीच लखि जावत ॥ ४ ॥
हरिण बाल बहता नृप देखा । मृतक मात इति मान विशेषा ॥ ५ ॥
कीन्ही कृपा तदा नरपाला । निज आश्रम लाये मृग बाला ॥ ६ ॥
ममता भरत तासु अतिजाता । पालहिं निजसुत सम मृग गाता ॥ ७ ॥
पालहि पोषहि चुम्बन करही । शनै शनै हरि पूजन तजहीं ॥ ८ ॥
करत भरत निज चित्त अपारा । हरिण कुणक यह दीन विचारा ॥ ९ ॥
हरि रथ पद परिभ्रमण अपारी । पहुँचावा यह शरण हमारी ॥ १० ॥

दोहा- मात पिता सम मानत, मोही यह मृग बाल ।
करूँ नहीं इस पालना, आवहिं इसका काल ॥ ४२ ॥

चौ- आर्य साधु जे शान्त स्वभावा । करहिं दीन रक्षा दुख पावा ॥ १ ॥
शरणागत रक्षा हेतु अपारी । स्वारथ निज त्यागहि वे भारी ॥ २ ॥
प्रेम बद्ध मृगसुत सहराया । खावत पीवत वहि मृग भाया ॥ ३ ॥
कुषा पुष्प समिद्धा हित जावै । किन्तु भरत रुचि मृग पर आवै ॥ ४ ॥

कहीं शालावृक वृक न सतावे । यही सोग मृग वन ले जावै ॥ ५ ॥
मार्ग बीच वह कहिं रुक जावे । तुरत भरत तेहि स्कंध उठावै ॥ ६ ॥
कोमल तृण ले कबहुँ खिलावे । कबहुँ निज गोदी बिठलावै ॥ ७ ॥
लालन पालन इति प्रकारा । कियो भरत मन हर्ष अपारा ॥ ८ ॥
करत भरत जब पूजन हरि की । आवत स्मृति जब उस मृग शिशु की ॥ ९ ॥
बीच बीच उठकर नरपाला । देख मुदित होवत मृगबाला ॥ १० ॥

दोहा- **अरे वत्स तेरा सदा, भला करे भगवान ।**
खुश होकर मृग शिशु प्रति, देवत आशिष आन ॥ ४३ ॥

चौ- एवं मृग पर प्रेम अपारा । राखत वे नृप भरत उदारा ॥ १ ॥
कई दिवस बीते उपरंता । भयो प्रौढ़ मृग भज्यो तुरंता ॥ २ ॥
हरिण वियोग तदा नरपाला । विह्वल हृदय भयउ तेहि काला ॥ ३ ॥
अति संताप मोह मन छाई । बोले वचन तदा नर राई ॥ ४ ॥
अरे गयो कहँ वह मृग छौना । हेरू जाकर मैं किस कौना ॥ ५ ॥
अरे रहा मैं महा अभागा । क्या अपराध देख तू भागा ॥ ६ ॥
क्यों न लोट यहाँ पर आवे । विपिन बीच बधिक बहु आवे ॥ ७ ॥
कहीं तोहिं नहि जाल फँसा वे । वहाँ भेड़िया ना खाजावे ॥ ८ ॥
शाला वृक अरु सूकर नाना । जंगल बीचे व्याघ्र महाना ॥ ९ ॥
कहिं न तोहिं वे चटकर जावे । फिर तू पाछे अति पछतावे ॥ १० ॥

दोहा- **अरे सूर्य का अस्त है, अब तो जल्दी आव ।**
हरित दोब मम पास की, आकर के तू खाव ॥ ४४ ॥

चौ- हरिण कुमार यहाँ पर आऊ । शिशुक्रीड़ा मोहीं दिखलाऊ ॥ १ ॥
मृदू सींग मम तनु खुजलाऊ । हे मृग शावक देर न लाउ ॥ २ ॥
अरे दर्भ ऊपर हवि स्थापित । करत दाँत ते जब तू दूषित ॥ ३ ॥
जब मैं देता डाँट महाना । खड़ा रहे तू चित्र समाना ॥ ४ ॥
कियो विलाप महा दुख पाये । कुटी त्याग फिर बाहर आये ॥ ५ ॥
मृग खुर अंकित मही विलोकी । बोले वचन तदा नृप शौकी ॥ ६ ॥
अरे भूमि यह क्या तप कीन्हा । दीखे इस पर मृग खुर चिन्हा ॥ ७ ॥
जिस वियोग में रहा दुखारी । दिखलावत खुर न्यास प्रकारी ॥ ८ ॥
उदित चन्द्रमा बीच नृपाला । देखा मृग जब काला काला ॥ ९ ॥
अरे चन्द्रमा यह मृग मेरा । किसी प्रकार नहीं यह तेरा ॥ १० ॥

दोहा- **एक बात्त यह तो बता, अरे चन्द्रमा मोय ।**
तुम करुणा वश पालते, मृग शावक खुश होय ॥ ४५ ॥

चौ- मृग वियोग ज्वलित मम गाता । क्यों न विधू अमृत बरसाता ॥ १ ॥
एवं अघट मनोरथ राया । व्याकुल हृदय बहुत घबराया ॥ २ ॥
भाग्य कर्मवश हरि आराधन । त्यागे योग हवन अरु पूजन ॥ ३ ॥
प्रारब्ध यथारथ मृग तनु धारी । आयो नृप समीप सुख हारी ॥ ४ ॥
अन्य जाति सह नृप रिषिकेतू । आसत भये भरत यही हेतू ॥ ५ ॥
पालन पोषण लाड़ दुलारा । आत्म स्वरूप तजा नृप सारा ॥ ६ ॥
यथा आखु गृह कुंडलि काला । त्यों नृप शिर पर काल कराला ॥ ७ ॥
जासु निवारण अति कठिनाई । आवा भरत काल दुखदाई ॥ ८ ॥
मरत पिता जिमि पुत्र समीपा । चिन्ता करत पुत्र अवनीपा ॥ ९ ॥
देख समीप भरत मृग छौना । मृग बिच आवेशित मन बौना ॥ १० ॥

दोहा- **मानव तनु तज नृपवर, पायउ हिरण शरीर ।**
प्रथम जन्म की याद सब, बनी रही आखीर ॥ ४६ ॥

चौ- भगवत आराधन ते राया । पूर्व स्मृति नहीं नृपति भुलाया ॥ १ ॥
कारण मृग वपु का मन जानी । दुखी भरत अति भई गलानी ॥ २ ॥
अहो कुरंग संग कर भारी । योग भृष्ट मैं भयो अपारी ॥ ३ ॥
इति वैराग्य प्राप्त कर राई । मृगी गात उन वही तजाई ॥ ४ ॥
कालंजर गिरि तजकर राया । रिषि पुलस्त्य आश्रम पर आया ॥ ५ ॥
करहिं प्रतीक्षा अब निज कालू । संग भीत एकान्त नृपालू ॥ ६ ॥
शुष्कपर्ण खा समय बिताया । अंतकाल जब निकट दिखाया ॥ ७ ॥
गंगनीर बिच जाकर राया । मृग शरीर वह नृपति तजाया ॥ ८ ॥
कह शुकदेव सुनौ कुरुराई । गौत्र अंगीरा इक द्विज राई ॥ ९ ॥
शम दम तप स्वाध्याय व त्यागी । विद्या विनय तोष अनुरागी ॥ १० ॥

दोहा- **क्षमा और वेदाध्ययन,आत्म ज्ञान गुणवान ।**
अनसूया आदिक सभी, द्विज बिच रहे महान ॥ ४७ ॥

चौ- ज्येष्ठ नारि ते आत्म समाना । भये पुत्र अति नव गुणवाना ॥ १ ॥
द्विज की रही कनिष्ठा नारी । जाये सुत कन्या यक लारी ॥ २ ॥
इन विध भये पुरुष के रुपा । वैष्णव परम भरत नर भूपा ॥ ३ ॥
मृग शरीर तज कर यहँ आये । पूरव स्मृति अब भी न भुलाये ॥ ४ ॥

यद्यपि विप्र जनम उन धारा । तदपि संग ते भीत अपारा ॥ ५ ॥
भगवत चरण कमल मन धरही । जड़ अरु अंध बधिर सम रहहीं ॥ ६ ॥
पिता भरत उपनयन कराया । संध्या वन्दन सभी सिखाया ॥ ७ ॥
यम अरु नियम सिखाये सारे । शौच आचमन न्यारे न्यारे ॥ ८ ॥
पिता भरत प्रति सीख अपारी । किन्तु भरत नहीं लगे पियारी ॥ ९ ॥
वेद पठावन क़ियो विचारा । किन्तू निष्फल सभी प्रकारा ॥ १० ॥

दोहा- **प्रणव सहित व्याहृति त्रय, गायत्री भी ठीक ।**
मास चार तक भी नहीं, पढ़ सकते वह नीक ॥ ४८ ॥

चौ- हीन मनोरथ पिता भरत के । भये एक दिन ग्रसित काल के ॥ १ ॥
भरत मात भी अरे नृपालू । भई एक दिन काल हवालू ॥ २ ॥
मात पिता से भई जुदाई । रहे भरत के जो नव भाई ॥ ३ ॥
भरत प्रभाव नहीं उन जाना । निज मन जड़सम वे इन माना ॥ ४ ॥
जड़सम जान इन्हें नव भाई । शिक्षा हेत न कियो उपाई ॥ ५ ॥
खोटे ख़ोटे वचन उचारे । तदपि बुरा यह नहीं विचारे ॥ ६ ॥
कोइ कहे यह पागल आवा । कोई इन्हें नर पशू बतावा ॥ ७ ॥
जिस प्रकार भाषत नरनारी । यह भी उनको त्योहीं पुकारी ॥ ८ ॥
समय पाय जो भी मिल जावे । खाकर उसको दिवस बितावे ॥ ९ ॥
सुखदुख अउर मानअपमाना । सब कुछ तजे भरत अभिमाना ॥ १० ॥

दोहा- **खंड वस्त्र वेष्टित कटि, शीत व ऊष्ण व वात ।**
वर्षा आदिक सब सहे, वृषभ अनावृत गात ॥ ४९ ॥

चौ- अंग सुपुष्ट व संग विहीना । स्नान रहित उपवीत मलीना ॥ १ ॥
ब्रह्मबन्धु सम जानत येहू । मूढ़ मन्दमति करे न स्नेहू ॥ २ ॥
देखा इस प्रकार सब भाई । भेजे खेत बीच द्विजराई ॥ ३ ॥
करें कार्य वहँ मुदित अपारा । किन्तु सुधी नहि किसी प्रकार ॥ ४ ॥
सम अरु विषम खेत नहिं जाना । जो देवे सो खावत खाना ॥ ५ ॥
एक दिवस तस्कर पति कोई । पुत्र कामना वश वह होई ॥ ६ ॥
नर पशु भद्राकालि हित लावा । समय पाय वह तुरत पलावा ॥ ७ ॥
हेरहि अब सब मिल चहुँ ओरा । तदपि मिल्यो नहि वह पशु चौरा ॥ ८ ॥
अर्धरात गइ पशु नहि पावा । हेरत खेत बीच सब आवा ॥ ९ ॥
खेत बीच जडभरत लखाई । भये मुदित सब चोर कसाई ॥ १० ॥

दोहा- रशना से जड़भरत के, बाँधे कर पद दोय ।
बाद चंडिका गेह में, लेगये हर्षित होय ॥ ५० ॥

चौ- बाद दस्यु गण विधि अनुसारी । स्नान कराये मुदित अपारी ॥ १ ॥
वस्त्र व भूषण लेपन माला । तिलक लगाय भरत के भाला ॥ २ ॥
बाद करायउ भोजन पाना । नर पशु पूजन कीन्ह महाना ॥ ३ ॥
बाद चंडिका सन्मुख लाये । आगे ढोल मृदंग बजाये ॥ ४ ॥
तस्करराजपुरोहित आवा । विधिवत पूजन वहँ करवावा ॥ ५ ॥
नर पशु रक्त चंडि खुश हेतू । शिरछेदन हित मंत्र सहेतू ॥ ६ ॥
तीक्ष्ण खड्ग निजकर वह धारी । द्विज पर कियो प्रहार करारी ॥ ७ ॥
दारुण कर्म देख तब माता । ब्राह्मण वध न जोग यह जाता ॥ ८ ॥
इति मन मान चंडिका माई । सहसा तेज पुंज प्रकटाई ॥ ९ ॥
तज प्रतिमा वह बाहर आई । क्रोध रक्त लोचन भयदाई ॥ १० ॥

दोहा- वदन भयानक चंडिका, उससे खड्ग छिनाय ।
पापी जन सब चोर के, काटे सीस गिराय ॥ ५१ ॥

चौ- ऊष्ण रक्त निज गण सहपाना । कियो चंडिका रुप महाना ॥ १ ॥
निज अनुव्रत सह मुदित अपारी । कंदुक सम उन सीस उछारी ॥ २ ॥
करने लागी नृत्य अपारा । भृकुटि कुटिल जिन नयन करारा ॥ ३ ॥
महापुरुष पर किय अपराधा । पावत नृप वह नर अतिबाधा ॥ ४ ॥
आश्रित विष्णु चरण जो होई । कौन मार सकता उस कोई ॥ ५ ॥
सुनौ परीक्षित चित्त लगाई । सिंधु देश पति रहुगण राई ॥ ६ ॥
तत्व ज्ञान सीखन वह जावत । कपिलाश्रम ऊपर नृप आवत ॥ ७ ॥
इक्षुमती सरिता तट आवा । शिविका वाहक एक थकावा ॥ ८ ॥
शिविका वहन काज नर खोजत । पहुँचे शिविका वाहक इत उत ॥ ९ ॥
गये जहाँ जडभरत दयाला । बनकर बैठे खेत रुखाला ॥ १० ॥

दोहा - देखा इन तनु पीव अति, वृष खर सम यह भार ।
वहन जोग्य समर्थ लखि, ले आये नृप द्वार ॥ ५२ ॥

चौ- हठ पूर्वक ले आये ये ही । आन लगाये शिविका तेही ॥ १ ॥
जब द्विज शिविका बीच लगाये । चले भूमि लखि पैर रखाये ॥ २ ॥
इत उत शिविका जब वह डोले । देख विषमता रहुगण बोले ॥ ३ ॥
चालहु ठीक प्रकार कहारू । विषम यान यह केन प्रकारु ॥ ४ ॥

नृपति वचन सुन कहे कहारा । नाथ चलहिं हम श्रेष्ठ प्रकारा ॥ ५ ॥
किन्तू नूतन नर यह आया । सो ने ठीक चालत नर राया ॥ ६ ॥
हम नहि इस सह ठीक प्रकारा । चलहिं नाथ नहि दोष हमारा ॥ ७ ॥
सुनै वचन नृप सभी कहारू । संग दोष लखि भली प्रकारु ॥ ८ ॥
कर उपहास रहूगण राया । भरत हेतु इति वचन सुनाया ॥ ९ ॥
सुनता वचन अरे तू जाता । मृतक भयो क्या जीवित गाता ॥ १० ॥

दोहा- **सुनता नाहीं तू वचन, जीवित मृतक समान ।**
दीर्घ मार्ग चलकर यथा, आयउ श्रान्त महान ॥ ५३ ॥

चौ- ना अति स्थूल न नहीं जवाना । वक्र उक्ति उपहासित नाना ॥ १ ॥
तदपि पूर्ववत् भरत दयाला । शिविका स्कंध वहत नरपाला ॥ २ ॥
बाद विषम जब शिविका भयऊ । रहुगण कुपित वचन पुनि कहऊ ॥ ३ ॥
अरे मूर्ख क्या तोर न काना । क्या तू जीवित मृतक समाना ॥ ४ ॥
सुनता नाहीं वचन परमाना । उल्टा करत मोर अपमाना ॥ ५ ॥
पापिन हेतु यथा यम होही । तथा दंड मैं देवहुँ तोही ॥ ६ ॥
मैं स्वामी तू प्रजा कहावै । तदपि अनादर करता जावे ॥ ७ ॥
किये तिरस्कृत नृपति महाना । एवं भरत वचन सुनकाना ॥ ८ ॥
तदपि योग विद द्विज गुणवाना । नृपति कथन उन बुरा न माना ॥ ९ ॥
बोले नृप प्रति भरत दयालू । कहा वचन सब सत्य नृपालू ॥ १० ॥

दोहा- **भार लगे इस देह को, मुझे न कोई पीर ।**
मैं मारग पर ना चलूँ, चलता अरे शरीर ॥ ५४ ॥

चौ- आधि व व्याधि व भूख पिपाशा । स्थौल्य कृशत्व व आश निराशा ॥ १ ॥
कलि इच्छा भय मन्यु बुढापा । निद्रा रति मद कष्ट व तापा ॥ २ ॥
जीवन मरण घमंड शुचाही । होत नृपति तनु मम कुछ नाहीं ॥ ३ ॥
स्वामी आज्ञा लाँघन हेतू । कही बात जो तुम नरकेतू ॥ ४ ॥
यह भी सत्य लखात न ताता । ध्रुव स्वामी सेवक ना जाता ॥ ५ ॥
सेवा स्वामिभाव ध्रुव जाता । तव शासन तब सत्य दिखाता ॥ ६ ॥
जीवन मरण बात कही ताता । तो सब वस्तु विकारी जाता ॥ ७ ॥
नियमित रूप बात दो जानो । आदि व अन्त सभी विच मानो ॥ ८ ॥
तव मम बीच न नृप स्थिरताई । हो परिवर्तन समय विताई ॥ ९ ॥
तुम नृप और प्रजा मैं तेरी । यह सब भेद बुद्धि ने फेरी ॥ १० ॥

दोहा- **स्वामीपन का है नृप, हो तोहे अभिमान ।**
तो किस विध सेवा करूँ, कर आज्ञा परदान ॥ ५५ ॥

चौ- जड उन्मत्त व मत्त समाना । रहुँ निज पद बिच नृपति सुजाना ॥ १ ॥
मो प्रति दंड यदि तू देही । तदपि हाथ तू कुछ नहि लेही ॥ २ ॥
सो सब व्यर्थ परीश्रम तोरा । पिष्ट पेष सम जानउ कोरा ॥ ३ ॥
कहे व्यासनन्दन सुन राई । एवं नृप प्रति वचन सुनाई ॥ ४ ॥
पूर्व समान पालकी ढोवहिं । प्रारब्ध करम भरत निज खोवहिं ॥ ५ ॥
सौवीर सिन्धुपति रहूगण राई । हृदय ग्रन्थि भेदक अधिकाई ॥ ६ ॥
योग ग्रंथ सम्मत द्विज वैना । उतरेव शिविका ते अधनैना ॥ ७ ॥
गहे नरेश तदा द्विज चरना । विगत गर्व वदत इति वचना ॥ ८ ॥
हो निगूढ विचरहु केहि हेतू । दत्त व कपिलादिक मुनि के तू ॥ ९ ॥
इन बिच कौन कहाँ ते आये । द्विज उपवीत स्कंध निज लाये ॥ १० ॥

दोहा- **इन्द्र वज्र शिव शूल यम, दंड व सोम व भानु ।**
अनिल धनद की पाश ते,भय ना खाऊँ कृशानु ॥ ५६ ॥

चौ- किन्तु ब्रह्म कुल कर अपमानू । रहूँ भीत मन सुख नहि मानूँ ॥ १ ॥
यही हेतु पूछहुँ मैं तोही । कवन आप कहो द्विज मोही ॥ २ ॥
सुविग्यान शक्ति छिपाकर गाता । मत्त समा विचरहु तुम ताता ॥ ३ ॥
रहे सर्वथा विषय विहीना । नहिं द्विजवर तुम संग अधीना ॥ ४ ॥
मिली आपकी मोहि न थाहा । सुनकर योग वचन की राहा ॥ ५ ॥
यद्यपि बहुत कहा तुम ताता । नहि संदेह दूर मम जाता ॥ ६ ॥
शरण जोग इस जग बिच जोही । पूछन हेतु कपिल प्रति सोही ॥ ७ ॥
जावहुँ हे द्विज उन मुनि पासा । भई पूर्ण पर यहीं मम आसा ॥ ८ ॥
तुम कहिं नहीं कपिल मुनि केतू । विचरहु लोक निरीक्षण हेतू ॥ ९ ॥
गृह आसक्त विवेक हिना । गति जानत नहि योग अधीना ॥ १० ॥

दोहा- **युद्धादिक करमन विषै, मेहनत होत महान ।**
इस कारण तुम से कहूँ,करके ये अनुमान ॥ ५७ ॥

चो- चले पंथ ढोयउ द्विज भारा । पायउ श्रम तुम अवश्य अपारा ॥ १ ॥
श्रम अरु क्लेश जरा नहि पाया । कहे वचन जो तुम द्विज राया ॥ २ ॥
ये कुछ नाँहि समझ मोहि आवा । दूसर वचन एक तुम गावा ॥ ३ ॥
स्वामी सेवक भाव सुनाया । यह व्यवहार भाव बतलाया ॥ ४ ॥

सो व्यवहार प्रमाणस माना । असत्य नाँहि सब सत्य समाना ॥ ५ ॥
असत कुंभ ते जल यदि लाहीं । मिथ्या होवत सत्य लखाहीं ॥ ६ ॥
देह धर्म का कोई प्रभावा । आत्मा ऊपर कहीं बतावा ॥ ७ ॥
यह भी नहीं समझ कुछ आई । सुनहु बात मम हे द्विजराई ॥ ८ ॥
अगनि ताप ते जिमि बटलोही । होवत ऊष्ण बाद जल सोही ॥ ९ ॥
ऊष्ण नीर जिमि तंडुल सीजत । धर्म उपाधि आत्म इमि भीजत ॥ १० ॥

दोहा- **दंड आदि की व्यर्थता, कही आप द्विज राय ।**
इसका भी उत्तर यही, सुनहु जरा चित्त लाय ॥ ५८ ॥

चौ- अच्युत सेवक जो नृप होही । दर्प न शासन पालन होही ॥ १ ॥
राज्याभिमान ते हे द्विज तेरी । कीन्ह अवज्ञा आजु घनेरी ॥ २ ॥
सत अपमान रूप अधकारी । मोपर कृपा करहु द्विज भारी ॥ ३ ॥
यदपि विकार न तव तन हो ही । निन्दा मान न व्यापत तोही ॥ ४ ॥
तदपि संत अपमान अपारी । पात दुःख इस जग बड भारी ॥ ५ ॥
साधु अवज्ञा जो नर करहीं । शंभु समान तदपि वह नसहीं ॥ ६ ॥
रहुगण वचन सुनै इति काना ॥ बोले वचन भरत गुणवाना ॥ ७ ॥
नहिं परमार्थ तत्व तुम जाना । तर्क वितर्क वदत मन माना ॥ ८ ॥
मानहुँ तोहि न ज्ञानि समाना । लोकाचार सत्य तुम माना ॥ ९ ॥
अरे विचारवान् नर मन ते । तव वच सत्य कदापि न गिनते ॥ १० ॥

दोहा- **केवल शास्त्र विचार ते, यदि तुम चाहत राउ ।**
निर्णय होवत तत्व का, तो यह संभव नाउँ ॥ ५९ ॥(क)

दोहा- **वेद वचन भी अधिकतर, गृहस्थ जनोचित कर्म ।**
रागद्वेष आदिक रहित, नहीं बतावत धर्म ॥ ५९ ॥(ख)

चौ- जब लगि मानव चित्त गुणाश्रय । तब लगि कर्म शुभाश्रम धारय ॥ १ ॥
इन्द्रिय भूत वे दुख मय राया । विषयासत गुण प्रेरित माया ॥ २ ॥
षोडश कला बीच मन भारी । भिन्न भिन्न तनु करत प्रचारी ॥ ३ ॥
उत्तम मध्यम अरु अधमाई । करत जीव की यही मन राई ॥ ४ ॥
यह माया मय मन संसारी । करत प्रकाश सदा व्यवहारी ॥ ५ ॥
गुण अनुरक्त जन्तु मन योंही । कारण व्यसन बनहिं यह सोही ॥ ६ ॥
विषय विहीन जीव जब जाता । मोक्ष शान्ति मय तब वह पाता ॥ ७ ॥
यथा दीप खावत घृत बाती । त्यागें शिखा धूममय ताती ॥ ८ ॥

घृत बाती जब होत नसाही । निज स्वरूप विच वह मिल जाही ॥ ९ ॥
त्यों गुण कर्म बीच लवलीना । यह मन वृत्ति अनेक अधीना ॥ १० ॥

दोहा- **फँसा रहे जब वृत्ति में, भोगे कष्ट नवीन ।**
मुक्त होत जब वृत्ति ते, हो निज तत्व विलीन ॥ ६० ॥

चौ- कर्म ज्ञान दश इन्द्रिय जाता । अहंकार एकदाश ताता ॥ १ ॥
ये मन वृत्ति जगत नरवीरा । कर्म पंच तन्मात्र शरीरा ॥ २ ॥
आधार भूत एकादश सारे । ये सब मन के विषय प्रकारे ॥ ३ ॥
ज्ञानेन्द्रिय पंच विषय गंधादिक । कर्मेन्द्रिय पंच विषय भोगादिक ॥ ४ ॥
इन सबका आश्रम मन माना । भेद विकार अनेक प्रमाना ॥ ५ ॥
यह क्षेत्रज्ञ भिन्न नहि राई । क्षेत्रज्ञ किन्तु इन ते अलगाई ॥ ६ ॥
जीव उपाधि अरे यह राया । इसका कारण जानहु माया ॥ ७ ॥
सपने जागृत हो प्रकटाई । सुप्ति बीच यह सब छिपजाई ॥ ८ ॥
सुप्ति बीच यह ईश्वर राया । लखत विभूति बीच निज काया ॥ ९ ॥
क्षेत्रज्ञ रूप सुनहु तुम राया । ईश्वर जीव भेद दो गाया ॥ १० ॥

दोहा- **स्वयं प्रकाश क्षेत्रज्ञ यह, आत्मा पुरुष पुरान ।**
जग कारण परिपूर्ण विभु,वासुदेव भगवान ॥ ६१ ॥

चौ- प्राण रूप बन कर जिमिवाता । स्थावर जंगम बीच सिधाता ॥ १ ॥
क्षेत्रज्ञ तथा जग करहिं प्रवेशा । आत्म स्वरूप से सुनहु नरेशा ॥ २ ॥
जब लगि जन्तु त्याग कर माया । आत्म तत्व ना जानत राया ॥ ३ ॥
तब लगि जगत बीच भटकाई । लोभ व राग रोग अटकाई ॥ ४ ॥
आत्म उपाधि भेद जग तापा । अरे गेह यह कृत् संतापा ॥ ५ ॥
जब लगि जीव तत्व ना जाने । तब लगि कष्ट पात मन माने ॥ ६ ॥
यही हेतु हे रहुगण राऊ । आत्म घाति मन शत्रु नसाऊ ॥ ७ ॥
कृपा प्राप्त कर गुरु हरि राऊ । सर्व उपाधि तुरन्त नसाऊ ॥ ८ ॥
भरत वचन सुन रहूगण राई । बोले वच निज सीस झुकाई ॥ ९ ॥
कारण विग्रह हे अवधूता । अलखित विप्र स्वरूप प्रसूता ॥ १० ॥

दोहा- **जिमि जग रक्षा के लिये, धरते प्रभु अवतार ।**
त्यों जग के उद्धार हित, धरी देह साकार ॥ ६२ ॥

चौ- मृदु औषधि ज्वर पीडित तैसे । धाम तपित शीतल जल जैसे ॥ १ ॥
त्यों तव वचन पियूष समाना । मैं देहाभिमानि मन माना ॥ २ ॥

अध्यात्मयोग ग्रथित दुर्बोधा। तव भाषण जिमि होय सुबोधा ॥ ३ ॥
वह प्रकार कहो द्विजराई। भिन्न भिन्न कर सब समझाई ॥ ४ ॥
हे योगेश क्रिया फल जाता। वास्तव वह ना सत्य दिखाता ॥ ५ ॥
यह प्रत्यक्ष होत द्विज राया। व्यवहार मूल केवल बतलाया ॥ ६ ॥
यह जो वचन कहे द्विजराई। सुनकर मो मन होत भ्रमाई ॥ ७ ॥
नाथ कथन जो तुम फरमावा। सो कुछ मोर समझ नहिं आवा ॥ ८ ॥
बोले वचन विप्र सुन राया। यह तनु भूमि विकार कहाया ॥ ९ ॥
जब यह पृथ्वी ऊपर चलहीं। नाम भार वाही इस पडहीं ॥ १० ॥

दोहा- **देखो इसके दो चरण, गुल्फ जानु अरु स्कंध।**
सीस जंघ उरू स्थल, ग्रीवादिक अनुबन्ध ॥ ६३ ॥

चौ- शिविका स्कंध काष्टमयि राजा। भू विकार तुम जिस पर साजा ॥ १ ॥
रक्षक सिंधु देश कहलाऊँ। वदत सभा विच जो तुम राउ ॥ २ ॥
सो नहि शोभा देवत तोही। चर अरु अचर लीन महि होही ॥ ३ ॥
अरे भूमि परमाणू रूपा। किये कल्पना ज्योति स्वरूपा ॥ ४ ॥
कृश स्थूलादि द्रव्य सुभावा। सर्व प्रपंचज भेद कहावा ॥ ५ ॥
सब व्यवहार रूप यहि हेतू। मिथ्या जानहु तुम नरकेतू ॥ ६ ॥
जग विच सत्य न ज्ञान समाना। कविवर वासुदेव जिन माना ॥ ७ ॥
अरे ज्ञान तो रहुगण राई। मिलहि न तप अरु वेद पढ़ाई ॥ ८ ॥
मिले ज्ञान सत्संग प्रभावा। ज्ञान प्रभाव भक्ति हरि पावा ॥ ९ ॥
नृपति भरत पूरव मैं भाई। प्रभु आराधन चित्त लगाई ॥ १० ॥

दोहा- **एक समय मृग संग ते, पायो मैं मृग गात।**
किन्तु प्रभू अराधना, वश ना स्मृति नसात ॥ ६४ ॥

चौ- यही हेतु जन संग नृपालू। हो विशंक मन रहूँ निरालू ॥ १ ॥
कर सतसंग मनुज यह जासे। ज्ञान खड्ग सब मोह विनाशे ॥ २ ॥
जन्म मृत्यु संसारी मारग। जावत पार सभी ते फारग ॥ ३ ॥
बोले वचन विप्र सुन राया। हो प्रवेश प्रेरित प्रभु माया ॥ ४ ॥
दुस्तर प्रवृत्ति मार्ग विच राया। जीव समूह हेतु सुख काया ॥ ५ ॥
भव रूपी वन बीच सिधावे। तनिक शान्ति ना भव वन पावै ॥ ६ ॥
वसत चौर षट् जहाँ सदा ही। बल पूर्वक ये सब धन नासहीं ॥ ७ ॥
जब वन बीच ये करहिं पयाना। स्त्री अरु पुत्र सियार समाना ॥ ८ ॥

खींचहि द्रव्य पुरुष का इत उत । अरे मेष पर वृक जिमि झपटत ॥ ९ ॥
घास व लता झाड़ झँकारा । यह भव वन दुर्गम अतिसारा ॥ १० ॥

दोहा- **कहीं डाँस मच्छर यहाँ, चैन न लेने देत ।**
दीखत कहिं गंधर्वपुर, कहिं दीखहि चख प्रेत ॥ ६५ ॥

चौ- नर समूह आ भव वन माँही । इत उत भटकत बहु दुख पाही ॥ १ ॥
भयवश धावत नर समुदाई । चक्रवात उत्थित रज आई ॥ २ ॥
प्राप्त नेत्र ना ककुभ लखाई । शब्द उलूक सुनत भय दाई ॥ ३ ॥
झिल्ली रव सुनकर कहि काना । लागत सो श्रुति शूल समाना ॥ ४ ॥
कबहूँ लागत भूख अपारा । तब निन्दित तरु लेत सहारा ॥ ५ ॥
कबहुँ व्याकुल होत पिपासित । मृग तृष्णा अनु दौर लगावत ॥ ६ ॥
सरिता नीर हीन प्रति धावे । पाय अरण्य अनल दुख पावे ॥ ७ ॥
कहिं धन हरत देख बलवन्ता । करहिं शोच अति मूर्छित अन्ता ॥ ८ ॥
कहिं हाहापुर करहिं प्रवेशा । पात मोद अति अरे नरेशा ॥ ९ ॥
कंटक वेधित पद कहिं राई । चढत शैल ऊपर दुख पाई ॥ १० ॥

दोहा- **कबहुँ अजगर निगलत, किन्तु न जानत तेहि ।**
डसत सर्प द्वारा कबहुँ,परे कूप में देहि ॥ ६६ ॥

चौं- संचय करहिं क्षुद्र रस राई । मक्षिकादि ताडित व्यथिताई ॥ १ ॥
आतप शीत वात बरसाई । रहत समर्थ न करत उपाई ॥ २ ॥
क्रय विक्रय जब करहिं परस्पर । स्वल्प द्रव्य लखि लरहि झपटकर ॥ ३ ॥
कहुँ कहुँ नष्ट द्रव्य जब होहीं । शय्या स्थान हीन दुख जोहीं ॥ ४ ॥
करत याचना तब दुख पाही । किन्तु मनोरथ पूरन नाहीं ॥ ५ ॥
समझत तब वह निज अपमाना । होत श्रमित तब मृतक समाना ॥ ४ ॥
त्यागहिं इत उत मृतहिं प्रवासी । ले निज संग नवीनहिं खासी ॥ ७ ॥
वणिक समूह बढ़हिं वह आगे । देखत पाछे नहीं अभागे ॥ ८ ॥
अरे नृपति इस मारग कोई । जाकर कबहुँ न वापिस होई ॥ ९ ॥
संकट पूर्ण मार्ग हित राया । योग शरण कोई ना आया ॥ १० ॥

दोहा- **यह धरणी मम वदत यों, बाँधि वैर बलवान ।**
समर भूमि में मर मिटे, त्यागा ना अभिमान ॥ ६७ ॥

चौ- किन्तु न जावत विष्णु सुधामा । योग मार्ग सुख देत ललामा ॥ १ ॥

कबहूँ सिंह झुण्ड भयभीता । करत गीध बक संग सुमीता ॥ २ ॥
वंचित तासु वणिक समुदाई । करत प्रवेश हंस कुल आई ॥ ३ ॥
अप्रिय देख शील उन राई । कपि कुल बीचे करत क्रिड़ाई ॥ ४ ॥
जीवन अवधि वहाँ पर भूले । हो मद मत्त संग उन झूले ॥ ५ ॥
कबहूँ बन विच विचरत राई । होत पतन गिरि ग्रहा अघाई ॥ ६ ॥
कहुँ कहुँ गज भय ते भय खाई । वल्लरि कर गहि थिर हो जाई ॥ ७ ॥
माया प्रेरित जो इक बारा । भटकत पथ ना पात ना पारा ॥ ८ ॥
अन्त काल तक भटकत भाई । जानत परम शक्ति ना राई ॥ ९ ॥
सब प्राणिन प्रति मैत्री करहू । न्यस्त दंड हो प्रभुपद भजहू ॥ १० ॥

दोहा- **ज्ञान खड्ग लेकर नृप, जावहु इस पथ पार ।**
भरत वचन यों श्रवण कर, बोले नृपति उदार ॥ ६८ ॥

चौ- सब प्राणिन बीचे द्विज राई । मानव तनु यह श्रेष्ठ कहाई ॥ १ ॥
मानव जनम बीच सुन भाई । संत समागम हो सुखदाई ॥ २ ॥
अन्य जोनि नहि अवसर आवत । नर तनु हेतु सुरादिक तरसत ॥ ३ ॥
संत संग हरि भक्ति पुनीता । नष्ट होत अज्ञान अनीता ॥ ४ ॥
देखा द्विज तव संग प्रभावा । मुहूर्तमात्र अविवेक नसावा ॥ ५ ॥
महापुरुष हे द्विज जग जेते । शिशु अरु युवक योगविद्तेते ॥ ६ ॥
जे अवधूत वेष द्विज चरहीं । वन्दों मैं उनपर सिर धरहीं ॥ ७ ॥
कह शुकदेव भरत गुणवाना । रहुगण प्रति इमि तत्व बखाना ॥ ८ ॥
पुनि नृप वन्दित ते द्विजराई । भ्रमण हेत महि गये सिधाई ॥ ९ ॥
उन सत्संग रहूगण राया । सीखा आत्म तत्व सुखदाया ॥ १० ॥

दोहा- **आत्म तत्व का ज्ञान पा, सिन्धु देश नर राइ ।**
देहातम बुद्धि तजी, भ्रमवश जो हिय छाइ ॥ ६९ ॥

चौ- बोले वचन परीक्षित राया। जग पथ यह जो तुम मुनि गाया ॥ १ ॥
अल्प बुद्धि समझहि यहिं जैसे । स्पष्ट रूप वरणउ मुनि वैसे ॥ २ ॥
कहे व्यास नन्दन सुन राया । यह जो जीव समूह बताया ॥ ३ ॥
हरि माया प्रेरित भव वन में । आवत जीव समूह सघन में ॥ ४ ॥
जग संताप शमन कर राही । भक्ति मार्ग ना पात कदाही ॥ ५ ॥
यह भव वन शमसान समाना । अरे नृपति यह अशुभ महाना ॥ ६ ॥

भव वन बीच बसत षट् चौरा । मन सह इन्द्रिय पंच कठौरा ॥ ७ ॥
यथा पुरुष बहु कष्ट उठाई । करत द्रव्य की अतुल कमाई ॥ ८ ॥
सो धन हरि आराधन कारण । करत न खर्च व करत न भक्षण ॥ ६ ॥
दरसत स्परशन श्रवण व स्वादा । घ्राण व विषय भोग कर ज्यादा ॥ १० ॥

दोहा- **गृहस्थोचित विषयन विषै, इन वृत्तिन के साथ ।**
उस धन को षट् चौर यह, हरत अरे नर नाथ ॥ ७० ॥

चौ- इस भववन वासी परिवारी । भ्रात मीत सुत घर की नारी ॥ १ ॥
कर्म जासु वृक स्यार समाना । धन लौलुप धन हरहिं य नाना ॥ २ ॥
धन लौलुप धन हरहिं य कैसे । रक्षित मेष हरहि वृक जैसे ॥ ३ ॥
प्रति सम्बत्सर खेत किशाना । हाँकत हल श्रम करत महाना ॥ ४ ॥
उगत तदपि अति झाड़ झँकारु । होत खेत वह गहन अपारू ॥ ५ ॥
बीज दग्ध जब करत कृशानू । देखत खेत न झाड़ निसानू ॥ ६ ॥
इसी प्रकार गृहाश्रम राया । कर्म क्षेत्र यह रिषि मुनि गाया ॥ ७ ॥
गेहाश्रम बिच कर्म निकाया । होत उछेद कदापि न राया ॥ ८ ॥
यह घर नृप सुनु बात हमारी । कर्म वासना की सुपिटारी ॥ ६ ॥
जे नर नहीं वासना नासी । ते भव वन ते होनउदासी ॥ १० ॥

दोहा- **गेहाश्रम आसक्त जो, उस नर के धन प्राण ।**
मसक दंश सम नीच जन, हर दे दुःख महान ॥ ७१ ॥

चौ- अंडज शलभ व तस्कर मूषे । धन लोलुष नर का धन चूषे ॥ १ ॥
कबहूँ इस पथ भटकत भटकत । कर्म कामना मोह कलूषित ॥ २ ॥
निज चित दृष्टि दोष व जेहि । समझत मृत्यु लोक सत नेही ॥ ३ ॥
वास्तव पुर गंधर्व समाना । असत होही सत यहि कर माना ॥ ४ ॥
खान पान पुनि तीय प्रसंगा । दुर्गुण बीच फँसावत अंगा ॥ ५ ॥
मिथ्या विषय ओर यह धावत । मृग तृष्णा सम यही कहावत ॥ ६ ॥
कबहूँ दोष स्थान सम्पूर्णा । जावत लेने मनुज सुवर्णा ॥ ७ ॥
यथा शीत आतुर वन माहीं । ज्वलित अनल बेताल लखाहीं ॥ ८ ॥
धावत अनल समझ हर्षावे । मिलहिं न अनल व प्राण नसावे ॥ ६ ॥
वास स्थान जल द्रव्य कमावे । कबहूँ इन बिच चित्त लगावे ॥ १० ॥

दोहा- **नैनन में रज झोंकती, ऐसी तिय की गोद ।**
कबहूँ आकर के मनुज, करता मोद प्रमोद ॥७२॥

चौ- हे रागान्ध तबै तत्काला । तजत सु संतन रीति नृपाला ॥ १ ॥
लाक्षिभूत सब सुरन भुलावहिं । धूल रजोगुण नयन भरावहिं ॥ २ ॥
हो देहाभिमान वश राई । नष्ट बुद्धि सब ज्ञान नसाई ॥ ३ ॥
विषयन प्रति धावत वह कैसे । मृग तृष्णा अनुमृग वन जैसे ॥ ४ ॥
करत राज कुल कहिं अपमाना । देत शत्रु कुल कहिं दुख नाना ॥ ५ ॥
रव उलूक झिल्ली समराई । सो श्रुति मूल हृदय व्यथिताई ॥ ६ ॥
कहीं कंटकी वृक्ष लतादिक । गरल कूप सम जीव मृतादिक ॥ ७ ॥
धावत इन प्रति मानव कबहूँ । असत संग वञ्चित मति जबहूँ ॥ ८ ॥
पतन अजल नदि गर्त समाना । करत दुखद छल ओर पयाना ॥ ९ ॥
कबहुँ न अन्न मिलहिं जब राई । बाधत पिता पुत्र प्रति जाई ॥ १० ॥

दोहा- **कबहूँ दावानल सम, पाकर घर नर राय ।**
शोकाग्नि से दग्ध हो, मन विरक्ति अतिछाय ॥ ७३ ॥

चौ- कबहूँ काल समान भयंकर । नृप कुल रूपी आय निशाचर ॥ १ ॥
हरत प्राण रूपी धन माया । होत मृतक सम अति घबराया ॥ २ ॥
कबहूँ पाप पदारथ इच्छित । असत पैतृधन सत कर दरसित ॥ ३ ॥
उन सहवास सुस्वप्न समाना । करत क्षणिक सुख अनुभव नाना ॥ ४ ॥
गेहाश्रम जा करत कमाई । अति विस्तृत सो गिरी चढ़ाई ॥ ५ ॥
कंकर कंटकयुत महि कोई । जावत उस जन सम दुख होई ॥ ६ ॥
उदरानल ते होत अधीरा । बिगडत लखि परिवारिक पीरा ॥ ७ ॥
निद्रा रूपी अजगर डसहीं । करे परीश्रम दिन भर थकहीं ॥ ८ ॥
शून्यविपिन काय सम यह सोहीं । रहत न होस इसे तब कोही ॥ ९ ॥
भग्न गर्व जब दुर्जन द्वारा । अन्ध कूप बिच गिरे विचारा ॥ १० ॥

दोहा- **हेरत सब विषयन सुख, परतिय परधन चाह ।**
उस स्वामी वा नृपति कर, ताडित होत अथाह ॥ ७४ ॥

चौ- प्रकृति मार्ग बिच आकर राया । लौकिक वैदिक कर्म बताया ॥ १ ॥
इन कर्मन वश आ जग माँही । किन्तु जगत छुटकारा नाहीं ॥ २ ॥
मुक्त होत यदि किसी प्रकारा । हरत देवदत धन तिय सारा ॥ ३ ॥
देवदत्त ते आकर तेही । हरता विष्णु मित्र सुनते ही ॥ ४ ॥
आधि व दैविक शीत व तापा । होन समर्थ निवारण आपा ॥ ५ ॥
अति दुरन्त चिन्तातुर होही । पाव कष्ट इस भव वन मोही ॥ ६ ॥

क्रय विक्रय मिथ करहीं कबहूँ। काकिणि मात्र हरहिं धन जबहूँ॥ ७ ॥
विश्वास हीन होवत यह तबहीं। उस नर संग वेर अति ठनहीं ॥ ८ ॥
इस पथ सुख दुख राग प्रमादा। भय अभिमान शोक उन्मादा ॥ ६ ॥
ईर्ष्या लोभ मोह अपमाना। आधि व व्याधि आदि दुख नाना ॥ १० ॥

दोहा- **जरा जन्म मृत्यु तथा, विघन अनेक प्रकार।**
आवत इस भव पंथ में, भटकत वारम्वार ॥ ७५ ॥

चौ- सुरमाया रुपी तिय संगा। बाहुपाश आलिंगित अंगा ॥ १ ॥
गत विवेक सुनि तिय सुत वचना। हो आसत आवत यम सदना ॥ २ ॥
कबहूँ काल चक्र भयभीता। करत अनादर पुरुष पुनीता ॥ ३ ॥
क़ंक उलूक व गीध समाना। सेवत पाखंडी सुर नाना ॥ ४ ॥
जब पाखंडी वञ्चित करहीं। ब्रह्मवंश विच आकर बसहीं ॥ ५ ॥
निज प्रकृति वश किन्तु न देही। लागत शील भक्ति प्रिय जेही ॥ ६ ॥
कर्म शून्य तब होय तदन्तर। जावत शूद्रवंश के भीतर ॥ ७ ॥
जासु करम कपि कुल सम जाना। भरण स्वजन तिय सेवा माना ॥ ८ ॥
हो स्वच्छन्द वहँ करे विहारा। होवत मति तब दीन अपारा ॥ ६ ॥
विषय भोग बिच फँसकर देही। भूलत मृत्युकाल बन नेही ॥ १० ॥

दोहा- **लौकिक सुख ही जासुफल, बस उन वृक्ष समान।**
उस घर में ही सुख लखत, कपि कुल भाँति महान ॥७६॥

सोरठा- **धन घर परिजन भ्रात, तिय सुत में आसक्त हो।**
नर निज समय वितात मैथुनादि विषयन विषै ॥१॥

चौ- प्रवृति मार्ग बिच आकर राही। सुख दुख पावत जीव सदा ही ॥ १ ॥
रोग रूप गिरि कंदर फँसहीं। मृत्यु रूप गज से यह डरहीं ॥ २ ॥
कबहूँ शीत वात संतापा। आधिक भौतिक देहिक तापा ॥ ३ ॥
होत न सफल निवारन कारन। लगे वासना और सतावन ॥ ४ ॥
विक्रय क्रय मिथ जब यह करहीं। करहिं कृपणता संचय धनही ॥ ५ ॥
मुदित होत धन संचय देखी। नष्ट होत दुख पात विशेषी ॥ ६ ॥
जब कुछ पास रहे ना गेही। तस्कर वृत्ति करे धन स्नेही ॥ ७ ॥
होत तासु इत उत अपमाना। धनाशक्ति जब बाढत नाना ॥ ८ ॥
वैर भाव पुनि बाढहिं राया। पूर्व वासना वे वश काया ॥ ६ ॥
करत विवाहादिक संबंधा। त्यागहिं पुनि हो स्वारथ अंधा ॥ १० ॥

दोहा- इस प्रकार जग पथ विषै, आवत यह जो जीव ।
क्लेश विघ्न बाधा व्यथित, पावहिं जीव अजीव ॥ ७७ ॥

चौ- मृतक देह को यहिं पर तजहीं । ले नूतन संग आगे बढहीं ॥ १ ॥
करहीं शोक मनुज यह कबहूँ । दुखी देख मूर्छित हो सबहूँ ॥ २ ॥
हो वियोग शंका भयभीता । लरत देख आपत्ति रीता ॥ ३ ॥
रोवत चिल्लावत हरसावे । जात जेल बिच ना हिचकावे ॥ ४ ॥
साधु संत ते वञ्चित रहहीं । संत समागम कबहुँ न करहीं ॥ ५ ॥
इस प्रकार यह जीव अगारी । बढहिं निरन्तर होय अनारी ॥ ६ ॥
किन्तु जहाँ ते यह नर आवा । सो हरि पद वापिस ना पावा ॥ ७ ॥
योग शास्त्र की भी गति नाहीं । हरि पद पंकज बीच सिधाही ॥ ८ ॥
संयतात्मा निवृति परायण । सब विध करहिं जो दंड निवारण ॥ ९ ॥
वे मुनिजनहिं वहाँ पर जाहीं । अन्य जीव भव वन भटकाहीं ॥ १० ॥

दोहा- जिन दश दिग्गज जीतिये, कीन्हे बहुत विधान ।
उन सब राजरिषीन की, वहाँ न गति पहिचान ॥ ७८ ॥

चौ- भूमि हेत जिन किये विरोधा । जावत अन्त नरक दुख बोधा ॥ १ ॥
आवत बाद इसी संसारा । होत नरकत ते जब छुटकारा ॥ २ ॥
एवं स्वर्ग लोक विच जाही । पुण्य क्षीण नर लोक सिधाही ॥ ३ ॥
ऋषभ देव सुत भरत कृपालू । उन पथ पात न कोइ नृपालू ॥ ४ ॥
वैन तेय पथ जिमि ना माखी । करत होड़ ना उन पद खाखी ॥ ५ ॥
मित्र राज्य सुख तिय सुत त्यागी । तरुण होत भी वारन लागी ॥ ६ ॥
तजे पुरीष समाँ सब राया । अन्य हेत जो कठिन बताया ॥ ७ ॥
राज्य पुत्र परिजन धन दारा । नहिं नृप मन इन किये विचारा ॥ ८ ॥
जो हरिपद सेवा अनुरागी । लागत तुच्छ मोच्छ बडभागी ॥ ९ ॥
मृगी देह जब तजी नरेशू । उन्नत स्वर इति वदत प्रजेशू ॥ १० ॥

दोहा- योग यज्ञ विधि धर्मवति, हरि प्रभु जगदाधार ।
प्रकृतीश्वर नारायण, वन्दों वारम्वार ॥७९॥क
राज रिषीश्वर भरत के, पावन गुण अरु कर्म ।
करत प्रशंसा भक्त जन, नृप पति भाषेउ मर्म ॥ ७९॥ख
राज रिषीश्वर भरत का, पावन चरित अपार ।
धन आयुष यश स्वस्तिप्रद, स्वर्ग मोक्ष दातार ॥ ७९ ॥ग

छन्द - **स्वर्ग प्रद पावन चरित यह, जो सुनहि नित नेम से ।**
करत आदर जो सुनावात, दूसरों को प्रेम से ।।
कामनाऐं पूर्ण होवहिं, माँगना कुछ ना परे ।
मनन करहीं जो इसे,भवफन्द के सब दुख हरे ।। १ ।।

चौ- भरत सुपुत्र सुमति नर राया । ऋषभ देव पथ जिन अपनाया ।। १ ।।
यही हेत जब कलजुग आही । बहुत मलेच्छ कपटी नर ताही ।। २ ।।
करहिं कल्पना वेद विरुद्धा । मानहि बौद्ध सुमति अवरुद्धा ।। ३ ।।
सुमति वृद्धसेना ते राया । अरे देवताजित सुत पाया ।। ४ ।।
सुरजित असुरी के सुत राई । देवद्युम्न जिन नाम कहाई ।। ५ ।।
देव घूम्न धेनूमति मोही । परमेष्ठी सुत पाये दोही ।। ६ ।।
नाम सुवर्चलि ललित ललामा । पुत्र प्रतीह जने गुणधामा ।। ७ ।।
प्रतीह वर्चली ते प्रतिहर्ता । पुत्र तीन प्रस्तुत उदगर्ता ।। ८ ।।
प्रतिहर्ता स्तुति अज भूमाना । पुत्र दोय इति वह गुणवाना ।। ९ ।।
ऋषि कुल्या भूमान नृपालू । सुत उदगीथ अतीव दयालू ।। १० ।।

दोहा- **उदगीथ देव कुल्या दोउ, जाये सुत प्रस्ताव ।**
सुनित्सा प्रस्ताव मिल, विभु सुत पाये राव ।। ८० ।।

चौ- रति विभुसुत प्रथुषेण कहाया । प्रथुषेण सुत नक्त बताया ।। १ ।।
गय नृप जो हरि अंश कहावा । द्रुती नक्त मिल दोऊ जावा ।। २ ।।
गय नृप महापुरुष पद पावा । निर अभिमान शुद्ध मति गावा ।। ३ ।।
हरिपद बीच समर्पित देहा । पालन पोषण प्रजा सनेहा ।। ४ ।।
दान व धर्म व त्याग अपारी । कीन्हे भक्ति योग सुखकारी ।। ५ ।।
गावत गाथा एक पुराविथ । गय सब कर्म करहिं को कोविद ।। ६ ।।
कीन्हा दक्ष सुता अभिषेका । भू-पूरे मन काम अनेका ।। ७ ।।
युद्ध बीच अरिशर से पूजित । जासु हेत बलि करत समर्पित ।। ८ ।।
दिये धरम फल द्विज षट् भागा । चालहिं पर भव जो सह लागा ।। ९ ।।
यज्ञ नाथ गय यज्ञ पधारे । भक्ति योग कर नृप फल सारे ।। १० ।।

सोरठा- **स्वीकृत कर भगवान, सन्मुख नृप के तृप्त हो ।**
बोले वचन सुहान, तृप्त भयो तव याग बिच ।।२।।

चौ- तृप्त भये जब दीन दयालू । भये देव नर भी तत्कालू ।। १ ।।
गय के गेह गयन्ती रानी । जाये तीन पुत्र गुणखानी ।। २ ।।

चित्र रथी सुगति अवरोधा । आये नृप घर ये त्रय योधा ॥ ३ ॥
ऊर्णा चित्ररथी गुणवन्ता । सुत सम्राट नाम बलवन्ता ॥ ४ ॥
नाम उत्कला तिय मन भाई । पुत्र मरीची अति सुखदाई ॥ ५ ॥
विन्दुमती व मरीचि राया । विन्दु मान सुत वर यक पाया ॥ ६ ॥
विन्दुमान घर सरधा नारी । मधु सुत जाया बहु बलधारी ॥ ७ ॥
भयो वीरवृत मधुसुमना से । मन्थ प्रमन्थ सुव्रत भोजा से ॥ ८ ॥
सत्या गर्भ मन्यु ते भौवन । भौवन सुत त्वष्टा कुल भूषन ॥ ९ ॥
त्वष्टा वीर्य विलोचनि नारी । विरज पुत्र पाया गुणधारी ॥ १० ॥

दोहा- **विरज विशूचि गर्भ ते, शत सुत भये प्रसूत ।**
इन विच मुखिया शतजित, कन्या एक सुपूत ॥ ८१ ॥

चौ- गावत गाथा एक पुराविद । विरज विषय में सब कवि कोविद ॥ १ ॥
सुर शोभा जिमि हरि से होहीं । त्यों प्रियव्रत कुल यश इन सोही ॥ २ ॥
कहत परीक्षित हे मुनि नन्दन । भाषेउ प्रथम चरित मनु नन्दन ॥ ३ ॥
प्रियव्रत चरित बीच मुनिराई । भू मंडल की कथा सुनाई ॥ ४ ॥
जहँ तक सूरज होत प्रकाशित। विधूतारा सह जहँ तक दरसित ॥ ५ ॥
भगवन् प्रियव्रत रथ पद खाता । सप्त सिन्धु कल्पित किय ताता ॥ ६ ॥
सप्द द्वीप भूमंडल जाता । सो संक्षिप्त सुनायउ ताता ॥ ७ ॥
सब प्रमाण लक्षण मुनि राऊ । भिन्न भिन्न अब मोहि सुनाऊ ॥ ८ ॥
कह शुकदेव सुनहु नर केतू । हरिमाया गुण वरणन हेतू ॥ ९ ॥
मानव यदि सुर आयुष पाहीं । तदपि पार वह पावत नाहीं ॥ १० ॥

सोरठा- **नाम रूप परिमान अरु, सब लक्षण साथ ले ।**
वरणन करहुँ महान, भूमंडल का अब नृप ॥ ३ ॥

चौ - यह जो जम्बू द्वीप हमारा । योजन एक लक्ष विस्तारा ॥ १ ॥
वर्तुल पुष्कर पत्र समाना । क्षार सिंन्धु चहुँ ओर महाना ॥ २ ॥
नन्द वर्ष इस द्वीप मँझारी । योजन विस्तृत नन्द हजारी ॥ ३ ॥
सीमा जासू होत जुदाई । वसु गिरि चारों ओर सुहाई ॥ ४ ॥
मध्य इलावृत सुन्दर वर्षा । कमल कर्णिका सदृश दर्षा ॥ ५ ॥
लख योजन ऊँचा जहँ भाया । कंचन मेरु गिरि स्थित राया ॥ ६ ॥
जो जनु सहस बतीस प्रमाना । विस्तृत मेरु शिखर महाना ॥ ७ ॥
जोजनु सौलह तलहटि माना । तावत भूमी बीच प्रमाना ॥ ८ ॥

जोजनु अस्सी चार हजारी । भूमि ऊपर मेरु प्रचारी ।। ९ ।।
नील श्वेत अरु गिरि श्रृङ्गवाना । इलावृत उत्तर क्रमश बखाना ।। १० ।।

दोहा- **तीनों रम्यक हिरण्मय, कुरु वर्षन सीमान्त ।**
प्राची ते विस्तृत परा, क्षार सिन्धु पर्यन्त ।। ८२ ।।

चौ- अयुत योजनी इन ऊँचाई । जोजनु दोय सहत पसराई ।। १ ।।
एवं याम्य इलावृत राया । निषध व हेमकुट हिम राया ।। २ ।।
हरीवर्ष किं पुरुष व भारत । इन मर्यादा गिरी कहावत ।। ३ ।।
गिरी गंध मादन जो प्राची । भद्राश्व खंड सीमा यह साँची ।। ४ ।।
माल्यवान गिरि पश्चिम शेषा । सीमा केतुमाल प्रदेषा ।। ५ ।।
मेरुमन्दर, कुमुद व मेरु । पार्श्व कुमुद चहुँ ओर सुमेरु ।। ६ ।।
स्तंभ समाँ ये परवत चारी । दस हजार योजन विस्तारी ।। ७ ।।
योजन अयुत रही ऊँचाई । इन चारों गिरि की नरराई ।। ८ ।।
इन परवत पर तरुवर चारी । आम कदम्ब जम्बु वट भारी ।। ९ ।।
एकादश शत जोजनु ऊँचे । शत जोजनु विस्तृत जो नीचे ।। १० ।।

दोहा- **इन अद्रिन पर चार हृद, पय मधु निरमल नीर ।**
इक्षु रस पूरित अरे, सुन पांडव वलवीर ।। ८३ ।। क
योगी अरु उपदेव गण, सेवत इन वरनीर ।
स्वाभाविक ऐश्वर्य अति, पावत सो सुख सीर ।।८३।। ख

चौ- सुर उपवन इन पर वर चारी । सर्व भद्र नन्दन सुखकारी ।। १ ।।
वैभ्राजक व चैत्ररथ राई । सुरतिय मन इन पर ललचाई ।। २ ।।
आवत निज पति संग विहारी । गावत उपसुर जिन यश भारी ।। ३ ।।
गिरि सुमेरु उत्संग महाना । आम्र वृक्ष ते शिखर समाना ।। ४ ।।
स्थूल स्वादु फल जो महिं गिरहीं । तासु गलित रस सरिता बहहीं ।। ५ ।।
तासु नाम अरुणोदा कहहीं । प्राचि इलावृत की महि सीचहीं ।। ६ ।।
उमा सहचरी अति खुश होही । करहिं पान रस सरित सुसोही ।। ७ ।।
उन तनु वात सुगंध अपारी । दश योजन चहुँ ओर प्रसारी ।। ८ ।।
मेरूमन्दर गिरि उत्संगा । जम्बू तरुफल गज सम अंगा ।। ९ ।।
उन रस ते जम्बू नदि निसरत । बहती सो दिशि याम्य इलाव्रत ।। १० ।।

दोहा- **जम्बू सरिता तट नृप, जो माटी हुइ ओर ।**
सो जाम्बूनंद कंचन, भाषत कवि शिव मोर ।। ८४ ।।

चौ- विवुध तिया निज पति सह सारी । कंचन मुकुट सुभूषण धारी ॥ १ ॥
गिरि सुपार्श्व पच्छिम दिशिराई । तरु कदम्ब कोटर गहराई ॥ २ ॥
निसरत जासु पंच मधुधारा । सींचत खंड सो पच्छिम सारा ॥ ३ ॥
इन रस सेवत उन मुख वाता । सो सुगंध शत योजन जाता ॥ ४ ॥
उत्तर कुमुद गिरी उत्संगा । निसरत जो वट तरु वर अंगा ॥ ५ ॥
दधि मधु घृत पय गुड अरु अम्बर । शय्या आसन अन्न व जेवर ॥ ६ ॥
ये सब कामद नद गिरि निसरत । इलावृत उत्तर दिशि सो सींचत ॥ ७ ॥
इन नद नीर प्रजा जन सेवहीं । वली पलित सब संकट टल हीं ॥ ८ ॥
स्वेद गंध अरु मौत बुढ़ापा । शीत ऊष्ण जिन कबहुँ न व्यापा ॥ ९ ॥
अरु कुसुम्भ वैकङ्क कुरंगा । कुरर त्रिकूट व शिशिर पतंगा ॥ १० ॥

दोहा- **शिनीवास रूचक गिरि, निषध कपिल वैडूर्य्य ।**
शंख जारुधि हंस अरु, कालञ्जर गिरिवर्य्य ॥ ८५ ॥

चौ- ऋषभ नाग अरु नारद सारे । स्थापित ये गिरि मेरु किनारे ॥ १ ॥
मेरू परित अष्ट गिरि राची । जठर व देवकूट दिशि प्राची ॥ २ ॥
पवन पारियात्र सुखदाई । दोउ गिरि पश्चिम ककुभ सुहाई ॥ ३ ॥
शिव कैलास व गिरिकर वीरा । ये सुमेरु ते याम्य अखीरा ॥ ४ ॥
मकर और त्रय श्रृंग सुहाया । सो गिरि उत्तर बीच बताया ॥ ५ ॥
इमि सुमेरु वसु गिरि ते वेष्टित । अग्नि समान अतीव सुचमकत ॥ ६ ॥
सीस सुमेरू ऊपर राई । दस हजार योजन चौडाई ॥ ७ ॥
सौवर्णी विधि पुरी सुहाई । नाम शात कौम्भी जसु गाई ॥ ८ ॥
विधिपुर परित जु अति सुखदाई । लोक पाल वसु पुरी सुहाई ॥ ९ ॥
अयुत कोश इन पुरी प्रमाना । निज निज दिशि अनुरूप बखाना ॥ १० ॥

दोहा- **नृपवर नृप वलि यज्ञ में, हरि वामन अवतार ।**
आकर के जब कर दिया, निज पद का विस्तार ॥ ८६ ॥

चौ- पहुचेउ जब पद वाम अकासू । कीन्हा तब नभ अरुण प्रकासू ॥ १ ॥
नख अंगुष्ठ तदा नभ भेदा । अंड कटाह ऊर्ध्व पुनि छेदा ॥ २ ॥
भयो विवर जब अंड कटाहू । निकसेउ नभ ते नीर अथाहू ॥ ३ ॥
हरिपद स्पर्शत सब अघहारा । आवा ध्रुव मंडल अवतारा ॥ ४ ॥
हरिपद.पदम जो धार प्रसूता । भगवत पदी कहहिं जिन संता ॥ ५ ॥
परम भागवत ध्रुव नर नाहू । भगवत भकति योग कर ताहू ॥ ६ ॥

अन्त हृदय निज गदगद होही । धारहि गंगहिं निज शिर सोही ॥ ७ ॥
जान मुनि रिषि तासु प्रभावा । जटा जूट निज धारेउ आवा ॥ ८ ॥
त्यक्त अन्य पुरुषारथ जैसे । धारहिं मोक्ष संत मुनि वैसे ॥ ९ ॥
वेष्टित गंगा कोटि विमानन । करती विधु मल जलप्लावन ॥ १० ॥

दोहा- **उतरी मेरू शिखर पर, आई ब्रह्म अवासु ।**
भई चार धारा पुनि, पृथक पृथक नृप जासु ॥ ८७ ॥

चौ- चक्षू अलक नन्द अरु सीता । भद्रा इति श्रुति धार पुनीता ॥ १ ॥
सीता ब्रह्म सदन ते राई । केशर प्रचल शिखर अध आई ॥ २ ॥
शिखर गंधमादन पर परहीं । पुनि भद्राश्व गंड महि सीचहीं ॥ ३ ॥
एवं सीता सब अघहारी । पूरब सिन्धु बीच सिधारी ॥ ४ ॥
चक्षु ब्रह्म सदन ते आई । शिखर सुमाल्यवान नियराई ॥ ५ ॥
केतुमाल महिखंड बहाई । पाछे पश्चिम सिन्धु सिधाई ॥ ६ ॥
भद्रा ब्रह्म सदन ते आवत । कुमुद नील अद्रि प्रति धावत ॥ ७ ॥
गिरि प्रतिक्रमण अनेकन करही । उत्तर कुरु विच सागर गिरही ॥ ८ ॥
एवं ब्रह्म सदन ते राई । नदी अलकनन्दा सुख दाई ॥ ९ ॥
बहु गिरि कूटन लाँघत आई । भरत खंड महि सींचन धाई ॥ १० ॥

दोहा- **दक्षिण सिन्धु बीच वह, जाकर गई सिधाय ।**
दर्शन स्पर्शन पानते, सब अघ ओघ नसाय ॥८८ ॥

चौ- स्नान पान हित जो नर जावे । पद पद वाजि मेध फल पावे ॥ १ ॥
खंड खंड नद नदी अनेका । कर्म क्षेत्र ही भारत एका ॥ २ ॥
अन्य खंड जो वसु नृप खासा । पुण्य शेष उपभोग अवासा ॥ ३ ॥
भौम स्वर्ग पद ये सब गावे । नाग अयुत बल यह नर पावे ॥ ४ ॥
अयुत वर्ष परमायु राया । त्रेतायुग सम काल बताया ॥ ५ ॥
सुदृढ़ तनु उन वज्र समाना । भोगत भोग अतुल नर नाना ॥ ६ ॥
होत समाप्त भोग जब अन्ता । आयु शेप इक अब्द तुरन्ता ॥ ७ ॥
उन तिय गर्भ करहिं नृप धारन । आश्रम भवन वहाँ गिरि उपवन ॥ ८ ॥
लता वृक्ष उन उपवन सोही । सुषुमा लखि जिन सब मन मोही ॥ ९ ॥
सब रितु फूल व फल जहँ फूले । जिनकर भार लता तरु झूले ॥ १० ॥

दोहा- **निरमल सर सोभित वहँ, कमल सुकुसुम अपार ।**
मस्त गंध ते मुदित हो, भ्रमर करत गुंजार ॥ ८९ ॥

चौ- राजहंस जल मुर्ग अनेका । कारंड व चकवा सारस नेका ॥ १ ॥
देव श्रेष्ठ निज सुन्दरि संगा । करत स्वच्छन्द विहार प्रसंगा ॥ २ ॥
जिन अनुचर गण ले उपहारा । करत प्रशंसा मुदित अपारा ॥ ३ ॥
नन्द खंड विच हरि भगवन्ता । पुरुष अनुग्रह हेत अनन्ता ॥ ४ ॥
भिन्न भिन्न निज मूरति रूपा । रहे विराजित अब भी भूपा ॥ ५ ॥
इलावृत बीच पुरुष ना रहही । जहँ शिव संग शिवा नित बसही ॥ ६ ॥
करत प्रवेश वहाँ पर कोई । नारी वपु पावत नर सोई ॥ ७ ॥
यह सब कथा कहहूँ नृप आगे । जेहि सुन कर संशय तव भागे ॥ ८ ॥
अर्बुद सहस सुसहचरि सहिता । बसत भवानी शिव सह मुदिता ॥ ९ ॥
मूरति संकर्षण हरि चारी । करते स्तुति इति शंभु पुरारी ॥ १० ॥

दोहा- **महापुरुष भगवान हे, हे भजनीय अनन्त ।**
तव पद भक्ताश्रय प्रद, श्रीपति प्रकृति कन्त ॥ ९० ॥

चौ- भक्तन सनमुख दीन दयालू । प्रकटावत निज रूप कृपालू ॥ १ ॥
काटत भव बन्धन उन आही । भक्ति हीन जग बन्धन पाही ॥ २ ॥
अणु मात्र विषयन प्रति जेही । कबहूँ दृष्टि परत ना तेही ॥ ३ ॥
उन प्रभु को जो मानव तजहीं । जग बन्धन कबहूँ ना कटहीं ॥ ४ ॥
कहत अनन्त मुनीजन जेही । सोभित सहस सीस जिन देही ॥ ५ ॥
यह भूमन्डल एकहि फण पर । सरषप सम धारत अखिलेश्वर ॥ ६ ॥
जाये नाभ कमल जिन धाता । जिन ते जन्म भयो मम त्राता ॥ ७ ॥
उन प्रभु कृपा प्राप्त कर भारी । हम सब रचते लोक अपारी ॥ ८ ॥
जिन निर्मित माया जन नाहीं । कबहु न जान सके जग माँही ॥ ९ ॥
विलय व उदय स्वरूप अपारा । करों वन्दना बारम्बारा ॥ १० ॥

दोहा- **भद्राश्व खंड में धरमसुत, भद्रश्रव गुणवान ।**
निज दासन को संग ले, हयग्रीव भगवान ॥ ९१ ॥

चौ- पूजहिं जपहि नाम इति राया । आत्म विशोधन धर्म निकाया ॥ १ ॥
प्रणव रुप जय जय भगवाना । तव लीला प्रभु अद्भुत मानू ॥ २ ॥
बालक वृद्ध व मृतक लखावे । मरघट बीच जलावन जावे ॥ ३ ॥
तदपि स्वयं उनका धन खावत । जीवन आश सदा बनि राखत ॥ ४ ॥
नश्वर जग इति वदत कवीशा । मोहित माया तदपि अहीशा ॥ ५ ॥
नाथ कृत्य तव विस्मय कारी । अज अनादि वन्दों हर वारी ॥ ६ ॥

माया परदा रहित अकर्ता । जगदुत्पत्ति स्थिति लय भर्ता ॥ ७ ॥
ये सब कर्म सत्य प्रभु तोरे । नहि आश्चर्य काहुँ कछु कोरे ॥ ८ ॥
प्रलय काल जब हे प्रभु आवे । असुर तमोगुणि वेद चुरावे ॥ ९ ॥
तब हयग्रीव रूप धर स्वामी । नासत असुर सभी खल कामी ॥ १० ॥

दोहा- **लोक रसातल ते विभो, लाकर चारउँ वेद ।**
दिये विधाता के लिये, सुर मुनि किये अखेद ॥ ९२ ॥

चौ- जयति सत्य संकल्प अपारी । वन्दहि हयग्रीव अवतारी ॥ १ ॥
हरी वर्ष विच नरहरि रूपा । सदा विराजत ज्योति स्वरूपा ॥ २ ॥
प्रहलाद और सह खंड निवासी । भकति योग पूजहिं अविनासी ॥ ३ ॥
जपते सदा मंत्र इति राया । प्रणव रुप जय नरहरि काया ॥ ४ ॥
वज्र दंष्ट्र नख वज्र समाना । छेदहु करम वासना नाना ॥ ५ ॥
ग्रसहु तमोगुण अन्तरयामी । जय अभयद भयहर सब स्वामी ॥ ६ ॥
करहु नृसिंह विश्व कल्याना । नासहिं खल निज कुटिल विधाना ॥ ७ ॥
करें जीव सब का हित चिन्तन । होय प्रवृत्त शुभ पथ विच सब मन ॥ ८ ॥
घर तिय सुवन द्रव्य अरु भ्राता । इन बिच रहहिं न मोहित ताता ॥ ९ ॥
भूलहिं ना हरि नाम प्रसंगा । रहहिं सदा हरि भक्तन संगा ॥ १० ॥

दोहा- **हरि लीलामृत पान कर, जिन भक्तन के संग ।**
मानव मन का मल तजे,बाढे ज्ञान प्रसंग ॥ ९३ ॥ क
ऐसो नर इस जगत में, हमको दीखत नाँह ।
हरि भक्तन का संग तज,करे ओर की चाह ॥ ९३ ॥ ख

चौ- हरी भकति विच होत सनेहा । आवत ज्ञान धरम सुर गेहा ॥ १ ॥
नीर बीच यथा झष काया । त्यों तनु आत्मा हरी समाया ॥ २ ॥
यही हेतु निज गेह तजाई । भजहू नरहरि पद शिर नाई ॥ ३ ॥
करते स्तुति इति मिलकर सारे । आगे सुनु नृप वचन हमारे ॥ ४ ॥
केतुमाल जो खंड सुहाना । कामदेव रूपी भगवाना ॥ ५ ॥
वहाँ प्रजापति सम्वत नामा । उन सुत और सुता मन कामा ॥ ६ ॥
इन सह लक्ष्मी के प्रिय काजा । करत निवास वहाँ वह राजा ॥ ७ ॥
रजनी अउर दिवा अभिमानी । सुर रूपी सुत सुता सयानी ॥ ८ ॥
सो भगवान काम इन हेता । निज वर चितवन हास्य सहेता ॥ ९ ॥
करत मुदित इन हो खुद नन्दा । पूजत यहि इन आनन्द कन्दा ॥ १० ॥

दोहा- प्रणव रूप हृषिकेश हे, कामदेव भगवान ।
अमृतमय अरु छद मय, अन्न मयी गुणखान ।। ६४ ।।
चौ- क्रिया ज्ञान चित अधिपति साँई । षोडश कला सहित बलदाई ।। १ ।।
कान्त सहस अरु ओजस सब मय । वन्दहिं नाथ सभी हम उभय ।। २ ।।
इन्द्रिय ईश्वर सब तिय भोरी । बृत आराधन कर कर तोरी ।। ३ ।।
चाहत लौकिकपति सुरताता । सो सब व्यर्थ परीश्रम जाता ।। ४ ।।
लौकिकपति प्रिय सुत धन देही । किन्तु न रक्षक होवत तेही ।। ५ ।।
पति तो एक ही अभय प्रदाता । तुम सम अन्य नहीं जग जांता ।। ६ ।।
जो तिय मन ते हो निष्कामी । करती पद पूजन तव स्वामी ।। ७ ।।
होत मनोरथ उसके पूरे । फल कामी के अरथ अधूरे ।। ८ ।।
मोही प्रास हेतु शिव धाता । करत घोर तप तदपि न ताता ।। ९ ।।
भक्त बिना मोंहि पावत नाही । सदा मोर मन तव पद आही ।। १० ।।
सोरठा - जान सकत ना कोय, तव लीला लीलामय ।
कर अम्बुज खुश होय, सदा सीस मेरे धरहु ।।४।।
चौ- रम्यक खंड मीन हरिं वासू । वैवस्वत मनु पूजहिं जासु ।। १ ।।
करहीं स्तुति इति मंत्र उचारी । वन्दहु महामीन वपुधारी ।। २ ।।
शिव विधि सुर सह जग निरमाहू । निज बन्धन विच सबहि नचाहू ।। ३ ।।
इन्द्रादिक सुर तोहिं तजाई । करत यतन वे यदि अधिकाई ।। ४ ।।
किन्तू स्थावर जंगम जेते । पालन हेत समर्थ न वेते ।। ५ ।।
प्रलय काल भयो युग अंता । यह महि मो सह रक्षित कंता ।। ६ ।।
वन्दों मत्स्य रूप भगवाना । करते स्तुति इति मनुगुणवाना ।। ७ ।।
खंड हिरण्मय हरि वपु कच्छप । करत प्रार्थना पितर गणाधिप ।। ८ ।।
निज माया ते यह तव रुपा । कियो प्रकाशित ज्योति स्वरूपा ।। ९ ।।
चर अरु अचर जगत के सारे । तुमते कबहुँ न होत नियारे ।। १० ।।
दोहा- नाम रुप गुण भेद ते, कल्पित किये अनेक ।
तत्व दृष्टि से तो प्रभो, रहते हो तुम एक ।। ६५ ।।
चौ- करत अर्यमा इति स्तुति राया । कुरू खंड जो प्रथम बताया ।। १ ।।
करत वास वहँ हरी वराहू । भूदेवी पूजति इति जाहू ।। २ ।।
करत प्रार्थना मुदित अपारी । जय जय महापुरुष असुरारी ।। ३ ।।
जयति यज्ञ पति रूप वराहू । तव स्वरूप कवि जानत नाहू ।। ४ ।।

मायिक आकृति से पर स्वामी । वन्दहिं बारम्बार अकामी ॥ ५ ॥
अयस्कान्त पत्थर कर संगा । चालत इत उत लोह अपंगा ॥ ६ ॥
त्यों माया प्रभु इच्छा जानी । करती रचना वह मन मानी ॥ ७ ॥
जग कारण जय आदि वराहू । तव सामर्थ न जानत काहू ॥ ८ ॥
समर भूमि विच दैत्य पछारी । दंष्ट्रा ऊपर धर असुरारी ॥ ९ ॥
लाये प्रलय उदधि विच जाकर । मौंही लोक रसातल बाहर ॥ १० ॥

दोहा- **अशुभ हरण मंगल करण, वन्दों आदि वराह ।**
करती इति महि प्रार्थना, आगे सुन नर नाह ॥ ९६ ॥

चौ- लक्ष्मण सहित सिया अभिरामा । किन्नर खंड वसहिं श्री रामा ॥ १ ॥
आर्ष्टिषेण संग हनुमाना । करत अराधन मुदित महाना ॥ २ ॥
गावत जो गंधर्व सुहावन । सुनते राम कथा सो पावन ॥ ३ ॥
जपते मारुति मंत्र अशोका । नमो भगवते उत्तम श्लोका ॥ ४ ॥
महापुरुष महिसुर महि त्राता । नमो देव ब्रह्मण्य विधाता ॥ ५ ॥
जयति शील व्रत लोक उपासित । वेदान्त वीच तुम एक प्रकाशित ॥ ६ ॥
मानव वपु धारेउ भगवाना । सो रावण वध हेत न आना ॥ ७ ॥
इस अवतार प्रयोजक येही । मानव प्रति शिक्षा यह देही ॥ ८ ॥
स्त्री संगादिक ते दुख केता । यह सब दरसावन जग हेता ॥ ९ ॥
लीन्हों नाथ आप अवतारा । और न कारन रहे तुम्हारा ॥ १० ॥

दोहा- **योगी जन के हृदय में, करते जो विश्राम ।**
तिय भ्राता कृत दुख पुनि, क्यों व्यापहिं श्री राम ॥९७॥

चौ- जन्म श्रेठ कुल सुन्दर ताई । योनि मति वाणी चतुराई ॥ १ ॥
इन गुण हीन सभी वनवासी । तदपि सखा इनके अविनासी ॥ २ ॥
सुर नर असुर व वानर कोई । रहे भजन रत निशिदिन सोई ॥ ३ ॥
प्रकटे आय हरी नर रूपा । मानत स्वलपहिं अति कर भूपा ॥ ४ ॥
लखी नाथ की अति करुणाई । दिव्यधाम जब गये सिधाई ॥ ५ ॥
उत्तर कौसल वासी सारे । जिन्हें संग ले आप सिधारे ॥ ६ ॥
मानव रूपी हरिवर रामा । नत मस्तक हम करें प्रणामा ॥ ७ ॥
हरि नर नारायण वपु जासू । भरत खंड सो करें निवासू ॥ ८ ॥
संयम शील पुरुष उपकारी । हरि नर नारायण अवतारी ॥ ९ ॥
अव्यक्त रुप ते तप व्रतधारी । प्रलयकाल पर्यन्त अपारी ॥ १० ॥

दोहा- देव रिषि नारद मुनी, प्रजा भारती संग ।
भक्ति भाव से सेवते, पढ़कर मंत्र प्रसंग ॥९८॥

चौ- नमो भगवते उत्तम शीला । निरहंकार व शान्त सुशीला ॥ १ ॥
जो हरि जगदुत्पत्ति कर्त्ता । होकर गर्व न राखत भर्त्ता ॥ २ ॥
रहहिं देह पर भूख तृषाई । बाधा कबहुँ न देवत साई ॥ ३ ॥
हिरण्यगर्भ ब्रह्मा जो गाई । साधन योग यही कुशलाई ॥ ४ ॥
अन्त काल में मानव तेरी । राखत मन में भक्ति घनेरी ॥ ५ ॥
यथा मूर्ख तिय सुत धन लोभी । डरत मोत ते होकर क्षोभी ॥ ६ ॥
गुणि जन को भी इसी प्रकारा । होय देह प्रति कष्ट अपारा ॥ ७ ॥
तो पुनि ज्ञान प्राप्ति का सारा । होत परीश्रम व्यर्थ अपारा ॥ ८ ॥
यही हेतु हमको हरि देहू । भक्ति योग सुख कृपा सनेहू ॥ ९ ॥
भकति योग यदि हम पा जाहीं । माया बन्धन तुरत नसाहीं ॥ १० ॥

दोहा- प्रजा भारती के सहित, नारद ऋषि इस तोर ।
नर नारायण की विनय,करते नृप शिर मौर ॥ ९९ ॥

चौ- भरत खंड गिरि नदी अनेका । सुनहु नृपति तुम चित कर एका ॥ १ ॥
मलय प्रस्थ व मलय महीन्द्रा । मैनाक त्रिकूट व रिषभ गिरीन्द्रा ॥ २ ॥
ऋष्यमूक श्री शैल सुहाई । सह्य देवगिरि वेंकट राई ॥ ३ ॥
ककुभ नील गोकामुख गाया । चित्रकूट गोवर्धन भाया ॥ ४ ॥
वारिधार गिरिविन्ध्य हिमाचल । रैवत पारियात्र कुटकाचल ॥ ५ ॥
ऋक्ष व द्रोण व शुक्ति माना । इन्द्रकील गिरिकाम बखाना ॥ ६ ॥
कौलकादि गिरिवर्य सुहाये । अन्य सहस शत शैल बताये ॥ ७ ॥
जिन नितम्ब तट परम सुहावन । निसरत सरित व नद अतिपावन ॥ ८ ॥
प्रजाभारती जिन नदि नीरा । पीकर करती पूत शरीरा ॥ ९ ॥
भरत खंड बिच सरित अनेकी । ये सब पवित एकते एकी ॥ १० ॥

दोहा- चन्द्रवशा वैहायस,अव टोदा कृतमाल ।
कृष्णा कावेरी महा, चर्मण्वती विशाल ॥ १०० ॥

छन्द- ताम्रपर्णी नर्मदा, गोदावरी सुरसा कही ।
कौशिकी यमुना व सरयू, चन्द्रभागा बह रही ॥
सिन्धु सुरसा और शतद्रू ,अन्धशोण व गोमती ।
रोधश्वती विश्वा असिक्नि, कौशिकी व सरस्वती ॥१॥

मन्दाकिनी भवहारिणी तनु, ताप हरती तापती ।
भीमरथि अरु तुंगभद्रा, औत्रिसाम दृषद्वती ॥
वैणी व वेण्या और रेवा, सरित ऋषिकुल्या सही ।
सप्तवति सरिता सुसोमा, वेद स्मृति भी चल रही ॥२॥

दोहा- **नृपति पयोष्णी सरितव, मरुद्वृधा अरु व्यास ।**
ये सब शीतल नीर से, करती पाप विनास ॥ १०१ ॥

चौ- भरत खंड करमन अनुसारी । हों यहि स्वर्ग नरक अधिकारी ॥ १ ॥
कर कर विष्णु भक्त प्रसंगा । पावत मोक्ष यहीं तज अंगा ॥ २ ॥
मोह ग्रन्थि छेदहिं यदि कोई । पावत मोक्ष अहो नर सोई ॥ ३ ॥
स्वर्ग निवासी मिल इति सारे । स्वर्ग लोक बिच वचन उचारे ॥ ४ ॥
भरत खंड प्रजा मिल सारी । कीन्हा सुकृत कवन अपारी ॥ ५ ॥
जिन पर हरी स्वयं हो राजी । देवहिं मोक्ष स्वल्प श्रम आजी ॥ ६ ॥
पुष्कर यज्ञ दान तप पूजन । ये सब तुच्छ स्वर्ग के साधन ॥ ७ ॥
इस सुर पुर के आगि लगाहू । जहँ हरि पद पंकज स्मृति नाँहू ॥ ८ ॥
अरे स्वर्ग कछु काम न आही । देकर सुख आखिर भटकाही ॥ ६ ॥
इन्द्रिय भोग प्रबलता भारी । हरि पद पंकज प्रीति न जारी ॥ १० ॥

दोहा- **आयू हो कल्पान्त की, वे भी इस संसार ।**
जन्म मरण के चक्र में, चलते वारम्वार ॥ १०२ ॥

चौ- स्वल्प होत वय भारत माँही । उन लोकन से श्रेष्ठ सदाही ॥ १ ॥
जहाँ त्याग करके सब आशा । पावत हरिपद परम प्रकाशा ॥ २ ॥
जहँ वैकुंठ कथामृत गंगा । बहती ना हिय भक्ति तरंगा ॥ ३ ॥
नहिं हरि भक्त साधु सुख राशी । हो ना पूजन प्रभू जरासी ॥ ४ ॥
ब्रह्म लोक चाहे सुर लोका । बसहु न क्षण भर सो घर शोका ॥ ५ ॥
भारत खंड मनुज तनु पाई । करता नहि जो मोक्ष उपाई ॥ ६ ॥
सो भव बन्धन बीच सिधाई । यथा व्याध फन्दे द्विज जाई ॥ ७ ॥
धन्य भाग्य अहो भारत वासिन । रचते यज्ञ सदा अति पावन ॥ ८ ॥
इन्द्रादिक इति मंत्र सहेता । बुलवावत हरिहीं हवि हेता ॥ ६ ॥
यद्यपि हरि खुद पूरण कामा । आत तदपि हविहित सुखधामा ॥ १० ॥

दोहा- **अर्थिन को जो देत है, क्यों न अनर्थिन देत ।**
निष्कामी हरि पद भजे, सो मुक्ति फल लेत ॥ १०३ ॥

चौ- अर्थी एक कामना पाही । निष्कामी सब काम पुराही ।। १ ।।
सुर पुर सुख अवशेष करारा । होवहिं यदि कुछ पुण्य हमारा ।। २ ।।
जन्म हमारा भारत भूतल । होई नाथ पद सुमिरहि निश्चल ।। ३ ।।
अहो नाथ वह दिन कब आही । जन्म लेहिं हम भारत माँही ।। ४ ।।
कर तप दान व याग व पूजन । कदा करहिं हम प्रभु तव दरसन ।। ५ ।।
कीर्तन शील व हरिप्रिय वैष्णव । महा पुरुष सेवा रत केशव ।। ६ ।।
वेद पुराण श्रवण मति जासू । करही संत समागम तासू ।। ७ ।।
उन प्रति बारम्बार प्रणामा । हम सब सुर करते निशि यामा ।। ८ ।।
भारत बीच जन्म ले कोई । यदि सतकर्म विमुख जो होई ।। ९ ।।
वह पीयूष कलश को तजहीं । गरल भांड विच रुचि सो रखहीं ।। १० ।।

दोहा- **वासुदेव अर्चन तजि, चलता रहे कुराह ।**
कामधेनु को त्याग कर, अर्क क्षीर वह चाह ।। १०४ ।।

चौ- सुर पुर बीच देव इति सारे । भारत महिमा इमि पुकारे ।। १ ।।
भारत भूमी पाकर कोई । विषय वासना आसत होई ।। २ ।।
जानउ उन हरिमाया मोही । पावत अन्त समय दुख सोही ।। ३ ।।
कहते देव सुनहु अवनीपा । जम्बु द्वीप विच वसु उपद्वीपा ।। ४ ।।
सगर सुवन सब घोटक हेरत । कीन्हे कल्पित ये महि खोदत ।। ५ ।।
स्वर्ण प्रस्थ रमणक आवर्तन । चन्द्र शुक्ल अरु मन्दर हारन ।। ६ ।।
पाँचजन्य सिंहल अरु लंका । ये उपद्वीप कहे नरवंका ।। ७ ।।
जम्बु द्वीप इति किये विभागू । वरणेउ गुरु मुख सुन तव आगू ।। ८ ।।
मान व लक्षण स्थिति अनुसारी । कहुँ प्लक्षादिक द्वीप अगारी ।। ९ ।।
जम्बु द्वीप ते वेष्टित राया । यथा सुमेरू गिरिवर गाया ।। १० ।।

दोहा- **जम्बुद्वीप भी हे नृप, योजन लाख प्रमान ।**
क्षार सिंधु से वेष्टित, चारों ओर समान ।। १०५ ।।

चौ- क्रमते एक एक ते दूना । सारे द्वीप नहीं कुछ ऊना ।। १ ।।
प्लक्ष द्वीप दो लाख प्रमाना । अब्धि इक्षुरस वेष्टित माना ।। २ ।।
एकादश शत जोजनु ऊँचा । शत जोजनु विस्तृत जो नीचा ।। ३ ।।
प्लक्ष द्वीप विच कनक समाना । पाकर तरुवर एक बखाना ।। ४ ।।
यहि ते प्लक्ष द्वीप यह भयउ । अगनि हिरण्मय यँहि पर रहेउ ।। ५ ।।
प्रियव्रत महिपति निज सुत जेठा । इध्मजिह्व जिन नाम विश्रेठा ।। ६ ।।

निज समान गुण युत उन चीन्हा। प्लक्ष द्वीप अधिपति वह कीन्हा ॥ ७ ॥
किये द्वीप निज उन मुनि भागा। दिये सुवन प्रति सह अनुरागा ॥ ८ ॥
शिव यव यश अरु शान्त सुभद्रा। अमृत अभय न क्षेम नरेन्द्रा ॥ ९ ॥
एवं निज नामन अनुसारी। सब उन खंडन नाम पुकारी ॥ १० ॥

दोहा- **इध्मजिह्व नृप इस तरह, कर निज द्वीप विभाग।**
गये तपस्या हेत वह, कर हरि पद अनुराग ॥ १०६ ॥

चौ- प्लक्ष द्वीप विच गिरिवर साता। मणि अरु वज्रकूट विख्याता ॥ १ ॥
कनकष्ठी वरू ज्योतिष्माना। सुपर्ण व इन्द्र सेन सुख दाना ॥ २ ॥
मेघपाल इति गिरिवर नामा। सरित सात जहँ पूरण कामा ॥ ३ ॥
अङ्गीरसि सावित्री अरुणा। ऋतम्भरा सुप्रभात व नृम्णा ॥ ४ ॥
सरिता सत्यम्भरा सुहाई। नासत रज तम जिन जल न्हाई ॥ ५ ॥
हंस पतंग उपरायन गाये। सत्याङ्ग नाम श्रुति वर्ण सुहाये ॥ ६ ॥
ये सब त्रयि विद्या अनुसारी। भजते सूर्य रूप सुख कारी ॥ ७ ॥
ऋतु अरु सत्य व श्रुति अधिष्ठाता। ध्यावहिं हम रवि शरण प्रदाता ॥ ८ ॥
उन मानव वय वरिस हजारी। जिन नहिं स्वेद थकावट जारी ॥ ९ ॥
द्वीप पंच प्लाक्षादिक माँही। जन्म जात सब सिद्धि पाही ॥ १० ॥

दोहा- **वल बुद्धि अरु विक्रम, और मनोवल खास**
होवत सिद्ध समान, सब उत्पत्ति सहवास ॥ १०७ ॥

चौ- पीछे प्लक्ष शाल्मली द्वीपा। जोजन चार लाख अवनीपा ॥ १ ॥
जोजन चार लाख विस्तारी। सुर उदधि महि वेष्ठित सारी ॥ २ ॥
तरुवर जहँ शेमल इक भारी। तेहि तरु नाम सो द्वीप उचारी ॥ ३ ॥
उस तरुवर पर गरुड निवासा। प्रियव्रत सुवन तृतीय प्रकाशा ॥ ४ ॥
यज्ञ वाहु जिनका शुभ नामा। तासू द्वीप अधिप गुण धामा ॥ ५ ॥
सात भाग कीन्हे निज द्वीपा। दीन्हे सुतन प्रति अवनीपा ॥ ६ ॥
खंड व सुवन सुनाम सुरोचन। रमणक देववर्य अरु सौमन ॥ ७ ॥
पारिभद्र आभ्यायन नामा। अविज्ञात सात सुत पूरण कामा ॥ ८ ॥
यही नाम इन खंड भयेहू। जहाँ सात सीमा गिरि रहेऊ ॥ ९ ॥
वाम देव शत श्रृंग व स्वरसा। कुंद मुकुन्द सहस श्रुति पूसा ॥ १० ॥

दोहा- **रजनी नन्दा सुरसती, कुहु राका सिनवालि।**
अनुमति सातों सरित सो, मृदु शीतल जलवालि ॥१०८॥

चौ- श्रुतधर वीरजघर व वसुन्धर। वर्ण चारि इति सहित इषन्धर ॥ १ ॥
पूजहिं वेद मंत्र पढ़ सारे। सोम देव प्रति वचन उचारे ॥ २ ॥
कृष्ण शुक्ल बिच जो निज रस्मिन। पितर देव नर युत सब प्राणिन ॥ ३ ॥
देत अन्न वह चन्द्र हमारे। होवहिं नृप इति मन्त्र उचारे ॥ ४ ॥
सुरा सिन्धु आगे कुश द्वीपा। योजन आठ लाख अवनीपा ॥ ५ ॥
वसु लख जोजनु चहुँ घृत सागर। द्वीप नाम कर जहँ कुश तरुवर ॥ ६ ॥
प्रियव्रत सुवन द्वीप पति जेही। नाम हिरण्यरेत इति तेही ॥ ७ ॥
कीन्हें सात भाग निज द्वीपा। दीन्हे सुतन हेतु अवनीपा ॥ ८ ॥
तजकर तिय धन सुत परिवारी। बाद विपिन नृप गये सिधारी ॥ ९ ॥
अब सुत नाम व खंड बताऊँ। सीमा गिरि सरिता सब गाऊँ ॥ १० ॥

दोहा- **वामदेव वसु दृढव्रय, रुचि, नाभिगुप्त वसुदान।**
विवित स्तुत्यव्रत नाम से, खंडन सहित बखान ॥ १०९॥

चो- चित्रकूट कपिल चतुश्रृंगा। ऊर्ध्व रोम गिरि चक्र उतंगा ॥ १ ॥
देवानीक व द्रविण सुहाई। गिरी सप्त सीमा इति गाई ॥ २ ॥
सरित सुहावन जहँ रसकुल्या। वेद गर्भ घृतच्युत मधुकुल्या ॥ ३ ॥
मित्रविन्द अरु मन्तरमाला। श्रुतविन्दा सो सरित विशाला ॥ ४ ॥
कुशल व कोविद अरु अभियुक्ता। कुलकस चार वर्ण इति उक्ता ॥ ५ ॥
ये सब अगनि रूप हरि पूजहिं। याग करम कर अस्तुति इति करहिं ॥ ६ ॥
घृत सिन्धु बहि षोडश लाखा। योजन क्रौंच द्वीप इति भाखा ॥ ७ ॥
तावत मान सो सागर क्षीरा। वेष्टित क्रौंच द्वीप चहुँ तीरा ॥ ८ ॥
द्वीप नाम कर जहँ गिरिक्रौञ्चा। यह गिरिवर सब गिरि ते ऊँचा ॥ ९ ॥
गिरी क्रौंच स्कंदायुध पीड़ित। निर्भय भयउ सो जल पति रक्षित ॥ १० ॥

दोहा- **तासु द्वीप पति प्रियव्रत, सुत धृतपृष्ठ सुजान।**
कियो द्वीप निज सप्तधा, पुत्रन प्रति प्रदान ॥ ११० ॥

चौ- वनस्पति लोहीतरण सुधामा। मधुरूह मेधपृष्ठ अरु आमा ॥ १ ॥
भ्राजिष्ठ नाम इति सुतखंड गाया। सीमा गिरि इति सात बताया ॥ २ ॥
शुक्ल व वर्धमान नन्द योजन। सर्व भद्र उपपर्हण नन्दन ॥ ३ ॥
सुनहू सरिता नाम अगारी। अभया तीरथवती अपारी ॥ ४ ॥
वृत्ति रुपवति आर्यक गाई। अमृतौघ शुक्ला सरिताई ॥ ५ ॥
पवित्रवती इति सरिता साती। प्रति खंडन में ये विख्याती ॥ ६ ॥

पुरुष व ऋषभ व द्रविण व देवक । वर्ण चारि ये जल पति सेवक ॥ ७ ॥
क्षीर सिंन्धु के सुनो अगरी । शाक द्वीप इति नाम पुकारी ॥ ८ ॥
योजन लाख बत्तीस प्रमाना । दधि सागर वेष्टित सो माना ॥ ९ ॥
द्वीप नाम कर तरु जहँ शाकी । महासुरभि विस्तृत चहुँ जाकी ॥ १० ॥

दोहा- **प्रियव्रतसुत मेधा तिथि, कर निज द्वीप विभाग ।**
सातों पुत्रन के लिये, दीन्हे सह अनुराग ॥१११॥

चौ- चित्र रेक बहुरूप मनोजव । धूम्रानीक पुमान पुरोजव ॥ १ ॥
विश्वधार सुत वरिस ये साता । सीमा परवत इति विख्याता ॥ २ ॥
ईश व उरुश्रृङ्ग शतकेशर । सहस स्रोत बलभद्र गिरीवर ॥ ३ ॥
देवपाल महानस साता । प्रत्येक वर्ष ये गिरि विख्याता ॥ ४ ॥
निज धृति पंचपदी आयुर्दा । उभय सृष्टि शीतल मृदु जलदा ॥ ५ ॥
अनघा सहस श्रुति शुभ गाई । अरु अपराजित गिरि वर जाई ॥ ६ ॥
ऋत व्रत सतव्रत दान व अनुव्रत । वर्ण चार नर जहाँ निवासत ॥ ७ ॥
ये सब वायु रूप भगवाना । सह समाधि पूजत इति जाना ॥ ८ ॥
दधि सागर वहि पुष्कर द्वीपा । जोजन चौसठ लाख महीपा ॥ ९ ॥
तावत स्वायू सिंधु समाना । परिवृत चारों ओर समाना ॥ १० ॥

दोहा- **अनल शिखा सम चमकत, पुष्कर पुष्कर द्वीप ।**
अयुतायुत पत्रन सहित, वह विधि धाम महीप ॥११२॥

चौ- पूरब पश्चिम सीमा निश्चित । करत मानसोत्तर जँह परवत ॥ १ ॥
जोजन अयुतगिरी ऊँचाई । तावत मान रही लम्बाई ॥ २ ॥
गिरि ऊपर सुन्दर पुरिचारी । इन्द्र वरुण यम धनद पुकारी ॥ ३ ॥
इस गिरि ऊपर चहूँ सदा ही । सूरज स्यन्दन चक्र भ्रमाही ॥ ४ ॥
प्रियव्रत सुत नृप वीति होता । कर निज द्वीप भाग कर कोता ॥ ५ ॥
रमणक धातकि सुत सुत प्रति कीन्हा । वाद स्वयं हरि प्रद चितलीन्हा ॥ ६ ॥
पुरुष सुपुष्कर द्वीप निवासी । ब्रह्मरूप हरि चरण उपासी ॥ ७ ॥
शुद्ध सिन्धु आगे सुनु राया । लोकालोक नाम गिरि गाया ॥ ८ ॥
साढ़े सात लाख एक कोटी । शुद्ध सिंधु आगे महि भोटी ॥ ९ ॥
आगे महि तल कनक समाना । जो दरपन सम स्वच्छ समाना ॥ १० ॥

दोहा- **जिस भूमी में गिरत ही, पात पदारथ नाँय ।**
कोई प्राणी उस जगह, हे नृप नहीं सिधाय ॥११३॥

चौ- लोकालोक बाद गिरिकेतू। लोक त्रयी मरयादा हेतू ॥ १ ॥
भासित और अभासित भानू। यह ध्रुव पद ते ऊँचा जानू ॥ २ ॥
यही हेतू रवि किरण प्रकासू। आवत अपर तरफ नहिं तासू ॥ ३ ॥
मानव लक्षण स्थिति अनुसारी। कवि वरणत इति जग विस्तारी ॥ ४ ॥
जोजन कोटी रहे पचासू। सब गुणिजन यों करत प्रकासू ॥ ५ ॥
तासों भाग चतूरथ राया। लोकालोक गिरी बतलाया ॥ ६ ॥
ऋषभ व पुष्करचूड व वामन। अपराजित इति जग स्थिति कारन ॥ ७ ॥
ये दिग्गज मेरू पर चारी। लोक गुरु विधि रचे विचारी ॥ ८ ॥
लोकालोक गिरीवर ऊपर। दिग्गज अरु इन्द्रादिक जो सुर ॥ ९ ॥
विविध वीर्य उन रचना कारन। रक्षण हेतू लोक सुहावन ॥ १० ॥

दोहा- **कल्पान्त काल तक हे नृप, करते हरी निवास।**
सकल विश्व परिमाण यह, कीन्हो तोहि प्रकास ॥ ११४ ॥

चौ- लोकालोक गिरी के आगे। रिषि मुनिजन के मन जहँ लागे ॥ १ ॥
द्विज सुत हेरन अर्जुन संगा। गये कृष्ण रथ जोत तुरंगा ॥ २ ॥
अर्जुन प्रति वह लोक दिखाया। आगे सुनहु कथा चित लाया ॥ ३ ॥
स्वर्ग लोक अरु पृथ्वी बीचू। ब्रह्माण्ड केन्द्र रवि स्थिति वहिं सोचू ॥ ४ ॥
गोलक अंड बीच दिन ईशा। जोचन अन्तर कोटि पचीसा ॥ ५ ॥
अंड अचेतन राजत भानू। मारतण्ड यहि हेत बखानू ॥ ६ ॥
नभ घूलोक महि दिशि शाला। भोग व मोक्ष व नरक पताला ॥ ७ ॥
करते रवि इन केर विभाजी। यहि सब प्राणिन बीच विराजी ॥ ८ ॥
सुर नर नाग असुर सरिसर्पा। लता बेल तरु गुल्म स्वरूपा ॥ ९ ॥
इन सब जीवन के रवि प्राना। नयन अधिप यहि शास्त्र बखाना ॥ १० ॥

दोहा- **मय प्रमाण भूगोल का, कीन्हा मान बखान।**
नभ मंडल का मान भी, जानहु नृपति समान ॥ ११५॥

चौ- महि नभ द्विदल भाग समाना। अन्तरिक्ष दोउ बीच बखाना ॥ १ ॥
तपत त्रिलोकी बीच अकासू। अंड मध्य रवि करत प्रकासू ॥ २ ॥
अयन सौम्य अरु याम्य विषूवत। मंद शीघ्र सम गति रविचालत ॥ ३ ॥
मकर आदि राशी बिच भानू। उच्च नीच सम पाकर स्थानू ॥ ४ ॥
दीर्घ ह्रस्व समकर दिनराती। चालत नभ पर निशि आराती ॥ ५ ॥

आवत मेष तुला पर भानू। करत सदा दिन रात समानू ॥ ६ ॥
राशि वृषादि पंच रवि चलहीं। बढ़त दिवस अरु निशि तब घटहीं ॥ ७ ॥
घटि एक एक प्रति मासा। होवत निशामान तब हासा ॥ ८ ॥
अलि ते शर राशी रवि चलहीं। बढ़त दिवस अरु निशि तव घटहीं ॥ ९ ॥
याम्यायन ते रजनी चढ़हीं। सौम्यायन ते प्रतिदिन बढ़हीं ॥ १० ॥

दोहा- **नन्द कोटि इक्कावन, जोजन लाख प्रमान।**
मानस गिरिवर ऊपर, भानु परिक्रम मान ॥ ११६ ॥

चौ- मेरु के पूरब दिशि राई। इन्द्रपुरी जो अति सुखदाई ॥ १ ॥
सुरधानी जिन नाम कहाई। याम्य पुरी दक्षिण बिचगाई ॥ २ ॥
नाम संयमिनि सब अघहानी। पश्चिम जलपति पुरी बखानी ॥ ३ ॥
निम्लोचनी नाम सुखदाई। सो सब पुर ते श्रेष्ठ बताई ॥ ४ ॥
उत्तर बीच विभावरि नामा। धनद पुरी सो पूरण कामा ॥ ५ ॥
इन पुरि ऊपर रवि जब आही। होवत उदय मध्य अस्ताही ॥ ६ ॥
धनद पुरी ऊपर रवि आही। होत निशीथ तदा जग माँही ॥ ७ ॥
मेरु ऊपर जो नर रहहीं। सदा मध्य वेला वे लखहीं ॥ ८ ॥
दिन पति रवि निज गति अनुसारी। अभिमुख नखत चलत प्रतिवारी ॥ ९ ॥
यद्यपि मेरु राखत 'बायाँ। किन्तु भ्रमण वश दीखत दायाँ ॥ १० ॥

दोहा- **जहँ पर होवत रवि उदय, करहू सूत्र निपात।**
तासू दूसरी ओर में, अस्त दिखाई आत ॥ ११७ ॥

चौ- दिवस मध्य विन्दू रवि जाता। तत्सम करहू सूत निपाता ॥ १ ॥
होवत अर्ध निशा उस ओरा। तपते इत सोवत उत ठौरा ॥ २ ॥
इन्द्रपुरी ते जब रवि आवे। घटी पंचदश यमपुर जावे ॥ ३ ॥
इन्द्रपुरी यमपुरि पर्यन्ता। बिन्दु बिन्दु नभ शर मुनि सन्ता ॥ ४ ॥
राम नेत्र जोजन परमानू। चालत घटी पंचदश भानू ॥ ५ ॥
एवं जलपति विधुपुरि जाहीं। बाद इन्द्र पुरि बीच सिधाहीं ॥ ६ ॥
एवं चन्द्रादिक ग्रह सारे। अन्य उडूगण केर सहारे ॥ ७ ॥
ज्योतिश्चक्र सुबीच भ्रमाही। दीखत उदित व अस्त सदाही ॥ ८ ॥
प्रति मुहूर्त बीचे रवि स्यंदन। तीस चार लख वसु शत जोजन ॥ ९ ॥
इन इन्द्रादिकपुरि पर भ्रमही। एक चक्र को सम्वत कहहीं ॥ १० ॥

दोहा- **मास रूप द्वादश अरे, ऋतू रूप छै हाल ।**
चौमास नाभित्रय, स्यन्दन भानुविशाल ॥११८॥ क
एक अक्ष मेरू शिखर, अपर मानसोत्तर ।
तैल यन्त्रवत यह फिरत, इस गिरि के ऊपर ॥११८॥ ख

चौ- अपर धुरी की भी लम्बाई । प्रथम धुरी ते यह चौथाई ॥ १ ॥
एक भाग ऊपर कुछ थोड़ा । तैल यंत्र धुरवत ध्रुव जोडा ॥ २ ॥
रथ उपवेश स्थान षटतीसा । योजन लक्ष दीर्घनवदीसा ॥ ३ ॥
रवि रथ युग तावत परमाना । छन्द नाम हय सप्त समाना ॥ ४ ॥
अरुण सारथी सूरज संगा । पर्व अंगूठ समाँ जिन अंगा ॥ ५ ॥
द्विगुण सहस्त्र तीस रिषि सारे । बाल खिल्य रवि स्तोत्र उचारे ॥ ६ ॥
तथा अन्य मुनि गण गंधर्वा । नाम यक्ष राक्षस सुर सर्वा ॥ ७ ॥
इति गण सप्त सदेव विलासी । मास मास विच सूर्य उपासी ॥ ८ ॥
दो हजार दो योजन दूरी । करत भ्रमण रवि क्षण इक पूरी ॥ ९ ॥

दोहा- **अभ्र अभ्र नभ अभ्र नभ, विधु शर नन्द प्रमान ।**
योजन इस भूमंडल, का मानहु तुम मान ॥ ११९ ॥

चौ- शुक मुख ते सुनकर इति वानी । बोले नृपति परीक्षित ज्ञानी ॥ १ ॥
कहा नाथ यद्यपि समझाही । अभिमुख राशिन प्रतिरवि जाही ॥ २ ॥
मेरु ध्रुवहिं राखत बायाँ । किन्तु भ्रमण वश दीखत दायाँ ॥ ३ ॥
सो नहि नाथ समझ कछु आया । करहु कृपा कर यह कर दाया ॥ ४ ॥
चाक कुलाल भ्रमत नृपवीरा । गति विपरीत चलत जिमि कीरा ॥ ५ ॥
एवं काल चक्र अनुसारी । भ्रमत तदाश्रय गृह गति न्यारी ॥ ६ ॥
अरु जिनकी गति जानन हेता । उत्सुक रहत सदा गुणि केता ॥ ७ ॥
वेद रुप नारायण भानू । मास रूप द्वादश परमानू ॥ ८ ॥
षडरितु गुण धारण सो करही । लोक स्वस्ति हेतू नभ चलही ॥ ९ ॥
मानव त्रयि विधा अनुसारी । सदाचारा वर्णाश्रम धारी ॥ १० ॥

दोहा- **श्रृद्धा से पूजत इन्हें, पावत श्रेय अपार ।**
सूरज सब की आतमा, सूरज सरजन हार ॥१२० ॥

चौ- महि भू लोक बीच नृप भानू । नभ मंडल अंदरस्थित मानू ॥ १ ॥
काल चक्र गत गति अनुसारी । भोगत द्वादश मास तमारी ॥ २ ॥
चान्द्र मान तम पक्ष प्रकाशा । पक्ष दोय मिल होवत मासा ॥ ३ ॥

चालत नखत सवा दो भानू । सो नृप सूरज मास बखानू ।। ४ ।।
पितर मान ते यह दिन राती । राशि भोग दुइ ऋतू कहाती ।। ५ ।।
अर्ध भाग भोगत सो अयना । अयन दोय मिल संवत कहना ।। ६ ।।
नभ मंडल भोगत रविसारा । सो सम्वत्सर पंच प्रकारा ।। ७ ।।
मंद शीघ्र सम गति अनुसारी । द्वादश राशी चलत तमारी ।। ८ ।।
सम्बत्सर परिवत्सर वत्सर । इडापूर्व वत्सर अनुवत्सर ।। ९ ।।
अर्क किरण ऊपर लख योजन । चालत नृपवर निशिपति स्यंदन ।। १० ।।

दोहा- **जेता रवि सम्वत चले, मास एक विधु चाल ।**
एक पक्ष की चाल में, एक दिवस विधु काल ।। १२१ ।।

चौ- कला पूर्ण विधु उज्वल पाखा । कला क्षीण सो श्यामल भाखा ।। १ ।।
धवल पाख देवन दिन गावा । श्यामल पाख पितर दिन भावा ।। २ ।।
प्रति नक्षत्र दंड विधु साठी । भोगत्त सदा याम इमि आठी ।। ३ ।।
षोडश कला चन्द्र भगवाना । अमृत अन्न मनोमय माना ।। ४ ।।
देव पितर मानव पशू भूता । तरुवर पक्षिन प्राण प्रसूता ।। ५ ।।
तीन लाख योजन विधु ऊपर । सब नक्षत्र नियोजित ईश्वर ।। ६ ।।
इन ऊपर योजन दो लाखा । दीखत कविग्रह चमकत आखा ।। ७ ।।
चालत रवि सह आगे पीछे । सब जन प्रतिफल देवत आछे ।। ८ ।।
जो ग्रह वृष्टि स्तंभन करही । तासु दोष यह झटपट हरहीं ।। ९ ।।
उपर लख दुइ योजन दूरी । बुध मंडल जन मंशा पूरी ।। १० ।।

दोहा- **आगे अरु पीछे चले, यह बुध रवि के संग ।**
सूरज से आगे बढ़े, करदे वृष्टि भंग ।।१२२।।

चौ- योजन दुई लख इसके राया । भौम ग्रह बहुधा दुखदाया ।। १ ।।
ऊपर भौम लाख दो योजन । गुरु बहुधा महि सुर दुख भंजन ।। २ ।।
होवत वक्र यदि यह नाँही । प्रति सम्वत राशी यक जाही ।। ३ ।।
गुरु ऊपर लख योजन दोही । सूरजसुवन शनैश्चर सोही ।। ४ ।।
चालत तीस मास प्रति राशी । यह ग्रह प्राय अशान्ति प्रकाशी ।। ५ ।।
रुद्र लाख जोजन शनि ऊपर । रहते सप्त रिषी गण मिलकर ।। ६ ।।
चाहत जो जग मंगल कर्मा । करत परिक्रम हरि पद परमा ।। ७ ।।
योजन लाख त्रयोदश ऊँचा । रिषि मंडल ऊपर ध्रुव सोचा ।। ८ ।।

महा भागवत ध्रुव जँह रहहीं । विष्णु परम धाम जो वदहीं ॥ ९ ॥
पूरब गाया तासु प्रतापा । काल चक्र जिन पर नहिं व्यापा ॥ १० ॥

दोहा— **अव्यक्त गति प्रभु काल के, प्रेरित ग्रह गण आदि ।**
करते सब मिलकर भ्रमण, ध्रुव पद परित अनादि ॥१२३॥

चौ- ध्रुव कबहूँ न हालत चालत । एक स्थान विच रहे प्रकाशित ॥ १ ॥
पक्षी व मेघ यथा नभ घूमत । किन्तु वायु वश अध नहि आवत ॥ २ ॥
एवं प्रकृति पुरुष संयोगा । गिरत न ग्रह निज करमन योग ॥ ३ ॥
ज्योति चक्क शिशु मार समाना । कहत कोउ निज मति अनुमाना ॥ ४ ॥
यह प्रभु माया केर सहारे । मुख नीचे अरु कुंडलि मारे ॥ ५ ॥
ध्रुव पुच्छाग्र विराजत याके । सुरप प्रजेस धरम विति जाके ॥ ६ ॥
पुच्छ मध्य चारों यह सोही । धात विधात पुच्छ जड़ दोही ॥ ७ ॥
कटि प्रदेश पर रिषिवर साता । नखत चतुर्दश अभिजित सहिता ॥ ८ ॥
दक्षिण बगल विराजत तारे । बाम बगल पुष्यादिक सारे ॥ ९ ॥
पृष्ठ बीच अजवीथी मानी । उदर मध्य नभगंग बखानी ॥ १० ॥

दोहा- **बाम पुष्य दक्षिण कटि, नखत पुनर्वसु मान ।**
सव्य सव्यत्तर चरण में, आर्द्रा श्लेशा जान ॥१२४॥

चौ- दक्षिण वाम नासिका दोंही । अभिजित उत्तराषाढ़ा सोही ॥ १ ॥
सव्य असव्य नयन विच राया । श्रवण व पूर्वाषाढ़ सुहाया ॥ २ ॥
सव्य असव्य सुकर्ण प्रदेशा । वसु अरु मूल दोउ निर्देशा ॥ ३ ॥
अस्थि वाम बगल विचराई । मघा आदि वसु नखत सुहाई ॥ ४ ॥
दक्षिण बगल फसल प्रतिलोमा । मृगशिरादि नखत वसु होमा ॥ ५ ॥
दक्षिण वाम ओर दोउ कंधा । शततारा ज्येष्ठा अनुबन्धा ॥ ६ ॥
ऊपर हनु कुंभज अध भानुज । लिंग प्रदेश शनीमुख अवनिज ॥ ७ ॥
कुंभ गुरु छाती विच सूरज । नारायण हिय मन विच अत्रिज ॥ ८ ॥
नाभ शुक्र स्तन सुरगद घाती । रोम सकल तारागण जाती ॥ ९ ॥
प्राण अपान बुध गल राहू । अंग अंग सब शिखी बताहू ॥ १० ॥

दोहा - **सब ज्योतिर्गण आश्रय, कालरूप भगवान ।**
परम पुरुष परमात्मा, का हम करते ध्यान ॥१२५॥क
सब सुरमय हरिरूप का, प्रतिदिन तीनों काल ।
चिन्तन वन्दन जो करे, नासत पाप कराल ॥१२५॥ ख

चौ- बोले शुक सुन पांडव नन्दन । योजन अयुत तले रवि स्यंदन ॥ १ ॥
विचरत राहू नखत समाना । कैतिक नर करते इति गाना ॥ २ ॥
हरि अनुकंपा ते अमराई । पावा ग्रहपद इति सब गाई ॥ ३ ॥
राहू जनम करम की गाथा । आगे सुनहू तुम नर नाथा ॥ ४ ॥
रवि मंडल जोजन अयुताई । विधु हजार द्वादश इतिगाई ॥ ५ ॥
सहस त्रयोदश मंडल राहू । पूर्व वैर रवि विधु प्रति आहू ॥ ६ ॥
रक्षा हेतु चक्र सुदरशन । किये नियुत रवि विधु हित भगवन ॥ ७ ॥
तासू तेज ते हो भयभीता । वापिस जावत वह यूं रीता ॥ ८ ॥
रवि विधु पर राहू परछाई । जेती काल रहे सुनुराई ॥ ९ ॥
सोही ग्रहण जगत में गावत । दर्श पूर्णिमा पर यह आवत ॥ १० ॥

दोहा- **राहू के नीचे सुनो, योजन दस हज्जार ॥**
विद्याधर चारण अरु, सिद्धन के आगार ॥ १२६॥क
जहँ तक वायु की गति, अभ्र दिखाई देत ।
अन्तरिक्ष वह लोक है, रहते भूत व प्रेत ॥ १२६ ॥ख

चौ- यक्ष व राक्षस भूत पिशाचा । यही क्रीड़ास्थल इनकर साँचा ॥ १ ॥
शत योजन अध इनते धरनी । जो मुक्ति फल की नृप जननी ॥ २ ॥
उड़ते हंस श्येन खग भासा । तावत भूमि मान प्रकाशा ॥ ३ ॥
विवर सात महितल मन रंजन । जो प्रत्येक अयुत नृप योजन ॥ ४ ॥
अतल वितल अरु सुतल तलातल । विवर महातल अउर रसातल ॥ ५ ॥
सबके नीचे रहे पताला । ये विल एक एक से आला ॥ ६ ॥
स्वर्ग लोक से भी अधिकाई । पावत यहाँ पर नर समुदाई ॥ ७ ॥
विषय भोग आनन्द अपारा । धन सुख सम्पत सुत आगारा ॥ ८ ॥
वैभव पूर्ण भवन उद्याना । क्रीड़ा स्थल सुन्दर सर नाना ॥ ९ ॥
दैत्य व दानव नाग विलासा । प्रमुदित सदा करत वहँ वासा ॥ १० ॥

दोहा - **मायावी मय निरमित, इन विल बीच अपार ।**
मणि माणिक सुन्दर जटित, भवन विचित्र प्रकार ॥ १२७॥

चौ- गोपुर चैत्य सभा प्राकारा । सोभित पुर सब विविध प्रकारा ॥ १ ॥
जिन उद्यान बीच फल फूला । लता वल्लरी तरु अनुकूला ॥ २ ॥
विमल नीर पूरण खग युक्ता । सर शोभा सुरपुर अति उक्ता ॥ ३ ॥
अहो रात्र का जहँ भय नाही । सूरज किरण वहाँ ना जाही ॥ ४ ॥

सर्व सिरोमणि सब तम हारी । दिव्य औषधी विविध प्रकारी ॥ ५ ॥
रस व रसायन अन्न व पाना । सेवन करत असुर वहाँ नाना ॥ ६ ॥
आधि व्याधि वलि पलित बुढ़ापा । मृत्यु विकार काहू ना व्यापा ॥ ७ ॥
पावत मौत सुदरशन द्वारा । अन्य उपाय न किसी प्रकारा ॥ ८ ॥
जब बिल बीच सुरदशन जाही । असुर रमणि तब गर्भ नसाही ॥ ९ ॥
मय सुत मायावी बल नामा । करत अतल बिच सो विश्रामा ॥ १० ॥

दोहा- **जृम्भमाण उस मुख अरे, एक बार सुनुराय ।**
कामिनि पुश्चलि स्वरिणी, ये तिय प्रकटी आय ॥ १२८॥

चौ- उनबिल बीचे करे निवासा । पावति हाटक रस उन खासा ॥ १ ॥
भोग समर्थ बनाकर जंगी । करती रमण सदा उन संगी ॥ २ ॥
हाटक रस पीकर सो मानव । होत मदान्ध समाँ सब दानव ॥ ३ ॥
अयुत महागज बल सम निज को । मानत ईश्वर सिद्ध स्वयं को ॥ ४ ॥
योजन अयुत अतल अध अन्तर । स्वगण सहित वितल बिच शंकर ॥ ५ ॥
सहित भवानी करे निवासा । नाम हाटकेश्वर जिन खासा ॥ ६ ॥
नाम हाट की नदी सुहाई । भव वीरज ते सो प्रकटाई ॥ ७ ॥
वात प्रदीप्त अनल सो नीरा । पीत मुदित थूकत नदि तीरा ॥ ८ ॥
प्रकटा हाटक कंचन जासू । तिय नर भूषण धारत तासू ॥ ९ ॥
वितल लोक ते अध सुनुराया । सुतल लोक सोभित सुख दाया ॥ १० ॥

दोहा- **श्री विष्णु वामन तनु, जिस हित कियो प्रकास ।**
पुत्र विरोचन वलि नृप, करते वहाँ निवास ॥१२९॥

चौ- हरण किये वामन त्रय लोका । प्रेषित कीन्हें सुतल अशोका ॥ १ ॥
तब ते निज धर्मन अनुसारी । करते अब तक भक्ति अपारी ॥ २ ॥
सब जग जीव नियन्ता राजन । आत्म स्वरूप परम प्रिय भगवन ॥ ३ ॥
पावन पूज्य दान अधिकारी । हरि सम देख बली निज द्वारी ॥ ४ ॥
श्रद्धा आदर सह महि दीन्ही विनिमय सुतल सम्पदा लीन्ही ॥ ५ ॥
यह भूदान किन्तु फल नाहीं । पात मोक्ष भू देत सदाही ॥ ६ ॥
गिरत परत छींकत हरि नामा । वे वश करत उचारण रामा ॥ ७ ॥
कर्म बन्ध तासू कट जाही । अरपित हरि प्रति भू फल नाही ॥ ८ ॥
वलि प्रति हरि अनुग्रह नहिं कीन्हा । भगवत स्मतिनाशक धन दीन्हा ॥ ९ ॥
हरी याचना छल बल कीन्हा । तीन लोक धन नृप पद छीन्हा ॥ १० ॥

दोहा- **वरुण पाश ते बाँधकर, भेजा सुतल प्रदेश ।**
तदपि बलि कहने लगे, कर सबको उपदेश ॥१३०॥

चौ- सुर गुरु जासु सहायक होही । शक्ति निपुण ना दीखत मोही ॥ १ ॥
सुर गुरु तजि वामन के द्वारा । छीने तीनों लोक हमारा ॥ २ ॥
हरि भक्ती तजि नृप पद नाहीं । कबहूँ पितामह मम ना चाही ॥ ३ ॥
ऐसो कौन जगत बिच होही । हरि भकुति जिसको ना सोही ॥ ४ ॥
पूर्ण रूप ते बली की गाथा । आगे सुनहु अरे नर नाथा ॥ ५ ॥
गदापाणि नारायण जासू । प्रतिदिन द्वार गेह रहे तासू ॥ ६ ॥
आवा दशकंधर बलि द्वारी । पदांगूठ हरि दियो उछारी ॥ ७ ॥
गिरा तदा लंकापति रावन । योजन अयुत सुलोक रुलायण ॥ ८ ॥
योजन अयुत सुतल अध अन्तर । रक्षित बीच तलातल शंकर ॥ ९ ॥
गत भय चक्र सुदरशन जासू । मय दानव जहँ करे निवासू ॥ १० ॥

दोहा- **काद्रयेय सर्पन दल, नाम क्रोधवश एक ।**
निम्न महातल में बसे, जासू सीस अनेक ॥१३१॥

चौ- कालिय तक्षक कुहक प्रधाना । खगपति ते भय खावत नाना ॥ १ ॥
वे कबहुँ हो मत्त अपारा । विहरत तिय सुत सह परिवारा ॥ २ ॥
इसके नीचे लोक रसातल । पणि दानव अरु दैत्य महाबल ॥ ३ ॥
असुर निवात कवच बलधारी । बीच हिरण्यपुरी अपारी ॥ ४ ॥
सरमा वचन मंत्र अनुसारी । डरते सुरपति ते अति भारी ॥ ५ ॥
बाद रसातल निम्न पताला । नाग वासुकी शंख कराला ॥ ६ ॥
कम्बल शंखचूड़ अरू श्वेता । महाशंख धृतराष्टर येता ॥ ७ ॥
धनञ्जय देवदत्त अश्वादी । महाक्रोध युत महा प्रमादी ॥ ८ ॥
पांच सात दश शत अरु सहसा । इन नागन के सीस प्रदेशा ॥ ९ ॥
इन फण चमकत मणी अपारी । सब पाताल लोक तमहारी ॥ १० ॥

दोहा- **कहे व्यास नन्दन सुनो, मूल प्रदेश पताल ।**
सहस तीस योजन पर, हरि की कला विशाल ॥१३२॥

चौ- नाम अनन्त वहाँ पर वासी । व्यूह चतुर्विंच भक्त उपासी ॥ १ ॥
संकर्षण जिन नाम बखाना । एक सहस्त्र सीस भगवाना ॥ २ ॥
सर्षप इव भूमण्डल सारा । सीस प्रदेश एक जिन धारा ॥ ३ ॥
आवत प्रलय काल जब राई । उपसंहार हेतु रुचि पाई ॥ ४ ॥

तदा क्रोध वश सुन्दर भ्रकुटी । नाम रुद्र संकर्षण प्रकटी ॥ ५ ॥
नयन तीन त्रिशूल गहाई । रुद्र यूथ संख्या जिन गाई ॥ ६ ॥
पद पंकज नख मंडल मणियाँ । नत मस्तक हो भुजग रमणियाँ ॥ ७ ॥
उन बीचे निज वदन विलोकी । होवत मुदित अतीव अशोकी ॥ ८ ॥
नागराज कुमारी जासू । अवलोकत ब्रीडित मुख तासू ॥ ९ ॥
आदि देव भगवान अनन्ता । रोष वेग उपसंहृत अन्ता ॥ १० ॥

दोहा- **विश्व स्वस्ति हेतु यह, करते यहाँ निवास ।**
ध्याय मान सुर असुर गण, उरग सिद्ध मुनि खास ॥ १३३॥

चौ- रिषि विद्याधर अरु गंधर्वा । नव मस्तक ध्यावत ये सर्वा ॥ १ ॥
वचनामृत ते निजगण मोही । नीलाम्बर कुंडल वर सोही ॥ २ ॥
करत भ्रमर जिन पर गुंजारी । वन माला वैजन्ती धारी ॥ ३ ॥
ब्रह्म सभा विच जासु प्रभावा । सह तुम्बुरु नारद रिषि गावा ॥ ४ ॥
जग दुत्पत्ति स्थिति लयकारी । सत्वादिक प्रकृति गुण धारी ॥ ५ ॥
सत्य स्वरूप अनादि अनन्ता । गावत रिषि मुनि सह सब संता ॥ ६ ॥
सत अरु असत जगत बिच दीखत । निज तनु बीच सभी वह धारत ॥ ७ ॥
जासु प्रभाव जगत में कोई । जानन हेत समर्थ न होई ॥ ८ ॥
सत्य स्वरूप भकत हित धारी । वह अनन्त संत भय हारी ॥ ९ ॥
जिन शुभ नाम सुनत ही काना । पाप होत सब अन्तरध्याना ॥ १० ॥

दोहा - **गुण कीरतन हेतू धरे, यद्यपि जीभ हजार ।**
यह भू मंडल जिन शिर, तासु न पारावार ॥ १३४ ॥

चौ- इति प्रभाव शाली भगवाना । वसत सुमूल रसातल खाना ॥ १ ॥
जग पालन हेतू महि सीसा । धरत ससरित सिन्धु गिरि ईशा ॥ २ ॥
यथा करम निरमित गति सारी । वरणन कीन्ही मति अनुसारी ॥ ३ ॥
अमर कथा अब गाऊँ आगे । यो सुन नरपति कहने लागे ॥ ४ ॥
यह संसार विचित्र मुनीशा । यह सुन शुक बोले सुनु ईशा ॥ ५ ॥
सात्विक राजस तामस तीना । कर्मीनर इन गुण आधीना ॥ ६ ॥
श्रृद्धा भिन्न करम गति सारी । होवत ये नृप न्यारी न्यारी ॥ ७ ॥
अनादि अविद्या के वश होई । जावत जीव नरक विच सोई ॥ ८ ॥
लक्षण फल सह नरक हजारी । वरणऊँ उन निज मति अनुसारी ॥ ९ ॥
बोले वच सुन कहे नरेशा । नरक नाम महि कवन प्रदेशा ॥ १० ॥

दोहा- अथवा भूमी के वहि, सो सव कहु समुझाय ।
कुरुपति के यह वचन सुन, कहे मुनी हर्षाय ॥१३५॥

चौ- अन्तराल जगत दिशियामी । नरक भूमि अधजल पर नामी ॥ १ ॥
जहाँ पितरपति करे निवासा । निज सेवक संग रहे अवासा ॥ २ ॥
सो निज निज करमन अनुसारी । देत दंड मृत प्राणिन भारी ॥ ३ ॥
नरक आठ अमर अरू तीसा ॥ नाम रूप लक्षण सुनु ईशा ॥ ४ ॥
प्राण रोध नरक महारौरव । तामिस्र अन्धतामिस्र व रौरव ॥ ५ ॥
अंधकूप अरु कुंभीपाका । कृमि भोजन शूकर मुख वाँका ॥ ६ ॥
वज्रकंटकी सेमल गाई । रक्षोगण भोजन दुखदाई ॥ ७ ॥
लालाभक्ष अवीचि गाया । सूचीमुख अयपान कहाया ॥ ८ ॥
असिपत्रवन अति दुखदाई । अवटनिरोध वीच कठिनाई ॥ ९ ॥
पर्यावर्तन विशसन भाई । शूल प्रोत तनु छेदत राई ॥ १० ॥

दोहा- दंदशूक पूयोद अरु, सारमेय संदंश ।
तप्तसूर्मी भी कठिन, क्षार पंक तनु भ्रंश ॥१३६॥

चौ- काल सूत्र वैतरणी भारी । ये सव तामिस्र नरक महाभयकारी ॥ १ ॥
जो परद्रव्य पुत्र तिय हारी । सो तामिस्र नरक अधिकारी ॥ २ ॥
वाँधत पाश दूत गल तेही । खान पान ताडन दुख देही ॥ ३ ॥
दुखी होय मूर्छित वह कोई । पाकर कष्ट महा सो रोई ॥ ४ ॥
धोका परपुरुषन प्रति देही । तिय आदिक उन काजे सेही ॥ ५ ॥
करहिं अन्धतामिस्र पयाना । पावत यहाँ यातना नाना ॥ ६ ॥
भग्न वृक्ष सम सो दुख पाही । नष्ट दृष्टि सव मति नसाही ॥ ७ ॥
यह मम अहंभाव जो आने । करत वैर प्राणिन मनमाने ॥ ८ ॥
निज कुटुम्व पालन प्रिय जाना । सो रौरव विच करे पयाना ॥ ९ ॥
जिन प्राणिन जो जीव नसावे । वहीं जन्तुवर भव उन खावे ॥ १० ॥

दोहा- जो केवल निज देह की, करे पालना आय ।
नरक महा रौरव वह, यम दूतन संग जाय ॥१३७॥

चौ- क्रव्याद नाम रुरु गण उन माँसा । खावत छोड़त नहीं ज़रा सा ॥ १ ॥
सर्पन ते भी रुरु अधिकाई । यही हेतु महारौरव गाई ॥ २ ॥
अंडज पशू सजीव उवाले । उन परलोक वीच यम घाले ॥ ३ ॥
तप्त तैल यमदूत उठाही । कुंभीपाक नरक औटाही ॥ ४ ॥

पिता मात विप्रन प्रति द्रोही । कालसूत्र विच जावत सोही ॥ ५ ॥
तप्त ताम्रमय समतल देशा । दह्यमान सुत क्षाम विशेशा ॥ ६ ॥
पशूरोम सम हर्ष हजारी । तड़फत वहँ दुख पावत भारी ॥ ७ ॥
जे निज वेद मार्ग को तजही । पाखंडधर्म का सेवन करही ॥ ८ ॥
असीपत्र वन सो भयभीता । कशा प्रहार करत यमदूता ॥ ९ ॥
छिद्यमान तनु सब असिपाना । पात यातना पद पद नाना ॥ १० ॥

दोहा- **हाय हाय मैं मर गया, वोलत ऐसे वैन ।**
मूर्छित होकर महि गिरे, पावत ना मन चैन ॥१३८॥

चौ- एवं वेद धर्म परित्यागी । हो पाखंड मार्ग अनुरागी ॥ १ ॥
अशुभ करम फल पावत ऐसे । तडफत मीन अवनि तल जैसे ॥ २ ॥
राज करम चारी अरु राजू । दंडहीन प्रति दंड अकाजू ॥ ३ ॥
विप्रन प्रति तनु दंड प्रदाता । सो शूकरमुख बीच सिधाता ॥ ४ ॥
इक्षुदंडवत पेलत तेही । बेसुध हो दुख पावत देही ॥ ५ ॥
ईश्वर कल्पित वृत्तिन भूता । व्यथा देत तेहि मारत दूता ॥ ६ ॥
अंध कूप बीचे सो जाही । पावत महा कष्ट यहँ राही ॥ ७ ॥
मशक यूक मतकुण विष माखू । पशु पक्षी मृग सर्प व आखू ॥ ८ ॥
वृश्चिकादि कीट तनु खावत । अंधकूप तम सो भटकावत ॥ ९ ॥
अकृत पंच यज्ञ जो खाही । वायस सम सो अन्न कहाही ॥ १० ॥

दोहा- **कृमी भूत होकर वह, कृमी कुंड के बीच ।**
कृमि भोजन में सो गिरे, खावत कृमि तनुनीच ॥१३९॥

चौ- जो जन जबरन चोरी करही । पर कंचन अरु द्विज धन हरही ॥ १ ॥
सो संदंश नरक बिच जाही । संडासिन तनु दूत खिंचाही ॥ २ ॥
नार अगम्या के संग रमहीं । तिय अगम्य पुरुष को भजहीं ॥ ३ ॥
तप्त सूरमी नामक नरका । ताडित चाबुक तनु उस नरका ॥ ४ ॥
तप्त लोहमयि प्रतिमा दूता । आलिंगन करवाते भूता ॥ ५ ॥
पशु सह करते जो व्यभिचारा । शेमलकंटक व्रज अपारा ॥ ६ ॥
दूत चढ़ावत उसके ऊपर । पटकत प्राणिन को पुनि भूपर ॥ ७ ॥
राजा राज पुरुष ये दोई । धर्म मार्ग भेदत यदि कोई ॥ ८ ॥
विष्ठा मूत्र पूय नख केशा । शोणित अस्थि व मेद प्रदेशा ॥ ९ ॥
सरिता वैतरणी दुख दाई । ये नर इस विच करे पलाई ॥ १० ॥

दोहा- **शूद्रा सह करते रमण, नाशत शोचाचार ।**
वे मरने के बाद में, पावत कष्ट अपार ॥१४०॥

चौ- पूय श्लेष्म विष्ठामल मूता । डारत गत खिलावत दूता ॥ १ ॥
उच्च वर्ण अरु ब्राह्मण कोई । पालत स्वान व गर्दभ जोई ॥ २ ॥
जे नर मृगया के शौकीना । मारत पशु जो यज्ञ विहीना ॥ ३ ॥
वेधत प्राण रोध शरदूता । छाँडत ना उन नर न अछूता ॥ ४ ॥
दाम्भिक दम्भ यज्ञ पशु घाती । वैशस नाम नरक विलखाती ॥ ५ ॥
जो नर कामातुर अतिजाता । निज सवर्ण तिय रेतस पाता ॥ ६ ॥
लालाभक्ष नरक सो जावे । दूत तेहि रेतस पिलवाये ॥ ७ ॥
राजकरमचारी नृप तस्कर । हरे प्राणधन जो विष देकर ॥ ८ ॥
ग्राम प्रजाजन को जो लूटत । नरक वज्रदंष्टा सो पावत ॥ ९ ॥
ऊपर बीस सात सौ श्वाना । करते उन प्राणिन लहुपाना ॥ १० ॥

दोहा- **जो साक्षी अनृत वदत, बीच दान व्यवहार ।**
नरक अवीचि में वह, जावत विन आधार ॥१४०॥

चौ- शत योजन गिरि ऊपर ऊँचे । जाकर दूत गिरावत नीचे ॥ १ ॥
खंड खंड होकर भी प्रानी । निसरत प्राण तदपि नहि जानी ॥ २ ॥
ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य व नारी । भ्रमवश मदिरा पान प्रचारी ॥ ३ ॥
सो अयपान नरक बिच जावे । तपत लोह रस उस मुख पावे ॥ ४ ॥
तप विद्या वर्णाश्रम धारी । मानत जो इनको न अनारी ॥ ५ ॥
मानत लघु इन निजहिं महाना । सो नर जीवित मृतक समाना ॥ ६ ॥
नरक क्षार करदम प्रति जाही । शिर नीचे करि दूत गिराही ॥ ७ ॥
पुरुष मेध द्वारा इह भैरव । राक्षस यक्षन पूजत मानव ॥ ८ ॥
करते सो यमलोक पयाना । देवत दूत यातना नाना ॥ ९ ॥
बीच नरक रक्षोगण भोजन । पीवत लहु तनु छेदत शस्त्रन ॥ १० ॥

दोहा- **निर अपराधिन जीव को, जो विश्वास दिलाय ।**
कंटक से वेधन करे, रशना से बँधवाय ॥१४२॥

चौ- समय यातना यम की आवे । शूल प्रोत नरक सो जावै ॥ १ ॥
वहाँ शूल वेधत जब दूता । पावत सो नर दुःख अकूता ॥ २ ॥
कंक वटेर तुंड जिन तीखी । छोलत छोई यथा नर ईखी ॥ ३ ॥
हन्यमान इन पक्षिन द्वारा । आवत याद कुपाप अपारा ॥ ४ ॥

जे प्राणिन प्रति त्रास प्रदाता । दंद शूक इति नरक सिधाता ॥ ५ ॥
पाँच सात मुख साँप विशाला । निगरत मूषक सम विकराला ॥ ६ ॥
जे गुह पिञ्जर प्राणिन रूँधे । अवट निरोध नरक बिच ऊँधे ॥ ७ ॥
दूत वहाँ उसको लटकावत । धूम्र गरल वह्नि बिच घोटत ॥ ८ ॥
गृहस्थ गेह जब अतिथि आवे । वक्र दृष्टि उस प्रति घुरवि ॥ ९ ॥
गीध काक वट कंक अपारी । वज्र तुंड ते नयन उखारी ॥ १० ॥

दोहा- **पर्यावर्तन नरक में, काढत उसकी खाल ।**
बलपूर्वक सब पक्षिगण, खावत माँस निकाल ॥ १४३॥

चौ- जे धन गर्वित अति अभिमानी । द्रव्य नाश चिन्ता निजजानी ॥ १ ॥
शुष्क वदन अरु हृदय सुखाही । रक्षक यक्ष समा मन लाही ॥ २ ॥
सो सूचीमुख नरक सिधाता । सीवत सूत्र दूत उस गाता ॥ ३ ॥
इति यम सदन अनेक अकारा । नरक कष्ट प्रद विविध प्रकारा ॥ ४ ॥
पापी करते नरक प्रवेशा । धर्मी जावत स्वर्ग प्रदेशा ॥ ५ ॥
हो जब धर्म व पाप समाना । मर्त्य लोक नर करत पयाना ॥ ६ ॥
निवृति मार्ग प्रथम हम गाया । अपर स्कंध बीचे बतलाया ॥ ७ ॥
वरणन चौदह भुवन पुराणा । अखिल सृष्टि का यही प्रमाणा ॥ ८ ॥
यह माया मय हरि स्वरूपा । पढ़हि सुनावहि सुनहिं जे भूपा ॥ ९ ॥
शुद्ध बुद्धि सह हरि पद भकती । अन्त काल पावत फल मुकती ॥ १० ॥

दोहा- **स्थूल रूप भगवान में, यत्न शील गुणवान ।**
प्रथम चित्त लवलीन कर, सूक्ष्म रूप पुनि आन ॥१४४॥क
द्वीप खंड अवनि नदी, नभ परवत पाताल ।
सिन्धु दिशा नरकन गति, ज्योतिश्चक्र विशाल ॥ १४४॥ख
सूक्ष्म रूप भगवान का, तब प्रति कियो बखान ।
सब प्राणिन समुदाय का, आश्रय यहि तुम जान ॥१४४॥ग
गाथा पंचम स्कंध की गाई बजरंग लाल ।
सुनकर भव बन्धन इसे मिट जावे तत्काल ॥ १४४॥घ

इति श्री कृष्ण चरितामृते कलिमल विध्वंशने बजरंगकृत । श्री मद्भागवते
महापुराणे पारमहस्यां संहितायां समासोऽयं पञ्चम स्कंध ॥
हरि ॐ तत्सत्

॥ श्री गणेशाय नमः ॥

श्री राधा वल्लभो विजयते

श्री मद्भागवत प्रारम्भः

षष्टम स्कंधः

श्लोक

वन्दे नारायणं देवं, रमाकान्तं स्वयंभुवम् ।
विश्व नाथं हरीं विष्णुं, ब्रह्माण्डाखिल नायकम् ॥ १ ॥
वन्दे जगत कर्तारं, भर्तारं भव हारणम् ।
देवकी नन्दनं कृष्णं संसारार्णवतारणम् ॥ २ ॥

दोहा- **वासुदेव भगवान को, वन्दों वारम्वार ।**
गाथा षष्टम स्कंध की, गाऊँ मति अनुसार ॥ १ ॥ क
बोले नृप शुकदेव से, मोक्ष मार्ग महाराज ।
कियो यथावत आदि में, वरणन तुम मम काज ॥१॥ख

चौ- वाद निवृत्ति ते मारग जीवा । अर्चिरादि पथ ते मुनि सींवा ॥ १ ॥
ब्रह्मलोक बीचे यह जाता । होवत वाद मोक्ष सहधाता ॥ २ ॥
बाद सर्ग गुण भोग अपारा । देहारंभ मार्ग विस्तारा ॥ ३ ॥
पाछे प्रकृति लक्षण गाथा । नाना नरक व पाप बताया ॥ ४ ॥
प्रियव्रतादि दोउ भ्रातन गाया । द्वीप खंड गिरि सागर साथा ॥ ५ ॥
वन उपवन सरिता सह सारी । कथा मुनीश्वर सभी उचारी ॥ ६ ॥
लक्षण स्थान विभाग व माना । भूमंडल ग्रह विवर प्रमाना ॥ ७ ॥
यथा धात सरजन सब कीन्हे । सो श्री मुख ते सब सुन लीन्हे ॥ ८ ॥
नरक यातना अब जिमि नाहीं । सो सब गाथा कहू बुझाई ॥ ९ ॥
कहे वचन जब इति कुरु नंदन । बोले वचन मुनी दुःख भंजन ॥ १० ॥

दोहा- **इह मन काया वचन ते, बाँधे पाप पहार ।**
वे प्रायश्चित से घटे, अकृत नरक मँझार ॥ २ ॥

चौ- जे प्रायश्चित मनुज अकर्ता । नरक बीच जाकर वह गिरता ॥ १ ॥
मृत्यु पूर्व सब पाप निवारण । करें साधना पाप परायण ॥ २ ॥
निदान ज्ञान भिषक जिमि भाई । करत रोग का प्रथम उपाई ॥ ३ ॥
जानत यद्यपि नर यह बाता । पाप मनुज का शत्रु कहाता ॥ ४ ॥

तदपि मनुज यह बारम्बारा । करता पाप मुनीश अपारा ॥ ५ ॥
करता प्रायश्चित अघहरी । बनता फिर भी पाप प्रचारी ॥ ६ ॥
व्यर्थ परिश्रम यह हम जाना । यह माना कुंजर स्नान समाना ॥ ७ ॥
यह सुनि मुनि नन्दन इति बोले । कहे वचन नृप वर तुम तोले ॥ ८ ॥
नाश करम का कर्मन द्वारा । होत समूल न किसी प्रकारा ॥ ९ ॥

दोहा- **अज्ञानी के वास्ते, हैं ये सभी विधान ।**
पाप मूल सब वासना, मेट सके भगवान ॥ ३ ॥

चौ- प्रभू रूप का हो जब ज्ञाना । साँचा सुख सो वही बखाना ॥ १ ॥
कर्म वासना जड़ से सारी । उखरत हों हरि भकति अपारी ॥ २ ॥
करहिं पथ्य सेवन जो कोई । सो न कदापि रोग वश होई ॥ ३ ॥
जो नर सदा नियम को पाले । सो सब पापन को धो डाले ॥ ४ ॥
हरि पद पंकज पाप नसाई । यथा अनल वेणू समुदाई ॥ ५ ॥
त्याग शौच शम दम तप दाना । सत्य व ब्रह्मचर्य व्रत ज्ञाना ॥ ६ ॥
देहवाक् बुद्धिज सब पापा । नाशत रजनीपति जिमि तापा ॥ ७ ॥
केवल हरि भकति अघ नासे । यथा सुभानु निहार विनासे ॥ ८ ॥
प्राणार्पित हरि संतन सेवा । करत पवित्र अन्य दुख देवा ॥ ९ ॥
भक्ति पंथ बिच नहिं कठिनाई । सुभग स्वरूप सुश्रेष्ठ कहाई ॥ १० ॥

दोहा- **साधु सन्त जन हों जहाँ, नारायण लव लीन ।**
पापी जन जाकर वहाँ, होत पूत अघहीन ॥ ४ ॥

चौ- नारायण ते वेमुख होही । प्रायश्चित करते नर जोही ॥ १ ॥
सोन कदापि होत पुनीता । मद पूरित घट नहि सुरसरिता ॥ २ ॥
कृष्ण पदारविन्द अनुरागी । होत पवित्र सदा सुखभागी ॥ ३ ॥
स्वप्न बीच यम भट सैना । देख सकै वह ना निज नैना ॥ ४ ॥
सुनौ एक इतिहास पुरातन । विष्णु व यमदूतन संभापन ॥ ५ ॥
कान्यकुब्ज इक नगर पुरातन । अजामिल्ल द्विज एक अपावन ॥ ६ ॥
दासी संग सो दूषित होई । सदाचार वह द्विज सब खोई ॥ ७ ॥
चौरी द्यूत व निन्दित कामी । पालत परिजन सो निशि यामी ॥ ८ ॥
लालन पालन कर दासेया । साठ बीस वय व्यर्थ वितैया ॥ ९ ॥
अजामील के दस सुत जाता । लघु नारायण इति विख्याता ॥ १० ॥

दोहा- **वक्ष हृदय कल भाषण, क्रीडादिक लखि बाल ।**
खान पान उन मुदित हो, आगत लखा न काल ॥ ५ ॥

चौ- एवं द्विज वह महा अनारी । आवा मृत्यू काल करारी ॥ १ ॥
इत मति नारायण सुत जाता । जीव निकासत उत भय दाता ॥ २ ॥
पाश हस्त दारुण दुख कारी । दन्त कराल नयन विकरारी ॥ ३ ॥
ऊर्ध्व रोम अति भीषण तुण्डा । आत लखे नर तीन प्रचण्डा ॥ ४ ॥
तेहिकाल द्विज सुत नारायण । खेल कूद प्रति रहे परायण ॥ ५ ॥
अजामील इत लख यमदूता । त्रसित हृदय कीन्हा मल मूता ॥ ६ ॥
उच्च स्वर तब दुखी अपारा । नारायण इति बाल पुकारा ॥ ७ ॥
सुन म्रियमाण वदत हरि नामा । आये विष्णु दूत द्विज धामा ॥ ८ ॥
जीव अजामिल खींचन वारे । वे यम भट इन तुरत निवारे ॥ ९ ॥
तब यम दूत देख हरिदूता । इन प्रतिबोले वचन अधूता ॥ १० ॥

दोहा- **धर्मराज शासन प्रति, कीन्हे आप विरोध ।**
इतना भी कुछ आपको, रहा जरा नहिं बोध ॥ ६ ॥

चौ- तुम हो कवन कहाँ से आये । देव सिद्ध उपदेव कहाये ॥ १ ॥
पद्मनेत्र पीताम्बर धारी । सीस मुकुट श्रुति कुंडल भारी ॥ २ ॥
शंख व चक्र गदाम्बुज राजे । भुजा चार नूतन वय साजे ॥ ३ ॥
ककुभा तम जिन तेज विनाशे । आभ पुंज मुख कंज प्रकासे ॥ ४ ॥
धर्मराज दूतन केहि कारण । कीन्हा आकर यहाँ निवारण ॥ ५ ॥
इति यमदूत वचन सुन काना । बोले विष्णु दूत गुणवाना ॥ ६ ॥
यदि तुम धर्मराज के किंकर । भाखउ धर्म तत्व समझाकर ॥ ७ ॥
दंड पात्र अरु दंड विधाना । कवन कर्म नर दंडित माना ॥ ८ ॥
दंडनीय क्या मानव सारे । या उनमें कुछ बचत विचारे ॥ ९ ॥
इति हरिदूत वचन सुन काना । बोले यमभट वचन प्रमाना ॥ १० ॥

दोहा- **श्रुति प्रेरित सब धर्म है, श्रुति विपरीत अधर्म ।**
वेद स्वयं भगवान है, जाना गुरु मुख मर्म ॥ ७ ॥

चौ- सब प्राणीजन सभी पदारथ । रहते हरि बिच सभी यथारथ ॥ १ ॥
नाम रूप गुण करमन द्वारा । करत विभाजन श्रुति उन सारा ॥ २ ॥
जीव देह मन वृत्तिन द्वारा । करता कर्म अनेक प्रकारा ॥ ३ ॥
जिनकी साख विधू रवि वाता । अगनि नाम गौ काल प्रभाता ॥ ४ ॥

अहराती संध्या दिश नीरा । भू निज धरम भरहिं आखीरा ॥ ५ ॥
हो अघ निर्णय कई प्रकारी । तब हो दंड व्यवस्था जारी ॥ ६ ॥
निज निज करमन के अनुसारी । दंडनीय होवत नर नारी ॥ ७ ॥
देखा इस जग में ना कोई । देही कर्म करे ना सोई ॥ ८ ॥
पाप व पुण्य अनेक प्रकारा । हो अवश्य कर्मों के द्वारा ॥ ९ ॥
देहवान होकर जग माँही । कर्म बिना रह सकता नाँही ॥१० ॥

दोहा- **देही इस संसार में, दंडनीय सब कोय ।**
जो जैसा करमन करे, वैसा ही फल होय ॥ ८ ॥ क
देखो इस संसार में, प्राणी तीन प्रकार ।
धर्मी पापी बीच के, सुखी दुखी सम धार ॥ ८ ॥ ख

चौ- परलोक बीच भी इसी प्रकारा । करहु निदान यहाँ के द्वारा ॥ १ ॥
भूत भविष्यत का अनुमाना । करहु वर्तमान सम ज्ञाना ॥ २ ॥
जो यम राज हमारे स्वामी । देव प्रवर यह अन्तर यामी ॥ ३ ॥
इनको नाहिं जरूरत ऐसी । जीव बीच यह सदा प्रवेसी ॥ ४ ॥
पूर्व रूप जो धर्म अधर्मा । जानत ये सब प्राणिन कर्मा ॥ ५ ॥
स्वप्न बीच जैसे यह प्रानी । भूलत जिमि सब देह निसानी ॥ ६ ॥
जीव जन्म ले सब स्मृति नासे । पूर्वापर इसको ना भासे ॥ ७ ॥
स्थूल शरीर न जानउ ऐही । रहती लिंग देह सब देही ॥ ८ ॥
मनवश इन्द्रीयन संग लेही । सब विषयन को येही सेही ॥ ९ ॥
सौलह अंश तीन गुण धारी । दारुण लिंग शरीर अपारी ॥ १० ॥

दोहा- **लिंग देह ही जीव को, हर्ष न शोक प्रदात ।**
जन्म मृत्यु के चाक में, सबको यही चलात ॥ ९ ॥

चौ- देही इस जग में अति मोही । युक्ति न निर्गम जानत तोही ॥ १ ॥
जन्म जात गुण परवश होही । करता कर्मन रोकत कोई ॥ २ ॥
पूर्व कर्म वश होकर देही । धारत स्थूल सूक्ष्म तनु ये ही ॥ ३ ॥
प्रकृति संग ते व्यतिक्रम जाता । ईश भजन मुक्ति फल दाता ॥ ४ ॥
सत्यवान यह श्रुत गुणवंता । शील वान युत अन्न धनवन्ता ॥ ५ ॥
मृदु शुचि दामवन्त व्रतधारी । रहित घमंड मंत्रवित भारी ॥ ६ ॥
वृद्ध अगनि गुरु अतिथिन सेवा । पूजत साधुन सह सब देवा ॥ ७ ॥
एक समय आज्ञा पितु पाई । कुश समिधा हित विपिन सिधाई ॥ ८ ॥

पंथ बीच मदिरा कृतपाना । शूद्रामत्त एक कृत गाना ॥ ९ ॥
नग्न देह वय नूतन भेषी । क्रीड़ा करत शूद्र संग देखी ॥ १० ॥

दोहा- **गावति क्रीडा करति यों, आलिंगित भुज पास ।**
देख काम मोहित यह, नासा ज्ञान प्रकास ॥१० ॥

चौ- रोकेउ यद्यपि ज्ञान प्रभावा । तदपि न निजमन वश कर पाता ॥ १ ॥
मदन वेग विमोहित होई । सुध बुध तनु की यह द्विज खोई ॥ २ ॥
काम व्याप्त शूद्रा कर ध्यानी । धर्म भृष्ट हो निज द्विज ज्ञानी ॥ ३ ॥
शूद्रा के संग गेह सिधावा । मात पिता धन तुरत नसावा ॥ ४ ॥
नव यौवनि निज परिणित नारी । सती साध्वी तजी विचारी ॥ ५ ॥
सुकृत अकृत मारग धन लाई । परिजन शूद्रा केर खिलाई ॥ ६ ॥
शास्त्राचार उलंघन कीन्हो । पाप करम बिच अति चित दीन्हो ॥ ७ ॥
दंड पाणि प्रति हम ले जैहीं । प्राप्त दण्ड पावन तब देही ॥ ८ ॥
कह शुकदेव हे कुरु कुल त्राता । जब यम दूत कही इति बाता ॥ १० ॥

दोहा- **तब यमदूतन ते कहे, नीति चतुर हरिदूत ।**
धर्म सभा के भवन भी, धर्म न बचा अछूत ॥ ११ ॥

चौ- खावत खेत यदा जब बारी । होवहिं रक्षा कवन प्रकारी ॥ १ ॥
अहो कष्ट की बात बताई । धर्म सभा किय पाप पलाई ॥ २ ॥
दंड जहाँ पर पात अंदडित । कहते धरम सभा नहिं पंडित ॥ ३ ॥
धर्मराज तो पिता समाना । पालत रैयत इति हम जाना ॥ ४ ॥
अरे विषमता यदि उन आवे । कवन शरण रैयत यह जावे ॥ ५ ॥
जे जे कर्म श्रेय जन करही । सो प्रमाण लख नर अनुसरही ॥ ६ ॥
धर्म अधर्म सदा पहिचाने । जेहि विश्वास पात्र जग जाने ॥ ७ ॥
कर विश्वास मनुज यदि कोई । उस नर अंक सीस धर सोई ॥ ८ ॥
धोका दे सकता नर ऐसा । तो विश्वास पात्र पुनि कैसा ॥ ९ ॥
यह द्विज कर हरि नाम उचारन । कोटि जनम अघ कियो निवारन ॥ १० ॥

दोहा- **नारायण इति वदत, ही होवत पाप विनास ।**
चौर सुरापी मित्र ध्रुव, हो गुरु तल्पग खास ॥ १२ ॥

चौ- तिय द्विज नृपति पितर गौहन्ता । रहे और जग पाप अनन्ता ॥ १ ॥
सब पापी हरि नाम उचारे । तब हरि उनके दुरित निवारे ॥ २ ॥
विष्णु नाम ही शुद्धि प्रदाता । इस सम अन्य न दुरित नसाता ॥ ३ ॥

पाप नसावन यदि रूचि होई । तो हरिनाम रहो सब कोई ॥ ४ ॥
विष्णु नाम सब पाप नसावत । यहि सब श्रेष्ठ उपाय बखानत ॥ ५ ॥
यह म्रियमाण विप्र हरि नामा । कियो उचारण पूरण कामा ॥ ६ ॥
यहि यम सदन मती ले जाहू । दुरित न शेष रहा तनु याहू ॥ ७ ॥
संकेत स्तोभ हेलन परिहासा । हरि सुमिरत सब दुरित विनाशा ॥ ८ ॥
पतित स्खलित वेला तनु भंगा । दंश ज्वरादिक किसी प्रसंगा ॥ ९ ॥
निज मुख हरि इति नाम पुकारत । सो न यातना यम की पावत ॥ १० ॥

दोहा - मनु आदिक ऋषि मुनिजन, लघु गुरु कई उपाय ।
पाप निवारन के लिये, दीन्हे सभी बताय ॥ १३ ॥

चौ- साधन दान जाप तप द्वारा । नसत दुरित ये विविध प्रकारा ॥ १ ॥
किन्तु हृदय अघ जन्म प्रदाता । अरे कदापि शुद्ध नहि जाता ॥ २ ॥
नही वासना मन की नासे । हरि कीर्तन ही ज्ञान प्रकासे ॥ ३ ॥
वश बेवश हरि नाम उचारे । अनल काष्ट सम सब अघ जारे ॥ ४ ॥
ग्यात अग्यात सुधा किय पाना । सो अमरत्व पात इति माना ॥ ५ ॥
निज फल देवत विविध अपारा । नाम मंत्र भी येन प्रकारा ॥ ६ ॥
हों यदि इसमें संशय भाई । पूछहू धर्म राज प्रति जाई ॥ ७ ॥
परम सुगुह्य धरम की बाता । जानत वे यम सब परित्राता ॥ ८ ॥
कहे व्यास नन्दन सुन राया । उन प्रति वैष्णव धर्म सुनाया ॥ ९ ॥
याम्य पाश पुनि विप्र निकारी । मृत्यु वदन ते लियो निवारी ॥ १० ॥

दोहा- **याम्य दूत द्विज सदन ते, यमपुर पहुँचे आय ।**
हरि दूतन सम्वाद सब, यम प्रति दियो सुनाय ॥ १४ ॥

चौ- पाश मुक्त इत द्विज हरि दूतन । सीस झुकाय कियो उन वन्दन ॥ १ ॥
करत प्रार्थना जब द्विज जाना । तदा दूत भये अन्तरध्याना ॥ २ ॥
वह द्विज सुन उन दूतन वानी । आत्मा बीच लगा पछितानी ॥ ३ ॥
पूर्व पाप निज सुमिरेउ सारे । मन ही मन इति वचन उचारे ॥ ४ ॥
मैं तो ब्रह्मतेज ते हीना । दासी संग रहा लवलीना ॥ ५ ॥
अरे धिक धिक मोहि वारम्बारा । मैं निन्दित सन्तन कर द्वारा ॥ ६ ॥
मैं अजितात्मा अरु महापापी । कुल प्रति कज्जल अरु रहा सुरापी ॥ ७ ॥
उस कुलटा संग कर संसर्गा । सती साध्वी तिय तजि संगा ॥ ८ ॥
मात पिता मम वृद्ध अनाथा । नीच समान तजेऊ उन साथा ॥ ९ ॥

दोहा- **मात पिता सेवा तजी मैं कृतघ्न अति नीच ।**
जावहुँ अब भृश दारुण उन नरकन के बीच ॥ १५ ॥

चौ- जहाँ धरम घाती नर जाही । किन्तु न ठौर वहाँ मोहि नाही ॥ १ ॥
अभी दृश्य अद्‌भुत जो देखा । क्या यह सुपना रहा विशेषा ॥ २ ॥
वा साक्षात दृश्य यह देखा । चाहे कुछ पर रहा विशेषा ॥ ३ ॥
अहो अभी वे पाश सहारे । गये कहाँ मोहिं खीचन हारे ॥ ४ ॥
पाश बीच बाँधा जिन मोहीं । ले जावत भू नीचे सोही ॥ ५॥
नीयमान उनते मम मोचन । कीन्हा करुणा कर दे दरसन ॥ ६ ॥
गवने सिद्ध कहाँ वे चारी । चारु नैत्र सुन्दर तनुधारी ॥ ७ ॥
मैं हूँ अरे जगत बड़ पापी । कामी दुर्गुण सहित सुरापी ॥ ८ ॥
जे जे दुर्गुण जग में होई । मोसे एक बचा नहीं कोई ॥ ९ ॥
किन्तू पूर्व जनम इस गाता । हरि भजनादिक सुकृत जाता ॥ १० ॥

दोहा- **यही हेतु मुझको हुआ, उन सिद्धन के दर्श ।**
अब मुझको कैसे मिले, करहु कहाँ पद स्पर्श ॥ १६ ॥क
पूर्व जनम के बीच में, करता पुण्य न गात ।
तो मरने के समय अब, हरी नाम क्यों आत ॥ १६॥ख

चौ- कहाँ मन्द मति मैं खल कामी । निलज पातकी कुलटागामी ॥ १ ॥
कहाँ नाम नारायण पावन । मंगल कर सब पाप नसावन ॥ २ ॥
अब मैं मन इन्द्रिय अरु प्राना । करु यतन वश हेत महाना ॥ ३ ॥
मोह काम अरु कर्मज बन्धन । करूँ वासना सभी निवारन ॥ ४ ॥
दीन दुखी पर दया अपारा । करूँ मित्रता का व्यवहारा ॥ ५ ॥
स्त्री रूपी नारायण माया । क्रीडा मृग इव मोहि नचाया ॥ ६ ॥
सो माया अब दूर भगाहूँ । मम ममपन इति भाव नसाहूँ ॥ ७ ॥
अब निज मन को शुद्ध बनाऊँ । भगवन्नाम कीरतन गाऊँ ॥ ८ ॥
जे हरिचरण कमल चित धारे । उस नर का यम कहा बिगारे ॥ ९ ॥
नाम ज्ञान सतसंग प्रभावा । हरीद्वार अब वह द्विज आवा ॥ १० ॥

दोहा- **देव सदन बीचे वहाँ, योग मार्ग अनुसार ।**
सब गुण ते मन खींच कर, लीन्हा हरि आधार ॥ १७ ॥

चौ- द्विज तनु त्याग समय में सारे । तब वे विष्णु दूत पधारे ॥१॥
जब द्विज विष्णु दूत लखाये । करी बन्दना सीस नवाये ॥ २ ॥

गंगा बीच कलेवर त्यागी । दिव्य रूप धर द्विज बड़ भागी ॥ ३ ॥
तब चढ़ि दूतन सहित विमाना । गयो धाम वैकुंठ निधाना ॥ ४ ॥
दासी पति द्विज पतित अपारा । सद्य मुक्त हरि नाम अधारा ॥ ५ ॥
त्यागे धरम करम इह सारे । एक सिर्फ हरि नाम सहारे ॥ ६ ॥
नाम उचारण बिन भव बन्धन । होत कदापि नहीं निवारण ॥ ७ ॥
मुकती फल चाहत यदि कोई । नाम उचारण ते वह होई ॥ ८ ॥
परम गुह्य यह द्विज इतिहासू । श्रवण करत सब पाप विनासू ॥ ९ ॥
श्रृद्धा सह महि कीरतन करहीं । वे नर नरक बीच ना परहीं ॥ १० ॥

दोहा— **यम किंकर तो स्वप्न में, भी ना दीखत आय ।**
पापी जन भी श्रवण कर, नारायण पुर वाय ॥ १८ ॥क
सुत उप चारित नाम ते, गयो विप्र हरि धाम ॥
श्रृद्धा सह भजतेहरि, क्यों नापूरण काम ॥ १८ ॥ ख

चौ- अब नृप मुनि से बोलत होले । दूत वचन सुन यम किमि बोले ॥ १ ॥
दंड भंग यम का जग माँही । सुना पूर्व मैंने मुनि नाही ॥ २ ॥
संशय लोक निवारण करहू । कहे मुनीश नृपति तुम सुनहू ॥ ३ ॥
याम्य दूत हरि दूतन द्वारा । विप्र अजामिल कियो निवारा ॥ ४ ॥
यमसेवक तब यम प्रति आये । समाचार सारे इति गाये ॥ ५ ॥
कर्म जगत बिच त्रिविध प्रकारा । मिश्रित पाप व पुण्य विचारा ॥ ६ ॥
उन सब करमन के फल दाता । शासक जीव लोक कति जाता ॥ ७ ॥
यदि शासक जग में बहु जाता । तो सुख में दुख सुख दुख दाता ॥ ८ ॥
अलग अलग करमन फलदाता । अलग अलग यदि शासक जाता ॥ ९ ॥
तदपि नाथ नहि वे तव ऊपर । तुम सब जीवन के परमेश्वर ॥ १० ॥

दोहा- **तुम प्राणिन के दंडधर, कर शुभ अशुभ विचार ।**
किन्तु नाथ शासन यह, चला न अब की बार ॥ १९ ॥

चौ- कथा दंड अब तक नहि जाता । देखा कबहुँ न जग बिच ताता ॥ १ ॥
किन्तु आज इस जग में चारी । अद्भुत देखे सिद्ध अपारी ॥ २ ॥
तव आज्ञा कीन्ही उन भंगा । आयो वाद विवाद प्रसंगा ॥ ३ ॥
तव आदेश नाथ अनुसारी । रहा पातकी जो अति भारी ॥ ४ ॥
गये आज उसके हम गेहा । बाँधी पास अहो उस देहा ॥ ५ ॥

भयो पातकी तबै दुखारी । नारायण इति नाम पुकारी ॥ ६ ॥
डरहु न तव इति वचन उचारी । आये सिद्ध वहाँ पर चारी ॥ ७ ॥
आवत उन पापी गल पाशी । काटी तव हम भये उदासी ॥ ८ ॥
अब यह नाथ आप बतलाहू । ये सब कवन कहाँ घर याहू ॥ ९ ॥
यों निज दूत वचन सुन लीन्हे । तब यम हरि पद सुमिरन कीन्हे ॥ १० ॥

दोहा- **अब निज दूतन प्रति, यम बोले गिरा उचार ।**
मुझसे भी ईश्वर परे, है यक जगदाधार ॥ २० ॥

चौं- स्थिति लय अरु जग पालन कारी । ओत प्रोत पट सम संसारी ॥ १ ॥
रहे जगत यह जासु अधीना । यथा दाम युत वृषभ नवीना ॥ २ ॥
नाम दाम जिन बाँधे सारे । विप्रादिक जन वेद सहारे ॥ ३ ॥
हो भय भीत करहि जिन सेवा । देवत भेट सदा उन देवा ॥ ४ ॥
उन हरि के नहि कोई विचारा । जान सके ना किसी प्रकारा ॥ ५ ॥
मैं महेन्द्र विधु निरति प्रचेता । अगनि गिरीश व पवन समेता ॥ ६ ॥
रूद्र मरुद्गण वसु अमरेशा भृगु आदिक मुनि धात दिनेशा ॥ ७ ॥
चैष्ठा उन हरि की ना जाने । माया मोहित नहि पहिचाने ॥ ८ ॥
मम सिवाय वहि ईश्वर दूजा । करूँ सदा जिनकी मैं पूजा ॥ ९ ॥
हरि किंकर भी हरी समाना । विचरत जगत करत कल्याना ॥ १० ॥

दोहा- **हरि किंकर हरि भक्तन, हरते पाप पहार ।**
मुझ यम का उनको भय, होत न किसी प्रकार ॥ २१ ॥

चौं- प्रभू प्रणीत धर्म ना देवा । जान सकै किमि मानव भेवा ॥ १ ॥
रिषि मुनि सिद्ध व असुर व किन्नर । चारणादिक अरु सब विद्याधर ॥ २ ॥
जाना ना यह विष्णु प्रभाऊ । अरे जगत बिच और न काऊ ॥ ३ ॥
जानत ब्रह्मा कपिल व नारद । भीष्म जनक शुक ज्ञान विशारद ॥ ४ ॥
बलि प्रहलाद व शंभु कुमारा । उन प्रभाव मैं जानउ सारा ॥ ५ ॥
वैष्णव धर्म गुह्य यह जाने । यहि सन मोक्ष मार्ग पहिचाने ॥ ६ ॥
परम धरम इह नाम उचारण । भक्ति योग कर भगवत दरसन ॥ ७ ॥
नाम प्रभाव लखेउ तुम आजी । हे पुत्रन यह घटना ताजी ॥ ८ ॥
विप्र अजमिल नाम प्रभावा । पाश मुक्त हरि धाम सिधावा ॥ ९ ॥
हरि गुण कर्म व नाम उचारण । हरि पूजन नर पाप निवारण ॥ १० ॥

दोहा- **विप्र अजामिल भी अरे, नारायण इति नाम ।**
पुत्र बहाने लेकर, गमन कियो हरि धाम ॥ २२ ॥

चौ- भाषे ऋषि मुनि वेद सहारे । पाप निवारक साधन सारे ॥ १ ॥
अरे किन्तु वे माया मोहित । भगवत नाम प्रभाव न जानत ॥ २ ॥
मृत संजीवनि वैद्य तजाही । कटू निम्ब जिमि रोगि न पाही ॥ ३ ॥
यह उपाय जानहु तुम ऐसा । कटू निम्ब रोगिन प्रति जैसा ॥ ४ ॥
ज्ञानी जन यों करे विचारा । भजते हरि पद बारम्बारा ॥ ५ ॥
उन प्रति मम शासन नालागी । हो मम दंड पात्र नहि भागी ॥ ६ ॥
अरे प्रथम तो हम यह मानें । सन्त कदापि न हो अघवाने ॥ ७ ॥
यदि कुछ पातक भी बन जाही । नाम लेत हरि तुरत नसाही ॥ ८ ॥
जो नर हरि की शरण सिधावे । तेहि गदाधर प्रभू बचावे ॥ ९ ॥
उन समीप तुम कबहु न जाहू । ना यम लोक बीच उन लाहू ॥ १० ॥

दोहा- **हरि पद पंकज विमुख जो, तृष्णायुत निज गेह ।**
उन दुष्टन को आनहू, यमपुर करहु न नेह ॥ २३ ॥

चौ- जे जिह्वा ना नाम उचारे । जे चित हरिपद कबहुँ न धारे ॥ १ ॥
कृष्ण हेतु नमहि न सिर जाऊ । यमपुर प्रति उन दुष्टन लाऊ ॥ २ ॥
हे भगवन मम दूतनद्वारा । भयउ कसूर सो क्षमहू सारा ॥ ३ ॥
नारायण हरि पुरुष पुराना । वन्दौ बार बार भगवाना ॥ ४ ॥
विष्णु नाम संकीर्तन राया । पातक महा विनाशक काया ॥ ५ ॥
भक्ति करे मन पावन जैसो । करत व्रतादिक होत न वैसो ॥ ६ ॥
जासू मन हरि पद संलग्ना । तासू मन नहि जगत निमग्ना ॥ ७ ॥

दोहा- **विस्मित मति यम किंकर, सुन यम के यों वैन ।**
वैष्णव जन को देख अब, करते नीचे नैन ॥ २४ ॥

चौ- वैष्णव लखि अब वे भय खावे । वैष्णव गेह न भूल सिधावे ॥ १ ॥
यह इतिहास गुह्य अति राया । मलयाचल स्थित कुंभज गाया ॥ २ ॥
सुर नर असुर सृष्टि मुनि राई । मृग पक्षिन संक्षेप सुनाई ॥ ३ ॥
अब वरणउ तुम सह विस्तारा । रचना की हरि येन प्रकारा ॥ ४ ॥
कहे सूत इति प्रश्न नृपालू । सुनकर बोले मुनी दयालू ॥ ५ ॥
जब प्रचेत सागर वहि आये । तरु व्यास यह भूमि लखाये ॥ ६ ॥

चौ- कारण सहित सबहिं गुणतीना । जानत है पर जीव प्रवीना ।। १ ।।
किन्तु रहत जिन प्रति उदासी । वन्दहुँ उन अनन्त अविनासी ।। २ ।।
जो केवल निज संस्था द्वारा । करत स्वरूप सदा उजियारा ।। ३ ।।
उन शुचि सद्म स्वयं परकासी । वन्दन्हुँ हंस रूप सुख राशी ।। ४ ।।
ज्ञानी निज हिय खोजहि जेही । हो प्रसन्न मोपर वन नेही ।। ५ ।।
नाथ भिन्नता जगत लखाई । ये सब माया तोर चलाई ।। ६ ।।
किन्तु आप माया अलगाई । रहहु सदा निज रूप छिपाई ।। ७ ।।
दीखत नाम रूप जग सारे । वे स्वरूप सब नाथ तुम्हारे ।। ८ ।।
विश्वरूप हरि दीनदयालू । होउ मुदित मोपर जगपालू ।। ९ ।।
मन बुद्धि अरु इन्द्रिन द्वारा । हो न निरुपण नाथ तुम्हारा ।। १० ।।

दोहा- **जग कारण तारण भवहिं, स्वयं ब्रह्म भगवान ।**
निराकार अप्राकृत, अज अनन्त सुख खान ।। २८ ।।

चौ- वादी अरु प्रतिवादिन दोही । बार बार शक्ति तव मोही ।। १ ।।
अप्राकृत अनन्त गुण युक्ता । वन्दों जिन पद सेवत भक्ता ।। २ ।।
कहहिं उपासक प्रभू हमारे । हस्त पाद युत विग्रह धारे ।। ३ ।।
साँख्य शास्त्र के जानन हारे । निराकार बतलावत सारे ।। ४ ।।
यद्यपि नाम व रूप विहीना । केवल होकर भक्त अधीना ।। ५ ।।
नाम रूप धारण जो करहीं । सो प्रफुल्ल मो पर प्रभु रहहीं ।। ६ ।।
ज्ञान सुमार्ग भजन अनुसारी । भजत उपासक जिन वनवारी ।। ७ ।।
सो अभिलाषा पूरहिं मेरी । की अनुनय इति पक्ष घनेरी ।। ८ ।।
तदा भक्त वत्सल भगवाना । प्रकटे दक्ष समीप सुजाना ।। ९ ।।
गरुड़ स्कंध पर चरण रखाये । भुज प्रलम्भ वसु प्रभू सुहाये ।। १० ।।

दोहा- **शंख चक्र असि चर्म धनु, पाश गदाधर श्याम ।**
पीत वसन मुख मुदित अति, वन माला गल धाम ।।२९।।

चौ- कौस्तुभ सह श्री वत्स सुशोभित । मुकुट सीस श्रुति कुंडल लटकत ।। १ ।।
काँची अङ्गुलीय कर कंकण । भुज अंगद पद नूपुर भूषण ।। २ ।।
रूप अपार त्रिलोक विमोहू । धरे अखिल भुवनेश्वर सोहू ।। ३ ।।
वेष्ठित नारद नन्द सुनन्दा । सिद्ध व चारण अरु सुर वृन्दा ।। ४ ।।
गीयमान वपु दक्ष विलोकी । गिरे दंडवत मही अशोकी ।। ५ ।।
जब प्रसन्न मन किये प्रणामा । बोले दक्षप्रति सुखधामा ।। ६ ।।

तव सब तरुअन दग्धन कारन । वायु अगनि मुख ते किय सरजन ॥ ७ ॥
दहयमान जब तरु लखाये । बोले वचन सोम वहँ आये ॥ ८ ॥
तुम सब प्रजापतिन महाभागू । यह विधि तुम प्रति हो ना लागू ॥ ९ ॥
दग्ध योग्य ना वृक्ष तुम्हारे । प्रजा अन्न यह जानेहु सारे ॥ १० ॥

दोहा- **प्रजा हेत इनका किया, सरजन सरजनहार ।**
द्विपद चतुष्पद आदि के, हैं ये अन्नाधार ॥ २५ ॥

चौ- आज्ञा दीन्ही सृष्टिन हेतू । पिता तुम्हारे अरे प्रचेतू ॥ १ ॥
अब ये वृक्ष जलावन हेता । होउ समर्थ न अरे प्रचेता ॥ २ ॥
निज पुरखन के पथ तुम चलहू । यही मार्ग उत्तम सब कहहू ॥ ३ ॥
सुत प्रति बन्धु पिता अरु माता । सखा नारि के निज पति जाता ॥ ४ ॥
मूरख हेतु करावत बोधा । साँचा मित्र वही सब सोधा ॥ ५ ॥
हरि सब प्राणिन अन्तर देहा । तजहु क्रोध निज कारण एहा ॥ ६ ॥
दग्ध वृक्ष अवशेष तुम्हारी । करहिं भलाई सभी प्रकारी ॥ ७ ॥
वार्क्षी नाम अरे जो बाला । पत्नी रूप करहु इस काला ॥ ८ ॥
यो कहि वार्क्षी सोम बुलाई । विधि सह उन हेतू परणाई ॥ ९ ॥
वार्क्षी जठर प्रचेतन संगी । दक्ष पुत्र इक भयउ सुढ़ंगी ॥ १० ॥

दोहा- **दक्ष यथा सब जीव की, सरजी सृष्टि अपार ।**
मम मुख ते कुरुवर सुनो, चित दे भली प्रकार ॥ २६ ॥

चौ- प्रथम असुर सुर मानव सारे । सरजे मन से दक्ष अपारे ॥ १ ॥
प्रजा वृद्धि जब यह ना पाये । दक्ष तदा विंध्याचल आये ॥ २ ॥
अघमर्षण तीरथ कर स्नाना । कीन्हा तप हरि का विधिनाना ॥ ३ ॥
हंस गुह्यवर स्तोत्र उचारे । करी प्रार्थना हरि हियधारे ॥ ४ ॥
माया जीव परे भगवाना । अनुभव अति चित शक्ति महाना ॥ ५ ॥
नाथ जीव तव सत्य स्वरूपा । जान सकै ना परिभव कूपा ॥ ६ ॥
दर्शनीय प्रभु स्वयं प्रकासी । करूँ वन्दना घट घट वासी ॥ ७ ॥
निज उतपत्तिकारक स्थानी । पंच विषय को ना पहिचानी ॥ ८ ॥
यद्यपि जीव ईश तनु अन्दर । तदपि जीव ना जानत ईश्वर ॥ ९ ॥
उन महेश प्रति करों प्रणामा । अजय अनादि अखिल सुख धामा ॥ १० ॥

दोहा- **देह प्राण इन्द्रिय हिय, वृत्ति तत्व तन्मात्र ।**
निज पर को जाने नहीं, हैं ये सब जड़मात्र ॥ २७ ॥

चौ- कारण सहित सबहिं गुणतीना । जानत है पर जीव प्रवीना ॥ १ ॥
किन्तु रहत जिन प्रति उदासी । वन्दहुँ उन अनन्त अविनासी ॥ २ ॥
जो केवल निज संस्था द्वारा । करत स्वरूप सदा उजियारा ॥ ३ ॥
उन शुचि सद्म स्वयं परकासी । वन्दन्हुँ हंस रूप सुख राशी ॥ ४ ॥
ज्ञानी निज हिय खोजहि जेही । हो प्रसन्न मोपर वन नेही ॥ ५ ॥
नाथ भिन्नता जगत लखाई । ये सब माया तोर चलाई ॥ ६ ॥
किन्तु आप माया अलगाई । रहहु सदा निज रूप छिपाई ॥ ७ ॥
दीखत नाम रूप जग सारे । वे स्वरूप सब नाथ तुम्हारे ॥ ८ ॥
विश्वरूप हरि दीनदयालू । होउ मुदित मोपर जगपालू ॥ ९ ॥
मन बुद्धि अरु इन्द्रिन द्वारा । हो न निरुपण नाथ तुम्हारा ॥ १० ॥

दोहा- **जग कारण तारण भवहिं, स्वयं ब्रह्म भगवान ।**
निराकार अप्राकृत, अज अनन्त सुख खान ॥ २८ ॥

चौ- वादी अरु प्रतिवादिन दोही । बार बार शक्ति तव मोही ॥ १ ॥
अप्राकृत अनन्त गुण युक्ता । वन्दों जिन पद सेवत भक्ता ॥ २ ॥
कहहिं उपासक प्रभू हमारे । हस्त पाद युत विग्रह धारे ॥ ३ ॥
साँख्य शास्त्र के जानन हारे । निराकार बतलावत सारे ॥ ४ ॥
यद्यपि नाम व रूप विहीना । केवल होकर भक्त अधीना ॥ ५ ॥
नाम रूप धारण जो करहीं । सो प्रफुल्ल मो पर प्रभु रहहीं ॥ ६ ॥
ज्ञान सुमार्ग भजन अनुसारी । भजत उपासक जिन बनवारी ॥ ७ ॥
सो अभिलाषा पूरहिं मेरी । की अनुनय इति पक्ष घनेरी ॥ ८ ॥
तदा भक्त वत्सल भगवाना । प्रकटे दक्ष समीप सुजाना ॥ ९ ॥
गरुड़ स्कंध पर चरण रखाये । भुज प्रलम्भ वसु प्रभू सुहाये ॥ १० ॥

दोहा- **शंख चक्र असि चर्म धनु, पाश गदाधर श्याम ।**
पीत वसन मुख मुदित अति, वन माला गल धाम ॥२९॥

चौ- कौस्तुभ सह श्री वत्स सुशोभित । मुकुट सीस श्रुति कुंडल लटकत ॥ १ ॥
काँची अङ्गुलीय कर कंकण । भुज अंगद पद नूपुर भूषण ॥ २ ॥
रूप अपार त्रिलोक विमोहू । धरे अखिल भुवनेश्वर सोहू ॥ ३ ॥
वेष्ठित नारद नन्द सुनन्दा । सिद्ध व चारण अरु सुर वृन्दा ॥ ४ ॥
गीयमान वपु दक्ष विलोकी । गिरे दंडवत मही अशोकी ॥ ५ ॥
जब प्रसन्न मन किये प्रणामा । बोले दक्षप्रति सुखधामा ॥ ६ ॥

भयो सिद्ध कारज तप द्वारा । प्रजा काम जो रहा तुम्हारा ॥ ७ ॥
भयो मुदित मैं तुम पर आजू । लखकर दक्ष तोर तप काजू ॥ ८ ॥
ब्रह्मा शिव तुम मनु सुरेशा । ये सब मोर विभूति प्रजेशा ॥ ६ ॥
तप मम हृदय व तनु मम ज्ञाना । आत्मा धर्म देव मम प्राना ॥ १० ॥

दोहा- **जब यह सृष्टि थी नहीं, तब मैं केवल एक ।**
सो भी निष्क्रिय रूप में, और न रहत अनेक ॥ ३० ॥

चौ- दृष्टा दृश्य न कहीं दिखाऊ । चेतन मात्र एक मैं पाऊँ ॥ १ ॥
भयो क्षोभ जब गुणमयि माया । यह ब्रह्मांड रूप उन जाया ॥ २ ॥
मम तनु ते प्रकटे जब धाता । सृष्टी कर्म समर्थ न जाता ॥ ३ ॥
तब मैं तप प्रति दियो अदेशा । उस तप ते विधि रचे प्रजेशा ॥ ४ ॥
दुहिना पंच जन्य इक जाता । नाम असिक्नी वर विख्याता ॥ ५ ॥
पत्नी रूप करहु स्वीकारी । मिथुनी धर्म प्रजा रचु सारी ॥ ६ ॥
अब तक प्रजा मानसी जाता । बढ़हिं न अब आगे यह ताता ॥ ७ ॥
प्रजा तुम्हारी अब जो होई । मिथुनि भाव से बाढहि सोई ॥ ८ ॥
इस प्रकार कहकर भगवाना । सुपने सम भये अन्तरध्याना ॥ ६ ॥
बोले कीर सुनहु कुरुनन्दन । चले गये जब करुणाक्रन्दन ॥ १० ॥

दोहा- **पाञ्चजनी के गर्भ से, जाये अयुत कुमार ।**
हर्यश्व नाम जिनका अरे, रूप शील इक सार ॥ ३१ ॥

चौ- हे नृप वे सब दक्ष कुमारा । एक रूप वय एक प्रकारा ॥ १ ॥
सृष्टि रचना हेत अदेशा । उन प्रति दीन्हा दक्ष प्रजेशा ॥ २ ॥
तब वे सब पश्चिम दिशि आये । नारायण सर बीच सिधाये ॥ ३ ॥
सरित सिन्धु सागर संगम पर । रहा तीर्थ जो सब विधि सुन्दर ॥ ४ ॥
सिद्ध मुनीजन करे निवासा । किये स्नान सब पाप विनाशा ॥ ५ ॥
प्रजा वृद्धि हेतू तप भारू । कीन्हे सब मिल दक्षकुमारू ॥ ६ ॥
इन्हें देख नारद वहँ आये । उन प्रति बोले वचन सुहाये ॥ ७ ॥
सुनो अरे तुम दक्ष कुमारू । तुम सम नाँही मूर्ख अपारू ॥ ८ ॥
मही अंत जब तक ना पाहू । तब लगि प्रजा सृजहु किमि याहू ॥ ६ ॥
मैं जो कहुँ सुनु राजकुमारू । देहु ध्यान अरु करो विचारू ॥ १० ॥

दोहा- **एक राष्ट्र में एक नर, एक हि विवर अपार ।**
बाहर आवन का जहाँ, कहिं नहिं दीखत द्वार ॥ ३२ ॥

चौ- बहुरुपा इक नारि कुमारू । पुंश्चलि पति इक पुरुष करारू ॥ १ ॥
बहती सरिता उभय अपारा । अरू घर एक विचित्र प्रकारा ॥ २ ॥
रचित पचीस पदारथ ओहू । हंस विचित्र कथा जिस सोहू ॥ ३ ॥
पवि क्षुर ते जिस कीन्ह रचाही । सो यक चक्र स्वतंत्र भ्रमाही ॥ ४ ॥
सर्वज्ञ पिता के वचन कुमारों । जब लगि नहीं यथारथ धारों ॥ ५ ॥
जब लगि इन वस्तुन ना लखहू । तब लगि सृष्टि अरे किमि करहू ॥ ६ ॥
कूट वचन सुन दक्ष कुमारा । निज मति से इति करत विचारा ॥ ७ ॥
लिंग देह सो मही समाना । यही जीव का बन्धन माना ॥ ८ ॥
इसका अन्त बिना नहिं जाने । मोक्ष मार्ग नर किमि पहिचाने ॥ ९ ॥
अखिल सृष्टि में एकहि ईश्वर । सर्वाश्रय साखी सब सुखकर ॥ १० ॥

दोहा- **प्रकृति परे पर ब्रह्म को, जो न समर्पित कर्म ।**
उनको फल कुछ ना मिले, हम यह जाना मर्म ॥ ३३ ॥

चौ- बिल रूपी पाताल सिधाई । आवत वापिस भू जिमि नाँही ॥ १ ॥
तथा जीव ईश्वर में मिलकर । वापिस आत नहीं भव सागर ॥ २ ॥
अरे स्वयं जो ज्योति स्वरूपा । मिलहि न जब लगि कृपा अनूपा ॥ ३ ॥
तब लगि सारे कर्म अधूरा । अब हम सत्पथ पकरहिं पूरा ॥ ४ ॥
निज बुद्धि बहुरूपिणि नारी । पुंश्चलि सम यहि गुणत्रय धारी ॥ ५ ॥
इसका अन्त बिना कुछ नाही । ज्ञान मार्ग मानव ना पाही ॥ ६ ॥
फिरत जीव बुद्धि अनुसारी । खोवत निज सुतंत्रता सारी ॥ ७ ॥
विविध गति इसकी बिन जाने । कर्म सिद्धि हम किमि पहिचाने ॥ ८ ॥
यह माया ही सरित समाना । तप विद्या तट इसके माना ॥ ९ ॥
दर्प व राग द्वेष उद्वेगा । बाढ़हिं इस सरिता कर वेगा ॥१० ॥

दोहा- **एक बात अचरज भरी, इस सरिता का नीर ।**
पूरब पर दोऊ दिशा, बहता अति गंभीर ॥ ३४ ॥

चौ- मायिक असत करम के द्वारा । मिलहिं न सिद्धि केन प्रकारा ॥ १ ॥
तत्व पचीसहि अद्‌भुत गेहा । अचरज मय आश्रय नर जेहा ॥ २ ॥
अरे भेद इसका बिन पाही । असत कर्म से फल कुछ नाही ॥ ३ ॥
हंस ईश्वरी शास्त्र तजाही । बन्ध मोक्ष अनुदर्श न नाही ॥ ४ ॥
पावन पद जाने जो नाही । असत कर्म कर फल ना पाही ॥ ५ ॥
धार छुरी अरु वज्र समानू । काल चक्र यह भ्रमत महानू ॥ ६ ॥

खींचहिं जग को यह निज ओरा । परम सुतंत्र न पावत छोरा ॥ ७ ॥
यह न बात जानत जो कोई । असत कर्म किय फल किमि होई ॥ ८ ॥
शास्त्र रूप ही पिता समाना । अपर जन्म इनते ही माना ॥ ९ ॥
शास्त्र देश न कर्म बतावे । यह तो मुक्ति मार्ग दिखावे ॥ १० ॥

दोहा- **शास्त्र रूप जाने बिना, कर्मों के आधीन ।**
गुणमय विषयों पर वह, करता रहे यकीन ॥ ३५ ॥

चौ- तदा एक चित दक्ष कुमारा । मुनि वचनों पर किये विचारा ॥ १ ॥
कर परिकरमा मुनि की सारे । मोक्ष मार्ग प्रति सभी सिधारे ॥ २ ॥
वीणा नाद किये इत नारद । हरि गुण गाते गये विशारद ॥ ३ ॥
नारद द्वारा पुत्र विनाशा । सुनकर दक्ष भयो दुख खासा ॥ ४ ॥
विधि द्वारा संतोष दिलाई । तव प्रजेश सब रंज बिहाई ॥ ५ ॥
पुत्र सहस्त्र तदा वह जाये । सो सबलाश्व नाम कहलाये ॥ ६ ॥
प्रजा सृष्टि के कारण सारे । निज पित आज्ञा वे शिरधारे ॥ ७ ॥
नारायण सर ऊपर आये । किये स्नान मल दूर भगाये ॥ ८ ॥
ब्रह्म स्वरूप प्रणव जप कीन्हा । कठिन तपस्या में चित दीन्हा ॥ ९ ॥
नीर व वात असन किय सारे । हरि पूजत इति मंत्र उचारे ॥ १० ॥

दोहा- **प्रणव रूप नारायण, शुद्ध चित्त जिनवास ।**
परम हंस स्वरूप सो, सब तनु करत प्रकास ॥ ३६ ॥

चौ- उन अन्तरयामी भगवाना । करें ध्यान निसि वासर नाना ॥ १ ॥
इति शबलाश्व दक्ष सुत सारे । कीन्ह तपस्या हरि चित धारे ॥ २ ॥
उन समीप भी नारद आये । कूट वचन पूरब सम गाये ॥ ३ ॥
मैं जो कहुँ सुनु चित्त लगाई । निज भ्रातन पद परखउ जाई ॥ ४ ॥
भ्राता पथ पर जो अनुगामी । होवत मरुत गणन संगनामी ॥ ५ ॥
गवने मुनि इति वचन सुनाई । गाये भ्रातृ पथ तब सब भाई ॥ ६ ॥
गत यामिनी जिमि फिर ना पाये । वे भी त्यों वापस ना आये ॥ ७ ॥
तेहि काल लखि अति उत्पाता । दक्ष चित्त अति चिन्ता जाता ॥ ८ ॥
नारद मुनि सब काम बिगारा । सुनकर क्रोधित भये अपारा ॥ ९ ॥
गये दक्ष नारद के पासा । बोले वचन करत उपहासा ॥ १० ॥

दोहा- **रक्त नयन स्फूरित अधर, कट कटाय निज दंत ।**
मुनि प्रति दक्ष प्रजेश ने, बोले वचन अनन्त ॥ ३७ ॥

चौ- साधू होय असाधुन बाना । करता फिरे जगत कल्याना ॥ १ ॥
अरे असाधो शर्म न आई । मोरे सुत सब दिये नसाई ॥ २ ॥
आज्ञा मान गये सुत मेरी । भिक्षा पंथ बता मति फेरी ॥ ३ ॥
मुक्त न जो ऋण ते सुत सारे । लोक और परलोक बिगारे ॥ ४ ॥
निर्दय तू बालक मति भेदक । शर्म हीन तू मम कुल छेदक ॥ ५ ॥
हरि अनुचर बीचे तू कैसे । विचरत काम करत तू ऐसे ॥ ६ ॥
साधु संत तो प्राणिन ऊपर । रहते सदा अनुग्रह तत्पर ॥ ७ ॥
तुम ना राखत प्राणिन नेहू । बन्धन विषय कटत नहि येहू ॥ ८ ॥
कपट जाल तुम मृषा रचाई । सत विरक्ति बिन शान्ति न पाई ॥ ९ ॥
काटहिं स्नेहपाश स्थिरताई । अन्य जगत बिच नही उपाई ॥ १० ॥

दोहा- **विषयन के अनुभव बिना, कुछ भी होत न ज्ञान ।**
ज्ञान बिना वैराग्य की, होवत ना पहिचान ॥ ३८ ॥

चौ- ये सब निज अनुभव ते आवे । परबोधी कुछ फल ना पावे ॥१ ॥
अप्रिय काज कियो तुम मेरो । यह अपराध असह्य घनेरो ॥ २ ॥
तुम नारद मम वंश उजारा । खल सम कीन्हा यह व्यवहारा ॥ ३ ॥
रहहिं मूढ ना पद स्थिर तेरा । एक ठाँव ना रहे बसेरा ॥ ४ ॥
दक्षानन ते सुन इति शापा । नारद के मन कुछ ना व्यापा ॥ ५ ॥
यद्यपि शाप निवारण हेतू । रहे समर्थ तदपि मुनिकेतू ॥ ६ ॥
दक्ष शाप स्वीकृत शिर ऊपर । नारद गये तदा हरि भजकर ॥ ७ ॥
बोले शुक मुनि परम उदारा । सुनो वचन अभिमन्यु कुमारा ॥ ८ ॥
दक्ष हेत विधि शान्ति दिलाई । कन्या साठ दक्ष पुनि जाई ॥ ९ ॥
धर्म हेतु दस सुता प्रजेशू । तेरह कश्यप काज नरेशू ॥ १० ॥

दोहा- **कृशाश्वहिं अंगिर भूतहीं, दुइ दुइ कन्या दीन्ह ।**
सत्ताइस रजनी पति, शेष तार्क्ष्य कर कीन्ह ॥ ३९ ॥

चौ- जिन संतान प्रपूरित सारा । भयउ अरे नृप यह संसारा ॥ १ ॥
सुनो धर्मपत्नी कर नामा । भानू लम्बा ककुप व जाया ॥ २ ॥
मरुत्वती संकल्पा गाया । साध्या विश्वा वसु इति राया ॥ ३ ॥
रही मुहूर्ता दशवीं नारी । कहूँ नाम सुत पौत्र प्रचारी ॥ ४ ॥
भानू देव ऋषभ सुत जाया । इन्द्र सेन जिसका सुत भाया ॥ ५ ॥

लम्बा सुत विद्योत कहाये । अरे मेघ गण इन सुत भाये ।। ६ ।।
ककुभा सुत संकट इति नामा । संकटसुत कीकट बलधामा ।। ७ ।।
दुर्गाभिमानि सुत कीटक जाये । जामी स्वर्ग नाम सुत पाये ।। ८ ।।
स्वर्ग नन्दि सुत कियो प्रकासू । भये पुत्र गेहा ना तासू ।। ६ ।।
विश्वा विश्वेदेव प्रकासे । प्रजाहीन ही ये सब भासे ।। १० ।।

दोहा - **साध्या ते सब साध्यगण, अर्थ सिद्धि सुत जासु ।**
मरुतवान जयन्त दुइ, मरुत्वती प्रकासु ।।४०।।

चौ- रहे जयन्त अंश भगवन्ता । नाम उपेन्द्र वदत इन सन्ता ।। १ ।।
मुहूर्ता पुत्र मुहूर्तिक जाये । संकल्पा संकल्प जनाये ।। २ ।।
सुत संकल्प काम इति गाये । वसु ने अष्ट वसु सुत पाये ।। ३ ।।
द्रोण प्राण ध्रुव अर्क व दोषा । अग्नि विभावसु वसु इति पोषा ।। ४ ।।
द्रोण अभीमति बहु सुत जाये । हर्ष व शोक भयादि कहाये ।। ५ ।।
प्राण और ओजस्वति दोऊ । आयु पुरोजय इति सुत सोऊ ।। ६ ।।
ध्रुव की धरणी सुन्दर नारी । विविध नगरपुर किये प्रचारी ।। ७ ।।
अर्क वासना ते सुत जाये । सो तृष्णादिक सब जग गाये ।। ८ ।।
अग्निवसूधारा वर नारी । द्रविणकादि सुत किये अपारी ।। ६ ।।
कृतिका अन्य अग्नि की नारी जाये स्कंद पुत्र बल धारी ।। १० ।।

दोहा- **विशाखादि सुत स्कंद ते, दोष शर्वरि शिशु मार ।**
पुत्र विश्वकर्मा जने, वसु आङ्गिरसि नार ।।४१।।

चौ- पुत्र विश्वकर्मा जो जाये । सो चाक्षुष मनु इति सब गाये ।। १ ।।
मनुसुत विश्वे देव कहाये । अपर सुपुत्र साध्यगण गाये ।। २ ।।
व्युष्ट व रोचिस आतपतीना । उषा विभावसु जने प्रवीना ।। ३ ।।
आतप सुवन दिवस इति जाता । भूत सरूपा तिय विख्याता ।। ४ ।।
जाये अज भव भीम व वामा । अहिर्बुध्न्य वृषाकपि नामा ।। ५ ।।
रेवत अरु बहुरूप महानू । उग्र अजैकपादइति जानू ।। ६ ।।
जाये भूता दूसर नारी । भूत विनायक प्रेत अपारी ।। ७ ।।
ये सब भये रुद्र के अनुचर । जाये पितर स्वधा तिय अंङ्गीर ।। ८ ।।
अपर नारि जो सती सुहाई । वेद अंगिरा नामक जाई ।। ६ ।।
तिय कृशाश्व अर्ची जिन नामा । जाये धूम्र केश बलधामा ।। १० ।।

दोहा - वेद शिरा देवल वयुन, मनु इति धिषणानार ।
ताक्ष्यं नाम युत कश्यप, जिन घर नारी चार ॥४२॥

चौ- विनता गरुड़ अरुण दोउ जाये ।कद्रू नारी नाग जनाये ॥ १ ॥
पक्षी सकल पतंगी जाये । यामिनी ते शलभा सब आये ॥ २ ॥
कृतिका आदि चन्द्र तिय सारी पुत्र बिना ये रही विचारी ॥ ३ ॥
दियो शाप विधु हेतु प्रजेशा । क्षय रोगी तब भये निशेशा ॥ ४ ॥
कीन्हो चन्द्र दक्ष जब राजी । प्राप्त कला पर पुत्र न साजी ॥ ५ ॥
कश्यप पत्नी नाम सुनाऊँ । भिन्न –भिन्न कर सब समझाऊँ ॥ ६ ॥
जो सब जग की मात कहाई । जिन संतति सब जग विच छाई ॥ ७ ॥
अदिति व दिति दनु काष्ठा नारी । क्रोध वशा मुनि इला सुखारी ॥ ८ ॥
ताम्रा सुरभि सुसरमा नारी । तिमि व अरिष्टा सुरसा सारी ॥ ६ ॥
तिमि सब जलचर जन्तू जाये । सरमा श्वापद पुत्र जनाये ॥ १० ॥

दोहा- दो शकयुत महिषादिक, सुरभी सुवन कहात ।
गीध व वाज वकादिक, ताम्रा के सुत जात ॥४३॥

चौ- जाई मुनी अप्सरा सारी । दंदशूक सरि सर्प अपारी ॥ १ ॥
ये सब क्रोध वशा तिय जाये । इला संतति वृक्ष कहाये ॥ २ ॥
सुरसा सुत राक्षस सब गाये । गंधर्व अरिष्टा पुत्र बताये ॥ ३ ॥
एकशकी सुत काष्ठा जाये । दनु ने इकसठ पुत्र जनाये ॥ ४ ॥
मुख्य अठारह जिन इति नामा । द्विमूर्धा शम्बर व पुलोमा ॥ ५ ॥
अय मुख शंकुशिरा हयग्रीवा । कपिल अरुण दुर्जय वृष पर्वा ॥ ६ ॥
अरिष्ट विभावसु अरु स्वर्भानू । एक चक्र अनुतापन जानू ॥ ७ ॥
धूम्रकेश संगर भयकारी । विरुपाक्ष जिन नयन करारी ॥ ८ ॥
विप्र चित्ति दानव दुखदाई । एँक एक सुत बल अधिकाई ॥ ६ ॥
स्वर्भानु की सुता सुहाई । नाम सुप्रभा नमुचि परणाई ॥ १० ॥

दोहा- वृर्ष पर्वा की बालिका, शर्मिष्ठा जिन नाम ।
नहुष सुपुत्र ययाति को, दी निज सुता ललाम ॥४४॥

चौ- दनु सुत वैश्वानर सुखकारी । जिन घर कन्या जनमी चारी ॥ १ ॥
उप दानवी पुलोमा दोऊ । अश्व सिरा व कालका सोऊ ॥ २ ॥
हिरण्याक्ष उपदानवि व्याहू । अश्वसिरा क्रतु संग विवाहू ॥ ३ ॥
विधि प्रेरित कश्यप मुनि दोऊ । पुलोम अरू कालका सोऊ ॥ ४ ॥

दोउ साठ सहस सुत जाये । युद्ध शालि दानव इति गाये ॥ ५ ॥
इन्द्र प्रियङ्कर अर्जुन सारे । जावत स्वर्ग सभी संहारे ॥ ६ ॥
दिति सुत जाये दो बलवन्ता । हिरण्य कशिपु हिरण्याक्ष अनन्ता ॥ ७ ॥
कन्या एक सिंहिका जाई । विप्रचित्ति संग सो परणाई ॥ ८ ॥
राहू पुत्र सिंहिका जाये । दूजे शत सुत केतू गाये ॥ ९ ॥
ग्रहन मध्य पद पायउ राहू । अदिति वंश अब सुन नर नाहू ॥ १० ॥

दोहा- **जिसके पावन वंश में, हरि लीन्हो अवतार ।**
बान वपुधर कर प्रभू पहुँचे बलि नृपद्वार ॥४५॥

चौ- अदिति सुगर्भ विवस्वत जाता । त्वष्टा पूषा वरुण विधाता ॥ १ ॥
मित्रशक्र उरुक्रम भग धाता । सविता अर्यमान विख्याता ॥ २ ॥
संज्ञा अउर विवस्वत सुवना । श्राद्ध देव मनुयम अरु यमुना ॥ ३ ॥
संज्ञा हो तुरगी सुत जाये । असुनि कुमार नाम जिन गाये ॥ ४ ॥
छाया मनुसावर्णी नामा । शनि अरु तपती सुता ललामा ॥ ५ ॥
सो संवरण हेतु परणाई । पत्नी अर्यमान की राई ॥ ६ ॥
नाम मातृका चर्षणी जाये । विधि कल्पित सो मानुप गाये ॥ ७ ॥
पूषा खावत पिष्ट सदाही । यही हेतु संतति नही पाई ॥ ८ ॥
अनुजा दैत्य रोचना नामा । त्वष्टा से सुत दो वह बामा ॥ ९ ॥
विश्व रूप अरु लघु सनिवेशू । गुरु द्वारा जब तजे सुरेशू ॥ १० ॥

दोहा- **यद्यपि निज शत्रून के, विश्वरूप दौहित्र ।**
तदपि सुरन ने इनहीं को, गुरु पद दियो पवित्र ॥ ४६ ॥

चौ- पूछत कुरु नन्दन मुनिराया । किस हेतू गुरु इन्द्र तजाया ॥ १ ॥
"नृप" ऐश्वर्य त्रिलोकी पावा । निज पद मद जब सुरपति छावा ॥ २ ॥
मरुत सिद्ध चारण गंधर्वा । सेवित विद्याधर सुर सर्वा ॥ ३ ॥
चामर छात्र शचि सह सीसा । सिंहासन सोभित सुर ईसा ॥ ४ ॥
आवत देखे तदा सुरेशा । निज समीप गुरु समा प्रदेशा ॥ ५ ॥
किन्तु न सुरपति किय अभिवन्दन । बोले प्रेम समेत न वचनन ॥ ६ ॥
देखा मदयुत यदा सुरेशा । आये गुरु निज गेह प्रदेशा ॥ ७ ॥
जाना सुरपति गुरु अपमानित । दे धिक्कार वदत अति लज्जित ॥ ८ ॥
कीन्हो काम अभद्र अपारी । कर अपमान गुरु का भारी ॥ ९ ॥
गुरु अपमान करे यदि कोई । उस घर सदा अमंगल होई ॥ १० ॥

दोहा- गुरु अनादर मैं कियों, असुर भाव को धार ।
मोरे धन ऐश्वर्य को, धृक् धृक् वारम्वार ॥४७॥

चौ- नृप आसन पर ते ना उठहीं । इति जो वदत धर्म ना वदहीं ॥ १ ॥
त्याग सुपंथ कुपंथ चलावे । सो नर घोर नरक विच जावे ॥ २ ॥
तज सुपंथ जो कूपथ चलही । सो नर भी न नरक ते बचही ॥ ३ ॥
बूढ़हिं पत्थर नाव समाना । शिक्षक शिष्य कुवचन प्रमाना ॥ ४ ॥
अब मैं गुरु के पास सिधाऊँ पद शिर नाय मना उन लाऊँ ॥ ५ ॥
करत इन्द्र इत कई विचारा । सुर गुरु उत निज तज घर बारा ॥ ६ ॥
निज माया ते भये तिरोहित । जाना सुरपति निज घर आवत ॥ ७ ॥
हेरे निज गुरु सुरन समेतू । पर ना पाये शचि पति हेतू ॥ ८ ॥
सुरपति तब निज मति अनुसारी । दिवि रक्षा प्रति करत विचारी ॥ ९ ॥
पर कुछ करना सके पुरन्दर । रहे अशान्त चित्त निशि वासर ॥ १० ॥

दोहा- दैत्यों के काने परी, जब यह सारी बात ।
तब शुक्राश्रित असुरगण, युद्ध हेतु दिवि आत ॥ ४८ ॥

चौ- छाँडि राक्षस वाण कराला । छिन्न अंग सुर गय विधि शाला ॥ १ ॥
इन्द्र सहित सुर दुखी लखाये । बोले विधि तब वचन सुहाये ॥ १ ॥
कीन्हा तुम निज गुरु अपमाना । हो वैभव मदमत्त महाना ॥ ३ ॥
यह तुम काम कियो ना नीका । भयउ तेज यहि कारण फीका ॥ ४ ॥
विप्रवंश का कर अपमाना । होवत सुखी जगत ना जाना ॥ ५ ॥
यह जो भई पराजय आजू । गुरु अपमान करन के काजू ॥ ६ ॥
देखो सुरपति शत्रु तुम्हारे । आये सन्मुख आज हमारे ॥ ७ ॥
निज गुरु शुक्रचार्य अराधन । शत्रु तुम्हारे कीन्ही मधवन ॥ ८ ॥
पाकर बल विक्रम वे सारे । छीनहि स्वर्ग न करहि अबारे ॥ ९ ॥
वर प्रसाद पावत गुरु से ही । कुछ दुर्लभ वस्तु नहि तेही ॥ १० ॥

दोहा- जे नृप गौ विप्रन प्रति, करहिं अनुग्रह तात ।
पूजहिं प्रभु गोविन्द को, सो न अमंगल पात ॥ ४९ ॥

चौ- त्वष्टा सुत तापस बडभारी । विश्व रूप जिन नाम प्रचारी ॥ १ ॥
उन समीप तुम सब मिल जाहू । पूरहि वे सब विधि अरथाहू ॥ २ ॥
सुनकर विधि मुख वचन सुहाये । विश्व रूप गृह देव सिधाये ॥ ३ ॥
अतिथि रूप आश्रम हम आये । एवं सब सुर वचन सुनाये ॥ ४ ॥

पूर्ण मनोरथ करहु हमारा । निज कुल गुरु पद कर स्वीकारा ॥ ५ ॥
गुरु धर्म सत्पुत्रन ये ही । जो नित मात पिता गुरू सेही ॥ ६ ॥
पिता ब्रह्म गुरु वेद समाना । भ्राता सुरपति मूरति माना ॥ ७ ॥
दयामूर्ति भगिनी महि माता । मूरति धरमसु अतिथि न जाता ॥ ८ ॥
मूरति अभ्यागत अनलाई । सब जीवन मूरति हरि गाई ॥ ९ ॥
हम सब पितर तुम्हारे ताता । अरि द्वारा सब परिभव जाता ॥ १० ॥

दोहा- **दुख दारिद्र पराजय, निज तप बल कर दूर ।**
सब संकट यह टालहू, करो कथन मंजूर ॥५०॥

चौ- तपोनिष्ठ ब्राह्मण तुम ताता । जन्मत विप्र सबहि गुरु जाता ॥ १ ॥
जीतहिं शत्रुन तोर प्रतापा । पूजहि तोहिं पुरोहित रूपा ॥ २ ॥
लघु वय वन्दन निन्दत ताता । अर्थी नर प्रति सो सुख दाता ॥ ३ ॥
यद्यपि तुम लघु आयुप पाये । किन्तु ज्ञान बिच ज्येष्ठ कहाये ॥ ४ ॥
एवं विनय कीन्ह मनमानी । बोले विश्व रूप मृदुवानी ॥ ५ ॥
धर्म शील जन द्वारा निन्दित । यद्यपि कीन्हा कर्म पुरोहित ॥ ६ ॥
निज सुकृत नाशक गुण हीना । करता ब्रह्म तेज यह क्षीना ॥ ७ ॥
किन्तु अरे तुम मोरे स्वामी । लोकेश्वर होकर निज कामी ॥ ८ ॥
विनय हेतु आये मम दर पर । उत्तर शुष्क देऊँ अब क्यों कर ॥ ९ ॥
मैं सेवक हूँ सदा तुम्हारा । आज्ञा पालन धर्म हमारा ॥ १० ॥

दोहा- **हम निर्धन व्यक्ति अरे, नहिं संचय कुछ पास ।**
कर शिलोञ्छा वृत्ति सदा, करते गुजर प्रकास ॥ ५१ ॥

चौ- चले जीविका सभी प्रकारा । निन्दित नहिं जो शास्त्रन द्वारा ॥ १ ॥
अब यह निन्दित कर्म तुम्हारा । कवन प्रकार करूँ स्वीकारा ॥ २ ॥
होत पुरोहित पद प्रति राजी । बिगरत मति सब विधि जिस पाजी ॥ ३ ॥
दुर्मति धन इच्छा के कारन । करता कर्म अरे ये धारन ॥ ४ ॥
संतोषी यद्यपि धन हीना । करता धर्म सुमति प्रवीना ॥ ५ ॥
करूँ विनय तो भी स्वीकारा । पूरहुँ रूचि तन मन धन द्वारा ॥ ६ ॥
विश्व रूप तापस बडभारी । किये पुरोहित पद स्वीकारी ॥ ७ ॥
असुरन सम्पति विविध अपारा । रक्षित जो निज गुरु के द्वारा ॥ ८ ॥
तदा वैष्णवी ज्ञान प्रभाऊ । छीनी विश्वरूप द्विज राऊ ॥ ९ ॥
सब सम्पति सुरपित प्रति दीन्ही । होय मुदित वह शचिपति लीन्ही ॥ १० ॥

दोहा- **किये पराजय असुर गण, जिस विद्या को पाय ।**
विश्व रूप ने इन्द्र को, दीन्ही सब समझाय ॥ ५२ ॥ क
नृपति परीक्षित शुक प्रति, बोले वचन विचार ।
भोगी तीनों लोक की, लक्ष्मी इन्द्र अपार ॥ ५२ ॥ ख

चौ- निज शत्रु वश में सब कीन्हे । विजय पताक हाथ जिन लीन्हे ॥ १ ॥
मुनि नारायण कवच सुनाहू । यो सुन वचन कहे मुनि नाहू ॥ २ ॥
विश्व रूप सुरपति प्रति गाया । वही कवच सुन अब नर राया ॥ ३ ॥
बोले विश्वरूप गुणवन्ता । हस्त पाद धोकर सब संता ॥ ४ ॥
करे आचमन उत्तर आनन । कुशा पवित्री कर बिच धारन ॥ ५ ॥
जब लगि कवच न धारन करहीं । निज मुख ते अपशब्द न वदहिं ॥ ६ ॥
सावधान हो परम पुनीता । वसु अरू द्वादश अच्छर सहिता ॥ ७ ॥
अंगन्याश कर न्यास व दोई । पढ़ कर मंत्र करे सब कोई ॥ ८ ॥
पाछे कवच करे नर धारण । पढ़कर प्रणव नमो नारायण ॥ ९ ॥
चरण जानु उरु उदर व छाती । वक्षस्थल मुख शिर सब गाती ॥ १० ॥

दोहा- **ॐ नमो नारायण पढ़कर मंत्र महान ।**
एक एक अक्षर वसु अंग न्यास इति जान ॥५३॥

चौ- द्वादश आखर मंत्र उचारे । अंगुष्ठादिक न्यास विचारे ॥ १ ॥
मंत्र विष्णवे नम इति पढ़ही । न्यास हृदादिक इस विध करहीं॥ २ ॥
पाछे ईश्वर ध्यान लगाहीं । प्रेम सहित कर कवच पढ़ाही ॥ ३ ॥
गरुड़ारुढ़ भुजा वसु धारी । सब विधि रक्षा करें हमारी ॥ ४ ॥
मत्स्य मूर्ति जल बीचे त्राता । स्थल विच रक्षक वामन जाता ॥ ५ ॥
नभ वीचे त्रिविक्रम रक्षक । संकट स्थान नृसिंह विनाशक ॥ ६ ॥
पंथ वीच सूकर भगवाना । परशुराम गिरि शिखर महाना ॥ ७ ॥
अनुज भरत लक्ष्मण युत जासू । रक्षक होवहिं राम प्रवासू ॥ ८ ॥
मारण मोहन आदि प्रयोगा । नारायण नासे सब रोगा ॥ ९ ॥
गर्व ते रक्षक नर भगवाना । योग भ्रंस ते दत्त सुजाना ॥ १० ॥

दोहा- **कर्मबन्ध ते कपिल मुनि काम तैं सनत्कुमार ।**
देव निरादर पंथ विच हयग्रीव अवतार ॥५४॥

चौ- नारद पूजन दोष विनासे । नरक दोष कच्छप सब नासे ॥ १ ॥
अन्न दोष धनवन्तरि नासे । ऋषभ द्वंद्व भय नही प्रकासे ॥ २ ॥

जन अपवाद यज्ञ अवतारी । रक्षक हो बल काल करारी ॥ ३ ॥
रक्षक सर्प समूह अनन्ता । हरे व्यास अज्ञान तुरन्ता ॥ ४ ॥
कपट समूह प्रवाद अपारा । बुद्ध विनासहिं सभी प्रकारा ॥ ५ ॥
कल्की कलिमल कलुष करारा । नासहिं इनको विविध प्रकारा ॥ ६ ॥
प्रात गदा केशव कर धारी । अर्धयाम गोविन्द मुरारी ॥ ७ ॥
विष्णु मध्यन्दिन मधु हारी ॥ याम तृतीय होय सुखकारी ॥ ८ ॥
रजनी मुख रक्षक हो ऋषि केशा । शायं माधव नासहिं क्लेशा ॥ ९ ॥
अर्ध निशा पट्ट पंकज नाभा । अपर रात बिच ईश्वर आभा ॥ १० ॥

दोहा- **रक्षा करहिं जनारदन, आवत ऊपा काल ।**
दामोदर दोउ संधि में, रक्षक हो तत्काल ॥ ५५ ॥

चौ- प्रातकाल विश्वेश्वर माना । रक्षक काल रूप भगवाना ॥ १ ॥
अरे चक्र मम रिपु कटवाई । जारहु दग्धहु करहु नसाई ॥ २ ॥
वातसखा जिमि विपिन अपारी । शुष्क काष्ठ तृण जारत सारी ॥ ३ ॥
गहे यक्ष ग्रह भूत पिशाचन । राक्षस वैनायक कुष्माण्डन ॥ ४ ॥
चूर चूर कर डारउ शत्रुन । बचा सके नहि कोई इन तन ॥ ५ ॥
भीमनाद यदुनंन्दन पूरित । करहु शंख मम अरिहिय कम्पित ॥ ६ ॥
प्रेत मातृका प्रमथ पिशाचू । यातुधान जिन मुख अति माँचू ॥ ७ ॥
इन सबको तुम तुरत निवारू । महाशंख ना करो अवारू ॥ ८ ॥
खड्ग आपकी धार करारू । छिन्न भिन्न कर अरि संहारू ॥ ९ ॥
हे वर्मन् मम शत्रुन नयना । फौरहु जो वह देख सकै ना ॥१० ॥

दोहा- **ग्रह केतू नर सरीसृप, दंष्ट्री भूत विशाल ।**
हरी नाम मुख रटत ही, होवत क्षय तत्काल ॥ ५६ ॥

चौ- सब दुखते रक्षक हरियाना । हरि हरहीं आपत्तिन नाना ॥ १ ॥
मन सह प्राण इन्द्रियाँ बुद्धि । विश्वक्सेन करहिं सब शुद्धि ॥ २ ॥
नाम स्मर्ण उत्पात विनासे । दुरित दुराव दुराश न भासे ॥ ३ ॥
हरिमाया आयुध तनुधारी । सर्व रूप हरि करें सुखारी ॥ ४ ॥
विदिश दिशा नरसिंह भगवाना । करें पालना कृपा निधाना ॥ ५ ॥
कवच नाम नारायण गाया । जीतहु जासु शत्रु सुर राया ॥ ६ ॥
अरे इन्द्र यहि धारण कर्ता । देखत नयन जासु दुख मिटता ॥ ७ ॥
जो यह विद्या धारण करहीं । सोन अमंगल कही पर लखहीं ॥ ८ ॥

कौशिक नाम एक द्विज कोई । धारण कियो प्रथम यह सोई ॥ ९ ॥
मरू देश त्यागेउ निज अंगा । बहती जहाँ सुरसती गंगा ॥ १० ॥

दोहा- **एक समय गंधर्वपति, नाम चित्ररथ जान ।**
गुजरे द्विज शव ऊपर, नारिन सहित विमान ॥ ५७ ॥

चौ- गिरा विमान तदा महि ऊपर । रहे बाल खिल्य जहँ मुनिवर ॥ १ ॥
ऋषिन वचन सुन पति गंधर्वा । संचित कर द्विज अस्थिन सर्वा ॥ २ ॥
पूर्व वाहिनी सुरसति डारी । गयो धाम कर स्नान सुखारी ॥ ३ ॥
बोले मुनि शुकदेव कृपालू । धारहिं कवच अरे नरपालू ॥ ४ ॥
पढ़हिं प्रेम ते जो नर एही । सब भयते छूटहिं सुनते ही ॥ ५ ॥
विश्व रूप गुरु मुख ते सुनकर । इन्द्र वैष्णवी विद्या पाकर ॥ ६ ॥
युद्ध बीच दानव संहारे । भोगी लक्ष्मी लोक अपारे ॥ ७ ॥
आदर सहित कवच नारायण । करहिं प्रेम से जो पारायण ॥ ८ ॥
सुनहिं सुनावहिं दूसर कारण । हरे तुरत सब अघ नारायण ॥ ९ ॥
संकट विविध प्रकार निवारी । धारण करे गले नर नारी ॥ १० ॥

दोहा- **यह नारायण कवच शुभ, पढ़हिं सुनहि नर नार ।**
बजरंगी उन मनुज पर, अरिका चलहि न वार ॥ ५८ ॥

चौ- कहे परीक्षित से मुनिराई । विश्व रूप मुख तीन बताई ॥ १ ॥
एक सोम दूसर मधुपाना । खात अन्न तीसर मुख जाना ॥ २ ॥
त्वष्टा सुत सुनु नृप इक बारा । यज्ञ बीच हवि भाग अपारा ॥ ३ ॥
दीन्हो प्रकट रूप सुर काजू । कियउ किन्तु वे एक अका जू ॥ ४ ॥
उन हिय मातृ स्नेह घर कीन्हा । गुप्त भाग असुरन प्रति दीन्हा ॥ ५ ॥
यह छल जान इन्द्र उन सीसा । काटेउ असि ते सुर नर ईशा ॥ ६ ॥
सोमय सीस कपिञ्जल जाता । सुरापीत ते खंजन ताता ॥ ७ ॥
भक्षण अन्न करत जे सीसा । तित्तिर भयउ सुनहु नर ईशा ॥ ८ ॥
हत्या ब्रह्म अञ्जली धारी । किये सुरेश तदा स्वीकारी ॥ ९ ॥
सुरपति संवत एक गुजारा । आत्म शुद्धि हित किये विचारा ॥ १० ॥

दोहा- **चार भाग सुरपति किये, उस हत्या के राय ।**
नार नीर भूमीद्रुम, इन प्रति बाँटी जाय ॥५९॥

चौ- स्वयं खात पूरक वर लीन्हा । पातक स्वीकृत महि यूँ कीन्हा ॥ १ ॥
मही भाग जो पातक पावा । सो महि ऊपर रूप कहावा ॥ २ ॥

अग्रछेद ते द्रुम पुनि बढ़हीं । यह वर सुरपति द्रुम प्रति दीन्ही ॥ ३ ॥
द्रुमन भाग पातक जो पावा । सो निर्यास जगत कहलावा ॥ ४ ॥
मानव संग सगर्भा नारी । रहे योग्य यों वह स्वीकारी ॥ ५ ॥
हिस्सा नारिन के प्रति आवा । सो मासिक रज रूप दिखावा ॥ ६ ॥
सुरपति ते वर जल यों पाया । मिश्रित क्षीरादिक इक काया ॥ ७ ॥
जल प्रति पातक हिस्सा आवा । फेन रूप सो मल कहलावा ॥ ८ ॥
त्वष्टा सुत वध सुनकर काना । दुखी भये अपने मन नाना ॥ ९ ॥
वढ़हू इन्द्र शत्रु इति मन्ता । पढ़कर हवन कियेउ कियेउ तुरन्ता ॥ १० ॥

दोहा- दक्षिण अग्नि ते तदा यम सम अति विकराल ।
कृष्ण वर्ण तनु भय प्रद निकसेउ पुरुष विशाल ॥ ६० ॥

चौ- प्रतिदिन बढ़त भयंकर भारी । दग्ध शैल सदृश भयकारी ॥ १ ॥
तप्त ताम्र सम शिखा विशाला । श्मश्रुकेश युत नयन कराला ॥ २ ॥
ले त्रिशूल पद कर महि कम्पित । दीर्घ जिह्व मुख गिरि दरि दर्शित ॥ ३ ॥
खावहु मानहुँ लोक अपारा । जृम्भ माण सो वारम्वारा ॥ ४ ॥
देख लोक सब हो भय भीता । भागे सकल त्याग घर रीता ॥ ५ ॥
आवृत जासू तेज अपारा । वृत्रासुर यहि हेतु पुकारा ॥ ६ ॥
लेकर निज शस्त्रादिक सारे । इन्द्रादिक सुर दनु तनु मारे ॥ ७ ॥
वृत्रासुर सब शस्त्र अपारा । तोर तोर महि ऊपर डारा ॥ ८ ॥
देख पराक्रम विस्मित सारे । खिन्न हृदय सुर हरिहिं पुकारे ॥ ९ ॥
क्षिति जल वात अगनि नभ अम्बर । भगवन् ब्रह्मादिक हम सब सुर ॥ १० ॥

दोहा- जिस हरि के प्रति सर्वदा देवहिं बलि हर्षाय ।
अन्तक भी जिनते डरे वहि अब करें सहाय ॥ ६१ ॥

चौ- अन्य शरण जावत तजि ईश्वर । मूढ मंदमति जानहु उन नर ॥ १ ॥
श्वान पुच्छ पकर कर सागर । जावत कौन पार नर तर कर ॥ २ ॥
मत्स्य रूप हो जिन मनु पाला । वहि प्रभु होवहिं अब रखवाला ॥ ३ ॥
प्रलय नीर विच जिन विधि तारा । वहि हरि तारहि अब की बारा ॥ ४ ॥
निजमाया ते जिन हम जाये । वहि इस भवते पार लगाये ॥ ५ ॥
जब जब शत्रु बढे अपारा । तब प्रभु ले नाना अवतारा ॥ ६ ॥
युग युग बीचे वहि सब पाही । अब हम शरण उन्हीं पद जाही ॥ ७ ॥
कह शुक देव सुनहु नरपाला । देव वचन सुनकर सुरपाला ॥ ८ ॥

शंख चक्र गदाधर आये । मनु पूरब दिशि रवि प्रकटाये ॥ ९ ॥
निज सम षोडश अनुवृत सेवित । तदा देव उन हरि पर हर्षित ॥ १० ॥

दोहा- **गिरे दंडवत भूमि पर, अति विनीत कर जोर ।**
प्रेमाश्रु बहने लगे, होकर प्रेम विभोर ॥६२॥

चौ- यज्ञ वीर्य प्रभुकाल स्वरूपा । वन्दहि अस्त चक्र जगरूपा ॥ १ ॥
निर्गुण रूप नाथ तव पाही । नूतन साधन कबहु न आही ॥ २ ॥
रहे जगत के आप विधाता । वासुदेव नारायण त्राता ॥ ३ ॥
मंगल मय कल्याण स्वरूपा । परम दयालु अनन्त अनूपा ॥ ४ ॥
वन्दहिं केशव लक्ष्मी नाथा । क्लिष्ट नाथ तव क्रीड़ा गाथा ॥ ५ ॥
परम कारुणिक जगदाधारी । हे अखिलेश्वर हे अघहारी ॥ ६ ॥
महापुरुष हे पुरुष पुरातन । पालहु हरहु करहु जग सरजन ॥ ७ ॥
यद्यपि निरगुण आप कहाये । तदपि नाथ जगत यह जाये ॥ ८ ॥
अहो नाथ हम यह भी ना जाना । जन्मत तुम पर व्यक्ति समाना ॥ ९ ॥
कबहू कर्मन के फल बसहू । भोगत कर्मन फल इस जगहू ॥ १० ॥

दोहा- **केवल आतमा राम हो, उदासीन वपु शान्त ।**
जग के साक्षी मात्र हो, हे लक्ष्मी के कान्त ॥ ६३ ॥

चौ- सर्व शक्ति मान भगवाना । गुण अगणित महिमा ना जाना ॥ १ ॥
तर्क विचार विकल्प प्रकारा । तर्क पूर्ण शास्त्रन के द्वारा ॥ २ ॥
करता नर निज हृदय कलूषित । प्रभो आप उन प्रति ना दरसित ॥ ३ ॥
सम अरु विषम स्वमति अनुसारी । रज्जु खंड अहि समाँ पुकारी ॥ ४ ॥
सकल वस्तु विच आप विराजत । यही हेतु सब पति कह लावत ॥ ५ ॥
सब जग कारण अन्तर यामी । ब्रह्म प्रकृति आदि के स्वामी ॥ ६ ॥
श्रुति सब कीन्हे मना पदारथ । राखे शेष एक तुम सारथ ॥ ७ ॥
परम भक्त मधुसूदन तेरे । संत कंज पद निज हिय हेरे ॥ ८ ॥
करत जासु सेवा ते ताता । जन्म मृत्यु जगताप नसाता ॥ ९ ॥
जगदातमा त्रिविक्रम ताता । जगदाश्रमप्रद सुखप्रद जाता ॥ १० ॥

दोहा- **दैत्य दनुज आदिक असुर, सभी विभूति तोर ।**
किन्तु नाथ इस समय पर नहि उन्नति उन दौर ॥ ६४ ॥

चौ- ऐसी बात सोच निजमन में । सुर नर पशु नरसिंह इस तन में ॥ १ ॥
लेकर जगत बीच अवतारा । देत दंड करमन अनुसारा ॥ २ ॥

अहो नाथ उन असुर समाना। नासहु वृत्रासुर दुख दाना ॥ ३ ॥
पिता पितामह नाथ हमारे। हम निज जन रहे सदा तुम्हारे ॥ ४ ॥
करहु शान्त हृदय यह तापा। वृत्रासुर भय जो तनुव्यापा ॥ ५ ॥
मुक्त सर्वगत नाभ समाना। परमात्मा परब्रह्म महाना ॥ ६ ॥
वैभवयुत सब जगगुरु गाये। तव पदकंज शरण हम आये ॥ ७ ॥
आयुध अस्त्र व तेज हमारे। निगले वृत्रासुर यह सारे ॥ ८ ॥
आप अनादि अनन्त व उज्जवल। गावत संत जासु यश निर्मल ॥ ९ ॥
आनन्द रूप दुखहर हरित्राता। वन्दहिं शुद्ध हंस सुखदाता ॥ १० ॥

दोहा- **स्तूय मान सब सुरन मुख, वे हरि जगदाधार।**
उन देवन को धैर्य दे, बोले वचन उदार ॥६५॥

चौ- उपस्थान विद्या के द्वारा। कीन्ह प्रार्थना देव अपारा ॥ १ ॥
सुनकर मुदित भयो मैं भारी। त्यागहु अब तुम सोच अपारी ॥ २ ॥
जापर कृपा रहे मम व्यापा। सो नर कबहुँ न पात दुरापा ॥ ३ ॥
कृपण मनुज विषयन को चाहत। कल्याण मार्ग उसको ना सूझत ॥ ४ ॥
प्रवृति मार्ग जानउ अति गूढा। पंडित किन्तु बताव न मूढा ॥ ५ ॥
यथा वैद्य रोगी ढ़िंग जाही। कबहुँ अपथ्य बतावत ताहीं ॥ ६ ॥
इन्द्र दधीचि पास तुम जाहू। करहु न देर माँग तनु लाहू ॥ ७ ॥
निज विद्या व्रत जप तप द्वारा। अति दृढ़ भयउ जासु तन सारा ॥ ८ ॥
जानत शुद्ध ब्रह्म का ज्ञाना। परम तपस्वी जे गुणखाना ॥ ९ ॥
असुनि कुमार हेत जिन ज्ञाना। अश्वसीस धर दिये महाना ॥ १० ॥

दोहा- **यहि कारण इनका हुआ, अश्वशिरा इक नाम।**
इनके ही उपदेश से, पाये पूरण काम ॥६६॥

चौ- इन नारायण कवच पुनीता। दीन्हा त्वष्टा हेत विनीता ॥ १ ॥
त्वष्टा विश्वरूप प्रति दीन्हा। विश्वरूप से तुम यह लीन्हा ॥ २ ॥
जाउ संग ले असुनिकुमारा। देवहिं निज तनु ऋषी उदारा ॥ ३ ॥
बाद विश्वकर्मा के द्वारा। निरमित करहू वज्र करारा ॥ ४ ॥
तेजयुक्त मम वज्र तुम्हारा। छेदउ वृत्रसीस उस द्वारा ॥ ५ ॥
यह वृत्रासुर जब मर जाही। वापिस सब संपत तुम पाही ॥ ६ ॥
जो नर मम शरणागत आवे। सो नर कबहूँ न कष्ट उठावे ॥ ७ ॥

इस प्रकार कहकर भगवाना । विश्वपति भये अन्तरध्याना ॥ ८ ॥
बाद परीक्षित सुर हुलसाये । रिषि दधीचि के पास सिधाये ॥ ९ ॥

दोहा- **जाकर माँगेउ जब तनु, हँस कर वचन उचार ।**
बोले उन देवन प्रति, रिषि दधीचि उदार ॥६७॥

चौ- अहो देव वर तुम नही जानत । मरण काल प्राणी दुख पावत ॥ १ ॥
जब तक चेत रहे तनु माँही । पीर असह्य अरे वह पाही ॥ २ ॥
मूर्छित होत अन्त दुख पाये । सब तनुधर निज तनु प्रिय भावे ॥ ३ ॥
यदि विष्णू प्राणिन प्रति जाही । माँगत देह तदपि नहि पाही ॥ ४ ॥
बोले देववृन्द सुन बानी । परम यशस्वी नर गुणखानी ॥ ५ ॥
करत प्रशंसा मुनी तुम्हारी । रहे आप सम परम उदारी ॥ ६ ॥
ऐसी कवन वस्तु जग माँही । पर उपकार हेतु दे नाहीं ॥ ७ ॥
होत स्वारथी माँगन हारे । पर संकट वे नहीं विचारे ॥ ८ ॥
स्वारथि पर संकट पहिचानी । करे याचना नहि मनमानी ॥ ९ ॥
याचक आफत एवं ताता । जान सकै ना जग बिच दाता ॥ १० ॥

दोहा- **उसका दुख अनुभव करे, तो दाता मुख नाँय ।**
निकसत वचन कदापि भी, हे दधीचि ऋषिराय ॥६८॥

चौ- यह स्थिति अनुभव निज हिय धारी । करहु याचना पूर्ण हमारी ॥ १ ॥
यह सुन देववृन्द की वानी । बोले तव दधीचि मुनि ज्ञानी ॥ २ ॥
श्रवण हेत धर्म की बाता । करी उपेक्षा हम यह ताता ॥ ३ ॥
लो अभ त्यागहुँ देह हमारी । होवहिं नाशवान इक बारी ॥ ४ ॥
नश्वर तनु पाकर जग आही । धर्म व यश जो साधत ताही ॥ ५ ॥
स्थावर सम जानहु नर तेही । रहत प्राणि प्रति जो ना स्नेही ॥ ६ ॥
प्राणिन दुखी देख दुख पावे । हर्ष बीच उन सुख उपजावे ॥ ७ ॥
ये ही उत्तम धर्म बखाना । इनते अपर पाप सब माना ॥ ८ ॥
करहि न जो नर पर उपकारा । वृथा जन्म उसने यह धारा ॥ ९ ॥
यों कह कर मुनि मुदित अपारा । हरि पद पंकज निज मन धारा ॥ १० ॥

दोहा- **पाछे निज तनु उन तजा, योग मार्ग अनुसार ।**
करी तभी सुर वृन्द ने, मुनी की जय जय कार ॥६९॥

चौ- बाद अस्थि उन सुरपित लाये । वज्र विश्वकर्मा बनवाये ॥ १ ॥

हो गजेन्द्र पर इन्द्र सवारी । घेरे जिन सुरवृन्द अपारी ॥ २ ॥
स्तूयमान रिपि मुनिगण द्वारा । भई त्रिलोकी मुदित अपारा ॥ ३ ॥
धाये वृत्रासुर पर सुर वर । क्रुद्ध रुद्र जिमि अन्तक ऊपर ॥ ४ ॥
देवासुर दारुण संग्रामा । त्रेतामुख रेवा तट धामा ॥ ५ ॥
रुद्र वसूगण असुनिकुमारा । विति आदित्य व पितर अपारा ॥ ६ ॥
मरुत ऋभूगण साध्य समेता । विश्वेदेव मरुत पति सेता ॥ ७ ॥
देखा शक्र वज्रधर सोभित । भये दैत्य गण लख कर क्रोधित ॥ ८ ॥
नमुचि अनर्वा ऋपभ व शम्बर । हेति प्रहेति व उत्कल अम्बर ॥ ९ ॥
शंकुशिरा हयग्रीव पुलोमा । विप्रचित्ति अयोमुख रोमा ॥ १० ॥

दोहा- **द्विमूर्धा वृषभध्वज, वृक अरु इल्वल मालि ।**
दंद शूक पल्लव तथा, संतापन व सुमालि ॥७०॥

चौ- दैत्य व दानव यक्ष अपारी । अस्त्र शस्त्र से सज्जित भारी ॥ १ ॥
आये सन्मुख सब भय त्यागे । इन्द्र चमू को रोकन लागे ॥ २ ॥
किन्तु देव सेना अब सारी । दुर्जय काल रूप अति भारी ॥ ३ ॥
सिंहनाद कर राक्षस सारा । सुर सेना पर किये प्रहारा ॥ ४ ॥
बाण परिघ गदा अरु मुगदर । फरसा प्रास व शूल भयंकर ॥ ५ ॥
तोमर खड्ग शतघ्नी नाना । करत प्रहार असुर मनमाना ॥ ६ ॥
मारे बाण हजारों पैना । की आच्छादित उन सुर सैना ॥ ७ ॥
शरजाला सुर चमू छिपाई । अम्बर घन जिमि ग्रह समुदाई ॥ ८ ॥
शस्त्र अनेक सुरन के ऊपर । त्यागे दानव क्रोधित होकर ॥ ९ ॥
तदा हस्त लाघव से सारे । उन दैत्यन के शस्त्र निवारे ॥ १० ॥

दोहा- **खंड खंड कर तिल सम, कीन्हे अम्बर माँय ।**
पाहन तरु अरु गिरि शिखर, बरसावत अब आय ॥७१॥

चौ- देवन तदा प्रथम व्रत सारे । तिल सम खंड कीन्ह महि डारे ॥ १ ॥
अस्त्र शस्त्र तरु पत्थर द्वारा । अक्षत देखे देव अपारा ॥ २ ॥
अब तो राक्षस सब घबराये । निज उद्योग विफल जब पाये ॥ ३ ॥
ज्यो ज्यों करते यतन अपारा । त्यों त्यों निष्फल होवत सारा ॥ ४ ॥
यथा कृष्ण भक्तन पर राऊ । दुष्ट वचन का होन प्रभाऊ ॥ ५ ॥
निज सेनापति तजि रण माँही । ठहरे एक युद्ध बिच नाँही ॥ ६ ॥

भागे राक्षस होय दुखारे । देवन के अस्त्रन के मारे ॥ ७ ॥
निज सेना भागत जब देखी । कहे वचन अव वृत्र विशेषी ॥ ८ ॥
विप्रचित्ति हे नमुचि व शम्बर । मय व पुलोम अनर्वा अम्बर ॥ ९ ॥

दोहा- **कालोचित मोरे वचन, सुनो सभी हियधार ।**
मरना सबको एक दिन, अपनी अपनी वार ॥७२॥

चौ- इस जग बीच जनम वो पाता । तासु मृत्यु लिखि अवस विधाता ॥ १ ॥
कोई टाल सकै ना तेही । कोटि उपाय करे यदि देही ॥ २ ॥
फिर क्यों मृत्यु यशस्कर नाँही । गले लगावहु इस रण माँही ॥ ३ ॥
मृत्यु जग विच दोय प्रकारा । मानी दुर्लभ शास्त्रन द्वारा ॥ ४ ॥
योगीजन निज प्राणन वशकर । तजे देह हरिपद चिन्तना कर ॥ ५ ॥
दूसर युद्ध भूमि वच जाये । जूझि मरे बिन पीठ दिखाये ॥ ६ ॥
ऐसो अवसर बारम्बारा । आवत नाँही कवन प्रकारा ॥ ७ ॥
यह शुभ अवसर तुम क्यों खोऊ । अरि सन्मुख भागउ मत कोऊ ॥ ८ ॥
सुनो परीक्षित बात हमारी । भागत असुरन सेना सारी ॥ ९ ॥
धर्म युक्त वृत्रासुर वैना । सुना एक भी उन सबने ना ॥ १० ॥

दोहा- **असुरन की सेना सभी, कालाश्रय सुरहाथ ।**
छिन्न भिन्न होकर अरे, भागी जिमि बिन नाथ ॥ ७३ ॥

चौ- देख वृत्र क्रोधित हो मन में । रोकी सुर सेना झट रन में ॥ १ ॥
पाछे डाँट सुरन प्रति वानी । बोला वृत्र तदा अभिमानी ॥ २ ॥
श्रेष्ठ भीत वध ना बलवन्ता । नासत स्वर्ग्य और यश अन्ता ॥ ३ ॥
मानहु युद्ध बीच विश्वासा । क्षण भर निज तजि जीवन आसा ॥ ४ ॥
आवहु मो संग करो लराई । एवं क्रोधित हो दनु राई ॥ ५ ॥
निज भीषण तनु देव डरावा । सिंह नाद कर उन प्रति धावा ॥ ६ ॥
वृत्र शब्द भीपण तव सुनकर । गिरे देव सब भूमी ऊपर ॥ ७ ॥
वृत्र त्रिशूल तदा ले हाथा । सुरचमु मर्दहि पद दनु नाथा ॥ ८ ॥
देखा सुरपति अरि बलधारी । गदा हाथ निज क्रोधित भारी ॥ ९ ॥
फेंकी निज शत्रु के ऊपर । आवत गदा असुर तव लखकर ॥ १० ॥

दोहा- **तदा वाम कर से पकर, ऐरावत के सीस ।**
मारी वृत्रासुर अरे वापिस, सुनु नर ईश ॥ ७४ ॥

चौ- देख कर्म अरि का यह भारी । तासु प्रसंसा देव उचारी ॥ १ ॥
वृत्र गदा से पीड़ित होकर । धनुप सात दूरी पर गजवर ॥ २ ॥
जाकर गिरा करत चिंघारी । वमन रुधिर की करके भारी ॥ ३ ॥
अमृत स्त्रावि हस्त तदेन्द्रा । स्पर्शित गत व्यथ भयो गजेन्द्रा ॥ ४ ॥
युद्ध हेतु वापिस रण आये । ऐरावत पर इन्द्र सुहाये ॥ ५ ॥
वज्रायुध को लख रण माँही । भ्राता वध की स्मृति जव आही ॥ ६ ॥
वदत वृत्र तव वचन उचारी । भ्राता गुरु ब्राह्मण वधकारी ॥ ७ ॥
अरे इन्द्र मैं वध कर तेरा । भ्राता ऋण से करूँ निवेरा ॥ ८ ॥
तुम मम अग्रज सीस उतारे । यथा स्वर्ग कामी पशु मारे ॥ ९ ॥
त्यागी तुम निन्दित कर काजा । दया कीरती लक्ष्मी लाजा ॥ १० ॥

दोहा- **मम त्रिशूल छेदित हिय, गीध काक अव खाल ।**
खींचहि तोरी सुरपति, वच न सकहु इस काल ॥ ७५ ॥

चौ- अन्य देव जो साथी तेरे । मोपर करत प्रहार घनेरे ॥ १ ॥
उन सवका मैं सीस उतारूँ । पूजहुँ भैरव भूत अपारू ॥ २ ॥
अरे कुलिश धर सीस हमारा । काटहि यदि यह व्रज तुम्हारा ॥ ३ ॥
निज तनु ते भूतन वलि देकर । होऊँ मुक्त जग वन्धन तजकर ॥ ४ ॥
मोपर वज्र अरे सुर नाहू । कारण कवन तजहु ना याहू ॥ ५ ॥
पूर्व गदा सम निष्फल नाँही । अरे वज्र यह कवहुँ न जाही ॥ ६ ॥
हरी तेज युत वज्र तुम्हारा । ऋषि दधीचि तप तीक्ष्ण अपारा ॥ ७ ॥
जीतहु तुम निज अरि इस द्वारा । जहाँ हरी वहँ विजय अपारा ॥ ८ ॥
मैं संकर्षण पद मन लाऊँ । वज्र तोर हत प्रभुपद जाऊँ ॥ ९ ॥
हरि निज भक्तन प्रति स्नेही । संयत स्वर्गादिक नहिं देही ॥ १० ॥

दोहा- **स्वर्गादिक सम्पत सभी, राग द्वेष की खान ।**
आधि व्याधि मद कलि व्यसन, भय उद्वेग महान ॥७६॥

चौ- विषय त्रिवर्ग परीश्रम सारे । नासहिं यह हरि अरे हमारे ॥ १ ॥
एवं वदत असुर निज वाणी । पाछे सुमरेउ शारंगपाणी ॥ २ ॥
होऊँ हरि तव दासन दासा । यहि मे लाग रही मन आसा ॥ ३ ॥
करूँ देव मन ते गुण सुमिरण । रसना ते करूँ नाम उचारण ॥ ४ ॥
काया ते सेवा पद जोरी । करहुँ नाथ यहि वीनति मोरी ॥ ५ ॥

स्वर्ग व ब्रह्म लोक ना चाहूँ। सार्वभौम पद ना परवाहू ॥ ६ ॥
राज रसातल का भी नाँही। योग सिद्धि अरु मोक्ष ना चाही ॥ ७ ॥
तुम बिन देव एक ना पाऊँ। जन्म जन्म तव वर पद पाहूँ ॥ ८ ॥
क्षुधित यथा खग पक्ष विहीना। निज माता दर्शन लवलीना ॥ ९ ॥
वत्स क्षुधातुर जिमि निज माता। नार प्रवासी प्रिय पति हेता ॥ १० ॥

दोहा- **कमल नयन मोरे मन, नहिं मुकति की चाह।**
प्रभो तुम्हारे दर्श की, लागी आस अथाह ॥ ७७ ॥ क
भ्रमण करत संसार में, रहुँ तव भक्तन संग ॥
सुत दारा गेहादि में, चित की हो न उमंग ॥ ७७ ॥ ख

चौ- समर बीच वृत्रासुर ज्ञानी। मृत्यु विजयते श्रेष्ठ बखानी ॥ १ ॥
शूल हाथ लेकर निज राया। मघवा सन्मुख झटपट धाया ॥ २ ॥
प्रलय नीर बिच कैटभ जैसे। धावा हरि ऊपर वह वैसे ॥ ३ ॥
प्रलयाग्नि की लपट समाना। फेंका शूल घुमा कर नाना ॥ ४ ॥
बचकर जाहु न अब असुरारी। यों कहि शूल इन्द्र पर डारी ॥ ५ ॥
आवत इन्द्र तदा लखि शूला। काटा सव्य हस्त सह मूला ॥ ६ ॥
वाम हस्त तब परिघ उठावा। गज सुरपति पर दनू चलावा ॥ ७ ॥
कियो प्रहार हनू पर भारी। गिरा कुलिश कर तब असुरारी ॥ ८ ॥
कर्म वृत्र का लख यह भारी। तासु प्रशंसा सभी उचारी ॥ ९ ॥
अब सुरपति संकट लख सारे। देव वृन्द अति भये दुखारे ॥ १० ॥

दोहा- **लज्जायुत सुरपति अब, वज्र उठावत नाँय।**
देख तदा वृत्रासुर, वदत वचन मन भाय ॥७८॥

चौ- मारउ वज्र उठाकर मोहीं। करउ खेद मत हे दनु द्रोही ॥ १ ॥
आदि सनातन पुरुष पुराना। उत्पत्ति स्थिति प्रलय निदाना ॥ २ ॥
करते यहि सुनु देव प्रवीना। जय अपजय सब इन आधीना ॥ ३॥
इनके ही वस जग जगपाला। रहते जिमि खग घातक जाला ॥ ४ ॥
जय अपजय का कारण काला। बल मृत्यु प्राणादिक हाला ॥ ५ ॥
जाने बिना मनुज सुर राया। मानत जड़ हेतू निज काया ॥ ६ ॥
मघवन् यथा दासमयि नारी। काष्ठ कुरंग यथा वशकारी ॥ ७ ॥
जानहु त्यों जग उन आधीना। जगत बीच जिन कृपाविहीना ॥ ८ ॥

जीव इन्द्रियाँ मिल कर सारी। कर सकती कुछ नहीं विचारी ॥ ९ ॥
अज्ञानी मानव जग आकर। मानत निज अधीन वह ईश्वर ॥ १० ॥

दोहा- **प्राणिन ते प्राणी सृजे, अरु करते संहार।**
ऐसे हरि को मन्द धी, करते ना स्वीकार ॥७९॥

चौ- विजय सुकाल पुरुष की आयू। बढत रमा यश बिना उपायू ॥ १ ॥
हो विपरीत पराजय काला। नसत रमा यश तब तत्काला ॥ २ ॥
जय अपजय मृत्यु अरु जीवन। सुख दुख सम जानउ सब निज मन ॥ ३ ॥
जो सत्वादिक गुणन विहीना। सब घट वासी हरि लवलीना ॥ ४ ॥
सो नर फँसहि न जग जंजाला। लखो इन्द्र तुम मम यह हाला ॥ ५ ॥
युद्ध बीच तव प्राणन हेतू। स्थित मैं यहाँ सुनो सुर केतू ॥ ६ ॥
समर बीच हो बाजी प्राणन। पाशा शर जँह वाहन आसन ॥ ७ ॥
जय अप जय यहँ कोई न जानत। बोले शुक मुनि तब हर्षावत ॥ ८ ॥
इन्द्र वृत्रवच सुन छल हीना। करी प्रशंसा असुर प्रवीना ॥ ९ ॥
मुदित होय पुनि वज्र उठावा। हँसकर पाछे वचन सुनावा ॥ १० ॥

दोहा- **दानववर तुम सिद्ध नर, हो हरि भक्तन माँय।**
सर्वात्मा भगवान में, तुव बुद्धि अति भाय ॥ ८० ॥

चौ- जन मोहनि वैष्णवि तुम माया। कीन्ही दनुज प्रवर अलगाया ॥ १ ॥
असुर भाव तज कर यहि हेतू। महापुरुष बन गय दननकेतू ॥ २ ॥
रज प्रकृति होवत तव ताता। दृढ भक्ति ईश्वर प्रति जाता ॥ ३ ॥
ईश्वर बीच जासु रति होई। अन्य वस्तु सेवत ना सोई ॥ ४ ॥
अमृत सागर रहे बिहारी। क्षुद्र गर्त जल सो न विचारी ॥ ५ ॥
एवं वदत परस्पर वानी। इन्द्र वृत्र दुई रण अति ठानी ॥ ६ ॥
वाम हस्त निज परिघ उठावा। सुरपति ऊपर वृत्र चलावा ॥ ७ ॥
तब सुरपति निज कुलिश चलावा। परिध वाम कर काट गिरावा ॥ ८ ॥
छिन्न हस्त तनु वृत्र अपारा। बहने लागी शोणित धारा ॥ ९ ॥
गिरी भुजा भूमी पर कैसे। इन्द्र वज्र ते परवत जैसे ॥ १० ॥

दोहा- **छिन्न हस्त वृत्रासुर, अधर होठ महि लाय।**
ऊपर के निज होठ को, अम्बर बीच लगाय ॥ ८१ ॥

चौ- नभ सम वदन व अहि सम जीहा। दंष्ट्रा अन्तक भयप्रदवीहा ॥ १ ॥
मानों ग्रसहि त्रिलोकी सारी। रोंधत महि गिरि सैन्य अपारी ॥ २ ॥

निगले गजपति सुरपति कैसे । अजगर द्वारा वन गज जैसे ॥ ३ ॥
ग्रसित इन्द्र वृत्रासुर द्वारा । लख कर सुर मुनि दुखी अपारा ॥ ४ ॥
निंगला असुर पुरन्दर राजा । भयो तासु कुछ भी न अकाजा ॥ ५ ॥
योग व बल विद्या अनुसारी । मरेउ न गज पति सह असुरारी ॥ ६ ॥
भेदी कोंख कुलिश के द्वारा । निकसे गज सह मुदित अपारा ॥ ७ ॥
पाछे सुरपति वज्र चलावा । दनुज सीस महि काट गिरावा ॥ ८ ॥
दनुज सीस काटा रण कैसे । गिरी पक्ष काटत पवि जैसे ॥ ९ ॥
योग वृत्र वध सम्बत आया । भ्रमत तीव्र पवि काटा गिरावा ॥ १० ॥

दोहा- **बजी दुंदुभि नभ तदा, करके मंत्रोचार ।**
चारण रिषि गंधर्व गण, फेंके पुष्प अपार ॥ ८२ ॥ क
वृत्र देहते नृप तदा, निकसत ज्योति विशाल ।
सबके देखत हरि विषै, भई लीन तत्काल ॥ ८२ ॥ ख

चौ- बोले शुक मुनि परम उदारी । भये लोक अब सभी सुखारी ॥ १ ॥
किन्तु इन्द्र मन सुख नहि भाया । वृत्रासुर वध कर पछिताया ॥ २ ॥
अब ऋषि पितर दनुज सुर भूता । ब्रह्मा शिव अरु इन्द्र सहेता ॥ ३ ॥
निज निज धाम गये वे सारे । कुरुवर नृप अब वचन उचारे ॥ ४ ॥
ये मुदित नहिं सुरपति क्यों कर । पर सब कारण कहु समझाकर ॥ ५ ॥
बोले शुक मुनि सुनु कुरुराया । वृत्रासुर भय सब मन छाया ॥ ६ ॥
सुरपति से जाकर सुर सारे । वृत्र नाश हित वचन उचारे ॥ ७ ॥
बोले अमरपति तब वानी । सुनो अमर गण मोर कहानी ॥ ८ ॥
विश्व रूप वध जब हम कीन्हा । सब पातक वह निज शिर लीन्हा ॥ ९ ॥
स्त्री भूजल तरु प्रति सब पातक । कीन्ह विभाग दीन्ह द्विज नाशक ॥ १० ॥

दोहा- **अब वृत्रासुर वधकर, बोलो मैं किस ठौर ।**
बाँधहुँ किसके सिर अरे, द्विज हत्या का मौर ॥ ८३ ॥

चौ- अमर वृन्द सुन सुरपति वानी । बोले वचन तजो यह ग्लानी ॥ १ ॥
अश्वमेध सब पातक नाशक । डरहु न निज मन हे सुर पालक ॥ २ ॥
अश्वमेध द्वारा हरि पूजत । जग वध पातक भी सब छूटत ॥ ३ ॥
मात पिता ब्राह्मण गौ घाती । निज गुरु घातक पुल्कस जाती ॥ ४ ॥
अमिप श्वान करहिं जे भक्षण । होत शुद्धि हरि नाम उचारण ॥ ५ ॥
सभी चराचर नाशन हरे । सब हत्या हयमेध निवारे ॥ ६ ॥

क्यों मुनि अधम दुष्ट खल हन कर । हत्या लागहिं तोहि पुरन्दर ॥ ७ ॥
पातक अश्वमेध के द्वारा । करो निवारण सभी प्रकारा ॥ ८ ॥
इति सुरेश द्विज आज्ञा मानी । कियो वृत्र वध जग दुख दानी ॥ ९ ॥
तदा ब्रह्म हत्या सुनु राई । शचि पति के सन्मुख झट आई ॥ १० ॥

दोहा- **क्षय गदयुत लोहित वसन, चंडाली समभेश ।**
दुर्गन्धी दूषित पथ, विस्तृत पलित कुकेश ॥ ८४ ॥

चौ- ठहरु ठहरु यों निज मुख भाषत । देखी शचि पति निज अनुधावत ॥ १ ॥
गयउ तदा सब दिशि सुरराई किन्तु न हत्या संग छुड़ाई ॥ २ ॥
कमल नाल विच मान सरोवर । कियो वास हत्या से डरकर ॥ ३ ॥
वरष सहस वहँ कियो निवासा । द्विज हत्या त्यागन की आसा ॥ ४ ॥
योग व तप विद्या अनुसारी । तब लगि नहुष स्वर्ग अधिकारी ॥ ५ ॥
स्वर्ग सम्पदा पाकर राजा । हो मदान्ध मति शचि मन साजा ॥ ६ ॥
तासुकर्म ते नृप ऋषि शापा। अजगर तनु पाकर दुख व्यापा ॥ ७ ॥
बाद इन्द्र वर विप्रन द्वारा । बुलवाये तब स्वर्ग सिधारा ॥ ८ ॥
ब्रह्मऋषी अब स्वर्ग पधारे । दीन्ही दीक्षा मिलकर सारे ॥ ९ ॥
सुरपति कर हय मेध रचाया । द्विज हत्या से मुक्त कराया ॥ १० ॥

दोहा- **अश्वमेध द्वारा तदा, पूजन कर भगवान ।**
द्विज हत्या सुरपति तजी, भानु निहार समान ॥ ८५ ॥

चौ- सुरपति मोक्ष कथा का वरणन । करहिं संत निज वदन उचारण ॥ १ ॥
तीर्थ पाद हरि कीरतन करहीं । सारे पाप तुरत उन धुलहीं ॥ २ ॥
पर्व पर्व पर कथा उचारे । करहि पान निज करणन सारे ॥ ३ ॥
धन अरु कीर्ति बढावन हारी । यह गाथा सब दुरित निवारी ॥ ४ ॥
निज शत्रुन पर विजय दिलावे । आयु स्वस्तिप्रद सुने सुनावे ॥ ५ ॥
गाथा भक्ति बढ़ावन हारी । हम निज मुख कुरुवर्य उचारी ॥ ६ ॥
शुक प्रति बोले नृपति उदारा । रज तम सहित स्वभाव अपारा ॥ ७ ॥
तदपि वृत्र हरि भक्ति अपारा । दृढ मति भइ मुनि केहि प्रकारा ॥ ८ ॥
प्राय सत्य मय सुर रिषि ताता । अमल भक्ति प्रति मन नहि जाता ॥ ९ ॥
इस जग बीचे जीव अनन्ता । उन बीचे कुछ मानव सन्ता ॥ १० ॥

दोहा- **मुक्ति के ग्राहक मुने, कोटकि में इक पाप ।**
प्रभु भक्ति में लीन हो, सो दुर्लभ जग माँय ॥ ८६ ॥

चौ- पापी वृत्रासुर यह ताता । दृढ मति कृष्ण बीच किमिजाता ॥ १ ॥
यह संशय जो मम हिय जाता । करो निवारण मुनि विख्याता ॥ २ ॥
समर बीच जिन सुरपति राजी । कीन्हा निज पौरुष बल साजी ॥ ३ ॥
कहे सूत शौनक मुनि राया । नृपति प्रश्न यह शुक मन भाया ॥ ४ ॥
बोले तदा सुनो हे राजन । सुनौ एक इतिहास पुरातन ॥ ५ ॥
व्यास व नारद देवल आनन । सुना एक दिवस हम राजन ॥ ६ ॥
जनपद शूरसेन विख्याता । सार्वभौम नृप वहँ इक जाता ॥ ७ ॥
नृपवर चित्रकेतु इतिनामा । पालत वह महि पूरण कामा ॥ ८ ॥
होवत गेह कोटि इक रानी । किन्तु न संतति भई नृप ज्ञानी ॥ ९ ॥
यश गुण रूप व शील उदारी । तदपि पुत्र चिन्ता मन भारी ॥ १० ॥

दोहा- **कोटि नार निज सदन में, सम्पत भरी अपार ।**
सार्वभौम पद प्राप्त भी, तदपि न मुदित भुँवार ॥ ८७ ॥

चौ- ऋषिवर जासु अंगिरा नामा । एक दिवस आये नृप धामा ॥ १ ॥
कर प्रणाम पूजन नृप कीन्हा । विधिवत अर्घ्य व आसन दीन्हा ॥ २ ॥
बैठें आसन ऋषि दयालू । सन्मुख शान्त स्वभाव नृपालू ॥ ३ ॥
बोलें तदा अंगिरा राया । कहो कुशल निज अंग सुहाया ॥ ४ ॥
गुरु मंत्री जनपद मिन्ताई । दुर्ग कोष सेना सुखदाई ॥ ५ ॥
अंग सात ये नृप के सारे । है ना कुशल समेत तुम्हारे ॥ ६ ॥
यथा जीव महदादिक संगा । घिरा रहे त्यों नृप इन अंगा ॥ ७ ॥
कुशल समेत रहें ये सारे । उस नृप का कुछ नहीं बिगारे ॥ ८ ॥
भोगहिं वही राज सुख ताता । इन दृढ बिना नृपति दुख पाता ॥ ९ ॥
नृप पर सोंप प्रकृति भी भारा । पावत सम्पत सिद्धि अपारा ॥ १० ॥

दोहा- **दारा प्रजा अमात्य अरु, भृत्य व मंत्रि तिहार ।**
जनपद पुर वासी सभी, व्यापारी परिवार ॥ ८८ ॥

चौ- पुत्र और मंडलपति सारे । वश में तो हैं नृपति तुम्हारे ॥ १ ॥
निज मन वश में होवत जासू । होत अधीन सभी जग तासू ॥ २ ॥
लोक व लोकपाल बलि तेंही । राखत मुदित सदा नृप देहीं ॥ ३ ॥
शुष्क वदन चिन्ता से आतुर । दीखत मोंहि अरे तुम नृपवर ॥ ४ ॥
एवं वचन मुनि के सुनकर । प्रजा काम बोले तव नृप वर ॥ ५ ॥
मुनि तुम जानहु मन की बाता । पूछहू तदपि कहुँ सब ताता ॥ ६ ॥

सार्वभौम पद कोटिक नारी । दुर्लभ सम्पत गेह अपारी ॥ ७ ॥
यश ऐश्वर्य देख कर मेरे । तरसत सुर भी मुनी घनेरे ॥ ८ ॥
किन्तु न सन्तति मो घर जाता । यही हेतु चिन्ता तुर ताता ॥ ९ ॥
मम पूर्वज सह नरक न जैसे । तरूँ उपाय कहू मुनि वैसे ॥ १० ॥

दोहा- **एवं नृप की प्रार्थना, सुनकर मुनी कृपाल ।**
त्वष्टा की पूजन करी, चरू पका तत्काल ॥ ८९ ॥

चौ- चित्रकेतु नृप की पटरानी । नाम कृतद्युति सब गुणखानी ॥ १ ॥
शेष प्रसाद यज्ञ का राई । दीन्हा उस हेतू मुनि आई ॥ २ ॥
बोले मुनी सुनो तुम राऊ । हर्ष शोक प्रद सुत इक पाऊ ॥ ३ ॥
यों कह विधि सुत गये सिधाई । इत चरु प्राशन ते सुन राई ॥ ४ ॥
चित्रकेतु निज पति के द्वारा । धारन कीन्हा गर्भ प्रकारा ॥ ५ ॥
तासु गर्भ का प्रति दिन भागा । शुक्ल चन्द्रवत बाढ़न लागा ॥ ६ ॥
समय पाय रानी सुत जाया । सुनकर नृपति बहुत हुलसाया ॥ ७ ॥
किये स्नान पुनि विप्र बुलावा । जात कर्म विधिवत करवावा । ८ ॥
गज हय ग्राम सुविविध प्रकारा । कंचन रजत सुवसन अपारा ॥ ९ ॥
छै अर्बुद धेनू मंगवाई । दियो दान विप्रन को राई ॥ १० ॥

दोहा- **अपर नगर वासिन प्रति, धन यश वय सुत काज ।**
मुँह माँगी वस्तु सभी, दीन्ही वे नर राज ॥ ९० ॥

चौ- जीव मनोरथ पूरण जैसे । करता मेघ नृपति किय वैसे ॥ १॥
दिन दिन मात पिता का स्नेहा । बाढ़ा सुवन देख निज गेहा ॥ २ ॥
अब उन सौतन के मन व्यापा । प्रजा काम रूपी संतापा ॥ ३ ॥
इत नृप चित्रकेतू का स्नेहा । बाढ़ा कृतद्युति पर अति नेहा ॥ ४ ॥
यथा अधन धन पाकर गेहा । बाढ़त उसका उस पर स्नेहा ॥ ५ ॥
दूजी सौंतन पर उर माहीं । नरपति प्रेम रहा लव नाहीं ॥ ६ ॥
मिलकर सौतें अब वे सारी । नृप द्वारा अपमानित भारी ॥ ७ ॥
दे निज आत्मा को धिक्कारी । वदत परस्पर वे मिल सारी ॥ ८ ॥
पुत्र हीन नारी जग जेती । मंद भागिनी पद वह लेती ॥ ९ ॥
गुर्वी सोत दुःख अवतारा । दासी सम करती व्यवहारा ॥ १० ॥

दोहा- **अरे और तो क्या कहें, स्वयं हमारे कान्त ।**
पत्नी रूप में भी, नहीं मानत हमें नितान्त ॥ ९१ ॥

चौ- सचमुच अरे अपुत्री नारी । जग विच पावत अति धिक्कारी ॥ १ ॥
भला दासियों को दुख नाँही । कर सेवा स्वामी सुख पाही ॥ २ ॥
किन्तु अरी हम मान विहीना । भई आज दासिन ते हीना ॥ ३ ॥
दासिन की दासिन सम सारी । तिरस्कार पार हिं नृप द्वारी ॥ ४ ॥
एवं निज मन किये विचारी । सौत पुत्र संपत लख सारी ॥ ५ ॥
कीन्हा द्वेष पुत्र से भारी । दुष्ट बुद्धि वश ते सब नारी ॥ ६ ॥
नृप सुत स्नेह सहा नहिं जावे । शिशुहिं गरल को पान करावे ॥ ७ ॥
सौतन कर्म महिषी नहि जान्यो । बालक शयन कियो यह मान्यो ॥ ८ ॥
गेह काज करने वह लागी । पाछे पुत्र स्नेह अनुरागी ॥ ९ ॥
शयन करत बीते बहुकाला । धात्री प्रति बोली नृप बाला ॥ १० ॥

दोहा— **पुत्रहिं आनहुँ अंक तुम, स्तन्य पान हितु मोर ।**
पटरानी के वचन सुन, गई धात्रि शिशु ओर ॥ ६२ ॥

चौ- शयन गेह गवनी वह धाई । मृत बालक लखि अति घबराई ॥ १ ॥
हाहाकार करत वह धाई । गिरी भूमि ऊपर घबराई ॥ २ ॥
तासु रुदन सुनकर वह रानी । शीघ्र वहाँ आई अकुलानी ॥ ३ ॥
मृत सुत देख रुदन कर भारी । गिरी भूमि पर खाय पछारी ॥ ४ ॥
तेहि काल अन्तःपुर वासी । रोवत सब नर नार उदासी ॥ ५ ॥
कपट रूप ते सौतन सारी । रोवन लगी दुखित सम भारी ॥ ६ ॥
मृत सुत समाचार नृप पाये । स्नेह बद्ध हो अति घबराये ॥ ७ ॥
नृष्ट दृष्टि पद पद परि राजा । आये जहँ मृत सुत शव ताजा ॥ ८ ॥
कंठ रुद्ध शोकाश्रू लोचन । दीर्घ स्वॉस मुख आव न वचनन ॥ ९ ॥
मृत सुत शोक व्याप्त पति देखी । करत कृतद्युति रुदन विशेषी ॥ १० ॥

दोहा- **नयनाश्रु अंजन गहि, चर्चित केशर तासु ।**
वक्षस्थल को धोरहे, मुक्त केश शिर जासु ॥ ६३ ॥

चौ- बिखरे कुसुम केश महि सारे । करत विलाप अनेक प्रकारे ॥ १ ॥
कुररी इव उच्च स्वर रानी । करत रुदन निज मन अकुलानी ॥ २ ॥
अरे विधाता सचमुच भारी । तुम सम दीखत नहीं अनारी ॥ ३ ॥
करत काम सृष्टि प्रतिकूला । होवहिं अब ये जग निर्मूला ॥ ४ ॥
बृद्ध बृद्ध तू जीवित राखत । शिशु अरु बालक मारत जावत ॥ ५ ॥
यदि वास्तव तव यहि स्वभाऊ । मो प्राणिन शत्रु कहलाऊ ॥ ६ ॥

जन्म मरण क्रम यदि ना रहहीं । जीव भाग्य वश जन्महिं मरहीं ॥ ७ ॥
तो फिर नहीं जरूरत तेरी । इस जग बीच जगह क्यों घेरी ॥ ८ ॥
यही बात सच हो यदि धाता । स्नेह पाश क्यो राखउ ताता ॥ ९ ॥
स्नेह पाश का कारण येही । सब मिला सृष्टि बढ़ावहिं देही ॥ १० ॥

दोहा- **किये कराये पर अरे, निज हाथन तू धात ।**
क्यों पानी यह फेरता, कर शिशुअन की घात ॥ ~~१०१~~ ९४ ॥

चौ- पाछे सुत सूरत लख रानी । कहने लगी हृदय अकुलानी ॥ १ ॥
निज सुत की भर कर वह बाथा । पुत्र तोर बिन भई अनाथा ॥ २ ॥
भई दीन लाला बिन तोरे । खोलहु नयन लखहु मम ओरे ॥ ३ ॥
उचित न त्याग गमन सुत मेरे । शोक तप्त पितहिं लखुतोरे ॥ ४ ॥
नापुत्री नर अति कठिनाई । जावत पार नरक समुदाई ॥ ५ ॥
किन्तु लाल हम तोर सहारे । जाते बिन श्रम भली प्रकारे ॥ ६ ॥
अरे लाल तुम इस यम संगा । जाहु दूर मत तज यह अंगा ॥ ७ ॥
यह यम तो निर्दयि अति भारी । जाहु लाल मति तजि महतारी ॥ ८ ॥
मम प्रिय लाल हे राजकुमारू । उठो पुत्र मत करो अबारू ॥ ९ ॥
प्रिय लाला साथी यह तेरे । खेलन काज अरे तोहिं टेरे ॥ १० ॥

दोहा- **अति देरी सोवत तुझे, होगई मेरे लाला ।**
भूख लगी होगी तुझे कुछ खाहु प्रिय बाल ॥९५॥

चौ- यदि कुछ भी ना खावउ लाला । करहु पान पय मम इस काला ॥ १ ॥
निज स्वजनों का शोक निवारू । अब तो मोरे राजकुमारू ॥ २ ॥
प्यारे लाल तुम्हारे आनन । दीखत आज न हास सुहावन ॥ ३ ॥
हर्ष युक्त ना चितवन दीखत । मंद अभागिनि तुम बिन तरसत ॥ ४ ॥
हाय हाय तव तोतलि बोली । सुनती नाँहि आजु अनमोली ॥ ५ ॥
सचमुच निरदइ यह यमराजू । ले पर लोकगयो उस आजू ॥ ६ ॥
जहाँ जाय वापिस नहि आवे । अरे लाल यम संग मत जावे ॥ ७ ॥
भयो आज केहि काज कठोरा । जावत साथ त्याग कर मोरा ॥ ८ ॥
इस भव में आनन तव लालू । दीखत नाँही मोहि अय बालू ॥ ९ ॥
भयो शोक प्रद अरे अशोका । हेरूँ तोहि जाय किस लोका ॥ १० ॥

दोहा- **चित्रकेतु नृपराज भी, निज रानिन के संग ।**
अति विलाप करने लगे, लख कर सुत का अंग ॥९६॥

चौ- राजमंत्रि सह पुरजन सारे । आये मिलकर नृप के द्वारे ॥ १ ॥
दोउ दम्पत्ति रोवत भारी । लखकर दुखित भये नर नारी ॥ २ ॥
देख अचेतन दुःखित सोऊ । मुनि अंगिरा नारद दोऊ ॥ ३ ॥
नृप समीप समझावन आये । चिन्तित नृप प्रति वचन सुनाये ॥ ४ ॥
करहु शोच केहि कारण राया । यह तव कवन कहाँ ते आया ॥ ५ ॥
पूर्व जनम विच इस संग नाता । कहु नृपवर तव संग क्या जाता ॥ ६ ॥
अग्रिम जनम बीच भी राऊ । रहे लगाव तोर सो गाऊ ॥ ७ ॥
सरित वेग सिकता कण राया । मिलत परस्पर अरु अलगाया ॥ ८ ॥
काल वेग ते त्यों नृप सींवा । विछुरत मिलत परस्पर जीवा ॥ ९ ॥
बीज बीज ते जन्मत जैसे । नष्ट होत पाछे वह कैसे ॥ १० ॥

दोहा- **प्रभु माया प्रेरित यह, देह देह से आत ।**
बीज समाँ पाछे अरे, भूमी बीच समात ॥९७॥

चौ- इस जगबीच चराचर सारे । देखत हम तुम सभी प्रकारे ॥ १ ॥
तव मम जनम प्रथम अरु पाछे । नहि अस्तित्व रहहि इन आछे ॥ २ ॥
सन्ता जब पर पूरब नाही । वर्तमान की कौन गिनाही ॥ ३ ॥
सत्य वस्तु सब समय समाना । अरे सत्य तो वे भगवाना ॥ ४ ॥
जिन बिच जन्म व मृत्यु विकारा । आवत नाँही केन प्रकारा ॥ ५ ॥
इच्छा और अपेक्षा दोई । इन प्रभु में देखत ना कोई ॥ ६ ॥
प्राणिन ते प्राणिन प्रभु सृजही । पालहि और बाद सब नासहीं ॥ ७ ॥
देह देहते होवत राया । यथा बीज ते बीज वताया ॥ ८ ॥
मात पिता भ्राता सुत नारी । ये सब भेद अविधाकारी ॥ ९ ॥
देह असत्य न सोचन जोगू । असत वस्तु का होत वियोगू ॥ १० ॥

दोहा- **करहु शोच नृप तुम नहीं, राखहु मन में धीर ।**
वासुदेव भगवान का, ध्यान करो तजि पीर ॥९८॥

चौ- नारद मुनी अंगिरा दोऊ । एवं आश्वासित नृप सोऊ ॥ १ ॥
धीरज धर निज मुख मुरझाया । आनन पोंछ वदत पुनिराया ॥ २ ॥
योगी रूप यहाँ मुनि राऊ । आये तुम निज नाम वताऊ ॥ ३ ॥
मुझ सम अज्ञ जनों के ऊपर । विचरत कृपा हेतु हरि प्रियवर ॥ ४ ॥
उन विच आप कुमार व नारद । ऋभू अंगिरा ज्ञानविशारद ॥ ५ ॥
देवल असित कपिल दुर्वासा । यागवल्क्य गौतम शुक व्यासा ॥ ६ ॥

जातूकर्ण्य वशिष्ठ व रामा । अरुणि च्यवन दन्त सुखधामा ॥ ७ ॥
वेदशिरा पातञ्जलि नाँही । कनक नाम रोमश गुण ग्राही ॥ ८ ॥
वोद्य व पंचशिरा तो नाँही । कौशल्य और आसुरि अघदाही ॥ ९ ॥
ऋतध्वज सुवन मृकंडु मुनीशा । श्रुत व अवान्तर तम होवउ ईशा ॥ १० ॥

दोहा- **ये सिद्धेश्वर जगत में, ज्ञान हेतु विचरन्त ।**
इन सिद्धन में कवन तुम, मोंसे कहु मुनि सन्त ॥९९॥

चौ- ग्राम्य पशू सम मैं मति मन्दा । मोह गर्त गिर मम मन गन्दा ॥ १ ॥
ज्ञान स्वरूप जलाकर दीपा । मोह अन्ध मम नसो मुनीपा ॥ २ ॥
बोले वचन अंगिरा राऊ । सुत कामी ते प्रति सुत दाऊ ॥ ३ ॥
राजन मोहि अंगिरा जानूँ । मम सह यह नारद मुनि मानूँ ॥ ४ ॥
जब सुत शोक मगन हम देखा । हरी भक्त तोहि जान विशेषा ॥ ५ ॥
आये करन अनुग्रह तो पर । हम दोऊ मुनि ते घर ऊपर ॥ ६ ॥
करो शोच मन अब मति राया । जब मैं प्रथम तोर घर आया ॥ ७ ॥
कियो विचार तदा मैं राजन । करूँ ज्ञान तव प्रति उच्चारन ॥ ८ ॥
सुत रुचि देखी तदा तुम्हारी । दीन्हा सुत नहि ज्ञान प्रचारी ॥ ९ ॥
पुत्र ताप अनुभव इस काला । पाया आप अहो नर पाला ॥ १० ॥

दोहा- **सुत संताप समान ही, तिय धन का संताप ।**
मही राज्य धन कोश सब, नासवान जनु आप ॥१००॥

चौ- शोक मोह भय दुख के कारन । ये सब मन के खेल खिलावन ॥ १ ॥
जानहु तुम इन मिथ्या कल्पित । होत नाँहि पर ये सब दीखत ॥ २ ॥
क्षण में दीखत क्षण में नसहीं । स्वप्न मनोरथ सम अनृत ही ॥ ३ ॥
कर्म वासना से हो प्रेरित । करते विषयन जे नर सेवित ॥ ४ ॥
उनका ही मन कई प्रकारा । करता कर्म अनेक अपारा ॥ ५ ॥
जीवहिं हेतु तनु विविध प्रकारा । क्लेश ताप देवत नृप सारा ॥ ६ ॥
स्वस्थ चित्त होकर यहि हेतू । आत्म तत्व खोजहु नृप केतू ॥ ७ ॥
द्वैत बीच स्थिर तज विश्वासू । निज हिय हरिपद दीप प्रकासू ॥ ८ ॥
अब मुनि नारद बोले राजन । ब्रह्म ज्ञान मुझसे कर धारन ॥ ९ ॥
सात रात बीते उपरन्ता । पावहु दर्शन आप अनन्ता ॥ १० ॥

दोहा- **शिव ब्रह्मादिक जासुपद, पाकर तज अज्ञान ।**
उनकी महिमा प्राप्त की, जिस समान ना आन ॥१०१॥

चौ- तुम भी वहुत शीघ्र ही राजन । पावहु उसी परम पद पावन ॥ १ ॥
पाछे वे नारद मुनि राया । स्वजन बन्धु विच जीव बुलाया ॥ २ ॥
बोले सुनो जीव मम वानी । तोर विछोह स्वजन अकुलानी ॥ ३ ॥
मात पिता सह मित्र तुम्हारू । करत शोच मन में बढ़भारू ॥ ४ ॥
अब इस तनु विच तुम आजाऊ । शेष आयु इन संग बिताऊ ॥ ५ ॥
भोगउ भोग हे जीव अपारू । पालहु पुरजन सह परिवारू ॥ ६ ॥
कहे जीव सुनु बात हमारी । मैं निज करमन के अनुसारी ॥ ७ ॥
पशु पक्षी सुर मनुज अपारा । योनिन बीच जनम मैं धारा ॥ ८ ॥
जन्म अनेकनि ये मम माता । भये स्वजन बन्धु पितु भ्राता ॥ ९ ॥
शत्रू मित्र उदासी सारे । होत परस्पर न्यारे न्यारे ॥ १० ॥

दोहा- क्रय विक्रय कंचन यथा, रहे नाँहि इक ठौर ।
निज करमन ते जीव भी, तथा लगावत दौर ॥१०२॥

चौ- सम्बन्ध जीव का तनु ते रहहीं । तब लगि ममता यह मुनि रखहीं ॥ १ ॥
जन्म व मरण रहित अविनासी । रहे जीव तो स्वयं प्रकासी ॥ २ ॥
यह निज माया ते मुनि सींवा । विश्व रूप में प्रकटत जीवा ॥ ३ ॥
प्रिय अप्रिय निज पर ना कोई । अरे जीव का जग में होई ॥ ४ ॥
कृत हित अहित व अरि मिन्ताई । भिन्न भिन्न मति वृत्तिन जाई ॥ ५ ॥
जिनका साक्षी मात्र बखाना । रहे जीव का अद्‌भुत वाना ॥ ६ ॥
कारज कारण का यह जीवा । साक्षी मात्र सुतंत्र अतीवा ॥ ७ ॥
यही हेत इस तनु के सारे । गुण अवगुण को यह ना धारे ॥ ८ ॥
इन प्रति सदा उदासी छाई । गयो जीव इति वात सुनाई ॥ ९ ॥
जीवात्मा की सुन इति वानी । भई दूर सब स्नेह निसानी ॥ १० ॥

दोहा- वाद कलेवर दग्ध कर, मृतक कर्म सब कीन्हा ।
सुत मृत्यु का शोक सब, दोउ दम्पति तज दीन्हा ॥ १०३॥

चौ- वालघातिनी वे सब नारी । व्रीडित हो निज मन में भारी ॥ १ ॥
वालक हत्या ते उन जाता । कृष्ण वर्ण आनन अरु गाता ॥ २ ॥
यमुना तट पर विप्रन दरसित । कियो वाल हत्या हित उन व्रत ॥ ३ ॥
चित्रकेतू भी सुनु रिषि वाजी । प्राप्त ज्ञान त्यागी सब ग्लानी ॥ ४ ॥
सार्वभौम नृप पद का स्नेहा । अन्ध कूप रूपी तज गेहा ॥ ५ ॥
पाछे यमुना तट नृप आये । किये स्नान तरपन हुलसाये ॥ ६ ॥

धर कर मौन नृपति गुण धामा । रिषिन हेत पुनि कीन्ह प्रणामा ॥ ७ ॥
नारद देख प्रफुल्लित राजा । दीन्ही विद्या यह नृप काजा ॥ ८ ॥
नमो वासुदेव भगवाना । प्रणव सहित अनिरुद्ध महाना ॥ ९ ॥
वन्दो संकर्षण झषकेतू । विश्वमूर्ति हृपिकेश सहेतू ॥ १० ॥

दोहा- **परमानन्द स्वरूप को, आत्मा राम व शान्त ।**
द्वैत दृष्टि जिनमें नहीं, वन्दो उन जग कान्त ॥ १०४ ॥

चौ- जगदुत्पत्ति स्थिति लयकारी । वन्दों पद पंकज भव हारी ॥ १ ॥
मन बुद्धि जँह पहुँचत नाँही । हेरत रिषि निज मानस माँही ॥ २ ॥
मन सह देह इन्द्रियाँ सारी । जिन प्रकास ते काम प्रचारी ॥ ३ ॥
वन्दों प्रणव सहित भगवाना । महाभूति पति कृपा निधाना ॥ ४ ॥
ध्यावहुँ महा पुरुष पद पंकज । परमेष्ठी पर ब्रह्म महाण्उज ॥ ५ ॥
भक्त हेतु यह विद्या देकर । ब्रह्म लोक गवने दोउ रिपिवर ॥ ६ ॥
चित्र केतु अब पीकर पानी । धारी सात दिवस मुनि बानी ॥ ७ ॥
सात रात बीते नरराया । विद्याधर पति पद वह पाया ॥ ८ ॥
कतिपय दिवस गये उपरंता । पायउ दर्शन नृपति अनंता ॥ ९ ॥
कमल नाल सम गौर शरीरा । हरते जिन दर्शन भवपीरा ॥ १० ॥

दोहा- **नील वसन मस्तक मुकुट, श्रुति कुंडल अनवन्ध ।**
कमर करधनी कंचनी, कर कंकन भुज वन्ध ॥१०५॥

चौ- सिद्धेश्वर वेष्टित प्रभु देखे । गत कल्मष नृप जब प्रभु पेखे ॥ १ ॥
मुदित रोम प्रेमाश्रुलोचन । प्रेम सहित कीन्हा उन वन्दन ॥ २ ॥
प्रेम व्याप्त प्रभु स्तोत्र उचारन । भयो समर्थ न नृप निज आनन ॥ ३ ॥
पाछे मन स्थिर कर नरराया । विश्वगुरू की स्तुति इति गाया ॥ ४ ॥
अजित किन्तु भक्तन ते हारे । भक्तन को तुम निज हिय धारे ॥ ५ ॥
जगदुत्पत्ति स्थिति लय ईशा । होवत तुमसे ही जगदीशा ॥ ६ ॥
आदि मध्य अरु अन्त न जाता । सूक्ष्म मूल कारण तुम ताता ॥ ७ ॥
अंडकोष यह भगवन सारा । वेष्टित परदे सप्त प्रकारा ॥ ८ ॥
करत प्रभो तुम बीच भ्रमाई । नाम अनन्त यथा गुण गाई ॥ ९ ॥
जे नर पशु तोरे पद त्यागे । अन्य विभूतिन सेवन लागे ॥ १० ॥

दोहा- **तासु मनोरथ पूर्ण ना, होवत कबहूँ नाँहि ।**
विषयी भी सेवहि तुम्हें, सो भी मोक्ष सिधाहि ॥१०६॥

चौ- मोक्ष काज सनकादिक सारे । अजित आपका नाम उचारे ॥ १ ॥
भगवत धर्म विषय़ मति जेही । धर्म सकाम बीच अति स्नेही ॥ २ ॥
निज पुर हित वह नर ना जावत । धर्म सकाम दिये दुख पावत ॥ ३ ॥
सेवत भगवत धर्म सुसन्ता । पूजत वे तव चरण अनन्ता ॥ ४ ॥
प्रभो आपके दर्शन करके । होत शुद्ध नर सब अध हरके ॥ ५ ॥
एक बार यदि नाम कसाई । लेकर जगत मुक्त हो जाई ॥ ६ ॥
आज आप का दर्शन करके । भयो कृतारथ हिय मल धुल के ॥ ७ ॥
नारद वचन असत्य न जाता । आत्मा आप जगत की ताता ॥ ८ ॥
मानव चरित सकल तुम जानत । किन्तु न नर तुमको पहिचानत ॥ ९ ॥
करूँ निवेदन किस विधि ताता । स्थिति लय जग के तुम परित्राता ॥ १० ॥

दोहा- **लोकपाल ब्रह्मादिगण, तुम से ही बल पात ।**
जीवित हो तव दृष्टि से, इन्द्रिय विषय गहात ॥१०७॥

चौ- दुरदरसितहुँ कुयोगिन कारन । वन्दहुँ परमहंस हे भगवन ॥ १ ॥
सर्षप सम भूमंडल सारा । एक सीस ऊपर जिन धारा ॥ २ ॥
सहस सीस मैं करूँ प्रणामा । जय अनन्त जग पूरण कामा ॥ ३ ॥
एवं स्तुति सुन कहे अनन्ता । विद्याधर पति प्रति भगवन्ता ॥ ४ ॥
नारद मुनी अंगिरा दोऊ । दियो ज्ञान ते प्रति नृप जोऊ ॥ ५ ॥
उस विद्या के द्वारा तोरे । नसे पाप दरसन कर मोरे ॥ ६ ॥
भयो सिद्ध अब तुम नर राई । मैं भूतात्मा सब सुखदाई ॥ ७ ॥
विश्वरूप जो दीखत सारा । मोसे नहिं नृपवर वह न्यारा ॥ ८ ॥
मैं ही सब जग पालन कर्ता । मैं ही सब प्राणिन का भर्ता ॥ ९ ॥
शब्द ब्रह्म पर ब्रह्म व दोउ । मेरे रूप सनातन सोऊ ॥ १० ॥

दोहा- **भोक्ता अरु भोग्यात्मक, दोऊ मुझ में लीन ।**
यथा स्वप्न में विश्व को, देखत निज आधीन ॥१०८॥

चौ- जागृत बीचे देखत एकी । यह लखि सुमिरन नाम विवेकी ॥ १ ॥
जिस स्वरुप से निद्रा माँही । निरगुन सुख जानत नर जाही ॥ २ ॥
जानहु उस आत्मा को मोहीं । परम ब्रह्म कहलावत सोही ॥ ३ ॥
निद्रा अरु जागृति का अनुभव । करता दोनों का ही मानव ॥ ४ ॥
वही ज्ञान पर ब्रह्म कहाई । मम स्वरूप जब जीव भुलाई ॥ ५ ॥
तब वह हो मोसे अलगाई । आवागमन में तदा सिधाई ॥ ६ ॥

जन्म मानवी पाकर जोई । आत्मा की पहचान न होई ॥ ७ ॥
सो नर कबहुँ सुख ना पाता । प्रवृति मार्ग सदा दुखदाता ॥ ८ ॥
निवृतिमार्ग ही मोक्ष प्रदाता । यही मार्ग सब ताप नसाता ॥ ९ ॥
यह सब बाते लख गुणवन्ता । संकल्प न लखत निज मन संता ॥ १० ॥

दोहा- **नर नारी सुख के, लिये करते कर्म अनेक ।**
दुख नासन के वास्ते, तज मे कर्म न एक ॥१०९॥

चौ- पर उन करमन ते सुनु राया । सुख नाही दुख हो न पलाया ॥ १ ॥
जे नर लखत निजहिं मति मन्ता । सो विपरीत पात फल अन्ता ॥ २ ॥
यों विचार कर निजमन राया । प्रभु की सूक्ष्मगति लखु काया ॥ ३ ॥
दृष्ट व श्रुत विषयन तज सारे । जब विज्ञान ज्ञान हिय धारे ॥ ४ ॥
होवहिं वह नर भक्त हमारा । संस्सृति रूप नसहिं संसारा ॥ ५ ॥
योग निपुण नर निज मति द्वारा । समझे यो मन भली प्रकारा ॥ ६ ॥
स्वार्थ जीव का एकहि माना । जानत आत्मा ब्रह्म समाना ॥ ७ ॥
मम उपदेश अरे तुम राजन । श्रद्धा सह करहू यदि धारन ॥ ८ ॥
लखकर आत्मा ब्रह्म निकाई । पावहु शीघ्र सिद्ध पद राई ॥ ९ ॥

दोहा- **जगत गुरु जगदातमा, श्री हरि वे भगवान ।**
नृप को यों समझाय कर, होगय अन्तर ध्यान ॥११०॥

चौ- बोले शुक अब सुन कुरु राई । जो ककुभा हरि गये सिधाई ॥ १ ॥
उसको वे नृप किये प्रणामा । विचरन लगे गगन निशियामा ॥ २ ॥
अव्याहत बल इन्द्रिय तासू । स्तूय मान सिद्धादिक जासू ॥ ३ ॥
सह विद्याधर तिया सहेतू । गावत हरि चर्चा नृप केतू ॥ ४ ॥
गिरी सुमेरु ऊपर राया । विचरत कोटी बरष बिताया ॥ ५ ॥
एक समै हरिदत्त विमाना । बैठे चित्रकेतू गुणवाना ॥ ६ ॥
भ्रमण करत कैलाश सिधाये । देखे शिव मुनि सभा सुहाये ॥ ७ ॥
गिरिजा भी देखी शिव अंका । तब हँस चित्रकेतु निःसंका ॥ ८ ॥
गिरिजा सन्मुख वचन सुनाये । विश्वगुरु यह शिव कहलाये ॥ ९ ॥
सब धर्मन के ये परिज्ञाता । सारा जग जिनके गुण गाता ॥ १० ॥

दोहा- **इन शिव को कुछ भी नहीं, आवत देखो लाज ।**
जो गिरिजा को गोद ले, बैठे मुनी समाज ॥१११॥

चो– प्राकृत जन भी निज तिय संगा । करत सदा एकान्त प्रसंगा ॥ १ ॥
किन्तु आज यह बात विशेषी । शिव गोदी गिरिजा सब देखी ॥ २ ॥
चित्र केतु की सुनकर वानी । सभी सभासद चुप्पी ठानी ॥ ३ ॥
बहुत अशोभन सुन इनि वानी । बोली तब कर क्रोध भवानी ॥ ४ ॥
अरे लोक विच दंड विधायक । देखा हम पर तू ही शासक ॥ ५ ॥
ब्रह्मा नारद आदिक सारे । कपिलकुमार व मनू हमारे ॥ ६ ॥
क्या यह धरम रीति ना जाने । शास्त्र विधि को ना पहिचाने ॥ ७ ॥
किये निषेध नहीं इन शंकर । जिनपद वन्दन करते सब सुर ॥ ८ ॥
जगदगुरु जो मंगल कारी । बैठे महापुरुष तप धारी ॥ ९ ॥
क्षत्रबन्धु यह किये महाना । शिव ब्रह्मादिक का अपमाना ॥ १० ॥

दोहा- **चेष्टा शासन की करी, शिव ऊपर मति मन्द ।**
दंड पात्र जानहु इसे, करहि न फिर छल छन्द ॥११२॥

चौ- तुम पद पंकज हरि भगवाना । रहने योग्य नहीं हम माना ॥ १ ॥
देह आसुरी दुर्मति जाहू । कृत अपराध सन्त फल पाहू ॥ २ ॥
आगे महा पुरुष का कबहूँ । भूल अनादर मत तुम करहू ॥ ३ ॥
एवं सुन कर शाप भवानी । त्याग विमान तदा नृप ज्ञानी ॥ ४ ॥
कर प्रणाम देवी प्रतिवानी । करूँ शाप स्वीकार भवानी ॥ ५ ॥
सुर मानव प्रति भाषत जोई । नूतन वात नहीं वह कोई ॥ ६ ॥
मिलने वाले फल की माता । पूर्व सूचना केवल जाता ॥ ७ ॥
जड़ता मोहित नर संसारा । भोगत सुख दुख भटकत सारा ॥ ८ ॥
प्राणिन सुख दुख कर्ता माता । निज आत्मा ही पर ना जाता ॥ ९ ॥
निज पर कोही नर अज्ञानी । सुख दुख का कारण निजमानी ॥ १० ॥

दोहा- **स्वर्ग नरक सुख और दुख, शाप अनुग्रह मात ।**
कुछ नहि केवल कल्पना, इस जग वीच दिखात ॥११३॥

चौ- हरि निज माया ते इन जीवहि । बन्ध व मोक्ष व सुख दुख सृजहिं ॥ १ ॥
प्रिय अप्रिय उनका ना कोई । प्रीति व रोष जिन्हे नहिं होई ॥ २ ॥
श्री हरि सब में सम अरु माया । मल आदिक से रहित दिखाया ॥ ३ ॥
नाती गोती निज व पराया । उन प्रभु को कोई ना गाया ॥ ४ ॥
माया जनित सुखादिक सारे । पावत देही तदपि अपारे ॥ ५ ॥

शाप निवारण हेतू मोरी। नहीं विनय करता मैं तोरी ॥ ६ ॥
किन्तु वचन मैं कहा सुनाई। करहु क्षमा उसको तुम माई ॥ ७ ॥
इस प्रकार कह कर वह वानी। किये मुदित शिव सहित भवानी ॥ ८ ॥
पाछे हो निज यान सवारा। विद्याधर पति परम उदारा ॥ ९ ॥
सबके देखत हे नरराया। गगन मार्ग निज धाम सिधाया ॥ १० ॥

दोहा- **चित्र केतु के सुन वचन, विस्मित भयो समाज।**
गिरिजा पति कहने लगे, तव गिरिजा के काज ॥११४॥

चौ- हरि भक्तन की हे मति शीला। देवी आज लखी तुम लीला ॥ १ ॥
नारायण में हो लवलीना। होवत वे ना कष्ट अधीना ॥ २ ॥
स्वर्ग व नरक बीच कहिं जाही। सो नर समदरसी कहलाही ॥ ३ ॥
सुख दुःखादिक योग वियोगा। होवत जीवहिं तनु संयोगा ॥ ४ ॥
जडता वश मानव जब जाता। आत्मा बीचे भेद लखाता ॥ ५ ॥
ईश्वर भक्त जगत में जेते। सारे अर्थ उसी को शेते ॥ ६ ॥
ब्रह्मा नारद सनत कुमारा। मैं सुरपति मनु मुनी अंपारा ॥ ७ ॥
जिन प्रभाव कोउ ना जाने। हरि सब प्राणिन के प्रिय माने ॥ ८ ॥
चित्र केतु जिन भक्त भवानी। मैं भी उनका भक्त दिवानी ॥ ९ ॥
यहि हेतु मैं क्रोध न कीन्हा। वृथा शाप उन प्रति तुम दीन्हा ॥ १० ॥

दोहा- **समरदसी अरु शान्त जे, महापुरुष के भक्त।**
उनपर विस्मय मत करो, वे तो जगत विरक्त ॥११५॥

चौ- यों शिव वच सुन उमा भवानी। भई शान्त गत विस्मय ग्लानी ॥ १ ॥
होत समर्थ दियो नहि शापा। चित्रकेतु मन भयउ न तापा ॥ २ ॥
सती शाप निज सीस चडाया। साधुन के ये लक्षण राया ॥ ३ ॥
योनि आसुरी आश्रित होही। ब्रह्म ज्ञान भूषित हो सोही ॥ ४ ॥
दक्षिणाग्नि त्वष्टा की जाकर। प्रकटा बाद वहाँ वृत्रासुर ॥ ५ ॥
वृत्र जन्म का कारण राया। मो से जो पूछा सब गाया ॥ ६ ॥
चित्रकेतु नृप का इतिहासू। विष्णु भक्त की लीला जासू ॥ ७ ॥
सुनते ही बन्धन कट जावे। प्रातःकाल जो सुने सुनावे ॥ ८ ॥
पाछे हरिका सुमिरन करही। सो नर सद्य परम गति लहहीं ॥ ९ ॥
चित्र केतु की कथा निराली। काटहि ये भव की सब जाली ॥ १० ॥

दोहा- सविता प्रश्निनने नृप, जाइ कन्या तीन ।
सावित्री व्याहृति त्रयी, अरु सुत पाँच प्रवीन ॥११६॥

चौ- अग्निहोत्र पशुयाग व सोमा । चातुर्मास्य महामख होमा ॥ १ ॥
भग की सिद्धि नामक नारी । सुवन तीन कन्या सहचारी ॥ २ ॥
विभु महिमान व प्रभु इति तीना । आशी नामक सुता प्रवीना ॥ ३ ॥
धाता के नारी नृप चारी । अनुमति शाका कुहु सिनिवारी ॥ ४ ॥
पूर्णमास सुत अनुमति जाया । प्रात काल राका सुत गाया ॥ ५ ॥
शायं नाम सुवन कुहू जाया । दर्श सुवन सिनिवाली गाया ॥ ६ ॥
वरुण चर्षणी ते सुत जाता । भृगु अरु वाल्मीकि विख्याता ॥ ७ ॥
देख उर्वशी रूप विमोहित । मित्रवरुण का रेतस खंडित ॥ ८ ॥
वीर्य कुंभ विच धरे वरिष्ठा । प्रकटे तासु अगस्त्य वसिष्ठा ॥ ९ ॥
मित्र तिया रेवति यश उज्जवल । सुत उत्सर्ग अरिष्ट व पिपप्ल ॥ १० ॥

दोहा- पौलोपी अरु इन्द्र ने, जाये पुत्र जयन्त ।
ऋषभ सहित मीढु नृप, पुत्र वदत इति सन्त ॥११७॥

चौ- वामन तिया सुकीरति नामा । वृहश्लोक सुत पूरण कामा ॥ १ ॥
जासु गेह सुत भये सुभागे । वामन चरित कहूँ मैं आगे ॥ २ ॥
दितिकर वंश कहूँ अब ताता । वलि प्रहलाद जासु कुल जाता ॥ ३ ॥
कश्यप से दिति दो सुत जाये । कनककशिपु हिरण्याक्ष कहाये ॥ ४ ॥
कयाधू कनक कशिपु की नारी । जाये जंभ सुता सुत चारी ॥ ५ ॥
संह्लाद और अनुह्लाद ह्लादा । लघु सुत जासु नाम प्रह्लादा ॥ ६ ॥
कन्या एक सिंहिका जाई । विप्रचित्ति संग सो परणाई ॥ ७ ॥
राहू सुत उसका सब गाया । जासु सीस हरि काट गिराया ॥ ८ ॥
कृति संह्लाद एक सुत जाया । अरे पंच जन वह कहलाया ॥ ९ ॥
इल्वल वातापी दोउ भ्राता । हृद धमनी ते ये सुत जाता ॥ १० ॥

दोहा- वाष्कल महिषासुर दोउ, सूर्मी ते अनुह्लाद ।
पाये पुत्र विरोचन, देवी अरु प्रहलाद ॥११८॥

चौ- वलि नृप असना नामक नारी । वाण सहित शत सुत वलधारी ॥ १ ॥
वाणासुर शंभु की कर सेवकाई । शिवगण बीच मुख्यता पाई ॥ २ ॥
कश्यप दिति से सुन कुरु राया । पुत्र मरुत उनचास वताया ॥ ३ ॥
शचिपति समता उन सव धारी । शुक से अव नृप गिरा उचारी ॥ ४ ॥

असुर भावना उन क्यों त्यागी । भये देव पद क्यों अनुरागी ॥ ५ ॥
सूत कहे सुन शौनक राया । शुक प्रति नृप इति वचन सुनाया ॥ ६ ॥
नृप वच सुन शुक देव मुनीशा । बोले एक समय सुनु ईशा ॥ ७ ॥
हत सुत लख दिति किये विचारा । मम सुत शचि पति नासे सारा ॥ ८ ॥
अब सुरपति को नासहुँ कैसे । करूँ उपाय मरहिं वह जैसे ॥ ९ ॥
जब तक सुरपित नहीं नसाही । तब लगि निद्रा मोहिं न आही ॥ १० ॥

दोहा- **करे वैर प्राणिन प्रति, जो निज तनु के काज ।**
उस नर को नरकन विषै, ले जावत यमराज ॥११९॥

चौ- जिन द्वारा मम सुवन नसाये । उस नाशक सुत मम घर आये ॥ १ ॥
कर विचार यो निज मन माँही । दिति अब कश्यप पास सिधाही ॥ २ ॥
परम भक्ति सेवा के द्वारा । मिष्ट वचन सह नम्र अपारा ॥ ३ ॥
हास्य कटाक्ष सहित अवलोकन । कीन्हा कश्यप का वश वह मन ॥ ४ ॥
जड़ीभूत हो नारी द्वारा । ज्ञानी जन मन सभी प्रकारा ॥ ५ ॥
बाढ नीरवत वश ना होई । यह विचित्र बात ना कोई ॥ ६ ॥
निज तनु अर्ध प्रजापति नारी । रचना कीन्ही भली प्रकारी ॥ ७ ॥
मानव मति यहि हेतू हरहीं । नारी सन्मुख वश ना चलही ॥ ८ ॥
दिति सेवित कश्यप अब आगे । हँस कर उस प्रति कहने लागे ॥ ९ ॥
वामोरु वर माँगहु मोसे । मुदित अतीव अनन्दित तोसे ॥ १० ॥

दोहा- **जिस नारी से मुदित पति, तासु मनोरथ पूर्ण ।**
यदि पति हो नाराज तो, होत कामना चूर्ण ॥१२०॥

चौं- ज्यों प्राणिन के सुर भगवाना । त्यों नारी का पति ही माना ॥ १ ॥
पति रूपी हरि नारिन द्वारा । पूजित होवत विविध प्रकारा ॥ २ ॥
यही हेतु पति वरता नारी । पति को ईश्वर रूप पुकारी ॥ ३ ॥
एक भाव ते वह पति पूजा । करती त्याग काम सब दूजा ॥ ४ ॥
तुमने पूजन करी हमारी । करूँ कामना पूर तुम्हारी ॥ ५ ॥
निजपति के वच सुनकर काना । बोली दिति हे प्राण विधाना ॥ ६ ॥
मारे सुरपति पुत्र हमारे । आई अब मैं शरण तुम्हारे ॥ ७ ॥
सुत होवहिं ऐसो पति मोरे । जीवित सुरपति को ना छोरे ॥ ८ ॥
कश्यप अब सुनकर दिति वैना । किये दुखी होकर अधनैना ॥ ९ ॥
आयो मम सनमुख यह आजू । महा अधर्मपने का काजू ॥ १० ॥

दोहा- **योषित माया ने अहो, मम चित लिया चुराय ।**
नरक बीच जाकर गिरूँ, कोइ न करे सहाय ॥१२१॥

चौ- स्वारथविच बनकर में अंधा । धिक मोहीं जो करउँ य धंधा ॥ १ ॥
आनन जासू कमल प्रकारा । श्रवणामृत वच हिय क्षुरधारा ॥ २ ॥
इनकी चेष्टा कोई न जाने । सुर नर ऋषि मुनि ना पहिचाने ॥ ३ ॥
नारिन को कोई प्रिय नाहीं । स्वास्थ बीच सभी कर जाहीं ॥ ४ ॥
घातक बनती स्वारथ आवे । पति पुत्रादिक को न तजावे ॥ ५ ॥
मैं तो वचन दियो इस काजू । सो न मृषा होवहिं वह आजू ॥ ६ ॥
मरहिं न साँप न टूटहि लाठी । कहूँ उपाय कठिन ते काठी ॥ ७ ॥
मरहिं न इन्द्र वचन मम पूरा । हो न पूर्ण जो रहे अधूरा ॥ ८ ॥
कर विचार यों कश्यप राई । दिति प्रति बोले वचन सुनाई ॥ ९ ॥
भद्रे सम्बत्सर पर्यन्ता । धारहु व्रत पावहु सुत अन्ता ॥ १० ॥

दोहा- **मन इच्छित सुत भामिनी, इस व्रत से तुम पाउ ।**
हो यदि व्रत विपरीत तो, सुत सुर वन्धु दिखाउ ॥१२२॥

चौ- बोली दिति व्रत विधि बतलाहू । तनिक नाथ अब देर न लाहू ॥ १ ॥
बोले कश्यप भामिनी गाऊँ । व्रत विधि तव प्रति सब बतलाऊँ ॥ २ ॥
व्रत बीचे मिथ्या मत वदहू । भूल न प्राणिन हिंसा करहू ॥ ३ ॥
काहू पर भी क्रोध न रामा । देहू न शाप किसी को वामा ॥ ४ ॥
नख अरु रोम न व्रत विच काटहु । स्पर्शित वस्तु निषिद्ध न करहु ॥ ५ ॥
दुष्ट संग संभाषण नाँही । जल प्रवेश निज स्नान तजाही ॥ ६ ॥
वस्त्र अधौत तजो व्रत काला । धारहु नहीं प्रथम धृत माला ॥ ७ ॥
उच्चिष्ट अन्न आमिष परित्यागी । अन्न चंडिका ना अनुरागी ॥ ८ ॥
अन्न विदूषित सभी प्रकारा । वृषला रजवन्ती के द्वारा ॥ ९ ॥
वासी अन्न व्रती ना खाही । पीवहिं नीर अंजली नाँही ॥ १० ॥

दोहा- **झूँठे मुख विन आचमन, संध्या खुले न केश ।**
देवी विन श्रृंगार के, तजहु न गेह प्रदेश ॥१२३॥

चौ- विन उपवस्त्र न बाहिर जाऊ । वाणी ऊपर संयम लाहू ॥ १ ॥
आर्द्रपाद अरु पाद अधोही । पश्चिम उत्तर शिर ना सोही ॥ २ ॥
अपर संग नगन ना रहही । संध्या समय शयन ना करहीं ॥ ३ ॥
धौत वसन शुचि मंगलकारी । प्रात समै गौ विप्र मुरारी ॥ ४ ॥

लक्ष्मी सहित करे इन पूजन। करे भामिनी पाछे भोजन ॥ ५ ॥
सधवा अरु पति पूजन करही। पति सेवा में तत्पर रहही ॥ ६ ॥
करे भावना ऐसी नारी। मम कुक्षी पति तेज अपारी ॥ ७ ॥
संवत एक पुसंवन नामा। इस विधि यह व्रत धारहु वामा ॥ ८ ॥
व्रत विच त्रुटि यदि एक न लाहू। इन्द्र विनाशक सुत तुम पाहू ॥ ९ ॥
कश्यप वचन किये स्वीकारा। अब व्रत सहित गर्भ दिति धारा ॥ १० ॥

दोहा- **मातृष्वसा अभिप्राय लख, सुरपति भये उदास।**
भेष बदल कर आगये, अब वे दिति के पास ॥१२४॥

चौ- सेवा करने सुरपति लागे। लाकर देते दिति जो माँगे ॥ १ ॥
पत्र पुष्प फल विपिन सिधाई। लाकर देते दिति प्रति आई ॥ २ ॥
व्रत विच दोष लखत सुरराई। सेवत दिति को कर कपटाई ॥ ३ ॥
जब व्रत बीच न दोष लखाया। तब तो सुरपति अति घबराया ॥ ४ ॥
अब मम हो शिव केन प्रकारी। सुरपति मन चिन्ता इति भारी ॥ ५ ॥
एक समय दिति चरण अधोही। झूठे मुख वह विधिकर मोही ॥ ६ ॥
संध्या काल जबै नृप आवा। किये शयन व्रत दोष दिखावा ॥ ७ ॥
देख छिद्र व्रत बीच तदन्तर। गये शीघ्र दिति जठर पुरन्दर ॥ ८ ॥
किये गर्भ के सात तदन्तर। वज्र उठा कर खंड पुरन्दर ॥ ९ ॥
वे सातों सुरपति के आगे। सब मिल करके रोवन लागे ॥ १० ॥

दोहा- **तब सुर शचि पति कहने लगे, करो रुदन मत बाल।**
एक एक के फिर किये, सात खंड तत्काल ॥१२५॥

चौ- तब वे सब मिल वचन उचारे। अरे इन्द्र हम भ्रात तुम्हारे ॥ १ ॥
तासु वचन सुन सुरपति कहऊ। तुम भ्राता ममतो मत डरऊ ॥ २ ॥
हरि अनुकम्पा ते सुनु राया। कुलिश क्षुण्ण ना गर्भ नसाया ॥ ३ ॥
ब्रह्म अस्त्र ते ज्यो तुम राई। आँच गर्भ दिति पर ना आई ॥ ४ ॥
ऊन दिवस कुछ सम्बत ताता। पूजे हरिपद वह निज गाता ॥ ५ ॥
इन्द्र सहित वे मरुत पचासू। भये देव सम कनक प्रकासू ॥ ६ ॥
सुर पति माता दोष तजाये। वे सब सोमय देव बनाये ॥ ७ ॥
अनल प्रभा सम रूप अपारा। इन्द्र संग उनचास कुमारा ॥ ८ ॥
खुले नयन दिति सन्मुख देखे। भई मुदित कहे वचन विशेषे ॥ ९ ॥
हे सुत मैं तो सुर भय दाई। पुत्र हेतु व्रत विधी रचाई ॥ १० ॥

दोहा- अरे किन्तु मोरे भये, कैसे सुत उञ्चास ।
मैने तो एक ही पुत्र की, लगा रही थी आस ॥१२६॥

चौ- खास मर्म की जानहु बाता । तो सब कहु मोसे तुम ताता ॥ १ ॥
शचि पति बोले अब अविलम्बा । तोर विचार देख मैं अम्बा ॥ २ ॥
देख दोष व्रत बीचे मांई । उदर तोर मैं गयो सिधाई ॥ ३ ॥
तोर गर्भ के सुन हे माता । कीन्हे खंड सात पुनि साता ॥ ४ ॥
यद्यपि मैने इन को मारा । किन्तु मरे नही किसी प्रकारा ॥ ५ ॥
अचरज भयउ तदा मो भारी । देखी पूजन सिद्धि मुरारी ॥ ६ ॥
हरि पूजहिं जे नर निष्कामा । होत सकल पूरण उन कामा ॥ ७ ॥
ऐसो कवन जगत में देही । प्रभु पद त्याग विषय मन देही ॥ ८ ॥
सब अपराध क्षमा कर मोरे । करूँ विनय तोरी कर जोरे ॥ ९ ॥
शुद्ध भाव लखकर दिति पाछे । कहे वचन सुरपति से आछे ॥ १० ॥
शुद्ध भाव लख मधवन तोरा । भयो मुदित मन मानस मोरा ॥ ११ ॥

दोहा- वन्दन कर दिति को तदा, ले मरुतन को साथ ।
सुर पुर को सुरपति गये, बोले अब मुनिनाथ ॥१२७॥क
मरुत जनम मंगल करण, वरणन कियो नवीन ।
कहुँ कौन सी गाथ अब, तव प्रति नृपति प्रवीन ॥१२७॥ख

चौ- बोले अब नृप मुनि प्रति वानी । कहो पुसंवन व्रत विधि ज्ञानी ॥ १ ॥
जिसके करत मुदित प्रभु हो ही । वरणन करूँ नृपति व्रत सोही ॥ २ ॥
मार्ग शुक्ल प्रति पद जब आवे । नारी निज पति आज्ञा पावे ॥ ३ ॥
सर्वकाम प्रद व्रत तब राई । करे नार प्रारंभ मुदाई ॥ ४ ॥
पूरब मरुत जनम की गाथा । सुने दत्त चित हे नरनाथा ॥ ५ ॥
पाछे द्विज मुख आज्ञा लेकर । करे स्नान धारे शुचि अम्बर ॥ ६ ॥
प्रात रमा संग कर हरिपूजन । करे चरण कमल उन वन्दन ॥ ७ ॥
पूर्ण काम निरपेक्ष दयालू । महाभूतिपति परम कृपालू ॥ ८ ॥
सकल सिद्धिप्रद वन्दहुँ तोही । गुण सम्पूर्ण युक्त प्रभु सोही ॥ ९ ॥
हे हरिपत्नी हे महमाया । वन्दहुँ लोकमात सुखदाया ॥ १० ॥

दोहा- अष्ट सिद्धि नव निधिपति, महापुरुष भगवान ।
प्रणव रुप परमात्मा, पुरुषोत्तम गुण गान ॥१२८॥

चौ- कर पूजहिं षोडश उपचारी । द्वादश आहुति मंत्र उचारी ॥ १ ॥

भक्ति सहित नित हरि का पूजन । करे प्रणाम दंडवत चरनन ॥ २ ॥
हरी मंत्र जप कर दस बारा । करे प्रार्थना बारम्बारा ॥ ३ ॥
सूक्ष्म शक्ति माया के भर्ता । दोऊ सर्व जगत के भर्ता ॥ ४ ॥
ईश्वर यही हेतु तुम गावा । तुम सब आत्मा रूप कहावा ॥ ५ ॥
नाम व रूप प्रकाशन सारा । वरदायक त्रिलोक अधारा ॥ ६ ॥
यही हेतु मन्सा प्रभु मेरी । करहू पूर करहु मति देरी ॥ ७ ॥
श्री निवास लक्ष्मी सह राई । वन्दन कर नैवेद्य लगाई ॥ ८ ॥
बाद आचमन फिर हरि पूजन । भक्ति सहित कर स्तोत्र उचारन ॥ ६ ॥
सूँघहिं यज्ञोच्छिष्ट नृपालू । पाछे पूजहि फेर दयालू ॥ १० ॥

दोहा- **पति सेवा में रत रहे, करे कदापि न भूल ।**
पति भी पत्नि के रहे, प्रेम सहित अनुकूल ॥१२६॥

चौ- हो न समर्थ नार व्रत कारन । भर्त्ता कर सकता व्रत धारन ॥ १ ॥
करहिं कृत्य दोउ बीचे कोई । तासु सकल फल दोउ प्रति होई ॥ २ ॥
बीचे हरिव्रत कबहुँ न त्यागे । पूजे विप्र सुहागिन आगे ॥ ३ ॥
लाकर गंधादिक उपहारा । नित प्रति अर्चन विधि अनुसारा ॥ ४ ॥
एवं सब व्रत विधिकर पूरन । करे अन्न हरि अरपित भोजन ॥ ५ ॥
एवं द्वादश मास बितावे । कार्तिक बाद अमावस आवे ॥ ६ ॥
तब लगि व्रत को व्रती चलावे । बाद दूसरा दिन जब आवे ॥ ७ ॥
प्रातकाल करके असनाना । पूजहिं हरि को पूर्व समाना ॥ ८ ॥
घृत मिश्रित चरु पायस द्वारा । द्वादश आहुति नियम प्रकारा ॥ ६ ॥
पाछे हवन अग्नि में कीजे । आशिरवाद द्विजन को लीजे ॥ १० ॥

दोहा- **द्विज वन्दन करके प्रथम, उन आज्ञा शिर धार ।**
निज बन्धुन को संग ले, भोजन विविध प्रकार ॥ १३०॥

छन्द - **विविध मृदु युत शेष चरु का, नार जो भोजन करे ।**
सौभाग्य शुभ सन्तान दाता, पाप सारे यह हरे ।
इस रीति से हे नृपति वर, शुभ पुंसवन व्रत जो धरे ।
कामना सब पूर्ण हो, धन धान्य सम्पत घर भरे ॥ १ ॥

दोहा- **कन्या जो यह व्रत करे, शुभ लक्षण सम्पन्न ।**
पावहिं वर उत्तम वह, रहे पूर्ण धन अन्न ॥१३१॥

चौ- सदगति पावहिं विधवानारी । मृत संतति तिय होत सुखारी ॥ १ ॥
पावहि चिर जीवी सुत राया । होत दुर्भगा सुभगा जाया ॥ २ ॥
पावहिं रूप कुरुपा नारी । यह ब्रत रोग विनाशक भारी ॥ ३ ॥
होवहि तन नर का बलवन्ता । बाढहिं इन्द्रिय शक्ति अनन्ता ॥ ४ ॥
देव कर्म श्राद्धादिक माँहि । पढहिं प्रेम ते जो नर याही ॥ ५ ॥
देव पितर उस नर के सारे । होत मुदित नृप अतिव सुखारे ॥ ६ ॥
हो सन्तुष्ट हवन अवसाना । करहिं कामना पूरणनाना ॥ ७ ॥
होवहिं अगनि देव हरि राजी । पूरहि मन इच्छा ब्रत साजी ॥ ८ ॥
मरुत जन्म की सुन्दर गाथा । दिति प्रति वरणित जो मुनि नाथा ॥ ९ ॥
अरे परीक्षित मैं यह गाई । आगे कवन कथा कहुँ राई ॥ १० ॥

दोहा- **स्वप्ने में पावे नही, कबहूँ नर यमदूत ।**
गाथा षष्टम स्कंध से, भक्ति हो मजबूत ॥१३२॥क
बजरंगी पर निज कृपा, कीन्ही कृष्ण अपार ।
गाथा षष्टम स्कंध की, वरणी मति अनुसार ॥१३२॥ख

इति श्री कृष्णचरितामृते कलिमल विध्वंसने बजरंग कृत श्री मद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां समाप्तोऽयं षष्टम स्कंधः

हरिॐ तत्सत् ।

॥ श्री गणेशाय नमः ॥
श्री राधा वल्लभो विजयते
श्री मद्भागवत प्रारम्भः
सप्तम स्कंधः
श्लोक

लक्ष्मीं नरहरिं वन्दे, वन्देऽहं गुण मन्दिरम् ।
वन्दे भक्ति प्रदातारं, दातारं मोक्ष सुन्दरम् ॥ १ ॥

दोहा- **अघहारी नरहरि पद, पंकज सीस नवाय ।**
गाथा सप्तम स्कंध की, वरणो चित्त लगाय ॥ १ ॥

चौ- बोले राजा कहो मुनीशा । सर्वभूत सम प्रिय जगदीशा ॥ १ ॥
सुरपति के प्रति वध केहि कारण । करते असुरन का नारायण ॥ २ ॥
ईश्वर तो निरगुण मुनि जाता । देव दैत्य दोउ सम प्रिय ताता ॥ ३ ॥
देवन ते ना कोई प्रयोजन । दैत्य संग ना उन विद्वेषण ॥ ४ ॥
नारायण गुण प्रति मम ताता । यह संदेह मोर मन जाता ॥ ५ ॥
करो दूर संशय यह मोरा । यह सुनि बोले मुनी किशोरा ॥ ६ ॥
पूछी महाराज वर वाता । प्रभू चरित अद्भुत अघत्राता ॥ ७ ॥
भगवत भक्ति बढावन हारी । वैष्णव जन लीला शुभकारी ॥ ८ ॥
कही नारदादिक ऋषि द्वारा । नासत दुरित अनेक प्रकारा ॥ ९ ॥
वन्दों प्रथम कृष्ण मुनि व्यासू । करूँ वाद हरि चरित प्रकासू ॥ १० ॥

दोहा- **निरगुण होवत तदपि हरि, निज माया गुण आय ।**
वाध्य व बाधकता लहे, पाछे हे कुरु राय ॥ २ ॥

चौ- सत रज तम गुण तीन प्रकारी । प्रकृति सदा हरि की यह धारी ॥ १ ॥
हास वृद्धि गुण बीच कदाही । एक काल में होवत नाँही ॥ २ ॥
बाढहिं सतगुण का जब काला । देवादिक वृद्धि नरपाला ॥ ३ ॥
हो उत्कर्ष रजोगुण राया । बाढहिं राक्षस असुर निकाया ॥ ४ ॥
हो उत्कर्ष तमोगुण जबहू । बाढहिं यक्ष व राक्षस तबहू ॥ ५ ॥
वे भगवान समय अनुसारी । करत प्रकृति के गुण स्वीकारी ॥ ६ ॥
यथा काष्ठ विच ज्योति जैसे । नाना रूप बीच प्रभु जैसे ॥ ७ ॥
जब हरि निज तनु करत रचाई । बढ़त रजोगुण तब अधिकाई ॥ ८ ॥
क्रीडा काल सतोगुण बाढे । आवत प्रलय तमोगुण गाढे ॥ ९ ॥
वे जगदुत्पत्ति हित राई । प्रकृति पुरुष सह काल रचाई ॥ १० ॥

दोहा- यही हेतु हरि काल के, रहते नहीं अधीन ।
सदा काल उनके रहे, वश में कुरू प्रवीन ॥ ३ ॥

चौ- प्रेरित काल सतोगुण बढहीं । हो वृद्धि सुरगण बल तबही ॥ १ ॥
एवं रज तम दैत्य अपारा । करते हरि उनका संहारा ॥ २ ॥
इस प्रसंग बिच हे नरराया । धर्मराज प्रति नारद गाया ॥ ३ ॥
वह इतिहास जो बहुत पुराना । सुनौ परीक्षित देकर ध्याना ॥ ४ ॥
कियो यज्ञ जब धर्मनरेशू । तेज चेदिपति कृष्ण प्रवेशू ॥ ५ ॥
देख तदा नारद से राया । पूछा प्रश्न चकित हो काया ॥ ६ ॥
दन्तवक्र अरु नृप शिशुपाला । करत वैर अब तक निशि काला ॥ ७ ॥
राखत कृष्ण बीच कपटाई । करत वैर निशिदिन कुटिलाई ॥ ८ ॥
दुर्लभ भक्तन हेतु मुनीशा । सो गति पाई क्यो चेदीशा ॥ ९ ॥
हरि मुनि द्विज निन्दक जो बेना । पायो घोर नरक नही चेना ॥ १० ॥

दोहा- नृपति वेन तो नरक में, ये दोउ नरकन नाँहि ।
इसका कारण हे मुनी, कहो मोहि समुझाहि ॥ ४ ॥

चौ- धर्मराज की सुनकर बानी । बोले नारद मुनि विज्ञानी ॥ १ ॥
नृपवर निन्दा स्तुति सत्कारा । होवत इस तनु के ही सारा ॥ २ ॥
रचा कलेवर पुरुष प्रधाना । कियो अरे नृप बिना निदाना ॥ ३ ॥
कर प्राणिन तनु का अभिमाना । भाव ममाह विषमता नाना ॥ ४ ॥
तनु वध ही प्राणिन वध माना । हरि बीचे नाँही अभिमाना ॥ ५ ॥
यहि हित स्नेह वैर भय कामा । हरि को भजहु सदा निष्कामा ॥ ६ ॥
वैर बाँध कर मानव जैसे । तन्मयता नहि पावत वैसे ॥ ७ ॥
भक्ति योग ते हे नरराई । यह निश्चित मति में मनभाई ॥ ८ ॥
यथा कीट भ्रमर के द्वारा । होत रुद्ध जब किसी प्रकारा ॥ ९ ॥
तासू स्मरण कर तत्सम रूपा । धारण करहिं भ्रमर नरभूपा ॥ १० ॥

दोहा- मानव त्यों हरि मन धरि, हरि समता पाजाय ।
काम द्वेष भय स्नेह वश, हरि पद चित्त लगाय ॥ ५ ॥

चौ- तज अघ बहुत लोग गति पाये । गोपी काम कंश भय खाये ॥ १ ॥
शिशुपालादिक द्वेष अपारा । यादव निज सम्बन्ध प्रकारा ॥ २ ॥
भक्ति स्नेह वश हम तुम राया । किन्तु वेन इन बिच नहि आया ॥ ३ ॥
यही हेतु कर कवन उपाऊ । कृष्ण पाद पंकज चित लाऊ ॥ ४ ॥

दंत वक्र अरु नृप शिशुपाला । हरि अनुव्रत वैकुंठ विशाला ॥ ५ ॥
विप्र शाप पतित दोउ जाता । बोले धर्म हे नारद ताता ॥ ६ ॥
हरि अनुव्रत हेतू यह शापा । कवन काज किन मुख ते व्यापा ॥ ७ ॥
यह सब मोहि कहो समुझाई । बोले अब नारद मुनि राई ॥ ८ ॥
एक समय शनकादिक सारे । निज इच्छा वैकुंठ पधारे ॥ ९ ॥
ये चारों विधि के सुत गाये । पुरखन के पुरखे कहलाये ॥ १० ॥

दोहा- **वरष पंच अरु षट् वय, उन नग्नन शिशुमान ।**
द्वारपाल हरिद्वार के, रोके मुनी सुजान ॥ ६ ॥

चौ- तब मुनि क्रोधित भये अपारा । बोले उन प्रति वचन करारा ॥ १ ॥
द्वारपाल वैकुंठ दुवारू । उचित वास नहीं यहाँ तुम्हारु ॥ २ ॥
योनि आसुरी में तुम जाहू । दियो शाप इमि वे मुनि नाहू ॥ ३ ॥
गिरे द्वार ते पाकर शापा । तब कृपालु मुनि मन दुख व्यापा ॥ ४ ॥
बोले वचन तदा मुनि नाहू । जन्म तीन पाछे यँह आहू ॥ ५ ॥
वे दोउ प्रथम जठर दिति आये । कनक कशिपु हिरण्याक्ष कहाये ॥ ६ ॥
रूप नृसिंह ज्येष्ठ सुत मारा । सूकर तनु हिरण्याक्ष सँहारा ॥ ७ ॥
कनककशिपु घर हरि प्रिय जाता । सुत प्रहलाद नाम विख्याता ॥ ८ ॥
सुत वध हेतू कई उपाऊ । कनककशिपु की हे दुख दाऊ ॥ ९ ॥
मार सकेउ नहि कवन प्रकारा । सब प्रकार से वह नृप हारा ॥ १० ॥

दोहा- **पाछे दूजे जन्म में, मुनि विश्रवानार ।**
नाम केशिनी से भये, राक्षस दुख दातार ॥ ७ ॥

चौ- ज्येष्ठ पुत्र रावण दुख दाई । कुंभकर्ण जासू लघु भाई ॥ १ ॥
ये दोउ राम बाण के द्वारा । मारे सहित कुटुम्ब अपारा ॥ २ ॥
आगे सुत मृकंड तोहि राया । गावहिं राम चरित सुख दाया ॥ ३ ॥
क्षत्री कुल तव मौसी द्वारा । भयो जनम उन अबकी बारा ॥ ४ ॥
दंतवक्र लघु बड़ शिशुपाला । नासे कृष्ण चक्र इश काला ॥ ५ ॥
भयो मुक्त अब उन मुनि शापा । गये धाम निज अब तज तापा ॥ ६ ॥
बोले नृप हे नारद ऋषिवर । हरि प्रिय सुत प्रति अरिपन क्यों कर ॥ ७ ॥
कहु प्रहलाद चरित मुनिराई । हरि भक्ति उन केहि विधि पाई ॥ ८ ॥
धर्मराज की सुनकर वाणी । बोले नारद मुनि विज्ञानी ॥ ९ ॥
हिरण्याक्ष वध कीन्ह वराहू । कनककशिपु क्रुद्धित नर नाहू ॥ १० ॥

दोहा- कटकटाय निज दंत अब, शूल उठा तत्काल ।
बोला असुरन से वह, करके लोचन लाल ॥ ८ ॥

चौ- दैत्य व दानव हे शत बाहू । हे हयग्रीव नमुचि इत आहू ॥ १ ॥
इल्वल पाकत्र्यक्ष अरु शम्बर । शकुनि पुलोम द्विमूरध अम्बर ॥ २ ॥
मोरे वचन सुनो तुम काना । करो वही फिर देर न लाना ॥ ३ ॥
मोरे शत्रु क्षुद्र अपारा । हरि द्वारा प्रिय भ्रात संहारा ॥ ४ ॥
यद्यपि सुर अरु असुर समाना । करते उन हरि का सन्माना ॥ ५ ॥
किन्तु विनय अरु अनुनय द्वारा । वश में कीन्हा सभी प्रकारा ॥ ६ ॥
प्रथम विष्णु निष्पक्ष विशुद्धा । पर अब वह भये प्रकृति विरुद्धा ॥ ७ ॥
सूकर आदिक रूप अपारा । धरने लागा माया द्वारा ॥ ८ ॥
अस्थिर बुद्धि व बाल समाना । करता काम अरे मनमाना ॥ ९ ॥
सेवक प्रति होवत अनुकूला । अपर पक्ष प्रति हो प्रतिकूला ॥ १० ॥

दोहा- भिन्न ग्रीव मम शूल ते, तासु रुधिर से भ्रात ।
तरपन करके भ्रात का, पीडा हरूँ नितान्त ॥ ९ ॥

चौ- मरहीं जब भ्राता वधकारी । सूखहि तब सुर होय दुखारी ॥ १ ॥
यथा मूल छेदन के द्वारा । सूखहि तरुवर सभी प्रकारा ॥ २ ॥
जब लगि मैं तरपन नहि करहूँ । तब लगि महि ऊपर तुम रहहू ॥ ३ ॥
तप व्रत यज्ञ वहाँ रत जेते । नासहु सब द्विज डरहु न उनते ॥ ४ ॥
यह उपाय यदि सफल तुम्हारा । मरहीं तब हरि सभी प्रकारा ॥ ५ ॥
धर्म व कर्म द्विजातिन सारा । जो हरि की जड़ सभी प्रकारा ॥ ६ ॥
प्राणि व पितर देव ऋषि सारे । अरु धर्माश्रय वही पुकारे ॥ ७ ॥
गौ द्विज आश्रम वर्ण विधानू । करों शीघ्र उस देश पयानू ॥ ८ ॥
यों सुन दैत्य चले सिर नाई । लगे विनाशन जन समुदाई ॥ ९ ॥
पुर अरु ग्राम व व्रज उद्याना । आश्रम बाग व खेत खदाना ॥ १० ॥

दोहा- खेट व खर्वट घोष घर, पत्तन दिये जलाय ।
खोदे कर कुद्दाल धर, सेतु व गोपुर आय ॥ १० ॥

चौ- खोदे सेतु और प्रकारा । काटे तरुवर परशू द्वारा ॥ १ ॥
देख उपद्रव दैत्यन द्वारा । त्यागा सुर सुरलोक सुखारा ॥ २ ॥
हेय अलक्षित विचरन लागे । सुनो युधिष्ठिर गाथा आगे ॥ ३ ॥
कनककशिपु ने निज लघु भ्राता । अन्तिम कर्म किये मृत गाता ॥ ४ ॥

शकुनि अम्बर धृष्ट व काला । महानाभ हरि श्मश्रु कराला ॥ ५ ॥
उत्कच वृक भातृज समझाये । मृत भ्राता सुत पास बुलाये ॥ ६ ॥
रुपाभानु भ्राता की नारी । दिति सह आश्वासन दे भारी ॥ ७ ॥
कनककशिपु पुनि गिरा उचारी । हे पुत्रोंवधु अम्ब हमारी ॥ ८ ॥
शोचनीय ना भ्रात हमारा । रण बिच त्यागे प्राण पियारा ॥ ९ ॥
शूर वीर वध रण वर माना । अपर मरण नहि श्रेष्ठ बखाना ॥ १० ॥

दोहा- **देवि मानव मोहते, पैदा होत शरीर ।**
नष्ट होत क्षण में यह, जैसे बुद्बुद नीर ॥ ११ ॥

चौ- यथा प्याऊ पर मानव आवे । क्षण भर बाद बिछुड़ वह जावे ॥ १ ॥
तथा जीव करमन अनुसारी । मिलत व बिछुड़त दैव प्रचारी ॥ २ ॥
आत्मा नित्य शुद्ध अविनासी । विलग सर्वगत सब विद्भासी ॥ ३ ॥
जीव अविद्या के वश होई । तनु उत्पत्ति करता सोई ॥ ४ ॥
भोगन हेतू भोग अपारा । करता सूक्ष्म तनु स्वीकारा ॥ ५ ॥
आत्मा अव्यय नित्य बखाना । माया सम्बन्धित तनु माना ॥ ६ ॥
भ्राम्य माण जिमि नयनन द्वारा । दीखत चलती मही अपारा ॥ ७ ॥
चलत नीर दीखत तरु चालत । त्यों गुण विषय सबब मन भटकत ॥ ८ ॥
आत्म यद्यपि हे अविकारी । भटकत मन सम सभी प्रकारी ॥ ९ ॥
नहीं मेल तनु सूक्ष्म व स्थूला । भटकत तदपि जीव अनुकूला ॥ १० ॥

दोहा- **देह भिन्न इस जीव को, समझत मनुज अजान ।**
यही ज्ञान विपरीत है, अरु अज्ञान निशान ॥ १२ ॥

चौ- कर्म प्रताप जीव भव आवे । कर्म कार्य अनृत कहलावे ॥ १ ॥
यों लख शोच करहु तुम नाही । धरहु धीर सब निज मन माँही ॥ २ ॥
सुनो एक इतिहास पुराना । प्रेत बन्धु प्रति मम कियगाना ॥ ३ ॥
देश उशीनर नृप एक कोई । नाम सुयज्ञ जासु कर होई ॥ ४ ॥
एक दिवस नृप शत्रुन द्वारा । युद्ध बीच मर स्वर्ग सिधारा ॥ ५ ॥
शव समीप आ नृप परिवारी । करने लागे शोच अपारी ॥ ६ ॥
भिन्न हृदय शर कवच विशीर्णा । छिन्नायुध रज मुख विस्तीर्णा ॥ ७ ॥
इमि पतिमुख लखि नृप पटरानी । दुःखित हृदय नयन भर पानी ॥ ८ ॥
कूटन लगि हृदय निज हाथा । करत विलाप नाथ हे नाथा ॥ ९ ॥
यों कह वह नृप की वह पटरानी । गिरी धरनि नृप पद अकुलानी ॥ १० ॥

दोहा- केश वसन आभरण सब, बिखरे हिय अति पीर।
सींचत कुच कुंकम अरुण, भर नैनन में नीर ॥ १३ ॥

चौ- करत विलाप उच्च स्वर सारी। निर्दय विधि तुम कहा विचारी ॥ १ ॥
हे महीप तुम बिन हम सारी। जीवन धरहीं कवन प्रकारी ॥ २ ॥
गये वीर तुम जौन प्रदेशा। देहु हमें अनुगमन अदेशा ॥ ३ ॥
एवं मृत पति की भर बाथू। करत विलाप अस्त दिन नाथू ॥ ४ ॥
किन्तु दाह हित नहिं ले गयऊ। सुन उन रुदन वहाँ यम अयऊ ॥ ५ ॥
धर वटु रूप वदत यम राजू। भयो मोह यह तुम्ह केहि काजू ॥ ६ ॥
मोसे वयस रही तुम सारी। मैं समझाऊँ कवन प्रकारी ॥ ७ ॥
मृत्यु धर्म कीन्हा निज काजू। शोचन योग्य नहीं यह राजू ॥ ८ ॥
देख मुझे तुम करो विचारू। मात पिता भ्राता परिवारु ॥ ९ ॥
तज कर मोंहि गये बचपन में। तदपि शोक नहि मोरे मन में ॥ १० ॥

दोहा- जो प्रभु रक्षक गर्भ में, वहि रक्षक सर्वत्र।
उस प्रभु से रक्षित नहीं, सो ना बचे परत्र ॥ १४ ॥

चौ- सरजन पालन अरु संहारम। ये सब हरि के क्रीडा कारन ॥ १ ॥
दैव सुरक्षित पथ ना मरहीं। दैव अरक्षित गेह न बर्चहीं ॥ २ ॥
इमि हरि रक्षित बचहिं अनाथा। वन विच रहत न दूखत माथा ॥ ३ ॥
जाको वह हरि मारन चाहीं। लाख उपाय बचावत नाँही ॥ ४ ॥
समय पाय करमन के द्वारा। करते हरि सरजन संहारा ॥ ५ ॥
तनु स्थित भी यह जीव कराही। प्रकृति गुणों से बँधता नाहीं ॥ ६ ॥
करहु शोच जिस हेतू सारे। यह तनु सन्मुख पडा तुम्हारे ॥ ७ ॥
जो श्रोता वक्ता तनु माँही। देखा प्रथम कबहु तुम नाँही ॥ ८ ॥
तुम्हें आज भी वह नहि दीखत। मूर्ख समाँ फिर तुम क्यों सोचत ॥ ९ ॥
आत्मा भिन्न देह ते जानो। देह भिन्न आत्मा पहचानो ॥ १० ॥

दोहा— भूत इन्द्रियाँ मन सहित, उच्च नीच यह देह।
सरजहिं नासहिं यह प्रभु, निज ते जस अति स्नेह ॥१५॥

चौ- रहती आत्मा लिंग शरीरा। तब लगि पावत करमन पीरा ॥ १ ॥
सुपन मनोरथ के सम सारे। ऐन्द्रिय सुख दुख मृषा उचारे ॥ २ ॥
नष्ट देह प्रति सोचउ नाहीं। जानहु आत्मा अमर सदा ही ॥ ३ ॥
पूर्वकाल लुब्धक इक कोई। जाल बिछा कर कानन सोई ॥ ४ ॥

लोभ दिखाय कणादिक भारी । पकरत पक्षिन पाप प्रचारी ॥ ५ ॥
इमि कृत गये काल बहु बीता । आवा एक दिवस ऋतु शीता ॥ ६ ॥
जाकर कानन जाल बिछावा । देख कुलिंग मिथुन वहँ आवा ॥ ७ ॥
फँसी लोभ वश जाल कुलंगी । देख जाल बिच निज अर्धंगी ॥ ८ ॥
मोचन हेतु कुलिंग अनेका । किये उपाय पर चले न एका ॥ ९ ॥
तदा कुलिंग हिये दुख व्यापा । बैठ वृक्ष पर करत विलापा ॥ १० ॥

दोहा- **अहो विधाता निर्दयी, प्राणी नार विहीन ।**
जीवत धारण कर जगत, होवत कष्ट अधीन ॥ १६ ॥

चौ- अब मम जीवन ते न प्रयोजन । बाँधहु बधिक मोहि ते बन्धन ॥ १ ॥
मम सुत पक्ष व मात विहीना । राखहुँ अब इन कवन अधीना ॥ २ ॥
इत कुलिंग बहु करन विलापा । मारा उत शर बधिक कलापा ॥ ३ ॥
इमि निज मरण नहीं तुम जाना । करहु वर्ष शत शोच महाना ॥ ४ ॥
तदपि न मिलहीं पति तुम्हारा । कनक कशिपु उन वचन उचारा ॥ ५ ॥
इति वटु वचन सुने निज काना । नृप परिजन अनृत जग जाना ॥ ६ ॥
यों कह वच नृप परिजन काजू । अन्तर ध्यान भये यम राजू ॥ ७ ॥
पाछे नृप के सब परिवारी । कीन्हा शव अन्तिम संस्कारी ॥ ८ ॥
यही हेतु तुम भी मन शोकू । करहु न मत अनृत लखि लोकू ॥ ९ ॥
बोले नारद हे कुरु ऐना । दैत्यपति के सुन इमि बैना ॥ १० ॥

दोहा- **अनृत लख कर जगत को, ज्ञान मार्ग अनुसार ।**
निज सुत बन्धु सह वह दिति, त्यागा सोच अपार ॥१७॥

चौ- बोले नारद मुनि विज्ञानी । सुनौ युधिष्ठिर तुम मम वानी ॥ १ ॥
आत्मा अजय अजर अमराई । शत्रुहीन हित वह दनुराई ॥ २ ॥
ऊर्ध्वबाहु नभ दृष्टि लगाये । पद अंगुष्ठ खडा महि आये ॥ ३ ॥
मन्दर द्रोणी ऊपर दारुण । करने लगा तप विधि कारण ॥ ४ ॥
प्रलयकाल रवि रश्मि समाना । चमकत जटा कलाप महाना ॥ ५ ॥
तदा देव निज निज पद स्थाना । भये प्रतिष्ठित मुनि सुख माना ॥ ६ ॥
बहुत काल कृत तप के द्वारा । शिर ते निकसा अगनि अपारा ॥ ७ ॥
धूम सहित फैली चहुँ ओरा । भयो त्रिलोक बीच तब शोरा ॥ ८ ॥
क्षोभित सागर सरिता सारी । द्वीप सहित भू कम्पित भारी ॥ ९ ॥
जलने लागी दिशा अपारा । टूटे नभते ग्रह सह तारा ॥ १० ॥

दोहा- उस अग्नि से तप्त सुर, कर निज मन में शोक ।
गये विधाता के भवन, तजकर अपना लोक ॥ १८ ॥

चौ- जाकर विधि से सुरगण सारे । कीन्ह निवेदन होय दुखारे ॥ १ ॥
देव देव हे जगपति धाता । कनककशिपु के तप से ताता ॥ २ ॥
तप्त होय हम दिवि विच सारे । आये शरण हे नाथ तुम्हारे ॥ ३ ॥
जब लगि लोक नष्ट नहिं होहीं । करहु उपाय शमन का सोहीं ॥ ४ ॥
यदपि नाथ तुम अन्तर्यामी । करें निवेदन तो भी स्वामी ॥ ५ ॥
इमि संकल्प कियो वह ताता । जिमि तप योग समाधि विधाता ॥ ६ ॥
यथा विश्व का करत प्रकाशन । सत्य लोक विच स्थित निज आसन ॥ ७ ॥
कर तप योग समाधि अपारा । रचूँ विश्व मैं उसी प्रकारा ॥ ८ ॥
यह संकल्प सुना हम काना । करता यही हेतु तव ध्याना ॥ ६ ॥
अब जो योग्य करो वहि स्वामी । दीन बन्धु हे अन्तर यामी ॥ १० ॥

दोहा- ब्रह्मन् तव आसन सदा, गो विप्रन सुख हेतु ।
यों सब सोच विचार कर, करो शमन दनु केतु ॥ १६ ॥

चौ- देवन द्वारा सुन यों बाता । भृगु दक्षादिक संग ले धाता ॥ १ ॥
दैत्येश्वर के आश्रम गयऊ । देख उसे सब विस्मित भयऊ ॥ २ ॥
देखा प्रथम जो देखन आया । तृण वल्मीक व कीचक छाया ॥ ३ ॥
मेद त्वचा शोणित तनु मांसू । खाये कीट पिपीलिक तासू ॥ ४ ॥
विस्मित हो हँस धात पुकारा । उठ काश्यप मैं मुदित अपारा ॥ ५ ॥
बने सिद्ध तुम तप के द्वारा । करूँ मनोरथ पूर तुम्हारा ॥ ६ ॥
माँगहु इच्छित वर तुम मोसे । देहूँ मुदित दुराव न तोसे ॥७ ॥
मक्षिकादि भक्षित तनु सारा । अस्थिन विच प्राणन संचारा ॥ ८ ॥
ऐसा धीरज देख तुम्हारा । भयो मुदित मन खूब हमारा ॥ ६ ॥
जैसा तप कीन्हा यह तेने । पूर्व काल देखा ना मैंने ॥ १० ॥

दोहा- अपर काल में भी नहीं, ऐसा दीखे कोय ।
तप करके ऐसो कठिन, करे मुदित जो मोय ॥ २० ॥

चौ- जल बिन दिव्य वर्ष शत कोई । धारण करहिं प्राण निज सोई ॥ १ ॥
हे दितिनन्दन तप के द्वारा । जीते तुम मैं सभी प्रकारा ॥ २ ॥
निष्फल मम दर्शन नहिं जाता । माँगहु वर मुझसे मन भाता ॥ ३ ॥
बोले नारद यों कह बानी । कमन्डल ते विधि छिड़का पानी ॥ ४ ॥

सब अवयव का पाकर लाभा । भयो युवा कंचन सम आभा ॥ ५ ॥
नभ स्थित विधि प्रति कीन्ह प्रणामा । उठा दैत्यपति पूरण कामा ॥ ६ ॥
दोउ कर जोर मुदित मन भारी । होकर गद्गद् गिरा उचारी ॥ ७ ॥
देव आप मोहिं दरसन दीन्हा । तुम तम व्यास प्रकट जग कीन्हा ॥ ८ ॥
पालक सरजक अरु संहारक । नाश आप ही जग के नायक ॥ ९ ॥
हे त्रिगुणाश्रय करूँ प्रणामा । आद्य बीज हे पूरण कामा ॥ १० ॥

दोहा- **सर्व चराचर जगत के, नाथ नियन्ता आप ।**
ज्ञान और विज्ञान की, मूरति अरु निष्पाप ॥ २१ ॥

चौ- प्रभोवेदत्रयि वपु के द्वारा । कीन्हा यज्ञन का विस्तारा ॥ १ ॥
काल रूप बन अन्तर्यामी । मानव वय नासत तुम स्वामी ॥ २ ॥
कारज कारण आदिक सारे । नहीं नाथ ये तुम ते न्यारे ॥ ३ ॥
श्रुति उपश्रुति भी तव तनु जाये । कनक गर्भ यहि हित तुम गाये ॥ ४ ॥
निज स्वरूप स्थित होय विधाता । विषय इन्द्रियाँदिक ते जाता ॥ ५ ॥
उन सब भोगत स्थूल शरीरा । गावत यहि हित ब्रह्म सुधीरा ॥ ६ ॥
व्यास जगत जिन सूक्ष्म शरीरा । वन्दत जिन पद पंकज धीरा ॥ ७ ॥
पुरुष पुराण अनन्त अकामा । उन भगवत को करूँ प्रणामा ॥ ८ ॥
हे वरदोत्तम यदि वर देहू । तो मम वचन जरा सुन लेहू ॥ ९ ॥
जे प्राणी प्रभु आप रचाये । उनकर मौत नहीं मन आये ॥ १० ॥

दोहा- **अन्तर बाहर नभ मही, दिन अरु मरहुँ न रात ।**
नर मृग द्वारा भी प्रभो, हो नही मोरी घात ॥ २२ ॥

चौ- अस्त्र शस्त्र ते भी नहिं स्वामी । मरहुँ कदापि न अन्तर यामी ॥ १ ॥
जीव अजीव जगत में जेते । मार सके नहिं मुझको वेते ॥ २ ॥
सुर अरु असुर उरग भयकारी । तरु पत्थर नहि मौत हमारी ॥ ३ ॥
एक छत्र का वर मैं चाहूँ । युद्ध बीच सब शत्रु नसाहूँ ॥ ४ ॥
लोकपाल इन्द्रादिक माँही । तुम सम महिमा मिले सदा ही ॥ ५ ॥
दिति नन्दन की सुनकर बानी । बोले अब ब्रह्मा वरदानी ॥ ६ ॥
तात तोर तप से हो राजी । देहूँ दुर्लभ वर तुम काजी ॥ ७ ॥
बाद दैत्यपति से हो पूजित । गवने सत्य लोक सुर अर्चित ॥ ८ ॥

दोहा- **वर पा इत दनु हेम मय, कवच गात निज धार ।**
सुमिरन कर भ्राता वध, हरि प्रति कुपित अपार ॥ २३॥

चौ- बाद असुर सुर मानव सारे । इन्द्रादिक गंधर्व अपारे ॥ १ ॥
चारण सिद्ध पितर ऋषि सारे । यक्ष व रक्ष पिशाच विचारे ॥ २ ॥
प्रेत भूतपति अरु मनुपेते । कीन्हे निज वश लोकप जेते ॥ ३ ॥
वैभव स्थान हरण करं सारा । कीन्हा दैत्यप निज अधिकारा ॥ ४ ॥
सुन्दर सुर उद्यान अपारा । रचित विश्वकर्मा के द्वारा ॥ ५ ॥
उस त्रिविष्टप पर अधिकारा । कीन्हा अब वह दिति सुत सारा ॥ ५ ॥
जहाँ प्रवाल जटित सोपाना । जटित स्फटिक महि मरकत नाना ॥ ७ ॥
रचित प्रवाल सुस्तंभ कतारा । मुक्ता दाम वितान अपारा ॥ ८ ॥
मणिमय आसन सुन्दर नाना । शय्या शुभ पय फेन समाना ॥ ६ ॥
कनक मयि परछद अति सुन्दर । कूजत तिय पद के जँह नुपूर ॥ १० ॥

दोहा- **एक छत्र सम्राट बन, वन्दित पद सुर मात ।**
ऐसे सुरपति भवन में, रमण करत दिन रात ॥ २४॥

चौ- पीकर मद होकर मतवाला । तप्त ताम्र सम नयन कराला ॥ १ ॥
ब्रह्म विष्णु शिव को तजि देवा । कनक कशिपु की करते सेवा ॥ २ ॥
लेकर भेट खडे उस आगे । रहते सारे देव अभागे ॥ ३ ॥
मुझ सम गंधर्वादिक सारे । करत प्रशंसा गान विचारे ॥ ४ ॥
करती नृत्य अपसरा नाना । करते ऋषि भी मिल गुण गाना ॥ ५ ॥

दोहा- **जे वर्णाश्रम धर्म के, पालन करने हार ।**
यज्ञादिक रचते जभी, करता हवि स्वीकार ॥ २५ ॥

चौ- सप्त द्वीप निष्कंटक राजू । देत महीविन ज्योत अनाजू ॥ १ ॥
देत आचरज वस्तु अपारा । करता नभ सेवा स्वीकारा ॥ २ ॥
देत रतन रत्नाकर भारी । घृत पय आदिक सरिता जारी ॥ ३ ॥
क्रीड़ा स्थान दिये गिरि सारे । द्रुम पट् रितुफल पुष्प अपारे ॥ ४ ॥
पृथक पृथक गुण लोकप जेते । धारण कियो स्वयं वह वेते ॥ ५ ॥
वैभव पाय अनेक प्रकारा । करत विषय उपभोग अपारा ॥ ६ ॥
तदपि तप्त मन नहि उस भयऊ । वैभव मत्त काल बहु गयऊ ॥ ७ ॥
तासू उग्र दंड उद्विग्ना । गवने लोकपाल प्रभु शरना ॥ ८ ॥
आवत नहीं वापिस मुनि ज्ञानी । जाकर जहँ सुन नृप गुणखानी ॥ ६ ॥
कीन्हा उस हरिधाम प्रणामा । होकर अमल व संयतात्मा ॥ १० ॥

दोहा- तज निद्रा वायु असन, निज मन मति वश कीन्हा ।
अमर वृन्द मिल कर सभी, हरि चरणन चित दीन्ह ॥२६॥

चौ- भई तदा नभ ते शुभवानी । अभयंकर साधुन प्रति जानी ॥ १ ॥
विवुध वृन्द अब मत भय खाहू । मम दरसन कर सब सुख पाहू ॥ २ ॥
तासु दुष्टता हम सब जानी । धरो धीर नसहीं अभिमानी ॥ ३ ॥
जब गौ विप्र वेद सुर साधू । धर्म व मो प्रति द्वेप अगाधू ॥ ४ ॥
करहिं आसु तब होय विनासू । मोरे वचन करो विश्वासू ॥ ५ ॥
वैष्णव निज सुत प्रति प्रहलादा । करहि द्वेप जब दानव ज्यादा ॥ ६ ॥
यद्यपि वर पायउ वह भारी । मारहुँ करहुँ न तनिक अवारी ॥ ७ ॥
बोले नारद कुन्तीनन्दन । सुन वाणी सुर करुणाक्रन्दन ॥ ८ ॥
कीन्हा हरि प्रति सभी प्रणामा । गये मुदित वापिस निजधामा ॥ ९ ॥
त्यागा अब वे सब उद्वेगा । मरा समझ वह दैत्य अभागा ॥ १० ॥

दोहा- दानव पति के चार सुत, जिनमें लघु प्रहलाद ।
किन्तु गुणों में वह महा, करत भक्ति प्रभु पाद ॥ २७ ॥

चौ- सत्य संध ब्रह्मण्य अपारी । जित इन्द्रिय सब प्रिय सुखकारी ॥ १ ॥
मानत दीन न पिता समाना । वर्जित अहंकार अभिमाना ॥ २ ॥
निस्पृह विषय न चित उद्विग्ना । वृत्ति आसुरी सब विध हीना ॥ ३ ॥
यही हेतु कवि बारम्बारा । गावत तासू गुणन अपारा ॥ ४ ॥
शत्रु होत सुर तासू गाथा । प्रेम सहित गावत नर नाथा ॥ ५ ॥
जासु असंख्य अमल गुण ये ही । निशि दिन वासुदेव रति जेही ॥ ६ ॥
त्यागे क्रीडा कौतुक सारे । सर्वत्र समय गोविन्द उचारे ॥ ७ ॥
खावत पीवत सोवत कालू । करत ध्यान पद दीन दयालू ॥ ८ ॥
गावत हँसत रुदत प्रभु काजा । करत नृत्य कबहुँतजि लाजा ॥ ९ ॥
तूष्णी भूत होय प्रहलादा । तन्मय होय कबहुँ हरि पादा ॥ १० ॥

दोहा- कबहूँ प्रेमानन्द में, मग्न होय प्रहलाद ।
नयन बन्द कर निज हिय, हेरत हरि के पाद ॥ २८ ॥

चौ- कर भक्ति निज सुख विस्तारा । करत अपर मन शन्ति अपारा ॥ १ ॥
ऐसे वैष्णव सुत के हेतू । करत द्वेष अति वह दनुकेतू ॥ २ ॥
नारद मुनि की सुनकर बानी । वदत युधिष्ठिर नृप गुण खानी ॥ ३ ॥
वैष्णव निज सुत प्रति मुनिराया । पिता द्वेष केहि हेतु रचाया ॥ ४ ॥

यह सब मैं मुनि सुनना चाहूँ। हे अखंड व्रत मोहिं समझाहू ॥ ५ ॥
करत काम यदि सुत विपरीता। डाँटत शिक्षा हित पितु रीता ॥ ६ ॥
किन्तु शत्रु सम बैर न ठानत। पिता द्वेष वश पुत्र न मारत ॥ ७ ॥
यह सुनकर कौतूहल भारी। भयो मोर मन हे तप धारी ॥ ८ ॥
करहु शान्त कौतूहल मेरा। शुद्ध हृदय सुत प्रति क्यों वैरा ॥ ९ ॥
कीन्हा कनक कशिपु केहि काजू। यह सुन बोले अब मुनिराज ॥ १० ॥

दोहा- **एक समय सब असुर मिल, गुरु पद पर आसीन।**
कीन्हा शुक्राचार्य को, दो सुत जासु प्रवीन ॥ ५२९ ॥

चौ- शुण्डामर्क नाम इति तासू। करत राज गृह पास निवासू ॥ १ ॥
नृप प्रेषित प्रहलाद सबाला। शिक्षाध्ययन करावत शाला ॥ २ ॥
द्वैत शास्त्र वे दोउ पढ़ावे। किन्तु न नृप सुत के मन भावे ॥ ३ ॥
एक समय वह राक्षस राजा। ले कर सुत निज अंक विराजा ॥ ४ ॥
प्रेम समेत सीस धर हाथा। पूछन लगा दनुज कुल नाथा ॥ ५ ॥
जो तुम को अति लागत नीकी। कहु सुत बात वही निज जी की ॥ ६ ॥
पिता वचन सुन कहे प्रहलादा। लागहिं हरि सुमिरन प्रिय ज्यादा ॥ ७ ॥
अंधकूप सम गेह तजाई। सुमिरूँ हरिपद विपिन सिधाई ॥ ८ ॥
इमि सुत वचन सुनै जब राया। हँसकर गुरु प्रति वचन सुनाया ॥ ९ ॥
बालक मति परमित के द्वारा। पावत जग के बीच विकारा ॥ १० ॥

दोहा- **जब लगि विष्णु पक्ष से, यह निजमति न तजाय।**
राखों इसको गेह निज, सब प्रकार समझाय ॥ ३० ॥

चौ- दानव पति यों वचन सुनाये। नृप सुत को गुरु निज घर लाये ॥ १ ॥
प्रेम सहित समझावन लागे। कहु प्रहलाद हमारे आगे ॥ २ ॥
इतने बालक बीच तुम्हारी। निर्मल मति सुत कवन बिगारी ॥ ३ ॥
यह मति भेद भयउ जो गाता। निज कृत वा पर कृत कहुताता ॥ ४ ॥
गुरु वचन सुन कहे कुमारा। निज पर यह अज्ञान तुम्हारा ॥ ५ ॥
होता जिनकी माया द्वारा। वन्दहुँ उन पद बारम्बारा ॥ ६ ॥
होवहिं यदा हरी अनुकूला। निज पर मति तब हो निरमूला ॥ ७ ॥
वेदवादि ब्रह्मादिक सारे। जिनको हेरत हेरत हारे ॥ ८ ॥
वहि प्रभु हे गुरु राज हमारी। निज पर मति सब तोर बिगारी ॥ ९ ॥
यथा लोह चुम्बक के संगा। भ्रमण करत वह यदपि अपंगा ॥ १० ॥

दोहा- त्यों मम चित भी भ्रमत है, उन हरि रुचि अनुसार।
इस प्रकार कह कर वह, शान्त भयो सुकुमार ॥ ३१ ॥

चौ- नृप सुत के इमि वच सुन काना। भये तदा गुरु कुपति महाना ॥ १ ॥
डाँट डपट कर कहने लागे। अरे अयश कर महा अभागे ॥ २ ॥
दंड योग्य तू दुर्मति बालक। कुलाङ्गार हे दनु कुल घालक ॥ ३ ॥
अरे छोकरों आनहु वेता। होत कुटिल समझावहु जेता ॥ ४ ॥
दैत्य रुप चन्दन वन अन्दर। भयो अरे यह कंटक तरुवर ॥ ५ ॥
दैत्य विपिन उत्पाटन कारन। रुप कुठार कियो यह धारन ॥ ६ ॥
विष्णू दंड रुप जिन लागा। मानत ना यह बाल अभागा ॥ ७ ॥
एवं ताड़न तर्जन द्वारा। कियो भीत वह विविध प्रकारा ॥ ८ ॥
त्रिवर्गी प्रति पादक पाछे। शास्त्र सिखायेउ आछे आछे ॥ ९ ॥
जाना अब गुरु सभी प्रकारा। विद्या कुशल भयउ सुकुमारा ॥ १० ॥

दोहा- लेकर गुरु प्रहलाद को, गये कयाधू पास।
पाछे माता ने उसे, सजाधजा कर खास ॥ ३२ ॥

चौ- पिता पास निज बाल पठावा। बालक पितु पद सीस नवावा ॥ १ ॥
निज पद पतित लखा निज बाला। कर आलिंगन मुदित नृपाला ॥ २ ॥
निज गोदी में लेकर बाला। बोला कनककशिपु नरपाला ॥ ३ ॥
दीन्ही गुरु शिक्षा जो तोहीं। कुछ तो जरा सुनावहु मोंही ॥ ४ ॥
पिता वचन सुनकर सुकुमारा। होय मुदित इमि वचन उचारा ॥ ५ ॥
श्रवण कीरतन अरचन सुमिरन। वन्दन दास्य व आत्म समरपन ॥ ६ ॥
सखा भाव अरु हरिपद सेवन। विष्णु भक्ति के ये नव लच्छन ॥ ७ ॥
यही पढ़ाई लागी नीकी। और बात सब जग की फीकी ॥ ८ ॥
किन्तु तात यह गुरु हमारे। जानत ना यह पाठ विचारे ॥ ९ ॥
एवं सुत वच सुनकर काना। स्फुरित अधर कर क्रोध महाना ॥ १० ॥

दोहा- गुरु सुत से कहने लगा, कर निज लोचन लाल।
ब्रह्म बन्धु तुमने यह, फेरी मति इस बाल ॥ ३३ ॥

चौ- कियो अनादर तुम मम भारी। देकर सुत प्रति सीख असारी ॥ १ ॥
कपट वेष धारी जग माँहीं। कमी असाधुन की न दिखाहीं ॥ २ ॥
धरहिं मित्र का छिप कर बाना। करत काम शत्रुन का नाना ॥ ३ ॥
खुलती कलई एक दिन उनकी। छिपकर पाप कमावत जिनकी ॥ ४ ॥

दानवेन्द्र की बानी सुनकर । बोले गुरुवर अति घबरा कर ॥ ५ ॥
इन्द्र शत्रु यह पुत्र तुम्हारा । मानत नाँही कथन हमारा ॥ ६ ॥
मम अरु पर शिक्षा यह नाँही । स्वाभाविक मति वदत सदाही ॥ ७ ॥
यही हेतु तुम हमरे ऊपर । करहु न कोप जरा भी दनुवर ॥ ८ ॥
गुरु सुत की सुनकर इमिबानी । निज सुत से बोला अभिमानी ॥ ९ ॥
तव मति यह गुरु मुखि नहि जाता । तो सुत बता सीख कुण दाता ॥ १० ॥

दोहा- **पिता वचन सुनकर तदा, बोला यों सुकुमार ।**
निज वा पर की सीख को, धारण कर नरनार ॥ ३४ ॥

चौ- वा निज सम सत्संग प्रभावा । कृष्ण बीच मति कबहुँ न पावा ॥ १ ॥
यथा अन्ध अन्धन अनुचारी । गिरहिं कूप इमि जनु संसारी ॥ २ ॥
जब लगि कर साधुन सत संगा । धोवत ना उन पद रज अंगा ॥ ३ ॥
सुनौ पिता इस जग वे माँही । तब लगि कृष्ण बीच मति नाँही ॥ ४ ॥
जब इमि वचन कहे सुकुमारा । भयो कुपित वह दैत्य अपारा ॥ ५ ॥
निज उत्संग पुत्र महि डारा । करके लोचन लाल अंगारा ॥ ६ ॥
पाछे राक्षस पास बुलाये । उन प्रति इमि वह वचन सुनाये ॥ ७ ॥
अरे राक्षसों यह वध योगू । बाँध इसे मारहु तुम लोगू ॥ ८ ॥
यह मम भ्राता के वधकारी । उस विष्णु की अर्चन कारी ॥ ९ ॥
यद्यपि पंचवर्षवय येहू । त्यागा तदपि पिता से स्नेहू ॥ १० ॥

दोहा- **हित कर संतति हो अपर, जानहु पुत्र समान ।**
निज औरस सुत अहित कर, त्यागहु उस नादान ॥३५॥

चौ- जानो तेही रोग समाना । निज कुल नाशक वह सुत माना ॥ १ ॥
देखन में यह कितना भोला । किन्तु शत्रु का पहिने चोला ॥ २ ॥
यही हेतु यह सभी उपाया । मारन योग्य करहु मति दाया ॥ ३ ॥
यों सुन कर वे राक्षस सारे । शुल हस्त नृप आज्ञा धारे ॥ ४ ॥
मारहु काटहु छेदहि येही । वदत वचन अब मारत तेही ॥ ५ ॥
मर्म स्थल पर किये प्रहारा । तदपि न बालक हिम्मत हारा ॥ ६ ॥
हरि पद बीच लगायउ चेता । भये प्रहार अफल किय जेता ॥ ७ ॥
भये नष्ट जब सभी प्रयासा । कीन्हा वध उपाय पुनि खासा ॥ ८ ॥
दिग्गज दंदशूक अभिचारा । गिरी श्रृंग ते महि पर डारा ॥ ९ ॥
गरद अभोजन रोधब माया । वात अगनि हिम नीर उपाया ॥ १० ॥

दोहा- **निष्पापी सुत पर किये, घातक वार अनेक ।**
पर निष्फल सब हो गये, मार सकें नहिं एक ॥ ३६ ॥

चौ- ढुण्ढा कनककशिपु की भगिनी । करती नित प्रति मज्जन अगनी ॥ १ ॥
सो भी जला सकी ना उसको । हनहि कवन हरिरक्षक जिसको ॥ २ ॥
व्यर्थ उपाय देख अब राया । अति चिन्तित मुख महि लटकाया ॥ ३ ॥
अब सबसे यों कहने लागा । मरा नहीं ये बाल अभागा ॥ ४ ॥
कीन्हें हम सब कई उपाया । किन्तु एक भी काम न आया ॥ ५ ॥
जड़मति यह मम पास निवासा । करत दूर नहि रहे जरा सा ॥ ६ ॥
यद्यपि हम दुःख दीन्हें नाना । तदपि बुरा यह काहु न माना ॥ ७ ॥
नम्र वचन कर सन्मुख आवे । निश्चय यह मोंहि अमर दिखावे ॥ ८ ॥
कर विरोध इस शठ के द्वारा । होवहिं निश्चय मरण हमारा ॥ ९ ॥
इति चिन्ता से आतुर राया । लखकर गुरु सुत वचन सुनाया ॥ १० ॥

दोहा- **नाथ अकेले आपने, जीते तीनों लोक ।**
तब तो इतनो ना कियो, अपने मन में शोक ॥ ३७ ॥

चौ- शिशु गुण दोष न पर सुनराया । धरहु न ध्यान तजहु करि दाया ॥ १ ॥
जब लगि भार्गव आवत ताहूँ । वरुणपाश बाँधहु घर याहू ॥ २ ॥
शुण्डामर्क वचन सुन काना । बोला कनक कशिपु बलवाना ॥ ३ ॥
नृपति धर्म का तुम उपदेशू । देहू इस प्रति मम आदेशू ॥ ४ ॥
तब गुरु सुतहिं गेह निज लाये । त्रिवर्गी कृत शास्त्र पढाये ॥ ५ ॥
अपर बालकन शिक्षा मानी । पर नृप सुत वह वर ना जानी ॥६ ॥
गेह काज गुरु जब वहि आये । तब सब बालक खेलन धाये ॥ ७ ॥
तब प्रहलाद बुलाये सारे । हँस कर उन प्रति वचन उचारे ॥ ८ ॥
नृप सुत के गौरव ते बालक । आये वहँ सब तज क्रीडानक ॥ ९ ॥
बैठे नृप सुत के चहुँओरा । भये शान्त वे तज सब सौरा ॥ १० ॥

दोहा- **महाभागवत नृपसुत, अब उन बालन हेतु ।**
करुणा कर कहने लगे, ब्रह्म ज्ञान भव सेतु ॥ ३८ ॥

चौ- सुनो बालकों वचन हमारा । बुद्धिमान वहि इस संसारा ॥ १ ॥
वय कुमार बिच भगवत धर्मा । करहिं आचरण जो निष्कर्मा ॥ २ ॥
दुर्लभ मानव जनम हमारा । देत अर्थ यह सभी प्रकारा ॥ ३ ॥
यही हेतु विष्णु पद सेवन । करहु सर्व प्रिय उन हरि वन्दन ॥ ४ ॥

देह योग ते सब तनुधारी । पात विषय सुख अतुल अपारी ॥ ५ ॥
करहु न विषयन हेत प्रयत्ना । व्यर्थ आयु जावत इस यत्ना ॥ ६ ॥
इस जग आकर मानव सारे । जब लगि तनु बिच प्राणन धारे ॥ ७ ॥
हरिपद चरणन में चित देकर । करे उपाय क्षेम हित जी भर ॥ ८ ॥
वर्ष शतायु मानव गाई । निद्रा बीचे अर्ध बिताई ॥ ९ ॥
बाल कुमार मूर्खता माँही । खेल कूद विच वीस विताही ॥ १० ॥

दोहा- **जरा ग्रस्त तनु व्याधि ते, निष्फल जावत वीस ।**
गेह बीच आसक्त हो, शेष वर्ष इमि पीस ॥ ३९ ॥

चौ- एवं गृहसक्त जे प्राणी । कैसे त्यागहिं यह नादानी ॥ १ ॥
यथा वणिक तस्कर के द्वारा । प्राण हनि करके स्वीकारा ॥ २ ॥
अपने घर का द्रव्य बचावे । चाहे मौत भले ही आवे ॥ ३ ॥
ऐसे धन की तृष्णा कोई । त्यागन हेत समर्थ न होई ॥ ४ ॥
प्रिया संग एकान्त निवासा । शिशु कलभाषण आसत आसा ॥ ५ ॥
दुहिता श्वसुर गेह स्थित नाती । सुत भ्राता निज स्वजन संगाती ॥ ६ ॥
मात पिता भगिनि परिवारु । पशु अरु भृत्य व भोग अपारु ॥ ७ ॥
यह ना छूटहि कवन प्रकारा । करहु उपाय लाख कई बारा ॥ ८ ॥
पोषण हित परिवार उपायू । गिनहि न विहत कदापि गतायू ॥ ९ ॥
अपर द्रव्य हरण का भारी । जानत पाप व दोष अपारी ॥ १० ॥

दोहा- **तो भी तस्कर वृत्ति को, करत कामना हेत ।**
भगवत भक्ति के विषै, रहता सदा अचेत ॥ ४० ॥

चौ- होत मनीषि तदपि वह भाई । कबहूँ हरि पद पावत नाँई ॥ १ ॥
निज पर भेद भाव के कारन । करहीं तम प्रधान गति धारन ॥ २ ॥
करत मनोरंजन तिय संगा । जकडित सर्ग श्रृंखला अंगा ॥ ३ ॥
निज आत्मा को किसी प्रकारा । मोचन को न समर्थ विचारा ॥ ४ ॥
यही हेतु तुम भी सुनु भाई । विषया सत दनु संग तजाई ॥ ५ ॥
करहू साधुन की सत्संगा । जाहु शरण हरि करि चित चंगा ॥ ६ ॥
अच्युत साधन में श्रम नाँही । सर्वभूत आत्मा जनु ताही ॥ ७ ॥
जीव अजीव नभादिक माँही । वह परमात्मा व्याप्त सदा ही ॥ ८ ॥
वहि अव्यय परब्रह्म स्वरूपा । आकर सब ऐश्वर्य अनूपा ॥ ९ ॥
भोक्ता भोग्य व दृश्य व दृष्टा । इस स्वरूप ते व्याप्त विशिष्टा ॥ १० ॥

दोहा- **केवल आनन्द रुप हरि सर्ग गुणात्मक जासु ।**
अपनी माया से यह करते सदा प्रकासु ॥ ४१ ॥

चौ- असुर भाव त्यागहु निज काया । करहु सर्व भूतन पर दाया ॥ १ ॥
करहु मित्रता का व्यवहारा । दया करत हरि मुदित अपारा ॥ २ ॥
ऐसी कवन वस्तु जग माँही । निज दासन हरि देवत नाँही ॥ ३ ॥
इस कारण तुम उन गुण कर्मा । करहु गान सब हो निष्कर्मा ॥ ४ ॥
वार्ता नय दम विविध प्रकारा । धर्म व अर्थ व काम अपारा ।. ५ ॥
अखिल कर्म ये वैदिक गाये । किन्तु न इनते हरि पद पाये ॥ ६ ॥
यही हेतु निरगुण हरि माँहीं । साधन आत्मर्पण वर भाही ॥ ७ ॥
नारद हेत अरे यह ज्ञाना । निज मुख नारायण किय गाना ॥ ८ ॥
भक्त अनन्य गरीब निवाजू । ये सब ज्ञान मिलहिं उन काजू ॥ ९ ॥
धर्म रूप यह भगवत ज्ञाना । मोसे नारद मुनी बखाना ॥ १० ॥

दोहा- **दैत्य पुत्र कहने लगे, अरे मित्र प्रहलाद ।**
तेरी बातें श्रवण कर, भयो हमें आह्लाद ॥ ४२ ॥

चौ- एक बात पूछहिं हम तुमसे । वह समझाय कहो सब हमसे ॥ १ ॥
शण्डामर्क बिना गुरु दूजे । तुम हम कभी नहीं पद पूजे ॥ २ ॥
हे नृप सुत तुम बालक होकर । करहु वास अन्तःपुर भीतर ॥ ३ ॥
नारद ऋषि अरु तोर समागम । कवन प्रकार भयो उन आगम ॥ ४ ॥
यह सन्देह भयो मन माँही । कहु नृपसुत यह सब समुझाही ॥ ५ ॥
इस प्रकार जब वे सब बालक । पूछन लगे अरे नर पालक ॥ ६ ॥
तब प्रहलाद सुमिर मम कथना । दैत्य सुतन प्रति बोले वचना ॥ ७ ॥
सुनौ बालकों जब तज राजू । मोरे पिता गये तप काजू ॥ ८ ॥
मन्दर गिरि उपर तप भारी । कीन्हा उत इत असुर दुखारी ॥ ९ ॥
समय पाय दैत्यन के ऊपर । कीन्हों कूँच सभी सुर मिलकर ॥ १० ॥

दोहा- **इन्द्रादिक कहने लगे, दुखद दैत्य के पाप ।**
भक्षण करही अब इसे, कीरी दल जिमि साँप ॥ ४३ ॥

चौ- बल उद्योग सुरन का भारी । देख दैत्य अब भये दुखारी ।. १ ॥
भागे इत उत धीरज टूटा । स्त्री सुत गेह द्रव्य सब छूटा ॥ २ ॥
विजयी सुर अब सभी प्रकारा । लूटा राजभवन धन सारा ॥ ३ ॥
राज महिषि मम जन्म प्रदाता । कियो हरण शचि पति सुरत्राता ॥ ४ ॥

नीयमान वह भय उद्विग्ना । करत विलाप कुररि इव नाना ॥ ५ ॥
पथ विच जावत नारद देखे । कहे इन्द्र से वचन विशेषे ॥ ६ ॥
निर अपराधिनि लख कर येहू । हे सुरपति इसको तजि देहू ॥ ७ ॥
सती साध्वी का अपमाना । तोरे हित हम उचित न माना ॥ ८ ॥
बोले इन्द्र सुनौ मुनि नाहू । वीर्य अमोघ जठर विच याहू ॥ ९ ॥
होवहिं प्रसव बाद सुत तेही । वधकर पाछे त्यागहुँ येही ॥ १० ॥

दोहा- **इन्द्र वचन सुनकर तदा, बोले मुनि सुजान ।**
महाभागवत होवहीं, वह सुत अति गुणवान ॥ ४४ ॥

चौ- मरहीं कदापि नहीं वह तोसे । सत्य वचन सुन मधवन मोसे ॥ १ ॥
मुनीवचन यह मधवा माना । तज सुरेश वहीं कीन्ह पयाना ॥ २ ॥
पुनि मम मातहिं देय दिलासा । लाये जहँ मुनि करत निवासा ॥ ३ ॥
जब लगि पुत्री तव पति नाँही । तप करके आवहिं घर माँही ॥ ४ ॥
तब लगि उचित वास यहँ तोरा । सुनो कयाधु कथन यह मोरा ॥ ५ ॥
मुनि आज्ञा शिर पर धर माता । कियो निवास वहाँ पर भ्राता ॥ ६ ॥
जब लगि पिता गेह नहि आये । तब लगि वहि निज दिवस बताये ॥ ७ ॥
परम साधवी वह सति नारी । करती ऋषि परिचर्य अपारी ॥ ८ ॥
परम कारुणिक वे ऋषि राया । ज्ञान भागवत उसे सुनाया ॥ ९॥
निर्मल भक्ति व धर्म स्वरूपा । मम अभिष्ट हित कहे मुनीपा ॥ १० ॥

दोहा- **समय फेरते ज्ञान यह, भूल गई मम मात ।**
ऋषि कृपाते आज भी, मम स्मृति नहीं नसात ॥ ४५॥

चौ- मोरे वचन करहु यदि धारण । होवहु भक्ति व ज्ञान परायण ॥ १ ॥
जन्म वृद्धि अनुभव परिणामा । क्षय व विनाश वसत तनु धामा ॥ २ ॥
आत्मा नित्य व देह अनित्य । आत्मा सत्य व देह असत्य ॥ ३ ॥
आत्मा एक व देह अपारी । आत्मा शुद्ध व तनु मलधारी ॥ ४ ॥
देह निवासी वह अविनासी । तनु नहि, आत्मा स्वयं प्रकासी ॥ ५ ॥
यह शरीर जड़ क्षेत्र कहाया । आत्मा क्षेत्र मर्म विद गाया ॥ ६ ॥
यह आश्रय तनु आश्रित माना । यह व्यापक तनु व्याप्य बखाना ॥ ७ ॥
तनु विकार युत यह अविकारी । यह कारण वह कारज भारी ॥ ८ ॥
आत्मा संगहीन ननु देहू । आवृत देह अनावृत येहू ॥ ९ ॥
आत्मा के इन लक्षण द्वारा । त्यागहू अनृत भाव अपारा ॥ १० ॥

दोहा- अध्यात्म तत्व विद जे, नर ब्रह्मगति का ज्ञान ।
पावत आतम योग ते, निज तनु के दरम्यान ॥ ४६ ॥

चौ- हेमकार सब आकर पाहन । खोजत जैसे कंचन पावन ॥ १ ॥
वसु प्रकृति अरु इन्द्रिय ग्यारा । पंच तत्व युत चोइस सारा ॥ २ ॥
जानहु तनु इन सब समुदाया । स्थावर जंगम इति दो काया ॥ ३ ॥
आत्मा को खोजहिं तनु माँही । ब्रह्म ज्ञान विद मनुज सदाही ॥ ४ ॥
आत्मा सब में अनुगत गाई । रहत सभी से किन्तु जुदाई ॥ ५ ॥
उत्पत्ति स्थिति लय पर सारा । शुद्ध बुद्धि से करहु विचारा ॥ ६ ॥
जागृत स्वप्न सुसुप्ती सारी । मति वृत्ति इति तीन पुकारी ॥ ७ ॥
इनका जिनते अनुभव होई । सर्व साक्षि जानहु प्रभु सोई ॥ ८ ॥
कर्मज बुद्धि भेद के द्वारा । आत्मा रूप लखहिं मुनिसारा ॥ ६ ॥
जड़ता जड़ सारा जग जाना । दीखत मिथ्या सुपन समाना ॥ १० ॥

दोहा- यही हेतु तुम बालकों, इन गुण के अनुसार ।
होने वाले कर्म का, नासहु बीच पहार ॥ ४७ ॥

चौ- मति वृत्तिन तब रुकहिं प्रवाहू । यहि प्रभु मिलन व योग लखाहू ॥ १ ॥
इन करमन खोदन के साधन । वरणन कीन्हे सहस मुनीजन ॥ २ ॥
किन्तु श्रेष्ठ यहि एक उपाऊ । जासे हो हरि प्रेम लगाऊ ॥ ३ ॥
कही बात यह खुद भगवाना । इनते भिन्न व्यर्थ सब माना ॥ ४ ॥
गुरु सेवा साधुन सतसंगा । सुनहिं कथा हरि करि चित चंगा ॥ ५ ॥
हरि पादाम्बुज ध्यान लगावे । सर्वभूत हिय हरिहिं लखावे ॥ ६ ॥
जो कुछ मिल हीं अपने आपू । करहिं समर्पण हरि चुपचापू ॥ ७ ॥
कीरतन लीला हरिगुण गावे । हरि दरसन हित मंदिर जावे ॥ ८ ॥
दरसन वन्दन मूरति पूजन । होहिं प्रेम हरि बिच इन साधन ॥ ६ ॥
अनन्त शक्तिमान भगवाना । रहे विराजित प्राणिन नाना ॥ १० ॥

दोहा- कर मन में यों धारणा, राखहु उनका मान ।
उन प्राणिन के रूप में, जानहु उन भगवान ॥ ४८ ॥

चौ- काम क्रोध मद लोभ व मोहू । त्यागहु मत्सर अरि षट् जोहू ॥ १ ॥
करके विजय इन्हों पर भारी । करहिं भक्ति का साधन जारी ॥ २ ॥
पावहिं हरि पद प्रेम अपारी । वे प्रभु सदा संत भयहारी ॥ ३ ॥
हरि गुण कर्म जान निज गाता । अश्रु हर्ष रोमञ्चित जाता ॥ ४ ॥

तजि संकोच सदा संसारी । गावत नाचत रोदत भारी ॥ ५ ॥
खेद ग्रस्त पागल सब हँसही । क्रन्दन ध्यावत वन्दत जन ही ॥ ६ ॥
श्वास श्वास में ले हरि नामू । तन्मय होवत उन सुख धामू ॥ ७ ॥
मानव तब सब बन्ध तजाई । हरि स्वरूप स्वयं बन जाई ॥ ८ ॥
संसृति चक्र न सत सब तेहू । वदत मोक्ष सुख बुधजन येहू ॥ ९ ॥
यही हेतु तुम भी सब भाई । भजहू निज हिय उन हियराई ॥ १० ॥

दोहा- **हिय स्थित हरि के भजन में से, नहि अति होत पयासु ।**
द्रव्य पुत्र तिय मित्र सब क्षण भँगुर वय जासु ॥ ४९ ॥

चौ- पशु व गेह महि कुंजर कोषा । क्षण भंगुर आयुध इन दोषा ॥ १ ॥
ये मानव का हित ना करहीं । यथा द्रव्य सुत तिय सुख नसहीं ॥ २ ॥
यज्ञार्जित स्वर्गादिक सारा । नश्वर जानहुँ सभी प्रकारा ॥ ३ ॥
यही हेतु तुम दया निधाना । आत्म लब्धि हित भजु भगवाना ॥ ४ ॥
मानव कृत संकल्प अपारा । पावत फल विपरीत प्रकारा ॥ ५ ॥
इह कर्मी सुख हित संकल्पा । निज रुचि ते वह पात विकल्पा ॥ ६ ॥
सोचत जिस तनु हित नर कामू । क्षण भंगुर पर कीय अकागू ॥ ७ ॥
स्त्री सुत गेह धनादिक सारा । पारकीय यह सभी प्रकारा ॥ ८ ॥
नश्वर तुच्छ पदारथ जेते । आत्मोद्धार करहिं नहि येते ॥ ९ ॥
क्लेश मान देही का भाई । करमन ते नहिं स्वार्थ दिखाई ॥ १० ॥

दोहा- **जीव अविद्या के वश, आकर तनु के बीच ।**
फँस जावत हे बालकों, इन करमन के कीच ॥ ५० ॥

चौ- यही हेतु अर्थादिक कामा । रहहिं जासु वश भजु उन श्यामा ॥ १ ।.
आत्मेश्वर हरि अन्तरयामी । सर्वभूत प्रिय सब जग स्वामी ॥ २ ॥
हरी भजन के सब अधिकारी । दैत्य असुर सुर ऋपि नर नारी ॥ ३ ॥
खग मृग पापी जीव अपारी । सब हरि भक्ति के अधिकारी ॥ ४ ॥
हरि चरणाम्बुज भजकर सारे । सीधे हरि के धाम पधारे ॥ ५ ॥
सुर महिसुर ऋपि का ना ठेका । हरितोपण हित नहीं विवेका ॥ ६ ॥
वृत तप शौच व यज्ञ व दाना । सदाचार अरु तीरथ स्नाना ॥ ७ ॥
इनकी नहीं जरुरत भाई । हरिभक्ति केवल सुखदाई ॥ ८ ॥
सब प्राणिन बीचे लखु ईशा । करो भक्ति अब तुम जगदीशा ॥ ९ ॥
दैत्य यक्ष राक्षस नर नारी । शूद्र व्रजोकस मृग नभ चारी ॥ १० ॥

दोहा- **पापी जन भी भक्ति कर, पावत भगवत भाउ ।**
नर तनु में सबसे बड़ा, स्वारथ यही कहाउ ॥ ५१ ॥

चौ- यहि परमार्थ जगत में जाना । करें भक्ति रूपी रस पाना ॥ १ ॥
सुखत सर्वदा सर्वत्र सुहावन । करें सभी में हरि का दरसन ॥ २ ॥
यही भक्ति का सुन्दर लच्छन । कीन्हा निज मुख तुम प्रति वरणन ॥ ३ ॥
बोले नारद मुनि विज्ञानी । दैत्य सुवन सुन नृप सुत वानी ॥ ४ ॥
निज मुख सब हरि नाम उचारा । गुरु आदेश न कृत स्वीकारा ॥ ५ ॥
मति विपरीत देख सब बाला । गुरु सुत भय युत तजि तव शाला ॥ ६ ॥
नृप समीप जाकर भयभीता । बोले हाल सभी विपरीता ॥ ७ ॥
गुरुसुतवचन सुनत विपरीता । तदा दैत्य वह हो भयभीता ॥ ८ ॥
चलत गात्र मन क्रोध अपारा । सुत वध हेतू कियो विचारा ॥ ९ ॥
वद दारुण सह सर्प समाना । दीर्घ साँस तजकर मन नाना ॥ १० ॥

दोहा- **वद्ध अञ्जली पास में, स्थित लख सुत की ओर ।**
वक्र दृष्टि करके तदा, बोला वचन कठोर ॥ ५२ ॥ क
दुर्विनीत मन्दात्मन, कुल अंगार गँवार ।
कुल भेदक तोहे अभी, भेजूँ यम दरवार ॥ ५२ ॥ ख

चौ- जाके क्रुद्ध होत त्रय लोका । लोकपाल सह होवत शोका ॥ १ ॥
उसके शासन के विपरीता । किसके बल तू व्यर्थ अभीता ॥ २ ॥
पिता वचन सुन कर यों काना । कहे वचन प्रहलाद सयाना ॥ ३ ॥
केवल मोरे बल पर राजा । कहूँ वचन ये नहि तुम काजा ॥ ४ ॥
तुम सम जेते जग बलवन्ता । उन बल पर बलधर भगवन्ता ॥ ५ ॥
जिनके वश ब्रह्मादिक सारे । वहि ईश्वर निज शक्ति सहारे ॥ ६ ॥
रचना जग की करने हारे । पालत आवत प्रलय सँहारे ॥ ७ ॥
यही हेत तजि असुर सुभाऊ । मन सम कर मति वैर बढाऊ ॥ ८ ॥
सब प्राणिन न विच लखकर ईश्वर । करो अराधन उन जगदीश्वर ॥ ९ ॥
कामादिक षट् अरि जिन जीता । सो ना कबहुँ होय भयभीता ॥ १० ॥

दोहा- **दिग विजयी वह ही पिता, कहलावत संसार ।**
बाहर के शत्रु सभी, उससे खावत हार ॥ ५३ ॥

चौ- कनककशिपु सुन यों सुत वानी । बोला मंद बुद्धि अभिमानी ॥ १ ॥
तोरी मौत सीस पर डोले । अमर्याद वचन जो बोले ॥ २ ॥

करत अभागे जिसकी पूजा । मोंहि त्याग जगदीश्वर दूजा ॥ ३ ॥
बता कहाँ अब दीखत तोहीं । तू सर्वत्र बतावत मोहीं ॥ ४ ॥
स्तंभ बीच क्या दीखत तोहीं । तब प्रहलाद कहे नृप मोही ॥ ५ ॥
तात जगत की वस्तु अपारी । हरि स्वरूप में दीखत सारी ॥ ६ ॥
अस कहि स्तंभहिं कीन्ह प्रणामा । स्तंभ रुप जय जय घनश्यामा ॥ ७ ॥
दनुज प्रवर सुनकर यों बानी । यदि नहिं दीखहिं वह अभिमानी ॥ ८ ॥
काटहिं सीस खड्ग यह मोरा । हरि रक्षक देखूँ अब तोरा ॥ ९ ॥
इमि दुरुक्त सुत वचन सुनाई । लेकर खड्ग तदा दनुराई ॥ १० ॥

दोहा- **सिंहासन से उतर झट, कीन्हा मुष्टि प्रहार ।**
प्रकट भयो तब स्तंभ ते, भीषण शब्द अपार ॥ ५४ ॥

चौ- मानो फूटहिं ब्रह्म कटाहू । उस रव ते सुन हे नर नाहू ॥ १ ॥
सुन रव वदत अजादिक सारे । होहि नष्ट अब धाम हमारे ॥ २ ॥
तदा दैत्य वह सुत वधकारी । सभा भवन बिच नाद अपारी ॥ ३ ॥
सुनी किन्तु इत उत कहीं राया । उस ध्वनि का आश्रय ना पाया ॥ ४ ॥
सुन वह भीषण नाद अपारी । राक्षस भी घबराये भारी ॥ ५ ॥
अब सेवक भाषित भगवाना । सत्य करन को दीन निधाना ॥ ६ ॥
नहि मृग नहि मानुष के रूपा । स्तंभ बीच लखि ज्योति स्वरूपा ॥ ७ ॥
जाना ध्वनि आश्रय अब सारा । निर्गत स्तंभ मध्य भयकारा ॥ ८ ॥
नर मृगेन्द्र रूप लखि दानव । यह मृग भी नहिं नहिं यह मानव ॥ ९ ॥
अरे रूप यह दीखत कैसा । देखा नहीं प्रथम हम ऐसा ॥ १० ॥

दोहा- **इत विचार दानव करत, उत वे हरि भगवान ।**
झट नृसिंह के रूप में, प्रकटे सन्मुख आन ॥ ५५ ॥

छन्द- **तप्त हेम समान लोचन, जृंभितानन भयकरी ।**
उग्र दंष्ट्र कराल अति, विकराल जीहा जिमि छुरी ॥
दोउ कर्ण उन्नत शंकुवत, मुख प्रसृत मानो गिरिदरी ।
स्वर्ग काया स्पृशत जिनकी, ग्रीवनारी कुछ भरी ॥ १ ॥
वक्ष जासु विशाल अति कृश, उदर आयुध नखधरी ।
गौर चन्द्र समान तनु, रोमावली सुन्दर खरी ॥
देख इस नरसिंह वपुहिं, त्रसित दानव उस घरी ।
बोला अरे मोहिं मारने यह, आगया मायिक हरी ॥ २ ॥

दोहा- **मम वध हेत उपाय यह, कीन्हा सोच विचार ।**
पर मोरे सन्मुख नहीं, चालहिं इसका वार ।। ५६ ।।

चौ- इस प्रकार कह दानवकुंजर । धावा निज कर गदा उठाकर ।।१ ।।
झपटत जैसे अनल पतंगा । झपटा वह यों नरहरि अंगा ।। २ ।।
वह दानव कर क्रोध अपारा । नरहरि उपर कीन्ह प्रहारा ।। ३ ।।
खगपति पन्नग इव भगवाना । पकरयो दानव अब बलवाना ।। ४ ।।
किन्तु झपट कर वह हरि कर ते । छूट चला अब डरते डरते ।। ५ ।।
पाछे खड्ग चर्म कर धारण । धावा नरसिंह ऊपर मारण ।। ६ ।।
अट्टहास वय नरहरि कियऊ । मीलित अक्ष तदा वह भयऊ ।। ७ ।।
पकरा मूपक सर्प समाना । उस दानव को अब भगवाना ।। ८ ।।
जब लगि संध्या काल न आवा । तब लगि नरहरि खेल खिलावा ।। ९ ।।
संध्या काल देख भगवाना । फारत जैसे अहि हरियाना ।। १० ।।

दोहा- **सभा द्वार पर लाकर, निज उरू ऊपर डार ।**
निज नखास्त्र से दनुज का, दीन्हा उदर विदार ।। ५७ ।।

चौ- तेहि समय क्रोधानल धारी । भयप्रद लोचन दीखत भारी ।। १ ।।
लपलपात जीहा भयकारी । चाटत निज मुख बारम्बारी ।। २ ।।
रक्त बिन्दु ते उनका आनन । अरुण वरण कच उन्नत कानन ।। ३ ।।
गजघाती मृगराज समाना । अन्त्रावलि धर वे भगवाना ।। ४ ।।
चीर कलेजा महि पर डारा । तेहि समय ले शस्त्र अपारा ।। ५ ।।
दैत्य व दानव लेकर आये । नरहरि ने सब मार गिराये ।। ६ ।।
नरहरि ग्रीवा कम्पित केशा । तितर वितर भे मेघ नरेशा ।। ७ ।।
देखत नरहरि नयन अकासू । सब ग्रह भयऊ बिना प्रकासू ।। ८ ।।
श्वास वात हत क्षोभित सागर । दिग्गज दुःखित नाद श्रवण कर ।। ९ ।।
भू कम्पित भई पीड़ित पादा । गिरे शैल द्रुम नरहरि नादा ।। १० ।।

दोहा- **नरहरि प्रभु के तेजते, नभ ककुभा न दिखात ।**
दरशक गण भयभीत हो, कोई न सन्मुख आत ।। ५८।।

चौ- नृप सिंहासन प्रभु असीना । भयप्रद वपुधर क्रोध अधीना ।। १ ।।
जगत सीस ज्वर वध सुन काना । सुरतिय निजमन मुदित महाना ।। २ ।।
पुष्प वृष्टि की झरी लगाई । नभ दुंदुभि बाजी सहनाई ।। ३ ।।
सुरयानावलि अम्बर छाई । नाचत हुहुगण सहित लुगाई ।। ४ ।।

ब्रह्मा इन्द्र गिरीश भवानी । मनू प्रजापित ऋषि मुनि ज्ञानी ॥ ५ ॥
पितर महोरग अरु विद्याधर । सहित अप्सरा चारण किन्नर ॥ ६ ॥
वेताल सिद्ध गंधर्व अपारा । हरि अनुव्रत बद्धाञ्जलि द्वारा ॥ ७ ॥
पृथक् पृथक् शुभ स्तोत्र सुनाये । पर भयभीत समीप न आवे ॥ ८ ॥
कर जोरे विधि गिरा उचारी । माया नाथ अनन्त तुम्हारी ॥ ९ ॥
बल विचित्र अरु शक्ति दुरन्ता । कर्म पुनीत जयति भगवन्ता ॥ १० ॥

दोहा- **रुद्र कहे भगवन् यह, नहीं कोप का काल ।**
जो लघु राक्षस वध कर, कीन्हा कोप विशाल ॥ ५९ ॥

चौ- कनक कशिपु सुत भक्त तुम्हारा । पालहु यहि तजि क्रोध अपारा ॥ १ ॥
कहे इन्द्र दोऊकर जोरी । सुनहु नृसिंह विनय यह मोरी ॥ २ ॥
यज्ञ भाग वापिस कर भारी । रक्षा कीन्ही नाथ हमारी ॥ ३ ॥
त्यागहु यह निज क्रोध अपारा । बोले अब ऋषि परम उदारा ॥ ४ ॥
हे पुरुषोत्तम तुम तप द्वारा। निज तनु लीन जगत विस्तारा ॥ ५ ॥
उस तप का उपदेश दयालू । दीन्हा रिषि मुनि हेत कृपालू ॥ ६ ॥
इस दानव ने वह तप सारा । किया नष्ट प्रभु सभी प्रकारा ॥ ७ ॥
उस तप की रक्षा के हेतू । धारेउ वपु यह तुम सुर केतू ॥ ८ ॥
अब उस तप का पुनि आदेशू । हम सब प्रति करहू जगदीश ॥ ९ ॥
अब पितरेश्वर वचन उचारे । बलपूर्वक प्रभु श्राद्ध हमारे ॥ १० ॥

दोहा- **यह दानव खाजावत, पीवत तरपन नीर ।**
वे सब वापिस तुम किये, नख से इसको चीर ॥ ६० ॥

चौ- बोले सिद्ध दनुज वधकारी । योग सिद्ध गति नाथ हमारी ॥ १ ॥
नासी सकल जगत दुख दाता । यही हेतु तुम मारेउ ताता ॥ २ ॥
अब विद्याधर करत प्रणामा । जय नृसिंह जय पूरण कामा ॥ ३ ॥
यह राक्षस पशुवत खल कामी । मारेउ नाथ आज तुम स्वामी ॥ ४ ॥
बोले नाग रतन तिय सारी । हरण कीन्ह यह दनुज हमारी ॥ ५ ॥
मुदित भई अब तिया हमारी । लखकर लाश मही पर भारी ॥ ६ ॥
कर जोरे मनु गिरा उचारी । हम सब प्रभु के आज्ञाकारी ॥ ७ ॥
मरजादा हम जगत चलाई । वह दितिसुत यह सभी नसाई ॥ ८ ॥
चालहिं अब मरजाद हमारी । भयो नष्ट दानव दुखकारी ॥ ९ ॥
वदत प्रजापति अब मिल सारे । हम सब इस दानव से हारे ॥ १० ॥

दोहा- हे परेश्वर हे प्रभो, दिति सुत दुख दातार ।
सृष्टि रचने से हमे, रोकत बारम्बार ।। ६१ ।।

चौ- फारेउ नात आप इस छाती । परा भूमि अब यह जग धाती ।। १ ।।
यह अवतार जगत के कारण । कीन्हा सत्व मूर्ति तुम धारण ।। २ ।।
सब गंधर्व कहे कर जोरे । हे प्रभु हम सब सेवक तोरे ।। ३ ।।
निज बल वीर्य पराक्रम स्वामी । किये दास हम इस खल कामी ।। ४ ।।
सो यह निशिचर तुम संहारा । योग्य काम यह नाथ तुम्हारा ।। ५ ।।
बोले चारण मिल इक साथा । सेवक हम पद पंकज नाथा ।। ६ ।।
हे साधू जन अभय प्रदाता । मारेउ दुष्ट दैत्य दुख दाता ।। ७ ।।
बोले यक्ष त्रिलोकी नायक । किये नियत हम शिविका नायक ।। ८ ।।
वह रजनीचर आप संहारा । बोले अज किंपुरुप अपारा ।। ६ ।।
तुम हो महापुरुप भगवाना । हम अति तुच्छ अपावन नाना ।। १० ।।

दोहा- सत्पुरुषन द्वारा यह, पायउ अति अपमान ।
यही हेतु इस दुष्ट को, मारेउ तुम भगवान ।। ६२ ।।

चौ- बोले अब मिल कर वैताला । सभा सत्र बिच दीन दयाला ।। १ ।।
अमल कीरति गाय तुम्हारी । चलत जीविका सदा हमारी ।। २ ।।
सो सम्पत्ति दुष्ट विनासी । गद सम नासेउ यहि अविनासी ।। ३ ।।
बोले किन्नर हम हरि किंकर । कर्महीन हम कीन्ह निशाचर ।। ४ ।।
विभव हेतु नरसिंह हमारे । यह दानवपति आप संहारे ।। ५ ।।
विष्णुदूत इमि वचन उचारा । अद्भुत नरहरि रूप तुम्हारा ।। ६ ।।
हे शरणद जग मंगलदाता । भये मुदित दरसन कर गाता ।। ७ ।।
महिसुर शापित यह तव किंकर । कीन्ह अनुग्रह अति यहि वधकर ।। ८ ।।
बोले नृप से अब मुनि राई । नरहरि क्रोधित बहुत लखाई ।। ६ ।।
ब्रह्मादिक सुर रिषि मुनि राई । वन्दन करत सभी भय खाई ।। १० ।.

दोहा- देवन द्वारा लक्ष्मी, भेजी प्रभु के पास ।
उनका अद्भुत रूप लख, शंकित भई अतित्रास ।।६३।।

चौ- गइ न समीप भई भयभीता । स्थित चुपचाप चित्र जिमि भींता ।। १ ।।
निज समीप प्रहलाद लखाई । बोले विधि तेहि वचन सुनाई ।। २ ।।
कुपित भये प्रभु तव पितु ऊपर । करहुँ शान्त अब तुम वहँ जाकर ।। ३ ।।
जो आज्ञा यों कह कर बालक । गयो जहाँ रजनीचर नाशक ।। ४ ।।

जाकर पास कृताञ्जलि धारी । नयनाश्रु तनु पुलकित भारी ॥ ५ ॥
कीन्ह दंडवत महि पर बालक । भये मुदित लखि दिति सुत नासक ॥ ६ ॥
निज पद पंकज पतित लखाई । दानव सुत प्रभु लीन्ह उठाई ॥ ७ ॥
निज कर अम्बुज बालक सीसा । धरकर मुदित भये जगदीशा ॥ ८ ॥
हरि कर स्पर्शत पावन जाता । नयनाश्रु पुलकित मृदु जाता ॥ ९ ॥
भयेउ मुदित मन प्रेम अपारा । हृदय ध्यान कर स्तोत्र उचारा ॥ १० ॥

दोहा- **ब्रह्मादिक सुर सिद्ध गण, नारद शारद शेष ।**
नाम उचारण करत सब, हारे सहित महेश ॥ ६४ ॥

चौ- नाथ दनुजकुल जन्म हमारा । करूँ मुदित तोहिं कवन प्रकारा ॥ १ ॥
धन कुलीनता रुप अथाऊ । तप विद्या बल ओज प्रभाऊ ॥ २ ॥
तेज बुद्धि पौरुष अरु योगू । नहीं समर्थ मुदित हरि जोगू ॥ ३ ॥
किन्तु गजेन्द्र भक्ति के द्वारा । पायउ परम स्वरूप तुम्हारा ॥ ४ ॥
इन द्वादश गुण युत यदि पंडित । रहहिं किन्तु हरि भक्त अखंडित ॥ ५ ॥
शुपच श्रेष्ठ हरि पद लव लीना । नहीं श्रेष्ठ द्विज भक्ति विहीना ॥ ६ ॥
प्रभुपद रत कुल करत पुनीता । पावत इह फल वह मन चींता ॥ ७ ॥
तुम प्रभु दीनबन्धु दुख हर्ता । मैं अति मूढ मंदमति भर्त्ता ॥ ८ ॥
मैं महिमा लघुमति अनुसारी । वरणूँ नरहरि कवन प्रकारी ॥ ९ ॥
हे प्रभू ये ब्रह्मादिक सारे । भयते पास न आत तुम्हारे ॥ १० ॥

दोहा- **ये ब्रह्मादिक देव सब, हरि के भक्त अपार ।**
हम दैत्यन के सम प्रभो, करत न तुमसे रार ॥ ६५ ॥

चौ- जगत क्षेम हित यह अवतारा । भय उत्पादन हेतु न धारा ॥ १ ॥
यही हेतु अब क्रोध तजाहू । जिस हेतू किय क्रोध अथाहू ॥ २ ॥
सो दानव तुम मार गिरावा । नाथ जगत अब सब सुख पावा ॥ ३ ॥
करहु शान्त अब क्रोध कृपालू । लख स्वरूप तव दीन दयालू ॥ ४ ॥
लागत भय मुझको नहिं स्वामी । दीनबन्धु हे अन्तरयामी ॥ ५ ॥
मैं संसार चक्र भयभीता । निज करमन में फँसकर रीता ॥ ६ ॥
अपर बात का भय नहि खाऊँ । अब कब तव पद पंकज आऊँ ॥ ७ ॥
जे जे जोनी बिच मैं गयेऊँ । प्रिय अप्रिय संयोग दहेऊँ ॥ ८ ॥
नाशक जनम व मरण उपाया । करहु शीघ्र मोसे करि दाया ॥ ९ ॥
मैं प्रभु तव पद पंकज दासू । सुनकर चरित व कथा प्रकासू ॥ १० ॥

दोहा- जेते दुख इस जगत में, गिन उन किसी प्रकार।
तुम सब के आराध्य हो, स्थिति उद्भव लयकार ॥ ६६॥

चौ- मात पिता सुत के नहिं त्राता। पालत तदपि बहुत दुख पाता ॥ १ ॥
सच्चे मात पिता तुम मोरे। मैं शरण्य शरणागत तोरे ॥ २ ॥
सागर डूबत रक्षक नौका। किन्तु कबहुँ वह खावत धोका ॥ ३ ॥
यहि हेतु सर्वत्र दयालू। तुमहीं रक्षक सदा कृपालू ॥ ४ ॥
सत्वादिक गुण धारण हारे। ब्रह्मादिक जे देव पुकारे ॥ ५ ॥
उनको प्रेरित करने वारे। इस जग बीचे आप पुकारे ॥ ६ ॥
ये सब देव प्रेरणा पाकर। जे वस्तू ये करत उजागर ॥ ७ ॥
दृश्य और अदृश्य अपारा। वे सब रूप है नाथ तुम्हारा ॥ ८ ॥
हे अज षोडश जासु विकारा। चक्र तुल्य यह जनु संसारा ॥ ९ ॥
इक्षु दंडवत हे करतारा। पीड्यमान मैं इस संसारा ॥ १० ॥

दोहा- यह सेवक अब शरण में, आवा नाथ तुम्हार।
राखहु निज चरणन विषै, इनसे कर उद्धार ॥ ६७ ॥

चौ- लोकपाल गृह सभी प्रकारा। स्वर्ग सम्पदा लखी अपारा ॥ १ ॥
किन्तु नाथ जब पिता हमारा। करता इन पर कोप अपारा ॥ २ ॥
तब ये सब सम्पत विलगाई। भागत इत उत अति भय खाई ॥ ३ ॥
कियो आज वध पिता हमारा। यही हेतु मैं भोग अपारा ॥ ४ ॥
वय लक्ष्मी ऐश्वर्य न चाहूँ। ये सब नश्वर नाथ लखाऊँ ॥ ५ ॥
चाहूँ चरण कमल प्रभु तोरे। यही लालसा लग रहि मोरे ॥ ६ ॥
विषय भोग की बातें मोहीं। मृग तृष्णा सब दीखत सोहीं ॥ ७ ॥
यह शरीर भी भोग खजाना। सब रोगन का उद्गम स्थाना ॥ ८ ॥
इन दोनों की क्षण भंगुरता। लख कर भी नर होन विरत्ता ॥ ९ ॥
तमगुण अधिक असुर कुलस्वामी। जन्म हमारा अन्तरयामी ॥ १० ॥

दोहा- कहाँ जन्म मोरा यह, कहँ तव कृपा अपार।
वरद हस्त मम सीस धर, दीन्हा ताप निवार ॥ ६८ ॥

चौ- जो कर रमा शंभु विधि सीसा। धरेऊ नाँहि कबहूँ जगदीशा ॥ १ ॥
तुम संसारी जीव समाना। भेद छोट बड़काहु न माना ॥ २ ॥
तुम जग सुहद अकारण प्रेमी। दीन बन्धु निस्पृह सब क्षेमी ॥ ३ ॥
सेवा से सुरतरू समाना। देत प्रसाद प्रभो मन माना ॥ ४ ॥

अन्ध कूप सम यह संसारा । वसत जहाँ अहि काम करारा ।। ५ ।।
विषयन भोगी मानव सारे । अंध कूप विच गिरत विचारे ।। ६ ।।
देवरिषी नारद ने मोहूँ । निज जन जान बचायउ ओहूँ ।। ७ ।।
सोचो नाथ जरा तुम मन में जो सेवक हरि के इस जग में ।। ८ ।।
उन भक्तन से करूँ किनारा । बोलो नरहरि कवन प्रकारा ।। ९ ।।
हे अनन्त मम प्राणन त्राता । मम पितु बध न निरर्थक ताता ।। १० ।।

दोहा- **शनकादिक के शाप को, सत्य करन को आज ।**
कीन्हा यह वध आपने, निज भृत्यन के काज ।। ६९ ।।

चौ- सम्पूर्ण जगत यह रुप तुम्हारा । आदि व मध्य व अंत प्रकारा ।। १ ।।
निज माया करि जगत रचाई । होवहु लीन इसी में आई ।। २ ।।
यही हेतु रक्षक अरु नाशक । होत प्रतीत आप जग नायक ।। ३ ।।
सत अरू असत जगत यह सारा । नहीं नाथ तुमते वह न्यारा ।। ४ ।।
सारे जग में आप समाये । तदपि प्रभो तुम सब अलगाये ।। ५ ।।
यही हेतु निज पर मति ताता । अनृत अडर व्यर्थ यह जाता ।। ६ ।।
आवत प्रलय काल जब ताता । कर विलीन सब जग निज गाता ।। ७ ।।
हो निरीह प्रलयोदक माँही । करत शयन हरि आप सदाही ।। ८ ।।
तेहि काल तब नाभ सकासू । लोक पद्म यह करत प्रकासू ।। ९ ।।
भये विधाता पंकज फूला । इत उत देखत पंकज मूला ।। १० ।।

दोहा- **स्थित यद्यपि तुम सब जगह, तदपि न दीखेउ नाथ ।**
तब विधि विस्मित कंज स्थित, जोरे दोउ हाथ ।। ७० ।।

चौ- कीन्ह तपस्या अतुलित भारी । तब विधि हित दिय दर्श खरारी ।। १ ।।
सहस वदन पद कर शिर नासा । कर्ण नयन मुख उरु प्रकासा ।। २ ।।
सर्वाभरण सआयुध सारे । भये मुदित लखि धात अपारे ।। ३ ।।
हय ग्रीव धर कर अवतारा । तुम दानव मधु कैटम मारा ।। ४ ।।
लेकर सब श्रुति विधि कर दीन्हा । राम रुप वध रावण कीन्हा ।। ५ ।।
एवं झप आदिक वपुधारी । पालत धर्म लोक हित कारी ।। ६ ।।
प्रति युग युग लेकर अवतारा । करत विश्व द्रोहिन संहारा ।। ७ ।।
हर्ष शोक भय धन सुत नारी । इह परत्र दुख चिन्तित भारी ।। ८ ।।
मम मन बहुत कलूषित ताता । हरी कथा विच चित्त न जाता ।। ९ ।।
इस प्रकार के मन ते स्वामी । भयो दीन मैं अन्तरयामी ।। १० ।।

दोहा- ऐसे मन से तत्व का, कैसे करूँ विचार ।
हे अच्युत करुणायतन, दीन बन्धु साकार ।। ७१ ।।

चौ- रसना जो कबहूँ न अघावे । रस की तरफ खींच ले जावे ।। १ ।।
जननेन्द्रिय सुन्दर तिय ओरा । त्वचा सुकोमल स्पर्श न छोरा ।। २ ।।
उदर सुभोजन की प्रभु ओरा । कान मधुर संगीत विभोरा ।। ३ ।।
मृदु सुगंध के हेतू नासा । सुन्दरता हित नयन अकासा ।। ४ ।।
निज निज विषयन की प्रभु ओरा । सब कर्मेन्द्रिय लगावत दौरा ।। ५ ।।
क्या कहुँ नाथ दशा संसारी । यथा पुरुष की सौतन नारी ।। ६ ।।
निज निज शयन गेह की ओरा । लावत खींच न त्यागत छोरा ।। ७ ।।
त्यों यह जीव करम के बन्धन । फँसकर दुख सहि करुणा क्रन्दन ।। ८ ।।
जग रूपी वैतरणी सरिता । डूबत नीर होय भवभीता ।। ६ ।।
जन्म मरण दोनों के द्वारा । कर्मभोग ते भीत अपारा ।। १० ।।

दोहा- निज पर के इस भेदते, मित्र शत्रु बन जात ।
मूढ जीव की दुर्दशा, लखकर करुणाकान्त ।। ७२ ।।

चौ- भव वैतरणी पतित अपारी । तारहु नित्य मुक्त संसारी ।। १ ।।
इनके तारण को प्रभुतोहीं । अतिव प्रयास कियो नहिं होहीं ।। २ ।।
वैतरणी का भय ना मोहीं । सत्य कहूँ सर्वोत्तम तोहीं ।। ३ ।।
किन्तु सोच उनका मन मोरे । विमुख पाद पंकज जे तोरे ।। ४ ।।
इन दीनन को नाथ तजाही । मुझे मुक्ति की चाह न भाही ।। ५ ।।
तुम बिन इन प्राणिन का कोई । दीखत अन्य न रक्षक मोई ।। ६ ।।
बहुत दुःख पाकर भी कामी । गृह सुख को सुख मानत स्वामी ।। ७ ।।
मोन व व्रत तप जप श्रुत ताता । पाठ स्वधर्म पालना गाता ।। ८ ।।
सँग एकान्त व शास्त्र विचारा । सह समाधि दश मोक्ष प्रकारा ।। ६ ।।
किन्तु जासु इन्द्रिय वश नाहूँ । जानहु साधन जीवन याहू ।। १० ।।

दोहा- दम्भिन की जब तक यह खुले पोल नहि तात ।
साधन जीवन मात्र के , तब तक ये कहलात ।। ७४ ।।

चौ- खुलहिं पोल दम्भिन की जबहीं । नष्ट होत साधन ये तबहीं ।। १ ।।
श्रुति बिच अंकुर बीज समाना । तुमको कारज कारण माना ।। २ ।।
हेरत संत योग के द्वारा । यथा काष्ठ में अनल प्रकारा ।। ३ ।।
मात्रा तत्व वचन मन प्राना । ये सब रुप तुम्हीं भगवाना ।। ४ ।।

गुण अरु गुण के सब परिणामा । देव दनुज मानव सुखधामा ॥ ५ ॥
गुण अभिमानी देव विचारे । पावत पार न नाथ तुम्हारे ॥ ६ ॥
इनका आदि व अन्त बखाना । केवल आप अनन्त महाना ॥ ७ ॥
यहि कारण सब संत मुनीगण । तव पद पंकज तजहिं न इक क्षण ॥ ८ ॥
कर स्वाध्याय मुनीगण भारी । पावत शान्ति परम अपारी ॥ ९ ॥
सेवा के षट् अंग बखाना । परम पूज्य हरि दीन निधाना ॥ १० ॥

दोहा- **कथा श्रवण पूजन करण, स्मृति चरणन उरुगाय ।**
सब कर्मार्पण वन्दना, स्तौत्र पाठ षट् भाय ॥ ७४ ॥

चौ- मिलहि न सेवा बिना कृपालू । भक्ति तुम्हारी दीन दयालू ॥ १ ॥
बिन भक्ती के प्राप्ति तुम्हारी । होन कदापि संत भयहारी ॥ २ ॥
परम हंस प्रिय भक्तन काजू । तुम सर्वस्व सुनो महराजू ॥ ३ ॥
धर्मराज से नारद बोले । करत विनय इमि भक्त अडोले ॥ ४ ॥
भक्त वचन सुनकर इति काना । भये मुदित तजि क्रोध महाना ॥ ५ ॥
बोले वचन संत भयहारी । भक्तराज मैं मुदित अपारी ॥ ६ ॥
भद्र भक्त तव हो कल्याणा । असुरोत्तम माँगहु वरदाना ॥ ७ ॥
मम दरशन दुर्लभ नर काजू । मैं भव सागर हेत जहाजू ॥ ८ ॥
एक बार दरशन कर मोरे । जन्म जन्म के बन्धन छोरे ॥ ९ ॥
सर्व भाव ते श्रेयस्कामी । भजते संत मुझे निशियामी ॥ १० ॥

दोहा- **लोक प्रलोभन वर हित, लोभित किये अपार ।**
किन्तु भक्त प्रहलाद ने, कियो नहीं स्वीकार ॥ ७५ ॥

चौ- बोले नारद फिर सुन राया । नरहरि जब यों वचन सुनाया ॥ १ ॥
वर प्रदान आदिक जे सारे । भक्ति बीच विघन अति डारे ॥ २ ॥
यों कह निज मन सोच विचारा । केशव प्रति यों वचन उचारा ॥ ३ ॥
मैं तो सदा मुमुक्षू सेवक । नहीं नाथ मैं इन वर लायक ॥ ४ ॥
यह वरदान प्रलोभन ईशा । देहू मति मोहीं जगदीशा ॥ ५ ॥
ये जो वचन कहे तुम भगवन । वे सब भक्त परीक्षा कारन ॥ ६ ॥
विषय भोग जेते जग माँही । हिय ग्रन्थी मजबूत कराही ॥ ७ ॥
जनम मृत्यु के चक्कर माँही । डारत बारम्बार सदा ही ॥ ८ ॥
जो सेवक तुम सें वर चाही । सो सेवक कहलावत नाहीं ॥ ९ ॥
जो स्वामी सेवक सें सेवा । चाहत सो स्वामी नहिं देवा ॥ १० ॥

दोहा- **मैं निष्कामी भक्त प्रभो, तुम स्वामी निष्काम ।**
नृप सेवक सम अर्थ का, नहिं दोनों के काम ॥ ७६ ॥

चौ- हे वर दर्पभ यदि वर देउ । तो मम हृदय न काम जगेऊ ॥ १ ॥
इन्द्रिय प्राण आतमा ताता । मन धृतिधर्म व मति विख्याता ॥ २ ॥
सत्य तेज ही श्री स्मृति सारी । कामी जन ते करत किनारी ॥ ३ ॥
महापुरुष हे नरहरि रुपा । करुँ वन्दना पुरुष अनूपा ॥ ४ ॥
भक्त वचन सुनकर प्रभु होले । भक्त राज प्रति वचन सुवोले ॥ ५ ॥
मम एकान्त भक्त जग माँही । निज मुख ते कुछ चाहत नाँही ॥ ६ ॥
तदपि भक्त जव लगि मनवन्तर । भौगहु भोग दैत्यपति वनकर ॥ ७ ॥
सुनौ कथा मोरी सुखदाई । सव प्राणिन मम रूप लखाई ॥ ८ ॥
योगमार्ग में निज चित धरऊ । मम पद पंकज पूजन करऊ ॥ ९ ॥
करहु पुण्य शुभ भोगन द्वारा । नासहु उनते पाप तुम्हारा ॥ १० ॥

दोहा- **भूमी पर सत्कीर्ति का, करके अति विस्तार ।**
वाद कलेवर त्याग कर, पावहु मोक्ष प्रकार ॥ ७७ ॥

चौ- तव मम चरित करहिं जे गाना । छूटहिं कर्मन ग्रन्थि महाना ॥ १ ॥
अव प्रहलाद युँ वचन उचारा । हे नर हरि सुनु कथन हमारा ॥ २ ॥
एक अन्य वर मैं यह चाहूँ । पिता हमारे जे जगदाहू ॥ ३ ॥
तेज आपका वे नहि जाना । यहि हित निन्दा कीन्ह महाना ॥ ४ ॥
वह पवित्र अव होवहु स्वामी । यहि वह चाहऊँ अन्तरयामी ॥ ५ ॥
यह सुन वचन कहे भगवाना । सुत तव कथन सत्य हम माना ॥ ६ ॥
कुल इक्कीस सहित पित तोरे । भये पुनीत तजो भय कोरे ॥ ७ ॥
जिस कुल तुम सम साधू जाता । वह नहि वंश अपावन ताता ॥ ८ ॥
जँह जँह वसहीं भक्त हमारे । सो सव देश पुनीत पुकारे ॥ ९ ॥

दोहा- **भक्ति भाव से कामना, नष्ट भई जिन तात ।**
वे प्राणिन के कारणे, कष्ट नहीं पहुँचात ॥ ७८ ॥

चौ- जो जन तोरे आश्रित जाता । वह भी मेरा भक्त कहाता ॥ १ ॥
हे सुत सव भक्तन के अन्दर । तुमहीं मोंही लागत सुन्दर ॥ २ ॥
यद्यपि अंग स्पर्श कर मोरा । पावन पूर्ण भयो पितु तोरा ॥ ३ ॥
हे सुत यह तव जन्म प्रदाता । मृतक कर्म करहू निज गाता ॥ ४ ॥
पाछे पितुपद पर आसीना । करो राज्य मुझमें हो लीना ॥ ५ ॥

बोले नारद कुन्तीनन्दन । नरहरि के सुनकर इमि वचनन ॥ ६ ॥
अब प्रहलाद नयन भर वारी । कीन्हा अन्तिम कर्म दुखारी ॥ ७ ॥
पाछे वहँ सब द्विजवर आये । नृपपद पर प्रहलाद विठाये ॥ ८ ॥
अब नरहरि को लख विधि राजी । बोले वचन तदा हरि काजी ॥ ९ ॥
देव देव अखिलेश्वर स्वामी । हे पूर्वज तुम अन्तरयामी ॥ १० ॥

दोहा- **जग संतापक दैत्य का, करके वध प्रभु आप ।**
मेटा सारे विश्व का, अब यह सब संताप ॥ ७९ ॥

चौ- मोसे वर पाकर अपराई । यह निज तप बल धर्म नसाई ॥ १ ॥
यह बालक स्वामी तव भक्ता । मृत्युपाश ते तुम किय रिक्ता ॥ २ ॥
किये कर्म सब तुम यह नीका । चलहिं धर्म अब श्रेष्ठ तरीका ॥ ३ ॥
जे नर करहीं ध्यान तुम्हारा । छूटहिं उसका ताप अपारा ॥ ४ ॥
मृत्युपाश ते वह बच जावे । सुपने यम का भय ना खावे ॥ ५ ॥
नरहरि बोले सुनो विधाता । ऐसो वर असुरन हित ताता ॥ ६ ॥
कबहूँ भूल दीजिये नाँही । तुम तो अमृत सर्पन पाही ॥ ७ ॥
बोले नारद नृपति सुजाना । यों कह कर नरहरि भगवाना ॥ ८ ॥
अन्तरध्यान भये सुनु ताता । सर्वभूत पूजित सुर त्राता ॥ ९ ॥
आये जे वहँ सुर मुनिवृन्दन । पूजन कीन्ह कयाधू नन्दन ॥ १० ॥

दोहा- **अब शुक्रादिक सब मुनि, सुर विधि को ले साथ ।**
करके उस प्रहलाद को, दैत्य व दानव नाथ ॥ ८० ॥

चौ- हर्षित हो निज धाम सिधारे । नरहरि की जयकार उचारे ॥ १ ॥
धर्मराज हरि अनुव्रत दोऊ । एवं दिति सुत वन कर सोऊ ॥ २ ॥
हृदय बीच स्थित हरि के द्वारा । हनन किये अरिभाव अपारा ॥ ३ ॥
पाछे कुंभकरण दशग्रीवा । राक्षस भये सुनों नरसींवा ॥ ४ ॥
दोऊ राम बाण के द्वारा । भिन्न हृदय महि गिरे करारा ॥ ५ ॥
वे अब दन्तवक्र शिशुपालू । हरि ते बाँधेउ वैर नृपालू ॥ ६ ॥
देखत सब हरि बीच समाये । दूजे नृप भी इन संग आये ॥ ७ ॥
वे सब पूर्वकर्म अनुसारी । वैरभाव करि ध्यान अपारी ॥ ८ ॥
भये मुक्त सब पाप विहाई । हे नृप चैधादिक नरराई ॥ ९ ॥
कीन्हो वैर यथा शिशुपालू । हरि समता पायउ इस कालू ॥ १० ॥

दोहा- **जो पूछेउ तुम हाल नृप, सो सब सह विस्तार ।**
हमने वर्णन कर दिया, निज मति के अनुसार ।। ८१ ।।

चौ- कथा नृसिंह दैत्य वधकारी । कथा कयाधूनन्दन सारी ।। १ ।।
विरति व ज्ञान भगति सुखकारी । मिलहिं जासु हरि पावन हारी ।। २ ।।
विपर्यास दानव सुर स्थाना । धर्म भागवत भी किय गाना ।। ३ ।।
आत्म अनात्म अग्यान प्रकारा । कीन्हा वरणन यह हम सारा ।। ४ ।।
करहिं कीरतन सुनहिं जे येही । कर्मपाश ते छूटहिं देही ।। ५ ।।
कनककशिपु वध नरहरि लीला । यह प्रहलाद चरित मति शीला ।। ६ ।।
पढहिं सुनहिं जे अनुभव करहीं । बसि वैकुंठ अमरफल लहहीं ।। ७ ।।
धन्य भाग्य नृपलोक तुम्हारे । आवत जो घर रिपिमुनि सारे ।। ८ ।।
परमब्रह्म साक्षात कृपालू । वसत गेह तव गूढ नृपालू ।। ९ ।।
हेरत महापुरुष जिन राई । तदपि न वे दरसन उन पाई ।। १० ।।

दोहा- **जो तुम सबके मित्रवर, परम हितैषी तात ।**
मातुल सुत गुरु पूज्य ये, कृष्ण चन्द्र कहलात ।। ८२ ।।

चौ- जिन स्वरूप विधि सुर सह शंकर । वरणन करत थकित सब मुनिवर ।। १ ।।
तदपि पार जिनका नहिं पाये । सो भगवान मुदित यहँ आये ।। २ ।।
पुरा मयासुर द्वारा खंडित । शिव कीरति इन रखी अखंडित ।। ३ ।।
देवरिषी की सुन इमि बानी । कहे युधिष्ठिर नृप अति ज्ञानी ।। ४ ।।
रुद्र कीरति इन प्रभु द्वारा । वर्धित भइ मुनि कवन प्रकारा ।। ५ ।।
सब प्रसंग कहु मोंहि सुनाई । बोले नृप से अब मुनिराई ।। ६ ।।
जीते राक्षस देवन द्वारा । गये शरण मय दुखित अपारा ।। ७ ।।
तब मय हेम रजत युत लोहा । पुर निरमान किये कर कोहा ।। ८ ।।
वे पुर उन असुरन प्रति देकर । किये अभय मय सब रजनीचर ।। ९ ।।
अर्रु वे कर उन बीच निवासा । लोक पतिन सह लोकन नासा ।। १० ।।

दोहा- **अमर वृन्द अब दुखित हो, गये शंभु के पास ।**
तब शंकर ने हे नृप, उन्हे बँधाई आस ।। ८३ ।।

चौ- बाद धनुष पर शर संधाना । त्यागा उन पुर पर भगवाना ।। १ ।।
रवि मंडल ज्यों रश्मि समूहा । अग्नि सहश त्यों शर यूहा ।। २ ।।
पुरवासी उन बाणन द्वारा । भये मृतक महिं गिरे अपारा ।। ३ ।।
तब मायावी मय ने सारे । सुधाकूप रस अन्दर डारे ।। ४ ।।

स्पर्शत अब पुरवासी अमृत । भये वज्र सम दृढ तनु उन मृत ॥ ५ ॥
जीवित होकर ठाढे सारे । लख संकल्प भग्न शिव धारे ॥ ६ ॥
कीन्हा उपाय एक जगदीश्वर । मोहित कीन्हे सब रजनीचर ॥ ७ ॥
विधि को अब निज वत्स बनावा । स्वयं विष्णु गौ रूप धरावा ॥ ८ ॥
गये जहाँ वे अमृत कूपा । पी गय अमृत ज्योति स्वरूपा ॥ ९ ॥
देखत रहे असुर वे सारे । पर नहि मुख कछु वचन उचारे ॥ १० ॥

दोहा- **दैव गति यह जान मन, मय कर शोक अपार ।**
उन रस पालन ते अब, बोला गिरा उचार ॥ ८४ ॥

चौ- देव असुर नर अन्य व कोई । दैव विनाश समर्थ न होई ॥ १ ॥
ईश्वर बिना अनन्य न कोई । दैव विनाश समर्थ जो होई ॥ २ ॥
पाछे ये श्रीकृष्ण खरारी । धर्म व ज्ञान क्रिया अनुसारी ॥ ३ ॥
रथ युत सूत ध्वजादिक वाहन । कवच धनुष शर रण के साधन ॥ ४ ॥
रचे शंभु हित सुनौ नरेशा । सावधान अब भये उमेशा ॥ ५ ॥
रथ चढ़कर शर धनुष चढावा । बीच अभीजित काल चलावा ॥ ६ ॥
भये दग्ध वे पुर शर द्वारा । भये देवता मुदित अपारा ॥ ७ ॥
सुरपुर बीचे बजे नगारे । सुरतिय सुन्दर कुसुम उछारे ॥ ८ ॥
सिद्ध व पितर देव रिषि सारे । जयति शंभु इति वचन उचारे ॥ ९ ॥
गावत गायक शिव गुण गाना । करती नृत्य अप्सरा नाना ॥ १० ॥

दोहा- **मय मायावी रचित पुर, सब शिव दिये जलाय ।**
ब्रह्मादिक अर्चित पुनि, शंभू गये सिधाय ॥ ८५ ॥ क
हे नृपवर यों रुद्र की, कीरति का विस्तार ॥
कीन्हा इन श्रीकृष्ण ने, जिनके चरित अपार ॥ ८५॥ख

चौ- जिनके चरित जगत को पावन । करते सदा सुनो कुरु नन्दन ॥ १ ॥
आगे कवन कथा कहुँ तोसे । पूछो अरे युधिष्ठिर मोसे ॥ २ ॥
कहत व्यास सुत अति गतिशीला । सुन प्रहलाद व नरहरि लीला ॥ ३ ॥
भये युधिष्ठिर मुदित अपारा । पाछे मुनि प्रति वचन उचारा ॥ ४ ॥
मानव धर्म सनातन स्वामी । सदाचार वर्णाश्रम नामी ॥ ५ ॥
मानव सदाचार के द्वारा । पावत भक्ति व ज्ञान अपारा ॥ ६ ॥
तुम मुनि सुत साक्षात विधाता । सब पुत्रन में मानित ताता ॥ ७ ॥
तुम सब गूढ धरम के ज्ञाता । कहु अब धर्म सनातन ताता ॥ ८ ॥

बोले नारद सुनो युधिष्ठिर । धर्म सनातन कहू समझाकर ॥ ९ ॥
करें प्रथम हम भगवत वन्दन । पाछे वरणूँ धर्म सनातन ॥ १० ॥

दोहा- **जनम मरण से रहित जो, सब धर्मन के मूल ।**
सर्व चराचर जगत के, रहते है अनुकूल ॥ ८६ ॥

चौ- पुत्री दक्ष धरम की नारी । मूरति जासू नाम पुकारी ॥ १ ॥
उनके घर प्रभु बन अवतारी । करत बद्रिकाश्रम तप भारी ॥ २ ॥
सर्व वेदमय हरिहि बखाना । मूल धरम के वहि भगवाना ॥ ३ ॥
जिनके सुमिरन ते हे राई । दुरित दुराशा त्वरित नसाई ॥ ४ ॥
लक्षण तीस धर्म के गाये । नारायण निज मुख फरमाये ॥ ५ ॥
सत्य दया तप शौच तितीक्षा । शम दम दान अहिंसा ईक्षा ॥ ६ ॥
आर्जव ब्रह्मचर्य व्रत भारी । सत्सेवा संतोष अपारी ॥ ७ ॥
प्रवृत्ति कर्म निवृति अरु मौना । आत्म अनात्म विचार सलौना ॥ ८ ॥
निष्फल क्रिया निरीक्षण राया । लखहिं जीव बिच ईश्वर छाया ॥ ९ ॥
अन्नादिक संभाग विभाजन । करे अध्ययन निशिदिन राजन ॥ १० ॥

दोहा- **गाये मैनें धर्म के, लच्छन पांडव राय ।**
अब भकती के भी कहुँ, लच्छन सब समझाय ॥ ८७ ॥

चौ- श्रवण कीरतन सुमिरन अरचन । दास्य नम्रता हरि पद मर्दन ॥ १ ॥
सखा भाव निज आत्म समर्पण । ये नवधा भक्ति के लच्छन ॥ २ ॥
इन समेत धरम के तीसा । लच्छन भये सुनो नर ईशा ॥ ३ ॥
इनके पालनते सुन राया । होत मुदित भगवान सवाया ॥ ४ ॥
अब ब्राह्मण के लक्षण सारे । सुनो युधिष्ठिर वदन हमारे ॥ ५ ॥
जिनके कुल में होय अखंडित । चतुरातन द्वारा जो स्वीकृत ॥ ६ ॥
षोडश संस्कार युत लोगू । सोही द्विज कहलावन जोगू ॥ ७ ॥
द्विज हेतू शुभ कर्म विधाना । व्रत आश्रम स्वाध्याय व दाना ॥ ८ ॥
प्रतिग्रह अरु याजन अध्यापन । ये सब द्विज वृत्ति के साधन ॥ ९ ॥
क्षत्रिय दान कदापि न लेही । प्रजा संग सब काल सनेही ॥ १० ॥
करे जीविका साधन राजू । कर वसूल कर सभी समाजू ॥ ११ ॥
किन्तु विप्र ते कर ना लेही । यही जीविका साधन तेही ॥ १२ ॥

सोरठा- **आवत आपतकाल, याजन अध्यापन करे ।**
लेवे खड्ग संभाल, जब क्षत्री विपता टरे ॥ १ ॥

चौ- वैश्य वृत्ति कृषि वणिज प्रकारू। चले सदा द्विज कुल अनुहारू ॥ १ ॥
शूद्र वृत्ति द्विज कुल की सेवा । विप्र वृत्ति फिर सुनु नर देवा ॥ २ ॥
विप्र वृत्ति मुनि चार प्रकारी । वार्ता अरु शालीन प्रकारी ॥ ३ ॥
यायावर सु शिलोंछन राई । उत्तरोत्तर ये श्रेष्ठ कहाई ॥ ४ ॥
निम्न वर्ण नर विना विपत्ती । करहिं न उत्तम वर्णन वृत्ती ॥ ५ ॥
क्षत्रिय दान कदापि ने लेही । द्विज वृत्ति स्वीकृत सब तेही ॥ ६ ॥
आपत काल यदा शिर चढहीं । सब वृत्तिन को सब कर सकहीं ॥ ७ ॥
ऋतु अमृत सत्यानृत राई । मृत प्रभृत ये वृत्ति कहाई ॥ ८ ॥
इन वृन्तिन का आश्रय धारे । किन्तु न श्वान वृत्ति स्वीकारे ॥ ९ ॥
वृत्ति शिलोंछन ऋत कहलाई । वृत्ति अपाचित अमृत गाई ॥ १० ॥

दोहा- **भिक्षा वृत्ति मृत कही, अरु कृषि प्रभृत कहाय ।**
वणिज कर्म सत्यानृत, वृत्तिन भेद लखाय ॥ ८८ ॥

चौ- श्वान वृत्ति नीचन की सेवा । सजे सदा यहि द्विज नरदेवा ॥ १ ॥
सर्व देव मय विप्र वखाना । राजा सर्व देव मय माना ॥ २ ॥
एकादश ब्राह्मण के लक्षण । रहे सदा हरि बीच परायण ॥ ३ ॥
शम दम तप संतोष अपारी । सत्य व ज्ञान दया हिय धारी ॥ ४ ॥
शौच सरलता क्षमता भारी । इन लक्षण ते विप्र पुकारी ॥ ५ ॥
शौर्य वीर्य धृति तेज प्रसादा । त्याग मनोजय क्षमता ज्यादा ॥ ६ ॥
विप्रन पद प्रति प्रेम अथाहू । करें प्रजा पालन निज बाहू ॥ ७ ॥
ये दश लक्षण क्षत्रिन साँचे । देव गुरु हरि पद मन राचे ॥ ८ ॥
परिपोषण त्रिवर्ग निपुणता । उद्यम नित्य अउर आस्तिकता ॥ ९ ॥
वैश्य वर्ण के ये शुभ लच्छन । कीन्हे हे नरपति हम वरणन ॥ १० ॥

दोहा- **स्वामी सेवा शूद्रजन, करें कपट छल त्याग ।**
गौ विप्रन रक्षक बने, राखहिं सत अनुराग ॥ ८९ ॥

चौ- चौरी कर्म न कबहूँ करहीं । नत मस्तक सब प्रति नित रखहीं ॥ १ ॥
सत्य वचन निज मुख ते गावे । विन मंत्रन के यज्ञ रचावे ॥ २ ॥
नार धरम के लच्छन चारी । करहीं पति नियमन रखवारी ॥ ३ ॥
पति सेवा पति प्रति अनुकूला । पति बन्धुन प्रति नहिं प्रतिकूला ॥ ४ ॥
लेपन मार्जन चौक पुराई । रहे सदा श्रृंगार सजाई ॥ ५ ॥
राखे सब सामान सुधारी । चाले पति की रुचि अनुसारी ॥ ६ ॥

विनय व इन्द्रिय संयमधारी । सत्य व अतिप्रिय वचन उचारी ॥ ७ ॥
करे सदा पति सेवा भारी । शुचि निज धर्म कर्म अनुसारी ॥ ८ ॥
तुष्ट अलोलुप सह चतुराई । हास्य युक्त सत वचन सुनाई ॥ ९ ॥
होवहिं पति यदि पतित जरासा । करहि न तासु संग सहवासा ॥ १० ॥

दोहा- **जो नारी हरि भावते, भजती यदि निज कान्त ।**
लक्ष्मी सम वैकुंठ में, पति सह वसै नितान्त ॥ ९० ॥

चौ- अन्त्यज संकर रजक चमारा । हिंसा चौरि व पाप प्रकारा ॥ १ ॥
तज सब निज कुल आगत वृत्ती । राखहिं इन में ये अनुरक्ती ॥ २ ॥
इह परत्र यह मानव धर्मा । सुख कृत कथित किये सब कर्मा ॥ ३ ॥
हे नृप निज वृत्तिन के द्वारा । करत काम निज सभी प्रकारा ॥ ४ ॥
शनै शनै वह कर्म तजाई । गुणातीत वन जावत राई ॥ ५ ॥
यथा खेत को बारम्बारा । बोयत होवत निर्वल सारा ॥ ६ ॥
जमहिं न अंकुर किसी प्रकारा । बीज नष्ट हो जावत सारा ॥ ७ ॥
इमि अति कामाक्षत चित्त जेहू । होत शमन अतिकाम करेहू ॥ ८ ॥
अनल यथा अति घृत के डारे । होत शान्त वह सभी प्रकारे ॥ ९ ॥
हे नृप जिस मानव के लक्षण । कीन्हे हमने जो सब वरणन ॥ १० ॥

दोहा- **मिलहिं वर्ण विपरीत में, ये लक्षण यदि राय ।**
जानहु उसका वर्ण वहि, करे वेदविद् गाय ॥ ९१ ॥

चौ- गुरु कुल बीचे करे निवासा । ब्रह्मचारि बन कर गुरु दासा ॥ १ ॥
गुरु पद कंजन में अनुरागी । गुरु हित काज करहिं छल त्यागी ॥ २ ॥
करें उपासन सायं प्राता । गुरु अगनी रवि सुर वर ताता ॥ ३ ॥
करहीं ब्रह्म जाप त्रय कालू । उभय काल विच मौन नृपालू ॥ ४ ॥
निज समीप जब गुरू बुलावे । मुदित होय उन सन्मुख जावै ॥ ५ ॥
पूर्णतया रह कर अनुशासन । करे पठन उनते सब वेदन ॥ ६ ॥
आदि अन्त में करे प्रणामा । गुरु पद पंकज पूरण कामा ॥ ७ ॥
दर्भ पाणि अजिताम्बर धारी । दंड मेखला जटा सुथारी ॥ ८ ॥
हाय कमंडल गले जनेऊ । सदा सुमंगल काम करेऊ ॥ ८ ॥
लाकर भिक्षा सायं प्राता । करे निवेदन गुरुप्रति ताता ॥ १० ॥

दोहा- **गुरु आज्ञा लेकर पुनि, करे सुभोजन जाय ।**
निज गुरु के आदेश विना, तनिक नहीं वह खाय ॥९२॥

चौ- यदि गुरु की आज्ञा ना पावे । उस दिन वह उपवास रखावे ॥ १ ॥
मित भुक दक्ष सुशील श्रृधालू । रहे जितेन्द्रिय और दयालू ॥ २ ॥
तिय लोभीजन अरु तिय संगा । जब लगि कारज करे प्रसंगा ॥ ३ ॥
प्रमदा गाथा व्रती तजावे । इन्द्रिय सब बलवान कहावे ॥ ४ ॥
खींचत ये चित को निज ओरा । करो उपाय रहे पर कोरा ॥ ५ ॥
युवा ब्रह्मचारी यदि होई । गुरुपत्नी युवती हो कोई ॥ ६ ॥
केश प्रसाधन मर्दन स्नाना । उबटन आदिक कर्म विधाना ॥ ७ ॥
इनते ये नहि कर्म करावे । भूल नहीं एकान्त बिठावै ॥ ८ ॥
अगनी रूपा नारी गाई । मानव घृत घट सम कहलाई ॥ ९ ॥
एकान्त बीच निज पुत्रिन संगा । करहि न वार्तालाप प्रसंगा ॥ १० ॥

दोहा- **जब लगि पुरुष व नार का, मिटहि न मन ते भेद ।**
तब लगि चालहिं द्वैत यह, मिटहिं न मन का खेद ॥९३॥

चौ- जब लगि नार पुरुष के संगा । भौग्य बुद्धि निश्चित उस अंगा ॥ १ ॥
इमि ग्रहस्थ भी यदि ऋतुगामी । वह भी ब्रह्मचारि नहि कामी ॥ २ ॥
धृत व्रत आभ्यञ्जन अरु मर्दन । चित्र लिखित तिय तजु मृदु भोजन ॥ ३ ॥
इत्र फुलेल व फूलन हारा । त्यागे चन्दन भूषण सारा ॥ ४ ॥
मधु आमिष सम्बन्ध हटावे । सात्विक वृत्तिन में चित लावे ॥ ५ ॥
एवं द्विज गुरु गेह निवासी । अंग सहित वेदन अभ्यासी ॥ ६ ॥
गुरुपद पंकज भेट चढाई । गुर आज्ञा ले व्रतधर राई ॥ ७ ॥
गुरुपद पंकज निज चित लाही । जावे निज घर वा बन माँही ॥ ८ ॥
अगनि गुरू आत्मा अरु भूतन । देखें इन बिच ब्रह्म सनातन ॥ ९ ॥
गृहस्थ व वानप्रस्थ ब्रह्मचारी । मुनि संयत नियमन हिय धारी ॥ १० ॥

दोहा- **विचरत इत उत अंत में, पावत वह हरि धाम ।**
वान प्रस्थ के नियम अब, मुझसे सुनो तमाम ॥ ९४ ॥

चौ- जिन नियमन को करके सारे । ऋपि लोकन बीचे पगु धारे ॥ १ ॥
कृमि युत अन्न कदापि न खाही । कृमि विहीन अकालिक नाँही ॥ २ ॥
अग्नी पक्वन खावहिं आमी । खावहिं अर्क पक्व फल नामी ॥ ३ ॥
पुरोडाश चरु वन्यज शाली । करहीं हवन पर्व पर खाली ॥ ४ ॥
नूतन अन्न यदा मिल जावे । जीर्ण अन्न को तुरत तजावे ॥ ५ ॥
सेवा अनल हेतु व्रतधारी । पर्णकुटी गिरिदरि हित कारी ॥ ६ ॥

वर्षा अनल हेम अरु वाता । सहहीं अर्क ताप निज गाता ॥ ७ ॥
अजिन व दंड कमंडल धारी । केश रोम नख जटिल प्रसारी ॥ ८ ॥
एवं द्वादश हायन राई । विचरत विपिन मुनी समुदाई ॥ ९ ॥
जरा व्याधि ते पीडित गाता । जब निज क्रिया समर्थ न जाता ॥ १० ॥

दोहा- **करहीं अनशन तव व्रती, मैं ममपन को त्याग ।**
निज आत्मा में अग्नि को, करें लीन तजि राग ॥ ९५॥

चौ- निज निज तत्व के अनुसारी । करे लीन तनु भली प्रकारी ॥ १ ॥
देह छिद्र नभ श्वासन वाता । ऊष्ण तेज जल लोहित गाता ॥ २ ॥
क्षिति विच अस्थि व माँस विलीना । स्थूल शरीर करें इमि लीना ॥ ३ ॥
वाती अगनि चरण हरि लाहे । इन्द्र बीच दोऊ हस्त लगाहे ॥ ४ ॥
रति व उपस्थ प्रजापति लीना । पायू मृत्यु के आधीना ॥ ५ ॥
अनिल स्पर्श दिशा दोउ काना । रूप सुभानु मही विच घ्राना ॥ ६ ॥
रसयुत जीहा जलपति जावे । मन बुद्धि विधु ब्रह्म लगावै ॥ ७ ॥
अहंकार शंकर स्थित करहीं । सत्व बीच वह निज चित धरहीं ॥ ८ ॥
गुण वैकारिक जीवहिं राई । त्वरित ब्रह्म विच लीन कराई ॥ ९ ॥
जल बिच महि जल तेज अधीना । तेज वात बिच वात खलीना ॥ १० ॥

दोहा- **अहंकार के बीच में, नभ को करे विलीन ।**
अहंकार को हे नृप, करे प्रधान अधीन ॥ ९६ ॥

चौ- करें जीव में लीन प्रधाना । करें जीव को लय भगवाना ॥ १ ॥
सर्व उपाधि हीन इमिराई । शेष वस्तु चिन्मात्र लखाई ॥ २ ॥
होवहिं स्थित वह अद्वय भावा । दग्ध काष्ट के अनल प्रभावा ॥ ३ ॥
शान्त होय कर करें रुकाई । उपरत प्राप्त करें त्यों राई ॥ ४ ॥
ज्ञान हेतु जब रहे समर्था । तब सन्यास धरे इस अर्था ॥ ५ ॥
एक रात्रि ते ना अधिकाई । वसे ग्राम बिच यक यति राई ॥ ६ ॥
हों निरपेक्ष मही पर विचरे । तजि कौपीन वसन ना पहरे ॥ ७ ॥
दंड कमंडल निजकर धारी । आपत काल सभी स्वीकारी ॥ ८ ॥
रहहिं शान्त भगवत लवलीना । समदर्शी सब आश्रय हीना ॥ ९ ॥
आत्मा बीचे देखहिं ईश्वर । ईश्वर बीच लखे जग नश्वर ॥ १० ॥

दोहा- **बोध सुसुप्ति संधि में, निज स्वरूप पहचान ।**
बन्ध मोक्ष को सर्वदा, माया निज मन मान ॥ ९७ ॥

चौ- मृत्यु ध्रुव अध्रुव लखि जीवन । होय मुदित ना रंजित निजमन ॥ १ ॥
प्राणिन उत्पत्ति लय कारी । करहिं प्रतीक्षा काल करारी ॥ २ ॥
असत शास्त्र विच रुचि ना लाही । वाद विवाद वितंड तजाही ॥ ३ ॥
अनेक शिष्य की नाहीं आसा । करहिं न ग्रंथन अति अभ्यासा ॥ ४ ॥
मठ अरु आश्रम नहीं बनावे । सदा शान्त सम चित्त लखावे ॥ ५ ॥
जब लगि प्राप्त होत नहि ज्ञाना । चले शुद्धि हित नियम प्रमाना ॥ ६ ॥
तजे नियम जब पावहिं ज्ञाना । चिन्ह त्याग कवि बाल समाना ॥ ७ ॥
मानव दृष्टि न बीचे ऐसा । दीख परै यह गूँगा जैसा ॥ ८ ॥
परम हँस अब धर्म दिखाऊँ । नृपवर इक सँवाद सुनाऊँ ॥ ९ ॥
अत्रि सुत प्रहलाद सुगाथा । सुनौ ध्यान देकर नर नाथा ॥ १० ॥

दोहा- **एक बार भगवत प्रिय, दानवेन्द्र प्रहलाद ।**
कुछ मन्त्रिन को साथ ले, तजकर सभी विवाद ॥९८॥

चौ- लोक तत्व जिज्ञासा हेतु । गये मही पर दनुकुलकेतू ॥ १ ॥
फिरत फिरत कावेरी तीरा । पहुँचे शिखर सप्त गिरि वीरा ॥ २ ॥
शयन करत देखी मुनि एकी । धूलि व्याप्त तनु गुप्त विवेकी ॥ ३ ॥
कर्माकृति आश्रम अरु वानी । परहिं न वर्ण चिन्ह पहिचानी ॥ ४ ॥
उन मुनि हेतू किये प्रणामा । जिज्ञासु प्रहलाद ललामा ॥ ५ ॥
बोले वच पद सीस नवाई । उद्योगी भोगी नर नाँई ॥ ६ ॥
हृष्ट पुष्ट यह देह तुम्हारी । भई मुनीश्वर कवन प्रकारी ॥ ७ ॥
नियम अहो मुनि यहि संसारू । मिलहिं द्रव्य उद्योगिन भारू ॥ ८ ॥
मिलहिं भोग भी उन धनवन्ता । रहहि देह भोगिन बलवन्ता ॥ ९ ॥
इस सिवाय कारण नहि दूसर । तुम तो उद्यमहीन मुनीश्वर ॥ १० ॥

दोहा- **नाथ तुम्हारी देह फिर, पीवर कवन प्रकार ।**
जानहु यदि मन में उचित, करहु मोहिं निर्धार ॥ ९९ ॥

चौ- आप समर्थ चतुर विद्वाना । सर्वभूत प्रिय योग निधाना ॥ १ ॥
लोक कर्म कृत वीक्षित ताता । शायित तदपि मुदित निज गाता ॥ २ ॥
देवरिपि बोले इति राई । पूछा मुनि सब सीस नवाई ॥ ३ ॥
बोले वचन तदा अवधूता । सुनो कयाधू तनू प्रसूता ॥ ४ ॥
यही हेतु हे दनुज सयाना । करत श्रेष्ठजन तव सम्माना ॥ ५ ॥
प्रवृति निवृति का जो फल मिलहीं । ज्ञान चक्षु से तुम सब लखहीं ॥ ६ ॥

वे हरि सदा हृदय तव वसहीं । जो अज्ञान नष्ट सब करहीं ॥ ७ ॥
तदपि प्रश्न पूछेउ जे राई । तव प्रति कहूँ सकल समुझाई ॥ ८ ॥
नाना योनी बीच भ्रमाई । आवा मनुज देह मैं राई ॥ ९ ॥
जो अपवर्ग स्वर्ग का द्वारा । वरणन कीन्हा भली प्रकारा ॥ १० ॥

दोहा- **इस मानव तनु के लिये, सुख हित कर्म अनेक ।**
मानव करते कर्म बहु, किन्तु न सुख लहे एक ॥ १००॥

चौ- आशाहीन मनोरथ सारा । भोग निरर्थक सभी प्रकारा ॥ १ ॥
ये सब बातें लखकर राया । सब करमन ते भयो जुदाया ॥ २ ॥
एवं निज स्वारथवश मूढ़ा । होवत संसृति बीच अरूढा ॥ ३ ॥
नर तृण छादित नीर तजाई । मृग तृष्णा अनुधावत राई ॥ ४ ॥
जासु भाग्य ना करत सहाई । तासु क्रिया सब निष्फल गाई ॥ ५ ॥
दुख रूपी कर्मन के द्वारा । पावत शान्ति न किसी प्रकारा ॥ ६ ॥
मिलता दुख धन लोभी जन को । भयवश नींद न आवत उसको ॥ ७ ॥
नृप तस्कर पशु पक्षिन द्वारा । प्राण अर्थ भय सभी प्रकारा ॥ ८ ॥
शोक मोह भय क्रोध व रागा । श्रम अरु क्लैव्य द्रव्य जड़ भागा ॥ ९ ॥
यही हेतु धन बीचे पंडित । राखहिं स्पृहा नहीं गुण मंडित ॥ १० ॥

दोहा- **मधु मख्खी अरू अजगर, मम गुरु सुन्दर जान ।**
सीखेउ त्याग विरक्ति, इनते मैं नृपति सुजान ॥ १०१ ॥

चौ- मधुवत नर धन संचय करहीं । पूरब पति हनि दूसर भजहीं ॥ १ ॥
यही हेतु सब काम तजाई । भयो विराग मोहिं दनुराई ॥ २ ॥
पाई यह शिक्षा मधुमाखी । कर संचय मधु जिन नहीं चाखी ॥ ३ ॥
इच्छा रहित मिलहि कुछ थोरा । करत गुजर अजगर निज ठौरा ॥ ४ ॥
बहुत दिवस तक मिलत न तेहू । तदपि न चिन्ता व्यापत जेहू ॥ ५ ॥
यह शिक्षा अजगर से पाई । करूँ गुजर अजगर सम राई ॥ ६ ॥
रहूँ स्वाद के नहीं अधीना । खाऊँ स्वाद व स्वाद विहीना ॥ ७ ॥
मिले मानयुत वा अपमाना । दिवस निशा बीचे कुछ पाना ॥ ८ ॥
मिलहिं अन्न मोहिं किसी प्रकारा । खाकर हे नृप करूँ गुजारा ॥ ९ ॥
कबहूँ अजिन दुकूल व क्षोमा । वल्कल चीर धरुँ किसि योमा ॥ १० ॥

दोहा- **कबहूँ पृथ्वी अरु तृण, अश्म भस्म प्रसाद ।**
शयन करूँ पर्यङ्क पर, सुन हे नृप प्रहलाद ॥ १०२ ॥

चौ- कबहूँ स्नान अलंकृत भारी । विचरूँ रथ इन अश्व सवारी ॥ १ ॥
कबहूँ विचरूँ होय दिगम्बर । कबहूँ मत्त समाँ इस भूपर ॥ २ ॥
मान निरादर किसी प्रकारा । करूँ नहीं मैं कभी विचारा ॥ ३ ॥
होवत मानव विषम सुभाऊ । करहुँ न निन्दा स्तुति उन राऊ ॥ ४ ॥
केवल चाहूँ मनुज भलाई । हरि पद ते ना कभी जुदाई ॥ ५ ॥
कबहुँ न देखे भेद विभेदा । खोजहिं सत्य सदा तजि खेदा ॥ ६ ॥
सात्विक अहंकार विच निजमन । सात्विक को कर माया अरपन ॥ ७ ॥
माया आत्मा बीच लगावे । सत्यद्दष्ट मुनि यों कर पावे ॥ ८ ॥
हों निरीह सब विधि उपरंता । उपरत प्राप्त करे मुनि संता ॥ ९ ॥
निज परिचय अति गुप्त अपारा । लोक व शास्त्र परे यह सारा ॥ १० ॥

दोहा- तुम भगवत के अतिप्रिय, यही हेतु दनुराज ।
गुप्त ज्ञान वरणन किया, सब विधि तव प्रति आज ॥१०३॥

चौ- मुनिमुख परम हंस के लच्छन । सुन कर मुदित भये नृप निजमन ॥ १ ॥
पाछे मुनि पद पूजन कीन्हा । गये गेह नृप आशिष लीन्हा ॥ २ ॥
धर्मराज बोले मुस्काई । मो सम गृहस्थ सुनो मुनिराई ॥ ३ ॥
पावत पद सन्यासिन जासू । सो विधि मोहिं सुनावहु खासू ॥ ४ ॥
बोले नारद पाँडव राई । गेह बीच निज चित लगाई ॥ ५ ॥
करके क्रिया गृहोचित सारी । अरपन करे सदा बनवारी ॥ ६ ॥
रिषि मुनि जन की सेवा सुन्दर । करे प्रेम से नित चित धरकर ॥ ७ ॥
हरि अवतार कथामृत कानन । श्रृद्धा सहित सुनै अघ नाशन ॥ ८ ॥
आत्मज और अनात्मज संगा । तज दे इनको कर सत्संगा ॥ ९ ॥
भीतर विरत रहे वहि रागी । अति व्यवहार मनुज सन त्यागी ॥ १० ॥

सोरठा— मात पिता सुत भ्रात, वचन कहे इच्छा करे ।
होकर निर्भय गात, अनुमोदन उनका करे ॥ २ ॥

चौ— दिव्यज अन्न भोग धन सारा । प्राप्त अचानक किसी प्रकारा ॥ १ ॥
अपर द्रव्य जो जग में गाये । ईश्वर दत्त सभी कहलाये ॥ २ ॥
भोगहु भोग भाग्य अनुसारा । संचय करहि न किसी प्रकारा ॥ ३ ॥
धन तो साधुन सन्तन सेवा । करे खर्च पूजन हित देवा ॥ ४ ॥
इस धन का नर नहि अधिकारी । करे खर्च केवल क्षुधहारी ॥ ५ ॥
या ते अधिक द्रव्य को राया । संचित कृत नर तस्कर गाया ॥ ६ ॥

अधिक द्रव्य का संचय कर्ता । दंडनीय जानहु नर भर्ता ॥ ७ ॥
मृग वृष उष्ट्र कीश खर आखू । अहि सरिसृप खग अरु मधुमाखू ॥ ८ ॥
समझे इनको पुत्र समाना । सुत अरु इन विच भेद न माना ॥ ९ ॥
धर्म अर्थ अरु काम सुगेही । वहुत कष्ट युत कवहुँ न सेही ॥ १० ॥

दोहा- **देश काल प्रारब्धवश, जो कुछ भी मिल जाय ।**
संतोषी उसमें रहे, सद गेही नर राय ॥ १०४ ॥

चौ- शुपच व श्वान पतित पर्यन्ता । भोज्य विभाजन दे इन अन्ता ॥ १ ॥
शेष वस्तु जो कुछ बच जावे । उसको ही निज काम लगावे ॥ २ ॥
सेवा अतिथिन की सह नारी । करें कुन्तिसुत सभी प्रकारी ॥ ३ ॥
जे हित प्राण पितर गुरु त्यागे । राखहिं तिय संग मोह अभागे ॥ ४ ॥
विजय नार पर जिसने पाई । सो नर ईश्वर जीत कहाई ॥ ५ ॥
कृमि विष्ठा भस्मीयुत देही । जिस हित बने मनुज तिय स्नेही ॥ ६ ॥
पंचयज्ञ अवशेषित जेही । कल्पित वृत्ति करे निज गेही ॥ ७ ॥
प्राज्ञ मनुज का किसी प्रकारा । शेष वस्तु पर ना अधिकारा ॥ ८ ॥
शेष वस्तु से जो धन मिलही । सदा देव रिषि पूजन करही ॥ ९ ॥

दोहा- **मिले यदा प्रारब्ध वश, यज्ञादिक साहित्य ।**
करके हवनादिक तभी, पूजें हरिपद सत्य ॥ १०५ ॥

चौ- देत विप्र मुख आहुति राई । होवत नर पर हरि मुदिताई ॥ १ ॥
तथा अगनि मुख आहुति देहे । होवत मुदित नही हरि तैहे ॥ २ ॥
यही हेतु ब्राह्मण उरवासी । पूजें ईश्वर त्याग उदासी ॥ ३ ॥
आश्विन कृष्ण पक्ष द्विज गेही । करें श्राद्ध पितरन अतिस्नेही ॥ ४ ॥
अयन विषु व दिन क्षय व्यतिपाता । द्वादशि पर्व चन्द्र रथि जाता ॥ ५ ॥
श्रवण धनिष्ठा अरु अनुराधा । नवमी शुक्ल ऊर्ज तजि व्याधा ॥ ६ ॥
माधव शुक्ल तृतीया आई । असित अष्टमी हिम शिशिराई ॥ ७ ॥
माघ शुक्ल सातें तिथि आई । राका मघा समागम पाई ॥ ८ ॥
मास ऋक्ष युत अनुमति राका । करें श्राद्ध प्रतिमास अमाका ॥ ९ ॥
श्रवण द्वादशी तीनों उत्तरा । जन्म नरवत हरिवासर चितरा ॥ १० ॥

दोहा- **हे नृप ये सब मनुज का, श्रेय विवर्धन काल ।**
इनमें श्राध्दादिक करे, तो नर होत निहाल ॥ १०६ ॥

चौ- दान हवन जप इन बिच कीजे । अक्षय पुण्य प्राप्त कर लीजे ॥ १ ॥

गर्भाधानादिक पर जाया । जातकर्म आदिक सुत पाया ॥ २ ॥
मृतक कर्म आदिक पर कोई । दान धर्म कर जो खुश होई ॥ ३ ॥
कर्म माँगलिक अन्य बताये । दान धर्म शुभ काल कहाये ॥ ४ ॥
पुण्य देश हे नृप ये गाये । धर्म करे जहँ अति फल पाये ॥ ५ ॥
जहँ सत्पात्र विप्र हरि भक्ता । सोही पुण्य देश सब उक्ता ॥ ६ ॥
होवहिं जहाँ कथा हरि पूजन । बहती गंगादिक नदि पावन ॥ ७ ॥
जहँ पर पुष्कर आदि सरोवर । पुलहाश्रम कुरु क्षेत्र गया धर ॥ ८ ॥
नैमिष और प्रयाग प्रभासा । काशी द्वारवती अघनासा ॥ ९ ॥
पम्पा मथुरा विन्दु सरोवर । सेतुबन्ध हरिद्वार मनोहर ॥ १० ॥

दोहा- **नारायण आश्रम जहाँ, आश्रम सीताराम ॥**
सभी कुलाचल जहँ बसे, मलयादिक शिवधाम ॥१०७॥

चौ- ये सब पुण्य देश सुन ताता । धर्मेच्छुक सेयित फलदाता ॥ १ ॥
हरि ही सर्व पात्र बिच राजन । सर्वश्रेष्ठ जानों तुम निज मन ॥ २ ॥
चर अरु अचर जगत हरिरूपा । और बात मैं क्या कहुँ भूपा ॥ ३ ॥
तोरे राजसूय मख सारे । सनकादिकरिषि सिद्ध पधारे ॥ ४ ॥
तदपि अग्रपूजन हित राया । वासुदेव सत्पात्र बताया ॥ ५ ॥
व्याप्त जीव राशिन के द्वारा । अंडकोश तरु मूल अकारा ॥ ६ ॥
एक मात्र केवल हरि जानों । इन पूजन सब पूजन मानों ॥ ७ ॥
खग मृग नर रिषि मुनि सुर नाना । इन तनु पुर सोवत भगवाना ॥ ८ ॥
यही हेतु यह पुरुष कहावे । तार तम्य यह सब बिच पावे ॥ ९ ॥
त्रैतादिक बीचे हरि पूजन । प्रतिमादिक बिच करते राजन ॥ १० ॥

दोहा- **द्वेष रहित पूजना हरि, अर्थ प्रदाता जान ।**
नरद्वेषी की अर्चना, सब विधि निष्फल मान ॥ १०८॥

चौ- द्विज कुल उत्तम वर्णन चारी । वेद रूप वे हरि तनु धारी ॥ १ ॥
जगदात्मा हरि के सुन राजा । इष्ट देव सब विप्र समाजा ॥ २ ॥
जासु पादपंकज जग पावन । वो पदहरि करते हिय धारन ॥ ३ ॥
केतिक कर्म निष्ठ द्विज गाये । केतिक तपोनिष्ठ कहलाये ॥ ४ ॥
केतिक ज्ञान योग में निष्ठा । स्वाध्यायनिष्ठ कई विप्र विशिष्ठा ॥ ५ ॥
फल अनन्त पावन के कारन । देवहिं ज्ञाननिष्ठ हित भोजन ॥ ६ ॥
देव कार्य में दो द्विज गाये । पितर कार्य में द्विज तीन जिमाये ॥ ७ ॥

अथवा उभय कार्य विच राजन । एक एक द्विज करे जिमावन ॥ ८ ॥
यद्यपि विभवशील हो तवहू । श्राद्ध वीच विस्तार न करहू ॥ ६ ॥
देशकाल उचित हरिपूजन । होवत श्रेष्ठ न विस्तृत राजन ॥ १० ॥

दोहा- **देश काल लख कर करे, योग्य पात्र हित दान ।**
सदगेही पावत तदा, अक्षय फल की खान ॥ १०६ ॥

चौ- स्वजन व भूत पितर मुनिकाजू । करे प्रेम ते अन्न विभाजू ॥ १ ॥
लखकर ईश्वर रूप सदाही । राखहु भेद भाव कछु नाँही ॥ २ ॥
अमिप श्राद्ध न करे प्रयोगा । खाव न स्वयं धरम विद लोगा ॥ ३ ॥
हरि जिमि व्रीह्यादिक ते राजी । होन मुदित पशु हिंसा साजी ॥ ४ ॥
हिंसा त्याग न सदृश कोई । दूसर धरम जगत में होई ॥ ५ ॥
यही हेतु जगत के ज्ञानी । यज्ञ कर्ममय दुखप्रद मानी ॥ ६ ॥
ज्ञान रुप दीपक के द्वारा । निज हिय वीच करत उजियारा ॥ ७ ॥
द्रव्य यज्ञ युत मानव देखी । होत भीत सब भूत विशेषी ॥ ८ ॥
यही हेतु धरम विद राई । दैव प्राप्त मुनि अन्न सुधाई ॥ ६ ॥
निशि दिन राख धरम में निष्ठा । करते नित्य कर्म सब शिष्टा ॥ १० ॥

दोहा- **छल उपधर्म विधर्म अरु, सब परधर्म अभास ।**
शाखा पंच अधर्म की, तजे धर्म विद खास ॥ ११० ॥

चौ- वाधा धर्म विधर्म कहाया । अन्य उक्त पर धर्म वताया ॥ १ ॥
दंभकरण उपधर्म वताया । शब्दभेद छल धर्म कहाया ॥ २ ॥
निज इच्छा कृत सो आभासा । देत धर्म निज सदा दिलासा ॥ ३ ॥
परम श्रेष्ठ निज धर्म उचारा । करहि न अन्य धर्म स्वीकारा ॥ ४ ॥
राखें रुची नहीं धन दीना । धर्म व यात्रा हेतु प्रवीना ॥ ५ ॥
निवृति परायण मनुज सदाही । अजगर सम वृत्ति फलपाही ॥ ६ ॥
जो फल संतोषी जन पावे । मिलहिं न लोभ अनु जो धावे ॥ ७ ॥
संतोषी नर सदा सुखारी । होवत सभी दिशा हितकारी ॥ ८ ॥
कंटक कंकर ते जिमिराई । होत उपान पाद सुखदाई ॥ ६ ॥
क्यों ना तृप्ति करे नर धारन । केवल जल पीकर के राजन ॥ १० ॥

दोहा- **रशना और उपस्थ वश, गृह रक्षक सम श्वान ।**
विचरत घर घर जीव यह, तज करके भगवान ॥ १११॥

चौ- असंतोषी द्विज के सारे । विद्या तप यश तेज निवारे ॥ १ ॥

इन्द्रिय लोलुपता के कारण । खोवत ज्ञान सभी ये तत्क्षण ॥ २ ॥
होवत क्षुधा प्यास के द्वारा । काम अन्त हो सभी प्रकारा ॥ ३ ॥
भोगे भोग दशा दश जीते । तदपि न अंत लोभ का चींते ॥ ४ ॥
बहुत शास्त्र के जानन हारे । जो सबके संदेह निवारे ॥ ५ ॥
सो पंडित यदि लोभ न तजही । होत पतन सब विधि दुख गहही ॥ ६ ॥
जो नर निज संकल्प तजावे । सो नर विजय काम पर पावे ॥ ७ ॥
जो अभिलाषा दूर भगावे । सो नर विजय क्रोध पर पावे ॥ ८ ॥
अर्थन बीच अनर्थन मूला । लखे लोभ ते सो प्रतिकूला ॥ ९ ॥
जीते भय को तत्व विचारी । सत सेवा करि दंभ सुधारी ॥ १० ॥

दोहा- **जीते शोक व मोह को, ब्रह्म ज्ञान से धार ॥**
योग विघ्न पर मौन से, पावे विजय अपार ॥ ११२ ॥

चौ- हिंसा विजयी निश्चल काया । भूतज दुख जीते करि दाया ॥ १ ॥
प्राणायाम देह दुख नासे । सात्विक भोजन नींद विनासे ॥ २ ॥
रज तम पर जय सत्व दिलावें । विजय सत्व पर उपरति लावै ॥ ३ ॥
ये सब गुरु भक्ति के द्वारा । जीतें मानव सभी प्रकारा ॥ ४ ॥
ज्ञानदीप प्रद गुरु भगवाना । राखें उनपद चित्त सुजाना ॥ ५ ॥
जिन मतिमंद गुरुहिं नर माना । निष्फल शास्त्र श्रवण उन जाना ॥ ६ ॥
जिन गुरु के पदकंज सदाहीं । योगीश्वर सब विधि हिय ध्याहीं ॥ ७ ॥
वे तो प्रकृति पुरुष के ईश्वर । गुरू रूप हरि आये अवतर ॥ ८ ॥
जो भ्रम वश गुरु को नर मानत ॥ सो मतिमंद पुरुष कहलावत ॥ ९ ॥
जीते इमि कामादिक वेगा । रहे ध्यान हरि तजि उद्वेगा ॥ १० ॥

दोहा- **कृष्पादिक जैसे नृप, साधन मोक्ष न देत ।**
श्रौत स्मार्त कर्मी तथा, फल उल्टे ही सेत ॥ ११३ ॥

चौ- चित्त विजय हित संग तजाई । आसक्ति अरु परिग्रह खाई ॥ १ ॥
होय निसंग मिताशन राई । आसन पावन देश विछाई ॥ २ ॥
पाछे स्थित होकर उस आसन । करें मानसी प्रणव उचारण ॥ ३ ॥
पूरक कुंभक रेचक द्वारा । रोके प्राणापान प्रकारा ॥ ४ ॥
चित्त कामना पर जब भीजे । तब नासाग्र निरीक्षण कीजे ॥ ५ ॥
जब जब यह मन इत उत धावे । खींच इसे तब निज हिय लावे ॥ ६ ॥
एवं यतनशील अभ्यासी । पावहिं चित्त शांति दुखनासी ॥ ७ ॥

जासु चित्त पर ब्रह्म विलग्ना । तासु चित्त नहिं काम निभग्ना ॥ ८ ॥
त्यक्त त्रिवर्गन यदि यति पाछे । सेवहि सो फल पात न आछे ॥ ९ ॥
वान्ताशी वह श्वान समाना । वह यति अति निर्लज्जी माना ॥ १० ॥

दोहा- **कृमि निष्ठा भस्मात्मक, मानत प्राणिन देह ।**
अज्ञानी जन ही इसे, मानत कर अति नेह ॥ ११४ ॥

चौ- जो गेही निज कर्मन त्यागे । व्रत त्यागी वटु रहे अभागे ॥ १ ॥
तापस होय वसे जो ग्रामा । इन्द्रिय लोलुप यति रत वामा ॥ २ ॥
गेही वटु तापस यतिचारी । रहे विडम्बक आश्रम चारी ॥ ३ ॥
सुर माया मोहित ये भारी । कर अनुकम्पा तजु इन वारी ॥ ४ ॥
आत्मा को परब्रह्मस्वरूपा । देखत जो नर हे कुरुभूपा ॥ ५ ॥
सो लम्पट होकर केहि काजू । पोषण कर सकता तनु राजू ॥ ६ ॥
यह शरीर यक स्यंदन गाया । इन्द्रिय जाके तुरग बताया ॥ ७ ॥
मन रश्मि मति सूत बखाना । धर्म अधर्म चक्र दोउ माना ॥ ८ ॥
जीव रथी अभिमानी माना । प्रणव रथी का धनुष बखाना ॥ ९ ॥
शुद्ध जीव शर धनु पर सोहू । लक्ष्य अचूक ब्रह्म पर ओहू ॥ १० ॥

दोहा- **यथा धनुष ते छूट शर, जात लक्ष्य की ओर ।**
प्रणव पाठ ते जीव भी, आत ब्रह्म की दौर ॥ ११५ ॥

चौ- राग व द्वेष लोभ मद मोहा । हिंसा मत्सर शोक व कोहा ॥ १ ॥
रज प्रमाद निद्रादिक सारे । हे नृप ये अरि प्रबल पुकारे ॥ २ ॥
एवं मनुज रुप स्थित स्यंदन । ज्ञान खड्ग वे कुन्तीनन्दन ॥ ३ ॥
जीत शान्त होकर स्वानन्दा । तुष्ट होय तज यह रथ फन्दा ॥ ४ ॥
अच्युत बल पाकर सुनुराई । मोक्ष धाम की ओर सिधाई ॥ ५ ॥
करहि न मानव इमि प्रकारा । सूत वाजि दुष्टेन्द्रिय द्वारा ॥ ६ ॥
प्रवृत्ति मार्ग में देही आवत । विषय दस्यु वह उसे सतावत ॥ ७ ॥
वे दस्यु मिलकर के सारे । जगत कूप बीचे महि डारे ॥ ८ ॥
प्रवृति व निवृति करम दो जाता । मोक्षद निवृति व परभव दाता ॥ ९ ॥
हिंसामय धन ते पशु यागा । सोमयाग हवनादिक रागा ॥ १० ॥

दोहा- **वैश्वदेव बलि हरण अरु, दर्श व पूरणमास ।**
कूपादिक निरमान सम, व्रत सह चातुर्मास ॥ ११६ ॥

चौ- ये सब प्रवृति करम बतलाया । सदा अशान्तिप्रद ये गाया ॥ १ ॥

प्रवृति करम ते मानव राजन। पक्ष असित रजनी याम्यायन ॥ २ ॥
इन अभिमानी देवन संगा। जावत चन्द्र लोक तजि अंगा ॥ ३ ॥
वहँ पर भोगे भोग अपारा। पाछे वृष्टि व औषध द्वारा ॥ ४ ॥
अन्न अन्न ते रेतस देही। इमि क्रम भूमि जनम पुनि लेही ॥ ५ ॥
प्रवृति मार्ग जानहु नृप येहूँ। अब तुम निवृति मार्ग सुन लेहू ॥ ६ ॥
षोडश संस्कार जे गाये। इनते युत वे द्विज कहलाये ॥ ७ ॥
करही केचित प्रवृति कामा। केचित करहि निवृत्ति निशियामा ॥ ८ ॥
निवृति परायण मानव ताता। इष्ट पूर्व कर्मन ते जाता ॥ ९ ॥
करहीं उनको इन्द्रिय लीना। इन्द्रिन को मन करे अधीना ॥ १० ॥

दोहा- **मन को वाणी में नृप, वाणि वर्ण समुदाय।**
पाछे इनको प्रणव में, प्रणवहिं नाद समाय ॥ ११७ ॥

चौ- नादहिं प्राणन बीच अधीना। प्राणन को परब्रह्म विलीना ॥ १ ॥
धावहिं परमब्रह्म पद मानव। आवहिं कबहूँ नहिं वह इस भव ॥ २ ॥
यह तो देवयाग हम गाया। ये ही निवृति मार्ग कहलाया ॥ ३ ॥
जो नर शास्त्र चक्षु के द्वारा। निवृति व प्रवृती यान प्रकारा ॥ ४ ॥
जानहि जो तनु स्थित भी राई। सो नर जनम मरणा नहीं पाई ॥ ५ ॥
दोउ तत्वन का जानन हारा। आत्मा वह नर स्वयं पुकारा ॥ ६ ॥
आदि व अन्त बीच यह काया। रहती विद्यमान सुन राया ॥ ७ ॥
भौग्य रूप से दीखत बाहर। भोक्ता रूप कहावत अंदर ॥ ८ ॥
नीच व उच्च व ज्ञान अज्ञाना। वाणी तम व प्रकाश महाना ॥ ९ ॥
यह जो कुछ भी दीखत सारे। सो सब दर्शन विद ही पुकारे ॥ १० ॥

दोहा- **यही हेतु उनका नहीं, स्पर्श करे यह मोहु।**
दरपन में प्रति विम्ब सम, सत्य न जानहु सोहु ॥ ११८॥

चौ- इन्द्रिय द्वारा दीखन हारे। भेद भाव वस्तुन के सारे ॥ १ ॥
अनुभव युक्ति असंभव होवत। होत असत्य सत्य सम दीखत ॥ २ ॥
त्यों तत्वादिक रचित शरीरा। दीखत सत्य न सत्य अखीरा ॥ ३ ॥
सूक्ष्म दृष्टि से देखहिं ताता। तो नहि पंचतत्व संघाता ॥ ४ ॥
दीखे अरु ना तत्व विकारा। निज अंगन ते दीखत न्यारा ॥ ५ ॥
उनमें अनुगत भी नहि जाना। यही हेतु मिथ्या यह माना ॥ ६ ॥
एवं पंच तत्व भी राया। निज अवयव ते भिन्न न गाया ॥ ७ ॥

निज तत्वन में भेद अनेका। देखत तब तक भ्रम अविवेका ॥ ८ ॥
रहे पदारथ पूरब जग में। दीखत वे सब अब भी दृग में ॥ ९ ॥
सुपने सुप्ति व जागृत जैसे। रहहीं विधि निषेध भी तैसे ॥ १० ॥

दोहा- **भेद तीन अद्वैत के, क्रिया द्रव्य अरु भाव।**
जानहिं निज अनुभव इन्हें, सो सब भेद भुलाव ॥११९॥

चौ- कारज कारण बीचे एकी। वह तन्तुवत लखे विवेकी ॥ १ ॥
यह ही भावद्वैत कहाया। परम ब्रह्म में सुनु नरराया ॥ २ ॥
सब करमन अरपन जे करही। क्रियाद्वैत इसको मुनि वदही ॥ ३ ॥
निज परिवार सुतादिक जाया। काम अरथ बीचे सुनुराया ॥ ४ ॥
राखत भाव इन्हों में एकी। द्रव्याद्वैत य वदत विवेकी ॥ ५ ॥
शास्त्र निषेध करम जे सारे। बिन आपत कबहुँ न स्वीकारे ॥ ६ ॥
इन अरु अन्य व वैदिक करमन। कर निज घर में भी स्थित राजन ॥ ७ ॥
पावत कृष्ण गति नर सुन्दर। हे नृप तुम जिमि निज घर बसकर ॥ ८ ॥
कृपा प्राप्त कर कृष्ण कृपालू। नष्ट भये तव कष्ट नृपालू ॥ ९ ॥
जिन चरणाश्रय सारे राजा। निज बस कीन्ह यज्ञ तुम साजा ॥ १० ॥

दोहा- **संतन के अपमान ते, होत कृष्ण अपमान।**
पावे संतन की कृपा, तो खुश हो भगवान ॥ १२० ॥

चौ- सुनो नृपति तुम पूरण कामा। कल्प अतीत बीच मम नामा ॥ १ ॥
उपबर्हण गंधर्व बताया। पेशलरूप चतुर अति गाया ॥ २ ॥
भाषण मधुर सदा तिय लम्पट। प्रिय दर्शन तिय प्रियतम नटखट ॥ ३ ॥
इक दिन विधि सुर यज्ञ रचाये। गंधर्वादिक वहाँ बुलाये ॥ ४ ॥
मैं भी स्त्रीवेष्टित वहँ राया। लोकगान करता झट आया ॥ ५ ॥
मम अपराध देख यह धाता। दियो शाप मो प्रति इति ताता ॥ ६ ॥
पाऊ शूद्रता तुम तिय लम्पट। श्री विहीन होकर शठ झटपट ॥ ७ ॥
सुना शाप मैं जबै विधाता। दासी उदर जनम मम जाता ॥ ८ ॥
वहाँ ब्रह्म जाति कर पूजन। ब्रह्म पुत्रता पायऊँ राजन ॥ ९ ॥
ग्रहस्थ धर्म यह मैंने राजन। कीन्हा वरणन पाप नसावन ॥ १० ॥

दोहा- **जिसके द्वारा गृहस्थ भी, संन्यासिनपद पाय।**
भूरि भाग्य नर लोक में, तेरा यह नर राय ॥ १२१ ॥

चौ- परम ब्रह्मधर मनुज शरीरा। बसत गेह तोरे नृपधीरा ॥ १ ॥

उन दरसन हित गेह तुम्हारे । आवत पावन मुनिगण सारे ॥ २ ॥
वही ब्रह्म अति प्रिय तुम्हारे । सुहृत व मातुल सुवन पुकारे ॥ ३ ॥
शिव विरंचि जिन कृष्ण स्वरूपा । वरणन कर सकते नहीं भूपा ॥ ४ ॥
वह भगवान हमारे ऊपर । रहें मुदित सब विधि हे कुरुवर ॥ ५ ॥
नारद के यों वचन सुहाये । धर्म राज सुनकर हुलसाये ॥ ६ ॥
कृष्ण सहित मुनि पूजन कीन्हा । निज मन सफल मनोरथ चीन्हा ॥ ७ ॥
नारद मुनी धरम के द्वारा । पूजित पाकर अति सतकारा ॥ ८ ॥
विदा माँग निज धाम सिधाये । कृष्ण ब्रह्म सुन नृप हुलसाये ॥ ९ ॥
इति दाक्षायणि वंश प्रकारा । कहेउ "परीक्षित" सह विस्तारा ॥ १० ॥

दोहा- **सुर मानव दानव तथा, सकल चराचर जात ।**
प्रकट भये जिस वंश में, सब वरणन किय तात ॥१२४॥क
भक्ति ज्ञान की भर रही, जिसमें खूब सुगंध ॥
वरणन बजरंग लाल ने, कीन्हा सप्तम स्कंध ॥ १२२॥ख

इति श्री कृष्ण चरितामृते कलिमल विध्वंशने बजरंग कृत श्री मद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां समाप्तोऽयं सप्तम स्कंध :

॥ हरिऊँ तृसत् ॥

॥ श्री गणेशाय नमः ॥

॥ श्री राधावल्लभो विजयते ॥

श्री मद्भागवत प्रारम्भः

अष्टम स्कंधः

श्लोक

वन्देऽहं कमलाकान्तं, हरिं धन्वन्तरीं विभुम्
मोहिनीं काश्यपं मीनं, कूर्मं मन्दर धारिणम्

दोहा- **मकरानन ते हे प्रभो, जिमि गज लियो बचाय**
त्यों भवरूपी ग्राह ते, मुझे निवारो आय ॥
वासुदेव भगवान को, वन्दौं वारम्वार
गाथा अष्टम स्कंध की, वरणों सह विस्तार ॥

चौ- स्वायंभुव मनु वंश अपारा । कीन्हा श्रवण सहित विस्तारा
अव मोहिं अपर मनुन की गाथा । करके कृपा कहो मुनि नाथा
जिस जिस अन्तर में मुनि राया । हरि के जनम करम कवि गाय
उन सवको मैं सुनना चाहूँ । करके कृपा मुझे सव गाहू
गत व अनागत अरु इह काला । कहो मुनीश सभी वह हाला
अव मुनी वोले सुनो नृपालू । वीते पट मन्तर इह कालू
स्वायंभुव मनु के सव हाला । ते प्रति वरणन किये नृपाला
स्वायंभुव मनु सुता सयानी । आकूती जाये हरि आनी
धर्म ज्ञान उपदेश अपारा । जिन हरि ने हे नृप विस्तारा
देवहूति मनु सुता सयानी । जाये कपिलदेव मुनीज्ञानी ॥

दोहा- **कपिल देव मुनी की कही, गाथा प्रथम सुनाय**
यज्ञ रूप भगवान की, सुनौ कथा चितलाय ।

चौ - एक दिवस नृप मनु महाराजा । विरत होय तजि सव नृप काजा
भार्या सहित तपस्या काजू । गये विपिन जहँ मुनी समाजू
सरित सुनन्दा पावन तीरा । वर्ष एक शत वे नृपधीरा
चरण एक़ महि होकर ठाढ़े । करने लागे तप अति गाढ़े
कर जोरे मनु वचन उचारा । पात प्रकाश जगत जिन द्वारा
किन्तु प्रकाश न जग उन दाता । सव सोवत जागत प्रभु गाता
जिनको जान सकै ना कोहू । जो जानत येहीं प्रभु सोहू
सर्व चराचर प्राणिन माँही । केवल सत्ता प्रभु की पाहीं

वे प्रभु सर्व पदारथ दाता । करहु न मोह येहि हित ताता ॥ ९ ॥
जीवन यापन ही उपभोगा । तृष्णा त्याग करें सब लोगा ॥ १० ॥

दोहा- **साक्षी सारे विश्व के, जिन्हें न देखत कोय ।**
ज्ञान शक्ति जिनकी सदा, अबाध अखंडित होय ॥ ३ ॥

चौ- आदिज मध्य न अन्त न जासू । सकल विश्व वे करत प्रकासू ॥ १ ॥
वे ही सब प्राणिन हियवासी । सदा असंग व स्वयं प्रकासी ॥ २ ॥
निज अरु पर उनका ना कोऊ । ब्रह्म व सत्य सनातन सोऊ ॥ ३ ॥
विश्वकाय निज माया द्वारा । करते रचनादिक जग सारा ॥ ४ ॥
रहहिं निरीह तदपि भगवन्ता । करत मोक्ष हित करमन सन्ता ॥ ५ ॥
सब विधि पूर्ण अर्थ भगवन्ता ।कर्मलीन नहिं रहे अनन्ता ॥ ६ ॥
धरहिं जे राम कृष्ण अवतारा । करत कर्म वेदोक्त अपारा ॥ ७ ॥
सब धर्मन के स्थापन कर्ता । जाऊँ चरण शरण उन भर्त्ता ॥ ८ ॥
मनु नृपलीन समाधी राया । मंत्रोचार करत इमि पाया ॥ ९ ॥
यातुधान राक्षस तेहि काला । धाये भक्षण हेतु नृपाला ॥ १० ॥

दोहा- **याम देव वेष्टित तदा, यज्ञ पुरुष भगवान ।**
मारे आकर वहँ सभी, यातुधान बलवान ॥ ४ ॥

चौ- पुनि वहि इन्द्रासन आसीना । कीन्हा सुरपुर निज आधीना ॥ १ ॥
स्वारोचिष मनु दूसर राया । वैश्वानर सुत जिसे बताया ॥ २ ॥
तुषितादिक सुरगण उस काला । रोचन नाम भये सुरपाला ॥ ४ ॥
ऊर्जस्तंभ सप्तरिषि ताता । स्वारोचिष मनवन्तर जाता ॥ ५ ॥
वेदशिरा नामक ऋषि नारी । तुषिता नाम मनोहर भारी ॥ ६ ॥
जासु गर्भ ते विभु अवतारा । नैष्ठिक ब्रह्मचर्य व्रतधारा ॥ ७ ॥
इनते ही ऋषि सहस अठासी । ब्रह्मचर्य व्रत सीख प्रकासी ॥ ८ ॥
प्रिय व्रत सुत उत्तम जिन नामा । भये तृतीय मनु गुणधामा ॥ ९ ॥
पवन व सृंजयादि सुत जासू । प्रमदादिक मुनि सप्त अकासू ॥ १० ॥

दोहा- **सुत ये सभी वशिष्ठ के, प्रमदादिक रिषि सात ।**
सत्यजीत सुरपति भये, सुर सत्यादिक ख्यात ॥ ५ ॥

चौ- सुनृता नाम धरम की नारी । सत्यसेन जिन घर अवतारी ॥ १ ॥
यक्ष व राक्षस प्राणिन द्रोही । असत दुशील अनृत व्रत जोही ॥ २ ॥
मारे सत्यसेन भगवन्ता । इन्द्र सखा बनकर श्रुति कन्ता ॥ ३ ॥

भये चतूरथ उत्तम भ्राता । तामस नाम मनु विख्याता ॥ ४ ॥
प्रथु ख्याति नरकेतु राया । इत्यादिक दस सुत मनु गाया ॥ ५ ॥
सत्यक हरय वीर सुर जाता ॥ त्रिशिरन नाम इन्द्र विख्याता ॥ ६ ॥
सप्तरिषि तापस मन्वन्तर । ज्योतिर्धमादिक सुन नृपवर ॥ ७ ॥
विधृत सुतनय अन्य सुर जाता वैधृत नामदेव विख्याता ॥ ८ ॥
समय फेरते जब श्रुति चारी । नष्ट किये खल अत्याचारी ॥ ९ ॥
धारण किये तदा श्रुति येही । आगे सुनौ कथा नृप स्नेही ॥ १० ॥

दोहा- **विप्र एक हरिमेधस, हरिणी नामकनार ।**
इनके घर परकट भयें , हरि नामक अवतार ॥ ६ ॥

चौ- मकरानन ते गज का मोचन । कीन्हा इन हरि ने सुनु राजन ॥ १ ॥
यह सुन वचन कीर के राया । बोले नृप अति प्रेम अघाया ॥ २ ॥
यथा गजेन्द्र कीन्ह हरि मोचन । वह सब गाथ कहो मुनिनन्दन ॥ ३ ॥
उत्तम श्लोक हरी की गाथा । महापुण्यप्रद हे मुनिनाथा ॥ ४ ॥
बोले अब मुनि सूत सुजानी । नृप प्रेरित इमि शुक सुखखानी ॥ ५ ॥
नृप प्रति एवं वचन उचारी । गज मोचन गाथा सुनसारी ॥ ६ ॥
नृप त्रिकूट नामक गिरि कोई । क्षीर सिन्धु आवृत चहुँ सोई ॥ ७ ॥
योजन अयुत गिरी वह उच्छ्रित । तावत मान रहा वह विस्तृत ॥ ८ ॥
कंचन रजत लोह मय श्रृङ्गा ॥ करत प्रकाश दिशा गिरि अङ्गा ॥ ९ ॥
रत्नधातु मय श्रृङ्ग अपारा । करत दिशा सोभित गिरि सारा ॥ १० ॥

दोहा- **गुल्म वल्लरी द्रुम अति, निरझर कृत गुंजार ।**
सागर लहरें गिरि पदहिं, सींचत वारम्बार ॥ ७ ॥

चौ- मरकत हरित अश्म महिराई । भई श्याम मनुँ दूब बिछाई ॥ १ ॥
सिद्ध व चारण नाग व किन्नर । गंधर्व अप्सरा अरु विद्याधर ॥ २ ॥
करत कंदरा बीच विहारा । गावत गान मनोहर सारा ॥ ३ ॥
तासु गान प्रति धुनि सुनि सारे । अपर सिंह ध्वनि जानि करारे ॥ ४ ॥
करते सिंह उच्चस्वर गरजन । अपर वन्य पशु शोभित वह वन ॥ ५ ॥
करत विहंग मधुर स्वर गाना । सुरउपवन सोभित तरु नाना ॥ ६ ॥
सरित अगाध सरोवर नाना । निरमल नीर भरे मणि खाना ॥ ७ ॥
मणिमय सिक्ता वहाँ मनोहर । चमकत सदा पुलिन के ऊपर ॥ ८ ॥
करत स्नान सर सुरतिय नाना । भयो सुगंधित नीर महाना ॥ ९ ॥
सो सुगंध लेकर के वाता । चलत मंद–मंद गति ताता ॥ १० ॥

दोहा- भगवत प्रेमी वरुण का, वहाँ एक उद्यान ।
रहा मनोहर वह अति, जासु नाम ऋतुमान ॥ ८ ॥

चौ- सुरतिय क्रीड़ा करती नाना । दिव्य वृक्ष सोभित उद्याना ॥ १ ॥
फल अरु कुसुम अलंकृत भारू । पाटल पारिजात मन्दारू ॥ २ ॥
पाकर देवदारू कचनारा । चम्पा आम्र अशोक अपारा ॥ ३ ॥
दाख चिरौंजी ईख सुपारी । कटहल केल कपित्थ अपारी ॥ ४ ॥
महुआ बरगद पीपल ठाढ़े । हरड़ खजूर अमोड़ा बाढ़े ॥ ५ ॥
चन्दन नीम व निम्बू वेला । शाल तमाल पलास नरेला ॥ ६ ॥
तिन्दुक जम्बू बैर भिलावा । आम्रातक रुद्राक्ष दिखावा ॥ ७ ॥
साखू अरजुन असन अनारा । रीठा गूलर ताड़ अपारा । ८ ॥
लहराते अमरूद कनीरा । चिञ्चा वकुल सुशोभित क्षीरा ॥ ९ ॥
उपवन बीचे एक सरोवर । विकसित काञ्चन कमल मनोहर ॥ १० ॥

दोहा- उत्पल शतदल कुमदयुत, वर कल्हार अपार ।
छटा अनूठी छिटक रहि, जिनकी सभी प्रकार ॥ ९ ॥

चौ- मधुकरि मत्त करत गुंजारी । कलरव करते वर नभचारी ॥ १ ॥
सारस चक्रवाक सह वंशा । जल कुक्कुट कारण्ड व हंसा ॥ २ ॥
कूजत चारों ओर पपीहा । वन्य कोकिला भी न निरीहा ॥ ३ ॥
मीन व कच्छप इत उत चाले । कमलनाल तब जल विच हाले ॥ ४ ॥
हालत उनके पंकज फूला । झरती तासु पराग अतूला ॥ ५ ॥
होवत जासू नीर सुगंधित । वैत्र कदम्ब व नरकुल इत उत ॥ ६ ॥
वकुल आदि तरुवर चहुँ ओरा । कुंद अशोक व सिरस लिसौरा ॥ ७ ॥
सोन जूहि शतपत्र अपारा । वन्य मल्लिका हारश्रृङ्गारा ॥ ८ ॥
इंगुदि कूटज जाति पुन्नागा । लता माधवी जाल स नागा ॥ ९ ॥
तरुवर अन्य अनेक प्रकारा । पुष्पवृक्ष युत सर तट सारा ॥ १० ॥

दोहा- हर ऋतु के फल फूल धर, सुन्दर तरु अन संग ।
सोभित चारों ओर सर, चालत दीर्घ तरंग ॥ १० ॥

चौ- घोर अरण्य बीच गिरि तासू । करत गजेन्द्र एक वहँ वासू ॥ १ ॥
करिणि अनेक संग मतवाली । गज यूथप वह अति बलशाली ॥ २ ॥
तासु गंध हिंसक मृग व्याला ॥ हरि गज खड्गी व्याघ्र कराला ॥ ३ ॥
शरभ चामरी अति भय खाई । इत उत भागत लखि गजराई ॥ ४ ॥

महिष शल्य वृक रींछ वराहा । त्यागे श्वान कीस गजराहा ॥ ५ ॥
हो अभीत विचरत लघु प्रानी । प्राप्त अनुग्रह गज बलखानी ॥ ६ ॥
एक दिवस वह गज गिरि आवा । निज करिणिन शिशु संग लिवावा ॥ ७ ॥
कीचक वंश वेत्र तरु रोंदत । निज दन्तन ते गिरि महिं खोदत ॥ ८ ॥
गज गजिनी शिशु अनुद्रुत जाके । काँपत गिरिवर चालत ताके ॥ ६ ॥
गंडस्थल चूवत मद भारी ॥ उड़त अशन मद भ्रमर अपारी ॥ १० ॥

दोहा- **मद कारण विह्वल नयन, धाम तप्त गजराज ।**
निज संगिन को संगले, भटकत जल के काज ॥ ११ ॥

चौ- आई तेहि समय सुख दाता । कमल पराग सुवासित वाता ॥ १ ॥
सूँघ दूर ही ते वह गंधा । सर की ओर चला मद अंधा ॥ २ ॥
निर्मल मधुर पियूष समाना । सरजल शीतल अति सुखदाता ॥ ३ ॥
अरुण कमल केशर से सारा । महक रहा वह सभी प्रकारा ॥ ४ ॥
पहुंचा जब तट पर गजराई । कर विश्राम थकान मिटाई ॥ ५ ॥
पाछे सरवर में कर स्नाना । जी भरकर कीन्हा जल पाना ॥ ६ ॥
कबहूँ जल भरि सूंड उठाई । निज तनु पर छिड़कत गजराई ॥ ७ ॥
कबहूँ करता वह जलपाना । कबहूँ गेही मनुज समाना ॥ ८ ॥
मोहग्रस्त निज सूँड उठाई । नीर फुहार त्याग गजराई ॥ ६ ॥
कलभ समेत गजिन नहलावा । भरि निज सूँड तेहि जल पावा ॥ १० ॥

दोहा- **हरि माया मोहित वह, भयो बहुत उन्मत्त ।**
पता नहीं उस दीन को, आरहि शिर आपत्त ॥ १२ ॥

चौ- प्रेरित दैव तदा उस काला । पकरा गजपद ग्राह कराला ॥ १ ॥
इमि आफत जब सिर पर आई । घबराकर तब वह गजराई ॥ २ ॥
कीन्ह उपाय शक्ति अनुसारा । तदपि न छूटा किसी प्रकारा ॥ ३ ॥
शिशु गज गजिनी भी ना तेहू । छुड़ा सकैं ना गजपति देहू ॥ ४ ॥
निज यूथप जब आतुर देखा । चिंघारत गज कलभ विशेषा ॥ ५ ॥
खींचे कबहुँ ग्राह जल भीतर । कबहुँ गजपति लावे बाहर ॥ ६ ॥
लरत परस्पर इमि गज ग्राहा । बीते वरष अनेक न थाहा ॥ ७ ॥
देख युद्ध गज ग्राह करारा । नभ विच विस्मित देव अपारा ॥ ८ ॥
नक्र बलाधिक लखि निज गाता । गज बल हे नृप अति व्यय जाता ॥ ६ ॥
शक्ति क्षीण मन नहि उत्साहा । खींचत उत जल बीचे ग्राहा ॥ १० ॥

दोहा- संकट वीचे पर गये, अव गजपति के प्रान ।
छुड़ा सका ना निज तनु ,करके यतन महान ।। १४ ।।

चौ- अव तो गजपति अति घवराया । कियो विचार वहुत तव राया ।। १ ।।
तव कहिं निर्णय यह कर पाया । ग्राह पाश ते यह मम काया ।। २ ।।
मम संगी मम सम वलवन्ता । यद्यपि किये उपाय अनन्ता ।। ३ ।।
तदपि न छुड़ा सकै यह कोई । अव तो मम रक्षक हरि सोई ।। ४ ।।
जो सव जगत चराचर स्वामी । शरण गहूँ उन अन्तरयामी ।। ५ ।।
अरे काल यह अति वलवाना । निगलन सवको सर्प समाना ।। ६ ।।
अति प्रचंड वेग युत धावत । क्षण भर एक नहीं यह ठाड़त ।। ७ ।।
काल वली से हो भयभीता । आवत हरि शरणागत रीता ।। ८ ।।
तो हरि अवश वचावत तेही । मारत मौत कवहूँ ना येही ।। ९ ।।
जिनके डरते मौत डराही । करती काम ठीक निज राही ।। १० ।।

दोहा- सवके आश्रय वही प्रभु, सवके सरजन हार ।
सवतिमा सुखधाम की, शरण गहूँ इस वार ।। १४ ।।

चौ- यों निज मति गज किये विचारा । स्थिर कर मन निज सभी प्रकारा ।। १ ।।
शिक्षित पूर्व जन्म विच राजन । श्रेष्ठ स्तोत्र जव कियो उचारन ।। २ ।।
वन्दौं पुरुष अनादि अनन्ता । वन्दौ आदि वीज भगवंता ।। ३ ।।
तुम ही एक मात्र जग स्वामी । खलमद भंजन अन्तरयामी ।। ४ ।।
धरूँ ध्यान मैं उन अखिलेशू । वन्दौं वारम्वार परेशू ।। ५ ।।
जिनते यह जग होत प्रकाशित । आदि मध्य जिन अन्त न दरशित ।। ६ ।।
स्वयं सिद्ध जे स्वयं प्रकासी । शरणागत मैं उन अविनासी ।। ७ ।।
कवहूँ विश्व करहिं निज लीना । कवहूँ करत प्रकाश नवीना ।। ८ ।।
समय पाय जव लोक विनाशे । तव केवल वे ही प्रभु भासे ।। ९ ।।
कोटि जन्म ऋषि मुनि कर ध्याना । जिनका रूप नहीं पहिचाना ।। १० ।।

दोहा- नर आकृति जैसे नहीं, जानत किसी प्रकार ।
त्यों हरि के दुर्गम चरित, का नहि पारावार ।। १५ ।।

चौ - दरसन हेतु चरण अविनासू । मुनि वन वीचे करत निवासू ।। १ ।।
वे मुनिजन के धन भगवन्ता । मैं शरणागत उन श्रुति कंता ।। २ ।।
जासु जनम गण कर्म न नामा । धारहिं जन्मादिक जग कामा ।। ३ ।।
वन्दौं ब्रह्म अनन्त अरूपा । उरू रूप उन ज्योति स्वरूपा ।। ४ ।।

सौम्य ज्ञानधन सुख प्रद धर्मी । हनते घोर व मूढ़ अधर्मी ॥ ५ ॥
वन्दौं मोक्षानन्द प्रदाता । सर्वाध्यक्ष पुरुष जगपाता ॥ ६ ॥
जय परमात्मा अचरजकारी । जय सत्वादिक धर्म प्रचारी ॥ ७ ॥
तुम सर्वेन्द्रिय गुण के द्रष्टा । सदाभास असत जगस्रष्टा ॥ ८ ॥
मूलप्रकृति अपवर्ग परायण । आत्ममूल जय हरि नारायण ॥ ९ ॥
विधि निषेध रहित अविनासी । जय क्षेत्रज्ञ सु स्वयं प्रकासी ॥ १० ॥

दोहा- **नित्य मुक्त करुणामय, भूरिकरण भगवान ।**
शरणागत फाँसीहरण, अघहारण सुखखान ॥ १६ ॥

चौ- आसत देह सुवन धन दारा । उनहित पाउ न किसी प्राकारा ॥ १ ॥
वन्दौ उन गुण संग विवर्जित । जिन पद ऋषि मुनि पुनि पुनि वन्दित ॥ २ ॥
मौक्ष व धर्मादिक हित भजहीं । त्वरित इष्टगति सो नर लहही ॥ ३ ॥
जीवनमुक्त पुरुष दिन राती । हेरत जिन पद लखि निज भाती ॥ ४ ॥
उन ऐश्वर्यपूर्ण भगवाना । वन्दौं ज्ञानस्वरूप महाना ॥ ५ ॥
देवत जो सुख सभी प्रकारा । वहि प्रभु करहिं मोर उद्धारा ॥ ६ ॥
जो जन शरण रहे प्रभु तोरी । चाहत कछु न वस्तु पद छोरी ॥ ७ ॥
परम दिव्य मंगलमय लीला । गाकर मगन रहहिं मतिशीला ॥ ८ ॥
अस्फुट शक्तिमान अविनासी । इन्द्रि अतीत सूक्ष्म सुखरासी ॥ ९ ॥
रहहु निकट पर दीखहु दूरी । ज्ञान भकति करि पावत सूरी ॥ १० ॥

दोहा- **परम ब्रह्म परिपूर्ण जे, आदि पुरुष सुखधाम ।**
उन अनन्त भगवान को, वारम्वार प्रणाम ॥ १७ ॥

चौ- पाकर सूक्ष्म कला जिन एकी । नाम व रूप व भेद अनेकी ॥ १ ॥
ब्रह्मादिक सुर देव चराचर । प्रत्येक कल्प में प्रकटत आकर ॥ २ ॥
प्रकटत किरण यथा अनलाई । होवत लीन उसी में जाई ॥ ३ ॥
रवि रश्मि जिमि रवि से आवे । पाछे वहि रवि बीच सिधावे ॥ ४ ॥
त्यों मन इन्द्रिय मति तनु सारा । प्रकटत उनहीं हरि के द्वारा ॥ ५ ॥
पाछे वे हरि बीच सिधावे । आखिर में सब हरि बन जावै ॥ ६ ॥
वे प्रभु देव असुर नर नाँहीं । खग तिय षंड न पुरुष दिखाही ॥ ७ ॥
वे सम विषम जन्तु भी नाँही । गुण अरु कर्म न कार्य लखाही ॥ ८ ॥
सबके बाद रहे अवशेषा । जानो वहि हरि रूप विशेषा ॥ ९ ॥
वहि प्रभु भीत भक्त भय हारी । प्रकटो मम सन्मुख सुखकारी ॥ १० ॥

दोहा- **वचने की कुछ लालसा, नहीं ग्राह से तात।**
मोह रूप आवरण से, ढका किन्तु मम गात ॥ १८ ॥

चौ- नाथ मोह ते छूटन चाहूँ। और बात मोरे मन नाहूँ ॥ १ ॥
भगवत कृपा बिना सुखदाई। मिलहि ज्ञान ना लाख उपाई ॥ २ ॥
यही हेतु उन ब्रह्म स्वरूपा। शरणागत मैं ज्योति स्वरूपा ॥ ३ ॥
योगी हेरहि जिन निशियामा। उन योगेशहिं करूँ प्रणामा ॥ ४ ॥
प्रपन्न पाल जन् शक्ति दुरन्ता। करूँ प्रणाम उन ईश अनन्ता ॥ ५ ॥
निज आत्मा बीचे जो बसहीं। तदपि न नर जिनको नहिं लखहीं ॥ ६ ॥
सब प्रकार जो पूरण कामा। उन ईश्वर हित करूँ प्रणामा ॥ ७ ॥
भेद भाव तजि जब गज राया। विविध भाँति इति स्तोत्र सुनाया ॥ ८ ॥
इति गजेन्द्र उप वर्णित वानी। विविध सुमूर्ति देह अभिमानी ॥ ९ ॥
ब्रह्मादिक तहँ एक न आये। तब सर्वात्म हरि तहँ धाये ॥ १० ॥

दोहा- **गजपति का दुख देख अरु, सुनकर स्तोत्र महान।**
खगपति पर आरूढ़ हो, आये वहँ भगवान ॥ १९ ॥

चौ- करते वन्दन हरि की सारे। पहुँचे सुर भी ताल किनारे ॥ १ ॥
इत गजेन्द्र को नीर अगाधू। खींचन लागा ग्राह असाधू ॥ २ ॥
अब तो वह गज व्याकुल भारी। निज दृष्टि नभ ऊपर डारी ॥ ३ ॥
देखे तदा सुदरशन धारी। आवत हरि खगपति असवारी ॥ ४ ॥
कमल कुसुम तब सूँड उठावा। बोला दीन वचन घबरावा ॥ ५ ॥
भगवन अखिल गुरू सुख धामा। हे नारायण करूँ प्रणामा ॥ ६ ॥
देखा गजपति अति घबराया। तब हरि खगपति तुरत तजाया ॥ ७ ॥
कूदे झट सरवर के ऊपर। खींचा ग्राह सहित गज बाहर ॥ ८ ॥
सबके देखत हरि ने राजन। चक्र सुदरशन ते नक्रानन ॥ ९ ॥
कीन्हा तुरत विदारण राया। यों गजेन्द्र को तुरत छुड़ाया ॥ १० ॥

दोहा- **बोले मुनि शुकदेव सुनु, हे नृप ब्रह्म महेश।**
गंधर्वादिक देवरिषि, सुरगण सहित सुरेश ॥ २० ॥

चौ- कुसुम वृष्टि हरि ऊपर डारी। हरि लीला लखि चकित अपारी ॥ १ ॥
बजी दुंदुभि नभ के ऊपर। नाचन लगीं अप्सरा गाकर ॥ २ ॥
सिद्ध व चारण रिषि मुनि सारे। उन हरि के गुण कर्म उचारे ॥ ३ ॥
पूरब भव बीचे यह ग्राहा। हूहू नामक अधिपति हाहा ॥ ४ ॥

देवल दीन्हा शाप कठोरा । यहि हित ग्राह भयउ यह घोरा ॥ ५ ॥
एक समै हूहू तिय संगा । करत विनोद नीर विच गंगा ॥ ६ ॥
वहां एक देवल ऋषि राई । ठाढ़े जल प्रभु ध्यान लगाई ॥ ७ ॥
होकर निजमन वशी प्रमादा । पकरा हूहू देवल पादा ॥ ८ ॥
दीन्हो शाप कुपित मुनि ताहू । होउ ग्राह तुम नीर अथाहू ॥ ९ ॥
अनुनय विनय करी जब भारी । तब मुनि देवल गिरा उचारी ॥ १० ॥

दोहा- **ऐंचा जैसे मम पद, तुम मति मंद गँवार ।**
ऐसे ऐंच गजेन्द्रहि, होवहिं तव उद्धार ॥ २१ ॥

चौ- जब ते भयउ ग्राह सर माँही । अब उद्धार किये हरि आही ॥ १ ॥
सद्य मुक्त होकर जलनाहा । कीन्ह प्रणाम त्याग तनु ग्राहा ॥ २ ॥
प्रभु अनुकम्पित वारम्वारा ॥ परिक्रम करि निज धाम सिधारा ॥ ३ ॥
इत हरि स्पर्शत मुक्त गजेन्द्रा । पायउ भगवत रूप नरेन्द्रा ॥ ४ ॥
पीत वसन भुज सुन्दर चारी । सीस मुकुट श्रुति कुंडल धारी ॥ ५ ॥
हे नृप द्रविड़ देश अधिकारी । पाण्ड्य विष्णु व्रत लीन अपारी ॥ ६ ॥
इन्द्रधुम्न नामक इक राजा । वह मलयाद्रि गयउ तप काजा ॥ ७ ॥
एक समय धृत मौन जटाधर । पूजत अच्युत हरि वह नृप वर ॥ ८ ॥
लेकर शिष्य संग मुनि कुंभज । आये जहँ नृप आश्रम निज तज ॥ ९ ॥
अकृत अर्चनादिक चुपचापा । स्थित लखि नृपहिं दीन्ह मुनि शापा ॥ १० ॥

दोहा- **कुञ्जर सम यह स्तब्ध मति, कीन्ह विप्र अपमान ।**
यदि हित गज योनि इसे, मिलहि तमोगुण खान ॥२२॥

चौ- एवं शाप दिये घट योनि । मानी इन्द्रधुम्न यह होनी ॥ १ ॥
अब नृप निज स्मृति नाशनहारी । योनि कोञ्जरी पायउभारी ॥ २ ॥
हरि अर्चन अनुभव ते राया । हरि स्मृति प्राप्त भई गज काया ॥ ३ ॥
यों हरि ने गजराज उबारा । पार्षद बीच कियो स्वीकारा ॥ ४ ॥
पाछे पार्षद रूप गजेन्द्रा । कर निज संग सवार खगेन्द्रा ॥ ५ ॥
स्तूयमान विबुधादिक द्वारा । गये अलौकिक धाम अपारा ॥ ६ ॥
वरणी मैं महिमा यदुनन्दन । अरु गजेन्द्र गाथा इमि राजन ॥ ७ ॥
यह गजेन्द्र गाथा जे सुनही । स्वर्ग व कीरति सो नर लहहीं ॥ ८ ॥
गज गाथा दुःस्वप्न नसावे । कलि कलमष सब तुरत हटावे ॥ ९ ॥
श्रेयस्कामी द्विज उठि प्राता । पढ़ही अशुभ सुपन हित ताता ॥ १० ॥

दोहा- **गजपति से भगवान ने, कही वचन इस तौर ।**
मोहिं तोहिं जे सुमिरहीं, होकर प्रेम विभोर ॥२३॥

चौ - सुमिरहिं सर गिरि कंदर कानन । कीचक वेत्र वेणु तरु गुल्मन ॥ १ ॥
सुमिरहिं ब्रह्मा शिव ममधामा । श्वेतद्वीप क्षीरोद ललामा ॥ २ ॥
श्रीवत्स व कौस्तुभ मणि माला । गदा सुदरशन शंख विशाला ॥ ३ ॥
पतगेश्वर लक्ष्मी विधि शेषा । प्रहलाद व नारद मुनी महेशा ॥ ४ ॥
मत्स्य कूर्म सूकर अवतारा । सोम हुताशन दिन मणि तारा ॥ ५ ॥
धर्म सनातन गौ द्विज भजहीं । मूल प्रकृति सत सत प्रणव जे जपही ॥ ६ ॥
दाक्षायणी धरम तिय सारी । कश्यपमुनी सुधाकर नारी ॥ ७ ॥
गंग सुरसती नन्दा सरिता । यम भगिनी कालिन्दी चरिता ॥ ८ ॥
भक्त शिरोमणि ध्रुव रिषि साता । जनक युधिष्ठिर नर विख्याता ॥ ९ ॥
सुमिरहिं जे इनके शुभ नामा । तजि सब पाप आव मम धामा ॥ १० ॥

दोहा- **प्रातकाल उठकर नर, गावहिं स्तोत्र तुम्हार ।**
अन्त समय में विमल मति, देऊं अपरम्पार ॥२४॥ क
इस प्रकार कहकर हरि, हे नृप शंख बजाय ।
सबके देखत चल दिये, गजहीं गरुड चढ़ाय ॥२४॥ ख

चौ - राजन पाप विनाशन हारी । कथा गजेन्द्र मोक्ष शुभकारी ॥ १ ॥
निज मुख ते बरणी यह तोसे । रैवत अन्तर सुनु अब मोसे ॥ २ ॥
मनु तामस के जो लघु भ्राता । पंचम रैवत मनु विख्याता ॥ ३ ॥
अर्जुन विंध्य व बलि विवेकी । पाये मनु सुत गेह अनेकी ॥ ४ ॥
विभु मानक भये इन्द्र प्रधाना । भूत रयादिक सुरगण नाना ॥ ५ ॥
वेदशिरा आदिक विख्याता । अम्बर बीच रहे मुनि साता ॥ ६ ॥
पत्नी शुभ्र विकुंठ जाया । सुर सत्तम वैकुंठ सुहाया ॥ ७ ॥
पुर वैकुंठ रचे नृप येही । भई मुदित लक्ष्मी लखि तेही ॥ ८ ॥
जासु प्रभाव गुणादिक सारे । स्कंध तृतीय बीच उचारे ॥ ९ ॥
षष्टम मनु जिन चाक्षुप नामा । चक्षु सुत सो पूरण कामा ॥ १० ॥

दोहा- **सुद्युम्न पुरुष अरु सुत, मंत्रद्रुम भै इन्द्र ।**
आद्यादिक सुरगण नभ, वरिक आदि मुनीन्द्र ॥२५॥

चौ- वैराज नाम संभूति नारी । जाये अजित नाम अवतारी ॥ १ ॥
देव दनुज मिल सागर मंथन । कीन्हा अमृत हेतु राजन ॥ २ ॥

कूर्मरूप धरकर जल ये ही । मन्दर गिरि धारेउ निज देही ॥ ३ ॥
क्षीर सिन्धु जिमि मन्थन कीन्हा । यथा पृष्ठ मन्दर गिरि लीन्हा ॥ ४ ॥
पायउ सुधा यथा सुर सोहू । मुनिवर गाथ सुनावहु मोहू ॥ ५ ॥
जे जे चरित किये जगदीशा । वह हरिकर्म कहो मुनि ईशा ॥ ६ ॥
ज्यों ज्यों कथा सुनावहु मोहू । तृप्त होत ना मम चित ओहू ॥ ७ ॥
बोले सूत हे सुनो मुनीशा । पूछा प्रश्न यथा नर ईशा ॥ ८ ॥
हरि लीला वरणन मुनि लागे । युद्ध बीच जब देव अभागे ॥ ९ ॥
पीड्यमान दैत्यन शर द्वारा । विगत प्राण महि गिरे अपारा ॥ १० ॥

दोहा- **जब दुर्वासा शाप ते, गत श्री तीनों लोक ।**
इन्द्रादिक सुर मुनिन को, हे नृप व्यापा शोक ॥२६॥

चौ - कबहूँ पंथ बीच दुर्वासा । आवत सुरपति लखि निज पासा ॥ १ ॥
निज माला मुनि कंठ उतारी । दीन्ही सुरपति प्रति हितकारी ॥ २ ॥
शचिपति श्रीमद ते मतवाला । डारी निज गज कुंभ विशाला ॥ ३ ॥
गज मदमत्त माल महि डारी । निज पद ते कुचली पुनि सारी ॥ ४ ॥
तब तो कुपित भये दुर्वासा । दीन्हा शाप इन्द्र मद नाशा ॥ ५ ॥
तीनों लोक सहित सुरराई । होवहु विभवहीन गृह जाई ॥ ६ ॥
सुमिरण कर इति मुनि के शापा । इन्द्रादिक सुर मन दुख व्यापा ॥ ७ ॥
इन्द्र वरुण अब किये विचारा । किन्तु न निश्चय एक प्रकारा ॥ ८ ॥
सुरपति सहित तदा सुर सारे । मेरु गिरि विधि सभा सिधारे ॥ ९ ॥
कर प्रणाम सब देव विधाता । वरणन हाल कियो दुख दाता ॥ १० ॥

दोहा- **देवन को निष्तेज लखि, दैत्यन बली अपार ।**
मन से हरि को सुमिर विधि, बोले वचन विचार ॥२७॥

चौ- मैं भव तुम खग मृग तरु मानव । प्रकटे जासु अंश सब दानव ॥ १ ॥
चालहु उन हरि की सब शरणा । ऋषि मुनि हेरत हिय जिन चरणा ॥ २ ॥
वध्य व रक्षणीय नही कोई । तदपि सकल गुण धारत सोई ॥ ३ ॥
यही काल स्थिति पालन रूपा । जगगुरु सुरप्रिय सुखत अनूपा ॥ ४ ॥
चालें अब हम मिलकर सारे । सब सुर जाकर उन्हें पुकारे ॥ ५ ॥
इमि ब्रह्मा देवन समुझाई । क्षीरसिन्धु तट पहुँचे जाई ॥ ६ ॥
अलख रूप की वहाँ विधाता । कीन्ही विनय अहोसुरत्राता ॥ ७ ॥
अविकृत सत्यदेव वर ईशा । सर्व भूत व्यापी जगदीशा ॥ ८ ॥

अनन्त आदि पुरुष भगवाना । पावत तर्क व नहिं अनुमाना ॥ ९ ॥
करें प्रणाम नाथ हम तोही । आये चरण शरण खर द्रोही ॥ १० ॥

दोहा- **अहंकार मन प्राण मति, के ज्ञाता कहलात ।**
विषय सहित सब इन्द्रियाँ, तुमही ते प्रभु आत ॥ २८ ॥

चौ - करहि न स्पर्श तुम्हें अज्ञाना । प्रकृति विकार मृतक तनु माना ॥ १ ॥
रहहु न उस तनु के आधीना । विद्या अउर अविद्या हीना ॥ २ ॥
सुख स्वरूप विभु तुम अविनासी । त्रियुग बीचे स्वयं प्रकासी ॥ ३ ॥
हम सब प्रभु शरण तुव आये । यह तनु स्यंदनचक्र कहाये ॥ ४ ॥
धीर पुरुष इस रथ के द्वारा । करत उपासन सभी प्रकारा ॥ ५ ॥
उन हरि को हम करें प्रणामा ॥ सब प्रकार जे पूरण कामा ॥ ६ ॥
प्रकृति परे जो ज्ञान स्वरूपा । एवं सब विधि अदृश अनूपा ॥ ७ ॥
जिन माया अति प्रबल अथाहू । पावत पार न कोई ताहू ॥ ८ ॥
जिस माया ते मोहित जाता । जिन स्वरूप कोई ना पाता ॥ ९ ॥
जो सब तनु बीचे संचारी । वन्दों हम उन भव भय हारी ॥ १० ॥

दोहा- **मैं अरु रिषि मुनि देव गण, सतगुण ते प्रकटाय ।**
तदपि निरूपाधिन तुम्हें, जान सकें हम नाँय ॥ २९ ॥

चौ- पुनि रज तम मय दैत्य तुम्हारा । जान सकै वपु कवन प्रकारा ॥ १ ॥
महि जिन प्रभु की चरण बखानी । श्रुति विध भूत सर्ग जहँ आनी ॥ २ ॥
तासु रेत यह अम्भ बखाना । प्रकटे तासु लोक गुणवाना ॥ ३ ॥
जिन हरि का मन सोम कहाया । अन्न व बल आयु जिन जाया ॥ ४ ॥
उदर मध्य जो अन्न पचाही । सो अगनि उन वदन कहाही ॥ ५ ॥
अमृत मृत्यु मुकति कर द्वारा । सो रवि उन चक्षु निरधारा ॥ ६ ॥
जिनके प्राण चराचर प्राना । रंध्र देह गत हिय दिशि काना ॥ ७ ॥
जासु हास ते सुर प्रकटाये । क्रोध रुद्र मति ते विधि जाये ॥ ८ ॥
शिश्न प्रजापति जिन श्री छाती । पीठ अधर्म धर्म स्तन जाती ॥ ९ ॥
सीस स्वर्ग अप्सरा विहारी । मुख ते महि सुर अरु श्रुति चारी ॥ १० ॥

दोहा- **बल क्षत्री जिनकी भुजा, उरू वैश्य व्यापार ।**
चरण कमल ते शूद्र सब, जिन सेवा का भार-॥३०॥

चौ- अधर लोभ जनु प्रीति ऊपर । नासा चमक स्पर्श जनु मनहर ॥ १ ॥
भ्रुव यम भव जानहु उन वाला । काम्य कर्म गुण भूत व व्याला ॥ २ ॥

दीखत भौतिक जिते प्रपंचा । जासु योग माया सब संचा ॥ ३ ॥
महा विभूति व भवभय हारी । होउ मुदित वह रमा विहारी ॥ ४ ॥
जे उप शान्त शक्ति सुखधामा । उन हरि हेतु करें प्रणामा ॥ ५ ॥
हम सब चरण शरण में आये । अब विस्मित मुख कंज लखाये ॥ ६ ॥
समय समय स्वेच्छा अनुसारी । करत कर्म जे स्वयं विचारी ॥ ७ ॥
इस जग बीच कर्म दुर विपहू । भूरि क्लेश पाकर नर करहू ॥ ८ ॥
तदपि पात फल प्रभो अधूरा । पावत तव पद अरपित पूरा ॥ ९ ॥
होवत स्वल्प बहुत हरि अरपित । स्वल्प न करहु कबहुँ फल कल्पित ॥ १० ॥

दोहा- **वृक्ष मूल सींचत यथा, जल शाखा बिच आत ।**
विष्णु अराधन करत त्यों, सब आराधन जात ॥३१॥

चौ- हे अनन्त निरगुण हम तेही । करे प्रणाम सत्वस्थित जेही ॥ १ ॥
कह शुकदेव अरे कुरुनन्दन । कीन्ह विनय इमि विधि सुरवृन्दन ॥ २ ॥
प्रकटे तदा वहाँ भगवाना । भानु कोटि रवि उदय समाना ॥ ३ ॥
तासु तेज ककुभा अरु अम्बर । देख सकै नहि उनको वे सुर ॥ ४ ॥
प्रकटत देख उन्हें शिव धाता । लोचन कंज नील मणि गाता ॥ ५ ॥
चारु अंग भ्रुव सुन्दर सहिता । तप्त हेम आभा पट पीता ॥ ६ ॥
क्रीट मुकुट भूषित श्रुति कुंडल । वनमाला शोभित जिनके गल ॥ ७ ॥
काञ्चि कलाप वलय वर हारा । नूपुर मणिमय जटित सुभारा ॥ ८ ॥
अस्त्रादिक जे मूरति स्ताना । सेवत परम पुरुष भगवाना ॥ ९ ॥
शर्व सहित विधि प्रभुहिं लखाई । करने लगे विनय इमि राई ॥ १० ॥

दोहा- **हे अजात जन्म स्थिति, संयम तोहि प्रणाम ।**
पूज्य रूप हे अमर वर, ईश विश्व के धाम ॥३२॥

चौ- तुमहीं हे प्रभु विश्व रचाई । करहु प्रवेश उसी में आई ॥ १ ॥
यथा काठ मन्थन ते आगी । पावत त्यों मुनि प्रभु अनुरागी ॥ २ ॥
कमल नाभ कर दर्श तुम्हारे । भये कष्ट सब दूर हमारे ॥ ३ ॥
यथा गंग निर्मल जल पाई । होवत मुदित तथा गजराई ॥ ४ ॥
जिस हित चरण मूल हम आये । वह सब कारण नाथ जनाये ॥ ५ ॥
अन्तरात्मा सब जग साखी । रिषि मुनि संत देव पत राखी ॥ ६ ॥
करे निवेदन क्या हम ताता । मैं भव सुर मुनि रिषि तव गाता ॥ ७ ॥
जिमि कण अलग होत अनलाई । निज तनु कथा लखे अलगाई ॥ ८ ॥

अन्य बात हम कहा बतावे । निज तनु श्रेय हेतु हम गावें ॥ ९ ॥
रिषि मुनि धेनु देव हितकारी । कहु उपाय प्रभु हमें विचारी ॥१०॥

दोहा- **ब्रह्मादिक द्वारा स्तुत प्रभु इमि उनका श्रेय विचार ।**
बद्धाञ्जलि उन सुरन ते बोले वचन सुखार ॥३४॥

चौ- सुनो देव शंभो हे धाता । मोरे वचन श्रेय सुखदाता ॥ १ ॥
तुम सब निज निज गेह सिधाओ । दैत्य दनुज संग मेल बढ़ाओ ॥ २ ॥
प्रथम कार्य निज साधन काजू । शत्रुहि मित्र बनाहु आजू ॥ ३ ॥
पाछे मूषक सर्प समाना । करो पूर्ण साधन निज नाना ॥ ४ ॥
अमृत के उत्पादन काजू । शीघ्र यतन करहू तुम आजू ॥ ५ ॥
मरण ग्रस्त भी जिस करि पाना । पात अमरता इमि हम माना ॥ ६ ॥
तृण अरु लता औषधि लाकर । डारहु क्षीर सिंधु बिच जाकर ॥ ७ ॥
मन्दर गिरि की कर मन्थानी । रज्जू करहु वासुकी आनी ॥ ८ ॥
मन्थहु क्षीर-सिंधु जलराया । पाकर तुम सब मोर सहाया ॥ ९ ॥
एवं कृत तो तुम फल भागी । राक्षस पावहिं क्लेश अभागी ॥ १० ॥

दोहा- **अनुमोदन सब कीजिये, निज शत्रुन की बात ।**
अर्थ पूर्ण जो सामते, सो क्रोध से जात ॥३४॥

चौ- निसरहिं काल कूट विष भारी । डरहु तासु ना किसी प्रकारी ॥ १ ॥
मथनोत्पन्न वस्तु पर लोभा । करहु न काम रोष अरु क्षोभा ॥ २ ॥
इमिदेवन प्रति दे आदेशा । गये हरि वैकुंठ प्रदेशा ॥ ३ ॥
इत सुर भी कर प्रभुहिं प्रणामा । गवने हे नृप निज निज धामा ॥ ४ ॥
आये अब मिल बलि के द्वारे । शस्त्र हीन वृन्दारक सारे ॥ ५ ॥
शस्त्र रहित जब देवन देखा । जात क्षोभ सब दनुज विशेषा ॥ ६ ॥
तदा काल विद् संधि व विग्रह । किये निषेध दैत्य बलि संग्रह ॥ ७ ॥
बलि समीप पहुंचे जब देवा ॥ जासु असुर यूथप कृत सेवा ॥ ८ ॥
अब महेन्द्र बलि को समुझावा । पुरुषोत्तम शिक्षा सब गावा ॥ ९ ॥
इन्द्र वचन सुनकर बलि काना । शम्बर नेमि असुर प्रिय माना ॥ १० ॥

दोहा- **अब तो राक्षस सुरन सह, मिलकर सभी प्रकार ।**
चाले सब सागर निकर, मन्दर गिरिहिं उखार ॥ ३५ ॥

चौ- रहे समर्थ वहन ना भारा । भये श्रान्त बलि शक्र अपारा ॥ १ ॥
त्यागा पंथ बीच गिरि सोऊ । निपतवान पुहि मरदेउ दोऊ ॥ २ ॥

बाद भगन मन भगन व बाहू । जंघा स्कंध भग्न लखि ताहू ॥ ३ ॥
गरुड़ ध्वज हरि वहँ पर आये । निज दृष्टि सुर दनुज जिआये ॥ ४ ॥
एक हस्त गिरि गरुड़ चढ़ाये । सुर दानव संग सिन्धु सिधाये ॥ ५ ॥
खगपति पर से गिरिहिं उतारा । क्षीर सिंधु जल वीचे डारा ॥ ६ ॥
नभचर पति पुनि हरि के द्वारा । विदा प्राप्त वैकुंठ सिधारा ॥ ७ ॥
अमर वृन्द पाछे फल काजू । कर आमन्त्रित सब अहि राजू ॥ ८ ॥
वेष्ठित कीन्ह तासु गिरि राई । मथने लगे सिन्धुहि राई ॥ ९ ॥
सुरन सम्हेत वासुकी आनन । पकरेउ प्रथम तदा हरि राजन ॥ १० ॥

दोहा- **दैत्य पतिन ने किन्तु यह, किया नहीं स्वीकार ।**
अशुभ अंग अहि पुच्छ को, गहहिं न किसी प्रकार ॥३६॥

चौ- दनुज सैन्यपति कहे पुकारी । सुनो अमरगण बात हमारी ॥ १ ॥
कियो अध्ययन शुभ विधि सहिता । वेदशास्त्र हम सब जगजीता ॥ २ ॥
उच्च वंश पुनि जनम हमारा । पकरहिं पुच्छ न किसी प्रकारा ॥ ३ ॥
यों निज मुख ते कहि अलगाई । ठाढ़े भये सभी चुपचाई ॥ ४ ॥
देखे विष्णु दनुज चुपचापू । पकरी पुच्छ अमर सह आपू ॥ ५ ॥
अमर वृन्द दानव अब मिलकर । मथने लागे क्षीर समुन्दर ॥ ६ ॥
अमर असुर जब जोर लगाया । बल पूर्वक वह गिरी गहावा ॥ ७ ॥
तदपि भार अधिकता हेतू । बूढन लगा सिन्धु गिरिकेतु ॥ ८ ॥
अब बल पौरुष नष्ट लखावा । देव दनुज तब सब घबरावा ॥ ९ ॥
सबके वदन उदासी छाई । विजय दैव पर कोई न पाई ॥ १० ॥

दोहा- **विघ्न राज कृत विघ्न लखि, अब जगपति भगवान ।**
कच्छप वपुधर कर पुनि, जल बिच कीन्ह पयान ॥३७॥

चौ- पुनि मन्दर निज पीठ उठावा । दानव सुर के कष्ट मिटावा ॥ १ ॥
उत्थित गिरिहिं देख अब सारे । मंथन लगे भुजाबल धारे ॥ २ ॥
योजन लक्ष तदा भगवाना । धारण कीन्हो द्वीप समाना ॥ ३ ॥
सुर अरु असुर भुजा से कम्पित । कच्छप पीठ जबै गिरि घूमत ॥ ४ ॥
अंग कंडूयन सम वह जाना । प्रबल पराक्रमी अब भगवाना ॥ ५ ॥
असुर रूप ते असुरन माँही । अमर रूप ते सुरन सिधाहीं ॥ ६ ॥
गये अबोध रूप अहि भीतर । बाढ़े बल वीरज उन नृपवर ॥ ७ ॥
मथन समै गिरि पर भगवाना । रहे विराजित दया निधाना ॥ ८ ॥

देव दनुज अध उच्च प्रदेशा । नेत्र गोत्र इमि किये प्रवेशा ॥ ९ ॥
ब्रह्मा इन्द्र शंभु अब सारे । तेहि काल सब जयति उचारे ॥ १० ॥

दोहा- **यों हरि ते बल प्राप्त करि, देव दनुज इक साथ ।**
मथने लागे क्षीर निधि, हरि धर दश शत हाथ ॥ ३८ ॥

चौ- तदा अहीन्द्र सहस मुख श्वासा । धूम सहित विष अनल प्रकासा ॥ १ ॥
तासु धूम ते सभी निशाचर । भये अतेज यथा तरु जलकर ॥ २ ॥
वासुकि श्वास लपट ते सारे । सुर भी बच ना सकै विचारे ॥ ३ ॥
पटमाला मुख धूमिल जाता । कंचन कवच मनोहर गाता ॥ ४ ॥
हरि माया प्रेरित तेहि काला । बरसन लागे मेघ निराला ॥ ५ ॥
सीतल मन्द सुगंधित वाता । चाली तदा सकल सुख दाता ॥ ६ ॥
करत मथन सब जोर लगावा । तदपि सुधा दरसन ना पावा ॥ ७ ॥
अब भगवान स्वयं सुखकारी । मथन लगे सहस भुजधारी ॥ ८ ॥
तनु घनश्याम पीत पटधारी । अरुण नयन माला गलधारी ॥ ९ ॥
कच कुंचित श्रुति कुंडल सोहा । आनन कोटि काम छवि मोहा ॥ १० ॥

दोहा- **अहिपत्ति को जिन कर गहि, मथन कीन्ह उस काल ।**
परवत सम शोभित भये, वे हरि हे नरपाल ॥३९॥

चौ- मथ्यमान तब सिन्धु अपारी । प्रकटाकाल कूट विपभारी ॥ १ ॥
तदामीन कच्छप अहिभारी । व्याकुल मकर ग्राह जलचारी ॥ २॥
उग्र वेग ते अब विष घोरा । फैलन लागा जब चहुँ ओरा ॥ ३ ॥
भये देव राक्षस सब भीता । कोई न रक्षक निजमन चीता ॥ ४ ॥
शंभुशरण में तब सब आये । कीन्ही विनय बहुत घबराये ॥ ५ ॥
देव देव हे मृड जगभावन । विश्वनाथ निज जन दुख हारन ॥ ६ ॥
काल कूट इस विप के द्वारा । भयो दग्ध विभु यह जग सारा ॥ ७ ॥
यही हेतु शिव शरण तुम्हारी । आये हम दानव दनु जारी ॥ ८ ॥
बन्ध मोक्ष तुमही जग त्राता । तुमहीं सबके एक विधाता ॥ ९ ॥
परम गुह्य भव ब्रह्म स्वरूपा । वन्दहिं स्मरहर भीम अनूपा ॥ १० ॥

दोहा- **गुण मयि निज माया सहित, सृष्टि हेतु तुम नाथ ।**
धारहु अपने रूप को, विधि विष्णु शिव साथ ॥४०॥

चौ- तुमही परम ब्रह्म हे ईशा । शब्द योनि मृड भव जगदीशा ॥ १ ॥
तुम ही काल रूप जगहारी । अनल तोर मुख तुम क्रतुभारी ॥ २ ॥

दिशा कान महिपद गति काला । जीहा वरुण नाभि नभ जाला ॥ ३ ॥
श्वासा अनिल नयन रवि माना । रेत नीर मन चन्द्र वखाना ॥ ४ ॥
सागर कोंख व अस्थि पहारू । छन्द धातु तरु रोम अपारू ॥ ५ ॥
शिव आनन उपनिपध कहाया । सर्व धर्म पशुपति हिय गाया ॥ ६ ॥
सत रज तम गुण नयन वखाना । ईक्षा वेद शास्त्र सव माना ॥ ७ ॥
लोकपाल ब्रह्मादिक सारा । पाये पार न नाथ तुम्हारा ॥ ८ ॥
मदन व दक्षयज्ञ तुम जारा । भूत द्रोहि त्रिपुरासुर मारा ॥ ९ ॥
नाथ तुम्हारे चरित न कोई । वरणन हेत समर्थ न होई ॥ १० ॥

दोहा- **गिरिजा के संग विचरत, कामी इव समशान ।**
कूर हिंस्र भाषहि तुम्हें, सो मूरख नादान ॥४१॥

चौ - शंभु रूप वे ना पहिचानत । तव स्वरूप ब्रह्मादिक जानत ॥ १ ॥
हम सव तुच्छ वुद्धि के द्वारा । जान सकें पुनि कवन प्रकारा ॥ २ ॥
देखा अपर जगत ना कोई । दीन वन्धु जो रक्षक होई ॥ ३ ॥
हे महेश शिव रूप तुम्हारा । जग कल्याण हेतु तुम धारा ॥ ४ ॥
अन्धक रिपु हम शरण तुम्हारे । आये होकर दुखी अपारे ॥ ५ ॥
दुखी देख शिव जगत अपारा । गिरिजा से यों वचन उचारा ॥ ६ ॥
काल कूट दुख पाकर भारी । आई सृष्टि शरण हमारी ॥ ७ ॥
करु अभय अव इन कल्यानी । दीन पालना श्रेष्ठ भवानी ॥ ८ ॥
साधु क्षण भंङ्गुर निज प्राना । करे जीव पालन वर माना ॥ ९ ॥
वद्ध वैर मोहित जो माया । करें सदा उन पर जो दाया ॥ १० ॥

दोहा- **उस नर पर वैकुंठपति, होवत मुदित अपार ।**
जव होवत हरि मुदित तो, मुदित सभी संसार ॥४२॥

चौ - काल कूट विष आजु भवानी । मेटू सव दुख प्रजा अघानी ॥ १ ॥
गिरिजा से इमि पूछा राया । कालकूट विष हाथ उठाया ॥ २ ॥
शिव प्रभाव को जान भवानी । रोके नहिं शंभु सुखखानी ॥ ३ ॥
खावत विष पौरुप दिखलावा । शिव शंकर गल नील वनावा ॥ ४ ॥
तव ते नीलकंठ शिव गाया । आगे कथा सुनो तुम राया ॥ ५ ॥
लोक ताप लखि सज्जन सारे । होवत निज मन दुखी अपारे ॥ ६ ॥
शंभु कर्म लखि यह गिरिजाई । विधि विष्णु शिव कीरति गाई ॥ ७ ॥
शिव जव विष निज हस्त उठावा । कुछ विष तदा भूमि पर आवा ॥ ८ ॥

दंद शूक सरिसृप अपारा। सो विष औषधि अहि सब धारा ॥ ९ ॥
कियो पान जब विष शिव द्वारा। भये मुदित सुर दैत्य अपारा ॥ १० ॥

दोहा- **सागर मन्थन अब कियो, पुनि दानव दनुजारि।**
प्रकट भई सुरभी तदा, यज्ञ हेतु रिषि धारि ॥४३॥

चौ- उच्चैश्रवा अश्व पुनि जाता। श्वेत रूप सुन्दर सुखदाता ॥ १ ॥
बलि रुचि देख अश्वपर भारी। निज इच्छा तजि दियो सुरारी ॥ २ ॥
हरि शिक्षा सुरपति मनमानी। नहीं अश्व पर रुचि उन आनी ॥ ३ ॥
चतुर्दन्त ऐरावत नामा। निकसेउ कुञ्जर श्वेत ललामा ॥ ४ ॥
कियो ग्रहण सुरपति गजराई। पाछे कौस्तुभ मणि हरि पाई ॥ ५ ॥
पारिजात पुनि स्वर्ग विभूषण। प्रकटा यह अरथिन मनपूरण ॥ ६ ॥
मन्थन करत अप्सरा जाता। मन्दहास वर गति वर गाता ॥ ७ ॥
चितवन सुन्दर वसन मनोहर। सुरपुर वासिन प्रति अति सुखकर ॥ ८ ॥
भगवतलीन रमा पुनि जाता। शोभा मूरति सब सुख दाता ॥ ९ ॥
निज आभा ते करत प्रकाशा। यथा तड़ित ते चमकत आशा ॥ १० ॥

दोहा- **मा का यौवन रूप लखि, अरु औदार्य अपार।**
देव दनुज मानव तदा, मोहित बारम्बार ॥४४॥

चौ- कीन्ही स्पृहा रमा पर भारी। चकित भये लखि रूप अपारी ॥ १ ॥
लाये आसन तदा सुरेशा। हेमकुंभ भरि वारि नरेशा ॥ २ ॥
मूर्तिमान सरिता शुभकारी। औषधि सकल भूमि करधारी ॥ ३ ॥
सुरभी पंचगव्य शुभलाई। फल कुसुमादि वसन्त सुहाई ॥ ४ ॥
ऋषि मुनि आकर किये मिषेका। गावत गण गंधर्व अनेका ॥ ५ ॥
नटवर करत नृत्य गा गाना। पण व मृदंग मुरज सुर नाना ॥ ६ ॥
गौमुख वीणा वाद्य बजाये। दिग्गज कंचन कलश उठाये ॥ ७ ॥
कृत अभिषेक रमा पर सारे। द्विज द्वारा जब मंत्र उचारे ॥ ८ ॥
सागर पीत वसन पहिनाया। वैजयन्ति माला जल राया ॥ ९ ॥
भूषण चित्र विचित्र अनेकी। दीन्ह विश्वकर्मा शिरटेकी ॥ १० ॥

दोहा- **कुंडल नाग व पद्म अज, दियो सुरसती हार।**
मधुकर कृत गुंजार युत, कमल माल कर धार ॥ ४५ ॥

चौ- व्रीड हास श्रुति कुंडल धारी। वर कपोल पर चमकत भारी ॥ १ ॥
चंदन कुंकुम केशर लेपित। अति कृशोदरी दोउ स्तन शोभित ॥ २ ॥

हेमलता सम शोभित भारी । नूपुर कंचन युग पद धारी ॥ ३ ॥
देव असुर गंधर्व अपारी । पति खोजन हित रमा पधारी ॥ ४ ॥
सद्गुण किन्तु एक न पाया । करत विचार तदा इमि माया ॥ ५ ॥
दुर्वासादिक ऋप जग जेते । तापस किन्तु क्रोधजयि नैते ॥ ६ ॥
गुरु शुक्रादिक संग विहीना । चन्द्र ब्रह्म भी कामजयी ना ॥ ७ ॥
परशुराम आदिक बड़धर्मी । किन्तु न प्राणिन पर सदकर्मी ॥ ८ ॥
शिव नृपाल आदिक सब त्यागी । मुक्ति हेतु नहि ये अनुरागी ॥ ९ ॥
कार्त्तवीर्य आदिक बलवन्ता । नाशत काल वेग इन अन्ता ॥ ९ ॥

दोहा- **चिर वय मुनी मृकंडु सुत, मंगल शील न शेष ।**
शिव सब गुण सम्पन्न है, किन्तु अमंगल वेष ॥४६॥

चौ- सनकादिक विषयासत नाहीं । रहे समाधी लीन सदाहीं ॥ १ ॥
श्री मुकुन्द ही मंगलधारी । दीखत इनमें सभी प्रकारी ॥ २ ॥
किन्तु न रुचि उन प्रभु को मेरी । कर विचार यों रमा घनेरी ॥ ३ ॥
हरि निरपेक्ष होत भी राया । सब विधि हरि प्रति मन ललचाया ॥ ४ ॥
कर विचार यों कर धृत माला ॥ डारी विष्णु कंठ उस काला ॥ ५ ॥
प्राप्त हेतु पुनि हरि की दाया । ठाड़ी हरि समीप सुनु राया ॥ ६ ॥
तब निज वक्षस्थल भगवाना । दीन्हो रमा हेतु वर स्थाना ॥ ७ ॥
सुर सुन्दरि तब गाये गाना । देव बजाये बाजे नाना ॥ ८ ॥
विधि रुद्रादिक मिलकर सारे । कुसुम वृष्टि प्रभु ऊपर डारे ॥ ९ ॥
दोउ कर जोरे स्तोत्र उचारे । भये प्रजापति सुखी अपारे ॥ १० ॥

दोहा- **रमा उपेक्षित दैत्य अब, लोलुप सत्व विहीन ।**
निरुद्योग निर्लज्ज सब, भये तदा अतिदीन ॥४७॥

चौ- कन्या लोचन कमल समाना । नाम वारुणि सुन्दर जाना ॥ १ ॥
हरि अनुमति वह असुर गहाई । मथ्यमान पाछे जलराई ॥ २ ॥
अद्भुत एक पुरुष सुखदाई । भुज प्रलम्ब पीवर तरुणाई ॥ ३ ॥
कमल नयन तनु मेघ समाना । पीत वसन मणि कुंडल काना ॥४॥
सिंह विक्रमी कुंचित केशा । कर धृत अमृत कलश विशेशा ॥ ५ ॥
आयुर्वेद प्रवर्तक जासू । धनवन्तरि जिन नाम प्रकासू ॥ ६ ॥
सुधा कुंभ लखि दानव राया । बलपूर्वक वह कलस गहाया ॥ ७ ॥
नीयमान घट दनुजन द्वारा । देख देवता दुखी अपारा ॥ ८ ॥

पीछे सब हरि शरण सिधाये । देख दीन हरि वचन सुनाये ॥ ९ ॥
दैत्यन बीच परस्पर भारी । करूँ देव अब कलह प्रचारी ॥ १० ॥

दोहा- **काज तुम्हारे करण को, धरूँ मोहिनी रूप ।**
चिन्ता निज मन मति करो, बोले ज्योति स्वरूप ॥४८॥

चौ- उत अमृत हेतू सुनुराया । वे दानव मिथ कलह बढ़ाया ॥ १ ॥
दुर्बल दानव वचन उचारे । सम प्रयत्न साधक सुर सारे ॥ २ ॥
ना निज भाग यदि ये पाही । तो यह धर्म सनातन नाही ॥ ३ ॥
यों मुख भाषत दुर्बल बाता । कीन्ह विरोध प्रबल दनु जाता ॥ ४ ॥
सब उपाय विद् हरि उस काला । योषित रूप धरे सुरपाला ॥ ५ ॥
उत्पल श्याम मनोहर गाता । वर. कपोल आनन सुखदाता ॥ ६ ॥
कर्णाभूषण दोउ समाना । नासा उन्नत सुघड़ महाना ॥ ७ ॥
नवयौवन निर्वृत स्तन भारा । कम्बू ग्रीव कृशोदर सारा ॥ ८ ॥
मुदितानन चञ्चल वर लोचन । स्फटिक दन्त वर रतिमद लोचन ॥ ९ ॥
कंठाभरण भुजाङ्ग विभूषित । कुसुमित कुसुम केश पर गुंथित ॥ १० ॥

दोहा- **कटि पर काञ्ची काञ्चनी, पद पायल झनकार ।**
लाज भरी मुसकान युत, तिरछी भृकुटि कतार ॥४९॥

चौ- हाव भाव चितवन कृतभारी । उन दैत्यन मन काम प्रचारी ॥ १ ॥
आई जहाँ त्याग सद्भावा । अमृत हेतु कलह बढ़ावा ॥ २ ॥
झपटत दावन दस्यु समाना । अमृत कलश सुधाकृत पाना ॥ ३ ॥
आवत देखी तदा मनोहर । अद्भुत नारी वदन सुधाकर ॥ ४ ॥
लखकर उसकी सुन्दरताई । सोचन लगे निशाचर राई ॥ ५ ॥
नवयुवती यह आवत कैसी । सुघड़ नाक चम्पा कलि जैसी ॥ ६ ॥
अनुपम छटा छटक रही भारी । भाषत वचन इति सभी निशिचारी ॥ ७ ॥
जात काम युवति पहँ आये । प्रेम सहित सब वचन सुनाये ॥ ८ ॥
कंज पलास नयनि तुम कहऊ । तुम हो कवन कहाँ पर रहऊ ॥ ९ ॥
कवन काज तुम यहँ पर आई । तुम्हे देख सब मन पिघलाई ॥ १० ॥

दोहा- **देव असुर गंधर्व अरु, सिद्ध व चारण जात ।**
प्रथम स्पर्श तुम ना करीं, नर की क्या औकात ॥ ५०॥

चौ- हे सुभ्रूड्मि जानत तोहीं । हे वामा तुम सब मन मोही ॥ १ ॥
सब जग की जो सुन्दरताई । कूट कूट विधि तुमही भराई ॥ २ ॥

हेमलता सम शोभित भारी । नूपुर कंचन युग पद धारी ॥ ३ ॥
देव असुर गंधर्व अपारी । पति खोजन हित रमा पधारी ॥ ४ ॥
सद्‌गुण किन्तु एक न पाया । करत विचार तदा इमि माया ॥ ५ ॥
दुर्वासादिक ऋप जग जेते । तापस किन्तु क्रोधजयि नैते ॥ ६ ॥
गुरु शुक्रादिक संग विहीना । चन्द्र ब्रह्म भी कामजयी ना ॥ ७ ॥
परशुराम आदिक बड़धर्मी । किन्तु न प्राणिन पर सदकर्मी ॥ ८ ॥
शिव नृपाल आदिक सब त्यागी । मुक्ति हेतु नहि ये अनुरागी ॥ ६ ॥
कार्त्तवीर्य आदिक बलवन्ता । नाशत काल वेग इन अन्ता ॥ ६ ॥

दोहा- **चिर वय मुनी मृकंडु सुत, मंगल शील न शेप ।**
शिव सब गुण सम्पन्न है, किन्तु अमंगल वेष ॥४६॥

चौ- सनकादिक विपयासत नाहीं । रहे समाधी लीन सदाहीं ॥ १ ॥
श्री मुकुन्द ही मंगलधारी । दीखत इनमें सभी प्रकारी ॥ २ ॥
किन्तु न रुचि उन प्रभु को मेरी । कर विचार यों रमा घनेरी ॥ ३ ॥
हरि निरपेक्ष होत भी राया । सब विधि हरि प्रति मन ललचाया ॥ ४ ॥
कर विचार यों कर धृत माला ॥ डारी विष्णु कंठ उस काला ॥ ५ ॥
प्राप्त हेतु पुनि हरि की दाया । ठाड़ी हरि समीप सुनु राया ॥ ६ ॥
तव निज वक्षस्थल भगवाना । दीन्हो रमा हेतु वर स्थाना ॥ ७ ॥
सुर सुन्दरि तव गाये गाना । देव बजाये वाजे नाना ॥ ८ ॥
विधि रुद्रादिक मिलकर सारे । कुसुम वृष्टि प्रभु ऊपर डारे ॥ ६ ॥
दोउ कर जोरे स्तोत्र उचारे । भये प्रजापति सुखी अपारे ॥ १० ॥

दोहा- **रमा उपेक्षित दैत्य अब, लोलुप सत्व विहीन ।**
निरुद्योग निर्लज्ज सब, भये तदा अतिदीन ॥४७॥

चौ- कन्या लोचन कमल समाना । नाम वारुणि सुन्दर जाना ॥ १ ॥
हरि अनुमति वह असुर गहाई । मथ्यमान पाछे जलराई ॥ २ ॥
अद्‌भुत एक पुरुष सुखदाई । भुज प्रलम्ब पीवर तरुणाई ॥ ३ ॥
कमल नयन तनु मेघ समाना । पीत वसन मणि कुंडल काना ॥४॥
सिंह विक्रमी कुंचित केशा । कर धृत अमृत कलश विशेशा ॥ ५ ॥
आयुर्वेद प्रवर्तक जासू । धनवन्तरि जिन नाम प्रकासू ॥ ६ ॥
सुधा कुंभ लखि दानव राया । बलपूर्वक वह कलस गहाया ॥ ७ ॥
नीयमान घट दनुजन द्वारा । देख देवता दुखी अपारा ॥ ८ ॥

पीछे सब हरि शरण सिधाये । देख दीन हरि वचन सुनाये ॥ ९ ॥
दैत्यन बीच परस्पर भारी । करूँ देव अब कलह प्रचारी ॥ १० ॥

दोहा- **काज तुम्हारे करण को, धरूँ मोहिनी रूप ।**
चिन्ता निज मन मति करो, बोले ज्योति स्वरूप ॥४८॥

चौ- उत अमृत हेतू सुनुराया । वे दानव मिथ कलह बढ़ाया ॥ १ ॥
दुर्बल दानव वचन उचारे । सम प्रयत्न साधक सुर सारे ॥ २ ॥
ना निज भाग यदि ये पाही । तो यह धर्म सनातन नाही ॥ ३ ॥
यों मुख भाषत दुर्बल बाता । कीन्ह विरोध प्रबल दनु जाता ॥ ४ ॥
सब उपाय विद् हरि उस काला । योषित रूप धरे सुरपाला ॥ ५ ॥
उत्पल श्याम मनोहर गाता । वर. कपोल आनन सुखदाता ॥ ६ ॥
कर्णाभूषण दोउ समाना । नासा उन्नत सुघड़ महाना ॥ ७ ॥
नवयौवन निर्वृत स्तन भारा । कम्बू ग्रीव कृशोदर सारा ॥ ८ ॥
मुदितानन चञ्चल वर लोचन । स्फटिक दन्त वर रतिमद लोचन ॥ ९ ॥
कंठाभरण भुजाङ्ग विभूषित । कुसुमित कुसुम केश पर गुंथित ॥ १० ॥

दोहा- **कटि पर काञ्ची काञ्चनी, पद पायल झनकार ।**
लाज भरी मुसकान युत, तिरछी भृकुटि कतार ॥४९॥

चौ- हाव भाव चितवन कृतभारी । उन दैत्यन मन काम प्रचारी ॥ १ ॥
आई जहाँ त्याग सद्भावा । अमृत हेतु कलह बढ़ावा ॥ २ ॥
झपटत दावन दस्यु समाना । अमृत कलश सुधाकृत पाना ॥ ३ ॥
आवत देखी तदा मनोहर । अद्भुत नारी वदन सुधाकर ॥ ४ ॥
लखकर उसकी सुन्दरताई । सोचन लगे निशाचर राई ॥ ५ ॥
नवयुवती यह आवत कैसी । सुघड़ नाक चम्पा कलि जैसी ॥ ६ ॥
अनुपम छटा छटक रही भारी । भाषत वचन इति तभी निशिचारी ॥ ७ ॥
जात काम युवति पहँ आये । प्रेम सहित सब वचन सुनाये ॥ ८ ॥
कंज पलास नयनि तुम कहऊ । तुम हो कवन कहाँ पर रहऊ ॥ ९ ॥
कवन काज तुम यहँ पर आई । तुम्हे देख सब मन पिघलाई ॥ १० ॥

दोहा- **देव असुर गंधर्व अरु, सिद्ध व चारण जात ।**
प्रथम स्पर्श तुम ना करीं, नर की कया औकात ॥ ५०॥

चौ- हे सुभ्रूइमि जानत तोहीं । हे वामा तुम सब मन मोही ॥ १ ॥
सब जग की जो सुन्दरताई । कूट कूट विधि तुमही भराई ॥ २ ॥

सबके मन करने मुदिताई । क्या विधि ने तुम यहाँ भिजाई ॥ ३ ॥
अबकरहू कल्याण हमारा । हम सब कश्यप मुनी कुमारा ॥ ४ ॥
सुर दानव भ्राता हम दोऊ । करहु काम दोउ भेद न होऊ ॥ ५ ॥
करहु विभाग सुधा तुम वामा । इमि प्रार्थित हरि पूरण कामा ॥ ६ ॥
उन दैत्यन प्रति हरि इमि बोले । तुम कश्यप सुत क्यों मति डोले ॥ ७ ॥
मुझ सम पुंश्चलि पर विस्वासा । करहिं न पंडित कबहु जरा सा ॥ ८ ॥
क्षाला वृक व्यभिचारिणी नारी । राखहिं स्थायी मैत्री न जारी ॥ ९ ॥
हेरत नित प्रति नये शिकारा । सुनो दैत्यगण वचन हमारा ॥ १० ॥

दोहा- **दैत्य न प्रति इमि मोहिनी, वचन नर्म भाषन्त ।**
दियो पात्र अमृत उसे, होकर अति मोहन्त ॥५१॥

चौ- सुधापात्र हरि निजकर पावा । हँसकर उन प्रति वचन सुनावा ॥ १ ॥
करो वचन स्वीकृत मम सारे । करूँ काम जो जंचे हमारे ॥ २ ॥
चाहे साधु असाधू कैसा । करूँ विभाग सुधा का जैसा ॥ ३ ॥
यह ना मानहु कथन हमारा । लेहू अमृत कलश तुम्हारा ॥ ४ ॥
इमि जब मोहिनी वचन उचारा । किये दैत्यगण सब स्वीकारा ॥ ५ ॥
किये बाद सब मंगल स्नाना । अग्नि हवन कर कीन्हेउ दाना ॥ ६ ॥
शुद्ध वसन कीन्हे सब धारन । बैठे आकर पुनि दर्भासन ॥ ७ ॥
धूप दीप आमोदित शाला । प्राची मुख स्थित हो उस काला ॥ ८ ॥
अमृत कलश तदा कर धारी । पहुँची मोहिनी सभा मँझारी ॥ ९ ॥
तनु पर पहने सुन्दर सारी । भार नितम्ब मन्द गति जारी ॥ १० ॥

दोहा- **मद विह्वल दोऊ नयन, स्तन दोउ कलस समान ।**
गज शावक की सूँड सम, दोउ जंघा परमान ॥५२॥

चौ- कंचन नूपुर की झनकारा । मुखरित सभा भवन कृत सारा ॥ १ ॥
कंचन कुंडल दोउ श्रुति धारी । वर मुख नास कपोल अपारी ॥ २ ॥
मोहिनि तनु बीचे भगवाना । मानो लक्ष्मी सखी समाना ॥ ३ ॥
आवत सभा भवन मुसकाई । निज चितवन सुर दनुज लखाई ॥ ४ ॥
मोहित भये तदा वे सारे । विगलित स्तन वही स्तन द्वारे ॥ ५ ॥
देखत अब वे बारम्बारा । इत हरि निज मन कीन्ह विचरा ॥ ६ ॥
जन्म जात अति क्रूर निशाचर । अमृत पान नहीं इन हितकर ॥ ७ ॥
इनको अमृत पान कराना । मानो सर्पन दूध पिलाना ॥ ८ ॥

यों विचार मोहिनि भगवाना । उन प्रति अमृत उचित न जाना ॥ ९ ॥
पाछे पंगति युगल बनाई । निज निज पंगति सभी बिठाई ॥ १० ॥

दोहा- **आई मोहिनि अब नृप, सुधा कुंभ कर धार ।**
वञ्चित कीन्हे असुर सब, मीठे वचन उचार ॥५३॥

चौ- रहे देव यद्यपि स्थित दूरी । जरा मृत्यु हर अमृतपूरी ॥ १ ॥
लेकर कलस वहाँ पर आई । सुख हेतु सब सुधा पिलाई ॥ २ ॥
देखत रहे असुर वे सारे । मुख ते कुछ ना वचन उचारे ॥ ३ ॥
वचन बद्ध हिय अति अभिमाना । नारी वाद उचित ना माना ॥ ४ ॥
राहू नाम निशाचर एकी । देव चिन्ह धर दनुजन छेकी ॥ ५ ॥
अर्क चन्द्र बिच आन विराजा । अमृत पान कियो उन राजा ॥ ६ ॥
अर्क चन्द्र सूचित भगवाना । काटेउ सीस चक्र इति जाना ॥ ७ ॥
स्पर्श विहीन सुधाकर तासू । गिरा रुण्ड महि हीन प्रकासू ॥ ८ ॥
जासू सीस अमरता पावा । ग्रह पदवी हरि तासू दिलावा ॥ ९ ॥

दोहा- **पर्व पर्व ऊपर वही, वैर बुद्धि अनुसार ।**
रवि विधु प्रति धावत सदा, सुनु अभिमन्युकुमार ॥५४॥

चौ- इति देवन प्रति अमृत पाई । निज स्वरूप हरि तदा तजाई ॥ १ ॥
देव असुर श्रम यद्यपि समाना । फल विपरीत दीन्ह भगवाना ॥ २ ॥
हरि पद पंकज रज सिर धारी । पाई सुधा सुर नतु अमरारी ॥ ३ ॥
प्राण धनादिक तनु सुत दारा । व्यर्थ होत श्रम इन प्रति सारा ॥ ४ ॥
ईश्वर प्रति करतव जो करही । सो नर निष्फल कबहुँ न रहही ॥ ५ ॥
यतन शील कर्मन बिच भारी । दैत्य व दानव सब बलधारी ॥ ६ ॥
किन्तु वे विष्णु पराङ् मुख राया । यही हेतु अमृत ना पाया ॥ ७ ॥
करके इत सुर कारज सारे । हरि खगपति चढ़ि धाम सिधारे ॥ ८ ॥
देवन की अब लखि विभुताई । जल भुन गये असुर दनुराई ॥ ९ ॥
निज निज आयुध कर अब धारण । पहुँचे समर भूमि रण कारण ॥ १० ॥

दोह- **नारायण पद आश्रय, सुरन संग सुरपाल**
दैत्यन पर धावा किया, युद्ध काज तत्काल ॥५५॥

चौ- सिन्धू तट देवासुर नामा । भयो तदा दारूण संग्रामा ॥ १ ॥
लरत परस्पर भाई-भाई । पिता एक जिन मात जुदाई ॥ २ ॥
भेरी डमरू शंख मृदंगा । रण बाजा बाजत तह चंगा ॥ ३ ॥

रथ गजपति अरु असवारा । तुमुल शब्द चहुँ भये अपारा ॥ ४ ॥
भिडे रथिन से अव रथि राया । पत्तिन संग पत्ति अलगाया ॥ ५ ॥
असवारन ते अश्वारोही । भिरे परस्पर सुर सुरद्रोही ॥ ६ ॥
केतिक भटगज पर असवारी । कैतिक ऊँटन पर वलधारी ॥ ७ ॥
सिंह रीछ वानर पर केता । गीध कंक वक शरभ सहेता ॥ ८ ॥
मूपक महिष वृपभ गौ ऊपर । कृष्णसार मृग हंस व सूकर ॥ ९ ॥
गौर कुरंग वाघ वृक भासा । शिवा तिमिङ्गल अज कृकलासा ॥ १० ॥

दोहा- **नील गाय कैतिक चढ़े, वन्य सांड खरगोस ।**
खङ्गी मच्छ व वाज पर, चढ़ि आये कर रोप ॥ ५६ ॥

चौ- कैतिक निशिचर जल थल चारी । खग जीवन पर कर असवारी ॥ १ ॥
कज्जल गिरि आकार शरीरा । आये समर भूमि रणधीरा ॥ २ ॥
चित्रध्वज अरु स्फटिक समाना । निर्मल श्वेत सुछत्र महाना ॥ ३ ॥
कनक दंड युत व्यञ्जन चामर । मणि अमोल जटित जिन ऊपर ॥ ४ ॥
कनक कवच भूषण सिर पगरी । तीक्ष्ण शस्त्र निज निज कर पकरी ॥ ५ ॥
जासु प्रभा नृप सूर्य समाना । सेना सुर अरु असुर सुहाना ॥ ६ ॥
मानो जल जन्तु युत "नृपवर" । लहरा रहे यथा दो सागर ॥ ७ ॥
यूथप असुर विरोचन जाया । वलि मय दानव हस्त रचाया ॥ ८ ॥
कामग वैहायस नभचारी । कर विमान ऊपर असवारी ॥ ९ ॥
रण सामग्री सज्जित जासू । कबहूँ भासत कवहूँ न भासू ॥ १० ॥

दोहा- **दैत्य सैन्य वेष्टित नृप वलि, स्थित होय विमान ।**
श्वेत छत्र चामर युत, सोभित चन्द्र समान ॥ ५७ ॥

चौ- निज–निज वाहन सर्वत जासू । चले वरूथप सुरन विनासू ॥ १ ॥
विप्रचित्ति नमुचि अरु शम्वर । इल्वल शकुनि अयोमुख निश्चर ॥ २ ॥
वज्रदंष्ट्र भूतन संतापी । हेति व कालनाभ वातापी ॥ ३ ॥
शंकुशिर द्विशिरा विरोचन । मेघ दुंदुभि तारक लोचन ॥ ४ ॥
शुंभ निशुंभ कपिल हयग्रीवा । उत्कल जम्भ असुर बलसीवा ॥ ५ ॥
वाण प्रहेति चक्रद्दक नेमी । अरिष्ट अष्टनेमि रणप्रेमी ॥ ६ ॥
मय त्रिपुराधिप अति बलवाना । कालकैय पौलोम महाना ॥ ७ ॥
अरु निवात कवच मिल सारे । भाग अलव्ध होय दुखियारे ॥ ८ ॥

करके सिंहनाद किलकारी । आये शंखनाद रणद्वारी ॥ ९ ॥
आवत शत्रू लखे सुरेशा । कुपित चढ़े गज पीठ प्रदेशा ॥ १० ॥

दोहा- **उदयाचल पर जिमि रवि, उदय होत परभात ॥**
त्यों सोभित शचिपति भये, सुनु कुरु कुल विख्यात ॥५८॥

चौ- सुर यूथप सुरपति संग नाना । वाहन ध्वज धर शस्त्र महाना ॥ १ ॥
वायु व अगनी वरुण कुवेरा । चले देव ना किये अवेरा ॥ २ ॥
दोउ सेना जब सन्मुख आई । भिरे परस्पर द्वंद रचाई ॥ ३ ॥
कोई मर्म वचन के द्वारा । देवत प्रति द्वंदिन धिकारा ॥ ४ ॥
बलि सुरपति अब भिरे परस्पर । भिरे स्कन्द से तारक निशिचर ॥ ५ ॥
हेति वरुण संग मित्र प्रहेता । काल नाभ यमराज संगेता ॥६ ॥
विसुकर्मा मय भिरे परस्पर । त्वष्टा के संग राक्षस शम्बर ॥ ७ ॥
वृषपर्वा सह अशुनि कुमारा । अपराजितहिं नमुचि ललकारा ॥ ८ ॥
वाणादिक शत सुत बलिराया । सूर्यदेव संग युद्ध रचाया ॥ ९ ॥
राहू संग चन्द्रमा बाँका । वायू संग पुलोमन हाँका ॥ १० ॥

दोहा- **झपटी शुंभ निशुंभ पर, भद्रकालि इक साथ ।**
वृषाकपि ने जम्भ के, पकर लिये दोउ हाथ ॥ ५९ ॥

चौ- महिष विभावसु मिलकर राया । दोऊ मिल बहुयुद्ध रचाया ॥ १ ॥
इल्वल वातापि दोउ भ्राता । चिपटे हे नृप विधि सुत गाता ॥ २ ॥
झषकेतु दुर्मर्ष लराई । उत्कल मातृगणन समुदाई ॥ ३ ॥
गुरु शुक्र संग संगर घोरा । शनि नरकासुर युद्ध कठोरा ॥ ४ ॥
मरुत निवात कवच रण रंगा । अष्टवसू कालेयन संगा ॥ ५ ॥
क्रोध वसिन संग रुद्र अपारा । कीन्हो जुद्ध घोर विकराला ॥ ६ ॥
तीक्ष्ण वाण असि तोमर भाला । करत वार मिथ वीर कराला ॥ ७ ॥
चक्र गदा पट्टिश अरु प्रासा । मुग्दर परिघ भुसुन्डी खासा ॥ ८ ॥
उल्मुक शक्ति खड्ग बड़भाला । ऋष्टि व फरसा भिन्दीपाला ॥ ९ ॥
तकि तकि तजे परस्पर तीरा । कटि कटि सीस गिरे महि वीरा ॥ १० ॥

दोहा- **पदसेना गज अश्वरथ, छिन्न बाहुधड़ सीस ।**
चरण घात अरु रथन ते, उड़त धूरि अवनीस ॥ ६० ॥

चौ- दिशा गगन रवि नही लखाये । कुंडल मुकुट सीस महि छाये ॥ १ ॥

सायुध हस्त अनेकनि भूषण । खंडित वाहन युत महि भीषण ॥ २ ॥
वह रही चारों शोणित धारा । डोलत इत उत रुंड अपारा ॥ ३ ॥
धृत आयुध भट प्रतिरण कामी । उठे कबन्ध नयन लखिनामी ॥ ४ ॥
काक गीध गण देश विदेशा । भेजे न्योता सुनो नरेशा ॥ ५ ॥
भयो सुकाल यहाँ सब आऊ । निज–निज परिजन संग लिवाऊ ॥ ६ ॥
पाय निमन्त्रण माँसाहारी । चले वनाकर झुण्ड अपारी ॥ ७ ॥
आये भूचल श्वान सियारा । भये मुदित लखि लाश अपारा ॥ ८ ॥
तीक्ष्ण तुंड ते गृध व कागा । उड़त गगन करि लाश विभागा ॥ ९ ॥
सरिता रक्त देखकर श्वाना । करने लगे मुदित लहु पाना ॥ १० ॥

दोहा- **सुरपति पर दश शर तजे, अब बलि ने धनुधार ।**
गज ऊपर शर तीन अरु, गज रक्ष पर चार ॥ ६१ ॥

चौ- एक बाण मातलि पर मारा । देख इन्द्र कर क्रोध अपारा ॥ १ ॥
निज बाणन ते काट गिराये । तब दानवपति अति घबराये ॥ २ ॥
लख शचीश का विक्रम भारी । अब बलिनृप शक्ति कर धारी ॥ ३ ॥
ज्वलित शक्ति बलि हस्त लखाई । सुरपति ने झट काट गिराई ॥ ४ ॥
लीन्हा अब बलि शूल व तोमर । प्रास भुसुंडी ऋष्टी असि मुग्दर ॥ ५ ॥
जे जे बलि ने अस्त्र चलाये । वे सुरपति ने काट गिराये ॥ ६ ॥
पाछे बलि हो अन्तरध्याना ॥ माया जाल रची उन नाना ॥ ७ ॥
सुरसेना पर शैल अनेका । गिरने लगे एक पर एका ॥ ८ ॥
दावानल ते तरू अपारा । दह्यमान दीखे अब सारा ॥ ९ ॥
खंड खंड हो शिला अपारा । गिरने लगी गगन जिमि तारा ॥ १० ॥

दोहा- **प्रकटे अहि वृश्चिक महा, व्याघ्र व सिंह वराह ।**
शूल हस्त शत कर गहि, यातूधानि अथाह ॥६२॥

चौ- प्रकटे राक्षस भूत पिशाची । वस्त्रहीन हो इत उत नांची ॥ १ ॥
काटउ मारउ भाषत सारे । वरसत मेघ गगन अंगारे ॥ २ ॥
विरचित अनल निशाचर द्वारा । दग्ध भई सुरसेन अपारा ॥ ३ ॥
उमड घुमड कर सागर सारा । फैला चारों ओर अपारा ॥ ४॥
झंझावात चली अति घोरा । ले हिम पाहन चारों ओरा ॥ ५ ॥
इमि माया विरचित बलि द्वारा । भये देव मन खेद अपारा ॥ ६ ॥
माया नाशक कई उपाया । किये देव पर एक न पाया ॥ ७ ॥

अब सब मिल वैकुंठ निधाना । किये सभी अब मिलसुर ध्याना ॥ ८ ॥
तब हरि जग के पालन हारे । कमल नयन पीताम्बर धारे ॥ ९ ॥
अष्टायुध धर बाहु विशाला । श्रुति कुंडल कौस्तुभ गल माला ॥ १० ॥

दोहा- **आवत ही हरि असुरजा, माया नसी महान ।**
जिमि हरि सुमिरण सर्व दुख, नासत स्वप्न समान ॥६३॥

चौ- काल नेमि अब एक निशाचर । खगपति ऊपर हरि को लखकर ॥ १ ॥
त्यागा शूल तदा विकराला । गिरा सीस पर नभचर पाला ॥ २ ॥
वही शूल लेकर भगवाना । हरि सहयान वधा बलवाना ॥ ३ ॥
पाछे आये मालि सुमाली । हरि उन ग्रीव काट महि डाली ॥ ४ ॥
पाछे माल्यवान बलवन्ता । तजी गरुड़ पर गदा तुरन्ता ॥ ५ ॥
दूजी गदा उठाकर धावा । त्योहि हरि सिर काट गिरावा ॥ ६ ॥
प्राप्त कृपा हरि की इत राई । निशिचर सेना देव नसाई ॥ ७ ॥
अब बलि के वध हेतु सुरेशा । लियो वज्र निज हस्त प्रदेशा ॥ ८ ॥
हाहाकार प्रजा अब कीन्हा । जब सुरपति निजकर पविलीन्हा ॥ ९ ॥
देखा जब सन्मुख दनुजेशा । अपमानित वच कहे सुरेशा ॥ १० ॥

दोहा- **मूढ़ मंद मति नर समाँ, निज माया विस्तार ।**
मायापति भगवान को, जीतन चहे गँवार ॥ ६४ ॥

चौ- इच्छा स्वर्ग गमन की तेरी । करूँ दूर अब लाऊं न देरी ॥ १ ॥
अरे पूर्वपद से भी तोही । करूँ भृष्ट तू सुनु सुरद्रोही ॥ २ ॥
अरे मन्द मैं वज्र चलाऊँ । काट सीस मही बीच गिराऊँ ॥ ३ ॥
निज परिजन सह जीवन आसा । त्यागो यतन करो न जरासा ॥ ४ ॥
सुरपति की सुनकर इमि वानी । बोला वचन बलि नृप ज्ञानी ॥ ५ ॥
प्रेरित काल शक्ति के द्वारा । करते रण करमन अनुसारा ॥ ६ ॥
पावत जय व पराजय ओहू । मृत्यु व यश अपयश भी सोहू ॥ ७ ॥
देखहिं इनको काल अधीना । ज्ञानी जन अरु संत प्रवीना ॥ ८ ॥
तुम समान जे नर अज्ञानी । इन बातन को नहि पहिचानी ॥ ९ ॥
कीरति जय व पराजय सारी । निज अधीन जो कहूँ असुरारी ॥ १० ॥

दोहा- **निज आनन भाषत यह, वचन न किसी प्रकारी ।**
मान्य नहीं मुझको सुनो, हे सचीश असुरारि ॥ ६५ ॥

चौ- एवं बलि जब वचन सुनाये । तो सुरपति निज मन मुरझाये ॥ १ ॥
खेंचा पुनि धनु श्रुति परयन्ता । त्यागे बलि अब बाण अनन्ता ॥ २ ॥
अपमानित सुरपति बलिद्वारा । रोक सके ना मन्यु अपारा ॥ ३ ॥
क्रोधित होकर वज्र चलावा । रथ समेत बलि महि पर आवा ॥ ४ ॥
महि पर पतित जबै बलि देखा । तासु सखा इक जम्भ विशेषा ॥ ५ ॥
मित्र धर्म दरसावन काजू । गदा हस्त धर चढ़ि वनराजू ॥ ६ ॥
समर भूमि बीच चलि आवा । किय प्रहार निज गदा उठावा ॥ ७ ॥
जत्रुगज मधवा पर भारी । जानु टेकि गज भयो दुखारी ॥ ८ ॥
बाद मातली रथ ले आवा । सहस अश्व जिस पर जुतवावा ॥ ९ ॥
अब आखंडल गजहिं तजावा । चढ़े सुरथ पर अति हर्षावा ॥ १० ॥

दोहा- **सारथि के इस कर्म को, लखकर मन हर्षाय ।**
मातलि ऊपर जंभ ने, दीन्हो शूल चलाय ॥ ६६ ॥

चौ- मातलि धीरज धारण कीन्हा । शूल प्रहार कष्ट सह लीन्हा ॥ १ ॥
देख जम्भ का वार करारा । क्रोधित होय सुरेश अपारा ॥ २ ॥
धाये इन्द्र जम्भ पर कैसे । वड़वा अनल अम्भ पर वैसे ॥ ३ ॥
पवि ते तासु सीस हर लीन्हा । जम्भ हनन इत सुरपति कीन्हा ॥ ४ ॥
समाचार उत नारद आनन । सुनै तासु परिजन निज कानन ॥ ५ ॥
तदा कुपित नमुचि बल पाका । आये त्वरित वहाँ रण बाँका ॥ ६ ॥
मधवा ते कटु वचन सुनाई । मेघ समाँ शर झरी लगाई ॥ ७ ॥
पाछे वह बल नाम निशाचर । सुरपति अश्वन पर दस सतशर ॥ ८ ॥
मारे क्रोधित होकर राया । दो शत शर पुनि पाक चलाया ॥ ९ ॥
रथ समेत मातलि पर मारे । दश श्रुति सायक नमुचि करारे ॥ १० ॥

दोहा- **मारे सुर पति पर तदा, गर्जन कर अतिघोर ।**
रथ समेत अब इन्द्र पर, छाये शर चहुँ ओर ॥ ६७ ॥

चौ- पेखि अलक्षित इन्द्रहिं सारे । भये देवगण विह्वल भारे ॥ १ ॥
अरि बल द्वारा होकर निर्जित । भाज गई सुर सेना इत उत ॥ २ ॥
बाद इन्द्र शर पञ्जर बद्धा । निकसे रवि जिमि घन अवरुद्धा ॥ ३ ॥
अर्दित लखि सेना अरि द्वारा । रिपु मारन हित पविकर धारा ॥ ४ ॥
बल अरु पाक निशाचर सीसा । काटेउ क्षण भर में सुर ईशा ॥ ५ ॥

वध बल पाक देख भयकारी । शोक क्रोध युत नमुचि सुरारी ॥ ६ ॥
तदा इन्द्र वध हित वह धावा । शूल कनक निज हस्त उठावा ॥ ७ ॥
गरजेउ तरतेउ निशिचर भारी । बोला अब बचहु न असुसारी ॥ ८ ॥
तेहि काल नभ ते शर शूला । बरसन लागे सहस अतूला ॥ ९ ॥
बाद इन्द्र कर क्रोध अपारा । निजकर कुलिश उठाकर मारा ॥ १० ॥

दोहा- **भई अचरज की बात तब, कठिन कुलिश की धार ।**
भेद सकी ना कवच को, पुनि शिर कवन प्रकार ॥ ६८॥

चौ- तदा शत्रु से होकर भीता । सुरपति मन अति व्यापी चिन्ता ॥ १ ॥
दैवयोग ते कवन प्रकारा । प्रति हत भयऊ कुलिश करारा ॥२ ॥
अद्रि प्रक्ष काटेउ जिन भारी । मारेउ वृत्रासुर बलधारी ॥ ३ ॥
अब वहि तुच्छ निशाचर ऊपर । निष्फल भयेउ अरे यह क्यों कर ॥ ४ ॥
ब्रह्मतेज निष्फल किमि काजू । धरउँ न निजकर यहि मैं आजू ॥ ५ ॥
कियो खेद मन इमि असुरारी । भई तदा नभ गिरा अपारी ॥ ६ ॥
सुनौ इन्द्र यह नमुचि सुरारी । आर्द्र शुष्क ते किसी प्रकारी ॥ ७ ॥
मरहि न करहू और उपाया । यह वर मुझसे इसने पाया ॥ ८ ॥
यहा नभ गिरा सुनी सुरराई । तत्क्षण पवि पयफेन डुबाई ॥ ९ ॥
काटेउ सीस नमुचि तत्काला । भये हर्ष तव रिषि मुनि शाला ॥ १० ॥

दोहा- **नमुची सूदन पर तदा, रिषि मुनि देव अपार ।**
कुसुम वृष्टि करने लगे, जयति जयति उच्चार ॥ ६९ ॥

चौ- विश्वावसू पुरावसु दोही । कीरति गान कीन्ह खुश होही ॥ १ ॥
नरतकि नृत्य करन अब लागी । देव दुंदुभी अम्बर दागी ॥ २ ॥
उत सुर सेना पति मिल सारे । प्रतिद्वंदी राक्षस संहारे ॥ ३ ॥
तदा धात प्रेपित मुनि नारद । दैत्यनाश लखि नीति विशारद ॥ ४ ॥
हे नृप समर भूमि में आये । युद्ध बन्द हित सुर समुझाये ॥ ५ ॥
नारायण भुज आश्रय धारे । अमृतपान किये तुम सारे ॥ ६ ॥
लक्ष्मी वृद्धि भई तुम गेहा । त्यागहु द्वेष रखहु सब स्नेहा ॥ ७ ॥
नारद के ये वचन सुहाये । सुनि सुर वृन्दन के मन भाये ॥ ८ ॥
गीयमान निज दासन द्वारा । सुरपुर बीच सभी पगुधारा ॥ ९ ॥
रहे दैत्य जो रण के माँही । नारद अनुमति तास गहाही ॥ १० ॥

दोहा- **बलि नृप को लेकर गये, अस्ताचल की ओर ।**
इधर युद्ध में जे असुर, भये काल के कौर ॥ ७० ॥

चौ- उनको तजिअवयव ले हीना । रहे दनुज अवशेष कुलीना ॥ १ ॥
निज विद्या संजीवनि द्वारा । किये शुक्र जीवित वह सारा ॥ २ ॥
कियो स्पर्श बलि कवि के द्वारा । प्राप्तेन्द्रिय स्मृति पुनः अपारा ॥ ३ ॥
यदपि पराजित नृप बलि भयऊ । निजमन खेद तदपि ना गिनऊ ॥ ४ ॥
हरि जिमिधर कर मोहिनी रूपा । मोहे दानव सह बलि भूपा ॥ ५ ॥
देवन हेतु पियूष पिलावा । जब यह समाचार शिव पावा ॥ ६ ॥
वृष चढ़ि गिरिजा संग कृपालू । हरि यहँ आये सुनो नृपालू ॥ ७ ॥
आवत तदा हरि के द्वारा । सत्कृत स्थित शिव वचन उचारा ॥ ८ ॥
देव देव जगदीश कृपालू । सब जग व्यापी दीन दयालू ॥ ९ ॥
प्रकटा तुमते जगत विशाला । परमात्मा ईश्वर भव पाला ॥ १० ॥

दोहा- **होवत जिनते जगत का, आदि मध्य अरु अन्त ।**
चिदानन्द उन ब्रह्म के, सेत पदाम्बुज सन्त ॥ ७१ ॥

चौ- नित्यानन्द मात्र सुख रूपा । शोक विहीन व ब्रह्म स्वरूपा ॥ १ ॥
निरविकार सब जग अलगाऊ । कारण परम जगत कहलाऊ ॥ २ ॥
केवल भक्त अनुग्रह हेतू । ऐश्वर्य तोर ना स्वारथ वेतू ॥ ३ ॥
द्वय अद्वय तुम कारण रूपा । वेदन्ति जन ब्रह्म अनूपा ॥ ४ ॥
धर्म तुम्हें मीमांशक गावे । प्रकृति पुरुष ते अलग लखावे ॥ ५ ॥
सांख्यशास्त्र के जानन हारे । परम पुरुष तोहि नाथ पुकारे ॥ ६ ॥
मानत महापुरुष पातञ्जल । रचित तुम्हारा यह जग मंडल ॥ ७ ॥
मैं विधि रिषि मुनि ना पहिचाना । मरिच्यादिक भी कबहूँ न जाना ॥ ८ ॥
दैत्य मनुज पुनि कवन प्रकारा । जान सकै यह रूप तुम्हारा ॥ ९ ॥
बन्ध व मोक्ष जगत का सारा ॥ जन्म नाश स्थिति सभी प्रकारा ॥ १० ॥

दोहा- **तुम सम अन्य न ज़गत में, इसको जाननहार ।**
देखें मैनें आपके, प्रभो कई अवतार ॥ ७२ ॥

चौ- योषित रूप मैं नाथ तुम्हारा । देखन चाहूँ सभी प्रकारा ॥ १ ॥
किये दैत्य जिस रूप विमोहित । पाये देवन हेतु अमृत ॥ २ ॥
वही रूप दिखावउ ताता । अति आश्चर्य भयो मम गाता ॥ ३ ॥
इमि प्रार्थित हँसकर भगवाना । शिव प्रति बोले दीन निधाना ॥ ४ ॥

अमृत घट दैत्यन कर आवा । देवन हित तिय वेष बनावा ॥ ५ ॥
दैत्यन का मन मन्थन हेतू । यह मैं रूप धरा वृषकेतू ॥ ६ ॥
सोही रूप तुम्हारे काजू । गिरिजा नाथ दिखाऊ आजू ॥ ७ ॥
जो कामी मन स्मर संचारी । इमि शिव प्रति हरि वचन उचारी ॥ ८ ॥
भये तदा हरि अन्तर ध्याना । देखत गिरिजा शिव भगवाना ॥ ९ ॥
अब इत उत शिव संग भवानी । देखन लगे सुनो नृप ज्ञानी ॥ १० ॥

दोहा- **पाछे सुन्दर उपवन, देखा एक विशाल ।**
रंगबिरंगे कुसुम युत, तरु अनेक तट ताल ॥ ७३ ॥

चौ- उपवन बीचे सुन्दर नारी । आवत देखी गैन्द उछारी ॥ १ ॥
तनु पर सोभित सुन्दर सारी । कनक करधनी कटिवर भारी ॥ २ ॥
गेन्द उछारत इत उत धावत । तब स्तन हार सहित उस हालत ॥ ३ ॥
स्तन भारन ते पद पद ऊपर । मानों टूटत कटि कृश सुन्दर ॥ ४ ॥
इत उत छलकत कंदुक जबहीं । लेवत रोक लपककर तबहीं ॥ ५ ॥
चल चंचल लोचन गंभीरा ॥ चालत मीन यथा सर नीरा ॥ ६ ॥
कानन सोभित कुंडल भारी । नील केश मंडित मुखवारी ॥ ७ ॥
लाल लाल पल्लव सम सुन्दर । चालत ठुमक ठुमक निजपद धर ॥ ८ ॥
सरकत सारी सिर से कबहूँ । कच वेणी खुल जावत जबहूँ ॥ ९ ॥
वाम हस्त संवारती जाती । कंदुक दक्षिण हस्त चलाती ॥ १० ॥

दोहा- **गेन्द उछारत जगत को, मोहित करत अपार ।**
निज कटाक्ष वञ्चित किये, शिव को बारम्बार ॥ ~~७५~~ ७४ ॥

चौ- वञ्चित शिव विह्वल तत्काला । निजसुधि भूलि गये उस काला ॥ १ ॥
निज समीप स्थित सहित भवानी । सके नहीं निज गणहिं पिछानी ॥ २ ॥
कन्दुक तासू गयउ जब दूरी । कन्दुक अनुधावत शिव घूरी ॥ ३ ॥
सूक्ष्म वस्त्र काँची युत मारुत । हरण कीन्ह तब शिव के दरसत ॥ ४ ॥
रमण हेतु वह शिव मन भाई । स्मर विह्वल तब लाज तजाई ॥ ५ ॥
देखत गिरिजा गणन सहेता । भागे उस तिय अनु वृषकेता ॥ ६ ॥
निज अनु जब शिव आवत देखा । वसन विहीन सलाग्र विशेषा ॥ ७ ॥
निज तनु तरुअन बीच छिपावा । किन्तु काम वश शिव तहँ आवा ॥ ८ ॥
वृहत वेगयुत तासु समीपा । जाकर केश गहेउ गिरीपा ॥ ९ ॥
पाछे वह निज हिये लगाई । गजपति जिमि करणी चिपकाई ॥ १० ॥

दोहा- इत उत जव वह खिसककर, छुड़वावत निज अंग ।
खुले केश सिर के तदा, नील कमल संग रंग ॥ ७५ ॥

चौ- पृथुश्रोणी शिव भुजा छुड़ाई । भागी वेग सहित सुनुराई ॥ १ ॥
हरि माया अनु पुनि शिव धाये । निज अरि स्मर द्वारा घवराये ॥ २ ॥
जिमि कामुक गज गजि अनुगामी । त्यों हरि माया प्रति शिव कामी ॥ ३ ॥
अनुधावत शिव वीर्य अमोघा । गिरा भूमि गिरि उपवन ओघा ॥ ४ ॥
सो भूमि शिव वीरज पाई । आकर हेम रजत प्रकटाई ॥ ५ ॥
इमि धावत शिव सर गिरि सरिता । उपवन रिपि आश्रम सन्निहिता ॥ ६ ॥
पतित रेत शिव जड़ि कृत देहा । गयो मोह रह्यो ना नेहा ॥ ७ ॥
इमि हरि माया निज मन जानी । विस्मय अरु कुछ भयउ न ग्लानी ॥ ८ ॥
पाछे तजकर मोहि निरूपा । वोले शिव से ज्योति स्वरूपा ॥ ९ ॥
मोहित होकर भी मम माया । निज स्वभाव तुम नहीं तजाया ॥ १० ॥

दोहा- मम माया का तुम विन, पार न पायउ अन्य ।
यह माया गुण मयि तुम्हें, कर न सकी शिव शून्य ॥७६॥

चौ- इमि सत्कृत शिव हरि के द्वारा । गण समेत निज पुर पगुधारा ॥ १ ॥
वाद भवानी प्रति शिवराया । मुनि समाज सव हाल सुनाया ॥ २ ॥
हरि माया का चरित भवानी । तुम भी सकी नहीं पहिचानी ॥ ३ ॥
मैं भी मोहित उससे जाता । अन्य पुरुष की क्या औकाता ॥ ४ ॥
जव मैं उमा समाधी त्यागी । मम सन्मुख तुम पूछन लागी ॥ ५ ॥
करहु कान्त किन देव उपासन । धर समाधि लगाकर आसन ॥ ६ ॥
यह वहि गिरिजे पुरुष पुरातन । करहि काल पर जो नित शासन ॥ ७ ॥
हे नृप सागर मंथन काला । मंदर गिरि धृत पीठ विशाला ॥ ८ ॥
उन हरि का विक्रम हम गावा । सुनत जासु सव दुरित नसावा ॥ ९ ॥
उत्तम श्लोक हरि की गाथा । मोहिनि रूप धरेउ भव नाथा ॥ १० ॥

दोहा- सुनहिं सुनावहिं मनुज जो, तासु दुरित सव दूर ।
सव श्रम सारे जगत के, होवहिं अलग जरूर ॥ ७८ ॥ क
मोहित असुरन करन हित, कपट तिया कृत भेश ।
सुरन हेतु पायउ सुधा, वन्दों उन्हें हमेश ॥ ७८ ॥ ख

चौ- आगे कथा सुनउ चित लाई । वोले व्यास पुत्र मुनिराई ॥ १ ॥
वर्तमान मनु सप्तम काला । रवि सुत श्राद्धदेव नरपाला ॥ २ ॥

उन सन्तान सुनउ तुम राई । बड़ इक्ष्वाकु नभग दस भाई ॥ ३ ॥
नरिष्यन्त शर्याति व धृष्टा । करुष नभाग पृषध्र व दिष्टा ॥ ४ ॥
दशम सुवन मनु के वसुमाना । तुम प्रति किये नृपति हम गाना ॥ ५ ॥
वसु आदित्य मरुद्गण सारे । ऋभु अश्विनि वसु रुद्र इग्यारे ॥ ६ ॥
विश्वेदेव देवगण गाये । जिनके इन्द्र पुरन्दर भाये ॥ ७ ॥
कश्यप अत्रि वशिष्ठ व गौतम । जमदग्नि भारद्वाज नरोत्तम ॥ ८ ॥
गाधी सुवन सहित ऋषि साता । कश्यप अदिति नाम विख्याता ॥ ९ ॥
इनके घर वामन अवतारा । लियउ दान जिन बलि के द्वारा ॥ १० ॥

दोहा- **इमि मन्वन्तर सात की, गाथा करी बखान ।**
अगले मनुअन की कथा, कहूँ अब नृपति सुजान ॥७८॥

चौ- विवस्वान त्रय नार सुहाई । छाया, संज्ञा, बड़वा, गाई ॥ १ ॥
संज्ञा संतति श्रुति विधु ऊना । श्राद्ध देव यम अरु लघु यमुना ॥ २ ॥
सावर्णी तपती व शनीचर । छाया ते प्रकटे ये नृपवर ॥ ३ ॥
बड़वा सुत दोउ असुनि कुमारा । अब अष्टम मनु की सुनु धारा ॥ ४ ॥
अष्टम मनु सावर्णि नामा । निरमौकादिक सुत मनु धामा ॥ ५ ॥
अमृत प्रभा विरज व सुतापस । होवहिं इन्द्र जासु बलि राक्षस ॥ ६ ॥
याचमान विष्णु प्रति नृपवर । पाद तीन अवनि वह देकर ॥ ७ ॥
अष्टम मन्वन्तर जब आवे । विष्णु प्रसाद इन्द्र पद पावे ॥ ८ ॥
पाछे बलि निज स्थान तजाई । पावहिं मोक्ष तदन्तर राई ॥ ९ ॥
सम्प्रति सुतल लोक में रहहीं । विष्णु कृपा ते सब सुख लहहीं ॥ १० ॥

दोहा- **द्रोणपुत्र श्रृंगीऋषि कृपाचार्य अरु व्यास ।**
दीप्तिमान गालव मुनि परसुराम बलरास ॥ ७९ ॥

चौ- अधुना निज निज आश्रय बसहीं । आगे सप्तरिषिन पद लहहीं ॥ १ ॥
देव गुह्य सुरसति के गेहा । धारहिं सार्वभौम हरि देहा ॥ २ ॥
वर्तमान मघवा ते येही । छीन स्वर्ग बलि नृप प्रति देही ॥ ३ ॥
नवम दक्ष सावर्णि नामा । करहीं जो महि पूरणकामा ॥ ४ ॥
मनु महिषिं ने दस सुत जाये । दीप्ति केतु भूतादिक गाये ॥ ५ ॥
गर्भ व पार मरीचिक सारे । नन्द काल विच देव पुकारे ॥ ६ ॥
अद्भुत नाम इन्द्र उन जाता । द्युति मत्प्रमुख भये रिषि साता ॥ ७ ॥

आयुष्मान व अम्बुधारा । जाये ऋषभ देव अवतारा ॥ ८ ॥
उन द्वारा रक्षित त्रयलोकी । भोगहिं अद्भुत सुरप अशोकी ॥ ९ ॥
दशम ब्रह्म सावर्णी नामा । होवहिं मनु महि पूरण कामा ॥ १० ॥

दोहा- **भूरिषेण आदिक नृप, मनुदस सुत विख्यात ।**
हविष्मान सुकृत जय, सत्य मूर्ति रिषि सात ॥ ८० ॥

चौ- देव विरुद्ध सुवासन गाये । शंभु नाम सुरपति जिन पाये ॥ १ ॥
गर्भ विशूचि ते हरि जाता । विश्ववसेन नाम विख्याता ॥ २ ॥
शंभू सन जे करहिं मिताई । आगे कथा सुनो नरराई ॥ ३ ॥
मनु एकादश धर्म सुहाई । सत्य धर्म इति दस सुत पाई ॥ ४ ॥
विहगम कामगमा निर्वाना । रुचि आदिक सुरगण इति जाना ॥ ५ ॥
वैधृति नाम इन्द्र पद पाही । रिपि पद पर अरुणादिक आहीं ॥ ६ ॥
वैधृति नाम आर्यक नारी । इन घर धर्मसेतु अवतारी ॥ ७ ॥
धारहिं ये हरि अंश त्रिलोकी । द्वादश मनुपद रुद्र विलोकी ॥ ८ ॥
सुवन देव श्रेष्ठादिक तासू । हरितादिक सुरगण सुन जासू ॥ ९ ॥
सुरपति पद ऋत धामा पावे । अग्नीध्रादि मुनि सात सुहावे ॥ १० ॥

दोहा- **सत्य सहस की सूनृता, पत्नी परम उदार ।**
प्रकटेंगे इनके गृह, स्वधामा अवतार ॥ ८१ ॥

चौ- बाद नयो दश मनुपद राया । नामदेव सावर्णी गाया ॥ १ ॥
चित्र विचित्रा सेन समेता । दस सुत भयऊ मनू निकेता ॥ २ ॥
संज्ञादेव सुकर्म सुत्रामा । नाम दिवस्पति सुरपति धामा ॥ ३ ॥
निर्मुक ततु दर्शादिक सारे । होवहिं नभ मुनि सप्तसितारे ॥ ४ ॥
देव होत्र की वृहती नारी । योगेश्वर उन गृह अवतारी ॥ ५ ॥
बाद चतुर्दश मनुपद पावे । नाम रुद्र सावर्णि कहावे ॥ ६ ॥
उरु गंभीर व बुद्धि समेता । दस सुत होवहिं मनू निकेता ॥ ७ ॥
पवित व चाक्षुष सुरगण सोहीं । सुरपति पद पर शुचि स्थित होहीं ॥ ८ ॥
अग्नि बाहु मागध शुचि शुद्धा । करहिं काम रिषि सप्त प्रबुद्धा ॥ ९ ॥

दोहा- **सत्रायण महाराज की, नाम विताना नार ।**
आवहिं जिनके उदर में, वृहद्भानु अवतार ॥ ८२ ॥

चौ- करहिं जो कर्म मार्ग विस्तारा । किये कथन मनु मम मुख द्वारा ॥ १ ॥
चौदह मनु युग सहस प्रमाना । कल्प एक यहि विधि दिन माना ॥ २ ॥

शुक मुनि की सुनकर इमि वानी । कहे परीक्षित नृप विज्ञानी ॥ ३ ॥
अन्तर विच मन्वादिक जेते । जिस जिस कर्म नियोजित वेते ॥ ४ ॥
कहहु कृपा करि मोहि मुनीशा । कहे मुनी अब सुनो महीशा ॥ ५ ॥
मनु मनु पुत्र व मुनि सुर जेता । करहिं काम निज इन्द्र समेता ॥ ६ ॥
प्रेरित होय प्रभू के द्वारा । करहीं जग संचालन सारा ॥ ७ ॥
इनके कर्म सुनावहु तोही । करहिं ग्रस्त जब श्रुति श्रुति द्रोही ॥ ८ ॥
अन्त चतुर्युग ये रिषि राया । देखहिं श्रुति तपसे निज काया ॥ ९ ॥
तब मनु युग पद धर्म अपारी । सब अवनी पर करहिं प्रचारी ॥ १० ॥

दोहा- **मनु सुत पालहि धर्म वह, जो प्रचलित मनु कीन्ह ।**
यज्ञ भाग सुर सुरप श्री, भोगहिं जो हरि दीन्ह ॥ ८३ ॥

चौ- वर्षा कर जग पालहिं सारा । हरि धरकर वपु सिद्ध उदारा ॥ १ ॥
अनुयुग ज्ञान सभी प्रति कहहीं । कर्म योग रिषि वपु हरि तवहीं ॥ २ ॥
धरि योगेश रूप हरि वेही । योग स्वरूप सभी प्रति देही ॥ ३ ॥
रूप प्रजेश वे सृष्टि रचाई । राजमूर्ति दस्युन दुखदाई ॥ ४ ॥
काल रूप धर जगत विनासी । वे प्रभु सब घट-घट के वासी ॥ ५ ॥
स्तूयमान सब शास्त्रन द्वारा । माया मोहित पाव न पारा ॥ ६ ॥
कल्प अवान्तर का परमाना । हे नृप तव प्रति कियो बखाना ॥ ७ ॥
कल्प बीच मनु चौदह होवहिं । इमि पुराण विद निज मुख भाषहिं ॥ ८ ॥
पूछूँ तुमसे बात मुनीशा । कृपण समाँ बनकर अह ईशा ॥ ९ ॥
बलि समीप जा महि केहि हेतु । मांगीचरण तीन जगसेतू ॥ १० ॥

दोहा- **प्राप्त मनोरथ तदपि हरि, बाधेउ बलि केहि काज ।**
यह कौतुक सुनना चहुँ, तुमसे मैं मुनि राज ॥ ८४ ॥

चौ- श्री शुक कहे सुनो महाराजा । भये पराजित जब बलि राजा ॥ १ ॥
छीनी सम्पत्ति बलि की सारी । लिये प्राण संगर असुरारी ॥ २ ॥
तब भृगु ने बलि जीवित कीन्हा । जीवनदान बलि जब लीन्हा ॥ ३ ॥
करने लगा भृगुन की सेवा । भये मुदित तब सब महि देवा ॥ ४ ॥
सुरपुर विजय हेतु उन राया । नाम विश्वजित यज्ञ कराया ॥ ५ ॥
अग्निदेव पूजन जब कीन्ही । प्रेम सहित चरु आहुति दीन्ही ॥ ६ ॥
यज्ञ वेदि ते स्यन्दन सुन्दर । कनकपट्टयुत निकसेउ नृपवर ॥ ७ ॥

घोटक सुरपति अश्व समाना । सिंह चिन्ह ध्वज दंड महाना ॥ ८ ॥
तूण समेत दिव्य धनुवाणा । प्रकटे अग्नि ते तनु त्राणा ॥ ६ ॥
अमालिन माल वलि के गल पर । मेलही तदा पितामह आकर ॥ १० ॥

दोहा- **कुलगुरु शुक्राचार्य ने, दीन्हों शंख विशाल ।**
संचित कर रण वस्तु सब, विप्रन ते महिपाल ॥ ८५ ॥

चौ- परिक्रम कर मुनि राक्षस राया । महिसुर चरणन सीस नवाया ॥ १ ॥
गुरुदत्त रथ पर असवारी । अलंकार आयुध वरधारी ॥ २ ॥
शोभित अगनी कुंड समाना । अंगद हेम भुजा तनु त्राना ॥ ३ ॥
मकराकृत कुंडल श्रुति राजे । यातुधान यूथप चहुँ साजे ॥ ४ ॥
महा आसुरी सेन सजाई । इन्द्रपुरी पर करी चढ़ाई ॥ ५ ॥
जहाँ रम्य उपवन उद्याना । मत्त भ्रमर खग गावत गाना ॥ ६ ॥
नम्र शाख फल पुष्पन भारा । सोभित द्रुम चहुँ ओर अपारा ॥ ७ ॥
चक्रवाक सारस वर हंसा । मत्त मोर कारण्डव वंशा ॥ ८ ॥
सरवर ऊपर भीड़ अपारी । कृत क्रीड़ा सुरतिया सुखारी ॥ ६ ॥
ज्योतिर्मय सुर गंग समाना । अमरावति चहुँ परिख महाना ॥ १० ॥

दोहा- **सोभित चारों ओर पर, कंचन का प्राकार ।**
स्थान स्थान पर वन रही, अट्टालिका अपार ॥ ८६ ॥

चौ- स्फटिक मणि के गोपुर सारे । कंचन रचित कपाट दुआरे ॥ १ ॥
राजमार्ग शोभित अलगाई । सुर शिल्पी वह पुरी वनाई ॥ २ ॥
सभा स्थान क्रीड़ा स्थल नामा । विद्यमान दस कोटि विमाना ॥ ३ ॥
निर्मल वसन स्वलंकृत सारी । नित्य रूप वय श्यामा नारी ॥ ४ ॥
सोभित अग्नि सुवर्च समाना । पिक कंठी उन्नत स्तन स्थाना ॥ ५ ॥
सुरतिय केश पतित जो माला । तासु गंध लेकर तत्काला ॥ ६ ॥
चालत मंद-मंद मग वाता । हेम जाल निर्गत सुखदाता ॥ ७ ॥
अगरु सुगंध धूम मग ढकहीं । जिस पथ पर सुर रमणी फिरहीं ॥ ८ ॥
मुक्ता झल्लरि पट्ट विताना । मणि कंचन ध्वज दंड सुहाना ॥ ६ ॥
कूंजत कहीं मयूर कपोता । खावत कुतर-कुतर फल तोता ॥ १० ॥

दोहा- **करत भ्रमर गुंजार कहिं, सुर तिय वैठि विमान ।**
मधुर ध्वनि के साथ में , गावत मंगल गान ॥ ८७ ॥

चौ- बजत मृदंग व कम्बुज केता । गात अप्सरा आद्य समेता ।। १ ।।
खल शठ भूतन द्रोहि अधर्मी । पहुँचत जहँ नहिं मानि कुकर्मी ।। २ ।।
ऐसी देवपुरी पर धावा । कीन्हा बलि अब सेन सजावा ।। ३ ।।
घेरी सुरपुरि चारऊँ ओरा । कर भृगु दत्त शंख रव घोरा ।। ४ ।।
सुनकर तदा जलज रव भारी । भई भीतसुर सुन्दरी सारी ।। ५ ।।
बलि उद्योग. जानि सुरराया । सर्वदेव संग गुरु पहँ आया ।। ६ ।।
बोले गुरु सन सुरपति वानी । भगवन दीन वन्धु सुखदानी ।। ७ ।।
पूर्व विरोध सुमिर बलिराई । पुनि उद्यम कीन्हा अब साँई ।। ८ ।।
उद्यम उसका अब की बारा । अति असह्य जनु सभी प्रकारा ।। ९ ।।
पीवहिं मानो अम्बर सारा । जारहिं दशो दिशा दृग द्वारा ।। १० ।।

दोहा- **प्रलय अग्नि के सम यह, आवा कर उत्थान ।**
इसका कारण शीघ्र ही, मुझसे करो वखान ।। ८८ ।।

चौ- मम रिपु तेज बलादिक बाढ़ा । युद्ध हेतु जो रण महि ठाढ़ा ।। १ ।।
तव रिपु उन्नति का सब कारन । करूँ कथन तुम से हे मघवन ।। २ ।।
ब्रह्मवादि भृगु वंशिन द्वारा । पायउ तव रिपु शक्ति अपारा ।। ३ ।।
तुम समान अरु तुम भी येहू । कवन भाँति ना जीत सकेहू ।। ४ ।।
एक हरि को तज इस आगे । जीत सकहि नहि कोई अभागे ।। ५ ।।
होहिं न स्थित यम सन्मुख जैसे । ठहर सकै नहि इस मुख वैसे ।। ६ ।।
अब तुम सब सुर लोक तजाउ । इत उत छिपकर समय बिताउ ।। ७ ।।
एक दिवस अरि अवनति काला । आवहिं मन मति होउ विहाला ।। ८ ।।
अब तो विप्रन तेज अपारा । बलयुत भयऊ सभी प्रकारा ।। ९ ।।
पलटेउ भाग्य चक्र जब येहू । यहि द्विज शाप बलि प्रति देहू ।। १० ।।

दोहा- **तब अपने परिवार सह, होइहिं बलि यह नष्ट ।**
धन दौलत सब सम्पदा राजपाट ते भृष्ट ।। ८९ ।।

चौ- सब सुर जब गुरु इमि समुझाये । तुरत देव तब स्वर्ग तजाये ।। १ ।।
धर निज वपु स्वेच्छा अनुसारी । इत उत गुप्त भये सह नारी ।। २ ।।
जब सुर सभी तिरोहित भयऊ । तब सुरपुर बलि अधिकृत कियऊ ।। ३ ।।
कीन्हा लोक तीन वश पाछे । प्राप्त प्रसाद द्विजन कर आछे ।। ४ ।।
जब निज शिष्य विश्व जयि देखा । भये मुदित तब विप्र विशेषा ।। ५ ।।
सुरपति पद स्थिर हित द्विजराया । बलि शत अश्वमेध करवाया ।। ६ ।।

अब प्रसिद्ध यश यज्ञ प्रभावा । दसों दिशा बीचे अति छावा ॥ ७ ॥
सम्पादित यों विप्रन द्वारा । स्वर्ग सम्पदा विविध प्रकारा ॥ ८ ॥
निज आत्मा कृत कृत्य लखाई । भोगन लागा अब बलिराई ॥ ९ ॥
अब नृप से बोले मुनिनन्दन । एवं नष्ट देखि निज पुत्रन ॥ १० ॥

सोरठा- **दैत्यन का अधिकार, देखा सारे स्वर्ग पर ।**
व्यापा दुःख अपार, सुर वृन्दन की मात को ॥१ ॥

चौ- एक दिवस कश्यप मुनि राई । गये जहाँ बैठी सुरमाई ॥ १ ॥
देखा आश्रम उत्सव हीना । निरानन्द निज पत्नी दीना ॥ २ ॥
दत्तासन निज पत्नी द्वारा । स्थित होकर मुनि वचन उचारा ॥ ३ ॥
भद्रे कवन कष्ट यह आवा । कंटक तनु अरु मुख मुरझावा ॥ ४ ॥
विप्र धर्म पर कुछ अपघाता । तो नहि हुआ कही सुरमाता ॥ ५ ॥
जहाँ अज्ञ भी धर्म सहारे । पावहिं योग मार्ग फल सारे ॥ ६ ॥
क्या नहि कुशल गृहिन के गेहा । धर्म व अर्थ काम जिन स्नेहा ॥ ७ ॥
क्या अतिथि कोई तव घर आवा । चला गया वह बिन जल पावा ॥ ८ ॥
जिनके गेह अतीथि सिधावे । जल से भी स्वागत ना पावे ॥ ९ ॥
सो घर फेरू राज समाना । जात अतीथि बिना सन्माना ॥ १० ॥

दोहा- **हवन काल में हे प्रिये, कियो नही क्या होम ।**
ऐसो दुख क्या व्यापियो, बिखरे जो तव रोम ॥ ९० ॥

चौ- द्विज वह्नि हरिवदन कहावा । स्वर्गलोक जिन पूजन पावा ॥ १ ॥
है ना सब सुत कुशल तुम्हारे । कहु उदासि के कारण सारे ॥ २ ॥
बोली अदिति दोउ कर जोरे । ब्रह्मन सुनो वचन तुम मोरे ॥ ३ ॥
गौ द्विज धर्म गृहिन पर कोई । आपत नाथ दिखाई न मोई ॥ ४ ॥
जानत बात सभी तुम स्वामी । ध्यान योग करि अन्तरयामी ॥ ५ ॥
करते आप धर्म उपदेशा । करूँ पालना उन आदेशा ॥ ६ ॥
फिर मम कवन नाथ अभिलासा । जो न पूर्ण हो वहि प्रभुपासा ॥ ७ ॥
आर्य पुत्र सब प्रजा तुम्हारी । चाहे सत रज तम गुण धारी ॥ ८ ॥
सब पर राखहु एक ही भावा । यद्यपि हरि भी भक्त प्रभावा ॥ ९ ॥
करत मनोरथ पालन उनके । करते भक्ति सदा निज जन के ॥ १० ॥

दोहा- **मैं दासी प्रभु चरण की, मुझ पर करो विचार ।**
शत्रुन द्वारा संपदा, सब छीना घर बार ॥९१॥

चौ- धन पद यश ऐश्वर्य हमारा । छीना प्रबल दानवन द्वारा ॥ १ ॥
यही हेतु दुख सिन्धु निमग्ना । रहूँ रातदिन मैं उद्विग्ना ॥ २ ॥
जिमि पावहि मम सुत निज स्थाना । वहि उपाय अब करो सुजाना ॥ ३ ॥
एवं प्रार्थित कश्यप विस्मित । होकर वचन कहे कर निश्चित ॥ ४ ॥
स्नेह बद्ध अह यह जग सारा । माधव माया प्रबल अपारा ॥ ५ ॥
कहो पंच भौतिक यह देहा । प्रकृति परे आत्मा कहँ येहा ॥ ६ ॥
किसके पति सुन किसकी नारी । कारण मोह रहे इन भारी ॥ ७ ॥
अब तुम जगत गुरु भगवाना । दीन बन्धु प्रभु भक्त निधाना ॥ ८ ॥
करो अराधन दीन दयालू । करहिं पूर्ण वे काम कृपालू ॥ ९ ॥
भगवत भक्ति न निष्फल जाता । अन्य उपाय समझ नहि आता ॥ १० ॥

दोहा- **जगपति की आराधना, करुँ मैं कवन प्रकार ।**
होहिं मनोरथ पूर्ण मम, सो सब कहु भरतार ॥९२॥

चौ- पुत्रन सहित दुखी मुझ ऊपर । होवे त्वरित मुदित जगदीश्वर ॥ १ ॥
वह सब देव सुनावहु मोहीं । दुखी होय पूछो मैं तोही ॥ २ ॥
बोले कश्यप सुन सुरमाता । पूछा एक दिवस हम धाता ॥ ३ ॥
प्रजा काम व्रत जो विधि गाया । वहि व्रत कहूँ तुझे सुरमाया ॥ ४ ॥
फागुन शुक्लपक्ष दिन द्वादश । करें पयोव्रत तजि सब आलस ॥ ५ ॥
पूजहिं परम भक्ति के द्वारा । हरि कमलाक्षहिं सभी प्रकारा ॥ ६ ॥
फागुन कृष्ण अमावंस आये । क्रोड विदीर्ण मृत्तिका लावे ॥ ७ ॥
वह माटी निज अंग लगावे । लेप काल यों मंत्र सुनावे ॥ ८ ॥
हे देवि प्रभु आदि वराहा । लाये तुम्हे रसातल राहा ॥ ९ ॥
करहू पाप निवारण मोरे । करूँ प्रणाम कंज पद तोरे ॥ १० ॥

दोहा- **पाछे सरिता स्नान कर, कर नैमित्तिक काज ।**
वेदी महि जल अनल रवि, विष्णु रूप गुरु राज ॥९३॥

चौ- पूजहि इनको व्रती निकेता । पढ़े स्तोत्र पुनि प्रेम समेता ॥ १ ॥
वन्दों वासुदेव भगवाना । साक्षी सूक्ष्म व पुरुष प्रधाना ॥ २ ॥
महापुरुष सब प्राणिन वासी । शिव शक्ति धर साँख्य प्रकासी ॥ ३ ॥
द्विशिर त्रिपद यज्ञ चतु श्रृंगा । सप्त हस्त विभु नरहरि अंगा ॥ ४ ॥
नर नारायण ऋषि वर वन्दन । त्रयि विद्यात्मन करुणा क्रन्दन ॥ ५ ॥
साक्षी भूत सब भूतन स्वामी । सब विद्याधिप अन्तरयामी ॥ ६ ॥

सर्वभूत हरि अन्तरयामी । बोले वचन इन्दिरा स्वामी ॥ ७ ॥
देव मात अभिप्राय तुम्हारा । जाना प्रथम अरी मैं सारा ॥ ८ ॥
चाहत जीत अदिति निज पुत्रन । मिलहि न स्वर्ग सम्पदा दनुअन ॥ ६ ॥
दुःखित क्रन्दित व्याकुल भारी । देखन चाहत शत्रुन नारी ॥ १० ॥

दोहा- **स्वर्गलोक क्रीड़ा करत, जिन पुत्रन समृद्ध**
देखन चाहू मात तुम, हो असुरन पर क्रुद्ध ॥६६॥

४चौ-किन्तु देवि दानव गण सारा । रक्षित प्रवल कुदेवन द्वारा ॥ १ ॥
करहिं आक्रमण पुत्र तुम्हारे । जीत सकै ना किसी प्रकारे ॥ २ ॥
यह मैं कहूँ स्वमति अनुसारा । हो अहिं वल श्रम निष्फल सारा ॥ ३ ॥
सती तुम्हारे व्रत ते राजी । सोची एक युकति मैं आजी ॥ ४ ॥
मम अरचन निष्फल ना जाता । तव पुत्रन रक्षा हित माता ॥ ५ ॥
मैं निज अंश ते कश्यप वीरज । करूँ प्रवेश मात रखु धीरज ॥ ६ ॥
वनकर मैं सुत मात तुम्हारा । करूँ सुरन का अव उद्धारा ॥ ७ ॥
तुम निज पति कश्यप को माता । रख संतोष भजो निज गाता ॥ ८ ॥
भद्रे राखहु मुझ में भाऊ । गुप्त वात यह काहु न गाऊ ॥ ६ ॥
होहिं मनोरथ पूर्ण तुम्हारे । यों कह हरि निज धाम पधारे ॥ १० ॥

दोहा- **आवहिं मोरे गर्भ में, वे वैकुंठ निधान ।**
पत्ति सेवा करने लगी, आत्मा दुरलभ मान ॥१००॥

चौ- सत्यदर्शि कश्यप से ताता । रहती गुप्त नहीं सब वाता ॥ १ ॥
योग समाधी वल मुनि जाना । आये देह अंश भगवाना ॥ २ ॥
तदा समाहित चित तप द्वारा । चिर संचित निज वीर्य अपारा ॥ ३ ॥
अदिति जठर विच कियो अधाना । वायु काठ विच अगनि समाना ॥ ४ ॥
अदिति गर्भ आये भगवाना । जब यह हाल विधाता जाना ॥ ५ ॥
गुह्य नाम मुख स्तोत्र उचारा । निज मन मानस मुदित अपारा ॥ ६ ॥
उरू गाय उरूक्रम स्वामी । जय ब्रह्मण्य देव श्रुति कामी ॥ ७ ॥
वेद गर्भ वेधा त्रिनाभा । प्रश्नि गर्भ त्रयपृष्ठ सुआभा ॥ ८ ॥
जय शिपिविष्ट व विष्णु तुम्हारे । वन्दों मैं पद कंज मुरारे ॥ ६ ॥
आदि व मध्य जगत के अन्ता । कर्त्ता भर्त्ता तुमही अनन्ता ॥ १० ॥

दोहा- **काल रूप धरकर प्रभो, तुमही विश्व चलाउ ।**
देवन के परमाश्रय, यद्यपि जन्म ना पाउ ॥ १०१ ॥ क

सुरकारज साधन हित, तदपि धरउ अवतार ।
स्वर्ग भृष्ट अब सुख को, स्थापित करो मुरार ॥ १०१ ॥ ख

चौ- बोले श्री शुकदेव मुनीशा । विधि द्वारा स्तुत इमि जगदीशा ॥ १ ॥
अजर अजन्मा दीन निधाना । प्रकटे अदिति गर्भ भगवाना ॥ २ ॥
शंख व चक्र गदाम्बुज धारी । पीत वसन सोभित भुजचारी ॥ ३ ॥
कंज नयन तनु मेघ समाना । झषपति आकृति कुंडल काना ॥ ४ ॥
वक्षस्थल श्री वत्स सुसोही । कर कंकन अंगद भुज मोही ॥ ५ ॥
सीस किरीट करधनी कटि पर । जगमगात चरणन बिच नूपुर ॥ ६ ॥
कम्बु ग्रीव वनमाल सुसोही । गुँजत जासु भ्रमर तिय दोही ॥ ७ ॥
वर कौस्तुभ मणि सोभित ग्रीवा । अंग कान्ति ते करूणासीवा ॥ ८ ॥
नष्ट कियो तम कश्यप गेहा । प्रकटे जब वह दीन सनेहा ॥ ९ ॥
भई मुदित सारी अब आशा । स्वच्छ नीर सर सरित प्रकाशा ॥ १० ॥

दोहा- **प्रजा हृष्ट गुण युत ऋतु, मंद सुगंध बयार ।**
अंतरि सुरपुर महि, गौ द्विज मुदित अपार ॥१०२॥

चौ- प्रकटाई गिरिदरि मणि खाना । प्रकटे दीन बन्धु भगवाना ॥ १ ॥
श्रवण द्वादशी भादवमासा । अभिजित पर विधु करत प्रकासा ॥ २ ॥
विजया नाम मिति अति सुन्दर । वृश्चिक लग्न मध्य रवि नभ पर ॥ ३ ॥
रवि भृगुनन्दन देशम सुहाये । विधु सुत लाभ नवम गुरु आये ॥ ४ ॥
खेचर नखत सभी अनुकूला । देवत ना फल जो प्रतिकूला ॥ ५ ॥
आनक पणव मृदंग अपारा । बाजी झालर शंख अपारा ॥ ६ ॥
करत अप्सरा नृत्य महाना । कर गंधर्व गात मुख गाना ॥ ७ ॥
भये मुदित मनु मुनि अपारा । पितर अग्नि विद्याधर सारा ॥ ८ ॥
सिद्ध व चारण किन्नर सारे । खगपति अहिपति जयति पुकारे ॥ ९ ॥

दोहा- **कश्यप आश्रम पर महा, पुष्पन झरी लगाय ।**
सुन नारी निज पतिन सह, जयति जयति इति गाय ॥ १०३॥

चौ- निज तनु प्रकटे दीन दयाला । देख अदिति भई प्रेम विहाला ॥ १ ॥
कश्यप भी जय जयति उचारे । निज माया ते तनु तुम धारे ॥ २ ॥
जो हरि पूरव रूप दिखावा । दोउ देखत वह रूप छिपावा ॥ ३ ॥
अब वामन वटु रूप बनावा । मोद पान मुनि प्रति दिखलावा ॥ ४ ॥
जात करम आदिक मुनि कीन्हा । सावित्री सविता उन दीन्हा ॥ ५ ॥
दई मेखला कश्यप उन हित । ब्रह्म सूत्र दिय देव पुरोहित ॥ ६ ॥

महि मृग अजिन व दंड निशाकर । मा कौपीन छत्र दिय अम्बर ॥ ७ ॥
दीन्ह कमंडलु विधि उन आई । सप्तर्षिगण कुशा सुहाई ॥ ८ ॥
भिक्षा पात्र यक्षपति दीन्हा । अक्षमाल सुरसति कर लीन्हा ॥ ९ ॥
सती अम्बिका उमा भवानी । दीन्ही भिक्षा वटु प्रति आनी ॥ १० ॥

दोहा- **ब्रह्म ऋषिन के बीच में, ब्रह्म तेज के काज ।**
भये सुशोभित वे प्रभु, सुनो परीक्षित राज ॥ १०४ ॥

चौ- पाछे वटु रूपी भगवाना । अर्चित अनल हवन किये नाना ॥ १ ॥
करते अश्वमेध उस काला । भृगु आज्ञा ते बलि नरपाला ॥ २ ॥
यज्ञ कीरति सुन भगवाना । चले वहाँ पर दीन निधाना ॥ ३ ॥
जब उस यज्ञ बीच प्रभु चाले । पद पर नमन करन महि हाले ॥ ४ ॥
नदी नरमदा उत्तर तीरा । भृगू कच्छ इक क्षेत्र अखीरा ॥ ५ ॥
यज्ञ सदस्यन सह यजमाना । आवत देखे सूर्य समाना ॥ ६ ॥
करत तर्क ना अब मन माँही । ये रवि सनत कुमार दिखाहीं ॥ ७ ॥
एवं वे भृगु तर्क न लागे । आये वामन तब उन आगे ॥ ८ ॥
छत्र सदंड कमंडल जल युत । धारण किय वामन तनु अद्भुत ॥ ९ ॥
कीन्हो मंडप बीच प्रवेशा । ब्रह्मसूत्र जिन कंठ प्रदेशा ॥ १० ॥
मोञ्जि मेखला अजिन सुसोही । जटिल रूप तनु वामन जोही ॥ ११ ॥

दोहा- **उठे प्रभावित हो तदा, रित्विज सह यजमान ।**
दर्शनीय सुन्दर वटुहिं, दीन्हो आसन आन ॥ १०५ ॥

चौ- स्वागत कर कीन्हा बलि वन्दन । धोये चरण कीन्ह पुनि अरचन ॥ १ ॥
वह पद जल जन कल्मष हारी । गंगा रूप भक्ति सिरधारी ॥ २ ॥
जो जल चन्द्र मौलि सुर ईशा । धारत परम भक्तियुत सीसा ॥ ३ ॥
बोले बलि स्वागत तव ब्रह्मन । करूं आपके पद मैं वन्दन ॥ ४ ॥
कहु वामन वटु काम तुम्हारा । करूँ मनोरथ पूरण सारा ॥ ५ ॥
वामन वपु धर हे वटु तोही । दीखत ब्रह्मरिषिन तपमोही ॥ ६ ॥
भये सुतृप्त पितर तव काजू । पावन वंश भये मम आजू ॥ ७ ॥
सफल भये यह यज्ञ हमारे । जो मम घर पर आप पधारे ॥ ८ ॥
कीन्ही वामन कृपा अपारी । भई पुनीत मही मय सारी ॥ ९ ॥
हे वटु जो हों रुचि तुम्हारी । माँगहु तुम मति करो अबारी ॥ १० ॥

दोहा- **माँगहु कंचन रतन धन, अन्न पेय गौदान ।**
ग्राम तुरग गज रथ मही, रखहु न मन में कान ॥ १०६॥

चौ- धर्म युक्त बलिवचन सुहाई । सुनि बोले वामन द्विजराई ॥ १ ॥
हे जनदेव य वचन तुम्हारे । रहे कुलोचित सूनृत सारे ॥ २ ॥
कवन बात ना बड़ बलिराया । तव वंशिन कीरति सब गाया ॥ ३ ॥
है प्रहलाद प्रत्यच्छ प्रमाना । कुलगुरु शुक्राचार्य बखाना ॥ ४ ॥
कृपण निसत्व नहीं कुल तोरे । ऐसो पुरुष धर्म जो छोरे ॥ ५ ॥
विप्र हेतु आश्वासन देकर । मुकर गयउ जो निज मुख कहकर ॥ ६ ॥
समर व दान काल जब आवा । गयो विमुख सो नहीं दिखावा ॥ ७ ॥
सोभित जिस कुल चन्द्र समाना । कीरति तोर पितामह नाना ॥ ८ ॥
जिस कुल हिरण्याक्ष रणधीरा । निज सम खोज करन बलवीरा ॥ ९ ॥
सभी त्रिलोकी बीच सिधाये । निज एक वीर नहीं उन पाये ॥ १० ॥

दोहा- **हिरण्याक्ष वध कर हरि, नहिं मानी निज जीत ।**
अतुल पराक्रम सुमिर कर, होवत मन में भीत ॥ १०७॥

चौ- भ्राता वध सुन कर निज काना । कंजन कश्यप गय हरि स्थाना ॥ १ ॥
आवत दैत्य तदा हरि देखा । निज मन चिन्तित भये विशेषा ॥ २ ॥
कर गहि शूल ये काल समाना । आवत मम सन्मुख बलवाना ॥ ३ ॥
जहँ जहँ जाउँ तहाँ ये आही । भूतन अनु जिमि मृत्यु सदाही ॥ ४ ॥
करूँ प्रवेश अब हिय बिच येहू । जासु न मोहिं य देख सकेहू ॥ ५ ॥
कर विचार यों हरि निज मन में । कियउ प्रवेश तदा रिपु तन में ॥ ६ ॥
अब हरि को वह देख न पाया । हेरन लागा इत उत राया ॥ ७ ॥
भयो क्रुद्ध तब निज मन भारी । करने लागा नाद अपारी ॥ ८ ॥
सुरपुर भूमि दिशा नभ सारा । गिरिपताल अरु सागर क्षारा ॥ ९ ॥
छाना पर हरि कहिं नहिं पाये । तब तो वह यों वचन सुनाये ॥ १० ॥

दोहा- **छाना सारा जगत में, पर नहिं विष्णु दिखाय ।**
गयउ अरे उस लोक में, जहँ पुनि लौट न आय ॥ १०८॥

चौ- जब विष्णु नहिं रहा यहाँ पर । वैर भाव राखू अब क्यों कर ॥ १ ॥
वैर भाव तो सब तनु नारी । मोह क्रोध का कारण भारी ॥ २ ॥
देखो बलि तब पिता विरोचन । विप्र भक्त दानी अति सज्जन ॥ ३ ॥
निज अरि सुर द्विज रूप बनाये । माँगन आयुष उन घर आये ॥ ४ ॥

जानत तदपि निजायुप दीन्हा । उस ही वंश जनम तुम लीन्हा ॥ ५ ॥
कीन्हा पालन पूर्वज जिनका । करत आचरण तुम भी उनका ॥ ६ ॥
यही हेतु तुमसे मैं राजन । तव समीप आयउँ कुछ याचन ॥ ७ ॥
भूमि चरण मम तीन समाना । नृप वर देहु मुझे तुम दाना ॥ ८ ॥
माना आप जगत के स्वामी । अति उदार दानिन में नामी ॥ ९ ॥
तदपि न अधिक और मैं चाहूँ । बस यहि भूमि देहू नर नाहू ॥ १० ॥

दोहा- **विज्ञ मनुज निज पूर्ति हित, अधिक न माँगहि ।**
वरना प्रति ग्रहजन्य अघ लागहि उसे महान ॥१०९॥

चौ- बोले बलि हे ब्राह्मण बालक । दीखउ तुम नहि स्वारथ पालक ॥ १ ॥
वचन तुम्हारे वृद्ध समाना । किन्तु बाल मति इति हम जाना ॥ २ ॥
जाकर ईश्वर लोक समीपा । माँगा नहि बालक तुम द्वीपा ॥ ३ ॥
तोरा वचन लगा ना नीका । माँगो राज सभी अवनीका ॥ ४ ॥
मम समीप आ मानव कोई । याचें अन्य उचित नहि सोई ॥ ५ ॥
मानो हे वटु मोरी बाता । वृत्ति करी महि मांगहु ताता ॥ ६ ॥
बोले वामन अब मुस्काई । विषय त्रिलोक बीच जे राई ॥ ७ ॥
वे जिन पुरुष न इन्द्रिय जीती । होय न पूरक यहि जगनीती ॥ ८ ॥
जो पद प्राप्त तीन कर राई । हो नहि तुष्ट सो द्वीप न पाई ॥ ९ ॥
सप्त द्वीप के जे अधिपाला । वैन्य गयादिक सब नरपाला ॥ १० ॥

दोहा- **तृष्णा काम व अर्थ का, पावे नहि वे अन्त ।**
ऐसा मैनें हे नृप सुना, वचन मुख सन्त ॥११०॥

चौ- मिलहिं भाग्य वश जो कुछ राया । करहिं तृप्त वहि सुख मिल काया ॥ १ ॥
जे ते नर संतोष विहीना । करहि कदाचित लोक अधीना ॥ २ ॥
तदपि न पावहिं वे सुख काया । निशिदिन रहहि वे आतुर राया ॥ ३ ॥
असंतोष संसृति द्वारा । संतोष अरे नृप मुक्ति प्रकारा ॥ ४ ॥
होवहिं मुदित मिलिहिं कुछ थोरा । बढ़हि तेज उस विप्र ब होरा ॥ ५ ॥
नसे विप्र संतोष अधीना । रहे सदा चिन्तातुर दीना ॥ ६ ॥
यही हेतु भूमि त्रय पादा । माँगू नहि नृप तुम से ज्यादा ॥ ७ ॥
भूमि तीन पद पाकर राजन । रहहिं मुदित हे नृप यह ब्राह्मन ॥ ८ ॥
यों सुन वचन जरा मुस्काई । बोले वचन तदा बलिराई ॥ ९ ॥
लेहू वटु जो रुचि तुम्हारी । यों कह निज कर गहि जलझारी ॥ १० ॥

दोहा- कुल उपरोहित शुक्र तव, विष्णु कपट पहिचान ।
बोले वलि से यों नृप, है वैरोचन मान ॥१११॥

चौ- यह विष्णु सुर कारज साधक । कश्यप अदिति के बन बालक ॥ २ ॥
आये हे नृप द्वार तुम्हारे । सत्य वचन यह मानु हमारे ॥ २ ॥
उचित न इन प्रति सुकृति तुम्हारी । यह धन सम्पत्ति छीन सुरारी ॥ ३ ॥
देवहि पुनि सुरपति के काजू । देहू दान इन प्रति मत राजू ॥ ४ ॥
तीन पाद यह विश्व निकाई । नापहिं लोक सकल पुनि राई ॥ ५ ॥
दे सर्वस्व विष्णु प्रतिराऊ । करहु निवास कहाँ तुम जाऊ ॥ ६ ॥
नापहि भूमि एक पद द्वारा । नापहिं दूसर पद नभ सारा ॥ ७ ॥
पाद तृतीय न्यास गति रऊ । रहहिं कहाँ यह तुम वतलाऊ ॥ ८ ॥
करहु प्रतिज्ञा जब ना पूरी । होवहिं नरक निवास जरूरी ॥ ९ ॥
निज वृत्ति का खंडन होही ॥ सो नहि दान जँचा नृप मोही ॥ १० ॥

दोहा- वृत्ति मान मानव जग, करत यज्ञ तप धर्म ।
वृत्ति हीन मानव अरे, कर न सकै कुछ कर्म ॥११२॥

चौ- धन गति वर नृप पंच पुकारी । काम अर्थ यश निज परिवारी ॥ १ ॥
धर्म हेतु जो करे विभाजन । इह परत्र सुख पावहिं राजन ॥ २ ॥
अनृत सत्य व्यवस्था सारी । श्रुत्यादिक सब शास्त्र पुकारी ॥ ३ ॥
वृत्ति पर संकट जब आवे । अनृत भी न निषिद्ध कहावे ॥ ४ ॥
श्रुति ऋग ऋचा अरे नर राई । कहुँ तोरे प्रति सब समझाई ॥ ५ ॥
सत्य वही मुख किये स्वीकारा । अनृत वही जो करे नकारा ॥ ६ ॥
यह तनु तो इस वृक्ष समाना । सत्य फूल फल इसके माना ॥ ७ ॥
तरु विन लगहि नही फल फूला । धन बिन हो यह तरु निरमूला ॥ ८ ॥
सूखे तरु विन मूल अधीना । सूखहिं तनु भी त्यों धन हीना ॥ ९ ॥
याचक प्रति देवन हित कहिये । किन्तु न्यून हो तब उन नटिये ॥ १० ॥

दोहा- भिक्षुक प्रति देकर सभी, दाता का कल्यान ।
हों न कदापि जगत में, सुनरे नृप नादान ॥११३॥

चौ- कहे वचन याचक प्रतिआई । मोरे पास नहीं कुछ भाई ॥ १ ॥
अमृत वचन कहे जो कोरा । अपर अर्थ खींचे निज ओरा ॥ २ ॥
किन्तु सदा अनृत मति सेहू । इस पर ध्यान जरा नृप देहू ॥ ३ ॥
वदत सदा अनृत मनमाना । सो नर जीवित मृतक समाना ॥ ४ ॥

सदा वैन जो असत उचारत । सो भारी दुष्कीरति पावत ॥ ५ ॥
वृत्ति विवाह तिया परिहासा । प्राणन पर जब संकट खासा ॥ ६ ॥
गौ अरु विप्र बचावन काजू । हिंसा काजु सुनो महाराजू ॥ ७ ॥
बोलत असत वचन जे कोई ॥ तेहि न पाप अरे कुछ होई ॥ ८ ॥
बोले मुनिनन्दन सुनु राया । एवं कुल गुरु वचन सुनाया ॥ ९ ॥
कुछ क्षण भये बलि चुपचापू । बोले वचन सुनो गुरु आपू ॥ १० ॥

दोहा- **गेहिन प्रति सब सत्य यह, वचन कहे समुझाय ।**
धर्म व अरथ व काम यश, वृत्ति न जासु नसाय ॥ ११४॥

चौ- मैं प्रहलाद पौत्र गुरु राई । प्रण कर कैसे करूँ हँसाई ॥ १ ॥
वित्त लोभ ते कवन प्रकारा । नटूँ विप्र ते निज मुख द्वारा ॥ २ ॥
पाप नहीं जग असत समाना । यों यह महि निज वदन बखाना ॥ ३ ॥
रहूँ समर्थ सहन मैं सारा । किन्तु असत जन का नहिं भारा ॥ ४ ॥
यथा भीत मैं द्विज अपमाना । तथा नरक दुख दारिद नाना ॥ ५ ॥
नसहीं राजपाट यदि सारा । होऊं भीत न काल करारा ॥ ६ ॥
राजपाट धन संग नसाहीं । अन्त समय सब यहिं रहजाहीं ॥ ७ ॥
पाकर दान न हो द्विज राजी । तासु त्याग फल कुछ नहि साजी ॥ ८ ॥
मुनि दधीचि व शिवि नर राई । तजे प्राण निज जीव भलाई ॥ ९ ॥
पुनि महि आदिक हेतु विचारा । करें श्रेष्ठ जन कवन प्रकारा ॥ १० ॥

दोहा- **दैत्यन द्वारा पूर्व यह, भोगी मही विशाल ।**
रहे किन्तु वे यहँ नहीं, भये कलेवा काल ॥११५॥

चौ- रहा किन्तु यश जग उन येहू । साधहिं कीरति यहि हित देहू ॥ १ ॥
देखे जग बिच मानव नाना । समर बीच जे त्यागहिं प्राना ॥ २ ॥
देखे जग बिच मानव नाहीं । प्राप्त पात्र निज द्रव्य तजाही ॥ ३ ॥
करुणाशील व पुरुष उदारा । पात्र अपात्र न करे विचारा ॥ ४ ॥
देहिं कुपात्र काज जे दाना । पावत सो नर दुरगति नाना ॥ ५ ॥
किन्तु नाथ उस दुरगति माँही । कीरति तासु न कबहुँ नसाही ॥ ६ ॥
पूजित कीन्हे मख बिच जेहू । होवहि वरद विष्णु यदि येहू ॥ ७ ॥
होवहि मम अरि भी यदि येहू । देहूँ दान महि तजि सब स्नेहू ॥ ८ ॥
बाँधे मोहि य बिन अपराधू । तदपि अनिष्ट नहीं इन साधूँ ॥ ९ ॥
यदि मम शत्रु तदपि भयभीता । धारेउ विप्र शरीर पुनीता ॥ १० ॥

दोहा- **उत्तम श्लोक ये विष्णु यदि, तदपि न कोई विचार।**
हर सकते भूमी युँही, युद्ध बीच मोहि मार ॥ ११६ ॥

चौ- होवहिं यदि कोई शत्रु हमारा। सोव हि संगर मम शर द्वारा ॥ १ ॥
जब आदेश शिष्य नहीं माना। भये शुक्र तब कुपित महाना ॥ २ ॥
मनस्वि व सत्य संध बलि हेतू। देकर शाप वदत भृगुकेतू ॥ ३ ॥
जानत तू निज पंडित भारी। रहा नहीं मम आज्ञाकारी ॥ ४ ॥
आशु नष्ट होवहिं पद तोरा। मानो सत्य वचन यह मोरा ॥ ५ ॥
यों निज गुरु मुख सुनकर शापा। तदपि न विचलित बलि चुपचापा ॥ ६ ॥
वटु वामन की कीन्ही पूजन। दियो दान महिकर उन वन्दन ॥ ७ ॥
तदा नाम विंध्यावलि रानी। हेम कुंभ जल पूरित आनी ॥ ८ ॥
भगवत पाद युगल यजमाना। धोकर के निज मस्तक आना ॥ ९ ॥
दान हेतु जल कलश उठावा। त्योंहि शुक्र वपु कीट बनावा ॥ १० ॥

दोहा- **कलश बीच जाकर उन, रोकी जल की धार।**
देख शुक्र की नीचता, होकर क्रुद्ध अपार ॥ ११७ ॥

चौ- वामन दर्भा एक उठाई। कलश नालिका बीच चलाई ॥ १ ॥
भये शुक्र इक नयन विहीना। सुनो चरित अब कुरू कुलीना ॥ २ ॥
सुर गंधर्वादिक अब सारे। बलि यश का सब गान उचारे ॥ ३ ॥
गावत किन्नर होकर राजी। ढोल मृदंग दुंदुभी बाजी ॥ ४ ॥
दुष्कर कर्म यह बलि कीन्हा। लोक तीन निज अरि प्रति दीन्हा ॥ ५ ॥
अब वामन निज रूप बढ़ावा। जासु रूप भू स्वर्ग सुहावा ॥ ६ ॥
अम्बर सागर दिशा पताला। उन तनु सब जग लखा नृपाला ॥ ७ ॥
रहा रसातल पदतल सुन्दर। पद पर महि तरु जंघन ऊपर ॥ ८ ॥
जानुन ऊपर पक्षि अपारा। गोड़न ऊपर मरुत पसारा ॥ ९ ॥
गुह्य प्रदेश प्रजापति भाये। जघन देश पर दैत्य सुहाये ॥ १० ॥

दोहा- **कुक्षी में सागर वसे, नाभी में नभ आय।**
उर ऊपर नक्षत्र गण, धर्म हृदय पर भाय ॥११८॥

चौ- अनृत सत्य दोउ स्तन जासू। श्री वत्स वक्ष मन चंद्र प्रकासू ॥ १ ॥
दोउ भुज लोक पाल दिश काना। दिवि शिर केश मेघ गण माना ॥ २ ॥
नातावात नयन रवि भासत। वाणि वेद मुख अनल प्रकाशत ॥ ३ ॥
विधि निषेध भू जल पति जीहा। निशि दिन पलक ललाट सुभीहा ॥ ४ ॥

रेतस अम्भ लोभ अधरोष्ठा । छाया मौत व पृष्ठ अनिष्ठा ॥ ५ ॥
रोम औषधी माया हाँसी । नख शिल नाड़ी नदी प्रकासी ॥ ६ ॥
इन्द्रिन बीच देव मुनि सारे । बुद्धि बीच विधि लखे अपारे ॥ ७ ॥
सब जड़ जंगम भूत सरीरा । यों सब जग लखि असुर अधीरा ॥ ८ ॥
चक्र सुदरशन तेज अपारा । धनु सारंग भयद टंकारा ॥ ९ ॥
घन सम जासू शब्द करारू । पांच जन्य हरि शंख सुधारू ॥ १० ॥

दोहा- **विष्णु गदा कौमोदकी, विद्याधर तलवार ।**
चर्म चन्द्रशत युक्त अरु, तूण सुवाण अपार ॥ ११९ ॥

चौ- लोकपाल सह नन्द सुनन्दा । आये जहँ पर खड़े मुकुन्दा ॥ १ ॥
राजन अब वामन वपुधारी । सोभित प्रभु चहुँ ओर अपारी ॥ २ ॥
सोभित सीस किरीट मनोहर । सोभित अंगद सुन्दर भुज पर ॥ ३ ॥
श्रुति पर कुंडल मीन समाना । मणि कौस्तुभ श्री वत्स सुहाना ॥ ४ ॥
रत्नमेखला अम्बर सुन्दर । वनमाला पर गुंजत मधुकर ॥ ५ ॥
एक पाद ते बलि महि नापी । नभ शरीर भुज दस दिशि व्यापी ॥ ६ ॥
नाँपा स्वर्गलोक पद दूसर । रहि न शेष अणु सम अब नृपवर ॥ ७ ॥
सत्यलोक जब प्रभुपद गयऊ । देख विरंचि मुदित मन भयऊ ॥ ८ ॥
तथा मरीच्यादिक मुनि सारे । योगशास्त्र के जानन हारे ॥ ९ ॥
सनकादिक सब होकर राजी । आये प्रभु पद दरसन काजी ॥ १० ॥

दोहा- **वेद और उपवेद सब, तर्क व साङ्ग पुरान ।**
सह इतिहास व यम नियम, स्वागत हितभगवान ॥१२०॥

चौ- प्रभु पद पाद कमल नत मस्तक । आये और और भी दरसक ॥ १ ॥
कीन्हा बन्दन भक्ति समेता । कर अगवानी विश्व निकेता ॥ २ ॥
पूजा द्रव्य साथ ले धाता । पूजेउ चरण कमल जग पाता ॥ ३ ॥
ब्रह्म कमंडल जल के द्वारा । विश्व रूप के पाद पखारा ॥ ४ ॥
सोही जल अति पावन कारन । गंगा रूप भयऊ सुनु राजन ॥ ५ ॥
सोही जल महि ऊपर गिरकर । करत पुनीत त्रिलोकी नृपवर ॥ ६ ॥
यह गंगा प्रभु कीरति गाई । अब प्रभु निज लघु रूप बनाई ॥ ७ ॥
निज विभूति सब तुरत हटाई । उन उरुक्रम ने सुनु नरराई ॥ ८ ॥
धाता लोकपाल अब सारे । दे बलि प्रभुहित जयति उचारे ॥ ९ ॥
अंगराग माला उपहारा । धूप दीप फल विविध प्रकारा ॥ १० ॥

दोहा- लाजा जल अक्षत अरु, अंकुर कुसुम सुहान ।
महिमा स्तुति जय घोष शुभ, नृत्य व वाद्य व गान ॥१२१॥

चौ- शंख दुंदुभि शब्दन द्वारा । की आराधन सभी प्रकारा ॥ १ ॥
जाम्बवन्त जो अति वलवाना । तेहि काल मन वेग समाना ॥ २ ॥
धायउ तुरत हाथ ले भेरी । विजय घोषणा चहुँ दिशि फेरी ॥ ३ ॥
तीन पाद महि माँगन व्याजू । हरण कीन्ह सब महि वटुराजू ॥ ४ ॥
तब तो क्रोधित राक्षस सारे । नयन अरुन करि वचन उचारे ॥ ५ ॥
अहो विप्र नहिं यह छलकारी । द्विज रूपी हरि सुर प्रियकारी ॥ ६ ॥
मख बीचे दीक्षित नरमाला । भाखहिं नहिं यह तो इस काला ॥ ७ ॥
साधु संत द्विज भक्त अनन्ता । त्यक्त दंड सतव्रत गुणवन्ता ॥ ८ ॥
जिन कबहूँ नहि अनृत भाखा । भेदभाव जिन कवहुँ न राखा ॥ ९ ॥
शत्रु रूप हरि ने यहँ आकर । छीना सब कुछ नृप को छलकर ॥ १० ॥

दोहा- धर्म हमारा अब यही, करें शत्रु की घात ।
यों कहकर नृप अनुचर, कर धर आयुध तात ॥ १२२॥

चौ- वामन पर धाये करि क्रोधा । दशन बजाय रहेउ ना बोधा ॥ १ ॥
धावमान जब दनुज लखाये । विष्णुदूत हँसि शस्त्र उठाये ॥ २ ॥
कुमुद प्रवल बल गरुड़ जयंता । पुष्पदन्त सात्वत बलवन्ता ॥ ३ ॥
जय अरु विजय महाबल शाली । नन्द सुनन्द दनुज कुलघाली ॥ ४ ॥
नाग अयुत सम जो बलवन्ता । धृत आयुध भुज तुरत अनन्ता ॥ ५ ॥
दानव चमु इन तुरत विदारी । तब बलि ने निज सेन निवारी ॥ ६ ॥
निज मन सुमिरन कर भृगु शापा । बोला त्यागहु तुम निज आपा ॥ ७ ॥
विप्रचित्ति हे नमुचि हमारी । सुनवानी त्यागहु रन भारी ॥ ८ ॥
काल आज विपरीत हमारा । पौरुष ते यह किसी प्रकारा ॥ ९ ॥
जीतन हेतु समर्थ न येही । समय फेर ते सुख दुख देही ॥ १० ॥

दोहा- प्रथम काल यह सुरन का, रहा अरे विपरीत ।
अब यह उनके उदय का, आवा कालअभीत॥१२३॥क
औषध दुर्ग व मंत्र मति, बल सचीव की चाल ॥
साम व दाम उपाय ते, जीत सकें नहिं काल ॥ १२३॥ख

चौ- प्रथम देव यह केतिक बारा । जीते हमने विविध प्रकारा ॥ १ ॥
समय फेरते अब हम हारे । तजो शोच मन धीरज धारे ॥ २ ॥

आवहिं उदय सुकाल हमारा ।। जीतहिं हम इन सभी प्रकारा ।। ३ ।।
करहु सुकाल प्रतीच्छा भाई ।। देखु वाट सब रंज बिहाई ।। ४ ।।
एवं बलि के वच सुन सारे । पार्षद ताड़ित दैत्य विचारे ।। ५ ।।
कियो रसातल बीच प्रवेशा । आगे गाथा सुनो नरेशा ।। ६ ।।
बाद गरुड़ प्रभु मन रुचि जानी । वरुण पाश बाँधेउ बलिदानी ।। ७ ।।
तब महि अम्बर अतिव अपारा । भयउ परीक्षित हाहाकारा ।। ८ ।।
पाशबद्ध बलि अब श्री हीना । बोले बामन वचन प्रवीना ।। ९ ।।
रे बलि भूमि तीन पद मोहीं । कियो दान पूरण कर सोहीं ।। १० ।।

दोहा- **दो चरणन में सब महि, नाप लई हम राऊ ।**
चरण तीसरे की जगह, अब हमको बतलाऊ ।। १२४।।

चौ- जहँ लगि सूरज किरण प्रकासी । जहँ लगि उडुगण चन्द्र अकासी ।। १ ।।
जहँ लगि घन बरसत वह सारी । भई भूमि सब नृपति हमारी ।। २ ।।
एक पाद ते हे बलि सारा । नाँपा हम भूलोक तुम्हारा ।। ३ ।।
नाँपी अम्बर दिशा तुम्हारी । निज तनु ते हे नृपवर सारी ।। ४ ।।
अपर चरण स्वर्लोक तुम्हारा । नाँपा हमने सभी प्रकारा ।। ५ ।।
स्वीकृत चरण तृतीय न देऊ । निरय निवास अरे बह सेऊ ।। ६ ।।
याचक प्रति–प्रति श्रुत ना देहीं । तासु स्वर्ग अति दूर रहेही ।। ७ ।।
सो नर करत नरक कर वासा । होवत पतन न बचे जरासा ।। ८ ।।
निज गुरु बात नहीं तुम मानी । भोगउ फल तासू अभिमानी ।। ९ ।।
पूर्ण दान मुझ प्रति नहि दीन्हा । यह अपराध महा तुम कीन्हा ।। १० ।।

दोहा- **यहि कारण कुछ समय तुम, करहू नरक निवास ।**
बोले अब मुनि नन्दन, सुन कौरव गुण रास ।।१२५ ।।

चौ- अपमानित कर इमि प्रभु बोले । जासे कुछ बलि का मन डोले ।। १ ।।
तब बलि निज मुख गिरा उचारी । कीरति नाथ पवित्र तुम्हारी ।। २ ।।
अनृत वच मति समझउ मोरे । करहुँ सत्य सब सन्मुख तोरे ।। ३ ।।
नाथ आप धोका मति खाऊ । पद तीसर मम सीस रखाऊ ।। ४ ।।
मोंहीं दुख नहि नरक निवासा । स्थान भ्रंश बन्धन इस पाशा ।। ५ ।।
डरऊँ नाथ ना दंड तुम्हारे । डरउँ यथा अपकीरति धारे ।। ६ ।।
मिलहिं दंड जो गुरुजन द्वारा । मानूँ श्रेष्ठ सो सभी प्रकारा ।। ७ ।।
मात पिता भ्रातादिक कोई । देत दंड वह दंड न होई ।। ८ ।।

शत्रु रूप प्रभु तुम हम असुरन । देवत शिक्षा बनकर गुरुजन ॥ ९ ॥
धन कुलीनता बल मदमत्ता । होहिं अंध पाकर जब सन्ता ॥ १० ॥

दोहा- **तब उन वस्तुन छीनकर, करते नेत्र प्रदान ।**
तब हम लोगन का प्रभो, होवत अति कल्यान ॥ १२६ ॥

चौ- पात सिद्धि योगी करि योगा । बैर भाव वह दानव लोगा ॥ १ ॥
दीन्ह दंड जिन गुरु के द्वारा । नहीं व्यथा मोहिं किसी प्रकारा ॥ २ ॥
जेते भक्त जगत में तोरे । उनमें श्रेष्ठ पितामह मोरे ॥ ३ ॥
यद्यपि दीन्ह पिता दुखभारी । तदपि न भक्ति तजी तुम्हारी ॥ ४ ॥
अन्त स्वजन सब संपत हारी । दस्युन सम जानहु इन भारी ॥ ५ ॥
आवागमन प्रदा सुनु नारी । नहीं लाभ दे किसी प्रकारी ॥ ६ ॥
दिवस एक जब देह नसाये । मोह करे कुछ हाथ न आये ॥ ७ ॥
उलझहिं जो इन वस्तुन माँही । तो वह निज वय व्यर्थ गँवाही ॥ ८ ॥
इमि हार्दिक देखि असारा । तजे पितामह सब परिवारा ॥ ९ ॥
अविनासी भय रहित तुम्हारे । चरण कमल की शरण सिधारे ॥ १० ॥

दोहा- **जग से परम विरक्त तुम, संतन श्रेष्ठ अपार ।**
अखिल बोध परिपूर्ण हो, निज भक्तन भवहार ॥ १२७॥

चौ- उस दृष्टि से आप हमारे । यद्यपि शत्रु सभी प्रकारे ॥ १ ॥
बलपूर्वक तो भी हे साँई । राजपाट से कर अलगाई ॥ २ ॥
तव समीप मोहिं लाय विधाता । पहुँचायऊँ अब सब विधि ताता ॥ ३ ॥
तो यह काम कियउ बह नीका । धन हेतु सब बिगड़त जीका ॥ ४ ॥
जड़मति द्वारा समझ न आवत । निशि दिन काल सीस पर नाचत ॥ ५ ॥
यों भाषत निज मुख बलि जबहीं । पूर्ण इन्दु सम वहँ पर तबहीं ॥ ६ ॥
भगवत प्रिय प्रहलाद सिधाये । पाशबद्ध बलि सीस झुकाये ॥ ७ ॥
अर्चन किय उन पूर्व समाना । अति लज्जित मन अति दुखमाना ॥ ८ ॥
केवल सीस नवाय प्रणामा । कीन्ह पितामह बलि गुणधामा ॥ ९ ॥
विह्वल अश्रु नयन पुलकाई । सेवित निज पार्षद लखिराई ॥ १० ॥

सोरठा- **सिर से कीन्ह प्रणाम, बोले बच प्रहलाद पुनि ।**
हे प्रभु सोभा धाम, देकर बलि प्रति इन्द्र पद ॥ २ ॥

चौ- पाछे हरण कियो प्रभु येहू । कियो काम यह बलि प्रति स्नेहू ॥ १ ॥
श्रीमद बलि का नाथ नसावा । महा प्रसाद कृपा फल पावा ॥ २ ॥

ऐसो पुरुप जगत ना कोई । श्रीमद ते जो अन्ध न होई ॥ ३ ॥
यही हेतु हे दीनदयालू । तव पदवन्दन करूँ कृपालू ॥ ४ ॥
प्रहल्लाद इमि वचन सुनाये । तव विरंचि प्रभु सन्मुख आये ॥ ५ ॥
वामन प्रति बोले कछु बाता । किन्तु बीच विंध्यावलि ताता ॥ ६ ॥
निज पति बँधा हुआ जब देखा । भय विहल हो वचन विशेपा ॥ ७ ॥
प्रभु प्रति कहन लगी कर जोरी । सुनो विनय मधुसूदन मोरी ॥ ८ ॥
हे स्वामी जो जगत तुम्हारा । निज क्रीड़ा हित तुम निरधारा ॥ ९ ॥
जे कुबुद्धि निज को जग स्वामी । मानत सो खल मूरख नामी ॥ १० ॥

दोहा- **यह बलि नृप भी है प्रभो, भाषत यों मुख बैन ।**
कीन्हों प्रण में विप्रवर, लोक तीन तुहि दैन ॥ १२८ ॥

चौ- किन्तु तृतीय चरण नहि ठौरा । तो यह देह समर्पित मोरा ॥ १ ॥
यह तनु अरपन करूँ तुम्हारे । तब तो प्रतिश्रुत सत्य हमारे ॥ २ ॥
बोलत वचन भरे अभिमाना । सो प्रभु मोहिं उचित नहि माना ॥ ३ ॥
दीन बन्धु हे अन्तरयामी । सब जग के तो तुम्ही स्वामी ॥ ४ ॥
मन्द बुद्धि मम पति पर भारी । राखहु केवल कृपा तुम्हारी ॥ ५ ॥
तेहि काल विधि गिरा उचारी । देव देव भूतेश मुरारी ॥ ६ ॥
बन्धन मुक्त कीजिये येहू । निग्रह योग्य नही बलि देहू ॥ ७ ॥
कीन्हा हरण सभी प्रभु तुमने । तव प्रति भूधन अरपेउ इसने ॥ ८ ॥
अहोनाथ तव पद में कोई । सलिल मात्र अरपेउ नर सोई ॥ ९ ॥
पावत सद्गति पाप नसाई । फिर बलि प्रति इमि क्यों निठुराई ॥ १० ॥

दोहा- **राजपाट धन तन सभी, कीन्हों भेट तुम्हार ।**
फिर बन्धन के योग्य क्यों, ऐसा नृपति उदार ॥ १२९ ॥

चौ- विधि के यों सुनि वचन सुहाये । दीन बन्धु इमि वचन सुनाये ॥ १ ॥
होउँ मुदित जिस पर मैं धाता । हरूँ द्रव्य उसका दुख दाता ॥ २ ॥
होवत धन पा नर मदमत्ता । करत अवेज्ञा वह मम अन्ता ॥ ३ ॥
लख चौरासी भटकत भटकत । जीव पुरुष तनु बीच सिधावत ॥ ४ ॥
जन्म कर्म विद्या धन द्वारा । होवत स्तंभ न किसी प्रकारा ॥ ५ ॥
पावत तदा अनुग्रह मेरा । नासहिं जनम मरण का फेरा ॥ ६ ॥
जन्म कर्म वय धन मद छीना । मोरे भक्त रहे मम लीना ॥ ७ ॥
हे विरंचि दानव सुखदाया । जीती सब विधि बलि मम माया ॥ ८ ॥

पायउ यह नृप कष्ट अपारा । तदपि न मोहित किसी प्रकारा ॥ ९ ॥
भये क्षीण धन स्थान विहीना । राखा नां कुछ निज आधीना ॥ १० ॥

दोहा- **वन्धन अरिजन ते लहा, जातिन वन्धु तजाय ।**
दीन्हा शाप अकाट्य गुरु, तदपि न सत्य अघाय ॥ १३० ॥

चौ- सावर्णी मनु अन्तर आही । मम आश्रय सुरपति पद पाही ॥ १ ॥
तव लगि ये विशुकर्म विनिर्मित । करहिं निवास सुतल विच हर्षित ॥ २ ॥
आधि व्याधि जहँ नही सताहीं । तन्द्रा क्लेश पराभव नाहीं ॥ ३ ॥
जाहू इन्द्रसेन महाराजू । होंहि भद्र सिद्धि तव काजू ॥ ४ ॥
तुम निज जातिन संग लिवाऊ । सुतल लोक विच वास वसाऊ ॥ ५ ॥
स्वयं लोकपति करें चढ़ाही । पावहुँ तदपि पराभव नाँही ॥ ६ ॥
लाँघहि तव शासन जे कोई । हनही चक्र सुदरशन सोई ॥ ७ ॥
सानुग रक्षा करूँ तुम्हारी । करूँ विघ्न सव नृपति निवारी ॥ ८ ॥
जहँ जहँ जावहु तुम वलि राया । रहूँ संग सदा जिमि छाया ॥ ९ ॥
दैत्य संग तव आसुर भावा । मम अनुग्रह ते तुरत नसावा ॥ १० ॥

दोहा- **प्रेमाश्रु दोउ नयन में, गदगद होय अपार ।**
पुरुष पुरातन ते तदा, वोला गिरा उचार ॥१३१॥

चौ- पूर्ण तोर पर है सुखधामा । कर न सका मैं तुम्हें प्रणामा ॥ १ ॥
कीन्ह परिश्रम केवल गाता । तासु दीन्ह दुर्लभ फल ताता ॥ २ ॥
कर्मदान तप कोटि अपारा । सुर मुनि पावहिं नहि इन द्वारा ॥ ३ ॥
सो फल आज लहा मैं भारी । पाकर चरण कमल अघहारी ॥ ४ ॥
दीन वन्धु मोहि अचरज आवा । लखकर आज प्रणाम प्रभावा ॥ ५ ॥
लोकपाल सुरमुनि जन सारे । रटत नाम निशिदिन सव हारे ॥ ६ ॥
तदपि न कृपा मिली प्रभु ऐसी । पायउँ नीच निशाचर जैसी ॥ ७ ॥
यों कहकर राजन वलिराया । हरि विधि शिव पद सीस नवाया ॥ ८ ॥
पाश मुक्त हो राक्षस राई । सव असुरन निज संग लिवाई ॥ ९ ॥
सुतल लोक विच कियो प्रवेशा । निज सिर धरकर प्रभु आदेशा ॥ १० ॥

सोरठा- **दीन्हो सुरपुर राज, इमि भगवान सुरेश को ।**
साध अदिति का काज, पालन कीन्हों जगत का ॥३॥

चौ- लव्ध प्रसाद पौत्र निज देखा । कहे वचन प्रहलाद विशेषा ॥ १ ॥
जो प्रसाद शिव विधि नहीं पावा । सो प्रसाद प्रभु इसे दिलावा ॥ २ ॥

दुर्गपाल होकर तुम असुरन । रहउ जो विस्व वंध हे भगवन ॥ ३ ॥
जिन पद पंकज शिव सुरधाता । कर सेवा ये अभय प्रदाता ॥ ४ ॥
पाय विभूति अनेक प्रकारा । करते इस जग का विस्तारा ॥ ५ ॥
हम तो दुष्ट कुमारग गामी । कवन हेतु की अनुग्रह स्वामी ॥ ६ ॥
द्वारपाल बनकर सुरत्राता । कीन्ही कृपा अहेतु कि ताता ॥ ७ ॥
भुवन तीन विन कष्ट रचाया । पाकर वल प्रभु तुम निज माया ॥ ८ ॥
समदर्शी सव चरित तुम्हारे । देख विलक्षण विस्मित सारे ॥ ९ ॥
कवहुँ विपमता पूर्ण सुभाऊ । कवहुँ कल्पतरु समाँ प्रभाऊ ॥ १० ॥

दोहा- **तुम भक्तन के अतिप्रिय, अतिप्रिय भक्त तुम्हार ।**
करत कामना पूर्ण सव, सुर तरु समाँ अपार ॥ १३२ ॥

चौ- जव प्रहलाद यो वचन सुनाये । वोले प्रभू वचन मुस्काये ॥ १ ॥
जाहु पुत्र प्रहलाद रसातल । करहु निवास पौत्र संग अविरल ॥ २ ॥
गदापाणि स्थित मुझे निरन्तर । देखहु वहाँ सुतल के भीतर ॥ ३ ॥
अव प्रहलाद वलि के संगा । आदि पुरुप वामन के अंगा ॥ ४ ॥
कीन्ह परिक्रमा अउर प्रणामा ॥ जयति-जयति कहि हे सुखधामा ॥ ५ ॥
प्रभु आज्ञा निज सीस चढ़ाई । कियो प्रवेश रसातल राई ॥ ६ ॥
इत श्री वामन शुक्र बुलाये । ब्रह्म सभा विच वचन सुनाये ॥ ७ ॥
वलि के यज्ञ वीच यदि कोई । जो त्रूटि पुरहु तुम सोई ॥ ८ ॥
यह यजमान व शिष्य तुम्हारा । विप्रवृन्द को सव अधिकारा ॥ ९ ॥
वोले भार्गव सुन प्रभुवानी । यज्ञनाथ की जहँ अगवानी ॥ १० ॥

दोहा- **सव करमन के ईश्वर, जहाँ विराजे आन ।**
उन करमन में विषमता, कैसे हो भगवान ॥ १३३ ॥

चौ- सुमिरन मंत्र नाम तव स्वामी । करत पूर्ण सब हो जहँ खामी ॥ १ ॥
तो भी आज्ञा नाथ तुम्हारी । करूँ न्यूनता पूरण सारी ॥ २ ॥
करहीं जो तव आज्ञा पालन । पावहिं श्रेय सदा वह सज्जन ॥ ३ ॥
वोले शुक नृप कलिमद भंजन । प्रभु आज्ञा स्वीकृत भृगु नन्दन ॥ ४ ॥
ऋत्विज सव निज पास वुलाये । यज्ञ छिद्र पूरण करवाये ॥ ५ ॥
यों वलि से महि भिक्षा लेकर । दियो इन्द्र हेतु हरि सुरपुर ॥ ६ ॥
देवर्षि मनु पितृ कुमारा । शिव विधि दक्ष प्रजापति सारा ॥ ७ ॥
कश्यप अदिति हेतु मुदिताई । लोकपाल लोकन के साँई ॥ ८ ॥

कीन्हें वामन सुनौ नरेशा । यद्यपि सब के ईश सुरेशा ॥ ६ ॥
तदपि धर्म यश सुर श्रुति पालन । पद उपेन्द्र दीन्हों प्रति वामन ॥ १० ॥

दोहा- जब उपेन्द्र पद पायऊ, वे वामन भगवान ।
तब सब प्राणिन के मन, व्यापी खुशी महान ॥ १३४ ॥

चौ- लोकपाल संग बाद सुरेशा । गौ वामन संग स्वर्ग प्रदेशा ॥ १ ॥
वामन भुज रक्षित शचि ईशा । पाय त्रिलोकी मुदित महीशा ॥ २ ॥
ब्रह्मा शिव भृगु मुनी कुमारा । पितर सिद्ध वैमानिक सारा ॥ ३ ॥
सिद्धन संग हरिकर्म उचारत । गवने निज गृह अदिति प्रशंसित ॥ ४ ॥
उस क्रम चरित कहा हम राजन । जो श्रोताजन का अघ मोचन ॥ ५ ॥
हरि की लीला नृपति अनन्ता । पावत पार नही मुनि संता ॥ ६ ॥
भू रज कण चाहे गिन जावे । हरि महिमा का पार न पावे ॥ ७ ॥
सुनत उरू क्रम कथा सुपावन । करत प्रदान परम गति वामन ॥ ८ ॥
देव पितर मानव मख करमन । उरू क्रम चरित करत यदि गायन ॥ ६ ॥

दोहा- सफल होत सब कर्म वे, व्यापहिं विघन न जासु ।
संत महामुनि जन इमि, अनुभव कियो प्रकासु ॥ १३५ ॥ क
आद्य मीन अवतार की, गाथा हे मुनि राउ ।
हरि के अद्भुत कर्म सब, मुझको आप सुनाऊ ॥ १३५ ॥ ख

चौ- निन्दित लोक बीच झप रूपा । धारेउ जिस हित ज्योति स्वरूपा ॥ १ ॥
उत्तम श्लोक चरित सुख दाता । कहो यथावत मो प्रति ताता ॥ २ ॥
बोले सूत सुनौ हे शौनक । पूछत नृप तब बोले यों शुक ॥ ३ ॥
किये चरित जे झप भगवाना । वह सब वरणन करूँ बखाना ॥ ४ ॥
जब सुर विप्र धेनु दुख पाही । श्रुति मरियादा दुष्ट नसाही ॥ ५ ॥
धर्म अर्थ रक्षा हित राई । आवत हरि अवतार गहाई ॥ ६ ॥
विचरत वे हरि वायु समाना । उच्च नीच प्राणिन उर नाना ॥ ७ ॥
किन्तु होय नहिं उन गुण लीना । उच्च नीचता के आधीना ॥ ८ ॥
वे हरि तो निरगुण कहलावे । उन बिच नहीं विपमता आवे ॥ ६ ॥
कल्प अतीत अन्त जब आवा । नैमित्तिक लय जो विधी गावा ॥ १० ॥

सोरठा - भू आदिक सब लोक, बूडि गये तब सिन्धु में ।
शयन किये तजि शोक, विधि जब आवा प्रलय वह ॥ ४ ॥

चौ- हयग्रीव दानव इक आवा । विधि मुख निरगत वेद चुरावा ॥ १ ॥
देख दनुज की यह करतूता । शफरी रूप धरे प्रभु पूता ॥ २ ॥
नृप ऋषि महा सत्य व्रत जामी । सिलिलाशन प्रभु पर तव कामी ॥ ३ ॥
सप्तम कल्प जो श्वेत वराहू । विवस्वान सुत जानहु ताहू ॥ ४ ॥
श्राद्ध देव जिन नाम वखाना । हरि मनुपद जिन प्रति किय दाना ॥ ५ ॥
एक समय कृतमाला सरिता । जल तरपन कृत कुछ क्षण वीता ॥ ६ ॥
नृप अंजिल शफरी इक आई । सो नृप जल विच तुरत तजाई ॥ ७ ॥
तव वह शफरी गिरा उचारी । तुम कृपालु दीनन हितकारी ॥ ८ ॥
जाती घातिन ते मैं भीता । तजी नीर क्यों नृपति पुनीता ॥ ९ ॥
क्षीन वचन उसके सुनराई । झप वपु धरि हरि जान न पाई ॥ १० ॥

दोहा- **रखकर शफरि हिं कलश जल, आयउ नृप निज स्थान।**
किन्तु एकहीं रात में, वढ़ गइ कलस प्रमान ॥ १३६ ॥

चौ- बोली नृप से पुनि वह वानी । नहीं कलश यह मोर समानी ॥ १ ॥
हेरउ विपुल स्थान तुम कोउ । सुख युत वास जहाँ मम होउ ॥ २ ॥
डारा माणिक नीर पुनि मीना । तदपि वढ़ी कुछ क्षण कर लीना ॥ ३ ॥
यह जलपात्र नहीं सुखदाई । विपुल स्थान देवहु मोहि राई ॥ ४ ॥
मैं हूँ शरण तुम्हारी राजन । कहे मीत यो वचन लुभावन ॥ ५ ॥
नृप उठाय पुनि तजे तलावा । किन्तु न वह झप के मन भावा ॥ ६ ॥
ज्यों ज्यों उच्च सरोवर माँही । डारेउ नृपति जँचा झष नाँही ॥ ७ ॥
वर्धमान लखि मीन अपारा । नृप उठाय सागर महँ डारा ॥ ८ ॥
क्षिप्यमाण झप नृप प्रतिवानी । बोला मीन सुनो नृप ज्ञानी ॥ ९ ॥
सागर बीच महावलि जीवा । खावहिं यह मोंही नरसींवा ॥ १० ॥

दोहा- **इस कारण इस ठौर पर, उचित न त्याग हमार ।**
यों सुनकर मोहित नृप, बोले गिरा उचार ॥ १३७ ॥

चौ- तुम हो कवन मीन वपुधारी । लख तव चरित विमोहित भारी ॥ १ ॥
देखा जलचर कवहुँ न ऐसा । सुना नही पूरव तुम जैसा ॥ २ ॥
एक दिवस योजन शत बाढ़ा । कियो व्याप्त सर निज तनु गाढ़ा ॥ ३ ॥
तुम प्राणिन के अनुग्रह कारन । जलचर रूप धरेउ किमि भगवन ॥ ४ ॥
पुरुष श्रेष्ठ स्थिति उत्पत्ति ईश्वर । करूँ प्रणाम तुम्हें जगदीश्वर ॥ ५ ॥

चरित तोर प्राणिन हितकारी। जिस हित रूप धरेऊ जलचारी ॥ ६ ॥
सो कारण प्रभु जानन चाहूँ। कमल नयन मोंहि करत बताहू ॥ ७ ॥
संत भिन्न जे तनु अभिमानी। उन पद गमन मृषा हम जानी ॥ ८ ॥
किन्तु नाथ तव पद अनुगामी। मृषा होत नहिं अन्तरयामी ॥ ९ ॥
नव वच सुन यों झष वपुधारी। बोले वचन संतभय हारी ॥ १० ॥

दोहा- **सप्तम दिन सुन आज से, हे नृप तीनो लोक।**
डूबहिं सागर में यह, तव मन करहु न शोक ॥ १३८ ॥

चो- होवहिं तीन त्रिलोकी जवहीं। प्रलयोदक मम प्रेरित तवहीं ॥ १ ॥
आवहिं नौका पास तुम्हारे। औषधि बीज तदा ले सारे ॥ २ ॥
सप्त रिषिन सह चढ़ कर नौका। विचरो प्रलय सिन्धु तजि शोका ॥ ३ ॥
वायु वेग ते चंचल जवहूँ। हो वहि नौका हे नृप तवहूँ ॥ ४ ॥
आवहिं वासुकि पास तुम्हारे। बाँधहु उससे सींग हमारे ॥ ५ ॥
जव लगि रहहीं निशा विधाता। विचरूँ प्रलय सिंधु इश गाता ॥ ६ ॥
जव तुम प्रश्न करउ नृप मोसे। तव उपदेश करूँगा तोसे ॥ ७ ॥
मम अनुग्रह ते तव मम महिमा। जानहु परम ब्रह्म कीं सीमा ॥ ८ ॥
दे यों सत्यव्रतहिं आदेशा। अन्तरध्यान भये विश्वेसा ॥ ९ ॥
अव नृप करत प्रतिक्षा तासू। जो आदेश दियो प्रभुजासू ॥ १० ॥

दोहा- **अग्र भाग कर कुशन का, प्राची दिशा नृपाल।**
पूर्वोत्तर निज वदन करि, वैठि गये उस काल ॥ १३९ ॥

चो- झष वपुधारी हरि पद चिन्तन। करने लगा सत्यव्रत राजन ॥ १ ॥
आवा अव जो समय वतावा। घुमड़ घुमड़ घन जल वरसावा ॥ २ ॥
तजि मरिजादा सागर सारी। उमड़ चला गरजन कर भारी ॥ ३ ॥
देखत नृप महि डूवत सारी। कियो ध्यान तव झष वपुधारी ॥ ४ ॥
आवत नाव तदा लखिराई। वीज व औषधि संग लिवाई ॥ ५ ॥
रिषिन संग वैठे तव नौका। कहे मुदित मुनि तनु नृप शोका ॥ ६ ॥
राजन ध्यान करो भगवाना। टारहिं सव दुख कृपा निधाना ॥ ७ ॥
जव राजा प्रभु ध्यान लगावा। तव सन्मुख यक झष प्रकटावा ॥ ८ ॥
एक श्रृंग धर कंचन काया। योजन नियुत तासु तनु गाया ॥ ९ ॥
तव नृप संग वीच वह नौका। बाँधी वासुकि से तजि शोका ॥ १० ॥

दोहा- होकर मुदित अपार मन, वह नृप वर गुणवान ।
झष वपुधर भगवान का, कीन्हो स्तोत्र बखान ॥ १४०॥

चौ- पीड़ित जन संसार परिश्रम । वेष्टित सदा अविद्या ना शम ॥ १ ॥
करहिं अनुग्रह जिन पर स्वामी । वही आप अब अन्तरयामी ॥ २ ॥
मुक्ति प्रदाता गुरु हमारे । हृदय ग्रंथि को तुरत निवारे ॥ ३ ॥
निज करमन विच बँधे अनारी । करते सुख हित कर्म अपारी ॥ ४ ॥
पावत सदा असुख वे ताता । सच्चा सुख तव चरण प्रदाता ॥ ५ ॥
सेवा करके नाथ तुम्हारी । पावहिं सुख अज्ञान निवारी ॥ ६ ॥
परम गुरु तुम नाथ हमारी । हिय ग्रंथी यह खोलहू सारी ॥ ७ ॥
मानव जिन पद सेवा करिके । निज स्वरूप पावत मल हरि के ॥ ८ ॥
उनको ही हम गुरु बनावे । अन्य शरण केहि काज सिधावे ॥ ९ ॥

दोहा- कृपा तुम्हारी के विना, सुर गुरु मानव जीव ।
कर सकते कुछ कर्म ना, दीखत सदा अजीव ॥ १४१ ॥

चौ- नयन हीन के संग अनारी । चालहि नयन हीन यदि लारी ॥ १ ॥
वह नहि पंथ प्रदर्शक ताता । अबुध गुरु भी अभय न दाता ॥ २ ॥
अबुध गुरु की शरण सिधावे । सो नर व्यर्थ परीश्रम पावे ॥ ३ ॥
सच्चे गुरु तो तुम ही ताता । ज्ञान अखंड व अभय प्रदाता ॥ ४ ॥
संसारी गुरू आखिर ताता । असत मति उपदेश प्रदाता ॥ ५ ॥
वदत मानवी मति अनुसारी । छूटहिं जासु नहीं संसारी ॥ ६ ॥
तुमही ज्ञान अमोघ प्रदाता । देवहुँ निजपद जासु विधाता ॥ ७ ॥
तुम सब लोकन के प्रिय ईश्वर । तुमहीं आत्मा सकल चराचर ॥ ८ ॥
ज्ञान अभिष्ट सिद्धि के दाता । सब लोकन के गुरू विधाता ॥ ९ ॥
सब प्राणिन के हिय विच विचरत । तदपि अंधधी कबहुँ न हेरत ॥ १० ॥

दोहा- हे प्रति बोधन देववर, ईश्वर शरण तुम्हार ।
अर्थ प्रकाशक वचन ते, अब हिय ग्रन्थि निवार ॥ १४२॥

चौ- निज स्वरूप अब करो प्रकासा । जब यों वचन सत्य व्रत भासा ॥ १ ॥
प्रलय नीर विच झष वपुधारी । साँख्ययोग सब क्रिया उचारी ॥ २ ॥
सुनै वचन वे नीर तरंगा । नौका स्थित नृप मुनि जन संगा ॥ ३ ॥
प्रलय अन्त जब उठे विधाता । हयग्रीव दानव कर धाता ॥ ४ ॥

लाकर वेद विधाता हेतू । दीन्हें उन हरि ने नृप केतू ॥ ५ ॥
सप्तम कल्प यदा यह आवा वैवस्वत मनुपद नृप पावा ॥ ६ ॥
मीन सत्यव्रत कथा सुहावन । सुनत पाप सब करत पलायन ॥ ७ ॥
प्रतिदिन गाथा झष अवतारी । करहीं कीरतन जे नर नारी ॥ ८ ॥
होवहि तासू कामना पूरी । मिलहिं परम गति उन्हें जरूरी ॥ ९ ॥
राजन प्रलय नीर में जाकर । हयग्रीव दानव यों वधकर ॥ १० ॥

दोहा- ब्रह्मा मुख निर्गत श्रुति, हरण कीन्ह दनुराज ।
लाकर वापिस मीन प्रभू ,दीन्ही विधि के काज ॥१४३॥क
नृपति सत्यव्रत मुनिन संग, जिनकिय तत्व बखान ।
नत मस्तक उन वन्दऊँ,मीन रूप भगवान ॥ १४३ ॥ ख

छन्द- मीन वपु भगवान मोरे, काज सब पूरण करो ।
तत्व ज्ञान प्रदान कर, प्रभु पाप सारे मम हरो ॥
नाथ इस संसार सागर, बीच गोता खा रहा ।
काल मोरे सीस पर प्रति, दिवस यह मँडरा रहा ॥ १ ॥
पुत्र अरु परिवार नार, अपार जल चर जीव सम ।
डसत इस भव सिन्धु में, चहुँ ओर से सारे अधम ॥
त्याग इन सबको प्रभो, तव चरण में आना चहूँ ।
विनय यह बजरंग की, निशदिन तुम्हारे संग रहूँ ॥ २॥
स्कंध अष्टम गाथ ये, जो दास बजरंग गायउ ।
सुनहि गुनहीं औ सुनावहि, परम पद वे पायउ ॥
गाथ करि मोचन व कच्छप, वामना अवतार की ।
तारिणी अघ हारिणी यह, मीन वपु भगवान की ॥३॥

दोहा- गाथा अष्टम स्कंधकी, निज मति के अनुसार ।
वरणी बजरंग लाल ने ,बुध जन लेऊ सुधार ॥ १४४ ॥

इति श्री कृष्ण चरितामृते कलिमल विध्वंसने बजरंग कृत
श्री मद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
समाप्तोऽयं अष्टम स्कंधः
हरिः ॐ तत्सत्

॥ श्री गणेशाय नमः ॥

॥ श्री राधावल्लभो विजयते ॥

श्री मद्भागवत प्रारम्भः

नवम स्कंधः

श्लोक

मदीय रामं भव ताप हारीं, रघूत्तमं भक्त हिये चरन्तम् ।
नतोऽस्मि लंकेश विनाशकारीं, सियावरं सुन्दर श्याम रूपम् ॥ १॥

दोहा- **जपकर जिनके नाम को, नर होवत भवपार ।**
वे सबकी रक्षा करें, भक्तन के आधार ॥ १ ॥क
इत उत जाकर किस लिये, हेरउ जिन हित ठाँम ।
क्यों नहि मोरे मन वसो, आकर के श्री राम ॥ १ ॥ख
नवम स्कंध गाथा यह, वरणूँ मति अनुसार ।
भूलचूक कहिं होय तो, बुधजन लेऊ सुधार ॥ १ ॥ग

चौ- बोले शुक से अब नर नाथा । सुनी सभी मनवन्तर गाथा ॥ १ ॥
जिसमें हरि के चरित अपारा । सो हम सुने तुम्हारे द्वारा ॥ २ ॥
कल्प अतीत अंत जब आवा । नृपति सत्यव्रत जो तुम गावा ॥ ३ ॥
कल्प अतीत अन्त प्रभु द्वारा । पायो ज्ञान सो विविध प्रकारा ॥ ४ ॥
विवश्वानसुत अब बहिराया । वैवस्वतमनु का पद पाया ॥ ५ ॥
सुने सुवन इक्ष्वादिक जासू । वंश अनुक्रम कहु तुम तासू ॥ ६ ॥
वर्तमान अरु भूत महीशा । कहू पराक्रम तासु मुनीशा ॥ ७ ॥
पूछेउ सभा बीच यों राई । बोले मुनि नृप से मुसुकाई ॥ ८ ॥
राजन मानव वंश अपारा । अति विस्तार सहित ये सारा ॥ ९ ॥
गावहिं जे नर वंश प्रमाना । वर्ष अनेक न जाय बखाना ॥ १० ॥

दोहा- **तदपि कहूँ संक्षेप से, यह मानव का वंश ।**
नारायण कल्पान्त में, रहहिं अन्य निवंश ॥ २ ॥ क
नारायण की नाभि ते, प्रकटत पंकज फूल ।
प्रकटे कंचन कुसुम से, चतुरानन जग मूल ॥ २ ॥ ख

चौ- विधि मन भये मरीची राया । जासु सुवन कश्यप सुख दाया ॥ १ ॥
विवस्वान कश्यप सुत गाये । उन सुत श्राद्धदेव मनुभाये ॥ २ ॥

श्राद्धदेव की श्रृद्धा नारी । जाए दस सुत मनु सुख कारी ॥ ३ ॥
वे इक्ष्वाकु व नृग शर्याती । दिष्ट व धृष्ट करुष नृपन्ती ॥ ४ ॥
नभग प्रषध्र सुकवि सह तीना । यो दश सुत मनु गेह कुलीना ॥ ५ ॥
प्रजाहीन मनु प्रथम वशिष्ठा । प्रजा हेतु मख एक वरिष्ठा ॥ ६ ॥
मित्रावरुण जो प्रजा प्रदाता । करवायो उनको सुनु ताता ॥ ७ ॥
यज्ञ बीच होता प्रतिवानी । बोली पयोव्रता महारानी ॥ ८ ॥
कन्या मिलहिं मुझे इक सुन्दर । मम इच्छा ये ही हे द्विजवर ॥ ९ ॥
श्रृद्धा वचन सुने यों काना । कीन्हीं आहुति कुंड प्रदाना ॥ १० ॥

दोहा- **जब होता ने कर्म सब, कीन्हों यो विपरीत ।**
प्रकटी सुत के स्थान पर, कन्या इला पवीत ॥ ३ ॥

चौ- देख सुता को मनु नृपालू । बोले गुरु से सुनो कृपालू ॥ १ ॥
यह विपरीत कर्म किमि जाता । हे गुरु ब्रह्मवादि विख्याता ॥ २ ॥
वैदिक करमन फल विपरीता । देखा कबहुँ सुना नहीं चींता ॥ ३ ॥
अहो मंत्र विद तुम यहँसारे । तप द्वारा सब पाप निवारे ॥ ४ ॥
अहो विषमता मुनि क्यों आई । देव कार्य बिच रहि न सचाई ॥ ५ ॥
प्रपितामह अब वचन सुनाया । होता व्यतिक्रम तुरत लखाया ॥ ६ ॥
होता कर्म कियो विपरीता । व्यर्थ भयो संकल्प पुनीता ॥ ७ ॥
अब तुम सत्य वचन सुन मोरा । करूँ पूर्ण सब कारज तोरा ॥ ८ ॥
पुत्री को सुत करूँ प्रकाशा । तब हो जावे पूरण आशा ॥ ९ ॥
यों कहकर मनु से गुरु राया । आदि पुरुष पद ध्यान लगाया ॥ १० ॥

दोहा- **वरदायक भगवान तब, होकर मुदित अपार ।**
इला रूप को ही कियो, सुद्युमन सुकुमार ॥ ४ ॥

चौ- एक समय सुद्युमन राई । चढ़ि सैंधव निज सेन सजाई ॥ १ ॥
मृगया काज मन्त्रियन संगा । गवने उत्तर करत प्रसंगा ॥ २ ॥
मेरू अध यक विपिन मनोहर । करते रमण उमा संग शंकर ॥ ३ ॥
उस वन बीच गये जब राया । सबके तनु विपरीत लखाया ॥ ४ ॥
जेते पुरुष भये सब नारी । जेते तुरग तुरंगी सारी ॥ ५ ॥
निज तनु लखि विपरीत नृपाला । भये मंत्रिगण सभी बिहाला ॥ ६ ॥
यह गुण विपिन बीच क्यों आवा । बोले मुनि से यों नर रावा ॥ ७ ॥
यह कौतुक सम्वाद सुनाऊ । बोले तब नृप से मुनिराऊ ॥ ८ ॥

एक समय शिव दरसन काजू । गये वहाँ मिल मुनी समाजू ॥ ९ ॥
देख मुनिन वहँ उमा भवानी । वस्त्र हीन लज्जित मन ग्लानी ॥ १० ॥

दोहा- **उठ निजपति उत्संग ते, धरे वसन निज अंग ।**
ऋषि गण भी वापिस गये, लखि शिव सती प्रसंग ॥ ५ ॥

चौ- नर नारायण आश्रम ऊपर । वह वन त्याग गये जब मुनिवर ॥ १ ॥
तब निज प्रिया प्रियन के काजू । बोले वचन शंभु महाराजू ॥ २ ॥
इस वन बीच पुरुष जो आवे । सो नर तुरत तिया वपु पावे ॥ ३ ॥
तब ते वह वन पुरुषन त्यागा । इला रूप अब नृपति अभागा ॥ ४ ॥
संग सहेली तासु अनेकी । आवृत उन सुन्दरि वह ऐकी ॥ ५ ॥
विचरत विचरत इत उत बाला । निकट बुधाश्रम गई जिस काला ॥ ६ ॥
स्वाश्रम पास देख वर नारी । बुध के मन अति काम प्रचारी ॥ ७ ॥
कर दोउ गंधर्व विवाहू । रहे परस्पर प्रेम अथाहू ॥ ८ ॥
बुध से इला एक सुत जाया । जासु नाम पुरूरवा कहाया ॥ ९ ॥
स्त्री रूपी नृप ने इक बारा । ऋषि वसिठ कुल गुरुहिं पुकारा ॥ १० ॥

दोहा- **उस नृप के पुंसत्व हित, तब मुनि परम उदार ।**
शिव शंकर की प्रार्थना, कीन्ही बारम्बार ॥ ६ ॥

चौ- सुन मुनि की विनती तब शंकर । करत सत्य निज वचन महेश्वर ॥ १ ॥
मुनि सन बोले अमृतवानी । मैं अति मुदित कहूँ मुनि ज्ञानी ॥ २ ॥
करहिं देह विनिमय नृप जैसे । अन्य उपाय न दीखत वैसे ॥ ३ ॥
तदपि उपाय एक मोहि भाया । करूँ व्यवस्था यों मुनिराया ॥ ४ ॥
मास एक यह नृप नर रहहीं । अपर मास विच तिय वपु धरहीं ॥ ५ ॥
यों कहि चले गये शिव शंकर । तब ते मास मास वह नृपवर ॥ ६ ॥
एक मास तिय रूप गहावा । अपर मास विच नर तनु पावा ॥ ७ ॥
यों गुरु अनुग्रह पाकर राजा । वापिस निज पद आन विराजा ॥ ८ ॥
किन्तु न पुरजन को वह भाया । उत्कल गय व विमल सुत जाया ॥ ९ ॥
ये सब दक्षिण पथ नरपाला । धर्म धुरंधर पुरजन पाला ॥ १० ॥

दोहा- **प्रतिष्ठान पुर पति पुनि, पुत्र पुरूरव काज ।**
गये विपिन तप करन को, देकर अपना राज ॥ ७ ॥

चौ- गय यों विपिन सुद्युम्न नृपाला । तब मनु श्राद्ध देव उस काला ॥ १ ॥
सुत कामी यमुना तट ऊपर । कीन्हो तप शत बरिस निरन्तर ॥ २ ॥

हरि अनुग्रह ते मनुभाये । निज सदृश दश वे सुत पाये ॥ ३ ॥
जासु नाम इक्ष्वाकि गाया । हे कुरु प्रथम तुम्हें बतलाया ॥ ४ ॥
पुत्र प्रषध्र जो पूरब गाया । गुरु ने निज गौ पाल बनाया ॥ ५ ॥
खड्गपाणि वीरासन धारी । निशा बीच कृत गौ रखवारी ॥ ६ ॥
एक समै निशि मेघ अपारा । वरसत नभ ते मूसलधारा ॥ ७ ॥
तेहिकाल यक व्याघ्र भदेशा । गौशाला विच कियो प्रवेशा ॥ ८ ॥
तब निज मन हो भीत अपारी । भागन लगि सब गाय विचारी ॥ ९ ॥
तब वह व्याघ्र अतिव बलवन्ता । पकरी गैया एक तुरन्ता ॥ १० ॥

दोहा- **भय आतुर व्याकुल वह, करने लगी चिकार ।**
भय रोदित गैया सुनी, मनु सुत गहि तलवार ॥ ८ ॥

चौ- मारी खींच व्याघ्र के ऊपर । लगी किन्तु वह कपिला सिर पर ॥ १ ॥
कटकर सीस परा इत गौ का । भाजेऊ व्याघ्र देख उत मौका ॥ २ ॥
छिन्न कर्ण पथ रक्त बहावा । भीत होय वह विपिन सिधावा ॥ ३ ॥
हन्यमान निशि व्याघ्र लखाई । प्रातःकाल देखी हतगाई ॥ ४ ॥
भयो दुखित तब मनू कुमारा । पायो शाप तदा गुरु द्वारा ॥ ५ ॥
मारी गौ तुम मनू कुमारा । होऊ शूद्र इस कर्मन द्वारा ॥ ६ ॥
गुरु शाप कर सिर स्वीकारा । मुनि प्रिय ब्रह्मचर्य व्रत धारा ॥ ७ ॥
वासुदेव पद निज चितलाई । निज सदृश सब जीव लखाई ॥ ८ ॥
शान्तात्मा सब संग विहाई । मिलहिं अपाचित अन्न सो खाई ॥ ९ ॥
वधिर अन्ध जड़ आकृति धारी । ज्ञान तप्त सब विधि महि चारी ॥ १० ॥

दोहा- **एवं वन विचरत वह, दावानल तनुजारि ।**
भयो ब्रह्म पद लीन वो, सारे पाप निवारि ॥ ९ ॥

चौ- कवि कनिष्ट सुत विषयन सारे । राज्य बन्धु तजि विपिन सिधारे ॥ १ ॥
करके भजन विपिन भगवाना । पायो उन शुभ पद निरवाना ॥ २ ॥
करुप पुत्र षष्टम जो गावा । कारूपक क्षत्रिय प्रकटावा ॥ ३ ॥
वे सब कारूपक नरपाला । उत्तर देश करे प्रतिपाला ॥ ४ ॥
पंचम पुत्र धृष्ट जो गावा । धार्ष्ट्य नाम क्षत्रिन प्रकटावा ॥ ५ ॥
वे सब पुनि विप्रन पद धारा । दूसर सुत नृग प्रथम पुकारा ॥ ६ ॥
तासू सुत सुमति सब गावा । सुमति से भूत ज्योति प्रकटावा ॥ ७ ॥
भूत ज्योति सुत वसुमति भयऊ । पुत्र प्रतीक जानु नृत कहऊ ॥ ८ ॥

इन सुत ओघवान वलवन्ता । कन्या ओघवती गुणवन्ता ॥ ९ ॥
संग सुदरशन जासु विवाहू । कीन्हो नृप अति प्रेम उछाहू ॥ १० ॥

दोहा- **सप्तम सुत नरिष्यन्त से, चित्रसेन गुणवान ।**
चित्रसेन सुत दक्ष से, मीढ़वान वलवान ॥१० ॥

चौ- मीढ़वान सुत कुर्च कहावा । उन सुत इन्द्रसेन सव गावा ॥ १ ॥
इन्द्रसेन सुत रहे विति होता । जिन सुत सत्यश्रवा गुण गोता ॥ २ ॥
तासु सुवन उरूश्रवा सुहाये । उन सुत देवदत्त कहलाये ॥ ३ ॥
उन सुत अग्निवेश्य जिन नामा । जातुकर्ण्य मुनि वहि गुणधामा ॥ ४ ॥
ये मुनि स्वयं अनिल अवतारी । ये द्विज गोत्र प्रवर्तककारी ॥ ५ ॥
अव मैं दिष्टवंश नृप गाऊँ । दिष्ट पुत्र नाभाग कहाऊ ॥ ६ ॥
वह निज कर्म वैश्यता पावा । उनके पुत्र भलन्दन गावा ॥ ७ ॥
उन सुत वत्सप्रीति उन प्रांशू । तासु प्रमृति जिन खनित्र प्रकासू ॥ ८ ॥
हे नृप उन सुत चाक्षुप गावा । चाक्षुप पुत्र विविंशति भावा ॥ ९ ॥
पुत्र विविंशति रम्भ कहाया । रंभपुत्र खनिनेत्र वताया

दोहा- **चाक्षुप सुत खनिनेत्र का, पुत्र करिन्धम तासु ।**
भयो अविक्षित जासु सुत, जिनते मरुत प्रकासु ॥ ११॥

चौ- सौर्वभौम पद यह नृप पावा । एक दिवस नृप यज्ञ रचावा ॥ १ ॥
अंगिर सुत संवर्त मुनीशा । सव मख काज कियो यहि ईशा ॥ २ ॥
करहिं न यज्ञ जगत में ऐसो । कीन्हों मरुत नृपति मख जैसो ॥ ३ ॥
कंचन के सव पात्र वनावा । सोमपान करि इन्द्र थकावा ॥ ४ ॥
प्राप्त दक्षिणा विप्र अपारी । भये मुदित ये अति मन भारी ॥ ५ ॥
मारुत जहाँ परोसन हारे । विश्वेदेव सभासद सारे ॥ ६ ॥
मरुत सुवन जिनकर दय नामा । तासु राज्यवर्धन गुणधामा ॥ ७ ॥
उन सुत सुधृति जासु नर तासू । सुत केवल जिन नाम प्रकासू ॥ ८ ॥
उन सुत वन्धुमान वलधारी । इनते वेगवान सुखकारी ॥ ९ ॥
वेगवान सुत वन्धु कहाया । उनते तृणविन्दुसुत जाया ॥ १० ॥

दोहा- **अलम्वुषा इक अप्सरा, कीन्हों वरण नृपाला ।**
जासु गर्भ से तीन सुत, जिनमें प्रथम विशाल ॥ १२ ॥

चौ- शुन्यवन्धु दूसर सुत गाया । धूम्रकेतु उनते लघु भाया ॥ १ ॥
कन्या एक इडविडा ताहू । कियो विश्रवा संग विवाहू ॥ २ ॥

मुनी विश्रवा संग निषेकी । जाये पुत्र कुबेर विवेकी ॥ ३ ॥
प्रथम पुत्र जो रहा विशाला । सौ वैशाली रची खुशाला ॥ ४ ॥
हेमचन्द्र सुत रहे विशाला । उनके सुत धूम्राक्ष नृपाला ॥ ५ ॥
उनके सुत संयम इति गाया । संयम ने सुत दो प्रकटाया ॥ ६ ॥
प्रथम सुपुत्र कृशाश्व, कहावा । देवन दूसर नाम बतावा ॥ ७ ॥
पुत्र कृशष्व सोमदत्त जाये । सोमदत्त सुत सुमति कहाये ॥ ८ ॥
ये तृण बिन्दु विशाल यशोधर । गाये हम तोरे प्रति नृप वर ॥ ९ ॥
ये सब नृप अति धर्म धुरीणा । ईश्वर भक्त व न्याय प्रवीणा ॥ १० ॥

दोहा- **मनु के सुत शर्याति नृप, ब्रह्मनिष्ठ विद्वान ।**
हे नृप अब उनकी कथा, सुनो लगाकर कान ॥ १३॥क
जिन आङ्गिरस यज्ञ में,, दूसर दिन क्रियमान ।
सब यज्ञन के कर्म का, कीन्हा सकल बखान ॥ १३॥ख

चौ- कमल लोचनी नृप की बाला । नाम सुकन्या जो गुणमाला ॥ १ ॥
सेन सजाकर नृप इक बारा । निज कन्या संग विपिन सिधारा ॥ २ ॥
फिरत विपिन च्यवनाश्रम वन पर । पहुँचे ब्रह्मनिष्ठ वे नृपवर ॥ ३ ॥
नृपबाला भी सखियन संगा । इत उत फिरती करत प्रसंगा ॥ ४ ॥
लखि वल्मीक बीच दो ज्योति । मानो चमकत दो खद्योती ॥ ५ ॥
कीकर कंटक निजकर लेकर । वेधत निकसेउ रुधिर निरन्तर ॥ ६ ॥
तत्क्षण सैनिक सहित महीशा । भयो बन्द सब मूत्र पुरीशा ॥ ७ ॥
तब विस्मित भूपति घबराया । सब सैनिक सन शब्द सुनाया ॥ ८ ॥
कीन्हों तुम कहि मुनि अपराधा । भई जासु सबको यह व्याधा ॥ ९ ॥
तब अति भीत पिता नियराई । नृप बाला यों वचन सुनाई ॥ १० ॥

दोहा- **अनजाने मुझसे हुआ, एक काम नहिं नीक ।**
कंटक द्वारा ज्योति दो, बींधी एक वल्मीक ॥ १४ ॥

चौ- तासु वचन सुनकर वह नृपवर । वल्मीकान्तर जहाँ मुनीश्वर ॥ १ ॥
संभ्रम सहित मुनिहिं मुदिताई । करी विनय निज सीस नवाई ॥ २ ॥
तब नृप मुनि अभिप्राय लखाई । निज कन्या नृप पास बुलाई ॥ ३ ॥
वह कन्या उन मुनि को देकर । आवा निजगृह सब दुख तजकर ॥ ४ ॥
वह कन्या मुनि को पति पाकर । सेवा करने लगि निरन्तर ॥ ५ ॥
एक समय दोउ अश्विनी कुमारा । च्यवनाश्रम ऊपर पगु धारा ॥ ६ ॥

कीन्ही पूजन मुनि दोउ भाई । बोले अति हर्षित मुनिराई ॥ ७ ॥
है सद्वैध विचार हमारा । सब सुन्दरि मनमोहन हारा ॥ ८ ॥
तरुणाई अरु रूप अपारा । जिस विध पाऊँ भली प्रकारा ॥ ९ ॥
करउ उपाय न देर लगाऊ । सोम पात्र में तुम्हें दिलाऊँ ॥ १० ॥

दोहा- **कर अभिनन्दन च्यवन का, बोले असुनि कुमार ।**
सिद्ध विनिर्मित ह्रद यह, करो स्नान इक बार ॥१५ ॥

चौ- जरा ग्रस्त तनु तदा अपारा । ले मुनि निज संग असुनि कुमारा ॥ १ ॥
बीच सरोवर कीन्हें स्नाना । निकसे बाहर सूर्य समाना ॥ २ ॥
तीन पुरुष देखे नृप बाला । निज पति लखि नहिं भई बिहाला ॥ ३ ॥
निजपति को पहिचान न पाई । असुनि कुमार शरण तब आई ॥ ४ ॥
तासु पतिव्रत धर्म अपारा । देख मुदित भये असुनि कुमारा ॥ ५ ॥
पति दरसन उसको करवाई । मुनि आज्ञा निज सीस चढ़ाई ॥ ६ ॥
बैठि यान निज असुनि कुमारा । गये स्वर्ग वे तजि मुनि द्वारा ॥ ७ ॥
एक दिवस नृप यज्ञ रचावा । च्यवनाश्रम ऊपर वह आवा ॥ ८ ॥
निज कन्या संग दिव्य स्वरूपा । देख पुरुष मन मुदित न भूपा ॥ ९ ॥
निज कन्या प्रति वचन सुनावा । कौन पुरुष यह संग बिठावा ॥ १० ॥

दोहा- **लोक नमस्कृत वृद्ध पति, तजकर भज रहि जार ।**
कीन्हो काम न नीक यह, रे मति मन्द गंवार ॥ १६ ॥

चौ- यह विपरीत मति भई कैसे । लीन्हो जन्म श्रेष्ठ कुल वैसे ॥ १ ॥
तुम दोऊ कुल कियो कलंका । जावहि दोउ कुल नरक निशंका ॥ २ ॥
पिता वचन सुन विस्मय जाता । बोली नृप बाला सुनु ताता ॥ ३ ॥
यहि भृगुनन्दन तव जामाता । कीन्ह कथन सब पूरब बाता ॥ ४ ॥
कन्या मुख सुन सब इतिहासा । भये मुदित नृप संशय नासा ॥ ५ ॥
सोम याग एक च्यवन मुनीशा । करवायो पुनि मनुज महीशा ॥ ६ ॥
सोम पूर्ण तव पात्र उठावा । आश्विनेय प्रति च्यवन पिआवा ॥ ७ ॥
तदा क्रुद्ध हो इन्द्र अपारा । नृपबध हेत कुलिश कर धारा ॥ ८ ॥
वज्र समेत हस्त सुरराई । स्तम्भन किये तदा मुनिराई ॥ ९ ॥
तब सब सुरन कियो स्वीकारा । सोमपान प्रति असुनि कुमारा ॥ १० ॥

दोहा- **प्रथम वदत सुरवृन्द यों, सोमपान अधिकार ।**
भैषज कर्म के कारने, नहि इन असुनि कुमार ॥ १७ ॥

चौ- नृप शर्याति त्रय सुत कर्ता भूरिषेण उत्तान अनर्ता ॥ १ ॥
आनर्ती रैवत नृप जाता । वह पुरि कुशस्थली निर्माता ॥ २ ॥
सिंधु बीच स्थित होकर राया । उसी देश अधिकार जमाया ॥ ३ ॥
रेवत नृपति सुवन शत जाये । तासु ककुद्मी श्रेष्ठ कहाये ॥ ४ ॥
सुता हेतु वर पूछन काजू । ब्रह्मलोक गवने महाराजू ॥ ५ ॥
नृत्य गान उस क्षण वहँ भयऊ । सुता संग जब विधि पहँ गयऊ ॥ ६ ॥
तब कुछ क्षणिक रुके महाराजा । कीन्ह प्रसंग नहीं निज काजा ॥ ७ ॥
नृत्य गान जब पूरण भयऊ । स्वाभिप्राय तब विधिसंन कहऊ ॥ ८ ॥
सुनकर तब नृप के अभिप्राया । हँसकर ब्रह्मा वचन सुनाया ॥ ९ ॥
जे वर नृप तुम निश्चित कीन्हें । वे सब कालवली हर लीन्हें ॥ १० ॥

दोहा- **पुत्र व पौत्र प्रपौत्र भी, नहीं गौत्र अवशेष ।**
मिटकर वंश परंपरा, भयो नाम निःशेष ॥ १८ ॥

चौ- क्षणभर ठहरे यहाँ महीशा । गये चतुर्युग सत्ताईशा ॥ १ ॥
अब हरि के अंशी बलरामा । रोहिणी पुत्र महावल धामा ॥ २ ॥
हरण हेतु वे प्रभु महि भारा । यदुकुल बीच लीन्ह अवतारा ॥ ३ ॥
कन्या रत्न रेवती नामा । जाकर तुम देवहु बलरामा ॥ ४ ॥
पा आदेश ककुद्मी राया । विधि वन्दन कर पुरी सिधाया ॥ ५ ॥
निज कन्या जिन रेवती नामा । दीन्हो नृपति तदा बलरामा ॥ ६ ॥
नर नारायण आश्रम ऊपर । गये बाद तप करने नृपवर ॥ ७ ॥
मनु सुत नभग नवम हम गाये । उनके सुत नाभाग कहाये ॥ ८ ॥
गुरुकुल बीच कियो उनवासा । कीन्ह अध्ययन गुरु के पासा ॥ ९ ॥
नैष्ठिक ब्रह्मचारी लखि येहू । भ्राता भाग दियो नहि तेहू ॥ १० ॥

दोहा- **गुरुकुल ते पढ़कर जब, घर आये नाभाग ।**
भ्राताओं से उस समय, माँगा अपना भाग ॥ १९ ॥

चौ- हे भ्राताओं भाग हमारा । कँवन प्रकार कियो बँटवारा ॥ १ ॥
तब सब भ्राता वचन सुनाये । अरे पिता तब हिस्सा आये ॥ २ ॥
गयो तदा वह पिता समीपा । कहे वचन सो सुनो महीपा ॥ ३ ॥
अहो पिता सब भ्रात हमारे । मोसे ऐसे वचन उचारे ॥ ४ ॥
सब भ्राता गण ने मिल मुझको । हिस्से बीच दियो पितु तुमको ॥ ५ ॥
सुत के वचन सुने यो काना । बोले पिता वचन रिसियाना ॥ ६ ॥

मानो मत उनकी सुत बाता । मैं जो कहूँ करो वहि ताता ॥ ७ ॥
ये आँगीरस सब मतिमाना । करते मख जो एक महाना ॥ ८ ॥
प्रति षष्टम दिन भूल भयंकर । करते है सुत इस मख अन्दर ॥ ६ ॥
सूक्त य वैश्वदेव के दोहू । जाकर पुत्र सुनावहु ओहू ॥ १० ॥

दोहा- **होअहिं पूरण जग्य जब, सुरपुर करहिं पयान ।**
तब आंगीरस विप्र वे, होकर मुदित महान ॥ २० ॥

चौ- मख अवशेषित द्रव्य अपारा । देअहि पुत्र तुम्हें यह सारा ॥ १ ॥
पिता वचन यों सुनकर काना । गयो वहाँ नाभाग सुजाना ॥ २ ॥
अब मख शेषित धन द्विज सारे । दे नाभागहिं स्वर्ग सिधारे ॥ ३ ॥
ले वह द्रव्य चला जिस काला । उत्तर ते आ रुद्र विशाला ॥ ४ ॥
बोले वत्स सुनो मम बाता ॥ मख अवशेषित धन मम जाता ॥ ५ ॥
तब नाभाग युँ वचन उचारा । पायउँ मैं धन विप्रन द्वारा ॥ ६ ॥
बोले रूद्र पिता पहँ जाऊ । इस धन हेत पूछ यह आऊं ॥ ७ ॥
पिता पास जा अब नाभागा । उस धन प्रति वह पूछन लागा ॥ ८ ॥
बोले पुत्र वचन सुन मोरा । मख अवशेषित भाग न तोरा ॥ ६ ॥
ये सब द्रव्य रुद्र का माना । इस धन पर अधिकार न आना ॥ १० ॥

दोहा- **पिता वचन सुनकर तदा, रुद्र पास नाभाग ।**
कर प्रणाम कहने लगा, यह सब तव शिव भाग ॥२१॥

चौ- है यथार्थ अधिकार तुम्हारा । इस धन पर नहि नाथ हमारा ॥ १ ॥
यों मम पिता वचन फरमाये । बोले तब शिव वचन सुहाये ॥ २ ॥
कहि तव पिता धरम की बाता । तुम भी सत्य कहेउ सब बाता ॥ ३ ॥
लखकर तोरा सत्य सुभाऊँ । ब्रह्म सनातन ज्ञान सुनाऊँ ॥ ४ ॥
मख शेषित यह द्रव्य अपारा । करो ग्रहण तुम मोसे सारा ॥ ५ ॥
यों कह वचन तदा शिव शंकर । अन्तर ध्यान भये सुनु नृपवर ॥ ६ ॥
यह आख्यान सुनहिं चित्तलाई । मोक्षधाम सो मनुज सिधाई ॥ ७ ॥
अम्बरीषनृप सुत नाभागा । ब्रह्मशाप भी जिन नहि लागा ॥ ८ ॥
अम्बरीष जो सुत नाभागा । ब्रह्म शाप केहि हेतु न लागा ॥ ६ ॥
सुनकर नृप के प्रश्न मुनीशा । बोले वचन सुनो कुरु ईशा ॥ १० ॥

दोहा- **अम्बरीष महाभाग नृप, सप्त द्वीप महि पाय ।**
अतुल विभव सुख सम्पदा, जो मानव नहि थाय ॥२२॥

चौ- ये सब लखकर सुमन समाना। कृष्ण पदारविन्द मन आना ॥ १ ॥
वासुदेव हरि रत जन जेता। लखि सर्वात्म भाव निज चेता ॥ २ ॥
रसना ते हरि गुण अनुवरणन। दोउ करते हरि मंदिर मज्जन ॥ ३ ॥
श्रुति अच्युत हरि कथा पुराना। निज दृष्टि दरसन भगवाना ॥ ४ ॥
तुलसी कंज पद अरपित जासू। निशिदिन गंध ग्रहण किय नासू ॥ ५ ॥
उन भृत्यन तनु स्पर्शित अंगा। चरण क्षेत्र तीर्थादिक गंगा ॥ ६ ॥
उन पद वन्दन सीस नवाई। उन भक्तन प्रति रति मन भाई ॥ ७ ॥
हरि अरपित निज कर्म समूहा। महि पालत शिक्षित द्विज यूहा ॥ ८ ॥
असित वशिष्ठ व गौतम द्वारा। कर हरि मेध व अन्य प्रकारा ॥ ९ ॥
करके मंख नृप हरि पद पूजे। धन्व देश जहँ सुरसति गूँजे ॥ १० ॥

दोहा- **जिन मख विच ऋत्विज जन, द्विज सदस्य परिवार।**
भूषण वस्त्रादिक धरे, सुरन समाँ इक सार ॥ २३ ॥

चौ- नृपति प्रजा हरि कथा सुहावन। सुनकर स्वर्ग न चाहत जावन ॥ १ ॥
हृदय बीच हरि को लखि राया। सब सम्पद लखि मुदित न काया ॥ २ ॥
भक्ति योग करि इमि हरि ध्याई। शनै-शनै सब संग तजाई ॥ ३ ॥
गेह दार सुत बन्धु अपारी। द्विय उत्तम स्यन्दन असवारी ॥ ४ ॥
वाजि पत्ति कोषादिक माँही। अनृत मति इन वीच लगाही ॥ ५ ॥
देख भक्त की भक्ति अपारी। भये मुदित तव भव भयहारी ॥ ६ ॥
नृप रक्षा हित चक्र सुदर्शन। कीन्ह नियुक्त वहाँ दुख भञ्जन ॥ ७ ॥
कृत सनारि नृप वर हरि वासर। भयो जबै तेहि इक सम्वत्सर ॥ ८ ॥
तव व्रत अन्त कारतिक मासा। शुक्ल दिवस हरि वासर खासा ॥ ९ ॥
किय कालिन्दी तट पर स्नाना। पूजे मधुवन विच भगवाना ॥ १० ॥

दोहा- **संपद सभी प्रकार की, सव साहित्य मँगाय।**
महाभिषेक विधि के सह, पूजे केशव राय ॥ २४ ॥

चौ- पूजे ब्राह्मण सिद्ध अपारा। महाभागवत भकती द्वारा ॥ १ ॥
रजत अङ्घ्रि सह रुकम विपानी। सुन्दर वसन उपस्कर आनी ॥ २ ॥
अर्वुद पट् सव द्विजन वुलाई। दियो दान गौ नृप हर्षाई ॥ ३ ॥
पुनि द्वादशि दिन द्विजन वुलावा। स्वादु अन्न अति मधुर जिमावा ॥ ४ ॥
आज्ञा ले विप्रन की राजा। जव व्रत पारण हेत विराजा ॥ ५ ॥

मानो मत उनकी सुत बाता । मैं जो कहूँ करो वहि ताता ॥ ७ ॥
ये आँगीरस सब मतिमाना । करते मख जो एक महाना ॥ ८ ॥
प्रति षष्टम दिन भूल भयंकर । करते हे सुत इस मख अन्दर ॥ ९ ॥
सूक्त य वैश्वदेव के दोहू । जाकर पुत्र सुनावहु ओहू ॥ १० ॥

दोहा- **होअहिं पूरण जग्य जब, सुरपुर करहिं पयान ।**
तब आंगीरस विप्र वे, होकर मुदित महान ॥ २० ॥

चौ- मख अवशेपित द्रव्य अपारा । देअहि पुत्र तुम्हें यह सारा ॥ १ ॥
पिता वचन यों सुनकर काना । गयो वहाँ नाभाग सुजाना ॥ २ ॥
अब मख शेपित धन द्विज सारे । दे नाभागहिं स्वर्ग सिधारे ॥ ३ ॥
ले वह द्रव्य चला जिस काला । उत्तर ते आ रुद्र विशाला ॥ ४ ॥
बोले वत्स सुनौ मम बाता ॥ मख अवशेपित धन मम जाता ॥ ५ ॥
तब नाभाग युँ वचन उचारा । पायउँ मैं धन विप्रन द्वारा ॥ ६ ॥
बोले रूद्र पिता पहँ जाऊ । इस धन हेत पूछ यह आऊं ॥ ७ ॥
पिता पास जा अब नाभागा । उस धन प्रति वह पूछन लागा ॥ ८ ॥
बोले पुत्र वचन सुन मोरा । मख अवशेपित भाग न तोरा ॥ ९ ॥
ये सब द्रव्य रुद्र का माना । इस धन पर अधिकार न आना ॥ १० ॥

दोहा- **पिता वचन सुनकर तदा, रुद्र पास नाभाग ।**
कर प्रणाम कहने लगा, यह सब तव शिव भाग ॥२१॥

चौ- है यथार्थ अधिकार तुम्हारा । इस धन पर नहि नाथ हमारा ॥ १ ॥
यों मम पिता वचन फरमाये । बोले तब शिव वचन सुहाये ॥ २ ॥
कहि तव पिता धरम की बाता । तुम भी सत्य कहेउ सब बाता ॥ ३ ॥
लखकर तोरा सत्य सुभाऊँ । ब्रह्म सनातन ज्ञान सुनाऊँ ॥ ४ ॥
मख शेषित यह द्रव्य अपारा । करो ग्रहण तुम मोसे सारा ॥ ५ ॥
यों कह वचन तदा शिव शंकर । अन्तर ध्यान भये सुनु नृपवर ॥ ६ ॥
यह आख्यान सुनहिं चित्तलाई । मोक्षधाम सो मनुज सिधाई ॥ ७ ॥
अम्बरीषनृप सुत नाभागा । ब्रह्मशाप भी जिन नहि लागा ॥ ८ ॥
अम्बरीष जो सुत नाभागा । ब्रह्म शाप केहि हेतु न लागा ॥ ९ ॥
सुनकर नृप के प्रश्न मुनीशा । बोले वचन सुनो कुरु ईशा ॥ १० ॥

दोहा- **अम्बरीष महाभाग नृप, सप्त द्वीप महि पाय ।**
अतुल विभव सुख सम्पदा, जो मानव नहि थाय ॥२२॥

चौ- ये सब लखकर सुमन समाना । कृष्ण पदारविन्द मन आना ॥ १ ॥
वासुदेव हरि रत जन जेता । लखि सर्वात्म भाव निज चेता ॥ २ ॥
रसना ते हरि गुण अनुवरणन । दोउ करते हरि मंदिर मज्जन ॥ ३ ॥
श्रुति अच्युत हरि कथा पुराना । निज दृष्टि दरसन भगवाना ॥ ४ ॥
तुलसी कंज पद अरपित जासू । निशिदिन गंध ग्रहण किय नासू ॥ ५ ॥
उन भृत्यन तनु स्पर्शित अंगा । चरण क्षेत्र तीर्थादिक गंगा ॥ ६ ॥
उन पद वन्दन सीस नवाई । उन भक्तन प्रति रति मन भाई ॥ ७ ॥
हरि अरपित निज कर्म समूहा । महि पालत शिक्षित द्विज यूहा ॥ ८ ॥
असित वशिष्ठ व गौतम द्वारा । कर हरि मेध व अन्य प्रकारा ॥ ९ ॥
करके मख नृप हरि पद पूजे । धन्व देश जहँ सुरसति गूँजे ॥ १० ॥

दोहा- **जिन मख बिच ऋत्विज जन, द्विज सदस्य परिवार ।**
भूषण वस्त्रादिक धरे, सुरन समाँ इक सार ॥ २३ ॥

चौ- नृपति प्रजा हरि कथा सुहावन । सुनकर स्वर्ग न चाहत जावन ॥ १ ॥
हृदय बीच हरि को लखि राया । सब सम्पद लखि मुदित न काया ॥ २ ॥
भक्ति योग करि इमि हरि ध्याई । शनै-शनै सब संग तजाई ॥ ३ ॥
गेह दार सुत बन्धु अपारी । द्विय उत्तम स्यन्दन असवारी ॥ ४ ॥
वाजि पत्ति कोषादिक माँही । अनृत मति इन बीच लगाही ॥ ५ ॥
देख भक्त की भक्ति अपारी । भये मुदित तब भव भयहारी ॥ ६ ॥
नृप रक्षा हित चक्र सुदर्शन । कीन्ह नियुक्त वहाँ दुख भञ्जन ॥ ७ ॥
कृत सनारि नृप वर हरि वासर । भयो जबै तेहि इक सम्वत्सर ॥ ८ ॥
तब व्रत अन्त कारतिक मासा । शुक्ल दिवस हरि वासर खासा ॥ ९ ॥
किय कालिन्दी तट पर स्नाना । पूजे मधुवन बिच भगवाना ॥ १० ॥

दोहा- **संपद सभी प्रकार की, सब साहित्य मँगाय ।**
महाभिषेक विधि के सह, पूजे केशव राय ॥ २४ ॥

चौ- पूजे ब्राह्मण सिद्ध अपारा । महाभागवत भकती द्वारा ॥ १ ॥
रजत अङ्घ्रि सह रुकम विपानी । सुन्दर वसन उपस्कर आनी ॥ २ ॥
अर्बुद पट् सब द्विजन बुलाई । दियो दान गौ नृप हर्षाई ॥ ३ ॥
पुनि द्वादशि दिन द्विजन बुलावा । स्वादु अन्न अति मधुर जिमावा ॥ ४ ॥
आज्ञा ले विप्रन की राजा । जब व्रत पारण हेत विराजा ॥ ५ ॥

तेहि समै वहँ रिपि दुरवासा । आये संग शिष्य ले खासा ॥ ६ ॥
आवत नृप मुनी अरचन कीन्हा । भोजन हेतु निमंत्रण दीन्हा ॥ ७ ॥
मुनिवर कर स्वीकार निमंत्रण । गे यमुना तट संध्या वन्दन ॥ ८ ॥
कर मज्जन कालिन्दी नीरा । ब्रह्म ध्यान विच मग्न शरीरा ॥ ९ ॥
इत द्वादशि इक घटि अवशेपी । लखि अब संकट धर्म विशेपी ॥ १० ॥
व्रत पारण हित पुत्र नभागा । सब विप्रन से पूछन लागा ॥ ११ ॥

दोहा- **न्योंता देकर विप्र को, प्रथम स्वयं जो खाय ।**
करहिं न पारण द्वादशी, दोनों दोप कहाय ॥ २५ ॥

चौ- यों विचार कर निश्चय मोरा । करूँ पारणा पी जलकोरा ॥ १ ॥
अशन अनाशन एक समाना । नीर पान सब शास्त्रन माना ॥ २ ॥
यों मन में हरि चिन्तन करिके । द्विज की राह लखी जल पी के ॥ ३ ॥
कृत्यावश्यक कर दुरवासा । आये तेहि काल नृप पासा ॥ ४ ॥
नृप चेष्टित इमि लखि मुनिराया । चलत गा अति क्रोधित काया ॥ ५ ॥
कृत अञ्जलि नृप प्रति इमि बोले । लक्ष्मी मद उन्मत्त मति डोले ॥ ६ ॥
अनृत वचन वदत इस राया । धर्म व्यतिक्रम मोहिं न भाया ॥ ७ ॥
कियो अशन बिन अतिथि जिमाये । तासु सद्य फल अब यह पाये ॥ ८ ॥
यों कह मुनि निज जटा उखारी । रोप सहित सो महि पर डारी ॥ ९ ॥
तेहि काल कालाग्नि समाना । निकसी कृत्या एक महाना ॥ १० ॥

दोहा- **आवत लखि निज पास नृप, अनल वदन ते जासु ।**
भये न विचलित स्थान ते, भय नहिं माना तासु ॥२६॥

चौ- किन्तु प्रथम वहँ चक्र सुदरसन । रहे नियुक्त नृपति दुःख भञ्जन ॥ १ ॥
आवत उन वह कृत्या जारी । बाद मुनि के लगे पिछारी ॥ २ ॥
निज श्रम निष्फल लखि दुरवासा । भये भीत प्राणन तजि आसा ॥ ३ ॥
निज प्राणन रक्षण हित धाये । किन्तु चक्र भी उन अनु धाये ॥ ४ ॥
देख चक्र संलग्न पिछारी । भागे मेरू गुहा मँझारी ॥ ५ ॥
गये दिशा नभ मही पताला । सागर सरिता लोक सपाला ॥ ६ ॥
यों सर्वत्र भ्रमण कर आये । किन्तु चक्रनहि संग तजाये ॥ ७ ॥
अब विधिशरण गये मुनि राया । त्राहि त्राहि करि वचन सुनाया ॥ ८ ॥
विष्णु चक्र यह संग न मोरा । तजहिं विधात फिरयो चहुँ ओरा ॥ ९ ॥

बोले विधि मुनि यहँ से जाहू। कहि मम लोक विदग्ध न आहू॥ १० ॥

दोहा- **विश्व सहित मम स्थान जिन, भ्रकुटी चालत मात्र।**
होवत द्वितीय परार्ध में, नष्ट अरे मम गात्र ॥२७॥

चौ- मैं भव दक्ष व भृगू प्रधाना। सुरप प्रजेश व भूतप आना॥ १ ॥
उन हरि के अनुशासन द्वारा। लोकतंत्र चालक यह सारा॥ २ ॥
उनके भक्तन के जो द्रोही। मैं न समर्थ बचावन तोहीं॥ ३ ॥
यों तब वचन सुनै दुरवासा। गये शरण वे शंकर पासा॥ ४ ॥
करउ शंभु रक्षा तुम मेरी। चक्र ताप ते पीर घनेरी॥ ५ ॥
तब शिव ऐसे वचन उचारे। जीव कोष ब्रह्मादिक सारे॥ ६ ॥
प्रकटत नष्ट होत जिन द्वारा। भटकत हम सम जासु अपारा॥ ७ ॥
मैं अरु नारद सनत कुमारा। कपिल मरीचि अजादिक सारा॥ ८ ॥
अनृत माया ते जिन माया। हम सब कबहुँ न जानन पाया॥ ९ ॥
उन हरि का यह शस्त्र करारा। दुस्सह हम प्रति सभी प्रकारा॥ १० ॥

दोहा- **उन प्रभु को तज अन्य जग, करहिं न जीवनदान।**
जाउ मुनि उनकी शरण, वही करहिं कल्यान॥ २८ ॥

चौ- यों शिव वचन सुने दुरवासा। छाई तब चहुँ ओर निरासा॥ १ ॥
तब वैकुंठ गये दुरवासा। चक्र ताप कम्पित तनु त्रासा॥ २ ॥
उन पद मूल गिरे दुरवासू। बोले वचन हे रमा निवासू॥ ३ ॥
पाहि प्रभो मोहिं कृत अपराधा। चक्र ताप ते व्यापी व्याधा॥ ४ ॥
मैं नहिं जाना तोर प्रतापा। कियो नाथ मैं यह बड़ पापा॥ ५ ॥
दियो भक्त को मैं दुख भारी। तासु उपाय करो दुखहारी॥ ६ ॥
नारकीय भी नाम तुम्हारा। सुमिरन कर त्यागहिं यम द्वारा॥ ७ ॥
बोले वचन सन्त भवहारी। सुनो रिषीश्वर बात हमारी॥ ८ ॥
नहि स्वतंत्र मैं भक्त अधीना। अति प्रिय मोंही भक्त प्रवीना॥ ९ ॥
निज आत्मा लक्ष्मी नहिं प्यारी। किन्तु भक्त पर प्रेम अपारी॥ १० ॥

दोहा- **जे दारा सुत प्राण धन, तज कर निज आगार।**
आवहि मोरे शरण में, त्यागूँ कवन प्रकार॥ २९ ॥

चौ- साधु भक्त कर भक्ति अपारी। करहिं मोंहि वश भली प्रकारी॥ १ ॥
मम सेवारत मुझे तजाही। मोक्षादिक चतुष्टय ना चाहीं॥ २ ॥
साधू जन मम हृदय कहावे। वे मुझको निज हृदय बतावे॥ ३ ॥

तेहि समै वहँ रिषि दुरवासा । आये संग शिष्य ले खासा ॥ ६ ॥
आवत नृप मुनी अरचन कीन्हा । भोजन हेतु निमंत्रण दीन्हा ॥ ७ ॥
मुनिवर कर स्वीकार निमंत्रण । गे यमुना तट संध्या वन्दन ॥ ८ ॥
कर मज्जन कालिन्दी नीरा । ब्रह्म ध्यान विच मग्न शरीरा ॥ ९ ॥
इत द्वादशि इक घटि अवशेषी । लखि अब संकट धर्म विशेषी ॥ १० ॥
व्रत पारण हित पुत्र नभागा । सब विप्रन से पूछन लागा ॥ ११ ॥

दोहा- **न्यौता देकर विप्र को, प्रथम स्वयं जो खाय ।**
करहिं न पारण द्वादशी, दोनों दोष कहाय ॥ २५ ॥

चौ- यों विचार कर निश्चय मोरा । करूँ पारणा पी जलकोरा ॥ १ ॥
अशन अनाशन एक समाना । नीर पान सब शास्त्रन माना ॥ २ ॥
यों मन में हरि चिन्तन करिके । द्विज की राह लखी जल पी के ॥ ३ ॥
कृत्यावश्यक कर दुरवासा । आये तेहि काल नृप पासा ॥ ४ ॥
नृप चेष्टित इमि लखि मुनिराया । चलत गा अति क्रोधित काया ॥ ५ ॥
कृत अञ्जलि नृप प्रति इमि बोले । लक्ष्मी मद उन्मत्त मति डोले ॥ ६ ॥
अनृत वचन वदत इस राया । धर्म व्यतिक्रम मोहिं न भाया ॥ ७ ॥
कियो अशन बिन अतिथि जिमाये । तासु सद्य फल अब यह पाये ॥ ८ ॥
यों कह मुनि निज जटा उखारी । रोष सहित सो महि पर डारी ॥ ९ ॥
तेहि काल कालाग्नि समाना । निकसी कृत्या एक महाना ॥ १० ॥

दोहा- **आवत लखि निज पास नृप, अनल वदन ते जासु ।**
भये न विचलित स्थान ते, भय नहिं माना तासु ॥ २६ ॥

चौ- किन्तु प्रथम वहँ चक्र सुदरसन । रहे नियुक्त नृपति दुःख भञ्जन ॥ १ ॥
आवत उन वह कृत्या जारी । बाद मुनि के लगे पिछारी ॥ २ ॥
निज श्रम निष्फल लखि दुरवासा । भये भीत प्राणन तजि आसा ॥ ३ ॥
निज प्राणन रक्षण हित धाये । किन्तु चक्र भी उन अनु धाये ॥ ४ ॥
देख चक्र संलग्न पिछारी । भागे मेरू गुहा मँझारी ॥ ५ ॥
गये दिशा नभ मही पताला । सागर सरिता लोक सपाला ॥ ६ ॥
यों सर्वत्र भ्रमण कर आये । किन्तु चक्रनहि संग तजाये ॥ ७ ॥
अब विधिशरण गये मुनि राया । त्राहि त्राहि करि वचन सुनाया ॥ ८ ॥
विष्णु चक्र यह संग न मोरा । तजहिं विधात फिरयो चहुँ ओरा ॥ ९ ॥

बोले विधि मुनि यहँ से जाहू। कहि मम लोक विदग्ध न आहू॥ १० ॥

दोहा- **विश्व सहित मम स्थान जिन, भ्रकुटी चालत मात्र।**
होवत द्वितीय परार्ध में, नष्ट अरे मम गात्र॥२७॥

चौ- मैं भव दक्ष व भृगू प्रधाना। सुरप प्रजेश व भूतप आना॥ १ ॥
उन हरि के अनुशासन द्वारा। लोकतंत्र चालक यह सारा॥ २ ॥
उनके भक्तन के जो द्रोही। मैं न समर्थ बचावन तोहीं॥ ३ ॥
यों तब वचन सुनै दुरवासा। गये शरण वे शंकर पासा॥ ४ ॥
करउ शंभु रक्षा तुम मेरी। चक्र ताप ते पीर घनेरी॥ ५ ॥
तब शिव ऐसे वचन उचारे। जीव कोष ब्रह्मादिक सारे॥ ६ ॥
प्रकटत नष्ट होत जिन द्वारा। भटकत हम सम जासु अपारा॥ ७ ॥
मैं अरु नारद सनत कुमारा। कपिल मरीचि अजादिक सारा॥ ८ ॥
अनृत माया ते जिन माया। हम सब कबहुँ न जानन पाया॥ ९ ॥
उन हरि का यह शस्त्र करारा। दुस्सह हम प्रति सभी प्रकारा॥ १० ॥

दोहा- **उन प्रभु को तज अन्य जग, करहिं न जीवनदान।**
जाउ मुनि उनकी शरण, वही करहिं कल्यान॥ २८ ॥

चौ- यों शिव वचन सुने दुरवासा। छाई तब चहुँ ओर निरासा॥ १ ॥
तब वैकुंठ गये दुरवासा। चक्र ताप कम्पित तनु त्रासा॥ २ ॥
उन पद मूल गिरे दुरवासू। बोले वचन हे रमा निवासू॥ ३ ॥
पाहि प्रभो मोहिं कृत अपराधा। चक्र ताप ते व्यापी व्याधा॥ ४ ॥
मैं नहिं जाना तोर प्रतापा। कियो नाथ मैं यह बड़ पापा॥ ५ ॥
दियो भक्त को मैं दुख भारी। तासु उपाय करो दुखहारी॥ ६ ॥
नारकीय भी नाम तुम्हारा। सुमिरन कर त्यागहिं यम द्वारा॥ ७ ॥
बोले वचन सन्त भवहारी। सुनो रिषीश्वर बात हमारी॥ ८ ॥
नहि स्वतंत्र मैं भक्त अधीना। अति प्रिय मोंही भक्त प्रवीना॥ ९ ॥
निज आत्मा लक्ष्मी नहिं प्यारी। किन्तु भक्त पर प्रेम अपारी॥ १० ॥

दोहा- **जे दारा सुत प्राण धन, तज कर निज आगार।**
आवहि मोरे शरण में, त्यागूँ कवन प्रकार॥ २९ ॥

चौ- साधु भक्त कर भक्ति अपारी। करहिं मोंहि वश भली प्रकारी॥ १ ॥
मम सेवारत मुझे तजाहीं। मोक्षादिक चतुष्टय ना चाहीं॥ २ ॥
साधू जन मम हृदय कहावे। वे मुझको निज हृदय बतावे॥ ३ ।

मोहिं त्याग वे भजहि न दूसर । अब उपाय मैं कहूँ मुनीश्वर ॥ ४ ॥
यदि दुख से छुटकारा चाहू । आये जहँ ते वँहीं सिधाहू ॥ ५ ॥
निरपराध भक्तन पर कोई । करें अहित हित चेष्टा सोई ॥ ६ ॥
पावहिं मुनी अमंगल भारी । यद्यपि द्विज विद्या तप धारी ॥ ७ ॥
होअहिं किन्तु विप्र उद्दंडा । अन्यायी बन करे वितण्डा ॥ ८ ॥
तब तप विद्या सभी प्रकारा । देवत फल विपरीत प्रकारा ॥ ९ ॥
अब नाभाग तनय पहँ जाहू । करहु क्षमा याचन मुनि नाहू ॥ १० ॥

दोहा- **सुख शान्ति तब ही मिले, मुनि नहिं अन्य उपाय ।**
यों भगवत आदेश सुनि, वापिस वहीं सिधाय ॥ २० ॥

चौ- चक्र ताप तापित मुनिराई । गहे नृपति पद अति घबराई ॥ १ ॥
चरण स्पर्श ते लज्जित राया । भये कृपा पीड़ित निज काया ॥ २ ॥
करी विनय अब चक्र नरेशा । अग्नि रूप भगवान् दिनेशा ॥ ३ ॥
तुमहीं ज्योतिप मंडल स्वामी । सोम रूप तव हिय अनुगामी ॥ ४ ॥
तुमहीं क्षिति जल व्योम समीरा । मात्रा पंच इन्द्रियन सीरा ॥ ५ ॥
अच्युत प्रिय हे चक्र सुदरसन । सहस्रार सब अस्त्र निवारन ॥ ६ ॥
वन्दों अमृत धर्म प्रचारी । हरो विप्रका संकट भारी ॥ ७ ॥
यज्ञ रूप तुम सत्य स्वरूपा । लोकपाल विकराल अनूपा ॥ ८ ॥
वन्दों यज्ञाधिप सर्वात्मा । तुमहीं श्रेष्ठ तेज परमात्मा ॥ ९ ॥
धर्म सेतु वन्दहुँ वसुनाभा । पाय शील जे धर्म अलाभा ॥ १० ॥

दोहा- **उन असुरन के हेतु तुम, धूमकेतु सम जान ।**
अद्भुत कर्म मनोजवी, रक्षक लोक विधान ॥ २१ ॥

चौ- नहि समर्थ तव स्तोत्र उचारन । इस जग में सुरनर अरु मुनि जन ॥ १ ॥
करुँ सिर्फ मैं विनय तुम्हारी । चमकहि तोरे तेज तमारी ॥ २ ॥
प्रभो धरम मय तेजस द्वारा । होय निवारण जग अँधियारा ॥ ३ ॥
ऐसो नाहिं जगत में कोई । पार पाय तव महिमा जोई ॥ ४ ॥
लघु बड़ भेदभाव परियुक्ता । यह संसार न आय अयुक्ता ॥ ५ ॥
जब हरि कर छूटउ अखेशा । करहु दानवन सैन्य प्रवेशा ॥ ६ ॥
तब उन काटउ भुजा भयंकर । जंघा चरण व सीस निरन्तर ॥ ७ ॥
तब तुम लागउ अतिव सुहावन । हे जग रक्षक खल मद भंजन ॥ ८ ॥
तव सन्मुख रण कोई न ठहरे । अरि सन्मुख तव कुछ नहि बिगरे ॥ ९ ॥

कीन्हे स्थापित दुष्ट विनाशन । विश्ववंध जग रक्षक भगवन ॥ १० ॥

दोहा- **भाग्य लाभ हित मोर कुल, कुरु इन मुनि कल्यान ।**
मोरे ऊपर आपकी, यदि हों कृपा महान ॥ ३२ ॥

चौ- कीन्हो यदि मैं कुछ भी दाना । यज्ञ साधना धर्म महाना ॥ १ ॥
अहो नाथ मोरे जे वंशज । माने इष्ट देव निज यदि द्विज ॥ २ ॥
एक मात्र सब गुण के आश्रय । वे भगवान सकल दुख नाशय ॥ ३ ॥
आत्म भाव लखा मैं येही । तो द्विज विज्वर हो निज देही ॥ ४ ॥
सुन यों नृप स्तुति चक्र सुदरशन । भये शान्त तेहि काल हे राजन ॥ ५ ॥
चक्र अग्नि अब मुक्त मुनीशा । दीन्हों आशिष हेतु महीशा ॥ ६ ॥
अम्बरीष की कीन्ह प्रशंसा । बोले वच अब मुनि अवतंशा ॥ ७ ॥
विष्णु भक्त की महिमा भारी । देखी आज अहो मैं सारी ॥ ८ ॥
यद्यपि कीन्हा मैं अपराधा । तदपि न चाहि नृपति मोहि बाधा ॥ ९ ॥
जो हरि चरणन प्रेम लगाही । दुष्कर दुष्त्यज उन कुछ नाँही ॥ १० ॥

दोहा- **सुमिरन कर जिन नाम को, निरमल होत पुमान ।**
उन हरि के जो दास है, करत जगत कल्यान ॥ ३३ ॥

चौ- मो पर कृपा करी तुम राया । मम अपराध सभी बिसराया ॥ १ ॥
कीन्ही तुम रक्षा मम प्राना । राखी हरि भक्तन की आना ॥ २ ॥
तब नृप ऋषि के चरण गहाये । भोजन हेतु वचन सुनाये ॥ ३ ॥
दे आशिष नृप को मुनि राजा । कर भोजन बोले सुनु राजा ॥ ४ ॥
दरशन स्पर्शन भाषण तोरे । मन में खुशी भई मन मोरे ॥ ५ ॥
ये तव कीरति सुरतिय सारी । गावहिं सुरपुर मुदित अपारी ॥ ६ ॥
पुण्य कीरति ये नृप तेरी । गावहिं यह महि मुदित घनेरी ॥ ७ ॥
यों कह नृप से मुनि दुर्वासा । विदा माँगि गवने विधि पासा ॥ ८ ॥
जब लगि मुनि नृप पास न आये । तब लगि सम्वत एक बिताये ॥ ९ ॥
मुनि दरसन आकांक्षी राजा । कर जलपान रहे तजि काजा ॥ १० ॥

दोहा- **कीन्हों भोजन अब नृप, गये यदा मुनिराय ।**
सब महिमा हरि की यह, मानी निज मन माँय ॥ ३४ ॥

चौ- इमि नृप कीन्ही भक्ति अपारा । सभी क्रिया कलापन द्वारा ॥ १ ॥
भोग ब्रह्मपद सहित अपारा । मानत नृपवर नरकन द्वारा ॥ २ ॥
समय पाय पुत्रन प्रति राजू । देकर बन चिच गय तप काजू ॥ ३ ॥

यह नृप अम्बरीश आख्याना । सुनहि पुण्यप्रद जे निज काना ॥ ४ ॥
करहि पठन अरु करहिं जे ध्याना । होवहि वह हरि भक्त महाना ॥ ५ ॥
बोले नृप ते अब मुनिराई । अम्बरीष सुत तीन कहाई ॥ ६ ॥
शंभू केतूमान विरूपा । सुत विरूप पृषदश्व अनूपा ॥ ७ ॥
उनके पुत्र रथीतर गाये । प्रजा हीन वे नृपति बताये ॥ ८ ॥
किन्तु रथीतर की वर नारी । प्रजा हेतु प्रार्थित तपधारी ॥ ९ ॥
मुनी अंगीरा ते सुत जाये । वे सुत ब्राह्मण पदवी पाये ॥ १० ॥

दोहा- **भये रथीतर क्षेत्र में, वीर्य अंगिरा जासु ।**
भयो रथीतर गोत्र यो, द्विज आङ्गीरसि खासु ॥ ३५ ॥

चौ- आई छींक मनु इक बारा । प्रकटा सुत नासा मल द्वारा ॥ १ ॥
इक्ष्वाकु जिन नाम कहाया । उन निमि दण्डादि सुत पाया ॥ २ ॥
आर्यावर्तप जासु पचीसा । पश्चिम के पति पाँच व बीसा ॥ ३ ॥
निमि व विकुक्षी दण्डक तीना । मध्यदेश पतिपद आसीना ॥ ४ ॥
उत्तर दक्षिण शेष नृपाला । भोगी यों सब मही विशाला ॥ ५ ॥
एक समय इक्ष्वाकू राजा । श्राद्ध अष्टका हेत विराजा ॥ ६ ॥
लावन हेत सु आमिष राया । विकुक्षी प्रति आदेश सुनाया ॥ ७ ॥
पिता वचन सुन विपिन सिधारे । श्राद्ध योग्य मृग शशक सँहारे ॥ ८ ॥
वहाँ बुभुक्षित अति घबराई । भूँज सशक निज क्षुधा बुझाई ॥ ९ ॥
आमिष शेष पिता प्रति दीन्हा । इधर श्राद्ध जब नृप वर कीन्हा ॥ १० ॥

दोहा- **इक्ष्वाकु प्रेरित वहाँ, गुरुवर मुनी वसिष्ट ।**
आवा प्रोक्षण काल जब, लख आमिष उच्छिष्ट ॥ ३६ ॥

चौ- राजा प्रति जाकर सब हाला । कियो निवेदन उन मुनिपाला ॥ १ ॥
यह सुनकर इक्ष्वाकु नृपाला । दियो पुत्र हित देश निकाला ॥ २ ॥
पुनि इक्ष्वाकु योग अधारा । तजकर तनु हरि धाम सिधारा ॥ ३ ॥
देख पिता परलोक सिधारे । बाद विकुक्षि गेह सिधारे ॥ ४ ॥
इस पृथ्वी का पालन कीन्हा । करके यज्ञ परम पद लीन्हा ॥ ५ ॥
भक्षण शशक कियो यह राया । यहिहित नाम शशन्द कराया ॥ ६ ॥
इनके पुत्र पुरंजयराया । ककुत्स्थ व इन्द्रवाह वहि गाया ॥ ७ ॥
एक समय सुर दानव मिलकर । कीन्हों हे नृप युद्ध भयंकर ॥ ८ ॥
दनुजन द्वारा देव पछारे । तब वे आये नृप के द्वारे ॥ ९ ॥

माँगी मदद पुरंजय द्वारा । तब नृप ने यों वचन उचारा ॥ १० ॥

दोहा- **मम वाहन सुरपति बने, हों उस पर असवार ।**
करूँ दानवन का वध, तनिक लगाऊ न वार ॥ ३७ ॥

चौ- यो वाहन हित वचन उचारा । सुरपति लज्जित नहिं स्वीकारा ॥ १ ॥
तब हरि वचन मान हरि पाछे । बने वृषभ नृप वाहन आछे ॥ २ ॥
वृष रूपी हरि पर चढ़ि राया । दिव्य धनुष निज हाथ उठाया ॥ ३ ॥
पश्चिम दिशा गये नरपाला । सुर सेना ले संग विशाला ॥ ४ ॥
विष्णु तेज ते पुरी निशाचर । रोंधी जाय पुरंजय नृपवर ॥ ५ ॥
भयो युद्ध अब दैत्यन संगा । कटकट गिरे निशाचर अंगा ॥ ६ ॥
जो दानव नृप सन्मुख आवा । वह बाणन ते मार गिरावा ॥ ७ ॥
हन्यमान अब विकल निशाचर । भगे रसातल तजकर संगर ॥ ८ ॥
यों दैत्यन का वधकर राया । सब धन सुरपति को दिलवाया ॥ ९ ॥
किये कर्म इमि नृपति उदारा । तब ते नाम पुरंजय धारा ॥ १० ॥

दोहा- **भये पुरंजय के सुत, नाम अनेना जासु ।**
भये अनेना के पृथु , विश्वरन्धि सुत तासु ॥ ३८ ॥

चौ- चन्द्र नाम जिनके सुत गाये । उनके सुत युवताश्व कहाये ॥ १ ॥
उनके सुत शावस्त कहाये । जिन शावस्ती पुरी बसाये ॥ २ ॥
बृहदश्व सुत उन तिय जाया । उन सुत कुवलयाश्व इति गाया ॥ ३ ॥
धुन्धु नाम इक बली निशाचर । मारेउ कुवलयाश्व यह नृपवर ॥ ४ ॥
तब ते धुन्धुमार नृप गाया । नृप सुत इकिस सहस बताया ॥ ५ ॥
धुन्धु मुखानल द्वारा जारे । शेष तीन बाकी संहारे ॥ ६ ॥
नाम दृढाश्व अउर कपिलाश्वा । पुत्र तृतीय नाम भद्राश्वा ॥ ७ ॥
सुत दृढाश्व हर्यश्व कहावा । उन घर पुत्र निकुंभ बताया ॥ ८ ॥
तिया निकुंभ पुत्र दो जाये । बर्हणअश्व कृशाश्व कहाये ॥ ९ ॥
सेन विजित भए पुत्र कृशाश्वा । सेन विजित सुत भए युवनाश्वा ॥ १० ॥

दोहा- **वे नृप संतति हीन हो, शत भार्या के संग ।**
हो विरक्त वन में गये, मुनि सन कीन्ह प्रसंग ॥ ३९ ॥

चौ- पुत्र हेतु मुनि यज्ञ करावा । मंत्रित जल उन कुंभ रखावा ॥ १ ॥
शयन किये जब विप्र समाजा । लागी तृषा निशा बिच राजा ॥ २ ॥
जल मंत्रित वह कुंभ उठावा । पीकर जल निज प्यास बुझावा ॥ ३ ॥

प्रातःकाल जागे मुनिराया । तदा कुंभ जलहीन, लखाया ॥ ४ ॥
कवन कीन्ह मंत्रित जल पाना । पूछन लगे परस्पर काना ॥ ५ ॥
जाना नृप द्वारा जलपाना । अहोभाग्य बल सर्व प्रधाना ॥ ६ ॥
यों कह कर कीन्हा प्रभुवन्दन । आया समय यदा कुरु नन्दन ॥ ७ ॥
तव नृप दक्षिण कूँख विदारी । निकसा सुत इक सुन्दर भारी ॥ ८ ॥
यह सुकुमार पलहिं अब कैसे । कहा वचन जब विप्रन ऐसे ॥ ९ ॥
तव आखण्डल वहाँ सिधाये । सबके सन्मुख वचन सुनाये ॥ १० ॥

दोहा- **मैं रक्षक तेरा अरे, मत रोवे सुकुमार ।**
यों कहकर निज तर्जनी, दीन्ही उस मुख डार ॥४०॥

चौ- भिन्न कुक्ष होवत भी राया । द्विज सुर कृपा मरण ना पाया ॥ १ ॥
कुछ दिन बाद नृपति युवनाशू । तपकर पायो पद अविनाशू ॥ २ ॥
राखा सब मिल मुनि तपधामा । त्रसदश्यु सुरपति सुत नामा ॥ ३ ॥
रावण आदि निशाचर जेते । मानत भय सबको सेते ॥ ४ ॥
सप्त द्वीप नवखंड विशाला । पालत महि त्रसदश्यु नृपाला ॥ ५ ॥
विष्णु यज्ञ नृप किये अपारा । देकर भूरि दक्षिणा द्वारा ॥ ६ ॥
द्रव्य मंत्र विधि मख यजमाना । ऋत्विजादि लखि वपु भगवाना ॥ ७ ॥
करहिं जहाँ तक सूर्य प्रकाशा । मान्धाता नृप क्षेत्र सुभासा ॥ ८ ॥
शश विन्दु की सुता सयानी । नाम विन्दुमति सब गुणखानी ॥ ९ ॥
उस संग कीन्हे नृपति विवाहू । जाये पुत्र तीन वह ताहू ॥ १० ॥

दोहा- **ज्येष्ठ पुत्र पुरुकुत्स जिन, अम्बरीष मुचुकुन्द ।**
पंचाशत कन्या भई, भाषत यों कवि वृन्द ॥४१॥

चौ- रहे सौभरी मुनि तपधारी । सब पुत्रिन वे पति स्वीकारी ॥ १ ॥
सौभरि नाम मुनि इक बारा । गये स्नान हित यमुन किनारा ॥ २ ॥
नीर बीच जब मुनि वर गयऊ । मीन राज मैथुन जहँ कियऊ ॥ ३ ॥
देख मुनी सब ज्ञान भुलाये । मान्धाता नृप पास सिधाये ॥ ४ ॥
माँगी कन्या एक मुनीशा । तब मुनि को लख वृद्ध महीशा ॥ ५ ॥
बोले हे रिषि बीच स्वयंवर । करहिं वरण वहि लेउ मुनीश्वर ॥ ६ ॥
यह सुनि रिषि मन कीन्ह विचारा । कम्पमान शिर वृद्ध अपारा ॥ ७ ॥
यही बात मन सोच नृपालू । बोले वचन मुझे इस कालू ॥ ८ ॥
अब मैं ऐसे रूप बनाऊँ । जो सुरनारिन के मन भाऊँ ॥ ९ ॥

नर तिय फिर क्यों ना वश होई । यों कहि रूप धरा मुनि सोई ॥ १० ॥

दोहा- **कीन्ह प्रवेश मुनीश तब, नृप कन्या आगार ।**
देखत ही सबने इन्हें, कीन्हा पति स्वीकार ॥४२॥

चौ- जब मुनि उनका चित्त लुभावा । तब उन आपस कलह बढ़ावा ॥ १ ॥
वदत परस्पर लखि मुनि रूपा । ये मम योग्य न तव अनुरूपा ॥ २ ॥
रिषि पुनि उन संग व्याह रचावा । निज मंत्रन बल भवन बनावा ॥ ३ ॥
नाना विध उपवन बिच भूषन । शय्या आसन वस्त्र विलेपन ॥ ४ ॥
शोभित पुष्पादिक उपहारा । कीन्ह रमण उन संग अपारा ॥ ५ ॥
मुनि गेहाश्रम देखि विशाला । चकित भये मान्धात नृपाला ॥ ६ ॥
सेवित विषय भोग सुख गेहू । तृप्ति भई नहि मुनि मन येहू ॥ ७ ॥
एक दिवस मुनि कीन्ह विचारा । मैं सब तप झष संग बिगारा ॥ ८ ॥
मीन प्रसंग देख वर जोरी । मुझ सम तापस की मति बोरी ॥ ९ ॥
ब्रह्म तेज अक्षुण्ण अपारा । तुच्छ बात ने अरे बिगारा ॥ १० ॥

दोहा- **मोक्ष कामि मानव सदा, तजे गृहस्थिन संग**
हरि भक्तन ते सर्वदा, करता रहे प्रसंग ॥४३॥

चौ- करहिं मुमुक्षुन निरजन वासा । राखहिं हरि चरणन की आसा ॥ १ ॥
अहो नीर लखि मीन प्रसंगा । इन पंचाशत नारिन संगा ॥ २ ॥
एक रूप ते रूप पचासा । करके मैं तप सकल विनासा ॥ ३ ॥
पायो संतति पाँच हजारा । तदपि न गयऊँ मनोरथ पारा ॥ ४ ॥
कर मुनि यो मन बीच विचारा । गये विपिन कर गृहस्थ किनारा ॥ ५ ॥
मुनिवर की पत्नी भी सारी । उनके पीछे विपिन सिधारी ॥ ६ ॥
वन बिच तप करि घोर अपारा । सुखा दियो निज तनु मुनि सारा ॥ ७ ॥
आह्वनीय निज अग्निन संगन । भये लीन पुनि मुनि हर चरणन ॥ ८ ॥
पति गति अवलोकित यों सारी । मुनि तिय भी पति लोक सिधारी ॥ ९ ॥
मान्धाता सुत वर अम्बरीशा । कहा तोर प्रति प्रथम महीशा ॥ १० ॥

दोहा- **पितामह युवनाश्व ने, वे सुत किय स्वकार ।**
यौवनाश्व उनके सुत, उन वर हरित कुमार ॥४४॥

चौ- मान्धाता कुल में ये तीनू । गोत्र प्रवर्तक भये कुलीनू ॥ १ ॥
पुरुकुत्स प्रति नागन अपनी । बहिन नर्मदा अर्पित कीनी ॥ २ ॥
वे उन संग रसातल गयऊ । वहँ गंधर्व अनेकन वधऊ ॥ ३ ॥

नागपति हो मुदित महाना । दीन्हो इन हेतू वरदाना ॥ ४ ॥
सुनहि चरित पुरुकुत्स ये तेरा । नसहिं सर्प भय उन वर मेरा ॥ ५ ॥
त्रसदस्यू उनकी तिन जाया । उन सुत नाम अरण्य कहाया ॥ ६ ॥
उनके सुत हर्यश्व कहाये । जिन सुत नाम अरुण बतलाये ॥ ७ ॥
अरुण सुपुत्र निबन्धन गाये । जिनके सुवन सत्यव्रत भाये ॥ ८ ॥
श्रवण कीन्ह हम गुरु मुख राया । यहि नृप नाम त्रिशंकु कहाया ॥ ९ ॥
पाकर गुरु मुख शाप नृपाला । भये यद्यपि यह चन्डाला ॥ १० ॥

दोहा- **विश्वामित्र प्रभाव ते, सुरपुर गये सदेह ।**
किन्तु वहाँ सुरवृन्द ने, कियो न इनसे नेह ॥४५॥

चौ- सुर वृन्दन ने मिल यह राया । स्वर्गपुरी ते तुरत गिराया ॥ १ ॥
किन्तु गाधिसुत निज बल द्वारा । स्तंभित किय नृप विना अधारा ॥ २ ॥
अब तक भी इस बीच अकासू । दीखत वह नृप करत प्रकासू ॥ ३ ॥
हरिशचन्द्र नृप सतव्रत धारी । इन त्रिशंकु सुत सभी पुकारी ॥ ४ ॥
कर निमित्त हरिचन्द महीशा । विश्वामित्र वसिठ मुनीशा ॥ ५ ॥
आड़ी वक पक्षी तनु धारा । कियो युद्ध बहुकाल अपारा ॥ ६ ॥
संतति हरिशचन्द्र ना पाई । यही हेतु चिन्तित मन माँई ॥ ७ ॥
सुन नारद उपदेश नृपालू । गयो शरण वह वरुण कृपालू ॥ ८ ॥
नाथ संतति यदि मैं पाऊँ । वहि सुत तोरे भेंट चढ़ाऊँ ॥ ९ ॥
जब नृप वचन कहे यों होले । एव मस्तु तब जलपति बोले ॥ १० ॥

दोहा- **जल पति की पाकर कृपा, पायो पुत्र नृपाल ।**
जासु नाम रोहित भयो, सुनु कुरु कुल पाल ॥४६॥

चौ- नृप समीप अब गये जलेशा । करो यज्ञ या नटो नरेशा ॥ १ ॥
बोले वचन तदा वह राजा । पशु प्रसूति गृह बीच विराज़ा ॥ २ ॥
नाथ यदा जब दस दिन बीतहिं । तब ही शुद्ध पशु यह होअहिं ॥ ३ ॥
दस दिन बाद वरुण पुनि आये । करो यज्ञ यों वचन सुनाये ॥ ४ ॥
बोले नृप प्रकटहिं पशु दन्ता । होअहिं मेध्य प्रभो उपरन्ता ॥ ५ ॥
जब पशु के मुख आये दन्ता । बोल जलपति सुनु नर कन्ता ॥ ६ ॥
करो यज्ञ दशन पशु आये । तब नृप पुनि यों वचन सुनाये ॥ ७ ॥
गिरहिं दूध के दन्त दयालू । करूँ यज्ञ प्रभु मैं उस कालू ॥ ८ ॥
गिरे दन्त पुनि वरुण सिधाये । नृप के प्रति वहि वचन सुनाये ॥ ९ ॥

आवहि पशु के नूतन दंता । करूँ यज्ञ अबहूँ नहि अंता ॥ १० ॥

दोहा- **आये नूतन दंत भी, पुनि जलपति नृप पास ।**
आकर के कहने लगे, मख का करो प्रकास ॥४७॥

चौ- युद्ध योग जब होवहिं बालक । करूँ तदा मख हे कुल पालक ॥ १ ॥
पुत्र स्नेह इमि बारम्बारा । वदत वरूण प्रति काल गुजारा ॥ २ ॥
कीन्ह प्रतीक्षा जल पति तासू । जो-जो नृप वर समय प्रकासू ॥ ३ ॥
पिता विचार जानि इत रोहित । लेकर धनु जिन प्राणन रक्षित ॥ ४ ॥
बीच विपिन वह तुरत सिधाया । समाचार यह जलपति पाया ॥ ५ ॥
कीन्हो नृप के रोग भयंकर । उदर बीच उस बढ़्यो जलंधर ॥ ६ ॥
सुनकर पिता जलोदर ग्रस्ता । गये ग्राम रोहित तनु त्रस्ता ॥ ७ ॥
जावत पंथ बिच मिले सुरेशा । कियो निषेध न जावहु देशा ॥ ८ ॥
सुन रोहित तू वचन हमारा । तीर्थ क्षेत्र बड फलद अपारा ॥ ९ ॥
करहीं तीर्थ भ्रमण जे कोई । भूमि परिक्रम सम फल होई ॥ १० ॥

दोहा- **यह सुनकर वापिस वह, कानन बीच सिधाय ।**
तीर्थ भूमि के भ्रमण में, दीन्हो, वर्ष गँवाय ॥४८॥

चौ- जब जब रोहित गेह सिधावे । पथ बिच सुरपति रोक लगावे ॥ १ ॥
वर्ष पंच तक इसी प्रकारा । कियो निवारण इन्द्र कुमारा ॥ २ ॥
षष्टम सम्वत्सर जब आवा । वारुणग्रस्त जनक दुख पावा ॥ ३ ॥
यो सुन जब निज गेह सिधाया । अजी गर्त द्विज पंथ लखाया ॥ ४ ॥
शुनश्शेप मध्यम सुत तासू । लेकर मोल गयो पित पासू ॥ ५ ॥
कर प्रणाम पिता प्रति दयउ । मुक्त रोग तब नृप वर भयउ ॥ ६ ॥
पुरुषमेध कर यज्ञ विशाला । पूजे वरुण तदा नरपाला ॥ ७ ॥
गाधितनय होता मख जेहू । अर्ध्वयू जमदग्नि कहेऊ ॥ ८ ॥
मुनि वशिष्ठ ब्रह्मापद पाये । मुनि अपास्य उद्गाता गाये ॥ ९ ॥
भये मुदित सुरपति मख माँही । दीन्हों कंचन रथ नृप ताँही ॥ १० ॥

दोहा- **शुनःशेप की गाथ नृप, आगे कहूँ सुनाय ।**
तिय समेत भूपाल का, धीरज लखि मुनिराय ॥४९॥

चौ- विश्वामित्र मुदित अति जाता । दीन्हों ज्ञान तुमोक्ष प्रदाता ॥ १ ॥
भूमि तत्व बिच निज मन लावा ॥ नीर तत्व बिच महि हिं मिलावा ॥ २ ॥
तेज तत्व बिच लाकर नीरा । तेज तत्वहीं कीन्ह समीरा ॥ ३ ॥

वात तत्व ही कीन्हेउ नाभा । नाभहिं अंहकार करि गाभा ॥ ४ ॥
अहंकार महतत्व मिलाया । एकीकरण कीन्ह इमि राया ॥ ५ ॥
ज्ञान कला बीचे करि ध्याना । पाछे सब नाशा अज्ञाना ॥ ६ ॥
यो सब बन्धन नृपति तजावा । निज स्वरूप हरि चरण समावा ॥ ७ ॥
रोहित के सुत हरित बखाने । हरित पुत्र नृप चम्पा जाने ॥ ८ ॥
चम्पापुरी बसायउ ये ही । तासु सुदेव विजय सुत तेही ॥ ९ ॥
उन सुत भरुक तासु वृक गाया । वृक सुत बाहुक नाम कहाया ॥ १० ॥

दोहा- **शत्रुन द्वारा हर लियो, जब इन नृप को राज ।**
भार्यासह वन में गये, त्यागा तनु महाराज ॥५०॥

चौ- जब रानी नृप चिता सिधाई । आये वहाँ और्व मुनिराई ॥ १ ॥
जान सगर्भा मुनि महारानी । कीन्ह निवारण सुमुखि सयानी ॥ २ ॥
महिषिहिं गर्भवती जब जानी । दीन्हो गरल अन्य नृप रानी ॥ ३ ॥
समय पाय गरल सह रानी । जायो पुत्र एक गुण खानी ॥ ४ ॥
सार्वभौम वह सगर नृपाला । खोदेउ जिन सुत सिन्धु विशाला ॥ ५ ॥
प्राप्त तेज वह और्व ऋषीशा । मारेउ ताल जंघ शक ईशा ॥ ६ ॥
हैहय बर्बर यवन संघारे । कीन्हे उन तनु विकृत सारे ॥ ७ ॥
केश सीस केतिक कटवाये । अर्धमुन्डि अपरन करवाये ॥ ८ ॥
श्मश्रुधर केतिक कचधारे । कर तनु नगन व वसन उतारे ॥ ९ ॥
केतिक सिर्फ लंगोट लगाये । केवल तनु पर वसन उडाये ॥ १० ॥

दोहा- **और्व ऋषि उपदेश ते, अश्वमेघ नृप कीन्ह ।**
पूजन कीन्ही अश्व जब, अश्व इन्द्र हर लीन्ह ॥५१॥

चौ- सुमति नाम नृप की वर नारी । रहे पुत्र जिन साठ हजारी ॥ १ ॥
नृप आज्ञा लेकर वे सारे । हय खोजन चहुँ ओर सिधारे ॥ २ ॥
महि खोदत जब गये इशानू । देखा अश्व कपिल के स्थानू ॥ ३ ॥
हय हर तस्कर यहँ पर आवा । मीलित लोचन ध्यान लगावा ॥ ४ ॥
मारहु-मारहु तजहु न येही । यों कह आयुध निजकर लेही ॥ ५ ॥
धाये मुनि कपिल के ऊपर । खोले नेत्र तदा वे मुनिवर ॥ ६ ॥
कीन्हों महापुरुष अपमाना । यही हेतु किय कोप महाना ॥ ७ ॥
प्रकटी कोपानल उन द्वारा । नृप पुत्रन का सब तनु जारा ॥ ८ ॥
वदत कई जन इमि प्रकारा । मुनि कोपानल नृप सुत जारा ॥ ९ ॥

किन्तु बात असंगत तेहू । सत्व मूर्ति विच भेद न येहू ।। १० ।।

दोहा- **निर्मित कीन्ही साँख्यमयि, विद्या जिन मुनिराय ।**
तरहिं मुमुक्षु जासु जग, उन मन भेद न आय ।।५२।।

चौ- उनके शत्रु मित्र समाना । भला बुरा वे काऊ न माना ।। १ ।।
असमंजस सुत नृप इक गाया । नारि केशिनी नृप की जाया ।। २ ।।
नृप सुत असमंजस जो गाया । प्रथम जनम जोगी बतलाया ।। ३ ।।
योग मार्ग वहँ विचलित होकर । लीन्हो जनम सगर के घर पर ।। ४ ।।
रही याद इन पूर्व कहानी । यो आत्मा असमंजस मानी ।। ५ ।।
सरजू तट खेलत जे बाला । डारत नीर मध्य तत्काला ।। ६ ।।
नृप समीप तब पुरजन आये । सुत गाथा उन सभी सुनाये ।। ७ ।।
पुरजन वच सुनकर भूपाला । दियो पुत्र हित देश निकाला ।। ८ ।।
तदा योगबल ते मृत बाला । लाकर दिखा दिये तत्काला ।। ९ ।।
गयो विपिन अब राजकुमारू । पिता स्नेह तज सब परिवारू ।। १० ।।

दोहा- **पुरी अयोध्या के जन, आवत लखि मृत बाल ।**
निज मन में विस्मित भये, पछताये भूपाल ।।५३।।

चौ- यज्ञ अश्व अब खोजन राया । अंशुमान निज पौत्र पठाया ।। १ ।।
निज पितृत्व मार्ग वह गयऊ । भस्म समीप अश्व निज लखऊ ।। २ ।।
अश्व समीप कपिल हरिं देखी । कर प्रणाम किय विनय विशेषी ।। ३ ।।
बोले अंशुमान इमि बानी । नाथ स्वरूप न धात पिछानी ।। ४ ।।
इस जग बीच अज्ञ मम जैसे । कपिल रूप पहिचानत कैसे ।। ५ ।।
तव माया मोहित तनुधारी । लखहिं न हिय स्थित हरिहिं अनारी ।। ६ ।।
जागृत सुपन अवस्था जे माँही । लखत पदारथ गुणमय आही ।। ७ ।।
सिर्फ सुसुप्ति अवस्था माँही । चहूँ ओर अज्ञान दिखाही ।। ८ ।।
यह सब जीव जगत के जेते । त्रिगुण बीच लीन ही रहते ।। ९ ।।
आप ज्ञान घन एक समाना । सनकादिक जे मुनि महाना ।। १० ।।

दोहा- **करत ध्यान वे सर्वदा, शुद्ध सुजान स्वरूप ।**
जान सकूँ मैं कवन विधि, पड़कर इस भवकूप ।।५४।।

चौ- शिक्षा ज्ञान प्रसारन कारन । धरी देह तुमने यह भगवन ।। १ ।।
वन्दन पुरुष पुराण तुम्हारी । करहूँ देव कपिल भयहारी ।। २ ।।
मोह भ्रान्त चित मानव जगके । माया सत्य समझ गृह भटके ।। ३ ।।

भगवन आज दर्श कर तोरा । मोह वन्ध दृढ़ छूटा मोरा ॥ ४ ॥
करी विनय इमि राजकुमारा । भये मुदित तव कपिल अपारा ॥ ५ ॥
बोले वचन अश्व पशु लेऊ । जाय पितामह प्रति तुम देऊ ॥ ६ ॥
दग्ध भये जो पितर तुम्हारे । गंग नीर विन तरहि न तारे ॥ ७ ॥
यों सुन वचन कीन्ह सिर वन्दन । कर परिक्रम असमंजसनन्दन ॥ ८ ॥
यज्ञ अश्व ले गेह सिधाये । कीन्ह पूर्ण मख नृप हय पाये ॥ ९ ॥
वाद अंशुमति प्रति दे राजू । गये सगर नृप वन तप काजू ॥ १० ॥

दोहा- **तजकर वन्धन सव वहँ, गुरु आज्ञा अनुसार ।**
परमगति पाई वह, तजकर यह संसार ॥५५॥

चौ- बोले कीर अंशुमति भारी । गंगाहित तप कीन्ह अपारी ॥ १ ॥
तप कृत देह अंशुमति त्यागी । तदपि भयो नहि वह फलभागी ॥ २ ॥
उनके पुत्र दिलीप कुमारा । तपकृत वह पर लोक सिधारा ॥ ३ ॥
भये पुत्र भागीरथ तासू । कीन्हो अति तप गंग प्रकासू ॥ ४ ॥
एक समय गंगा वहँ आई । करते तप जहँ पर नरराई ॥ ५ ॥
दे दरसन यों वचन सुनाया । मैं प्रसन्न वर माँगउ राया ॥ ६ ॥
गंगा उक्ति यों सुनकर राया । स्वाभिप्राय गंगा प्रति गाया ॥ ७ ॥
तव गंगा यो वचन सुनाया । गिरूँ गगन ते जव यहि राया ॥ ८ ॥
धारहिं कवन वेग मम भारी । जाऊँ अन्यथा भूतल सारी ॥ ९ ॥
कर पापी जन मुझमें स्नाना । त्यागहिं मम बीचे अघनाना ॥ १० ॥

दोहा- **इन पापन को हे नृप, तजूँ कहाँ पर जाय ।**
यह उपाय मुझ से कहो, सोच समझकर राय ॥५६॥

चौ- कहे भगीरथ अव नृप ज्ञानी । सुनो गंग तुम यह मम वानी ॥ १ ॥
साधुन अंग संग तव पापा ॥ दूर होहिं सव अपने आपा ॥ २ ॥
धारहि शिव तव वेग अपारा । ओतप्रोत जिन सव संसारा ॥ ३ ॥
यों कह तप कीन्हा वह शंकर । भये मुदित तव नृप पर ईश्वर ॥ ४ ॥
नृपति वचन सुनकर निज अंगा । धारी हरि पद पावन गंगा ॥ ५ ॥
भुवन पावनी गंग लिवाई । वायुवेग स्थित वह नर राई ॥ ६ ॥
आश्रम कपिल देव पर आये । भस्मिभूत जहँ पितर लखाये ॥ ७ ॥
वायु वेग रथ स्थित नरपाला । उन अनु धावत गंग विशाला ॥ ८ ॥
करती वह सव देशन पावन । सींचे जव नृप सगरन पुत्रन ॥ ९ ॥

ब्रह्मदंड आहत वे सारे । नीर स्पर्श ते स्वर्ग सिधारे ॥ १० ॥

दोहा— **गंगा सेवन जो करे, श्रद्धा के अनुसार**
क्यों ना स्वर्ग सिधारहिं, सब पापन को मार ॥५७॥

चौ- गंगा महिमा यह मैं गाई । इसमें कछु ना अचरज राई ॥ १ ॥
निज मन मुनी लगाकर जासू । पावहिं मुकति त्याग तनु यासू ॥ २ ॥
भागीरथ सुत श्रुत उन नाभा । जिन सुत सिंधु द्वीप अति आभा ॥ ३ ॥
सिन्धु द्वीप सुत जनु अयुताया । इन सुत ऋतुपर्ण कहाया ॥ ४ ॥
विद्या पत्र नलहिं इन दीन्ही । हय विद्या उनसे यह लीन्ही ॥ ५ ॥
इन सुत सर्वकाम बतलाये । जिन के पुत्र सुदास कहाये ॥ ६ ॥
इनके सुत गाये सौदासा । जो मदयन्ती के पति भासा ॥ ७ ॥
अपर मित्र सह नाम बखाना । यहि कल्माष याद भी माना ॥ ८ ॥
गुरु वशिष्ठ ते पाकर शापा । भये असंतति राक्षस पापा ॥ ९ ॥
बोले पांडव हे मुनिराया । गुरु मुख शाप नृपति क्यों पाया ॥ १० ॥

दोहा- **समझाकर सब तथ्य यह, मुझको आप सुनाउ ।**
नृप के सुनकर वचन यों,बोले अब मुनिराउ ॥५८॥

चौ- एक बार नृप विपिन सिधारा । वहँ पर एक निशाचर मारा ॥ १ ॥
भ्राता मरण देख घबराई । भागा जीव बचा उस भाई ॥ २ ॥
वह निज मन नृप पाप विचारा । सूद रूप धर नृप के द्वारा ॥ ३ ॥
आवा वहाँ रहन वह लागा । सोयउ अब सब विधि नृपभागा ॥ ४ ॥
भोजन हेत गुरू इक बारा । गये नृपति सौदास दुआरा ॥ ५ ॥
सूपकार नर माँस पकावा । धरा थाल गुरु सनमुख लावा ॥ ६ ॥
नर आमिष लख रहा न बोधा । दियो शाप गुरु रहेउ न बोधा ॥ ७ ॥
होउ निशाचर कहि इमि वानी । पुनि करतूत निशाचर जानी ॥ ८ ॥
तब गुरु द्वादश वार्षिक शापा । राखा निज मन कर परितापा ॥ ९ ॥
गुरु प्रति शाप देन इत राया । पुनि निज कर बिच नीर गहाया ॥ १० ॥

दोहा- **कियो निवारण तब वह, मदयन्ती नृप नारि ।**
तब लखि सब जग जीव मय, जिन पद जल दिय डारि ॥ ५९ ॥

चौ- पद कल्माष भये तब राया । अब वह राक्षस भाव गहाया ॥ १ ॥
एक बार तापस नर नारी । देखे वन बिच मिथुन प्रचारी ॥ २ ॥
अर्दित क्षुधा निशाचर राया । तापस द्विज को पकर दबाया ॥ ३ ॥

तव द्विज पत्नी वचन सुनाया । नहीं आप राक्षस नर राया ॥ ४ ॥
तुम इक्ष्वाकू वंशज होकर । करो नहीं ये पाप नृपति वर ॥ ५ ॥
तुम मदयन्ती के पति होकर । करहु अधर्म नहीं हे नृपवर ॥ ६ ॥
पुत्र कामना मम मन आई । देवहु रति अपूर्ण पति राई ॥ ७ ॥
यह नर तन सब अर्थन दाता । इन वधहीं सब अर्थ नसाता ॥ ८ ॥
यह द्विज शील गुणान्वित भारी । महापुरुष आराधन कारी ॥ ९ ॥
श्रेष्ठ ब्रह्म ऋषि यह द्विज गाया । तुम भी श्रेष्ठ राज ऋषि राया ॥ १० ॥

दोहा- **अरे धर्म विद् आपको, नहीं विप्र वधनीक ।**
त्यागो अपने वंश की, हे नृपवर मति लीक ॥६०॥

चौ- ब्रह्मवादि नहि पाप निसाना । क्यों तुम द्विज वध सम्मत माना ॥ १ ॥
यदि द्विज भक्षण की रुचि राऊ । इनते प्रथम मुझे तुम खाऊ ॥ २ ॥
इन बिन जीवन व्यर्थ हमारा । यों विलाप वह कीन्ह अपारा ॥ ३ ॥
किन्तु शाप मोहित सौदासा । व्याघ्र पशू सम द्विज किय ग्रासा ॥ ४ ॥
निज पति भक्षित देखि निशाचर । तदा कुपित भई सती भयंकर ॥ ५ ॥
बोली वचन निशाचर पापी । रे मति मन्द अधम पर तापी ॥ ६ ॥
मुझ कामार्दित का पति खाया । नार प्रसंग मरहि तू राया ॥ ७ ॥
यों सौदास हेतु दे शापा । कर अस्थिन संग्रह चुपचापा ॥ ८ ॥
द्विज पत्नी किय अनल प्रवेशा । गई निज पति संग पति प्रदेशा ॥ ९ ॥
द्वादश बरिस बाद इत राया । शाप रहित हो गेह सिधाया ॥ १० ॥

दोहा- **मैथुन हित उद्योग जब, कीन्ह नार संग आनि ।**
शाप ब्राह्मणी जान के, कियो निवारन रानि ॥६१॥

चौ- त्यागा नारी सुख इमि राया । याते वह संतति नहि पाया ॥ १ ॥
लखि वसिष्ठ नृप की अभिलाषा । मदयन्ती के गर्भ प्रकासा ॥ २ ॥
बरिस सात तक गरभाधानी । रहि मदयन्ती नृप की रानी ॥ ३ ॥
बाद वसिष्ठ ले पाथर मारी । उस मदयन्ती उदर विदारी ॥ ४ ॥
सुत निष्कासित गायउ अश्मक । तासु पुत्र कहलायउ मूलक ॥ ५ ॥
जो परिरक्षित नारिन द्वारा । यों वह नारी कवच पुकारा ॥ ६ ॥
क्षत्रि विहीन कीन्ह महि रामा । क्षत्र मूल भय मूलक नामा ॥ ७ ॥
मूलक नृप सुत दशरथ जाये । तासु ऐडविड सुत कहलाये ॥ ८ ॥
भये विश्व सह उनके अंगज । नृप खट्वाङ्ग विश्व सह देहज ॥ ९ ॥

दैत्यन द्वारा प्रार्थित राया । दैत्यन वध किय सरल उपाया ॥ १० ॥

दोहा- **वर हित जब बोले सुर, घटि युग निज वय जान ।**
आये नृप वर पुर विषै, स्थित होकर निज यान ॥६२॥

चौ- हरि चरणन विच चित्त लगाया । यह विचार कर निज मन राया ॥ १ ॥
राज्य व प्राण पुत्र निज नारी । लागत मोहिं न यह अति प्यारी ॥ २ ॥
किन्तु ब्रह्म कुल बहुत पियारा । हरि पद बिन नहिं हों निस्तारा ॥ ३ ॥
अन्य वस्तु नहि हरि बिन आछी । दूध त्याग जिमि पीवहिं छाछी ॥ ४ ॥
यह वर सुर कबहूँ ना देहीं । निज हिय स्थित हरिं लखहिं न येही ॥ ५ ॥
काम प्रपूरक सुर वर दाता । किन्तु मोक्ष पद नहीं प्रदाता ॥ ६ ॥
भरत खंड ही मोक्ष प्रदाता । सुरपुर केवल भोगन दाता ॥ ७ ॥
यह विचार नृप वर नहि मांगे । आये भरत खंड सुर त्यागे ॥ ८ ॥
गुण अवगुण संग तजि अज्ञाना । हरि चरणन बीचे चित आना ॥ ९ ॥
सूक्ष्म ब्रह्म मानत जिन संता । उन हरि वासुदेव लय अंता ॥ १० ॥

दोहा- **बोले शुक खट्वाङ्ग के, दीर्घ बाहु सुत जाय ।**
आगे चल करके यही, नृप दिलीप कहलाय ॥६३॥

चौ- दीर्घबाहु सुत भए रघुराया । उनते अज उन दशरथ जाया ॥ १ ॥
जाये दशरथ नृप सुतचारी । जो सुर प्रार्थित हरि अवतारी ॥ २ ॥
राम भरत लक्ष्मण ते छोटा । नाम शत्रुहन इति श्रुति जोटा ॥ ३ ॥
तत्वदर्शि जिन चरित बखाना । श्रवण कीन्ह पूरव तुम नाना ॥ ४ ॥
कहुँ संक्षेप तदपि मैं राई । सुन तुम राम चरित सुखदाई ॥ ५ ॥
पिता अर्थ जिन राज तजाया । गये विपिन बीचे रघुराया ॥ ६ ॥
शूर्पणखा रावण की भगिनी । विपिन बीच विरुपित कीन्ही ॥ ७ ॥
सीता हरण भयो यहि हेतू । होकर क्रुद्ध राम रघुकेतू ॥ ८ ॥
सागर ऊपर बान्धा सेतू । हने लंक पति पुत्र समेतू ॥ ९ ॥
खल दव दह वहीं अवधेसा । होंहि मुदित हम पर सह सेसा ॥ १० ॥

दोहा- **जाकर विश्वामित्र मख, लक्ष्मण सह श्री राम ।**
ताड़कादि वध कर कियो, पूरण ऋषि के काम ॥६४॥

चौ- पाछे सीय स्वयम्बर आये । दूत तीन सौ शिव धनु लाये ॥ १ ॥
वह धनु इक्षू दंड समाना । उठा लियो देखत नृप नाना ॥ २ ॥
लीला युत खींची उन डोरी । राम मध्य वह शिव धनु तोरी ॥ ३ ॥

शील रूप गुण वय अनुरूपा। जीत स्वयंवर सिया समेता ॥ ४ ॥
अवधपुरी जब राम सिधाये। परसुराम पथ बीच लखाये ॥ ५ ॥
कीन्हो दर्प दूर उन रामा। आये सीता सह निज धामा ॥ ६ ॥
नृप अभिषेक समय शुभकारी। कीन्ह विमात विघन अतिभारी ॥ ७ ॥
पितु आज्ञा निज शीश चढ़ाई। लक्ष्मण सहित सीय रघुराई ॥ ८ ॥
राज्य त्याग वे विपिन सिधाये। यथा योगि निज प्राण तजाये ॥ ९ ॥
शूर्पनखा दसकंधर भगिनी। रूप विरूप विपिन उन कीनी ॥ १० ॥

दोहा- **खर दूषण त्रिशिरादिक, सहस चतुर्दश मार।**
कीन्ह वास दंडक वन, पंचवटी मंझधार ॥६५॥

चौ- मृगवपु धर मारीच सिधावा। राम बाण हनि भूमि गिरावा ॥ १ ॥
रावण हरण कीन्ह जब सीता। देख जटायु तदा भयभीता ॥ २ ॥
दशकंधर संग युद्ध रचावा। राम काज निज प्राण तजावा ॥ ३ ॥
जब अपरोक्ष राम बैदेही। लेकर गयो अधम खल तेही ॥ ४ ॥
तद् वियोग दुःखित निज काया। तिय संगिन दुख दर्श कराया ॥ ५ ॥
लक्ष्मण सह वे कृपण समाना। इत उत विचरत दीन निधाना ॥ ६ ॥
दग्ध आरुणी सुवन समाना। हन कवन्ध पुनि अति बलवाना ॥ ७ ॥
सुग्रीवादिक संग अपारा। कीन्ह मित्रता का व्यवहारा ॥ ८ ॥
एक बान ते मारा बाली। भ्रात वधू जिन निज घर डाली ॥ ९ ॥
सीता स्थिति जानी कपि द्वारा। तीर सिन्धु जा डेरा डाला ॥ १० ॥

दोहा- **किये वहाँ उपवास दिन, तीन सिन्धु के तीर।**
तदपि न सागर आयऊ, तब क्रुद्धित रघुवीर ॥६६॥

चौ- क्रोधित राम देखि भयभीता। आवा पूजन हस्त गृहीता ॥ १ ॥
बोला सागर हे भगवाना। आदि पुरुष मैं तुमहु न जाना ॥ २ ॥
मैं जड़मति तुम जगत अधीश्वर। जाउ यथेच्छ मुझे तुम तरकर ॥ ३ ॥
जीतो रावण सहित कुटुम्बा। करो प्राप्त सीता जगदम्बा ॥ ४ ॥
हो अहिं प्रति बन्धक नहिं नीरा। तदपि वचन मम सुनु रघुवीरा ॥ ५ ॥
निज कुल यश विस्तारक हेतू। बांधहु मुझ पर प्रभु इक सेतू ॥ ६ ॥
अब सब कपि प्रभु पास बुलाये। विविध अद्रि अरु तरु मंगवाये ॥ ७ ॥
सागर ऊपर बांधा सेतू। नील अंजनीसुत कपिकेतू ॥ ८ ॥
संग विभीषण दर्शित लँका। कियो प्रवेश राम रण बंका ॥ ९ ॥

जाकर धूम मचाई भारी । वानरेन्द्र सेना मिल सारी ॥ १० ॥

दोहा- **कोष व कोष्ठ प्रकोष्ठ गृह, सभा भवन प्राकार ।**
पुरी द्वार छज्जे सभी, फाटक अन्नागार ॥६७॥

चौ- पक्षि पालिका स्थान विहारा । घेरे वानर आन अपारा ॥ १ ॥
चारों ओर चतुष्पथ फोरे । हेम कलश वेदी ध्वज तोरे ॥ २ ॥
सरिता जल गजकुल जिमि मर्दित । दीखत वह पुर कपिकुल अर्दित ॥ ३ ॥
जब यह दशा दशानन देखी । भेजे भट बलवान विशेषी ॥ ४ ॥
अक्ष धूम्र दुर्मुख अतिकाया । कुंभ निकुंभ विकम्पन आया ॥ ५ ॥
आवा कुंभकरण बलधारी । नारान्तक व सुरान्तक लारी ॥ ६ ॥
युद्ध काज दशकंठ पठावा । पुत्र प्रहस्त समर बिच आवा ॥ ७ ॥
लीन्ह हस्त असि चाप विशाला । शूल शक्ति शर तोमर भाला ॥ ८ ॥
प्राश व गदा भुशुन्डी मुगदर । धाये कीशन ऊपर निशिचर ॥ ९ ॥
इत सुग्रीव मरुत सुत नीला । अंगद ऋक्ष पनस बलशीला ॥ १० ॥

दोहा- **जाम्वन्त लक्ष्मण वली, तारा पिता सुषीण ।**
चले गंध मादन युत, सब रण नीति प्रवीण ॥६८॥

चौ- अंगदादि सेनापति सारे । तरु गिरि श्रृङ्ग गदा कर धारे ॥ १ ॥
धाये रावण सेना ऊपर । प्रतिद्वन्दी वन हने निशाचर ॥ २ ॥
निज चमु नाश सुना निज काना । तव दशकंधर अति रिसियाना ॥ ३ ॥
रथ चढ़कर आयो जहँ रामा । हत मंगल रावण बलधामा ॥ ४ ॥
प्रेरित शक्र सूत रथलावा । चढ़े राम निज इष्ट मनावा ॥ ५ ॥
वाणी शर दशकंधर ऊपर । मारे रघुपति क्रोधित होकर ॥ ६ ॥
नरक तुल्य है अधम निशाचर । लायो मम अपरोक्ष सियहिं हर ॥ ७ ॥
उस फल का मैं मजा चखाऊँ । सीस काट तव धरनि गिराऊँ ॥ ८ ॥
मैं कालान्तक सुनो दसानन । तू खल कामी अधम अपावन ॥ ९ ॥
यों बहुधा देकर धिक्कारी । साधे राम धनुप शर भारी ॥ १० ॥

दोहा- **लागे वाण कराल जब, दशकंधर हिय आय ।**
परा धरणि ऊपर तब, शोणित वमन कराय ॥६९॥

चौ- समर भूमि जब निज पति देखा । धूली धूसर तनु विशेपा ॥ १ ॥
मंदोदरि आदिक सब नारी । करने लगी रुदन अति भारी ॥ २ ॥
निज पति पुत्रन बन्धुन देखी । शोक मगन पुर नार विशेपी ॥ ३ ॥

करने लगी रूदन सब भारी । हे रावण हे नाथ पुकारी ॥ ४ ॥
मरण प्राय हम तुम बिन साँई । अब लंका किन शरण सिधाई ॥ ५ ॥
कामदेव वश होकर कामी । सीता हरण कियो तुम स्वामी ॥ ६ ॥
जाना सीय न तेज प्रभावा । यही हेतु दुर्दिन यह आवा ॥ ७ ॥
हे कुल नन्दन तोर विहीनां । भई लंक विधवा हम दीना ॥ ८ ॥
सुस्वर कोकिल कंठी सारी । यों विलाप दुःखित कियभारी ॥ ९ ॥
रामाज्ञा पा रावण भाई । पुनि सब मृतक कर्म किय जाई ॥ १० ॥

दोहा- **वन अशोक आश्रम स्थित, कृश वियोग दुख युक्त ।**
शिंशप तरु वर मूल पर, दीन राम अनुरक्त ॥७०॥

चौ- देख दयाकर राम कृपाला । सीता ग्रहण कीन्ह तत्काला ॥ १ ॥
देकर राज विभीषण हेतू । आयुप कल्प अन्त रघुकेतू ॥ २ ॥
चढ़कर चाले पुष्पक याना । सह सुग्रीव लखन कपि नाना ॥ ३ ॥
लोकपाल अरु देवन द्वारा । कुसुम वृष्टि पथ कीन्ह अपारा ॥ ४ ॥
निजपुर यदा राम प्रभु आये । भरत दशा सुनि अति दुःख पाये ॥ ५ ॥
सुरभिमूत्र अन्न यव भोजी । वल्कल वसन जटा सिरयोजी ॥ ६ ॥
सुनि महि शयिन भरत ही रामा । भये दुखित अति वे गुण धामा ॥ ७ ॥
राम आगमन सुनकर काना । भये भरत मन मुदित महाना ॥ ८ ॥
संग अमात्य पुरोहित पौरा । सीस पादुका धर प्रभु ओरा ॥ ९ ॥
नन्दिग्राम ते भरत सिधाये । ढोल मृदंग अनेक बजाये ॥ १० ॥

दोहा- **ब्रह्म घोष उच्चारण, ब्रह्मवादि मुख कीन्ह ।**
रथ गज अश्व पदाति-सब, वार वधू संग लीन्ह ॥७१॥

चौ- चिह्न राजसी छत्र व चामर । प्रभु आगे गवने खुश होकर ॥ १ ॥
राम समीप भरत जब आये । धरी पादुका पुर प्रभु पाये ॥ २ ॥
प्रेम मगन मन मुदित अपारी । गिरे अनुज पद अवध विहारी ॥ ३ ॥
राम उठाय अनुज उर लावा । नयन नीर ते स्नान करावा ॥ ४ ॥
विप्रन नमन कीन्ह पुनि रामा । रामहिं पुरजन कीन्ह प्रणामा ॥ ५ ॥
राम चिरागत लखि पुरवासी । नाचत कुसुम वृष्टि किय खासी ॥ ६ ॥
राम पादुका भरत उठाई । चामर लीन्ह दशानन भाई ॥ ७ ॥
रवि सुत आकर व्यजन उठावा । श्वेत छत्र हनुमान गहावा ॥ ८ ॥
लिये शत्रुहन चाप तुणीरा । सीता तीर्थ कमण्डलु नीरा ॥ ९ ॥

वर्म ऋक्षपति अंगद द्वारा । धारण कीन्ही खड्ग करारा ॥ १० ॥

दोहा- **स्तूयमान वन्दीजनन, एवं विध भगवान ।**
सोभित पुष्पक यान में, उडुगण चन्द्रसमान ॥७२॥

चौ- कीन्ह प्रवेश तदन्तर रामा । उत्सव सहित पुरी अभिरामा ॥ १ ॥
राजभवन जब राम सिधाये । निज मातन पद सीस नवाये ॥ २ ॥
राम सदृश लक्ष्मण सह सीता । कीन्ह नमन अति होय विनीता ॥ ३ ॥
मातन उन निज अंक बिठावा । प्रेमाश्रुत ते सबन्हि सिंचावा ॥ ४ ॥
त्यागा शोक मात सुत आये । उर आनन्द सकल सुख पाये ॥ ५ ॥
कुलगुरु वृद्ध वसिष्ठ वहाँ पर । राम जटा हटवाई आकर ॥ ६ ॥
श्रुति सिन्धुन अब नीर मँगावा । कियो राम अभिषेक सुहावा ॥ ७ ॥
एवं कृत सिर स्नान सुवासू । अलंकार मालादिक भासू ॥ ८ ॥
राज सुचिह्न अलंकृत रामा । सोभित भ्रातन सह निज वामा ॥ ९ ॥
आश्रम वर्ण तदा गुणवन्ता । रत निज धर्म रटत भगवन्ता ॥ १० ॥

दोहा- **राम पिता सम पुरजन, पाले सभी प्रकार ।**
पुरजन का भी राम पर, पिता समाँ व्यवहार ॥७३॥

चौ- भये राम जब अवध नृपाला । त्रेता बिच सत्युग सम काला ॥ १ ॥
वर्ष व द्वीप सिन्धु गिरि राई । सरिता वन इच्छित फलदाई ॥ २ ॥
आधि व व्याधि जरा दुख ग्लानी । भय अरु शोक प्रजा नहि मानी ॥ ३ ॥
कोई अनिच्छित मृत्यु न पाई । एक तियाव्रत धर रघुराई ॥ ४ ॥
राज ऋषिन सम समय बितावा । गृहस्थ धर्म लोकन सिखलावा ॥ ५ ॥
प्रेम व शील नम्रता द्वारा । भाव विदा सिय सभी प्रकारा ॥ ६ ॥
निज वश कीन्हा पति मन भारी । नृप पति अब शुक गिरा उचारी ॥ ७ ॥
कीन्ह राम मख सब घटवासी । पूजे सब सुरमय अविनासी ॥ ८ ॥
होता प्रति प्राची दिशि दीन्ही । याम्य समर्पित ब्रह्महिं कीन्ही ॥ ९ ॥
पश्चिम दीन्ह अध्वर्यु हेतू । सामग प्रति उत्तर रघुकेतू ॥ १० ॥

दोहा- **शेष भूमि आचार्य के, दीन्ह दक्षिणा राम ।**
महि देवन को पूजकर, दीन्हा द्रव्य तमाम ॥७४॥

चौ- भूषण वसन राम निज पासा । सीता मंगल सूत व वासा ॥ १ ॥
शेष द्रव्य सब विप्रन हेतू । दीन्ह मुदित हो रघुकुल केतू ॥ २ ॥
लखि वात्सल्य राम का सारे । ऋत्विज प्रभुपति वचन उचारे ॥ ३ ॥

ऐसी कवन वस्तु जग माँई । जो तुमसे हमने ना पाई ॥ ४ ॥
काम नही कछु यह धन आवे । माया पथ बीचे भटकावे ॥ ५ ॥
यही हेतु वापिस यहि लेहू । हमका इस पर नहि कुछ नेहू ॥ ६ ॥
करहु काम किन्तु इक ताता । कर प्रवेश हिय विच जगत्राता ॥ ७ ॥
नासउ तुम अज्ञान हमारा । करो काम यह राम हमारा ॥ ८ ॥
जय ब्रह्मण्य देव श्री रामा । उत्तम श्लोक हे पूरण कामा ॥ ९ ॥
यों कह सब धन वापिस दीन्हा । सब मिल रामहिं वन्दन कीन्हा ॥ १० ॥

दोहा- **जिज्ञासु हित लोकवृत, एक बार श्री राम ।**
निशा बीच धर गूढ़ वपु, विचरे अवध तमाम ॥७५॥

चौ- एक जगह यक रजक अपारी । क्रोधित हो निज तिय फटकारी ॥ १ ॥
हे तिय परघर जावन वारी । रखहुँ न मैं तोहिं किसी प्रकारी ॥ २ ॥
मैं ना तिय लोभी वह रामा । राखी जो सिय गत परधामा ॥ ३ ॥
मैं ना सेवन करूँ तुम्हारा । सुनै वचन यह राम करारा ॥ ४ ॥
तब लोकापवाद भयभीता । त्यागी गर्भवती उन सीता ॥ ५ ॥
वाल्मीकि आश्रम वह आई । जाये दो सुत कुश लव भाई ॥ ६ ॥
वाल्मीकि मुनिवर के द्वारा । जात कर्म आदिक किय सारा ॥ ७ ॥
अंगद चित्रकेतु दो भ्राता । लक्ष्मण धाम पुत्र इति जाता ॥ ८ ॥
भरत मांडवी दो सुत जाये । तक्ष व पुष्कल नाम कहाये ॥ ९ ॥
शत्रुहन श्रुति कीरति द्वारा । सुत सुबाहु श्रुतसेन पुकारा ॥ १० ॥

दोहा- **रामानुज कर दिग्विजय, हन गंधर्व अपार ।**
उनका सब धन हरण कर, भेजा नृप आगार ॥७६॥

चौ- मारा मधुसुत लवण निशाचर । लक्ष्मण अनुज शत्रुहन जाकर ॥ १ ॥
पाछे मधुवन बीच बसाई । मथुरानाम पुरी सुखदाई ॥ २ ॥
मुनि प्रति सीता निज सुत देकर । किय प्रवेश महि प्रभु पद ध्याकर ॥ ३ ॥
सीता जब पाताल सिधाई । समाचार यह सुन रघुराई ॥ ४ ॥
रोका शोक राम मति द्वारा । तदपि सियागुण सुमिर अपारा ॥ ५ ॥
सहेउ वियोग न किसी प्रकारा । यो नरतिय संग दुखद अपारा ॥ ६ ॥
पुनि धर ब्रह्मचर्यव्रत भारी । अग्निहोत्र किय राम खरारी ॥ ७ ॥
हे नृप बरस सहस दश तीना । रहे राम नृपपद आसीना ॥ ८ ॥
बाद भक्त हिय जिन पद धारे । त्यागअवध निज धाम पधारे ॥ ९ ॥

वरणा रघुपति चरित अपारा । वाल्मीकि कवियन मुख द्वारा ॥ १० ॥

दोहा- **है ये सिर्फ विडम्बना, लीला राम अपार ।**
केवल वरणन इन करी, निज मति के अनुसार ॥७७॥

चौ- खर दूषण त्रिशिरादिक बाली । वधे राम दशकंध कुचाली ॥ १ ॥
सेतु बन्ध सागर पर राया । जानहु यह केवल उन माया ॥ २ ॥
सब विधि द्वंद रहित रघुराई । कपि उन कैसे करहिं सहाई ॥ ३ ॥
नृपति सभाबिच जिन यश नाना । गावत अधुना मुनी सुजाना ॥ ४ ॥
नाकपाल वसुपाल अपारा । जिन पद वन्दत बारम्बारा ॥ ५ ॥
उन पद वन्दउँ बारम्बारा । जासु दुरित सब करहिं किनारा ॥ ६ ॥
जहँ पर योगी योग सहारे । जाकर कबहुँ न यहाँ सिधारे ॥ ७ ॥
कोसल देश निवासी सारे । उन प्रभु संग उस धाम सिधारे ॥ ८ ॥
सुनहिं जे राम चरित यह पावन । छूटहिं कर्म बन्धते राजन ॥ ९ ॥
बोले नृप हे शुक मुनिज्ञानी । निज भ्रातन प्रति राम सुजानी ॥ १० ॥

दोहा- **निज आत्मा से करत वे, किस प्रकार व्यवहार ।**
प्रजा भ्रात का भी मुने, उन प्रति कैसा प्यार ॥७८॥

चौ- बोले श्री शुक्र मुनि विज्ञानी । सुनो नृपति पुनि राम कहानी ॥ १ ॥
एक समय वे राम नरेशा । विश्व विजय हित निज आदेशा ॥ २ ॥
देकर स्वयं प्रजाहित दरसन । कृत ईक्षण निज पुरि अरु परिजन ॥ ३ ॥
गज मद नीर सुगंधित सारी । अवध राजपथ सिंचित सारी ॥ ४ ॥
मानो अवध रामहीं देखी । भई मदमत्ता अतिव विशेषी ॥ ५ ॥
सभा भवन पुर द्वार विहारा । सुर मंदिर गृह नृप आगारा ॥ ६ ॥
कंचन कलश पताकन सोहा । कदली पूग स्तंभ मन मोहा ॥ ७ ॥
कुसुम सुमाला वसन अपारा । दरपन चित्र स वन्दन वारा ॥ ८ ॥
द्वार द्वार तोरण वर भारी । इमि नगरी सोभित वह सारी ॥ ९ ॥
पुरजन लेकर भेट विशिष्टा । जाकर राम समीप सनिष्टा ॥ १० ॥

दोहा- **करत प्रार्थना सब मिल, हे प्रभु जगदाधार ।**
आदि रूप सूकर धरि, कीन्ह भूमि उद्धार ॥७९॥

चौ- वहि अब राम रूप भगवाना । करें अवधपुर जन कल्याना ॥ १ ॥
अवध बजारू राम जब आवे । दरसन काज प्रजा जन धावे ॥ २ ॥
राजमार्ग लखि राम नरेशू । पुरुजन हरपित होत विशेसू ॥ ३ ॥

चढ़ि मंदिर गृह भवन अटारी । पुष्प वृष्टि करती तिय भारी ॥ ४ ॥
करहिं प्रवेश भवन निज रामा । विद्रुम वज्र जड़ित वह धामा ॥ ५ ॥
स्तंभावलि वैडूर्य सुहावन । स्फटिक भीति मरकत मणि आंगन ॥ ६ ॥
सोभित चित्रावलि अति सुन्दर । शय्या आसन पट्ट मनोहर ॥ ७ ॥
मणिमय झालर सहित विताना । साधन भोग जहाँ पर नाना ॥ ८ ॥
धूप दीप पुष्पादिक सुरभित । अलंकार वस्त्रादिक मंडित ॥ ९ ॥
सब विधि सोभित वह नृप मंदिर । करहिं वास सिय राम जहाँ पर ॥ १० ॥

दोहा- **करत रमण इस भवन में, बीते बरिस अनेकि ।**
जिन पद पंकज सर्वदा, निजहिय धरे विवेकि ॥८०॥क
आतमा राम जितेन्द्रिय, पुरुष शिरोमणि राम ।
मर्यादा निज धर्म की, पालन करत तमाम ॥८०॥ ख

चौ- बोले नृप से शुक मुनि ज्ञानी । कुश सुत नाम अतिथि हम जानी ॥ १ ॥
उन सुत निषध व उन नभ गावा । नभ सुत पुंडरीक कहलावा ॥ २ ॥
पुत्र क्षेमधन्वा इम जाया । इन सुत देवानीक बताया ॥ ३ ॥
इन सुत जाये पुत्र अनेहा । पुंडरीक सुत पायेउ येहा ॥ ४ ॥
उन सुत बल जिन स्थल अवतंसा । स्थल सुत वज्रनाभ रवि अंशा ॥ ५ ॥
तासु स्वगण उन विधृति जाया । पुत्र हिरण्यनाभ इन पाया ॥ ६ ॥
जैमिनी शिष्य भयउ यह राया । पुनि यह योगाचार्य कहाया ॥ ७ ॥
याज्ञवल्क्य ऋषि कोसल वासू । कीन्ह शिष्यता स्वीकृत जासू ॥ ८ ॥
हिय की ग्रंथी छेदन हारी । परम सिद्धि की देवन वारी ॥ ९ ॥
ब्रह्मयोग शिक्षा उन पाई । कनक नाम सुत पुष्प कहाई ॥ १० ॥

दोहा- **पुत्र सुवन ध्रुव संधि उन, पुत्र सुदरसन मान ।**
जिनते अविर्ण अरु, शीघ्र पुत्र दो जान ॥८१॥

चौ- शीघ्र सुवन मरु नृपति उचारी । करहिं कलाप ग्राम तप भारी ॥ १ ॥
आवहिं जब अंतिम कलि अंशा । प्रकटावहिं यहि पुनि रवि वंशा ॥ २ ॥
मरु के पुत्र प्रसुश्रुत माना । नृपति संधि उन सुवन बखाना ॥ ३ ॥
संधि सुपुत्र अमर्षण नामा । इन सुत सहस्वान कहलाया ॥ ४ ॥
उन तिय विश्व साह्व सुत जाया । जिन प्रसेनजित पुत्र बताया ॥ ५ ॥
तासु सुवन तक्षक इति नामा । भयो वृहद्बल तक्षक धामा ॥ ६ ॥
अभिमन्यु नृप पिता तुम्हारे । मारा यह उन युद्ध करारे ॥ ७ ॥

ये इक्ष्वाकु कुल भूपाला । गुजर गये हे नृप इस काला ॥ ८ ॥
होवहि आगे जे नरपाला । उनके नाम सुनो इस काला ॥ ९ ॥

दोहा- **पुत्र वृहद्धल वृहद्रण, तासु उरुक्रिय जान ।**
वत्स वृद्ध जिनते भये, उन प्रति व्योम वखान ॥८२॥

चौ- उन सुत भानु व तासु दिवाका । नृप सहदेव जासु रणबाँका ॥ १ ॥
सुत सहदेव भये बृहदश्वा । भानुमान उन उन प्रतिकश्वा ॥ २ ॥
नृप सुप्रतीक तदन्तर आया । उन मरुदेव एक सुत जाया ॥ ३ ॥
शुभनक्षत्र सुवन इन गावा । पुष्कर नाम सुवन उन आवा ॥ ४ ॥
अन्तरिक्ष सुत उन इन सुतपा । पुनि अमित्रजित भये महीपा ॥ ५ ॥
जिन सुत वृद्धराज सब गावा । वर्हि नाम सुत ये नृप पावा ॥ ६ ॥
नृप वर्हि सुत नाम कृतंजय । पुत्र रणंजय उन उन संजय ॥ ७ ॥
संजय भवन शाक्य सुत जाया । शाक्य सुवन शुदोदन गाया ॥ ८ ॥
शुद्धोदन सुत लांगल नामा । सुत प्रसेनजित लांगलधामा ॥ ९ ॥
उन सुत क्षुद्रक रणक तदन्तर । उनके पुत्र सुरथ अति सुन्दर ॥ १० ॥

दोहा- **भूप सुरथ के पुत्र का, जानो नाम सुमित्र ।**
इक्ष्वाकु नृपवंश का , चलहिं न अग्र चरित्र ॥८३॥क
इस सुमित्र के बाद में, कलियुग में यह वंश ।
हो समाप्त चाले नहीं, कौरव कुल अवतंश ॥८३॥ख

चौ- बोले व्यास पुत्र मुनिराया । नृप इक्ष्वाकु सुवन निमिगाया ॥ १ ॥
यज्ञारंभ कियो यह भूपा । व्रण वशिष्ठ कर ऋत्विज रूपा ॥ २ ॥
वदत वशिष्ठ सुनो नर राया । शक्र वरण हम पूरव पाया ॥ ३ ॥
इन्द्र यज्ञ कर वापिस आऊँ । पाछे मख तुमको करवाऊँ ॥ ४ ॥
यों कह मुनि सुरपति मख आये । भए चुपचाप नृपति दुख पाये ॥ ५ ॥
यह तनु नृप क्षण भंगुर माना । उचित विलम्ब नहीं उन जाना ॥ ६ ॥
जब लगि गुरु वापिस नहि आये । तब लगि सत्र नृपति रचवाये ॥ ७ ॥
शक्र यज्ञ करि गुरु जब आये । मख दीक्षित तब नृपहिं लखाये ॥ ८ ॥
निमि अन्याय देख गुरु राई । दीन्ह शाप नृप निमि पहँ आई ॥ ९ ॥

दोहा- **माना माना मम कथन तुम, यहि हित देह तुम्हार ।**
पतन होवहिं हे नृप, सुन यह शाप हमार ॥८४॥

चौ- गुरु के वचन सुने यों भारी । तब निमि नृप भी गिरा उचारी ॥ १ ॥

तुम फँसि लोभ धर्म ना जाना। गये गेह पर तजि यजमाना ॥ २ ॥
यहि हेतु गहु शाप हमारा। होहिं पतन तनु गुरू तुम्हारा ॥ ३ ॥
यो गुरु शाप दीन्ह नरपाला। त्यागा निज तनु उन तत्काला ॥ ४ ॥
बाद उर्वसी दरसन हेतू। मित्रावरुण स्खलित भये रेतू ॥ ५ ॥
धरेउ कुंभ बिच जाकर येहू। भए बाद वशिष्ठ युँ तेहू ॥ ६ ॥
इत मुनि गंध द्रव्य निमि देहा। स्थापित कीन्ह सभी करि स्नेहा ॥ ७ ॥
पाछे आगत सुरन सुनाई। बोले वचन सभी मुनिराई ॥ ८ ॥
सुनो अमरगण हो तुम राजी। करो देह जीवित निमि आजी ॥ ९ ॥
एवमस्तु तब सब सुर बोले। तब निमि उठे नयन निज खोले ॥ १० ॥

दोहा- **बोले अब मुनि सुरन ते, निमि नृप परम उदार।**
मुझे देह बन्धन नहीं, चाहिय किसी प्रकार ॥८५॥

चौ- शीलवान मुनि निज मति अनुसारी। करत निछावर चरण मुरारी ॥ १ ॥
करत ध्यान वे प्रभु चरणन का। नसहिं एक दिन यह तन सबका ॥ २ ॥
इस भय से होकर भयभीता। करत नहीं वे इसकी चिन्ता ॥ ३ ॥
यही हेत चाहत नहीं देहू। चाहत मुक्त सदा यह येहू ॥ ४ ॥
भयप्रद शोक सकल दुखदाता। करत प्रेम नहिं यो मुनि गाता ॥ ५ ॥
यथा नीर बिच मीन विचारी। लखत मृत्यु सर्वत्र दुखारी ॥ ६ ॥
जहँ दखो वहँ इस तनु हेतू। दीखत त्यों यहि मौतहि मोतू ॥ ७ ॥
बोले सुर नृप की सुनबानी। बिन शरीर के यह नृप ज्ञानी ॥ ८ ॥
प्राणिन के नयनों के ऊपर। करहि वास निज इच्छा पाकर ॥ ९ ॥
कर निवास वहँ सूक्ष्म शरीरा। चिन्तहिं हरिपद तजि सब पीरा ॥ १० ॥

दोहा- **ये ही एक उपाय है, अन्य नहीं तदबीर।**
तनु बन्धन या ते नहीं, जीवित रहे शरीर ॥८६॥

चौ- अब बिन नृप जब प्रजा लखाई। नृपति देह मुनि कीन्ह मथाई ॥ १ ॥
प्रकटा तासू एक कुमारा। भयो जन्म यों जनक पुकारा ॥ २ ॥
भये वैदेह विदेहज नाते। गाये मिथिल वे मंथन जाते ॥ ३ ॥
येही मिथिला नगर बसाया। पुत्र विदेह उदावसु गाया ॥ ४ ॥
भयो नन्दिवर्धन सुत जासू। पुत्र सुरेत भये घर तासू ॥ ५ ॥
पुत्र बृहद्रथ इन घर जाता। जिनके महावीर्य सुत ताता ॥ ६ ॥
उन सुत सुधृति तासु धृष्टकेतू। इन हर्यश्व बाद मरू येतू ॥ ७ ॥

बाद प्रदीपक मरू सुत जाता । उन सुत कृतिरथ भए नरपाता ॥ ८ ॥
देवमीड इनके सुत गाये । जिनके सुत विश्रुत नाम कहाये ॥ ९ ॥
इनके पुत्र महाधृति नामा । भए कृतिरात महाधृति धामा ॥ १० ॥

दोहा- **सदन नृपति कृतिरात के, महारोम सुत आय ।**
स्वर्णरोम इन सुत भये, ह्रस्वरोम इन जाय ॥८७॥

चौ- इनते भये सीरध्वज राजा । हाँकी महि जे जब मख काजा ॥ १ ॥
सीराग्रत सीता तब जाता । सीरध्वज यहि हेतु कहाता ॥ २ ॥
सीरध्वज नृप कुशध्वज जाये । धर्मध्वज जिनके सुत गाये ॥ ३ ॥
धर्मध्वज नृप की महारानी । जाये दो सुत अति गुणखानी ॥ ४ ॥
कृतध्वज मितध्वज जिनकर नामा । केशीध्वज भए कृतध्वज धामा ॥ ५ ॥
सुत खाँडिक्य मितध्वज जाये । भानुमान केशिध्वज पाये ॥ ६ ॥
सुत शतद्युम्न नाम इन राजा । इनते शुचि इनते सनद्वाजा ॥ ७ ॥
ऊर्ध्वकेतु इनके सुत भयउ । इन सुत अज इन पुरुजित जनऊ ॥ ८ ॥
पुत्र अरिष्टनेमि इन गेहा । तासु श्रुतायु सुपार्श्व क येहा ॥ ९ ॥
इन सुत नृपति चित्ररथ जाता । जिन सुत क्षेमर्द्धि सुनु ताता ॥ १० ॥

दोहा- **इनके सुत समरथ भये, भये सत्यरथ तासु ।**
पाये उपगुरु पुत्र ये, इन उपगुप्त प्रकासु ॥८८॥

चौ- इन सुत वस्वनन्त कहलाये । जिन सुत युयुध नाम इति गाये ॥ १ ॥
इनके पुत्र सुभाषण माना । इनते श्रुत जिन सुत जय जाना ॥ २ ॥
जय सुत विजय विजय ऋत जाये । ऋत सुत हव्यवीत इति गाये ॥ ३ ॥
वीतहव्य सुत धृति कहलाये । धृति अंगज बहुलाश्व बताये ॥ ४ ॥
इनते कृति नृपवर विख्याता । जिनते महावशी नृप जाता ॥ ५ ॥
ये सब मैथिल नृपति उचारे । विद्या आत्म विशारद सारे ॥ ६ ॥
योगेश्वर की पाकर दाया । गृही होत सब द्वंद्व तजाया ॥ ७ ॥
बोले श्री शुकदेव कृपाला । गाये रवि वंसी नरपाला ॥ ८ ॥
पावन वंश चन्द्र अब राई । सुनो प्रेम से चित्त लगाई ॥ ९ ॥
प्रकटे ऐलादिक इस वंशा । गात जासु यश सभी प्रसंसा ॥ १० ॥

दोहा- **आदि पुरुष नारायण, नाभि सरोरुह धात ।**
अत्रि सुत इनके भये, पिता समों गुण जात ॥८९॥

चौ- अत्रि दृगू अमृत मय जाये । नाम सोम वह सुत कहलाये ॥ १ ॥

विप्र औपधि उडु नभगामी । कीन्हे कल्पित विधि इन स्वामी ॥ २ ॥
जीते सोम भुवन यह तीना । पूजे हरि नृपसूप अधीना ॥ ३ ॥
गुरु पत्नी तारा जिन नामा । जवरन हरन कीन्ह यह सोमा ॥ ४ ॥
कीन्ह याचना जव गुरु आकर । दीन्ही उनप्रति नहीं सुधाकर ॥ ५ ॥
इस परिस्थिति सुर दानव माँहीं । भयो घोर संग्राम अथाही ॥ ६ ॥
शुक्राचार्य बृहस्पति माँही । सदा द्वेपता जो चलि आही ॥ ७ ॥
यही हेतु विधु असुरन संगा । लीन्ह पक्ष तजि सुरन प्रसंगा ॥ ८ ॥
सर्वभूत गण सह शिवशंकर । लीन्ह पक्ष गुरु का अभयंकर ॥ ९ ॥
सर्वदेव गण सह सुरपाला । भये सहायक गुरु तत्काला ॥ १० ॥

दोहा- **भये परस्पर युद्ध तव, तारा हित विकराल ।**
आङ्गीरस द्वारा तदा, प्रार्थित विधि तत्काल ॥९०॥

चौ- आकर सोम वहुत फटकारा । पाछे गुरु प्रति दीन्ही तारा ॥ १ ॥
गर्भवती तारा जव जानी । वोले वचन तदा गुरु ज्ञानी ॥ २ ॥
दुष्प्रज्ञे तू क्षेत्र हमारे । कियो गर्भ स्थापित पर द्वारे ॥ ३ ॥
इसे मंदमति शीघ्र तजाऊ । करूँ भस्म ना मति भय खाउ ॥ ४ ॥
मैं भी सुत कामी सुनु तारा । मानूँ नहि यह दोष तुम्हारा ॥ ५ ॥
तू देवी अरु नारी नाते । निरदोषी मानी हम याते ॥ ६ ॥
तव अति लज्जित होकर तारा । त्यागा कनक समान कुमारा ॥ ७ ॥
देख बृहस्पति विधु ललचाये । यह मम तव नहि इति झगड़ाये ॥ ८ ॥
अव सुरमुनि मिल पूछी तारा । किन्तु वचन वह नहीं उचारा ॥ ९ ॥
तदा कुपित हो वदत कुमारा । कहती क्यों ना कपट तुम्हारा ॥ १० ॥

दोहा- **निज कुकर्म दुष्टे मुझे, जल्दी से वतलाउ ।**
प्रकट करो निज कपटता, मत तू देर लगाउ ॥९१॥

चौ- तव ब्रह्मा जाकर एकान्ता । पुछी उन जाकर गुरुकान्ता ॥ १ ॥
वोली वचन तदा वह धीरे । सोमपुत्र यह होय अधीरे ॥ २ ॥
सोम हेतु वह सुत विधि दीन्हा । नाम करण तासू बुध कीन्हा ॥ ३ ॥
चन्द्र पुत्र पा मुदित अपारा । पुनि गुरु गेह गई वह तारा ॥ ४ ॥
बुध ते इलापुत्र इक आया । पुरूरवा जिन नाम कहाया ॥ ५ ॥
इन्द्र भवन नारद मुख द्वारा । गीयमान गुण रूप अपारा ॥ ६ ॥
ऐल नृपति का सुनकर भारी । स्मर शर अर्दित उर्वशि नारी ॥ ७ ॥

मित्रावरुण शाप वह पाकर । पृथ्वी तल नृप पास सिधाकर ॥ ८ ॥
नृपति समीप धीर धर ठाढ़ी । देख लालसा नृप की बाढ़ी ॥ ९ ॥
मोहित हो नृप उस पर भारी । उर्वशि प्रति निज गिरा उचारी ॥ १० ॥

दोहा- **सब प्रकार स्वागत करूँ, बैठो मेरे पास ।**
क्या सेवा तेरी करुँ, कैसे खड़ी उदास ॥९२॥

चौ- करो रमण भामिनि मम संगा । रहे तोर मम प्रेम अभंगा ॥ १ ॥
बोली तदा उर्वशी वानी । हे सुन्दर नृपवर गुणखानी ॥ २ ॥
ऐसी कवन नार जग माँही । तुम्हे देख जो ना ललचाही ॥ ३ ॥
तदपि एक नियम मम राई । नहीं भंग अब तक न जुदाई ॥ ४ ॥
यह दो मम ऊरणक सुनु राजन । करो सदा इनका प्रति पालन ॥ ५ ॥
घृत भक्षण हे वीर हमारा । रमण काल तजि अंग तुम्हारा ॥ ६ ॥
वस्त्रहीन देखूँ ना तोहीं । एते वचन देउ तुम मोहीं ॥ ७ ॥
एव मस्तु तब कहि नरपाला । बोले उर्वशि प्रति उस काला ॥ ८ ॥
हे उर्वशि नरलोक विमोहू । ऐसो कवन जो सेव न तोहू ॥ ९ ॥
घर आवत लक्ष्मी जिन त्यागी । जानो वह नर बड़ हतभागी ॥ १० ॥

दोहा- **यों कह कर वह ऐल नृप, उस रमणी के संग ।**
देवादिक उद्यान में, कीन्हो रमण प्रसंग ॥९३॥

चौ- करत रमण बीते बहुकाला । उर्वशि संग मुदित नरपाला ॥ १ ॥
उत सुरपुर बीचे सुरपाला । बिन उर्वशि लखि भवन विशाला ॥ २ ॥
निज समीप गंधर्व बुलाये । उर्वशि लेवन तुरत पठाये ॥ ३ ॥
वे गंधर्व निशा बिच आये । भागे उर्वशि मेष चुराये ॥ ४ ॥
निज पुत्रन क्रन्दित सुन काना । फटकारे नृप उर्वशि नाना ॥ ५ ॥
मानत जो निज को अति वीरा । निकसेउ किन्तु नपुंस अखीरा ॥ ६ ॥
ऐसो पति पावत जो नारी । चहूँ ओर वह मरी विचारी ॥ ७ ॥
सब प्रकार बँधा कर आसा । राखी मैं यह नृप निज पासा ॥ ८ ॥
किन्तु आज इन दस्युन मोरे । कीन्हे हरण सुवन वर जोरे ॥ ९ ॥
किन्तु अरे ये नपुंसक राऊ । शयन करत डरपोक स्वभाऊ ॥ १० ॥

दोहा- **ऐसी जो मैं जानती, रहती नहिं इस पास ।**
कहे वचन यों उरवसी, भय कर हिय उच्छ्वाँस ॥९४॥

चौ- वचन बाण वेधित अब राया । निशा बीच नगन उठ धाया ॥ १ ॥

ले निज खड्ग गयो वह जहँवा । ठाढ़े उरणक सह गंधर्वा ॥ २ ॥
देखा उत गंधर्व नृपाला । तजे मेष कर अति उजियाला ॥ ३ ॥
ले उन मेष फिरे नरपालू । लखा उरवसी नगन उजालू ॥ ४ ॥
वचन भंग ते उरवसि रानी । गइ सुरलोक त्याग नृप ज्ञानी ॥ ५ ॥
शयन भवन पहुँचे इतराई । वहाँ उरवशी नहीं लखाई ॥ ६ ॥
तब तो विह्वल हो दुखियारा । उन्मत सम महि फिरा विचारा ॥ ७ ॥
फिरत फिरत बीते बहुकाला । पहुँचे कुरुक्षेत्र नरपाला ॥ ८ ॥
वहाँ उरवशी नृपहिं लखाई । बोला वचन तदा घबराई ॥ ९ ॥
उत मति जाउ आउ इत जाया । केहि काज तुम मुझे तजाया ॥ १० ॥

दोहा- **मुझको तजकर उरवशी, गई यदि तू दूर ।**
त्यागू अपनी देह को, सुन ले वचन जरूर ॥९५॥

चौ- खावहिं गीध व वृक तनु मोरा । तजूँ संग ना उरवशि तोरा ॥ १ ॥
बोली तदा उरवशी बानी । धरो धीर हे नृप नादानी ॥ २ ॥
तुम हो पुरुष अरे सुन राजा । मरण हेत मत करो तकाजा ॥ ३ ॥
होवत क्रूर स्वभावत जाया । प्रिय साहस दर्मष अदाया ॥ ४ ॥
स्वल्प स्वार्थ हित पति सुत घाती । कुल कलंकिनी भी बन जाती ॥ ५ ॥
त्यक्त सौहृदा पुँश्चलि नारी । नव नव पति हेरत यह सारी ॥ ६ ॥
इन संग सत्य नहीं व्यवहारा । सुनो नृपति सत वचन हमारा ॥ ७ ॥
एक वर्ष बीतहिं जब राऊ । एक रात मम संग बिताऊ ॥ ८ ॥
होअहिं मुझसे पुत्र तुम्हारे । सुनो वचन यह सत्य हमारे ॥ ९ ॥
उर्वशि गर्भवती नृप जानी । निज पुर गये कहे शुक ज्ञानी ॥ १० ॥

दोहा- **एक वर्ष उपरान्त पुनि, कुरुक्षेत्र में जाय ।**
उर्वशि के संग एक निशि, कीन्ह रमण नर राय ॥ ९६॥

चौ- बाद उर्वशी नृप से कहऊ । हे नृप तुम गंधर्वन भजऊ ॥ १ ॥
वे प्रसन्न होकर तव काजू । देअहिं मोहि अरे नर राजू ॥ २ ॥
उर्वशि वचन तदा सुन राया । कियो काम जो उर्वशि गाया ॥ ३ ॥
होकर मुदित तदा गंधर्वा । अग्निस्थालि नृप प्रति दई सर्वा ॥ ४ ॥
समझ उर्वशी उसको राई । विचरन लगा तदा वन जाई ॥ ५ ॥
अग्नि स्थालि समझ पुनि तेही । गयो गेह धर विपिन अनेही ॥ ६ ॥
त्रेतायुग जब हे नृप आवा । वेदत्रयी नृप हिय प्रकटावा ॥ ७ ॥

बाद नृपति स्थाली स्थल आये। शमी गर्भ चलदल तहँ पाये ॥ ८ ॥
देख तेहि अरणी दो राई। उर्वशि लोक हेतु रचवाई ॥ ९ ॥
अधर अरणि उर्वशि उन मानी। उत्तर अरणि नृपति निज जानी ॥ १० ॥

दोहा- **मध्य काष्ठ को पुत्र सम, निज हिय कीन्ह विचार।**
मन्थन करने नृप लगे, वेद मन्त्र उचार ॥९७॥

चौ- अगनी प्रकट भई उस काला। कीन्हो जब मंथन नरपाला ॥ १ ॥
पुत्र रूप नृप ने वह माना। कर रुचि उर्वशि लोक सुजाना ॥ २ ॥
पाछे उन अग्निन के द्वारा। हरि मख कीन्हो नृपति उदारा ॥ ३ ॥
सतयुग प्रथम एक ही वेदा। सर्ववाङ्मय प्रणव अभेदा ॥ ४ ॥
देव एक नारायण गावा। अग्निवर्ण भी एक बतावा ॥ ५ ॥
हे नृप जब त्रेता मुख आवा। वेद त्रयी पुरुरव प्रकटावा ॥ ६ ॥
पाछे अग्नि प्रजा के द्वारा। नृप गंधर्वन लोक सिधारा ॥ ७ ॥
गर्भ उर्वशि सुत नृप जाये। आयुश्रुत सत्यायु कहाये ॥ ८ ॥
रय अरु विजय व जय जिन नामा। ये षट् सुत भय नृपवर धामा ॥ ९ ॥
श्रुत के पुत्र भये वसु माना ॥ सुत सत्पायु श्रुतंजय जाना ॥ १० ॥

दोहा- **एक संज्ञ रय के सुत, भये अमित जय गात।**
भीम विजय के सुत भये, काँचन उनसे जात ॥९८॥

चौ- काँचन सुत होत्रक गुणवाना। भये जह्नु उन तपोनिधाना ॥ १ ॥
जिन अंजलि गंगाकिय पाना। इन सुत नृपति पूरु बलवाना ॥ २ ॥
नाम वलाक पुत्र पुरुराया। उन सुत अजक तासु कुरु गाया ॥ ३ ॥
चार पुत्र कुश नृपवर जाये। वे कुशाम्बु मूर्तय वसु गाये ॥ ४ ॥
पुत्र चतूरथ भए कुश नाभा। पुत्र कुशाम्बु गाधि अति आभा ॥ ५ ॥
सत्यवती जिन सुता सयानी। रूपवती अति अरु गुण खानी ॥ ६ ॥
कीन्ह याचना मुनि ऋचीका। सुता योग्य नृप लखे न नीका ॥ ७ ॥
तव ऋचीक प्रति वदत नृपालू। सुनो मुनीश्वर दीन दयालू ॥ ८ ॥
मम कन्या की यदि रुचि तोहीं। सहस श्याम श्रुति हय देउ मोहीं ॥ ९ ॥

दोहा- **चन्द्र किरण सम श्वेत जो, होय मुनि इकसार।**
एक एक श्रुति श्याम जिन, ऐसे अश्व हजार ॥९९॥

चौं- देहु मुनीश्वर लाकर मोहीं। मिलहिं सत्यवति तव यह तोहीं ॥ १ ॥

नृप मत मान तदा मन भाये । वरुणान्तिक मुनि हय ले आये ॥ २ ॥
लेकर अश्व दिये मुनि ताहू । सत्यवती संग कीन्ह विवाहू ॥ ३ ॥
निज पत्नी सासू के द्वारा । पुत्र हेत प्रर्थित इक बारा ॥ ४ ॥
कर निर्माण वे चरू मुनीश्वर । गये स्नानहित सरिता ऊपर ॥ ५ ॥
निज चरुते पुत्री चरु नीका । पुत्री चरु ते निज चरु फीका ॥ ६ ॥
कर विचार माता इत मन में । विनिमय कीन्ह तदा चरु उनने ॥ ७ ॥
सत्यवती का चरु वह लीन्हा । निज चरु सत्यवती प्रति दीन्हा ॥ ८ ॥
पाछे स्नान कीन्ह मुनि आये । विनिमय चरु लखि वचन सुनाये ॥ ९ ॥
कियो कामना सतवती सुन्दर । घोर दंड धर सुत हो तव घर ॥ १० ॥

दोहा- **हे सुकुमारि होअहीं, ब्रह्मज्ञानी तव भ्रात ।**
बोली सत्यवती तदा, सुनो वचन मम कान्त ॥१००॥

चौ- मोरे पुत्र नहीं हो ऐसो । कहा मुनीवर तुमने जैसो ॥ १ ॥
सत्यवती प्रार्थित मुनिराई । बोले तब यों वचन सुनाई ॥ २ ॥
हे प्रिय यदि तव यही विचारा । होअहिं पौता घोर तुम्हारा ॥ ३ ॥
चरु ते सत्यवती सुत पावा । सो जमदग्नि नाम कहावा ॥ ४ ॥
नदी कौशिकी जो अति पावन । भई सत्यवती परम सुहावन ॥ ५ ॥
रेणु सुता रेणुका जाई । जमदग्नि संग वह परणाई ॥ ६ ॥
वसुमदादि सुत मुनिवर जाये । इन बीचे लघु राम कहाये ॥ ७ ॥
वासुदेव अंशी यह रामा । प्रकटे जमदग्नि मुनिधामा ॥ ८ ॥
निःक्षत्रिय कीन्ही महि सारी । सुवन रेणुका इक्किस बारी ॥ ९ ॥
कीन्हे क्षत्रिन पाप अपारा । कियो दूर खल हनि महि भारा ॥ १० ॥

दोहा- **इन क्षत्रिन ने राम का, कीन्हा कवन कसूर ।**
हे मुनिवर यह गाथ सब, मुझसे कहो जरूर ॥१०१॥

चौ- कवन पाप किय क्षत्रि विचारे । जेहि कारण इन वंश उजारे ॥ १ ॥
बोले मुनी सुनो कुरु भ्राता । कार्तवीर्य अर्जुन विख्याता ॥ २ ॥
हैहय अधिप रहेउ यह राया । दत्तात्रय मुख जिन वर पाया ॥ ३ ॥
दत्तात्रय पूजन कर राई । सहस भुजा उनते यह पाई ॥ ४ ॥
तेज वीर्य यश अति बलवन्ता । शत्रुन प्रति दुर्धर्ष अनन्ता ॥ ५ ॥
अणिमादिक सिद्धि सब नाना । अव्याहत गति पवन समाना ॥ ६ ॥
एक समय नारिन संग राजा । गे रेवा जल क्रीड़ा काजा ॥ ७ ॥

निज भुज नदी नीर अवरोधा । रावण नाम तदा बड़बोधा ॥ ८ ॥
कर दिग्विजय वहाँ पर आवा । शिव पूजन हित शिविर रचावा ॥ ९ ॥
जल प्लावित लखि निज शिव मंदिर । धावा अर्जुन पर दशकंधर ॥ १० ॥

दोहा- **युद्ध हेत उद्यत हुआ, लंकापति जिस काल ।**
त्योहीं अर्जुन ने उसे , पकड़ लियो तत्काल ॥१०२॥

चौ- अर्जुन बाँध दशानन लावा । नारिन आगे नाँच नचावा ॥ १ ॥
निजपुर वन्द कियो दशकन्धर । संग्रह भवन बीच जिमि वन्दर ॥ २ ॥
कर अति विनय तदा दशकंधर । हो निर्मुक्त गयो वह निजपुर ॥ ३ ॥
एक समय अर्जुन नरपाला । निज सेना संग लेय विशाला ॥ ४ ॥
मृगया काज विपिन विच गयऊ । जमदग्नि आश्रम पथ अयऊ ॥ ५ ॥
सेना सहित नृपति सत्कारा । कीन्हो मुनि सुरभी के द्वारा ॥ ६ ॥
देख पराक्रम सुरभी मैया । की अभिलाष तदा नृप गैया ॥ ७ ॥

दोहा- **निज दूतन को भेजकर, वल पूर्वक वह गाय ।**
लेकर के निजपुर गये, पाछे वह नर राय ॥१०३॥

चौ- अर्जुन गमन कियो निज धामा । आये इत निज आश्रम रामा ॥ १ ॥
तासु दुष्टता सुनकर सारी । अहि सम कीन्हो क्रोध अपारी ॥ २ ॥
घोर परसु धनुवर्म उठाये । अति दुर्धष नृपति अनु धाये ॥ ३ ॥
ऐण चर्म अम्बर धनुधारी । सीस जटा परसायुध भारी ॥ ४ ॥
देख राम को यो नरपाला । मुनि महि अक्षौहिणी विशाला ॥ ५ ॥
अश्वपत्ति हस्ती रथ भारी । गदा शक्ति असिशर धनुधारी ॥ ६ ॥
उन प्रति प्रेरित कीन्ह नृपाला । देख राम वह सेन विशाला ॥ ७ ॥
क्रोधित होय तदा अति भारी । एक राम सब सेन सँहारी ॥ ८ ॥
जिन ऊपर इन कीन्ह प्रहारा । छिन्न भुजा उरु कंध कुठारा ॥ ९ ॥
सूत सहित वाहन हत अवनी । गिरे चर्म ध्वज चाप विहानी ॥ १० ॥

दोहा- **निज सेना लखि नाश नृप, कर मन क्रोध अपार ।**
धनुष पंचशत कर गहि, प्रति धनु युग शर धार ॥१०४॥

चौ- संगर बीच स्वयं वह आवा । राम सीस पर वाण चलावा ॥ १ ॥
तदा राम निज बाणन द्वारा । काट दिये नृप के धनु सारा ॥ २ ॥
अब अर्जुन तरु गिरी उठावा । प्रबल सवेग राम पर धावा ॥ ३ ॥
पाछे राम परसु के द्वारा । सिरभुज काट नृपति महि डारा ॥ ४ ॥

अयुत पुत्र नृप के भंय खाई । भाजि गये पितु मृतक लखाई ॥ ५ ॥
ले अब वत्स सहित गौ रामा । आये पिता पास निज धामा ॥ ६ ॥
पुनि सब कर्म पिता प्रति कहेउ । सुन जमदग्नि अति दुख लहेउ ॥ ७ ॥
बोले तदा राम सन बानी । सुनो राम तुम अति गुणखानी ॥ ८ ॥
यह तुम पाप कीन्ह अति भारी । सर्व देवमय नृप वधकारी ॥ ९ ॥
हम ब्राह्मण क्षमता के द्वारा । पाई पूज्यता जगत अपारा ॥ १० ॥

दोहा- **इस क्षमता द्वारा द्विज, लोक गुरु कहलात ।**
अन्तकाल हरि धाम, बिन श्रमही मिल जात ॥१०५॥

चौ- प्रभाहीन सोभित रवि नाँही । क्षमाहीन लक्ष्मी नहिं पाही ॥ १ ॥
क्षमाहीन नर पर भगवाना । हो न मुदित वे कृपा निधाना ॥ २ ॥
कृत अभिषेक नृपति वधकारी । द्विजवध ते भी अघ अति भारी ॥ ३ ॥
यही हेतु तुम हरि पद ध्याऊ । कर तीरथ निज पाप छुड़ाऊ ॥ ४ ॥
पा आदेश पिता के रामा । गवने तीर्थ क्षेत्र हरि धामा ॥ ५ ॥
एक वर्ष बीते उपरन्ता । आये निज आश्रम भगवन्ता ॥ ६ ॥
गई रेणुका गंगा तट पर । एक बार जलहित सुनु कुरुवर ॥ ७ ॥
कृत क्रीड़ा गंधर्वन राया । वहाँ अप्सरा संग लखाया ॥ ८ ॥
लगी विलोकन उनकी लीला । भूली मख वेला मति शीला ॥ ९ ॥
उस गंधर्व राज के ऊपर । गयो तासु मन भी कुछ खिंचकर ॥ १० ॥

दोहा- **बाद काल अति क्रम लखि, कलश मध्य भर नीर ।**
मुनी शाप शङ्कित वह, गई मुनी के तीर ॥१०६॥

चौ- मुनि समीप वह कलश रखाई । कृतअञ्जली स्थित सुनु कुरु राई ॥ १ ॥
इसका मुनि मानस व्यभिचारा । जान कुपित हो वचन उचारा ॥ २ ॥
हे पुत्रो मोरे वच सुनहू । इस पापिन का वध तुम करहू ॥ ३ ॥
उन सब जनक वचन ना माना । माता वध उन उचित न जाना ॥ ४ ॥
पुनि संबोधित कर मुनि रामा । कहे वचन उनते वध कामा ॥ ५ ॥
पिता प्रभाव राम मन चीन्हा । माता सह भ्रातन वध कीन्हा ॥ ६ ॥
होकर मुदित पिता अब बोले । माँगो सुत वर तुम अनमोले ॥ ७ ॥
बोले राम मुदित यदि ताता । जीवित होय मात मम भ्राता ॥ ८ ॥
किन्तु न स्मृति यह उन मन आये । यहि वर माँगहु मैं मन भाये ॥ ९ ॥
एवमस्तु बोले मुनिराई । उठे कुशल माता सह भाई ॥ १० ॥

दोहा- यह स्मृति भी उन ना रहीं, मारा हमको राम ।
शयन करत ज्यों नर उठे, त्यों उठ गये तमाम ॥१०७॥

चौ- तप अरु वीर्य प्रभावा अपारा । जानत प्रथम पिता का सारा ॥ १ ॥
यहि हित राम सुहृद्वध कीन्हा । माँग बाद वर जीवन दीन्हा ॥ २ ॥
अयुत पुत्र अरजुन उत सारे । देख पिता वध दुखी अपारे ॥ ३ ॥
एक बार आश्रम ते रामा । गये भ्रात संग वन कुछ कामा ॥ ४ ॥
वाद वैर साधन के काजू । आये नृप सुत जहँ मुनि राजू ॥ ५ ॥
होम शाल बीचे मुनिराई । बैठे भजन समाधि लगाई ॥ ६ ॥
रामहीन आश्रम जब पाया । मुनि सीस उन काट गिराया ॥ ७ ॥
राम मात होकर अति दीना । कीन्ह याचना नम्र अधीना ॥ ८ ॥
किन्तु एक दुष्टज नहि मानी । मुनि सिर काट भजे अघखानी ॥ ९ ॥
तदा रेणुका दुखित अपारा । होकर राम हे राम पुकारा ॥ १० ॥

दोहा- राम राम हे राम, तात यहाँ पर आउ ।
यह करुणा क्रन्दन सुना, राम विपिन दुख दाउ ॥१०८॥

चौ- आये आश्रम संग निज भ्राता । देख पिता वध अति दुख जाता ॥ १ ॥
शोक विमोहित वचन उचारे । अहो तात तुम स्वर्ग सिधारे ॥ २ ॥
हम सबको तुम यहीं तजाया । कर विलाप यो अति दुखदाया ॥ ३ ॥
पिता देह भ्रातन को सौंपा । कर धर परसु कीन्ह अति कोपा ॥ ४ ॥
क्षत्र अन्त मन कीन्ह विचारा । गये राम माहिष्मति द्वारा ॥ ५ ॥
अयुत पुत्र अरजुन के सारे । कर अति कोप राम ललकारे ॥ ६ ॥
काटे बाद राम उन सीसा । कियो ढेर सम महा गिरीसा ॥ ७ ॥
नदी घोर वहि शोणित भारी । पापिन प्रति जो भयद अपारी ॥ ८ ॥
पिता मरण कारण ही साँचा । क्षत्रि विनाश उचित उन जाँचा ॥ ९ ॥
क्षत्रि विहीन कीन्ह महि सारी । सुनो परीक्षित इक्किस बारी ॥ १० ॥

दोहा- नव हृद शोणि नीर भर, पंचक क्षेत्र स्यमन्त ।
पिता सीस धड़ से लगा, पूजे उन भगवन्त ॥१०९॥

चौ- सर्व देव मय जो निज आत्मा । पूजे मख द्वारा परमात्मा ॥ १ ॥
पूर्व दिशा होता प्रति दीन्ही । ब्रह्मा याम्य राम कर लीन्ही ॥ २ ॥
अध्वर्यु प्रति पश्चिम रामा । उद्गाता उत्तर गुणधामा ॥ ३ ॥
विदिशा अन्य हेतु सँभलाई । मध्य दिशा कश्यप मुनिराई ॥ ४ ॥

आर्यावर्त दीन्ह उपदृष्टा । कर यों दान कीन्ह अघनष्टा ॥ ५ ॥
अव सुरसति कर अवभृथ स्नाना । भये सुसोभित भानु समाना ॥ ६ ॥
पाछे वे जमदग्नि मुनीपा । मय संकल्प और स्मृति रूपा ॥ ७ ॥
पाये तनु उन पूजित रामा । गवने मुनि मंडल मुनि धामा ॥ ८ ॥
आगामी अन्तर जब आवे । परसुराम भी वहाँ सिधावे ॥ ९ ॥
मुनि मंडल स्थित होय अपारा । करहिं वेद का वे विस्तारा ॥ १० ॥

दोहा- **हे नृपति ये आज भी, न्यस्त दंडमति शान्त ।**
गिरि महेन्द्र के ऊपरे, करत भजन एकान्त ॥११०॥ क
यों श्री हरि भृगुवंश में, लेकर के अवतार ।
दुष्ट नृपन का नाश कर, हरण कीन्ह भू भार ॥११०॥ ख

चौ- गाधीनृपति तनय सब लायक । विश्वामित्र भये जिमि पावक ॥ १ ॥
कर तप जिन क्षत्रीपन त्यागा । ब्रह्म तेज पाये बड़ भागा ॥ २ ॥
विश्वामित्र सुवन शत जाये । मध्यम सुत मधुछंद कहाये ॥ ३ ॥
यही हेतु इनके सुत सारे । मधुछन्दा के नाम पुकारे ॥ ४ ॥
विश्वामित्र नृपति के द्वारा । सुनश्शेप ही सुत स्वीकारा ॥ ५ ॥
शुनश्शेप गाथा हम राई । हरिश्चन्द्र मख बीच सुनई ॥ ६ ॥
विश्वामित्र महा नरराया । मख पशु बन्धन ते छुड़वाया ॥ ७ ॥
गाधीवंश बीच यहि ताता । तापस देवरात विख्याता ॥ ८ ॥
पाछे शत सुत पास बुलाये । उन प्रति उनने वचन सुनाये ॥ ९ ॥
ज्येष्ठ भ्रात मानो तुम येहू । राखो इससे परम सनेहू ॥ १० ॥

दोहा- **सुनकर विश्वामित्र वच, उन सुत बड़ उञ्चास ।**
मानी पतनी उनकी बात ना, तब वे भये उदास ॥१११॥

चौ- पाछे विश्वामित्र अपारा । क्रोधित होकर वचन उचारा ॥ १ ॥
जो तुम मोरी बात न मानी । होउ म्लेच्छ तुम हे नादानी ॥ २ ॥
पाछे लघु पुत्रन प्रति बानी । बोले विश्वामित्र सुजानी ॥ ३ ॥
मानो तुम् सब इन बड़ भाई । तदा पुत्र इक्कावन राई ॥ ४ ॥
शुनश्शेप को निज बड़ भाई । माना तदा सुनो कुरु राई ॥ ५ ॥
आर्जीगर्त बड़ा जब माना । हर्षित जनक दियो बरदाना ॥ ६ ॥
माने वचन अरे तुम मोऊ । यहि हित पुत्रवन्त तुम होऊ ॥ ७ ॥
कौशिक वीरों पुत्र हमारे । देवरात अनु चालहु सारे ॥ ८ ॥

इन शत सुवन अलावा राजन । रहे और भी सुवन सुहावन ॥ ९ ॥
अष्टक हारित जयक्रतु गाये । नाम मदादिक जिन बतलाये ॥ १० ॥

दोहा- **कौशिक विश्वामित्र यों, नाना गोत्र प्रकार ।**
नाम भेद ते हो गये, गौत्र प्रवर्तक कार ॥११२॥

चौ- बोले व्यास पुत्र हे राऊ । अपर कथा मैं तुम्हें सुनाऊ ॥ १ ॥
ऐलपुत्र आयू जिन नामा । भये पंच सुत इन नृप धामा ॥ २ ॥
नहुष व क्षत्रवृद्ध रजि गाये । रंभ अनेना इति सुत भाये ॥ ३ ॥
क्षत्रवृद्ध सुत भये सुहोत्रा । भये तीन इनके घर पुत्रा ॥ ४ ॥
काश्य व कुश गृत्समद बताये । नृप गृत्समद शुनक सुत पाये ॥ ५ ॥
शुनक पुत्र शौनक मुनिराया । जो ऋग्वेद प्रवर बतलाया ॥ ६ ॥
काश्य पुत्र जिन काशिय नामा । तासु राष्ट्र उन दीर्घ तमामा ॥ ७ ॥
धनवन्तरि सुत ये नृप जाये । आयुर्वेद प्रवर्तक गाये ॥ ८ ॥
यह धनवन्तरि हरि के अंशा । केतुमान इत सुत अवतंशा ॥ ९ ॥
इन सुत नृपति भीमरथ भयऊ । दिवोदास जिनके सुत कहऊ ॥ १० ॥
दिवो दास सुत भये द्युमाना । नाम चार जिन किये निदाना ॥ ११ ॥

दोहा- **कृतध्वज अरिजित प्रतर्दन, कुवल चतूरथ नाम ।**
नृपति अलर्कादिक भये, दिवोदास के धाम ॥११३॥

चौ- भोगी छाछठ सहस हजारी । वर्ष अलर्कादिक महिसारी ॥ १ ॥
नृप अलर्क सुत संतति नामा । भये सुनीथ तासु बलधामा ॥ २ ॥
पुत्र सुनीथ सुकेतन गाया । उन सुत धर्मकेतु बतलाया ॥ ३ ॥
इन सुत सत्यकेतु जिन नामा । उन सुत धृष्टकेतु बलधामा ॥ ४ ॥
इनके पुत्र भये सुकुमारा । वीति होत्र इन सुवन कुमारा ॥ ५ ॥
वीति होत्र सुत भर्ग कहावा । तासु भार्गभूमि इति गावा ॥ ६ ॥
काशिवंश के नृप हम गाये । आयु पुत्र रम्भस कहलाये ॥ ७ ॥
रंभ सुपुत्र रभस बलवाना । रभ सुपुत्र गंभीर सुजाना ॥ ८ ॥
इनकेसुत अक्रिय जिन नामा । भये ब्रह्म सुत अक्रिय धामा ॥ ९ ॥
आयु सुपुत्र अनेनस भयऊ । इनके शुद्ध नाम सुत कहऊ ॥ १० ॥

दोहा- **शुद्ध सुवन नृप शुचि भये, इन त्रिक्कुल सुजान ।**
धर्म सारथी इन सुत, इन रथ शान्त बखान ॥११४॥

चौ- अब इन वंश चला नहि राया । आयु पुत्र जो रजि बतलाया ॥ १ ॥

सुवन पंचशत रजि गृह जाता । सुर प्रार्थित रजि नृप सुनुताता ॥ २ ॥
वधकर दनुज सुरपति हेतू । दियो राज सुरपुर नृपकेतू ॥ ३ ॥
कियो राज वापिस सुरपाला । रजि नृप के प्रति हे कुरुपाला ॥ ४ ॥
करके सुरपति रजिपद वन्दन । कीन्ह समर्पित नृप प्रति निज तन ॥ ५ ॥
रजि नृप मरण बाद सुर राई । माँगा सुरपुर वापिस आई ॥ ६ ॥
किन्तु नृपति सुत स्वर्ग न दीन्हा । परामर्श तब गुरु से लीन्हा ॥ ७ ॥
गुरु द्वारा प्रेरित अब सुरवर । कर प्रयोग मारण वह उन पर ॥ ८ ॥
पढ़कर मंत्र हवन जब कियहू । भये नष्ट नृप रजि सुत सबहू ॥ ९ ॥
भये विनाश बचे नहि कोऊ । आगे वंश चला नहि सोऊ ॥ १० ॥

दोहा- **सुत सुहोत्र के कुश भये, कुश के प्रति गुण धाम ।**
जिनके सुत संजय भये, संजय सुत जय नाम ॥११५॥

चौ- जय सुत कृत इन जो सुत पाये । नाम हर्यवन नृप इति गाये ॥ १ ॥
भये पुत्र इनके सहदेऊ । जिनके पुत्र अहीन कहेऊ ॥ २ ॥
सुत जयसेन भये इन धामा । इन संस्कृति इन सुत जय नामा ॥ ३ ॥
वंश नहुष अब हे नृप गाऊँ । अति विस्तार समेत सुनाऊँ ॥ ४ ॥
देही लहे षडेन्द्रिय जैसे । पाये नहुप पुत्र वे वैसे ॥ ५ ॥
यति व ययाति नृपति सयाति । आयति वियति व कृति इक जाति ॥ ६ ॥
पिता दत्त यति राज न भावा । तत्परिणाम अशुभ ही गावा ॥ ७ ॥
पाकर नृप पद नर निज आत्मा । भूलहिं निज हिय स्थित परमात्मा ॥ ८ ॥
निज मन नहुष शची पर लाया । स्थान भ्रष्ट अजगर तनु पाया ॥ ९ ॥
पाछे पुत्र द्वितीय ययाती । पायउ नृपपद आतम घाती ॥ १० ॥

दोहा- **निज कनिष्ठ भ्रातन प्रति, देकर ककुभन चार ।**
वृषपर्वा अरु शुक्र की, कन्या वह कृत दार ॥११६॥

चौ- भोगी सब महि वह नरपाला । बोले शुक से अब कुरुपाला ॥ १ ॥
कवि द्विज क्षत्रिय नृपति ययाती । भयो व्याह किमि अन्तरजाती ॥ २ ॥
बोले नृप से शुक मुनि ज्ञानी । सुन कुरुवर प्राचीन कहानी ॥ ३ ॥
वृषपर्वा कन्या यक बारी । शर्मिष्ठा जिन नाम पुकारी ॥ ४ ॥
लेकर निज संग सहस सहेली । देवयानि सह वह अलबेली ॥ ५ ॥
पहुँची राजकीय उद्याना । पुष्पित द्रुम संकुल जहँ नाना ॥ ६ ॥
कृत रक्षा उस उपवन सारी । कोकिल कंठ अनेकनि नारी ॥ ७ ॥

कमल लोचना वे सब कन्या । गई जलाशय उस उपवन्या ॥ ८ ॥
वर पंकज युत उस सर कूला । स्थापित कर निज सभी दुकूला ॥ ९ ॥
करने स्नान लगी पुनि सारी । वे कन्या मिथ नीर उछारी ॥ १० ॥

दोहा- **तेहि काल देवीसह, वृष पर हुये सवार ।**
आवत शिव को देखकर, लज्जित भई अपार ॥११७॥

चौ- निकसी सहसा सरवर तीरा । पहिने आकर निजनिज चीरा ॥ १ ॥
किन्तु देवयानी परिधाना । पहिने शर्मिष्ठा अनजाना ॥ २ ॥
बोली तदा कुपित हो वानी । शर्मिष्ठा से वह सुरयानी ॥ ३ ॥
तू मम दासी सम शर्मिष्ठे । शर्म न मम पट धृत तुहि दुष्ठे ॥ ४ ॥
अरी कर्म देखो सब येहा । हम ब्राह्मण यह निशिचर देहा ॥ ५ ॥
यथा यज्ञ हवि खावहिं श्वानी । मम पट घृत इस लाज न आनी ॥ ६ ॥
जिन विप्रन निज तप बलद्वारा । रची सकल सृष्टि संसारा ॥ ७ ॥
वे ब्राह्मण हरि के मुख गाये । हरि जिन हिय में सदा समाये ॥ ८ ॥
कीन्ही जिन सब जगत भलाई । वैदिक कर्म मार्ग प्रकटाई ॥ ९ ॥
लोक पाल सुरपति विधि सबही । सेवा पद वन्दन जिन करहीं ॥ १० ॥

दोहा- **लक्ष्मी नित जिन आश्रित, वे हरि भी चितलाय ।**
करते पद वन्दन स्तुति, जिनको सीस झुकाय ॥११८॥

चौ- पुनि उन विप्रन हम भृगुवंशी । सदा श्रेष्ठ सुनु निशिचर अंशी ॥ १ ॥
पिता तुम्हारा शिष्य हमारा । तदपि न तुम मन कियो विचारा ॥ २ ॥
शुद्र वेद सम वस्त्र हमारे । हे नटखट तुम निज तनु धारे ॥ ३ ॥
शर्मिष्ठा जब यों फटकारी । धर्पित अहिनी सम फुँकारी ॥ ४ ॥
अति क्रोधित नृप सुता अपारा । देवयानि से वचन उचारा ॥ ५ ॥
ऐसी बात वदत तू मोहीं । अरी शर्म आवत ना तोही ॥ ६ ॥
बहक रही तू अरी भिखारिन । तोर गुजारा होय न हम बिन ॥ ७ ॥
तुम सम काक व श्वान हमारे । करत आसरा सदा दुआरे ॥ ८ ॥
इस विधि कहि दुर्वचन अपारा । देवयानि को अति फटकारा ॥ ९ ॥
पाछे वसन छीन कर तेहू । डारी कूप गई निज गेहू ॥ १० ॥

दोहा- **मृगया कृत विचरत तदा, पय अर्थी जहँ कूप ।**
कुछ क्षण पीछे आ गये, वहाँ ययाती भूप ॥११९॥

चौ- कूप बीच झांके नर राई । देवयानि वहँ नगन लखाई ॥ १ ॥

दीन्हो नृप झट उत्तरवासा । देकर धीर बँधाकर आसा ॥ २ ॥
निजकर पुनि उस तरफ बढ़ाई । पकर हस्त यह तुरत चढ़ाई ॥ ३ ॥
बोले प्रेम सहित अब बानी । नृप प्रति देवयानि गुण खानी ॥ ४ ॥
गहा नृपति तुम हस्त हमारा । करूँ वरण यहि हेत तुम्हारा ॥ ५ ॥
अब मम हस्त अपर के हाथा । जावहिं नहीं अहो नरनाथा ॥ ६ ॥
राखो इसका हे नृप ध्याना । यह सम्बन्ध उचित हम माना ॥ ७ ॥
यह सम्बन्ध ईश कृत जानो । मानव कृत सम्बन्ध न मानो ॥ ८ ॥
शाप गुरु सुत कच के कारण । हो अहि नहिं द्विज मम पति राजन ॥ ९ ॥
दैव प्राप्त यह शास्त्र विहीना । देख मेल अब नृपति कुलीना ॥ १० ॥

दोहा- **शुक्र सुता के सब वचन, करके अङ्गीकार ।**
चले गये निज पुर विचै, करते सोच विचार ॥१२०॥

चौ- नृपवर गमन किये उपरन्ता । रोवत गइ वह गेह तुरन्ता ॥ १ ॥
पिता पास जाकर इन सारे । शर्मिष्ठा के कृत्य उचारे ॥ २ ॥
सुन चिन्तित उशना मुनिराई । अति निन्दा कर पुरोहिताई ॥ ३ ॥
निज कन्या सह उन पुर त्यागा । सुन वृष पर्वा उन अनुभागा ॥ ४ ॥
पथ बीचे गुरु चरण गहाये । कीन्ही विनय नयन जल छाये ॥ ५ ॥
क्षणमन्यु भार्गव भगवाना । बोले नृप से वचन प्रमाना ॥ ६ ॥
मम कन्या की रुचि तुम राजन । करो पूर्ण सुन कर इस भाषन ॥ ७ ॥
पुनि वापिस जावन में कोई । आपत नहीं मुझे नृप होई ॥ ८ ॥
एवमस्तु बोले जब राया । देवयानि निज वचन सुनाया ॥ ९ ॥
पिता दत्त हे नृप जिस ठाऊँ । पाणी ग्रहण बाद मैं जाऊँ ॥ १० ॥

दोहा- **शर्मिष्ठा निज सखिन सह, मम सेवा के काज ।**
जावहिं मोरे संग में, सुनु दानव सिर ताज ॥१२१॥

चौ- सुनि नृप चिन्तित भये अपारा । लखि स्वकीय संकट परिवारा ॥ १ ॥
सब बातें स्वीकृत कर राजू । दीन्ह सुतानिज उस प्रिय काजू ॥ २ ॥
शर्मिष्ठा नृप सुता विचारी । लेकर सहस सखी निज नारी ॥ ३ ॥
दासी सम सेवा में आई । तब लोटे भार्गव मुनिराई ॥ ४ ॥
घर आकर नाहूष बुलावा । निज कन्या उस हस्त गहावा ॥ ५ ॥
बोले वच अब कवि भगवाना । शर्मिष्ठहिं शय्या मत लाना ॥ ६ ॥
देवयानि संग सुनु कुरुपाला । निज मंदिर आये महिपाला ॥ ७ ॥

देवयानि अब कुछ दिन पाछे । जाये युगल पुत्र वह आछे ॥ ८ ॥
पुत्रवती कवि जा जब देखी । एक बार ऋतु काल विशेषी ॥ ९ ॥
शर्मिष्ठा नृप पास बुलावा । सहवास हित वचन सुनावा ॥ १० ॥

दोहा- **सुत हित शर्मिष्ठा वचन, धर्म सुसंगति जान ।**
शुक्र वचन भी सुमिर नृप, भावी प्रबल बखान ॥१२२॥

चौ- कीन्हो तासु संग सहवासा । धर्म हेतु न तु काम प्रकासा ॥ १ ॥
उशनसि यदु तुर्वसु सुत जाये । शर्मिष्ठा सुत तीन जनाये ॥ २ ॥
द्रुह्यु व अनु पूरू जिन नामा । इन बीचे पुरू गुणधामा ॥ ३ ॥
शर्मिष्ठा अब निजपति द्वारा । देख गर्भवति क्रुधित अपारा ॥ ४ ॥
देवयानि गइ पिता समीपा । तब अति चिन्तित होय महीपा ॥ ५ ॥
देवयानि अनु तुरत सिधाये । किन्तु मना वह नहीं कर पाये ॥ ६ ॥
नृपति कृत्य सब पिता समीपा । कहे वचन सब सुनो महीपा ॥ ७ ॥
देख नृपहिं कवि मन कर क्रोधा । दीन्हा शाप रहा नहि बोधा ॥ ८ ॥
जो सब मनुजहिं करत कुरुपा । वही जरा व्यापहिं तुहि भूपा ॥ ९ ॥
मन्द बुद्धि तू अति तिय लम्पट । वदत झूँठ अति हे नृप खूँसट ॥ १० ॥

दोहा- **विषय भोग करते हुए, तव पुत्री के साथ ।**
भयो तृप्त मम गात ना, बोले यों नर नाथ ॥१२३॥

चौ- हे ब्रह्मन दीन्हा मोहि शापा । जरा दुःख यदि मोहि बियापा ॥ १ ॥
तो भार्गव यह सुता तुम्हारी । पावहिं हित नहि अहित अपारी ॥ २ ॥
जब यह वचन सुनै मुनिराया । कर विचार यों वचन सुनाया ॥ ३ ॥
जो कोई धारहि तोर जराई । पाकर तासु नृपति तरुणाई ॥ ४ ॥
भोगउ भोग जगत के भारी । प्राप्त व्यवस्था यो नृप सारी ॥ ५ ॥
ज्येष्ठ पुत्र प्रति गिरा उचारी । धारउ हे सुत जरा हमारी ॥ ६ ॥
मातामह मम दशा बिगारी । देहु तरुणता मुझे तुम्हारी ॥ ७ ॥
धारण कर मैं तव तरुणाई । भोगूँ भोग सकल सुखदाई ॥ ८ ॥
नृप सुत यह अब वचन सुनाया । मम मन तात न ये मत भावा ॥ ९ ॥
बिन अवसर की तात जराई । किस विध भी ना करे भलाई ॥ १० ॥

दोहा- **विषयन सुख अनुभव बिना, नर वैराग्य न पात ।**
कही बात यदु तुर्वसु, यों द्रुह्यु अनु भ्रात ॥१२४॥

चौ- ये सुत नहीं धरम के ज्ञाता । माना इन पर नश्वर गाता ॥ १ ॥

देख गुणाधिक वय जिन कमती । वदत वचन पुरु प्रति नृपती ॥ २ ॥
निज अग्रज सम कबहुँ न ताता । टालहु नाँहि अरे मम बाता ॥ ३ ॥
अब पुरू यो वचन सुनावा । सुनो तात जो मन मम भावा ॥ ४ ॥
ऐसो कौन पुत्र जग माँही । जनक वचन जो मानत नाँही ॥ ५ ॥
पाकर सुत निज पिता प्रसादा । पात परमपद त्याग विवादा ॥ ६ ॥
जनक काम बिन कहे जे करहीं । सो सुत सब से उत्तम कहहीं ॥ ७ ॥
कथित वचन करता जो कोई । सो मध्यम सुत जग में होई ॥ ८ ॥
अधम पुत्र जानहु तुम तासू । श्रद्धा हीन काम किय जासू ॥ ९ ॥
कथित काम करता जो नाँही । पिता मूत्र सम जानहु ताही ॥ १० ॥

दोहा- **होअहिं सबसे उऋण सुत, किन्तु पिता से नाँहि ।**
पहिना वहि निज चाम का, यदि सुउपानह ताहि ॥१२५॥

चौ- यों कहि जरा ग्रहण उन कीन्ही । तासु वयस अब वह नृप लीन्ही ॥ १ ॥
लेकर तासु अवस्था राया । भोगे सकल विषय निज काया ॥ २ ॥
सप्तद्वीप नृप निज वश कीन्हे । प्रजा हेतु अतुलित सुख दीन्हे ॥ ३ ॥
अब भार्गवि भी मुदित अपारा । मन वाणी तनु वस्तुन द्वारा ॥ ४ ॥
करने लगि सब विधि सत्कारा । अब नृप भूरि दक्षिणा द्वारा ॥ ५ ॥
कीन्ह अनेक यज्ञ सुखकारी । पूजे हरि पद भव भय हारी ॥ ६ ॥
अम्बर बीचे मेघ समाना । व्यापक सर्व विश्व जिन माना ॥ ७ ॥
स्थापित कर निज हिये नृपाला । पूजे उन पद दीन दयाला ॥ ८ ॥
सार्वभौम पद स्थित नरपाला । बीते वर्ष सहस इमि काला ॥ ९ ॥
तदपि तृप्त नहि किसी प्रकारा । भोगत विषयन इन्द्रिन द्वारा ॥ १० ॥

दोहा- **यों तिय लम्पट वह नृप, सेवित विषय तमाम ।**
एक दिवस अब विरत हो, गाथा एक ललाम ॥१२६॥

चौ- देवयानि निज पास बुलाई । उसके प्रति वह नृपति सुनाई ॥ १ ॥
सुनो भार्गवी एक कहानी । विचरत बन अज इक नादानी ॥ २ ॥
पतित कूप बिच रूप विशेषी । अजा एक उस अज ने देखी ॥ ३ ॥
होकर अज कामी उस काला । सोच उपाय तदा तत्काला ॥ ४ ॥
अब निज श्रृंग अग्रतट दोऊ । खोद निकारि वहि वह खोऊ ॥ ५ ॥
जब वह कूप अजी वहि आई । कीन्हो निज पति अज कवि जाई ॥ ६ ॥
वह अज हृष्ट पुष्ठ बलवाना । रति प्रवीण अति प्रिय जब जाना ॥ ७ ॥

अन्य अजिन ने भी वह देखा । प्रेम पात्र निज चुना विशेषा ॥ ८ ॥
रहा काम उस सीस सवारा । उन संग करने लगा विहारा ॥ ९ ॥
कूप अजा उन अजियन संगा । देखा अज कृत रमण प्रसंगा ॥ १० ॥

दोहा- तव होकर वह दुखित अति, तजकर अजसे नेह ।
चली गई है शुक्रजा, निज स्वामी के गेह ॥१२७॥

चौ- अव कामी अज उस अनु आवा । किन्तु मुदित वह नहिंकर पावा ॥ १ ॥
अजा स्वामी भार्गवि द्विज कोई । काटे तदा वृपण अज सोई ॥ २ ॥
कीन्ही विनय यदा अजभारी । जोरे वृपण अजा हितकारी ॥ ३ ॥
वृद्ध वृपण अज अजि संग आवा । रमण करत वहुकाल वितावा ॥ ४ ॥
आज दिवस तक भी मन माँही । भयऊ तृप्त अरी वह नाँही ॥ ५ ॥
दशा हमारी भी सुनु येही । रहा सदा तव प्रेम सनेही ॥ ६ ॥
तव माया से मोहित होकर । भूला निज तनु सुध वुध खोकर ॥ ७ ॥
व्रीहि धान्य यव कंचन नारी । पशु आदिक वस्तु जग सारी ॥ ८ ॥
काम वेग हत मानव नाँही । इनते तृप्त न होत कदाही ॥ ९ ॥
विपय भोग ते भामिनी कवहू । भोग वासना शान्त न भयहू ॥ १० ॥

दोहा- ज्यों डारत घृत अगनि में, उठती लपट अपार ।
त्यों भोगन ते वासना, वढ़ती वारम्वार ॥१२८॥

चौ- सम दृष्टि मानव जव होई । होत दिशा सुखमयि सव सोई ॥ १ ॥
दुरत्यज तृष्णा दुर्मति द्वारा । तृष्णा उदगम दुख अपारा ॥ २ ॥
मानव जरठ होत जग माँही । तृष्णा नूतन नित्य दिखाही ॥ ३ ॥
सुख इच्छुक नर तृष्णा तजहू । तिय संगति तो भूल न करहू ॥ ४ ॥
मा भगिनी कन्यादिक संगा । करो नहीं एकान्त प्रसंगा ॥ ५ ॥
रहे इन्द्रियाँ अति वलशाली । ज्ञानी को भी करे कुचाली ॥ ६ ॥
वर्प सहस्र जीवन के जाया । विपय वासना वीच विताया ॥ ७ ॥
तो भी मम तृष्णा यह भारी । विपयों से नहीं हुई निवारी ॥ ८ ॥
यही हेतु तृष्णा सव तज के । ब्रह्म वीच मन स्थापित करके ॥ ९ ॥
द्वंद्व रहित अरु निरहंकारा । मृगन संग वन करूँ विहारा ॥ १० ॥

दोहा- जो श्रुत दृष्टहिं असत लखि, विपयन चित्त हटाय ।
वही आत्मदृष्टा नर, वहि विद्वान कहाय ॥१२९॥

चौ- यों कहि निज तिय से नरराई । दीन्ही पुरु प्रति वह तरुणाई ॥ १ ॥

धारण कीन्ही जरा मुनिराया । पांचो सुत निज पास बुलाया ॥ २ ॥
पूर्व द्रुह्यु दक्षिण दी यदुहीं । तुर्वसु पश्चिम ऊत्तर अनुहीं ॥ ३ ॥
पुरुहिं योग्य लखि अति नर राया । सार्वभौम पति पद बिठलाया ॥ ४ ॥
पुरु के वंश अग्रज करि सारे । पाछे वे नृप विपिन सिधारे ॥ ५ ॥
जात पक्ष द्विज नीड़ समाना । त्यागे त्यों षडवर्ग महाना ॥ ६ ॥
मुक्त संग हरि पद पर भक्ती । पायो नृपति ययाति सुमुक्ती ॥ ७ ॥
यह गाथा सुनकर नृप रानी । नर तिय प्रेम असारहि जानी ॥ ८ ॥
वह भी निज मन कर अब चंगा । जान प्रपा सम सुहृदन संगा ॥ ९ ॥
माया रचित जान वह सारा । सब संगति से कीन्ह किनारा ॥ १० ॥

दोहा- **देवयानि ने भी तदा, हरिपद कीन्ह प्रणाम् ।**
सर्वान्तरयामी प्रभु, जो सब जग के धाम ॥१३०॥ क
निज मन हरि में लीन कर, तज यह लिंग शरीर ।
पाछे हरि में मिल गई सुन पांडव बलवीर ॥१३०॥ ख

चौ- पुरु वंश अब सह विस्तारा । भयो जनम जिस वंश तुम्हारा ॥ १ ॥
भये ब्रह्मरिपि नृप रिषि जासू । करूँ परीक्षित वही प्रकासू ॥ २ ॥
पुरू सुत जनमेजय नामा । प्रचिन्वान उन सुत बलधामा ॥ ३ ॥
जिनके सुत भये नृपति प्रवीरा । भये नमस्यु तासु रणधीरा ॥ ४ ॥
चारूपद इनके सुत भयऊ । इन सुत सुघु जासु बहुगवऊ ॥ ५ ॥
बहुगव सुत संयाति जाता । जिन सुत अहंयाति विख्याता ॥ ६ ॥
इनके सुत रौद्राश्व कहाये । नृप धृताचि ते दश सुत जाये ॥ ७ ॥
नाम ऋतेयु अरु कुक्षेयू । स्तण्डिलेय कृतेयु जलेयू ॥ ८ ॥
संततेयु धर्मेयु सत्येयू । नवम व्रतेयू व दशम वनेयू ॥ ९ ॥
ऋतेयू रन्तिभार सुत जाये । जिनके घर सुत तीन बताये ॥ १० ॥

दोहा- **ध्रुव सुमति अप्रतिरथ, अप्रतिरथ सुत कण्व ।**
कण्णव सुत मेधातिथि, जिनते द्विज पुष्कण्व ॥१३१॥

चौ- सुमति सुपुत्र रेभ्य यक जाया । जिन सुत नृप दुष्यन्त कहाया ॥ १ ॥
मृगया हित दुष्यन्त नृपाला । कण्वाश्रम गवने इक काला ॥ २ ॥
निज कान्ति द्वारा इक नारी । करत सुशोभित आश्रम भारी ॥ ३ ॥
देख वहाँ पर मोहित राया । काम तप्त हो वचन सुनाया ॥ ४ ॥
कमल पत्र सम नयन विशाला । तुमहो कवन कवन की बाला ॥ ५ ॥

इस निर्जन विच फिरो अकेली । नही अरी तव संग सहेली ॥ ६ ॥
निश्चय तुम कोई नृप कन्या । लागत चित्त नहीं मम अन्या ॥ ७ ॥
हम पूरुवंशिन चित वाले । पाप करम विच कवहुँ न चाले ॥ ८ ॥
बोली अब वह वचन सयानी । मम शकुन्तला नाम बखानी ॥ ९ ॥
विश्वामित्र सुता मुझ जानो । मात मेनका मम तुम मानो ॥ १० ॥

दोहा- **तजकर मुझको मात मम, सुरपुर गई सिधार ।**
कण्णव मुनि पाली मुझे, सुनो नृपति मम सार ॥१३२॥

चौ- जानत कण्णव हाल हमारा । करूँ वीर तव किमि सत्कारा ॥ १ ॥
रुकिये जरा यहाँ कुछ काला । पूजन ग्रहण करो नरपाला ॥ २ ॥
वन्य धान्य जो मोर समीपा । भोजन की जिय तासू महीपा ॥ ३ ॥
जो यदि होवे रुचि तुम्हारी । रुकिय यहाँ व्यवस्था सारी ॥ ४ ॥
बोले नृप अब मुदित अपारा । कुशिक वंश में जन्म तुम्हारा ॥ ५ ॥
यही हेतु आतिथ्य हमारा । योग्य सुन्दरि सभी प्रकारा ॥ ६ ॥
निज सदृश पति योग्य सुखारी । करें वरण सब राजकुमारी ॥ ७ ॥
पा अब स्वीकृति सभी प्रकारा । देश काल विधि जानन हारा ॥ ८ ॥
कीन्हो अब गंधर्व विवाहा । कौशिक पुत्री संग नरनाहा ॥ ९ ॥
वीर्य अमोघ नृपति सहवासा । कीन्ह तासु संग कर निशि वासा ॥ १० ॥

दोहा- **प्रातःकाल उठकर अब, निजपुर गये नृपाल ।**
जायो सुवन शकुन्तला, प्राप्त प्रसूती काल ॥१३३॥

चौ- कण्व महामुनि राजकुमारा । कीन्हे कर्म विधिवत सारा ॥ १ ॥
सिंह व्याघ्र बालादिक बाँधे । करता वह क्रीड़ा धरि काँधे ॥ २ ॥
देख दुरत्यय अति बलशीला । तब शकुन्तला वह अति शीला ॥ ३ ॥
गवनी सुत संग पति समीपा । तिय सुतहीं लख तदा महीपा ॥ ४ ॥
स्वीकृत ना कीन्हे दोउ प्राणी । भई तदा सुन्दर नभवाणी ॥ ५ ॥
मा आधार पात्र सुनराई । पुत्र पिता से ही प्रकटाई ॥ ६ ॥
यही हेतु यह पुत्र तुम्हारा । पालहु यहि तुम सभी प्रकारा ॥ ७ ॥
पिता पुत्र दोउ एक समाना । करउ मति इनका अपमाना ॥ ८ ॥
पुत्र नरक ते तारत ताता । तुमहीं इसके जन्म प्रदाता ॥ ९ ॥
जो शकुन्तला वचन सुनाया । जानो सत्य इसे तुम राया ॥ १० ॥

दोहा- **नभवानी सुनकर नृपति, किये दोउ स्वीकार ।**

पिता मरण उपरान्त अब, वे दुष्यन्त कुमार ॥१३४॥

चौ- सार्वभौम पति पद पर भारी । भये सुशोभित सब हितकारी ॥ १ ॥
चक्र चिन्ह दक्षिण कर सोऊ । कमल चिह्न भरत पद दोऊ ॥ २ ॥
ममता सुतहिं नृपति इक बारा । कीन्ह पुरोहित निज स्वीकारा ॥ ३ ॥
गंगा पावन तट पर भारी । अश्वमेध पचपन शुभकारी ॥ ४ ॥
नन्दमुनी चौगुन दो ऊपर । अश्वमेध किय यमुना तट पर ॥ ५ ॥
उत्तम गुण युत पावन स्थाना । मख अग्नि कर स्थापित नाना ॥ ६ ॥
भरत नृपति दुष्यन्त कुमारा । दियो दान धन अपरम्पारा ॥ ७ ॥
सहस त्रयोदश श्रुति वसु ऊपर । दीन्ही गौ प्रति द्विज अति सुन्दर ॥ ८ ॥
सहस विप्र जो मख विच आये । इनते कम कोई ना पाये ॥ ९ ॥
सुर शत बार भरत नरपाला । बांधे सुन्दर अश्व विशाला ॥ १० ॥

दोहा- **किये सभी नृप विस्मित,पुनि सुर वैभव धार ।**
नियुत चतुर्दश गज दिये, बाद कर्म मष्णार ॥१३५॥

चौ- राजन भरत करम जो कीन्हे । पर पूर्व कोई ना चिन्हे ॥ १ ॥
कर दिग्विजय भरत नृप सारे । द्विज द्रोही यवनादिक मारे ॥ २ ॥
कंक व शक कश हूण किराता । म्लेच्छादिक नृपति किये घाता ॥ ३ ॥
प्रथम हरी असुरन सुर नारी । दीन्ही उन प्रति असुर संहारी ॥ ४ ॥
वरस सहस सत्ताइस राई । कीन्हो राज्य सकल सुखदाई ॥ ५ ॥
देख मृषा अब राज्य शरीरा । भये विरत सम्राट अखीरा ॥ ६ ॥
पत्नी तीन विदर्भी तासू । करते प्रेम नृपति अति जासू ॥ ७ ॥
कृत परिहास कहे उन भूपा । सुत तुम्हार नहि मम अनुरूपा ॥ ८ ॥
सुन भयभीत सभी मन मांही । कहिं सम्राट न हमें तजाहीं ॥ ९ ॥
कर विचार यो मन सब रानी । मारे उन सब सुत नादानी ॥ १० ॥

दोहा- **नष्ट देख निज वंश अब, दुखी होय भूपाल ।**
पुत्र हेतु मख मरूत का, कीन्हा एक विशाल ॥१३६॥

चौ- भये मुदित तब मरुत अपारा । जिन मख देख भरत के द्वारा ॥ १ ॥
भरद्वाज नामक इक सुन्दर । भरत हेतु दीन्हा सुत कुलधर ॥ २ ॥
इन उत्पत्ति यो नृप गाई । नाम उतथ्य गुरु लघु भाई ॥ ३ ॥
ममता नाम जासु इक नारी । गर्भवती अरु रूप अपारी ॥ ४ ॥
अनुज वधू संग मैथून काजू । भये प्रवृत्त इक दिन गुरु राजू ॥ ५ ॥

गर्भ शिशु वे किये मनाई । तव क्रुद्धित बोले गुरुराई ॥ ६ ॥
होऊ अन्ध अरे तुम नीचा । यों कहि बल युत वीरज सींचा ॥ ७ ॥
गर्भ स्थित शिशु पा यह शापा । भयो अंध मन अति दुख व्यापा ॥ ८ ॥
गुरु वीरज निज पद के द्वारा । योनी बाहर महि उन डारा ॥ ६ ॥
भयो सद्य वह एक कुमारा । अव शंकित ममता पति द्वारा ॥ १० ॥
शिशु को तज वह जावन लागी । बोले गुरु तब सुनो अभागी ॥ ११ ॥

दोहा- **क्षेत्रज यह मम भ्रात का, मम औरस कहलाय ।**
करो भरण इस वास्ते, कुछ भय मत तू खाय ॥१३७॥

चौ- अब ममता यो वचन सुनावा । यह मम पति से ना प्रकटाया ॥ १ ॥
हम दोऊ मिलकर यह जाया । यह सुत इस हित दोउ न भाया ॥ २ ॥
योकर वे दोउ बाद परस्पर । गवने गेह शिशुहिं वे तजकर ॥ ३ ॥
यहि कारन यह शिशु सुन राया । आगे चल भरद्वाज कहाया ॥ ४ ॥
यों शिशुहीं तज गई महतारी । कीन्ह पालना मरुतन सारी ॥ ५ ॥
सब विधि भरत वंश जब नासा । जब नृप मरुतन यज्ञ प्रकासा ॥ ६ ॥
होय मुदित तब मरुत अपारी । दीन्हो यहि सुत नृप हितकारी ॥ ७ ॥
नाम वितथ यहि हित यह गाया । आगे सुनो कथा कुरु राया ॥ ८ ॥
वितथ गेह भये मन्यु कुमारा । तासु सुवन इति पंच प्रकारा ॥ ६ ॥
वृहत्क्षत्र अरु जय बलधारी । महावीर्य नर गर्ग पुकारी ॥ १० ॥

दोहा- **नर के सुत संस्कृति भए, रन्तिदेव गुरु जासु ।**
रन्तिदेव का यश यहाँ, सब विधि करें प्रकासु ॥१३८॥

चौ- रन्तिदेव का धन हित राया । कुछ उद्योग विशेष न पाया ॥ १ ॥
मिलहिं भाग्यवश जो कुछ येहू । करहिं मुदित हो स्वीकृत तेहू ॥ २ ॥
प्राप्त वस्तु भी कबहुँ समीपा । राखत ना निज गेह महीपा ॥ ३ ॥
निष्किंचन वह नृपति उदारा । भोगत अति दुख सहपरिवारा ॥ ४ ॥
लगातार नृपवर इक बारा । यों ही वसु श्रुति दिवस गुजारा ॥ ५ ॥
अब उनचास दिवस यूं आया । तब घृत पायस जल नृप पाया ॥ ६ ॥
क्षुधा प्यास आतुर अति भारी । अति संकट में उन परिवारी ॥ ७ ॥
ज्योंही पातर नृपति बिछावा । अतिथि रूप द्विज इक आवा ॥ ८ ॥
अतिथि रूप हरि का कर दरसन । दीन्हो द्विज हेतू नृप भोजन ॥ ६ ॥
जब वह द्विज गयऊ करि भोजन । शेष अन्न नृप कीन्ह विभाजन ॥ १० ॥

दोहा- **भोजन हित तत्पर भये, रन्तिदेव नरपाल ।**

शूद्र वहाँ पर दूसरा, आ पहुँचा तत्काल ॥१३९॥

चौ- शेष अन्न अब कीन्ह विभाजा । दीन्हो शूद्र हेतु उन राजा ॥ १ ॥
हे नृप शूद्र गये उपरन्ता । आयउ पुनि इक अतिथि तुरन्ता ॥ २ ॥
शाला वृक लेकर निज संगा । गयो जहाँ नृप दुर्बल अंगा ॥ ३ ॥
आकर नृप से वचन उचारा । गण समेत मैं क्षुधित अपारा ॥ ४ ॥
कीन्हो नृप अब उन सन्माना । देकर अन्न महासुख माना ॥ ५ ॥
अब केवल जल ही अवशेषा । एक तृप्ति कर नहीं विशेषा ॥ ६ ॥
ज्योंही जल पीवत नृप लागा । आवा पुल्कश एक अभागा ॥ ७ ॥
मैं अति तृषित सुनो नरराऊ । कुछ मोहीं तुम नीर पिलाऊ ॥ ८ ॥
सुन वाणी उसकी अति दीना । देखा कृश तनु नहीं नवीना ॥ ९ ॥
तदा कृपा पीड़ित नरराई । अमृत मयि वाणी इमि गाई ॥ १० ॥

दोहा- **ईश्वर से गति मोक्ष ना, चाहूँ किसी प्रकार ।**
सब प्राणिन का दुःख मैं, करूँ सभी स्वीकार ॥१४०॥

चौ- मैं सब प्राणिन के हिय अन्दर । होऊं स्थित इच्छा यहि मैं उर ॥ १ ॥
होय न जिससे किसी प्रकारा । सब प्राणिन को कष्ट अपारा ॥ २ ॥
दीन प्राणि यह पीकर पानी । चाहत निज जीवन सुखदानी ॥ ३ ॥
कृपण जन्तु प्रति कर जल अरपन । भूख व प्यास शिथिलता श्रमतन ॥ ४ ॥
शोक विषाद दीनता ग्लानी । गई मोह की सभी निशानी ॥ ५ ॥
म्रीयमाण वह स्वयं पिपाशित । कीन्हो उस प्रति नृप जल अरपित ॥ ६ ॥
हे भारत यह डोम स्वरूपा । वास्तव में थे विष्णु अनूपा ॥ ७ ॥
आवा नृपति परीक्षा काला । प्रकटे हरि विधि शिव तत्काला ॥ ८ ॥
हो निसंग निस्पृह तजि कामा । कीन्ह नृपति अब चरण प्रणामा ॥ ९ ॥
परम प्रेम मय भक्ति समेता । कर विलीन प्रभु पद निज चेता ॥ १० ॥

दोहा- **गुण मयि माया सुपन सम, भई गुप्त उस काल ।**
विष्णु तत्व को पा गये, रन्ति देव नरपाल ॥१४१॥

चौ- रन्तिदेव के जे अनुयायी । उन प्रभाव योगी गति पायी ॥ १ ॥
रन्तिदेव नृप का धरि बाना । परम भक्त वे भए भगवाना ॥ २ ॥
मन्यु सुवन जो गर्ग कहाया । तासु वंश अब सुन नर राया ॥ ३ ॥
गर्ग सुवन शिनि नामक गाये । गार्ग्य मुख्य द्विज उन प्रकटाये ॥ ४ ॥
महावीर्य दुरितक्षय जाये । इन नृप सुवन तीन इमि पाये ॥ ५ ॥

त्र्य्यारूणि कवि पुष्कर अरुणी । पाये ये तीनों द्विज करणी ।। ६ ।।
वृहत्क्षत्र जाये नृप हस्ती । रची हस्तिनापुर जिन बस्ती ।। ७ ।।
हस्तीसुत अजमीढ़ द्विमीढ़ा पुत्र तृतीय भये पुरुमीढ़ा ।। ८ ।।
नृप अजमीढ पुत्र जे जाये । वे द्विज प्रिय मेधादिक गाये ।। ९ ।।
पुन अजमीढ़ अपर सुत जाया । वृहदिषु नाम नृपति वह गाया ।। १० ।।

दोहा- **वृहत्काय जिन आत्मज, पुत्र जयद्रथ जासु ।**
पुत्र विशद जिनसेनजित, इन सुत चार प्रकासु ।।१४२।।

चौ- रुचिर अश्व दृढ़ नृप हनु काशी । वत्स सहित सुत चार प्रकाशी ।। १ ।।
नृप रुचिराश्व पार सुत पाया । जिन पृथुसेन, नीप सुत जाया ।। २ ।।
शत सुत भये नीप के गेहू । शुक कन्या कृत्वी संग येहू ।। ३ ।।
ब्रह्मदत्त नामक सुत पाया । योग शास्त्र पारंगत गाया ।। ४ ।।
सुरसति ब्रह्मदत्त के संगा । जाये विष्वक्सेन प्रसंगा ।। ५ ।।
जैगीषव्य पाय उपदेशा । योग शास्त्र यहि रचे नरेशा ।। ६ ।।
इनका पुत्र उदक्स्वन गाया । जिनका सुत भल्लाद कहाया ।। ७ ।।
वृहदिषु वंश भये नृप ऐता । वंश द्विमीढ सुन कुरु केता ।। ८ ।।
पुत्र द्विमीढ यवीनर गाया । सुवन जासु कृतिमान कहाया ।। ९ ।।
सत्वधृति उन उन दृढनेमी । तासु सुमति उन कृति अति प्रेमी ।। १० ।।

दोहा- **हिरण्यनाभ ते योग को, पाकर कृति नरपाल ।**
सामवेद की संहिता, रचकर पढ़ उस काल ।।१४३।।

चौ- निज शिष्यन हित यही पढ़ाई । कृति सुतनील सुनो नरराई ।। १ ।।
नीपात्मज उग्रायुध जाता । जिन सुत क्षेम्य नृपति सुखदाता ।। २ ।।
तासु सुवीर रिपुञ्जय जेहू । बहुरथ पुत्र भये इन गेहू ।। ३ ।।
पुरूमीढ़ इनके सुत गाये । ये नृप पुत्र एक ना पाये ।। ४ ।।
अब अजमीढ़ वंश सुनुराई । महिषि नलिनि अजमीढ़ सुहाई ।। ५ ।।
जासु गर्भ ते सुत भये नीला । भूपति शान्ति सुशान्ति सुशीला ।। ६ ।।
जिनते अर्क पुरुज जिन गाये । जिनके सुत भर्म्याश्व कहाये ।। ७ ।।
नृप भर्म्याश्व पंच सुत जाये । वे सारे पांचाल कहाये ।। ८ ।।
मुदगल नाम यवीनर राई । कंपित वृहदिषु संजय भाई ।। ९ ।।
मुद्गल के सुत ब्रह्म कहाये । मुद्गल गोत्र जिन्होंका गाये ।। १० ।।

दोहा- **मुद्गल जाये मिथुन इक, दिवोदास नर नाम ।**

सुता अहल्या रूपवति, व्याही गौतम धाम ॥१४४॥

चौ- गौतम और अहल्या दोऊ । शतानन्द नामक सुत सोऊ ॥ १ ॥
सतधृति उन उन सुत शरद्वाना । देख उर्वशी रूप महाना ॥ २ ॥
शरकंडे ऊपर जिन रेता । भयोपात जब सुन कुरुकेता ॥ ३ ॥
मिथुन एक रेतस ते जाता । शन्तनु नाम नृपति विख्याता ॥ ४ ॥
मृगया करत वहाँ पर आये । देख यमल वे निज गृह लाये ॥ ५ ॥
कृपाचार्य उन पुरुष कहाये । कन्या नाम कृपी सब गये ॥ ६ ॥
भयो द्रोण संग जासु विवाहू । बोल शुक अब सुन नर नाहू ॥ ७ ॥
दिवोदास नृप सुत इक जाये । जिन मित्रायु नाम कहाये ॥ ८ ॥
मित्रायु सुत च्वयन सुदासा । सोमक अरु सहदेव प्रकासा ॥ ६ ॥
सोमक सुवन एक शत जाये । जन्तु ज्येष्ठ पृपत लघु गाये ॥ १० ॥

दोहा- **द्रुपद राज सुत पृषक के, सुता द्रोपदी तासु ।**
धृष्टद्युम्न आदिक सुत, कीन्हे द्रुपद प्रकासु ॥१४५॥

चौ- धृष्टद्युम्न सुत अति बलवाना । धृष्टकेतु जिन नाम बखाना ॥ १ ॥
नृप पाँचाल वंश में गाया । सुन अजमीढ वंश पुनि राया ॥ २ ॥
सुत अजमीढ ऋक्ष इस गाया । तासु सुवन संवरण कहाया ॥ ३ ॥
रवि कन्या तपती जिन व्याही । जाये इन कुरु सुत अरिदाही ॥ ४ ॥
कुरूक्षेत्र पति के कुलधारी । भये पुत्र हे नृप इति चारी ॥ ५ ॥
प्रथम परीक्षित अपर सुधन्वा । जह्नु तृतीय व श्रुति निषधाश्वा ॥ ६ ॥
पुत्र सुधनुष सुहोत्र सुहाये । इनसे च्यवन जासु कृति गाये ॥ ७ ॥
उपचरि वसु कृति के सुत भाये । उपचरि वसु नृप कई सुत जाये ॥ ८ ॥
मत्स्य कुशाम्ब वृहद्रथ राया । नृप प्रत्यग्र व चेदिप गाया ॥ ६ ॥
ये सब चेदिप नृप कहलाये । पुत्र कुशाग्र वृहदरथ जाये ॥ १० ॥

दोहा- **नृप कुशाग्र जाये ऋषभ, पुष्पवान सुत तासु ।**
इन सुत जाये सत्यहित, रहे जह्नु सुत जासु ॥१४६॥

चौ- रानी अपर वृहदरथ राई । जा निज गर्भ शकल दो जाई ॥ १ ॥
माता जब बाहर वह डारी । जरा नाम इक निशिचर नारी ॥ २ ॥
जीव जीव मुख वचन उचारी । लाई उठा शकल दोउ भारी ॥ ३ ॥
खेल खेल जोरी उन दोही । भयो जरासंध नृप वर सोही ॥ ४ ॥
सुत सहदेव जरासंध जाये । सोमापीं सुत यह नृप पाये ॥ ५ ॥

सोमापी रानी सुत जाया । श्रुतःश्रवा जिन नाम कहाया ॥ ६ ॥
कुरु सुत प्रथम परीक्षित गाया । रहा अपुत्री सुनु नर राया ॥ ७ ॥
कुरु के पुत्र जह्नु जिन नामा । इनते भये सुरथ गुण धामा ॥ ८ ॥
अंगज सुरथ विदूरथ नामा । भये सार्वभौम उन धामा ॥ ६ ॥
सुत जयसेन भये इन गेहा । उन राधिक व अयुत सुत येहा ॥ १० ॥

दोहा- **सुत क्रोधन इनते भये, देवातिथि इनधाम ।**
भये ऋष्य जिनके गृह, तासु दिलीप ललाम ॥१४७॥

चौ- पुत्र दिलीप प्रतीप कहाये । नृप प्रतीप सुत तीन बताये ॥ १ ॥
दैवापि व शन्तनु अनुभाई । वह वाह्लीक नृपति कहलाई ॥ २ ॥
पिता राज निज भ्रात तजाये। देवापी बन बीच सिधाये ॥ ३ ॥
अब शन्तनु नृप पद पर आये । प्रथम महामिष शन्तुनु गाये ॥ ४ ॥
जीर्ण—शीर्ण वय युत जे प्रानी । स्पर्शित शन्तनु पात जवानी ॥ ५ ॥
शासित शन्तनु नृपति प्रदेशा । कीन्ही वर्षा नहीं सुरेशा ॥ ६ ॥
यों नृप द्वादश वर्ष गुजारा । देख प्रजाजन दुखित अपारा ॥ ७ ॥
अब नृप वर ब्राह्मण बुलवाये । पूछा कारण तब द्विज गाये ॥ ८ ॥
तुम परिवेत्ता हो नरपाला । यही हेतु यह भयो अकाला ॥ ६ ॥
हे नृप दोष हरण के काजू । अग्रज प्रति देवउ इन राजू ॥ १० ॥

दोहा- **होवहिं तव राज्य में, हे नृप वृष्टि जरूर ।**
यह सुनकर नृप चल दिये, विपिन सिंह भरपूर ॥१४८॥

चौ- शन्तनु अग्रज पास सिधाये । कीन्ह विजय उन पद सिर नाये ॥ १ ॥
निज अधिकार सँभालउ ताता । चालउ पुर बीचे तुम भ्राता ॥ २ ॥
जब शन्तनु उत विपिन सिधावा । इत मंत्री इक कपट रचावा ॥ ३ ॥
कुछ द्विजगण निज पास बुलाये । सब देवापि पहँ भिजवाये ॥ ४ ॥
जाकर उन देवापि राया । वेद विरुध तेहि पाठ पढ़ाया ॥ ५ ॥
वेद मार्ग ते विचलित कियऊ । इसका फल है नृप यह भयऊ ॥ ६ ॥
नेहाश्रम वेदन अनुसारा । कियो नहीं नृप पद स्वीकारा ॥ ७ ॥
कीन्ही अरु विपरीत बुराई । यों वह निज अधिकार गँवाई ॥ ८ ॥
भए जब शन्तनु यों निरदोषा । कीन्ही सुरपति तब अति वर्षा ॥ ६ ॥
कर देवापि योग अब धारन । रहहिं कलाप ग्राम बिच राजन ॥ १० ॥

दोहा- **सोम वंश कलियुग विषै, होअहिं नष्ट तमाम ।**

तव सतयुग के आदि में, चालहिं इनसे नाम ॥१४६॥

चौ- नृप बाह्लीक पुत्र जो जाये । सोम दत्त जिन नाम कहाये ॥ १ ॥
सोमदत्त सुत तीन कहाये । भूरि व भूरिश्रवा शत गाये ॥ २ ॥
गंगा शन्तनु जो सुत जाये । महाभागवत भीष्म कहाये ॥ ३ ॥
जिन संगर तोपित किए राया । शन्तनु दास सुता इक वामा ॥ ४ ॥
हे नृप सत्यवती जिन नामा । जाये दो सुत वह निज धामा ॥ ५ ॥
चित्राङ्गद अग्रज लघु भ्राता । नाम विचित्रवीर्य जिन ताता ॥ ६ ॥
चित्राङ्गद चित्राङ्गद द्वारा । रणभूमि वीचे संहारा ॥ ७ ॥
जब शन्तनु संग सुनु नर नाहू । भयउ सत्यवतीन विवाहू ॥ ८ ॥
इससे प्रथम पराशर द्वारा । इससे भये व्यास अवतारा ॥ ६ ॥
कीन्हो जिन वेदन उद्धारा । भयो जन्म मम इनके द्वारा ॥ १० ॥

दोहा- नहीं पढ़ाई भागवत, निज शिष्यन के काज ।
पात्र जान इसका मुझे, द्वैपायन मुनिराज ॥१५०॥

चौ- गुप्त शास्त्र यह मुझे पढ़ावा । पैलादिक प्रति नहीं बतावा ॥ १ ॥
काशीपुर वीचे इक वारा । रचा स्वयंवर नृप के द्वारा ॥ २ ॥
भीष्म स्वयंवर बीच सिधाये । काशीराजसुता हर लाये ॥ ३ ॥
अम्बा अम्बालिक जिन नामा । रूपवती सुन्दर गुणधामा ॥ ४ ॥
नृपति विचित्र वीर्य के संगा । पाणीग्रहण कीन्ह सुत गंगा ॥ ५ ॥
आसत हृदय भये उन ऊपर । भये मृतक नृप क्षय युत होकर ॥ ६ ॥
मात कथन ते मुनि द्वैपायन । प्रजाहीन लखि भ्राता नारिन ॥ ७ ॥
अम्बा ते जाये धृतराष्टर । अम्बालिक ते पाँडू नृपवर ॥ ८ ॥
दासी संग विदुर सुत जाये । महाभागवत वे कहलाये ॥ ६ ॥
गांधारी धृतराष्टर दोऊ । दुर्योधन आदिक सुत सोऊ ॥ १० ॥

दोहा- कन्या जाई दुःशला, शत पुत्रन के साथ ।
मृगया कारन एक दिन, गये पांडु नरनाथ ॥१५१॥

चौ- दियो शाप मृग पांडव हेतू । मैथुन करत मरउ कुरुकेतू ॥ १ ॥
पा यों शाप तिया सहवासा । गयउ न पांडु तिया के पासा ॥ २ ॥
धर्म वायु तव सुरपति द्वारा । कुन्ती उदर अंश निज डारा ॥ ३ ॥
क्रमशः युधिष्ठिर भीम व अर्जुन । जाय तीन यूँ कुन्तीनन्दन ॥ ४ ॥
माद्री पांडू नृप लघुरानी । अशुनिकुमारन ते गुण स्वामी ॥ ५ ॥

सुत सहदेव नकुल दो जाये । अश्व शास्त्र पारंगत गाये ॥ ६ ॥
द्रौपदि पांच पुत्र इमि जाये । सुत प्रतिविन्ध्य युधिष्ठिर गाये ॥ ७ ॥
भीमसेन जाये श्रुतसेना । अरजुन सुत श्रुत कीरति माना ॥ ८ ॥
शतानीक नकुल के हर्मा । सुत सहदेव भये श्रुतकर्मा ॥ ९ ॥
पौरवि धर्मराज की रानी । जाये देवक सुत गुण खानी ॥ १० ॥

दोहा- **भीम हिडिम्वा के सुवन, जासु घटोत्कच नाम ।**
पुत्र सर्वगत भीम ते, भये कालिका धाम ॥१५२॥

चौ- विजया ते सहदेव सुहोत्रा । नकुल करेणुमति निरमित्रा ॥ १ ॥
कन्या नाग उलूपी नामा । इरावान सुत अरजुन धामा ॥ २ ॥
मणिपुर नृप वाला मृगनैनी । चित्राङ्गदि नामक पिक वैनी ॥ ३ ॥
बभ्रू वाहन अरजुन द्वारा । जायो सुत इन भली प्रकारा ॥ ४ ॥
धर्म पुत्रिका के अनुसारी । जो मातामह का अधिकारी ॥ ५ ॥
अर्जुन गेह सुभद्रा रानी । जाये अभिमन्यु बलखानी ॥ ६ ॥
जीते अति रथि जिन रण माँही । युद्ध कुशल जिन सम कोउ नांही ॥ ७ ॥
भयो जन्म हे नृपति तुम्हारा । गर्भ उत्तरा के इन द्वारा ॥ ८ ॥
द्रोण पुत्र ब्रह्मास्त्र प्रकासा । कुरू वंश सब भयो विनासा ॥ ९ ॥
कृष्ण कृपा ते तुमही राई । बचे एक मृत्यु मुख जाई ॥ १० ॥

दोहा- **चार पुत्र हैं नृपति तव, जन्मेजय श्रुतसेन ।**
भीमसेन जासू लघु, उग्रसेन कुरु ऐन ॥१५३॥

चौ- जन्मेजय तक्षक के द्वारा । सुनकर राजन निधन तुम्हारा ॥ १ ॥
करहीं नागयज्ञ वह भारी । होमहिं सर्पन क्रुधित अपारी ॥ २ ॥
जीत सकल महिं नृप वश करहीं । देकर भेंट कोप उन भरहीं ॥ ३ ॥
कावषेयतुर नाम पुरोधा । अश्वमेध मख हित उन सोधा ॥ ४ ॥
शतानीक जन्मेजय जाये । याज्ञवल्क्य जिन योग सिखाये ॥ ५ ॥
आत्मज्ञान शौनक मुनि द्वारा । कृप ते कि शिक्षा अस्त्र अपारा ॥ ६ ॥
सहस्रानीक तासु सुत होहीं । जासु धाम हय मेधज सोहीं ॥ ७ ॥
पुत्र असीम कृष्ण उन पाछे । नेमिचक्र नृपार्जित गुण आछे ॥ ८ ॥
हे नृप सभी भविष्यत काला । वरणन किये सभी नरपाला ॥ ९ ॥
डूबहिं यदा गजाह्वय सरिता । तब निमि चक्र सहित निज वनिता ॥ १० ॥

दोहा- कौशाम्बीपुर के विषै, करहीं जाय निवास ।

पुत्र चित्र रथ इन नृप, हों सुत कविरथ तासु ॥१५४॥

चौ- वृष्टिमान सुत कविरथ द्वारा । उन सुत नृपति सुपेण उदारा ॥ १ ॥
सुवन सुपेण सुनीथ कहावें । इन नृप धाम नृचक्षु बतावें ॥ २ ॥
इनके धाम सुखीनल आवें । परिप्लव नाम सुवन ये पावें ॥ ३ ॥
सुवन सुनय भए परिप्लव द्वारा । जिन मेधावी सुवन उदारा ॥ ४ ॥
मेधावी के नृपति नृपंजय । तासु दूर्व उन तिमि तम भंजय ॥ ५ ॥
नाम वृहद्रथ ये सुत जाये । सुत सुदास जिन नाम कहावे ॥ ६ ॥
शतानीक उन सुत दुरद्मना । दंड पाणि के निमिकिए कथना ॥ ७ ॥
क्षेभक भम सुवन ये पावें । कलि क्षेपक पुरुवंश नसावे ॥ ८ ॥
मागध नृपति भविष्यत काला । वरणन करूँ तुम्हें नरपाला ॥ ९ ॥
प्रथम वृहद्रथ जो नृपगाया । उन सुत जरासंध कहलाया ॥ १० ॥

दोहा- **मागध राज जरासंध, जाये सुत सहदेव ।**
गाये सुत सहदेव के, मारजारी नरदेव ॥१५५॥ क
मार्जारी के श्रुतश्रुवा, उन अयुतायु वखान ।
होवहिं उन निरमित्र सुत, शीलवान गुणवान ॥१५५॥ ख

चौ- सुनक्षत्री इन सुत होही । वृहत्सेन उन गेह सुसोहीं ॥ १ ॥
सुवन कर्मजित जिन गृह जाये । तासु सृतंजय सुवन कहाये ॥ २ ॥
इनके विप्र विप्र के क्षेमी । क्षेमी सुत सुव्रत अतिप्रेमी ॥ ३ ॥
धर्मसूत्र उनके सुत गाये । इन शम धुमत्सेन पुनि आये ॥ ४ ॥
जासु सुमति उन सुवल कहावा । तासु सुनीथ सत्यजित गावा ॥ ५ ॥
सुवन विश्वजित ये नृप जायें। नाम रिपुंजय इन सुत गाये ॥ ६ ॥
ये सब वृहदरथी नरपाला । करहीं राज्य भविष्यत काला ॥ ७ ॥
सहस वर्ष यावत कलिकाला । भोगहिं ये महि राज्य विशाला ॥ ८ ॥
बोले मुनि शुकदेव कृपाला । आगे कथा सुनौ कुरुपाला ॥ ९ ॥
नृपति ययाति सुवन अनुनामा । जाये तीन पुत्र निज धामा ॥ १० ॥

दोहा- **ज्येष्ठ सभानर चक्षु अरु, लघुपरोक्ष इति तीन ।**
जाय सभानर कालनर, उन सृंजय परवीन ॥१५६॥

चौ- जन्मेजय सृंजय सुत गाया । उन सुत महाशील सुनु राया ॥ १ ॥
महामना सुत ये नृप जाये । दो सुत इन नृपवर के गाये ॥ २ ॥
अनुज तितिक्षु व ज्येठ उशीनर । श्रुति सुत भये उसीनर घर पर ॥ ३ ॥

शिवि अरु वेन व शमि लघु भाई। दक्षनाम जिनका सब गाई ॥ ४ ॥
शिवि के पुत्र भये इतिचारी। वृषा दर्भ अरु वीर पुकारी ॥ ५ ॥
भद्र व कैकेय नृप जाता। नाम तितिक्षु उशीनर भ्राता ॥ ६ ॥
पुत्र रुशद्रथ इन सुत गाये। जिनके हेम पुत्र बतलाये ॥ ७ ॥
हेम पुत्र सुतपा बलि जासू। दीर्घतमा नामक मुनि तासू ॥ ८ ॥
बलि के क्षेत्र पुत्र षट् जाये। षट् प्रदेश निज नाम बसाये ॥ ९ ॥

दोहा- **अङ्ग व वङ्ग कलिङ्ग सुँह, पुंड्र अन्ध्र जिन नाम।**
अङ्ग पुत्र खन पान के, दिविरथ सुत बल धाम ॥१५७॥

चौ- नाम धरमरथ नृप सुत जासू। संतति हीन चित्ररथ तासू ॥ १ ॥
वहि नृप रोमपाद विख्याता। दशरथ नृपति सखा जिन जाता ॥ २ ॥
निज कन्या दशरथ रघुकेतू। दत्तक कीन्ह चित्ररथ हेतू ॥ ३ ॥
दाशरथी शान्ता वह बाला। व्याहे नृप श्रृङ्गी मुनिपाला ॥ ४ ॥
हरिणी गर्भ विभाडक द्वारा। जाये श्रृङ्गी परम उदारा ॥ ५ ॥
रोमपाद नृप अङ्ग प्रदेशू। वर्षे नहि इक बार सुरेशू ॥ ६ ॥
हाव भाव आलिंगन द्वारा। मोहित कर तब सभी प्रकारा ॥ ७ ॥
गणिकाएँ मुनि को वहँ लाईं। भई वृष्टि आवत मुनिराई ॥ ८ ॥
मारुत मख श्रृङ्गी रचवाया। रोमपाद संतति तब पाया ॥ ९ ॥
प्रजाहीन दशरथ रघुराई। इन द्वारा श्रुति संतति पाई ॥ १० ॥

दोहा- **रोम पादु चतुरंग सुत, प्रथुलाक्ष सुत जासु।**
जाये नृप ये तीन सुत, ज्येष्ठ वृहदरथ तासु ॥१५८॥

चौ- अनुज वृहत्कर्मा उन पाछे। नाम वृहद्भानु गुण आछे ॥ १ ॥
प्रथम वृहद्रथ जो सुत जाये। उन सुत वृहन्मना इति गाये ॥ २ ॥
जयद्रथ नाम नृपति भए जासू। संभूति नामातिय तासू ॥ ३ ॥
विजय नाम सुत इन गृह जाता। जिनके धृति नामक विख्याता ॥ ४ ॥
धृतव्रत जासू सुवन बखाना। सत्कर्मा सुत इन गुणवाना ॥ ५ ॥
सत्कर्मा के अधिरथ गाये। एक बार गंगा तट आये ॥ ६ ॥
शिशु उन क्रीड़मान उन गाया। कुन्ती कर गंग बीच बहाया ॥ ७ ॥
ले शिशु अधिरथ भवन सिधाये। कीन्ह पालना मन हुलसाये ॥ ८ ॥
यह कानीन सुवन इन गाया। भयो कर्ण वही शिशु राया ॥ ९ ॥

जाये कर्ण पुत्र वृषसेना । द्रुह्यू वंश सुनो कुरु ऐना ॥ १० ॥

दोहा- **द्रुह्यु के वभ्रू भये, उन सुत सेतु वखान ।**
सेतु के प्रारब्ध सुत, इन गांधार सुजान ॥१५६॥

चौ- तासु धर्म उन धृतसुत जाये । पुत्र दुर्मना उन कहलाये ॥ १ ॥
जासु प्रचेता उन शत पुत्रा । भये मलेच्छपति अति अपवित्रा ॥ २ ॥
पुत्र ययाति तुर्वसु जाये । उन वह्नि जिन भर्ग कहाये ॥ ३ ॥
भानुमान उन सुवन त्रिभानू । जासु करन्धम मरुत महानू ॥ ४ ॥
मरुत नृपति भए पुत्र विहीना । तव पुरुवंशि दुष्यन्त कुलीना ॥ ५ ॥
निज दत्तक सुत किए स्वीकारा । किन्तु तज वह निज अधिकारा ॥ ६ ॥
वापिस अपने धाम सिधाया । पुरुवंशी नृप पद उन भाया ॥ ७ ॥
नाहुप ज्येष्ठ पुत्र यदु गाया । पुन्य वंश उन सुन नरराया ॥ ८ ॥
यदु कुल वंश सकल अघहारी । सुनकर होअहिं नर भवपारी ॥ ९ ॥
मानव आकृति धर भगवाना । आये जहँ वे पुरुप पुराना ॥ १० ॥

दोहा- **चार पुत्र यदु के भये, सुनिये इनके नाम ।**
प्रथम सहस्राजित अरु, क्रोष्टा नल रिपुधाम ॥१६०॥

चौ- सहस्राजीत सुत शतजित गाये । जासू तीन पुत्र इति जाये ॥ १ ॥
ज्येष्ठ महाहय सुन इति गाया । वेणुहय हैहय लघुराया ॥ २ ॥
हैहय धर्मनेत्र जिन जाया । पुत्र कुन्ति सोहंजी गाया ॥ ३ ॥
महिष्मान भयउ इन गेहा । भद्रसेन नामक सुत जैहा ॥ ४ ॥
दुर्मद धनक पुत्र इन जाये । धनक गेह सुत चार वतावे ॥ ५ ॥
ज्येष्ठ पुत्र कृतवीर्य कहाये । नाम कृताग्नि अनुज जिन गाये ॥ ६ ॥
कृतवर्मा लघु भ्रात कृतौजा । भये प्रसिद्ध सभी वल औजा ॥ ७ ॥
सहस्रार्जुन कृतवीर्यज गाये । सप्तद्वीप अधिपति पद पाये ॥ ८ ॥
योग सिद्धि अत्रिज के द्वारा । पाये ये नृप भली प्रकारा ॥ ९ ॥
जासुगति यज्ञादिक माँही । अन्य नृपति कवहूँ ना पाही ॥ १० ॥

दोहा- **राम विन्दु शर पर वसु, सहस वरस नरपाल ।**
कार्तवीर्य इस भूमि पर, भोगे राज विशाल ॥१६१॥

चौ- इन नृप के सुत एक हजारी । वचे युद्ध जिन नाम पुकारी ॥ १ ॥
जयध्वज शूरसेन लघु तासू । वृषभ व मधु ऊर्जित इति जासू ॥ २ ॥
जयध्वज तालजंघ सुत जाये । जिनके पुत्र एक शत गाये ॥ ३ ॥

ऊर्व तेज जिन भयो संहारा । वीतिहोत्र इन ज्येष्ठ पुकारा ॥ ४ ॥
मधु नृप पुत्र एक शत गाये । वृष्णि जिन विच ज्येष्ठ कहाये ॥ ५ ॥
मधु वृष्णि यदुकुल निर्माता । भये यही नृपवर विख्याता ॥ ६ ॥
यदु सुत क्रोष्टु वृजिन जिन जाये । वृजिनवानश्वाहि सुत गाये ॥ ७ ॥
इन रुशेकु चित्ररथ जेहू । शशविन्दु नामक सुत येहू ॥ ८ ॥
सार्वभौम पद यह नृपाये । युद्ध अजेयि रतनपति गाये ॥ ९ ॥
अयुत नारि इन गेह बताई । प्रतिरानी इक लख सुत जाई ॥ १० ॥

दोहा- **अयुत महीपिन सुवन की, संख्या अरव बताई ।**
प्रथुश्रवादिक जिन विषे, षट् सुत मुख्य कहाइ ॥१६२॥

चौ- प्रथुश्रव सुवन धर्म जिन जाया । उन उशना उन रुचक कहाया ॥ १ ॥
नृपति रुचक सुत पाँच वताये । पुरुजित अग्र रुक्म इति गाये ॥ २ ॥
रुक्मेषु पृथु ज्यामधु भ्राता । ज्यामध तिय शैव्या इति जाता ॥ ३ ।
ज्यामध नृपवर परम उदारी । पहुँचे शत्रु भवन इक वारी ॥ ४ ॥
शत्रु सुता भोज्या जिन नामा । हरण कीन्ह लाये निज धामा ॥ ५ ॥
पति समीप देख इक नारी । शैव्या क्रुधित वंचन उचारी ॥ ६ ॥
मोरे स्थान कवन यह आई । सुन भयभीत वदत तब राई ॥ ७ ॥
पुत्र वधू तेरी यह रानी । सुन विस्मित हो करहि वह बानी ॥ ८ ॥
मैं वन्ध्या असपत्नि न कोई । पुनि सुत वधु यह क्यों कर होई ॥ ९ ॥
तब वोला रानी प्रतिवानी । होअंहिं सुत तोरे जव रानी ॥ १० ॥

दोहा- **तव उस सुत के संग में,इसका करूँ विवाह ।**
कुछ विचार तू मति करे, कहे वचन नर नाह ॥१६३॥

चौ- यह जो नृपवर वचन उचारे । विश्वेदेव पितरगण सारे ॥ १ ॥
अनुमोदन कीन्हे तत्काला । देख दुःखित ज्यामध नरपाला ॥ २ ॥
उन प्रसाद ते अव नृपरानी । भई गर्भवति सुमुखि सयानी ॥ ३ ॥
कुछ दिन पीछे एक कुमारा । जाये शैव्या परम उदारा ॥ ४ ॥
नाम करण उसका करवाये । नाम विदर्भ तासु तव गाये ॥ ५ ॥
भोज्या के संग तासु विवाहू । कीन्हो ज्यामध वह नर नाहू ॥ ६ ॥
वह विदर्भ भोज्या के द्वारा । कुश क्रथ रोमपाद सुकुमारा ॥ ७ ॥
पायें तीन पुत्र यों राई । यों गाथा शुक देव सुनाई ॥ ८ ॥
रोम पाद वभ्रु सुत जाये । उन सुत कृति जिन कुशिक कहाये ॥ ९ ॥

चेदि सुवन नृप कुशिक कहाये । चैद्यादिक जिन वंश चलाये ॥ १० ॥

दोहा- **क्रथ कुन्ति उन धृष्टि इन, जिन सुत भये दशार्ह ।**
भये पुत्र जीमूत जिन, इन विकृति नरनाह ॥१६४॥

चौ- पुत्र भीमरथ वे सुत जाये । उन नवरथ इन दशरथ गाये ॥ १ ॥
दशरथ सुवन शकुनि जिन नामा । भये करम्भि पुत्र इन धामा ॥ २ ॥
देवरात इनके सुत जाता । देवक्षेत्र के मधु विख्याता ॥ ३ ॥
माधव कुरुवश उन अनुगावा । पुरुहोत्र सुत आयु कहावा ॥ ४ ॥
सात्वत नाम पुत्र यह जाये । सात सुवन सात्वति इति गाये ॥ ५ ॥
भजि भजमान व दिव्य कुमारा । वृष्णि व देवावृध सुकुमारा ॥ ६ ॥
अन्धक महाभोज सुत साता । सुत भजमान तीन इति जाता ॥ ७ ॥
निम्लोचि व किंकिणि सुत दूजा । जाये वृष्णि सुवन इति तीजा ॥ ८ ॥
अन्य नारि ते यह भजमाना । जाये तीन सुवन बलवाना ॥ ९ ॥
सहस्राजित अरु भयउ शताजित । सबसे लघु जानउ अयुताजित ॥ १० ॥

दोहा- **देव वृध जाये सुत, नाम बभ्रु जिन गाय ।**
सभी मानवन के विषै, यह नृप श्रेष्ठ कहाय ॥१६५॥

चौ- देवावृध देवन सम माना । पा उपदेश इन्हो का नाना ॥ १ ॥
पैंसठ सहस आठ जिन ऊपर । गए नर मोक्षधाम सुनु नृपवर ॥ २ ॥
महाभोज सुत भोजा गाये । सात्वत के सुत वृष्णि कहाये ॥ ३ ॥
वृष्णि नृपति पुत्र दो जाये । प्रथम सुमित्र युधाजित गाये ॥ ४ ॥
शिनि अनमित्र युधाजित जाये । नृप अनमित्र निम्न्न सुत गाये ॥ ५ ॥
निम्न्न नृपति ने दो सुत जाये । सत्राजित व प्रसेन बताये ॥ ६ ॥
सुत अनमित्र अपर शिनिमाना । शिनि के पुत्र भये युयुधाना ॥ ७ ॥
उन ते जय जिनके कुणि गाये । कुणि नृप पुत्र युगन्धर जाये ॥ ८ ॥
सुत अनमित्र अपर इक माना । भये वृष्णि जिन नाम प्रधाना ॥ ९ ॥
वृष्णि अन्य पुत्र दो जाये । नाम श्व फल्क चित्ररथ गाये ॥ १० ॥

दोहा- **श्वफल्क गाँदिनी से नृप, जाये सुत दस तीन ।**
रहे प्रमुख अक्रूर जिन, भक्ति पंथ प्रवीन ॥१६६॥

चौ- आसंग व सारमेय मृदूरा । मृदुजित गिरि व धर्मवृद शूरा ॥ १ ॥
क्षेत्रोपेक्ष सुशर्मा जाये । अरिमर्दन अरिहन सुतपाये ॥ २ ॥
आत्मज गंधमाद प्रतिबाहू । सुचिरा नाम भगिनि इक याहू ॥ ३ ॥

गुणि अक्रूर पुत्र दो जाये । देववान उपवान सुहाये ॥ ४ ॥
भ्रात श्वफल्क चित्ररथ नामा । जाये सुवन पृथू बलधामा ॥ ५ ॥
अन्य विदूरथ आदिक केता । भये अनेक पुत्र रण जेता ॥ ६ ॥
सात्वत सुवन सुनो नृप अंधक । जाये पुत्र चार गुण ग्राहक ॥ ७ ॥
कुक्कुर प्रथम अपर भजमाना । शुचि कम्बल बर्हिप इन धामा ॥ ८ ॥
कुक्कुर सुवन वह्नि जिन नामा । भयो विलोमा सुत इन धामा ॥ ९ ॥
भये कपोत रोम सुत जासू । जिन सुत अनु अंधक सुत तासू ॥ १० ॥

दोहा- **अन्धक सुवन सुदुंदुभी, जिनके सुत अरिद्योत ।**
भये पुनर्वसु जासु सुत, उन आहुक कुल ज्योत ॥१९६॥

चौ- कन्या एक आहुकी नामा । दो सुत भए आहुक के धामा ॥ १ ॥
देवक उग्रसेन इति गाये । देवक चार पुत्र यों पाये ॥ २ ॥
देववान उपदेव सुदेवा । पुत्र देववर्धन नरदेवा ॥ ३ ॥
भगिनी सात रही इन राई । सो वसुदेव संग परणाई ॥ ४ ॥
प्रथम भगिनि धृतदेवा गाई । अपर शान्तिदेवा कहलाई ॥ ५ ॥
उपदेवा श्रीदेवा गाई । पंचम देव रक्षिता राई ॥ ६ ॥
सहदेवा देवकि गुणवन्ता । प्रकटे जासु उदर भगवन्ता ॥ ७ ॥
उग्रसेन नवसुत बलधामा । कंस व कंक व शंकु सुनामा ॥ ८ ॥
सुहु न्यग्रोध सृष्टि रणजेता । राष्ट्रपाल तुष्टि व सुत येता ॥ ९ ॥
उग्रसेन दुहिता सुनुराई । जो संख्या बिच पाँच बताई ॥ १० ॥

दोहा- **कंसा कंसवती अरु, कंका रूप अपार ।**
राष्ट्रपालिका शूरभू, वसुदेवानुज नार ॥१९८॥

चौ- अन्धक सुवन भये भजमाना । तासु विदूरथ अति बलवाना ॥ १ ॥
इन सुत शूर व उन भजमाना । शिनि पुनि स्वयंभोज गुणवाना ॥ २ ॥
स्वयं भोज सुत भये हृदीका । चार पुत्र इन जिनगुण नीका ॥ ३ ॥
देवबाहू शतधनु कृतवर्मा । देवमीढ़ इति सुत शुभकर्मा ॥ ४ ॥
देवमीढ़ सुत शूर कहाये । नाम मारिषा यह तिय पाये ॥ ५ ॥
शूर मारिषा सुत दश जाये । जिन अग्रज वसुदेव कहाये ॥ ६ ॥
देवभाग देवश्रव आनक । सृन्जय कङ्क शमीक व श्यामक ॥ ७ ॥
पुण्यात्मा वत्सक वृक भ्राता । जब वसुदेव जनम नृप गाता ॥ ८ ॥
तब सुर नौबत और नगारे । बजने लगे स्वयं ही सारे ॥ ९ ॥

आनक दुंदुभि ये वसुदेवा । यही हेतु गाये "नरदेवा" ॥ १० ॥

दोहा- **जनक यही श्री कृष्ण के, पांच भगिनि इन जात ।**
प्रथम प्रथा अपरा सुनो, श्रुत देवा विख्यात ॥१६६॥

चौ- श्रुतकीरति श्रुतश्रवा सयानी । लघु नृपाधि देवी गुणखानी ॥ १ ॥
संतति हीन कुन्त नरपाला । दीन्ही शूर पृथा निज बाला ॥ २ ॥
मुनिवर दुरवासा इक बारी । आये पृथा पास इक बारी ॥ ३ ॥
पृथा कीन्ह आगत मुनि पूजन । भये मुदित तब अत्रिनन्दन ॥ ४ ॥
दीन्ही विद्यासुर आह्वानी । गये बाद आश्रम मुनि ज्ञानी ॥ ५ ॥
बाद परीक्षा हित वह बाला । रवि आवाहन किय तत्काला ॥ ६ ॥
आगत देव रविहिं वह बोली । परीक्षा हित विद्या में तौली ॥ ७ ॥
अब निज स्थान हे देव सिधाहू । मम अपराध क्षमा कर जाहू ॥ ८ ॥
तब बोले रवि अमृत बानी । दर्शन व्यर्थ न मोर सयानी ॥ ९ ॥
उदर गर्भ स्थापित कर तोरे । जाँउ सुमुखि मैं पुनि घर मोरे ॥ १० ॥

दोहा- **योनि न दूषित होय तव, ऐसो करूँ उपाय ।**
यों कहि स्थापित गर्भ करि, रवि निज धाम सिधाय ॥१७०॥

चौ- बाद पृथा के भये कुमारा । अपर भानु सम अति उजियारा ॥ १ ॥
तदा लोक भय मान सयानी । डारा वह सुत सरिता पानी ॥ २ ॥
प्रपितामह तव हे नर नाहू । इसी प्रथा संग कीन्ह विवाहू ॥ ३ ॥
करुष देशपति सुनु नर राया । नाम वृद्धशर्मा सब गाया ॥ ४ ॥
उन श्रुत देवा से सुत जाया । दन्तवक्र नामक वह गाया ॥ ५ ॥
धृष्टकेतु कैकेय नरराया । श्रुतकीरति संग शर सुत जाया ॥ ६ ॥
संतर्नादिक इन सुत नामा । ये सब पुत्र भये बलधामा ॥ ७ ॥
नृप अवन्ति जमसेन कहाये । पुत्र नृपाधि देवि युग जाये ॥ ८ ॥
नाम विन्द अनुविन्द बताये । चेदिप जो दमघोष कहाये ॥ ९ ॥
जासु तिया श्रुतश्रवा विशाला । जाये सुत नामक शिशुपाला ॥ १० ॥

दोहा- **भगिनी श्री वसुदेव की, श्रवण कियो इन वंश ।**
इनके भ्रातन का सुनो, अब कुल कुरु अवतंश ॥१७१॥

चौ- देव भाग ते कंसा नारी । चित्तरकेतु वृहद्दल भारी ॥ १ ॥
कंसवती देवश्रव सोऊ । सुत इषुमान सुवीर य दोऊ ॥ २ ॥
आनक कंका ते सुत जाता । सत्यजीत पुरुजित दोउ भ्राता ॥ ३ ॥

राष्ट्रपालि सृंजय ते राया । वृष दुरमर्षणादि सुत जाया ॥ ४ ॥
श्यामक शुरभूमि सुत दोऊ । हिरण्याक्ष हरि केशव सोऊ ॥ ५ ॥
मिश्र केशि अपसरा सयानी । पुत्र वृकादि वत्सक बहुज्ञानी ॥ ६ ॥
वृक दुर्वाक्षी ते सुत जाये । तक्ष व पुष्कर शाल कहाये ॥ ७ ॥
सुत शमीक सुदामिनि जाये । अर्जुनपाल सुमित्र बताये ॥ ८ ॥
कंक कर्णिका युग सुत नामा । लघुजय अग्रज भए ऋतुधामा ॥ ९ ॥
तिया सात वसुदेव बखानी । एक एक ते सब गुण खानी ॥ १० ॥

दोहा- **प्रथम पौरवी रोहिणी, भद्रा मदिरा तात ।**
इला लोचना देवकी, जो सब जग विख्याता ॥१७२॥

चौ- रोहिणि ते बल गद ध्रुव जाये । सारण दुर्मद विपुल सुहाये ॥ १ ॥
ध्रुव कृतादि सब सुत अति सुन्दर । सुनौ पौरवी पुत्र नृपति वर ॥ २ ॥
भद्रबाहु दुर्मद व सुभद्रा । जाये भूतादिक सह भद्रा ॥ ३ ॥
मदिरा ते वसुदेव दयालू । नन्द अउर उपनन्द कृपालू ॥ ४ ॥
कृतक व शूरादिक इति गाया । भद्रासुत केशी बतलाया ॥ ५ ॥
जार रोचना जो सुत जाये । हस्त व हेमाङ्गद इति गाये ॥ ६ ॥
उरु वल्कादि इला सुत जाये । सुत धृतदेवि विपृष्ट कहाये ॥ ७ ॥
शम प्रतिश्रुत आदिक सुत येता । जाये शान्ति देवि रण जेता ॥ ८ ॥
उपदेवा के पुत्र कहाये । कल्प व वर्षादिक दस गाये ॥ ९ ॥
वसु अरु हंस सुवंश सहेता । जाये श्री देवा सुत येता ॥ १० ॥

दोहा- **देव रक्षिता के सुत, गद आदिक नव जान ।**
पुरु विश्रुतादिक वसु, सहदेवा के मान ॥१७३॥

चौ- पुत्र देवकी वसु इति जाये । कीरतिमान सुषेण सुहाये ॥ १ ॥
भद्रसेन ऋजु अरु संमर्दन । भद्र व खलभंजन संकर्षन ॥ २ ॥
अष्टम सुवन स्वयं हरि आये । कन्या नाम सुभद्रा गाये ॥ ३ ॥
राजन पितामही यह तोरी । बड़भागी गुणवति अति भोरी ॥ ४ ॥
होअहिं यदा धर्म की हानी । होअहिं पाप वृद्धि मनमानी ॥ ५ ॥
तब अवतार स्वयं हरि धारे । दुष्टन हनि महि भार उतारे ॥ ६ ॥
हरि के जन्म कर्म का हेतू । यद्यपि कुछ भी नहि नर केतू ॥ ७ ॥
ये सब जानउ उनकी माया । कारण और नहिं कुछ पाया ॥ ८ ॥
उनका अनुग्रह ही सुनु राया । करके माया को अलगाया ॥ ९ ॥

आनक दुंदुभि ये वसुदेवा । यही हेतु गाये "नरदेवा" ॥ १० ॥

दोहा- **जनक यही श्री कृष्ण के, पांच भगिनि इन जात ।**
प्रथम प्रथा अपरा सुनौ, श्रुत देवा विख्यात ॥१६६॥

चौ- श्रुतकीरति श्रुतश्रवा सयानी । लघु नृपाधि देवी गुणखानी ॥ १ ॥
संतति हीन कुन्त नरपाला । दीन्ही शूर पृथा निज वाला ॥ २ ॥
मुनिवर दुरवासा इक वारी । आये पृथा पास इक वारी ॥ ३ ॥
पृथा कीन्ह आगत मुनि पूजन । भये मुदित तब अत्रिनन्दन ॥ ४ ॥
दीन्ही विद्यासुर आह्वानी । गये वाद आश्रम मुनि ज्ञानी ॥ ५ ॥
वाद परीक्षा हित वह वाला । रवि आवाहन किय तत्काला ॥ ६ ॥
आगत देव रविहिं वह वोली । परीक्षा हित विद्या मैं तौली ॥ ७ ॥
अव निज स्थान हे देव सिधाहू । मम अपराध क्षमा कर जाहू ॥ ८ ॥
तव वोले रवि अमृत वानी । दर्शन व्यर्थ न मोर सयानी ॥ ६ ॥
उदर गर्भ स्थापित कर तोरे । जाँउ सुमुखि मैं पुनि घर मोरे ॥ १० ॥

दोहा- **योंनि न दूषित होय तव, ऐसो करूँ उपाय ।**
यों कहि स्थापित गर्भ करि, रवि निज धाम सिधाय ॥१७०॥

चौ- वाद पृथा के भये कुमारा । अपर भानु सम अति उजियारा ॥ १ ॥
तदा लोक भय मान सयानी । डारा वह सुत सरिता पानी ॥ २ ॥
प्रपितामह तव हे नर नाहू । इसी प्रथा संग कीन्ह विवाहू ॥ ३ ॥
करुष देशपति सुनु नर राया । नाम वृद्धशर्मा सब गाया ॥ ४ ॥
उन श्रुत देवा से सुत जाया । दन्तवक्र नामक वह गाया ॥ ५ ॥
धृष्टकेतु कैकेय नरराया । श्रुतकीरति संग शर सुत जाया ॥ ६ ॥
संतर्नादिक इन सुत नामा । ये सब पुत्र भये वलधामा ॥ ७ ॥
नृप अवन्ति जमसेन कहाये । पुत्र नृपाधि देवि युग जाये ॥ ८ ॥
नाम विन्द अनुविन्द वताये । चेदिप जो दमघोष कहाये ॥ ६ ॥
जासु तिया श्रुतश्रवा विशाला । जाये सुत नामक शिशुपाला ॥ १० ॥

दोहा- **भगिनी श्री वसुदेव की, श्रवण कियो इन वंश ।**
इनके भ्रातन का सुनो, अव कुल कुरु अवतंश ॥१७१॥

चौ- देव भाग ते कंसा नारी । चित्तरकेतु वृहद्धल भारी ॥ १ ॥
कंसवती देवश्रव सोऊ । सुत इषुमान सुवीर य दोऊ ॥ २ ॥
आनक कंका ते सुत जाता । सत्यजीत पुरुजित दोउ भ्राता ॥ ३ ॥

राष्ट्रपालि सृंजय ते राया । वृप दुरमर्षणादि सुत जाया ॥ ४ ॥
श्यामक शुरभूमि सुत दोऊ । हिरण्याक्ष हरि केशव सोऊ ॥ ५ ॥
मिश्र केशि अपसरा सयानी । पुत्र वृकादि वत्सक वहुज्ञानी ॥ ६ ॥
वृक दुर्वाक्षी ते सुत जाये । तक्ष व पुष्कर शाल कहाये ॥ ७ ॥
सुत शमीक सुदामिनि जाये । अर्जुनपाल सुमित्र वताये ॥ ८ ॥
कंक कर्णिका युग सुत नामा । लघुजय अग्रज भए ऋतुधामा ॥ ९ ॥
तिया सात वसुदेव वखानी । एक एक ते सब गुण खानी ॥ १० ॥

दोहा- **प्रथम पौरवी रोहिणी, भद्रा मदिरा तात ।**
इला लोचना देवकी, जो सब जग विख्याता ॥१७२॥

चौ- रोहिणि ते वल गद ध्रुव जाये । सारण दुर्मद विपुल सुहाये ॥ १ ॥
ध्रुव कृतादि सब सुत अति सुन्दर । सुनौ पौरवी पुत्र नृपति वर ॥ २ ॥
भद्रबाहु दुर्मद व सुभद्रा । जाये भूतादिक सह भद्रा ॥ ३ ॥
मदिरा ते वसुदेव दयालू । नन्द अउर उपनन्द कृपालू ॥ ४ ॥
कृतक व शूरादिक इति गाया । भद्रासुत केशी वतलाया ॥ ५ ॥
जार रोचना जो सुत जाये । हस्त व हेमाङ्गद इति गाये ॥ ६ ॥
उरु वल्कादि इला सुत जाये । सुत धृतदेवि विपृष्ट कहाये ॥ ७ ॥
शम प्रतिश्रुत आदिक सुत येता । जाये शान्ति देवि रण जेता ॥ ८ ॥
उपदेवा के पुत्र कहाये । कल्प व वर्षादिक दस गाये ॥ ९ ॥
वसु अरु हंस सुवंश सहेता । जाये श्री देवा सुत येता ॥ १० ॥

दोहा- **देव रक्षिता के सुत, गद आदिक नव जान ।**
पुरु विश्रुतादिक वसु, सहदेवा के मान ॥१७३॥

चौ- पुत्र देवकी वसु इति जाये । कीरतिमान सुषेण सुहाये ॥ १ ॥
भद्रसेन ऋजु अरु संमर्दन । भद्र व खलभंजन संकर्षन ॥ २ ॥
अष्टम सुवन स्वयं हरि आये । कन्या नाम सुभद्रा गाये ॥ ३ ॥
राजन पितामही यह तोरी । वड़भागी गुणवति अति भोरी ॥ ४ ॥
होअहिं यदा धर्म की हानी । होअहिं पाप वृद्धि मनमानी ॥ ५ ॥
तब अवतार स्वयं हरि धारे । दुष्टन हनि महि भार उतारे ॥ ६ ॥
हरि के जन्म कर्म का हेतू । यद्यपि कुछ भी नहि नर केतू ॥ ७ ॥
ये सब जानउ उनकी माया । कारण और नहिं कुछ पाया ॥ ८ ॥
उनका अनुग्रह ही सुनु राया । करके माया को अलगाया ॥ ९ ॥

॥ श्री गणेशाय नमः ॥
॥ श्री राधा वल्लभो विजयते ॥
॥ श्रीमद्भागवत प्रारम्भः ॥
दशम स्कंधः (पूर्वार्द्ध)
श्लोक

झटिति दुरित तापं दीनवन्धो मुरारी ।
हरतु सकल पापं देवकी दुखहारी ॥
व्रजयुवति विहारी रासलीला प्रचारी ।
व्रजजन हितकारी इन्द्रमानापहारी ॥

दोहा- श्री गुरु गोवर्धन चरण, वन्दों वारम्वार ।
सदा विजय होती रहे, जिनकी कृपा अपार ॥ १ ॥ क
कर मुरली माथे मुकुट, लकुट दूसरे हाथ ।
यह छवि निरखन को मिले, कृष्ण चन्द्र वृजनाथ ॥१॥ ख
श्री वृजनाथ कृपा करो, विनय करौ कर जोर ।
दास जानकर चरन का, सुनो प्रार्थना मोर ॥ १ ॥ ग

छन्द- गणेश फणीश महेश मुनीश, सुरेश ऋषीश धनेश रटेरे।
दिनेश निशीश नगेश कपीश, प्रजेश कवीश खगेश जपेरे॥
नृपेश महीश गुणेश नदीश, सुखेश सदा सुर सिद्ध नवेरे।
दऊ कर जोर कहे वजरंग, करे वहि पूर मनोरथ मेरे ॥१॥

दोहा- सोम सूर्य अद्भुत चरित, सहित वंश विस्तार ।
हे ब्रह्मन सुनकर मुझे, आई खुशी अपार ॥ २ ॥ क
जिस कुल में श्री कृष्ण ने, लेकर के अवतार ।
साधु ऋषीश्वर संत हित, की लीला संसार ॥ २ ॥ ख
जन्म मरण से हीन है, नारायण करतार ।
कवन काज धारा उन्हें, पृथ्वी पर अवतार ॥ २ ॥ ग

चौ- तव मुख ते सुनि कथा सुहावन । आलस हीन भयो अति पावन ॥ १ ॥
जो मोंहि नाथ य गाथ सुनाई । तृषावन्त मनु अमृत पाई ॥ २ ॥
करते स्तुति ब्रह्मादिक देवा । हारि गये सब कर प्रभु सेवा ॥ ३ ॥
सत्यसंध का यश नहिं जाने । पुनि नर कवन प्रकार बखाने ॥ ४ ॥
करणादिक सब वीर नसाये । कृष्ण कृपा पांडव जय पाये ॥ ५ ॥

द्रौण पुत्र चाहा मोहि मारन । पांडव वंश मिटावन कारन ॥ ६ ॥
तेहि समय श्री कृष्ण कृपाला । आय सहाय कीन्ह मुनि पाला ॥ ७ ॥
नाम लेत अघ काटहिं जासू । मुनिवर गाथ सुनावहु तासू ॥ ८ ॥
रोहिणि सुत संकरषण रामा । गाये प्रथम आप इति नामा ॥ ६ ॥
गर्भ देवकी बीच मुनीशा । यह सम्बन्ध भयो किमि ईशा ॥ १० ॥

दोहा- नृपति परीक्षित के वचन, सुन बोले मुनिराय ।
धन्य नृपति भगवान की, सुनो कथा चितलाय ॥ ३ ॥

छन्द- पूछ कर श्री कृष्ण की यह, गाथ मुझको सुख दिया ।
अन्न अरु जलपान तुमने, वहुत दिन से ना किया ॥
चित्त तेरा यह ठिकाने, हो गया ना इसलिए ।
सो मुझे हुँसियार होकर के य सुनना चाहिए ॥ २ ॥
यह वचन सुन गजपुर पति, कहने लगा जव आपने।
नव स्कंध अमृत रूप गाथा, जो कहि श्री मान ने ॥
श्रवन के मग पान करने, से उदर मेरा भर ।
यहि हेतु प्यास क्षुधा मुनीवर, ना सताई है जरा ॥ ३ ॥

दोहा- यह सुनकर शुकदेव मुनि, कर प्रभु चरणन ध्यान ।
दसम स्कंध की कथा का, करने लगे वखान ॥ ४ ॥ क
द्वापर युग संध्यांश में, कीन्ह कंस जव राज ।
साधु ऋषिन को दुख दे, करने लगा अकाज ॥ ४ ॥ ख

चौ- एक दिवस नृप आज्ञा पाई । कंस राज विच फिरी दुहाई ॥ १ ॥
विष्णु नाम लेवउ मति कोई । वरना नृप अपराधी होई ॥ २ ॥
जप तप हवन दान मख धर्मा । राखों बन्द तजो यह कर्मा ॥ ३ ॥
जो यह वचन न मानहि कोई । तो असि ते काटऊं शिर सोई ॥ ४ ॥
सब शुभ कर्म गयउ जब बीता । भए गौ विप्र भक्त भयभीता ॥ ५ ॥
सह न सकी अवनी यह भारा । सुरभि रुप धर करत पुकारा ॥ ६ ॥
धात समीप कही सब बाता । जो कंसा नित पाप कमाता ॥ ७ ॥
तब ब्रह्मादिक सुर शिव शंकर । मिलकर गए जहँ क्षीर समुन्दर ॥ ८ ॥
निजकर युगल जोर सब ठाढे । करि पुकार पुलकावलि बाढे ॥ ६ ॥
सब मिल पुरुषसूक्त के द्वारा । संकटहर हरि नाम उचारा ॥ १० ॥

छन्द- यह भूमि अघ से हो दुखी, आई शरण में हे प्रभो।
जग कालिमा अति छा गई, अब नींद त्यागो हे विभो॥
जय मीन रूप व कूर्म वपुधर, वामनं जय माधवं।
धर रूप सूकर भार महि हर, मारऊ इस दानवं ॥ ४ ॥

दोहा- कंस अधर्मी ने प्रभो, दीन्हा दुःख अपार।
धर्म कर्म सब बन्द कर, कीन्हा अत्याचार ॥५ ॥ क
यही हेतु हम सब मिल, आये शरण तुम्हार।
मेटो सारे क्लेश अब, कंश निशाचर मार ॥ ५ ॥ ख
विनय सुरन की सुनत ही, नभ ते एक अवाज।
सबके कानों में परी, त्यागो भय नर राज ॥ ५ ॥ ग

चौ- पूर्व जन्म देवकि वसुदेवा। माँगा यह वर कर मम सेवा ॥ १ ॥
तुम सुत और पिता मैं होऊँ। यह वरदान देउ प्रभु मोऊँ ॥ २ ॥
एवमस्तु तब मैं कह दयऊँ। सुन मम वचन गेह निज गयऊ ॥ ३ ॥
मधुपुर वास करत अब दोई। उनके गेह जनम मम होई ॥ ४ ॥
पुनि जा गोकुल नन्द यशोदा। लीला बाल दिखावहुँ मोदा ॥ ५ ॥
तुम गोकुल मथुरा बृज जाऊ। यादव ग्वाल बाल कहलाऊ ॥ ६ ॥
अमरवृन्द ऋषि मुनि दुख व्यापा। जो महि पर आयउ संतापा ॥ ७ ॥
यह सब बात प्रथम मैं जानी। अब मत लाउ बीच मन ग्लानी ॥ ८ ॥
ऋचा वेद की अरु सुर नारी। बृजबाला बन जावउ सारी ॥ ९ ॥
मम माया भी बृज बिच आहीं। यशुमति गर्भ बीच प्रकटाहीं ॥ १० ॥

दोहा- पाछे चार स्वरूप से, लेकर मैं अवतार।
कंसा दिक का नाश कर, हरूँ भूमि का भार ॥ ६ ॥

चौ- यह बानी सुन सब हरषाये। हरषित हो निज लोक सिधाये ॥ १ ॥
पाछे प्रभु आज्ञा अनुसारी। सुरमुनि किन्नर. ले निज नारी ॥ २ ॥
जन्म धारि मथुरा बृज आये। यादव ग्वाल बाल कहलाये ॥ ३ ॥
कह शुकदेव सुनऊ नरनाहू। कहूँ कथा वसुदेव विवाहू ॥ ४ ॥
उग्रसेन नृप का लघु भाई। देवक नाम जगत गुणगाई ॥ ५ ॥
जासु सुता इक देवकि नामा। सुन्दर सुखद सुमंगल कामा ॥ ६ ॥
देवक जानि सयानी बाई। की वसुदव के संग सगाई ॥ ७ ॥
दिवस देखि शुभ लगन लिखाई। भेजा शूर सेन गृह नाई ॥ ८ ॥

दोहा- लग्न पत्रिका देखि के, शूरसेन महाराज ।
ले वरात वसुदेव की आये, व्याहन काज ॥ ७ ॥

चौ- उग्रसेन नृप देवक कंसा । लखि वरात अति करत प्रशंसा ॥ १ ॥
आगे गयउ करन अगवानी । दिय जनवास कंस अभिमानी ॥ २ ॥
कर विवाह पुनि विधि अनुकूला । दीन्हा द्रव्य दहेजा अतूला ॥ ३ ॥
अश्व पंचदश सहस अनूपा । दिये मतंग सहस चतुभूपा ॥ ४ ॥
शत पुरान रथ दासि व दासा । दो शत दिये कंस मय वासा ॥ ५ ॥
वाजे शंख व तूर्य मृदङ्गा भये मुदित सव परिजन अंगा ॥ ६ ॥
जव वरात नृप विदा कराई । तव नृप कंस चढ़ा रथ आई ॥ ७ ॥

दोहा- आप भयौ रथवान जव, देवकि रत्थ चढ़ाय ।
चला प्रेम से वह वली, पहुँचावन नर राय ॥ ८ ॥

चौ- रथ हाँकत जव चला घमंडी । कियो गमन कुछ दूर उदंडी ॥ १ ॥
तेहि समय नभ ते यक वानी । सुनी कंस ने रे अभिमानी ॥ २ ॥
वड़े प्रेम पहुँचावत जेहू । अष्टम वाल काल तव येहू ॥ ३ ॥
लगा गात कंपन सुन वानी । लेकर खड्ग करत अभिमानी ॥ ४ ॥
वृक्ष विना फल लगहिं न छाया । करहिं काल वहि करऊँ उपाया ॥ ५ ॥
देवकि हनन करों इस काला । तो नहि होअहिं अष्टम वाला ॥ ६ ॥
यों कह कर निज दसन वजावा । कर कच खेंच मारने धावा ॥ ७ ॥
जिहि तरुवर पर विष फल लागा । नासे तेहि न कौन अभागा ॥ ८ ॥

दोहा- इसे मार कर मैं अभी, करों अकंटक राज ।
दशा देख कर यह सभी, दुखी भये नर राज ॥ ९ ॥क
यह अनीति लखि कंस की, रोक सका नहि कोय ।
समय देख के शूरसुत, वोले दोउ कर जोय ॥ ९ ॥ ख

चौ- वल प्रताप तव सव जग जाना । स्त्री वध उचित न शास्त्र वखाना ॥ १ ॥
शूरवीर हो अति परतापी । भगिनि हनन नहिं नीक कदापी ॥ २ ॥
यह अधर्म कर किमि अव परहू । जन्मित एक दिवस नर मरहू ॥ ३ ॥
जो अव कर तन रक्षक होई । तेहि मतिमन्द कहेउ सव कोई ॥ ४ ॥
राज्य भोग कछु काम न ऐहैं । केवल जन अपजस जग लैहैं ॥ ५ ॥
भए दिलीप दशरथ दशकंधर । शूरवीर दानी गुण मंदिर ॥ ६ ॥

ये सब भए नृप काल कलेऊ । भगिनि हनन क्यों अपयश लेऊ ॥ ७ ॥
यह सुनि कंश कहत अभिमानी । हे वसुदेव सत्य तव वानी ॥ ८ ॥

दोहा- हनों नहिं यदि देवकी, तजहिं न चित्त शरीर ।
तुम भी तो यह सुन चुके, नभ वानी गंभीर ॥ १० ॥

चौ- करउ विचार व सोचर वूझे । मरहि न दोउ युक्ति यह सूझे ॥ १ ॥
कर विचार बोले वसुदेवा । तजहु एहि अह निशिचर देवा ॥ २ ॥
पुत्र देवकी ते जो होईं । जन्मन आनि देउँ मैं तोंई ॥ ३ ॥
देवकी सुत ते भय अधिकाई । यहि वध करउ क्यों पाप कमाई ॥ ४ ॥
कहों सूर्य चन्द कर साखी । तव कंसा वह जीवित राखी ॥ ५ ॥
बोला कंस सुनो बहनोई । तव वच मान सत्य सुख होई ॥ ६ ॥

दोहा- बहनोई अरु बहिन को, कर पुनि विदा नरेश ।
गयो राजमंदिर उधर, इधर गये बहिनेश ॥ ११ ॥ क
जब वसुदेव व देवकी, गए दोउ अपने धाम ।
कुछ दिन में पैदा हुआ, सुन्दर सुवन ललाम ॥ ११॥ख
उसी समय रोते हुए, बालक ले वसुदेव ।
कंसा के आगे गये, बोले यह सुत लेव ॥ ११ ॥ ग

चौ- तब नृप कंस कहेउ हरषाई । यह नहि काल हमारा भाई ॥ १ ॥
तुम तज कपट मोह जंजाला । परहित काज दियो यह बाला ॥ २ ॥
पुरस्कार यह देवहुँ तोहीं । अष्टम सुवन दीजिए मोहीं ॥ ३ ॥
येहि मार किमि पाप कमाऊँ । यह सुत ले तुम निज गृह जाऊ ॥ ४ ॥
होय मुदित तव सत्य धुरन्धर । ले सुत गय तव वे निज मन्दिर ॥ ५ ॥
मन्त्रिन से यह बोलेउ कंसा । व्यर्थ मार यहिं क्यों नसुँ वंसा ॥ ६ ॥
तेहि समय नारद वहँ आये । सादर नृप आसन पधराये ॥ ७ ॥
चरण धोय चरणामृत लीन्हा । विधि प्रकार पूजन उन कीन्हा ॥ ८ ॥

दोहा- नारद मुनि पुनि कंस से, बोले यों समुझाय ।
अरे कंस सुत बहिन का, फेर दिया क्यों आय ॥ १२ ॥

छन्द- नन्द पशुपति गोप ग्वाला, और वृजबाला अभी ।
देवकी वसुदेव आदिक, वृष्णि अरु यादव सभी ॥
देव ऋषि मुनि किन्नरादिक, रूप से जानउ इन्हें ।
धाम तजि निज आ गये, ये नाश करने नृप तुम्हें ॥ ५ ॥

गर्भ अष्टम वीच राजन, कृष्ण ले अवतार को।
तुव सहित निशिचर मारकर, वे हरहिं भूमि भार को॥
मित्र तुम इनको न समझो, है तुम्हारे ये अरि।
कंस को समझाय के, नारद गये कहते हरि॥ ६ ॥
पुनि कंस ने वसुदेव को, सह पुत्र के वुलवा लिया।
पकर पद उस पुत्र के, अति शीघ्र वध उसका किया।
देवकी वसुदेव को, पापी ने कारागार में
धर दिया ताले लगा, उस अधम अत्याचार ने॥ ७ ॥

दोहा- मना किया जव कंस को, उग्रसेन महाराज।
तव उस पापी ने कियो, झुंझलाकर इक काज॥ १३ ॥ क
जकड़ जंजीरों में, उन्हें पहरे दिये विठार।
जावन यह पावे नही, वुद्धि हीन गँवार॥१३॥ ख

छन्द- केशी अघासुर औ वकासुर, धेनुकासुर को वहाँ।
वुलवाय के कहने लगा, नारद मुनी आये यहाँ॥
कह गये वह जो सुनो, मथुरा व गोकुल में अरे।
जन्म लीन्हा आपके सुर, सिद्ध औ मुनि किन्नरे॥ ८ ॥
श्री कृष्ण भी उनहीं के अन्दर, धार कर अवतार को।
नाश कर सव राक्षसन का, हरहिं भूमि भार को॥
यहि हेतु तुम सव लोग मिलकर, यादवों को मारकर।
लूट लो धन धाम सारा, वेफिकर होकर निडर॥ ९ ॥

दोहा- कंसाज्ञा को मानकर, चले निशाचर दुष्ट।
यदुवंशिन को पकर के, देन लगे अति कष्ट॥ १४ ॥

भुजंग प्रयात- किसी को डुवाया है, पानी में जाके।
किसी को जलाया है, अग्नी जलाके।
कितेही दवाके, गले मार डाले।
किसी के लगाये, छुरी और भाले॥ १० ॥
मथूरापुरी में, मचा कोहरामा।
तजी भ्रात वन्धु, सुता पुत्र वामा॥
सवै वृष्णि वंशी, जवै भाग चाले।
पराद्रव्य सारा व, नीचों के पाले॥ ११ ॥

दोहा- कति यदुवंशी नगर तजि, वसे देश पंचार ।
वसूदेव ने देवकी, भेजी नन्दागार ॥ १० ॥ क
पांच पुत्र वसुदेव के, हने कंस इस तौर ।
अब तुम आगे की कथा, सुनो नृपति कर गौर ॥ १५ ॥ ख

चौ- यह सुनि कहेउ परीक्षित भूपा । रहे देवरिषि ज्ञान स्वरूपा ॥ १ ॥
जाकर कंस पास मुनिराया । बालक वध केहि काज कराया ॥ २ ॥
कहे कीर सुन करिपुर राया । मुनि यहि हित यह पाप कराया ॥ ३ ॥
पुण्यहीन जब होअहिं कंसा । शीघ्र मरहिं यह तब नह वंसा ॥ ४ ॥
जब छह सुवन हनेउ यह दुष्टा । तब वसुदेव भयो अति कष्टा ॥ ५ ॥
दोउ दम्पति तब प्रभु किय ध्याना । कहन लगे करुणाकर नाना ॥ ६ ॥
वंश करत निर्वंश हमारा । हन कर कंस हरहु दुख तारा ॥ ७ ॥
दीन दयाल विरद संभारी । हरहु नाथ यह संकट भारी ॥ ८ ॥

दोहा- विपति विनाशन दुख हरन, जन रंजन सुरराय ।
कोई हमारा अब नहीं, तुम बिन अन्य सहाय ॥ १६ ॥

छन्द- वसुदेव देवकि ने यदा, इमि प्रार्थना प्रभु की करी ।
क्षीर सागर शेष शय्या, त्याग उठ बैठे हरी ॥
देवरिषि मुनि किन्नरादिक, जन्म वृजबिच ले चुके ।
शेष के अवतार हों, बलराम सुत वसुदेव के ॥ १२ ॥

दोहा- उदर देवकी के हुआ, सप्तम गर्भाधान ।
तब माया से यों कहे, मायापति भगवान ॥ १७ ॥

चौ- मथुरापुर जावउ तुम माया । जहँ पर कंस भक्त दुखदाया ॥ १ ॥
उदर देवकी गर्भ निकासउ । जठर रोहिणी स्थापित करउ ॥ २ ॥
पर यह भेद दुष्ट नहि जाने । तो तब कलि बिच नाम बखाने ॥ ३ ॥
प्रकट होहिं दुर्गा तब नामा । पूजन करयावहि जग कामा ॥ ४ ॥
भद्रकालि विजया अरु माया । नारायणी चंडिका आर्या ॥ ५ ॥
ये सब नाम तुम्हारे होहीं । धूप दीप बलि पूजहिं तोहीं ॥ ६ ॥
दाउ व संकर्षण बलधामा । होहिं अनेक नाम बलरामा ॥ ७ ॥
यसुदा जठर करउ तुम वासा । होअहिं तब यो कंस विनासा ॥ ८ ॥
शूरसुवन ते ले अवतारा । आवऊँ मैं हरने महि भारा ॥ ९ ॥
यों सुन माया प्रभु सिर नाई । मोहनि वपु मथुरा पुर आई ॥ १० ॥

सोरठा- देवकी गर्भ निकाल, जठर रोहिणी लाधरा ।
भयो नहीं यह हाल, कोई को मालूम ना ॥ १ ॥

दोहा- तव पुरजन कहने लगे, आपस में इस तोर ।
हाय देवकी के हुआ, गर्भपात का जोर ॥ १८ ॥ क
भक्त अभय भगवान प्रभु, निज कलांश के साथ ।
प्रकटे अव वसुदेव के, मन में हे नरनाथ ॥ १८ ॥ ख

चौ- हरि ज्योति के धारन कारन । रवि सम भयउ तदा उन आनन ॥ १ ॥
जो निज नयनन देखत येहीं । चका चौंधि आजावत तेही ॥ २ ॥
निज वाल वाक प्रभाव ते कोई । दाव सकत नहिं अव इन दोई ॥ ३ ॥
अव ज्योतिर्मय मंगलकारी । अंश लेय वसुदेव खरारी ॥ ४ ॥
यह आधान कियो जिस काला । धारन कियो देवकी वाला ॥ ५ ॥
देवकि गर्भ रहे प्रभु कैसे । प्राचि ककुभं रजनि पति जैसे ॥ ६ ॥
देवकि गर्भ भये भगवाना । तासु देह द्युति मुख मुस्काना ॥ ७ ॥
देखि कंस मन में भयमाना । वदत विचार करत यों नाना ॥ ८ ॥

दोहा- मम प्राणन के कारने, विष्णु ने इस वार ।
कियो वास आकर इस, गर्भाशय आगार ॥ १६ ॥

चौ- शीघ्र उपाय करऊँ अव ओहीं । हनन देवकी नीक न मोहीं ॥ १ ॥
वीर पुरुष निज स्वारथ हेतू । निज भुज वल न कलंकित करतू ॥ २ ॥
तिय भगिनी गुरुमतिहिं जो मारे । कीरति लक्ष्मी व आयु विगारे ॥ ३ ॥
कर वरताव क्रूर जो प्रानी । तासु मृतकसम शास्त्र वखानी ॥ ४ ॥
मृत्यु परान्त लोग तेहि शापे । घोर नरक अति कष्ट वियापे ॥ ५ ॥
यों विचार वह निज मन करके । जन्म वाट देखत यदुवर के ॥ ६ ॥
सोवत जागत खावत पीते । सदा कृष्ण को मन में चींते ॥ ७ ॥
जिधर नेत्र से देखत कंसा । वहि पर लखत कृष्ण यदुवंशा ॥ ८ ॥
अव देवन सह विधि वहँ आये । शिव मुनि नारद संग लिवाये ॥ ६ ॥
कीन्ही विनय सभी कर जोरे । आये शरण नाथ हम तोरे ॥ १० ॥

दोहा- सत्य रूप सत्यात्मन, सत्य प्राप्ति तव मूल ।
हम सव सुर तव शरन हैं, होउ सुखद अनुकूल ॥ २० ॥ क
एक वृक्ष जस दोउ सुख, दुख फल अरु जड़ तीन ।
सत्य रजोगुण और तम, ऐसे कहत प्रवीन ॥ २० ॥ ख

धर्मादिक रस चार हैं, जानत पाँच प्रकार ।
त्वचा नेत्र रसना श्रुति, नासा गंध प्रचार ॥ २० ॥ ग
षट् स्वभाव धातु मुनि, आठ शाख नव द्वार ।
दस प्रकार के पर्ण हैं, खड़े पक्षि दोउ डार ॥ २० ॥ घ

छन्द- उत्पत्ति के आधार इस जग, वृक्ष के तुम्हीं प्रभो ।
आपही में लीन होतो, आप ही रक्षक विभो ॥
चित्त जिसका आपकी, माया से आवृत हो रहा ।
वह आपको तजकर प्रभो, ब्रह्मादि दर्शन कर रहा ॥१३॥
तत्व ज्ञानी पुरुष ही, प्रभु आपका दर्शन करे ।
आप ज्ञान स्वरूप हो, जगदात्मा वनते हरे ॥
जगत के कल्याण कारण, रूप धारन कर महा ।
आपके वे रूप अप्राकृत विशुद्ध होते अहा ॥ १४ ॥

दोहा- कमल नयन सज्ञान सुखद, दुष्टन दंड कराल ।
देकर के प्रभु करत हो, इस जग का उद्धार ॥ २१ ॥ क
पद पंकज पोताश्रय, हे हरि भक्त विहार ।
गोपद सम भव सिन्धु के, जा पहुंचे उस पार ॥ २१ ॥ ख

चौ- जय परमात्मा परम स्वरूपा । संतो पर तव कृपा अनूपा ॥ १ ॥
कारन स्वयं भयंकर कष्टहिं । भोगि यहाँ भव सागर तरहीं ॥ २ ॥
शुद्ध सत्व मय परम पुनीता । जय अघहर जय गुण गोतीता ॥ ३ ॥
प्रभु गुण जन्म कर्म के द्वारा । हों न निरूपण नाम तुम्हारा ॥ ४ ॥
जय दुखहर सर्वेश्वर स्वामी । सुन्दर सुखद सुअन्तरयामी ॥ ५ ॥
भूमिपाल भूभार हरन्ता । करो कंस का अन्त अनन्ता ॥ ६ ॥
सुन्दर चरण युक्त यह अवनी । देखहिं प्रभु तव सुन्दर ठवनी ॥ ७ ॥
उदय होंहि वह दिन कब स्वामी । जिस दिन मरहिं कंस अभिमानी ॥ ८ ॥

दोहा- अचिन्त्य अजन्मा अजय अरु, अन्तक अन्त करन्त ।
जय अनन्त अनादि अज, जय जय जय भगवन्त ॥ २२ ॥

चौ- यथा मीन हयग्रीव वराहा । धर अवतार धर्म की राहा ॥ १ ॥
कंटक दूर कियो जिमि स्वामी । हरहु भार त्यों हे भू स्वामी ॥ २ ॥
चरण कमल वन्दन हम करहीं । मुनि जन जासु हिये निज धरहीं ॥ ३ ॥
कहत देवकी ते पुनि माता । तव कुक्षी जग मंगलदाता ॥ ४ ॥

पुरुषोत्तम निज बल अरु ज्ञाना । अंश सहित आवत भगवाना ॥ ५ ॥
अब न तनिक कंसा से डरहू । निर्भय सोच त्याग कर रहहू ॥ ६ ॥
रक्षक हों यदुवंश उदारा । हनहिं कंस को पुत्र तुम्हारा ॥ ७ ॥

दोहा- **इस प्रकार ब्रह्मादि सुर, कर प्रभु का गुणगान ।**
गवने निज निज धाम को आगे सुनहु बयान ॥ २३ ॥

चौ- कह शुकदेव सुनहु नरराया । शुभ गुण युक्त दिवस जब आया ॥ १ ॥
समय सुहावन शुभ सुखदाई । दिशा स्वच्छ निर्मल यश गाई ॥ २ ॥
नभ तारा ग्रह नखत सुहाई । चमकत शान्त सौम्य सुखदाई ॥ ३ ॥
मंगलमय पुर नगर अपारा । नदी ताल जल निरमल सारा ॥ ४ ॥
पक्षी चहक चहक तरू झूले । निशा समय सब पंकज फूले ॥ ५ ॥
अवनि बेल तरु रंग बिरंगे । पुष्पोपरि जावहिं सब भृङ्गे ॥ ६ ॥
परम पवित ले गंध समीरा । शीतल मन्द बहति अति धीरा ॥ ७ ॥
स्वर्ग द्वार नौबत सहनाई । अपने आप बजी सुभदाई ॥ ८ ॥
किन्नर गान करहिं गंधर्वा । चारण सिद्ध संग तिय सर्वा ॥ ९ ॥

दोहा- ऋषि मुनि सुर आनन्द भर, लेकर के निजहाथ ।
पुष्प वृष्टि करने लगे, जयति जयति कहि नाथ ॥ २४ ॥

छन्द- आधी निशा का था समय, चारों दिशा अंधकार ।
मेघ गण भी नीर भर कर, गरजते हर बार हैं ॥
भगवान विष्णु उस समय, इस देवकी के गर्भ से ।
अवतार ले दर्शन दिया तब, एक अद्भुत रूप से ॥१५॥
प्राची दिशा में ज्यों परीक्षित, चन्द्रमा का उदय हो ।
सामने वसुदेव ने भी, यों प्रभु देखे अहो ॥
कंज कलि सम नयन कोमल, और लाल विशाल हैं ।
शख चक्र गदकराम्बुज, कंठ में वनमाल है ॥ १६ ॥
कंठ कौस्तुभ झिलमिले, श्री वत्स वक्ष विराजता ।
घनश्याम इव तनु अति मनोहर, पीत अम्बर राजता ॥ १७॥

दोहा- मणि किरीट कुंडल चमक, चमकत सुन्दर बाल ।
कमर करधनी छिटकती, भुज भुजबन्ध विशाल ॥२५॥क
अंग-अंग अनुपम छवि, छिटक रही तनु बाल ।
यों देखे वसुदेव ने अपने, प्यारे लाल ॥२५॥ ख

धर्मादिक रस चार हैं, जानत पाँच प्रकार ।
त्वचा नेत्र रसना श्रुति, नासा गंध प्रचार ॥ २० ॥ ग
षट् स्वभाव धातु मुनि, आठ शाख नव द्वार ।
दस प्रकार के पर्ण हैं, खड़े पक्षि दोउ डार ॥ २० ॥ घ

छन्द- उत्पत्ति के आधार इस जग, वृक्ष के तुम्हीं प्रभो ।
आपही में लीन होतो, आप ही रक्षक विभो ॥
चित्त जिसका आपकी, माया से आवृत हो रहा ।
वह आपको तजकर प्रभो, ब्रह्मादि दर्शन कर रहा ॥१३॥
तत्व ज्ञानी पुरुष ही, प्रभु आपका दर्शन करें ।
आप ज्ञान स्वरूप हो, जगदात्मा बनते हरे ॥
जगत के कल्याण कारण, रूप धारन कर महा ।
आपके वे रूप अप्राकृत विशुद्ध होते अहा ॥ १४ ॥

दोहा- कमल नयन सज्जन सुखद, दुष्टन दंड कराल ।
देकर के प्रभु करत हो, इस जग का उद्धार ॥ २१ ॥ क
पद पंकज पोताश्रय, हे हरि भक्त विहार ।
गोपद सम भव सिन्धु के, जा पहुंचे उस पार ॥ २१ ॥ ख

चौ- जय परमात्मा परम स्वरूपा । संतो पर तव कृपा अनूपा ॥ १ ॥
कारन स्वयं भयंकर कष्टहिं । भोगि यहाँ भव सागर तरहीं ॥ २ ॥
शुद्ध सत्व मय परम पुनीता । जय अघहर जय गुण गोतीता ॥ ३ ॥
प्रभु गुण जन्म कर्म के द्वारा । हों न निरूपण नाम तुम्हारा ॥ ४ ॥
जय दुखहर सर्वेश्वर स्वामी । सुन्दर सुखद सुअन्तरयामी ॥ ५ ॥
भूमिपाल भूभार हरन्ता । करो कंस का अन्त अनन्ता ॥ ६ ॥
सुन्दर चरण युक्त यह अवनी । देखहिं प्रभु तव सुन्दर ठवनी ॥ ७ ॥
उदय होंहि वह दिन कब स्वामी । जिस दिन मरहिं कंस अभिमानी ॥ ८ ॥

दोहा- अचिन्त्य अजन्मा अजय अरु, अन्तक अन्त करन्त ।
जय अनन्त अनादि अज, जय जय जय भगवन्त ॥ २२ ॥

चौ- यथा मीन हयग्रीव वराहा । धर अवतार धर्म की राहा ॥ १ ॥
कंटक दूर कियो जिमि स्वामी । हरहु भार त्यों हे भू स्वामी ॥ २ ॥
चरण कमल वन्दन हम करहीं । मुनि जन जासु हिये निज धरहीं ॥ ३ ॥
कहत देवकी ते पुनि माता । तव कुक्षी जग मंगलदाता ॥ ४ ॥

पुरुषोत्तम निज बल अरु ज्ञाना। अंश सहित आवत भगवाना ॥ ५ ॥
अब न तनिक कंसा से डरहू। निर्भय सोच त्याग कर रहहू ॥ ६ ॥
रक्षक हों यदुवंश उदारा। हनहिं कंस को पुत्र तुम्हारा ॥ ७ ॥

दोहा- **इस प्रकार ब्रह्मादि सुर, कर प्रभु का गुणगान।**
गवने निज निज धाम को आगे सुनहु बयान ॥ २३ ॥

चौ- कह शुकदेव सुनहु नरराया। शुभ गुण युक्त दिवस जब आया ॥ १ ॥
समय सुहावन शुभ सुखदाई। दिशा स्वच्छ निर्मल यश गाई ॥ २ ॥
नभ तारा ग्रह नखत सुहाई। चमकत शान्त सौम्य सुखदाई ॥ ३ ॥
मंगलमय पुर नगर अपारा। नदी ताल जल निरमल सारा ॥ ४ ॥
पक्षी चहक चहक तरू झूले। निशा समय सब पंकज फूले ॥ ५ ॥
अवनि बेल तरु रंग बिरंगे। पुष्पोपरि जावहिं सब भृङ्गे ॥ ६ ॥
परम पवित ले गंध समीरा। शीतल मन्द बहति अति धीरा ॥ ७ ॥
स्वर्ग द्वार नौबत सहनाई। अपने आप बजी सुभदाई ॥ ८ ॥
किन्नर गान करहिं गंधर्वा। चारण सिद्ध संग तिय सर्वा ॥ ९ ॥

दोहा- **ऋषि मुनि सुर आनन्द भर, लेकर के निजहाथ।**
पुष्प वृष्टि करने लगे, जयति जयति कहि नाथ ॥ २४ ॥

छन्द- **आधी निशा का था समय, चारों दिशा अंधकार।**
मेघ गण भी नीर भर कर, गरजते हर बार है ॥
भगवान विष्णु उस समय, इस देवकी के गर्भ से।
अवतार ले दर्शन दिया तब, एक अद्भुत रूप से ॥१५॥
प्राची दिशा में ज्यों परीक्षित, चन्द्रमा का उदय हो।
सामने वसुदेव ने भी, यों प्रभु देखे अहो ॥
कंज कलि सम नयन कोमल, और लाल विशाल है।
शख चक्र गदकराम्बुज, कंठ में वनमाल है ॥ १६ ॥
कंठ कौस्तुभ झिलमिले, श्री वत्स वक्ष विराजता।
घनश्याम इव तनु अति मनोहर, पीत अम्बर राजता ॥ १७॥

दोहा- **मणि किरीट कुंडल चमक, चमकत सुन्दर बाल।**
कमर करधनी छिटकती, भुज भुजबन्ध विशाल ॥२५॥क
अंग-अंग अनुपम छवि, छिटक रही तनु बाल।
यों देखे वसुदेव ने अपने, प्यारे लाल ॥२५॥ ख

चौ- भये सुवन मम खुद भगवाना । देख आचरण किय मनमाना ॥ १ ॥
रहि आनन्द बाद चख ढाढ़ी । रोम रोम पुलकावलि बाढ़ी ॥ २ ॥
धेनु सहस दस पुनि मन अन्दर । कर संकल्प कीन्ह गुन मंदिर ॥ ३ ॥
अंग कान्ति सूती गृह चमका । तव मन भयउ विचार य पक्का ॥ ४ ॥
पद पंकज प्रभु के सिर नाई । करने लगे विनय हरसाई ॥ ५ ॥
तव स्वरूप प्रभु विभव अनन्दा । प्रकृति अतीत रहउ मुकुन्दा ॥ ६ ॥
जग सरजन करती तव माया । तासू लीन विलीन निकाया ॥ ७ ॥
महतत्व आदिक सब कारण । होअहिं पृथक पृथक जग तारण ॥ ८ ॥

दोहा- **शेष गणेश सुरेश शिव, ब्रह्म न जानत भेद ।**
कर तोरी अच्युत विनय, हारि गये सब वेद ॥ २६ ॥

चौ- पावहि कष्ट यदा गौ विप्रन । तव आवहिं भूतल तव चरणन ॥ १ ॥
बड़भागी यदुवंश हमारा । जहँ पर जन्म लीन्ह करतारा ॥ २ ॥
अब प्रभु तव चरनन परतापा । विगत भये मम सब संतापा ॥ ३ ॥
यह सुन विनय वदत भगवाना । पूरव तप करके तुम नाना ॥ ४ ॥
यह वर मांग लियो तुम मोसे । होउ पुत्र प्रभु मो घर तोसे ॥ ५ ॥
मो समान नहिं कोई दूसर । यहि हित आवहुँ मैं यहँ अवतर ॥ ६ ॥
इच्छा पूर्ण करन पितु तुमकी । आयऊँ भार हरन इस भू की ॥ ७ ॥
अब मोहीं गोकुल पहुँचाऊ । कुछ दिन वहँ रह वापिस आऊँ ॥ ८ ॥

दोहा- **यशुमति के कन्या भई, उसको लेकर आप ।**
भोजराज को देयके, मेटो यह सन्ताप ॥२७॥

सोरठा- **पूरव जनम महान, नंद यशोदा तप कियो ।**
भेजहु वृज गुणगान, बालक लीला के लिये ॥ २ ॥

छन्द- **बाल लीला को दिखा, उनसे विदा फिर होयके ।**
आकर मिलूँगा आपसे, कंसा को सुरपुर भेजके ॥
इतनी सुनी जब देवकी, कर जोर यों कहती प्रभो ।
यह रूप अन्तरध्यान करलो, विनय यह मेरी विभो ॥१८॥

दोहा- **इतनी विनती श्रवन कर, बालक बन गोपाल ।**
रुदन करन लागे वहाँ, आगे सुनो नृपाल ॥ २८ ॥ क
शूरपुत्र कहने लगे, चिन्ता कर उस काल ।
कैसे यशुदा नन्द घर, पहुँचाऊँ इस बाल ॥ २८ ॥ ख

छन्द- पावों में वेड़ी पड़ रही, हाथों में हथकड़ी हे प्रभो ।
रात भादव कृष्ण आठें, दिवस की काली विभो ॥
आधी निशा वुधवार की, चपला चमकती गगन में ।
अम्वु कण भी गिर रहे, नहिं मार्ग दीखे नयन में ॥ १॥
उग्रसेनज के भय से, भीत होकर वाल को ।
मैं कहाँ जाकर छिपाऊँ, देवकी के लाल को ॥
देवकी कहने लगी, पति और नाँहि उपाय है ।
नन्द यशुदा के यहाँ ले, जाउ तुम यह वाल है ॥ २० ॥
कहने लगे वसुदेव तव, इस वन्दिखाने से निकल ।
किस तरह से देवकी, जाऊँ वहाँ मैं हूँ विकल ॥
यों कहत ही भगवान इच्छा, ते हथकड़ी खुल गई ।
पहरे व चौकीदार जो, वैचेनि उनपे छा गई ॥ २१ ॥

दोहा- महिमा यह घनश्याम की, लखकर श्री वसुदेव ।
धरे शीघ्र ही सूप में, सव देवन के देव ॥ २९ ॥

चौ- उठा सूप शिर पे हरसाई । तुरत चले गोकुल यदुराई ॥ १ ॥
अंधकार निशि पय नभ वरसे । कंटक युत मारग नहिं दरसे ॥ २ ॥
शेष नाग पुनि फण फैलाही । छाया कीन्ह आप मग माँही ॥ ३ ॥
पाछे वोल रहा मृगराई । आगे यमुना नीर अथाई ॥ ४ ॥
कवन प्रकार जाऊँ मैं पारा । यों निज मन वे करत विचारा ॥ ५ ॥
पुनि हरि चरनन कर मन ध्याना । पैठे यमुन वीच यदुराना ॥ ६ ॥
चरन पखारन कारन यमुना । जल वढ़ गयो प्रथम ते दुगुना ॥ ७ ॥
भेद यह वसुदेव न पायो । दोउ करते सिर सूप उठायो ॥ ८ ॥

दोहा- देख नाक तक यमुन जल, घवराये वसुदेव ।
यह लखि निज वाढ़्यो चरन, ऊपर ते सुरसेव ॥ ३० ॥ क
पंकज चरन पखार के, यमुना का वह नीर ।
शीघ्र प्रथम ते घट गयो, वहन लगा अव तीर ॥ ३० ॥ ख

छन्द- वसुदेव यह महिमा निरख कर, पार यमुना के गये ।
गोकुल में वावा नन्द के, पुनि द्वार पर आते भये ॥
देखे खुले सव द्वार हैं, निश्चिन्त हो भीतर गये ।
देखे न कोई जागते, यशुदा के ढिग आते भये ॥ २२ ॥

देखी वहाँ इक वलिका, यशुदा के ढिंग व सो रही ।
पर योगमाया जाल से यसुदा ने सुध कुछ ना रही ॥
देख यों श्री कृष्ण तो, यसुदा के पास सुला दिये ।
वसुदेव कन्या लेय के, मथुरापुरि को चल दिये ॥ २३ ॥

दोहा- देवकि को दे वालिका, कहा वहाँ का हाल ।
ईश कृपा ते वच गया, मेरा प्यारा वाल ॥ ३१ ॥

चौ- कहे कीर सुनो नरराई । जव कन्या लाये यदुराई ॥ १ ॥
तव कपाट लगे सव ताला । रोय उठी वह सुन्दर वाला ॥ २ ॥
रुदन तासु सुनके रखवाला । भए हुशियार शस्त्र ले चाला ॥ ३ ॥
उसी समय इक नृप रखवाला । कहा कंस से जाकर हाला ॥ ४ ॥
प्रकट भयो शत्रु तव स्वामी । यह सुन चला कंस अभिमानी ॥ ५ ॥
गिरत परत घवराहत कंसा । आयो वहँ रजनीचर अंशा ॥ ६ ॥
कन्या ले पुनि देवकि माता । वोली वचन मृदु सुन भ्राता ॥ ७ ॥
मोरे उदर भई यह वाला । चाहे मार त्याग नरपाला ॥ ८ ॥

दोहा- कंसा ने यह श्रवन कर, छीन लई वह वाल ।
हाथ जोर कहने लगी, तव माता तत्काल ॥ ३२ ॥

चौ- मोये पुत्र भये षट् भ्राता । जो सव तुमने किये निपाता ॥ १ ॥
विन अपराध मारकर येहू । क्यों कंसा अपयश तू लेहू ॥ २ ॥
भोजपति यह वच सुन कहेऊ । करहि विवाह संग जे येऊ ॥ ३ ॥
वन जावे वोही मम काला । तजऊँ न यही हेतु यह वाला ॥ ४ ॥
यों कहकर वह वाहिर आवा । चरण पकर कई वार घुमावा ॥ ५ ॥
पत्थर ऊपर पटकन लागा । छुड़ा पाद नभ गई वड़भागा ॥ ६ ॥
अष्टभुजी निज रूप विशाला खड्ग शूल कर खप्पर प्याला ॥ ७ ॥
भूषन वसन गले वनमाला । धारा यों निज रूप विशाला ॥ ८ ॥

दोहा- देवी के सम लखत ही, घवराया अव कंस ।
तव देवी कहने लगी, सुन रे निशचर अंश ॥ ३३ ॥ क
हे असुराधम कंस तुम, वृथा कियो यह पाप ।
तव मारक वृज जन्म ले, आया अपने आप ॥ ३३ ॥ ख

चौ- अव तोहिं मार महि कर भारा । करहिं दूर श्रीकृष्ण उदारा ॥ १ ॥
तू मूषक वह सर्प समाना । रह सावधान मत पाप कमाना ॥ २ ॥

हे नृप यों कह वह जगदम्बा । भई अदृश्य न कीन्ह विलम्बा ॥ ३ ॥
यह सुन वचन कंस अन्यायी । चिन्तित मन अति लज्जा छायी ॥ ४ ॥
बालक मार कियो जो पापा । भयउ बहिन मन अति संतापा ॥ ५ ॥
यह दुःख कहो कवन से जाई । करत विचार यों वह अन्याई ॥ ६ ॥
भगिनि समीप कहा पुनि जाई । करहु क्षमा अपराध बिसाई ॥ ७ ॥
मो सम जगत नहीं अन्याई । जो निज तन हित कीन्ह बुराई ॥ ८ ॥
बिन अपराध हने तव बालक । मो सम भयो कवन कुल घालक ॥ ९ ॥

दोहा- **छूटहिं मोरे सीस ते, यह अघ कवन प्रकार ।**
नासवान इस देह हित, नासे पुत्र तुम्हार ॥ ३४ ॥

चौ- करउ क्षमा अपराध हमारा । सुनु बहिनोई परम उदारा ॥ १ ॥
कर्म रेख ना मिटत मिटाही । धरो धीर अब तुम मन माँही ॥ २ ॥
जो जन जन्म जगत ले आवे । निश्चय एक दिवस मर जावे ॥ ३ ॥
जिमि सरिता तृन आत तरंगे । पर वे रहत सदा नहिं संगे ॥ ४ ॥
उन सम लखऊ जीव संसारी । आवागमन बनी भरमारी ॥ ५ ॥
जीवन मरन लखहिं सम ज्ञानी । शत्रु मित्र ना भेद पिछानी ॥ ६ ॥
जीव अमर नहिं मरहिं कदापी । इस प्रकार कह कर वह पापी ॥ ७ ॥

दोहा- **इस प्रकार कहि बहिन के, चरन गिरा अकुलाय ।**
क्रोध क्षमाकर देवकी, बोली तब नरराय ॥ ३५ ॥

चौ- सत्य कहत तव दोप न भ्राता । लिखेउ कर्म यहि मोर विधाता ॥ १ ॥
होनहार बिन होय न रहती । लाख उपाय करे नहिं टलती ॥ २ ॥
निज सुख हित नर करत उपाया । बिन इच्छा प्रभु फल नहिं पाया ॥ ३ ॥
यह सुन कंस भयो मन राजी । ले वसुदेव बहिन निज पाजी ॥ ४ ॥
भोजपति निज धाम सिधावा । भोजन मधुर मधुर करवावा ॥ ५ ॥
भूपन वसन सुसुन्दर नाना । पहिराये कंसा बलवाना ॥ ६ ॥
बिदा कीन्ह पुनि दोनों प्रानी । निज मुख ते कहि सुन्दर बानी ॥ ७ ॥
निजपति संग देवकी रानी । आई गृह सब जग सुखदानी ॥ ८ ॥

दोहा- **याचक विप्र बुलाय के, दियो अन्न धन दान ।**
उधर दूसरे दिन सभा, गयो कंस बलवान ॥ ३६ ॥

सोरठा- **राक्षस पास बुलाय, कहन लगा वह इस तरह ।**
तुम सब सुरपुर जाय, देवन को झट पकड़ लो ॥ ३ ॥

चौ- कहा हाल देवी यों भाई । भयो काल तव सुर सुखदाई ॥ १ ॥
कहा सुरन जो अनृत हाला । अष्टम सुत होअहिं तव काला ॥ २ ॥
अष्टम गर्भ भई पर कन्या । तासु समान लखी ना अन्या ॥ ३ ॥
इस कारन तुम सुरपुर जाऊ । सब देवन को मार गिराऊ ॥ ४ ॥
तृणावर्त आदि परलम्बा । सुन बोले ना कीन्ह विलम्बा ॥ ५ ॥
जन्मरंक सब देव गुँसाई । उस मारन का सहज उपाई ॥ ६ ॥
तव प्रताप सब सुर भग जावें । क्या अवकात जो युद्ध रचावे ॥ ७ ॥
आठो पहर वे रहे निकम्मा । पूजन पाठ लीन रह ब्रह्मा ॥ ८ ॥

दोहा- **पारवती के संग नित, करते शंभु विलास ।**
सुरपति की सामर्थ्य क्या, आन सके तव पास ॥ ३७ ॥

चौ- नारायण कच्छप वपु धारे । क्षीर सिन्धु विच रहे विचारे ॥ १ ॥
युद्ध कर्म ना आवत इनको । जो रणजीत सकहिं यह तुमको ॥ २ ॥
यो सुन वचन वदत मुथरेशा । लियो जन्म मम हेत रमेशा ॥ ३ ॥
जो मैं उन्हें कही पा जाऊँ । तो रण बीचे मार गिराऊँ ॥ ४ ॥
यह सुनि वदत निशाचर सारे । ऐसी बात न नाथ विचारें ॥ ५ ॥
शत्रु जन्म ले जहँ पर आया । तेहि बध का हम कहें उपाया ॥ ६ ॥
एकहि दीखत जासु उपाया । आज कालिह जो बालक जाया ॥ ७ ॥
उनको हनन करहिं हम स्वामी । मरहीं उन बीचे अरि नामी ॥ ८ ॥

दोहा- **इस प्रकार यदि वच गया, तो पुनि ब्राह्मण साधु ।**
जेते जग हरि भक्त है, देउ उन्हें बड बाधु ॥ ३८ ॥

चौ- जब यह युक्ति सुनी मथुरेशा । भयो प्रसन्न विगत सब क्लेशा ॥ १ ॥
जाकर रिपि मुनि द्विज गउ मारउ । जाउ अभय मन शंक न लावउ ॥ २ ॥
धाये निशिचर आज्ञा पाई । किय छल बल भक्तन दुखदाई ॥ ३ ॥
खोजि खोजि हरि भक्त व बाला । मारन लगे सुनो नरपाला ॥ ४ ॥
यज्ञादिक शुभ कर्म नसाई । हरि चर्चा जग से मिटवाई ॥ ५ ॥
साधु रिषिन को जो दुख देहें । आयु धन बल तासु नसैहें ॥ ६ ॥
इस प्रकार जब पाप कमाया । नसा पुण्य पूरव भव पाया ॥ ७ ॥
यहाँ कंस कीन्हा यह कामा । उत आनन्द भयो नंद धामा ॥ ८ ॥

दोहा- **आनक दुंदुभि कृष्ण को, यशुदा पास सुलाय ।**
आये मथुरा पुर जवै, जागी यशुदा माय ॥ ३९ ॥ क

वालक आनन चन्द सम, लख भई खुशी अपार ।
कहलाया पुनि नन्द से, जन्में पुत्र तुम्हार ॥ ३६ ॥ ख

छन्द- नंदराज सुनकर ये वचन, यशुदा सदन हरषित चले ।
लखि श्याम चन्द समान आनन, भाग्य निज जाना खुले ॥
वेद के अनुसार नाँदि, श्राद्ध पुनि करते भये ।
यह सुनत गोपी ग्वाल सारे, प्रेम में पागल हुये ॥ २५ ॥

दोहा- मंगलाचार मनाय कर, कीन्हा गोधन दान ।
नन्द सुवन चिरजीव हो, वोले यों सब आन ॥ ४० ॥ क
वनवासी टेरत सवहिं, कोऊ वन मत जाऊ ।
नन्दराय घर सुत भयो, देव वधाई आउ ॥ ४० ॥ ख

चौ- प्रातः नँद अब गणक बुलाये । सायत लगन सुवन पुछवाये ॥ १ ॥
लग्न विलोकि वदत पुनि पंडित । सुनो नंद यह सुत कुल मंडित ॥ २ ॥
हमरे मत ये अपर नरायन । हरहिं भार भू मारहिं दनुअन ॥ ३ ॥
सब जग जीव सुयश इस गाये । यह सुनि नन्द बहुत हुलसाये ॥ ४ ॥
लक्ष धेनुमणिरतन मिलाई । सप्त भार तिल रजत मँगाई ॥ ५ ॥
कंचन घट पय घृत भरवाये । दिये दान पा द्विज हरसाये ॥ ६ ॥
याचक कीन्ह अयाचक सारे । नंद राज नित ठाढ़े द्वारे ॥ ७ ॥

दोहा- काहू हीरालाल मणि, काहुन मोती लाल ।
काहू भूषन वस्त्र दे, कीन्हें सभी निहाल ॥ ४१ ॥ क
पहिन कंचुकी सुन्दरी, लहँगा सोभित अंग ।
सारी गोटे तार की, सोभित सुन्दर रंग ॥ ४१ ॥ ख

छन्द- अंग सुन्दर सोभती कर, हेम थार संवार के ।
आरती के काज आ वृज, नार नन्द दुलार के ॥
पाँव यसुदा के गिरे, देती वधाई नन्द को ।
वोले हमें दिखला जरा, उस नन्द के आनन्द को ॥२५॥

शिखरिणी- यशोदा मैया ने जब, यह सुना सुन्दर वचन ।
तदा वोली ऐसे, समझउ तुम्हारा यह वहिन ॥
भई परमानन्दा लखि, वृजतियाँ सुन्दर वदन ।
दियें आसिस सारी, चिर जिवहु तेरो यह सुवन ॥ २६॥

छन्द- अति हर्ष से गोकुल निवासी, प्रेम में उन्मत्त हो ।
दधि मिला हल्दी में सभी, फेंकन लगे मन मस्त हो ॥
गोपियां श्री नन्द को, गा गा के गारी दे रही ।
रोहिणी अति मुदित हो, सखियों के संग में नच रही ॥२७॥

दोहा- उपजावत अतिप्रेम सुर, भए परम आनन्द ।
वार-वार वरणन करे, भाग यशोमति नन्द ॥ ४२ ॥

चौ- किन्नर गान करहिं गंधर्वा । करत पुष्प वर्षा सुर सर्वा ॥ १ ॥
गोकुल आनँद वरनि न जाई । लियो जन्म जहँ सब जग साँई ॥ २ ॥
वृज सुख कहि न सकत नृप कोही । मनुज रूप प्रकट खल द्रोही ॥ ३ ॥
नन्द धाम जो भयउ अनन्दा । वरणन हो न वदन कुरु चन्दा ॥ ४ ॥
नन्दराज सब ग्वाल बुलाये । षट्‌रस युत भोजन करवाये ॥ ५ ॥
भूषन वसन सु सुन्दर नाना । दिये नंद उन सब सुख माना ॥ ६ ॥
खुश खबरी सुन याचक आये । मुँह माँगी वस्तु वह पाये ॥ ७ ॥
दियो दान इतनो नन्द रानी । नृप कुबेर की मति बौरानी ॥ ८ ॥

दोहा- *बछिया छछिया ना बची, सब वृज दियो लुटाय ।*
उसी समय आये वहां, गिरिजापति सुरराय ॥ ४३ ॥ क
वृज भूमि लोटन लगे, अलख उचारे बैन ।
बालक के ले चरन दोउ, धरे सीस अरु नैन ॥ ४३ ॥ ख

चौ- छठी दिवस आयो जब राजन । मोति चौक पुरवाये आँगन ॥ १ ॥
उपरोहित पुनि नन्द बुलावा । पूजन कुल अनुसार करावा ॥ २ ॥
यशुमति पूजन हित चलि आई । निज सुत पीत झुगा पहिनाई ॥ ३ ॥
भूषन वसन ले कुरता टोपी । आये गोप और सब गोपी ॥ ४ ॥
बड़े प्रेम मरदंग बजाई । गायक गान करहिं हरसाई ॥ ५ ॥
यथा योग्य सबका सन्माना । कियो नन्द पुनि ज्ञान निधाना ॥ ६ ॥
रतन जटित अति उत्तम पलना । बनवायो सुत हित इक झुलना ॥ ७ ॥
यशुमति प्रभु की लेत बलैया । थपकि थपकि सुलवावति मैया ॥ ८ ॥

दोहा- भई रमापति की कृपा, रह्यो न गोकुल रंक ।
कपट रूप फिरती फिरे, लक्ष्मी तहाँ निशंक ॥ ४४ ॥ क
दरसन कर सुखधाम के, हो गय सभी निहाल ।
हो निशंक इत उत फिरे, वृजवासी सब ग्वाल ॥ ४४ ॥ ख

चौ- बड़े प्रेम से सब बृजवासी । करहीं दरसन श्री अविनासी ॥ १ ॥
सुना नन्द ने जब यह हाला । कंस राज मरवावत बाला ॥ २ ॥
चले भेंट ले कंस समीपा । दूध दही घृत वृज अवनीपा ॥ ३ ॥
धरे शकट सब ग्वालन संगा । आये मथुरा करत प्रसंगा ॥ ४ ॥
दीन्ही भेंट कंस ढिंग जाई । भयो सुवन मम घर नर राई ॥ ५ ॥
विदा कीन्ह नन्दहिं पुनि कंसा । शिरोपाँव दे करत प्रशंसा ॥ ६ ॥
नन्द खबर सुन शूर दुलारे । मिले नन्द से यमुन किनारे ॥ ७ ॥
पूछी कुशल क्षेम यदुराया । हर्षित होय नयन जल छाया ॥ ८ ॥

दोहा- **आवहिं सुधि जब मित्र की, तब मन आवहिं चैन ।**
या सुख सम जग अन्यना, जो मुख देखत बेन ॥ ४५ ॥

चौ- तुम सम अन्य न मित्र हमारा । दियो कंस जब कष्ट अपारा ॥ १ ॥
गुरुमति हिय मम तब घर आई । भयो पुत्र तहँ हे नंदराई ॥ २ ॥
पालन तासु कीन्ह तुम ताता । बड़ उपकार कियो गउ माता ॥ ३ ॥
करऊँ जन्म जन्म तव सेवा । तदपि न उऋण होहिं वसुदेवा ॥ ४ ॥
सुनकर खबर भयो तव बाला । भयो मुदित मन सुन गोपाला ॥ ५ ॥
यशुदा सहित सुवन गउ सारी । है न कुशल गउकुल घर वारी ॥ ६ ॥
नन्दराज सुन यह प्रिय बानी । बोले वचन सुनो सुखदानी ॥ ७ ॥
है सब कुशल क्षेम सब भाई । कृपा तुम्हारी ते यदुराई ॥ ८ ॥
तव सुत जन्मकाल उपरन्ता । भयो सुवन इक मम घर मिंता ॥ ९ ॥

दोहा- **दियो कंस नृप दुख महा, हनकर बाल तुम्हार ।**
सुनकर के यह हाल दुख, मन में भयो अपार ॥ ४६ ॥

चौ- रोहिणि नाथ कहे पुनि ताता । लिखा करम मम यही विधाता ॥ १ ॥
किसी प्रकार वह मिट न मिटाये । जन्म लेय नर जग दुख पाये ॥ २ ॥
तुम मम मित्र बड़े हितकारी । कष्ट समय की सहाय हमारी ॥ ३ ॥
पर यह कंस भयो दुखदाई । वृज शिशु हनहिं यातु भिजवाई ॥ ४ ॥
तोर आगमन यहँ पर भाई । उधर निशाचर अति दुखदाई ॥ ५ ॥

दोहा- **बाल घातिनी पूतना, गई मित्र वृज आज ।**
शीघ्र धाय सुधि लीजिये, करि है न तर अकाज ॥ ४७ ॥

चौ- यों सुन नन्द और सब ग्वाले । विदा होय गोकुल में चाले ॥ १ ॥
व्यास सुवन सुकदेव कृपालू । बोले सुनो कथा भूपालू ॥ २ ॥

निशिचर शिशुन वधन जब लागे। तदपि कंस मन भय नहि भागे ॥ ३ ॥
रहहीं पूतना एक निशाचरी। कहे कंश सुन वचन खेचरी ॥ ४ ॥
मथुरा गोकुल विच तू जाऊ। यादवादि शिशु सब हन आऊ ॥ ५ ॥
कंसाज्ञा शिर धरि वह नारी। कर प्रणाम निज गेह सिधारी ॥ ६ ॥
करन लगी विचार यों राजन। किस गृह गमन करूँ शिशु मारन ॥ ७ ॥
तब वहि बात याद इक आई। भयो बाल यशुमति नन्दराई ॥ ८ ॥

दोहा- **शिशु हनन हित पूतना, गई जब जमुना पार।**
सुन्दर गोपी रूप धर, कर सोलह श्रृंगार ॥४८॥

चौ- निज कुच गरल लगा वह नारी। नन्दराय गृह शीघ्र सिधारी ॥ १ ॥
जासु रूप लखिकर दरवाना। मना कीन्ह नहिं भीतर जाना ॥ २ ॥
यशुदादिक सब गोकुल नारी। तासु रूप श्रृंगार विचारी ॥ ३ ॥
निज मन सुर कन्या सम जानी। निज समीप बैठा सन्मानी ॥ ४ ॥
कहहि एक यह कोउ नृपरानी। यशुमति के आई महमानी ॥ ५ ॥
आई वहाँ सुनो नरपाला। पलने झूलि रहे नन्दलाला ॥ ६ ॥
देखि पूतना मन मुस्काये। जाना कपटरूप श्रुति गाये ॥ ७ ॥
मम मारन हित यह यहँ आई। नयन मूँदि मन कहे कन्हाई ॥ ८ ॥

दोहा- **भयो नीक यह कर्म जो, आई यह मम पास।**
पावहिं अब निज दंड को, बनहिं काल की ग्रास ॥४९॥

चौ- अपर गेह यदि जो यह जाती। तो मम मित्र सखा हन आती ॥ १ ॥
कपट रूप बोली पुनि बानी। सुनउ बहिन यशुमति गुण खानी ॥ २ ॥
तव घर पुत्र जन्म सुन हाला। भयो मुदित मन कंस नृपाला ॥ ३ ॥
नृपति कंस आज्ञा शिर पाई। तव सुत दर्श काज मैं आई ॥ ४ ॥
तब यशुदा बोली मम ललना। झूलि रह्यो यह सुन्दर पलना ॥ ५ ॥
यह सुन कपट रूप वह प्रौड़ा। रह चिरजीव य वरिस करोड़ा ॥ ६ ॥
इस प्रकार कहती प्रिय बानी। झूले पास गई अघखानी ॥ ७ ॥
बड़े प्रेम निज अंक उठाई। वदन चूमि पुनि दूध पिलाई ॥ ८ ॥

दोहा- **दोनों अंचल पकर तब, शिशु रक्षक भगवान।**
दूध संग खींचन लगे, उसके प्यारे प्रान ॥५०॥

चौ- बोली व्याकुल हो वह बानी। यशुमति तव सुत काल निशानी ॥ १ ॥
रज्जु भरोसे नाग करारी। कर मैं पकर लियो भयकारी ॥ २ ॥
जीवित बच यदि जो मैं जाऊँ। तो फिर गोकुल बीच न आऊँ ॥ ३ ॥

इस प्रकार कहि भइ बेहाला । व्योम मार्ग भागी नरपाला ॥ ४ ॥
स्तन नहिं तासु तजे नंदलाला । लटके चले गये करमाला ॥ ५ ॥
गई पूतना बस्ती बाहिर । गिरी तभी वह अवनी ऊपर ॥ ६ ॥
मरती वार कपट सब त्यागा । वज्र समाँ वह परी अभागा ॥ ७ ॥
परत शब्द भयो अति घोरा । नभ अवनी कंपित चहुँ ओरा ॥ ८ ॥
गिरि वह षट् क्रोशन विस्तारा । वृक्ष टूटि महि गिरे अपारा ॥ ९ ॥

सोरठा- गोकुल के नर नार, आपस में कहने लगे
मारयो यहि कर्तार, कपट रूप के कारने ॥ ४ ॥

दोहा- यशुदा ने यह शब्द सुन, देखा अपना लाल ।
रोकर वह पूछन लगी, सारे गोपी ग्वाल ॥ ५१ ॥

छन्द- पायो शिशु सुख देन छाती, तासु चढ़ि पय पी रहो ।
झट दौड़ि यशुमति गोद ले, मुख माथ चुम्बति नृप अहो ॥
मणिहीन जिमि फणि की दशा, पुनि पायके मुन मुदित हो ।
त्यों देखि प्यारेलाल को, यशुदा के मन आनन्द हो ॥२९॥
पाँव वह सब के परी, अरु कहन लागी बैन यों ।
तुम पंच जन के पुण्य से, उबरा कन्हैया आज यों ।
कृष्ण ने कुछ देर तक, पय पान कीन्हा जब नहीं ।
निज देव पितरेश्वर मना, गऊ पुच्छ को फेरत रही ॥ ३० ॥

दोहा- पियो दूध अब कृष्ण ने, तब सब बृज की नार ।
हरि बन्दन करने लगी, कहने लगी पुकार ॥ ५२ ॥

चौ- परि यह शब्द सुना जो काना । अब तक सब जन जिय अकुलाना ॥ १ ॥
उसी समे ग्वालन ले संगा । आये नँद तहँ करत प्रसंगा ॥ २ ॥
देख वहाँ एक राक्षसि नारी । मरी परी निज जीभ निकारी ॥ ३ ॥
देख रहे सब गोकुलवासी । कंपहि जिय मन भई उदासी ॥ ४ ॥
वे सब नन्दादिक बृज ग्वाला । पहुँचे गोकुल पास नृपाला ॥ ५ ॥
मरी परी इक राक्षस नारी । देख रहे तेही नर नारी ॥ ६ ॥
मरन हाल पूछा नंद राई । तब सब हाल कहा समझाई ॥ ७ ॥
कहे नन्द करि देव सहाई । जो इस हाथ बचा कन्हाई ॥ ८ ॥

दोहा- बस्ती में गिरती यदि, दब मरते नर नार ।
की सहाय भगवान ने, यह परी गाँव के बाहर ॥ ५३ ॥

चौ- यों कह नंद गये निज थाना । दीन्ह दान अगणित पुनि नाना ॥ १ ॥
आज्ञा मान नंद सब ग्वाला । ले निज हाथ कुठार विशाला ॥ २ ॥
काटा अंग पूतना जाई । गर्त बीच अस्थि दबवाई ॥ ३ ॥
माँस चर्म आगी लगवाई । तब चहुँ ओर सुगंधी छाई ॥ ४ ॥
बोले नृपति सुनो गुरु वानी । केही कारण यह गंध उड़ानी ॥ ५ ॥
बोले शुक मुनि सुन नरपाला । पियो दूध श्री कृष्ण कृपाला ॥ ६ ॥
निज पद पद्म रखेऊ तेही छाती । दई मुक्ति पुनि कंस अराती ॥ ७ ॥
यहि हित नृपति सुगंधी छाई । आगे सुनउ कथा चित लाई ॥ ८ ॥
जो प्रभु गरल पिलावन आई । सो सीधी सुखधाम सिधाई ॥ ९ ॥

दोहा- **नारायण को प्रेम से, सुन्दर पाक बनाय ।**
भोग लगावत नित्य ही, कवन लोक वे जाय ॥ ५४ ॥ क
कथा पूतना मरन की, कहे सुने नर नार ।
बजरंग लाल पावे वह, हरि की भक्ति अपार ॥ ५४ ॥ ख

सोरठा- **प्रभु के दरशन काज, अमर तिया निज तनु बदल ।**
आकर गृह नन्द राज, लखहिं श्याम छवि मोहिनी ॥ ५ ॥

चौ- यह सुन वदत परीक्षित राई । कथा पूतना वध तुम गाई ॥ १ ॥
आगे बाल चरित कछु भाखउ । यह मोहीं मन अति प्रिय लागऊ ॥ २ ॥
यह सुनकर शुकदेव गुसाँई । आगे सुनो कथा चित लाई ॥ ३ ॥
वहाँ पूतना वध सुन काना । कंस विचार करत इमि नाना ॥ ४ ॥
गोकुल बीच भयो जो बालक । वहि है सर्व दनुज कुल घालक ॥ ५ ॥
यों चिन्ता कर मन नर राई । गिरा भूमि व्याकुल भय खाई ॥ ६ ॥
जब चैतन्य भयो कुछ बेरी । वदत सभा बिच मंत्रिन टेरी ॥ ७ ॥
भयो पूतना वध अह भाई । नंद सुवन कर गोकुल माँई ॥ ८ ॥

दोहा- **याते यह मालूम हो, यहि है काल हमार ।**
सब रजनीचर मार यह, हरहिं भूमि का भार ॥ ५५ ॥

चौ- मित्र वही जो विपति नसावे । अवसर परहिं कार्य में आवे ॥ १ ॥
जो जाकर यह बाल नसावें । मुँह माँगी वस्तु वह पावे ॥ २ ॥
शकटासुर वहँ एक निशाचर । यह सुन वच कर नैन भयंकर ॥ ३ ॥
गोकुल बिच गयो खलकामी । जहँ रहे जगत चराचर स्वामी ॥ ४ ॥
शकट रूप धर कर वह आवा । पर यह भेद काहुँ नहिं पावा ॥ ५ ॥

देख श्याम को दुष्ट अकेला। बोला यह शिशु अति बल शीला ॥ ६ ॥
बदला आज मारि यहि लेऊँ। पाछे कंसहिं वदन दिखाऊँ ॥ ७ ॥
यों कह प्रभुहिं उठावन लागा। मारन को वह परम अभागा ॥ ८ ॥

दोहा- **दीन्ह लात नन्दलाल तब, गिरयो कंस दरबार।**
देख इसे घबरा गयो, वह मथुरा सरकार ॥ ५६ ॥

चौ- मास पाँच के रहे भगवाना। बुला कंस रजनीचर नाना ॥ १ ॥
ऐसो कवन सभाविच मेरी। करहिं दूर यह विपत्ति घनेरी ॥ २ ॥
तृणावर्त यक राक्षस नामी। रूप बवन्डर धर खल कामी ॥ ३ ॥
आवा गोकुल शिखा अपारा। तब यशुमति गोदी सुतधारा ॥ ४ ॥
प्रभु मन जानि तृणावृत आया। तब निज तनु अति भार बढ़ावा ॥ ५ ॥
यशुमति सुत नीचे पधराई। निज गृह काज करन वह आई ॥ ६ ॥
तृणावर्त गौकुल जब आवा। रजकण उड़ चहुँ दिशी तम छावा ॥ ७ ॥
दिवस भयो वह निशा समाना। गिरहि भूमि तरु छप्पर नाना ॥ ८ ॥
तब यशुमति आँगन बिच आई। लगी उठावन कृष्ण कन्हाई ॥ ९ ॥

दोहा- **पर गुरुता के कारने, सकि ना सुतहिं उठाई।**
उसी समय राक्षस उठा गयो तुरत नभ माँई ॥ ५७ ॥

चौ- चार कोश ऊँचे नभ माँही। गयो कृष्ण ही दुष्ट गहाई ॥ १ ॥
दशा देख यशुमति यह रोई। की पुकार निज सुवन बिगोई ॥ २ ॥
रुदन सुनत नन्दादिक ग्वाला। आ पहुँची वहँ सब बृज बाला ॥ ३ ॥
हेरि रहे चारों दिशि ग्वाला। भये विकल बिन कृष्ण कृपाला ॥ ४ ॥
यशुदादिक गोपी सब हेरे। ठोकर खाकर परहिं अंधेरे ॥ ५ ॥
देखि विकल सब दीनदयाला। दाब कंठ वह महि पर डारा ॥ ६ ॥
मरत तासु आँधी अंधियारा। भयो दूर नृप परम उदारा ॥ ७ ॥
तासु शब्द सुनि के सब ग्वाला। आये जहँ तनु परा विशाला ॥ ८ ॥

दोहा- तासु उदर खेलत लखे, यशुमति के प्रिय लाल।
निज गोदी में धर पुनि, बोली सब बृज बाल ॥ ५८ ॥

छन्द- यशुदा तुम्हारे सुवन का, यह जन्म नूतन जानऊ।
वह पूतना पहिले मरी, अब यह तृणावत आयऊ ॥
वध काज तव सुत का, अरी पर आप ही यह मर गया।
तेरे सुवन की कृपा से, संसार सागर तर गया ॥ ३१ ॥

यह कथन श्री नंदराय से, वसुदेव ने पूरब कहा ।
उत्पात गोकुल बीच होअहिं, इन दिनों देखो महा ॥
वह बात सब साँची भई, जो नयन से देखी अरी ।
अब द्रव्य दीन्हो नन्द ने, सब द्विजन को लखि शुभ घरी ॥३२॥

दोहा- वदत गोपिका बावरी सुत में प्रिय तुहि काम ।
यही हेतु आंगन धरयो, तैने यह घनश्याम ॥ ५९ ॥ क
लज्जित यशुमति वदत अब, सखियन से इस ताग ।
इस कसूर का मिल गया, मुझ को दंड कठोर ॥ ५९ ॥ ख

चौ- अब में बिलग करऊँ नहीं येही । तब से अंक धरे वह प्रभुहीं ॥ १ ॥
कबहुँ गान गा हरिहिं रिझावे । कबहुँ थपकि करि अंक सुलावे ॥ २ ॥
यों वह प्रभु से करत विनोदा । सुर अगम्य सुख लहहिं यशोदा ॥ ३ ॥
कबहु झुलावति पलना मैया । कबहुँ खिलावत गोद रिझैया ॥ ४ ॥
जो सुर नर मुनि नहीं विनोदा । सो सुख पावत रही यशोदा ॥ ५ ॥
इक दिन हरिहिं अंक बिठारी । चुम्बन लगि मुख कर पुचकारी ॥ ६ ॥
तब हँसि खोल दियो प्रभु आनन । मुख बिच यशुदा किय इमि दरशन ॥ ७ ॥
भू नभ पवन चन्द्र गिरिभानू । वरुण कुबेर न इन्द्र कृशानू ॥ ८ ॥

दोहा- जगत वस्तु सब देखकर, करने लगी विचार ।
यह छाया किसकी परी, मम सुत पर इस बार ॥ ६० ॥ क
या छाया सुरपरि परी, लागी नजर अपार ।
जो इस सुत के वदन में, देखा सब संसार ॥ ६० ॥ ख

चौ- यों विचार कर गुणी बुलावा । मोरपंख झारा लगवावा ॥ १ ॥
हरिनख भल्लुक रोम मंगाये । यंत्र पिरोय गले पहिनाये ॥ २ ॥
एक दिवस गुरु गर्ग बुलाये । देवकीश यों वचन सुनाये ॥ ३ ॥
रोहिणि उदर सुवन इक भयऊ । नामकरण में नहि उस कियऊँ ॥ ४ ॥
सो तुम गोकुल बीच सिधाऊ । नामकरण उसका करवाऊ ॥ ५ ॥
यह सुन गर्ग भये मन राजी । गये नन्द गोकुल बिच भाजी ॥ ६ ॥
गर्ग आगमन सुन सब ग्वाला । पूजन कीन्ह आय बृजबाला ॥ ७ ॥
कर सम्मान गेह ले आये । सादर आसन पर बिठलाये ॥ ८ ॥
पूछी कुशल क्षेम उन सारी । हरषित हो बृजपति मनभारी ॥ ९ ॥
ग्वाल बाल भी हरषित सारे । मुनि दरसन कर भये सुखारे ॥ १० ॥

दोहा- नन्द यशोदा चरण रज, धो चरणामृत लीन्ह ।
दोऊ कर जोरे प्रेम से, विनय वहुत उन कीन्ह ॥ ६१ ॥

चौ- भाग्य दीर्घ मुनिराज हमारे । जो श्रीपद मम धाम सिधारे ॥ १ ॥
यह संयोग भयो केहि कारन । तव मुनि कहे वचन प्रिय लागन ॥ २ ॥
निज सुत नामकरण वसुदेवा । प्रेषित कियो यहाँ यहि सेवा ॥ ३ ॥
मुदित नन्द पुनि वचन उचारे । मम सुभाग्य मुनि यहाँ पधारे ॥ ४ ॥
एक सुवन मम गृह मुनिराई । तासु नाम भी कुरु तुम साँई ॥ ५ ॥
यह सुन गर्ग कहे प्रिय वानी । वात नन्द यह पावन जानी ॥ ६ ॥

दोहा- यह मत नीक विचार के, गये नन्द एकन्त ।
वोले गर्गाचार्य पुनि, याको नाम अनन्त ॥ ६२ ॥

छन्द- नाम याको है वलि, वलराम संकर्षण हली ।
वलदाऊ राम व कामपाल, व रोहिणेय व मूसली ॥
वलभद्र भी जग वीच प्रकटे, रोहिणी के पुत्र है ।
जमुन भेदन नील वस्त्र, प्रलम्व के ये शत्रु हैं ॥ ३३ ॥

दोहा- पुनि प्रभु के देखे ग्रह, वोले गिरा उचार ।
मम विचार तव पुत्र यह, परमेश्वर अवतार ॥ ६३ ॥ क
जन्म पत्रिका गर्ग ने, लिखी परीक्षित वाद ।
सुनी नन्द ने गर्ग मुख, होकर अति आह्लाद ॥ ६३ ॥ख

छन्द- कल्प श्वेत वराह युग, द्वापर यह वसु वीसवाँ ।
वर्ष गत वसु राग अष्टम, रामरस युत आंठवाँ ॥
दक्षिणायन गोल उत्तर, प्राक्टी ऋतु भादवाँ ।
कृष्ण आठें सौम्य वटि, चौवन व पल पचासवाँ ॥३१॥
दंड कृतिका नक्षत्र नव, गुण जानुपल इकतीसवा ।
योग ध्रुव दस दंड ऊपर, जानहु पल तीसवाँ ॥
शुद्ध कौलव करण इमि, पंचाग में वरणन कियो ।
इष्ट पट् श्रुति दंड पर, वसुदेव हम यों लिख दियो ॥३२॥
दिनमान घटि इकतीसवी, पल पाँच ऊपर कुछ कमी ।
रवि चार राशी अंश ऊपर, लग्न रवि वर्गोत्तमी ॥
रोहिणी पहिले चरण में, पुत्र तुम यह पायऊ ।
यहि हेतु इनका नाम भी, ओंकार इति हम गायऊ ॥३३॥

वृषभ राष व स्वामि भृगु, अरु वैश्य वर्ण कहायऊ ।
नाग योनि व वश्य चौपद, मनुज गण इन जानऊ ॥
पाद लोह व अन्त्य नाड़ि व, प्रथम युञ्जा मानऊ ।
वर्ग खगपति भूमि हंसक, जन्म ले यहँ आयऊ ॥ ३४॥
लग्न वृष विधु तुंग शिखि, युत राहु सप्तम आयऊ ।
मीन राशी गत गुरु भी, लाभ भाव सिधायऊ ॥
सौम्य भृगु नन्दन गये सुत, भाव सुख रवि पायऊ ।
शत्रु भाव गये शनैश्चर, शत्रु नासक गायऊ ॥ ३५ ॥

दोहा- जैसो काम य जग करे, वैसो प्रकटहिं नाम ॥
निज इच्छा निर्मित तनु, आये सह बलराम ॥ ६४ ॥

छन्द- बाल लीला काज हे, नन्द राज तुमने तप कियो ।
प्रकट हो प्रभु ने तदा, वरदान यह तुमको दियो ॥
पुत्र निज जानो न इनको, नाम नर इन सुमिरकर ।
पावहिं मन काम सारे, मुक्त हो भव सिन्धु तर ॥ ३६ ॥
भ्रात दोऊ वेद युग, इक संग ले अवतार को ।
नाश कर पापी जनों का, हरत भूमि भार को ॥
नंद यशुमति वचन सुन यह, मुदित अति मन में भये ।
गर्ग भी ले दक्षिणा, मथुरा पुरी को आ गये ॥ ३७ ॥
वसुदेव से सब हाल कह, निज धाम पर वह चल दिये ।
बजरंग भी यह गाथ, श्री बृजनाथ की लिखते भये ॥
श्याम अरु बलराम सुन्दर, मोहिनी मूरत करे ।
बाल घूंघर वार सिर पर, वस्त्र भूषन तनु धरे ॥ ३८ ॥
मित्र जन के संग अंगन, घुटनियाँ खेलत रहे ।
ग्वाल बाल व नन्द यशुमति, तासु छवि निरखत अहे॥
निरखि अनुपम तासुछवि, जो सुख इनको मिल रहा।
उसका सुवरणन हे परीक्षित, वदन मम नहिं हो अहा ॥३९॥
पाद पद्म सुपैजनियाँ, शब्द रुन झुन झुन करे ।
शब्द सुन सब अमरगण भी, जयति जय जय जय करे ।
धूरि धूसित अंग लखि, यशुदा उचारे बैन यों ।
आउ मोरे पास मोहन, धूरि में खेलों न यों ॥ ४० ॥

मात की यह वात सुन, गल लागने को लपकते ।
शेष शारद नारदादिक, जासु अन्त न पावते ॥

शिखरिणी- यशोदा मैया के सुन वचन धावे घुटनियाँ ।
भई परमानंदा लखि प्रभु की प्यारी सुरतियाँ ॥
उठी प्रातः काल तजि सदन सारी बृजतियाँ ।
खिलावे ले गोदी अति मुदित होकर निज हियाँ ॥ ४२॥

दोहा- परम पुनीत उदार अति, ललित करत शिशु लील ।
संत जनन आधार हरि, सुन्दर सुखद सुशील ॥ ६५ ॥

छन्द- नन्द सुत का चरित यह, वरणन न कोई कर सके ।
शेष कोटि व सहस शारद, कल्प कोटि न गा सके ॥
वेद महिमा रटत निशिदिन, तदपि पार न पा रहे ।
नन्द आँगन वाल वपुधर, प्रेम से खेलत अहे ॥ ४३ ॥
प्रति दिवस नूतन सुख, नंद यशोमति देखत रहे ।
ऐसो न कोई भुवन तीनऊँ, जो न सुख यह पा रहे ॥
दोउ दंत निकले मास चतु, जो घात मातुल की कहे ।
नन्द यशुमति ने दियो तव, दान निजकर जल गहे ॥४४॥

दोहा- विप्रन के कारन दियो, वर्ष ग्रन्थि पे दान ।
जाति वन्धु वुलवाय के, कीन्हो भोजन पान ॥ ६६ ॥

चौ- करत कीरतन गाई बजाई । बृजवासी आनन्द मनाई ॥ १ ॥
क्रीड़ा करत काल दोऊ भैया । वत्स्य पूँछ गहे खड़े कन्हैया ॥ २ ॥
कबहुँ परत पुनि कबहुँ ठाढे । तोतिल बैन वदन निज काढ़े ॥ ३ ॥
रोहिणि अउर यशोमति माई । बड़े हर्ष युत दूध पिलाई ॥ ४ ॥
दोऊ रूप लखि सब बृजबाला । तजहिं काज निज होय विहाला ॥ ५ ॥
इक दिन एक विप्र तहँ आवा । कर प्रणाम यशुमति बिठावा ॥ ६ ॥
दियो दूध चाँवल मृदुताई । तव वह निज कर खीर बनाई ॥ ७ ॥

सोरठा- धरी थाल में लाय, भोग लगाने को प्रभुहिं ।
पाछे वह द्विजराय, ध्यान कियो चख वन्द करि ॥
तबै कृष्ण ने आय, थाली में भोजन कियो ।
यह लख कर द्विज राय, कहन लगे यसुदा सुनो ॥

दोहा- **तव सुत ने यह खीर मम, छू दीन्ही नन्द रानि ।**
यह सुनि के यशुदा तदा, बोली ऐसी बानी ।। ६७ ।।

चौ- यह मम पुत्र अज्ञ द्विजराई । करहु क्षमा अपराध बिसाई ।। १ ।।
दीन्ह वस्तु पुनि अपर मँगाई । मुदित विप्र पुनि खीर बनाई ।। २ ।।
भयो परीक्षित पुनि वहि हाला । तब निज सुवन बुला बृज बाला ।। ३ ।।
कहे खीर कीन्ही द्विजराई । सो दूषित केहि काज बनाई ।। ४ ।।
कहत वचन तब कृष्ण कन्हैया । मोंहि दोष क्यों देवति मैया ।। ५ ।।
विनय कीन्ह यह भोग लगाई । विप्र प्रेम लखि मैं यह खाई ।। ६ ।।
बार-बार द्विज मोहिं बुलावे । इत मैया तू दोष लगावे ।। ७ ।।
मेरा दोष नहीं कुछ मैया । वदत वचन यों कृष्ण कन्हैया ।। ८ ।।
सुनी विप्र जब यह प्रभु बानी । भयो सदा द्विज अद्भुत ज्ञानी ।। ९ ।।
कहे वचन पुनि द्विज नन्द रानी । धन्य भाग्य यशुमति तव जानी ।। १० ।।

दोहा- **जगदीश्वर आये यहाँ, ले तव घर अवतार ।**
सफल जन्म मेरे भयो, पा दरशन साकार ।। ६८ ।।

चौ- दीन बन्धु बृजनाथ कृपाला । दियो दर्श जो यह नन्द लाला ।। १ ।।
प्रेम मगन हो प्रभु के चरना । लोटन लागा द्विज नंद अंगना ।। २ ।।
करत विनय दोऊ कर जोरे । क्षमा करो अपराध य मोरे ।। ३ ।।
होहिं कृतार्थ शरन जो आवे । दीन बन्धु यहि काज कहावे ।। ४ ।।
यह द्विज दशा देख नन्दलाला । हँसे कृपा करि कृष्ण कृपाला ।। ५ ।।
प्रेम भक्ति हरि की यों पाकर । गये विदा हो द्विज निज घर पर ।। ६ ।।
हाल देख यह सब सुख माना । एवं चरित कीन्ह प्रभु नाना ।। ७ ।।
इक दिन श्याम राम शिशु संगा । आंगन खेलि धूरी भरि अंगा ।। ८ ।।
तेहि समय किंचित रज लेही । धरी श्याम मुख जगत सनेही ।। ९ ।।

दोहा- **यशुदा से कहने लगा, श्रीदामा इक बाल ।**
माटी मुख में धर लई, मैया तेरो लाल ।। ६९ ।। क
वचन सुनत यों यशुमति, छड़ी हाथ में धार ।
निज सुत को मारन चली, तब भयभीत मुरार ।। ६९ ।। ख

चौ- क्रोधित जब लखि मात कृपाला । वदन पौंछि ठाढे नन्दलाला ।। १ ।।
वदत वचन पुनि यशुदा माई । केहि काज माटी तू खाई ।। २ ।।
नगर निवासि करहिं मम निन्दा । इत्थं कहहिं सुनो बृजचन्दा ।। ३ ।।

भोजन काज नहिं कछु देवहिं । यहि काज माटी यह खावहिं ॥ ४ ॥
यह सुन वचन मनोहर प्यारे । हो भयभीत यों वैन उचारे ॥ ५ ॥
अनृत वचन कहा को माई । वृथा कलंक लगावा आई ॥ ६ ॥
यह सुन वदत यशोमति माई । श्रीदामा वह बात बताई ॥ ७ ॥
तब प्रभु डांट कहे श्री दामहिं । रे मैंने कब मिट्टी खाई ॥ ८ ॥

दोहा- **माटी भक्षण की नहीं, यह सब अनृत बात ।**
जो नहिं मानो आप तो, मम मुख देखऊ मात ॥ ७० ॥

छन्द- **यह वचन कह श्रीकृष्ण ने, निज वदन खोला जिस घरी ।**
चर अचर खग नभ वायु चन्द्र व, इन्द्र वह्नि व दिशि गिरी ॥
ज्योति मंडल विथति जल मन, जीव काल सुभाव है ।
पुनि रूप निज लखि चकित यशुमति, वदति बातबनावहैं॥४५॥

दोहा- **यह मम बुद्धि भ्रम पर्‌यो, या माया भगवान ।**
या आया सुपना मुझे, भई बहुत हैरान ॥ ७१ ॥

चौ- दीखत मम सुत बीचे कोई । जन्म जात सिद्धि कुछ होई ॥ १ ॥
सोची बाद समझ तब आई । तब यों कहत यशोमति माई ॥ २ ॥
वचन करम चित जो मन द्वारा । हो न निरूपण किसी प्रकारा ॥ ३ ॥
जिनके यह जग आश्रित सारा । सब विधि जगत जिन्होंने धारा ॥ ४ ॥
रूप अचिन्त्य सर्वथा जासू । करूँ प्रणाम युगल पद तासू ॥ ५ ॥
यह मम पति सुत धन परिवारा । गोपी गोप व गोधन सारा ॥ ६ ॥
यह कुबुद्धि जिन माया कारन । शरण गहूँ मैं उन युग चरणन ॥ ७ ॥
ज्ञान तत्व इति यशुदा मैया । पुत्र स्नेह मयि देख कन्हैया ॥ ८ ॥
निज माया उस पर विस्तारी । भई नष्ट स्मृति तब सारी ॥ ९ ॥
पाछे हरि को अंक बिठावा । पूरब सम निज प्रेम बढ़ावा ॥ १० ॥

दोहा- **सुर मुनि रिषि वेदादिक, जासु पाव ना अन्त ।**
उन हरि को निज पुत्र वह, मानत है नरकन्त ॥ ७२ ॥

चौ- बोले नृप हे ब्रह्मन ऐसो । यशुमति नन्द श्रेय किय कैसो ॥ १ ॥
बड़भागी यशुदा नन्दरानी । कीन्ह पान स्तन जिन हरि आनी ॥ २ ॥
बाल चरित केशव बलरामा । मात पिता पाय न निज धामा ॥ ३ ॥
ऐसो श्रेय कवन दोउ कीन्हा । यह सुन प्रत्युत्तर मुनि दीन्हा ॥ ४ ॥
हे नृप अष्ट वसू बिच एकी । द्रोण नाम वसु परम विवेकी ॥ ५ ॥

धरा नाम नारी उन सोऊ । विधि आज्ञा पालन हित दोऊ ॥ ६ ॥
वदत वचन विधि से वे एहैं । जब हम जन्म भूमि पर लेहैं ॥ ७ ॥
हरि चरणन विच भक्ति हमारी । हो अनन्य मयि गूढ़ अपारी ॥ ८ ॥
अनायास जिस भक्ति द्वारा । जन जग जावत दुर्गति पारा ॥ ९ ॥
यह सुन विधि निज गिरा उचारी । एवमस्तु सुन मुदित अपारी ॥ १० ॥

दोहा- **वही द्रोण अब जन्म ले, धरा नारि के संग ।**
बृज में आये हे नृप, नन्द यशोमति अंग ॥ ७३ ॥

चौ- पुत्री भूत हरि विच सोऊ । परम भक्ति पाये अस दोऊ ॥ १ ॥
विधि के वचन सत्य हितराई । जगदीश्वर गौलोक तजाई ॥ २ ॥
लेकर कृष्ण संग बलरामा । आये हे नृपवर बृजधामा ॥ ३ ॥
नन्द यशोमति गोपिन संगा । कीन्ह चरित इन प्रेम उमंगा ॥ ४ ॥
एक दिवस वह यशुमति माई । गृह दासिन निज पास बुलाई ॥ ५ ॥
निज निज काम नियत कर सबने । यशुदा लगी स्वयं दधि मथने ॥ ६ ॥
निज सुत बाल चरित नन्दरानी । सुमिरन कर गावत मृदुवानी ॥ ७ ॥
कनक करधनी कटि तट सुन्दर । सूक्ष्म वस्त्र धारित तनु ऊपर ॥ ८ ॥
तथा स्नेह स्नुत स्तन युग जासू । रज्जू कर्पण ते श्रम तासू ॥ ९ ॥
चलत भुजा कंकण युत दोऊ । करणन कुंडल लटकत सोऊ ॥ १० ॥

दोहा- **दधि मन्थन करने लगी, स्वेद युक्त मुख जासु ।**
स्तन्य काम हरि पास में, आगये हे नृप तासु ॥ ७४ ॥

चौ- आकर पकरी दधि मन्थानी । कीन्ह निषेध तदा नन्दरानी ॥ १ ॥
पाछे निज स्तन हरिहिं पिलावा । उत चूल्हे पर दूध रखावा ॥ २ ॥
तस्मित इत मुख देखत मैया । भये तृप्त उत नहीं कन्हैया ॥ ३ ॥
तदा उफान दूध विच आवा । तब यशुमति निज पुत्र तजावा ॥ ४ ॥
शीघ्र उतारण हित पयधाई । भये क्रुद्ध यह देख कन्हाई ॥ ५ ॥
मन्थन पात्र तदा उन फोरी । खा नवनीत भगे गृह छोरी ॥ ६ ॥
पय उतार इत यशुदा आई । भग्न पात्र तब वहाँ लखाई ॥ ७ ॥
निज सुत कर्म सभी यह पाये । किन्तु कृष्ण वहँ नहीं लखाये ॥ ८ ॥
परिवर्तित ऊखल के ऊपर । स्थित लखि गोपी सुतहिं तदन्तर ॥ ९ ॥
छींके से नवनीत उतारत । फेंकि फेंकि कर कपिन खिलावत ॥ १० ॥

दोहा- कोई आ पकरे नहीं, इत उत देखत जात ।
किन्तु आ गई पीठ, पर शनै यशोदा मात ॥ ७५ ॥

चौ- लखि माता उन छड़ी उठाई । कूद उलूखल ते वृजराई ॥ १ ॥
भाजि गये झट अति भय खाई । भाजी पकरन हित तब माई ॥ २ ॥
योगीजन जिन जोग रचाई । पकर सकै नहि ऋषि मुनि राई ॥ ३ ॥
जिन पकरन हेतू नन्दरानी । धावत उन अनु अति अकुलानी ॥ ४ ॥
श्रोणि पृष्ठ कहत अति भारा । स्तब्ध गति अति दुखित अपारा ॥ ५ ॥
बल पूर्वक अब गहे कन्हाई । अपराधी रोदित भय खाई ॥ ६ ॥
निजकर पकर पुत्र कर डाँटा । श्याम कपोल लगावत चाँटा ॥ ७ ॥
छरी छोरि पुनि रज्जु उठाई । बाँधन लगी यशोमति माई ॥ ८ ॥
अन्तर बहि पूरव पर जासू । कर न सके जिन वेद प्रकासू ॥ ९ ॥
उन सुत मान यशोमति माई । बाँधन लागी रज्जु गहाई ॥ १० ॥

दोहा- दो अंगुली कमती भई, तब रज्जू नरपाल ।
रज्जु दूसरी तब गही, नन्द रानि तत्काल ॥ ७६ ॥

चौ- तदपि न्यून रज्जु वह जाता । लाई अन्य रज्जु पुनि माता ॥ १ ॥
भई न्यून अंगुल पुनि लाई । तदपि न्यून वह हे नरराई ॥ २ ॥
निज गृह बीच रज्जु वह जेती । लाई बंधन निज सुत हेती ॥ ३ ॥
तदपि न निज सुत बंधन जाता । देख चरित यह विस्मित माता ॥ ४ ॥
देखा यों श्रम जब निज मैया । बँधे स्वयं तब कृष्ण कन्हैया ॥ ५ ॥
दर्शित की इमि उन हरि द्वारा । भक्त वश्यता सभी प्रकारा ॥ ६ ॥
विश्व अधीन रहे यह जासू । पात प्रसाद न शिव विधि तासू ॥ ७ ॥
मुक्ति प्रदात प्रसाद अपारा । पावा यशुमति सभी प्रकारा ॥ ८ ॥
योगी जो सुख पावत नाँही । सेवक सुख युत पावत ताही ॥ ९ ॥
निज गृह कृत्य व्यग्र इत मैया । अर्जुन तरु उत लखे कन्हैया ॥ १० ॥

दोहा- नलकूबर मणिग्रीव दो, प्रथम धनद के पूत ।
नारद मुनि के शाप वश दो तरु भये प्रसूत ॥ ७७ ॥

चौ- कीन्हो नारद क्रोध अपारा । धनद सुवन पर कवन प्रकारा ॥ १ ॥
बोले यों सुन कीर कृपालू । कारण शाप सुनो नरपालू ॥ २ ॥
गुह्यकपति के सुत दो जाता । मणिग्रीव नलकूबर भ्राता ॥ ३ ॥
शिव अनुचर जानउ इन दोऊ । शिव गिरि उपवन सुन्दर सोऊ ॥ ४ ॥

मदिरा पान किये मतवाले । गंगा तट इन डेरा डाले ॥ ५ ॥
मदघूर्णित लोचन तिय संगा । कीन्ह स्नान विचरत वन गंगा ॥ ६ ॥
करिणिन संग यथा गज दोऊ । क्रीड़ा करत युवतिजन सोऊ ॥ ७ ॥
निज इच्छा विचरत तब नारद । आये वहँ पर ज्ञान विशारद ॥ ८ ॥
मुनि लखि शाप भीत सब नारी । निकसि नीर तनु पहिनी सारी ॥ ९ ॥
गुह्यक दोउ किन्तु नहि ताता । पहिने अम्बर नहि निज गाता ॥ १० ॥

दोहा- श्री मदान्ध मद मत्त लख, उन अनुग्रह के हेतु ।
दीन्हो शाप अकाट्य झट, वे नारद मुनि केतु ॥ ७८ ॥

चौ- जो जन निज प्रिय विषयन सेवत । श्री मद धन मद उन मति नासत ॥ १ ॥
नारि व द्यूत व मद्य अपारा । पावत श्रीमद बीचे सारा ॥ २ ॥
निज तनु अजर अमर जो मानत । निज तनु नम पशुवध करवावत ॥ ३ ॥
अन्त समय नृप संज्ञित देहा । भस्म कीट विष्ठायुत येहा ॥ ४ ॥
उस तनु हित प्राणिन प्रति द्रोही । निज स्वारथ पाव न मद मोही ॥ ५ ॥
क्या यह पिता और वा माता । नहि माता मद भोजन दाता ॥ ६ ॥
यह तनु तो प्राकृत कहलाये । दुर्जन निज आत्मा यहि गावे ॥ ७ ॥
ऐसो कवन सुधी जग रहहीं । जो इस तनु हित प्राणिन वधहीं ॥ ८ ॥
श्रीमद अन्ध जगत के प्रानी । परमौषध दारिद उनमानी ॥ ९ ॥
दारिद पाय जगत के प्रानी । निज तनु सम पर तनु पहिचानी ॥ १० ॥

दोहा- जाके तनु काँटा लगे, जानत कंटक पीर ।
पर पीरा जानत वही, कंटक विद्ध शरीर ॥ ७९ ॥

चौ- पा दारिद्र मनुज दुख पावे । सोही तप उसका कहलावे ॥ १ ॥
मिलहिं न अन्न क्षुधा कृश देही । होअहिं शुष्क इन्द्रियाँ तेही ॥ २ ॥
अहंकार हिंसा ना रहहीं । समदर्शी साधुन संग करहीं ॥ ३ ॥
होअहिं शुद्ध सुसंगति पाये । यथा कनक निज मेल तजाये ॥ ४ ॥
धनिक संग वहि मेल्र वढ़ावे । जो असाधु जग वीच कहाये ॥ ५ ॥
धन गर्वित मानव के द्वारा । करत संतजन सदा किनारा ॥ ६ ॥
ये दोऊ श्री मद अभिमानी । करूँ दूर मद अब इन प्रानी ॥ ७ ॥
लोकपाल के यो सुत दोही । तम गुण व्याप्त सुदुर्मद मोही ॥ ८ ॥
जो यह ठाढे वस्त्र विहीना । ये दोऊ श्रीमद आधीना ॥ ९ ॥
यही हेतु स्थावर तनु पावें । मम अनुग्रह ते स्मृति नसावें ॥ १० ॥

दोहा- **दिव्य वर्ष शत गत तदा, मिलहिं इन्हें भगवन्त ।**
स्थावर तनु पुनि त्याग के, पावहिं सुर तनु अन्त ॥ ८० ॥

चौ- नारद मुनि यों वचन सुनाकर । आये नारायण आश्रम पर ॥ १ ॥
तब ते नलकूबर मणिग्रीवा । यमलार्जुन तरु भए वृज सींवा ॥ २ ॥
परम भागवत ज्ञान विशारद । करने वचन सत्य मुनि नारद ॥ ३ ॥
गये कृष्ण जहँ पर तरु दोऊ । नारद परम भक्त उन सोऊ ॥ ४ ॥
नारद वचन सत्य मैं करऊ । यों विचार कर वे निज मनऊँ ॥ ५ ॥
आये जहँ दोउ तरु विशाला । ऊखल के संग कृष्ण कृपाला ॥ ६ ॥
तब तरु बीच गये बल भ्राता । तदा उलूखल तिर्यक जाता ॥ ७ ॥
खींचा तब हरि जोर लगाई । मूल रहित तब वे तरु राई ॥ ८ ॥
कर प्रचंड रव घोर कठोरा । महि पर परत भयो अति सोरा ॥ ९ ॥
तब निज कान्ति सुकरत प्रकासू । निकसे पुरुप युगल वहँ तासू ॥ १० ॥

दोहा- **निज स्वरूप ही प्राप्त कर, आये सन्मुख श्याम ।**
वदत युगल कर जोर वे, करके प्रथम प्रणाम ॥ ८१ ॥

चौ- कृष्ण कृष्ण हे कृष्ण कृपालू । आदि पुरुप हे दीन दयालू ॥ १ ॥
सकल विश्व यह रूप तुम्हारा । तुम सब प्राणिन के आधारा ॥ २ ॥
तुम ही काल रूप भगवाना । अव्यय ईश्वर पुरुप पुराना ॥ ३ ॥
तुम ही प्रकृति पुरुष अवतारी । गुण प्राकृत नहि प्रभु अधिकारी ॥ ४ ॥
आदि पुरुप तुमको ना कोई । जानन हेत समर्थ न होई ॥ ५ ॥
वासुदेव हे विधि भगवन्ता । करहिं प्रणाम हे नाथ अनन्ता ॥ ६ ॥
जन्म कर्म यद्यपि तव नाँही । लेवहु जन्म तदपि जग माँही ॥ ७ ॥
मोक्ष व सब जन उद्भव राजू । यह अवतार तुम्हारा आजू ॥ ८ ॥
शान्त व वासुदेव यदुनाथा । अति विचित्र तव मंगल गाथा ॥ ९ ॥
वन्दहिं परम सुमंगलकारी । नत मस्तक होकर अवहारी ॥ १० ॥

दोहा- **हम दोऊ किंकर तव प्रभो, नारद अनुग्रह पाय ।**
कीन्हा दरशन आपका, अधुना हे यदुराय ॥ ८२ ॥

चौ- तव गुण कथन हेत यह बानी । कथा श्रवण हित कर्ण निशानी ॥ १ ॥
हस्त दोऊ तव पूजन काजू । यह मम स्मर्ण हेत वृजराजू ॥ २ ॥
तोर निवास भूत जग काजू । सीस प्रणाम हेत यदुराजू ॥ ३ ॥
सत दरसन तव मूरति अन्दर । लगे दृष्टि यह नाथ निरन्तर ॥ ४ ॥

सुने वचन उनके इमि होले । ऊखलबद्ध कृष्ण तब बोले ॥ ५ ॥
नारद शाप प्रथम हम जाना । सन्त समागम व्यर्थ न माना ॥ ६ ॥
रवि दर्शन जिमि तिमिर निवारे । सत दर्शन त्यों पाप उतारे ॥ ७ ॥
मोरे बीच सदा रहु तत्पर । सुख पूर्वक अब जावऊ निज घर ॥ ८ ॥
मिलहीं भक्ति तुम्हें यह मेरी । जो भव बन्धन करत निबेरी ॥ ९ ॥
कृष्ण वचन यों सुनकर काना । भये मुदित दोऊ अति सुख माना ॥ १० ॥

दोहा- **कर प्रणाम हरि पद अब, है नृप बारम्बार ।**
गये उत्तराखंड में, वे दोउ धनद कुमार ॥ ८३ ॥

चौ- पुनि राजन नन्दादिक गूवाला । पतित वृक्ष सुन शब्द विशाला ॥ १ ॥
वज्रपात भय शंकित सारे । आये तरु जहँ, परे उखारे ॥ २ ॥
देखे पतित गिरे तरु दोऊ । जाँच सके ना कारण कोऊ ॥ ३ ॥
त्यों ही ऊखल कर्षत पाये । नन्द सुवन कटि दाम बँधाये ॥ ४ ॥
पूछत अब उनसे सब ग्वाला । पतन भये किमि वृक्ष विशाला ॥ ५ ॥
बोले तदा वहाँ स्थित बालक । नन्द सुवन ये दोउ तरु नाशक ॥ ६ ॥
ऊखल कर्षत जब यह आवा । ऊखल इन तरु बीच फँसावा ॥ ७ ॥
खींचा ऊखल जोर लगाई । गिरे भूमि पर तब तरु आई ॥ ८ ॥
अपर बात इक और बताये । युगल पुरुष यहँ हमें लखाये ॥ ९ ॥
बाल वचन उन सत्य न माना । कई संदेह चित्त निज आना ॥ १० ॥

दोहा- **दाम उलूखल बद्ध सुत, देख तदा श्री नन्द ।**
मोचन कर निज अंक ले, पाये परमानन्द ॥ ८४ ॥

चौ- आवत नन्द गेह वृज ग्वाली । सन्मुख कृष्ण बजावत ताली ॥ १ ॥
तब साधारण बाल समाना । नाचत गावत वे भगवाना ॥ २ ॥
वरणन करूँ कहाँ तक राई । वे दारूयोषित की नाँई ॥ ३ ॥
होकर मुग्ध भये वश उनके । पावत पद योगी नहिं जिनके ॥ ४ ॥
आज्ञा मान कबहुँ वे तासू । लावत पीठक पादुक आसू ॥ ५ ॥
कबहूँ लावत वे उन्माना । बाहुक्षेप कर मल्ल समाना ॥ ६ ॥
भक्त वश्यता यों भगवन्ता । दरसित कीन्ही यों जगकन्ता ॥ ७ ॥
लीला बाल दिखाकर उनको । करत मुदित सारे वृजजन को ॥ ८ ॥
एक दिवस इक मालिन आई । लेवऊ फल आवाज लगाई ॥ ९ ॥
तदा सर्वफल प्रद भगवाना । मालिन वचन सुनत जब काना ॥ १० ॥

दोहा- **निज माता के पास आ, मचल गये फल काज ।**
तव यशुमति ने आनि के, दीन्हो उन्हें अनाज ॥ ८५ ॥

चौ- निज लघु अंजलि भर तब कैना । मालिन पास खड़े व्रज ऐना ॥ १ ॥
कुछ विखरत कुछ अंजलि माँही । डारा डलिया मृदु मुस्काही ॥ २ ॥
तव मालिन फल लेकर ताजा । भरी अंजली उन वृज राजा ॥ ३ ॥
फल ले उत वृज राज सिधाये । इत डलिया विच रतन पुराये ॥ ४ ॥
एक समय नृप रोहिणि मैया । सरित तीर गत राम कन्हैया ॥ ५ ॥
देकर के आवाज वुलाये । क्रीड़ा सत नहि पर वे आये ॥ ६ ॥
तदा रोहिणी घर पर आई । भेजी वहाँ यशोमति माई ॥ ७ ॥
पुत्र स्नेह स्नुत स्तनी यशोदा । क्रीड़मान अतिकाल समोदा ॥ ८ ॥
वारम्बार पुकारत मैया । मम समीप आ कृष्ण कन्हैया ॥ ९ ॥
मैं तोही निज दूध पिलाऊँ । भयउ श्रान्त अति अंक बिठाऊँ ॥ १० ॥

दोहा- **कमल नयन हे तात हे, कुलनन्दन वलराम ।**
क्रीड़ा तज करके अव, आवहु सह घनश्याम ॥ ८६ ॥

चौ- प्रातःकाल तुम कीन्ह कलेवा । भोजनकाल भयो वृजदेवा ॥ १ ॥
अरे वृजाधिप वाट तुम्हारी । देख रहे स्थित भोजनथारी ॥ २ ॥
अब तुम दोऊ यहाँ पर आऊ । वृजपति सह भोजन कर जाऊ ॥ ३ ॥
जाहू वालकों निज-निज गेहा । तजकर अव तुम खेल सनेहा ॥ ४ ॥
हे सुत तव रज व्याप्त कलेवर । करो स्नान अव निज घर आकर ॥ ५ ॥
जन्म दिवस हैं आज तुम्हारा । करो दान गौ विधि अनुसारा ॥ ६ ॥
देखु पुत्र यह संगि तुम्हारे । कर मज्जन अम्बर तनु धारे ॥ ७ ॥
तुम भी मज्जन कर खा खाना । होय स्वलंकृत खेलन जाना ॥ ८ ॥
स्नेह बद्ध इमि यशुमति मैया । जगत शिरोमणि कृष्ण कन्हैया ॥ ९ ॥
निज सुतमान सहित वलरामा । ले आवत कर गहि निज धामा ॥ १० ॥

दोहा- **उनके मंगल काज पुनि, जो कुछ करना होय ।**
वड़े प्रेम से यशुमती, सब कुछ करती सोय ॥ ८७ ॥

चौ- वोले शुक अव सुनु कुरु त्राता । गोप वृद्ध लखि वृज उत्पाता ॥ १ ॥
सब मिलकर गोकुल हितकाजू । करत विचार सहित नन्द राजू ॥ २ ॥
तदा ज्ञान वय वृद्ध वहाँ पर । नाम गोप उपनन्द गुणाकर ॥ ३ ॥
वोले अरे सुनो सब भाई । मोरे मन यह बात जँचाई ॥ ४ ॥

तज करके अब गोकुल स्थाना । बसो ठौर कहीं चलकर आना ॥ ५ ॥
नित नूतन यहँ पर उत्पाता । शिशु नाशक होअहिं अह भ्राता ॥ ६ ॥
बालघ्नी निशिचरनी द्वारा । बचा नन्द सुत किसी प्रकारा ॥ ७ ॥
हरि अनुकम्पा नन्द दुलारा । बचा शकट से किसी प्रकारा ॥ ८ ॥
तृणावर्त निशिचर यहँ आवा । नन्द सुवन गहिं गगन उड़ावा ॥ ९ ॥
शिल ऊपर पाछे यह डारा । किन्तु देव ने इसे उबारा ॥ १० ॥

दोहा- **दोऊ प्रभु आकर गिरे किन्तु कृष्ण सह बाल ।**
मृतक भयो ना एक भी बने हरी रखवाल ॥ ८८ ॥

चौ- अब कोई हो नहिं उत्पाता । इससे पूर्व सुनो सब भ्राता ॥ १ ॥
हम सब तजकर के यह स्थाना । अपर ठाँउ पर करे पयाना ॥ २ ॥
वृन्दावन यह से नहिं दूरी । गोचर भूमि जहाँ पर पूरी ॥ ३ ॥
गोप व गोपिन को सुखदाई । पुण्याद्रि तृण लता सुहाई ॥ ४ ॥
वहाँ आज ही मिलकर सारे । चलें ज्योत कर शकट हमारे ॥ ५ ॥
यह मम मत लागहिं यदि नीका । करो देर मत यहँ दिन फीका ॥ ६ ॥
चालें गोधन अग्र हमारा । जब यह मत उपनन्द उचारा ॥ ७ ॥
साधु-साधु तब गोप व ग्वाला । कहने लागी सब वृजबाला ॥ ८ ॥
पाछे निज-निज शकट सजाये । बाल वृद्ध तिय तासु चढ़ाये ॥ ९ ॥
लेकर सभी शरासन हत्था । कर आगे अब गोधन जत्था ॥ १० ॥

दोहा- **संग पुरोहित ले सभी, श्रृंग व तुरहि बजाय ।**
चाले गोपी ग्वाल अब, निज-निज इष्ट मनाय ॥ ८९ ॥

चौ- शकटारूढ़ तदा वृज बोला । गावत कृष्णचरित सह ग्वाला ॥ १ ॥
तथा रोहिणी यशुमति मैया । सोभित सह बलराम कन्हैया ॥ २ ॥
एवं सर्वकाल सुखदाई । वृन्दावन पहुँचे वृजराई ॥ ३ ॥
अर्ध चन्द्रवत शकट सजावा । निज निवास हित स्थान रचावा ॥ ४ ॥
वृन्दावन गोवर्धन यमुनहिं । लख अति प्रीति भई बल कृष्णहिं ॥ ५ ॥
बाल चरित कर इमि भगवन्ता । दे वृज वासिन प्रेम अनन्ता ॥ ६ ॥
कुछ दिन बाद सुनो नर राई । वत्स पाल भये दोउ भाई ॥ ७ ॥
वृज समीप निज वत्स चराये । गोप कुमारन संग लिआये ॥ ८ ॥
कबहूँ वे हरि वेणु बजावत । क्षपण ते विल्वादिक तोरत ॥ ९ ॥
कबहुँ किंकिणी पद महि ताड़त । कृत्रिम गौ वृष रूप बनावत ॥ १० ॥

दोहा- कवहुँ वृषभ वन गरजत, लरत सखन वृजनाथ ।
कोकिल वानर मोर की , वदत वाणि उन साथ ॥ ६० ॥

चौ- हे नृप यों जगपति भगवाना । खेलत प्राकृत वाल समाना ॥ १ ॥
आये मिलकर सब इक वारा । वत्स चरावन यमुन किनारा ॥ २ ॥
दानव एक वहाँ पर आवा । निज स्वरूप यह वत्स वनावा ॥ ३ ॥
आया राम श्याम वध काजू । वत्स यूथ गत लखि वृजराजू ॥ ४ ॥
कर संकेत रामहिं पाछे । उस समीप गये कसि काछे ॥ ५ ॥
गहि लाङ्गूल पाद पुनि दोऊ । चारों ओर घुमाकर सोऊ ॥ ६ ॥
द्रुम कपित्थ ऊपर दे मारा । निकसे प्राण तदा महि डारा ॥ ७ ॥
महाकाय वह दानव भारी । फल कपित्थ सह गिरा चिंघारी ॥ ८ ॥
दनुजहिं मृतक देखि सव वाला । वोले साधु-साधु तेहि काला ॥ ९ ॥
सुमन वृष्टि सुर हरि पर डारी । जयति जयति कही मुदित अपारी ॥ १० ॥

दोहा- वत्स पाल वनकर इमि, वे जग सरजन हार ।
प्रात कलेवा संग ले, करते वहाँ विहार ॥ ६१ ॥

चौ- एक बार बालक मिल सारे । वत्स संग गए यमुन किनारे ॥ १ ॥
वत्सन सह वहँ कर जल पाना । खेलन लगे कृष्ण भगवाना ॥ २ ॥
नभचर एक वहाँ वलवाना । देखा मेरू श्रृङ्ग समाना ॥ ३ ॥
वक नाम राक्षस वहँ आवा । तीक्ष्ण तुंड ते कृष्ण ग्रसावा ॥ ४ ॥
कृष्णहिं ग्रसित वकासुर द्वारा । देख विकल भए गोप कुमारा ॥ ५ ॥
लोक पिता के सरजन हारे । पहुँचे जब वक तालु दुआरे ॥ ६ ॥
भई जलन अव अग्नि समाना । उगले अव वापिस भगवाना ॥ ७ ॥
महाक्रोध करि तुण्ड उठावा । कृष्णहिं हनन हेतु पुनि धावा ॥ ८ ॥
कंस सखा जव झपटा ज्योंही । तुंड कठोर गही प्रभु त्योंही ॥ ९ ॥
अव उन सव बालन के देखत । चीरेउ तृण सम खेलत खेलत ॥ १० ॥

दोहा- अव वकारि उन कृष्ण पर, सुर झरि कुसुम लगाय ।
कीन्ही स्तुति अति मुदित हो, आनक शंख वजाय ॥ ६२ ॥

चौ- एवं वक मुख ते उन्मुक्ता । लखि रामादिक भए अति प्रीता ॥ १ ॥
पाछे वृज विच आकर सारे । कृष्ण कर्म सव हेतु उचारे ॥ २ ॥
सुन यह चरित भए सव विस्मित । तृपित दृष्टि हो सव इमि बोलत ॥ ३ ॥
आई मृत्यु बहुत सी वारा । तदपि बाल यह देव उवारा ॥ ४ ॥

आये दानव घोर करारा । वध हेतू इन नन्द कुमारा ॥ ५ ॥
पावक बीच पतंग समाना । भस्मी भूत भये तजि प्राना ॥ ६ ॥
वदत ब्रह्मविद् जो कुछ बाता । वह असत्य कबहू नहि जाता ॥ ७ ॥
बोले गर्ग प्रथम जो बाता । वह सब बात सत्य अब जाता ॥ ८ ॥
एवं नन्दादिक सब ग्वाला । कृष्ण कथा गाती वृजबाला ॥ ९ ॥
कृष्ण कथा विच तन्मय सारे । भव दुख निजमन नहीं विचारे ॥ १० ॥
राम श्याम इमि सखा समेतू । बाँधत कबहुं नदी पर सेतू ॥ ११ ॥

दोहा- **खेलत आंख मिचौनि वे, कबहुं तरु की डार ।**
उछल कूद कपि सम करे, करते खेल अपार ॥ १३ ॥ क
कबहूं तस्कर बनत वे, कबहुं बनत कुतवाल ।
देख चरित उनका यह, सुख पावत सब ग्वाल ॥ १३ ॥ ख
बालोचित इमि खेलकर, रामसहित घनश्याम ।
वृज विच निज बालापन, बिता दियो सुखधाम ॥ १३ ॥ ग

चौ- एक दिवस माधव वृजराजू । अटवी बीच कलेऊ काजू ॥ १ ॥
कर विचार निज मन में राजन । उठे प्रात शय्या तजि मोहन ॥ २ ॥
कीन्ही श्रृङ्ग ध्वनि तत्काला । सुनकर ध्वनि जागे सब ग्वाला ॥ ३ ॥
अब निज बछरन संग कन्हैया । चले विपिन विच सह बल मैया ॥ ४ ॥
अब उन संग हजारन बालक । ले अयुताधिक संग वृष सावक ॥ ५ ॥
वेत्र वेणु कर श्रृङ्ग गहाई । गये विपिन बीचे हर्षाई ॥ ६ ॥
कृष्ण यूथ निज यूथ मिलावा । सब ग्वाले इमि वत्स चरावा ॥ ७ ॥
कर अनेक बालोचित लीला । विचरत इत उत वहँ वृजशीला ॥ ८ ॥
यद्यपि गुञ्जा काच व कंकन । पहिने ग्वाल बाल मणि भूषन ॥ ९ ॥
तदपि सुरक्त हरित तरु कोंपल । ले फल पीत हाथ निज कोमल ॥ १० ॥

दोहा- **रंग विरंगे कुसुम युत, मोर पंख शिर धार ।**
सजा लई निज देह को, सुनु नृप कई प्रकार ॥ १४ ॥

चौ- बालक कोई बजावत वेनू । लरत परस्पर बनि वृष धेनू ॥ १ ॥
गरजत राँभत कई प्रकारा । करत विपिन विच खेल अपारा ॥ २ ॥
कोइ कोइ बालक क्षेपण द्वारा । तोरत तरु फल फूल अपारा ॥ ३ ॥
वंशि चुरावत कोई काहू । छींका वेत्र छिपावत आहू ॥ ४ ॥
किंकिणि युत निज पाद प्रहारा । करत काहु पर गोप कुमारा ॥ ५ ॥

हंसादिक पक्षिन रव द्वारा । करत अनुकृत शब्द अपारा ॥ ६ ॥
कोई परस्पर छाक उछारत । रोवत अपर हेतु जब देवत ॥ ७ ॥
कबहूँ फुदकत भेक समाना । गावत कोई भृंग समाना ॥ ८ ॥
कोई कोकिल सम रव बोलत । कोई खग छाया प्रति धावत ॥ ९ ॥
कोई हंसादिक अनुधावत । बक सम कोई ध्यान लगावत ॥ १० ॥

दोहा- **कोई वंशि बजावत, कोई बजावत शृङ्ग**
निज मुख ते कोई करे, बाजत यथा मृदङ्ग ॥ ६५ ॥

चौ- केकी सम कोई नृत्य रचावत । कोई तरु शाखा पर झूलत ॥ १ ॥
पकरत कोई कपीसन पुच्छा । धरत सीस निज फूलन गुच्छा ॥ २ ॥
कोई दाँत निकारत जावत । कोई परस्पर हँसी उड़ावत ॥ ३ ॥
लख प्रतिबिम्ब नीर बिच कोई । बदसूरत करते मुख सोई ॥ ४ ॥
कोई बालक नयन चलावे । कोई मुख मटकावत खावे ॥ ५ ॥
कोई प्रतिध्वनि सुनकर बोलत । कोई शाखा मृग अनुडोलत ॥ ६ ॥
कोई बाल बजावत तारी । कोई दौड़ लगावत भारी ॥ ७ ॥
बन सोभा अवलोकन हेतू । जावत दूर यदा वृजकेतू ॥ ८ ॥
पकरूँ प्रथम प्रथम मैं येहू । यों करि होड़ भजत अनुतेहू ॥ ९ ॥
इमि सब ग्वाल बाल सुनुराया । कानन खेल अनेक रचाया ॥ १० ॥

दोहा- **बरणूँ उनके भाग्य को, राजन कवन प्रकार ।**
जिन मुख ठाढ़े सर्वदा, जगपति ले अवतार ॥ ६६ ॥

चौ- योगीजन बड़ योग रचाई । जासू चरण रेणु नहि पाई ॥ १ ॥
पुण्यपुञ्ज उनका ना कोई । बरणन हेत समर्थ न होई ॥ २ ॥
उन क्रीड़ा लखि एक निशाचर । आवा वहँ पर नाम अघासुर ॥ ३ ॥
रहेउ पूतना बक लघु भ्राता । कृष्णादिक बालन लखि गाता ॥ ४ ॥
निज मन माँही करत विचारा । यशुमति सुत मम वंश उजारा ॥ ५ ॥
अब वत्सन सह इन सब बालन । करूँ हनन ना त्यागऊँ इस क्षण ॥ ६ ॥
जब ये सब बालक मरि जैहें । तब वृज जन निज तनु तज देहें ॥ ७ ॥
कर विचार यों वह निज मन में । अजगर रूप भयउ तत्क्षण में ॥ ८ ॥
अद्रि तुल्य तनु दीर्घ अपारा । निज मुख दरिवत तुरत पसारा ॥ ९ ॥
ग्रसन काज सब बालन हेतू । पथ बीचे स्थित दानव केतू ॥ १० ॥

दोहा- **अधर ओष्ठ भूमि विषै, उर्ध्व ओष्ठ नभ माँय ।**
दंष्ट्रगिरि के शृङ्गवत, आनन दरि सम भाय ॥ ६७ ॥

चौ- विस्तृत पथ इन जिह्व अपारी । देखा दावन ईदृश भारी ॥ १ ॥
देख तेहि वृन्दावन शोभा । कौतुक वश बालन मन लोभा ॥ २ ॥
बोले सब अजगर सम कोई । विस्तृत मुख प्राणी यह होई ॥ ३ ॥
निगलन हेतु हमें यह आवा । अहि सम विस्तृत वदन दिखावा ॥ ४ ॥
अरे मित्र रवि किरणन द्वारा । अरुण मेघ सम होठ पसारा ॥ ५ ॥
घन पर छाई परत महि काली । दीखत यह अधरोष्ठन लाली ॥ ६ ॥
उच्च श्रृङ्ग अवली अनूरूपा । दंष्ट्रा विकट विशाल कुरूपा ॥ ७ ॥
जीहा दीर्घ मार्ग सम जाता । चलत दवाग्नि उष्ण अति वाता ॥ ८ ॥
जानहु यह अजगर कर श्वासा । आवत जो दुर्गन्ध जरा सा ॥ ९ ॥
दग्ध जीव जो वन अनलाई । मास गंधवत जानउ भाई ॥ १० ॥

दोहा- जो इस अहि मुख के विषै, हम सब करें प्रवेश ।
हमको यदि यह निगरहिं, अपने कंठ प्रवेश ॥ ९८ ॥

चौ- तो यह नन्द सुवन के द्वारा । बक समान झट जावहिं मारा ॥ १ ॥
यों कह सभी बजाकर तारी । कीन्ह प्रवेश वदन अहि भारी ॥ २ ॥
कीन्हे यद्यपि कृष्ण मनाई । तदपि न वे सब रूके रूकाई ॥ ३ ॥
अहि मुख पहंचे जब वे सारे । बाहर देखे नन्द दुलारे ॥ ४ ॥
यहि हेतु निगरे नहि कोऊ । लगा बाट जोहन हरि सोऊ ॥ ५ ॥
सोचत कृष्ण तदा वह निज मन । निज करते निकसित लखि बालन ॥ ६ ॥
मैं ही एक सहारा इनका । उड़कर आग गिरे जिमि तिनका ॥ ७ ॥
त्योंही मृत्यु रूप अघातुर । पैठे वदन सखा मम भीतर ॥ ८ ॥
यह विचित्र देखी जब लीला । विस्मित भयो तदा वृज शीला ॥ ९ ॥
द्रवित दया ते हो तब भारी । सोचन लगे संत भय हारी ॥ १० ॥

दोहा- ऐसो कवन उपाय मैं, करके अबकी बार ।
नाश करूँ इस दुष्ट का, उबरहिं सखा हमार ॥ ९९ ॥

चौ- यह विचार कर कृष्ण कृपाला । पैठे अजगर वदन विशाला ॥ १ ॥
नभस्थित तब देव अपारा । करने लागे हाहाकारा ॥ २ ॥
हर्षित भये निशाचर सारे । पहुँचे जब हरि अहि मुख द्वारे ॥ ३ ॥
बालन वत्सन सह अब नागा । यशुमति सुत को निगलन लागा ॥ ४ ॥
त्योंही कृष्ण कंठ के भीतर । बाढा निज तनु महा भयंकर ॥ ५ ॥
देहान्तर गत जीवन वाता । भयो रुद्ध पथ जब बक भ्राता ॥ ६ ॥

निकसेऊ ब्रह्म रंध्र कर भेदन । शिथिल भयो तनु निर्गत लोचन ॥ ७ ॥
जब यों मरा अघासुर राजन । तब हरि मृत बालन सह वत्सन ॥ ८ ॥
निज अमृत दृष्टि के द्वारा । दीन्हो जीवन येन प्रकारा ॥ ९ ॥
पाछे अहि मुख बाहर आये । संग सखा वत्सन निज लाये ॥ १० ॥

दोहा- **पाछे अहि तनु उत्थित, नभ स्थित तेज अथाह ।**
देवन के देखत वह, समा गयो वृज नाह ॥ १०० ॥

चौ- विबुध वृन्द यह देख चरित्रा । हरि पर डारे कुसुम विचित्रा ॥ १ ॥
लगी अप्सरा नाचत राजा । गा गंधर्व बजावत बाजा ॥ २ ॥
वाद्य व गीत प्रार्थना भारी । सत्य लोक बीचे सुनु सारी ॥ ३ ॥
कृष्ण समीप विधाता आये । लखि महिमा हरि की चकराये ॥ ४ ॥
शुष्क चर्म अजगर का राजन । भयो महा बिल बिच बृन्दावन ॥ ५ ॥
वृन्दावन वासिन हित सोहू । क्रीड़ा स्थान बना बिल ओहू ॥ ६ ॥
पंचम वर्ष बीच यह सारी । लीला हरि अद्भुत विस्तारी ॥ ७ ॥
यह सब लीला घर पर जाकर । कहि पौगंड अवस्था भीतर ॥ ८ ॥
मानव सुत माया के द्वारा । लीन्हो जगतपति अवतारा ॥ ९ ॥
उनकी लीला गहन अथाहू । करहु न विस्मय उस पर काहू ॥ १० ॥

दोहा- **पापी भी उन दरस कर, होवत उन्हीं समान ।**
जिन मूरति निज हिय धरी, पावत मोक्ष महान ॥ १०१ ॥

चौ- मत आश्चर्य करो नृप येहू । धारे अहि पुनि हरि निज देहू ॥ १ ॥
क्यों ना मोक्ष अरे वह होई । इस में अचरज बात न कोई ॥ २ ॥
बोले अब मुनि सूत सुजानी । यों हरि माया सुन नृप ज्ञानी ॥ ३ ॥
पीछे शुक से वचन उचारा । कीन्ह कर्म यह हरि कौमारा ॥ ४ ॥
वय पौगन्ड मुनीश्वर कैसे । कहा चरित बालन घर जैसे ॥ ५ ॥
यह सब चरित कहो मुनि मोहीं । इस गाथा बिच अचरज होहीं ॥ ६ ॥
क्षत्र बन्धु हम धन्य मुनीशा । कृष्णकथामृत पीवत ईशा ॥ ७ ॥
सूत कहे शौनक मुनिराया । यों शुक से नृप वचन सुनाया ॥ ८ ॥
नृप वर की सुनकर इमि बानी । बोले तब शुक मुनि विज्ञानी ॥ ९ ॥
अरे भागवत उत्तम राई । साधु प्रश्न पूछा तुम आई ॥ १० ॥

दोहा- **सुनकर बारम्बार भी, हरि की कथा हमेस ।**
नूतन सम होवत सदा, कुरू देश नरेश ॥ १०२ ॥

चौ- कृष्ण कथा तो प्रतिक्षण नूतन । साधु सुभाव यही तो राजन ॥ १ ॥
तिय लम्पट प्रति जिमि तियवाता । नूतन त्यों साधुन यह जाता ॥ २ ॥
यद्यपि गुप्त कथा नृप येहू । तदपि निज मुख वरणऊँ तेहू ॥ ३ ॥
वत्सन सह बालन उद्धारा । करके हरी अघासुर द्वारा ॥ ४ ॥
सबके संग यमुन तट आये । पाछे सब प्रति वचन सुनाये ॥ ५ ॥
यह यमुना तट बहुत मनोहर । कोमल स्वच्छ बालुका ऊपर ॥ ६ ॥
भ्रमर व पक्षी करत निनादा । सोभित द्रुम युत जिन फल लादा ॥ ७ ॥
स्थित होकर इस यमुन किनारे । करें सुभोजन अब हम सारे ॥ ८ ॥
भोजन वेला गई हमारी । अब तो क्षुधा सतावत भारी ॥ ९ ॥
सब बछरे करके जलपाना । चरहिं पास तृण सुन्दर नाना ॥ १० ॥

दोहा- **उन बालन को कृष्ण का, यह मत लागा ठीक ।**
छोरे निज बछरे तदा, हरित घांस जहँ नीक ॥ १०३ ॥

चौ- निज निज छाक तदा उन खोली । किय भोजन हरि संगकर टोली ॥ १ ॥
तदा कृष्ण के सर्वत आगे । बैठे वृज अरभक प्रिय लागे ॥ २ ॥
बाँधे मंडल विविध प्रकारा । रचि पत्रावलि पत्रन द्वारा ॥ ३ ॥
कोई पातल कुसुम बनाई । फल अंकुर पत्रन रचवाई ॥ ४ ॥
कोई धर भोजन शिल ऊपर । खावत कोई परस्पर मिलकर ॥ ५ ॥
यों सब निज-निज रुचि अनुसारी । भोजन कीन्ह सहित बनवारी ॥ ६ ॥
कटि पट बीचे वेणु दबाई । वाम बगल निज लकुट धराई ॥ ७ ॥
वाम हस्त दध्योदन ग्रासू । विल्व फलादिक अंगुलि जासू ॥ ८ ॥
बैठे यज्ञ नाथ करतारा । नर्म हास मुख वचन उचारा ॥ ९ ॥
स्वर्ग स्थित जन देखत जासू । सरवन संग खावत वे ग्रासू ॥ १० ॥

दोहा- **भोजन करने जब नृप, बैठे सब वृज बाल ।**
तृण लोभी बछरे तदा, गये दूर उस काल ॥ १०४ ॥

चौ- तदा भीत गोपन प्रति राया । शीघ्र कृष्ण उठ वचन सुनाया ॥ १ ॥
भोजन तजो नहीं मत भाई । बछरे पास न मुझे लखाई ॥ २ ॥
मैं जाकर के उन्हें लिवाऊँ । बैठो तुम यहँ में झट आऊँ ॥ ३ ॥
बालन से यों कह बृजराई । धाये निजकर कवल उठाई ॥ ४ ॥
पाछे गिरि दरि कुञ्ज व गह्वर । हेरत चहूँ और वृज सुन्दर ॥ ५ ॥
इत ब्रह्मा श्रीकृष्ण कृपाला । देखन महिमा परम विशाला ॥ ६ ॥

सारे वत्स व बाल चुराये । निज गिरी कंदर बीच रखाये ॥ ७ ॥
देख अघासुर मोक्षणं राया । प्रथम विधाता विस्मय आया ॥ ८ ॥
वत्स नहीं उस विपिन लखाये । तदा कृष्ण यमुना तट आये ॥ ९ ॥
किन्तु यहाँ बालक ना पाये । हेरे चहूँ तरफ नहिं पाये ॥ १० ॥

दोहा- **जब बालक अरु वत्स ना, पाये कृष्ण कृपाल ।**
ताड़ गये वे तुरत ही, सारी विधि की चाल ॥ १०५ ॥

चौ- उन जननिन अरु विधि मुदिताई । निज माया ते कृष्ण कन्हाई ॥ १ ॥
वत्स व गोप बाल अब सारे । उन समान वे सब रच डारे ॥ २ ॥
वत्सप वत्सन वपु जे माना । जे कर चरणादिक परमाना ॥ ३ ॥
यववत् श्रृंग वेणु दल छाका । वस्त्र व भूषण यष्टि पिनाका ॥ ४ ॥
नाम शील गुण आकृति जैसी । वपु वय क्रीड़ादिक नृप वैसी ॥ ५ ॥
जिसका जैसा रूप बनावा । सब जग हरिमय इति दिखलावा ॥ ६ ॥
यों सर्वात्मा कृष्ण कृपाला । आत्म रूप गौ वत्सन वाला ॥ ७ ॥
रचकर संग उन्हें वृज लाये । कोई भेद न उन दिखलाये ॥ ८ ॥
पृथक पृथक वत्सन को लेकर । निज निज गौशाला के भीतर ॥ ९ ॥
कीन्हो निज-निज गेह प्रवेशा । वे सब बालक सुनो नरेशा ॥ १० ॥
वेणु नाद सुनकर उन माता । हर्षित होय उठी निज गाता ॥ ११ ॥

दोहा- **ब्रह्म रूप उन सुतन को, निज मन सत्य विचार ।**
कीन्हे आलिंगन वह, दोऊ भुजा पसार ॥ १०६ ॥

चौ- स्नेह स्नुत स्तन उन्हें पिलाया । एवं प्रतिदिन हे नर राया ॥ १ ॥
यों हरि निज लीला के द्वारा । करते पालन मुदित अपारा ॥ २ ॥
सायं कृष्ण यदा वृज आवे । वे माता उन स्नान करावे ॥ ३ ॥
अलंकार लेपन अरु मर्दन । करती लालित वस्त्र निकासन ॥ ४ ॥
वत्स रूप जब कृष्ण कन्हैया । निज समीप लखकर सब गैया ॥ ५ ॥
चाटन लागी कर हुँकारा । मृदु पय पावत मुदित अपारा ॥ ६ ॥
गौ अरु गोपिन का इमि राया । मातृ भाव पूरववत गाया ॥ ७ ॥
हरि भी उनके पुत्र समाना । पुत्र भाव दिखलावत नाना ॥ ८ ॥
निज निज पुत्रन के प्रति भारी । स्नेह वल्ली उन बढ़ी अपारी ॥ ९ ॥
चाली एक वरिस यों धारा । वत्सपाल मिष कृष्ण उदारा ॥ १० ॥

दोहा- **वन वृज गोष्टी वीच में, क्रीड़ा करी अपार ।**
राम सहित यसुमति सुत, हे नृप वर इक वार ॥ १०७ ॥

चौ- पंच वर्ष जव उतरन लागा । रहि अवशेष निशाशर रागा ॥ १ ॥
गवने विपिन बीच तजि गेहा । पहुँच गिरि गोवर्धन जेहा ॥ २ ॥
वहुत दूर गोवर्धन ऊपर । चरत वहाँ सुरभी सव मिलकर ॥ ३ ॥
वृज के पास वहाँ से सारे । चरते तृण उन वत्स निहारे ॥ ४ ॥
उमड़ा तव वात्सल्य सनेहा । खोई सुध-बुध तव निज देहा ॥ ५ ॥
मुख अरु पुच्छ उच्च कर सारी । स्रवत सुक्षीर करत हुँकारी ॥ ६ ॥
दुर्ग मार्ग कर सव उल्लंघन । भागी पास गई निज वत्सन ॥ ७ ॥
रोकी मिलकर ग्वाल समूहा । तदपि रुका नहि सुमरिन यूहा ॥ ८ ॥
सव सुरभी अव वत्सन अंगा । लगी चाटने सहित उमंगा ॥ ९ ॥
निज निज वत्सन क्षीर पिलावा । पुनः प्रसूत भी वहँ पर आवा ॥ १० ॥

दोहा- **लख गोपन ने श्रम सभी, निष्फल सभी प्रकार ।**
तव क्रोधित वहँ पर गये, दुर्गम पथ कर पार ॥ १०८ ॥

चौ- गो वत्सन सह पुत्र लखाये । क्रोध हीन तव प्रेम समाये ॥ १ ॥
पाछे उन निज भुजा फिलाई । किय आलिङ्गन सीस सुँघाई ॥ २ ॥
पुनि उनको तजकर सव ग्वाले । वड़ी कठिनता से वन चाले ॥ ३ ॥
एक दिवस वलरामा राजन । प्रेम वृद्धि लखि उन वृज वासिन ॥ ४ ॥
निज मन माँही कीन्ह विचारा । वाढ़ा यह क्यों प्रेम अपारा ॥ ५ ॥
इनका प्रेम कृष्ण पर जैसा । निज वत्सन पर वाढ़ेउ वैसा ॥ ६ ॥
यह दैवी व निशाचरि माया । प्रेम जाल यह कवन विछाया ॥ ७ ॥
करत अरे यह मोहित मोहीं । कहीं कृष्ण माया नहि होही ॥ ८ ॥
कर विचार यो मन वलरामा । ज्ञान दृष्टि देखा हिय धामा ॥ ९ ॥
चहूँ और उन कृष्ण लखाये । तदा कृष्ण प्रति वचन सुनाये ॥ १० ॥

दोहा- **वत्स सभी ऋषि अंश है, देव अंश सव ग्वाल ।**
मैं तो ये ही जानता, अव तक की सव चाल ॥ १०९ ॥

चौ- किन्तु आज सव कृष्ण स्वरूपा । दीखत मोंही नयन अनूपा ॥ १ ॥
यह सव वात कहो समुझाई । तव प्रभु सव संक्षेप सुनाई ॥ २ ॥
आत्म मान ते काल प्रमाना । बीताकाल वहाँ उन जाना ॥ ३ ॥
तव विरंचि निज लोक तजाये । वृज बीचे वापिस पुनि आये ॥ ४ ॥

देखा वहँ विधि प्रथम समाना । सह अनुचर खेलत भगवाना ॥ ५ ॥
हरि को देख विधाता भारी । कीन्ह सोच मन बहुत प्रकारी ॥ ६ ॥
ये सब बालक वत्स विचारे । शयन करत माया के द्वारे ॥ ७ ॥
फिर ये यहाँ कहाँ से आये । यों बहु विधि विधि ध्यान लगाये ॥ ८ ॥
किन्तु न बात समझ कुछ आई । कवन असत्य व सत्य दिखाई ॥ ९ ॥
यों हरि को विधि मोहन आये । निज माया ते स्वयं ठगाये ॥ १० ॥

दोहा- **दिन बीते खद्योत ज्यों, कबहुँ न करत प्रकास ।**
महा पुरुष पर भी तथा, नरमाया ना भास ॥ ११० ॥

चौ- अब विधि देखत सब वृज बालक । तनु घनश्याम भये वृष सावक ॥ १ ॥
पीताम्बर धर वर भुज चारी । शंख व चक्र गदाम्बुज धारी ॥ २ ॥
कुंडल मुकुट गले वनमाला । श्री वत्साङ्गद लक्षित आला ॥ ३ ॥
कर कंकण कटि सूत मनोहर । सोभित सब पद कंचन नुपूर ॥ ४ ॥
तुलसी नव माला वर सोभित । भूरि भाग्य भक्तन कर अर्पित ॥ ५ ॥
चन्द्र ज्योति सम मृदु मुस्काना । चितवन मधुर नयन विधि जाना ॥ ६ ॥
हास कटाक्ष व चितवन द्वारा । पूरत भक्त मनोरथ सारा ॥ ७ ॥
मानो रज अरु सत गुण द्वारा । जग पालक सम दीखत सारा ॥ ८ ॥
ब्रह्मादिक जे तृण परयन्ता । सर्व चराचर मूरति मन्ता ॥ ९ ॥
नृत्य व गीत व पूजन द्वारा । करते पृथक पृथक उपचारा ॥ १० ॥

दोहा- **अणिमादिक सिद्धि सभी, तत्व बीस अरु चारि ।**
काल व कर्म व गुण वहाँ, आये निज वपु धारी ॥ १११ ॥

चौ- हरि सन्मुख जाकर उन सत्ता । खो बैठीं अस्तित्व महत्ता ॥ १ ॥
वे सब सत्य व ज्ञान स्वरूपा । स्वयं प्रकाश अनन्त अनूपा ॥ २ ॥
हरि के सम लखकर उन गाता । देख चकित अब रहे विधाता ॥ ३ ॥
उतरे हंस पृष्ठ भू आये । स्तब्ध इन्द्रियाँ अति घबराये ॥ ४ ॥
देख तेज हरि का वे धाता । चित्र पुत्तिका सम तनु जाता ॥ ५ ॥
महिमा उन हरि की विधि नाँही । जान सके वे निज मन माँही ॥ ६ ॥
दूर करी अब हरि निज माया । मृत सम उठकर अब विधि राया ॥ ७ ॥
खोले नयन लखा चहुँ ओरा । देखा अब वृन्दावन कोरा ॥ ८ ॥
स्वाभाविक जहँ वैर तजाई । विचरत इत उत नर वन राई ॥ ९ ॥
माया शिशु रूपी भगवाना । देखे अब विधि प्रथम समाना ॥ १० ॥

दोहा- हेरत वत्सन को वहाँ, भात कवल जिन पानि।
ब्रह्म रूप उन कृष्ण को, लख विरंचि तपखानि ॥ ११२ ॥

चौ- धाये तब झट हंस तजाई। गिरे चरण वृजपति के आई ॥ १ ॥
आनन्द अश्रु अब विधि के नैना। छाये मुख आवत नहि वैना ॥ २ ॥
निज लोचन पोंछे अब धाता। देख कृष्ण को हरपित गाता ॥ ३ ॥
नम्र स्कंध कृत अञ्जलि ठाढ़े। पुलकित गात प्रेम अति बाढ़े ॥ ४ ॥
कम्पित गदगद स्तोत्र उचारे। जय माया शिशु नन्द दुलारे ॥ ५ ॥
तनु घनश्याम तड़ित सम अम्बर। श्रुति गुञ्जा भूपण अति सुन्दर ॥ ६ ॥
केकी पिच्छ मुकुट वनमाली। कवल सुशोभित लघु कर ताली ॥ ७ ॥
सोहे वेत्र श्रृङ्ग कटि वेणू। वन्दो पद कोमल मृदु रेणू ॥ ८ ॥
वन्दो पशुपाङ्गज जगत्राता। सब विधि तुम स्तुति योग्य विधाता ॥ ९ ॥
स्वयं प्रकाशित हे भगवाना। यह विग्रह भक्तन हित माना ॥ १० ॥

दोहा- **नाथ आपकी चिन्मयी, इच्छा का यह रूप।**
कृपा हेतु मुझ पर धरा, मूरति मान अनूप ॥ ११३ ॥

चौ- मुझ पर प्रभो अनुग्रह हेतू। प्रकटायो यह वपु भय केतू ॥ १ ॥
पंच भूत की रचना स्वामी। कोई कहत इसे निशि यामी ॥ २ ॥
शुद्ध सत्व अप्राकृत ताता। वदत सन्त निशिदिन भव त्राता ॥ ३ ॥
मुनि जन संत समाधि लगावे। तदपि न तव वपु महिमा पावे ॥ ४ ॥
तव स्वरूप भूत हिय माँही। स्वसुख अनुभव मात्र लखाहीं ॥ ५ ॥
जे नर ज्ञान प्रयत्न तजाई। सत संगति करते सुखदाई ॥ ६ ॥
प्रेमी संत जनों के द्वारा। सुनते अजित जो चरित तुम्हारा ॥ ७ ॥
जीत सकत तुमको जन वेही। प्रेम अधीन रहहु वश तेही ॥ ८ ॥
हे विभु जो वर भक्ति तजाई। ज्ञान प्राप्ति हित यतन कराई ॥ ९ ॥
वह नर सदा परिश्रम पावे। तुष कुट्टक जिमि क्लेश उठावे ॥ १० ॥

दोहा- **योगी जन इस लोक में, होगय विभो अनेक।**
योग मार्ग द्वारा नही, पायो उन्हें विवेक ॥ ११४ ॥

चौ- आत्मा का अनुभव कर पाछे। भक्ति से सुख पावत आछे ॥ १ ॥
मोक्ष धाम भक्ति से पावे। योग करें ना मोक्ष सिधावे ॥ २ ॥
गौरव अग्रण हे नाथ तुम्हारा। अजितेन्द्रिय पावत ना पारा ॥ ३ ॥
सगुण रूप यह नाथ तुम्हारा। होंवत विश्व हेतु अवतारा ॥ ४ ॥

तव गुण वर्णनि हेतु विधाता । कोई समर्थ जगत ना जाता ॥ ५ ॥
होअहिं कब प्रभु कृपा तुम्हारी । जिस जनने यह बाट निहारी ॥ ६ ॥
सुख दुख जो प्रारब्ध भरोसे । निरविकार मन तव पद मोसे ॥ ७ ॥
हिय वाणी पुलकित तनु द्वारा । करे समर्पित तव पद सारा ॥ ८ ॥
करहि गुजर जो येन प्रकारा । वहि नर पावत सुख अधिकारा ॥ ९ ॥
जनक सम्पदा जिमि सुत पावे । मोक्ष धाम त्यों वह नर जावे ॥ १० ॥

दोहा- **देखु कुटिलता मम प्रभो, हे अनन्त भगवान ।**
जिन माया के जाल में, मायिक फँसे महान ॥ ११५ ॥

चौ- उन मायिक ऊपर यहँ आकर । वैभव माया जाल बिछाकर ॥ १ ॥
हे ईश्वर मैं देखन चाहा । किन्तु न पावा सब विधि थाहा ॥ २ ॥
तव सम्मुख मोरी जगत्राता । चाली चाल नहीं कुछ ताता ॥ ३ ॥
अतिशय दर्प भयो मन मोरे । मम सत्ता मानी सब ओरे ॥ ४ ॥
यह अपराध क्षमा प्रभु करहू । मम अवगुण पर चित्त न धरहू ॥ ५ ॥
इस ब्रह्मांड बीच भगवाना । सप्त विलस्तिक तनु निज माना ॥ ६ ॥
कहाँ नाथ मैं कहँ तुम ताता । तुम ब्रह्माण्ड रूप जग त्राता ॥ ७ ॥
वातायन बीचे परमानू । उड़त अनेक प्रभा जिमि भानू ॥ ८ ॥
वैसे तव प्रति रोमन माँही । कोटि कोटि ब्रह्मांड उड़ाही ॥ ९ ॥
मात उदर बीचे शिशु आता । अनजाने वह मारत लाता ॥ १० ॥

दोहा- **मानत नहि अपराध मा, शिशु का किसी प्रकार ।**
मैं भी तव कुक्षी बसूँ, हे प्रभु जगदाधार ॥ ११६ ॥

चौ- अहो आप उस मात समाना । मम अपराध चित्त मति लाना ॥ १ ॥
वदत वेद इमि अहो अशोकी । प्रलय नीर लय होत त्रिलोकी ॥ २ ॥
उस जल स्थित नारायण ताता । निर्गत नाभि जाल अज जाता ॥ ३ ॥
श्रुति वाणी यह मृषा न जाता । मैं तव पुत्र नहीं क्या ताता ॥ ४ ॥
तुम सर्वात्मा तुम जगदीश्वर । सर्वसाक्षि नारायण ईश्वर ॥ ५ ॥
सत्य बात तो है यह स्वामी । सबमें लीन रहउ निशियामी ॥ ६ ॥
पूर्णरूप से सबके भीतर । करते वास सदा जगदीश्वर ॥ ७ ॥
केवल अंश रूप यह माया । तुमते जगत नहीं अलगाया ॥ ८ ॥
प्रलय नीर बीच स्थित तव गाता । सत्य न दीखत मोहि विधाता ॥ ९ ॥
यदि तनु नीर मध्य नत जाता । क्यों ना दर्श दियो मोहि धाता ॥ १० ॥

दोहा- तप करने के बाद ही, पाया दर्श तुम्हार ।
यह सब माया आपकी, जानी जगदाधार ॥ ११७ ॥

चौ- यही हेतु जल से अलगाई । दीखत सत्य नहीं सुनु साँई ॥ १ ॥
मामा धमन हे दीन दयालू । कहूँ दूर की नहीं कृपालू ॥ २ ॥
इस अवतार बीच यह सारा । बाहर दीखत जगत अपारा ॥ ३ ॥
यशुमति हेतू आप दिखावा । देख चकित भई मात प्रभावा ॥ ४ ॥
सिद्ध होत इससे यह ताता । यह सब माया तोर विधाता ॥ ५ ॥
चहूँ ओर जग बीच तुम्हारी । मायापति माया विस्तारी ॥ ६ ॥
भगवन जठर बीच सम माया । दीखत यह ब्रह्मांड निकाया ॥ ७ ॥
देखी नाथ आज तव माया । प्रथम आप इक रूप दिखाया ॥ ८ ॥
वत्स व वत्सपाल पुनि जाता । भये चतुर्भुज पुनि सब ताता ॥ ६ ॥
पाछे एक शेष तुम स्वामी । रहे पूर्ववत अन्तरयामी ॥ १० ॥

दोहा- तव स्वरूप जाने नही, होकर वश अज्ञान ।
जीव रूप में तुम उन्हें, भासत हो भगवान ॥ ११८ ॥

चौ- उन पर माया जाल बिछावा । ब्रह्म विष्णु शिव रूप दिखावा ॥ १ ॥
तुम जग स्वामी प्रभो विधाता । अजय अजन्मा अभय प्रदाता ॥ २ ॥
दुष्ट दमन संतन हितकारी । सुर नर मुनि द्विज पशु वपुधारी ॥ ३ ॥
जय परमात्मा प्रभो अनन्ता । अखिलेश्वर योगी जनकन्ता ॥ ४ ॥
तव विभूति यह अतुलित जाता । जान सका न इसे कोई ताता ॥ ५ ॥
तव माया वैभव सुनु ताता । अति अगम्य अचिन्त्य विधाता ॥ ६ ॥
असत जगत को सब सत माने । सत्य रूप को सत नहि जाने ॥ ७ ॥
सत्य रूप तो नाथ तुम्हारा । असत रूप यह सब संसारा ॥ ८ ॥
स्वयं ज्योति तुम पुरुष पुराना । तुम हो एक सत्य भगवाना ॥ ६ ॥
गुरु ते लब्ध ज्ञान चख द्वारा । देखत जो नर रूप तुम्हारा ॥ १० ॥

दोहा- वह नर इस भव सिन्धु को, तरकर जावहिं पार ।
खावहिं गोता मोह वश, तजकर चरण तुम्हार ॥ ११६ ॥क
जब आत्मा के रूप में, करहिं न आत्म पिछान ।
जग प्रतीति होवत उसे, पड़कर वश अज्ञान ॥ ११६ ॥ ख

चौ- ज्ञान दृष्टि मिल जावत तेहू । आत्यन्तिक लय होवत येहू ॥ १ ॥
जिमि रज्जू विच भ्रम के कारण । दीखत यथा कृष्ण अहि दारुण ॥ २ ॥

जब भ्रम होय निवारण तेहू । होत निवृत्ति तदा प्रभु येहू ॥ ३ ॥
कल्पित बन्ध व मोक्ष अज्ञाना । इनको हरि से भिन्न न माना ॥ ४ ॥
करहिं विचार नाथ जो येहू । बन्ध मोक्ष पावत ना तेहू ॥ ५ ॥
रात्री दिवस भानु बिच जैसे । होवत कबहुँ नाथ ना वैसे ॥ ६ ॥
है यह बात आचरज कारी । लखहि न निज हिय तुम्हे अनारी ॥ ७ ॥
खोजहिं तुम्हें अलग जा ताता । महा मोह वश तज हिय जाता ॥ ८ ॥
सबके हिय में वास तुम्हारा । निज हिय हेरत संत उदारा ॥ ९ ॥
महिमा ज्ञान स्वरूप तुम्हारा । नासत कल्पित जगत अपारा ॥ १० ॥

दोहा- **युगल चरण का तनिक भी, पावत कृपा प्रसाद ।**
वही आपके तत्त्व को, जानत त्याग प्रमाद ॥ १२० ॥

चौ- ज्ञान व वैराग्यादिक द्वारा । करें यतन यदि बहुत प्रकारा ॥ १ ॥
तदपि यथार्थ सुतत्व तुम्हारा । पा सकता नहिं किसी प्रकारा ॥ २ ॥
इस अरु अपर जनम जहँ जाऊँ । नाथ तोर भक्तन पद पाऊँ ॥ ३ ॥
याते मिलहि वहाँ पर देवा । युग पद पंकज अवसर सेवा ॥ ४ ॥
धन्य कृष्ण बृज गोप गुवाला । वत्स व सुरभिन सह बृजवाला ॥ ५ ॥
वत्स व बाल रूप वपुधारी । कियो पान स्तन जिन भवहारी ॥ ६ ॥
यज्ञ जगत के अब तक जैते । पूर्ण तृप्त कर सकै न वेते ॥ ७ ॥
नन्दादिक जैते बृजवासी । धन्य भाग्य उनके सुख रासी ॥ ८ ॥
परमानन्द स्वरूप सनातन । पूर्ण ब्रह्म जे पुरुष पुरातन ॥ ९ ॥
जिनके सुहृद सगे तुम स्वामी । रहहु संग उनके निशियामी ॥ १० ॥

दोहा- **बृजवासिन के भाग्य की, दूर रही यह बात ।**
ग्यारह इन्द्रिय अधिप जो, शिव ब्रह्मादिक तात ॥ १२१ ॥

चौ- भूरि भाग्य जानहू तुम येहा । पीवत रूप नयन मुहु तेहा ॥ १ ॥
गोकुल बीच जनम जिन लीन्हा । भूरि भाग्य उनका हम चीन्हा ॥ २ ॥
होअहिं बृज बिच जन्म हमारा । कीट पतंगादिक तरु द्वारा ॥ ३ ॥
खोजहिं जिस रज को श्रुति ईशा । परहिं कबहुँ वह रजमय सीसा ॥ ४ ॥
एक बात यह नाथ बताऊ । फल तुम कवन इन्हें दिलवाऊ ॥ ५ ॥
मिले इन्हे तुम जग फल दाता । इनमें कवन बात बड़ ताता ॥ ६ ॥
तुम्हें पूतना मारन आई । सह कुटुम्ब हरि धाम सिधाई ॥ ७ ॥
उऋण न होउ कबहु तुम इनते । बड़ भक्ति करि इन तुम जीते ॥ ८ ॥

मिलहि न जब लगि भक्ति तुम्हारी । रागादिक दुख देवत भारी ॥ ९ ॥
यह गृह कारागेह समाना । मोह निगड़ दोउ चरणन माना ॥ १० ॥

दोहा- **निष्प्रपंच हो तदपि तुम, रचत प्रपंच अपार ।**
शरणागत जन मुदित हित, करते यह विस्तार ॥ १२२ ॥

चौ- जाने रूप तुम्हारा कोई । इससे नहीं प्रयोजन मोई ॥ १ ॥
मैं तो मन वाणी के द्वारा । जान सका ना तत्व तुम्हारा ॥ २ ॥
सत्य लोक अब करूँ पयाना । ले आज्ञा अब दीन निधाना ॥ ३ ॥
सर्वसाक्षि तुम घट घट वासी । करुणाकर निज जन सुख राशी ॥ ४ ॥
यह मम तनु तव अरपित ताता । वृष्णि वंश पंकज रवि जाता ॥ ५ ॥
महि निर्जर द्विज पशु खग सागर । वृद्धि हेतु तुम नाथ सुधाकर ॥ ६ ॥
महादेव हे कृष्ण कृपाला । वन्दो पद पंकज भवपाला ॥ ७ ॥
कर प्रदक्षिणा तीन विधाता । गवने सत्यलोक पुनि ताता ॥ ८ ॥
यथा स्थान अब विधि के द्वारा । पहुँचाये सब गोप कुमारा ॥ ९ ॥
अब उनको ले नन्द दुलारे । आये सुन्दर यमुन किनारे ॥ १० ॥

दोहा- **जिस माया से जगत यह, मोहित वारम्वार ।**
निज आत्मा का विसरहिं, हे अभिमन्यु कुमार ॥ १२३ ॥

चौ- सभी सुहृद अब वचन सुनाये । स्वागत तात भले तुम आये ॥ १ ॥
तुम बिन एक कवल ना खाया । करो अशन बैठो इस छाया ॥ २ ॥
बाद कृष्ण हँसकर उन संगा । कीन्ह अशन करि मुदित प्रसंगा ॥ ३ ॥
अजगर चर्म दिखा पुनि तेहा । आये वृज बीचे निज गेहा ॥ ४ ॥
मोर पुच्छ पुष्पादिक माला । चित्रित तनु धातुन वृजबाला ॥ ५ ॥
श्रृङ्ग वेणु निज वदन वजावत । आये वृज मृदुराग सुनावत ॥ ६ ॥
निज निज घर अब बालक सारे । जाकर के यों वचन उचारे ॥ ७ ॥
मारा विपिन बीच इक व्याला । आज कृष्ण इन घोर कराला ॥ ८ ॥
आज कृष्ण यदि होवत नाँही । तो हम सब अहि वदन सिधाही ॥ ९ ॥
वृज जन का यह प्रेम अनन्ता । बाढ़ा हरि पर किमि मुनि कन्ता ॥ १० ॥

दोहा- **नृप के यह सुनकर वचन, बोले मुनी दयाल ।**
प्राणिन को अति प्रिय लगे, निज आत्मा नरपाल ॥ १२४ ॥

चौ- आत्मा प्रथम सुवन धन द्वारा । लागत प्रिय पाछे यह सारा ॥ १ ॥
आत्मा प्रति होवत जो स्नेहा । सुत दारा प्रति वह नहिं नेहा ॥ २ ॥

जो आत्मा मानत निज देहू । राखत वह भी तनु प्रति नेहू ॥ ३ ॥
सखा पुत्र धन तिय पर वैसो । राखत प्रेम नही तनु जैसो ॥ ४ ॥
किस विधि दूर होय जब नेहा । तब निज तनु पर भी ना स्नेहा ॥ ५ ॥
सब विधि यह तनु होय विनासा । जो भी बलवति जीवन आसा ॥ ६ ॥
इससे सिद्ध बात यह होई । आत्मा सम प्रिय लगहि न कोई ॥ ७ ॥
सर्वात्मा कृष्णहिं जनु राया । वृज जन यहि हित प्रेम दिखाया ॥ ८ ॥
कृष्ण रूप यह जगत अपारा । इनते नहीं जगत यह न्यारा ॥ ९ ॥
जे जे वस्तु जगत दिखाई । सब में परी कृष्ण परछाई ॥ १० ॥

दोहा- **हरि पद पंकज पोत स्थित, भव सागर तत्काल ।**
वत्स चरण सम नर तरे, तजकर सब जंजाल ॥ १२५ ॥

चौ- पूछा जो मोसे तुम राया । वह सब चरित तुम्हें बतलाया ॥ १ ॥
मित्रन चरित अघासुर मर्दन । शाद्धल जेमन अरु अज मोहन ॥ २ ॥
ग्वाल बाल अप्राकृत रूपा । प्रकटाये जिमि ज्योति स्वरूपा ॥ ३ ॥
ब्रह्मा कृत यह स्तुति अति पावन । करती सब विधि पाप निवारन ॥ ४ ॥
श्रोता अरु उच्चारण कर्त्ता । पावत सकल अर्थ दुःखहर्ता ॥ ५ ॥
नृपवर कृष्ण सहित बलरामा । कर कौमार चरित वृजधामा ॥ ६ ॥
निज कौमार अवस्था सारी । वृज बालन के संग गुजारी ॥ ७ ॥
कबहुं खेलत आँख मिचौनी । बाँधत सेतु कबहुं बन मौनी ॥ ८ ॥
ऊछल कूद करत कपि संगा । खात कुँलाँट कबहुं निज अंगा ॥ ९ ॥
करत चरित इमि कई प्रकारा । पंचम वर्ष प्रमाण गुजारा ॥ १० ॥

दोहा- **पाकर वय पौगंड अब, हो हरि बल पशुपाल ।**
गाय चरावत विपिन को, निज पद करत निहाल ॥ १२६ ॥

चौ- वे माधव अब सह बलरामा । जावत प्रात विपिन पशु कामा ॥ १ ॥
करते जहाँ भ्रमर गुञ्जारा । सेवत मृग पशु पक्षिन द्वारा ॥ २ ॥
कमलन गंध सुसेवित वाता । देख भये हरि हर्षित गाता ॥ ३ ॥
तरु पल्लव शोभा अरुणाई । निज पद स्पर्शत शाख सुहाई ॥ ४ ॥
तब हरि हर्षित हो निज माता । बोले बल प्रति सुन्दर बाता ॥ ५ ॥
देव प्रवर हे राम तुम्हारा । शाखा फल पुष्पन के द्वारा ॥ ६ ॥
करते अभिवन्दन तरु सारे । निज अघ नाशन हेतु विचारे ॥ ७ ॥
तव यश गावत यह अलि ताता । मुनि गण सम दीक्षत जो भ्राता ॥ ८ ॥

गूढ़ होत भी तजहि न तोहू। करत नृत्य केकी मन मोहू॥ ९ ॥
गोपिन सम निज दृष्टि लगाई। करती प्रेम कुरंगिनि भाई॥ १० ॥

दोहा- **घर आवत महमान सम, लख कर रूप तुम्हार।**
मृदु ध्वनि से यह कोकिला, करती तव सत्कार॥ १२७ ॥

चौ- विपिन बीच भी स्थित यह धन्या। रहता संत सुभाव अगन्या॥ १ ॥
धन्य लता तृण यह भू जाता। पद सरोज स्पर्शत तव ताता॥ २ ॥
भये धन्य नख स्पर्शत सारे। वृज के तरु फल फूल अपारे॥ ३ ॥
सरिता गिरि अरु खग मृग जेते। कृपा दृष्टि अवलोकत ऐते॥ ४ ॥
वक्षस्थल स्पर्शत वृजनारी। भई धन्य है राम विचारी॥ ५ ॥
वृन्दावन शोभा लखि भारी। भये मुदित यों विपिन विहारी॥ ६ ॥
अति समीप सरिता गिरि ऊपर। पशुन चरावत वे वृज सुन्दर॥ ७ ॥
षट्पद सम गावत कोई गाना। कुँजत कैतिक हंस समाना॥ ८ ॥
करते नृत्य यथा कोई केकी। फुदकत कोई यथा महि भेकी॥ ९ ॥
कोई लगा गंभीर अवाजा। दूरग पशुन बुलावत राजा॥ १० ॥

दोहा- **मोर चकोर व क्रौञ्च अरु, चक्रवात सम कोय।**
कृत अनुकृत रोवत कहीं, कोई सुध बुध खोय॥ १२८ ॥

चौ- कोई व्याघ्र सिंह सुन गरजन। हो भयभीत समा वह राजन॥ १ ॥
क्रीड़ा करत श्रान्त अतिधामा। दावत कृष्ण तदा पद रामा॥ २ ॥
कोई कृष्णहिं नृत्य दिखावे। ताल ठोकि कोई युद्ध रचावे॥ ३ ॥
तब उन गोपन की बड़भारी। करत प्रशंसा बल बकहारी॥ ४ ॥
कोमल पत्रन सेज सजाई। कोई कृष्णहिं अंक लिटाई॥ ५ ॥
उन सुहृदन बीचे बड़भागी। हरिपद दावत अति अनुरागी॥ ६ ॥
पत्रादिक निर्मित कोई बीजन। करता उन हरिपर भव भंजन॥ ७ ॥
गावत कोइ कोइ उन अनुरूपा। खेलत यों वह खेल अनूपा॥ ८ ॥
ग्राम्य बाल संग चरित अपारा। ग्राम्य खेल वे खेलत सारा॥ ९ ॥
बोले वचन तदा श्री दामा। सुबल व स्तोकादिक जिन नामा॥ १० ॥

दोहा- **महाबाहू हे राम हे, कृष्ण दनुज कुल घाल।**
कुछ दूरी पर ताल तरु, युत इक विपिन विशाल॥ १२९ ॥

चौ- लागे फल उन ताल अपारा। रूँधे एक निशाचर द्वारा॥ १ ॥
नाम धेनकासुर विख्याता। सह कुटुम्ब गर्दभ तनु ताता॥ २ ॥

उस बन बीच वसत बलशाली । पशु पक्षिन ते वह यों खाली ॥ ३ ॥
वह राक्षस कृत नर आहारा । चलें तात वहँ किसी प्रकारा ॥ ४ ॥
आवत गंध मृदु यह कैसी । देखो उन तालन फल जैसी ॥ ५ ॥
उन मृदु फल भक्षण की ताता । वहु दिन से सबकी रुचि जाता ॥ ६ ॥
यदि रूचि होवत राम तुम्हारी । चलें सकल मिल सह बनवारी ॥ ७ ॥
यों मित्रन वच सुन दोउ भाई । चले वहाँ संग गोप लिवाई ॥ ८ ॥
कर प्रवेश उस विपिन विशाला । अब बल भुज कम्पित तरुताल ॥ ६ ॥
मृदु फल महि पर गिरे अपारी । अब फल पतन शब्द सुन भारी ॥ १० ॥

दोहा- **अब रासभ राक्षस अधम, निज खुर महि कंपाय ।**
धावा झट बलराम पर, अनु पद दोउ उठाय ॥ १३० ॥

चौ- बल उर खेंच दुलत्ती मारी । पीछे हटकर शब्द अपारी ॥ १ ॥
पुनि बल सन्मुख आ खल ठाढ़ा । उठा पाद पुनि मारन वाढ़ा ॥ २ ॥
दोउ पद पकर तदा उस रामा । चारों ओर घुमा नभ धामा ॥ ३ ॥
ताल वृक्ष ऊपर दे मारा । प्राण हीन करि महि पर डारा ॥ ४ ॥
जब धेनुक हत भयो अभागा । चोट खाय तरु टूटन लागा ॥ ५ ॥
गिरे परस्पर टक्कर खाकर । ताल वृक्ष उस वन के भीतर ॥ ६ ॥
खर तनु ताड़ित यो सब ताला । प्रेरित वात यथा घन माला ॥ ७ ॥
यह जो चरित कीन्ह बल रामा । करो विचार नही इन कामा ॥ ८ ॥
यह बलराम स्वयं जगदीश्वर । ओत प्रोत सब जग जिन अन्दर ॥ ६ ॥
धेनुक ज्ञाति वन्धु अब मिलकर । झपटे राम कृष्ण के ऊपर ॥ १० ॥

दोहा- **जिन समीप उनको लखि, राम कृष्ण हरसाय ।**
पकर दुलत्ती सबन्हि की, ऊपर दियो घुमाय ॥ १३१ ॥

चौ- पाछे तरु तालन के देकर । डारे प्राणहीन करि निशिचर ॥ १ ॥
उन लागत तरु कम्पित सारे । गिरे भूमि ऊपर फल भारे ॥ २ ॥
सोभित भूमि भई तब कैसी । नभ पथ घन अवली नृप जैसी ॥ ३ ॥
रामकृष्ण लीला यह भारी । लख विबुधादिक मुदित अपारी ॥ ४ ॥
कुसुम वृष्टि हर्पित हो भारी । रामकृष्ण ऊपर उन डारी ॥ ५ ॥
धेनुक कानन महाविशाला । खाये मृदुफल अब सब ग्वाला ॥ ६ ॥
सुन्दर तृण पशु चरने लागे । रामकृष्ण को कर अब आगे ॥ ७ ॥
चाले वृज बीचे सब ग्वाला । तजकर धेनुक विपिन विशाला ॥ ८ ॥

स्तूयमान उन गोपन द्वारा । आये वृज विच नन्द कुमारा ॥ ६ ॥
गोरज व्याप्त वदन जिन सोहा । वेणु नाद वृज जन मोहा ॥ १० ॥
सारंग पंख मुकुट प्रिय तासू । गुंफित कुसुम अनेकनि जासू ॥ ११ ॥

दोहा- **मृदु चितवन लखि कृष्ण की, अरु मनहर मुस्कान ।**
करत निछावर निजहिं को, वृजजन मुदित महान ॥ १३२ ॥

चौ- वृजबाला अब मुदित अपारी । भागी सन्मुख उन वनवारी ॥ १ ॥
कृष्णानन मधु पी निज नयना । भई दिन विरहज ताप विहीना ॥ २ ॥
व्रीड सहास विनय सत्कारा । पहुँचे वृज उन कर स्वीकारा ॥ ३ ॥
बाद रोहिणी यशुमति मैया । उमड़ा प्रेम देख दोउ भैया ॥ ४ ॥
उन अनुरूप समय अनुसारा । राखा प्रथम सँजोकर सारा ॥ ५ ॥
परम अशन उनको करवाया । प्रेम सहित दोउ कर धुलवाया ॥ ६ ॥
अब मज्जन उन्मर्दन द्वारा । गत श्रम राम व नन्द कुमारा ॥ ७ ॥
पहनाये सुन्दर पट पाछे । पुष्पन हार गले विच आछे ॥ ८ ॥
सुन्दर तिलक लगाकर भाला । लाई स्वाद अन्न तत्काला ॥ ६ ॥
प्रेम सहित भोजन करवाये । पुनि शुभ शय्या पर सुलवाये ॥ १० ॥

दोहा- **बिना राम के एक दिन, ले गोपन को साथ ।**
यमुना तट पर आ गये, कृष्ण चन्द्र वृजनाथ ॥ १३३ ॥

चौ- वहाँ गोप अरु गैया सारी । पीड़ित धाम निदाध अपारी ॥ १ ॥
तृषा आर्त विष दूषित नीरा । कीन्हो पान सुनौ नृप धीरा ॥ २ ॥
विष जल स्पर्शत अब वे सारे । गिरे अचेतन यमुन किनारे ॥ ३ ॥
अब निज सुधा दृष्टि के द्वारा । दीन्हो जीवन नन्ददुलारा ॥ ४ ॥
जल समीप ते उठकर सारे । देख परस्पर विस्मित भारे ॥ ५ ॥
हे नृप वे कीन्हे विष पाना । पाये पुनि सब जीवन दाना ॥ ६ ॥
ये सब कृष्ण कृपा उन मानी । आगे कथा सुनो नृप ज्ञानी ॥ ७ ॥
कालिय नाग विदूषित भारी । देख यमुन वे विपिन विहारी ॥ ८ ॥
तासु शुद्धि इच्छा कर मन में । कालिय नाग निकारेउ छिन में ॥ ६ ॥
बोले नृपति कहो मुनि कन्ता । नीर अगाध बीच भगवन्ता ॥ १० ॥

दोहा- **कालिय अहि बहु युगन ते, करता वहाँ निवास ।**
केहि कारण उस जगह ते, कीन्हा वह निर्वास ॥ १३४ ॥

चौ- विचरत सदा मही पर ताता । पुनि जल वास कवन विधि जाता ॥ १ ॥

हरि चरितामृत सेवन हारा । होन तृप्त वह किसी प्रकारा ॥ २ ॥
रविजा सरिता बीच नृपाला । कालिय हृद इक महाविशाला ॥ ३ ॥
जासू नीर अगाध अपारा । उबलत सदा विषाग्नि द्वारा ॥ ४ ॥
उड़कर खग वहँ जावत कोई । खौलत नीर पतन उस होई ॥ ५ ॥
स्थावर जंगम जीव विहंगा । स्पर्शत विष जल वात तरंगा ॥ ६ ॥
होवत मृतक अम्बु कण स्पर्शित । चन्ड वेग उस अहि ते धर्पित ॥ ७ ॥
देख यमुन झट तासु किनारे । चढ़ कदम्ब पर नन्द दुलारे ॥ ८ ॥
परिकर बाँध ठोक निज ताला । कूदे वे जहँ अहि मदवाला ॥ ९ ॥
कृष्ण निपात वेग हृद नीरा । फैला शत धनु चहुँ उस तीरा ॥ १० ॥

दोहा- **बल अनन्त भगवान का, करो न अचरज कोय ।**
करिवर बलसम वे हरि, क्रीड़मान सरतोय ॥ १३५ ॥

चौ- भुजा दंड ताड़ित जल घोषा । सुनकर आवा अहिकर रोषा ॥ १ ॥
निजगृह देख पराभव भारी । धावा सन्मुख फन फुँकारी ॥ २ ॥
पीताम्बर धारी तनु श्यामा । निर्भय क्रीड़मान निज धामा ॥ ३ ॥
देख कृष्ण को अब वह नागा । मर्म स्थान विष काटन लागा ॥ ४ ॥
कृष्ण देह वेष्टित कर सारी । देवन लागा दुःख अपारी ॥ ५ ॥
वेष्टित कर हरि के सब अंगा । त्यागन लागा गरल तरंगा ॥ ६ ॥
कृष्णहिं वेष्टित कालिय द्वारा । भये गोप गण दुखित अपारा ॥ ७ ॥
होय अचेतन अब वे सारे । गिरे नृपति सब यमुन किनारे ॥ ८ ॥
वत्स व वृषभ स गैया सारी । भई विकल नैनन जल जारी ॥ ९ ॥
अब बृज भयउ त्रिविध उत्पाता । भूकम्पादिक उल्का पाता ॥ १० ॥

दोहा- **नन्दादिक गोपाल गण, बृजविच लखि उत्पात ।**
सब मिलकर करने लगे, आपस में यों बात ॥ १३६ ॥

चौ- गये कृष्ण वन आज अकेले । नहीं राम संग चतुर सहेले ॥ १ ॥
देख अशुभ सब इन उत्पाता । जाना सुत वध अति दुख दाता ॥ २ ॥
दुःख शोक भय आतुर भारी । बाल वृद्ध सह अब नर नारी ॥ ३ ॥
हरि दरसन आतुर अति भारे । चाले तजि गोकुल वन द्वारे ॥ ४ ॥
देख भीत उनको बल होले । हरि प्रभाव विद हँस नहि बोले ॥ ५ ॥
अब हरिपद सूचित पथ द्वारे । खोजन चाले यमुन किनारे ॥ ६ ॥
ध्वज यव अंकुश पवियुत पादा । उर्वर महि ऊपर जित ज्यादा ॥ ७ ॥

चले उधर ही सब नर नारी । रहता जहँ वह नाग करारी ॥ ८ ॥
ह्रद बीचे उस अहि के द्वारा । देखे वेष्टित नन्द कुमारा ॥ ९ ॥
चित्राङ्कित इव खड़े किनारे । भये विकल निज मानस भारे ॥ १० ॥

दोहा- **कृष्णासक्त मन गोपिका, लखि प्रियतम अहि ग्रस्त ।**
तदा त्रिलोकी सब उन्हें, दीखी अस्त व व्यस्त ॥ १३७॥

चौ- अब गोपिन सह यशुमति माता । गिरने लगि ह्रद दुःखित गाता ॥ १ ॥
कृष्ण प्राण नन्दादिक सारे । गिरने लगे सरोवर कारे ॥ २ ॥
खोई सब विधि उन सुध मेधा । तदा राम सब कीन्ह निषेधा ॥ ३ ॥
यों अनन्य गति वे भगवाना । निज हित दुःखित गोकुल जाना ॥ ४ ॥
तब कलिय बन्धन ते निर्गत । ठाढे एक तरफ सब ईक्षित ॥ ५ ॥
अब विस्तृत हरि तनु के द्वारा । व्यथित देह वहि अहि विकरारा ॥ ६ ॥
हो अति क्रुद्ध फणन फैलाई । दीर्घ श्वास त्यागत अहिराई ॥ ७ ॥
कृष्ण तरफ टकटकी लगाई । देखन लागा अहि भयदाई ॥ ८ ॥
लपलपात जीहा हुई भारी । चाटत मुख देखत बनवारी ॥ ९ ॥
क्रीड़मान अब उस चहुँ ओरा । फिरने लागे नन्द किशोरा ॥ १० ॥

दोहा- **देखन लागा अब वह, निज अवसर की वाट ।**
किन्तु कृष्ण की अब परी, उस पर पूरी डाट ॥ १३८ ॥

चौ- इत उत भ्रमण करत अहिराया । हतबल भयो व्यथित निज काया ॥ १ ॥
तदा कृष्ण अहि सीस दबाई । कूदि चढ़े फण पर बृजराई ॥ २ ॥
करने लागे नृत्य अपारा । कला पूर्ण कोमल पद द्वारा ॥ ३ ॥
ले मृदंग पणवादिक भारी । चारण सिद्ध तदा सुर नारी ॥ ४ ॥
कृष्ण नृत्य देखत नभ आये । हर्षित होय कुसुम बरसाये ॥ ५ ॥
महि नभ चन्द कालिया सीसा । जे जे नमे नहीं कुरु ईशा ॥ ६ ॥
कोमल अरुण पदाम्बुज द्वारा । लगे कुचलने नन्द कुमारा ॥ ७ ॥
क्षीणा युष अब वह अहिराया । आनन नास विवर अधिकाया ॥ ८ ॥
रक्त वमन कर मूर्छित भयऊ । निज तनु बल अब सब घटि गयऊ ॥ ९ ॥
तनिक चेतना जब वह पावे । क्रोधित हो निज विष बरसावे ॥ १० ॥

दोहा- **जे फण अहि उन्नत करे, दमन कीन्ह हरि सोय ।**
वार वार उन फणन पर, करत नृत्य खुश होय ॥ १३९ ॥

चौ- अब सिद्धादिक पुष्पन द्वारा । पूजित होकर नन्द दुलारा ॥ १ ॥

कुचल दीन्ह उन्नत फण तासू । भग्न गात्र भयउ जब जासू ॥ २ ॥
नारायण हे पुरुष पुराना । सर्व चराचर गुरु भगवाना ॥ ३ ॥
रक्त वमन कर आनन द्वारा । यों सुमरन कर बारम्बारा ॥ ४ ॥
गयो शरण वह पुरुष पुरातन । खंडित मद व्याकुल अति निजमन ॥ ५ ॥
गर्भ जगत हरि भार अपारा । सह न सका वह किसी प्रकारा ॥ ६ ॥
प्रभु पद ताड़न ते सुनु राया । खंडित फण युत लखि पति काया ॥ ७ ॥
तदा आर्त हो सब अहि नारी । गलित केश भूषण पट सारी ॥ ८ ॥
निज बालक सब कीन्ह अगारी । दोउ कर जोर व्यथित मन भारी ॥ ९ ॥
निज पति मोक्ष हेतु महि परि के । कीन्ह प्रणाम चरण उन हरि के ॥ १० ॥

दोहा- **नाग तिया मिलकर सभी, विनय करत कर जोर ।**
दियो दंड इस सर्प को, उचित न्याय यह तोर ॥ १४० ॥

चौ- खल निग्रह हित नाथ तुम्हारा । भयो कृष्ण रूपी अवतारा ॥ १ ॥
यह अपराधी नाथ तुम्हारा । पाप मूल अहि जन्म हमारा ॥ २ ॥
सुत रिपु भेदभाव प्रभु काहू । राखत निज मन मानस नाहू ॥ ३ ॥
दंड व्यवस्था कृष्ण तुम्हारी । अघ नाशक हित होवत सारी ॥ ४ ॥
दीन्हो दंड इसे तुम भारी । कीन्हि अनुग्रह यह अघहारी ॥ ५ ॥
कीन्हा तप यह को अघघाती । यह हम समझ नहीं कुछ पाती ॥ ६ ॥
जो हरि चरण कमल की धूरी । धारी निज सिरपर यह पूरी ॥ ७ ॥
येती दुर्लभ तव पद धूरी । कीन्ह रमा जिस हित तप पूरी ॥ ८ ॥
तव पद पंकज रज जे चाहे । स्वर्ग मोक्ष नहीं उन्हें सुहावे ॥ ९ ॥
पाद कंज रज वही तुम्हारी । विन श्रम पावा यह अहि सारी ॥ १० ॥

दोहा- **महापुरुष परमात्मा भूत निवास अनन्त ।**
तुम कालावय कालहो विश्वनाथ भगवन्त ॥ १४१ ॥

चौ- अविकारी अप्राकृत ताता । अगुण विश्वभर्ता जगत्राता ॥ १ ॥
जग उप द्दष्टा शक्ति अनन्ता । रामकृष्ण जय जय रतिकन्ता ॥ २ ॥
करण प्रवर्त्तक आत्मारामा । विश्व परावर गति विद्कामा ॥ ३ ॥
जय अतर्क्य महिमा सुख धामा । शास्त्र योनि कवि पूरण कामा ॥ ४ ॥
मौन शील मुनि कवि हृषिकेशा । गुण प्रदीप गुण द्दष्ट दिनेशा ॥ ५ ॥
निगम प्रवृत्त निवृत्त अपारी । विश्व अविश्व व विश्व विहारी ॥ ६ ॥
हो अकृत प्राकृत गुण द्वारा । काल शक्ति का लेय सहारा ॥ ७ ॥

तुम ही जग के सरजन वारे । स्थिति संयम के करने हारे ॥ ८ ॥
संस्कार जीवन के सारे । करत प्रकट दृष्टि के द्वारे ॥ ९ ॥
शान्त व धीर मुनिजन सारे । तुमको लागत बहुत पियारे ॥ १० ॥

दोहा- **ऋषि मुनि जन रक्षार्थ हित, लीन्ह आप अवतार ।**
करो कृपा भगवान अब, अहिपति पर इस बार ॥ १४२ ॥

चौ- धन्य भाग्य यह भयो अभागा । पाकर तव पद कंज परागा ॥ १ ॥
मृत सम नाग भयो यह ताता । मेटो नहि हमार अहिवाता ॥ २ ॥
करो कृपा हम पर भगवाना । पति के प्राण रूप दे दाना ॥ ३ ॥
कालिय कृत अपराध अपारा । करो सहन हे कृष्ण उदारा ॥ ४ ॥
हम सब दासी प्रभो तुम्हारी । करें काम वहि कहो खरारी ॥ ५ ॥
कृपा प्राप्त कर प्रभो तुम्हारी । सब भय से छूटे नर नारी ॥ ६ ॥
बोले शुक अहि नारिन द्वारा । कीन्हि विनय इमि बहुत प्रकारा ॥ ७ ॥
मूर्छित सर्प तजा प्रभु त्योंही । भयो स्वस्थ व अहिपति त्योंही ॥ ८ ॥
हो अति दीन कृताञ्जलि राया । हरि प्रति धीरे वचन सुनाया ॥ ९ ॥
सह उत्पत्ति तामस भारी । दीर्घमन्यु हम खल अपकारी ॥ १० ॥

दोहा- **रचे बहुत सी प्रकृति के, तुमने जीव अपार ।**
निज स्वभाव त्यागे वह, हे हरि कवन प्रकार ॥ १४३ ॥

चौ- उस सुझाव के कारण सारे । फँसत दुराग्रह बीच विचारे ॥ १ ॥
होवत सृष्टि बीच भगवन्ता । जन्म जात अहि क्रोध अनन्त ॥ २ ॥
यहि हित माया नाथ तुम्हारी । छूट सके ना किसी प्रकारी ॥ ३ ॥
तुम सर्वज्ञ जगत के स्वामी । दीन बन्धु दुख हर निष्कामी ॥ ४ ॥
माया अरु स्वभाव के कारण । तुमहीं एक सन्त भय हारण ॥ ५ ॥
जैसी इच्छा होय तुम्हारी । देउ दंड या तजा खरारी ॥ ६ ॥
यों अहि वचन श्रवण कर राया । सर्प हेतु प्रभु वचन सुनाया ॥ ७ ॥
अरे सर्प यहँ वास तुम्हारा । नहीं नीक अब किसी प्रकारा ॥ ८ ॥
निज सुत तिया बन्धु संग लेकर । करो देर मति बसो समुन्दर ॥ ९ ॥
कर गौ नर यमुना जल पाना । विचरहिं यहाँ सुखी हो नाना ॥ १० ॥

दोहा- **जो मानव दोनों समय, सुमिरहिं कथन हमार ।**
व्यापहिं कबहुँ न सर्प भय, यह तू सत्य विचार ॥ १४४ ॥

चौ- आकर यहाँ करहिं जो स्नाना । करहिं जे तरपन देव सुजाना ॥ १ ॥

रख उपवास करहिं मम पूजन । होअहिं पाप मुक्त वह सज्जन ॥ २ ॥
रमणक द्वीप त्याग तू नागा । आयउ यहाँ गरुड़ भय भागा ॥ ३ ॥
खावहिं खगप नहीं अव तोही । मम पद चिन्ह देख सिर सोहीं ॥ ४ ॥
बोले नृप से शुक मुनिराई । कृष्ण वचन सुन इमि अहिराई ॥ ५ ॥
निज नारिन सह मुदित अपारा । दिव्य वसन भूपण मणि द्वारा ॥ ६ ॥
कंज माल केशर युत चन्दन । पद पंकज पूजे वृजनन्दन ॥ ७ ॥
कर पूजन यो अव अहिराई । कर प्रदक्षिणा सीस नवाई ॥ ८ ॥
पक्षिप ध्वज आज्ञा सिर धारी । निज नारिन सुत सह परिवारी ॥ ९ ॥
कीन्हो रमणक द्वीप पयाना । तव से भई यमुन विप हीना ॥ १० ॥

दोहा- **बोले नृप हे द्विजवर, रमणक द्वीप महान ।**
कवन काज कालिय तजा, खगपति का भयमान ॥ १४५ ॥

चौ- अप्रिय वचन कीन्ह वह नागा । जो खगपति के भय से भागा ॥ १ ॥
बोले शुक हे नृप इक वारा । हो भयभीत गरुड़ के द्वारा ॥ २ ॥
नाग रूप वलि इक उपहारा । हर प्रति पर्व अहिन के द्वारा ॥ ३ ॥
वृक्ष मूल ऊपर कर कल्पित । निर्भय अव सव इत उत विचरत ॥ ४ ॥
पक्षिय हित देवत सव भागा । किन्तु दीन्ह नहिं कालिय नागा ॥ ५ ॥
गरल वीर्य मद युत अति भारी । तुच्छ मान पक्षिप लखिकारी ॥ ६ ॥
अर्पित गरुड़ हेतु वलिनागा । भक्षण करन स्वयं वह लागा ॥ ७ ॥
देख क्रुद्ध गरुड़ वह आये । कालिय वध हित चोंच उठाये ॥ ८ ॥
आवत देख गरुड़ को नागा । फण उठाय उन ऊपर भागा ॥ ९ ॥
उग्र नयन विप आयुध धारी । डसने लागा दसन करारी ॥ १० ॥
कर विनता सुत क्रोध अपारा । वाम पक्ष ते कीन्ह प्रहारा ॥ ११ ॥

दोहा- **वाम पक्ष ताड़ित अहि, विह्वल होय अपार ।**
तजकर रमणक द्वीप अव, आया यमुन किनार ॥ १४६ ॥

चौ- कर यमुना ह्रद वीच निवासा । पाई सव विधि जीवन आशा ॥ १ ॥
आये गरुड़ वहाँ इक वारा । खाये जलचर जीव अपारा ॥ २ ॥
कीन्ह सौभरी ऋपि मनाई । तदपि न माने वे खगराई ॥ ३ ॥
झप पति हत दुःखित अति मीना । देख सौभरी दया अधीना ॥ ४ ॥
पन्नगारि प्रति वचन सुनावा । अव यदि गरुड़ यहाँ पर आवा ॥ ५ ॥
खावहिं इत ह्रद वीचे जलचर । मरहिं सत्य कहुँ वचन सुनाकर ॥ ६ ॥

इस हृद को जानत अहि राई । जानत नहीं अन्य अहि कोई ॥ ७ ॥
यही हेतु खगपति से भीता । पावा वास यहाँ मन चीता ॥ ८ ॥
इस कारण श्री कृष्ण कृपाला । कीन्ह निकासित कालि कराला ॥ ९ ॥
हृद निर्गत अव कृष्ण विशेपा । दिव्य गंध पटयुत लखि भेपा ॥ १० ॥

दोहा- **लब्ध प्राण इन गोप अव, होकर मुदित अपार ।**
कर आलिंगन कृष्ण को, भेटे वारम्वार ॥ १४७ ॥

चौ- रोहिणी नन्द यशोमति रानी । गोप व गोपी सुमुखि सयानी ॥ १ ॥
प्राप्त मनोरथ मुदित अपारा । हँस अव भेटे राम उदारा ॥ २ ॥
वत्स व वृप नग तरु सह गैया । भई मुदित लखि कृष्ण कन्हैया ॥ ३ ॥
भार्या सहित विप्र वहँ आये । वृज पति प्रति उन वचन सुनाये ॥ ४ ॥
तव सुत सर्प ग्रस्त निर्मुक्ता । करो दान अव विधि श्रुति उक्ता ॥ ५ ॥
अव वृज पति अति प्रीति समेता । गौ पट कनक दिये द्विज हेता ॥ ६ ॥
यशुमति हरि पुनि अंक विठाये । प्रेम नीर नयनन वरसाये ॥ ७ ॥
गैया सहित गोप अव सारे । भूख प्यास युत यमुन किनारे ॥ ८ ॥
हरि समेत भ्राता वलरामा । कीन्हो श्रमित निशा विश्रामा ॥ ९ ॥
तदा शुष्क वन वीच अपारी । लागी अनल चहूँ दिशि भारी ॥ १० ॥

दोहा- **अर्ध निशा वीचे जहाँ, सोवत वृज नर नार ।**
उठे चोंक कर तत्क्षण, देख अनल विस्तार ॥ १४८ ॥

चौ- दह्यमान अव सव वृजवासी । माया मनुज कृष्ण अविनासी ॥ १ ॥
जाय शरण यों ग्वाल उचारे । कृष्ण-कृष्ण हे राम हमारे ॥ २ ॥
यह अति घोर अनल दुखदाई । ग्रसहीं वृज के लोग लुगाई ॥ ३ ॥
अव इस काल अनल के द्वारा । हरो व्यथा हे प्रभु इस वारा ॥ ४ ॥
पद पंकज हम नाथ तुम्हारा । त्याग सकै ना किसी प्रकारा ॥ ५ ॥
देख विकल अव वृज नर नारी । जगदीश्वर भक्तन भयहारी ॥ ६ ॥
वे अनन्त वलधर भगवाना । तीव्र अनल का कर गए पाना ॥ ७ ॥
वाद कृष्ण निज परिजन संगा । आये वृजविच करत प्रसंगा ॥ ८ ॥
यो माया मानव अवतारी । किय वृज वीचे खेल अपारी ॥ ९ ॥
अव जीवन प्रति अप्रिय राया । ग्रीष्म काल आवा दुख दाया ॥ १० ॥

दोहा- **वृन्दावन में गुणन ते, दीखत ऋतू वसन्त ।**
क्रीड़ा करत अपार जहँ, राम कृष्ण भगवन्त ॥ १४९ ॥

चौ- गत झिल्ली रव निर्झर नादा। उड़ते निर्झर जल कण ज्यादा ॥ १ ॥
जिनते स्निग्ध सदा द्रुम सोहे। हरित दूब लखि सब मन मोहे ॥ २ ॥
सीतल मंद सुगंधित वाता। चारों तरफ चलत सुखदाता ॥ ३ ॥
ग्रैष्मिक अनल रविज परितापा। वन प्राणिन प्रति कबहुँ न व्यापा ॥ ४ ॥
भानु किरण विष सम अति उग्रा। महि रस हरहीं नही समग्रा ॥ ५ ॥
यों पुष्पित मृग पक्षिन नादित। अलि शिखि गायन युत वन लक्षित ॥ ६ ॥
गोप राम गोधन युत सारे। क्रीड़ा इच्छुक नन्द दुलारे ॥ ७ ॥
वेणु निनाद करत उस कानन। कीन्ह प्रवेश मुदित मन राजन ॥ ८ ॥
केकी पूच्छ सुगच्छ प्रवाला। धातुकृत भूषण युत ग्वाला ॥ ९ ॥
राम कृष्ण सह नाचत गावत। मिलकर कोई द्वंद रचावत ॥ १० ॥

दोहा- **करत नृत्य जब नन्द सुत, गावत केचित ग्वाल।**
कैतिक वेणु बजावत, ले कैतिक करताल ॥ १५० ॥

चौ- निज मुख श्रृंग बजावत केचित। करत प्रसंसा कैतिक हर्षित ॥ १ ॥
गोप जाति बिच होय अलक्षित। विबुध वृन्द सब निज मन हर्षित ॥ २ ॥
रामकृष्ण जे ग्वाल स्वरूपा। करत गान यश उन नर भूपा ॥ ३ ॥
क्षेपण उल्लंघन अरु स्फोटन। बाहू युद्ध भ्रामण व विकर्षन ॥ ४ ॥
काक पक्ष धारी घनश्यामा। करते क्रीड़ा सह बलरामा ॥ ५ ॥
करत नृत्य दूसर यदि कोई। गायक वादक तब वे होई ॥ ६ ॥
करत प्रशंसा उन दोऊ भाई। साधु साधु की झरी लगाई ॥ ७ ॥
बिल्वादिक फल लेकर कबहूँ। फेंकत इत उत मिलकर सबहूँ ॥ ८ ॥
खेलत कबहूँ आँख मिचौनी। फिरत कबहूँ कर सूरत रोनी ॥ ९ ॥
खग मृग सम अनुकृत कइ नाना। फुदकत कैतिक भेक समाना ॥ १० ॥

दोहा- **ग्वाल वाल कइ एक वहँ, करत विविध उपहास।**
कैतिक नृपलीला करत, झूलत गल भुज पास ॥ १५१ ॥

चौ- यों क्रीड़ा कर श्याम व रामा। विचरत गिरि सर सरित ललामा ॥ १ ॥
गोपन सहित विपिन दोउ भाई। पशुन चरावत अति हरसाई ॥ २ ॥
हरण हेतु उनको उस काला। नाम प्रलम्ब असुर मतवाला ॥ ३ ॥
गोप रूप धर कर वहँ आवा। राम कृष्ण जहँ खड़े लखावा ॥ ४ ॥
घट घट की सब जानन हारे। सोच तासु वध नन्द दुलारे ॥ ५ ॥
कीन्ह मित्रता उनके संगा। करने लागे विविध प्रसंगा ॥ ६ ॥

याद कृष्ण सब गोप बुलाये। हँसकर उन प्रति वचन सुनाये ॥ ७ ॥
खेलहिं हम इक खेल अनूपा। यथा योग्य वय बल अनुरूपा ॥ ८ ॥
करो भाग युग गोपन भाई। जब यह सुने वचन कन्हाई ॥ ९ ॥
सब गोपन अब निज मत लीन्हे। रामकृष्ण युग नायक कीन्हे ॥ १० ॥

दोहा- **कृष्ण संघ में मिल गये, कतिक मिलकर ग्वाल।**
राम पक्ष में आ गये, कितने ही बृजबाल ॥ १५२ ॥

चौ- वाह्य व वाहक लक्षण द्वारा। कीन्ही क्रीड़ा विविध प्रकारा ॥ १ ॥
क्रीड़ा बीच पराजित बाला। विजयिन पृष्ठ उठा उस काला ॥ २ ॥
ले जावत निज लक्षित ऊपर। चरत उधर गोधन तृण सुन्दर ॥ ३ ॥
यों क्रीड़ा करते बृज ग्वाला। भाण्डीरक बट गए तत्काला ॥ ४ ॥
जीते राम संघ मत भारे। श्रीदामा वृषभादिक सारे ॥ ५ ॥
कृष्ण संघ बालक जब हारे। चले जयिन धरि पृष्ठ सहारे ॥ ६ ॥
श्रीदामा को कृष्ण उठाये। वृषभहि भद्रसेन बिठलाये ॥ ७ ॥
कीन्ह राम अब तुरत नवारी। पीठ प्रलम्ब गोप तनुधारी ॥ ८ ॥
जाने बल शाली भगवन्ता। धारे पृष्ठ प्रलम्ब अनन्ता ॥ ९ ॥
तजि मरजाद गयो जब दूरी। वह निज शक्ति लगा भरपूरी ॥ १० ॥

दोहा- **सप्त द्वीप सागर सहित, महि जिन सीस उठाई।**
उनको खल निज पीठ धर, ले जावत हरसाई ॥ १५३ ॥

चौ- पर गिरि सम उन भार अपारा। गति अवरुद्ध भई उन द्वारा ॥ १ ॥
अब तो राक्षस अति घबराबा। निज तनु प्रकट कीन्ह घबराबा ॥ २ ॥
कृष्ण वर्ण राक्षस तनु ऊपर। स्वर्णालंकृत स्थित बल सुन्दर ॥ ३ ॥
जिमि शोभित कारे नभ ऊपर। विद्युत युत रजनीपति सुन्दर ॥ ४ ॥
नयन दीप्त ज्वलत कच नम जानू। भ्रमत देख अति वेग अकामू ॥ ५ ॥
हो भयभीत प्रथम बलरामा। पाई स्मृति पुनि पूरण कामा ॥ ६ ॥
अब क्रोधित हो अपरम्पारा। दृढ़ करि मुष्टिक कीन्ह प्रहारा ॥ ७ ॥
भग्न सीस तब दानव भारी। रुधिर वमन कर शब्द अपारी ॥ ८ ॥
गिरा भूमि ऊपर गत प्राना। हे नृप पविहत अद्रि समाना ॥ ९ ॥
निहत प्रलम्ब देख बल द्वारा। विस्मित होकर गोप अपारा ॥ १० ॥

दोहा- **निज मुख ते करने लगे, बल कीरति गुणगान।**
साधु साधु इति शब्द कहि, हरषित भये महान ॥ १५४ ॥

चौ- मरकर जिमि कोई वापिस आये । कर अनुभव इमि हृदय लगाये ॥ १ ॥
है प्रशंसनीय वास्तव रामा । बोले गोप वृद्ध घनश्यामा ॥ २ ॥
देकर उन प्रति आशिर्वादा । करने लगे प्रशंसा ज्यादा ॥ ३ ॥
पाप रूप जब मरा प्रलम्बा । आये सुर नहिं कीन्ह विलम्बा ॥ ४ ॥
ऊपर राम कुसुम बरसाये । साधु साधु इति शब्द सुनाये ॥ ५ ॥
बोले शुक मुनि सुन नरपाला । क्रीड़ा लीन भये अब ग्वाला ॥ ६ ॥
उन गैया स्वेच्छा अनुसारी । विचरत तृण लोभी अब सारी ॥ ७ ॥
पहुँची गह्वर गहन अपारा । भूली पथ वह सभी प्रकारा ॥ ८ ॥
चाली इस वन तजि अब दूसर । अजा गाय महिषी सब मिलकर ॥ ९ ॥
ग्रीष्म ताप से तृषित अपारी । क्रन्दित अरु व्याकुल अतिभारी ॥ १० ॥

दोहा- **अति उच्छ्रित धन तृण युत, पहुँची विपिन विशेश ।**
देख अलक्षित इत पशुन, गोप व राम वृजेश ॥ १५५ ॥

चौ- हेरन लगे सकल मिल गैया । पाई गोप न राम कन्हैया ॥ १ ॥
तब खुर दन्त छिन्न तृण द्वारा । पद निशान अंकित लखि सारा ॥ २ ॥
हेरत अब पथ गोप समूहा । तदपि न दीखा गोधन यूहा ॥ ३ ॥
पहुँचे जब वन भुँज विशेषा । क्रन्दमान निज गोधन देखा ॥ ४ ॥
सब मिल अब आवाज लगाई । किन्तु एक भी वहँ ना आई ॥ ५ ॥
कीन्ह यतन उन सभी प्रकारा । श्रान्त बुभूक्षित वृषित अपारा ॥ ६ ॥
देख व्यथित अब गोप कुमारा । घन रव सम गंभीर अपारा ॥ ७ ॥
दे आवाज बुलावत गैया । दोउ भ्राता बलराम कन्हैया ॥ ८ ॥
अब निज नाम शब्द सुन गैया । राँभन लगि प्रति कृष्ण कन्हैया ॥ ९ ॥
सुनु नृप दावाग्नि तेहि काला । फैली चारों ओर विशाला ॥ १० ॥

दोहा- **जो वनवासी जीव की, होवत सब विधि काल ।**
मरुत सखा को साथ ले, भयप्रद भई विशाल ॥ १५६ ॥

चौ- मानव पशु पक्षी उस द्वारा । भये भस्म तरु वेल अपारा ॥ १ ॥
विस्तृत देख अनल चहुँ ओरा । व्याकुल भई गैया वृज छोरा ॥ २ ॥
मृत्यु भयार्दित जिमि शरणगत । मानव हरि का नाम उचारत ॥ ३ ॥
कृष्ण राम प्रति वचन उचारे । कृष्ण कृष्ण हे राम पुकारे ॥ ४ ॥
दह्यमान हम तुम विन ताता । दीखत अन्य नहीं अब त्राता ॥ ५ ॥
हम सब वान्धव् कृष्ण तुम्हारे । सहने योग्य न कष्ट खरारे ॥ ६ ॥

हम सब सेवक कृष्ण तुम्हारे। हरो पीर यह नन्द दुलारे ॥ ७ ॥
बोले शुक मुनि सुनो नृपाला। सुन उन वच यों कृष्ण कृपाला ॥ ८ ॥
बोले भीत होउ मत भाई। बैठो यहँ निज नयन पिधाई ॥ ६ ॥
यो सुन उन निज नयन पिधाना। करके अनल इधर हरि पाना ॥ १० ॥

दोहा- **मेटा उनका कष्ट सब, पाछे वे वृज ग्वाल।**
पहुँचाये भाण्डीर वट, गोधन सह तत्काल ॥ १५७ ॥

चौ- अब सबने निज नयन उघारे। भाण्डीरक वट लख अब सारे ॥ १ ॥
हरि का चरित देख यह ताता। ग्वाल बाल विस्मित अति जाता ॥ २ ॥
दावानल ते यों निज रक्षा। कृष्णहिं योग बीच लखि दक्षा ॥ ३ ॥
यशुमतिसुत को अमर समाना। उन ग्वालन ने निज मन माना ॥ ४ ॥
संध्याकाल भयो अब राऊ। गोपन स्तुत हरि सह बलदाऊ ॥ ५ ॥
गोधन को निज संग लिवाये। वेणु बजावत वृज विच आये ॥ ६ ॥
भई गोपी सब परमानन्दा। दरसन कर अब उन गोविन्दा ॥ ७ ॥
कृष्ण बिना जिनका क्षण भारी। युग शत सम बीतत दुखकारी ॥ ८ ॥
निज निज गेह गोप जब आये। नारिन प्रति हरि चरित सुनाये ॥ ६ ॥
विपिन अनल निज मोक्ष सुनावा। वध प्रलम्ब उन प्रति उन गावा ॥ १० ॥

दोहा- **अचरजकारी कर्म यह, राम कृष्ण वृजपाल।**
देव श्रेष्ठ माना उन्हें, सुन वृज गोपि व ग्वाल ॥ १५८ ॥

चौ- अब सब प्राणिन उद्भवकारी। आई वर्षा ऋतु सुखकारी ॥ १ ॥
होवत मंडल रवि विधु ऊपर। चमकत कड़क वात युत बादर ॥ २ ॥
दीखत इनते क्षुब्ध अकासा। नीले घन घिर आवत खासा ॥ ३ ॥
विद्युत चमकत बारम्बारा। आवृत रवि विधु जब सब तारा ॥ ४ ॥
होवत तब नभ शोभा कैसी। सगुण ब्रह्म की होवत जैसी ॥ ५ ॥
अष्टमास निज रश्मि दिवाकर। पीवत नीर तजत अब भूपर ॥ ६ ॥
तजत मेघ जग जीवन नीरा। कारुणिक जन इव नृपधीरा ॥ ७ ॥
तप कृश पुष्ट मही अब कैसे। काम्य तपस तनु फल पा जैसे ॥ ८ ॥
चमकत जुगनु निशिमुख ऐसे। मत पाखंड अरे कलि जैसे ॥ ६ ॥
दीखत ग्रहगण नहिं नभ कैसे। वेद मार्ग श्रुति युग विच जैसे ॥ १० ॥

दोहा- **घन रव सुन मंडूक गण, करते शब्द अपार।**
गुरु समीप जिमि विप्र बटु, करते श्रुति उच्चार ॥ १५६ ॥

चौ- उमड़त क्षुद्र सरित अब कैसी । विषयासत धन सम्पद जैसी ॥ १ ॥
आरुण कीट हरित तृणधारी । सोभित हरित रक्त महि सारी ॥ २ ॥
अहि छत्रक सहित कुरु ऐना । मानो किसी नृपति की सेना ॥ ३ ॥
क्षेत्र सस्य संयत युत सारा । देवत कृषकन हर्ष अपारा ॥ ४ ॥
देवाधीन अजातन हारा । जिमि धनि पावत ताप अपारा ॥ ५ ॥
जल थल स्थित नवनीर निसेवी । धरत यथावर तनु हरि सेवी ॥ ६ ॥
क्षोभित सरिता संगत सागर । अदृढ़ योगि यथा मन मंदिर ॥ ७ ॥
हन्यमान पर्वत जलधारा । व्यथित न होवत किसी प्रकारा ॥ ८ ॥
व्यसन पराभृत भी हरिदासा । यथा दुखित नहि होय जरा सा ॥ ९ ॥
अब तृण युत पथ शंकित कैसे । बिन अभ्यास द्विज न श्रुति जैसे ॥ १० ॥

दोहा- **मेघन में विद्युत लता, स्थिर नहिं किसी प्रकार ।**
पुरुषन पर भी उस तरह, स्थिर नहिं कुलटा नार ॥ १६० ॥

चौ- निर्गुण इन्द्र धनुष नभ सोहा । निर्गुण पुरुष प्रपञ्चन मोहा ॥ १ ॥
सोहिन गुप्त चन्द्र धन द्वारा । गुप्त जीव जिमि अति अहंकारा ॥ २ ॥
मेघ आगमन देख मयूरा । अत्यानन्दित होवत पूरा ॥ ३ ॥
खिन्न पुरुष निज घर में जैसे । भक्त समागम नन्दित वैसे ॥ ४ ॥
जल पीकर तरु मूल सहारे । फल पुष्पन युत सोभित सारे ॥ ५ ॥
श्रान्त मनुज जैसे तप द्वारा । फल पाकर हो पुष्ट अपारा ॥ ६ ॥
निज तट कंटक पंक अपारा । देख अशान्त रहे सर सारा ॥ ७ ॥
तदपि न चक्रवाक क्षण तेहू ।तजही नहीं अरे निज नेहू ॥ ८ ॥
विषयी पुरुष अशुचि निज गेहा । त्यागहिं नही यथ निज नेहा ॥ ९ ॥
टूटहिं सरिता सर मरजादा । बरसत नभ ते जब जल ज्यादा ॥ १० ॥

दोहा- **अनृत मत विस्तृत कर, खल कर वाद विवाद ।**
टूटहिं जैसे कलि विषै, सब श्रुति की मरियाद ॥ १६१॥

चौ- प्रेरित वात यथा जल धारी । देवत प्राणिन नीर अधारी ॥ १ ॥
द्विज प्रेरित नृपवर धनवाना । देवत प्राणिन प्रति जिमि दाना ॥ २ ॥
शोभित वर्षा ऋतु अपारी । पक्व खजूर जम्बुयुत भारी ॥ ३ ॥
देख ईदृशी उस वन शोभा । यशुमति सुत का मन अति लोभा ॥ ४ ॥
गैया गोप सराम समेता । पहुँचे उस वन कृपा निकेता ॥ ५ ॥
गैया आहुत हरि के द्वारा । पहुँची पय स्रावित स्तन द्वारा ॥ ६ ॥

देखे वहाँ मुदित वन वासी । वन पङ्गति मधु स्त्रावित भासी ॥ ७ ॥
नाद स पतित अद्रि जलधारा । लम्बी निकटनी गुहा अपारा ॥ ८ ॥
वरसत मेघ कवहुँ तरु छाया । जावत कवहूँ गुहा कन्हैया ॥ ६ ॥
कवहूँ अशन कन्द फल मूला । खेलत खेल ऋतू अनुकूला ॥ १० ॥

दोहा- **जल समीप शिल पर रखे, गृहानीत दधिभात ।**
सकल गोप भोजन करत करत, परस्पर वात ॥ १६२ ॥

चौ- श्रमित पयोधर भार अपारा । तृण ऊपर स्थित करत जुगारा ॥ १ ॥
वृषभ व वत्स सहित सब गैया । करती दर्शन कृष्ण कन्हैया ॥ २ ॥
देख प्रावृटी छवि भगवाना । गावत उनकी कीरति नाना ॥ ३ ॥
उस वन बीच प्रमोदित होकर । रहते राम व श्याम वहाँ पर ॥ ४ ॥
वर्षा विगत शरद अब आई । स्वच्छ अभ्र चहुँ ओर सुहाई ॥ ५ ॥
स्वच्छ नीर अति शीतलवाता । भई उत्पत्ति अति जल जाता ॥ ६ ॥
निरमल जल सरिता सर भीतर । भृष्ट चित्त जिमि योग रचाकर ॥ ७ ॥
नभ घन वर्षा जीव अपारा । पंक नीरमल महि का सारा ॥ ८ ॥
करती शरद हरण यह कैसे । कृष्णभक्ति अघ आश्रमि जैसे ॥ ६ ॥
शुभ कान्ति घन सकल तजाई । त्यक्त ईपणा जिमि मुनि राई ॥ १० ॥

दोहा- **कहिं गिरि ते झरने झरत, कहुँ जल नहीं दिखाहि ।**
जैसे ज्ञानी ज्ञान को, कही वदत कहिं नाँहि ॥ १६३ ॥

चौ- जलचर क्षुद्र गर्त विच जैसे । लखहिं न क्षीयमाण जल वैसे ॥ १ ॥
क्षीयमाण वय निज परिवारा । जानत मूढ़ न किसी प्रकारा ॥ २ ॥
पावहिं क्षुद्र जीव रवि तापा । दारिद दुःख यथा नर व्यापा ॥ ३ ॥
शनै शनै स्थल पंक तजाया । अपक्वन तृण वेल तजाया ॥ ४ ॥
निज तनु ते जैसे नरधीरा । ममता त्याग हरें सब पीरा ॥ ५ ॥
स्थिर जल भयऊ सागर सारा । त्यक्त क्रिया मुनि येन प्रकारा ॥ ६ ॥
शरदागम कर्षक रचि सेतू । रोकहिं जल निज क्षेत्रन हेतू ॥ ७ ॥
इंद्रिय रोध करे जिमि योगी । पावहिं ज्ञान न पावहिं भोगी ॥ ८ ॥
अर्कज ताप करे विधु सोधा । देह घमंड हरे जिमि बोधा ॥ ६ ॥
नभ निर्मेघ स्वच्छ ग्रह तारा । सत्वयुक्त चित येन प्रकारा ॥ १० ॥

दोहा- **सब यदुअन के बीच में, सोभित ज्यों जगदीश ।**
अम्बर विच सोभित तथा, उडुगण सहित निशीश ॥ १६४ ॥

चौ- सेवन कर पुष्पन वन वाता । त्यागहिं ताप मनुज निज गाता ॥ १ ॥
हरण कीन्ह चित कृष्ण कृपाला । त्यागा ताप नहीं वृजबाला ॥ २ ॥
पुष्पवती गौ खग मृग वामा । आवत शरद भई सुत कामा ॥ ३ ॥
ईश किया जिमि फल अनुकरणा । त्यों उन पति कृत उन अनुसरणा ॥ ४ ॥
दस्यु विना जिमि हरसित लोका । नृप दरसन कर होत अशोका ॥ ५ ॥
उदित भानु त्यों पंकज विकसत । किन्तु चन्द्र विकासिनि मुरझत ॥ ६ ॥
वैदिक यज्ञ महोत्सव द्वारा । पुर वृजग्राम सुसोभित सारा ॥ ७ ॥
पक्व धान्य सोभित महि सारी । विद्यमान जहँ बल वनवारी ॥ ८ ॥
शरदागम नृपपति व्यापारी । स्नातक वर्षा रुद्ध दुखारी ॥ ६ ॥
चले वहाँ से निज निज काजू । वदति नृपति से अब मुनिराजू ॥ १० ॥

दोहा- **शरद स्वच्छ जल यों नृप, कमल सुगंधित वात ।**
मंद मंद चालत चहुँ, सब जीवन सुखदात ॥ १६५ ॥

चौ- कुसुमित सर सरिता गिरि भारी । सोभित हरित वनावलि सारी॥ १ ॥
स्थान स्थान मदमत्त अपारा । मधु गायन मधुकर उचारा ॥ २ ॥
भाँति भाँति खग झुण्ड बनाई । करते कलरव तरुअन छाई ॥ ३ ॥
गैया गोप श्याम बल संगा । पहुँचे उस वन करत प्रसंगा ॥ ४ ॥
गाय चरावत श्याम मुरारी । अब मधु मुरली तान उचारी ॥ ५ ॥
उत वह काम जगावन वारी । मुरली गीत सुना वृजनारी ॥ ६ ॥
होकर अब वे प्रेम अधीना । मिलकर सारी सखी कुलीना ॥ ७ ॥
वंशि प्रभाव श्याम गुण रूपा । वरणन लगी परस्पर भूपा ॥ ८ ॥
वर्णनीय यश वरणि न आवा । कामवेग जिन चित्त सतावा ॥ ६ ॥
ज्यों ज्यों कृष्ण स्मर्ण मन आवत । त्यों त्यों वह व्याकुल होजावत ॥ १० ॥

दोहा- **गोपिन का मन हाथ से, निकल गया उस काल ।**
पहुँच गई व मनहिं मन, जहाँ कृष्ण गोपाल ॥ १६६ ॥

चौ- मन हीं मन अब वे वृजबाला । सोचन लागी हे नरपाला ॥ १ ॥
आवत वृन्दावन घनश्यामा । गोधन ग्वालन सह बलरामा ॥ २ ॥
मोरपिच्छ जिन्ह सीस सुहाई । कानन कुसुम कनीर लुगाई ॥ ३ ॥
सोभित वैजयन्ति गल माला । नटवर भेष रुचिर छवि वाला ॥ ४ ॥
पीत वसन उन तनु पर सोहे । चितवन मन्द हास मन मोहे ॥ ५ ॥
सुन्दर वदन मार मदलोचन । कनक कंज कमनीय विलोचन ॥ ६ ॥

मुरलि रंध्र वे अधरन पूरहिं । मुख मृदु तान उचारण करहिं ॥ ७ ॥
यों सब भूत मनोहर राजन । वेणु ध्वनि सुनकर निज कानन ॥ ८ ॥
तन्मय होय सभी वृज बाला ।कर आलिंगन कृष्ण कृपाला ॥ ६ ॥
वरणन लागी चरित मनोहर । वृज सखियाँ अब सभी परस्पर ॥ १० ॥

दोहा- **हरि दर्शन कर सफल हो, नयनन का फल येहु ।**
हरि दर्शन बिन सफलता, जानहु कबहुँ न तेहू ॥ १६७ ॥

चौ- गौर वरण सुन्दर बलरामा । नन्दसुवन जिन तनु घनश्यामा ॥ १ ॥
ग्वाल बाल संग गोधन हाँकत । जावत वन पुनि वापस आवत ॥ २ ॥
जिन अधरन वेणू वह धारे । चितवन सह हम ओर निहारे ॥ ३ ॥
करें तदा मुख माधुरि पाना । नयनन लाभ यही हम माना ॥ ४ ॥
आम्र प्रवाल कमल वर माला । भेष विचित्र धरे नन्दलाला ॥ ५ ॥
बैठे गोप सभा बिच दोही । नटवर सम बल सह हरि सोही ॥ ६ ॥
गोपन पुण्य अहो अति भारी । रहहिं संग जिन विपिन विहारी ॥ ७ ॥
बोली अपर सखी सुन पगली । कीन्हो पुण्य कवन यह मुरली ॥ ८ ॥
करहिं जो हरि अधरामृत पाना । अब तक तो हम यहि पहिचना ॥ ६ ॥
इस निधि पर अधिकार हमारा । पर अब नहि अधिकारी तुम्हारा ॥ १० ॥
अब इस सम्पति की अधिकारी । बन गई मुरली सौत हमारी ॥ ११ ॥

दोहा- **हरि अधरामृत को अरी, पीजावत सब येह ।**
हम सबके प्रति तनिक भी, तजहिं न सम अवलेह ॥१६८॥

चौ- जिसके रस से पुष्ठ अपारा । नदी कंज रोमाञ्चित सारा ॥ १ ॥
जिनके वंश अरी यह जाई । वे तरु भी निज मनु पुलकाई ॥ २ ॥
मधुधारा मिस अश्रु बहावे । देख इसे आनन्द मनावे ॥ ३ ॥
वृद्ध देखि निज कुल जिमि भक्तहिं । हो रोमाञ्चित अश्रु बहावहि ॥ ४ ॥
बोली अपर सखि सुनु वानी । यह वृन्दावन महि गुणखानी ॥ ५ ॥
कृष्ण चन्द्र पद पंकज अंकित । यहि कारण यह अतिव सुशोभित ॥ ६ ॥
वेणुनाद सुन मत्त मयूरा । करते नृत्य अरी भरपूरा ॥ ७ ॥
इनका नृत्य देख मृग सारे । गिरि शिखरन पर स्तब्ध विचारे ॥ ८ ॥
बोली एक सखी मतवारी । धन्य अज्ञ यह सब मृगनारी ॥ ६ ॥
वेणुनाद सुनकर पति संगी । हरि दर्शन कर प्रेम उमंगी ॥ १० ॥

दोहा- **अन्य सभी बोली पुनि, मेरी यह फरियाद ।**
कर दरसन श्रीकृष्ण का, सुनकर वेणु निनाद ॥ १६६ ॥

चौ- निज निज पति संग बैठि विमाना । खोवत सुरतिय सुध बुध नाना ॥ १ ॥
जिन सिर वेणि कुसुम सखि गुम्फित । पतत धरनि ऊपर यह दीखत ॥ २ ॥
कटि से कसक परत महि सारी । यों सुध बुध खोई सुर नारी ॥ ३ ॥
सब गैया कर श्रुति पुट उन्नत । वेणुगीत अमृत यह पीवत ॥ ४ ॥
स्नुत स्तन पय किय सावक पाना । भूले सकल क्रिया तजि शाना ॥ ५ ॥
तरु शाखा स्थित ये खग सारे । वेणुगीत सुन कृष्ण मुखारे ॥ ६ ॥
निर्निमेष सद्दश यह जाता । पूरव भव जनु इन मुनि गाता ॥ ७ ॥
वेणुगीत सुनकर यह सरिता । उर्मि भुजा द्वारा सुनु ललिता ॥ ८ ॥
कनक कंज लेकर उपहारी । करती पूजन चरन मुरारी ॥ ९ ॥
यही कारन यह धन्य अपारा । यहि सम अन्य न भाग निहारा ॥ १० ॥

दोहा- **राम श्याम जब विपिन में, गाय चरावन जाय ।**
उन पर घन आतप लखि, उदित होत निज काय ॥ १७०॥

चौ- करते छाया छत्र समाना । सखि इन भाग्य परम हम माना ॥ १ ॥
देख सखी वृन्दावन वासी । भीलनियाँ भी नहीं उदासी ॥ २ ॥
इनके हिय भी प्रेम अथाऊ । कारन कवन सुनो सखि आऊ ॥ ३ ॥
जब यह देखति कृष्ण मुरारी । किस विध मिलहीं विपिन विहारी ॥ ४ ॥
होत लालसा इन मन ऐसी । करती यतन तदा यह केसी ॥ ५ ॥
जो यह प्रिय तम सखी हमारा । जिन प्रियतमा गोपियन द्वारा ॥ ६ ॥
स्तन मंडल पर मंडित केसर । लागत वहि इन प्रियतम पद पर ॥ ७ ॥
जब ये चलत विपिन तृण ऊपर । तृण पर लगत तदा यहि केशर ॥ ८ ॥
ताहि पों छि ये भीलनि नारी । धरत उरोज व वदन विचारी ॥ ९ ॥
काम व्यथा त्यागहिं इमि भारी । भई धन्य यों भीलनि सारी ॥ १० ॥

दोहा- **अपर सखी बोलत अब, गोवर्धन गिरिराज ।**
सभी वैष्णव के विषै, जानऊ सखि सिर ताज ॥ १७१ ॥

चौ- क्या तू देख रही सखि नाँही । धन्य भाग अरी सखि याही ॥ १ ॥
जो हमार प्रियतम घनश्यामा । सह नयनाभिराम बलरामा ॥ २ ॥
जिनके चरण कंज कर स्पर्शित । रहत सदा यह गिरि आनन्दित ॥ ३ ॥
इनका भाग्य न कोई सराही । ग्वाल बाल गौ संग लिवाही ॥ ४ ॥

आवत जबै गिरी के ऊपर । राम श्याम सह हरसित होकर ॥ ५ ॥
करता सब विधि से सत्कारा । स्नान पान निर्झर जल द्वारा ॥ ६ ॥
शोभन वसन कन्दफलमूला । कन्दर धातु सुगंधित फूला ॥ ७ ॥
करता रतन व मणिन समर्पित । करत आरती अति हिय हरसित ॥ ८ ॥
श्यामल गौर किशोर सहेली । अरी छटा इनकी अलबेली ॥ ९ ॥

दोहा- **फन्दा जिन कंधे धरा, नोवन सीस लपेटि ।**
इक वन तज वन दूसरे, जावत गाय समेटि ॥१७२॥

चौ- ग्वाल बाल भी सखि इन संगा । करते दिन भर हास प्रसंगा ॥ १ ॥
गाकर मधुर मधुर यह गाना । छेड़त सखी बंसुरी ताना ॥ २ ॥
तब नर की तो बात निराली । होवत खग मृग भी स्थिर आली ॥ ३ ॥
स्थिर होवत सरिता कर नीरा । होवत पुलकित वृक्ष शरीरा ॥ ४ ॥
है विस्मय युत यह सखि मुरली । वरणन करूँ कहाँ तक पगली ॥ ५ ॥
सब गोपी प्रतिदिन इमि राजन । तन्मय होवत कर उन गायन ॥ ६ ॥
एक नहीं उन कथा अनेकी । गावत जिन मुनि सन्त विवेकी ॥ ७ ॥
हरि लीला गोपिन हिय माँही । होअहिं नृप इमि स्फुरित सदाहीं ॥ ८ ॥
क्रीड़ा देख शरद की ऐसी । मोहित भई गोपियाँ जैसी ॥ ९ ॥
वरणन जासु वरणि नहि जाई । आगे सुनो परीक्षित राई ॥ १० ॥

दोहा- **विगत शरद हेमन्त का, आयउ अगहन मास ।**
गोप कुमारी मिल सभी, हे नृप रख उपवास ॥ १७३ ॥

चौ- कात्यायनि व्रत करने लागी । हवि भोजन कर सह अनुरागी ॥ १ ॥
अरुणोदय यमुना कर स्नाना । कीन्ही पूजन विधिवत नाना ॥ २ ॥
वालूमयि प्रतिमा बनवाई । धूप दीप नैवेद्य चढ़ाई ॥ ३ ॥
फल प्रवाल तन्दूलन द्वारा । कीन्ह अर्चना इन उपहारा ॥ ४ ॥
कात्यायनि देवि महामाई । नन्दगोपसुत कृष्ण कन्हाई ॥ ५ ॥
होअहिं मात पति वह मेरो । यहि हित वन्दों पद मैं तेरो ॥ ६ ॥
इमि जप मंत्र कीन्ह सह पूजन । कृष्ण मध्य मन धर व्रत पावन ॥ ७ ॥
दिवस तीस कीन्हो व्रत सारी । उठकर प्रात वे गोप कुमारी ॥ ८ ॥
स्नान हेतु यमुना तट आवत । उच्चस्वर हरि चरितन गावत ॥ ९ ॥
एक बार यमुना तट आई । पूरब सम तट वस्त्र निधाई ॥ १० ॥

दोहा- **स्नान करन जल में गई, जब सब गोप कुमारि ।**
गोपन सह आये वहाँ, योगेश्वर अघहारि ।। १७४ ।।

चौ- अब हरि उनके वस्त्र उठाये । तरु कदम्ब ऊपर चढ़ि आये ।। १ ।।
हँस बालन सँग देकर तारी । कहे वचन परिहास पुकारी ।। २ ।।
यहँ आ निज निज वस्त्र तुम्हारा । करो ग्रहण सुनु वचन हमारा ।। ३ ।।
कहुँ में सत्य नहीं परिहासा । व्रतकृश रही कहूँ यहि आसा ।। ४ ।।
एक एक तुम यहँ पर आऊ । निज निज वस्त्र तभी तुम पाऊ ।। ५ ।।
सुन यों कृष्ण वचन परिहासा । वृज युवति सब भई उदासा ।। ६ ।।
हो अति ब्रीड़ित सभी परस्पर । मुख देखन लागी हे नृपवर ।। ७ ।।
हँसकर पुनि जल बहि नहिं आई । देख कृष्णकी यों निठुराई ।। ८ ।।
कंठ मग्न शीतोदक भीतर । कम्पमान तनु हरि बच सुनकर ।। ९ ।।
सब मुग्धा हरि प्रति इमि बोली । अरे कृष्ण क्यों तव मति डोली ।। १० ।।

दोहा- **हे प्रियतम श्री कृष्ण यह, करो न आप अनीति ।**
हम जानत नंदराय की, तुम पर ज्यादा प्रीति ।। १७५ ।।

चौ- करहिं प्रशंसा तव वृजवासी । हम सब रहीं तुम्हारी दासी ।। १ ।।
कम्पित होत शीत करि गाता । देवहु वस्त्र अरे तनु त्राता ।। २ ।।
सुनो श्यामसुन्दर हम तेरी । रही सदा चरणन की चेरी ।। ३ ।।
जो तुम कहो करेहि हम वेही । देवहु वस्त्र ढकें हम देही ।। ४ ।।
यदि तुम वस्त्र न देउ हमारे । नन्दराय से जाय पुकारे ।। ५ ।।
बोले श्याम अरी तुम मेरी । रही सदा चरणन की चेरी ।। ६ ।।
तो तुम सुनो हमारी राई । लेवउ वसन यहाँ पर आई ।। ७ ।।
अब दोउ कर गुप्ताङ्ग छिपाई । कम्पित शीत नीर बहि आई ।। ८ ।।
शुद्ध भाव उनका जब जाना । भये मुदित उन पर भगवाना ।। ९ ।।
अब हरि उन पट कंध उठाये । उन प्रति वचन कहे मुसकाये ।। १० ।।

दोहा- **व्रत धर कर तुमने किया, यमुना जल में स्नान ।**
अरी गोपियों यह बना, तुमसे पाप महान ।। १७६ ।।

चौ- अब इस पाप निवारन कारन । दोउ कर जोर करो सुर वन्दन ।। १ ।।
छूटहिं तब यह पाप तुम्हारा । सत्य कथन यह सुनो हमारा ।। २ ।।
पाछे सभी यहाँ पर आकर । ले जावहु तुम निज निज अम्बर ।। ३ ।।
यों सुन कृष्ण वचन निज काना । नग्न स्नान व्रत नाशक माना ।। ४ ।।

व्रत पूरति हेतु अब सारी । चरण वन्दना कीन्ह मुरारी ॥ ५ ॥
देख नम्र उन कृष्ण कृपाला । दीन्हा पट उन प्रति तत्काला ॥ ६ ॥
कृष्ण कीन्ह उनते छल भारी । नासी लाज शरम उन सारी ॥ ७ ॥
कठपुतली सम नाच नचाया । हर कर वसन उन्हें तरसाया ॥ ८ ॥
तदपि न दोष दृष्टि उन मानी । पहिने अब निज वसन सयानी ॥ ९ ॥
प्रियतम संग प्रेम अति गाढ़ा । घर की तरफ कदम नहीं बाढ़ा ॥ १० ॥

दोहा- **लज्जित चितवन से सभी, हरि को रही निहार ।**
उनका मन श्रीकृष्ण में, लागा बारम्बार ॥ १७७ ॥ क
विदित कृष्ण संकल्प, उन बोले सुनो कुमारि ।
विदित भयो संकल्प, यह मुझको प्रथम तुम्हारी ॥ १७७॥ख

चौ- मिलहि समर्थन तुम्हें हमारा । करूँ सत्य संकल्प तुम्हारा ॥ १ ॥
प्राण व मन अरपहि मम आगे । वह मोहिं प्राणन ते प्रिय लागे ॥ २ ॥
उनके काम सुनो सुकुमारी । विषय भोग के नहि अधिकारी ॥ ३ ॥
अब तुम निज निज गेह सिधाऊ । आवत शरद निशा मोहिं पाऊ ॥ ४ ॥
करो वहाँ मम संग विहारा । सुनौ सत्य यह वचन हमारा ॥ ५ ॥
जिस अभिलाष राख तुम निजमन । कीन्हा दुर्गा का व्रत पूजन ॥ ६ ॥
पूरूँ वह अभिलाष तुम्हारी । जाउ गेह अब हे सुकुमारी ॥ ७ ॥
यों सुन कृष्ण वचन सुकुमारी । पद पंकज रख हृदय मुरारी ॥ ८ ॥
गावत गेह निज आई । सबल गोपवृत उत वृजराई ॥ ९ ॥
लेकर गोधन वे निज संगा । गये दूर अति करत प्रसंगा ॥ १० ॥

दोहा- **ग्रीष्म अर्क आतप विषै, छत्र समाँ अति छाय ।**
देख वृक्ष गोपन प्रति, बोले यो यदुराय ॥ १७८ ॥ क
अरे स्तोक हे कृष्ण हे, श्रीदामा अरु अंशु ।
देव प्रस्थ सुबलार्जुन, तेजस्वी व सुधांशु ॥ १७८ ॥ ख

चौ- इन तरुअन को देखउ ताता । वर्षा आतप हिम अरु वाता ॥ १ ॥
सहकर सबका कष्ट निवारे । निज जीवन ये परहित प्यारे ॥ २ ॥
जिन समीप जा विमुख न कोई । यहि हित श्रेष्ठ जनम इन होई ॥ ३ ॥
छाया पत्र व पुष्पन द्वारा । मूल व वल्कल काष्ठ अपारा ॥ ४ ॥
करहिं सब अर्थिन के कामा । देवहिं ये सबको विश्रामा ॥ ५ ॥
परकाजी इन सम नहि दूजे । प्राणिन जन्म सफल इन पूजे ॥ ६ ॥

इति प्रवाल स्तवक फल पुष्पन । देखत नम्र शाख युत तरु अन ॥ ७ ॥
यमुना ऊपर गये मुरारी । गायन नीर पिला श्रमहारी ॥ ८ ॥
गोप समेत कीन्ह जल पाना । लगे चरावन गौ भगवाना ॥ ६ ॥
अब सब गोप क्षुधा से अर्दित । बोले रामकृष्ण प्रति हर्षित ॥ १० ॥

दोहा- **दुष्ट निवर्हण कृष्ण हे, सुनो राम इस काल ।**
हम सबको बाधत क्षुधा, करो शान्त तत्काल ॥ १७६ ॥

चौ- बोले श्री शुकदेव मुनीशा । इमि गोपन प्रार्थित वृजईशा ॥ १ ॥
निज भक्ता विप्रन की नारी । होकर मुदित उन्हों पर भारी ॥ २ ॥
हँसकर बोले वचन कन्हैया । देव यजन यह सन्मुख भैया ॥ ३ ॥
सुरपुर इच्छा कर द्विजराया । आँगीरस यह सत्र रचाया ॥ ४ ॥
तुम सब मिलकर वहाँ सिधाऊ । राम कृष्ण का नाम बताऊ ॥ ५ ॥
माँगहु जाय उन्होंसे ओदन । यह सुन गोप गये मख पावन ॥ ६ ॥
परे दंड समाँ महि सारे । दोउ कर जोरे वचन उचारे ॥ ७ ॥
सुनो वचन महि देव हमारे । कृष्ण राम प्रेरित हम सारे ॥ ८ ॥
गाय चरावन यहँ अविदूरा । आये राम कृष्ण यदुवीरा ॥ ६ ॥
यदि श्रद्धा हो द्विजो तुम्हारी । देवउ भात उन्हे भरि थारी ॥ १० ॥

दोहा- **धर्म मर्म तुम हे द्विजो, जानत भली प्रकार ।**
उन दोउन को इस समय, लागी क्षुधा अपार ॥ १८० ॥

चौ- मख दीक्षित यद्यपि तुम सारे । तदपि ग्राह्य सब अन्न तुम्हारे ॥ १ ॥
इस निषेधता में द्विजराया । केवल दोही यज्ञ बताया ॥ २ ॥
एक यज्ञ विच पशु बलि होई । बलि ते प्रथम न खावहिं कोई ॥ ३ ॥
अपर यज्ञ सौत्रामणि गाया । दूषित इनका अन्न कहाया ॥ ४ ॥
इनते अपर यज्ञ जे गाये । अन्न ग्रहण में दोष न आये ॥ ५ ॥
यों कह अन्न कीन्ह उन याचन । पर उत्तर दीन्हो नहि विप्रन ॥ ६ ॥
निज को ज्ञान वृद्ध वे मानत । ज्ञान दृष्टि तेहि बात बतावत ॥ ७ ॥
द्रव्य जो देशकाल के गाये । मंत्र तंत्र याज्ञिक कहलाये ॥ ८ ॥
सुर अग्नि व ब्रह्मायजमाना । इन सबमें प्रकटत भगवाना ॥ ६ ॥
परम ब्रह्म वे कृष्ण उदारा । माँगत ओदन ग्वालन द्वारा ॥ १० ॥

दोहा- **नर दृष्टि से किन्तु उन, जाना ना भगवान ।**
जो काया में स्थित सदा, सकें नहीं पहिचान ॥ १८१ ॥

चौ- पाछे होकर गोप निराशा । आये रामकृष्ण के पासा ॥ १ ॥
हँसकर वदत कृष्ण पुनि गोपन । जाउ पास तुम उन द्विज पत्निन ॥ २ ॥
आये राम व श्याम यहाँ पर । उनते कहो कथन यह जाकर ॥ ३ ॥
जेता तुम चाहोगे भोजन । करहिं प्रेम से वे अव अरपन ॥ ४ ॥
कृष्ण कथन सुन यों गोपाला । आये जहँ पर पत्नीशाला ॥ ५ ॥
सुन्दर सुन्दर वस्त्र व भूपण । द्विज पत्नी स्थित तन पर धारण ॥ ६ ॥
जाकर गोपन कीन्ह प्रणामा । भाखा कथन कृष्ण वलरामा ॥ ७ ॥
राम श्याम प्रेपित हम आये । वे समीप ही गाय चराये ॥ ८ ॥
आये वे घर ते अति दूरी । लागी क्षुधा उन्हें भरपूरी ॥ ९ ॥
उनके प्रति देवउ कुछ भोजन । भरकर थार अरी तुम ओदन ॥ १० ॥

दोहा- **कृष्ण आगमन श्रवणकर, विभ्रम सहित अपार ।**
अन्न चतुर्विध थार धरि, गइ जहँ जगदाधार ॥१८२॥

चौ- आई श्याम पास वह कैसे । सागर प्रति सरिता मिल जैसे ॥ १ ॥
पति पुत्रादिन कीन्ह मनाई। किन्तु एक उन मानि न राई ॥ २ ॥
कृष्ण वीच जिनका मन लागा । रोक सकत कोइ न अनुरागा ॥ ३ ॥
यमुना तट पर पहुँची सारी । देखे राम समेत मुरारी ॥ ४ ॥
कुंडल कंज सुसोभित काना । कुंचित केश कपोल सुहाना ॥ ५ ॥
लटकत गल बीचे वनमाला । मोरपंख सिर मुकुट विशाला ॥ ६ ॥
पीताम्वर धारी तनु श्यामा । मित्र स्कंध ऊपर कर वामा ॥ ७ ॥
अन्य हस्त से कमल भ्रमावत । प्रमुदित मंद मंद मुख हाँसत ॥ ८ ॥
अंग अंग की जिन छवि न्यारी । नटवर-वेष रचित वनवारी ॥ ९ ॥
अव तक प्रियतम की गुणलीला । कानन श्रवण करति मतिशीला ॥ १० ॥

दोहा- **प्रेम रंग में रंग दिया, निज मन को द्विज नार ।**
कीन्हा उनके प्रेम में, सरोवार इस वार ॥१८३॥

चौ- ले निज नयन मार्ग से भीतर । कीन्हा आलिंगन मन अन्दर ॥ १ ॥
अभिमति प्राज्ञ यथा नरराई । त्यों निज हिय की जलन मिटाई ॥ २ ॥
व्यक्त सर्व आशा द्विजनारी । आवत लखि जव विपिन विहारी ॥ ३ ॥
मम दर्शन हित सव ललचानी । तव हँसकर वोले इमि वानी ॥ ४ ॥
हम क्या स्वागत करें तुम्हारा । यहँ वैठो यहि कथन हमारा ॥ ५ ॥
जो तुम दरसन के हित आई । ये सव योग्य तुम्हारे ताँई ॥ ६ ॥

पावहिं वही मुझे निष्कामी । करहिं भक्ति जो मम दिनयामी ॥ ७ ॥
देह अपत्य द्रव्य निज नारी । आत्माध्या सहिते प्रिय सारी ॥ ८ ॥
समझहिं जो निज सही भलाई । जो मति मान सुपुरष दिखाई ॥ ९ ॥
वहि निज प्रियतम सम मोहि जाने । अन्य पुरुष मोहिं ना पहिचाने ॥ १० ॥

दोहा- **प्रेम तुम्हारे का करूँ, अभिनन्दन इस काल ।**
अब दरसन तुम कर चुकी, लोट जाउ मख शाल ॥१८४॥

चौ- पतिदेव हे ग्रहस्थ तुम्हारे । करहिं पूर्ण मख कारज सारे ॥ १ ॥
बोली द्विज पत्नी गुणखानी । विभुमत क्रूर वदहुँ इमि वानी ॥ २ ॥
निज भ्राता परिवार तजाई । दासी बन हम सब यहँ आई ॥ ३ ॥
सब श्रुति नाथ वचन यों गावे । एक बार हरि पास सिधावे ॥ ४ ॥
आवत वापिस नहिं संसारा । अब हमको नहिं अन्य सहारा ॥ ५ ॥
पति आदेश त्याग हम सारी । आई चरण शरण भवहारी ॥ ६ ॥
मात पिता भ्राता परिवारी । करहिं न अब हमको स्वीकारी ॥ ७ ॥
इस कारण अब शरण तुम्हारी । राखउ तजउ न हमें मुरारी ॥ ८ ॥
यह सुन वचन कहे भगवाना । करहिं तुम्हार विबुध भी माना ॥ ९ ॥
पति बन्धू पुत्रादिक सादर । राखहिं मान न करहिं अनादर ॥ १० ॥

दोहा- **प्रेम वृद्धि सुख हेतु जग, जेते मेरे भक्त ।**
उन्हें अरी वह चाहिए, अंग संग ना युक्त ॥१८५॥

चौ- करे किन्तु मन संग हमारा । मम बीचे मन लगा तुम्हारा ॥ १ ॥
अचिर काल बाद तुम मोहीं । पावहु वचन कहु यह तोहीं ॥ २ ॥
यों सुन कृष्ण वचन द्विजनारी । मख शाला आई मिल सारी ॥ ३ ॥
देखि न दोष दृष्टि पति तेही । कीन्ही मख पूरण उन लेही ॥ ४ ॥
उन बीचे यक ब्राह्मण नारी । रोकी पति बान्धव परिवारी ॥ ५ ॥
निज घर पर उसने भगवाना । कीन्ह यथा श्रुत निज हिय ध्याना ॥ ६ ॥
तजी देख भव बन्धनहारी । मिली ज्योति उन बीच मुरारी ॥ ७ ॥
कीन्ह समर्पित जो द्विज नारी । वह भोजन ले विपिन विहारी ॥ ८ ॥
पहले सारे गोप जिमाये । पाछे भोजन वे प्रभु पाये ॥ ९ ॥
यों नर वपुधारी भगवाना । निज सौंदर्य वचन परमाना ॥ १० ॥

दोहा- **आनन्दित कीन्हे सभी, गैया गोपी ग्वाल ।**
स्वयं प्रेम रस चाख कर, मुदित भये वृज पाल ॥१८६॥

चौ- समाचार इत ब्राह्मण पाये । कृष्ण स्वयं भगवान बताये ॥ १ ॥
अब तो वे निज मन पछताये । मन विचार अनेकनि आये ॥ २ ॥
राम व श्याम स्वयं भगवाना । उन आदेश नहीं हम माना ॥ ३ ॥
यह अपराध कियो हम भारी । वे जगदीश्वर नर अवतारी ॥ ४ ॥
यह नारि हरि प्रेम अधीना । हम सब भगवत प्रेम विहीना ॥ ५ ॥
जनम वृथा हम योंहि गँवाया । व्रत विद्या कुल क्रिया नसाया ॥ ६ ॥
धृक धृक हमको बारम्बारा । श्रीपति प्रति मन विमुख हमारा ॥ ७ ॥
हरिमाया का काम निराला । मोहित करहिं महा मुनिपाला ॥ ८ ॥
मानव गुरु हम विप्र कहाये । सत स्वारथ प्रति तदपि भुलाये ॥ ९ ॥
हरि बीचे इन नारिन भावा । गेह मृत्यु जिन पाश नशावा ॥ १० ॥

दोहा- **संस्कार द्विज जाति का, भयउ न इनका खास ।**
गुरुकुल बीचे भी नहीं, पायो इन्हें निवास ॥१८७॥

चौ- ये तप शौच व क्रिया विहीना । तदपि कृष्णपद भक्ति अधीना ॥ १ ॥
धन्य भाग्य इनके हम माना । पाई सहज सरल भगवाना ॥ २ ॥
हम निज गेह देख मदमत्ता । कीन्ही तदपि कृपा भगवन्ता ॥ ३ ॥
भेज गोप गण द्वार हमारे । किय सचेत उन वचनन द्वारे ॥ ४ ॥
पूर्ण काम स्वयं भगवाना । अन्न याचना केर बहाना ॥ ५ ॥
जिन पद रमा भजहिं तजि अन्यन । करहिं अन्य की किमिवह याचन ॥ ६ ॥
यह जन मोहिनी उनकी माया । अन्य प्रयोजन कोई न पाया ॥ ७ ॥
देशकाल धन धर्म कृशानू । देव यज्ञ रित्विज यजमानू ॥ ८ ॥
मंत्र तंत्र की पद्धति जेती । दीखत कृष्णरूप में बेती ॥ ९ ॥
यदु कुल बीच स्वयं भगवाना । आये श्रवण किये हम काना ॥ १० ॥

दोहा- **तो भी हम उनको अरे, सकै नहीं पहचान ।**
किन्तु धन्य हम आज सब, हम सब भाग्य न आन ॥१८८॥

चौ- प्राप्त किये हम ईदृशि नारी । जिन संगति ते मति हमारी ॥ १ ॥
स्थिर भई भक्ति बीच भगवाना । हम सौभाग्य परम यह माना ॥ २ ॥
हे प्रभु आप अचिन्त्य अजन्मा । हम सब मूढ़ फँसे भव कर्मा ॥ ३ ॥
जिन माया मोहित हम सारे । कर्म मार्ग भटके अति भारे ॥ ४ ॥
उन भगवान कृष्ण के काजू । करें प्रणाम सभी हम आजू ॥ ५ ॥
आद्य पुरुष वे जगदाधारा । करहिं क्षमा अपराध हमारा ॥ ६ ॥

यों अपराध क्षमा करवाये । निज कृत्यन पर अति पछताये ॥ ७ ॥
लगी लालसा दर्शन काजू । हो भयभीत कंस द्विजराजू ॥ ८ ॥
अच्युत दरसन काज न आये । कर भक्ति भव ताप नसाये ॥ ९ ॥
बोले श्री शुकदेव कृपाला । आगे और सुनो नरपाला ॥ १० ॥

दोहा- **राम सहित यों कृष्ण वहँ, कीन्हे चरित अपार ।**
इन्द्र भाग उद्यम कृत, लखे गोप इक बार ॥१८९॥

चौ- **सर्वात्मा सर्वज्ञ कृपाला । नन्दादिक ते पूछत हाला ॥ १ ॥**
पिता मुझे अति विभ्रमकारी । यह मख किनका करत प्रचारी ॥ २ ॥
इसका फल अरु कारण ताता । किन साधन द्वारा यह जाता ॥ ३ ॥
यह सब कारण मुझे बताऊ । किस द्वारा प्रचलित यह गाऊ ॥ ४ ॥
तुम मम जनक सुवन मैं तेरो । श्रवण काज उत्सुक मन मेरो ॥ ५ ॥
सर्वात्मा साधुन का कोई । कृत्य गोप्य कबहूँ ना होई ॥ ६ ॥
साधु मित्र व सम अरि रहिता । वदहिं न वचन कबहुँ वे अहिता ॥ ७ ॥
जान अजान करहिं नर काजू । प्रथम श्रेष्ठ फल वाद अकाजू ॥ ८ ॥
क्रियायोग यह शास्त्र प्रधाना । वा लौकिक तुमने यह माना ॥ ९ ॥
यह सब कहो पिता समझाई । यों सुन वदत नंद वृजराई ॥ १० ॥

दोहा- **हरिसुरपति प्रिय मूरति, मेघ कृष्ण तुम जान ।**
प्राणिन प्रति वे मेघ गण, जल बरसात महान ॥१९०॥

चौ- हम सब उन सुरपति भगवाना । पूजहिं प्रिय सुत यज्ञ विधाना ॥ १ ॥
यज्ञ वस्तु हे सुत जग जेती । होवत वृष्टि नीर से वेती ॥ २ ॥
पुनि उस होम शेष के द्वारा । त्रीवर्गी हित करें गुजारा ॥ ३ ॥
धर्म प्रधागत मनुज अभागी । काम द्वेष लोभन परित्यागी ॥ ४ ॥
वह शुभ फल कबहूँ नहि पावे । अब नृप प्रति शुक वचन सुनाये ॥ ५ ॥
नन्द व गोपन के वच सुनकर । सुरपति प्रति कुछ क्रोध दिखाकर ॥ ६ ॥
बोले वचन तदा भगवाना । हम तो पिता यही मन माना ॥ ७ ॥
जीव कर्म वश जीअहिं सारे । सभी कर्म वश मरहिं विचारे ॥ ८ ॥
सुख दुख तथा करम वश पावे । कारण अन्य न हमें लखावे ॥ ९ ॥
फलदाता ईश्वर यदि कोई । कर्ता को फल देवत सोई ॥ १० ॥

दोहा- **कर्महीन ऊपर पिता, उसका नहीं प्रभुत्व ।**
निज कर्मन का फल सदा, भोगत यह सर्वस्व ॥१९१॥

चौ- तो हमको सुरपति की ताता । कोई जरूरत ही नहीं जाता ॥ १ ॥
प्रथम जन्म कर्मन अनुसारा । मिलहिं कर्मफल इस संसारा ॥ २ ॥
उन कर्मन को मेटन काजू । नहीं समर्थ कभी सुरराजू ॥ ३ ॥
यह मानव निज प्रकृति अधीना । निज सुभाउवश कर्मन लीना ॥ ४ ॥
पावहिं उच्च नीच तनु जीवा । त्यागहिं निज तनु करमनसींवा ॥ ५ ॥
शत्रु व मित्र व जगत उदासी । निज कर्मन अनुसार प्रकासी ॥ ६ ॥
कर्म ही गुरु कर्म ही ईश्वर । कर्म विना रहहिं न पलभर ॥ ७ ॥
याते प्रथम कर्म अनुसारी । निज वर्ण व आश्रम अनुहारी ॥ ८ ॥
करें धर्म को पालन ताता । तबहिं कर्म हो शुभ फलदाता ॥ ९ ॥
चलहिं जीविका जिसके द्वारा । तासु इष्ट वहि सभी प्रकारा ॥ १० ॥

दोहा- **त्याग विवाहित स्वामी को, जिमि व्यभिचारिणि नार।**
शान्ति लाभ पावत नहीं, सेवा कर पति जार ॥१९२॥

चौ- त्यों निज वृत्ति चलावन हारे । इष्टदेव को त्यागन वारे ॥ १ ॥
करहिं जो अपर की पूजन । मिले न उनका सुख मनभावन ॥ २ ॥
वेद पाठ द्विजकर्म प्रधाना । क्षत्रिन कर्म प्रजा परित्राना ॥ ३ ॥
वार्ता वृत्ति वैश्यवर मानी । द्विजसेवा शूद्रन सन्मानी ॥ ४ ॥
वैश्यवृत्ति चातुर्विध कक्षा । कृषि व्यापार व्याज गौ रक्षा ॥ ५ ॥
स्थिति उत्पत्ति अन्त जगत का । सत्वादिक गुण कारण जिसका ॥ ६ ॥
रज द्वारा हो विश्व प्रकाशित । बरसावत घन जल रज प्रेरित ॥ ७ ॥
होवत पालन मेघन द्वारा । नहीं इन्द्र का यहाँ सहारा ॥ ८ ॥
नहीं देश पुर ग्राम हमारे । वन गिरि के हम रहे सहारे ॥ ९ ॥
इन्द्र याग हित वस्तु तुम्हारी । जो एकत्र यहाँ पर सारी ॥ १० ॥

दोहा- **हम इनके द्वारा करें, विप्र धेनु गिरियाग।**
तजो आज से हे पिता, सुरपति मख अनुराग ॥१९३॥

चौ- रचकर पाक अनेक जरूरी । हलवा खीर अपूप व पूरी ॥ १ ॥
सब गोरस संग्रह कर आजू । करें हवन बुलवा द्विजराजू ॥ २ ॥
गोधन अन्न दक्षिणा द्वारा । करहीं हम विप्रन सत्कारा ॥ ३ ॥
पतित अन्य चंडाल व श्वाना । खावहिं प्रेम सहित यहँ खाना ॥ ४ ॥
गोधन हेतु खिलावे चारा । पाछे इन वस्तुन के द्वारा ॥ ५ ॥
गिरिपति को हम भोग लगावे । नाना भाँतिन भेट चढ़ावें ॥ ६ ॥

खावउ पाछे खूब प्रसादा । पहिरो वस्त्र सुशोभित सादा ॥ ७ ॥
निज तनु सुन्दर भूषण धारो । चन्दन तिलक सीस पर सारो ॥ ८ ॥
गिरि गोवर्धन गौ द्विज आगी । करो परिक्रम इन अनुरागी ॥ ९ ॥
यह मम मत लागहि यदि नीका । करो काम यहि सुखद तरीका ॥ १० ॥

दोहा- **यह गौ द्विज गिरि मख मुझे, अति प्रिय लागत तात ।**
बोले श्री शुकदेव मुनि, सुनु कुरु कुल विख्यात ॥१६४॥

चौ- यों सुरपति मद भंजनहारा । सुनकर वचन कृष्ण मुख द्वारा ॥ १ ॥
नन्दादिक कीन्हो वहि कामा । गाया वचन कृष्ण सुखधामा ॥ २ ॥
स्वस्ति वाचन प्रथम बचावा । याग द्रव्य गिरि भेट चढ़ावा ॥ ३ ॥
विप्रन को भोजन करवावा । गोधन प्रति तृण बहुत चरावा ॥ ४ ॥
कीन्हो अब गोधन सब आगे । शकटारूढ स्वलंकृत सागे ॥ ५ ॥
नन्दादिक ग्वाला सुनुराई । कृष्ण चरित गावत हर्षाई ॥ ६ ॥
गिरि समीप आकर बृजवाला । कीन्ह परीक्रम सह श्रुति पाला ॥ ७ ॥
उन विश्वास दिलावन काजू । धरकर अन्य रूप बृजराजू ॥ ८ ॥
प्रकट भये उस गिरि के ऊपर । बोले वचन बहुत हर्षाकर ॥ ९ ॥
मैं गिरिराज सुनो तुम ग्वाला । प्रकटा यह लख भक्ति विशाला ॥ १० ॥

दोहा- **यों कह आरोगन लगे, सब साहित गिरिनाथ ।**
तदा कृष्ण निज रूप को, बृजवासिन के साथ ॥१६५॥

चौ- भक्ति सहित उन कीन्ह प्रणामा ॥ बोले वचन कृष्ण अभिरामा ॥ १ ॥
देखो तुम आश्चर्य अपारा । देख याग गिरिराज हमारा ॥ २ ॥
करकें कृपा हमारे ऊपर । प्रकट भये ये यहँ पर आकर ॥ ३ ॥
ये गिरिपति चाहत वपु जैसो । कर सकते वपु धारण वैसो ॥ ४ ॥
वनवासी इनका अपमाना । करहीं वे दुख पावत नाना ॥ ५ ॥
आओ हम निज गोधन काजू । करें प्रणाम इन्हीं गिरिराजू ॥ ६ ॥
यों सब कृष्ण प्रेरणा पाकर । वृद्ध गोप नन्दादिक मिलकर ॥ ७ ॥
द्विज समेत गोधन गिरिराजू । पूजे विधिवत सकल समाजू ॥ ८ ॥
यो गिरि गौ द्विज याग रचाये । उन हरि संग सभी बृज आये ॥ ९ ॥
बोले व्यास पुत्र मुनिराया । इन्द्र याग जब बन्द कराया ॥ १० ॥

दोहा- **निज पूजन लखि बन्द अब, सुरपति क्रुधित अपार ।**
उन गोपन पर हो गये, जिनके कृष्ण अधार ॥१६६॥

चौ- सुरपति को जिन पद का भारी । रहा घमंड सदा यशहारी ॥ १ ॥
यह तो मानत यही सदा ही । मम समान ईश्वर कोउ नाहीं ॥ २ ॥
बुलवाये संवर्तक नामा । मेघ समूह प्रलय जिन कामा ॥ ३ ॥
सुरपति उनते वचन सुनावा । श्रीमद गोपन पर अति छावा ॥ ४ ॥
कीन्हो इन मेरो अपमाना । नर कृष्णाश्रित हो मनमाना ॥ ५ ॥
मंद बुद्धि नर जिमि महि ऊपर । पार सिधावन इस भव सागर ॥ ६ ॥
तजकर ब्रह्म ज्ञान का साधन । कर्मयज्ञ से चाहत जावन ॥ ७ ॥
यह वाचाल कृष्ण अभिमानी । समझत निज को पंडित ज्ञानी ॥ ८ ॥
अब तुम सब वृन्दावन जाऊ । गोपन श्रीमद तुरत नसाऊ ॥ ९ ॥
करउ तुरंत पशुन संहारा । देखूँ कौन बचावन वारा ॥ १० ॥

दोहा- **ऐरावत असवार हो, संग मरुत उनचास ।**
चलूँ वहाँ मैं भी अरे, करूँ नन्दवृज नास ॥१९७॥

चौ- यों पुरुहुत अनुमति पा राजन । भये मुक्त बन्धन सब घन गन ॥ १ ॥
बड़े वेग से अब वे आये । झटपट वृज ऊपर चढ़ि धाये ॥ २ ॥
बरसायो जल मूसल धारा । भये दुखी नर जासु अपारा ॥ ३ ॥
चमकन लगी तड़ित चहुँ ओरा । टकराये घन कर अति सोरा ॥ ४ ॥
प्रेरित वात प्रचंड अपारी । बरसन लगी शिला हिम भारी ॥ ५ ॥
दल के दल बादल वहँ छाये । खंभ समाँ पय धार गिराये ॥ ६ ॥
भर गई वृज भूमि चहुँ नीरा । दीखत उच्च न नीच अखीरा ॥ ७ ॥
भई वर्षा इमि मूसलधारा । झंझावात झपाट अपारा ॥ ८ ॥
अब सब वृज पशु ठिठुरन लागे । काँपत तनु उस पय हिम आगे ॥ ९ ॥
ग्वाल बाल गोपी अतिभारी । व्याकुल भई शीत की मारी ॥ १० ॥

दोहा- **छिपा लिये निज उर विषै, सबने अपने बाल ।**
शरण गये भगवान की, अब सब गोपी ग्वाल ॥१९८॥

चौ- पहुँचे चरण शरण भगवाना । दुःखित गोपी ग्वाल महाना ॥ १ ॥
सब मिलकर कर यों वचन उचारे । सुनो कृष्ण हे परम हमारे ॥ २ ॥
एक मात्र तुमही वृजत्राता । स्वामी एक मात्र तुम ताता ॥ ३ ॥
कीन्हो इन्द्रकोप बड़ भारी । तुम बिन रक्षा हो न हमारी ॥ ४ ॥
वर्षा हिम पीड़ित लखि भारी । हरि करतूत देख हरि सारी ॥ ५ ॥
बोले वचन भक्त भयहारी । त्यागो भय सब वृज नरनारी ॥ ६ ॥

वासवमख भंजन हम कीन्हा । उसका फल सुरपति यह दीन्हा ॥ ७ ॥
वृज नासन हित हिम चहुँ ओरा । वात प्रचंड सहित घनघोरा ॥ ८ ॥
वरसावत पय काल विहीना । कियो काम यह सुर आधीना ॥ ९ ॥
अब मैं आत्मयोग ते येहूँ । भली भाँति प्रत्युत्तर देहूँ ॥ १० ॥

दोहा- **लोकपाल निज को कहे, मूरखता वश येह ।**
श्रीमद वैभव हरण कर, हरूँ अविद्या नेह ॥१९९॥

चौ- सुर तो होवत सत्व प्रधाना । होय न निज पद धन अभिमाना ॥ १ ॥
दुष्ट देव तो सत्व विहीना । हरों गर्व इन रखो यकीना ॥ २ ॥
यह सारा वृज ही मम आश्रित । यह मोरे द्वारा ही स्वीकृत ॥ ३ ॥
एक मात्र मैं ही परित्राता । तजकर मोंहि न अन्य दिखाता ॥ ४ ॥
अब मैं योग मार्ग के द्वारा । करूँ त्राण का साधन सारा ॥ ५ ॥
रक्षा संतन ही व्रत मेरा । पालन तासु प्राप्त अब वेरा ॥ ६ ॥
यों कह कृष्ण भक्त भयहारी । खेल-खेल कर कौतुक भारी ॥ ७ ॥
गिरि गोवर्धन एक ही हाथा । लियो उठाय कृष्ण वृजनाथा ॥ ८ ॥
बालक जिमि छत्राक उखारी । धारण कियो तथा गिरी भारी ॥ ९ ॥
बोले कृष्ण अम्ब हे ताता । अरे गोप गण सुनु मम बाता ॥ १० ॥

दोहा- **सुख पूर्वक गोधन सहित, इस गिरि गर्त सिधाउ ।**
मम करते गिरि गिरन का, भय मत मन में खाउ ॥ २००॥

चौ- वर्षा वात भयातुर भारी । सब विधि रक्षा करूँ तुम्हारी ॥ १ ॥
यो सुन वचन कृष्ण के सारे । गोवर्धन गिरि गर्त सिधारे ॥ २ ॥
पाई अब उन जीवन आशा । लागी नहि वहँ भूख पिपासा ॥ ३ ॥
देखत रहे सभी वृजवासी । दिवस सात तक हरि अविनासी ॥ ४ ॥
निज कर को ऊपर धर भारी । विचलित तनिक न भये गिरिधारी ॥ ५ ॥
हरि का लखि यों योग प्रभावा । सुरपति मन अति विस्मय आवा ॥ ६ ॥
निज संकल्प भृष्ट जब देखा । किये निवारण मेघ विशेषा ॥ ७ ॥
अभ्रहीन इन देख अकासा । कहे वचन हरि हँसे जरा सा ॥ ८ ॥
गोधन तिय बालक संग दासा । निकलउ वहि अब त्यागऊ त्रासा ॥ ९ ॥
वर्षा वात बन्द भई सारी । अभ्रहीन नभ भयो अपारी ॥ १० ॥

दोहा- **स्वल्प नीर सरिता सभी, वहने लगी किनारि ।**
उदय भयो नभ उपरे, देखो अरे तमारि ॥२०१॥

चौ- यों सुन गोधन सहित गुवाला । स्त्री वृद्धादिक सब बाला ॥ १ ॥
सामग्री सह शकट चढ़ाये । निकसे शैल गर्त वहि आये ॥ २ ॥
धरा शैल अब प्रभु निज स्थाना । देख चरित यह सब सुखमाना ॥ ३ ॥
प्रेम सहित अब सब वृजवासी । किय आलिंगन हरि अविनासी ॥ ४ ॥
स्नेह समेत सभी वृजबाला । पूजन लागी कृष्ण कृपाला ॥ ५ ॥
तिलक कीन्ह दधि अक्षत द्वारा । दियो शुभाशिप भली प्रकारा ॥ ६ ॥
नन्द यशोदा रोहिणि रामा । हिय लगाय लिये घनश्यामा ॥ ७ ॥
दिये शुभाशिप मंगल कारी । प्रेम समेत नयन जल जारी ॥ ८ ॥
आये उसी समय सुर अम्बर । सिद्ध व साध्य व चारण किन्नर ॥ ९ ॥
भये मुदित अति स्तोत्र उचारी । कुसुम वृष्टि हरि ऊपर डारी ॥ १० ॥

दोहा- **सुरपुर बीचे सुरन ने, नौबत शंख बजाय ।**
प्रेम सहित गंधर्व गण, कृष्ण चन्द्र गुण गाय ॥ २०२ ॥

चौ- पाछे वे हरि राम समेता । गोपन वेष्टित चले निकेता ॥ १ ॥
उन अनु चली गोपिका सारी । गावत यश गोवर्धन धारी ॥ २ ॥
जो निज हिय आकर्पित कारी । प्रभु पद प्रेम बढ़ावन हारी ॥ ३ ॥
हरि लीला गावत हरसाई । प्रेम सहित वे भी वृज आई ॥ ४ ॥
अद्भुत कर्म देख यों भारी । विस्मित होकर गोप अपारी ॥ ५ ॥
नन्द समीप गये सब ग्वाला । बोले वचन सुनौ वृजपाला ॥ ६ ॥
जितने कर्म कीन्ह यह बालक । है वे अद्भुत और अलौकिक ॥ ७ ॥
इसका जन्म सुनौ नंदराया । हम ग्रामीण वंश किमि पाया ॥ ८ ॥
गणपति जैसे कमल उठावे । किन्तु परिश्रम यह ना आवे ॥ ९ ॥
त्यों वय सप्तवर्प सुत तेहू । धारा एक हस्त गिरि येहू ॥ १० ॥

दोहा- **बलशाली अति पूतना, आई बनकर काल ।**
प्राणण सह स्तन पी गयो, मीलित नयन य बाल ॥ २०३॥

चौ- सोवत शकट लात इन मारी । गिरा दूर जा महि पर भारी ॥ १ ॥
इन सबका कारण बतलाऊ । भई शंक हमको नंदराऊ ॥ २ ॥
एक वर्प का पुत्र तुम्हारा । तृणावर्त रजनीचर द्वारा ॥ ३ ॥
नभ पथ ऊपर जबै उड़ावा । तब इसने वह तुरत नसावा ॥ ४ ॥
कीन्ही जब यह माखन चोरी । बाँधा अखल मात सजोरी ॥ ५ ॥
यमलार्जुन बीचे यह आवा । निज भुज ने इन मही गिरावा ॥ ६ ॥

राम व गोप सहित इक बारा। वत्स चरावत पुत्र तुम्हारा ॥ ७ ॥
बनकर वत्स दैत्य इक आवा। दे कपित्थ पर मार गिरावा ॥ ८ ॥
चीरी तुण्ड बकासुर भारी। मारा धेनुक सह परिवारी ॥ ९ ॥
कीन्हो तात विपिन सुखकारी। जो परिपक्व फलान्वित भारी ॥ १० ॥

दोहा- **बलदाऊ के हाथ से, कीन्हो नष्ट प्रलम्ब।**
गैया गोप बचा लियो, दावानल अविलम्ब ॥ २०४ ॥

चौ- अति विष युत जो कालिय नागा। इसके भयते ह्रद तज भागा ॥ १ ॥
यमुना जल अमृत मय कीन्हा। पुत्र तुम्हारा यह अति नन्हा ॥ २ ॥
अहो नन्द जो पुत्र तुम्हारा। इस पर दुस्तयज प्रेम हमारा ॥ ३ ॥
हम सब पर भी प्रेम अपारा। राखत वृजपति पुत्र तुम्हारा ॥ ४ ॥
कहँ ये सप्त बरिस वय धारी। कहँ गोवर्धन गिरि अति भारी ॥ ५ ॥
दिवस सप्त यावत निज हाथा। धारण कीन्ह अरे वृजनाथा ॥ ६ ॥
इस कारण इस सुत पर भारी। होरहि शंका सुनौ हमारी ॥ ७ ॥
बोले नन्द सुनो मम बानी। कह गय वचन गर्ग मुनि ज्ञानी ॥ ८ ॥
सुनकर शंका दूर तुम्हारी। हो अहिं तबहिं अरे यह सारी ॥ ९ ॥
अरे नन्द यह पुत्र तुम्हारा। प्रति युग बिच लेवत अवतारा ॥ १० ॥

दोहा- **कृत स्वीकृत प्रतियुग विषै, श्वेत अरुण रंगपीत।**
कृष्ण वर्ण अब यह हुआ, इन सबते विपरीत ॥ २०५ ॥

चौ- सुनौ नन्द यह सुवन तुम्हारा। भयो कबहुँ वसुदेव अगारा ॥ १ ॥
इस रहस्य के जानन हारे। वासुदेव कह इसे पुकारे ॥ २ ॥
गुण अरु कर्मन के अनुसारी। जानउ इनके नाम अपारी ॥ ३ ॥
इनके नाम सभी हम जानत। मानव नहीं इन्हें पहचानत ॥ ४ ॥
यह कल्याण तुम्हारा करहीं। तुम सबके संकट यह हरहीं ॥ ५ ॥
प्रथम अराजकता जब आई। दस्युन लूट खसोट मँचाई ॥ ६ ॥
अरे नन्द तब यहि सुत तेरा। सब साधुन के कष्ट निवेरा ॥ ७ ॥
करहिं कृष्ण से प्रेम अपारा। होन पराभव उन अरि द्वारा ॥ ८ ॥
गुण कीरति शोभा के द्वारा। नारायण सम पुत्र तुम्हारा ॥ ९ ॥
करो न अचरज इनके करमन। यों कह गये गर्ग मुनि सज्जन ॥ १० ॥

दोहा- **गर्ग गीत इमि नन्द मुख, सुन गत विस्मित ग्वाल।**
निज मन होकर मुदित अति, पूजे नन्द सवाल ॥ २०६ ॥

चौ- निज मख भङ्ग इन्द्र जब देखा। वृज पर कीन्ही वृष्टि विशेषा ॥ १ ॥
वज्रपात हिम की बौछारा। झंझावात प्रचंड अपारा ॥ २ ॥
गो गोपाल तिया वृज भारी। दुःखित देख तदा दुख हारी ॥ ३ ॥
दया पूरवक निज कर द्वारा। गिरि गोवर्धन तुरत उखारा ॥ ४ ॥
धारा निजकर छत्र समाना। की वृज रक्षा दया निधाना ॥ ५ ॥
सुरपति मद नाशक गौस्वामी। रहे मुदित हम पर दिनयामी ॥ ६ ॥
बोले मुनि शुकदेव कृपालू। आगे गाथा सुनो नृपालू ॥ ७ ॥
धारा जब गोवर्धन हाथा। कीन्ही वृज रक्षा वृजनाथा ॥ ८ ॥
अति लज्जित गौ लोक तजाये। सुरभी सह सुरपति वहँ आये ॥ ९ ॥
कृष्ण समीप गये एकान्ता। प्रभुपद सीस धरा शचिकान्ता ॥ १० ॥

दोहा- **कर जोरे सन्मुख खड़े, नष्ट घमंड सुरेश।**
कर नीचे निज नयन वे, बोले सुनो वृजेश ॥ २०७ ॥

चौ- रज तम रहित स्वरूप तुम्हारा। शुद्ध सत्वमय शान्त अपारा ॥ १ ॥
गुण प्रवाह ते होत प्रतीता। यह प्रपंच मायामय रीता ॥ २ ॥
यह प्रपंच माया मय स्वामी। नहिं तुम्हार विच अन्तरयामी ॥ ३ ॥
पुनि लोभादिक आवहि केहा। समझहु रचित प्रपंच न जेहा ॥ ४ ॥
धर्म त्राण हित तव अवतारा। खल निग्रह हित दंड तुम्हारा ॥ ५ ॥
तुमही जगत पिता गुरु ईश्वर। दंड उत्पात्तकाल अति दुस्तर ॥ ६ ॥
निज इच्छा निर्मित तनु ताता। साधू सन्तन के परित्राता ॥ ७ ।
मम समान मानिन मद तोरन। करते चरित अपार सुहावन ॥ ८ ॥
मम सदृश जे बड़ अज्ञानी। जो निज को ही ईश्वर जानी ॥ ९ ॥
आवत काल अभय लख तोही। सत्पथ पर चालत मद मोही ॥ १० ॥

दोहा- **दंड व्यवस्था नाथ तव, दुष्टन निग्रह काज।**
श्री मद में मदमत्त मैं, कीन्ह महा अकाज ॥ २०८ ॥

चौ- क्षमहू यह अपराध हमारा। शक्ति प्रभाव अभिज्ञ तुम्हारा ॥ १ ॥
करो कृपा अब मो पर ऐसी। तव पद मति विपरीत न वैसी ॥ २ ॥
अहो अधोक्षज तव अवतारा। बाढ़ा महि पर भार अपारा ॥ ३ ॥
भयऊ उन दुष्टन वध काजू। पालन हेतू संत समाजू ॥ ४ ॥
करुँ पदवन्दन नाथ तुम्हारे। वासुदेव हे कृष्ण खरारे ॥ ५ ॥
हे सात्वतपति पुरुष पुराना। वन्दो चरणकमल भगवाना ॥ ६ ॥

निज इच्छा निर्मित तनु जाना । नहीं कर्मवश जीव समाना ॥ ७ ॥
ज्ञानस्वरूप विशुद्ध शरीरा । रहऊ आदि व मध्य अखीरा ॥ ८ ॥
सर्वबीज सब कारण स्वामी । सर्वभूतपति अन्तरयामी ॥ ९ ॥
तीव्रमन्यु श्रीमद मैं ताता । विहत यज्ञ लखि हे वृजताता ॥ १० ॥

दोहा- **वृजनाशन के कारने, कीन्हों मैं यह काम ।**
करो क्षमा अपराध मम, अब तुम प्रभो तमाम ॥ २०९ ॥

चौ- अति अनुग्रह मोपर तुम कीन्हा । जो श्रीमद मेरा हर लीन्हा ॥ १ ॥
तुमही ईश्वर गुरू हमारे । आवा शरण हे नाथ तुम्हारे ॥ २ ॥
सुरपति के सुनकर इमि वैना । बोले हँसकर करुणाऐना ॥ ३ ॥
सुरपुर श्री पाकर तुम भारी । निज उर धारा मान अपारी ॥ ४ ॥
अनुग्रह हेतु शचीश तुम्हारे । कीन्हो यज्ञ भंग मम द्वारे ॥ ५ ॥
श्रीमद अन्ध बुद्धि नर कबहू । दंडपाणि मोहीं नहि लखहूँ ॥ ६ ॥
जिस पर अनुग्रह होय हमारी । प्रथम नसऊँ उस संपत सारी ॥ ७ ॥
अब निजपुरी पुरन्दर जाऊ । कबहुँ घमंड नहीं मन लाऊ ॥ ८ ॥
हो कल्याण तुम्हारा मघवन । करो पाल ना मम अनुशासन ॥ ९ ॥
भूलो मत अधिकार तुम्हारा । करो निरन्तर ध्यान हमारा ॥ १० ॥

दोहा- **निज सन्तानन सहित अब, कामधेनु वहँ आय ।**
गोप रूप ईश्वर चरण, वन्दन कर हर्षाय ॥ २१० ॥

चौ- लोकनाथ हे कृष्ण कृपालू । हे विश्वात्मन दीनदयालू ॥ १ ॥
हमको सुरपति मारन चाहा । पय बरसाकर नाथ अथाहा ॥ २ ॥
तुम समान पाकर हम स्वामी । भई सनाथ हे अन्तरयामी ॥ ३ ॥
तुम ही जगपति इन्द्र हमारे । रहती हम सब आप सहारे ॥ ४ ॥
गौ द्विज साधू संत समाजू । इन सबकी उन्नति के काजू ॥ ५ ॥
अब तुम बनो इन्द्र वृजराजू । विधि प्रेरित आई हम आजू ॥ ६ ॥
इन्द्र रूप सुनु कथनु हमारा । करहीं हम अभिषेक तुम्हारा ॥ ७ ॥
कर सुरभी इति विनय बहूता । ले निज क्षीर तदा अतिपूता ॥ ८ ॥
तेहिकाल ऐरावत आवा । नभ गंगाजल सूँड भरावा ॥ ९ ॥
कामधेनु सुरपति अब दोऊ । किय अभिषेक कृष्ण सिर सोऊ ॥ १० ॥

दोहा- **अब शचिपति ने कृष्ण का, राखा गोविन्द नाम ।**
आगत वहँ जे संतगण, वे भी मुदित तमाम ॥ २११ ॥

चौ- नारदादि तुम्वरु गंधर्वा । विद्याधर चारण सिध सर्वा ॥ १ ॥
करने लागे हरि यश गाना । नृत्य अप्सरा कीन्हेउ नाना ॥ २ ॥
देव मुख्य कर विनय अपारी । कुसुम वृष्टि हरि ऊपर डारी ॥ ३ ॥
लोक सुखी भये परम अपारा । गौ वरसावत सव पय धारा ॥ ४ ॥
क्षीरादिक रसवाहिनि सरिता । मधुस्रव तरु भए ऋतु विपरीता ॥ ५ ॥
विन जोते अरु विना बुहाई । अन्न औषधि महि प्रकटाई ॥ ६ ॥
प्रकटी सव मणि परवत वाहिर । यों अभिषिक्त कृष्ण लख नृपवर ॥ ७ ॥
क्रूर जीव निज तज क्रूराई । रहने लगे मित्र की नाँई ॥ ८ ॥
यों कर वे अभिषेक वृजेशा । ले अनुमति सुर सहित सुरेशा ॥ ९ ॥
निज अमरावतिपुरी सिधाये । मुनि गण भी निज आश्रम आये ॥ १० ॥

दोहा- **वोले शुक हे नृपतिवर, निराहार इक वार ।**
कीन्हो व्रत एकादशी, नन्द सहित परिवार ॥ २१२ ॥

चौ- नन्दराय हरि का कर पूजन । कला मात्र द्वादशी लखि निजमन ॥ १ ॥
वेला असुर नहीं उन जानी । अरुणोदय पूरव नन्द ज्ञानी ॥ २ ॥
गये स्नान हित यमुना ऊपर । वैठे जव वे जल के भीतर ॥ ३ ॥
वरुण दूत तव नन्द गहाये । वरुण समीप तुरत पहुँचाये ॥ ४ ॥
नन्दहिं देख अलक्षित सारे । कृष्ण कृष्ण इति राम पुकारे ॥ ५ ॥
सुन उनके वच कृष्ण कृपाला । गये वरूण के धाम विशाला ॥ ६ ॥
आवत हरि जव जलपति देखा । निज मन में अति हर्ष विशेषा ॥ ७ ॥
कर पूजन नाना उपचारा । वद्ध कराञ्जलि वचन उचारा ॥ ८ ॥
कर दरसन तव जगत विधाता । आज सफल मम यह तनु जाता ॥ ९ ॥
तव पद पंकज पूजन हारे । मोक्षधाम वे तुरत सिधारे ॥ १० ॥

दोहा- **वन्दों पद परमात्मा, परमव्रह्म भगवान ।**
माया का तुम पर नहीं, लेश मात्र भी भान ॥ २१३ ॥

चौ- मम अनुचर द्वारा अनजाने । यहँ पर पिता तुम्हारे आने ॥ १ ॥
हे प्रभु यह अपराध हमारू । करो क्षमा सव दोष विसारू ॥ २ ॥
यह मैं जानत भली प्रकारा । निज पितु पर अति प्रेम तुम्हारा ॥ ३ ॥
हे गोविन्द हे जगदाधारे । ले जाओ यह पिता तुम्हारे ॥ ४ ॥
यों जव जलपति वचन सुनाये । ले निज पितहिं कृष्ण घर आये ॥ ५ ॥
वृजवासिन जव नन्द विलोका । हरषित भये तजा सव शोका ॥ ६ ॥

नन्द प्रथम जो कबहूँ न देखा । लोकपाल ऐश्वर्य विशेषा ॥ ७ ॥
जलपति लोक निवासिन भारी । देखी सुत पर प्रीति अपारी ॥ ८ ॥
तब उनको अति विस्मय आया । घर आ सब सम्वाद सुनाया ॥ ९ ॥
भगवत प्रेमी अब सब ग्वाला । नन्दराय मुख सुन यह हाला ॥ १० ॥

दोहा- **समझ नृपति अब कृष्ण को, ईश्वर का अवतार ।**
निज मन में करने लगे, वे सब गोप विचार ॥ २१४ ॥

चौ- वरुणलोक का वैभव ऐसा । हो वैकुंठ विभव फिर कैसा ॥ १ ॥
जो वैकुंठ सदा सुखदाता । जहँ पर प्रेमी भक्त सिधाता ॥ २ ॥
हे भगवान कृष्ण प्रिय हमको । वह वैकुंठ दिखावउ सबको ॥ ३ ॥
इति संकल्पित लखे गुवाला । अन्तरयामी कृष्ण कृपाला ॥ ४ ॥
उन संकल्प सिद्धि के काजू । सोचन लगे अरे नर राजू ॥ ५ ॥
भटकत इस भव मानव सारा । काम व कर्म अविद्या द्वारा ॥ ६ ॥
तीर्यगादि योनी बिच सोई । आतम स्वरूप लखै ना कोई ॥ ७ ॥
किन्तु हमारे ये वृजवासी । सब विधि भव से रहे उदासी ॥ ८ ॥
मम सेवा में हो लवलीना । निज स्वरूप के नहीं अधीना ॥ ९ ॥
यों विचार कर कृष्ण कृपाला । निज वैकुंठ दिखावउ ग्वाला ॥ १० ॥

दोहा- **पूरब ब्रह्म स्वरूप से भेट, जिन्हों की होय ।**
परमधाम भगवान के, दरसन पावत सोय ॥ २१५ ॥

चौ- पहिले ब्रह्म स्वरूप विशाला । दर्शन दीन्हे कृष्ण कृपाला ॥ १ ॥
सत्य सनातन जासु स्वरूपा । ज्ञान अनन्त व ज्योति अनूपा ॥ २ ॥
गुणातीत मानव ही जासू । सर्वाधिष्ठ नर देखत तासू ॥ ३ ॥
गाँदिनि सुत प्रति हृद नृप जेहा । हरि निज रूप दिखाय सनेहा ॥ १ ॥
ब्रह्मस्वरूप ब्रह्म हृद जेहू । पहुँचाये पुनि गोप सनेहू ॥ ५ ॥
अब उस ब्रह्म सरोवर माँही । खायो गोत सभी उन पाही ॥ ६ ॥
पुनि अब हृद से उन्हें निकाला । दिखलायो निज धाम विशाला ॥ ७ ॥
हरि का दिव्य रूप उन देखा । भयो परम आनन्द विशेषा ॥ ८ ॥
मूर्तिमान जहँ पर श्रुति सारी । गावत हरि की स्तुति जहँ भारी ॥ ९ ॥
यों वैकुंठ धाम करि लक्षित । भये गोप गण निजमन विस्मित ॥ १० ॥

दोहा- **बोले श्री शुकदेव यों, आगे सुनो नृपाल ।**
वृज युवतिन प्रति सुखद अब आवा शारद काल ॥ २१६॥

चौ- विन ऋतु वेला और चमेली। महक रही खिलकर अलवेली ॥ १ ॥
अव प्रभु निज माया के आश्रित। कीन्हों क्रीड़ा हित मन निश्चित ॥ २ ॥
तव प्राची मुख मंडल ऊपर। सुखकर रश्मिन सहित सुधाकर ॥ ३ ॥
भयो उदय अरुणी कृत अम्वर। प्रिया वदन प्रियतम जिमि केशर ॥ ४ ॥
पूर्ण मंडली विधु यों देखा। रञ्जित कोमल रश्मि विशेपा ॥ ५ ॥
देख विपिन शोभा गिरिधारी। तिय मनहर मधुराग उचारी ॥ ६ ॥
मन्मथ वर्धन सुन वृजनारी। मानस कृष्ण गृहीत अपारी ॥ ७ ॥
इत उत खवर न दीन्ही कोई। गई लक्षिता छिपकर सोई ॥ ८ ॥
जहँ पर कृष्ण रहे आसीना। आई वहँ वे नार कुलीना ॥ ९ ॥
कोई गैया दोहत भागी। कोई दूध उफनता त्यागी ॥ १० ॥

दोहा- **कोई पकावत लपसिका, चूल्हे ते न उतारि।**
भोजन कोई परोसती, चाली तजि वह थारि ॥ २१७ ॥

चौ- कोई शिशुअन दूध पिलाई। त्याग उन्हें झट वहाँ सिधाई ॥ १ ॥
पति सेवा करती कोई नारी। भागी तज सेवा वह सारी ॥ २ ॥
कोई भोजन करती भागी। कोई अंग सजावत त्यागी ॥ ३ ॥
एक नयन अंजन कर कोई। पट विपरीत सुअंग सजोई ॥ ४ ॥
कोई वरतन माँजत नारी। चाली कृष्ण प्रेम मतवारी ॥ ५ ॥
रोकी तात पति निज भ्राता। गई तदपि उन चित हरि याता ॥ ६ ॥
कोई गोपि अन्तगृह कुण्ठित। करत ध्यान दोउ लोचन मीलित ॥ ७ ॥
दुस्सह कृष्ण विरह संतापा। कर हरि ध्यान विगत किय पापा ॥ ८ ॥
प्राप्त परम सुख भोगन द्वारा। क्षीण पुण्य वन्धन किय सारा ॥ ९ ॥
यद्यपि जग वुद्धि नृप तेही। तजी तदपि गुणमयि निज देही ॥ १० ॥

दोहा- **वोले नृप ब्रह्मन सुनो, वृज की सव सुकुमारि।**
ब्रह्म भाव को त्यागकर, समझत कान्त मुरारि ॥ २१८ ॥

चौ- उनकी दृष्टि येन प्रकारा। प्राकृत गुण आशक्त अपारा ॥ १ ॥
भइ जग से निवृत्ति पुनि कैसे। कहो मुनि वह निवृत्ति जैसे ॥ २ ॥
सुनि नृप वचन वदत मुनिराया। यह तो मैने प्रथम वताया ॥ ३ ॥
चेदिराज नृप वर शिशुपाला। धरि हरि प्रति अरिभाव विशाला ॥ ४ ॥
निज प्राकृत तनु तुरत तजाया। हरि पार्षद तनु वह नृप पाया ॥ ५ ॥
वृजपुर की सारी सुकुमारी। राखत प्रेम कृष्ण पर भारी ॥ ६ ॥

इसमें कवन बात बड़ भारी । देखी तुमने अचरजकारी ॥ ७ ॥
हे नृप कृष्णचन्द अवतारा । मानव मोक्ष हेतु यह धारा ॥ ८ ॥
काम क्रोध भय स्नेह मिताई । जो जन नित्य कृष्ण पद ध्याई ॥ ९ ॥
तन्मयता पावत वे सारे । सब विस्मय तजु नृपति तुम्हारे ॥ १० ॥

दोहा- **योगेश्वर ईश्वर अज, कृष्णचन्द्र भगवान ।**
इन पर विस्मय कबहुँ ना, करते नर गुणवान ॥ २१९ ॥

चौ- अब आगे तुम सुनो नृपाला । हरि समीप जब गई वृजबाला ॥ १ ॥
उन मोहित हित कर अति रंजन । बोले वचन तदा यदु नन्दन ॥ २ ॥
सब विधि स्वागत अरी तुम्हारा । करो कथन मन कीन्ह विचारा ॥ ३ ॥
वृज तो है न कुशल सुकुमारी । किस विचार ते यहाँ सिधारी ॥ ४ ॥
यह रजनी देखो अति घोरा । सेवित हिंसक जीव कठोरा ॥ ५ ॥
यहि हेतू तुम सब वृज जाऊ । नारिन ठहरन योग्य न ठाँउ ॥ ६ ॥
पिता पुत्र पति भ्रात तुम्हारे । करहिं खोजना इत उत सारे ॥ ७ ॥
उनको तुम सब मिलकर भारी । क्यों करती हो व्यर्थ दुखारी ॥ ८ ॥
विधुकर रंजित कुसुमित कानन । आई यदि तुम सब यह देखन ॥ ९ ॥
अब वनदेख चुकी तुम सारा । जोहत बाट वहाँ घरवारा ॥ १० ॥

दोहा- **जाकर पति सेवा करो, करहू न यहाँ अबेर ।**
वत्स व बालक गोपियो, बुला रहे सब टेर ॥ २२० ॥

चौ- निज निज शिशुअन दूध पिलाऊ । घर जा गैया दूध कढ़ाऊ ॥ १ ॥
वशीभूत होकर मम स्नेहू । तो तुम सुनो वचन मम येहू ॥ २ ॥
निज पति सहित तासु परिवारी । सेवा परम धर्म शुभनारी ॥ ३ ॥
निरधन जड़ दुर्भग दुःशीला । रोगी अंगहीन शठ ढ़ीला ॥ ४ ॥
त्यागन जोग नहीं पति नारी । होन पातकी यदि वह भारी ॥ ५ ॥
हे कुलनारि जारपति भारी । निन्दा असुख प्रदात अपारी ॥ ६ ॥
श्रवण ध्यान दरसन के द्वारा । जैसा मुझ पर भाव तुम्हारा ॥ ७ ॥
वैसो भाव निकट ना रहऊ । यहि हेतु अब तुम वृज जाऊ ॥ ८ ॥
यों सुन अप्रिय वचन भगवाना । भई चिन्तातुर वृज तिय नाना ॥ ९ ॥
नीचा मुखकर सभी सुभागी । पदाङ्गुठ महि खोदन लागी ॥ १० ॥

दोहा- **उर दुःख भर चुपचाप वे, नयनन अश्रु बहाय ।**
कुच कुंकुम धोअन लगीं, सुनो परीक्षित राय ॥ २२१ ॥

चौ- भाषमाण अप्रिय इव सारी । देखे जब यों विपिन विहारी ॥ १ ॥
किंचित कोपावेश दुखारी । पोंछे नयन बोली वृज नारी ॥ २ ॥
यों मत क्रूर वचन कहु साँई । हम सब विषय त्याग यहँ आई ॥ ३ ॥
हम सब केवल चरण तुम्हारे । करती प्रेम हे नन्द दुलारे ॥ ४ ॥
तुम स्वतंत्र अरु महा हठीले । बातन में तुम महा रसीले ॥ ५ ॥
निज दासन पर ज्यों भगवाना । करते प्रेम हे दयानिधान ॥ ६ ॥
वैसे करो हमें स्वीकारा । करो त्याग ना नाथ हमारा ॥ ७ ॥
निज पति भ्राता सुत परिवारी । सेवा धर्म कहा तुम नारी ॥ ८ ॥
सभी कथन यह नीक तुम्हारा । माना हमने भली प्रकारा ॥ ९ ॥
किन्तु यह उपदेश तुम्हारा । बतलावत सेवा तव सारा ॥ १० ॥

दोहा- **पति भ्रातादिक देह से, जो सम्बन्ध हमार ।**
वह सब तुमही से प्रभो, माना भली प्रकार ॥ २२२ ॥

चौ- तुम साक्षात परम भगवाना । दीनबन्धु हे दयानिधाना ॥ १ ॥
तुमही सब उर विचरण कर्त्ता । आत्मा सुहृद तुमहिं सब भर्ता ॥ २ ॥
निज स्वरूप का जानन हारा । करता तुम से प्रेम अपारा ॥ ३ ॥
तुम सिवाय जग वस्तुन जेती । हे अनित्य अरु दुःखत वेती ॥ ४ ॥
पति पुत्रादिक की स्थिति सारी । जानी हमने इसी प्रकारी ॥ ५ ॥
तुम ही सब जीवनकी आत्मा । नित्य व प्रेमास्पद परमात्मा ॥ ६ ॥
यही हेतु ज्ञानी जन जेते । सब ही तव पंद पंकज-शेते ॥ ७ ॥
हे परमेश्वर कृष्णकृपालू । हम पर कृपा करो इस कालू ॥ ८ ॥
बहुत दिनों की आश हमारी । तोड़ो मत पूरो यह सारी ॥ ९ ॥
मन मोहन यह चित्त हमारा । अब तक घर कृत्य न मैं सारा ॥ १० ॥

दोहा- **किन्तु हमारा चित्त यह, लूट लिया तुम आज ।**
बिन कठिनाई के अरे, सुख स्वरूप वृज राज ॥ २२३ ॥

चौ- हम सबकी गति मति निराली । हो गई आज अरे वनमाली ॥ १ ॥
चरण कमल को छोड़ तुम्हारे । चल सकते ना चरण हमारे ॥ २ ॥
वृज बीचे पुनि कवन प्रकारा । जा सकती हम प्राण अधारा ॥ ३ ॥
धधक रही कामाग्नि अपारा । सींचो तव अधरामृत द्वारा ॥ ४ ॥
नहि तो प्रियतम हम सत कहती । विरह व्यथा को हम सब सहती ॥ ५ ॥
निज निज देह जलाकर सारी । करहि प्राप्त तव पद बनवारी ॥ ६ ॥

कमल नयन जीवन धन सारे। वन वासिन को तुम अति प्यारे ॥ ७ ॥
यहि हेतु तुम उनके साथा। रहउ यहाँ पर हे वृजनाथा ॥ ८ ॥
जिस लक्ष्मी हित देव विचारे। तरसत रात दिवस ये सारे ॥ ९ ॥
सो लक्ष्मी तुम निज उर ऊपर। धारण करी तदपि हे प्रियवर ॥ १० ॥

दोहा- **तो भी तव पदकंज की, करती वह अभिलास।**
उन्हीं चरण की शरण हम, आई कर अति आस ॥ २२४॥

चौ- जिन भक्तन ने चरण तुम्हारे। निज मन मानस धरे मुरारे ॥ १ ॥
उन सबके तुम कष्ट मिटाये। वहि पंद हमने आज गहाये ॥ २ ॥
अब तुम हम पर हे बनवारी। करो कृपा हम शरण तुम्हारी ॥ ३ ॥
हे दुखहर हम गेह तजाई। पद पंकज सेवा हित आई ॥ ४ ॥
हे प्रियतम निज घर के ऊपर। मिलहिं न तव सेवा का अवसर ॥ ५ ॥
नाथ तुम्हारी मधु मुस्काना। चारु चितवन ने हिय नाना ॥ ६ ॥
प्रेम मिलन की आग अपारा। धधकाई प्रभु सभी प्रकारा ॥ ७ ॥
रोम रोम अब जल रहि सारी। करहू अब हमको स्वीकारी ॥ ८ ॥
हमको निज सेवा का अवसर। देवउ करो विलम्ब न प्रियवर ॥ ९ ॥
तव मुख कंज अरे वनमाली। झलकत अलक जासु घुँघराली ॥ १० ॥

दोहा- **इन कमनीय कपोल पर, कुंडल सुन्दर तोर।**
निज अनन्त सौन्दर्य को, फैलावत चहुँ ओर ॥ २२५ ॥

चौ- अधर सुधा यह मधुर तुम्हारे। हे प्रिय सुधा लजावन हारे ॥ १ ॥
चितवन नयन अरे मनहारी। मन्द मन्द मुस्कान तुम्हारी ॥ २ ॥
अभयदान प्रद जो निज भक्तन। है उदार दोउ भुज भगवान ॥ ३ ॥
वक्ष स्थल यह नाथ तुम्हारा। क्रीड़ाधाम रमा का सारा ॥ ४ ॥
यह सब देख बनी हम दासी। कृपा करो अब तो अविनासी ॥ ५ ॥
छोड़ो मनहर बात हमारी। सुनकर मुरली मधुर तुम्हारी ॥ ६ ॥
ऐसी कवन जगत की नारी। त्यागा धर्म न जिन वनवारी ॥ ७ ॥
गौ पक्षी तरु मृग भी सारे। हो जावत पुलकित अति भारे ॥ ८ ॥
तुम वृज भय दुखहर भगवाना। आदि पुरुषवत कृपा निधाना ॥ ९ ॥
हम भी प्रियतम होय दुखारी। आई चरणन शरण तुम्हारी ॥ १० ॥

दोहा- **प्रेम मिलन अभिलाष की, धधक रही उर ज्वाल।**
अब तप्तस्तन सीस पर, धरहू हाथ विशाल ॥ २२६ ॥

चौ- बोले श्री शुकदेव मुनीशा । सुन उन व्याकुल वच जगदीशा ॥ १ ॥
हंसकर रमण कीन्ह उन संगा। अब निज प्रिय लखि प्रेम उमंगा ॥ २ ॥
आनन कंज प्रफुल्लित भारी । ठाडी घेर चहूँ वृज नारी ॥ ३ ॥
उडुगण बीचे चन्द्र समाना । सोभित भये तदा भगवाना ॥ ४ ॥
वनिता शतयूथप बनवारी । माल वैजयन्ति गलधारी ॥ ५ ॥
वन सोभा कर यों उन संगा । विचरत इत उत करत प्रसंगा ॥ ६ ॥
हिय वालूयुत यमुना तट पर । कीन्ही क्रीड़ा वे जगदीश्वर ॥ ७ ॥
आलिंगन अरु बाहु प्रसारन । हस्त व केश उरु स्तन सपर्शन ॥ ८ ॥
नख क्षत सहित महा परिहासा । क्रीड़ा अवलोकन मृदु हासा ॥ ९ ॥
यों उन काम जगावन बारी । कीन्ही क्रीड़ा वहँ बनवारी ॥ १० ॥

दोहा- **प्राप्त मान यों कृष्ण से, वे सब वृज की नार ।**
आयो अब उन मन विषै, अति घमंड संचार ॥ २२७ ॥

चौ- अब यों करत विचार कुमारी । हम सम अन्य नहीं जग नारी ॥ १ ॥
देख गर्व मद यों उन भारी । गर्व शमन हित रसिक बिहारी ॥ २ ॥
उन सखियन पर अनुग्रह काजू । अन्तरध्यान भये वृजराजू ॥ ३ ॥
बोले श्री शुकदेव मुनीशा । अन्तरध्यान भये जब ईशा ॥ ४ ॥
वृज वनिता भइ दुखित अपारी । यूथप हीन यथा गजनारी ॥ ५ ॥
गति स्मित प्रेक्षण भाषण द्वारा । मोहित जिनका चित्त अपारा ॥ ६ ॥
हो तल्लीन प्रेम मतवारी । भई कृष्णमय अब वृज नारी ॥ ७ ॥
भूली निज स्वरूप मति शीला । कर अनुकरण कृष्णकृत लीला ॥ ८ ॥
मैं हूँ कृष्ण वदत मिथवानी । वे सब वृज की सखी सयानी ॥ ९ ॥
उच्च स्वर गाकर हरि गाना । होकर वे उन्मत्त समाना ॥ १० ॥

दोहा- **इक वन तजकर अपर वन, हो मन दुखी महान ।**
नभ सम जो उस उर वसे, हैरत उस भगवान ॥ २२८ ॥

चौ- लता बेल तरुअन से जाकर । पूछत नयन नीर निज भरकर ॥ १ ॥
रे अश्वत्थ प्लक्ष वट पाकर । गवने वे हरि चित्त चुराकर ॥ २ ॥
जावत यदि देखे तुम येहू । बतलाओ हम पर कर नेहू ॥ ३ ॥
चम्पा, आम्र कदम्ब हे नागा । रे अशोक कुरवक पुन्नागा ॥ ४ ॥
हम सबका मद हरने वारे । गये इधर क्या नन्द दुलारे ॥ ५ ॥
अलि कुल सहित सदा तोहिं धारे । तव प्रिय तुलसी कहाँ सिधारे ॥ ६ ॥

जाति मल्लिके मालति जूही । देखे इत कही अरी प्रभूहीं ॥ ७ ॥
कोमल कर करि स्पर्श तुम्हारा । गये अवशि इत नन्द कुमारा ॥ ८ ॥
होरहि मुदित अति यहि काजू । कर दर्शन तुम उन वृजराजू ॥ ६ ॥
जामुन अर्क व बेल प्रियाला । पीत शाल कचनार रसाला ॥ १० ॥

दोहा- **वकुल कदम्ब हे नीम तरु, तुम स्थित यमुना तीर ।**
पर हित जीवन तुम धरा, तापस सम सहि पीर ॥ २२६ ॥

चौ- उन बिन जीवन अरे हमारा । शून्य शान दीखत यह सारा ॥ १ ॥
दीखत कहीं कृष्ण यदि तुमको । कर तुम कृपा बतावहु हमको ॥ २ ॥
सुकृत कवन कीन्ह महि भारी । करके चरण स्पर्श गिरधारी ॥ ३ ॥
तुम रोमाञ्चित होरहि भारी । निश्चय तुम देखति बनवारी ॥ ४ ॥
लखि मृग नारी मुदित अपारा । पूछत कहँ चितचोर हमारा ॥ ५ ॥
अंग-अंग जिन सुन्दर भारी । गये किधर वे रसिकविहारी ॥ ६ ॥
कान्ता अंग संग कुच केशर । रंजित माला कुंद मनोहर ॥ ७ ॥
आवत गंध इधर ते भारी । गये इधर ही विपिनविहारी ॥ ८ ॥
बोली विटपन से पुनि वानी । सुनो हमारी जरा कहानी ॥ ६ ॥
उन गलमाल सुगंधित कैसी । आवत अरे तुलसि में जैसी ॥ १० ॥

दोहा- **मत्त भ्रमर जिसकी सदा, लेवत रहत सुगंध ।**
एक हस्त में कमल उन, अपर प्रेयसी स्कंध ॥ २३० ॥

चौ- अवशि गये इत वे वृजराई । जब ही तो तुम सीस झुकाई ॥ १ ॥
करने तुम सब उन्हें प्रणामा । ठाड़े तुम इस बन अभिरामा ॥ २ ॥
एक सखी मुड़कर यों बोली । इन तरुअन की तो मति डोली ॥ ३ ॥
यह नहि कबहुँ बतावहिं तोई । इनते मत पूछो तुम कोई ॥ ४ ॥
मानो यदि तुम बात हमारी । पूछे इन बेलन प्रति सारी ॥ ५ ॥
जो भुज पास पति चिपकाई । दीखत रोमाञ्चित पुलकाई ॥ ६ ॥
इस रोमाँच पुलक का कारन । कीन्ही निश्चय हरि नख स्पर्शन ॥ ७ ॥
पागल सम हो यो वृज नारी । हेरत हरिहिं व्यथित मनभारी ॥ ८ ॥
अब हरिमय हो सब सुकुमारी । हरि लीला अनुकृत की सारी ॥ ६ ॥
कोई पूतना बनकर आई । हरिवत अपरहिं दूध पिलाई ॥ १० ॥

दोहा- **हरि रूपी सुकुमारि ने, कर निज पाद प्रहारा ।**
शकटाकृति ओंधों कियो, करके रुदन अपार ॥ २३१॥

चौ- दैत्य रूप धर कर कोई नारी । हरती कृष्णरूप सुकुमारी ॥ १ ॥
कोई निज घुटने चल चाली । रामकृष्ण वपुधर मतवाली ॥ २ ॥
कोई गोपन रूप बनावा । वत्स रूप कइ नार रचावा ॥ ३ ॥
कोई बनकर रूप बकासुर । मारत तेहि कृष्ण वपु धरकर ॥ ४ ॥
कोई कृष्ण रुप धर नारी । निज मुख मुरली तान उचारी ॥ ५ ॥
दूर स्थित गैया अरु ग्वाला । अरे बुलावत वह वृजबाला ॥ ६ ॥
कोई करत प्रशंसा तासू । साधु साधु मुख भापत जासू ॥ ७ ॥
निज भुज अपर गले विच डारी । चालत वचन वदत यों नारी ॥ ८ ॥
मैं हूँ कृष्ण अरी सुकुमारी । मेरी चाल सभी से न्यारी ॥ ९ ॥
कोई सखी वदत यों वाता । होवत भीत न वर्षा वाता ॥ १० ॥

दोहा- **सब विधि रक्षा का किया, मैंने अरी उपाय ।**
यों कह गिरि सम वस्त्र निज, कर पर लियो उठाय ॥ २३२॥

चौ- कालिय रूप बनी एक नारी । दूजी कृष्ण रूप सुकुमारी ॥ १ ॥
चढ़ उससीस वदत यों बानी । त्यागो सर यह हे नादानी ॥ २ ॥
मैं हूँ दुष्टन निग्रह कर्ता । ठहरो मत अब तुम इस गर्ता ॥ ३ ॥
बोली एक सखी मतवाली । दावानल फैली चहुँ लाली ॥ ४ ॥
निज निज नयन मूँद सब ग्वाला । बैठो अरे यहाँ इस काला ॥ ५ ॥
तुम सबकी अब कुशल उपाया । करूँ अभी सुन्दर सुखदाया ॥ ६ ॥
कृष्ण रूप कोई वृजवाला । बाँधी उलुखल ले निज माला ॥ ७ ॥
वह दोउ कर निज वदन पिधाई । भय अनुकरण कीन्ह शरमाई ॥ ८ ॥
तरुअन ते पूछत यो सारी । सब विधि व्याकुल होकर भारी ॥ ९ ॥
इत उत विचरत विपिन प्रदेशा । महि अंकित पद लखे वृजेशा ॥ १० ॥

दोहा- **बोली सब मिलकर अरी, यह पद लखो वृजेश ।**
ध्वज अम्बुज वज्रांकुश, इनमें चिन्ह विशेष ॥ २३३ ॥

चौ- उन अंकित पद द्वारा सारी । हेरत गई अग्र सब नारी ॥ १ ॥
नन्दपुत्र संग जावन हारी । देखे चरण अन्य सुकुमारी ॥ २ ॥
अब सब गोपी दुखित अपारा । आपस में यों वचन उचारा ॥ ३ ॥
गई उन संग कवन सुकुमारी । किसके चरण लखो तुम सारी ॥ ४ ॥
जावत गजिनी जिमि गज संगा । त्यों यह गई उन करत प्रसंगा ॥ ५ ॥
निश्चय इसने ही भगवाना । की होगी आराधन नाना ॥ ६ ॥

तब ही तो हम यहाँ तजाई । ले गये संग इन्हे कन्हाई ॥ ७ ॥
धन्य अरी यह हरि पद धूरी । अघ नाशन वारी शुभ मूरी ॥ ८ ॥
ब्रह्मा शिव लक्ष्मी निज सीसा । करते धारण जिसे अहीसा ॥ ९ ॥
एक सखी बोली यों वानी । यह नहि बात उचित हम जानी ॥ १० ॥

दोहा- **निज प्रियतम को यह सखी, ले जाकर एकान्त ।**
अधर सुधारस पी रहे, वहाँ अकेली शान्त ॥ २३४ ॥ क
चरण चिन्ह इसके अरी, करते सब हिय क्षोभ ।
हम सबको तजकर यह, चली गई कर लोभ ॥ २३४ ॥ ख

चौ- एक बात मोहि अउर दिखाई । तासु चरण यहँ नही लखाई ॥ १ ॥
तृण अंकुर दुःखित वह नारी । धरी स्कंध निज कृष्ण मुरारी ॥ २ ॥
यह कैसी बड़भागिनी नारी । चाहत अति जेहि विपिन विहारी ॥ ३ ॥
उस वैरिन हित तनु उचकाई । तोड़े यहँ पर कुसुम कन्हाई ॥ ४ ॥
यहि हेतु उनके दोउ चरना । एड़ी रहित दिखावत नयना ॥ ५ ॥
देखो इत कामी हरि द्वारा । निज प्रेयसि सिर केश सँवारा ॥ ६ ॥
हे नृप वे हरि आत्मा रामा । पूर्ण अखंड व पूरण कामा ॥ ७ ॥
उन सम अपर जगत ना कोई । काम कल्पना उन किमि होई ॥ ८ ॥
तो भी उन हरि ने सुनु राया । कामीजन दीनत्व बताया ॥ ९ ॥
नारि कुटिलता नारि सुभावा । दिखलावत हित खेल दिखावा ॥ १० ॥
हे राजन इमि सब सुकुमारी । खोजत उस वन विपिन विहारी ॥ ११ ॥

दोहा- **सब सखियन को त्यागकर, गई संग विपिन विहारी ।**
उस गोपी के मन विषे, आवा गर्व अपारि ॥ २३५ ॥

चौ- सब सखियन बीचे वह नारी । समझी निज को श्रेष्ठ अपारी ॥ १ ॥
वन बीचे जाकर वह नारी । हरि ते यों निज वचन उचारी ॥ २ ॥
मोसे चला नहीं अब जाता । चलना चहो जहाँ बलभ्राता ॥ ३ ॥
निज कंधे पर मुझे चढ़ाकर । ले चालो अब हे वृजसुन्दर ॥ ४ ॥
यों सुनकर बोले वृजनन्दन । आउ अरी बैठो मम स्कंधन ॥ ५ ॥
यों सुनकर उन कंधे ऊपर । बैठन लागी वह सखि सुन्दर ॥ ६ ॥
अन्तरध्यान भये प्रभु त्योंही । देखत रही सखी वह योंही ॥ ७ ॥
अब तो वह मन में पछताई । निज उर बीच विकलता छाई ॥ ८ ॥
रमण महाभुज हे मम प्राना । गये कहाँ तुम दीन निधाना ॥ ९ ॥

दासी कृपण सखे मैं तेरी । देवउ दर्शन करो न वेरी ॥ १० ॥

दोहा- **हरि पथ हेरत हे नृप, सब वृज की सुकुमारि ।**
मिली इसे कुछ दूरि पर, मोहित चित्त अपारि ॥ २३६ ॥

चौ- माधव ते जिमि पायउ माना । कीन्हा कृष्ण यथा अपमाना ॥ १ ॥
कृष्ण कुटिलता सुन उस द्वारा । सब सखियाँ भई चकित अपारा ॥ २ ॥
चन्द्र चाँदनी जब तक सारी । हेरत रही विपिन बनवारी ॥ ३ ॥
आगे अंधकार लखि भारी । तम प्रविष्ठ लख रसिक बिहारी ॥ ४ ॥
सब सखियाँ वापिस अब आई । जिन मन लाग रहा वृजराई ॥ ५ ॥
उन गुणगान करत वे सारी । निज गृह की भी सुधी विसारी ॥ ६ ॥
पुनि कालिन्दी तट पर जाकर । कृष्ण आगमन का अब अवसर ॥ ७ ॥
देखन लगी वहाँ सुकुमारी । करत गान उन मिलकर सारी ॥ ८ ॥
बोली अब यों गोप कुमारी । जब ते वृज बीचे बनवारी ॥ ९ ॥
भयऊ यहँ अवतार तुम्हारा । बाढ़ा वृज उत्कर्ष अपारा ॥ १० ॥

दोहा- **यहि कारण वृज को रमा, करत अलंकृत भारि ।**
यों सब वृज हरसित यह, हो रहा नाथ अपारि ॥ २३७ ॥

चौ- हम सब गोपीनाथ तुम्हारी । लेवत सुध क्यों नहीं हमारी ॥ १ ॥
जीवन धन हे प्राण अधारा । तुम बिन जीवन व्यर्थ हमारा ॥ २ ॥
हम सब कान्त तुम्हारे खातिर । जीवित रही सदा वृज भीतर ॥ ३ ॥
तो भी हम तुमको हे स्वामी । देख सकी नहि अन्तरयामी ॥ ४ ॥
फिर भी नाथ तुम्हारे खातिर । इत उत भटक रही वन भीतर ॥ ५ ॥
सुरन नाथ जो नयन तुम्हारे । कर गय घायल वदन हमारे ॥ ६ ॥
शरद काल निरमल सर भीतर । हो पंकज सुन्दर से सुन्दर ॥ ७ ॥
उनकी भी यह नयन तुम्हारे । हर रहे शोभा कृष्ण पियारे ॥ ८ ॥
इस सुझाव के कारण सारा । चुरा लिया इन चित्त हमारा ॥ ९ ॥
बिना मोल की हम सब दासी । मारी चोट नयन अविनासी ॥ १० ॥

दोहा- **उसी चोट से हो गई, हम सब मृतक समान ।**
क्या यह स्त्री हत्या नहीं, हे प्रभु कृपा निधान ॥ २३८ ॥

चौ- प्रियतम पास हमारे आकर । देवउ जीवन दान कृपाकर ॥ १ ॥
तब ही छूटहिं दोष तुम्हारा । सच मानो यह वचन हमारा ॥ २ ॥
सुन प्रियवर विषमय जल द्वारा । वर्षा मारुत तड़ित अपारा ॥ ३ ॥

व्योमासुर वृषभासुर व्याला । ढायो विपत पहाड़त विशाला ॥ ४ ॥
उस भय से तुमने सब वृज की । रक्षा करी गोप गोधन की ॥ ५ ॥
हे प्रियवर तुमने इस बारी । हम सब संकट में क्यों डारी ॥ ६ ॥
तुम यदि हमको मारन चाहू । तो उस समय बचाई काहू ॥ ७ ॥
गोपी सुत न तुम्हें हम माना । जीव बुद्धि साखी तुहि जाने ॥ ८ ॥
विधि प्रार्थित जग रक्षा काजू । प्रकटे यदुकुल तुम यदुराजू ॥ ९ ॥

दोहा- **इन सखियन को हे सखे, निज विरहानल ताप ।**
जला रहे केहि कारणे, कर संतापित आप ॥ २३९ ॥

चौ- यदुवर जग भयभीत अपारा । तव पद सेवित सन्तन द्वारा ॥ १ ॥
उन अभिलाषा पूरन हारा । राखो सिर पर हस्त तुम्हारा ॥ २ ॥
रमा हस्त जिस कर तुम गहऊ । वहि कर सीस हमारे रखऊ ॥ ३ ॥
हे वृजजन दुख नासन हारे । वीरशिरोमणि नन्द दुलारे ॥ ४ ॥
हम सब दासी सखे तुम्हारी । रूठो मत हे कृष्णमुरारी ॥ ५ ॥
सखे तुम्हारे चरणन ऊपर । प्रियतम हम सब सदा निछावर ॥ ६ ॥
परम साँवले सुन्दर आऊ । निज मुख कमल हमे दिखलाऊ ॥ ७ ॥
जो शरणागत चरण तुम्हारे । उन सबके तुम पाप निवारे ॥ ८ ॥
जो सब सुन्दरता की खाना । सेवत रमा जिन्हे अति ध्याना ॥ ९ ॥
वे पद वृजवासिन के काजू । कितने सुलभ अरे वृजराजू ॥ १० ॥

दोहा- **वत्सन संग निज चरण ते, वन वन फिरत कृपालू ।**
वहि पद हम सबके लिए, धरे सीस तुम व्याल ॥ २४० ॥

चौ- विरह व्यथा की ताप अपारा । जलता प्रियवर हृदय हमारा ॥ १ ॥
अब तुमसे मिलने की आसा । सता रही हमको प्रिय खासा ॥ २ ॥
तुम निज चरण हमारे स्तन पर । कर दो शान्त प्रभो अब रखकर ॥ ३ ॥
कितनी मृदुल तुम्हारी वानी । रमण करत जिसमें बुध ज्ञानी ॥ ४ ॥
उस मृदुवाणी का रस पीकर । मोहित भई सभी हम प्रियवर ॥ ५ ॥
मधुर अधर रस हमें पिलाकर । देवो जीवनदान कृपा कर ॥ ६ ॥
अमृत रूपी कथा तुम्हारी । तप्त जीव की कल्मष हारी ॥ ७ ॥
गावत संत महामुनि ज्ञानी । श्रवण करत मंगल सुखदानी ॥ ८ ॥
सुन्दर परम मधुर अति विस्तृत । कथा तुम्हारी जो नर गावत ॥ ९ ॥
धन्य वही इस जग के भीतर । सबसे दाता वही अधिकतर ॥ १० ॥

दोहा- कथा तुम्हरी की यह, महिमा अपरम्पार ।
पुनि तव संगति के विषय, कहना व्यर्थ मुरार ॥ २४१ ॥

चौ- उस संगति से वंचित स्वामी । राखो मत अब अन्तरयामी ॥ १ ॥
प्रेम भरी मृदुहास तुम्हारी । चितवन क्रीड़ा देख मुरारी ॥ २ ॥
भई लीन हम प्रेमानन्दा । मिले बाद में तुम वृज चन्दा ॥ ३ ॥
रह संकेत सहित परिहासा । कीन्हों प्रेमालाप प्रकासा ॥ ४ ॥
कपटी मित्र सुनो चितलाई । तुम वे बातें कहाँ गँवाई ॥ ५ ॥
जब वे बातें सन्मुख आवे । हृदय हमारा अति दुख पावे ॥ ६ ॥
इससे नीक यही था स्वामी । मिलते प्रकट न अन्तरयामी ॥ ७ ॥
मिलना भला बिछुड़ना भारी । दुखदायी होवत सुखहारी ॥ ८ ॥
जब तुम वृज ते पशू चरावन । जावत तब तुम्हरे पद पावन ॥ ९ ॥
शिल तृण अंकुर दुःखित देखी । हमरे मन अति क्षोभ विशेषी ॥ १० ॥

दोहा- गाय चरावत विपिन ते, लौटउ संध्याकाल ।
कुंतल नील वनोजमुख, गोरज व्याप्त विशाल ॥ २४२ ॥

चौ- दे दरसन इमि बारम्बारू । कीन्हो जागृत काम अपारू ॥ १ ॥
एक मात्र तुम ही दुखहारी । लगी लालसा कान्त तुम्हारी ॥ २ ॥
चरण कमल जो शरण तुम्हारे । पूरऊ तासु मनोरथ सारे ॥ ३ ॥
करती रमा स्वयं पद पूजन । इस महि के तो वे प्रिय भूषण ॥ ४ ॥
संकट बीचे चरण तुम्हारे । सुमिरत ही सब संकट टारे ॥ ५ ॥
वे कल्याणस्वरूप तुम्हारे । धर कर चरण उरोज हमारे ॥ ६ ॥
मेटो हृदय व्यथा अब सारी । वीर शिरोमणि कृष्ण मुरारी ॥ ७ ॥
अधरामृत है कान्त तुम्हारा । प्रेम मिलन रुचि बाढन हारा ॥ ८ ॥
विरहजन्य सब संकट तापा । नष्ट करत यह अपने आपा ॥ ९ ॥
रतिवृद्धि कर सुस्वर वेणू । चुम्बन करत अहो दिनरेणू ॥ १० ॥

दोहा- वहि अधरामृत प्रेम से, हमें पिलावउ आप ।
अब ज्यादा तरसाय के, झेलो मत तुम श्राप ॥ २४३ ॥

चौ- जावत तुम जब विपिन विहारा । तब तव दरसन बिना हमारा ॥ १ ॥
एक एक क्षण युग सम भारी । बीचे तुम बिन विपिन विहारी ॥ २ ॥
संध्याकाल यदा घर आऊ । निज मुख कमल हमें दिखलाऊ ॥ ३ ॥
तब पलकन का पतन हमारे । होवत भार स्वरूप मुरारे ॥ ४ ॥

तब हम विधि को देवत गारी । जिसने पलकें रची हमारी ॥ ५ ॥
हम निज पति सुत बन्धुन भाई । कुल परिवार त्याग यहँ आई ॥ ६ ॥
ऐसो कवन अरे शठ भारी । निज समीप आगत खुद नारी ॥ ७ ॥
त्यागे रजनी बीच अकेली । रे कपटी हम सभी सहेली ॥ ८ ॥
प्रहसित आनन प्रेम सई क्षण । रह बीते सुनकर मधुभाषण ॥ ९ ॥
लक्ष्मी जिस पर करे निवासा । उस वक्षस्थल की अभिलासा ॥ १० ॥

दोहा- **लाग रही निशिदिन हमें, हे प्रभु कृपा निधान ।**
यह अधिकाधिक मुग्ध मन, होवत रहा महान ॥ २४४ ॥

चौ- हे प्रियतम यह जन्म तुम्हारा । वृजवासिन दुख नासनहारा ॥ १ ॥
यह सब जग का मंगलकारी । तुमसे मिलने हेतु मुरारी ॥ २ ॥
मचल रहा है मन बहुत हमारा । उत्सुकता की सीम अपारा ॥ ३ ॥
त्यागो अब तुम यह कृपणाई । देउ ईदृशी जरा दवाई ॥ ४ ॥
हम दासिन हिय पीर अपारा । मिटे जलन जिससे यदुवीरा ॥ ५ ॥
चाहे हृदय होय यह दाहा । इसकी भी हमको नहि चाहा ॥ ६ ॥
एक बात का हमको भारी । होवत दुख यही बनवारी ॥ ७ ॥
प्रभो कमल से भी अति कोमल । चरण तुम्हारे पावन निर्मल ॥ ८ ॥
निज कठोर स्तन ऊपर येहू । डर लागत रखते प्रिय तेहू ॥ ९ ॥
उनको चोट कहीं ना आये । ये ही हमको दुःख सताये ॥ १० ॥

दोहा- **उन चरणन से विपिन में, निशा समय वृजराय ।**
छिपकर तुम भटकत रहे, कहीं चोट ना आय ॥ २४५ ॥ क
यही सोचकर ही हमें, चक्कर आवत भारि ।
हम अचेत सी होरही, कृष्ण चन्द्र बनवारि ॥ २४५ ॥ ख
तोरे खातिर जी रही, हम सब सखी तुम्हरि ।
यह जीवन तोरे लिये, जानो कुञ्जविहारि ॥ २४५ ॥ ग

चौ- बोले श्री शुकदेव मुनीशा । सब सखियाँ यों सुनो महीशा ॥ १ ॥
रोवत जात गात कइ गाना । कृष्ण लालसा लगी महाना ॥ २ ॥
तदा कृष्ण पीताम्बर धारी । काम विमोहक सुन्दर भारी ॥ ३ ॥
उन आगे प्रकटे मुस्काई । तब सब सखियाँ अति हरसाई ॥ ४ ॥
नयन प्रफुल्लित युग पद सारी । ठाढ़ी भई अब प्रभू अगारी ॥ ५ ॥
आवत वापिस जिमि गत प्राना । देखू मुदित उन कृपा निधाना ॥ ६ ॥

एक सखी उन हस्त गहाये । अपर तासु भुज स्कंध रखाये ॥ ७ ॥
चर्वित लेय एक मुख पाना । होकर मुदित परम सुखमाना ॥ ८ ॥
उन पद कमल सखी गहि ऐकी । भई मुदित निज स्तन पर टेकी ॥ ६ ॥
वक्रीकृत निज भृकुटित एकी । ताड़ित वाण कटाक्ष विलोकी ॥ १० ॥

दोहा- **एक सखी उन मुख लखि, तप्त भई मन माँय।**
हरि चरणन को प्राप्त कर जिमि नहि सन्त अघाय ॥ २४६॥

चौ- एक सखी निज नयनन द्वारा । ले निज हिय विच नन्द दुलारा ॥ १ ॥
योगी सम निज नयन पिधाई । कर आलिंगन खुशी मनाई ॥ २ ॥
यों सवने हरि दरसन द्वारा । कृष्ण वियोगज ताप निवारा ॥ ३ ॥
यों गत शोक सभी सुकुमारि । वेष्टित कीन्हे कुञ्ज बिहारी ॥ ४ ॥
उन वीचे सोभित वे भारी । यथा पुरुष सत्वादिक धारी ॥ ५ ॥
वाद कृष्ण उन सवको लेकर । पहुँचे कालिन्दी के तट पर ॥ ६ ॥
शरद चन्द्र किरणन के द्वारा । ध्वस्त रात्रि गत तिमिर अपारा ॥ ७ ॥
तट सुखकर वह सरित तरंगा । सोभित वालू रेत उतंगा ॥ ८ ॥
योगेश्वर अति योग रचाई । निज हिय आसन जिन नहि पाई ॥ ६ ॥
पूर्ण काम अव वे सुकुमारी । निज कुच कुंकुम अंकित सारी ॥ १० ॥

दोहा- **निज उप वस्त्र उतारि के, आसन दिया विछाय ।**
सखिन सभागत कृष्ण अव, सोभित भे अधिकाय ॥२४७॥

चौ- वाद गोपिका मिलकर सारी । करके उन सत्कार अपारी ॥ १ ॥
चितवन मन्द मन्द मुस्काना । तिरछी भृकुटिन ते सन्माना ॥ २ ॥
कोई चरण कमल धर अंका । कोई पकरत हस्त निशंका ॥ ३ ॥
एक सखी यों वचन उचारा । केता यह तनु मृदु सुकुमारा ॥ ४ ॥
कुछ गोपी मन ही मन रूठी । वोले केतिक वचन अनूठी ॥ ५ ॥
प्रभु कोइ करते प्रेम परस्पर । कोई करते एक न दूसर ॥ ६ ॥
कोई प्रेम करत जो नाँही । उन पर भी अति स्नेह रखाही ॥ ७ ॥
इन तीनों में हे प्रिय मोहन । लागत कवन तुम्हें अति सोभन ॥ ८ ॥
वोले तव यों नन्दकुमारा । वचन प्रमाणित सुनो हमारा ॥ ६ ॥
करते प्रेम परस्पर जोई । स्वारथ सिद्धि अरी उस होई ॥ १० ॥

दोहा- **ना उसमें कुछ मित्रता, और नहीं कुछ धर्म ।**
अरी प्रयोजन कुछ नहीं, ऐसो प्रेम अकर्म ॥ २४८ ॥

चौ- अभजतन को भँजता कोई । नाना प्रेम दयावश सोई ॥ १ ॥
वह निरदोष धरम कहलाये । सुत पर जैसे जनक दिखाये ॥ २ ॥
प्रेम करन हारे से कोई । करता प्रेम अपर ना सोई ॥ ३ ॥
प्रेम करत नर एक न कोई। उसका कवन ठिकाना होई ॥ ४ ॥
ऐसे मानव जग बिच न्यारी । होवत अरी सुनो सुकुमारी ॥ ५ ॥
आत्मकाम अरु आत्मारामा । हत बुद्धि अति कठिन प्रकामा ॥ ६ ॥
इन बीचे मैं तो नहि पाऊँ । मैं अति कारूणिक कहलाऊँ ॥ ७ ॥
करते भक्त जो भजन हमारा । उन पर प्रेम न मोर अपारा ॥ ८ ॥
इसका अर्थ नहीं यह होई । करता प्रेम नहीं मैं सोई ॥ ९ ॥
चित्त वृत्ति निशिदिन मम अन्दर । लागी उसकी रहे निरन्तर ॥ १० ॥

दोहा- **यथा अधन धन पायके, होवत मुदित अपार ।**
पाछे धन जब नष्ट हो, चिन्तित वारम्वार ॥ २४९ ॥

चौ- आवत याद वही धन तेहू । करता काम यही हित येहू ॥ १ ॥
गृह पति सुत की तज अभिलासा । आई तुम सब मिल मम पासा ॥ २ ॥
रहत न प्रेम पास में ऐसो । वसत दूर अति होवत जैसो ॥ ३ ॥
यहि मैं सोच तिरोहित जाता । किन्तु न दूर गयो तुव गाता ॥ ४ ॥
प्रेम भरी सब बात तुम्हारी । करता रहा श्रवण सुकुमारी ॥ ५ ॥
सराबोर मैं प्रेम तुम्हारे । होकर सखियों सभी प्रकारे ॥ ६ ॥
मुझ पर भारी प्रेम तुम्हारा । मेरा तुम पर प्रेम अपारा ॥ ७ ॥
यहि हित दोष दृष्टि से मोंही । तुम सब मुझको लखो न योंही ॥ ८ ॥
दुर्जय गेह श्रृंखला तोरी । मम हेतु तुम सुनो किशोरी ॥ ९ ॥
योगी यति भी किसी प्रकारा । तोड़ सके ना योगन द्वारा ॥ १० ॥

दोहा- **इस सेवा अरु त्याग का, बदला किसी प्रकार ।**
दे सकता तुमको नहीं, धर कर देह अपार ॥ २५० ॥

चौ- हे सखियों में ऋणी तुम्हारा । चुक सकता नहि कर्ज अपारा ॥ १ ॥
कुछ उदारता तुम दिखलाऊ । मिटहिं तबहिं न और उपाऊ ॥ २ ॥
कृष्ण वचन सुनकर यों नारी । त्यागा ताप वियोगज भारी ॥ ३ ॥
अब अन्योन्य बद्ध भुज द्वारा । वृज गोपिन सह नन्द दुलारा ॥ ४ ॥
मंडल चारों ओर बनावा । दो सखि बिच इक वपु प्रकटावा ॥ ५ ॥
उत्सव रास हेतु तत्काला । भये प्रवृत्त वे कृष्ण कृपाला ॥ ६ ॥

निज समीप जब लखे मुरारी । कर आलिंगन मुदित अपारी ॥ ७ ॥
करते प्रेम मुझे ही भारी । समझी तब यों सब सुकुमारी ॥ ८ ॥
निज नारिन संग चढ़े विमाना । आये अमर वृन्द नभ नाना ॥ ९ ॥
नभ पर दुंदुभि देव बजाई । कुसुम वृष्टि की झरी लगाई ॥ १० ॥

दोहा- **पावन यश उन कृष्ण का, निज तिय सह हरसाय ।**
गावत सब गंधर्व पति, सुनो परीक्षित राय ॥ २५१ ॥

चौ- नुपूर कंकण किंकिणि शोरा । भयो रास मंडल चहुँ ओरा ॥ १ ॥
यहाँ देवकी सुत भगवाना । सखियन बीच सुशोभित नाना ॥ २ ॥
कंचन मणि बीचे जिमि सुन्दर । नीलम मणि सम सोभित यदुवर ॥ ३ ॥
भुजचालन वर चरणन न्यासा । हास सहित वर भृकुटि विलासा ॥ ४ ॥
कृश कटि उनकी नाचत नाचत । लचकत कुच पर कुंडल हालत ॥ ५ ॥
स्वेद सहित मुख अति सुकुमारी । सोभित भइ हरि संग अपारी ॥ ६ ॥
तड़ित वल्लरी इव अति सुन्दर । घन समूह बीचे जिमि अम्बर ॥ ७ ॥
रक्त कंठ युत रति प्रिय सारी । उच्च स्वर प्रिय राग उचारी ॥ ८ ॥
निज गायन ध्वनि सब जग व्यापी । कोई हरि सम राग अलापी ॥ ९ ॥
कृष्ण स्पर्श पाकर वे राया । अति आनन्द मग्न भई काया ॥ १० ॥

दोहा- **सुन उत्तम व विलक्षण, उनके शब्द मुकुन्द ।**
वाह वाह करने लगे, तदा सच्चिदानन्द ॥२५२॥

चौ- चन्द्रवदनि इक सखी सयानी । वही राग ध्रुव बीच बखानी ॥ १ ॥
कीन्हा उसका भी सम्माना । प्रेम समेत कृष्ण भगवाना ॥ २ ॥
एक सखी वर सुमुखी सयानी । नृत्य करत वह अतिव थकानी ॥ ३ ॥
वेला कुसुम वेणि के तासू । खिसके भुज कंकण वर जासू ॥ ४ ॥
पुनि प्रीतम कंधे पर अपनी । भुजधर कर ठाढी वह धरनी ॥ ५ ॥
एक सखी भुज हरि गल डारी । जिन तनु सौरभ कुमुद अपारी ॥ ६ ॥
चन्दन चर्चित तनु सुकुमारी । कीन्हो चुम्बन मुदित अपारी ॥ ७ ॥
नृत्य करत गोपी इक सुन्दर । इत उत हिलत जासु श्रुति कुन्डर ॥ ८ ॥
तासू छटा सुशोभित भारी । चमकत जासु कपोल अपारी ॥ ९ ॥
निज कपोल ऊपर वह नारी । धरे कपोल कृष्ण बनवारी ॥ १० ॥

दोहा- **उस गोपी के मुख विषै, निज मुख चर्वित पान ।**
दीन्हो होकर मुदित अति, कृष्ण चन्द्र भगवान ॥२५३॥

चौ- किंकिणि नूपुर घुँघर द्वारा । नाचत कोई सहित झनकारा ॥ १ ॥
होकर शिथिल यदा वह भारी । ठाढ़े देख बगल बनवारी ॥ २ ॥
उन कर धरे उरोजन ऊपर । त्यागी क्लान्त व्यथा इमि सुन्दर ॥ ३ ॥
पाय रमापति ज्योति स्वरूपा । वे वृजनारी प्रियतम रूपा ॥ ४ ॥
करत नृत्य सँग रासबिहारी । मुख मृदुध्वनि युत राग उचारी ॥ ५ ॥
अब हरि गोपि बाँधि भुजपाशा । भई सोभित तब वे अति खासा ॥ ६ ॥
कानन कुंडल कमल मनोहर । लटकत अलक कपोलन ऊपर ॥ ७ ॥
स्वेद बूंद झलकत मुख भारी । भई छटा अनोखि अपारी ॥ ८ ॥
मंडल रास बीच हरि संगा । करती नृत्य सप्रेम अभंगा ॥ ९ ॥
पायल कंकन बाजत बाजा । आ वहँ इत उत भ्रमर समाजा ॥ १० ॥

दोहा- **उन सखियन की राग में, वे निज राग मिलाय ।**
गावन लागे हे नृप, पावन यश यदुराय ॥२५४॥

चौ- गुंफित कुसुम वेणि अति सुन्दर । खिसकत चलात गिरे मही ऊपर ॥ १ ॥
निरविकार वशु निज परछाई । खेलत खेल यथा सुनुराई ॥ २ ॥
वैसे रमा रमण भगवाना । कीन्हो खेल सखिन सह नाना ॥ ३ ॥
कबहूँ उनको हृदय लगावे । अंग स्पर्श कबहूँ कर जावे ॥ ४ ॥
प्रेम भरी तिरछी चितवन से । देख मजाक करत सखियन से ॥ ५ ॥
यों वृजनारिन संग अपारा । कीन्ही क्रीड़ा और विहारा ॥ ६ ॥
भगवत अंग स्पर्श कर सारी । प्रेमानन्द विकल भई भारी ॥ ७ ॥
बिखरे उनके केश नृपाला । टूटे हार कुसुम गलमाला ॥ ८ ॥
अस्त व्यस्त भूषण सब भयऊ । रहिना सुध कंचुकि कच पटऊ ॥ ९ ॥
देख रास क्रीड़ा सुर नारी । भई नभ काम विमोहित सारी ॥ १० ॥

दोहा- **तारागण उडुगण सहित, विस्मित भये निशीश ।**
यद्यपि आत्माराम है, वे हरि सुनो महीश ॥२५५॥

चौ- निज अतिरिक्त किसी की कोई । उन्हें चाहना कुछ नहिं होई ॥ १ ॥
तदपि गोपियन संग अपारा । कीन्हो धर वपु कई विहारा ॥ २ ॥
कारण गायन नृत्य विहारा । आई शिथिलता सखिन अपारा ॥ ३ ॥
तब अति मुदित स्वयं भगवाना । उन मुख पोंछा रमा निधाना ॥ ४ ॥
हरि नख स्पर्शित वे सखि सारी । भई आनन्दित नृपति अपारी ॥ ५ ॥
सुन्दर तासु कपोलन ऊपर । लटकत कंचन कुंडल सुन्दर ॥ ६ ॥

अलके छिटक रही घुँघराली । प्रेम भरी चितवन मतवाली ।। ७ ।।
अमृत सम निज मृदु मुस्काना । कीन्हा सखियन हरि सन्माना ।। ८ ।।
अव सव हरि की परम पुनीता । गायन लगी सुनो नृप चरिता ।। ९ ।।
तोड़त जिमि गजराज किनारा । जावत गजिनी सह जलधारा ।। १० ।।

दोहा- **लोक वेद मर्याद तजि, त्यों हरि रमा निधान ।**
दूर करके काटणे, वे निज देह थकान ।।२५६।।

चौ- जल क्रीड़ा हित करत प्रसगा । पहुँचे यमुना नीर तरंगा ।। १ ।।
तेहि काल तुम सुनो नृपाला । स्पर्शित सखियन हरि वन माला ।। २ ।।
कुचल गई कुछ मुरझित जाता । कुच कुंकुम रञ्जित उन गाता ।। ३ ।।
करत गान अव अलि चहुँ ओरा । चाले उन अनुकृत अति शोरा ।। ४ ।।
ज्यों गंधर्वराज यश पावन । चाले हरि अनुगावत गायन ।। ५ ।।
यमुना नीर वीच सुकुमारी । प्रेम भरी चितवन लखि सारी ।। ६ ।।
हँस-हँस हरि पर नीर उछारी । भई आनन्दित सव सुकुमारी ।। ७ ।।
अव नभ चढ़ि सुर निज निजयाना । कीन्ही वर्षा कुसुम महाना ।। ८ ।।
कीन्ही अस्तुति सुरन अपारी । जल क्रीड़ा कर विपिन विहारी ।। ९ ।।
गजपति सम हरि वाहर आये । सव सखियन को संग लिवाये ।। १० ।।

दोहा- **षटपद वृज युवतिन सहित, पहुँचे रमा निधान ।**
कालिन्दी तट के निकट, उपवन एक महान ।। २५७ ।।

चौ- चारों ओर नीर स्थल सुन्दर । फूले फूल सुगंधित जहँ पर ।। १ ।।
लेकर उनकी सुखद सुवासा । देवत वात सुगंधित नासा ।। २ ।।
विचरण करन लगे वहँ कैसे । गजिनी झूंठ मत्तगज जैसे ।। ३ ।।
भई वह शरद निशा अति भारी । चन्द्र चन्द्रिका अति विस्तारी ।। ४ ।।
जो साहित्य शरद की गाई । काव्य शास्त्र बीचे सुनुराई ।। ५ ।।
उन सबसे वह सुन्दर रजनी । सोभित होय रही इस धरनी ।। ६ ।।
ऐसी शरद निा विच राई । सब सखियन संग अव वृज राई ।। ७ ।।
यमुना उपवन पुलिन मनोहर । कियो विहार सुनो तुम नृपवर ।। ८ ।।
एक बात् का राखउ ध्याना । सत्य काम वे कृपा निधाना ।। ९ ।।
ये सव उनके चिन्मय कामा । है चिन्मयि लीला अभिरामा ।। १० ।।

दोहा- **काम भाव की सव क्रिया, अरु उद्योग प्रवीन ।**
राखी इस लीला विषै, हरि ने निज आधीन ।। २५८ ।।

चौ- बोले नृप हे कृपा निधाना । स्थापित धर्म हेत भगवाना ॥ १ ॥
खल मद भञ्जन हित अवतारा । धारा सन्तन के उद्धारा ॥ २ ॥
धर्मसेतु के बाँधन हारे । शिक्षा धर्म प्रसारन वारे ॥ ३ ॥
पुनि उन स्वयं धरम विपरीता । परतिय स्पर्श करी इस चरिता ॥ ४ ॥
पूर्णकाम यद्यपि भगवाना । चाह न उनको काहु विधाना ॥ ५ ॥
केहि अभिप्राय कर्म यह निन्दित । कीन्हो कहो मुझे शुक पंडित ॥ ६ ॥
नृपति वचन सुन कहे मुनीशा । धर्म व्यतिक्रम दोष महीशा ॥ ७ ॥
तेजवन्त पर कबहुँ न लागू । खावहिं सर्व वस्तु जिमि आगू ॥ ८ ॥
जिनमें होय समर्थ न ऐसी । सोचे बात नहीं वह वैसी ॥ ९ ॥
होवहिं नष्ट वे मूढ़ स्वभावा । रूद्र बिना को गरल पचावा ॥ १० ॥

दोहा- **महापुरुष के वचन को, समझो सत्य प्रमान ।**
उनके कृत्यन पर कबहुँ, देवे ना नर ध्यान ॥ २५९ ॥

चौ- जो बोले वे मुख से बानी । करो काम वह तज कर ग्लानी ॥ १ ॥
उनके कृत्यन का व्यवहारा । कहिं कहिं होवत किसी प्रकारा ॥ २ ॥
गनिये तेजवन्त मदहीना । रहहिं न वे पाखण्ड अधीना ॥ ३ ॥
करहिं वे श्रेष्ठ करम यदि कोई । स्वारथ तासु नहीं उन होई ॥ ४ ॥
करहीं अशुभ करम वे कोई । अशुभ न तासु नहीं उन होई ॥ ५ ॥
स्वारथ और अशुभ से ऊपर । सदा उठे रहते वे नृपवर ॥ ६ ॥
इनके बीच नियम यह माना । जीव चराचर पति भगवाना ॥ ७ ॥
मानव सम उनके संग ऐसा । हो सम्बन्ध शुभाशुभ कैसा ॥ ८ ॥
जिनपद कमल धूरि करि सेवा । पावहिं भक्त मुक्ति फल मेवा ॥ ९ ॥
जिन सहयोग प्राप्त कर योगी । होवहिं करमन बन्ध वियोगी ॥ १० ॥

दोहा- **जिनका तत्व विचार कर, मुनि जन शील निधान ।**
कर्मन बन्ध नसाय के, विचरहिं निर्भय ठान ॥ २६० ॥

चौ- निज इच्छा ते दीन दयाला । धारहिं वे निज देह नृपाला ॥ १ ॥
भला कल्पना उनके ऊपर । हो सकती कैसे हे नृपवर ॥ २ ॥
तनिक विचार करो हरि ऊपर । गोप व गोपिन के हिय अन्दर ॥ ३ ॥
आतमरूप से वे भगवाना । सदा विराजत रमानिधाना ॥ ४ ॥
प्रकट हेतु चिन्मय श्री विग्रह । करते चरित यु भक्त अनुग्रह ॥ ५ ॥
संसारी जीवन पर भारी । दया हेतु धृत नर अवतारी ॥ ६ ॥

करते चरित अनेक प्रकासू । होवत नर तत्पर सुनि तासू ॥ ७ ॥
वृजवासी गोपन हिय अन्दर । तनिक न दोष लखा हरि ऊपर ॥ ८ ॥
हरि माया सो मोहित होकर । समझे वे निज तिय घर अन्दर ॥ ९ ॥
बीती रजनि युँ ब्रह्म समाना । ब्राह्म मुहूर्त अब उन जाना ॥ १० ॥

दोहा- **घर जावन की रुचि नहीं, यद्यपि वे सुकुमारि ।**
तदपि गेह निज निज गई, हरि आज्ञा सिरधारि ॥ २६१ ॥

छन्द- **धारि हरि सूरति सदा, हिय बीच क्रीड़ा कृष्ण की ।**
वृज गोपियन संग जो भई, रास लीला विष्णु की ॥
सुनहि जो यहि प्रेम से, अरु गावहीं जो नेम से ।
पावहीं वह भक्ति अतुलित, जो सुनावहिं प्रेम से ॥ ४६ ॥
नष्ट हों हिय रोग, उसकी काम बाधा सब मिटे ।
धर्म उसका साथ देकर, ताप त्रय सारा घटे ॥
पावहीं सुन्दर पति, कन्या कुमारी जो सुनहिं ।
पुत्र हीना पुत्रवति हो, नियम से इसको गुनहिं ॥ ४७ ॥

दोहा- **बोले शुक मुनि हे नृप, एक बार गोपाल ।**
गये अम्बिका वन विषै, जो निज शकट विशाल ॥ २६२ ॥

चौ- सरिता सुरसति करके स्नाना । ले उपहार अनेक महाना ॥ १ ॥
पूजे सब मिल शंभु भवानी । गोप गोपिका सुमुखि सयानी ॥ २ ॥
दीन्हो महिसुर हेतू दाना । गौ कंचन पट अन्न विधाना ॥ ३ ॥
धृत व्रत निरमल जल कर पाना । होकर मुदित सहित भगवाना ॥ ४ ॥
महाभाग नन्दादिक वीरा । सोये रजनी सुरसति तीरा ॥ ५ ॥
उस वन बीच बुभुक्षित अजगर । सोवत नन्द ग्रसे तेहि अवसर ॥ ६ ॥
अजगर ग्रस्त नन्द दुखियारे । कृष्ण कृष्ण इति कृष्ण पुकारे ॥ ७ ॥
ग्रसहिं तात उरग मोहिं घोरा । आकर शीघ्र हरो दुख मोरा ॥ ८ ॥
नन्द वचन सुन व्याकुल भारी । उठे गोप अहि लखि विकरारि ॥ ९ ॥
ज्वलित कष्ट ते मारन लागे । तदपि न सर्प नन्द को त्यागे ॥ १० ॥

दोहा- **तदा कृष्ण आकर वहाँ, चरण स्पर्श अहि कीन्ह ।**
हरि स्पर्शित पद पाप गत, अहि निज तनु तज दीन्ह ॥२६३॥

चौ- विद्याधर पूजित तनु पावा । कनक मलि वह हरि नावा ॥ १ ॥
तदा कृष्ण यों पूछन लागे । अद्भुत दर्शन अहि बड़ भागे ॥ २ ॥

तुम हो कवन य दुर्गति कैसे । कहो अरे पाई यह जैसे ॥ ३ ॥
बोला उरग सुनो वृजराजन । मैं विद्याधर नाम सुदर्शन ॥ ४ ॥
रुपवान संपदमद भारी । बैठि विमान प्रभो इक बारी ॥ ५ ॥
विचरन काज दशौ दिशि गयऊ । किन्तु वहाँ इक कौतुक भयऊ ॥ ६ ॥
आङ्गीरस मुनि वहाँ कुरूपा । देखे मैनें ज्योति स्वरूपा ॥ ७ ॥
निज स्वरूप पर गर्वित होकर । कीन्ह अवज्ञा मैं उन मुनिवर ॥ ८ ॥
दीन्हो शाप तदा मुनिराया । यहि कारण मैं यह तनु पाया ॥ ९ ॥
दीन्हों शाप जो मुनी दयालू । कियो अनुग्रह प्रभो कृपालू ॥ १० ॥

दोहा- **उसी शाप से लोकगुरु, पद कर स्पर्श तुम्हार ।**
निष्पापी हो इस समय, भयो मोह उद्धार ॥२६४॥

चौ- अब निज लोक सिधावन काजू । आज्ञा देउ मुझे वृजराजू ॥ १ ॥
मैं हूँ कृष्ण शरण अब तेरी । कर दर्शन अच्युत मति मेरी ॥ २ ॥
सुधरी ब्रह्म शाप से ताता । सर्व लोक पति ईश्वर धाता ॥ ३ ॥
सुनहिं जो गुनहीं नाम तुम्हारा । सद्य होहिं भवसागर पारा ॥ ४ ॥
मुझको चरण स्पर्श तुम कीन्हा । मम सम अन्य नहीं मैं चीन्हा ॥ ५ ॥
यों कह सुरपुर गयो सुदरसन । कर प्रदक्षिणा कर हरि वन्दन ॥ ६ ॥
छूटे नन्द तदा दुख राशी । कृष्ण प्रभाव देख वृजवासी ॥ ७ ॥
विस्मित चित्त न खुशी समाये । नियम समाप्त कीन्ह घर आये ॥ ८ ॥
एक वार सखियन संग लेकर । पहुँचे रामकृष्ण वन सुन्दर ॥ ९ ॥
रजनी बीचे वहाँ विहारा । कीन्हो हे नृप परम उदारा ॥ १० ॥

दोहा- **पीताम्बर धारी हरी, नीलाम्बर धर राम ।**
सुमन माल सुन्दर गले, शोभित शोभाधाम ॥२६५॥

चौ- तनु में अङ्गराग अति सुन्दर । चन्दन सौरभि अतिव मनोहर ॥ १ ॥
हेमाभूषण सुन्दर धारे । वृजतिय वहँ मृदु राग उचारे ॥ २ ॥
सायंकाल समय सुनु राया । चाँदनि छिटक रही शुभ दाया ॥ ३ ॥
लेकर वेला गंध मनोहर । करते अलिगुञ्जार जहाँ पर ॥ ४ ॥
विकसित कुमुदिनि निरमल नीरा । चाले वात मंद सर तीरा ॥ ५ ॥
करने अब सखियन सम्माना । गावत राग राम भगवाना ॥ ६ ॥
स्वर आरोह सहित अवरोहा । जासू राग सभी मन मोहा ॥ ७ ॥
जग के जीव चराचर तारे । सुन वह राग भये मतवारे ॥ ८ ॥

सुन वह गीत सभी वृजनारी । गत पट तनु की सुधी बिसारी ॥ ९ ॥
मत्त समान करत यों लीला । रामकृष्ण भ्राता यदु शीला ॥ १० ॥

दोहा- **आवा अनुचर धनद का, शंखचूड़ जेहि नाम ।**
धर निज रूप कराल अब, जहाँ श्याम बलराम ॥२६६॥

चौ- उनके देखत यक्ष विशाला । निर्भय हठयुत तदा नृपाला ॥ १ ॥
कीन्ही हरण सभी वृज नारी । करने लगी रूदन अब सारी ॥ २ ॥
राम राम हे कृष्ण कृपालू । सुन उन क्रन्दन दीन दयालू ॥ ३ ॥
धाये राम श्याम गहि शाला । पहुंचे जहँ खल यक्ष विशाला ॥ ४ ॥
काल मृत्यु इव लखि दोउ भाई । भागा वह वृजतियन तजाई ॥ ५ ॥
यत्र यत्र धावा खल कामी । देखे निज अनु वहँ वृजस्वामी ॥ ६ ॥
करने हरण सीस मणि तासू । धाये कृष्ण चन्द्र अनु आसू ॥ ७ ॥
इत बलराम तियन रखवारी । यक्ष पास उत गये खरारी ॥ ८ ॥
प्रभु वह क्रूर यक्ष गहि लीन्हा । मुष्टि प्रहार सीस उस कीन्हा ॥ ९ ॥
मस्तक चीर सीस मणि लीन्ही । सब सन्मुख अग्रज प्रति दीन्ही ॥ १० ॥

दोहा- **बोले श्री शुकदेव नृप, वे सब गोपकुमारि ।**
कृष्ण संग रजनी विषै, क्रीड़ा करत अपारि ॥ २६७ ॥

चौ- प्रतिदिन गाय चरावन काजू । जावत विपिन यदा वृजराजू ॥ १ ॥
सखियन चित्त कृष्ण संग जावे । मन घर पर हरि रटन लगावे ॥ २ ॥
वाणी से गाकर हरि लीला । यों दिन व्यतित करत मति शीला ॥ ३ ॥
मिल सब सखियां वदत परस्पर । देखो अरी सखी नटनागर ॥ ४ ॥
सन्त जनन को सुख के दाता । शत्रुन को भी मोक्ष प्रदाता ॥ ५ ॥
जब वे वाम कपोल झुकाई । बाँई बाँह ओर लटकाई ॥ ६ ॥
निज भृकुटिन को अरी नचावत । मुरली को निज अधर लगावत ॥ ७ ॥
पूरत जब वे तान मनोहर । सिद्धि पत्नियाँ तब नभ ऊपर ॥ ८ ॥
निज पतियन संग बैठि विमाना । आवत श्रवण हेत मृदु ताना ॥ ९ ॥
सुन उन तान चकित हो भारी । विस्मित हो जावत वे सारी ॥ १० ॥

दोहा- **निज पतियन के संग में, रह रहि ये सुर नारि ।**
प्रथम लाज व्यापी इन्हें, निज चित दशा निहारि ॥ २६८॥

चौ- वश नहिं राखा अब मन इनने । बींधी वे सब मन्मथ शर ने ॥ १ ॥
होकर विवश अचेतन सारी । सुध बुध तनु की सभी बिसारी ॥ २ ॥

नीवी खुल खिसके सब अम्बर । वेणी कुसुम गिरे मही ऊपर ॥ ३ ॥
बात अरी सुनु अचरजकारी । कितने सुन्दर नन्द विहारी ॥ ४ ॥
देख सखी इनकी मृदुहासा । हास्य रेख सम हार प्रकासा ॥ ५ ॥
मुक्तामणि सम यह अति चमकत । इन उर पर बनमाल विराजत ॥ ६ ॥
हास्य रश्मि उस पर हे वीरा । चमक रही मानो मणि हीरा ॥ ७ ॥
देख अरी श्रीवत्स मनोहर । मानो तड़ित श्याम घन ऊपर ॥ ८ ॥
दुखियन दुःख निवारन कारण । विरहिन तनु विच प्राण प्रसारण ॥ ९ ॥
टेरत मुरली मधुर कन्हैया । पास सिधावे मृग वृष गैया ॥ १० ॥

दोहा- **दन्तन ते चर्वित तृण, मुख विच ज्यों का त्योंय ।**
पड़ा रहे निगले नहीं, अरु उगले नहीं कोय ॥ २६९ ॥

चौ- हत चित लिखित सुचित्र समाना । ठाढे कृष्ण पास धृत काना ॥ १ ॥
हे सखि यदा सबल वृजराई । धातु व पल्लव अंग सजाई ॥ २ ॥
मोर पुच्छ सुन्दर सिर सोहा । मल्लवेष कृत सब मन मोहा ॥ ३ ॥
मुरली मधुर बजा बलभैया । पास बुलावत जब वे गैया ॥ ४ ॥
भग्न गति सरिता तब नीरा । ऐसी इच्छा करत अखीरा ॥ ५ ॥
हरि पद रज ला यहाँ समीरा । पहुँचाये हम सबके तीरा ॥ ६ ॥
वहि रज पाकर होय निहाला । हम सब उनका भी यहि हाला ॥ ७ ॥
उन हरि का जिमि कर आलिंगन । हो कम्पायमान जब यह तन ॥ ८ ॥
हो जावत पुनि जड़ता भारी । तब नहि हालत भुजा हमारी ॥ ९ ॥
अरी प्रेम के कारण वैसे । होवत कम्प तरंगन तैसे ॥ १० ॥

दोहा- **विवश होय पुनि हम समाँ, पाछे स्थिर वे होय ।**
स्तम्भित प्रेमावेश में, सुध बुध सारी खोय ॥ २७० ॥

चौ- वर्णित गोपन द्वारा गावन । गिरि पर चरती हुई सब सुरभिन ॥ १ ॥
वेणु बजाकर यदा पुकारे । तदा वृक्ष वन लता अपारे ॥ २ ॥
फल पुष्पन से युत हो भारी । झुकति महि वन्दन हित डारी ॥ ३ ॥
मधुधारा बरसावत आली । उन वियोग हम किमि सहे लाली ॥ ४ ॥
जे वस्तु इह पर संसारा । सबसे सुन्दर नन्दकुमारा ॥ ५ ॥
केशर खौर अरी उन भाला । दीखत है सखि कितनी आला ॥ ६ ॥

दोहा- **देखत जाऊ हे सखी, घुटनों तक वनमाल ।**
तुलसी गंध सुहावनी, आवत जासु विशाल ॥ २७१ ॥

चौ- अलिकुल मत्त मधू अति सुन्दर । करते हे सखि रव उच्च स्वर ॥ १ ॥
अरी सखी हम कहा बतावे । वह ध्वनि तो सबके मन भावे ॥ २ ॥
सारस हंस विहंग तलावा । मृदु गायन उन चित्त लुभावा ॥ ३ ॥
हरि समीप आकर खग सारे । करते ध्यान मौन मुख धारे ॥ ४ ॥
सह बल कृष्ण यदा गिरि ऊपर । टेरत वेणू नाद मनोहर ॥ ५ ॥
तदा श्याम घन सुन मृदु ताना । गर्जत मन्द मन्द नभ नाना ॥ ६ ॥
करते वर्षा कुसुम महाना । करते छाया छत्र समाना ॥ ७ ॥
हे वृजरानी पुत्र तुम्हारा । गोपन क्रीड़ा निपुण अपारा ॥ ८ ॥
रख निज अधर यदा यह वेनू । गा स्वरुजाति बुलावत धेनू ॥ ६ ॥
विधि शिव इन्द्र तदा बड़ भागी । नम्रकंठ होवत सुन रागी ॥ १० ॥

दोहा- होवत मोहित देव सब, सुध बुध खो उस काल ।
वंशी ध्वनि में लीन हो, मानत निजहिं निहाल ॥ २७२ ॥

चौ- अंकुश कमल वज्र ध्वज सुन्दर । उन पद बीचे चिह्न मनोहर ॥ १ ॥
जब गौ खुरन मही खुद जावत । तब निज पद उस पीर नसावत ॥ २ ॥
अरी बीर मृदु मुरलि बजावत । मन्द चाल ते गज सम आवत ॥ ३ ॥
जब हम देखहिं यदुपति अंगा । तब तनु बाढ़हिं पीर अनङ्गा ॥ ४ ॥
पाछे जड़मति होय हमारी । बिसरे केशबन्ध पट सारी ॥ ५ ॥
उन गल बीच अरी मणि माला । दीखत कितनी भली विशाला ॥ ६ ॥
तुलसी मधुर गंध उन प्यारी । तुलसी माल गले यों धारी ॥ ७ ॥
त्यागत उसको वे ना कबहूँ । सदा कंठ धारण तेहि करहूँ ॥ ८ ॥
ले मणि माल यदा बल भैया । गिनती करते करते गैया ॥ ६ ॥
किसी गोप के कंठ प्रदेशा । रख निज बाँह विशाल वृजेशा ॥ १० ॥

दोहा- **भाव बता निज बाँसुरी, अरी बजावत बीर ।**
मृग पत्नी मोहित तदा, भर नयनन में नीर ॥ २७३ ॥

चौ- निज चित उनके चरणन ऊपर । करती सब मिल अरी निछावर ॥ १ ॥
हम सब तजकर घर अभिलासा । आवत दौड़ अरी उन पासा ॥ २ ॥
चारों ओर खड़ी रह जाती । घर जावन मुख नाम न लाती ॥ ३ ॥
पायो सुत ऐसो नन्द रानी । तुम सम पुण्यवती नहि आनी ॥ ४ ॥
कुन्द दाम कृत कौतुक वेशा । गोपन गोधन सहित वृजेशा ॥ ५ ॥
यमुना बीच करत जब लीला । बहता वात सुगंधित सीला ॥ ६ ॥

गंधर्वादिक वहाँ अपारा । वाद्य गीत पुष्पादिक द्वारा ॥ ७ ॥
करते उनका सखि सन्माना । हो कर निज मन मुदित महाना ॥ ८ ॥
जब घर आवत नन्दविहारी । हे सखि वे वृज गौ हितकारी ॥ ९ ॥
जिस पद वन्दन सुर शिव धाता । सायंकाल अरी जब आता ॥ १० ॥

दोहा- **गैया सकल बटोर तब, वेणू मधुर बजाय ।**
आवत खुर रज युत तनु, मन्द मन्द मुस्काय ॥ २७४ ॥

चौ- ग्वाल बाल गावत जिन गाना । आवत होंगे वे भगवाना ॥ १ ॥
झिलमिल कान्ति कपोलन ऊपर । लटकत गल वनमाल मनोहर ॥ २ ॥
हे सखि मुख पर बेर समाना । पीलापन यहि कारण माना ॥ ३ ॥
भ्रमत भ्रमत ये दिन भर कानन । थक गय होंगे प्रिय मनमोहन ॥ ४ ॥
यशुदा कोंख प्रकट ये जाता । हम सबके नयनन सुखदाता ॥ ५ ॥
आ रहे पास अरी बनवारी । पूरण करने आश हमारी ॥ ६ ॥
अब हम देख अरी सखि इनको । करते तृप्त सभी नयनन को ॥ ७ ॥
रोम रोम ते फूटत भारी । सुन्दरता की धार अपारी ॥ ८ ॥
अब ग्वालन को कर सन्माना । करते अरी विदा भगवाना ॥ ९ ॥
देख सखी गजराज समाना । आवत इत वे गावत गाना ॥ १० ॥

दोहा- **आया सायंकाल यह, हम अरु वृज की गाय ।**
विरहानल संताप में , सारा दिवस विताय ॥ २७५ ॥

चौ- अब वह ताप मिटावन कारन । आवत श्याम चन्द्र मनमोहन ॥ १ ॥
बोले शुक मुनि सुनु नरनाहू । सब गोपी बड़भागी अथाहू ॥ २ ॥
उन मन कृष्ण चरण अनुरागी । तन्मय भई परम बड़भागी ॥ ३ ॥
हे नृपवर दिन में हरि कानन । जावत लेकर गाय चरावन ॥ ४ ॥
दिनभर उनका चिन्तन करती । लीला गान करत ना थकती ॥ ५ ॥
कबहुँ विरह ताप के मारे । प्रेमाश्रुन नयनन निज धारे ॥ ६ ॥
भिन्न भिन्न निज सखियन संगा । करती लीला गान अभंगा ॥ ७ ॥
इसी प्रेम से सब रम जावत । अन्य काम में चित ना लागत ॥ ८ ॥
यों सब दिवस वितावत सारी । नासत हिय की पीर अपारी ॥ ९ ॥
अब बोले शुक सुनो नरेशा । पहुँचे वृज विच यदा वृजेशा ॥ १० ॥

दोहा- धूमधाम वृज में भईगायन की चहुँ ओर ।
नाम अरिष्टासुर तदा, वृषभाकृति कर सौर ॥ २७६ ॥

चौ- निज खुर मही विदारत आया । ककुद विशाल सुपुष्ट निकाया ॥ १ ॥
करता वृषभ जाति रव भारी । पद पटकत महि कम्पित सारी ॥ २ ॥
ऊर्ध्व पुच्छ कर तीक्ष्ण विषाना । खादत मेढ़ दिवारन नाना ॥ ३ ॥
विष्ठा मूत्र तजत वृज आवा । स्तब्ध नयन वह इत उत धावा ॥ ४ ॥
सुनकर उसका शब्द विशाला । स्रवत पतत तिय गर्भ अकाला ॥ ५ ॥
जासु ककुद ऊपर गिरि शंका । आकर बैठत मेघ निशंका ॥ ६ ॥
तीक्ष्ण श्रृंग युत दानव देखा । गोप व गोपी भीत विशेषा ॥ ७ ॥
पशु वृज त्याग चले अब सारे । कृष्ण कृष्ण इति गोप पुकारे ॥ ८ ॥
गये शरण मिलकर गिरधारी । वृज भय विद्रुत देख अपारी ॥ ९ ॥
मत डरहू यो गिरा उचारी । दैत्य पास जाकर गिरधारी ॥ १० ॥

दोहा- **पशु गोपन को मन्दमति, डरपावत केहि काज ।**
तुम सम दुष्टन दर्पबल, हरण करहुँ मैं आज ॥ २७७ ॥

चौ- यों कह हरि ने खल ललकारा । ठोंकी ताल तदा कर द्वारा ॥ १ ॥
उसको क्रोध दिलावन भारी । ठाढे सखा कंठ भुज डारी ॥ २ ॥
यों कोपित दानव खुर द्वारा । महि खोदत हो क्रुद्ध अपारा ॥ ३ ॥
झपटा अब वह हरि के ऊपर । फटकारी निज पुच्छ भयंकर ॥ ४ ॥
धका पूँछ लगा नभ ऊपर । तितर वितर हो गय तब बादर ॥ ५ ॥
आगे कर निज सींग अभागा । रक्त नयन करि देखन लागा ॥ ६ ॥
इन्द्र वज्र सम हरि के ऊपर । धावा वेग युक्त वह निशिचर ॥ ७ ॥
गहे श्रृंग तब हरि कर खेला । पद अष्टादश तेहि पुनि ठेला ॥ ८ ॥
जैसे गज प्रति गजहिं हटावें । त्यों हरि तेहि हटावत जावे ॥ ९ ॥
गिरा भूमि ऊपर तब निशिचर । धावा झपट बाद हरि ऊपर ॥ १० ॥

दोहा- **लेकर लम्बी श्वास वह, आवा हरि के पास ।**
पकरे तीखे सींग तब, हरि ने कर उपहास ॥ २७८ ॥

चौ- पदाक्रमण कर पुनि महि डारा । आद्र पट्ट सम तेहि निचौरा ॥ १ ॥
पाछे सींग उखारे दोऊ । गिरा भूमि मारत उन सोऊ ॥ २ ॥
रक्त वमन कर पाँव पछारे । तजकर विष्ठा मूत्र अपारे ॥ ३ ॥
निकसे नयन तजे तब प्राना । कुसुम वृष्टि कीन्ही सुरनाना ॥ ४ ॥
यों हरि ने वृषभासुर मारा । स्तूयमान अब जातिन द्वारा ॥ ५ ॥
सबल कृष्ण वृज बीच सिधाये । गोपिन नयन तदा जल छाये ॥ ६ ॥

जब हरि ने इत दानव मारा । पहुँचे नारद कंस दुआरा ॥ ७ ॥
बोले वचन सुनो मथुरेशा । कीन्हो तुम सब काम भदेसा ॥ ८ ॥
कीन्ही भूल कंस तुम भारी । जो कन्या तुम अरे पछारी ॥ ९ ॥
यशुमति कन्या जानउ तेहू । कृष्ण देवकी सुत नृप येहू ॥ १० ॥

दोहा- **पुत्र देवकी का अरे, सप्तम श्री बलराम ।**
दोनों सुत वसुदेव ने, पहुँचाये नन्दधाम ॥ २७९ ॥

चौ- इन दोउन ने कंस तुम्हारे । सारे रजनीचर संहारे ॥ १ ॥
यों सुनकर नारद की वानी । कर अति कोप कंस अभिमानी ॥ २ ॥
देवकीश के वध हितराया । निजकर भारी खड्ग उठाया ॥ ३ ॥
बोले तब नारद सुन राजा । ऐसो मत तुम करो अकाजा ॥ ४ ॥
देवकीश को यदि तू वधहीं । तो दोऊ भ्राता वहँ ते भजहीं ॥ ५ ॥
इन वध उचित नहीं हम चीन्हा । यों कहि कंस निवारण कीन्हा ॥ ६ ॥
पत्नी सह वसुदेव बुलाये । लोह पाश में दोऊ बन्धवाये ॥ ७ ॥
हे नृप नारद यदा सिधाये । तब केशी निज पास बुलाये ॥ ८ ॥
बोला केशी तू वृज जाऊ । राम कृष्ण को वध कर आऊ ॥ ९ ॥
यों सुन केशी वृज में आया । उत कंसा मंत्री बुलवाया ॥ १० ॥
शूल मुष्टिक तोशल चाणूरा । हस्तिप सहित अमात्यन पूरा ॥ ११ ॥

दोहा- **बुलवाकर कहने लगा, सबको निज दरबार ।**
वसुदेव के पुत्र दो, रहते नन्दागार ॥ २८० ॥

चौ- उन द्वारा मम मौत विधाता । दर्शित कीन्ह सुनो सब भ्राता ॥ १ ॥
आवहिं यहाँ यदा दोउ भाई । मल्लशाल वधहु इन लाई ॥ २ ॥
भाँति भाँति अब मञ्च बनाऊ । गोलगोल चहुँ ओर सजाऊ ॥ ३ ॥
जनपद और सभी पुरवासी । देखहिं यह संग्राम प्रवासी ॥ ४ ॥
हे हस्तिप तुम चतुर हमारे । गज सह तुम रहु रंग दुआरे ॥ ५ ॥
जब मम शत्रु इधर से आवे । वहि गज उनको मार गिरावे ॥ ६ ॥
करहु उपाय अरे तुम ऐसो । बचहि न शत्रु जगत में जैसो ॥ ७ ॥
आवत चौदश तिथि यह सुन्दर । करहीं धनुर्याग हम मिलकर ॥ ८ ॥
भूतराज हित पशु बलि देकर । रचें काम यह हम अति सुन्दर ॥ ९ ॥
यों निज आज्ञा सबन्हि सुनावा । निज समीप अक्रूर बुलावा ॥ १० ॥

दोहा- उन कर गहि निज कर विषै, बोला कंस नृपाल ॥ १ ॥
मित्र कृत्य तुम मम करो, हे अक्रूर कृपाल ॥ २८१ ॥

चौ- भोज वृष्णि विच मम हित कर्ता । दीखत अन्य नहीं दुखहर्ता ॥ १ ॥
जिमि समर्थ होवत सुरराई । तो भी हरि आश्रित वह भाई ॥ २ ॥
एक काम तव आश्रित ताता । तुम विन अन्य न आश्रित भ्राता ॥ ३ ॥
नन्दराय वृज अव तुम जाऊ । आनन दुंदुभि सुतहिं लिवाऊ ॥ ४ ॥
रथ विठाय उनको यहँ लाऊ । करो देर मति अभी सिधाऊ ॥ ५ ॥
उन दोउन ते सुनु तुम ताता । मेरी मृत्यू रची विधाता ॥ ६ ॥
भेट सहित नन्दादिक ग्वालन । लाऊ यहाँ पर जा वृन्दावन ॥ ७ ॥
आवहिं जव यहँ वे दोऊ भ्राता । गज द्वारा करवावऊँ घाता ॥ ८ ॥
देव योग ते वहँ वच जावे । मल्ल यहाँ उन मार गिरावे ॥ ९ ॥
यों हो अहिं उनका वध ताता । हनु आनक दुंदुभि सह भ्राता ॥ १० ॥

दोहा- नृपपद कामुक जनक मम, देवक भ्राता तासु ।
इन सह मोरे अरिन को, हनूँ वाद में आसु ॥ २८२ ॥ क
होअहिं कन्टक नष्टमहि, सव विधि से इस तोर ।
द्विविद वाण शम्वर नरक, जरासंध गुरु मोर ॥ २८२ ॥ ख

चौ- इन सवको लेकर में संगा । सुरपक्षिन नृप मद कर भंगा ॥ १ ॥
भोगू राज अकंटक भाई । यह अक्रूर करो चतुराई ॥ २ ॥
राम कृष्ण अर्भक दोऊ भ्राता । लावउ शीघ्र यहाँ तुम ताता ॥ ३ ॥
आनउ धनुर्याग अवलोकन । शोभा मधुपुर परम सुहावन ॥ ४ ॥
सुन यों कंसराज की वानी । वोले वच अक्रूर सुजानी ॥ ५ ॥
यह निज मरण निवारण कारन । नीक विचार कीन्ह तुम राजन ॥ ६ ॥
लाभ अलाभ वीच समभाऊ । रख निज काम करे नरराऊ ॥ ७ ॥
फल की वात नहीं मन आने । फलदाता तो दैव वखाने ॥ ८ ॥
यह मानव नर सभी प्रकारा । वाँधत सेतु मनोरथ सारा ॥ ९ ॥
वह न जानत येन प्रकारा । कीन्हो नष्ट भाग्य विधि द्वारा ॥ १० ॥

दोहा- होअहिं विधि अनुकूल तव, होवत सफल प्रयास ।
यदि विधि हो प्रतिकूल तो, सव विधि होत विनास ॥ २८३॥

चौ- होवत सफल यतन जब सारा । होवत मानव मुदित अपारा ॥ १ ॥
होवत यतन विफल जव सारा । शोक ग्रस्त हो सभी प्रकारा ॥ २ ॥

तो भी मैं आदेश तुम्हारा । मानूँ मैं नृप सभी प्रकारा ॥ ३ ॥
दे यों उन प्रति निज आदेशा । मंत्रिन तज गृह गयो नरेशा ॥ ४ ॥
गाँदिनिसुत भी इत गृह आये । उत मंत्री निज गेह सिधाये ॥ ५ ॥
बोले मुनी सुनो अब भूपा । प्रेरित कंस अश्व धरि रूपा ॥ ६ ॥
कैशी नाम दैत्य बल धारी । निज खुर ते वृज भूमि विदारी ॥ ७ ॥
आता वह मन वेग समाना । उन्नत मुख तिरछे करि काना ॥ ८ ॥
निज गीवा कच वह फटकारे । बिखरत नभ घनयान अपारे ॥ ९ ॥
हिन हिनाट भीषण सुन भारी । कम्पित भए वृज के नर नारी ॥ १० ॥

दोहा— भीषण नयन विकट मुख, गिरि कोटर परमान ।
नील महाघन सम तनु, वह दानव बलवान ॥ २८४ ॥

चौ- आवा कंसराज प्रिय काजू । पहुँचा अब वह वृज नन्दराजू ॥ १ ॥
तासु शब्द सुन गोकुल भारी । भागा इत उत त्रसित अपारी ॥ २ ॥
अन्वेषत निज सम सब बलशाली । धावत इत उत देव कुचाली ॥ ३ ॥
लख अब उसको कृष्ण कृपाला । पहुँचे दानव पास कराला ॥ ४ ॥
बोले दुष्ट अरे कहि काजू । डरपावत तू गोप समाजू ॥ ५ ॥
सुन यों वचन कृष्ण के काना । कर अति नाद मृगेन्द्र समाना ॥ ६ ॥
मानों वह करहीं नभ पाना । धायो झट ऊपर भगवाना ॥ ७ ॥
पाछे चरण उठाकर दोऊ । कीन्ह प्रहार कृष्ण पर सोऊ ॥ ८ ॥
अब उसका वह बचा प्रहारा । होकर उस पर रुष्ट अपारा ॥ ९ ॥
हे नृप खगपति नाग समाना । धर पद भ्रमा दीन्ह नम नाना ॥ १० ॥

दोहा- शतधनु अन्तर पर उसे, तज कर स्थित भगवान ।
सावधान होकर पुनि, उठ दानव बलवान ॥ २८५ ॥

चौ- धावा हरि ऊपर मुख फारी । निज भुज तब उस मुख बिच डारी ॥ १ ॥
ज्यो अहि बिल बिच करत प्रवेशा । त्यों डारी भुज कंठ प्रदेशा ॥ २ ॥
भुज स्पर्शत तब दानव दन्ता । गिरे भूमि सन्मुख भगवन्ता ॥ ३ ॥
जलधर रोग उपेक्षित गाढी । तासु देह गत भुज यों बाढी ॥ ४ ॥
यों भुज बढत रुद्ध भइ बाता । भ्रमित नयन निज पाद प्रपाता ॥ ५ ॥
करत पुरीप भयउ गत प्राना । गिरा भूमि दानव बलवाना ॥ ६ ॥
कर्कटिका फल सदृश आलू । खेंची निज भुज हरि मुख तालू ॥ ७ ॥
सुमन वृष्टि अब हरि पर डारी । कर जोरे सुर स्तोत्र उचारी ॥ ८ ॥

जिन पद ध्यान करत मुनिराई । मोह जनित सब तिमिर नसाई ॥ ५ ॥
वे भगवान स्वयं अवतारा । लेकर आये मधुपुर द्वारा ॥ ६ ॥
ब्रह्मा शिव सुरपति के द्वारा । जे पद पूजे विविध प्रकारा ॥ ७ ॥
जिन चरणन ते गाय चरावन । जावत गोपालन सह कानन ॥ ८ ॥
जे गोपिन कुच कुंकुम अंकित । होवहिं आज वही पद दर्शित ॥ ९ ॥
कारुण कंज विलोचन सुन्दर । नासा सुघड़ कपोल मनोहर ॥ १० ॥

दोहा- **कोमल गालन ऊपरे, लटकत कुञ्चित केश ।**
उन मुकुन्द मुख देखकर, भाजहि सकल कलेश ॥ २६१ ॥

चो- हो रहे आज शकुन भी सुन्दर । निकसत दक्षिण ऐण मनोहर ॥ १ ॥
निज इच्छा से ले अवतारा । आये दूर करन महि भारा ॥ २ ॥
करुँ मैं आज उन्हीं का दरसन । मिलहीं आज मुझे फल नयनन ॥ ३ ॥
कारज कारण दर्शन कर्ता । मदते हीन सकल जगभर्ता ॥ ४ ॥
ऐसे हरि गोपिन के दर पर । करते क्रीड़ा कर्म मनोहर ॥ ५ ॥
इन गुण जन्म कर्म जो गावे । वहि वाणी वाणी कहलावे ॥ ६ ॥
वहि सब जग को पावन करती । सब जंजाल जगत के हरती ॥ ७ ॥
इन गुण जनम न करम उचारी । वह वाणी शव शोभा करारी ॥ ८ ॥
वहि प्रभु यदुकुल ले अवतारा । आज विराजत नन्द दुआरा ॥ ९ ॥
जिन हरि का यश मंगलकारी । गावत सुरपुर सुर सहनारी ॥ १० ॥

दोहा- **सत पुरुषन हित मुक्ति प्रद उन ईश्वर को आज ।**
पीऊँ जी भर नयन ते, सफल होंहिं तव काज ॥ २६२ ॥

चो- आज प्रभात समय में मोहिं । शकुन अरे शुभ सूचक होहीं ॥ १ ॥
पावत राम कृष्ण के दरसन । उतरूँ सपदि त्याग यह स्यन्दन ॥ २ ॥
ऋषि मुनि जिन पद निज मति द्वारा । निज उर धारहिं विविध प्रकारा ॥ ३ ॥
अति दुर्लभ उनके पद इनको । वहि पद आज सुलभ भए मुझको ॥ ४ ॥
अब उन चरण कमल सुखदाता । जिन गहुँ हस्त सफल करुँ गाता ॥ ५ ॥
पाछे गोप ग्वाल जे बृज के । करूँ वन्दना उन पद सबके ॥ ६ ॥
वन्दहिं मम शिर उन पद दोऊ । धरहीं ममशिर पर कर सोऊ ॥ ७ ॥
सुरपति भी कर जिन पद पूजन । पावा सुरपुर बिच इन्द्रासन ॥ ८ ॥
यद्यपि कंसदूत मोहिं जानी । तदपि न वे अरिभाव न आनी ॥ ९ ॥
वे हरि तो सर्वज्ञ कहावे । दीनन ऊपर नेह दिखावे ॥ १० ॥

दोहा- कृत अञ्जलि हरि चरण बिच, जब मैं सीस झुकाऊँ ।
कृपादृष्टि मोहिं देखहीं, इसमे संशय नाउँ ॥२६३॥

चो- कृपा दृष्टि अवलोकहिं मोऊँ । तब आनन्द मग्न मैं होऊँ ॥ १ ॥
जब मोहिं हाथ पकर यदुनाथा । भेटहिं प्रेम सहित भर बाथा ॥ २ ॥
होवहिं तब मम यह तनु पावन । छूटहिं सब कर्मन के बंधन ॥ ३ ॥
कृत अञ्जलि हरि नम्र अपारे । निज मुख ते यों वचन उचारे ॥ ४ ॥
हे अक्रूर तात इत आऊ । तबहिं सफल जनम मम भाऊ ॥ ५ ॥
हरि द्वारा जो आदर पावे । तासु जनम अतिश्रेष्ठ कहावे ॥ ६ ॥
हरि द्वारा आदर ना पावा । धृक धृक जन्म तासु सब गावा ॥ ७ ॥
हरि का प्रिय अप्रिय ना कोई । मित्र न शत्रु सखा नहि सोई ॥ ८ ॥
उनका कोइ उपेक्ष्य न होई । सब प्रकार जानउ सम सोई ॥ ९ ॥
तो भी भक्तन आश अपारी । पूरहिं देवतरू सम सारी ॥ १० ॥

दोहा- अरे राम मुझ नम्र को, भेटहिं गले लगाय ।
पाछे मेरा हाथ गहि, निज घर में ले जाए ॥ २६४ ॥

चो- कंस कृत्य पूछहिं तब सारे । निज बन्धुन पर कष्ट गुजारे ॥ १ ॥
करत विचार यों मार्ग अपारा । पहुँचे वृज अक्रूर उदारा ॥ २ ॥
सायंकाल समय जब आवा । वह रथ गोकुल बीच सिधावा ॥ ३ ॥
देखे वहँ हरि चरण मनोहर । पद्म यवांकुश अंकित रज पर ॥ ४ ॥
उन दरसन कर सम्भ्रम जाता । प्रेम अश्रु रोमाञ्चित गाता ॥ ५ ॥
उतरे धरनि तदा रथ त्यागी । वह अक्रूर परम बड़भागी ॥ ६ ॥
हरि पद रज दुर्लभ सिर धारी । लोटे रज पर सुध तजि सारी ॥ ७ ॥
सुलभ लाभ देहिन प्रति येहू । राखहिं ऐसो हरि पर स्नेहू ॥ ८ ॥
पहुँचे वृज गौ दोहन स्थाना । देखे वहाँ सबल भगवाना ॥ ९ ॥
वय किशोर श्याम तनु श्वेता । भुज आजानु रमानिकेता ॥ १० ॥

दोहा- नील पीत अम्बर धरे, शरद कंज सम नैन ।
गज शावक सम विक्रमी, वर मुख करुणाऐन ॥ २६५ ॥

चो- ध्वज वज्रांकुश अंकित पादा । जिनते वृज महि सोभित ज्यादा ॥ १ ॥
गल वनमाल मणिन के हारा । जगमग करते विविध प्रकारा ॥ २ ॥
निर्मल पट धारे कर स्नाना । अंगराग चन्दन तनु साना ॥ ३ ॥
जगपति जग कारण सह रामा । प्रकटे आद्य पुरुष वृज धामा ॥ ४ ॥

चिन्तन कर निज अश्रु बहाई । सब मिल यों बोली सुन राई ॥ २ ॥
धन्य विधाता गति तुम्हारी । रचते जगत व्यवस्था सारी ॥ ३ ॥
अरे किन्तु तव हृदय प्रदेशा । दीखत नहीं दया लव लेसा ॥ ४ ॥
प्रेम मित्रता सहित विधाता । जोरत तुम प्राणिन का नाता ॥ ५ ॥
पाछे तुम उन करत विछोहू । उचित न बात लखी यह तोहू ॥ ६ ॥
ये सब खेल तुम्हारा धाता । बाल समान अकारथ जाता ॥ ७ ॥
असित केश आवृत जिन भाई । कृष्ण मुखारविन्द दिखलाई ॥ ८ ॥
अब तुम करत प्रदर्शन येहू । निंद्य कर्म जाना यह तेहू ॥ ९ ॥
तुम अक्रूर रूप धर आये । वास्तव तुम अति क्रूर कहाये ॥ १० ॥

दोहा- **दीन्ही अँखिया प्रथम तुम, हरण करहु अब तासु ।**
हरि दर्शन करती रहे, अरे धात हम जासु ॥ ३०१ ॥

चो- सब सृष्टि की सुन्दर ताई । देखत हम जिन नयनन भाई ॥ १ ॥
जिन नयनन ते अति उपकारा । कीन्हा हमका सभी प्रकारा ॥ २ ॥
शठ सम इन नयनन को धाता । क्यों छीनत हो तुम इस गाता ॥ ३ ॥
अरी श्याम सुन्दर की भारी । पर गई इनको चाट अपारी ॥ ४ ॥
क्षण भंगुर यह करत मिताई । हम निज पति सुत भ्रात तजाई ॥ ५ ॥
दासी बन इन सन्मुख आई । पर नहि ये हम तरफ लखाई ॥ ६ ॥
इनकी क्षण भङ्गी मुस्काना । कर रहि हमको मोहित नाना ॥ ७ ॥
आवत प्रात मधूपुर नारी । हो अहिं उन प्रति मंगल कारी ॥ ८ ॥
बहुदिन ते इनकी अभिलासा । लाग रही अब पूरहिं आसा ॥ ९ ॥
जब यशुमति सुत श्याम हमारे । मन्द मन्द मुस्कात अपारे ॥ १० ॥
पहुँचहि अरी यदा ये मथुरा । तब उन होय मनोरथ पूरा ॥ ११ ॥

दोहा- **युवती मधुपुर की सभी, निज मधु वचन उच्चारि ।**
करहिं चित्त वश में अरे, मन मोहन का भारि ॥ ३०२ ॥

चो- तब यह कृष्ण यहाँ पर काहे । आवहि किस विध गोकुल राहें ॥ १ ॥
अन्धक भोज वृष्णि सब यादव । रचहिं महोत्सव मधुपुर मानव ॥ २ ॥
धन्य आज मथुरा नर नारी । हरि दर्शन कर होंहि सुखारी ॥ ३ ॥
यह अक्रूर यहाँ पर आया । यह तो नाम नहीं शुभ गाया ॥ ४ ॥
है हिय हीन निठुर यह भारी । होरहिं हम इत दुखित अपारी ॥ ५ ॥
जो हम सबके प्रियतम प्यारे । श्याम मनोहर नन्ददुलारे ॥ ६ ॥

उनको कर अँखियन से ओझल । ले जावत मधुपुर कर अतिछल ॥ ७ ॥
यह हम से करके दोउ बाता । धीरज भी तो नही बँधाता ॥ ८ ॥
देता कुछ भी ना आश्वासन । करता अरी नहीं कुछ भाषन ॥ ९ ॥
यह मानव तो सुन अति क्रूरा । राखा क्यों निज नाम अक्रूरा ॥ १० ॥

दोहा- **दोषी ना इसमें अरी, लेश मात्र अक्रूर ।**
निज प्रिय तम इन श्याम का, जानो सभी कसूर ॥ ३०३ ॥

चो- पड़ गई इनको चाट अपारी । देखन को नित नूतन नारी ॥ १ ॥
कम ना निठुर अरी ये आली । रथ आसीन भये वनमाली ॥ २॥
देखो मत्त गोप ले छकरा । आगय जावन को ये मथुरा ॥ ३ ॥
कीन्ही नाँहि अरे ये देरी । विधि ने इन सव की मति फेरी ॥ ४ ॥
बैठे वृद्ध यहाँ पर खाली । ये भी करत मना ना आली ॥ ५ ॥
इनसे भी हमको अव आसा । दीखत अरी नहीं कुछ खासा ॥ ६ ॥
हे सखियों हम मिल कर सारी । रोके रथ अव इन वनवारी ॥ ७ ॥
कुल बान्धव अरु वृद्ध हमारा । क्या कर लेंगे अरी तुम्हारा ॥ ८ ॥
हे सखियों हम क्षण भर येहू । त्यागन जोग समर्थ न नेहू ॥ ९ ॥
आज महा दुर्भाग्य हमारा । जो जावत तज नन्दकुमारा ॥ १० ॥

दोहा- **विरह व्यथा उनकी महा, अव हम कवन प्रकार ।**
सह सकती सखियों सुनो, चित ना लगत हमार ॥ ३०४॥

चो- गोखुर रज जिन अंग सुसोही । मस्तक मुकुट लकुट कर मोही ॥ १ ॥
आवत सायंकाल कन्हैया । वेणुवजावत ग्वाल सभैया ॥ २ ॥
मन्द मन्द जिन मृदु परिहासा । करत हमार क्षीण चित खासा ॥ ३ ॥
इन हरि विना निरर्थक जीवन । राखे किस विध धीरज निजमन ॥ ४ ॥
यों विरहातुर हों वृजनारी । त्यागी लाज नृपति उन सारी ॥ ५ ॥
हे दामोदर हे गोविन्दा । हे माधव हे वाल मुकुन्दा ॥ ६ ॥
उच्च स्वर यो लगी पुकारन । भरकर प्रेम नीर निज नयनन ॥ ७ ॥
यों रोवत इत सव वृजनारी । उदय भयो उत प्रात तमारी ॥ ८ ॥
कर सन्धोपासन अक्रूरा । कीन्हो रथ प्रेरित प्रति मथुरा ॥ ९ ॥
निज निज शकट जोत सव ग्वाला । लेकर गोरस भेट नृपाला ॥ १० ॥

दोहा- उन अनु चाले उत सव, इत विरहातुर भारि ।
रुदन करन लागी सभी, हे नृपवर वृजनारि ॥ ३०५ ॥

चो- उन अनुभाग चली कुछ दूरी । मिलहीं कुछ आदेश जरूरी ॥ १ ॥
यों मन सोच भई अब ठाढी । देख कृष्ण दुःखित उन गाढी ॥ २ ॥
प्रेपित कीन्ह खबर मुख दूता । राखो निज हिय तुम मजबूता ॥ ३ ॥
हे सखियों वापिस हम आहीं । यह सुन शान्त भई मन माहीं ॥ ४ ॥
यावत रथध्वज रेणु दिखाई । पुत्तलि सम ठाढी सुनु राई ॥ ५ ॥
होय निराश बाद वृजनारी । लोटी वापिस निज घर सारी ॥ ६ ॥
पाछे उन क्रीड़ा कर गाना । कीन्हे दिवस विगत हरि ध्याना ॥ ७ ॥
इत अक्रूर सहित घनश्यामा । वायु वेग रथ स्थित बलरामा ॥ ८ ॥
अध नासिनि यमुना तट आये । कर मज्जन जल पी हरसाये ॥ ९ ॥
वृक्ष समूह बाद स्थित स्यन्दन । बैठे राम सहित यदुनन्दन ॥ १० ॥

दोहा- **रथ ऊपर करवाय स्थित, मज्जन हित अक्रूर ।**
पहुँचे यमुना हृद विषे, हो मन खुश भरपूर ॥ २०६ ॥

सोरठा- **कर विधिवत वहँ स्नान, नीर मध्य डुबकी लगा ।**
वे अक्रूर महान, गायत्री जपने लगे ॥

चौ- देखे नीर मध्य अक्रूरा । बैठे राम कृष्ण यदु शूरा ॥ १ ॥
स्यन्दन स्थित करवा मैं आया । इन दर्शन किस विध यहँ पाया ॥ २ ॥
कर विचार यों सिर बहि कीन्हा । पूर्व समाँ रथ पर उन चीन्हा ॥ ३ ॥
भयो मुझे जल बिच इन दर्शन । ये सब दीखत भ्रमहीं में मन ॥ ४ ॥
यों मन सोच अरे उन राया । नीर मध्य पुनि गोत लगाया ॥ ५ ॥
पुनि जल बीच सिद्ध सुर सर्वा । स्तूय मान चारण गंधर्वा ॥ ६ ॥
सहस सीस सज्जन हितकारी । प्रतिफण मौलि सुशोभित भारी ॥ ७ ॥
नीलाम्बर वपु श्वेत अनन्ता । जिन उत्संग लखे भगवन्ता ॥ ८ ॥
तनु घनश्याम पीत पट धारी । सुन्दर वदन मुदित भुजचारी ॥ ९ ॥
उन्नत भ्रू सोभित वर नासा । भुज प्रलम्ब पीवर वर हासा ॥ १० ॥

दोहा- **चारू कर्ण कपोल वर, अरुण अधर तुङ्गासु ।**
उर स्थल पर श्रीवत्स शुभ, कम्बु कंठ युत जासु ॥२०७॥

चौ- पल्लव उदर निम्न वलि नाभा । कटि तट कहत श्रोणि पृथु गाभा ॥ १ ॥
सुन्दर जानु जंघ शुभ दोऊ । तुङ्ग सुगुल्फ अरुण नख सोऊ ॥ २ ॥
दल अङ्गुष्ठ अङ्गुली कोमल । विलसत पाद पद्म अति निर्मल ॥ ३ ॥
सीस अमोल किरीट सुसोहा । नूपुर कुंडल छवि मन मोहा ॥ ४ ॥

शंख व चक्र गदाम्बुज धारी । वन माला कौस्तुभ गल भारी ॥ ५ ॥
नन्द सुनन्दादिक जिन सेवित । ब्रह्म सुरेन्द्र शिवादिक वन्दित ॥ ६ ॥
प्रमुख वसु प्रहलाद व नारद । उत्तम वैष्णव ज्ञान निशारद ॥ ७ ॥
स्तूयमान इन सबके द्वारा । पृथक पृथक वचनन अनुसारा ॥ ८ ॥
लक्ष्मि व कान्ति गिरा अरु पुष्टि । इला जया कीरति सह तुष्टि ॥ ९ ॥
माया बल विद्यादिक द्वारा । सेवमान इन कई प्रकारा ॥ १० ॥

दोहा- **कर दरसन यों कृष्ण का, हो रोमाञ्चित भारि ।**
नत मस्तक कर जोर के , कीन्हा स्तोत्र उचारि ॥ ३०८॥

चौ- वन्दों आदि पुरुष भगवाना । अखिल विश्वपति दीन निधाना ॥ १ ॥
तुम नारायण विश्व रचाये । नाभी कमल कोश विधि जाये ॥ २ ॥
भूजल अग्नि व पवन अकासा । इन्द्रिय दश तव अंग प्रकासा ॥ ३ ॥
अज आदिक सब रूप तुम्हारा । जान सके ना किसी प्रकारा ॥ ४ ॥
रूप तुम्हारा ब्रह्म ना जाने । अन्य देव पुनि किमि पहिचाने ॥ ५ ॥
जोगी साधो प्रभो तुम्हारी । करते निशिदिन भक्ति अपारी ॥ ६ ॥
कर्मयोगी यज्ञों के द्वारा । करते ईश्वर यजन तुम्हारा ॥ ७ ॥
ज्ञानीजन करमन लव लीना । पूजहिं रच मख ज्ञान नवीना ॥ ८ ॥
हरि दीक्षा दीक्षित जे सन्ता । ते अभिहित जे ग्रन्थ अनन्ता ॥ ९ ॥
करते पूजन प्रभो तुम्हारी । उस विधि के ही सब अनुसारी ॥ १० ॥

दोहा- **नारायण के रूप में, रचकर मूर्ति अपार ।**
पूजहिं पद पंकज प्रभो, करके भक्ति तुम्हार ॥ ३०९ ॥

चौ- सर्व देवमय चरण तुम्हारे । पूजहिं अन्य देव रत सारे ॥ १ ॥
यों सब मारग पास तुम्हारे । जावत जिमि धुनि सागर खारे ॥ २ ॥
माया गुण जे नाथ तुम्हारे । सत्वादिक जो तीन पुकारे ॥ ३ ॥
ब्रह्म सहित जग के सब स्थावर । ओत प्रोत सब उन वपु मिलकर ॥ ४ ॥
यहि हित वे तुमसे अलगाई । रह सकते ना हे यदुराई ॥ ५ ॥
सब सुर मय यहि हित तुम गाये । तुम ते भिन्न नही वे पाये ॥ ६ ॥
सर्वधि सर्व शक्ति सर्वात्मा । नत मस्तक वन्दों परमात्मा ॥ ७ ॥
वैश्वानर हरि मुख तव गाया । भू अङ्घ्री रवि नेत्र बताया ॥ ८ ॥
नभ नाभी श्रुति दशा बताई । स्वर्ग सीस सुर भुजा कहाई ॥ ९ ॥

दोहा- वायू प्राण व बल प्रभो, सागर कोंख तुम्हारा ।
वृक्षौषधि रोमावली, नख अरु अस्थि पहार ॥ ३१० ॥

चौ- दिन रजनी दोउ पलक तुम्हारे । शिश्न प्रजापति तोर पुकारे ॥ १ ॥
वर्षा वीरज नाथ तुम्हारा । यों दीखत जो लोक अपारा ॥ २ ॥
कीन्हे वे सबते विच कल्पित । यथा मशक गूलर विच निवसत ॥ ३ ॥
जे जे रूप करहु तुम धारन । इस जग में क्रीडा हित भगवन ॥ ४ ॥
उन द्वारा दूरी कृत शोका । गावत तव शुभयश सब लोका ॥ ५ ॥
वन्दों प्रलय अब्धि विच चारी । मीन रूप जगपति अघहारी ॥ ६ ॥
वन्दों मैं मधुकैटभ हर्ता । अश्वग्रीव रूपी जग भर्ता ॥ ७ ॥
वन्दों मन्दरधर भगवन्ता । कूर्म रूप जगदीश अनन्ता ॥ ८ ॥
कीन्हा तुम महि का उद्धारा । वन्दों शूकर रूप तुम्हारा ॥ ९ ॥
साधूलोक भयावह भारे । वन्दों अद्‌भुत सिंह खरारे ॥ १० ॥

दोहा- निजपद नापे लोक सब, जाकर मख बलि भूप ।
वन्दों उनभगवान को, जिनका वामन रूप ॥ ३११ ॥

चौ- क्षत्री वनदाही भगवाना । वन्दों परसुराम बलवाना ॥ १ ॥
रावण कुंभकरण मदहारी । वन्दों रघुवर राम खरारी ॥ २ ॥
वन्दों वासुदेव बलरामा । मन्मथ ऋष्यकेतु बलधामा ॥ ३ ॥
दैत्य व दानव मोहन कर्ता । वन्दों शुद्ध बुद्ध जगभर्ता ॥ ४ ॥
वन्दों कल्किरूप भगवन्ता । करहीं क्षत्रिन म्लेच्छन अन्ता ॥ ५ ॥
जीव लोक यह मोहित माया । भटकत कर्मपन्थ इन काया ॥ ६ ॥
मैं भी देह गेह सुत दारा । सत्य समझ कर धन परिवारा ॥ ७ ॥
देहादिक विच सुपन समाना । भटका मैं मतिमन्द महाना ॥ ८ ॥
देखो प्रभु मम मति विपरीता । भटका विषयन में भयभीता ॥ ९ ॥
विस्मृत भई मुझे यह बाता । तुम हीं मम साँचे प्रिय ताता ॥ १० ॥

दोहा- यथा अबुध तृणपात ते, आवृत नीर तजाय ।
मृग तृष्णा की ओर वह, भागे दौर लगाय ॥ ३१२ ॥

चौ- रहा विमुख त्योहीं मैं तुमसे । कीन्हे दरस नहीं नयनन से ॥ १ ॥
इन्द्रियँ इत उत यो मन खींचत । रोकन हेत समर्थ न यहि हित ॥ २ ॥
मो सम दुष्टन तव पद दुर्लभ । जे भटकत विषयन उन निर्लभ ॥ ३ ॥
उन पद शरण आज मैं पावा । यह अनुग्रह तुमका मैं गावा ॥ ४ ॥

जन्म व मृत्यु रूप जग अन्ता । आवत तदा मिलहिं जग सन्ता ॥ ५ ॥
पाकर उन सन्तन की दाया । मिलहीं तव पद हे यदुराया ॥ ६ ॥
वहि दुर्लभ पद विना प्रयासा । पाये दीनवन्धु इस दासा ॥ ७ ॥
वन्दौं मैं पुरुषेश प्रधाना । सव विज्ञान व ज्ञान निधाना ॥ ८ ॥
वन्दौं ब्रह्मा शक्ति अ नन्ता । वासुदेव सव पाप निहन्ता ॥ ९ ॥
सर्व भूत क्षम है ऋषिकेशू । आवा शरण पाहि जगदीश्वर ॥ १० ॥

दोहा- **वोले श्री शुकदेव यों, स्तूयमान भगवान ।**
जल मैं निज दरसन करा, हो गय अन्तरध्यान ॥ २१३॥

चौ- उन अन्तरहित लखि अक्रूरा। निकसे जल वहि सुनु नृपशूरा ॥ १ ॥
धारे पट कर संध्या वंदन । हो विस्मित पहुँचे जहँ स्यन्दन ॥ २ ॥
जव अक्रूर कृष्ण पहँ आये । तव हँस हरि यों वचन सुनाये ॥ ३ ॥
कवन वस्तु अद्‌भुत तुम यदुवर । देखी महि जल अम्वर भीतर ॥ ४ ॥
वोले अव अक्रूर सुजाना । भूमि जलादिक विच भगवाना ॥ ५ ॥
जेते अद्‌भुत रूप दिखाये । वे सव देह तुम्हारी पाये ॥ ६ ॥
हे प्रभु विश्व रूप जग त्राता । मम सन्मुख तुम सोभित ताता ॥ ७ ॥
ऐसी कवन वस्तु अव शेषी । जौ तुम वीच नहीं मैं देखी ॥ ८ ॥
अद्‌भुत वस्तु जगत में जेती । महि जल अम्वर वीच समेती ॥ ९ ॥
होरहि जिनमें सभी सुशोभित । जो सुरेन्द्र शिव विधि ते वन्दित ॥ १० ॥

दोहा- **ऐसी वस्तु जगत की, रही नहीं अवशेष ।**
जो देखी मैंने नहीं, तुम्हरे गात विशेष ॥ २१४ ॥

चौ- यों वह रथ अक्रूर वढावा । जव अपरान्ह काल नृप आवा ॥ १ ॥
वलदाऊ सह कृष्ण कृपाला । पहुँचे मथुरापुरी विशाला ॥ २ ॥
पथ वीचे ग्रामीजन सारे । देखन आये कृष्ण किनारे ॥ ३ ॥
वल सह कृष्ण चन्द्र की शोभा । देख सभी का मन अति लोभा ॥ ४ ॥
इत ठहरे नन्दादिक ग्वाला । मथुरा उपवन वीच विशाला ॥ ५ ॥
देखत वाट यहाँ सव मिलकर । पहुँचे इतने में जगदीश्वर ॥ ६ ॥
हो अव नम्रीभूत कृपालू । उन कर गह निज हस्त विशालू ॥ ७ ॥
वोले कृष्ण चन्द्र जगत्राता । हे अक्रूर सुनो मम वाता ॥ ८ ॥
तुम रथ सहित जाउ निज धामा । आऊँ पुर में कर विश्रामा ॥ ९ ॥
वासुदेव की यों सुन वाता । वोले गाँदिनितुत इमि ताता ॥ १० ॥

दोहा- **तुम विन इस मधुपुर विषे, जाऊँ नहीं मैं नाथ ।**
मुझ सेवक को त्याग क्यों, करते आप अनाथ ॥ ३१५॥

चौ- सवल गोप सह गेह हमारे । करो पदार्पण हे अघहारे ॥ १ ॥
निज पद रजते वंश हमारा । कर पावन करहू अघहारा ॥ २ ॥
ते पद धोवन जो गंगाजल । करहीं तृप्त सुपितर सुरानल ॥ ३ ॥
धोकर चरण युगल अघहारी । पाई वलि सद्गति शुभकारी ॥ ४ ॥
होत त्रिलोकी पावन सारी । तव पद क्षालन उदक खरारी ॥ ५ ॥
जिस जल को शिव सिर पर धारे । जो जल सगर सुवन सव तारे ॥ ६ ॥
वन्दो देव देव जगत्राता । नारायण मुकती फल दाता ॥ ७ ॥
वोले अव जगपति भगवाना । सुनो तात मम वचन प्रमाना ॥ ८ ॥
पूरव कंस हनन कर आऊँ । वल सह पुनि तव गेह सिधाऊँ ॥ ९ ॥
यों सुन श्वल्फक सुत हरि वचना । गये पुरी विच हो अति विमना ॥ १० ॥

दोहा- **निज करणी सव कंस से, वरणन कर अक्रूर ।**
चले गये निज गेह में, आगे सुन नृप शूर ॥ ३१६ ॥

चौ- इत अपरान्ह काल इव पाये । गोप सवल प्रभु पुरी सिधाये ॥ १ ॥
वह विचित्र पुर वरणि न जाई । स्फटिक गोपुर तुंग सुहाई ॥ २ ॥
कनक कपाट सुशोभित द्वारा । शोभित तोरण कनक अपारा ॥ ३ ॥
परिखा दुर्गम पीतल तामा । रचा कोट अति तुंग ललामा ॥ ४ ॥
ठौर ठौर सुन्दर उद्याना । सुन्दर उपवन सोभित नाना ॥ ५ ॥
सुन्दर चौपथ धनिक अगारा । सोभित पास सभास्थल न्यारा ॥ ६ ॥
हीरा मरकत मोती मूँगे । छज्जे जड़ित नीलमणि महँगे ॥ ७ ॥
जगमग करते फर्श झरोखे । ठाढ़े पक्षी जहाँ अनोखे ॥ ८ ॥
अति रमणीक नृपति पथ हाटा । अतर फुलेल सिक्त सव वाटा ॥ ९ ॥
विखरे इत उत तंडुल लाजा । शोभित कुसुम यवाङ्कुर ताजा ॥ १० ॥

दोहा- **दधि चन्दन चर्चित धरे, मंगल कुंभ दुआर ।**
दीप कुसुम कोमल नये, पल्लव सहित सुधार ॥ ३१७॥

चौ- पूंगी कदली तरू अनेका । सोभित वहाँ एक से एका ॥ १ ॥
पट्ट वस्त्र युत वन्दवारा । सोभित ध्वजा पताक अपारा ॥ २ ॥
ऐसे पुर वीचे दोउ भाई । पहुँचे राम कृष्ण यदुराई ॥ ३ ॥
कृष्ण आगमन सुन पुर वामा । धाई दरसन हित तजि कामा ॥ ४ ॥

उत्कंठा वश होय अपारी । ठाढ़ी हर्म्य पृष्ठ अट्टारी ॥ ५ ॥
उमड़ी प्रेम अपूरव सरिता । धृत पट भूषण कई विपरीता ॥ ६ ॥
केतिक एक चरण धर पायल । आई कोइ नयन इक काजल ॥ ७ ॥
केतिक भोजन थार तजाई । कैतिक हाथ ग्रास तजि आई ॥ ८ ॥
कोई अंग राग तजि भागी । चाली कई स्थान परित्यागी ॥ ९ ॥

दोहा- **कई मात निज सुतन को, स्तन्य पिलावत भागि ।**
केतिक निद्रा त्याग कर, चली कृष्ण अनुरागि ॥३१८॥

चौ- मतवाले गजराज समाना । पंकज नयन कृष्ण भगवाना ॥ १ ॥
हरण कीन्ह मन पुर नर नारिन । हास्य विलास सहित अवलोकन ॥ २ ॥
बहुत दिवस ते हरि की लीला । श्रवण करत रहि ते मतिशीला ॥ ३ ॥
हरि दरसन हित उन चित चंचल । हो रहे बहुत दिवस ते व्याकुल ॥ ४ ॥
कीन्हो आज हरी सन्माना । निज चितवन सह मृदु मुस्काना ॥ ५ ॥
निज नयनन द्वारा हिय सारी । कर आलिंगन मुदित. अपारी ॥ ६ ॥
हो मन में पुलकित सुनुराई । विरह व्याधि उन सभी तजाई ॥ ७ ॥
चढ़ कर अब निज महल अटारी । कर रही वृष्टि कुसुम अपारी ॥ ८ ॥
प्रेमावेग खिले उन आनन । करके आज कृष्ण के दरसन ॥ ९ ॥
स्थान स्थान पर सब द्विज जातिन । ले दधि अक्षत कुसुम उपायन ॥ १० ॥

दोहा- **कीन्ही पूजन प्रेम से, कृष्ण सहित बलराम ।**
प्रेम मगन भइ निज हिय, मधुपुर प्रजा तमाम ॥ ३१९॥

चौ- वदत परस्पर सब पुर नारी । धन्य गोपिका बृज की सारी ॥ १ ॥
ऐसो कवन कीन्ह तप पूजन । करती जो इनका नित दरसन ॥ २ ॥
देखा एक रजक पथ जाता । रंगकार जो कंस कहाता ॥ ३ ॥
माँगे कृष्ण चन्द्र बल भाई । धौत श्रेष्ठ पट कुछ सुनुराई ॥ ४ ॥
हम दोउ जोग वसन तव पासा । देकर पूर्ण करो मम आसा ॥ ५ ॥
होअहिं तोर रजक कल्याना । माँगे पट जब यों भगवाना ॥ ६ ॥
हो वह दुर्मद क्रुधित अपारा । प्रभु प्रति ऐसे वचन उचारा ॥ ७ ॥
अह गिरि वन विच विचरन हारे । क्या जाने इन वसन विचारे ॥ ८ ॥
तुम बालक मति महा अनारी । जीवित रुचि यदि अरे तुम्हारी ॥ ९ ॥
तो तुम यहँ ते करो पलायन । वदहु न अब आगे इमि वचनन ॥ १० ॥

दोहा- तुम विन इस मधुपुर विषे, जाऊँ नहीं मैं नाथ ।
मुझ सेवक को त्याग क्यों, करते आप अनाथ ॥ ३१५॥

चौ- सबल गोप सह गेह हमारे । करो पदार्पण हे अघहारे ॥ १ ॥
निज पद रजते वंश हमारा । कर पावन करहू अघहारा ॥ २ ॥
ते पद धोवन जो गंगाजल । करहीं तृप्त सुपितर सुरानल ॥ ३ ॥
धोकर चरण युगल अघहारी । पाई बलि सद्गति शुभकारी ॥ ४ ॥
होत त्रिलोकी पावन सारी । तव पद क्षालन उदक खरारी ॥ ५ ॥
जिस जल को शिव सिर पर धारे । जो जल सगर सुवन सब तारे ॥ ६ ॥
वन्दो देव देव जगत्राता । नारायण मुकती फल दाता ॥ ७ ॥
बोले अब जगपति भगवाना । सुनो तात मम वचन प्रमाना ॥ ८ ॥
पूरव कंस हनन कर आऊँ । बल सह पुनि तव गेह सिधाऊँ ॥ ६ ॥
यों सुन श्वल्फक सुत हरि वचना । गये पुरी बिच हो अति विमना ॥ १० ॥

दोहा- निज करणी सब कंस से, वरणन कर अक्रूर ।
चले गये निज गेह में, आगे सुन नृप शूर ॥ ३१६ ॥

चौ- इत अपरान्ह काल इब पाये । गोप सबल प्रभु पुरी सिधाये ॥ १ ॥
वह विचित्र पुर वरणि न जाई । स्फटिक गोपुर तुंग सुहाई ॥ २ ॥
कनक कपाट सुशोभित द्वारा । शोभित तोरण कनक अपारा ॥ ३ ॥
परिखा दुर्गम पीतल तामा । रचा कोट अति तुंग ललामा ॥ ४ ॥
ठौर ठोर सुन्दर उद्याना । सुन्दर उपवन सोभित नाना ॥ ५ ॥
सुन्दर चौपथ धनिक अगारा । सोभित पास सभास्थल न्यारा ॥ ६ ॥
हीरा मरकत मोती मूँगे । छज्जे जड़ित नीलमणि महँगे ॥ ७ ॥
जगमग करते फर्श झरोखे । ठाढ़े पक्षी जहाँ अनोखे ॥ ८ ॥
अति रमणीक नृपति पथ हाटा । अतर फुलेल सिक्त सब बाटा ॥ ६ ॥
बिखरे इत उत तंडुल लाजा । शोभित कुसुम यवाङ्कुर ताजा ॥ १० ॥

दोहा- दधि चन्दन चर्चित धरे, मंगल कुंभ दुआर ।
दीप कुसुम कोमल नये, पल्लव सहित सुथार ॥ ३१७॥

चौ- पूंगी कदली तरू अनेका । सोभित वहाँ एक से एका ॥ १ ॥
पट्ट वस्त्र युत वन्दवारा । सोभित ध्वजा पताक अपारा ॥ २ ॥
ऐसे पुर बीचे दोउ भाई । पहुँचे राम कृष्ण यदुराई ॥ ३ ॥
कृष्ण आगमन सुन पुर वामा । धाई दरसन हित तजि कामा ॥ ४ ॥

उत्कंठा वश होय अपारी । ठाढ़ी हर्म्य पृष्ठ अट्टारी ॥ ५ ॥
उमड़ी प्रेम अपूरव सरिता । धृत पट भूषण कई विपरीता ॥ ६ ॥
केतिक एक चरण धर पायल । आई कोइ नयन इक काजल ॥ ७ ॥
केतिक भोजन थार तजाई । कैतिक हाथ ग्रास तजि आई ॥ ८ ॥
कोई अंग राग तजि भागी । चाली कई स्थान परित्यागी ॥ ९ ॥

दोहा- **कई मात निज सुतन को, स्तन्य पिलावत भागि ।**
केतिक निद्रा त्याग कर, चली कृष्ण अनुरागि ॥३१८॥

चौ- मतवाले गजराज समाना । पंकज नयन कृष्ण भगवाना ॥ १ ॥
हरण कीन्ह मन पुर नर नारिन । हास्य विलास सहित अवलोकन ॥ २ ॥
बहुत दिवस ते हरि की लीला । श्रवण करत रहि ते मतिशीला ॥ ३ ॥
हरि दरसन हित उन चित चंचल । हो रहे बहुत दिवस ते व्याकुल ॥ ४ ॥
कीन्हो आज हरी सन्माना । निज चितवन सह मृदु मुस्काना ॥ ५ ॥
निज नयनन द्वारा हिय सारी । कर आलिंगन मुदित. अपारी ॥ ६ ॥
हो मन में पुलकित सुनुराई । विरह व्याधि उन सभी तजाई ॥ ७ ॥
चढ़ कर अब निज महल अटारी । कर रही वृष्टि कुसुम अपारी ॥ ८ ॥
प्रेमावेग खिले उन आनन । करके आज कृष्ण के दरसन ॥ ९ ॥
स्थान स्थान पर सब द्विज जातिन । ले दधि अक्षत कुसुम उपायन ॥ १० ॥

दोहा- **कीन्ही पूजन प्रेम से, कृष्ण सहित बलराम ।**
प्रेम मगन भइ निज हिय, मधुपुर प्रजा तमाम ॥ ३१९॥

चौ- वदत परस्पर सब पुर नारी । धन्य गोपिका वृज की सारी ॥ १ ॥
ऐसो कवन कीन्ह तप पूजन । करती जो इनका नित दरसन ॥ २ ॥
देखा एक रजक पथ जाता । रंगकार जो कंस कहाता ॥ ३ ॥
माँगे कृष्ण चन्द्र बल भाई । धौत श्रेष्ठ पट कुछ सुनुराई ॥ ४ ॥
हम दोउ जोग वसन तव पासा । देकर पूर्ण करो मम आसा ॥ ५ ॥
होअहिं तोर रजक कल्याना । माँगे पट जब यों भगवाना ॥ ६ ॥
हो वह दुर्मद क्रुधित अपारा । प्रभु प्रति ऐसे वचन उचारा ॥ ७ ॥
अहे गिरि वन विच विचरन हारे । क्या जाने इन वसन विचारे ॥ ८ ॥
तुम बालक मति महा अनारी । जीवित रुचि यदि अरे तुम्हारी ॥ ९ ॥
तो तुम यहँ से करो पलायन । वदहु न अब आगे इमि वचनन ॥ १० ॥

दोहा- भाखउ ऐसे वचन तो, राजदूत बलवान ।
लूटहि बाँधहि मारहीं ,काढ़हिं तनु ते प्रान ॥ ३२० ॥ क
सुने वचन यों रजक के, तदा कृष्ण भगवान ।
निज कराग्र ते तुरत ही, हरा सीस सह प्रान ॥३२ ०॥ख

चौ- अब तज अम्बर वहाँ अपारे । भागे सेवक रजक विचारे ॥ १ ॥
पाछे कृष्ण सहित बलरामा । निज प्रिय धारे वस्त्र ललामा ॥ २ ॥
गोपन प्रति दीन्हे अवशेषा । धारे उन निज अंग प्रदेशा ॥ ३ ॥
बाद मुदित वायक इन आवा । उन अनुरूपी वस्त्र सजावा ॥ ४ ॥
अब दोउ होय अलंकृत भारी । सोभित गज शिशु समाँ अपारी ॥ ५ ॥
वायक पर हो मुदित महाना । निज सा रूप दीन्ह जब जाना ॥ ६ ॥
पाछे गेह सुदामा माली । पहुँचे राम सहित वन माली ॥ ७ ॥
प्रभुहिं विलोकि उठा जब माली । कर वन्दन सिरसे वनमाली ॥ ८ ॥
सुन्दर आसन आन बिछावा । पाद्य अर्घ अनुलेप लगावा ॥ ९ ॥
कर पूजन ताम्बूल खिलावा । हो विनम्र पुनि वचन सुनावा ॥ १० ॥

दोहा- भयो जनम मम सारथक, हे प्रभु दीन निधान ।
कुल पुनीत मेरो कियो, बन कर मम महमान ॥ ३२१॥

चौ- देव पितर प्रभु आज हमारे । भये तुष्ट मोपर यह सारे ॥ १ ॥
लीन्हों जगत हेत अवतारा । तुम दोउ विश्व परम करतारा ॥ २ ॥
तुम जगदात्मा हो दोउ भ्राता । विषम दृष्टि ना राखउ ताता ॥ ३ ॥
सुहृद शत्रु पर एक समाना । निज दृष्टि राखउ भगवाना ॥ ४ ॥
मैं सेवक प्रभु चरण तुम्हारा । जो तुम कहो करउँ स्वीकारा ॥ ५ ॥
कर माली यों विनय अपारा । उन अभिप्राय जान कर सारा ॥ ६ ॥
सुन्दर कुसुम रचित कर माला । पहिनाई उन कंठ विशाला ॥ ७ ॥
पाछे राम कृष्ण दोउ भाई । दीन्हो वर शरणागत ताँई ॥ ८ ॥
माँगी भक्ति विपुल भगवाना । हरि भक्तन पर प्रेम महाना ॥ ९ ॥
सब प्राणिन पर सुन्दर दाया । एव मस्तु बोले यदु राया ॥ १० ॥

दोहा- वंश वृद्धि बल आयु यश, देकर लक्ष्मी अपार ।
निकसे माली गेह ते, आगे चले बजार ॥ ३२२ ॥

चौ- श्रीशुक कहे सुनो नर राई । जावत राज मार्ग दोउ भाई ॥ १ ॥
लेकर अंग विलेपन भाजन । कुब्जा युवती एक वरानन ॥ २ ॥

देख तदा माधव हँस बोले । रसप्रद सुन्दर वचन सतोले ॥ ३ ॥
तुम हो कवन वरोरु बताऊ । यह लेपन ले कहँ पर जाऊ ॥ ४ ॥
हम दोउ हेतु देउ कुछ लेपन । होअहिं श्रेय तोर मम वचनन ॥ ५ ॥
बोली सैरन्ध्री पुनि वानी । मैं दासी नृप कंस सयानी ॥ ६ ॥
कंस अन्तपुर सदा निवासी । त्रीवक्रा नामक मैं दासी ॥ ७ ॥
मम अनुलेप कँस को भावे । यहि हेतु मम मान बढावे ॥ ८ ॥
किन्तु आप दोनों से बढ़कर । मिला पात्र अब तक नहिं सुन्दर ॥ ९ ॥
यों कह कर वह हरि के ऊपर । भइ मोहित रूपादिक लखकर ॥ १० ॥

दोहा- **निज हिय न्योछावर कियो, हरि पर सुनु नरपाल ।**
अंगराग ले पात्र से, दीन्हो वह तत्काल ॥ ३२३ ॥

चौ- अंगराग ते होकर रंजित । राम कृष्ण दोउ भये सुशोभित ॥ १ ॥
होकर मुदित कृष्ण अब भारी । त्रिवक्रा सुन्दर मुखधारी ॥ २ ॥
सरल करन हित कीन्ह विचारा । निज पद अग्र तासु पद धारा ॥ ३ ॥
दोउ अंगुल उन्नत कर हाथा । धरे चिबुक पर अब यदुनाथ ॥ ४ ॥
तासु देह कीन्ही कुच उन्नत । भइ प्रभदा उत्तम रति मोहित ॥ ५ ॥
कृष्ण स्पर्श कीन्ही वह ज्यों ही । भइ वह सरल समाङ्गिनि त्योंही ॥ ६ ॥
वृहत श्रोणि उन्नत कुच दोऊ । रूप उदार गुणनयुत सोऊ ॥ ७ ॥
अन्तरीय पट गह दोउ हाथा । बोली वचन सुनो यदुनाथा ॥ ८ ॥
करके कान्त कृपा अब मोपर । चालउ वीर आज मम घर पर ॥ ९ ॥
तुमको त्यागन की अभिलासा । मोरे मन ना करत प्रकासा ॥ १० ॥

दोहा- **सैरन्ध्री के वचन यों , सुनकर अब भगवान ।**
निज अनुगन का मुख लखि,बोले वचन प्रमान॥३२४॥

चौ- करूँ प्रथम मैं कंस विनासा । पूरूँ मित्रन की सब आसा ॥ १ ॥
आऊँ बाद तुम्हारे घर पर । सुनो वचन साँचे यह सुन्दर ॥ २ ॥
नहीं यहाँ पर गेह हमारा । हम सम पथिक न तोर सहारा ॥ ३ ॥
कर अब उसको विदा कृपाला । चाले वाणिज पंथ विशाला ॥ ४ ॥
ठाढे वणिक उपायन लेकर । पूजे राम कृष्ण हरसा कर ॥ ५ ॥
हरि दर्शन कर मधुपुर नारी । क्षोभित काम विकल भई भारी ॥ ६ ॥
वलय कवर पट शैथिल जाता । खोई सुध बुध सुनु कुरु त्राता ॥ ७ ॥
बाढी सरिता प्रेम अपारी । ठाढी चित्र लिखित वत सारी ॥ ८ ॥

पृच्छमान पुर वासिन द्वारा । स्थानक धनुप दिखायउ सारा ॥ ९ ॥
अब जा अच्युत धनुप समीपा । देखा सब विधि सुनु अवनीपा ॥ १० ॥

दोहा- **रक्षित वह नृप मानवन, उन वारित प्रभु कीन्ह ।**
तदपि उठा कर वाम कर, सब देखत धर लीन्ह ॥ ३२५॥

चौ- तोरा इक्षु दंड समाना । डोरी खींच मध्य भगवाना ॥ १ ॥
खंडित धनु का शब्द भयंकर । पूरित भयो दिशा महि अम्बर ॥ २ ॥
सुन रव कंस भयो भयभीता । व्यापी उसके मन अति चिन्ता ॥ ३ ॥
तदा क्रुद्धहो धनु रखवाला । पकड़ इन्हें बाँधो इस काला ॥ ४ ॥
यों कह घेरे कृष्ण कृपाल । देख राम हरि उन तत्काला ॥ ५ ॥
खंड धनुप निज हस्त गहाये । उन द्वारा सब मही गिराये ॥ ६ ॥
प्रेरित कंस चमू पुनि आई । राम कृष्ण ने मार गिराई ॥ ७ ॥
निकसे पुनि शाला से बाहिर । पुर सोभा देखन सह अनुचर ॥ ८ ॥
पुरवासी लखि दोउ पराक्रम । जाना उनको देवन उत्तम ॥ ९ ॥
यों विचरत मधुपुर विच राया । सूर्यदेव अस्ताचल आया ॥ १० ॥

दोहा- **तदा गोप बलराम सह, वासुदेव भगवान ।**
इत उत देखत आगये, निज शकटन अस्थान ॥३२६॥

चौ- वृज ते जब हरि मधुपुर आये । वृज युवतिन जे वचन सुनाये ॥ १ ॥
वे सब सत्य यहाँ पर पाये । देख मुदित वह पुर हरसाये ॥ २ ॥
धोये कर पद मुख निज स्थाना । भोजन कीन्ह राम भगवाना ॥ ३ ॥
निशा बीच अब कर विश्रामा । जागे प्रात कृष्ण बलरामा ॥ ४ ॥
सुन धनु भंग नाश रखवाला । भयो भीत इत कंस कराला ॥ ५ ॥
निशा बीच तेहि नींद न आई । देखन लगा अशुभ शकुनाई ॥ ६ ॥
जो दुर्निमित व सूचक काला । जल दरपन विच सीस नृपाला ॥ ७ ॥
जागृत सुपन बीच कृष्णारी । देखे अशुभ शकुन इमि भारी ॥ ८ ॥
प्राणन घोप श्रवण ना परहीं । कंचन वर्ण वृक्ष सब लखहीं ॥ १० ॥

दोहा- **निजपद रज करदम विषै, रहे अदर्शन तासु ।**
प्रेतालिंगन सुपन में, चालत खर चढि आसु ॥ ३२७ ॥

चौ- जपा कुसुम माल गलधारी । तैलाभ्यक्त अशन विषभारी ॥ १ ॥
जावत होकर कहीं दिगम्बर । ऐसे अशुभ शकुन लखि नृपवर ॥ २ ॥
मरण त्रस्त हो नींद न आई । अब तिथि प्रात चतुर्दशी पाई ॥ ३ ॥

मल्ल महोत्सव कंस करावा । राज पुरुष सब मञ्च सजावा ॥ ४ ॥
भेरी झाँझ बजी सहनाई । सज्जित मञ्च पताकन राई ॥ ५ ॥
उन मंचन पर ग्राम निवासी । बैठे विप्र क्षत्रि सन्यासी ॥ ६ ॥
एक तरफ बैठे सब राजा । सुख पूर्वक सब प्रजा समाजा ॥ ७ ॥
त्रस्त हृदय स्थित कंस नरेशा । सह अमात्य नृप मञ्च भदेशा ॥ ८ ॥
अब तूर्यादिक बाजन लागे । आये मल्ल गुरुहिं करि आगे ॥ ९ ॥
शल तोशल मुष्टिक चाणूरा । आये रंग भूमि मिल सारा ॥ १० ॥

दोहा- **कंस राज को भेट दे, नन्दादिक सब ग्वाल ।**
बैठे सब मिलकर वहाँ, लखकर मंच विशाल ॥ ३२८ ॥

चौ- बोले श्री शुकदेव मुनीशा । राम कृष्ण अब सुनो नरेशा ॥ १ ॥
मल्ल दुंदुमी सुनकर नादा । पहुँचे रंग द्वार दोउ प्यादा ॥ २ ॥
देख गजेन्द्र कुवलयापीरा । परिकर बाँध कृष्ण रणधीरा ॥ ३ ॥
हस्तिप से बोले यों बानी । देहू मार्ग हमको नादानी ॥ ४ ॥
नातर यम पुर तुझे पठाऊँ । गज समेत अभि मार गिराऊँ ॥ ५ ॥
जब यों हरि हस्तिप ललकारा । होकर तब वह कुपित अपारा ॥ ६ ॥
कोपित गज अब हरि के ऊपर । कीन्हो प्रेरित सुनु हे नृप वर ॥ ७ ॥
पकरे कृष्ण सूँड गजद्वारा । कालान्तक यम सम इस बारा ॥ ८ ॥
विगलित सूँड कृष्ण यदुराया । मुष्टिक एक हनी गज काया ॥ ९ ॥
छिपे बाद गज पाद कन्हैया । देख अदर्शित गज बल भैया ॥ १० ॥

दोहा- **घ्राण दृष्टि से देखकर, क्रोधित होय महान ।**
बलपूर्वक उस सूँड से, निकल गये भगवान ॥ ३२९ ॥

चौ- अब गज पुच्छ पकर जगदीशा । खेंचा सहज धनुप पचीसा ॥ १ ॥
सव्य तरफ गज सूँड चलावे । वाम बगल हरि तुरत सिधावे ॥ २ ॥
वाम बगल जब सूँड फिरावे । तुरत ही सव्य तरफ प्रभु धावे ॥ ३ ॥
अब सन्मुख जा हस्त प्रहारा ॥ कीन्हों गज पर एक करारा ॥ ४ ॥
तब झपटा वह हरि के ऊपर । सहसा कृष्ण उठे परि भूपर ॥ ५ ॥
तब गज पतित मानकर उनको । कुचलन लागा महि दन्तन को ॥ ६ ॥
नष्ट पराक्रम जब यों भयऊ । क्रुद्धित अब वह हरि पर भजऊ ॥ ७ ॥
आवत देख गजेन्द्र करारा । पकर सूँड झट हरि महि डारा ॥ ८ ॥
कर पदाक्रमण दन्त उखारे । उनते गज सह हस्तिप मारे ॥ ९ ॥

हस्तिप सहित कुवलयापीरा । वधकर यों सोभित यदुवीरा ॥ १० ॥

दोहा- **शोणित मद विन्दू सहित, अंकित दन्त व हाथ ।**
स्वेद विन्दु मुख अम्बुरुह, हो सोभित यदुनाथ ॥ ३३०॥

चौ- राम कृष्ण गोपन सह पाछे । दन्तायुध धर कर निज आछे ॥ १ ॥
रंग भूमि विच जव वे आये । मल्लन वज्र समान लखाये ॥ २ ॥
मनुजन ने नरवर उन माना । देखे नारिन मदन समाना ॥ ३ ॥
मात पिता ने पुत्र समाना । दुष्ट नृपन शासक निजमाना ॥ ४ ॥
दीखे कंसहिं मौत समाना । विदुपन पुरुष विराट महाना ॥ ५ ॥
अग्यानिन वे विकृत लखाये । परम तत्व योगिन वतलाये ॥ ६ ॥
यदुवंशिन निज देव दिखाये । सवल कृष्ण यों रंग महि आये ॥ ७ ॥
गज वध सुना कंस निजकाना । यद्यपि शूर तदपि भय माना ॥ ८ ॥
इनते रण वीचे जम पाना । महा कठिन ये काल समाना ॥ ६ ॥

दोहा- **रंग भूमि सोभित रहे, नटवर सम दोउ भ्रात ।**
जिन नयनन उन पर गिरे, उन मन लेत चुरात ॥ ३३१॥

चौ- वैठे मंचन पर नर जेते । कर दर्शन आनन्दित वेते ॥ १ ॥
कर नयनन मुख माधुरि पाना । निज मन तृप्त नहीं उन माना ॥ २ ॥
उनकी सभी इन्द्रियाँ राजन । लाग रही हरि के कमलानन ॥ ३ ॥
करते पान मनौ निज नयना । चाट रहे जैसे निज रसना ॥ ४ ॥
सूँघ रहे हो जिमि निज नासा । करते हिय आलिंगन खासा ॥ ५ ॥
उनके गुण सुन्दर मधुराई । जिमि श्रुत प्रथण वही उन पाई ॥ ६ ॥
देख उन्हें सव वचन उचारा । ये वसुदेव सदन अवतारा ॥ ७ ॥
भगवत अंश देवकी जाये । पाछे गोकुल वीच पठाये ॥ ८ ॥
ऐते दिवस नन्द के गेहा । रहे गुप्त वहँ परम सनेहा ॥ ६ ॥
इनने प्रथम पूतना मारी । चक्रवात दानव संहारी ॥ १० ॥

दोहा- **अर्जुन तरु गुह्यक अरु, केशी धेनुक दुष्ट ।**
किये और भी असुर वहु, इन्हीं कृष्ण ने नष्ट ॥ ३३२ ॥

चौ- मोचित कीन्हे गाय सपाला । दावानल ते कृष्ण कृपाला ॥ १ ॥
कालिय दमन इन्द्र मद हारी । निजकर सप्त दिवस गिरिधारी ॥ २ ॥
वर्षावात अशनि परित्राता । गोकुल ग्वालन को सुखदाता ॥ ३ ॥
सव गोपी इन वदन विलोकी । भइ तजकर सव ताप अशोकी ॥ ४ ॥

यादववंशी सब इन द्वारा । पावहि श्रीयश कीर्ति अपारा ॥ ५ ॥
देखो इन अग्रज बलरामा । कमल नयन ये अतिबल धामा ॥ ६ ॥
कीन्हा इन वध दैत्य प्रलंबा । नासा वक ना कीन्ह विलंबा ॥ ७ ॥
वदत वचन यों सब नर नारी । बाजत बाघ रंग महि भारी ॥ ८ ॥
हरि से अब भाषत चाणूरा । युद्ध निपुण तुम दोउ अति शूरा ॥ ९ ॥
अरे नन्द सुत हे बल दोउ । यहि हित कंस बुलायउ तोऊ ॥ १० ॥

जब राजा होवत मुदित, करत प्रजा कल्यान ।
यदि नृप हो विपरीत तो, देवत कष्ट महान ॥ ३३३ ॥

तुम सब ग्वाले गाय चरावन । जावत प्रातकाल विच कानन ॥ १ ॥
वहँ पर मल्ल युद्ध रचि भारी । करते क्रीडा गोधन चारी ॥ २ ॥
यहि कारण हम मिलकर सारे । नृप को करहीं मुदित अपारे ॥ ३ ॥
हो अहिं विबुध मुदित हम ऊपर । कारण सब देवनमय नृपवर ॥ ४ ॥
यों चाणूर वचन सुन काना । उचित वचन बोले भगवाना ॥ ५ ॥
अरे मल्ल सुनु बात हमारी । हम तुम दोउ नृप प्रजा पुकारी ॥ ६ ॥
इसका प्रिय करने के काजू । हम दोउ तत्पर सब विधि आजू ॥ ७ ॥
किन्तु अरे हम बालक दोऊ । तुम सह युद्ध उचित ना होऊ ॥ ८ ॥
सम बल वन्तन संग तुम्हारा । उचित युद्ध यहि धर्म पुकारा ॥ ९ ॥
मल्ल सभा स्थल में नहिं ऐसो । उचित अधर्म वदत तुम जैसो ॥ १० ॥

यह सुनकर चाणूर अब, बोला ऐसी बात ।
तुम बालक नाँ नन्द सुत, बल बलवन्तन ख्यात॥३३४॥

मारा सहस नाग बल धारी । गज कुवलयापीड करारी ॥ १ ॥
यहि हित युद्ध करउँ मै तोसे । होउन मीत कृष्ण तुम मोसे ॥ २ ॥
इसमें पाप नहीं कुछ होई । मोरे वचन असत ना कोई ॥ ३ ॥
तुम आ मम संग युद्ध रचाऊ । मुष्टिक राम संग भिड जाऊ ॥ ४ ।
कर निश्चित यों जिन मम पूरा । भिरे परस्पर हरि चाणूरा ॥ ५ ॥
मुष्टिक से रोहिणि सुत रामा । भिरे परस्पर यों बलधामा ॥ ६ ॥
करते कर पद ते पद बाँधे । जानुन जानुन सिर सिर साँधे ॥ ७ ॥
निज वक्षस्थल वक्ष मिलाई । विजय हेत यों भई लराई ॥ ८ ॥
उत्थापन पातन परिरम्भन । परिभ्रम अपसर्पन विक्षेपन ॥ ९ ॥
उत्सर्पण परिभ्रामण द्वारा । रचे दाँव वे कई प्रकारा ॥ १० ॥

दोहा- **निस्सारण अरु उन्नयन, चालन स्थापन दोउ ।**
भिरे परस्पर विजय हित, कर निज दाँवन सोउ ॥ ३३५॥

चौ- पुनि वल अवल देखि उन युद्धा । वदत परस्पर सव तिय शुद्धा ॥ १ ॥
बैठे यहाँ सभासद भारी । देख रहे यह पाप अपारी ॥ २ ॥
कहाँ मल्ल दोउ शैल समाना । कहाँ वाल कोमल नादाना ॥ ३ ॥
जहँ पर धर्म व्यतिक्रम जाता । उस समाज से तोरउ नाता ॥ ४ ॥
होवत जहाँ धर्म की हानी । ठहरे क्षण ना शास्त्र वखानी ॥ ५ ॥
देख सभासद दोपन सारे । पहुँचे सभ्य न सभा दुआरे ॥ ६ ॥
विन वोले अरु वहँ जो वोले । लागत उसको पाप अतोले ॥ ७ ॥
अरि सर्वत घावत नन्द लाला । श्वेद विन्द श्रम युत मुखवाला ॥ ८ ॥
वोली अन्य देखु इन रामा । मुष्टिक प्रति लोचन सम तामा ॥ ९ ॥
क्रोध समेत लखो तुम आनन । वोली अपर नार पुनि वचनन ॥ १० ॥

दोहा- **वृज भूमि पावन अति, जहँ पर पुरुष पुरान ।**
वेणु वजा क्रीडा करे, विचरत वन दरम्यान ॥ ३३६ ॥

चौ- गोपिन तप कीन्हो किमि भारी । करती इन दर्शन नितसारी ॥ १ ॥
दोहन कंडन मंथन काला । गा इन चरित धन्य वृज वाला ॥ २ ॥
वृज ते प्रात विपिन यह जावे । सायंकाल यदा घर आवे ॥ ३ ॥
सुन इन वेणूनाद अपारा । त्याग तदा धर कारज सारा ॥ ४ ॥
घर वाहर आकर वृजवाला । कर इन दरसन होत निहाला ॥ ५ ॥
वड़ी पुण्यवति ये वृजवाला । यों पुर तिया वदत जिस काला ॥ ६ ॥
अव शत्रुन वध हरि मन ठानी । सभा वीच सुन उत तिय वानी ॥ ७ ॥
निज सुत वल नहि जानन हारे । हरि पित मात भये दुखियारे ॥ ८ ॥
दाँव पेच इन कई प्रकारी । करत प्रयोग मल्ल वनवारी ॥ ९ ॥
उन वलराम व मुष्टिक भारी । भिन्न भिन्न निज दाँव प्रचारी ॥१०॥

दोहा- **अव हरि गात्र प्रहार ते, शिथिल अंग चाणूर ।**
व्यापी ग्लानि वहुत सी, उसके मन भरपूर ॥ ३३७ ॥

चौ- मुष्टि वाँधि सह क्रोध अपारा । हरि छाती पर कीन्ह प्रहारा ॥ १ ॥
मालाहत व हस्ति समाना । विचलित भये नहीं भगवाना ॥ २ ॥
पकर भुजा अव उसे उठावा । डारा महि कइ वार घुमावा ॥ ३ ॥
गिरा जवै वह वज्र समाना । निकसै तनू ते अव प्रिय प्राना ॥ ४ ॥

ताडित मुष्टिक इत वल द्वारा । कर मुख वमन रुधिर की धारा ॥ ५ ॥
गिरा भूमि ऊपर गत प्राना । आवा तदा कूट वलवाना ॥ ६ ॥
मुष्टिक मार एक वलरामा । पंहुँचायो वह भी वलधामा ॥ ७ ॥
पाछे शल तोशल उठ धाये । हरि पद ताडित प्राण गँवाये ॥ ८ ॥
शल तोशल मुष्टिक चाणूरा । कूट समेत वधे यदुशूरा ॥ ९ ॥
अन्य मल्ल अब प्राण बचाकर । भागे सभी सभास्थल तजकर ॥ १० ॥

दोहा- **अब गोपन को खेंचकर, राम कृष्ण भगवान ।**
मल्ल युद्ध करने लगे, मल्ल भूमि दस्थान ॥ ३३८ ॥

चौ- अब सब दर्शक हर्ष मनावा । साधु साधु इति शब्द सुनावा ॥ १ ॥
पंच मल्ल जब यों वध कियउ । कंस नृपति अति कोपित भयऊ ॥ २ ॥
वाद्य यन्त्र सब वन्द कराये । बोला वचन वाद खिसियाये ॥ ३ ॥
हे दूतों सुन लो मम वानी । यह वसुदेव सुवन नादानी ॥ ४ ॥
बाँध इन्हें पुर से बहि करऊ । इन गोपन का सब धन हरऊ ॥ ५ ॥
बाँधो अरे नन्द सह ग्वाला । करो काम तुम यह तत्काला ॥ ६ ॥
काटो सीस बाद वसुदेवा । करता जो शत्रुन की सेवा ॥ ७ ॥
काटो उग्रसेन का सीसा । कहत वचन यो मधूपुरीशा ॥ ८ ॥
कंस कथन सुन कृष्ण खरारी । एक छलांग उछल कर मारी ॥ ९ ॥
सीधे उच्च मंच पर आये । कंसहिं काल समान लखाये ॥ १० ॥

दोहा- **सिंहासन से उठ खड़ा, सहसा अब वह कंस ।**
खड्ग वर्म निज कर गहे, धावा दानव अंस ॥ ३३९ ॥

चौ- खड्ग पाणि उसको तत्काला । पकरा कृष्ण गरुड जिमि व्याला ॥ १ ॥
कच गहि कंस रंग महि डारा । कूदे विश्वभार ले सारा ॥ २ ॥
हरि कूदत निकसे उस प्राना । अब सबके देखत भगवाना ॥ ३ ॥
महि पर लाश सिंह गज नाँई । लगे घसीटत हे नर राई ॥ ४ ॥
हाहाकार भयऊ चहुँ ओरा । पुरजन बीच मचा अति शोरा ॥ ५ ॥
नित उद्विग्न बुद्धि के द्वारा । हरि का चिन्तन विविध प्रकारा ॥ ६ ॥
खान व पान व भाषण काला । शयनादिक विच कंस नृपाला ॥ ७ ॥
निज सन्मुख देखत घनश्यामा । दीन्हो वहि हरि निज धामा ॥ ८ ॥
चाहे द्वेष भाव करि सुमिरन । करता रहे सदा हरि चिन्तन ॥ ९ ॥

दोहा- **मरण कंस का श्रवणकर, कंकादिक वसुभ्रात ।**
रंग भूमि में आगये, हरि की करने घात ।। ३४० ।।

चौ- अस्त्र शस्त्र ले जब वे आये । देख राम तव परिघ उठाये ।। १ ।।
मारे वे मृग सिंह समाना । वजी दुंदुभी तव नभ नाना ।। २ ।।
विधि रुद्रादिक अव प्रभु ऊपर । कीन्ही सुमन वृष्टि खुश होकर ।। ३ ।।
नाचन लगी स्वर्ग सुर नारी । गाकर यश हुलसित कंसारी ।। ४ ।।
पाछे कंस पक्ष की नारी । सिर वक्षस्थल कूटत सारी ।। ५ ।।
निज नयनन ते अश्रु वहाई । आई रंग भूमि घवराई ।। ६ ।।
निज निज पतियन शव पहिचानी । करत विलाप अतुल अकुलानी ।। ७ ।।
हे प्रिय करुणानाथ हमारे । हे धर्मज्ञ हे प्राण पियारे ।। ८ ।।
सगृह प्रजा अरे हम सारी । तुम विन नाथ भइ दुखारी ।। ९ ।।
तुम विन आज पुरी यह सूनी । सोभितना हम पति विहूनी ।। १० ।।

दोहा- **निर अपराधिन संग तुम, कीन्हो द्रोह अपार ।**
यहि कारण ऐसी गति, पायउ प्राणाधार ।। ३४१ ।।

चौ- सव रक्षक यह कृष्ण अनन्ता । जन्म मृत्यु कारण भगवन्ता ।। १ ।।
करहीं जो इनका अपमाना । उस मानव का कहाँ ठिकाना ।। २ ।।
हे नृप वाद कृष्ण यदुराई । नृप पत्निन प्रति धीर वँधाई ।। ३ ।।
सवका लौकिक कर्म कराया । पाछे रामकृष्ण यदुराया ।। ४ ।।
मात पिता के पास सिधाये । वन्धन काट चरण सिर नाये ।। ५ ।।
पुनि वसुदेव देव की दोऊ । कृत वन्दन पुत्रन लखि सोहू ।। ६ ।।
जाने जगदीश्वर इस कारन । कीन्हा नहीं उन्हें आलिंगन ।। ७ ।।
रहे किन्तु वे दोउ कर जोरे । निज पुत्रन के सन्मुख कोरे ।। ८ ।।
प्राप्त ज्ञान देखे पितु माता । फेरी माया लोक विधाता ।। ९ ।।
हो अहिं ज्ञान यदा इन दोऊ । सुत सुख अनुभव इन ना होऊ ।। १० ।।

दोहा- **सवल कृष्ण सादर यथा, हे अम्वा हे तात ।**
उनको करके मुदित अति, निज मुख वचन सुनात।।३४२।।

चौ- हम दोऊ सुत पिता तुम्हारे । जिन हित तुम उत्कंठित भारे ।। १ ।।
वालापन ले अव तक ताता । सुख हमार तुमको ना जाता ।। २ ।।
हम दोऊ दुर्देव अधीना । रहे पास ना तात कुलीना ।। ३ ।।
मात पिता का प्यार अपारा । यहि हित पाय न किसी प्रकारा ।। ४ ।।

जाई मात पिता ते देहा । पालत पोषत कर अति स्नेहा ॥ ५ ॥
ऐसो तनु पाकर सुत कोई । मात पिता ते उऋण न होई ॥ ६ ॥
सब संभव युत तनु सुत पाई । करहीं शतवर्षन सेवकाई ॥ ७ ॥
तो भी मात पिता के द्वारा । हो न उऋण सुत किसी प्रकारा ॥ ८ ॥
जो सुत होय समर्थ हे माता । करत न सेवा जन्म प्रदाता ॥ ९ ॥
बाँधत नहीं जीविका तेहू । देह व धन द्वारा तजि नेहू ॥ १० ॥

दोहा- **लोकान्तर बीचे उसे, मारहिं यम के दूत ।**
खिलवावत निज माँस को, देवत पीर अकूत ॥ ३४३॥

चौ- वृद्ध व मात पिता सुतबालक । नारी पति भर्ता कुलपालक ॥ १ ॥
गुरु महि सुर शरणागत आवे । होय समर्थ न इन्हे बचावे ॥ २ ॥
वह नर जीवित मृतक समाना । आगम निगम पुरान बखाना ॥ ३ ॥
हो हम कंस अजी भयभीते । दिवस हमार व्यर्थ यों बीते ॥ ४ ॥
इस कारण हम जन्म प्रदाता । सेवा कर न सके पितु माता ॥ ५ ॥
वहँ परतंत्र रहे दोउ भाई । करो क्षमा अपराध बिसाई ॥ ६ ॥
वदत मुनीशा इमि हरि वानी । सुन मोहित पित मात सुजानी ॥ ७ ॥
पुत्र दोउ निज अंक विठाये । किय आलिंगन अति पुलकाये ॥ ८ ॥
वहि नयनन ते अश्रुतधारा । गद गद कंठ न वचन उचारा ॥ ९ ॥

दोहा- **वासुदेव ने दे दिया, वापिस उनका राज ।**
सब यदुवंशियन का उन्हें, बना दिया सिर ताज॥३४४॥

चौ- बोले कृष्ण चन्द्र भगवाना । हम सब प्रजा तुम्हारी नाना ॥ १ ॥
जो आज्ञा देवहु तुम हमको । करें पूर्ण सब विधि हम उसको ॥ २ ॥
यद्यपि यदुवंशी नृप आसन । शाप ययाति नृपति के कारन ॥ ३ ॥
स्थित ना होवत किसी प्रकारा । पर तुम मानो कथन हमारा ॥ ४ ॥
मै सेवक हूँ सदा तुम्हारा । पूरण करूँ मनोरथ सारा ॥ ५ ॥
विबुधादिक भी लेय उपायन । करहीं भेट तुम्हारे अरपन ॥ ६ ॥
पुनि मानव की क्या औकाता । यों कह कृष्ण चन्द्र बलभ्राता ॥ ७ ॥
अन्धकादि वृष्टि अरु यादव । होकर कंस भया कुल मानव ॥ ८ ॥
मधुपुर त्याग विदेश सिधाये । वे सब वापिस यहाँ बुलाये ॥ ९ ॥
निज निज घर स्थापित कीन्हे । उन हित द्रव्य बहुत प्रभु दीन्हे ॥ १० ॥

दोहा- **रक्षित पुनि बल कृष्ण भुज, सब यादव सानन्द ।**
प्राप्त मनोरथ प्रति दिना, दर्शन करत मुकुन्द ॥ ३४५ ॥

चौ- जेते वृद्ध पुरुष पुर अन्दर । वे सव कृष्ण मुखामृत पीकर ॥ १ ॥
वल ओजस पाई तरूणाई । पाछे राम कृष्ण दोउ भाई ॥ २ ॥
नन्द राज के पास सिधाये । कर आलिंगन वचन सुनाये ॥ ३ ॥
पालन पोषण पिता हमारा । कीन्हा तुमने भली प्रकारा ॥ ४ ॥
निज तनु ते भी अति अधिकाई । पुत्र समाँ अति प्रीति बढ़ाई ॥ ५ ॥
कारण वश त्यागहिं पितु माता । जिन शिशुअन को स्वजन व भ्राता ॥ ६ ॥
पालहिं उनको पुत्र समाना । वास्तव वहि पितु मात वखाना ॥ ७ ॥
यद्यपि तुमको कष्ट अपारा । व्यापहिं निज मन वहुत हमारा ॥ ८ ॥
तदपि तात तुम सव वृज जाऊ । कुछ दिन तक मुझको विसराऊ ॥ ९ ॥
पाछे दर्शन काज तुम्हारे । आऊँ यहँ के कारज सारे ॥ १० ॥

दोहा- गोपन सह यों नन्द को, सव विधि शान्त दिलाय ।
अर्पित कीन्हे वहुत से, पट भूषण मंगवाय ॥ ३४६ ॥

चौ- कृष्ण वचन सुन यों वृजराई । निज नयनन ते अश्रु वहाई ॥ १ ॥
होकर विहल प्रेम अपारा । किय आलिंगन दोउ सुकुमारा ॥ २ ॥
पहुँचे पुनि वृज गोपन संगा । गावत पथ हरि राम प्रसंगा ॥ ३ ॥
शूर सुवन अव गर्ग बुलाये । निज पुत्रन व्रत वन्ध कराये ॥ ४ ॥
दीन्हे वत्स सहित गौदाना । गुरु प्रति भूषण वसन महाना ॥ ५ ॥
प्रकटे राम कृष्ण जव राई । मनोदत्त अव गौ मँगवाई ॥ ६ ॥
विप्रन प्रति दीन्ही वह दाना । भूषण पट कँचन युत नाना ॥ ७ ॥
पात द्विजत्व कृष्ण वलरामा । निज कुल गुरू गर्ग जिन नामा ॥ ८ ॥
उनते ब्रह्मचर्य व्रत पाकर । राम कृष्ण ये दोउ जगदीश्वर ॥ ९ ॥
गुरुकुल वास करन अभिलासा । पहुँचे साँदीपनि मुनि पासा ॥ १० ॥

दोहा- कश्यप गौत्री वे मुनी, करत अवन्ति निवास ।
राम कृष्ण विधिवत वहाँ ,रहकर गुरु के पास ॥३४७॥

चौ- रख आदर्श जगत के आगे । गुरु सेवा में तत्पर लागे ॥ १ ॥
होकर मुदित गुरू इन ऊपर । निगम समेत अधिर षट् शास्तर ॥ २ ॥
धर्म न्याय नृप नीति सिखाई । षट् भेदनयुत यह वतलाई ॥ ३ ॥
अंगसहित उपनिषद पढाये । धनुर्वेद युत मन्त्र वताये ॥ ४ ॥
सव विद्या प्रेरक दोउ भाई । श्रवण करत गुरुमुख ते राई ॥ ५ ॥
ग्रहण कीन्ह विद्या उन सारी । कर निवास साठ दिन चारी ॥ ६ ॥

सीखी उन विद्या दस चारी । चौसठ कला राम बनवारी ॥ ७ ॥
गुरू दक्षिणा हित दोउ भाई । बोले गुरु सन्मुख पुनि जाई ॥ ८ ॥
महिमा अद्भुत अचरज कारी । कर विचार मुनि सह निज नारी ॥ ९ ॥
बोले सिन्धू क्षेत्र प्रभासा । नीर मध्य मम सुवन विनासा ॥ १० ॥

दोहा- **गुरु दक्षिणा देन की, हो यदि रुचि तुम्हारा ।**
वह सुत मुझको दीजिये, और न चाह हमार ॥ ३४८ ॥

चौ- यों सुन राम कृष्ण दोउ भाई । रथ चढ़ गुरु पद सीस नवाई ॥ १ ॥
पहुँचे सागर तीर प्रभासा । पैठे जल विच करत प्रकासा ॥ २ ॥
उन दो उन को लख जगदीश्वर । कर पूजन बोला अब सागर ॥ ३ ॥
कर दरसन मैं आज तुम्हारे । पावन सब विधि भयो मुरारे ॥ ४ ॥
सिंधु वचन सुनकर निज काना । बोले कृष्ण चन्द्र भगवाना ॥ ५ ॥
मम गुरु सुवन तरंगन द्वारा । तुमने हरण कीन्ह इक बारा ॥ ६ ॥
वह बालक सोंपहु मोहिं सागर । बोला वचन बाद रत्नाकर ॥ ७ ॥
मैं वह बालक नहीं चुराया । मम जल वीच सुनौ यदुराया ॥ ८ ॥
करत निवास पंचजन नामा । शंख रूप राक्षस बलधामा ॥ ९ ॥
निश्चय वहि प्रभु गुरु सुत हारी । यह सुन कृष्ण चन्द्र असुरारी ॥ १० ॥

दोहा- **कर प्रवेश जल के विषै, वधा दैत्य तत्काल ।**
किन्तु असुर के उदर में, पाया ना गुरु बाल ॥ ३४९ ॥

चौ- उस अंगज कम्बुज गहि हाथा । पहुँचे संयमिनी यदुनाथा ॥ १ ॥
जाकर वहँ निज शंख बजावा । सुन यम नाद तुरत उठ धावा ॥ २ ॥
कर पूजन यम वचन सुनाये । करूँ काम जो प्रभु बतलाये ॥ ३ ॥
सर्वभूत हिय वास तुम्हारा । विष्णु कृष्ण हे राम उदारा ॥ ४ ॥
सुन वैवस्वत वचन मुरारी । हे यम निज कर्मन अनुसारी ॥ ५ ॥
जो गुरु सुवन यहाँ तुम लाये । हम उसको लेने यहँ आये ॥ ६ ॥
मम आज्ञा से उसको मोहू । करो समर्पित दोप न तोहू ॥ ७ ॥
गुरु सुत बाद वहाँ यम आना । कीन्हो अरपित वह भगवाना ॥ ८ ॥
वह बालक लेकर हरि रामा । आये महि पर निज गुरु धामा ॥ ९ ॥
पाछे गुरु हित अरपन कीन्हा । होय मुदित गुरु आसिस दीन्हा ॥ १० ॥

दोहा- **हे पुत्रों तुमने मुझे, सम्यक् विधि अनुसार ।**
देकर यह गुरु दक्षिणा, कीन्हो खुशी अपार ॥३५०॥

चौ- अब तुम अपने गेह सिधाऊ । पावन वर अतुलित यश पाऊ ॥ १ ॥
इह चरत्र यह ज्ञान तुम्हारा । विस्मृत हो ना किसी प्रकारा ॥ २ ॥
तुम सम पाकर शिष्य सयाने । मैं सब पूर्ण मनोरथ माने ॥ ३ ॥
मम प्रदत्त विद्या यह सारी । रहे सदा नूतन सुखकारी ॥ ४ ॥
यों गुरु का अनुशासन पाकर । स्थित हो राम कृष्ण अब रथ पर ॥ ५ ॥
चाले वायु वेग समाना । घनवत शब्द करत नृप नाना ॥ ६ ॥
आये मधुपुर जगत नियन्ता । कृष्ण समेत प्रलम्ब निहन्ता ॥ ७ ॥
उन दर्शन बिन प्रजा दुखारी । होरहिं बहुत दिवस तों भारी ॥ ८
कर दरसन अब हरि बलरामा । भये सुखी सब पूरण कामा ॥ ९ ॥
नष्ट द्रव्य पाकर नर जैसे । परमानन्द मगन् भए वैसे ॥ १० ॥

दोहा- **वृष्णि वंश में श्रेष्ठ अति, हे नृप मति गुणधाम ।**
शिष्य बृहस्पति के रहे, उद्धव जिनका नाम ॥३५१॥

चौ- सखा कृष्ण के वे अति प्यारे । रहत सर्वदा कृष्ण सहारे ॥ १ ॥
एक दिवस हरि पास बुलाये । उद्धव कर निज हस्त गहाये ॥ २ ॥
बोले बृज बीचे तुम जाऊ । यशुमति नन्दहिं धीर बन्धाऊ ॥ ३ ॥
गोपिन को व्यापा दुख भारी । मोर वियोगज अपरम्पारी ॥ ४ ॥
उनको मम संदेश सुनाकर । करो निवारण तुम समझाकर ॥ ५ ॥
वे मुझको अतिप्रिय सम प्राणन । त्यागे पति सुत निज मम कारन ॥ ६ ॥
इस हित उद्धव धर्म हमारा । करूँ सुखी उन सभी प्रकारा ॥ ७ ॥
जब मैं दूर यहाँ पर आवा । तो निज मन वे अति दुःख पावा ॥ ८ ॥
मोहित विरह व्यथा से भारी । मम हित अति उत्कंठित सारी ॥ ९ ॥
अति दुःखित प्राणन निज धारे । लख सब प्रत्यागमन हमारे ॥ १० ॥

दोहा- **मैं ही उनका परम प्रिय, प्रियतम प्राणाधार ।**
मैं ही उनकी आत्मा, और नहीं संसार ॥३५२॥

चौ- बोले व्यास पुत्र मुनि ज्ञानी । सुन यों कृष्ण चन्द्र की वानी ॥ १ ॥
निज रथ चढ़ि उद्धव बृज आये । पहुँचे रवि अस्ताचल पाये ॥ २ ॥
पशुअन खुर रज ते वह स्यन्दन । भयो धूरि धूसर युत राजन ॥ ३ ॥
हो मदमत्त वृषभ वहँ विचरे । ऋतुमति गायन के अनु विहरे ॥ ४ ॥
कर अति शब्द वे लरत लराई । धावत गो निज मुख रंभाई ॥ ५ ॥
इत उत धावत वत्स अनेका । सुन्दर रंग विरंगन नेका ॥ ६ ॥

गौ दोहन रव मंडित भारी । विचरत इत उत गोप सनारी ॥ ७ ॥
सोभित वेणूनाद नृपाला । होय स्वलंकृत गोपी ग्वाला ॥ ८ ॥
गावत राम कृष्ण गुण सुन्दर । देखे उद्धव निज निज मंदिर ॥ ९ ॥
पितर अतीथि व देव कृशानू । पूजन करत विप्र गौ भानू ॥ १० ॥

दोहा- **भ्रमर पक्षि नादित चहुँ,पुष्पित विपिन विशाल ।**
कमल खंड मंडित वहँ ,देखे सुन्दर लाल ॥३५३॥

चौ- ऐसे वृज उद्धव जब आये । पहुँचे मिलन नन्द हरसाये ॥ १ ॥
कर आलिंगन पूजन कीन्हा । वासुदेव सम वह उन चीन्हा ॥ २ ॥
मृदु स्वादू भोजन करवाये । सुख पूरवक शय्या पर आये ॥ ३ ॥
आसेवक पुनि चरण दबाये । यों गतश्रम उद्धव सुख पाये ॥ ४ ॥
बोले नन्द राय अब वानी । सुनो भागवत उद्धव ज्ञानी ॥ ५ ॥
सुवन सुहृद युत सखा हमारे । है न कुशल वसुदेव सुखारे ॥ ६ ॥
पापी कंस मृतक जो भयऊ । यदुअन प्रति जिन अति दुख दयऊ ॥ ७ ॥
सानुग वह निज अघ अनुसारी । पावा मरण न वधा मुरारी ॥ ८ ॥
एक बाद उद्धव बतलाऊ । हमको कबहुँ कृष्ण बलदाऊ ॥ ९ ॥
सुमिरण करत अरे वा नाहू । सखियन वृज गौ गिरिवन याहू ॥ १० ॥

दोहा- **हे उद्धव गोविन्द वे, हमको दर्शन देन ।**
आवहिं कब वृज के विषै ,तरसत उन विन नैन ॥ ३५४॥

चौ- वर्षा वात वृषभ हय दावा । कालानन ते हमे बचावा ॥ १ ॥
उन लीला भापण परिहासा । सुमिरण कर हम शिथिल उदासा ॥ २ ॥
सरित शैल विपिन वृज सारा । हरिपद भूपित बारम्बारा ॥ ३ ॥
कर दरसन इनका हम ताता । मन हमार यह हरिमय जाता ॥ ४ ॥
ये दोउ देव प्रवर कहलाये । सुर कारज हित यहँ पर आये ॥ ५ ॥
अयुत नाग बल कंस कराला । मल्ल कुवलयापीर विशाला ॥ ६ ॥
मृगपति पशु सम सकल नसाये । राम कृष्ण कर बच नहिपाये ॥ ७ ॥
तीन ताल युत धनुप प्रमाना । तोरा वह गय यष्टि समाना ॥ ८ ॥
दिवस सप्त गिरि हस्त उठावा । वृक अहि धेनुक वृषभ नसावा ॥ ९ ॥
दैत्य सुरासुर अजित संहारे । देव प्रवर यहि हेत पुकारे ॥ १० ॥

दोहा- **यों उनकी लीला सुमिर, भये नन्द चुपचाप ।**
प्रेम प्रसव विह्वल अति, व्यापा तनु सन्ताप ॥३५५॥

चौ- पुत्र चरित सुन यशुमति माई । निज नैनन ते अश्रुवहाई ॥ १ ॥
यो लखि प्रीति कृष्ण पर भारी । उद्धव अब निज गिरा उचारी ॥ २ ॥
तुम अति श्रेष्ठ सुनौ वृज नाथा । बाढी मति जो इमि हरि गाथा ॥ ३ ॥
निश्चय कृष्ण सहित बलभ्राता । विश्व बीच योनी जग नगपाता ॥ ४ ॥
जानो तुम इन पुरुष प्रधाना । निशि दिन धरत रमा विधि ध्याना ॥ ५ ॥
ज्ञान चराचर जग में जेते । उनहिय विचरत अंश समेते ॥ ६ ॥
जो कोई अन्त समय क्षण एकी । जिनपद निजमन धरत विवेकी ॥ ७ ॥
तजकर सकल वासना जग की । होवत परम मोक्ष उस जन की ॥ ८ ॥
उन नारायण बीच तुम्हारा । कितना सुन्दर प्रेम अपारा ॥ ९ ॥
धन्य भाग हे नन्द तुम्हारा । पाये फल तुम सभी प्रकारा ॥ १० ॥

दोहा- **कुछ दिन पीछे आवहीं, वृज में आनन्द कँद ।**
मात पिता को मुदित कर, देवहिं परमानन्द ॥ ३५६ ॥

चौ- वध कर कंस रंग महि भीतर । आये पास तुम्हारे यदुवर ॥ १ ॥
जे जे निज मुख वचन सुनाये । उनमें एक असत्य न गाये ॥ २ ॥
अब तुम दोऊ रंज तजाऊ । निज हिय अन्दर उन्हे लखाऊ ॥ ३ ॥
सब प्राणिन के हिय भगवाना । विचरत अग्नि काठ समाना ॥ ४ ॥
प्रिय अप्रिय सम असम न कोई । उन प्रभु का वर अवर न होई ॥ ५ ॥
मात पिता सुत मित्र न दारा । देह न जन्म न किसी प्रकारा ॥ ६ ॥
देव नरादिक बिच भगवाना । आवत साधु न हित परित्राना ॥ ७ ॥
निर्गुण होय गुणन को सेवत । उन गुण द्वारा वे जग सरजत ॥ ८ ॥
जैसे भ्रमण वृष्टि अनुसारी । भ्रमण करत दीखत भू सारी ॥ ९ ॥
त्यों विक्षिप्त चित्त अनुसारा । अहंकार बुद्धि के द्वारा ॥ १० ॥

दोहा- **आत्मा को कर्त्ता समझ, भूलत करुणासींव ।**
भटकत आवागमन में, सुनौ नन्द यह जीव ॥३५७॥

चौ- नहीं कृष्ण सुत नन्द तुम्हारा । मात पिता वे जग भरतारा ॥ १ ॥
वे ईश्वर सबके हिय विचरे । उन संबंध सभी से गहरे ॥ २ ॥
श्रुत अरु दृष्ट व स्वल्प व भारी । अच्युत भिन्न न एक पुकारी ॥ ३ ॥
करत वारता इमि नरराई । नन्द व उद्धव निशा बिताई ॥ ४ ॥
हे नृप ब्रह्म मुहूरत आवा । उठ सब गोपी दीप जलावा ॥ ५ ॥
निज निज आंगन चौक पुराये । मन्थन करत दधि हरसाये ॥ ६ ॥

रज्जु विकर्षण ते उस काला । चंचल भुज कंकण गल माला ॥ ७ ॥
चलत नितम्ब पयोधर भारी । भइ सुशोभित वे अपरम्पारी ॥ ८ ॥
गावत राम कृष्ण यश सुन्दर । उन रव दधि मन्थन रव मिलकर ॥ ९ ॥
करत स्वर्ग को स्पर्शित राया । दिशा अमंगल येन नसाया ॥ १० ॥

दोहा- **उदित भयो तम चूर तबें, बृज दारे रथ देख ।**
बोले जन स्यन्दन यह, आवा केन विशेष ॥ ३५८ ॥

चौ- गये कृष्ण मथुरा जिस द्वारा । क्या आवा अक्रूर दुबारा ॥ १ ॥
कंस अर्थ साधक अक्रूरा । वो दीखत हमको महि पूरा ॥ २ ॥
अब हमको ले जाय ज़रूरी । भरहिं कंस का पिंड अखीरी ॥ ३ ॥
करत वारता इत तिय नाना । आये उद्धव उत कर स्नाना ॥ ४ ॥
देख उन्हें बृज तिय हरि दासा । बोले कुरुपति से सुत व्यासा ॥ ५ ॥
भुज प्रलम्ब नव कंज सुलोचन । पुष्कर माल पीत पट सोभन ॥ ६ ॥
लटकत कुंडल मुख अरविन्दा । आवत करत भजन गोविन्दा ॥ ७ ॥
शुचि स्मित बृज तिय वदत परस्पर । देखन में तो यह अति सुन्दर ॥ ८ ॥
अच्युत सम धर भूषण भेषा । आवा यह को पुरुष विशेषा ॥ ९ ॥
यह कोइ दूत यहाँ पर आवा । क्या कारण यह कवन पठावा ॥ १० ॥

दोहा- **चितवन हास्य सलज्ज युत, मधुर वचन अनुसार ।**
कीन्ह अब इन सबन्हि ने, उद्धव का सत्कार ॥ ३५९ ॥

चौ- उन उद्धव एकान्त बुलाये । सुन्दर आसन पर बिठलाये ॥ १ ॥
बोली अब उनसे सब नारी । सुनु उद्धव तुम बात हमारी ॥ २ ॥
जानत हम तुमको हरि दूता । रहा काम यहँ कौन अछूता ॥ ३ ॥
ले निज स्वामी का संदेशा । आये उद्धव किस उद्देशा ॥ ४ ॥
शायद मात पिता को राजी । प्रेषित किये तुम्हें हरि आजी ॥ ५ ॥
वरना बृज बीचे उन कोई । ऐसी प्रिय वस्तु ना सोई ॥ ६ ॥
पर इक बात कहें हम ताता । ऋषि मुनि जे जग में विख्याता ॥ ७ ॥
दुष्त्यज उनको भी परिवारा । नहीं असत यह कथन हमारा ॥ ८ ॥
करते प्रेम अपर प्रति कोई । निज स्वारथ उसमें उन होई ॥ ९ ॥
स्वारथ बिन होवत ना प्रीति । सुन उद्धव ये ही जग रीति ॥ १० ॥

दोहा- जब लगि स्वारथ सिद्ध ना, होवत किसी प्रकार ।
तब लगि होवत प्रीति का, जग में अति संचार ॥ ३६० ॥

चौ- निकसत स्वारथ प्रेम दीवाला । होवत उद्धत तव तत्काला ॥ १ ॥
पुष्पन षट् पद पुरुषन नारी । करती स्वारथ प्रीति अपारी ॥ २ ॥
स्वारथ जन्य प्रेम चहुँ ओरा । देखा हमने जग में कोरा ॥ ३ ॥
त्यागे गणिका निरधनि सुन्दर । होत समर्थ हीन जब नर वर ॥ ४ ॥
तजहिं प्रजा उसको तब सारी । त्यागे गुरुहि शिष्य गुणधारी ॥ ५ ॥
प्राप्त दक्षिणा ऋत्विज सारे । तज मख जावत निज निज द्वारे ॥ ६ ॥
भोजन बाद अतिथि घर त्यागे । अनल दग्धवन तजि मृग भागे ॥ ७ ॥
अफल वृक्ष खग वृन्द तजावे । रमण बाद नरहिं न तिय भावे ॥ ८ ॥
यो सब गोपी सुमुखि सयानी । हरि पद बीच काय मन बानी ॥ ९ ॥
होकर लीन कृष्ण की लीला । गावत रुदत सभी मतिशीला ॥ १० ॥

दोहा- **जब आये उद्धव वृज, बन कर हरि के दूत ।**
उनतें बातें करत वे, भूल गई सब सूत ॥३६१॥

चौ- जे जे बात कहन नहि लायक । भाखी उन सब सुनु कुरु पालन ॥ १ ॥
जे जे स्मृति उनके हिय आई । कर उन सुमिरण धीर बँधाई ॥ २ ॥
आत्म भोर होकर वे सारी । भूली निज लज्जा वृजनारी ॥ ३ ॥
रोवन लागी बारम्बारा । तन्मय हो हरि प्रेम अपारा ॥ ४ ॥
तब इक मधुकर वहाँ दिखावा । जाना उन हरि दूत पठावा ॥ ५ ॥
होय विरह में व्याकुल भारी । तब गोपी इक वचन उचारी ॥ ६ ॥
हे शठ बन्धो भ्रमर हमारा । कुरु पद स्पर्श ना किसी प्रकारा ॥ ७ ॥
करो प्रणाम न अनृत झुककर । हमसे अनुनय विनय तू मत कर ॥ ८ ॥
जो वनमाला हरि गल धारी । वह सौतन कुच मर्दित भारी ॥ ९ ॥
उस कुंकुम युत पूँछ तुम्हारी । होरहि मधुकर पीत प्रकारी ॥ १० ॥

दोहा- **किन्तु तुम्हारा वह सखा, बड़ा ढीट मक्कार ।**
मधुपुर नारिन का सदा, कर प्रसाद स्वीकार ॥ ३६२ ॥

चौ- वह प्रसाद राखे निज पासा । उसकी यहँ न जरूरत खासा ॥ १ ॥
अरे भ्रमर जैसा तू काला । निकलो वैसो ही नन्दलाला ॥ २ ॥
लेकर रस तू पुष्प अनेका । कबहूँ स्थिर तू रहत न एका ॥ ३ ॥
तो सम हीं निकसे नन्द लाला । रहत न स्थिर वह कपटी काला ॥ ४ ॥
हमको अधर सुधा पिलवाई । पाछे उन हम सभी तजाई ॥ ५ ॥
उन पर अरे रमा सुकुमारी । ना जाने क्यों मोहित भारी ॥ ६ ॥

दीखी वह हमको अति मूढ़ा । मोहित भई वचन उन गूढा ॥ ७ ॥
हे षट्पद उन हरि का गायन । हम सन्मुख क्यों करत उचारन ॥ ८ ॥
जो उन अति प्रिय तुम्हें दिखाऊ । उन प्रसंग उन सन्मुख गाऊ ॥ ९ ॥
ऐसी वस्तु यहाँ नहि कोई । गावन श्रम मिल हीं जो तोई ॥ १० ॥

दोहा- **इस कारण तत्काल तू, मधुपुर बीच सिधाऊ ।**
इसका श्रम तुझको वहाँ, बिन श्रम ही मिल जाउ ॥३६३॥

चौ- यहँ पर चाल चले न तुम्हारी । हम उनको पहिचानत सारी ॥ १ ॥
मथुरापुर की नूतन नारी । क्या जाने करतूत मुरारी ॥ २ ॥
ऐसी कौन जगत में नारी । हो ना मोहित देख मुरारी ॥ ३ ॥
जिन पद अरे रमा नित सेवत । उन सन्मुख हम तुच्छ दिखावत ॥ ४ ॥
चरण हमारा धरहु मति सीसा । जानत हम तव चाल अलीशा ॥ ५ ॥
तू भी कपटी कृष्ण समाना । नहि विश्वास योग्य हम माना ॥ ६ ॥
जिन हित पति पुत्रादिक त्यागे । सो हमको तजि मधुपुर भागे ॥ ७ ॥
कैसे राखहि उन विश्वासा । तू हि बता तोड़ी जिन आसा ॥ ८ ॥
तू उनकी ना जानत जाला । जानति हम सब उनकी चाला ॥ ९ ॥
उनके जन्म जन्म की बाता । तू ना जानत हम परिज्ञाता ॥ १० ॥

दोहा- **वधा वालि उन वधिक सम, कपट चाल अनुसार ।**
सूर्प नखा कुरुपित करी, नासा श्रुति कर पार ॥ ३६४॥

चौ- जिस बलिद्वारा पाये दाना । बाँधा वह उन काक समाना ॥ १ ॥
ऐसे उन हरि संग मिताई । हे अलि हमरे मन ना भाई ॥ २ ॥
किन्तु श्रवण कर उन यश काना । मानव नर आनन्द महाना ॥ ३ ॥
लेश मात्र भी जो सुन लेवे । द्वंद धर्म वह कबहुँ न सेवे ॥ ४ ॥
उल्टा वह निज गेह तजाई । विचरत केवल प्राण भराई ॥ ५ ॥
ऐसा कवन जादु अति सुन्दर । राखा कूट कूट हिय अन्दर ॥ ६ ॥
हम सब गोपी भोली भाली । जाय फँसी उन कपट कुचाली ॥ ७ ॥
जैसे कृष्ण सार मृग नारी । वधिक जाल फँस जावत मारी ॥ ८ ॥
उस कपटी की सुन मृदु बाता । मानी सत्य सभी सुख दाता ॥ ९ ॥
उन नख स्पर्शज काम विकारा । होवत अनुभव बारम्बारा ॥ १० ॥

दोहा- इस कारण इस विषय में, मत तू वचन उचार ।
करो बात अब दूसरी, आगे सोच विचार ॥३६५॥

चौ- क्या तू हरि ने यहाँ पठावा । माँगो जो तोरे मन भावा ॥ १ ॥
अच्छा तुम यह साँच बताऊ । कब हमको उन पास लिवाऊ ॥ २ ॥
जो नर उनके सन्मुख जावे । सो नर वापिस कबहुँ न आवे ॥ ३ ॥
हे मधुकर वे कृष्ण कृपाला । तज कर कब आये गुरु शाला ॥ ४ ॥
क्या वे कृष्ण चन्द्र बल भ्राता । करत न करत हमारी बाता ॥ ५ ॥
अगर सुगंधित प्रभु निज हाथा । राखहि सीस कबे यदुनाथा ॥ ६ ॥
गोपिन के सुनकर इमि बैना । भर आये उद्धव जल नैना ॥ ७ ॥
उन प्रति हरि संदेश सुनावा । प्रेम सहित अति धीर बँधावा ॥ ८ ॥
बोले उद्धव सुनु बृजनारी । तुम कृत कृत्य भइ अति भारी ॥ ९ ॥
जो तुम हरि पद चित्त लगावा । ऐसो को तुम पुण्य कमावा ॥ १० ॥

दोहा- **दान व वृत तप हवन जप, क्या कीन्हा बृजनार ।**
यह भक्ति जो कृष्ण में, व्यापी अपरम्पार ॥३६६॥

चौ- मुनि दुर्लभ यह भक्ति तुम्हारी । भई प्रवर्तित हरि पद भारी ॥ १ ॥
हे गोपिन बड़ भाग तुम्हारा । जो तजकर पति सुत परिवारा ॥ २ ॥
परम पुरुष पद चित्त लगावा । यह सौभाग्य परम तुव गावा ॥ ३ ॥
हरि पद प्रेमानन्द दिखाकर । कीन्हो अनुग्रह तुम मम ऊपर ॥ ४ ॥
हरि संदेश सुनो अब मुझसे । बोले वचन हरि निज मुख से ॥ ५ ॥
मुझसे कबहुँ वियोग तुम्हारा । हो सकता ना किसी प्रकारा ॥ ६ ॥
जैसे वास चराचर भीतर । करते भूत सकल निशि वासर ॥ ७ ॥
मैं सर्वात्मा सब हिय वासी । मैं सब जग रच बनूँ विनासी ॥ ८ ॥
इन्द्रिय पंच भूत मन प्राना । सब विषयन का आश्रय माना ॥ ९ ॥
वै मुझमें मैं उनसे वासा । होऊँ उनके रूप प्रकासा ॥ १० ॥

दोहा- **माया मायाकार्य से, रहता अरी विरुद्ध ।**
सब वेदन से रहित हो, रहूँ सर्वदा शुद्ध ॥३६७॥

चौ- कोइ न स्पर्श मोहि कर पावे । माया वृत्ति तीन कहावे ॥ १ ॥
जागृत सुपन सुसुप्ति मलीना । विश्व रूप इन तीन अधीना ॥ २ ॥
जग वस्तु यह सुपन समाना । समझे जागृत बिच गुणवाना ॥ ३ ॥
सोच समझ विषयन मन द्वारा । रोके इन्द्रिन विविध प्रकारा ॥ ४ ॥
यों सब स्वाप्निक विषय तजाई । सोई नर मम रूप धराई ॥ ५ ॥
सरिता इत उत करत भ्रमाई । अन्त काल जिमि सिन्धु समाई ॥ ६ ॥

इन्द्रिय दमन ताप अरु त्यागा । वेदाभ्यास व योग विरागा ॥ ७ ॥
सत्वादिक जो धर्म अनन्ता । मम समीप पहुँचावत अन्ता ॥ ८ ॥
दूर निवास प्रेम हो जैसो । पास बसत वह रहत न वैसो ॥ ९ ॥
मैं तुम्हारा नयनन का तारा । हूँ जीवन सर्वस्व तुम्हारा ॥ १० ॥

दोहा- **मैं जो तुमसे दूर हूँ, इसका कारण येहि ।**
ध्यान निरन्तर तुम करो, मेरा प्रेम सनेहि ॥३६८॥

चौ- रहुँ मैं तुमसे अरि अति दूरी । तब ही मम सन्निधि हो पूरी ॥ १ ॥
निज मन सदा रखो मम पासा । परदेशी प्रियतम सम आसा ॥ २ ॥
पति जब चला जात परदेशू । रखति तब तिय प्रेम विशेषू ॥ ३ ॥
तुम मोरे बिच ध्यान लगाऊ । कर सुनिरन मम पास सिधाऊ ॥ ४ ॥
अरी वियोगन मोर तुम्हारा । होवत पुनि नहीं किसी प्रकारा ॥ ५ ॥
जब हम क्रीड़ा रास प्रसारी । रोकी तब पति इक निज नारी ॥ ६ ॥
कर सुमिरन वह निज हिय अन्दर । मिली मुझे तत्क्षण हे तियवर ॥ ७ ॥
वैसे तुम मम पास सिधाऊ । अब बोले शुक सुन नर राऊ ॥ ८ ॥
उद्धव मुख सुन हरि संदेशा । भई गोपी अब मुदित विशेशा ॥ ९ ॥
बोली उद्धव से वृजनारी । मारा हरि ने कंस अनारी ॥ १० ॥

दोहा- **यह सुनकर हमको अरे, व्यापी खुशी अपार ।**
सब प्रकार से कुशल तो, हैं न कृष्ण हमारा ॥ ३६९ ॥

चौ- जिमि हम प्रेम भरी मुस्काना । करती पूजन रमा निधाना ॥ १ ॥
करते वे भी प्रेम अपारा । रखत दुराव न किसी प्रकारा ॥ २ ॥
त्यों अब मधुपुर नारिन संगा । करत न करत वे प्रेम प्रसंगा ॥ ३ ॥
एक सखी तब उठ यों बोली । तुम सबकी योहीं मति डोली ॥ ४ ॥
रति विशेज्ञ वे नन्द कुमारा । वे जिन प्रेम मोहिनी द्वारा ॥ ५ ॥
करहीं निज वश मधुपुर नारिन । तड़फो तुम यहँ सभी अभागिन ॥ ६ ॥
ऐसो कवन जगत के अन्दर । हो ना वश उन मृदुवच सुनकर ॥ ७ ॥
बोली अपर सखी सुनु साधो । उन नारिन बीचे वे माधो ॥ ८ ॥
हमको सुमिरण करत न करही । पाछे अपर सखी पुनि कहही ॥ ९ ॥
जिस रजनी बिच नन्दकुमारा । कीन्हो हम संग रास अपारा ॥ १० ॥

दोहा- **उसको भी सुमिरण कबहुँ, करते वा न वृजेश ।**
कुछ गोपी अब दूसरी, बोली वचन विशेश ॥३७०॥

चौ- उन विरहानल ते अतिभारी । जल रहि उद्धव देह हमारी ॥ १ ॥
जैसे सुरपति जल बरसाकर । करते हरियाली वन अन्दर ॥ २ ॥
वैसे हे उद्धव वृज आई । करके हस्त स्पर्श सुखदाई ॥ ३ ॥
देवन हमको जीवन दाना । आवहिं कदा यहाँ भगवाना ॥ ४ ॥
तब उठ एक सखी यों बोली । हो सखियों तुम तो अति भोली ॥ ५ ॥
अब किहि कारन हो उन आना । पाये वहँ वैभव वे नाना ॥ ६ ॥
नृप कन्या संग कई विवाहू । करहिं कृष्ण वहँ बड़ उत्साहू ॥ ७ ॥
करहिं व्याह जब राज कुमारिन । क्यों पूछहिं वह हमें गवारिन ॥ ८ ॥
हम बिन काम अरी उन कोई । अटक रहा दीखत नहि मोंई ॥ ९ ॥

दोहा- **होत स्वैरिणी पिंगला, कहे वचन जिन नीक ।**
आशा त्यागो जगत में, मिले तदा सुख ठीक ॥ ३७१॥

चौ- यद्यपि बात अरी ये सारी । हम जानत सब वृज की नारी ॥ १ ॥
तदपि न उन आवन की आशा । व्याप रही हमरे मन खासा ॥ २ ॥
किस विध त्याग सकैं हम तेहू । जीवन धन माना हम येहू ॥ ३ ॥
जिन पावन यश सन्त बखाना । उन पद सेय रमा सुख माना ॥ ४ ॥
कर एकान्त बीच मृदु बाता । कीन्ह प्रफुल्लित जिन सब गाता ॥ ५ ॥
ऐसे प्रभु को केन प्रकारा । त्याग सकै मन अरी हमारा ॥ ६ ॥
ये सरिता गिरि विपिन प्रदेशा । सेवित राम व कृष्ण वृजेशा ॥ ७ ॥
हे उद्धव विस्मृत कर तेहू । त्यागें किस विध उन पद नेहू ॥ ८ ॥
सुमिरण कर उन पावन लीला । कर रहि हम निज जीवन गीला ॥ ९ ॥
हरि गति हास्य व चितवन द्वारा । हत बुद्धि भइ सभी प्रकारा ॥ १० ॥

दोहा- **त्यागे जा सकते नहीं, हमसे वे वृजराय ।**
यो कह कर रोने लगी, नयनन अश्रु बहाय ॥ ३७२ ॥

चौ- लक्ष्मीनाथ नाथ वृजनाथा । तुम बिन हम सब भई अनाथा ॥ १ ॥
डूबा सब गोकुल दुख सागर । कर गहि हस्त निकासउ बाहर ॥ २ ॥
बोले श्री शुक हे कुरुराया । उद्धव हरि संदेश सुनाया ॥ ३ ॥
तब सब विरह व्यथा उन त्यागी । आत्मरूप हरि समझन लागी ॥ ४ ॥
अब वे प्रेम व आदर द्वारा । कीन्हा उद्धव का सत्कारा ॥ ५ ॥
गोपिन विरह मिटावन काजा । उद्धव वहँ कई मास विराजा ॥ ६ ॥
उद्धव मुख सुन हरि की लीला । होकर मुदित सभी मतिशीला ॥ ७ ॥

जेते उद्धव वहँ मास बिताये । वे सब क्षण सम व्यतित लखाये ॥ ८ ॥
कृष्ण सखा उद्धव उस काला । वन उपवन सरिता गिरि नाला ॥ ९ ॥
कीन्ह चरित जहँ रमा निधाना । विचरत कृष्ण चरित कर गाना ॥ १० ॥

दोहा- **वृज वासिन को कृष्ण की, लीला स्मर्ण कराय ।**
तन्मय कर देवत उन्हें, सुनो परीक्षितराय ॥ ३७३ ॥

चौ- कर उद्धव वृज बीच निवासा । प्रेम विकलता हरिपद आसा ॥ १ ॥
देखी उन गोपिन के द्वारा । भरकर आनँद प्रेम अपारा ॥ २ ॥
हो नत मस्तक गोपिन आगे । उद्धव वचन सुनावन लागे ॥ ३ ॥
इस महि बीच सभी वृजनारी । सफल जनम हरि प्रेम अपारी ॥ ४ ॥
कहँ व्याभिचार दुष्ट तिय येहा । कहँ हरि चरण बीच दृढ नेहा ॥ ५ ॥
भगवत रूप रहस्य न जाना । करत भजन जो भी भगवाना ॥ ६ ॥
देवत श्रेय सन्त भयहारी । पावा ज्यों वृजनार गँवारी ॥ ७ ॥
जो अनुग्रह लक्ष्मी सुर नारी । पावा नहि वृजतिय अनुसारी ॥ ८ ॥
जब वन बीचे रास रचावा । तब हरि इन गल बाँह रखावा ॥ ९ ॥
देकर प्रेम प्रसाद अपारा । कीन्हो पूर्ण मनोरथ सारा ॥ १० ॥

दोहा- **मेरे हित में हो यही, सबसे सुन्दर काम ।**
बन जाऊँ तृण तरु लता, मैं भी इस वृजधाम ॥३७४॥

चौ- मिलत रहे मोहिं तदा निरन्तर । इन वृजगोपिन पदरज सुन्दर ॥ १ ॥
इन पद रज द्वारा कर स्नाना । होउँ धन्य पावन भगवाना ॥ २ ॥
सुर ब्रह्मा मुनि योगिन द्वारा । सेवित जे पद विविध प्रकारा ॥ ३ ॥
वे हरि चरण कमल वृजनारी । निज स्तन पर धर ताप निवारी ॥ ४ ॥
उन गोपिन पावन पद मूरि । वन्दो जो मुक्तिप्रद पूरी ॥ ५ ॥
बोले शुक उद्धव अब नृपवर । नन्दादिक की अनुमति लेकर ॥ ६ ॥
मधुपुर जावन को निज स्यन्दन । बैठे ले निज हस्त उपायन ॥ ७ ॥
तब नन्दादिक अश्रु बहाये । उद्धव प्रति पुनि वचन सुनाये ॥ ८ ॥
हे उद्धव मन वृत्ति हमारी । रहें सर्वदा पद कंतारी ॥ ९ ॥
नित्य निरन्तर जीह हमारी । करे गान गुण उन अविकारी ॥ १० ॥

दोहा- जिन जिन जोनिन के विषे, होवे जनम हमार ।
हरि चरणों में प्रेम का, होवे अति संचार ॥३७५॥

चौ- यों नन्दादिक द्वारा सत्कृत । आये उद्धवपुर हरि पालित ॥ १ ॥
कृष्ण हेतु पुनि कीन्ह प्रणामा । कीन्हो कथन सभी वृजधामा ॥ २ ॥
गाई सब भक्ति वृज वासिन । दीन्ही नृपप्रति सभी उपायन ॥ ३ ॥
बोले श्री शुकदेव दयाला । एक दिवस श्री कृष्ण कृपाला ॥ ४ ॥
झपकेतु ते अर्दित भारी । कुब्जा प्रिय करने कंसारी ॥ ५ ॥
कुब्जा के घर पर वे आये । वह घर कुब्जा प्रथम सजाये ॥ ६ ॥
मुक्ता दाम पताकन द्वारा । सोभित सुन्दर विविध प्रकारा ॥ ७ ॥
महा उपस्कर युत सुखकारी । सब विधि काम बढ़ावन हारी ॥ ८ ॥
सुन्दर शय्या आसन सोहे । धूप सुगंधित सब मन मोहे ॥ ९ ॥
दमकत दीप शिखा अति सुन्दर । सोभित पुष्पन माल मनोहर ॥ १० ॥

दोहा- **घर आवत लखि कृष्ण को, उठी शीघ्र हर्षाय ।**
सन्मुख जा ठाढ़ी भई, स्वागत हित यदुराय ॥ ३७६ ॥

चौ- कर स्वागत आसन पुनि देकर । कीन्ही विधिवत पूजन सुन्दर ॥ १ ॥
पूजत उद्धव उसी प्रकारा । बैठे महि आसन तजि न्यारा ॥ २ ॥
इत सैरन्ध्री शयन अगारा । पहुँचे अच्युत परम उदारा ॥ ३ ॥
उत कुब्जा कीन्हा अस्नाना । धारे पट भूषण तनु नाना ॥ ४ ॥
पान सुधा गंधादिक द्वारा । सज्जित कर तनु विविध प्रकारा ॥ ५ ॥
लीलामयि लज्जित मुस्काना । पहुँची पास तदा भगवाना ॥ ६ ॥
नव संगम लज्जायुत शंकित । कर हरि को निज हिय बिच अंकित ॥ ७ ॥
तब हरि ने वह पास बुलाई । निज समीप कर गहि बिठलाई ॥ ८ ॥
पाछे हे नृप उनके संगा । करने लागे प्रेम प्रसंगा ॥ ९ ॥
अंग राग जो हरि प्रति दीन्हा । यही हेतु शुभ फल यह लीन्हा ॥ १० ॥

दोहा- **अब कुब्जा भगवान के, चरण कमल हिय धार ।**
मेटी तन की सब व्यथा, हर्षित होय अपार ॥ ३७७ ॥

चौ- कर आलिंगन अति सुख व्यापा । त्यागा काम तप्त परितापा ॥ १ ॥
मोक्षद दुष्प्रापी जो ईश्वर । उन प्रति कुछ चन्दन अरपित कर ॥ २ ॥
वचन दुर्भगा यों उचारा । लगहि न तुम बिन चित्त हमारा ॥ ३ ॥
कुछ दिन रमण करउ मम संगा । मेटो मम परिताप अनंगा ॥ ४ ॥
कमल नयन हे प्रियतम तोहीं । त्यागन की अभिलाष न मोही ॥ ५ ॥
हे नृप अब मानद सर्वेश्वर । देकर उस प्रति इच्छित शुभवर ॥ ६ ॥

कुब्जा द्वारा पूजन पाये । उद्धव सह निज धाम सिधाये ॥ ७ ॥
ब्रह्मादिक ईश्वर के ईश्वर । पाकर उनको जो मूरख नर ॥ ८ ॥
शुभ फल त्याग विषय सुख माँगे । उन सम दीखत नहीं अभागे ॥ ९ ॥
रहहीं विषयन के कुछ दिन । आवहिं वाद अरे नृप दुर्दिन ॥ १० ॥

दोहा- **राम व उद्धव के सहित, कृष्ण चन्द्र भगवान ॥ १ ॥**
गये गेह अक्रूर के, वनकर अव महमान ॥ ३७८ ॥

चौ- देख उन्हें उठकर अक्रूरा । कर आलिंगन उन भरपूरा ॥ १ ॥
रामकृष्ण को कर अभिवन्दन । नत मस्तक अव गाँदिनि नन्दन ॥ २ ॥
कर पूजन आसन विठलाये । हरिपद धो जल सीस चढ़ाये ॥ ३ ॥
पट भूषण गंधादिक द्वारा । कर पूजन पुनि विविध प्रकारा ॥ ४ ॥
निज उत्संग गाँदिनी जाये । राम कृष्ण पद कमल दवाये ॥ ५ ॥
होय मुदित पुनि वचन उचारा । सानुग कंस गयउ जो मारा ॥ ६ ॥
यह वर काम भयो वल भ्राता । जो यादव कुल दुःख प्रदाता ॥ ७ ॥
अति दुरन्त दुख से कुल यादव । कीन्हे मुक्त सभी सुर मानव ॥ ८ ॥
तुम दोऊ प्रभु पुरुष प्रधाना । जग कारण जग रूप महाना ॥ ९ ॥
तुम विन अन्य वस्तु ना कोई । कारज कारण अन्य न होई ॥ १० ॥

दोहा- **निज माया वल से प्रभो, तुम यह जगत रचाउ ।**
काल व माया शक्ति से ,पुनि इसमें मिल जाउ ॥ ३७९॥

चौ- दीखत वस्तु जगत में जेती । श्रुत प्रत्यक्ष दृष्ट है वैसी ॥ १ ॥
उनमें रूप प्रतीत तुम्हारा । होवत निज माया के द्वारा ॥ २ ॥
इस जग वीच चराचर जैसे । प्रकटत पंचतत्व से वैसे ॥ ३ ॥
त्यों तुम प्रभु मृग मनुज शरीरा । धर वहु जनम हरत भव पीरा ॥ ४ ॥
यद्यपि तुम निज शक्ति सहारे । रचकर जग पालन संहारे ॥ ५ ॥
तो भी माये के गुण वन्धन । वँधते आप कवहुँ नहि भगवन ॥ ६ ॥
ज्ञान स्वरूप है शुद्ध तुम्हारा । वन्धत मोक्ष न किसी प्रकारा ॥ ७ ॥
यह जो वन्धन मोक्ष तुम्हारा । दीखत हमको माया द्वारा ॥ ८ ॥
वेद मार्ग यह सत्य सनातन । रचते विश्व श्रेय हित भगवन ॥ ९ ॥
जव पाखण्ड मार्ग के द्वारा । होवत दूपित विविध प्रकारा ॥ १० ॥

दोहा- **दुष्टन जन नाशन तदा, शुद्ध सत्व तनु धार ।**
आवत हो इस जगत में, हरन मही कर भार ॥ ३८० ॥
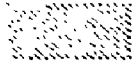
चौ- अब वसुदेव गेह अवतारा । लीन्हो राम सहित इस बारा ॥ १ ॥
अंशज निशिचर शासक सारे । तुम द्वारा अब जावहिं मारे ॥ २ ॥
शत शत अक्षौहिणि संहारा । होअहिं प्रभो तुम्हारे द्वारा ॥ ३ ॥
नाथ पुण्य मम आज अपारा । जो जगपति आये मम द्वारा ॥ ४ ॥
ये सब पितर भूत गण राजे । इन मूरति में आप विराजे ॥ ५ ॥
जो गंगाजल प्रभु पद धोवन । करता तीन लोक को पावन ॥ ६ ॥
वहि पद आज हमारे द्वारे । हे जग स्वामी यहाँ पधारे ॥ ७ ॥
ऐसे कवन भक्त प्रभु तेरे । तजि तव चरण अन्य पद हेरे ॥ ८ ॥
तुम भक्तन के परम पियारे । तुम सब सुहृद कृतज्ञ पुकारे ॥ ९ ॥
सुमिरहि जे पद कमल तुम्हारे । तासु मनोरथ पूरहु सारे ॥ १० ॥

दोहा- **जो दरसन दुरलभ प्रभो, सुरयोगिन निज अक्ष ।**
आज वही आये यहाँ, मम सनमुख प्रत्यक्ष ॥३८१॥

चौ- है सौभाग्य य नाथ हमारा । अब तिय सुत गृह धन परिवारा ॥ १ ॥
काटउ रशना मोह हमारी । मेटो माया जाल तुम्हारी ॥ २ ॥
इति अर्चित संस्तुत भगवाना । बोले हर कर मोह महाना ॥ ३ ॥
तुम गुरु अरु पितृव्य हमारे । हम तो बालक अजी तुम्हारे ॥ ४ ॥
रक्षा पालन कृपा अपारी । हम चाहत आशीष तुम्हारी ॥ ५ ॥
तुम सम साधुन की जो सेवा । करहीं वह पावहिं फल मेवा ॥ ६ ॥
तुम सम संत सुरन से बढ़ कर । होवत सन्त सबन्हि के हित कर ॥ ७ ॥
रहहीं सुर स्वारथ में लीना । सन्त सदा स्वारथ से हीना ॥ ८ ॥
तारहिं तीर्थ देव बहुकाला । साधुन के दर्शन तत्काला ॥ ९ ॥
तुम मम सदा हितैषी ताता । सब सुहृदन बीचे वर जाता ॥ १० ॥

दोहा- **जाउ गजाह्वय अब तुम, पंच पांडवन पास ।**
कैसी स्थिति उनकी वहाँ, रहन सहन परकास ॥ ३८२॥

चौ- भये मृतक पाँडू नृप जब से । पावत दुख उनके सुत तबसे ॥ १ ॥
अब हम सुनी अरे यह बाता । नृप धृतराष्ट्र पाँडु बड़भ्राता ॥ २ ॥
पाँडू मरण बाद निज गेहा । आनेउ उन पुत्रन करि स्नेहा ॥ ३ ॥
रहत आजकल उन गृह सारे । मृतक पिता के पुत्र विचारे ॥ ४ ॥
किन्तु अम्बिका नृप सुत ताता । नयन हीन दुष्सुत वश जाता ॥ ५ ॥
निज पुत्रन सम नहिं व्यवहारा । करते उनसे किसी प्रकारा ॥ ६ ॥

अब तुम तात वहाँ पर जाऊ। उनकी स्थिति शुभ अशुभ बताऊ ॥ ७ ॥
पाछे मैं वहि करूँ उपाया। होहिं सुखी सब विधि उन काया ॥ ८ ॥
यों देकर उन प्रति आदेशा। उद्धव राम समेत रमेशा ॥ ९ ॥
रथ चढ़कर निज भवन सिधाये। अब नृप प्रति शुक वचन सुनाये ॥ १०॥

दोहा- **हे नृप अब अक्रूर वे, हरि आज्ञा अनुसार।**
गये हस्तिनापुर विषै, पौरवेन्द्र दरबार ॥३८३॥

चौ- देखे वहाँ नृपति धृतराष्टर। भीष्म प्रथा द्रोणी कृप गुरुवर ॥ १ ॥
कर्ण व सोमदत्त दुर्योधन। गौतम भारद्वाज दुशासन ॥ २ ॥
निज सुत सह बाह्लीक लखाया। एक तरफ पाँडव अलगाया ॥ ३ ॥
भेटे यथा योग्य अक्रूरा। पूछी कुशल मुदित भरपूरा ॥ ४ ॥
ज्ञापन हित पुनि नृप अभिलासा। वहँ अक्रूर रहे कुछ मासा ॥ ५ ॥
तेज ओज बल वीर्य अपारा। प्रजानुराग व सद्गुण सारा ॥ ६ ॥
शस्त्र चातुरी अति निपुणाई। निज पुत्रन की प्रथा सुनाई ॥ ७ ॥
जे जे दुख दुर्योधन दीन्हे। वे सब कुन्ती वरणन कीन्हे ॥ ८ ॥
भीमसेन हित गरल पिलावा। समाचार सब प्रथा बतावा ॥ ९ ॥
देख समीप प्रथा निज भ्राता। जन्म भूमि स्मृति नूतन जाता ॥ १० ॥

दोहा- **बोली प्रेमाकुल प्रथा, नयनन अश्रु बहाय।**
माता पिता भ्राता हमें, सुमिरण करत व नाँय ॥ ३८४॥

चौ- मम सखियाँ कुल तिय सुतभ्राता। सुमिरण करत करत ना ताता ॥ १ ॥
वह शरण्य प्रभु भक्तदयालू। राम सहित श्री कृष्ण कृपालू ॥ २ ॥
मोरे सुत जो सदा दुखारी। सुमिरण करत न करत मुरारी ॥ ३ ॥
वृकन बीच मैं मृगी समाना। पा शत्रुन बीचे दुख नाना ॥ ४ ॥
करूँ वास पुत्रन सह भाई। कब काटहिं इन दुःख यदुराई ॥ ५ ॥
कृष्ण कृष्ण हे प्रभु विश्वात्मा। गोविन्द विश्व भावन परमात्मा ॥ ६ ॥
पुत्रन सहित दुखी मैं भारी। मैं शरणागत नाथ तुम्हारी ॥ ७ ॥
पिता हीन बालक यह मोरे। पावहिं कब आश्वासन तोरे ॥ ८ ॥
यह संसार मृत्युमय सारा। चरण मोक्ष पद कृष्ण तुम्हारा ॥ ९ ॥
मानव प्रति भयप्रद संसारा। मिलहि न तव पद बिना सहारा ॥ १० ॥

दोहा- **कृष्ण शुद्ध परमात्मा, योगेश्वर भगवान।**
शरण तुम्हारी मैं गही, वन्दों रमा निधान ॥३८५॥

चौ- बोले श्री शुकदेव कृपाला । यों तव प्रपितामही नृपाला ॥ १ ॥
कर सुमिरन वन्धुन जगदीश्वर । रोवन लागी अश्रु बहाकर ॥ २ ॥
सम दुख सुख अक्रूर विदुर वर । दीन्ही अति धीरज सुनु नृपवर ॥ ३ ॥
निज पुत्रन उत्पत्ति कारण । कीन्हा कुन्ति प्रति सब बरणन ॥ ४ ॥
अरी कुन्ती यह पुत्र तुम्हारे । पालहिं धर्म अर्धम निवारे ॥ ५ ॥
यों कह अति संतोष, बँधावा । अब अक्रूर नृपति वहँ आवा ॥ ६ ॥
कौरव सभा बीच सुनुराया । राम कृष्ण संदेश सुनाया ॥ ७ ॥
बोले वहँ अक्रूर सुजानी । सुनो नृपति मेरी तुम बानी ॥ ८ ॥
पाँडू मरण बाद हे राजन । बैठे सम्प्रति तुम नृप आसन ॥ ९ ॥
करो प्रजा पालन परिवारा । धर्म व न्याय नीति अनुसारा ॥ १० ॥

दोहा- **निज पुत्रन सम स्वजन प्रति, करो नीक व्यवहार ।**
बरना निन्दित होय के ,मिले अन्त यम द्वारा ॥३८६॥

चौ- पांडुन प्रति निज पुत्र समाना । भेद भाव निज मन ना लाना ॥ १ ॥
वरना मिलहिं नरक का द्वारा । चौपट होअहिं जीवन सारा ॥ २ ॥
इस संसार बीच सुनु राया । करे यदि कोड़ कोटि उपाया ॥ ३ ॥
तो भी राख सके नहि काया । यह तन सब विधि नश्वर गाया ॥ ४ ॥
आवत जन्तू जगत अकेला । जावत संग न मरती वेला ॥ ५ ॥
भोगत पाप व पुण्य अकेला । जावत संग यहि मरती वेला ॥ ६ ॥
पाप मूल धन अर्जित करहीं । सुत परिवार एक दिन हरहीं ॥ ७ ॥
समझत जिन्हें भ्रात सुत दारा । पालत जेहि अधर्मन द्वारा ॥ ८ ॥
एक दिवस त्यागहिं वह उसको । तब व्यापहि अति दुख उस नरको ॥ ९ ॥
करता जिन प्रति मनुज सनेहा । जावत पाप लाद यम गेहा ॥ १० ॥

दोहा- **चार दिवस की चाँदनी, यह जादू का खेल ।**
सुपने का खिलवाड़ जग, शैखचिल्ली की सैल ॥ ३८७॥

चौ- निज प्रयत्न से अब चितराया । रोकन का तुम करो उपाया ॥ १ ॥
समता बीच सदा स्थित होऊ । करउ न पक्षपात तुम कोऊ ॥ २ ॥
इस जग से होकर उपरामा । शान्त चित्त राखउ निशियामा ॥ ३ ॥
वदत वचन अब नृप धृतराष्टर । मोसे वचन कहे तुम हितकर ॥ ४ ॥
हे अक्रूर तुम्हारी बानी । यद्यपि अमृत सम हम जानी ॥ ५ ॥
किन्तु यथा मृत अमृत पाकर । होवत तृप्त नहीं सुनु यदुवर ॥ ६ ॥

त्यों मैं भी सुनकर तव बाता । मम मन तृप्त नहीं यह जाता ॥ ७ ॥
तो भी सूनृत सौम्य तुम्हारी । मम चञ्चल चित लगहि न प्यारी ॥ ८ ॥
इन पुत्रन की ममता कारण । भयो हृदय मम विषम व दारूण ॥ ६ ॥
तडित लता इव मम हिय अन्दर । यह शिक्षा ठहरत नहिं हितकर ॥ १० ॥

दोहा- **जो होना सो होयगा, हे अक्रूर महान ।**
श्रवण कियो मैं इस तरह ,यदुकुल में भगवान ॥ ३८८॥

चौ- इस भूमी का हरने का भारा । आये ले करके अवतारा ॥ १ ॥
ऐसो कौन पुरूष बलवाना । उलटहि जो हरि रचित विधाना ॥ २ ॥
मार्ग अचिन्त्य अरे उन माया । आज दिवस कोइ पता न पाया ॥ ३ ॥
उन प्रभु की इच्छा जो होई । उसको रोक सकै ना कोई ॥ ४ ॥
जो माया से जगत रचावे । पुनि प्रवेश उसमें कर जावे ॥ ५ ॥
करत बाद फल कर्म विभाजन । वन्दौं मैं उस पुरुष पुरातन ॥ ६ ॥
बोले नृप से मुनी उदारा । जाना यों धृतराष्ट्र विचारा ॥ ७ ॥
निज मित्रन से आज्ञा लेकर । कीन्ह गमन अक्रूर मधूपुर ॥ ८ ॥
रामकृष्ण के पास सिधाये । कौरव कुल के हाल सुनाये ॥ ६ ॥
हाल पांडवन का सब गाया । नृप धृतराष्ट्र विचार बताया ॥ १० ॥

दोहा- **दशम स्कंध पूर्वार्ध यह, बरणा बजरंग लाल ।** ३८६
सुनै प्रेम से जो इसे, कटै जगत जंजाल ॥३६०॥

छन्द- **करहिं जग जंजाल सारे, सुनत गाथा कृष्ण की ।**
परम पावन मुक्ति प्रद, अरु भक्ति प्रद यह विष्णु की ।
चरित जो शुकदेव मुनि ने, नृपति प्रति बरणन कियो
जगदीश की पाकर कृपा, बजरंग ने वह लिख दियो ॥

दोहा- **सुखद भक्ति प्रद मोक्ष, प्रद धर्मद दुरित निवारि ।** ३६०
गाथा यह श्री कृष्ण की, नासत पाप अपारि ॥३६१॥

इति श्री कृष्ण चरितामृते कलिमल विध्वंशने बजरंगकृत श्रीमद्भागवतमहापुराणे
पारमहंस्यां संहितायां समाप्तोऽयं दशमस्कंधःपूर्वार्धः

हरि ॐ तत्सत्

***

॥ श्री गणेशाय नमः ॥
॥श्री राधा वल्लभो विजयते ॥
श्री मद्भागवत प्रारम्भः
दशम स्कंध उत्तरार्धः

दोहा- **विघ्न हरण मंगल करण, रणस्तंभोर गणेश ।**
वन्दहिं जिनके पद कमल, ब्रह्मा विष्णु सुरेश ॥ १ ॥क
कंस महीषि युग नृप, अस्ति प्राप्ति जिन नाम ।
पति मृत्यु ते दुखित हो, गइ पिता के धाम ॥ १ ॥ ख

चौ- जरासन्ध प्रति जाकर सारा । कारण निज वैधव्य उचारा ॥ १ ॥
जरासुन्ध सुन अप्रिय वानी । अति क्रुद्धित व्यापी मन ग्लानी ॥ २ ॥
यादव हीन करूँ महि सारी । यह विचार कर वह वलधारी ॥ ३ ॥
राम नयन अक्षौहिणि लेकर । चढ आयो मथुरापुर ऊपर ॥ ४ ॥
देख कृष्ण उस सैन्य अपारा । इत दुखित देखा पुर सारा ॥ ५ ॥
मही भार हरन के कारण । कीन्ही मनुज देह जों धारण ॥ ६ ॥
जाना निज अवतार प्रयोजन । कीन्हा तदा कृष्ण यों चिन्तन ॥ ७ ॥
आनी सेना मागध द्वारा । मार इसे टारूँ महि भारा ॥ ८ ॥
मगध राजवध अभी न नीका । वरना काम रहहिं सव फीका ॥ ९ ॥
क्योंकि मागध बारम्वारा । करहीं वल उद्यम भरपूरा ॥ १० ॥

दोहा- **रक्षण साधुन सन्तजन, यह मेरो अवतार ।**
दुष्टन वध के कारणे, हरण करण महि भार ॥ २ ॥

चौ- भये अन्य जे मम अवतारा । रक्षा धरम हेत वह सारा ॥ १ ॥
जव गोविन्द कीन्ह इमि ध्याना । नभ ते स्यन्दन सूर्य समाना ॥ २ ॥
ध्वज कवचादि युक्त युग आये । दिव्य अस्त्र भी कृष्ण लखाये ॥ ३ ॥
युग रथ लख हरि गिरा उचारी ॥ देखो राम यदुन दुख भारी ॥ ४ ॥
आये ये रथ सुन्दर ताता । जो शस्त्रन ते सज्जित जाता ॥ ५ ॥
अव हम इन स्यन्दन पर चढ़कर । यदुकुल दुःख हरें चमु हनकर ॥ ६ ॥
कर दुष्टन वध संत उद्धारा । यही हेतु यह जन्म हमारा ॥ ७ ॥
ऊपर तीन व वीस अनीका । यहि वध हरें भार अवनीका ॥ ८ ॥
कर मंत्रण इति दोउ परस्पर । कवच धार शस्त्रन से सजकर ॥ ९ ॥
चढ़कर राम कृष्ण रथ ऊपर । निकसे मधुपुर के अव वाहर ॥ १० ।

दोहा- पाँचजन्य निज शंख अब, दीन्हो कृष्ण बजाय ।
सुनकर रव जिसका महा, शत्रुन हिय दहलाय ॥ ३ ॥

चौ- जरासंघ अब बोलेउ बानी । सुन रे कृष्ण अधम अभिमानी ॥ १ ॥
तू बालक तव संग हमारा । उचित युद्ध ना किसी प्रकारा ॥ २ ॥
कीन्हा तेने पाप अपारा । जो निज कर मातुल संहारा ॥ ३ ॥
अब तू मम सन्मुख मत आऊ । रण तज कर निज गेह सिधाऊ ॥ ४ ॥
अरे राम श्रद्धा हो तेरी । करो युद्ध मत करो अबेरी ॥ ५ ॥
मम द्वारा तुम होय पराजित । इन शस्त्रन ते तव तनु वेधित ॥ ६ ॥
समर भूमि बीचे गिर जावे । पाछे तू यम धाम सिधावे ॥ ७ ॥
यदि बल नाम सारथक तेरो । करो युद्ध निज मुख मत फेरो ॥ ८ ॥

दोहा- यो मागध के सुन वचन, बोले अब भगवान ।
आत्म प्रशंसा ना करे, हे मागध बलवाना ॥ ४ ॥

चौ- वदत न वीर पुरुष इति बाता । बल पौरुष वह समर दिखाता ॥ १ ॥
तोरे वचन हमें ना भावा । आतुर सम तुम बात सुनावा ॥ २ ॥
कृष्ण कथन सुन मगध नृपाला । ले निज सेन समूह विशाला ॥ ३ ॥
जिमि रवि वात घनावलि ढकहीं । धूम्र अनल आच्छादित करहीं ॥ ४ ॥
त्यों ध्वज अश्व सूत चमुस्यन्दन । घेरे चहूँ ओर हे राजन ॥ ५ ॥
चढि निज हर्म्य व महल अटारी । देखत युद्ध मधूपुर नारी ॥ ६ ॥
कृष्ण राम रथ उन ना देखा । भइ चिन्तित मन दुखी विशेषा ॥ ७ ॥
शत्रु सैन्य शर पीडित भारी । देखी इत निज चमु गिरिधारी ॥ ८ ॥
शार्ङ्ग धनुष कर अब टंकारा । त्यागे बाण कराल अपारा ॥ ९ ॥

दोहा- निज तुणीर ते शर गहि, त्यागे जब प्रभु बाण ।
परत मही रथ अश्व गज, त्याग सुभट निज प्राण ॥ ५॥

चौ- गिरे भूमि गज कुंभ विदारी । छिन्न ग्रीव हय सुभट अपारी ॥ १ ॥
हत रथ ध्वजा सूत सह नाना । भइ बेकाम पदाति महाना ॥ २ ॥
छिन्न ग्रीव भुज उरु चमुनाथा । गिरे भूमि ऊपर इक साथा ॥ ३ ॥
कहिं कहिं मानव कट कट गिरहीं । कहिं हय गज इत उत छटपटहीं ॥ ४ ॥
शोणित सरिता बीचे राई । अहि सम बहती भुजा लखाई ॥ ५ ॥
कूर्म सीस तट हस्ति समाना । अश्व नक्र उरु मीन महाना ॥ ६ ॥
धनुष तरंग नृकेश नृपाला । आयुध गुल्म चक्र जनु डाला ॥ ७ ॥

उन मणि माला बालु समाना । देख दृश्य वीरन सुख माना ॥ ९ ॥
भीरू भयावह सरित अपारी । शोणित नीर भरा जिन भारी ॥ १० ॥

दोहा- **तेजस्वी बलराम ने, ले निज मूसल हाथ ।**
मतवाले शत्रून, मार दियो इक साथ ॥ ६ ॥

चौ- मागध सेना सिन्धु समाना । दुर्गम भयप्रद सज्जित नाना॥ १ ॥
किन्तु अल्पकाल में सारी । राम कृष्ण द्वारा संहारी ॥ २ ॥
यह तो क्रीड़ा उनकी राया । बल पौरुष कुछ ना दिखलाया ॥ ३ ॥
वे प्रभु निज माया के द्वारा । करते जल पालन संहारा ॥ ४ ॥
उन प्रति बड़ी बात यह नाँही । जिन क्षण भर अरि सेन नसाही ॥ ५ ॥
विरथ जरासुत अतिबल धामा । पकड़ा जाय तुरत बलरामा ॥ ६ ॥
वरुण पाश ते बाँधन लागे । किये निवारण हरि आ आगे ॥ ७ ॥
शूरवीर जे ते बलधारी । करते आदर जिनका भारी ॥ ८ ॥
इस कारण लज्जा तेहि आई । त्यागा कृष्ण दीन की नॉई ॥ ९ ॥
कीन्ह विचार तपस्या हेतू । इस कारण वह मागधकेतू ॥ १० ॥

दोहा- **मित्र नरेशन ने तदा, आय जरासुत पास ।**
समुझाया धीरज धरो, होउ न नृपति उदास ॥ ७ ॥

चौ- अल्प यदुन ते नृपति तुम्हारी । भई पराभव यह जो भारी ॥ १ ॥
भई दैव वश यह सुनु राया । होउ न यहि हित लज्जित काया ॥ २ ॥
नीति वचन ते यों समुझाया । तब दुर्मन नृप निज घर आया ॥ ३ ॥
इत अक्षत चमु हरि के ऊपर । बरसाये सुर सुमन मनोहर ॥ ४ ॥
पाछे राम कृष्ण पुर आये । नर नारिन मिल खुशी मनाये ॥ ५ ॥
स्तूय मान मागध अरु सूतन । आये निजपुर बीचे राजन ॥ ६ ॥
घोष दुंदुमि शंख अपारा । वीणा वेणु मृदंग नगारा ॥ ७ ॥
मंगल गान सुनत पुर नारी । पहुँचे पुरी राम गिरधारी ॥ ८ ॥
ध्वजा पताकन नगर सजावा । सिक्त मार्ग तोरण बँधवावा ॥ ९ ॥
ब्रह्म घोष नादित दधि अक्षत । नारी अङ्कुर कुसुम बिखेरत ॥ १० ॥

दोहा- **ऐसे पुर बीचे गये, राम कृष्ण यदुराय ।**
प्राप्त द्रव्य रण में सभी, दियो नृपति प्रति जाय ॥ ८ ॥

चौ- जरासंघ यों मुनि महि बारा । आयो रणहित मधुपुर द्वारा ॥ १ ॥
यदुअन द्वारा बारम्बारा । नासी मागध सेन अपारा ॥ २ ॥

बाद जरासँघ निजपुर आवा । पुनि अष्टादश युद्ध रचावा ॥ ३ ॥
तासु प्रथम नारद से प्रेषित । सन्मुख कालयवन वहँ दीखत ॥ ४ ॥
तीन कोटि म्लेच्छन को लेकर । आवा अरे नृपति वह मधुपुर ॥ ५ ॥
काल यवन सम वीर अपारा । देखा कोइ न इस संसारा ॥ ६ ॥
कालयवन जब मधुपुर आया । किय विचार इमि बल यदुराया ॥ ७ ॥
यदुअन पर अब संकट भारी । आवा दोउ तरफ भयकारी ॥ ८ ॥
एक तरफ म्लेच्छन के द्वारा । रूँधा यह मथुरापुर सारा ॥ ९ ॥
दूजी तरफ जरासुत राई । आवहिं कल तक सेन सजाई ॥ १० ॥

दोहा- **यदि हम इससे भिड़ गये, उत आवहिं मगधेश ।**
तो सब यदुअन को, महा व्यापहिं कष्ट विशेष ॥ ९ ॥

चौ- यदुवंशिन का वह वध करही । बाँध इन्हें निजपुर ले जहहीं ॥ १ ॥
अब नर दुर्गम दुर्ग विशाला । रचकर यदुअन को इस काला ॥ २ ॥
कर स्थापित उस पुर में आजू । करूँ बाद वध म्लेच्छ समाजू ॥ ३ ॥
यों विचार कर वे भगवाना । द्वादश योजन दुर्ग महाना ॥ ४ ॥
सागर बीच आचरज कारी । रचा एक पुर वह मनहारी ॥ ५ ॥
दीखत जहाँ त्वाष्ट्र की सारी । शिल्प निपुणता अपरम्पारी ॥ ६ ॥
राजमार्ग उपमार्ग अपारा । कनक भवन अंगन मनहारा ॥ ७ ॥
उपवन सुरद्रुम लता सुता सुहाना । हेम शृङ्ग सम उछ्रित नाना ॥ ८ ॥
रजत व पित्तल द्वारा निर्मित । अश्वादिक साला शुभ दर्शित ॥ ९ ॥
कंचन कलस जडित मणि सोहा । मरकत मयस्थल मानस मोहा ॥ १० ॥

दोहा- **वास्तुदेव मंदिर नगर, सुन्दर महा दिखात ।**
सभी वर्ण के मनुज जहँ ,रहे सहित कुशलात ॥ १० ॥ क
यदुवंशिन के मध्य में, उग्रसेन शुभ धाम।
करत वास वसुदेव सँग ,कृष्ण सहित बलराम ॥१०॥ख

चौ- सभा सुधर्मा जहँ सुर राई । पारिजात तरु सह भिजवाई ॥ १ ॥
भेजे वरुण श्वेत हय नाना । श्यामल एक एक जिन काना ॥ २ ॥
भेजी जँह वसु निधि धनराई । अन्य लोकपति निज विभुताई ॥ ३ ॥
जो अधिकार प्रथम प्रभु दीन्हा । वापिस हरि पद स्मर्पित कीन्हा ॥ ४ ॥
आये जब हरि ले अवतारा । कीन्हा भेट उसी दिन सारा ॥ ५ ॥
अब प्रभु ते निज योग प्रभावा । स्वजन सभी उस पुरी पठावा ॥ ६ ॥

शेष प्रजाजन रक्षा कारण । मधुपुर बीच तजे बल भगवन ॥ ७ ॥
ले सन्मति उनसे भगवाना । कंजमाल गल सोभित नाना ॥ ८ ॥
अस्त्र शस्त्र सब वहीं तजाये । स्वयं नगर बाहर पुनि आये ॥ ९ ॥
श्री शुक नृप प्रति वचन सुनाये । जब पुर तजि हरि बाहर आये ॥ १० ॥

दोहा- **पुर बाहर निकसत तदा, दीखे चन्द्र समान ।**
तनु घनश्याम व पीत पट, कौस्तुभ गल भगवान ॥११॥

चौ- वक्षस्थल श्री वत्स सुसोहा । पृथु श्रुति भुज मुख मुनि मन मोहा ॥ १ ॥
कंज समान नयन रतनारे । सोभित दोउ कपोलन भारे ॥ २ ॥
मकराकृत कुन्डल श्रुति सोहे । मन्द सुहास सकल मन मोहे ॥ ३ ॥
जे जे लक्षण मुनि बतलाये । कालयवन उन बीच लखाये ॥ ४ ॥
इन सब लक्षण ते सुनु राई । पहिचाने निज मन यदुराई ॥ ५ ॥
यह तो अरे निरायुध पैदल । चला आव यह तो इत केवल ॥ ६ ॥
होय निरायुध मैं भी केवल । करूँ युद्ध इन संग भुजाबल ॥ ७ ॥
यों विचार कर यवन नृपाला । धायो पकरन कृष्ण कृपाला ॥ ८ ॥
तदा कृष्ण निज आनन फेरी । भाजि चले कीन्ही ना देरी ॥ ९ ॥

दोहा- **हस्त प्राप्त इव निजहिं को, दिखलावत अति दूर ।**
पैठे इक गिरि कन्दरा, हे नृप अब यदुशूर ॥ १२ ॥

चौ- बोला तदा यवन इमि बानी । ले यदुवंश जन्म अभिमानी ॥ १ ॥
तोर पलायन उचित न माना । क्यों मम सनमुख रण ना ठाना ॥ २ ॥
यों अपमानित भी हरि आसू । पहुँचे कन्दर करत प्रकासू ॥ ३ ॥
वह भी उन अनु झट गिरिकन्दर । कीन्ह प्रवेश तुरत नृप अन्दर ॥ ४ ॥
शयन करत इक पुरुष विशेषा । कालयवन जाकर वहँ देखा ॥ ५ ॥
अरे मुझे लाकर अति दूरी । साधू मूढसम नयन प्रपूरी ॥ ६ ॥
कीन्हो शयन कृष्ण गिरि गह्वर । कर विचार यवन मन अन्दर ॥ ७ ॥
कृष्ण समझ किय लात प्रहारा । उठा सुप्त तब काल अपारा ॥ ८ ॥
उन्मीलन कर पुनि निज नैना । देखा बगल यवन नरऐना ॥ ९ ॥
तब हो निज मन क्रुधित अपारा । अंगज अनल यवन उन जारा ॥ १० ॥

दोहा- **बोले नृप ब्रह्मन् सुनौ, वह मानव उस ठौर ।**
शयन करत किस कारने, कहो मुनी शिरमौर ॥ १३ ॥

चौ- जासु तेज ते यवन नृपाला । भस्मीभूत भयो तत्काला ॥ १ ॥
नाम वंश उसका तुम गाऊ । जनक नाम भी मुझे बताऊ ॥ २ ॥
बोले श्री शुक कौरव त्राता । कुल इक्ष्वाकुज नृप विख्याता ॥ ३ ॥
मान्धाता का पुत्र महाना । नृप मुचुकन्द नाम जग जाना ॥ ४ ॥
देव असुर बिच सुनु नरपाला । भयो युद्ध इक बार विशाला ॥ ५ ॥
तब सब सुर नृप पास सिधाये । निज रक्षा हित वचन सुनाये ॥ ६ ॥
सुन यों नृप निज चमु सजवाई । पुनि असुरन सँग कीन्ह लड़ाई ॥ ७ ॥
जीते नृपति असुर सब भागे । कुछ दिन बाद सुनौ नृप आगे ॥ ८ ॥
जब चमुपति पद स्कंद गहाये । तब नृप प्रति सुर वचन सुनाये ॥ ९ ॥
हे राजन सुनु बात हमारी । तुमने रक्षा करी हमारी ॥ १० ॥

दोहा- **हम सबकी रक्षा करत, बीता काल अपारि ।**
करो नृपति विश्राम अब, ये ही विनय हमारि ॥ १४ ॥

चौ- तज नर लोक अकंटक शासन । कर परित्याग भोग निज जीवन ॥ १ ॥
हे नृप रक्षा हेतु हमारी । त्यागे तुम धन सुत परिवारी ॥ २ ॥
किन्तु आपके अब सुत नारी । मन्त्रि अमात्य बन्धु परिवारी ॥ ३ ॥
रहे शेष ना तव कालीना । हो गय वे सब काल अधीना ॥ ४ ॥
अरे काल यह अति बलवन्ता । परम समर्थ रूप भगवन्ता ॥ ५ ॥
निज वश पशुअन को जिमि ग्वाला । राखत त्यों सब को वश काला ॥ ६ ॥
हे राजन तव हो कल्याना । माँगो जो इच्छा वरदाना ॥ ७ ॥
जब देवन यों वचन सुनाये । कर प्रणाम नृप मन हुलसाये ॥ ८ ॥
श्रम कर्षित संरक्षण द्वारा । माँगी केवल नींद अपारा ॥ १० ॥

दोहा- **अरे सुरो मम नींद को, करे भंग जो कोय ।**
हो अहिं भस्मीभूत वह, यही वचन दो मोय ॥ १५ ॥

चौ- यों नृप कथन श्रवण कर काना । बोले नृपप्रति देव प्रधाना ॥ १ ॥
सोवत तुम्हें जगावत कोई । होअहिं भस्म सुनौ नृप सोई ॥ २ ॥
जब यों सब सुर वचन सुनाये । कर अभिनन्दन नृपति सिधाये ॥ ३ ॥
उस गिरि कन्दर अन्दर राया । कीन्हो शयन त्याग गृह माया ॥ ४ ॥
यों जब भस्म यवन वह भयऊ । तब नृप के सन्मुख हरि गयऊ ॥ ५ ॥
तनु घनश्याम पीत पट सुन्दर । कौस्तुभमणि वक्षस्थल ऊपर ॥ ६ ॥
रोप्यमान श्रुति भुजगल माला । मधुर हसन मुख नयन विशाला ॥ ७ ॥

मानवलोक बीच अति सुन्दर । देख सिंहसम विक्रमि यदुवर ॥ ८ ॥
तासु तेज ते शङ्कित होकर । पूछा अब मुचुकन्द नृपति वर ॥ ९ ॥
विचरउ आप यहाँ केहि कारन । कोमल पद कंटक युत कानन ॥ १० ॥

दोहा- **करो कथन तुम कौन हो, तेजवन्त विच भानु ।**
सोम इन्द्र वा लोक पति,वरुण व धनद कृशानु ॥ १६ ॥

चौ- विधि वा शिव बीचे हरि गाये । निज आभा दरि तिमिर नसाये ॥ १ ॥
अब नर वर सब कपट तजाऊ । गौत्र व जन्म कर्म निज गाऊ ॥ २ ॥
मैं इक्ष्वाकुवंश विच जाता । यौवनाश्व पुत्र सुनु ताता ॥ ३ ॥
मम मुचुकन्द नाम इति गाया । देव वचन सुन यहँ पर आया ॥ ४ ॥
दीर्घ जागरण ते प्रभु मेरी । भई इन्द्रियाँ शिथिल घनेरी ॥ ५ ॥
यहि हित मैं इस निर्जन स्थाना । कीन्हो शयन यहाँ भगवाना ॥ ६ ॥
सम्प्रति कोइ मनुज यहँ आया । शयन करत मोंहि आन जगाया ॥ ७ ॥
वह भी निज पापन अनुसारी । भस्मीभूत भयो दरि द्वारी ॥ ८ ॥
बाद आपके दरशन पावा । किन्तु तुम्हारे तेज प्रभावा ॥ ९ ॥
दर्शन हित मैं किसी प्रकारा । नहिं समर्थ इन नयनन द्वारा ॥ १० ॥

दोहा- **बोले यों सुन नृप वचन, तब हँस कर भगवान ।**
जन्म कर्म मम सहस है, सुनु राजन गुणवान ॥ १७ ॥

चौ- इस कारन गणना हित राया । कोइ समर्थ न हमें दिखाया ॥ १ ॥
इस असंख्यता के ही कारन । नहिं समर्थ मैं भी सुनु राजन ॥ २ ॥
महि रजकण अरु अम्बर तारा । गिन सकता नर किसी प्रकारा ॥ ३ ॥
मोरे जन्म कर्म अभिधाना । गणना हेत समर्थ न माना ॥ ४ ॥
मोरे जन्म कर्म का राया । ऋषि मुनि अन्त कबहुँ ना पाया ॥ ५ ॥
तो भी नाम व धाम हमारा । श्रवण करो तुम मम मुख द्वारा ॥ ६ ॥
भूमि भार हरण हित धाता । कीन्ही विनय प्रथम सुरत्राता ॥ ७ ॥
तब मैं यदुकुल बीचे राया । आनक दुंदुभि गेह सिधाया ॥ ८ ॥
यहि हित वासुदेव मोंहि सारे । ऋषि मुनि सब इस नाम पुकारे ॥ ९ ॥
कालनेमि अरु कंस प्रलम्बा । कीन्हे वध नहीं कीन्ह विलम्बा ॥ १० ॥
यह जो यवन यहाँ पर आवा । तव दृष्टि ते भस्म करावा ॥ ११ ॥

दोहा- **प्रथम प्रार्थना बहुत सी, करी नृपति तुम मोर ।**
यहि हित अनुग्रह करन मैं ,आयउ इस दरि घोर ॥ १८॥

चौ- हो तव भद्र सुनौ नर राया । माँगो वर मोसे मन भाया ॥ १ ॥
करूँ कामना पूर्ण तुम्हारी । सुनौ सत्य नृप बात हमारी ॥ २ ॥
करता प्राप्त मुझे नर कोई । पाछे सोच उसे क्यों होई ॥ ३ ॥
बोले श्री शुकदेव कृपाला । यों सुन वच मुचकुन्द नृपाला ॥ ४ ॥
गर्ग वचन सुमिरन कर मन में । नारायण लक्षण लखि उनमें ॥ ५ ॥
कर प्रणाम बोले अति हर्षित । नर तव माया ते प्रभु मोहित ॥ ६ ॥
करहीं भजन न नाथ तुम्हारा । पावत कष्ट अनेक अपारा ॥ ७ ॥
दुर्लभ नर तनु पाकर कोई । सुमिरहिं तव पद नहिं पशु सोई ॥ ८ ॥
श्री मद अन्ध गेह आसक्ता । निष्फल समय योंहि मम बीता ॥ ९ ॥
यह नृप तनु निज समझ कृपाला । भयो लीन अभिमान विशाला ॥ १० ॥

दोहा- **रथ गज हय सेना सहित, करत अकंटक राज ।**
भूला मैं तव पद कमल, इस दुर्मद के काज ॥ १९ ॥

चौ- विषय वासना निशिदिन बाढ़ी । तृष्णा अन्त न होत प्रगाढी ॥ १ ॥
कालवली अहि आसु समाना । ग्रसहिं प्रमाद वसित भगवाना ॥ २ ॥
जे नृप अश्व हेम रथ सुन्दर । चालत प्रथम गजेन्द्रन ऊपर ॥ ३ ॥
आवत काल नसे उस काया । भस्म पुरीप कृमि वन पाया ॥ ४ ॥
जे नृप प्रथम अन्य नृप वन्दित । वहि नृप तिय गृह हो प्रति हर्पित ॥ ५ ॥
क्रीड़ा मृग सम इत उत दौड़े । विषयन ते अति नाता जोड़े ॥ ६ ॥
कर्म हेत तापस तनुधारी । तृष्णा बन्धन फँसे अनारी ॥ ७ ॥
साँचा सुख वह नर नही पावे । हरि पद त्याग विपय मन लावे ॥ ८ ॥
भ्रमण करत मानव भव माँही । तव अनुग्रह विन सुख ना पाहीं ॥ ९ ॥
निवृति काल प्रभो जब आवे । तव सन्तन प्रति प्रेम बढ़ावे ॥ १० ॥

दोहा- **सन्त समागम भक्ति प्रद, भक्ति मुक्ति प्रद जात ।**
मैंने तो सतसंग ते, प्रथम तजे सब तात ॥ २० ॥

चौ- राज कोश धन सुत परिवारी । त्यागे मैं विन श्रम गृह नारी ॥ १ ॥
मो पर यह अनुग्रह बडभारी । कीन्हो प्रभो सन्त भय हारी ॥ २ ॥
तज कर स्वामी चरण तुम्हारे । माँगू क्या वरदान मुरारे ॥ ३ ॥
तुम हो हे प्रभु मोक्ष प्रदाता । कर आराधन तोर विधाता ॥ ४ ॥
निज आत्मा को बाँधन हारा । माँगू मैं वर कवन प्रकारा ॥ ५ ॥
त्याग कामना मन की सारी । चाहूँ निर्गुण शरण तुम्हारी ॥ ६ ॥

इस संसार कर्मफल तापा । तप्यमान मे मन यहि व्यापा ॥ ७ ॥
केवल एक शरण मैं चाहूँ । नहि वर अन्य मैं नाथ गहाहूँ ॥ ८ ॥
जब मैं कीन्हें दर्श तुम्हारे । भये मनोरथ पूरण सारे ॥ ९ ॥
यों सुन नृप के वचन कृपाला । बोले हरि तुम सुनो नृपाला ॥ १० ॥

दोहा- **तेरी मति निर्मल महा, रहि न मनोरथ लीन ।**
लोभ दियो वर को तुम्हे, सिर्फ परीक्षा कीन ॥ २१ ॥

चौ- हे नृप जेते भक्त हमारे । तजे मनोरथ जग के सारे ॥ १ ॥
रहे अभक्त जे नृपति हमारे । करहीं प्राणायाम अपारे ॥ २ ॥
तो भी मन वश में ना रखहीं । सदा वासना उन अनुचलहिं ॥ ३ ॥
अब तुम निज मन रख मम अंदर । विचरण करो खुशी से भूपर ॥ ४ ॥
मिलहीं तुमको भक्ति हमारी । निश्चल अडिग जगत भयहारी ॥ ५ ॥
क्षात्रधर्म द्वारा जे प्रानी । वधे आपने हे नृप ज्ञानी ॥ ६ ॥
तप अरु मम भक्ति के द्वारा । नासहु वे सब पाप पहारा ॥ ७ ॥
अपर जन्म बीचे तुम पाछे । धारहु विप्र जन्म पुनि आछे ॥ ८ ॥
मिलहु वहाँ पर तुम मोहिं राया । पावउ बाद मोक्ष सुखदाया ॥ ९ ॥
बोले कीर सुनो कुरुराया । जब हरि ने यों वचन सुनाया ॥ १० ॥

दोहा- **इक्ष्वाकु नन्दन तदा, हरि से आज्ञा पाय ।**
कर प्रणाम सह परिक्रमा, गिरिदरि बाहर आय ॥ २२ ॥

चौ- इत उत देखा जब दरि आगे । तरु पशु नर उन सब लघु लागे ॥ १ ॥
कलियुग आवा जान नृपाला । उत्तर खंड गयो तत्काला ॥ २ ॥
कृष्ण चरण बिच निज चित लाई । गयो गंध मादन गिरिराई ॥ ३ ॥
नर नारायण का तप स्थाना । नाम बद्रिकाश्रम जगजाना ॥ ४ ॥
जाकर वहँ मुचकुन्द नृपाला । हरि तप कीन्हा परम विशाला ॥ ५ ॥
पाछे हरि मथुरापुर आये । यवन कटक उन तुरत नसाये ॥ ६ ॥
यवन द्रव्य सब ले भगवाना । लाये द्वारावती प्रधाना ॥ ७ ॥
जब मथुरा ते जावन लागे । जरासंध नृप आयउ आगे ॥ ८ ॥
राम नयन अक्षौहिणि संगा । आयो मधुपुर वह रणरंगा ॥ ९ ॥
अरि सेना बल प्रबल लखाया । राम कृष्ण धन वहीं तजाया ॥ १० ॥

दोहा- **भीरू भीतवत भीत अति, पैदल ही अति दूर ।**
भाजि चले हे नृपति वे, तजि अरि सेन अदूर ॥ २३ ॥

चौ- मागध उनका देख पलायन । धावा उन अनु सह चमु स्यंदन ॥ १ ॥
भाजत भाजत गिरी प्रवर्षण । पहुँचे कृष्ण सहित संकर्षण ॥ २ ॥
जरासन्ध ने गिरि पर दोऊ। देख अलक्षित गिरि पर सोऊ ॥ ३ ॥
काष्ठादिक संग्रह करवाया । चारों ओर अनल लगवाया ॥ ४ ॥
दह्यमान जब गिरि चहुँ देखा । तब निज परिकर बाँध विशेषा ॥ ५ ॥
अब ग्यारह योजन ते ऊपर । कूदे राम कृष्ण दोऊ भूपर ॥ ६ ॥
यों रिपु द्वारा होय अलक्षित । आये निजपुर सिन्धु परिख युत ॥ ७ ॥
इत मागध भी सुनौ नरेशू । दह्यमान लखि गिरी प्रदेशू ॥ ८ ॥
सब सेना लेकर निज संगा । आयो निजपुर करत प्रसंगा ॥ ९ ॥
अब आनर्त देश पति रैवत । ब्रह्मलोक से जो विधि प्रेरित ॥ १० ॥

दोहा- **सुता रेवती बल प्रति, दीन्ही हे नरपाल ।**
वर्णन कीन्हा हम प्रथम, इस नृप का सब हाल ॥ २४ ॥

चौ- वासुदेव गोविन्द भगवाना । जीत स्वयंवर विच नृप नाना ॥ १ ॥
भीष्मक पुत्री रमा स्वरूपा । कीन्ही हरण सुनौ कुरुभूपा ॥ २ ॥
पाछे उस संग ब्याह रचाया । यों सुनकर बोले कुरु राया ॥ ३ ॥
भीष्मक सुता रूक्मिणी नामा । आनन रुचिर सकल गुणधामा ॥ ४ ॥
वासुदेव राक्षस विधि द्वारा । कियो ब्याह मुनि केन प्रकारा ॥ ५ ॥
चेदिप शाल्व आदि नृपराया । जीते यथा कृष्ण सुख दाया ॥ ६ ॥
रुक्मिणी हरण कथा मुनि सारी । वरणन करो सहित विस्तारी ॥ ७ ॥
कृष्ण कथा लोकन अघ हारी । सुनकर तृप्त न कवन अनारी ॥ ८ ॥
देश विदर्भ अधिप हे राया । भीष्मक नाम सकल जग गाया ॥ ९ ॥
नृप के पाँच पुत्र यक कन्या । प्रकटी लक्ष्मी अंश सुरम्या ॥ १० ॥

दोहा- **रुक्मी अग्रज रुक्मरथ,रुक्बाहु बलवान ।**
रुक्मकेश से अनुज जो, रुक्ममालि गुणवान ॥ २५ ॥

चौ- इनकी स्वसा रुक्मिणी नामा । लक्ष्मी सम सुन्दर गुणधामा ॥ १ ॥
भीष्मक नृपति सुता इक बारा । सुनै कृष्णन गुण रूप अपारा ॥ २ ॥
तब से ही निज मन सुकुमारी । कीन्हे वही पति स्वीकारी ॥ ३ ॥
शील गुणाश्रय बुद्धि सुलक्षण । सुन उदारता रूप विलक्षण ॥ ४ ॥
स्वयं कृष्ण चन्द्र भगवाना । निज परिणय उस संग मन ठाना ॥ ५ ॥
अन्य बन्धुयुत भीष्मक रानी । कन्यादान कृष्ण प्रति ठानी ॥ ६ ॥

नृप अग्रज रुक्मी विपरीता । कीन्ह निवारण ब्याह पुनीता ॥ ७ ॥
कृष्ण चन्द्र को शत्रु समाना । मानत वह रुक्मी बलवाना ॥ ८ ॥
कीन्ही सह शिशुपाल सगाई । कृष्ण हेतु भलि बुरी सुनाई ॥ ९ ॥
यह सब समाचार सुन काना । रुक्मिणी निज मन अति दुख माना ॥ १० ॥

दोहा- **निज विश्वासी विप्र इक, अपने पास बुलाए ।**
माँड पत्रिका तासु संग, हरि के पास पठाइ ॥ २६ ॥

चौ- पहुँचा विप्र द्वारका माँही । रोका द्वारपाल वह नाँही ॥ १ ॥
पहुँचा विप्र महल के भीतर । देखे हरि कनकासन ऊपर ॥ २ ॥
आवत देख विप्र यदुराई । त्यागा निज आसन हर्षाई ॥ ३ ॥
निज आसन पर विप्र बिठावा । कर पूजन भोजन करवावा ॥ ४ ॥
जब विश्राम विप्र कर पाये । तब हरि द्विज के सन्मुख आये ॥ ५ ॥
दाबे चरण तासु निज हाथा । बोले वचन बाद यदुनाथा ॥ ६ ॥
बोलो द्विज वर भली प्रकारा । है ना मन सन्तुष्ट तुम्हारा ॥ ७ ॥
सम्मत वृद्ध धर्म द्विजराई । सब विधि तो तब कुशल दिखाई ॥ ८ ॥
जो कुछ मिलहिं उसी में राजी । वहि द्विज सब जग के सुख साजी ॥ ९ ॥
सुर पति पद पाकर जो कोई । राखहिं मन संतोष न सोई ॥ १० ॥

दोहा- **लोकान्तर में भटकहिं, सुख पावन के काज ।**
एक जगह सुख शान्ति से ,रहहि न स्थित द्विजराज ॥२७॥

चौ- जो द्विज संग्रह परिग्रह हीना । वहि द्विज सब संताप विहीना ॥ १ ॥
संतोषी द्विज सदा सुखारी । प्राणिन हित कर्ता वहि भारी ॥ २ ॥
मैं उन विप्रन सीस नवाऊँ । निशि वासर उनके गुण गाऊँ ॥ ३ ॥
हे द्विज नृप से कुशल तुम्हारी । पुरजन की सुविधा तो भारी ॥ ४ ॥
जिस नृप देश प्रजा सुख पावे । वहि नृप मम मन अति प्रिय भावे ॥ ५ ॥
कवन देश तुम करो निवासू । आयऊ यहाँ कवन अभिलासू ॥ ६ ॥
अति दुर्गम पथ कर यह पारा । आयउ यहँ सहि कष्ट अपारा ॥ ७ ॥
गुप्त बात यदि नहिं हो कोई । तो तुम कहो सर्व द्विज सोई ॥ ८ ॥
करूँ काम मैं कवन तुम्हारा । जब यो हरि ने वचन उचारा ॥ ९ ॥
रुक्मिणि लिखित पत्रिका काढी । उस द्विज ने हरि सन्मुख बाढ़ी ॥ १० ॥

दोहा- **द्विज कर ते ले पत्रिका, बाँची हरि तत्काल ।**
बाकी द्विज ने कह दिया, कुन्डिनपुर का हाल ॥ २८ ॥

चौ- हेप्रभु रुक्मिणी वचन उचारा । तव गुण रूप श्रवण कर सारा ॥ १ ॥
मोरे मन तो तुम हीं स्वामी । बस गय सब विधि अन्तरयामी ॥ २ ॥
रूप शील कुल नाथ तुम्हारे । बल विद्या वय तुल्य हमारे ॥ ३ ॥
ऐसी को कन्या जग माँही । जो तुम पर प्रभु नहीं रिझाई ॥ ४ ॥
यहि कारण मन नाथ हमारा । पति स्वरूप तुम किय स्वीकारा ॥ ५ ॥
मम शरीर यह चरण तुम्हारे । कीन्हो अरपित कृष्ण मुरारे ॥ ६ ॥
अब तुम सदन हमारे आऊ । निज पत्नी मोहि नाथ बनाऊ ॥ ७ ॥
अहो वीर कहि भाग तुम्हारा । चेदिप करें नहीं स्वीकारा ॥ ८ ॥
वापी कूप यज्ञ व्रत दाना । मैने प्रथम किये भगवाना ॥ ९ ॥
तो हे कृष्ण यहाँ पर आऊ । मो संग तुरत ही व्याह रचाऊ ॥ १० ॥

दोहा- **सुनौ अजित तुम कल्ह ही, गुप्त रूप यहँ आउ ।**
निज सेना द्वारा तुरत, चेदिप चमू नसाऊ ॥ २९ ॥

चौ- पाछे राक्षस विधि के द्वारा । मो संग व्याह रचो भरतारा ॥ १ ॥
अन्तःपुर बीचे तव वासा । कर तोरे बन्धुन का नासा ॥ २ ॥
तो संग कैसे व्याह रचाऊँ । तो इसकी युक्ति मैं गाऊँ ॥ ३ ॥
जिस दिन होअहिं व्याह हमारा । उससे प्रथम सुनौ भरतारा ॥ ४ ॥
कुलदेवी पूजन हित जाऊँ । वहिं पर प्रभो तुम्हें मिल पाऊँ ॥ ५ ॥
जिन पद पंकज रज शिवशंकर । धारहिं अघ नाशन हित निज शिर ॥ ६ ॥
वे पद पंकज मुझे न मिलहीं । तो व्रत कृश करि तनु मम तजहीं ॥ ७ ॥
बोला विप्र सुनौ भगवाना । यह संदेश गुप्त में आना ॥ ८ ॥
अब जो होहिं विचार तुम्हारा । करो उसे निज मन स्वीकारा ॥ ९ ॥
बोले श्री शुक सुनु कुरुराया । यों जब द्विज ने वचन सुनाया ॥ १० ॥

दोहा- **बोले तब भगवान यों, सुनौ विप्र मम बात ।**
मुझको जैसे रूक्मिणी, चाहत हैं दिन रात ॥ ३० ॥

चौ- वैसे मेरो भी चित द्विजवर । लाग रहा उसमे निशि बासर ॥ १ ॥
वरणन करूँ कहाँ तक तुमको । आवत नींद निशा नहिं हमको ॥ २ ॥
रोका रूक्मी मोर विवाहू । करता मोसे वैर अथाहू ॥ ३ ॥
यह सब बात प्रथम हम जानी । किन्तु सुनो अब हे द्विज ज्ञानी ॥ ४ ॥
जे नृप क्षत्रिन वंश कंलकी । उन मद मन्थन करूँ निः शंकी ॥ ५ ॥
बोले श्री शुक अब यदुनन्दन । द्विज मुख ते सुन रुक्मिणि क्रन्दन ॥ ६ ॥

जाना रुक्मिणि परिणय काला । कल परसों तक दीन दयाला ॥ ७ ॥
तव दारुक सन वचन उचारे । लाऊ स्यन्दन तुरत हमारे ॥ ८ ॥
सुन दारुक वह रथ सजवावा । शैव्यादिक तेहि अश्व जुतावा ॥ ९ ॥
ले रथ दारुक सन्मुख आवा । तव हरि ने द्विज प्रथम चढावा ॥ १० ॥

दोहा- **पुनि रथ पर आरुढ हो, कृष्ण चन्द्र भगवान ।**
पहुँचे एकहि रात में, भीष्मकपुर दरम्यान ॥ ३१ ॥

चौ- पुत्र स्नेह वश भीष्मक राजा । चेदिप सुत प्रति व्याहन काजा ॥ १ ॥
चित्र ध्वजा पताकन द्वारा । सजवायो सुन्दर पुर सारा ॥ २ ॥
द्वारा द्वार तोरण वँधवाये । इतर फुलेल तेल छिड़काये ॥ ३ ॥
माला भूपण अम्वरधारी । इत उत फिरत पुरुप सह नारी ॥ ४ ॥
पितर देव विप्रन कर पूजन । विप्रन हित करवा कर भोजन ॥ ५ ॥
पाछे मंगल पाठ वंचावा । कन्या हित शुभ स्नान करावा ॥ ६ ॥
मंगल सूत्र युक्त गलमाला । पहिनाये शुभ वसन नृपाला ॥ ७ ॥
साम मंत्र द्वारा द्विज आसू । करते सव विधि रक्षा तासू ॥ ८ ॥
कीन्ही खेटक शान्ति पुरोहित । कीन्हो हवन अनल विच शोभित ॥ ९ ॥
कंचन रजत धेनु गुड अम्वर । विप्रन प्रति दीन्हे तिल नृपवर ॥ १० ॥

दोहा- **उत चेदिय दम घोप भी, मंत्रन विद वुलवाय ।**
पुत्र उन्नति कारने, उचित कर्म करवाय ॥ ३२ ॥

चौ- चतुरंगिनि ले सेन विशाला । आया कुंडिनपुर नरपाला ॥ १ ॥
कीन्हा भीष्मक नृप सत्कारा । होकर निज मन मुदित अपारा ॥ २ ॥
कल्पित वसन गेह रुचि खासा । दीन्हा चेदिप को जनवासा ॥ ३ ॥
पौण्ड्रक मागध शाल्व नृपाला । आय विदूरथ सह शिशुपाला ॥ ४ ॥
आये दन्तवक्र वलवाना । चेदिप पक्षी वहँ नृप नाना ॥ ५ ॥
वासुदेव यदुअन सह आकर । हरही भीष्मक सुता यहाँ पर ॥ ६ ॥
तो हम उन संग करें लडाई । यों कर निश्चय वे सव राई ॥ ७ ॥
चेदिप सुत का व्याह करावन । आये सेन सहित स्थित वाहन ॥ ८ ॥
यह नृप उद्यम सुन वलरामा । कन्या हरण कृष्ण सुखधामा ॥ ९ ॥
कुंडिनपुर वे गये अकेले । परहिं वहाँ पर वहुत झमेले ॥ १० ॥

दोहा- **यों विचार वलराम मन, चतुरंगी ले साथ ।**
पहुँचे कुंडिन पुर विषै,इधर सुनो नर नाथ ॥ ३३ ॥

चौ- जब से द्वारवती द्विज गयऊ। तबसे रुक्मिणि चिन्तित भयऊ ॥ १ ॥
देखन लागी द्विज की राहा। हो अहिं कल तक मोर विवाहा ॥ २ ॥
किन्तु कृष्ण द्विज दोउ न आये। क्या कारण कुछ भेद न पाये ॥ ३ ॥
शायद देख जुगुप्सित मेरी। आये नहि उन करी अबेरी ॥ ४ ॥
अरे आज यह भाग्य हमारा। अनुकूल नहिं किसी प्रकारा ॥ ५ ॥
गौरी पारवती गिरिजेश्वर। दीखत नहि अनुकूल य मोपर ॥ ६ ॥
हत गोविन्द चित्त नृप जाई। अश्रुकला कुल नयन पिधाई ॥ ७ ॥
कृष्णागमन लखत इमि राहा। निज मन चिन्तित भई अथाहा ॥ ८ ॥
फरकन लगे तदा भुजवामा। प्रिय सूचक फल दात प्रकामा ॥ ९ ॥
तेहि काल द्विज सन्मुख आवा। नृप पुत्री वह मुदित दिखावा ॥ १० ॥

दोहा- आकर द्विज ने सब कहा, द्वारवती का हाल।
यह भी उसने कह दिया, आये कृष्ण कृपाल ॥ ३४ ॥

चौ- द्विज मुख ते सुनकर सब हाला। कीन्हि प्रशंसा भीष्मक बाला ॥ १ ॥
जे जे वचन कहे यदु नन्दन। कीन्हे सत्य सभी द्विज वरणन ॥ २ ॥
तब द्विज को देवन हित कोई। देखी पास वस्तु ना सोई ॥ ३ ॥
कीन्हो केवल द्विज पद वन्दन। हो अति हर्षित रुक्मिणि निज मन ॥ ४ ॥
सुनकर रामकृष्ण पुर आये। भीष्मक नृप भी अति हुलसाये ॥ ५ ॥
अगवानी हित लेकर बाजा। हरि सन्मुख जा भीष्मक राजा ॥ ६ ॥
दे मधुपर्क व वसन उपायन। विधि पूर्वक कीन्ही उन पूजन ॥ ७ ॥
उन प्रबन्ध कीन्हा नृप सारा। करके यों अतिथि सत्कारा ॥ ८ ॥
यों जे नृपति वहाँ पर आये। यथा वीर्यबल आतिथि पाये ॥ ९ ॥
कृष्ण आगमन सुनकर काना। हो पुर वासी मुदित महाना ॥ १० ॥

दोहा- नेत्र अञ्जली ते कियो, आ उन हरि मुख पान।
नृपति सुता के कारणे, उत्तम वर यहि जान ॥ ३५ ॥

चौ- नृप कन्या भी इन्ही समाना। है अति रुप शील गुण वाना ॥ १ ॥
कीन्हो यदि हमने कोइ सुकृत। करें ब्याह इसके संग अच्युत ॥ २ ॥
प्रेमलीन हो यों पुरवासी। वदत परस्पर वचन प्रवासी ॥ ३ ॥
अब भव पत्नी पूजन चाली। वह नृप कन्या अति मतवाली ॥ ४ ॥
कृष्ण पदाम्बुज करती ध्याना। निज पद चली अम्बिका स्थाना ॥ ५ ॥
अन्तः पुर तजि बाहर आई। करते रक्षा भट समुदाई ॥ ६ ॥

मौन युक्त सखियन से वेष्टित । धृत आयुध चहुँ शूरन रक्षित ॥ ७ ॥
भेरी शंख मृदङ्ग नकारा । बजने लागे वहाँ अपारा ॥ ८ ॥
बाद तिया वहँ कई हजारा । लेकर वे नाना उपहारा ॥ ६ ॥
होय अलंकृत अतिद्विज नारी । वस्त्राभरण गंध युत भारी ॥ १० ॥

दोहा- **सूत वन्दिगण स्तुति करत, गायक गावत गान ।**
चले वधू को घेर कर, देवी के शुभ स्थान ॥ ३६ ॥

छन्द— **शुभ स्थान देवी के गई, हे नृप यदा भीष्मक लली ।**
कर चरण धोकर बाद में , गिरिजा के दरसन को चली ।
पुनि विप्र पत्नी जो विधिज्ञा, आनकर अति प्रेम से ।
अम्बिका के चरण में , वन्दन करायो नेम से ॥ १ ॥

दोहा- **तब कन्या कहने लगी, सुनो अम्बिके मात ।**
वन्दों तव परिवार को, गणपित सहित नितान्त ॥ ३७॥

चौ- हो अभिलाषा पूरण मेरी । आई शरण करो मति वेरी ॥ १ ॥
वासुदेव जिमि मम होई । वहि आशिष देवउ तुम मोई ॥ २ ॥
यों कह गंध व अक्षत पुष्पा । कई उपहार धूप युत दीपा ॥ ३ ॥
कीन्ही पूजन भली प्रकारा । होकर मन में मुदित अपारा ॥ ४ ॥
आई विप्र तिया वहँ जेती । कीन्ही विधि युत पूजन वेती ॥ ५ ॥
लवण अपूप इक्षु फल द्वारा । कंठ सूत्र फल पान उपहारा ॥ ६ ॥
तब द्विज पत्नी अशिष दीन्हा । नृप कन्या उन वन्दन कीन्हा ॥ ७ ॥
ले निमल्यि व मौन तजाई । निज करते निज सखिन गहाई ॥ ८ ॥
आई अब वहि मंदिर त्यागी । वीर मोहिनी सुन्दर लागी ॥ ६ ॥
कुंडल मंडित आनन तासु । निज कर केश संवारित आसू ॥ १० ॥

दोहा- **रतन माल कटि अरपित, शुचि स्मित सुन्दर दन्त ।**
विंवा फल सम अधर की, होरहि छवि अनन्त ॥ ३८ ॥

चौ- निज पद चालत हंस समाना । कृत नूपुर झनकार महाना ॥ १ ॥
जब कन्या उन शूरन देखी । तब स्मर अर्दित भये विशेषी ॥ २ ॥
कृष्ण चरण मन जिन किय अरपित । यों नृप सुता लखी सब नरपत ॥ ३ ॥
गज रथ अश्व शस्त्र बल सारे । तज अवनी पर गिरे विचारे ॥ ४ ॥
शनै शनै वह पैदल चालत । वाम हस्त शिर केश निवारत ॥ ५ ॥
इत उत लाजभरी चितवन से । मोहित करन चली उस पथ से ॥ ६ ॥
अब सन्मुख लखि राजकुमारी । उसका हस्त गहा बनवारी ॥ ७ ॥

दोहा- वे हरि स्यारन मध्य ते, केहरि भाग समान ।
कन्या को हरकर चले, आगे सुनो वयान ॥ ३६ ॥

चौ- तव वे अभिमानी नरपाला । जरासंध आदिक शिशुपाला ॥ १ ॥
सह ना सके पराभव अपना । टूटा मोह नींद का सपना ॥ २ ॥
कहने लगे परस्पर सारे । निज बल को देकर धिक्कारे ॥ ३ ॥
हम सब यहाँ महा धनुधारी । बल पौरुष युत सेन हमारी ॥ ४ ॥
इन गोपन ने सभी प्रकारा । कीन्हा यश सब नष्ट हमारा ॥ ५ ॥
सिंहन का जिमि ऐण समाना । कीन्हा आज घोर अपमाना ॥ ६ ॥
यों अति क्रुद्धित हो सब राजे । वाहन पर चढ कर धनुसाजे ॥ ७ ॥
ले निज सेना संग अपारा । धाये उन अनु विविध प्रकारा ॥ ८ ॥
निज अनु आवत जब नृप देखे । तब यादव ले धनुष विशेषे ॥ ९ ॥
रण हेतू उन सन्मुख आये । सब यादव गण सजे सजाये ॥ १० ॥

दोहा- कोई गज स्कंधन चढे, कोई हय असवार ।
कोई रथ ऊपर स्थित, की शर वृष्टि अपार ॥ ४० ॥

चौ- शर आच्छादित लखि पति सेना । भय विह्वल भए रुक्मिणि नैना ॥ १ ॥
कृष्ण चन्द्रमुख देखन लागी । तब भगवान भक्त अनुरागी ॥ २ ॥
हँसकर हे नृप वचन सुनावा । हे सुन्दरि तुम क्यों भय पावा ॥ ३ ॥
यह अरि सेना अभी नसाऊँ । पाछे तो संग व्याह रचाऊँ ॥ ४ ॥
उत गद राम आदि यदुशूरा । शत्रु पराक्रम लखकर पूरा ॥ ५ ॥
त्यागे शर ते तीर करारे । सेना सह रथ गज हय मारे ॥ ६ ॥
सह उष्णीष किरीट सकुं डर । गिरे कोटि भट भूमी ऊपर ॥ ७ ॥
गदा खड्ग शराशन सहिता । कट कट गिरे अङ्घ्रि उरु हस्ता ॥ ८ ॥
अश्व अश्वतर उष्ट्र व नागे । सेन व सेनप मरने लागे ॥ ९ ॥
हन्य मान यों निज वल पाया । भये विमुख मगधादिक राया ॥ १० ॥

दोहा- हृततिय आतुर शुष्क मुख, नष्ट कान्ति शिशुपाल ।
जा समीप उसके सभी, वोले यों नर पाल ॥ ४१ ॥

चौ- तजऊ पुरुषसिंह सब शोका । प्रिय अप्रिय स्थिर रहहिं न लोका ॥ १ ॥
नाचत कुहक रुची अनुसारी । जैसे काष्ठमयी सुनु नारी ॥ २ ॥
ईश्वर तंत्र यथा नचवाता । त्यों मानव भी सुख दुख पाता ॥ ३ ॥
मैं मधुपुर पर करी चढाई । भइ वहँ सत्रह वार लड़ाई ॥ ४ ॥

बीस तीन अक्षौहिणि मेरी । भइ पराजित यों कर वेरी ॥ ५ ॥
एक बार मैंने रण जीता । तदपि न खुशी नहीं मन चिन्ता ॥ ६ ॥
आज पराजित यदुअन द्वारा । हम सब हो गए हैं सुकुमारा ॥ ७ ॥
जब अनुकूल हो काल हमारा । जीते हम तब भली प्रकारा ॥ ८ ॥
यों चेदिप सुत सब समुझावा । तब सानुग निज पुर वह आवा ॥ ९ ॥
जरासन्ध आदिक नरपाला । हत अवशेष त्याग रणशाला ॥ १० ॥

दोहा- **निजपुर सब गवने इधर, ले अक्षौहिणि साथ ।**
रुक्मी ने जाकर उधर, घेर लिये यदुनाथ ॥ ४२ ॥

चौ- जे नृपती संगर में हारे । उनसे रुक्मी वचन उचारे ॥ १ ॥
वह रुक्मी निज दशन चबाई । क्रोध युक्त निज धनुष उठाई ॥ २ ॥
सुन लो आजु अरे प्रणु मेरो । हनूँ कृष्ण कर युद्ध घनेरो ॥ ३ ॥
यदि निज भगिनि छुड़ा ना लाऊँ । तो कुंडिन पुर बीच न आऊँ ॥ ४ ॥
अनृत वचन नही मैं भाखों । सब विश्वास अरे तुम राखो ॥ ५ ॥
यों कह अब निज सूत बुलावा । रथ पर चढ़ यों वचन सुनावा ॥ ६ ॥
चलहु शीघ्र समरांगण माँही । अरे सूत जहँ कृष्ण दिखाहीं ॥ ७ ॥
हरूँ म द वीर्य पराक्रम सारा । उस गोपालक का शर द्वारा ॥ ८ ॥
कीन्हीं हरण स्वसा जिन मेरी । यों कह चला करी ना देरी ॥ ९ ॥
यों कह चला जहाँ यदुराया । ठहर ठहर इति वचन सुनाया ॥ १० ॥

दोहा- **खेंच धनुष पुनि तीन शर, तजे कृष्ण की ओर ।**
रे कुल दूषण मन्द धी, देख इधर कर गौर ॥ ४३ ॥

चौ- जावत ग्वाले कहाँ अभागे । ठहर एक क्षण अब मम आगे ॥ १ ॥
अरे यज्ञ हवि काक समाना । हर मम वहिन जाउ किस स्थाना ॥ २ ॥
अरे मन्दमति जब लगि तेरा । काटहिं मस्तक शायक मेरा ॥ ३ ॥
उससे प्रथम तजो मम भगिनी । चाखउ फल नातर निज करनी ॥ ४ ॥
तदा कृष्ण हो विस्मित भारी । काटा तासू धनुष खरारी ॥ ५ ॥
रुक्मी पर छै बाण चलाये । हय ऊपर वसु बाण तजाये ॥ ६ ॥
दो शर मारे चालक ऊपर । काटी ध्वजा तीन ते यदुवर ॥ ७ ॥
अन्य धनुष अब रुक्मी लेकर । पाँच बाण मारे हरि ऊपर ॥ ८ ॥
रुक्मी धनुष तदपि यदुराया । निज बाणन ते काट गिराया ॥ ९ ॥
परिघ शूल शक्ति असि तोमर । त्यागे रुक्मी ने प्रभु ऊपर ॥ १० ॥

दोहा- ये भी हरि ने तुरत ही, काट दिये उस काल ।
अब रुक्मी रथ से उतर, लेकर खड्ग विशाल ॥ ४४ ॥

चौ- धावा हरि ऊपर तत्काला । मारा तब हरि बाण कराला ॥ १ ॥
तिल सम काट खड्ग महि डारी । अब रूक्मी वध हित असिधारी ॥ २ ॥
अग्रज वध उद्योग लखाई । भय विह्वल रुक्मिणि घबराई ॥ ३ ॥
पुनि निज पति के चरणन परि के । बोली करुण नयन जल भरिके ॥ ४ ॥
देव देव हे अन्तरयामी । मम अग्रज वध योग्य न स्वामी ॥ ५ ॥
कम्पित अंग युँ सुनौ नरेशू । पकरे रुक्मिणि चरण रमेशू ॥ ६ ॥
तब रुक्मी वध तजा दयाला । शिरपट ते बाँधा तत्काला ॥ ७ ॥
पाछे डाढ़ी मूँछ मुडाई । कीन्हों कुरुपित रुक्मिणि भाई ॥ ८ ॥
इत यादव गण वीर अपारी । रुक्मी सेन सभी संहारी ॥ ९ ॥
हे नृप गजपति नलिनि समाना । मर्दन किये चमूपति नाना ॥ १० ॥

दोहा- उसी समय आये वहाँ, श्री यदुवर बलराम ।
देख विरुपित रुक्मी को, कहे वचन सुन श्याम ॥ ४५ ॥

चौ- सब बन्धन इसके तुम काटो । क्षण भर एक नहिं महि डाटो ॥ १ ॥
यह तुम कर्म कियो ना नीको । वध सम कियो कुरुपित इसको ॥ २ ॥
अब रुक्मिणि के पास सिधाये । दे संतोष यूँ वचन सुनाये ॥ ३ ॥
अरी साध्वी भ्रात तुम्हारा । भयो विरुपित ना हरि द्वारा ॥ ४ ॥
सुख दुख दाता ना जग कोई । निज कर्मन फल भोगत सोई ॥ ५ ॥
वध के योग्य होहिं यदि भ्राता । तदपि न यो वध उचित न जाता ॥ ६ ॥
निर्मित कियो प्रजापित द्वारा । यह जो क्षत्रिय धर्म हमारा ॥ ७ ॥
रण विच वधहिं भ्रात को भ्राता । ये ही क्षत्रिय धर्म कहाता ॥ ८ ॥
श्री मदान्ध अभिमाना राजा । राज्य भूमि तिय अन्य न काजा ॥ ९ ॥

दोहा- निज सम्बन्धिन को वधहिं, जिनकी मति नहिं नीक ।
ऐसा अनुचित कर्म यह, नहि हमार प्रतिठीक ॥ ४६ ॥

चौ- भीष्मक सुता सुनौ मन वानी । ये तव भ्रात बन्धु अभिमानी ॥ १ ॥
राखहिं प्राणिन प्रति दुर्भावा । येही हेत दंड यह पावा ॥ २ ॥
तुमने इसे अमंगल माना। अरी रुक्मिणी मूर्ख समाना ॥ ३ ॥
बुद्धि विषमता येहु तुम्हारी । सुरमाया मोहित नर नारी ॥ ४ ॥
निज पर उदासीन इति मोहा । तुम मायाकृत जानउ सोहा ॥ ५ ॥

सब प्राणिन में आत्मा एकी । मानव अलग अलग अविवेकी ॥ ६ ॥
कल्पित देह अविद्या द्वारा । आत्महिं कृत विस्मृत यों सारा ॥ ७ ॥
हे सति अधि भूतादिक द्वारा । हो संयोग वियोग य सारा ॥ ८ ॥
तन का ही जन्मादि विकारा । आत्मा का ना किसी प्रकारा ॥ ९ ॥
यथा स्वप्न नर भोगन भोगहि । तथा अज्ञ नर इस जग आवहिं ॥ १० ॥

दोहा- **तत्व ज्ञान द्वारा अरी, अज्ञानज हर शोक ।**
होउ स्वस्थ इस कारने, सब विधि मन को रोक ॥ ४७॥

चौ- बोले कीर सुनो नृप ज्ञानी । कही राम ने जब यों बानी ॥ १ ॥
रुक्मणि ने सब खेद तजाया । सब प्रकार निज मन समझाया ॥ २ ॥
अब रुक्मी निज शत्रुन द्वारा । पाकर मुक्ति सभी प्रकारा ॥ ३ ।
सुमिरण कर यह निज अपमाना । निज प्रण पूर्ण नहीं जब माना ॥ ४ ॥
नगर भोज कट वहीं बसावा । कीन्ह वास वहिं पुर ना आवा ॥ ५ ॥
यों सब नृपति जीत भगवाना । लाये रुक्मिणी पुर दरम्याना ॥ ६ ॥
विधिवत कीन्हों वहाँ विवाहू । तब पुर घर घर बयो उछाहू ॥ ७ ॥
होय मुदित नर नार अपारा । सोभित सब मणि कुंडल द्वारा ॥ ८ ॥
आनि भेट सब प्रभु प्रति दीन्ही । हो हर्षित वह हरि लीन्ही ॥ ९ ॥
तोरण ध्वजा पताकन द्वारा । भयो नगर सोभित इति सारा ॥ १० ॥

दोहा- **द्वार द्वार पर पूर्ण, अगर व धूप व दीप ।**
सिंचित अतर फुलेल ते ,नृप पथ सुनो महीप ॥ ४८ ॥

चौ- जे जे नृपति वहाँ पर आये । विज निज संग महा गज लाये ॥ १ ॥
उन गजेन्द्र निर्गति मद द्वारा । भयो सुगंधित नृप पथ सारा ॥ २ ॥
रंभा पूगादिक तरु द्वारा । भइ सोभित वह पुरी अपारा ॥ ३ ॥
कुरु संजय कैकेय नृप जेते । आये वहँ पर हर्ष समेते ॥ ४ ॥
इत उत गीय मान यह गाथा । रुक्मिण हरण कीन्ह यदुनाथा ॥ ५ ॥
सुन नृप नृप कन्या निज काना । निज निज मन अति विस्मित माना ॥ ६ ॥
पुर जन महामोद मन छावा । रुकमणि योग्य कृष्ण अति पावा ॥ ७ ॥
बोले श्री शुकदेव मुनीशा । आगे सुनो कथा तुम ईशा ॥ ८ ॥
शंकर कोप काम जब जारा । कीन्ह विनय तब रती अपारा ॥ ९ ॥
रुक्मिणि गर्भ कृष्ण के अंशा । वहि प्रद्युम्न भये यदुवंशा ॥ १० ॥

दोहा- **नारद मुख शम्बर असुर, सुन कर यह सब हाल ।**
उस बालक को जानकर, निश्चय अपना काल ॥ ४६॥

चौ- कीन्हा हरण प्रसूती गेहू । डारा सिन्धु बीच ब तेहू ॥ १ ॥
आवा मीन वहाँ इक भारी । निगला शिशु शम्बर वधकारी ॥ २ ॥
वही मीन हे नृप इक बारा । बाँधा केवट जाल अपारा ॥ ३ ॥
ले झट केवल वह झष केतू । दीन्ह उपायन शम्बर हेतू ॥ ४ ॥
अब शम्बर निज दूत बुलावा । सूद पास वह मीन पठावा ॥ ५ ॥
ले अब सूद शस्त्र निज हाथा । काटन लागा वह झष नाथा ॥ ६ ॥
तासु उदर इक बालक सुन्दर । देखा कमल नयन वह मनहर ॥ ७ ॥
अब मायावति पास बुलाई । दीन्हो वह बालक उस ताँई ॥ ८ ॥
अब नारद मुनि वहाँ सिधाये । जन्म कर्म शिशु का सब गाये ॥ ९ ॥
शम्बर यथा हरण कर लावा । मीन उदर जिमि बालक आवा ॥ १० ॥

दोहा- **कामदेव नारी रति, मायावति के रूप ।**
निज स्वामी के जन्म की, करत प्रतीक्षा भूप ॥ ५० ॥

चौ- सूयोदन साधन हित येहू । शम्बर कीन्ह निरुपित गेहू ॥ १ ॥
शिशु को लखि वह काम समाना । करने लागी प्रेम महाना ॥ २ ॥
वह शिशु स्वल्प काल में राया । तजि बालकपन यौवन पाया ॥ ३ ॥
रूप रंग लखि उसका भारी । मोहित होजावत सब नारी ॥ ४ ॥
अब नर लोक बीत अचि सुन्दर । नार भाव ते रति हिय अन्दर ॥ ५ ॥
हाव भाव अति नार समाना । करने लागी जब वह नाना ॥ ६ ॥
बोले रती मनोहर बानी । तुम हो कृष्ण पुत्र गुण खानी ॥ ७ ॥
शम्बर चुरा यहाँ पर लाया । तुम मन्मथ मैं तव रति जाया ॥ ८ ॥

दोहा- **दश दिन अन्दर हरण कर, शम्बर असुर तुम्हार ।**
डारे सागर के विषे, जहँ पर नीर अपार ॥ ५१ ॥

चौ- निगला मत्स्य वहाँ पर तोहीं । पाये तासु उदर ते मोहीं ॥ १ ॥
शत मायविद् जानउ येहू । जीतो शीघ्र हनन कर तेहू ॥ २ ॥
कुररी सम वहँ मात तुम्हारी । गत वत्सा जिमि गाय विचारी ॥ ३ ॥
करती सोच महानिशि यामी । करो विलम्ब नहीं अब स्वामी ॥ ४ ॥
यों कहकर मायावति भारी । सब माया की नाशन हारी ॥ ५ ॥
विद्या सर्व सिखाई तासू । अब हरि सुत अम्बर पर आसू ॥ ६ ॥

जाकर वचन वाण अति त्यागे । समर हेत बुलवायउ आगे ॥ ७ ॥
वींधा जब दुर्वचनन द्वारा । तब शम्बर कर क्रोध अपारा ॥ ८ ॥
रक्त नयन निज दंत चबाई । शीघ्र हस्त विच गदा उठाई ॥ ९ ॥
वेग सहित हरि सुत पर डारी । कीन्हो वाद घोर रव भारी ॥ १० ॥

दोहा- **हरि सुत आवत जब लखि, शम्बर गदा विशाल ।**
तब निज गदा घुमाय के, काट दई तत्काल ॥ ५२ ॥

चौ- शम्बर ऊपर गदा प्रहारा । कीन्हा अब उन भली प्रकारा ॥ १ ॥
तब शम्बर अम्बर पर आवा । मायाश्रय शर वृष्टि रचावा ॥ २ ॥
बाध्य मान शर वृष्टि द्वारा । नारायण सुत भली प्रकारा ॥ ३ ॥
सात्विक विद्या तदा रचाई । दानव माया सकल नसाई ॥ ४ ॥
अब गुह्यक गंधर्वन भारी । उरग व भूत पिशाचन सारी ॥ ५ ॥
मयकृत माया वह विस्तारी । तब रतिपति ने तुरत निवारी ॥ ६ ॥
ले पुनि शीघ्र खड्ग निज हाथा । काटा शम्बर शिर रति नाथा ॥ ७ ॥
शम्बर सीस किरीट सकुंडल । आन गिरा जब हे नृप भूतल ॥ ८ ॥
पुष्प वृष्टि तब देवन कीन्ही । अब मायावति निज संग लीन्ही ॥ ९ ॥
आये अब पुर नभ पथ द्वारा । जहँ पर ललना संघ अपारा ॥ १० ॥

दोहा- **ऐसे अन्तः पुर विषै, तिय सह कीन्ह प्रवेश ।**
यथा तड़ित अरु मेघ का, जोड़ा अरे नरेश ॥ ५३ ॥

चौ- तब वे सब अन्तः पुर नारी । देख उन्हें पीताम्बर धारी ॥ १ ॥
भुज प्रलम्ब रुचिरानन श्यामा । जाने लघुभ्राता बलरामा ॥ २ ॥
तब लज्जित हो इत उत भागी । छिपकर उनको देखन लागी ॥ ३ ॥
देख विलक्षणता पुनि आई । नहीं कृष्ण इति बात जँचाई ॥ ४ ॥
अब मन में सब विस्मित छाई । झप केतू के पास सिधाई ॥ ५ ॥
तदा रुक्मिणी हरि पट रानी । निज सुत की सूरत मन आनी ॥ ६ ॥
स्तन ते बही दूध की धारा । तब वैदर्भी वचन उचारा ॥ ७ ॥
नर पुंगव पंकज सम नैना । धारा जठर कवन यह बहिना ॥ ८ ॥
नष्ट पुत्र मेरो यदि जीवहिं । इस समान वय लक्षण होवहिं ॥ ९ ॥
आकृति अवयव गति स्वर हासा । हरि सम कैसे रूप प्रकासा ॥ १० ॥

दोहा- **शायद यह बालक वही, रहा गर्भ में मोर ।**
वरना मेरा प्रेम अति, बढ़ता क्यों इस तोर ॥ ५४ ॥

चौ- फरके वाम भुजा यह मेरी । फरकत वाम नयन इस बेरी ॥ १ ॥
रुक्मिणि करत विचार यूँ नाना । मात पिता के सह भगवाना ॥ २ ॥
आये जहाँ खड़ी सब नारी । जानत बात यद्यपि सारी ॥ ३ ॥
तदपि न कुछ बोले भगवाना । हो चुपचाप खड़े निज स्थाना ॥ ४ ॥
इतने में नारद वहँ आये । शम्बर हरण कथा सब गाये ॥ ५ ॥
नारद वचन श्रवण कर सारी । भई चकित अन्तः पुर नारी ॥ ६ ॥
मानो मर वापिस कोइ आवे । देख उसे कुलजन हरसावे ॥ ७ ॥
अब देवकि वसुदेव व रामा । कृष्ण सहित अन्तः पुर वामा ॥ ८ ॥
नव दम्पति को गले लगावा । तब उन उर अति हर्ष दिखावा ॥ ९ ॥
नष्ट कृष्ण सुत जब पुर आये । पुर नर नारी खुशी मनाये ॥ १० ॥

दोहा- **नर नारी कहने लगे, हर्षित होय महान ।**
आवा यह वापिस गृह, बालक मृतक समान ॥ ५५ ॥

चौ- विधिकर अंक न मिटे मिटाया । चाहे कोटिन करो उपाया ॥ १ ॥
नारायण जिसके हो रक्षक । उसका कौन करे जग भक्षक ॥ २ ॥
यों कह कर आनन्द मनाया । धन्य भाग रुक्मिणि का गाया ॥ ३ ॥
रुप रंग भगवान समाना । गति स्वर हास विलास प्रमाना ॥ ४ ॥
कृष्ण जान कबहूँ उन माता । होवत मग्न मस्त कुरु त्राता ॥ ५ ॥
हरि प्रतिबिम्ब रूप जो कामा । देख उन्हें मोहित हो वामा ॥ ६ ॥
इसमें ना कुछ करो विचारा । वे प्रद्युम्न काम अवतारा ॥ ७ ॥
अन्य नार यदि मोहित होई । इसमें कौन कहे कुछ कोई ॥ ८ ॥
बोले श्री शुकदेव मुनीशा । आगे सुनौ कथा पुनि ईशा ॥ ९ ॥
सत्राजीत नामक इक यादव । करते मान जासु पुर मानव ॥ १० ॥

दोहा- **प्रथम कीन्ह अपराध वह, हरि का सुनु नरनाथ ।**
पाछे स्यामन्तक सहित, दीन्ही सुता हरि हाथ ॥ ५६ ॥

चौ- बोला नृपति कवन अपराधा । कीन्हा सत्राजीत अगाधा ॥ १ ॥
मणि स्यामन्तक कहँ वह पाई । हरि हित कन्या क्यों परणाई ॥ २ ॥
वह सत्राजित सुन कुरुराया । परम मित्र रवि भक्त कहाया ॥ ३ ॥
मुदित भानु उस हित मणि दीन्ही । गल धारण तब वह कर लीन्ही ॥ ४ ॥
वह मणि बाँध गले विचराया । एक दिवस द्वारावति आया ॥ ५ ॥
तासु विलोक मनुज रवि जाना । उसी समय शंकित हो नाना ॥ ६ ॥

कृष्ण चंद्र के पास सिधाये । समाचार सब उन प्रति गाये ॥ ७ ॥
हे नारायण हे यदुनन्दन । पंकज नयन करहि तव वन्दन ॥ ८ ॥
रश्मि जाल ते हे प्रभु भानू । मानव नयनन करत पिधानू ॥ ९ ॥
यदुकुल गुप्त जानकर तोहीं । आवत दर्शन हित यहँ सोहीं ॥ १० ॥

दोहा- **बोले बालक सम वचन,सुनकर कृष्ण कृपाल ।**
नहीं भानू यह किन्तु है, सत्राजित मणि ज्वाल ॥ ५७॥

चौ- अब सत्राजित निज घर आवा । विप्रन ते अभिषेक करावा ॥ १ ॥
देवन सदन बीचे पुनि राई । श्रद्धा सह मणि रत्न रखाई ॥ २ ॥
अष्टभार वह प्रति दिन सोना । उगलत कोइ न दिवस अलोना ॥ ३ ॥
जहँ अभ्यर्चित वह मणि राया । नहि बाधा देवत कोइ माया ॥ ४ ॥
आधि व व्याधि न सर्प सतावे । वहँ दुर्भिक्ष न मारी आवे ॥ ५ ॥
एक दिवस यदु नृप हित तासू । माँगी वह मणि रमा निवासू ॥ ६ ॥
किन्तु न मणि सत्राजित दीन्ही । इत उत की बाते अति कीन्ही ॥ ७ ॥
एक बार सत्राजित भ्राता । नाम प्रसेन तासु विख्याता ॥ ८ ॥
वह मणि निज गल धारण कियऊ । मृगया हित हय चढि वन गयऊ ॥ ९ ॥

दोहा- **अश्व सहित हन कर उसे,वहाँ एक वनराज ।**
वह मणि लेकर तुरत ही, गयो विपिन में भाज ॥ ५८ ॥

चौ- जाम्बवान ऋच्छन कर राजा । छीनी मणि मारयो वनराजा ॥ १ ॥
अब वह निज कन्दर गयऊ । निज सुत प्रति खेलन हितदियऊ ॥ २ ॥
इत सत्राजित भ्रात न देखा । भयो निजमन संतप्त विशेषा ॥ ३ ॥
वदत वचन सब से इति बाता । मणि गल बाँध विपिन मम भ्राता ॥ ४ ॥
मृगयाकाज गयो सुनु भ्राता । कीन्हो वध तासू बलभ्राता ॥ ५ ॥
यह सुन कर्णन लोग लुगाई । करने लागे कृष्ण बुराई ॥ ६ ॥
सुनी कृष्ण ने जब यह बाता । दूर करन दुर्यश बल भ्राता ॥ ७ ॥
जिस पदवी पर गयो प्रसेना । चाले पुरजन सह यदु ऐना ॥ ८ ॥
अश्व सहित वन बीच प्रसेना । देखा मृगपति ते हत नैना ॥ ९ ॥
किन्तु न वह मणि वहाँ लखाई । तब आगे चाले यदुराई ॥ १० ॥

दोहा- **अद्रि पृष्ठ पर ऋक्ष ते, देख मृतक वनराज ।**
खोजी मणि चारों तरफ,तदपि न पूरण काज ॥ ५९ ॥

चौ- देख विवर वहँ एक विशाला । कर स्थित बहि तब प्रजा कृपाला ॥१ ॥

गये अकेले विवर के भीतर । देखा तम उस बीच भयंकर ॥ २ ॥
बाल समीप वहाँ मणि पाई । तब मणि लेवन को यदुराई ॥ ३ ॥
बाल समीप भये जब ठाढे । देख अपूरव नर निज आढे ॥ ४ ॥
तब धात्री ने अति रव कीन्हा । जाम्बवन्त ने वह ले लीन्हा ॥ ५ ॥
धावातव वह कर अति क्रोधा । जाम्ब वन्त अतुलित बलयोधा ॥ ६ ॥
सन्मुख प्राकृत पुरुष लखावा । हरि संग वह अति युद्ध रचावा ॥ ७ ॥
आयुध अश्मखंड द्रुम भारे । जाम्वन्त ने प्रभु पर डारे ॥ ८ ॥
अष्टाविंशति दिन पर्य्यन्ता । कीन्हो द्वन्द युद्ध वह अन्ता ॥ ९ ॥
अब प्रभु एक मुष्टिका मारी । गात्र शिथिल हो विस्मित भारी ॥ १० ॥

दोहा- **बोला तब वह वचन यों, हे प्रभु जीवन प्राण ।**
पहिचाना मैंने तुम्हे, हे विष्णु भगवान ॥ ६० ॥

चौ- प्राण ओज बन काल नियन्ता । पुरुष पुरातन अन्तक अन्ता ॥ १ ॥
हे विष्णु तुम रचे विधाता । तुम्हीं जग नाशक जग पाता ॥ २ ॥
क्रोध कटाक्ष देख प्रभु जासू । दीन्हों भीत सिन्धु पथ आसू ॥ ३ ॥
जिन शर लंकापति सिर काटे । वधराक्षस महि मंडल पाटे ॥ ४ ॥
वहि तुम दशरथ सुत श्री रामा । आये आज हमारे धामा ॥ ५ ॥
यों सुन स्पर्श कियो निज हाथा । बोले कृपा सहित यदुनाथा ॥ ६ ॥
सुन तुम रिच्छपति मम बानी । यहँ आवन की सुनौ कहानी ॥ ७ ॥
लागा मुँहि मिथ्या अभिशापा । आवा दूर करन परितापा ॥ ८ ॥
सोंपहु यह मणि रत्न तुम्हारा । मिटहि तदा अभिशाप हमारा ॥ ९ ॥
यह सुन जाम्बवान मणि सहिता । दीन्ही जाम्बवती निज दुहिता ॥ १० ॥

दोहा- **उत यादव विल द्वार पर,द्वादश दिन पर्यन्त ।**
करी प्रतीक्षा कृष्ण की, गये द्वारका अन्त ॥ ६१ ॥

चौ- जब दुःखित यादव पुर आये । समाचार सारे बतलाये ॥ १ ॥
मात पिता रुक्मिणि महारानी । भये दुखी पुरजन सुन बानी ॥ २ ॥
पाछे दुखी द्वारका वासी । सत्राजित प्रति धरी उदासी ॥ ३ ॥
अब सब कृष्ण मिलन हित राया । पूजी प्रेम सहित यह माया ॥ ४ ॥
पाकर पूजन वह मनमानी । दीन्हों आशिरवाद भवानी ॥ ५ ॥
तब लोकन हर्षद तत्काला । प्रकटे दार सहित यदुपाला ॥ ६ ॥
पत्नी सहित महा मणि ग्रीवा । भये मुदित लखि करुणा सींवा ॥ ७ ॥

अब सत्राजित कृष्ण बुलावा। मणि प्राप्ति आख्यान सुनावा ॥ ८ ॥
सभा बीच शुभ मणि तेहि दीन्ही। अति लज्जित होकर वह लीन्ही ॥ ९ ॥
गयो गेह निज अब सत्राजित। करत विचार वहाँ अति रञ्जित ॥ १० ॥

दोहा- **कीन्हा मैं अपराध जो, छूटहिं कवन प्रकार।**
कवन भाँति मुझ पर मुदित, हों यह कृष्ण मुरार ॥ ६२॥

चौ- हो अहिं किस विधि भद्र हमारा। देवहि मानव नहि दुत्कारा ॥ १ ॥
कृष्ण हेतु मणि रतन सुपाऊँ। निज दुहिता उन संग परणाऊँ ॥ २ ॥
येहि उपाय श्रेष्ठ इक माना। होहि अन्यथा ना कल्याना ॥ ३ ॥
कर विचार वह यों मन अन्दर। मणि समान कन्या निज सुन्दर ॥ ४ ॥
नाम सत्यभामा गुणवन्ता। रूप शील औदार्य अनन्ता ॥ ५ ॥
माँगी प्रथम जिसे भगवाना। पर सत्राजित सुनी न काना ॥ ६ ॥
दीन्ही अब सत्राजित यादव। कृष्ण हेतु बुलवा सब मानव ॥ ७ ॥
वह मणि सत्राजित जब दीन्ही। तब प्रभु ने वह मणि ना लीन्ही ॥ ८ ॥
बोले वचन तासु भगवाना। तुम सम सूर्य भक्त नहि आना ॥ ९ ॥
राखहु यह मणि पास तुम्हारे। सोवहु मणि फल पास हमारे ॥ १० ॥

दोहा- **सर्व अर्थ विद् हे नृप, राम सहित इक बार।**
पाँडु सुतन को दग्ध सुन, होकर दुखी अपार ॥ ६३ ॥

चौ- पहुँचे तुरत गजा ह्वय भीतर। भीष्म द्रोण कृप नृपति कुरूवर ॥ १ ॥
गाँधारी अरु विदुर समेता। मिलकर उनसे कृपा निकेता ॥ २ ॥
कीन्हो प्रकट प्रथम दुख भारी। बोले वचन बाद बनवारी ॥ ३ ॥
हाय हाय अति दुख मोहि जाता। पाँडु सुतन की सुनकर घाता ॥ ४ ॥
गये हस्तिनापुर उत यदुवर। हे नृप इधर द्वारिका भीतर ॥ ५ ॥
पाकर के अवसर भरपूरा। कृतवर्मा के सह अक्रूरा ॥ ६ ॥
शतधन्वा के गेह सिधाये। उसका कर गहि वचन सुनाये ॥ ७ ॥
हे शतधन्वा बात हमारी। करो कर्णगत सुनकर सारी ॥ ८ ॥
जो सत्राजित पास रखाई। वह मणि क्यों तुम नहीं छिनाई ॥ ९ ॥
दीन्हो वचन प्रथम सत्राजित। निज कन्या हम प्रति व्याहन हित ॥ १० ॥

दोहा- **दे निज कन्या कृष्ण को, किय अपमान हमार।**
अब हम सत्राजीत को, क्यों ना देवे मार ॥ ६४ ॥

चौ- भयो भिन्नमति वह उन द्वारा । कीन्हो निज मन नहीं विचारा ॥ १ ॥
वह शतधन्वा अब असि लेकर । सोवत जहँ सत्राजित घर पर ॥ २ ॥
पहुँचा तुरत वहाँ सुनु राया । सत्राजित सिर काट गिराया ॥ ३ ॥
रोवत रही सभी घर नारी । ले शतधन्वा मणि शुभकारी ॥ ४ ॥
आवा तुरत भाज निज गेहा । देख सत्यभामा पितु देहा ॥ ५ ॥
तात तात इति कीन्ह विलापा । निज उर बीच बहुत दुख व्यापा ॥ ६ ॥
तैल द्रोणि बीचे तेहि रखकर । पहुँची तुरत गजाह्वय भीतर ॥ ७ ॥
समाचार यह दुःखद यह सारे । निजपति कृष्णहिं जाय पुकारे ॥ ८ ॥
समाचार यह सुनकर काना । राम कृष्ण नर लोक समाना ॥ ९ ॥
होय दुखी अति किये विलापा । परम कष्ट उनके उर व्यापा ॥ १० ॥

दोहा- **अब साग्रज निज तिय सहित, कृष्ण चन्द्र भगवान ।**
पहुँचे तत्क्षण हे नृपति, द्वारावति दरम्यान ॥ ६५ ॥

चौ- मारा जिसने श्वसुर हमारा । हरूँ तासु सिर करु न अवारा ॥ १ ॥
मणि हर्ता का पता लगाऊँ । उसको भी यम धाम पठाऊँ ॥ २ ॥
जब निज मन यों कृष्ण विचारा । उन उद्योग श्रवण कर सारा ॥ ३ ॥
तब शतधन्वा अति घबराया । कृतवर्मा के पास सिधाया ॥ ४ ॥
करो मित्र अब मदद हमारी । तब कृतवर्मा गिरा उचारी ॥ ५ ॥
रामकृष्ण तो ईश्वर भाई । ठानहिं उन संग कौन लडाई ॥ ६ ॥
उन ईश्वर का कर अपराधा । कोवहिं सिर पर को नर बाधा ॥ ७ ॥
उन संग कर कंसासुर द्वेषा । पायो मरण न क्या तुम देखा ॥ ८ ॥
सह अक्षोहिणि सत्रह बारा । जरासंध भी उनसे हारा ॥ ९ ॥

दोहा- **सुन कृतवर्मा के वचन, शतधन्वा तत्काल ।**
पहुँचा गृह अक्रूर के, आगे सुनु नरपाल ॥ ६६ ॥

चौ- जब अक्रूर गेह वह आवा । उनने भी वहि वचन सुनाया ॥ १ ॥
वे दोउ ईश्वर अति बलशाली । करहिं कवन उन संग कुचाली ॥ २ ॥
जान बूझ उन संग विरोधा । होअहिं मौत करे उन क्रोधा ॥ ३ ॥
जो इस जग का सरजन हारा । पालहिं नासहिं सभी प्रकारा ॥ ४ ॥
आयु सप्त वर्ष के भीतर । शैल उखार धरा जिन कर पर ॥ ५ ॥
उन अद्भुत कर्मा हरि हेतू । करुँ वन्दन मैं विनय सहेतू ॥ ६ ॥
जब अक्रूर यूँ वचन सुनावा । उन समीप मणि रतन रखावा ॥ ७ ॥

चौ- काशीपुर वीचे इक वारा । हे नृप अनावृष्टि के द्वारा ॥ १ ॥
आधिक भौतिक मानस तापा । प्रजाजनों को वहुत वियापा ॥ २ ॥
तव काशिप श्वफल्कहिं लाये । निज पुत्री गाँदिनि परणाये ॥ ३ ॥
वरसी तव वर्षा उस काशी । मिटी प्रजा की सकल उदासी ॥ ४ ॥
उन श्वफल्क के पुत्र अक्रूरा । उस प्रभाव वीचे भरपूरा ॥ ५ ॥
करत जहाँ अक्रूर निवासा । करत न वहँ संताप प्रकासा ॥ ६ ॥
यों सुन वृद्ध वचन तत्काला । वुलवाये अक्रूर कृपाला ॥ ७ ॥
सभा वीच अक्रूर सिधाये । कर पूजन प्रभु अति हरसाये ॥ ८ ॥
नम्र होय हरि गिरा उचारी । सुनो वात अक्रूर हमारी ॥ ९ ॥
शतधन्वा मणि पास तुम्हारे । रख भागा भयभीत हमारे ॥ १० ॥

दोहा- **ये सव वातें प्रथम हीं, मुझको याद जरूर ।**
सत्राजित अनपत्य का, दाँय भाग भरपूर ॥ ७० ॥

चौ- उसका तो अधिकारी ताता । उसकी पुत्री का सुत जाता ॥ १ ।
तो भी यह मणि पास तुम्हारे । मानो साँचे वचन हमारे ॥ २ ॥
किन्तु राम का मो पर ताता । इस मणि में विश्वास न जाता ॥ ३ ॥
यह मणि उनको आप दिखाऊ । दोउ वन्धुन परिताप नसाऊ ॥ ४ ॥
है ना वह मणि पास हमारे । यों मत भाखो वचन करारे ॥ ५ ॥
इस मणि के द्वारा तुम ताऊ । कंचन वे दिन मख रचवाऊ ॥ ६ ॥
हे नृप यों जव हरि के द्वारा । समझये वह विविध प्रकारा ॥ ७ ॥
तव वस्त्राच्छादित मणि सुन्दर । करत प्रकास समान दिवाकर ॥ ८ ॥
उन हरि के कर में पकड़ाई । तव प्रभु ने सवको दिखलाई ॥ ९ ॥
यों मिथ्या अभिशाप मिटाकर । पाछी सोप दई उन यदुवर ॥ १० ॥

दोहा- **कृष्ण गुणन ते युक्त यह, सुन्दर मणि आख्यान ।**
पढहिं सुनहिं जे सुमिरहिं ,पावहिं शान्ति महान ॥ ७१॥क
दुष्कीरति अभिशाप हर, मणि गाथा अघहारि ।
मंगल फल प्रद मोक्षदा, मेटहिं क्लेश अपार ॥ ७१ ॥ख

चौ- एक वार वे रमा निधाना । पाँडुन को जीवित सुन काना ॥ १ ॥
लेकर यदुअन को निज संगा । इन्द्र प्रस्थ गए करत प्रसंगा ॥ २ ॥
आवत अखिलेश्वर भगवाना । देखे पार्थन रमा निधाना ॥ ३ ॥
एक साथ सव उठ कर ठाढे । कीन्हो आलिंगन हरि गाढे ॥ ४ ॥

शतयोजन गामी हय चढकर । भागा शतधनु प्राण बचाकर ॥ ८ ॥
तासु पलायन सुन घनश्यामा । रथ ऊपर चढ़कर सह रामा ॥ ९ ॥
गुरु हन्ता अनु तुरत सिधाये । मिथिला उपवन पर वे आये ॥ १० ॥
इत शतधन्वा अश्व थकावा । गिरा भूमि निज प्राण तजावा ॥ ११ ॥

दोहा- **शतधन्वा मृत अश्व लख, मन में अति घबराय ।**
भागा पैदल हे नृपति, कृष्ण चन्द्र भय खाय ॥ ६७ ॥

चौ- जब शतधन्वा पैदल भागा । निज रथ राम पास प्रभु त्यागा ॥ १ ॥
हो क्रोधित पुनि पैदल धाये । तीक्ष्ण नेमि कर चक्र गहाये ॥ २ ॥
काटा सीस सुदर्शन द्वारा । परत भूमि ना लागी बारा ॥ ३ ॥
खोजी तासु बसन मणि सुन्दर । अब अप्राप्त मणि वह गिरधर ॥ ४ ॥
निज भ्राता के पास सिधाये । सत्य वचन उन प्रति सब गाये ॥ ५ ॥
हम शतधन्वा हना अकारथ । पाइ न वहँ मणि मोहिं यथारथ ॥ ६ ॥
बोले वचन तदा बलरामा । अरे कृष्ण अब दूजी ठामा ॥ ७ ॥
उस मणि का तुम पता लगाऊ । शीघ्र द्वारकापुरी सिधाऊ ॥ ८ ॥
शायद शतधन्वा ने भाई । अन्य पुरुष के पास रखाई ॥ ९ ॥
मुझको मणि से नहीं प्रयोजन । मैं जाऊँ मिथिलापुर पावन ॥ १० ॥

दोहा- **यों कह के बलराम तो, गये जनक के पास ।**
आवत देखे राम जब, भयो जनक हुल्लास ॥ ६८ ॥

चौ- कीन्हीं अगवानी अति सुन्दर । पूजन करी प्रेम ते नृप वर ॥ १ ॥
उन द्वारा प्रार्थित बलरामा । ठहरे कुछ सम्वत नृपधामा ॥ २ ॥
गदा युद्ध दुर्योधन हेतू । दी शिक्षा बल प्रेम समेतू ॥ ३ ॥
इत द्वारावति कृष्ण सिधाये । निज प्रिया प्रति हाल सुनाये ॥ ४ ॥
शतधन्वा वध मणि ना पाई । भिन्न भिन्न सब गाथ सुनाई ॥ ५ ॥
पाछे कृष्ण चन्द्र यदुराई । शतधन्वा की क्रिया कटाई ॥ ६ ॥
शतधन्वा वध सुन अक्रूरा । कृतवर्मा दोउ भए भयपूरा ॥ ७ ॥
कियो पलायन पुरी तजाई । जब अक्रूर गये तुनु राई ॥ ८ ॥
दैनिक भौतिक मानस तापा । द्वारा पुर वासिन प्रति व्यापा ॥ ९ ॥
वदत वचन कैतिक जन ऐसे । करत निवास जहाँ हरि कैसे ॥ १० ॥

दोहा- **परहीं काल दुकाल क्यों, दैविक भौतिक ताप ।**
वदत कोइ किन्तु यथा, सत्य सभी संताप ॥ ६९ ॥

अंग संग ते उन परितापा । भये नष्ट सब मन सुख व्यापा ॥ ५ ॥
प्रेम भरी प्रभु की मुस्काना । सोभित मुख सुषमा लखि नाना ॥ ६ ॥
भये मगन आनन्द विभोरा । लखकर जैसे चन्द्र चकोरा ॥ ७ ॥
भीम युधिष्ठिर को कर वन्दन । कीन्हा अर्जुन को आलिंगन ॥ ८ ॥
माद्रीसुत पुनि कीन्ह प्रणामा । बैठे आसन अब सुखधामा ॥ ९ ॥
द्रुपद सुता नूतन वधु आई । कीन्ह प्रणाम प्रभुहि सकुचाई ॥ १० ॥
सात्यकि भी पूजित उन द्वारा । बैठे आसन भली प्रकारा ॥ ११ ॥
प्रथा पास अब जा यदुराई । कर प्रणाम पूछी कुशलाई ॥ १२ ॥

दोहा- **प्रेम विवश हो अब प्रथा, लोचन अश्रु बहाय ।**
निज क्लेशन को सुमिर कर, बोली हे यदुराय ॥ ७२ ॥

चौ- प्रेषित कीन्ह प्रथम मम भ्राता । तब से कुशल हमारी जाता ॥ १ ॥
निज पर जग ना कोइ तुम्हारा । सुमिरत नाम मिटे दुख सारा ॥ २ ॥
धर्मराजअब गिरा उचारी । कीन्हो कवन श्रेय हम भारी ॥ ३ ॥
जो पाये प्रभु दर्श तुम्हारे । विषयासत दुर्मति हम सारे ॥ ४ ॥
कीन्ह निवास वहाँ कुछ काला । प्रार्थित धर्मराज यदुपाला ॥ ५ ॥
एक बार हरि के संग अरजुन। रथारूढ हो धनु ले राजन ॥ ६ ॥
विचरण हेत गये वे कानन । व्याघ्र व शूकर महिष कुरंगन ॥ ७ ॥
शल्लक शश खड्गी शर द्वारा । कीन्हे वध वहँ विविध प्रकारा ॥ ८ ॥
वध्यजीव पुन दासन द्वारा । प्रेषित किये नृपति पर सारा ॥ ९ ॥
हो अब अर्जुन तृषित अपारा । गयो तुरत वह जमुन किनारा ॥ १० ॥

दोहा- **कीन्ह आचमन प्रथम वहाँ,कीन्हो पुनि जलपान ।**
तप करती कन्या लखी, वहँ अरजुन भगवान ॥ ७३ ॥

चौ- प्रेषित अरजुन अब हरि द्वारा । कन्या से यों वचन उचारा ॥ १ ॥
तुम हो कवन कवन की जाई । केहिं कारन तू यहँ पर आई ॥२ ॥
मोरे तो मन यही जँचाई । पति इच्छा ते तुम यहँ आई ॥ ३ ॥
कहो शोभने सब मोहिं बाता । बोली कालिन्दी वृक भ्राता ॥ ४ ॥
मोहीं भानु सुता तुम जानों । निज स्वामी हरि को मैं मानों ॥ ५ ॥
परम तपस्या मैं यहि कारन । कीन्ही अरे पार्थ यह धारन ॥ ६ ॥
तजकर मैं उन रमा निवासू । राखूँ अन्य नहीं अभिलासू ॥ ७ ॥
होअहिं मुदित यदा भगवाना । तब ही हो मेरो कल्याना ॥ ८ ॥

मेरो कालिन्दी इति नामा । यमुना नीर करूँ विश्रामा ॥ ९ ॥
हो ना अच्युत दर्शन जब लों । करूँ वास यमुन जल तब लों ॥ १० ॥

दोहा- **ये सब बाते पार्थ ने, कही कृष्ण से आय ।**
तब हरि ने उसको तुरत, रथ पर लीन्ह चढाय ॥ ७४ ॥

चौ- पहुँचे बाद धरम के पासा । बीते पुनि वहँ पर कुछ मासा ॥ १ ॥
एक दिवस पांडव सब मिल कर । कीन्ही विनय परम हे नृपवर ॥ २ ॥
पार्थन ते विज्ञापित जबहीं । बुलवा सुर शिल्पी प्रभु तब ही ॥ ३ ॥
नगर एक निर्माण करावा । परम विचित्र सुभवन रचावा ॥ ४ ॥
दीन्हो अग्नि हेतु वन खांडव । बन हरि चालक अर्जुन पाँडव ॥ ५ ॥
होकर मुदित धनंजय पाछे । दिये धनंजय प्रति धनु आछे ॥ ६ ॥
हय सह रथ अक्षय दो बाना । तूण अभेद्य दीन्ह तनु नाना ॥ ७ ॥
वैश्वानर मोचिमय दानव । दीन्ही एक सभा हित पांडव ॥ ८ ॥
उसी सभा बीचे दुर्योधन । जल स्थित भ्रमित दृष्टि भइ राजन ॥ ९ ॥
कुछ दिन बाद कृष्ण यदुराई। माँगी विदा धरम पर आई ॥ १० ॥

दोहा- **पाछे सात्यकि प्रमुख युत, मित्रन अनुमति पाय ।**
आये द्वारावति विषै,कृष्ण चन्द्र यदुराय ॥ ७५ ॥

चौ- जब शुभ सुन्दर मुहूरत आवा । कालिन्दी सह व्याह रचावा ॥ १ ॥
महिप अवन्ति विन्ध अनुविन्दा । कौरव वश पाँडुन कृत निन्दा ॥ २ ॥
उन भगिनी सुन कृष्ण बड़ाई । हरि बीचे अति प्रीति बढ़ाई ॥ ३ ॥
कीन्हि निषेध उसे दोउ भाई। पहुँचे तदा कृष्ण यदुराई ॥ ४ ॥
नाम मित्रविन्दा जिन गाये । बीच स्वयंवर से हरलाये ॥ ५ ॥
देखत रहे सभी नृप ठाढ़े । एक न हरि के सन्मुख बाढे ॥ ६ ॥
नृप अब एक नग्न जित नामा । कोशलेश धार्मिक गुणधामा ॥ ७ ॥
सत्या नाम सुता नृप गेहा । शीलवती गुणवति वर देहा ॥ ८ ॥
खल वृष सप्त रहे नृप द्वारी । तीक्ष्ण शृङ्ग दुर्धप अपारी ॥ ९ ॥
वीरन गंधन उन्हें सुहाई । बीच स्वयंम्वर हे कुरुराई ॥ १० ॥

दोहा- **उन वृषभन को जीतकर, नृप कन्या के साथ ।**
भये समर्थ न एक भी, व्याह हेतु नर नाथ ॥ ७६ ॥

चौ- पावहिं कन्या वृषभ विजेता । यों सुन हरि निज सेन समेता ॥ १ ॥
पहुँचे कोशलपुर मनहारी । उच्च भवन उपवन सुखकारी ॥ २ ॥

कृष्ण आगमन सुनकर काना । भये नग्नजित मुदित महाना ॥ ३ ॥
देकर नाना भाँति उपायन । कर पूजन कीन्ही नृप वन्दन ॥ ४ ॥
कौशलपुर आये यदुराई । सुन सत्या मन अति हरसाई ॥ ५ ॥
मन ही मन वह लगी विचारन । कीन्हो यदि मैंनें व्रत पूजन ॥ ६ ॥
तो होअहिं मम पति भगवाना । करत विचार यथा मन नाना ॥ ७ ॥
लोकपाल सह शिव विधि सारे । जिन पद रज निज सिर पर धारे ॥ ८ ॥
वे लक्ष्मी पति कवन प्रकारा । होवहिं मो पर मुदित अपारा ॥ ९ ॥
इत नृपवर ने गिरा उचारी । हे नारायण भवभय हारी ॥ १० ॥

दोहा- **सव विधि तुम परिपूर्ण हो, मैं अपूर्ण हूँ नाथ ।**
सेवा कर सकता नहीं, भली विधि के साथ ॥ ७७ ॥

चौ- वोले श्री शुकदेव मुनीशा । नृप द्वारा पूजित जगदीशा ॥ १ ॥
होय मुदित वच हे कुरु नन्दन । वोले नृप से करुणा क्रन्दन ॥ २ ॥
क्षत्रिन के प्रति सुनु नर राया । निन्दित याचन कर्म वताया ॥ ३ ॥
तदपि मित्रता हेतु तुम्हारी । माँगू तव सत्या सुकुमारी ॥ ४ ॥
किन्तु न हम ना द्रव्य प्रदाता । नग्नजीत प्रति कहि इति वाता ॥ ५ ॥
वोला नृप तव दोउ कर जोरी । तुमने श्रेष्ठ न कोइ वर शौरी ॥ ६ ॥
अनपायनि लक्ष्मी जिन अंगा । गावत नित मुनि जासु प्रसंगा ॥ ७ ॥
किन्तु नाथ इक वात हमारी । करो कर्णगत कृष्ण मुरारी ॥ ८ ॥
कीन्हो प्रथम एक प्रण धारन । मानव वीर्य परीक्षा कारन ॥ ९ ॥
रहे वृषभ यह सप्त अशिक्षित । दुर्अवग्रह दुर्दान्त अनाथित ॥ १० ॥

दोहा- **प्रथम वहुत नृप वर यहाँ, आये अति वलवान ।**
इन वृषभन द्वारा भये, भग्न गात्र भगवान ॥ ७८ ॥

चौ- चाहो यदि सत्या सुकुमारी । करो प्रथम प्रण पूर्ति हमारी ॥ १ ॥
इनको नाथ आप वश करलें । पाछे सत्या को तुम वरलें ॥ २ ॥
नृपति प्रतिज्ञा सुनी कृपाला । वाँधी परिकर तव तत्काला ॥ ३ ॥
पाछे सात स्वरूप वनाये । उन वृषभन पर तुरत सिधाये ॥ ४ ॥
नष्ट घमंड हतौ जस जेहू । वाँधे रज्जुन से प्रभु तेहू ॥ ५ ॥
खेंचन लगे उन्हें तत्काला । यथा दारुमय वृषभन वाला ॥ ६ ॥
हो विस्मित अति मुदित नृपाला । दीन्ही कृष्ण हेतु निज वाला ॥ ७ ॥
पाछे विधिवत व्याह रचावा । परमानन्द मोद मन छावा ॥ ८ ॥

पाये दुहिता पति बनवारी । नृप महिषी भी मुदित अपारी ॥ ९ ॥
बाजे आनक शंख नकारा । दीन्हे आशिष विप्र अपारा ॥ १० ॥

दोहा- **प्रमुदित नर नारी अति, वस्त्रालंकृत होय ।**
परम महोत्सव कीन्ह उन, निज निज गेह सजोय ॥ ७९॥

चौ- दीन्ही धेनु सहस दस राजा । दासी तीन सहस सह साजा ॥ १ ॥
गज नव सहस लक्ष नव स्यन्दन । नव अर्बुद नर किय नृप अरपन ॥ २॥
बाद दम्पती रथ बैठाये । प्रेम समेत विदा करवाये ॥ ३ ॥
सुन अब भग्नवीर्य सब राजा । रोके पथ बीचे यदु राजा ॥ ४ ॥
शर प्रक्षिप्त तदा उन भूपन । निज बन्धुन प्रिय कृत तव अर्जुन ॥ ५ ॥
निज गाण्डीव धनुष के द्वारा । दीन्ही उनको पीड अपारा ॥ ६ ॥
बाद कृष्ण द्वारावति आये । सत्या के संग गृहस्थ चलाये ॥ ७ ॥
पिता भगिनि श्रुत कीरति नामा । तासु सुता भद्रा गुण धामा ॥ ८ ॥
ब्याही कृष्ण हेतु उन भ्राता । कैकेय देश जन्म जिन जाता ॥ ९ ॥
मद्र देश पति सुता सयानी । नाम लक्ष्मणा अति गुण खानी ॥ १० ॥

दोहा- **बीच स्वयम्वर हरण कर, ले आये जगदीश ।**
यथा सुधा को ले गये, हरकर के पक्षीश ॥ ८० ॥

चौ- भौमासुर वधकर तत्काला। कन्या सहस अनेक कृपाला ॥ १ ॥
तासू वन्दि गेह ते लाये । उनके भी संग ब्याह रचाये ॥ २ ॥
बोले नृप वसुदेव कुमारा । केहि कारण भौमासुर मारा ॥ ३ ॥
वन्दी गृह बीचे सुकुमारी । जेहि कारण भौमासुर डारी ॥ ४ ॥
यह सब गाथा मुझे सुनाऊ । यों सुनकर बोले मुनि राऊ ॥ ५ ॥
दुःखित सुरपित से इक बारा । विज्ञापित वसुदेव कुमारा ॥ ६ ॥
खगपति पर होकर आसीना । सह सत्राजित सुता प्रवीना ॥ ७ ॥
पहुँचे भौमासुर रजधानी । महिधर शस्त्र अनल वितिपानी ॥ ८ ॥
इन कर दुर्ग रचित अति घोरा । मुर पाशा आवृत चहुँ ओरा ॥ ९ ॥
जावत हरि निज गदा उठाई । भँजन कीन्ह कोट गिरि खाई ॥ १० ॥

दोहा- **शस्त्र दुर्ग निज बाण ते, दुर्ग अनल जल वात ।**
कीन्हो भञ्जन चक्र ते,अशि ते पाश नसात ॥ ८१ ॥

चौ- तोड़ा कोट गदा के द्वारा । कीन्ही सिन्धुज नाद अपारा ॥ १ ॥
जासु नाद सुन अरि हिय काँपे । दुष्टन के मन अति दुख व्यापे ॥ २ ॥

पाञ्चजन्य रव सुनकर भारी । पंचमुखी मुर दनुज करारी ॥ ३ ॥
तजकर नींद नीर वहि आवा । पंचवदन मनु लोक ग्रसावा ॥ ४ ॥
उठा शूल हरि ऊपर धावा । जैसे अहि खगपति पर आवा ॥ ५ ॥
अव पक्षिप पर शूल चलावा । पंचानन ते शोर मचावा ॥ ६ ॥
पूरा शव्द त्रिलोकी भीतर । त्यागा तव हरि वाण भयंकर ॥ ७ ॥
करके खंड तीन महि ऊपर । डारा उसका शूल भयंकर ॥ ८ ॥
पाछे निज बाणन के द्वारा । भर दीन्हा दानव मुख सारा ॥ ९ ॥
वह मुर भी अब क्रोधित भारी । ले निज गदा कृष्ण पर भारी ॥ १० ॥

दोहा- **लेकर हरि ने निज गदा, मुर की गदा विशाल ।।**
ख़ंड खंड कर भूमि पर, डारी तव तत्काल ॥ ८२ ॥

चौ-पाछे प्रभु निज चक्र चलावा । काटे सीस विलम्ब न लावा ॥ १ ॥
हो गत प्राण गिरा जल भीतर । इन्द्रवज्र ते गिरि जिमि भूपर ॥ २ ॥
मुर के सात सुवन सुन राजन । ताम्र व अन्तरिक्ष वसु सरवन ॥ ३ ॥
अरुण विभावसु अरु नभ स्वाना । पिता मरण सुनकर निज काना ॥ ४ ॥
प्रेरित भौम धृतायुध सारे । दानव पीठ चमूपति लारे ॥ ५ ॥
रण भूमी बीचे वे आये । शर सक्ति असि शूल गहाये ॥ ६ ॥
आवत ही सबने हरि ऊपर । छाँडे पैने अस्त्र भयंकर ॥ ७ ॥
तव हरि ने निज बाण चलाकर । तिल सम खंड कीन्ह उन अस्तर ॥ ८ ॥
जेते सेनापति वहँ आये । वे हरि ने यमधाम पठाये ॥ ९ ॥
सेना पतिन मरण लखि नैना । आवा नरकासुर ले सेना ॥ १० ॥

दोहा- **गज ऊपर असवार हो, नरकासुर वलवान ।**
पहुँचा रण के बीच जहँ ,भार्या सह भगवान ॥ ८३ ॥

चौ- देख गरुड़ उपर स्थित तेहू । तजी शतघ्नी दानव येहू ॥ १ ॥
नरकासुर सैनिक जो आये । एक साथ उन अस्त्र चलाये ॥ २ ॥
तदा कृष्ण निज बाणन द्वारा । छिन्न अंग किय कटक अपारा ॥ ३ ॥
कट कट गिरी भुजा धड़ गरदन । गिरे भूमि पर हय गज स्यन्दन ॥ ४ ॥
प्रेरित शूरन ते हरि ऊपर । गिरने लागे अश्त्र भयंकर ॥ ५ ॥
तब हरि ने ले बाण करारे । उनके सारे अस्त्र निवारे ॥ ६ ॥
पक्षिप तुण्ड पक्ष नख ताडित । कीन्ह प्रवेश पुरी गज भाजत ॥ ७ ॥
खगपति ते अर्दित लखि नैना । करके क्रोध नरक ले सेना ॥ ८ ॥

समर भूमि बीचे अब आवा । कृष्ण संग अति युद्ध रचावा ॥ ९ ॥
आवत प्रथम गरुड़ पर भारी । कीन्हो शक्ति प्रहार करारी ॥ १० ॥

दोहा- **माला हत गजराज सम, वेधित शूल प्रहार ।**
भये गरुड़ कम्पित नहीं, तब ले शूल करार ॥ ८४ ॥

चौ- अच्युत वध हित भौम चलावा । किन्तु परिश्रम निष्फल पावा ॥ १ ॥
उससे प्रथम ले चक्र सुदर्शन । काटा भौम सीस सुन राजन ॥ २ ॥
कुंडल चारु किरीट सभूषण । परा भूमि उस सीस सुहावन ॥ ३ ॥
जब प्रभु ने भौमासुर मारा । कीन्हे दनुजन शोक अपारा ॥ ४ ॥
सुर मुनि भये प्रफुल्लि सारे । ले वर कुसुम प्रभू पर डारे ॥ ५ ॥
भौमासुर वध लख महि आई । ठाढ़े जहँ माधव यदुराई ॥ ६ ॥
वारुण छत्र व कंचन कुंडल । कीन्ह समर्पित मणि हरि करतल ॥ ७ ॥
वनमाला हरि के गल डाली । वद्धाञ्जलि इमि विनय उचारी ॥ ८ ॥
वन्दों विवध नाथ मैं भगवन । हे परमात्मा पुरुष पुरातन ॥ ९ ॥
शंख व चक्र गदा धर स्वामी अखिल लोक पति अन्तरयामी ॥ १० ॥

दोहा- **आदि वीज अज विष्णु हरि, वासुदेव भगवन्त ।**
विभु ब्रह्म भूतात्मा, वन्दौं शक्ति अनन्त ॥ ८५ ॥

चौ- वन्दों पंकज नाम कृपाला । कमल नयन सन्तन प्रतिपाला ॥ १ ॥
वन्दौं मैं प्रभु परावरात्मा । वन्दों कमल नयन परमात्मा ॥ २ ॥
सृष्टि पूर्व तुम ही हे ईशा । धारत सत्वादिक जगदीशा ॥ ३ ॥
काल प्रधान पुरुष तुम गाये । आदि व अन्त तुमहिं इक पाये ॥ ४ ॥
मैं पय ज्योति अनिल सह अम्बर । मात्रा इन्द्रिय सर्व चराचर ॥ ५ ॥
ये सब तुमहीं में लवलीना । तदपी तुम इनके न अधीना ॥ ६ ॥
भौमासुर सुत हे यदुराया । हो भयभीत शरण तव आया ॥७ ॥
कल्मष अखिल विनाशन हारा । हस्त कमल यह नाथ तुम्हारा ॥ ८ ॥
धर कर इसके सीस कृपालू । अभयदान यहि देउ दयालू ॥ ९ ॥
वोले श्री शुकदेव मुनीशा । महि द्वारा प्रार्थित इमि ईशा ॥ १० ॥

दोहा- **हे नृप तव भगदत्त को, करके अभय प्रदान ।**
भौमासुर के पुर विषै, कीन्हो प्रभू पयान ॥ ८६ ॥

चौ- आनी हर भौमासुर द्वारा । नृप कन्या वसु दून हजारा ॥ १ ॥
देख कृष्ण को मोहित सारी । कीन्हे निज मन पति स्वीकारी ॥ २ ॥

पृथक पृथक उन गिरा उचारी । मम पति होय यथा गिरधारी ॥ ३ ॥
यह अभिलाषा पूर्ण हमारी । करें विधाता किसी प्रकारी ॥ ४ ॥
तब सब हिय की जानन हारे । पहिरा कर उन वस्त्र सुचारे ॥ ५ ॥
पाछे शिविका बीच बिठाई । द्वारावति प्रभु तुरत पठाई ॥ ६ ॥
कोष अश्व रथ सम्पत नाना । भेजी उन संग कृपा निधाना ॥ ७ ॥
ऐरावत वंशज गज सुन्दर । दन्त चार शीघ्रग रँग पाँडुर ॥ ८ ॥
साठ चार निज पुरी पठाये । पाछे इन्द्र भवन प्रभु आये ॥ ९ ॥
दिये अदिति हित कुंडल सुन्दर । सुरपति ते पूजित पुनि यदुवर ॥ १० ॥

दोहा- **भार्या ते प्रेरित तदा, नन्दनवन में आय ।**
तुरत उखारा कल्प तरु, धरा गरुड़ पर लाय ॥ ८७ ॥

चौ- जीता सुरपति देवन संगा । आये पुनि पुर करत प्रसंगा ॥ १ ॥
सत्राजित पुत्री के मंदिर । शोभित उपवन जहँ अति सुन्दर ॥ २ ॥
कल्प वृक्ष उस उपवन अन्दर । कीन्हो स्थापित पुनि उन यदुवर ॥ ३ ॥
उस अनु भ्रमर स्वर्ग से आये । गंधासव लम्पट हित धाये ॥ ४ ॥
अहो परीक्षित इन्द्र समाना । अन्य स्वारथी हम ना माना ॥ ५ ॥
प्रथम अर्थ सिद्ध सुरराया । कृष्ण संग अति द्वेष रचाया ॥ ६ ॥
पाछे अर्थ सिद्ध सुर राया । कृष्ण संग अति द्वेष रचाया ॥ ७ ॥
देवन बीच तमोगुण भारी । दोष द्रव्यता बीच अपारी ॥ ८ ॥
पावत धन होवत मदमत्ता । चालत उच्च वदन पा सत्ता ॥ ९ ॥
श्वान पुच्छ सम मुख रख ऊँचे । चालहिं भूमि देख नहि नीचे ॥ १० ॥

दोहा- **मदद करे ना दीन की, धन रख कर निज द्वार ।**
उन धनवन्तन को सदा, वार वार धिक्कार ॥ ८८ ॥

चौ- सायत एक बीच हरि पाछे । धर कर रूप अनेकनि आछे ॥ १ ॥
भिन्न भिन्न मंदिर में आये । नृप पुत्रिन संग व्याह रचाये ॥ २ ॥
पाछे उन सह गृहस्थ समाना । रहने लागे रमा निधाना ॥ ३ ॥
सब नृप कन्या रमा समाना । पाकर वर उन रमा निधाना ॥ ४ ॥
लाज सति नव संगम द्वारा । सेवा में रत रहीं अपारा ॥ ५ ॥
ब्रह्मादिक सुर ऋषि मुनि राया । जिन प्राप्ति का पथ ना पाया ॥ ६ ॥
वहि हरि रमारमण घनश्यामा । पति रूपी पायउ इन वामा ॥ ७ ॥
प्रति मंदिर दासी शत ऊपर । तो भी पति सेवा में तत्पर ॥ ८ ॥

रहती नृप कन्या दिन राती । क्षण भर व्यर्थ न एक गँवाती ॥ ६ ॥
कबहूँ प्रभू हित पान बनावे । लेकर पंखा कबहुँ उडावे ॥ १० ॥

दोहा- **कबहूँ चरण दबावती, कबहूँ तिलक लगाय ।**
कबहूँ पुष्पन माल ले,पति के गल पहराय ॥ ८६ ॥ क
खान पान असनान उन, बड़े प्रेम के साथ ।
दासिन का सब काम वे ,करती अपने हाथ ॥ ८६ ॥ ख

चौ- बोले कीर सुनहू नृपाला । एक बार श्री कृष्ण कृपाला ॥ १ ॥
सुख पूर्वक निज शय्या ऊपर । रहे विराजित रुक्मिणी मन्दिर ॥ २ ॥
ले चामर दासिन के हाथा । करती बात सुखद यदुनाथा ॥ ३ ॥
सरजहिं पालहिं नासहि जग को । वहि अज रक्षा हित निज पथ को ॥ ४ ॥
यदुकुल बीच लिए अवतारा । कीन्ही लीला कई प्रकारा ॥ ५ ॥
रुक्मिणि का मन्दिर अति सुन्दर । जहाँ विराजमान श्री यदुवर ॥ ६ ॥
सोभित मणिमय दीप अपारा । मुक्तादाम वितानन द्वारा ॥ ७ ॥
मल्लिकादि पुष्पन युत राजित । भ्रमर यूथ जिन पर अति नादित ॥ ८ ॥
जाल रन्ध्र निर्गत सुनुराई । अगर सुधूप सुगन्धित छाई ॥ ६ ॥
शुभ स्वच्छपय फेन समाना । स्थित पलंग पर रमा निधाना ॥ १० ॥

दोहा- **उन त्रिलोकी ईश को, पा स्वामी के रूप ।**
करती सेवा रुक्मिणी, जिनकी छटा अनूप ॥ ६० ॥

चौ- सखी हाथ से लेकर चामर । रत्नदंड युत जो अति सुन्दर ॥ १ ॥
परम रुपवति रमा स्वरूपा । सेवत चमर डुलाय अनूपा ॥ २ ॥
छटा अलौकिक मनहर सुन्दर । मुन्दरि रतन जटित अंगलि पर ॥ ३ ॥
कर कमलन कंगन युत चामर । रतन जटित पायल पद सुन्दर ॥ ४ ॥
रुन छुन करत किंकिणी नूपुर । दोउ स्तन स्थगित वसन के भीतर ॥ ५ ॥
कुच कुंकुम केशर अरुणाई । सोभित हार गले बिच राई ॥ ६ ॥
कमर करधनी अति अनमोली । बाल विशाल बिन्दुयुत रोली ॥ ७ ॥
रमा रूपिणी वदन सुहासा । देखी भीष्म सुता निज पासा ॥ ८ ॥
तदा कृष्ण यादव सुखदाया । प्रेम युक्त इमि वचन सुनाया ॥ ६ ॥
सुनो वचन मम राजकुमारी । तुम निजमन नहिं नीक विचारी ॥ १० ॥

दोहा- **लक्ष्मी मद युत भूप सब, करी तुम्हारी चाह ।**
पिता भ्रात शिशुपाल संग, करने लगे विवाह ॥ ६१ ॥

चौ- शिशुपालादिक अति वल शाली । त्यागे तुम कर कपट कुचाली ॥ १ ॥
मो संग तुम जो व्याह रचाया । यह तो तुम धोका अति खाया ॥ २ ॥
जरासंध आदिक वलशाली । उनसे भीत होय मैं आली ॥ ३ ॥
आवा मैं शरणागत सागर । वलवन्तन ते द्वेष न हितकर ॥ ४ ॥
वलवन्तन संग लरी लड़ाई । त्यागे निज आसन उन राई ॥ ५ ॥
हो नहि जो लौकिक व्यवहारी । उन अनुसरण करहि जो नारी ॥ ६ ॥
पावत दुःख अतुल वह भारी । सदा अकिञ्चन वृत्ति हमारी ॥ ७ ॥
यहि कारण जग के धनवन्ता । करहि न प्रेम मुझे तजि सन्ता ॥ ८ ॥
करहू मैत्रि न वैर विवाहू । हो अहिं जो निज से अधिकाहू ॥ ९ ॥
उत्तम अधम संग व्यवहारा । उचित नहीं सुनु किसी प्रकारा ॥ १० ॥

दोहा- **माँगन हारन ते श्रवण, कर यश कीर्ति हमार ।**
भई मुग्ध मोपर अरी, कीन्हो नहीं विचार ॥ ९२ ॥

चौ- सव प्रकार ते मैं गुण हीना । क्यों विवाह मो सँग तुम कीना ॥ १ ॥
सुनी वचन मम राजकुमारी । जाउ जहाँ रुचि होय तुम्हारी ॥ २ ॥
निज समान क्षत्रिय वर होई । खोजउ जाय अरी तुम सोई ॥ ३ ॥
हो वहँ पूर्ण मनोरथ सारा । यहँ से वहँ पर सभी प्रकारा ॥ ४ ॥
चेदिप शाल्व जरासंध नृपवर । विदुरथ दन्तवक्र अति वलधर ॥ ५ ॥
तव अग्रज रुक्मी सुनु वामा । करत वैर मौसे निष्कामा ॥ ६ ॥
ये मद अन्ध अनेक प्रकारा । मैं केवल इन गर्व निवारा ॥ ७ ॥
कीन्हा यहि हित हरण तुम्हारा । अपर प्रयोजन नही हमारा ॥ ८ ॥
मोहिं कामना ना सुत दारा । रहता गेह देह ते न्यारा ॥ ९ ॥
वोले श्री शुक सुनु कुरु ऐना । भए चुप तदा कृष्ण कहि वैना ॥ १० ॥

दोहा - **हे राजन यह वात थी, कृष्ण चन्द्र घन श्याम ।**
सदा रुकमणि सदन में, करते थे विश्राम ॥ ९३ ॥

चौ- होत विलग क्षण एक न तासू । भयो दर्प अधिक मन जासू ॥ १ ॥
यो ही समझ रही वह मनसे । चाहत मोहिं अधिक हरि सवसे ॥ २ ॥
अव हरि ने यो वचन सुनाकर । कीन्ह उपाय शन्ति का नृपवर ॥ ३ ॥
सुने वचन यो पति के खारे । जो कवहूँ ना प्रथम उचारे ॥ ४ ॥
हो गइ रुक्मिणि तव भयभीता । कम्पित गात हृदय अति चिन्ता ॥ ५ ॥
डूवी चिन्ता सिन्धु अथाहा । शुष्क वदन मन नहीं उछाहा ॥ ६ ॥

पाछे निज पद कंज समाना । खोदन लगी नखन महि नाना ॥ ७ ॥
अधोवदन करि अश्रु बहावा । सिञ्चत स्तन मुख वचन न आवा ॥ ८ ॥
नष्ट बुद्धि भइ शोक दुखातुर । पतित हस्त चामर कर सुन्दर ॥ ९ ॥
गिरी भूमि ऊपर वह पाछे । बिखरे केश कुसुम मुनि आछे ॥ १० ॥

दोहा- **करुणा युत होकर तदा, कृष्ण चन्द्र भगवान ।**
प्रिया प्रेम बन्धन लखि, हर्षित होय महान ॥ ६४ ॥

चौ- शय्या त्याग सन्त भयहारी । उठकर तदा चतुर्भुज धारी ॥ १ ॥
निजकर ते वह तुरत उठाई । पोंछा वदन हस्त निजराई ॥ २ ॥
बिखरे केश सीस के सारे । निज कर ते यदुनाथ सँवारे ॥ ३ ॥
कर तेहि आलिंगन निज हाथा । दे संतोष शीघ्र यदुनाथा ॥ ४ ॥
हास्य अर्थ ना जानन हारी । भ्रम चिन्ता प्रति गिरा उचारी ॥ ५ ॥
होउ न भीत हे राजकुमारी । मन चिन्ता कर दूर तुम्हारी ॥ ६ ॥
तुम तो सदा परायण मोरे ।श्रवण हेतु प्रिय वचन य तोरे ॥ ७ ॥
कीन्ही प्रकट कपट की बाता । कारण और न मम मन जाता ॥ ८ ॥
फड़कत प्रणय कोप के द्वारा । अरुण होठ य सुभ्रु तुम्हारा ॥ ९ ॥
शुष्क वदन तव देखन हेतू । कहे वचन हम कपट सहेतू ॥ १० ॥

दोहा- **घर धंधों में रात दिन, रहे लीन जो गेहि ।**
परम लाभ उनको अरी, तिय प्रिय वचन सुनेहि ॥ ६५॥

चौ- दीन्ही यों भगवान दिलासा । जाना तव रुक्मिणि परिहासा ॥ १ ॥
त्यागा भय तव निज परित्यागा । लज्जा हास सहित अनुरागा ॥ २ ॥
देख कृष्ण मुख पंकज आछे । भाखे कृष्ण वचन जो पाछे ॥ ३ ॥
उत्तर तासु कीन्ह इमि वरणन । बोली कमल नेत्र हे मोहन ॥ ४ ॥
कहि तुम नाथ उचित यह बाता । नहिं समानता तव मन जाता ॥ ५ ॥
कहाँ नाथ मैं कहँ तुम स्वामी । रहते शिव विधि तोहि निशियामी ॥ ६ ॥
मैं गुणमयी प्रकृति अनुगामी । तुम समान यों मैं नहि स्वामी ॥ ७ ॥
नयन भीत हो सागर शरणा । आवा मैं यह जो तुम बरणा ॥ ८ ॥
यह भी कथन रहा तव रीता । तुम विपयन ते हो भयभीता ॥ ९ ॥
सबके हिय में करहु प्रकासा । नृप सिंहसन की ना आसा ॥ १० ॥

दोहा- **कथन आपका यह प्रभो, है कुछ हद तक ठीक ।**
चरण कंज जे सेवहिं, भक्त लोक तव नीक ॥ ६६ ॥

चौ- वे भी नृप पद की अभिलासा । रखते कबहुँ न नाथ जरा सा ।। १ ।।
नरक तुल्य मानहिं वह तेही । उससे यहि हित आप परेही ।। २ ।।
स्पष्ट पंथ ना अरी हमारा । यह जो तुमने वचन उचारा ।। ३ ।।
पद पंकज पथ नाथ तुम्हारा । रहा कठिन अति नर पशु द्वारा ।। ४ ।।
क़हे वचन हम हैं निष्किचन । उत्तर तासु सुनो मन मोहन ।। ५ ।।
अरथ अकिञ्चनता का स्वामी । नहीं गरीबी वदत अकामी ।। ६ ।।
आप सिवाय वस्तु ना दूजी । तुमहीं हो प्रभु भक्तन पूँजी ।। ७ ।।
जे पूजहि नर शंभु विधाता । देवत भेट मुदित निज गाता ।। ८ ।।
वे नर भी तुमको प्रभु सेवत । सब विधि तुमको निज प्रिय मानता ।। ९ ।।
तुम भी उनको निज प्रिय मानत । रहते उन हित निशिदिन तुम रत ।। १०।।
उचित कथन यह नाथ तुम्हारा । करत भजन ना आढ्य हमारा ।। ११ ।।

दोहा- **नयन हीन धनवान नर, हो धन मद से पूर ।**
निशिदिन वे निज इन्द्रियन, करते तप्त जरूर ।। ९७ ।।

चौ- किन्तु न करते भजन तुम्हारा । जानत नहिं सिरि मौत सवारा ।। १ ।।
करहू वैर विवाह परस्पर । हो समानता जहँ पर यदुवर ।। २ ।।
इसका अर्थ यही मैं जाना । सर्व अर्थ फलप्रद भगवाना ।। ३ ।।
पाकर कृपा सुमति व्यवहारा । तजकर करते भजन तुम्हारा ।। ४ ।।
तुम जगदात्मा जगत नियन्ता । गावत यो ऋषि मुनि जन सन्ता ।। ५ ।।
कर विचार यों जिन मन मानस । तज ब्रह्मादिक सुरपति मानुस ।। ६ ।।
उन ब्रह्मादिक की अभिलापा । करता क्षण भर में सब नासा ।। ८ ।।
दन्तवक्त्र मागध शिशु पाला । उनकी तो क्या बात कृपाला ।। ९ ।।
आर्य पुत्र हे अन्तर यामी । यह भी युक्ति असंगत स्वामी ।। १० ।।

दोहा- **शिशु पालादिक नृपन, ते वसा सिन्धु मैं भीत ।**
किन्तु नाथ मैं नयन ते, देखा सब विपरीत ।। ९८ ।।

चौ- मोरे व्याह हेतु जो आये । क्षण भर में वे मार भगाये ।। १ ।।
कर निज शार्ङ्ग चाप टंकारा । जीतेमागधादि नृप सारा ।। २ ।।
मुझ दासी को उसी प्रकारा । उर लाये जिमि सिंह शिकारा ।। ३ ।।
करहिं अरी अनुशरण हमारा । पावत वह दुख अपरम्पारा ।। ४ ।।
इसका उत्तर सुनौ दयालू । पृथु गय भरत ययाति नृपालू ।। ५ ।।
त्याग राज ये विपिन सिधारे। भजन करन को नाथ तुम्हारे ।। ६ ।।

पाये कष्ट वहाँ वह केता । बोले वचन असंगत एता ॥ ७ ॥
क्षत्रिय श्रेष्ठ अरी जो कोई । करो वरण जाकर तुम सोई ॥ ८ ॥
इसका तो प्रभु एकहि उत्तर । कहूँ बुद्धि जे ही मम भीतर ॥ ९ ॥
भगवन सकल गुणन के तुम ही । आश्रम एक मात्र श्रुति कहहीं ॥ १० ॥

दोहा- **प्रभु पद पंकज गुणन को, गावत ऋषि मुनि सन्त ।**
जो आश्रय इनका गहे, ताप व पाप नसन्त ॥ ९९ ॥

चौ- जिन पद बीचे रमा निवासा । ऐसे चरणन की अभिलासा ॥ १ ॥
ऐसी कौन जगत में नारी । करहि न जो हे कृष्ण मुरारी ॥ २ ॥
तव पद पंकज पाय सुगंधी । त्यागहि कौन तिया प्रभु अंधी ॥ ३ ॥
उन पद का करके अपमाना । जन्म व रोग जरा भयवाना ॥ ४ ॥
करहि न वरण बुद्धि मति नारी । निशि दिन जिन सिर मोत सवारी ॥ ५ ॥
एक मात्र तुम ही जग स्वामी । इह परत्र तुम अन्तरयामी ॥ ६ ॥
करत मनोरथ सब के पूरे । तुम बिन सारे काम अधूरे ॥ ७ ॥
खर वृष श्वान व भृत्य विडाला । गेह बीच इन सम नरपाला ॥ ८ ॥
पावहिं ऐसे पति वह नारी । कर्ण मूल तव कथा न धारी ॥ ९ ॥
तव पद त्याग मूढ मति नारी । त्वचा माँस शोणित तनु धारी ॥ १० ॥

दोहा- **जो जीवित भी मृतक सम, वात पित्त कफ कोप ।**
श्मश्रु रोम नख केश युत, भरे हुए जिन दोष ॥ १०० ॥

चौ- ऐसे पति को पाकर नारी । सेवहिं सो वह मूर्ख गँवारी ॥ १ ॥
यद्यपि तुम निरपेक्ष अपारा । तदपिन त्यागूँ चरण तुम्हारा ॥ २ ॥
मिथ्या वचन न नाथ तुम्हारा । मानूँ मैं ना किसी प्रकारा ॥ ३ ॥
काशीनाथ सुता प्रभु जैसे । कीन्हो प्रेम शाल्व से वैसे ॥ ४ ॥
करती प्रेम नहीं मैं स्वामी । रहूँ सदा मैं तव अनुगामी ॥ ५ ॥
हेरे कुलटा नित पति नूतन । यथा धेनु नूतन तृण कानन ॥ ६ ॥
उभय लोक की नाशन हारी । सेवहिं बुध ना ऐसी नारी ॥ ७ ॥
रुक्मिणि वचन सुने इमि काना । बोले वचन कृष्ण भगवाना ॥ ८ ॥
तव उपहास करन को वामा । कहे वचन यह मैं निष्कामा ॥ ९ ॥
तो भी जो तुम वचन सुनाये । वे सब हमरे अति मन भाये ॥ १० ॥

दोहा- **तुम अनन्य मम प्रेयसी, मुझ पर प्रेम तुम्हार ।**
देखा मैंने सुन्दरी, कुछ ना करो विचार ॥ १०१॥

चौ- मुझसे जे अभिलाप तुम्हारी । होरहि प्राप्त अरी सुकुमारी ॥ १ ॥
देखा में पति प्रेम तुम्हारा । पतिव्रत धर्म हे वाम अपारा ॥ २ ॥
कर विपरीत वात मैं तोही । करना चाहा विचलित योंही ॥ ३ ॥
किन्तु न बुद्धि हे वाम तुम्हारी । भर विचलित ना किसी प्रकारी ॥ ४ ॥
जो सुख हेतु भजहिं नर मोही । मन्द भाग्य नर जानहु सोही ॥ ५ ॥
हे मानिनि मैं मोक्ष प्रदाता । सर्व सम्पदा आश्रयदाता ॥ ६ ॥
मुझको पाकर के जो कोई । विपय वासना धन रत होई ॥ ७ ॥
पराभक्ति मेरी ना चाही । वह नर मन्द भाग्य कहलाई ॥ ८ ॥
विपयन के सुख राजकुमारी । मिलहिं जे नरकन अधिकारी ॥ ९ ॥
हे गृह स्वामिनि प्राण पियारी । रही हर्षप्रद वात तुम्हारी ॥ १० ॥

दोहा- **जो सेवा निष्काम तुम, कीन्ही अरी हमार ।**
करहि न सेवा इदृशी, कवहूँ दुष्ट लवार ॥ १०२ ॥

चौ- तव समान मम गेह न कोई । भार्या अवरन दीखत मोई ॥ १ ॥
यद्यपि तुमने मोहि न देखा । कियो तदपि तुम प्रेम विशेषा ॥ २ ॥
केवल सुनी प्रशंसा मोरी । भेजा विप्र द्वारका ओरी ॥ ३ ॥
चेदिपादि मागध नरपाला । आये तोर व्याह के काला ॥ ४ ॥
सबकी करी उपेक्षा तुमने । कीन्हा वरण मोहि निज मन में ॥ ५ ॥
युद्ध वीच निर्जित तव भ्राता । कियो विरुप करण उस गाता ॥ ६ ॥
अनिरुद्ध का भयो विवाहू । कीन्हों द्यूत सभावध ताहू ॥ ७ ॥
होय वियोग भीत तुम भारी । सहन कियो जो दुःख अपारी ॥ ८ ॥
इसी हेतु तुम चित्त हमारा । जीत सकी हो वारम्वारा ॥ ९ ॥
मोहिं प्राप्ति हित खबर पठाई । भइ विलम्ब जव मोहिं नृप जाई ॥ १० ॥

दोहा- **तव सारा संसार तुम, देखा शून्य समान ।**
निज तनु त्यागन का किया ,प्रण तुम तदा महान ॥१०३॥

चौ- इसका तो वदला जग माँहीं । कवन भाँति हम नहीं चुकाहीं ॥ १ ॥
इस सर्वोच्च प्रेम का केवल । करते हम अभिनन्दन तजि छल ॥ २ ॥
बोले श्री शुकदेव मुनीशा । हे नृपवर यों वे जगदीशा ॥ ३ ॥
आत्माराम कृष्ण भगवाना । करते लीला मनुज समाना ॥ ४ ॥
दाम्पत प्रेम बढावन हारा । करके यों परिहास अपारा ॥ ५ ॥
रमा रूपिणी रुक्मण संगा । करते प्रेम समेत प्रसंगा ॥ ६ ॥

वे भगवान जगत के शिक्षक । सकल चराचर के विच व्यापक ॥ ७ ॥
हे नृपवर वे इसी प्रकारा । अन्य नारियन के आगारा ॥ ८ ॥
कर निवास नर गृही समाना । पालत गृही धरम भगवाना ॥ ९ ॥
बोले व्यास देव सुत कीरा । आगे सुनो नृपति रणधीरा ॥ १० ॥

दोहा- **जेती पत्नी कृष्ण की, उनसव पिता समान ।**
जाये दश दश सुवन सव,रूप शील गुणवान ॥ १०४ ॥

चौ- वे सब समझ रही यों मन में । रहते कृष्ण सदा मम घर में ॥ १ ॥
मोहीं ये सब से प्रिय मानत । अपर नारि के गेह न जावत ॥ २ ॥
हे नृप वे निज स्वामि प्रभावा । जान सकी ना किसी उपावा ॥ ३ ॥
वे सब कृष्ण चन्द्र की रानी । हाव भाव सह मृदु मुस्कानी ॥ ४ ॥
तदपि न हरि मन वश के काजू । भई समर्थ नहीं हे राजू ॥ ५ ॥
सोलह सहस से ऊपर सारी । त्यागे मन्मथ वाण करारी ॥ ६ ॥
तदपि न कृष्ण इन्द्रियन माँही । ऐसी कोई विफलता आही ॥ ७ ॥
जिन पदवी ना शंभु विधाता । जानसकत कवहुँ न कुरु त्राता ॥ ८ ॥
ऐसे रमारमण पति पाई । होय मुदित करती सेवकाई ॥ ९ ॥
यद्यपि दासी महल अपारी । प्रेम सहित तो भी वह सारी ॥ १० ॥

दोहा- **पति सेवा में सर्वदा, तत्पर रही महान ।**
खान पान सन्मान अति, आसन चरण पखार ॥ १०५॥

चौ- कवहुँ प्रभु को पान चवाती । श्रम हरने हित पैर दवाती ॥ १ ॥
कवहुँ गल पुष्पन की माला । पहिनाती उनको नृप वाला ॥ २ ॥
चन्दन इतर फुलेल लगावति । कवहूँ सिर के केश सँवारति ॥ ३ ॥
यों करती वे पति की सेवा । यह मैं प्रथम कहा नर देवा ॥ ४ ॥
प्रति रानी दस दस सुत जाये। पिता समान शील गुण भाये ॥ ५ ॥
मुख्य अष्ट महिषी भगवाना । जासू परिणय प्रथम बखाना ॥ ६ ॥
नृप विदर्भजा दस सुत जाये । जिनके नाम सभी यों गाये ॥ ७ ॥
रहे प्रथम प्रद्युम्नकुमारू । चारुदेह सुदेष्ण सुचारू ॥ ८ ॥
चारुभद्र पराक्रमि चारु । चारुगुप्त सुत भद्र विचारु ॥ ९ ॥
चारुदेष्ण दसम सुत नामा । जाये भीष्म सुता बलधामा ॥ १० ॥

दोहा- **भानु सुभानु प्रभानु अरु, भानुमान स्वर्भानु ।**
चन्द्र भानु अतिभानु नृप, वृहद्भानु श्री भानु ॥ १०६॥

चौ- प्रति भानु इति सुतदश नामा । जाये सत्यभाम वलधामा ॥ १ ॥
साम्ब सुमित्र व पुरुजित नामा । शत व सहसजित विजय ललामा ॥ २ ॥
द्रविड़ व चित्रकेतु वसुमाना । क्रतु इति पुत्र जाम्ववति जाना ॥ ३ ॥
वीर चन्द्र वसु विजय वृषैना । शंकु व चित्रगुप्त हय सेना ॥ ४ ॥
जाये वेगवान वलवन्ता । सत्या नाम महिषि भगवन्ता ॥ ५ ॥
श्रुतकवि वृक अरु वीर सुवाहू । एक भद्र सोमक नर नाहू ॥ ६ ॥
शान्ति व दर्श व पूरण मासा । सोमक इति रवि सुता प्रकासा ॥ ७ ॥
पुत्र प्रघोष सिंह वलवन्ता । उर्ध्वर्ग प्रवल ओज गुणवन्ता ॥ ८ ॥
गात्रवान अपराजित वलधर । सह इति सुवन माद्रि के घर पर ॥ ९ ॥
वृक क्षुधि हर्ष अनिल पुनि पावन । वह्नि महाशग्रध्र अनुवर्धन ॥ १० ॥

दोहा- **भयो मित्रविन्दा सदन, दशम पुत्र अन्नाद ।**
हे नृप वर भद्रा सुवन, सुनौ सहित आह्लाद ॥ १०७ ॥

चौ- रणजित वृहत्सेन अरु शूरा । प्रहरण अरिजित सुजय सुभद्रा ॥ १ ॥
वाम आयु सत्यक वलधारी । ये सव भये कृष्ण गुणधारी ॥ २ ॥
सौलह सहस गृहिणी जे गाई । नाम रोहिणी मुख्य कहाई ॥ ३ ॥
ताम्र तप्त आदिक वह जाये । शीलवान गुणवान कहाये ॥ ४ ॥
रति पति रुक्मवति के द्वारा । जाये वलि अनिरुद्ध अपारा ॥ ५ ॥
नगर भोजकट वीच विशाला । रुक्मवती नामक निज वाला ॥ ६ ॥
भीष्मक सुवन रुक्म वलवन्ता । व्याही शम्वरारि प्रति अन्ता ॥ ७ ॥
षोडश सहस नारियन द्वारा । जाये पुत्र व पौत्र अपारा ॥ ८ ॥
वोले नृपति कहो मुनि राजू । रुक्मी शत्रु पुत्र के काजू ॥ ९ ॥
केहि कारण निज सुता विवाही । यह सव भेद कहो समुझाही ॥ १० ॥
रुक्मी कृष्ण चन्द्र के द्वारा । पाप पराभव अपरम्पारा ॥ ११ ॥

दोहा- **कृष्णहिं वध के काज वह, करत प्रतीक्षा भारि ।**
यह सव गाथा श्रवण की, होरहि रुचि हमारि ॥ १०८ ॥

चौ- तुम सम योगी तपो निधाना । वर्त अतीत अनागत जाना ॥ १ ॥
श्री शुकदेव तदा मुनि ज्ञानी । वोले सुनो परीक्षित वानी ॥ २ ॥
मीनकेतु जे सुत भगवाना । मूर्तिमान वे काम समाना ॥ ३ ॥
उनके गुण सुन्दरता ऊपर । रीझ रुक्मवति वीच स्वयंवर ॥ ४ ॥
पहिनाई उनको वर माला । भये क्रुद्ध तव दुष्ट नृपाला ॥ ५ ॥

युद्ध बीच सब नृपति हराये । जीत रुक्मवति को हरलाये ॥ ६ ॥
रुक्मिणि मुदित हेतु सुन राया । प्रथम बैर रुक्मी विसराया ॥ ७ ॥
भागिनेय प्रति सुता सयानी । दीन्ही रुक्मवती गुणखानी ॥ ८ ॥
रुक्मिणि सुता चारुमति सुन्दर । कृतवर्मा सुत प्रति दई यदुवर ॥ ९ ॥
वद्ध बैर यद्यपि वह रुक्मी । निज भगिनी रुक्मिणि प्रियकर्मी ॥ १० ॥

दोहा- **नाम रोचना पौत्रिनिज, अनिरुद्ध प्रति दीन्हि ।**
उस विवाह में राम हरि, यादव चमु सह लीन्हि ॥ १०९॥

चौ- नगर भोगकट पहुँचि बराता । भयो व्याह निवृत कुरु त्राता ॥ १ ॥
तब कलिंग आदि खल राई । रुक्मी प्रति इति बात सुनाई ॥ २ ॥
सुनौ नृपति वचन हमारा । अक्ष खेल विच किसी प्रकारा ॥ ३ ॥
नहीं कुशल है यह बलदाऊ । जीत इन्हे तुम बैर चुकाऊ ॥ ४ ॥
यह सुनकर रुक्मी उन बाता । बुलवाये । तब हरि बल भ्राता ॥ ५ ॥
अक्ष खेल उनके संग रुक्मी । खेलन लगा सहित हठधर्मी॥ ६ ॥
शत व सहस अयुतपण रामा । धरे दाँव ऊपर बलधामा ॥ ७ ॥
जीती रुक्मी जब सब बाजी । तब कलिंग नृपति खल पाजी ॥ ८ ॥
हँसा सकल निज दसन दिखाई । किय अपमान राम यदुराई ॥ ९ ॥
तब रुक्मी पण लक्ष लगाये । धर्म सहित वे राम जिताये ॥ १० ॥

दोहा- **तदा वचन अनृत कहे , रुक्मी ने इस तोर ।**
हार गये बलराम तुम, भई विजय यह मोर ॥ ११० ॥

चौ- अरुण नयन क्रोधित तब रामा । धरे दाँव पर अर्बुद दामा ॥ १ ॥
यद्यपि धर्म सहित वह दामा । जीते यादवेन्द्र बलरामा ॥ २ ॥
तब ले रुक्मी कृपा सहारा । जीवा मैं यह द्रव्य तुम्हारा ॥ ३ ॥
बोला सुनौ सभासद सारे । बोले सत्य कवन हम हारे ॥ ४ ॥
भई तदा नृप अम्बर बानी । जीते दाम राम गुण खानी ॥ ५ ॥
वदत मृषा रुक्मी यह बानी । भये पराजित राम अग्यानी ॥ ६ ॥
पाछे खल नृपतिन के द्वारा । प्रेरित रुक्मी कई प्रकारा ॥ ७ ॥
कर अपमान राम का भारी । हँस कर बोला वचन करारी ॥ ८ ॥
तुम गोपाल अहो वन गोचर । अक्ष खेल जानों यह क्यों कर ॥ ९ ॥
अक्ष और बाणन के द्वारा । खेलत महिपति राजकुमारा ॥ १० ॥

दोहा- **कीन्ह यों अपमान जब, क्रोधित राम अपार ।**
सभा भवन में परिघ से, दीन्हों रुक्मी मार ॥ १११॥

चौ- दशम कदम पर पुनि वलरामा । गहा जाय के कालिङ्ग जामा ॥ १ ॥
तोडे दशन सभी उस नृप के । अन्य नृपति तव सभा भवन के ॥ २ ॥
राम परिघ ते अर्दित सारे । भग्न अङ्घ्रि भुज भजे विचारे ॥ ३ ॥
रुक्मी वध यदि वुरा वताये । तो वलराम क्रुद्ध हो जाये ॥ ४ ॥
यदि रुक्मी वध नीक वताये । तो रुक्मिणी रंजित हो जाये ॥ ५ ॥
ऐसा सोच समझ भगवाना । नीक अनीक कियो ना गाना ॥ ६ ॥
पुनि अनिरुद्ध वधू के संगा । कर स्यंदन स्थित करत प्रसंगा ॥ ७ ॥
त्याग भोज कट वल स्मर माधव । पहुँचे कुश स्थली सव यादव ॥ ८ ॥
वोले नृपति कहो मुनिनाहू । वाण सुता अनिरुद्ध विवाहू ॥ ९ ॥
भयो वहाँ रण हरि शिव घोरा । श्रवण हेतु मोहित मन मोरा ॥ १० ॥

दोहा- **नृप के सुनकर वचन यों, वोले शुक मुनिनाहु ।**
वाणसुता अनिरुद्ध का, तुम से कहूँ विवाहु ॥ ११२ ॥

चौ- वलि के सुवन एक शत गाये । वाणासुर जिन ज्येष्ठ कहाये ॥ १ ॥
वह शिव भक्ति रत धीमन्ता । दानी सत्यसंध दृढवन्ता ॥ २ ॥
करत राज शोणित पुर अन्दर । शिव प्रसाद ते सुर जिस किंकर ॥ ३ ॥
पाई सहस भुजा तप द्वारा । तोपे शिव कर नृत्य अपारा ॥ ४ ॥
वाद भक्त वत्सल शिवशंकर । वोले वर माँगो तुम नृपवर ॥ ५ ॥
लीन्हे पुनि वाणासुर ये वर । पुर रक्षार्थ यहाँ तुम शंकर ॥ ६ ॥
निशिदिन पहरा आप लगाहू । यह वरदान नाथ मैं चाहूँ ॥ ७ ॥
एव मस्तु वोले तव शंकर । भालचन्द्र भूतप अभयंकर ॥ ८ ॥
एक वार वह दुर्मद राई । शिव चरणन में सीस झुकाई ॥ ९ ॥
वोला वचन जयति शिव शंकर । करूँ प्रणाम तुम्हें सर्वेश्वर ॥ १० ॥

दोहा- **सहस वाहु कीन्हा मुझे, हे शिव शंभु पुरारि ।**
युद्ध करन की हो रही, इनसे रुचि हमारि ॥ ११३ ॥

चौ- किन्तु युद्ध हेतु भगवाना । तुम विन अन्य जगत नही आना ॥ १ ॥
वरना भार रुप यह मोहीं । लाग रही हे शिव पुर योंही ॥ २ ॥
एक वार खुजलाहट मेरी । भुजन वीच प्रभु चली घनेरी ॥ ३ ॥
कीन्हे चूर्ण तदा गिरि घोरा । गयो दिग्गजन की पुनि ओरा ॥ ४ ॥
होकर वे भी भीत अपारी । भाजि गये हे शिव त्रिपुरारी ॥ ५ ॥
वाणासुर के वचन पुरारी । सुन यों निज मुख गिरा उचारी ॥ ६ ॥

अरे मूढ जब यह ध्वज तेरी । टूटहिं तब पावहु निज बैरी ॥ ७ ॥
मम सदृश वह दर्प तुम्हारा । करहि नाश कर युद्ध अपारा ॥ ८ ॥
यों सुन बाण बहुत हर्षाया । पाछे वह अपने घर आया ॥ ९ ॥
करने लगा प्रतीक्षा उसकी । हो बल वीर्य नाश जिस रण की ॥ १० ॥

दोहा- **उषा नाम नृप बाण की, सुता जासु वर अंग ।**
अनिरुद्ध सह सुपन में, कीन्हा रति प्रसंग ॥ ११४ ॥

चौ- बाद सुपन बिच प्रियतम प्यारा । कीन्हा एका एक किनारा ॥ १ ॥
अरे कान्त तुम कहाँ सिधाये । यों निद्राबिच वचन सुनाये ॥ २ ॥
विह्वल सखियन बिच अति ब्रीडित । उठी त्याग निद्रामन रंजित ॥ ३ ॥
बाण सचिव जिस सुता सयानी । नाम चित्रलेखा गुण खानी ॥ ४ ॥
बोली वचन उषा से सुन्दर । खोज रही किनको हिय अन्दर ॥ ५ ॥
कहो मनोरथ हिय का सारा । आज दिवस तक पति तुम्हारा ॥ ६ ॥
निज नयनन हम देखा नाँही । खोजउ पुनि किनको हिय माँही ॥ ७ ॥
बोली उषा सुनौ सखि बानी । सुपने बीच मनोहर प्रानी ॥ ८ ॥
पीत वसन जिस पंकज नैने । देखा एक श्रेष्ठ नर मैंने ॥ ९ ॥
करता मधुर अधर मोहिं पाना । डार दुःख वह कियउ पयाना ॥ १० ॥

दोहा- **उस प्रियतम को हे सखी, खोजऊँ बारम्बार ।**
कहत चित्रलेखा तदा, हरुँ सखि कष्ट तुम्हार ॥ ११५॥

चौ- जो मनहर्ता सखी तुम्हारा । तीन लोक बिच नहीं सिधारा ॥ १ ॥
तो भी मैं उसको यहँ लाऊँ । धरो धीर नहीं देर लगाऊँ ॥ २ ॥
यों कह वचन तदा सखि सुन्दर । देव सिद्ध चारण विद्याधर ॥ ३ ॥
दैत्य व यक्ष व पन्नग दानव । लिखे यथावत पट पर मानव ॥ ४ ॥
मानव बिच वृष्णिन हरि रामा । काम सहित अनिरुद्ध ललामा ॥ ५ ॥
अनिरुद्ध पट देख विशाला । लज्जित अधोमुखी नृप बाला ॥ ६ ॥
येहि येहि इति वचन सुनाये । आनहु गेहि जहाँ यह पाये ॥ ७ ॥
बाद चित्रलेखा गुणखानी । उनको कृष्ण पौत्र मन जानी ॥ ८ ॥
गई द्वारका नभ पथ द्वारा । सोवत जहाँ प्रद्युम्नकुमारा ॥ ९ ॥
लेकर तब वह योग सहारा । उठा पलंग वह भली प्रकारा ॥ १० ॥

दोहा- **ले आइ अनिरुद्ध को, शोणित पुर सखि पास ।**
देख उसे राजा हुई, पूरी जब मन आस ॥ ११६ ॥

चौ- अनिरुद्ध संग कीन्ह विहारा । कर स्वागत पुनि भली प्रकारा ॥१ ॥
गंध धूप दीपासन देकर । अर्ध्य व खान पान पट सुन्दर ॥ २ ॥
बाढ़ा प्रेम परस्पर राया । रमण करत बहु दिवस बिताया ॥ ३ ॥
भुज्यमान वह यदुवर द्वारा । पाछे नृप सेवक दिवस बिताया ॥ ४ ॥
कारण जान नृपति पहँ आये । समाचार सब यों बतलाये ॥ ५ ॥
हे राजन यह सुता तुम्हारी । कुलको दोष लगावहिं भारी ॥ ६ ॥
करत विरुद्ध आचरण येहू । जान सके किन्तु न हम तेहू ॥ ७ ॥
यद्यपि हमने पता लगाया । यह सुन बाणासुर नर राया ॥ ८ ॥
निज मन में हो व्यथित अपारा । तत्क्षण कन्या गेह सिधारा ॥ ९ ॥
देखे वहँ अनिरुद्ध अभीता । काम सुवन सुन्दर पटपीता ॥ १० ॥

दोहा- **कुंडल युत आजानुभुज , कंज नयन तनु श्याम ।**
चौसर क्रीड़ा कर रहे , उषा संग अभिराम ॥ ११७ ॥

चौ- उषा अगस्तन कुंकुम द्वारा । रंजित सुन्दर पुष्पन हारा ॥ १ ॥
उन सन्मुख देखी वह ठाढी । हाव भाव मृदु हास प्रगाढी ॥ २ ॥
लखि बाणासुर विस्मित भयऊ । तब उनको पकरन वह गयउ ॥ ३ ॥
देखा सेन सहित दनु नाथा । तब अनिरुद्ध परिघ ले हाथा ॥ ४ ॥
डटकर सन्मुख काल समाना । कीन्ह प्रहार उन्हों पर नाना ॥ ५ ॥
ज्यों ज्यों सैनिक उन पर झपटत । त्यों त्यों उनको मार गिरावत ॥ ५ ॥
सूकर यूथप स्वान समाना । मारे बाण चमूपति नाना ॥ ७ ॥
अनिरुद्ध का पाय प्रहारा । उन पद सीस भुजा भए न्यारा ॥ ८ ॥
हन्य मान यों सैनिक सारे । त्याग भवन बहि भजे बिचारे ॥ ९ ॥
तदा बाण हो कुपित अपारा । बाँधे नाग पाश के द्वारा ॥ १० ॥

दोहा- **बँधे हुए अनिरुद्ध को, लखकर उषा अपार ।**
करने लागी रुदन तब, बही नयन जलधार ॥ ११८ ॥

चौ- श्री शुकदेव कहे सुनु राजन । अनिरुद्ध जब भये अदर्शन ॥ १ ॥
बीते वार्षिक चातुरमासा । कियो सोच तब वृष्णिन खासा ॥ २ ॥
एक बार नारद मुख द्वारा । व्योरा काम सुवन का सारा ॥ ३ ॥
उन कृत युध्दादिक सुनि सारे । गये वृष्णि शोणित पुर द्वारे ॥ ४ ॥
राम कृष्ण अनुयायी जेता । साम्ब सात्यकि काम सयेता ॥ ५ ॥
सारण भद्र नद्र उपनन्दा । युयूधान गद सहित सुनन्दा ॥ ६ ॥

ले अक्षोहिनि द्वादश संगा । घेरा बाण नगर सब अंगा ॥ ७ ॥
गोपुर पुर प्राकार विशाला । भज्य मान उपवन अट्टाला ॥ ८ ॥
देख बाण सेना ले संगा । गये जहाँ यादव बल संगा ॥ ९ ॥
बाण काज तब पुत्र समेतू । प्रमथ गणन सह शिव कुरु केतू ॥ १० ॥

दोहा- **समर भूमि में आगये, होकर वृषभ सवार ।**
राम कृष्ण के संग उन, कीन्हा युद्ध अपार ॥ ११९ ॥

चौ- भयो रोम हर्षण रणभारी । भिडे कृष्ण संग प्रभु त्रिपुरारी ॥ १ ॥
कार्तिकेय संग भिड़े अनंगा । बाणासुर मंत्री बल संगा ॥ २ ॥
बाणासुर सुत साम्ब अपारा । कीन्हो युद्ध प्रचंड करारा ॥ ३ ॥
सात्यकि बाणासुर भट दोऊ । कियो घोर रण हे नृप सोऊ ॥ ४ ॥
तब ब्रह्मादिक देव अधीशा । चारण सिद्ध व यक्ष मुनीशा ॥ ५ ॥
आये रण देखन चढि याना । जहाँ कृष्ण शंभू भगवाना ॥ ६ ॥
मारे बाण कृष्ण ने भारी । बींधे प्रमथ व भूत अपारी ॥ ७ ॥
गुह्यक डाकिनि प्रेत विनायक । घबराये खाकर हरि शायक ॥ ८ ॥
तदा शंभु हरि के प्रति राजन । कीन्हे नूतन अस्त्र नियोजन ॥ ९ ॥
वे सब किये शमन भगवाना । तजकर शार्ङ्ग धनुष ते नाना ॥ १० ॥

दोहा- **तब शिव ने ब्रह्मास्त्र निज, त्यागा हरि पर शोध ।**
तब हरि ने ब्रह्मास्त्र से ,उसका किया निरोध ॥ १२० ॥

चौ- पार्वत से वायव्य निवारा । आग्नीय वारुण से टारा ॥ १ ॥
अब निज अस्त्र पाशुपत शंकर । कीन्ह प्रयोग कृष्ण के ऊपर ॥ २ ॥
तब नारायण अस्त्र चलाकर । कियो शान्त हरि पाशुपता स्तर ॥ ३ ॥
पाछे जृम्भण अस्त्र चलाकर । मोहित किये हरी ने शंकर ॥ ४ ॥
मार गदा शायक विकराला । बीधीं दानव सैन विशाला ॥ ५ ॥
भागे स्कंद कामशर पीडित । निज मुख ते कर रक्त विमुञ्चित ॥ ६ ॥
कूप कर्ण कुम्भाण्ड सचीवा । गिरे भूमि ऊपर कटि ग्रीवा ॥ ७ ॥
भागी बाण चमू तब सारी । हत स्वामी अर्दित शर भारी ॥ ८ ॥
देख पलायमान निज सैना । तजा सात्यकी दनु कुल ऐना ॥ ९ ॥
ध्यावा यादवेन्द्र के ऊपर । ले कोदण्ड पाँच सौ निज कर ॥ १० ॥

दोहा- **दो दो शर प्रति धनुप पर, धर बाणासुर वीर ।**
मारन लागा यादवन, होकर जरा अधीर ॥ १२१ ॥

चौ- तब हरि ने काटे धनुसारे । अश्व सारथी रथ सँहारे ।। १ ।।
कीन्ही शंख नाद पुनि भारी । भई लोक पूरित ध्वनि सारी ।। २ ।।
बाणासुर माता तब आई । नाम कोटरा सुनु नरराई ।। ३ ।।
पुत्र प्राण रक्षाहित वहँ पर । होकर नग्न जहाँ पर यदुवर ।। ४ ।।
नग्न अवस्था में लख तेही । भये अधोमुख भक्त स्नेही ।। ५ ।।
तावत विरथ बाणपुर आया । एवं व्यथित भूत समुदाया ।। ६ ।।
भागे निज निज प्राण बचाकर । आवा अब यदुवर पर शिवज्वर ।। ७ ।।
देख शैव ज्वर को यदुराया । तब ज्वर वैष्णव शीघ्र तजाया ।। ८ ।।
वैष्णव शैव तदा ज्वर भारी । कीन्हा युद्ध परस्पर जारी ।। ९ ।।
वैष्णव ज्वर द्वारा अब अर्दित । हो भयभीत शंभु ज्वर दुःखित ।। १० ।।

दोहा- **करी प्रार्थना कृष्ण से, होकर नम्र अपार ।**
हे सर्वेश्वर जगतपति करुणाकर साकार ।। १२२ ।।

चौ- वन्दों सर्वात्मन भगवन्ता । हे परेश प्रभु शक्ति अनन्ता ।। १ ।।
काल कर्म जीवादि विकारा । रचे नाथ माया के द्वारा ।। २ ।।
उस माया के नाशन हारे । करूँ पद वन्दन विभो तुम्हारे ।। ३ ।।
मीनादिक लेकर अवतारा । पालत आप सकल संसारा ।। ४ ।।
यह वैष्णव ज्वर प्रभो तुम्हारा । मैं अति तप्त हुँ इसके द्वारा ।। ५ ।।
जब लगि पाद सरोज तुम्हारा । सेवत जो नहिं भली प्रकारा ।। ६ ।।
तब लगि ताप युक्त सब लोका । तब सेवा रत सदा अशोका ।। ७ ।।
बोले कृष्ण चन्द्र अब यदुवर । मैं हूँ मुदित त्रिशिर अति तोपर ।। ८ ।।
हे त्रिपाद मम ज्वर के द्वारा । होउ भीत मति किसी प्रकारा ।। ९ ।।
प्रज्वर यह संवाद हमारा । सुनै प्रेम से भली प्रकारा ।। १० ।।

दोहा- **तब बाधा उस जीव को, कबहुँ सतावत नाँय ।**
यों सुनकर अच्युत वचन, प्रभु पद सीस झुकाय ।।१२३।।

चौ- कर प्रणाम अब शिव ज्वर राया । उसी समय निज धाम सिधाया ।। १ ।।
रथा रूढ अब दानव राया । समर हेतु इत हरि पहँ आया ।। २ ।।
सहस भुजा द्वारा हरि ऊपर । त्यागे धनुते बाण भयंकर ।। ३ ।।
ले अच्युत अब चक्र सुदर्शन । काटी साख समाँ भुज राजन ।। ४ ।।
कट गइ बाण भुजा जबसारी । तदा भक्त वत्सल त्रिपुरारी ।। ५ ।।
हरि समीप आ वचन सुनाये । परम ब्रह्म तुम इति श्रुति गाये ।। ६ ।।

अमल आतमा जाकी होई । जिनका दर्श करहिं नर सोई ॥ ७ ॥
जासु नाभि नभ मुख अनलाई । अम्बु रेत दिवि सीस कहाई ॥ ८ ॥
महि पद कमल श्रवण दश आशा । जासु नयन विच भानु प्रकाशा ॥ ९ ॥
मन विधु अहंकार मैं गाया । सागर जठर भुजा सुर राया ॥ १० ॥

दोहा- **रोम औषधी मेघ कच, ब्रह्मा बुद्धि अनाप ।**
मेढ़ू प्रजापति धर्म हिय, लोक कल्प नर आप ॥ १२४ ॥

चौ- यह अवतार कियो तुम धारन । रक्षा धर्म जगत उद्धारन ॥ १ ॥
तुम ही आदि पुरुष भगवाना । तुम सम शुद्ध पुरुष नहिं आना ॥ २ ॥
सब विषयन का तुमहिं प्रकाशन । करते निज माया से भगवन ॥ ३ ॥
अहंकार द्वारा भी छदित । सत्वादिक तुम करत प्रकाशित ॥ ४ ॥
पाकर जगत बीच नर देही । तव पद कमल न जो नर सेही ॥ ५ ॥
सोचन जोग वही भगवाना । तव पद त्याग भजहिं जे आना ॥ ६ ॥
अमृत त्याग गरल वह धारे । यहि हित ब्रह्मादिक हम सारे ॥ ७ ॥
भये शरण प्रभुपाद तुम्हारे । जग स्थिति सरजन नासन हारे ॥ ८ ॥

दोहा- **वन्दौं में अपवर्गप्रद, सम प्रशान्त भगवान ।**
यह वाणासुर मम प्रिय, दियो अभय वरदान ॥ १२५ ॥

चौ- होउ मुदित प्रभु इसके ऊपर । यों सुन वचन कहत अब यदुवर ॥ १ ॥
हे भव जो तुम वचन सुनाये । ते सब मोरे मन अति भाये ॥ २ ॥
करूँ सत्य जो वचन तुम्हारा । यह दनुराज अवध्य हमारा ॥ ३ ॥
दियो कयाधु सुवन के हेतू । प्रथम यही वर मैं वृषकेतू ॥ ४ ॥
लेवहिं कुल में जन्म तुम्हारे । वह अवध्य सब विधि मम द्वारे ॥ ५ ॥
तदपि गर्व नाशन हित येहू । कीन्ही छिन्न भुजा शिव तेहू ॥ ६ ॥
भार भूत महि सैन्य सँहारी । अब अवशेष रहहि भुज चारी ॥ ७ ॥
होवहिं अजर अमर तव दासा । रहहिं तुम्हार पारसद खासा ॥ ८ ॥
इस प्रकार तेहि अभय कराकर । किय प्रणाम शिर सीस झुकाकर ॥ ९ ॥
अब वाणासुर की सुनुराई । अच्युत चरणन सीस नवाई ॥ १० ॥

दोहा- **निज पुत्री अनिरुद्ध दोउ, रथारूढ़ करवाय ।**
कृष्ण राम के पास में, तुरतहि दिये पठाय ॥ १२६ ॥

चौ- सब ले चमू यादवन सारी । कीन्ह उषा अनिरुद्ध अगारी ॥ १ ॥
आये पुरी द्वारिका अन्दर । जो ध्वज तोरण ते अति सुन्दर ॥ २ ॥

राजमार्ग घर गली हताई । सिंचित अतर फुलेल सुहाई ॥ ३ ॥
मंगल कलश धरे चहुँ ओरा । करत कुसुम ऊपर अलि शौरा ॥ ४ ॥
अब अभिमुख विप्रादिक आये । कर सत्कृत पुर जन हर्षाये ॥ ५ ॥
आनक दुंदुमि शंख अपारा । बाज रहे जहँ मृदु ध्वनि द्वारा ॥ ६ ॥
ऐसे पुर विच किये प्रवेशा । अमरपुरी विच यथा सुरेशा ॥ ७ ॥
उषा कामसुत की यह गाथा । करी कथन विधिवत मुनि नाथा ॥ ८ ॥
सुमिरहिं कृष्ण विजय उठ प्राता । तासु पराजय कबहुँ न जाता ॥ ९ ॥
होवहिं विजय राजकुल माँही । प्रेम सहित जो नरन सुनाहीं ॥ १० ॥

दोहा- **अब बोले शुकदेव मुनि, हे राजन इक बार ।**
चारुभानु प्रद्युम्न गद, साम्यादिक सुकुमार ॥ १२७ ॥

चौ- देखी जाय विपिन वन शोभा । गुञ्जत पट्पद जहँ मधु लोभा ॥ १ ॥
कर वहँ सुचिर खेल सब पाछे । होय तृषित जल हेरत आछे ॥ २ ॥
नीर हीन इक कूप विशेषा । अद्भुत जीव वहाँ उन देखा ॥ ३ ॥
भारी गिरगिट अद्रि समाना । देख आचरज सबने माना ॥ ४ ॥
बाहर तेहि निकासन हेता । किये परिश्रम यतन समेता ॥ ५ ॥
चर्म तन्तु अरु पाशन द्वारा । किन्तु न निकसा किसी प्रकारा ॥ ६ ॥
तब सब मिल प्रभु पास सिधाये । समाचार सब शरठ सुनाये ॥ ७ ॥
सुनकर विश्व पति भगवाना । आये जहँ पर शरठ महाना ॥ ८ ॥
देख उसे पाछे भगवाना । वाम हस्त ते बाहर आना ॥ ९ ॥
हरि कर द्वारा स्पर्शित कियऊ । तप्त कनक सम उस तनु भयऊ ॥ १० ॥

दोहा- **तदा रूप सुर सम धरा, अब हरि कृपा निधान ।**
जानत यद्यपि हाल सब, बनकर किन्तु अजान ॥ १२८॥

चौ- पूछन लगे अहो महाभागू । तुम हो कवन कहो मम आगू ॥ १ ॥
सुर उत्तम जानत मैं तोहीं । तसु वृतान्त सकल निज मोंही ॥ २ ॥
कवन पाप हे भद्र तुम्हारी । भई अधोगति अति दुखकारी ॥ ३ ॥
पूछा हे नृप यों सुख धामा । बोला वह कर प्रभुहिं प्रणामा ॥ ४ ॥
मैं इक्ष्वाकु पुत्र नृगराया । सब दानिन में श्रेष्ठ कहाया ॥ ५ ॥
ऐसी कवन बात जगमाँही । जो न उसे तुम जानत नाँही ॥ ६ ॥
तो भी आज्ञा मान तुम्हारी । मम घटना वरणूँ प्रभु सारी ॥ ७ ॥
जे ते रज कण महि के ऊपरं । जे ते तारा दीखत अम्बर ॥ ८ ॥
दीन्हा मैं विप्रन गौदाना । नहीं कोइ उसका परमाना ॥ १० ॥

दोहा- **कपिल वर्ण वत्सा सहित, तरुणी कंचन श्रृङ्गि ।**
रौप्य खुरी न्यायार्जिता, पयास्विनी वर अङ्गि ॥१२६॥क
मालावर भूषण सहित, कर सुअलंकृत भारि।
दियो नाथ गौदान मैं, विप्रन तप श्रुति धारि ॥ १२६॥ख

चौ- हय गज दासी महि धन कंचन । तिल शय्या चांदी पट स्यन्दन ॥ १ ॥
किय मैंने मख भली प्रकारा । खनवाये सर कूप अपारा ॥ २ ॥
एतो करत नाथ मम ऊपर । आयो संकट एक भयंकर ॥ ३ ॥
एक बार कोइ प्रतिग्रह हीना । रहा विप्र इक वेद प्रवीना ॥ ४ ॥
उसकी गौ मम गोधन अन्दर । आन मिली कोई अवसर पाकर ॥ ५ ॥
प्रात अजानत वहि गौ स्वामी । दीन्ही मैं इक द्विज प्रति नामी ॥ ६ ॥
जब ले दान विप्र गृह आया । मिला पंथ प्रथम द्विज राया ॥ ७ ॥
यह गैया हे द्विज नहि तोरी । बोला प्रति ग्रहि गैया मोरी ॥ ८ ॥
करत विवाद परस्पर भारी । आये दोउ द्विज मोर अगारी ॥ ९ ॥
बोला प्रति ग्राही द्विजराई । तुम करते गैया यह पाई ॥ १० ॥

दोहा- **प्रथम विप्र कहने लगा, ऐसी है यदि बात ।**
तो मम गैया चोर कर, करी नृपति तुम घात ॥ १३० ॥

चौ- भयो भ्रमित यों सुन मन मोरा । व्यापा मुझको अति दुःख घोरा ॥ १ ॥
तब विप्रन से दोउ कर जोरी । करी नाथ मैं विनय बहोरी ॥ २ ॥
हे द्विज राज सुनौ मम वानी । देऊँ लक्ष धेनु बड़खानी ॥ ३ ॥
मैं सेवक हे द्विजों तुम्हारा । यह अपराध अजान हमारा ॥ ४ ॥
मुझ पर कृपा करो अब भारी । नरक पतन ते लेउ उबारी ॥ ५ ॥
बोला गौ स्वामी सुनु राई । लक्ष धेनु मुझको न जँचाई ॥ ६ ॥
मुझको तो चाहिय गौ अपनी । लक्ष धेनु मुझको ना रखनी ॥ ७ ॥
यों कह चला गया द्विज योंही । प्रति ग्राही द्विज भी वह सोही ॥ ८ ॥
कहे वचन मुझसे सुनु राजन । लक्ष धेनु से नहीं प्रयोजन ॥ ९ ॥
ऊपर देवउ बीस हजारी । तदपि न राखूँ गाय तुम्हारी ॥ १० ॥

दोहा- **प्रति ग्राही द्विज भी प्रभो, यों कह कर निज गेह ।**
चला गया तब वाद में, भयो रंज मम देह ॥१३१॥

चौ- उसी समय आकर यमदूता । बाँधी पाश गले मजबूता ॥ १ ॥
यम समीप मोहि तुरत पठाया । बोले तदा वचन यमराया ॥ २ ॥

हे नृप प्रथम अशुभ शुभ दोऊ । भोगऊ कवन करम कहु सोऊ ॥ ३ ॥
दान धरम का अन्त तुम्हारा । पाया हमना किसी प्रकारा ॥ ४ ॥
भोगूँ अशुभ करम यमराया । होउ पतन इतियम फरमाया ॥ ५ ॥
ज़व यों वचन कहे यम राई । तत्क्षण पतन भयो मम साँई ॥ ६ ॥
पतन समय मैंने इमि देखा । भयो रूप मम शरट विशेषा ॥ ७ ॥
मैं दानी द्विज भक्त उदारी । सदा भक्ति रत रहा तुम्हरी ॥ ८ ॥
यहि कारण उत्कट अभिलासा । लागी तव दरशन हित खासा ॥ ९ ॥
पूर्व जनम की स्मृति हे भगवन । भई नष्ट नहिं अव तक मे मन ॥ १० ॥

दोहा- **योगीजन भी आपका, केवल करते ध्यान ।**
वे भी हे हरि आपको, सके नहीं पहिचान ॥ १३२ ॥

चौ- दुर्लभ दरसन पा तव ऐसे । भयो सुलभ हे प्रभु मैं कैसे ॥ १ ॥
मैं तो नाथ अनेक प्रकारा । दुःखद व्यसनन फँसा अपारा ॥ २ ॥
हो प्रभु दर्शन तभी तुम्हारा । जग चवकर से हो छुटकारा ॥ ३ ॥
देव देव हे कृष्ण कृपालू । पुरुपोत्तम हे दीनदयालू ॥ ४ ॥
पुरुपोत्तम नारायण साँई । व्यक्त अव्यक्त भक्त सुखदाई ॥ ५ ॥
जगन्नाथ अच्युत हृषिकेशा । पुण्य श्लोक अव्यय विपुधेशा ॥ ६ ॥
हे अविनासी सव घटवासी । काटी तुम मोरी यम पासी ॥ ७ ॥
अव हे प्रभु मैं सुरपुर जाऊँ । तुम से एक विनय यों गाऊँ ॥ ८ ॥
जहाँ कहीं हो गमन हमारा । विसरूँ ना पद कमल तुम्हारा ॥ ९ ॥
वन्दों सर्वभाव भगवन्ता । वासुदेव श्री कृष्ण अनन्ता ॥ १० ॥

दोहा- **योगेश्वर मायापति, लोक पिता जगदीश ।**
लीलाधर करुणानिधि, मोक्ष फलद लक्ष्मीश ॥ १३३॥

चौ- यों कह कीन्ह परिक्रमचारी । सीस झुकाय चरण गिरधारी ॥ १ ॥
ले आज्ञा नृग दया निधाना । गयो स्वर्ग पुनि चढ़कर याना ॥ २ ॥
अव कुटुम्ब सन्मुख यदुराई । क्षत्रिन प्रति शिक्षा यों पाई ॥ ३ ॥
स्वल्प विप्रधन अनल समाना । तेजस्विन भी दुर्जर माना ॥ ४ ॥
निज को समझत वश अभिमाना । अरे व्यर्थ का नृपति महाना ॥ ५ ॥
कैसे पचा सकहिं धन विप्रन । नहि संशय राखो तुम निजमन ॥ ६ ॥
अपच रोग से भी अति घातक । महिसुर धन तो सव कुल नाशक ॥ ७ ॥
गरल हलाहल विष ना माना । उसकी होत चिकित्सा नाना ॥ ८ ॥

विप्रन का धन ही विष गाया । उसका ना जग बीच उपाया ॥ ९ ॥
खावत गरल हलाहल कोई । केवल निज प्राणन वह खोई ॥ १० ॥

दोहा- **अनल नीर ते शान्त हो, पर विप्रन धन आग ।**
मूल सहित सब वंश को, दे डारत वह दाग ॥ १३४ ॥

चौ- सम्मति बिन भोगहिं धन विप्रन । नासहिं तीन पुस्त वह तत्क्षन ॥ १ ॥
बल पूर्वक करहीं उपभोगा । तासू वंश सकल क्षय होगा ॥ २ ॥
निज सह पुस्त एक अरु बीसा । डारे नरक मध्य यम इशा ॥ ३ ॥
राज रमा मद अंध नृपाला । करहिं न विप्रन का प्रति पाला ॥ ४ ॥
उल्टा विप्रन का धन हड़पे । नरक अनल बीचे वह तडफे ॥ ५ ॥
विप्रन का धन जो कोई हड़पहिं । मानो साफ नरक पथ करहिं ॥ ६ ॥
विप्रवृत्ति को हरहिं जो कोई । पाछे दुखी होय द्विज रोई ॥ ७ ॥
भीजहिं रज कण अश्रुन द्वारा । सत्य सुनो यह वचन हमारा ॥ ८ ॥
तावत वर्ष विप्र धन हारी । तड़फहिं कुंभी पाक मँझारी ॥ ९ ॥
ब्रह्म वृत्ति निज दत पर दत्ता । हरण करण बीचे आसत्ता ॥ १० ॥

दोहा- **साठ सहस वह वरष लौं, होवत कीट पुरीश ।**
यहि कारण ब्रम्हांश को, रखहिं न कोष महीश ॥ १३५॥

चौ- विप्र द्रव्य ना द्रव्य हमारा । जे नृप लोभी द्विज धन द्वारा ॥ १ ॥
शत्रुन बीच पराजित होई । राज्य भ्रष्ठ स्वल्पायुष सोई ॥ २ ॥
सुनौ सकल तुम मम परिवारी । मृत्यु बाद हों सर्प करारी ॥ ३ ॥
करें विप्र यदि कोड़ अपराधा । करो तासु तुम प्रेम अगाधा ॥ ४ ॥
मारहिं ताड़हिं शापहिं ब्राह्मन । करो तदपि उसको तुम वन्दन ॥ ५ ॥
करूँ यथा वन्दन मैं विप्रन । करो तथा तुम भी उन वन्दन ॥ ६ ॥
मानहि नहिं आदेश हमारा । पावहिं दंड महा मम द्वारा ॥ ७ ॥
चोरहिं छीनहिं जे धन विप्रन । देवहिं यम उसको दुख न रुकन ॥ ८ ॥
देखो अनजाने नृग राजा । उन विप्रन का कीन्ह अकाजा ॥ ९ ॥
उसका फल देखा तुम नैना । पाछे हे कौरव कुल ऐना ॥ १० ॥

दोहा- **सबको यह उपदेश दे, जग पावन भगवान ।**
सब पुत्रन को संग ले, गये महल दरम्यान ॥ १३६ ॥

चौ- श्री शुक कहे सुनौ कुरु राजा । बल निज मित्रन देखन काजा ॥ १ ॥
रथारूढ हो गोकुल आये । देख उन्हें वृज जन हरसाये ॥ २ ॥

गोपन ते आलिङ्गित रामा । मात पितहिं पुनि कीन्ह प्रनामा ॥ ३ ॥
राम हेतु आशिष उन दयऊ । यशुमति नन्द वचन पुनि कहऊ ॥ ४ ॥
हे वृष्णी वर हे जगदीश्वर । अनुज समेत सदा तुम हम पर ॥ ५ ॥
राखो अनुकम्पा निजभारी । सव विध रक्षा करो हमारी ॥ ६ ॥
यों कह बल निज अंक विठाये । कर आलिंगन अश्रु वहाये ॥ ७ ॥
आये वृद्ध गोप नंद धामा । उन हेतू बल कीन्ह प्रमामा ॥ ८ ॥
गोप कनिष्ठ वहाँ पर आये । संकर्षण प्रति सीस नवाये ॥ ९ ॥
हास्य व हस्त ग्रहादिक द्वारा । पूछी कुशल सकल परिवारा ॥ १० ॥

दोहा- **पूछी श्री बलराम से, यदुअन कुशल गुवाल ।**
कंज नयन श्री कृष्ण का, पूछा पुनि सब हाल ॥ १३७॥

चौ- हैं न कुशल सब बन्धु तुम्हारे । सुमिरत वा नहिं हमें मुरारे ॥ १ ॥
कंसादिक सब दुष्ट संहारे । सागर तट बस सह परिवारा ॥ २ ॥
लीन्हो अब तुम दुर्ग सहारा । सागर तट बस सह परिवारा ॥ ३ ॥
यह सब भई खुशी की बाता । कीन्हे जो तुम शत्रु निपाता ॥ ४ ॥
सब गोपी हँसि वचन उचारी । तिय जन वल्लभ कृष्ण मुरारी ॥ ५ ॥
है न सुखी हे बल निज धामा । कहो हाल उन पूरण कामा ॥ ६ ॥
करते सुमिरण कबहुँ कि नाँही । नन्द यशोमति मात पिताहीं ॥ ७ ॥
मात पिता के दरसन काजू । आवहिं यहाँ कदा वृजराजू ॥ ८ ॥
कबहूँ सेवा राम हमारो । सुमिरण करत न करत मुरारी ॥ ९ ॥
जिनके हेत सुनो बलरामा । पति सुत स्वजन तजे हम बामा ॥ १० ॥

दोहा- **तदपि त्याग हमको यहाँ, चले गये वे योंहि ।**
सुनौ राम वे कृष्ण तो निकसे, अति निरमोहिं ॥ १३८॥

चौ- ऐसे पुरुषन ऊपर रामा । क्यों विश्वास करे हम बामा ॥ १ ॥
उस कृतघ्न ऊपर पुर नारी । रख रहि श्रद्धा कवन प्रकारी ॥ २ ॥
गोपी एक वदत इमि बानी । कहो कथा मत तासु सुजानी ॥ ३ ॥
अपर कथा बोलो तुम आली । नहि उस बात कपट से खाली ॥ ४ ॥
हम बिन उनका काल गुजारा । होवत हे सखि येन प्रकारा ॥ ५ ॥
सुमिरण कर इमि हरि की लीला । करने लगीं रुदन मतिशीला ॥ ६ ॥
हरि संदेश सुनाकर रामा । दीन्हो धीरज तब वृज बामा ॥ ७ ॥

राजन मधुमाधव दोउ मासा । कीन्हो हलधर वहाँ निवासा ॥ ८ ॥
पहुँच यमुना उपवन रामा । निशा बीच वेष्टित वृज वामा ॥ ६ ॥

दोहा- **पूर्ण चन्द्र के समय में, कुमुदिनि गंध अपार ।**
तब वृज वनितन संग में, कीन्हा राम विहार ॥ १३६ ॥

चौ- तदा वरुण ते प्रेषित सुन्दर । देवी नाम वारुणी आकर । १ ॥
प्रकटी तरु कोटन ते राया । फैली गंध वहाँ सुखदाया ॥ २ ॥
सूँघी तासु गंध पुनि रामा । मदिरा पान किये सह वामा ॥ ३ ॥
मद विह्वल लोचन युतरामा । गायन गान करत संग वामा ॥ ४ ॥
उपवन बीच लगे वे विचरन । हो मदमत्त सुनो कुरुराजन ॥ ५ ॥
कानन कुंडल एक सुशोभित । गल वैजन्ती माल विभूषित ॥ ६ ॥
स्वेदविन्दु युत भूषित आनन । ओसविन्दु जिमि सोभित पातन ॥ ७ ॥
जल क्रीड़ा हित यमुन बुलाई । मत्त मान उन वह ना आई ॥ ८ ॥
देख अनागत भानु कुमारी । भये कुपित तब हलधर भारी ॥ ६ ॥
बोले वचन अरी सुन पापन । कीन्ह अनादर तुम मम वचनन ॥ १० ॥

दोहा- **काम चारिणी भानुजा, लख हलाग्र यह मोर ।**
इसके द्वारा खंड सत, करूँ अभी मैं तोर ॥ १४० ॥

चौ- हे नृपजन वह यों फटकारी । भई भीत तब भानु कुमारी ॥ १ ॥
गिरी तदा आकार बल चरणन । बोली वचन वाद कर वन्दन ॥ २ ॥
राम हे राम महाभुजधारी । जान सकी ना शक्ति तुम्हारी ॥ ३ ॥
शेष रूप धर जिन कण ऊपर । अणुसम धरी मही सह भूधर ॥ ४ ॥
अहो भक्त वत्सल भगवन्ता । जाना ना तव वीर्य अनन्ता ॥ ५ ॥
त्यागो राम मुझे इस बारी । करूँ वन्दना पाद तुम्हारी ॥ ६ ॥
जब यों यमुना वचन सुनाये । त्याग उसे जल भीतर आये ॥ ७ ॥
जल क्रीड़ा कर गोपिन संगा । निकसे बहि पुनि करत प्रसंगा ॥ ८ ॥
आई रमा वहाँ उस काला । दीन्हे अम्बर भूषण माला ॥ ६ ॥
धारे नील वसन बल सुन्दर । सोभित चन्दनादि तिर ऊपर ॥ १० ॥

दोहा- राम वीर्य की सूचना, देकर यमुना नीर ।
आजु तलक भी वह रहा, तिरछा हो कुरुवीर ॥ १४१॥क
बीती निशा अनेक यों, वृज में रमण करन्त ।
तदपि निशा सब एक ही,व्यापी उन भगवन्त॥१४१॥ख

चौ- बोले श्री शुकदेव दयालू । गये नन्द बृज राम कृपालू ॥ १ ॥
तदा करूपपति पौंड्रक नामा । भेजा दूत कृष्ण के धामा ॥ २ ॥
दूतानन सम्वाद पठाया । वासुदेव सबने मोहिं गाया ॥ ३ ॥
था वह नृपति महा अज्ञानी । बोलत मूर्ख उसे इमि बानी ॥ ४ ॥
तुम ही वासुदेव भगवन्ता । तुम अवतारित जगत नियन्ता ॥ ५ ॥
इसका रहा नृपति फल ऐसा । समझन लगा स्वयं हरि जैसा ॥ ६ ॥
क्रीड़ा बीच यथा लघु बाला । कल्पित देख उसे नरपाला ॥ ७ ॥
होवत उन लघु बालन द्वारा । नृप समान उस संग व्यवहारा ॥ ८ ॥
त्यों वह मन्द बुद्धि अज्ञानी । करुणाधिप पौंड्रक अभिमानी ॥ ९ ॥
यों अचिन्त्य गति हरि की लीला । जान सका ना वह मति ढीला ॥ १० ॥

दोहा- **हरि रहस्य जाने बिना, बुलवा कर निज दूत ।**
प्रेषित कीन्हा द्वारका, समझाकर मजबूत ॥ १४२ ॥

चौ- जब वह दूत द्वारिका आया । सभाबीच सम्वाद सुनाया ॥ १ ॥
मैं ही वासुदेव ना दूजा । करते सबल अरे मम पूजा ॥ २ ॥
कृपा हेतु प्राणिन के ऊपर । लीन्हा मैं अवतार महीपर ॥ ३ ॥
वासुदेव मिथ्या निज नामा । धरा अरे तुम यदुकुल धामा ॥ ४ ॥
त्यागो नाम अरे तुम येहू । मोरे चिन्ह सभी तज देहू ॥ ५ ॥
आवो शरण अरे तुम मेरी । करो मूर्खता वश मति देरी ॥ ६ ॥
यदि स्वीकार नहीं यह बानी । करो युद्ध मों संग अभिमानी ॥ ७ ॥
श्री शुकदेव कहे सुनु राया । पौंड्रक दूत कथन इमि गाया ॥ ८ ॥
दूत कथन सुन यादव सारे । उच्च स्वर से हँसे अपारे ॥ ९ ॥
उन परिहास कथा अनुराया । दूत हेतु हरि वचन सुनाया ॥ १० ॥

दोहा- **निज राजा के पास में, अभी दूत तुम जाऊ ।**
यह मेरा सम्वाद सब, उसको तुरत बताऊ ॥ १४३ ॥

चौ- अरे मूढ यह चिन्ह हमारे । तजूँ न मैं तव डर के मारे ॥ १ ॥
संगर बीच अरे अज्ञानी । वध कर तोर अरे अभिमानी ॥ २ ॥
ओंधे मुख डारूँ इस भूपर । छूटहिं चिन्ह तदा यह तुझ पर ॥ ३ ॥
गृध व कंक बटेरन द्वारा । वेष्टित कर तोहिं भली प्रकारा ॥ ४ ॥
पुर सिंहन क़ी शरण दिलाऊँ । उन साथिन को मार भगाऊँ ॥ ५ ॥
जिनके बल पर तू अति फूला । अरे दुष्ट तू निज को भूला ॥ ६ ॥

ले यह दूत हरि सन्देशा कहा जाय निज पास नरेशा ॥ ७ ॥
निज स्यन्दन चढ कर यदुराई । काशी पर इत करी चढाई ॥ ८ ॥
देखी पौंड्रक कृष्ण चढाई । दौ अक्षौहिणि संग लिवाई ॥ ९ ॥
युद्ध हेतु पुर बाहर आवा । अस्त्र शस्त्र भलि भाँति सजावा ॥ १० ॥

दोहा- **काशीपति पौंड्रक सखा, जो अति युद्ध प्रवीन ।**
उसकी रक्षा करन को,ले अक्षौहिणि तीन ॥ १४४ ॥

चौ- समर भूमि बीचे करि क्रोधा । गयो तासु अनु ले षड़योधा ॥ १ ॥
युद्ध बीच हरि पौंड्रक देखा । निज समान धरि रूप विशेषा ॥ २ ॥
रंग भूमि बीचे नट जैसे । लाग रहा नृप पौंड्रक वैसे ॥ ३ ॥
शंख व चक्र गदा धनुधारी । कौस्तुभ वनमाला गल न्यारी ॥ ४ ॥
पीत पट्ट गरुड ध्वज कृत्रिम । मकाराकृति कुंडल श्रुति युग्मम ॥ ५ ॥
निज समान इति कृत्रिम भेषा । हँसे कृष्ण लखि रूप विशेषा ॥ ६ ॥
परिघ व शूल गदा असि मुग्दर । कृष्टि शक्ति शर प्राश व तोमर ॥ ७ ॥
ये सब आयुध शत्रुन द्वारा । हरि पर किये प्रयोग अपारा ॥ ८ ॥
इधर कृष्ण चतुरंगिणि ऊपर । त्यागे चक्र गदा असि निजशर ॥ ९ ॥
खंडि पत्ति अश्वगज स्यन्दन । किये चक्र द्वारा यदुनन्दन ॥ १० ॥

दोहा- **पौंड्रक प्रति श्री कृष्ण अव, बोले वच इस तोर ।**
हे पौंड्रक निज दूत मुख, सुनै वचन पुर मोर ॥ १४५ ॥

चौ- मम नरेश सम्वाद पठाया । त्यागो अस्त्र चिन्ह निज काया ॥ १ ॥
अरे अस्त्र अव पौंड्रक मोरे । त्याग रहा हूँ शिर पर तोरे ॥ २ ॥
राखा नाम मृपा तुम मेरा । उसे तजाय करूँ वध तेरा ॥ ३ ॥
तोसे यदि ना युद्ध रचाऊँ । तदा शरण तोरी मैं आऊँ ॥ ४ ॥
यों कह वचन तदा भगवाना । त्यागे पौंड्रक पर निज वाना ॥ ५ ॥
रथ विहीन कर चक्र चलावा । काट सीस पुनि धरणि गिरावा ॥ ६ ॥
पुनि यदुनन्दन वाण चलावा । काशीपति सिर काट गिरावा ॥ ७ ॥
गिरा सीस काशीपुर अन्दर । सखा सहित यों पौंड्रक वध कर ॥ ८ ॥
धारा हरि वपु पौंड्रक भूपा । पाया पद वह ज्योति स्वरूपा ॥ ९ ॥

दोहा- कुण्डल सह नृप द्वार पर, काशिप सीस विशाल ।
पतित देख पुरजन सभी, बोले यों उस काल ॥ १४६॥

चौ- किसका सीस यहाँ पर कैसे । आवा वचन कहे सब ऐसे ॥ १ ॥
पुनि नृप सीस प्रजाजन जाना । भये दुखी तिय बन्धु महाना ॥ २ ॥
पुत्रन सहित सभी नृप रानी । कीन्हा रुदन नयन भर पानी ॥ ३ ॥
नाम सुदक्षिण काशिप जाया । अन्त कर्म निज जनक कराया ॥ ४ ॥
जिसने मारे पिता हमारे । पहुँचाऊँ तेहि यम के द्वारे ॥ ५ ॥
पिता करज तब होय निवारण । यों विचार कर तदा सुदक्षिण ॥ ६ ॥
उपाध्याय निज पास बुलाया । शिव आराधन चित्त लगाया ॥ ७ ॥
बोले तदा मुदित हो शंकर । करो याचना मोसे तुम वर ॥ ८ ॥
वदत वचन अब राजकुमारा । कियो पिता वध येन हमारा ॥ ९ ॥
उसके वध का कहो उपाया । यों सुन वचन वदत गिरिराया ॥ १० ॥

दोहा- **तुम विप्रन को संग ले, सह अभिचार विधान ।**
दक्षिणाग्नि की अर्चनो, अरे सुदक्षिण ठान ॥ १४७ ॥

चौ- याते प्रमथ गणन के संगा । प्रकट होहिं तब अनल तरंगा ॥ १ ॥
करहिं पूरण काम तुम्हारा । ये ही एक उपाय न न्यारा ॥ २ ॥
किन्तु विप्र भक्तन को तजकर । हो अहिं सफल प्रयोग सभिन पर ॥ ३ ॥
यों शिव वच सुन राजकुमारा । मारण नियम सभी उन धारा ॥ ४ ॥
भयो यदा पूरण अभिचारू । मूर्तिमान तब भीषण भारू ॥ ५ ॥
तप्त ताम्र सम श्मश्रु व केशा । नयन अरुण उन रूप भदेशा ॥ ६ ॥
निकसे हवन कुंड के द्वारा । अग्नि देव जिन वदन करारा ॥ ७ ॥
दंष्ट्रा उग्र व भृकुटि करारा । बरसावत निज नयन अंगारा ॥ ८ ॥
नग्न त्रिशूल घुमावत इत उत । ताल प्रमाण चरण महि कम्पित ॥ ९ ॥
धारत इत उत दशा जलावत । गयो द्वारिका होकर क्रुद्धित ॥ १० ॥

दोहा- **आवत देखी अनल यों, द्वारावति दरम्यान ।**
भये भीत पुरजन यथा, मृग वन दाह समान ॥ १४८ ॥

चौ- खेलत चौसर सभा मुरारी । पहुँची प्रजा वहाँ पर सारी ॥ १ ॥
जाकर सब सम्वाद बखाना । अखिल भुवनपति हे भगवाना ॥ २ ॥
त्राहि त्राहि हम शरण तुम्हारी । करत दहन पुर अनल अपारी ॥ ३ ॥
पुरजन दुखित देख भगवाना । होउ भीत मत वचन बखाना ॥ ४ ॥
हरि तो सब अन्तर वहि ज्ञाता । जानी शिव कृत्या विख्याता ॥ ५ ॥
अब तेहि नाश करन के काजू । त्यागा चक्र तदा यदुराजू ॥ ६ ॥

भानुकोटि सम चक्र सुदरशन । प्रलय अग्नि प्रभाकर धारन ॥ ७ ॥
वह कृत्याग्नि तुरत नसाई । पुनि कृत्या काशीपुरआई ॥ ८ ॥
ऋत्विज सहित सुदक्षिण संगा । भस्मीभूत कियो उन अंगा ॥ ९ ॥
उस अनु बाद सुदरशन आवा । कोश हस्ति रथ अश्व जलावा ॥ १० ॥

दोहा- **जारी सब वाराणसी, सभा भरन सह कोष्ठ ।**
राजमार्ग अट्टालिक ,गोपुर अरु उपकोष्ठ ॥ १४९ ॥ क
जारी यों वाराणसी, सब विधि भली प्रकारि ।
गयो सुदर्शन चक्र पुनि ,जहँ पर कृष्ण मुरारि ॥ १४९॥ख
जो यह उत्तम श्लोक की, गाथा सुनहिं सुनाय ।
वह नर सारे पाप से, तुरत मुक्त हो जाय ॥ १४९ ॥ ग

चौ- अद्‌भुत कर्मि राम की गाथा । श्रवण हेतु इच्छा मुनि नाथा ॥ १ ॥
श्री शुक कहे सुनो हे नरवर । नरक मित्र द्विविद इक वानर ॥ २ ॥
वीर्यवान मैन्द का भ्राता । जो सुग्रीव सचिव कहलाता ॥ ३ ॥
भौमासुर वध सुन वह काना । मित्र उऋण हेतू मन ठाना ॥ ४ ॥
देश नास हित भयो उतारू । जारे ग्राम व नगर अपारू ॥ ५ ॥
पुर अरु खान गोष्ठ सब जारे । शैल उठाय नगर पर डारे ॥ ६ ॥
हो आनर्त देश पर क्रुध्दित । करता यों वानर निज हरकत ॥ ७ ॥
कबहूँ सागर बीच सिधावत । दोउ करत अति नीर उछारत ॥ ८ ॥
नासे सागर तट स्थित देशन । करत कुचेष्ठा उन्हें डुबावन ॥ ९ ॥
ऋषियन के आश्रम पर जाकर । तोड़त लता वनस्पति सुन्दर ॥ १० ॥

दोहा- **यज्ञ पात्र अरु कुंड में, करके खल मलमूत ।**
दूषित करता सबन्हि को, रखता नहीं अछूत ॥ १५०॥

चौ- नर नारिन शिशुअन को लेकर । करके बन्द गिरीदरि भीतर ॥ १ ॥
पाछे शिला उठा दरि आनन । करता बन्द उसे वह राजन ॥ २ ॥
इस प्रकार वह कीश अपारा । करता प्रतिदिन अत्याचारा ॥ ३ ॥
जो कोइ दीखत नार कुलीना । करता दूषित उसे मलीना ॥ ४ ॥
एक बार शाखामृग सुन्दर । सुन कर नारिन गीत मनोहर ॥ ५ ॥
आ पहुँचा रैवत गिरि ऊपर । नारिन बीच खड़े जहँ सुन्दर ॥ ६ ॥
पुष्कर माली राम लखाये । नशा वारुणी नयनन छाये ॥ ७ ॥
गावत देख वहाँ उन हलधर । शाखा मृग शाखा पर चढ़कर ॥ ८ ॥

कम्पित किये बिपिन तरु सारे। कीन्ह किलकिला शब्द अपारे ॥ ६ ॥
देख धृष्टता कपि की भारी। हँसने लगी युवा सव नारी ॥ १० ॥

दोहा- **देखत उन वलराम के, वह खल गुदा दिखाय।**
करत निरादर नारियन, निज भृकुटिन मटकाय ॥१५१॥

चौ- देख धृष्टता कपि की भारी। क्रुद्धित भये तदा बलधारी ॥ १ ॥
पाहन खंड उठा इक भारी। त्यागा कपि पर राम खरारी ॥ २ ॥
आवत पाहन खंड लखावा। कर छल बल कपि तुरत बचावा ॥ ३ ॥
अब कपि मदिरा कलश उठावा। फोड़ उसे खल भूमि गिरावा ॥ ४ ॥
रामहिं कोप दिलावन काजू। फारे युवतिन पट कपि राजू ॥ ५ ॥
कपि की देख नीचता भारी। भये कुपित अब राम खरारी ॥ ६ ॥
कीन्हे चौपट देश अनेका। करी नीचता त्याग विवेका ॥ ७ ॥
करूँ हनन इसको मैं आजू। यों मन सोच तदा यदुराजू ॥ ८ ॥
हल मूसल निज हाथ उठावा। उत कपिशाल उठा इक धावा ॥ ६ ॥
राम सीस पर कीन्ह प्रहारा। तेहि बल तुरत चूर्ण कर डारा ॥ १० ॥

दोहा- **कपि सिर ऊपर राम अब, मूसल कीन्ह प्रहार।**
हर मस्तक उस सीस ते,वही रूधिर की धार ॥ १५२ ॥

चौ- अन्य वृक्ष कपि एक उखारा। राम सीस ऊपर दे मारा ॥ १ ॥
आवत तरु सिर राम लखाया। कीन्ह खंड शत भूमि गिराया ॥ २ ॥
एवं कपि तरु वारम्बारा। राम सीस पर तजे अपारा ॥ ३ ॥
कोध्रित राम वृक्ष अब सारे। खंड खंड कर महि पर डारे ॥ ४ ॥
एवं करत युद्ध वह वानर। कियो विपिन निवृक्ष अघाकर ॥ ५ ॥
पुनि बलराम सीस पर भारी। शिला उठाय कीश दे मारी ॥ ६ ॥
आवत लखी शिला सिर ऊपर। करी चूर्ण वह तत्क्षण हल घर ॥ ७ ॥
बाँध मुष्टिका कपि अब भारी। राम वक्ष ऊपर दे मारी ॥ ८ ॥
यादवेन्द्र भी क्रुधित होकर। निज हल मूसल तुरत तजाकर ॥ ६ ॥
बाँध मुष्टिका अब गल वानर। कीन्ह प्रहार अतीव भयंकर ॥ १० ॥

दोहा- **गिरा भूमि ऊपर तदा, रूधिर वमन कर भारि।**
पतत तासु गिरि तरुन सह, कम्पित भये अपारि ॥१५३॥क
नभ से अब होने लगी, पुष्पन वृष्टि अपारि।
देव मुनी गंधर्व गण, कीन्हा जय जय कारि ॥ १५३॥ख

दुष्ट द्विविद का हनन कर, पुरुषन ते भगवान ।
गये द्वारिका पुर विषै ,स्तूयमान वलवान ॥ १५३ ॥ ग

चौ- श्री शुक कहे सुनो हे राजन । सुता लक्ष्मणा नाम सुयोधन ॥ १ ॥
कीन्ही हरण स्वयम्वर अन्दर । जाम्बवती सुत साम्ब वलाकर ॥ २ ॥
तब क्रोधित हो कौरव भारी । बोले वचन सभी वलधारी ॥ ३ ॥
दुर्विनीत यह बाल अपारा । कीन्हा अति अपमान हमारा ॥ ४ ॥
जो बलपूर्वक सुता हमारी । कीन्ही हरण स्वयंवर भारी ॥ ५ ॥
बाँध इसे कारागृह लाऊ । यदुवंशिन ते भय मत खाऊ ॥ ६ ॥
पा हमसे महि करत गुजारा । यदुवंशी क्या करहिं हमारा ॥ ७ ॥
बद्ध पुत्र सुन यादव आये । भग्न दर्प हो वापिस जावे ॥ ८ ॥
यों सब भीष्म पिता अनुमोदित । कर्ण भूरिशल मख ध्वज क्रोधित ॥ ६ ॥
दुर्योधन सह कौरव सारी । साम्ब वन्ध हित करी तयारी ॥ १० ॥

दोहा- **अब अनुधावत देख उन, लेकर निज धनु वान ।**
खड़ा अकेला साम्ब भी, रणहित सिंह समान ॥ १५४॥

चौ- ठहर ठहर इति कही महीपा । पहुँचे कौरव साम्ब समीपा ॥ १ ॥
अब उन वाणन जाल बिछाया । तदपि न साम्ब जरा घबराया ॥ २ ॥
कर अब निज धनु की टंकारा । त्यागे हरि सुत बाण करारा ॥ ३ ॥
पृथक पृथक कर्णादिक वीरा । किये विद्ध तजि तीक्षण तीरा ॥ ४ ॥
चार वाण ते वाहन चारी । रथी सारथी साम्ब विदारी ॥ ५ ॥
तासु कर्म की करी बढ़ाई । वे पट्वीर सहित कुरुराई ॥ ६ ॥
अब छै वीर साम्ब पर धाये । चार अश्व तेहु मार गिराये ॥ ७ ॥
सायक एक सारथी मारा । अन्य काट धनु महि पर डारा ॥ ८ ॥
भये साम्ब इमि स्यन्दन हीना । बाँधा कुरुअन साम्ब प्रवीना ॥ ६ ॥
निज कन्या सह निजपुर लाये । उत नारद द्वारावति आये ॥ १० ॥

दोहा- **सुत वन्धन मुनि वदन सुनि, यादव क्रुद्ध अपार ।**
युद्ध करन कुरुअन प्रति, तत्क्षण भये तयार ॥ १५५ ॥

चौ- किन्तु राम कुरु वृष्णिन माँही । कलह वढावन की रुचि नाँही ॥ १ ॥
कीन्हो शमन क्रोध उन भारी । ले कुलवृद्ध विप्र निज लारी ॥ २ ॥
गये हस्तिनापुर बलरामा । ठहरे उपवन एक ललामा ॥ ३ ॥
कुरुपति यहँ उद्धव भिजवाये । नगर वहि बलराम तजाये ॥ ४ ॥

कुरुपति प्रति उन सीस नवाई । राम आगमन खबर सुनाई ॥ ५ ॥
सुनी खबर यहँ राम पधारे । भये मुदित कौरव गण सारे ॥ ६ ॥
उद्धव की अर्चन कर पाछे । लेकर सभी उपायन आछे ॥ ७ ॥
गये राम के सन्मुख सारे । धरी उपायन राम अगारे ॥ ८ ॥
कर कौरव आलिंगन रामा । पूजन कर पुनि कीन्ह प्रणामा ॥ ९ ॥
पूछी कुशल सभी परिवारिन । बोले वचन राम मनहारिन ॥ १० ॥

दोहा- **अरे कौरवों वचन मम, सुनो लगाकर ध्यान ।**
उग्रसेन नृपराज का, लाया मैं फरमान ॥ १५६ ॥

चौ- करो शीघ्र जो कहा नरेशा । वरना विगरन का अन्देशा ॥ १ ॥
अरे कौरवों तुम सब मिलकर । कीन्हा बन्धन साम्ब हराकर ॥ २ ॥
बिगरहि ना सम्बन्ध हमारा । परे फूट ना किसी प्रकारा ॥ ३ ॥
अब तुम सब मति रार बढाऊ । साम्बहि बधू सहित पहुँचाऊ ॥ ४ ॥
काम पाल यों वचन सुनावा । कुरुअन क्रोध बहुत मन छावा ॥ ५ ॥
अहो प्रचण्ड काल गति भारी । चढै पनहि अब सीस हमारी ॥ ६ ॥
यदुवंशनि संग किसी प्रकारा । भयो व्याह सम्पर्क हमारा ॥ ७ ॥
करत तुल्यता जो हम संगा । खान व पान व शयन प्रसंगा ॥ ८ ॥
इनको नृप आसन हम दीन्हा । नृपवि बनाय बराबर कीन्हा ॥ ९ ॥
श्वेत छत्र पंखा अरु चामर । शंख व मुकुट नृपासन सुन्दर ॥ १० ॥

दोहा- **राजोचित साहित्य का, करते ये उपभोग ।** १५८
कीन्हि अपेक्षा इन प्रति, जान बूझ हम लोग ॥ ~~१५६~~॥क
बस बस अब सब हो चुका, अब यदुअन के पास ।
राज चिन्ह राखो मती, करदो इन्हे उदास ॥ १५७ ॥ ख

चौ- यथा सर्प को दूध पिलाना । होवत घातक अरे महाना ॥ १ ॥
राज चिन्ह लेकर ये हमसे । करत काम विपरीत सबन्ह से ॥ २ ॥
देखो इन सब लाज गँवाई । जो हम पर निज हुकुम चलाई ॥ ३ ॥
लानत इनकी आज्ञा ऊपर । करो उपेक्षा मत यदुअन पर ॥ ४ ॥
सिंह ग्रास जिमि मेष न खावे । नृप पद कौरव कृपा न पावे ॥ ५ ॥
भीष्म द्रोण अर्जुन करणादिक । जिनकी कृपा बिना सुर नायक ॥ ६ ॥
भोग सकत नृप चिन्ह कदा ना । पुनि यदुअन का कौन ठिकाना ॥ ७ ॥
राम हेतु यों वचन सुनाकर । वे दुर्जन आये अब निज पुर ॥ ८ ॥

कुरुअन के सुन वचन कठोरा । कीन्हो क्रोध राम अति घोरा ॥ ९ ॥
देख दुष्टता उनकी भारी । बोले वचन युँ राम खरारी ॥ १० ॥

दोहा- **मद उन्मत्त असाधु जन, कबहूँ शान्ति न चाहि ।**
शमन हेतु पशुअन समाँ, दे इन दंड अथाहि ॥ १५८ ॥

चौ- चाहा मैं इनका कल्याना । जो क्रुद्धित यादव भगवाना ॥ १ ॥
कर उन शमन यहाँ मैं आवा । मम मत इन मतिमन्द न भावा ॥ २ ॥
देखो इन सबकी मति मारी । कलह शील खल पाप प्रचारी ॥ ३ ॥
कीन्हा इन मेरा अपमाना । कहकर वचन कठोर महाना ॥ ४ ॥
लोकपाल जिन आज्ञा माने । उग्रसेन इन नृप ना माने ॥ ५ ॥
पारिजात तरु जो हर लाये । सदा सुधर्मा सभा सुहाये ॥ ६ ॥
वे श्री कृष्ण चन्द्र भगवाना । इन नृप आसन योग्य न माना ॥ ७ ॥
सेवत रमा चरण नित जासू । क्या नृप चिन्ह योग ना तासू ॥ ८ ॥
लोक पाल ब्रह्मादिक सूरी । धारत निज सिर जिन पद मूरी ॥ ९ ॥
जो पद तीर्थन तीर्थ बनाही । क्या वे योग्य नृपासन नाँही ॥ १० ॥

दोहा- **मही खंड भोगत अरे, यादव कौरव दत्त ।**
कहते लाज न आवती, श्री मद में मद मत्त ॥ १५९ ॥

चौ- हम पनही कुरुवंशी सीसा । भाषत वचन कुवज्र सरीसा ॥ १ ॥
होकर धन मद में मतवाले । जैसे हमको यहि प्रति पाले ॥ २ ॥
इनकी रुक्ष श्रवण कर वानी । कैसे सहन करहिं कोइ प्रानी ॥ ३ ॥
कौरव हीन करूँ महि आजू । यों कह कुपित होय यदुराजू ॥ ४ ॥
करहीं भस्म त्रिलोकिहिं जैसे । अनल नयन हो गय उन ऐसे ॥ ५ ॥
अब निज हल लेकर तत्काला । हो गय खड़े तुरत यदुपाला ॥ ६ ॥
कर हलाग्रते घोर प्रहारा । नगर हस्तिना तुरत उखारा ॥ ७ ॥
गंगा ओर डुबावन हेतू । लगे खींचने यादव केतू ॥ ८ ॥
घूमत यथा यथा जल याना । देखा नगर गंग पतमाना ॥ ९ ॥

दोहा- **हो कौरव भयभीत अब, प्राणन रक्षा काज ।**
साम्ब लक्ष्मणा अग्रकर ,गये जहाँ यदुराज ॥ १६० ॥

चौ- जाकर शरण राम की सारे । नम्र होय इमि वचन उचारे ॥ १ ॥
राम राम हे अखिल अधारा । जाना विक्रम नहीं तुम्हारा ॥ २ ॥
हम कुबुद्धि अति मूढ अपारा । करो क्षमा अपराध हमारा ॥ ३ ॥

जग स्थिति पालन नाशन हारे । तुम ही केवल जगत अधारे ॥ ४ ॥
हे अनन्त भूमंडल सारा । अणुसमान निज शिर तुम धारा ॥ ५ ॥
आवत महा प्रलय भगवन्ता । कर निरुद्ध जग उदर अनन्ता ॥ ६ ॥
करत शयन तुम शेष स्वरूपा । जान सके ना रूप अनूपा ॥ ७ ॥
अखिल सीख हित कोय तुम्हारा । नहीं द्वेष वस किसी प्रकारा ॥ ८ ॥
विश्वनाथ अव्यय हल धारी । हम सब आये शरण तुम्हारी ॥ ९ ॥
नत मस्तक हम करें प्रणामा । होउ मुदित अब हे बलरामा ॥ १० ॥

दोहा- **यों शरणागत आ गये, मिल कर कुरू तमाम ।**
होय मुदित बोले वचन, अब हे नृप बलरामा ॥ १६१ ॥

चौ- होउ न भीत अरे तुम सुन लो । मोरे वचन सव्य यह गुन लो ॥ १ ॥
यों दीन्हा जब अभय प्रदाना । तब कौरव गण अति सुख माना ॥ २ ॥
अब दुर्योधन मन हुलसाये । द्वादश शत गज युवा मँगाये ॥ ३ ॥
एक अपुत सैन्धव हय आछे । षट् सहस्र सुन्दर रथ पाछे ॥ ४ ॥
सहस एक दासी वय सोला । दीन्हो यौतुक कनक अतोला ॥ ५ ॥
हे नृपवर यो पूरण कामा । मित्रन ते अभिनन्दित रामा ॥ ६ ॥
सब दहेज निज संग लिवाये । वधू समेत सुतहि घर लाये ॥ ७ ॥
कीन्ह प्रवेश यदा पुर अन्दर । मिले बन्धुगण सब हरषा कर ॥ ८ ॥
सभा बीच सब हाल सुनाया । बैठे जहँ यादव समुदाया ॥ ९ ॥
करि पुर आज तलक भी राई । याम्य और उन्नत दिखलाई ॥ १० ॥

दोहा- **झुका हुआ गंगा तरफ, यों वह नगर विशाल ।**
बल विक्रम की सूचना, देवत है इस काल ॥ १६२ ॥

चौ- बोले मुनी सुनौ कुरु नन्दन । नरकासुर वध सुन निज कानन ॥ १ ॥
एक अकेले कृष्ण मुरारी । सौलह सहस जो राजकुमारी ॥ २ ॥
एक काल बिच एक हि देहा । पृथक पृथक जाकर उन गेहा ॥ ३ ॥
कीन्हो परिणय केन प्रकारा । देखन यह आश्चर्य अपारा ॥ ४ ॥
नारद पुरी द्वारका आये । बीन बजाते हरि गुण गाये ॥ ५ ॥
पुष्पित वहँ आराम उद्याना । नादित द्विज अलिकुल जहँ नाना ॥ ६ ॥
निर्मल जल से भरे सरोवर । विकसित कंज अनेक मनोहर ॥ ७ ॥
कंज कुमोदिन की बौछारा । कूजत सारस हंस अपारा ॥ ८ ॥
नव लख भवन स्फटिक मणि राजत । जडित महा मरकत मणि भ्राजत ॥ ९॥

नृप पथ गली चतुष्पथ सुन्दर । शाला सभा रुचिर सुर मन्दिर ॥ १० ॥

दोहा- **नृप पथ वीथी चौक अरु, हाट भवन के द्वार ।**
सिक्त सुगन्धित वस्तुअन,सोभित सभी अपार॥१६३॥

चौ- सुन्दर ध्वजा पताकन द्वारा । नृप पथ आतप सकल निवारा ॥ १ ॥
त्वष्टा कौशल ते पुर अन्दर । निर्मित भवन अनेक मनोहर ॥ २ ॥
लोक पाल इन्द्रादिक पूजित । सोलह सहस सदन सम लंकृत ॥ ३ ॥
उन भवनन बिच एक मनोहर । गये प्रथम मुनि रुक्मिणि मन्दिर ॥ ४ ॥
छज्जे विड़ुर व स्तम्भ प्रवाला । इन्द्र नील मणि भूमि विशाला ॥ ५ ॥
त्वष्टा रचित वितान अपारा । सोभित मुक्ता दामन द्वारा ॥ ६ ॥
मणि भूषित गज दन्तन निर्मित । सुन्दर शय्या आसन सोभित ॥ ७ ॥
कंचन भूषन वसन अलंकृत । दासिन ते वह भवन सुशोभित ॥ ८ ॥
मणि कुंडल सुन्दर पट धारी । करत काम जहँ दास अपारी ॥ ९ ॥
अन्धकार गत मणि मय दीपन । निर्गत धूप अगारी जालन ॥ १० ॥

दोहा- **जान उसे जलधर शिखी, करत नृत्य भरि स्नेह ।**
कनक दंड चामर करत, रुक्मिणि सह उस गेह ॥ १६४॥

चौ- शय्या ऊपर स्थित भगवाना । देखे नारद तपो निधाना ॥ १ ॥
आवत नारद कृष्ण लखाये । शय्या त्याग तुरत उठ धाये ॥ २ ॥
दोउ कर जोरे सीस नवाये । सादर आसन पर विठलाये ॥ ३ ॥
निज करते मुनि चरण पखारे । वह जल जगद गुरू सिरधारे ॥ ४ ॥
विधि पूर्वक पूजे मुनि पाछे । बोले वचन कृष्ण अब आछे ॥ ५ ॥
हे नारद हम कवन प्रकारा । करें आज सत्कार तुम्हारा ॥ ६ ॥
बोले नारद तपो निधाना । अखिल विश्व पति हे भगवाना ॥ ७ ॥
कथन आद्भुत नहीं तुम्हारा । यह अवतार प्रभो तुम धारा ॥ ८ ॥
जग कल्याण करन खल दंडन । साधुन सन्तन के सम्मानन ॥ ९ ॥
मोक्षद चरण कमल के दरशन । कर कृतार्थ भयो मैं भगवन ॥ १० ॥

दोहा- **हो तव चरणन स्मृति यथा, करो अनुग्रह मोहि ।**
निशिदिन सुमरूँ नाम तव, यह वर देवहु मोहि ॥ १६५॥

चौ- श्री शुक बोले सुनो महीशा । गये अन्य गृह बाद मुनीशा ॥ १ ॥
चौसर खेलत वहाँ लखाये । नारिन उद्धव संग सुहाये ॥ २ ॥
पूजित मुनी वहाँ हरिद्वारा । आसनादि ते कर सत्कारा ॥ ३ ॥

हे नारद तुम यहँ कब आये । पूछा हरि इति मन हुलसाये ॥ ४ ॥
हम अपूर्ण तुम पूर्ण अपारा । तुम प्रति क्या कर्त्तव्य हमारा ॥ ५ ॥
करो जनम साफल्य हमारा । सुन यो कथन हरि के द्वारा ॥ ६ ॥
उठ नारद वहँ ते चुपचापा । गये अन्य गृह विस्मित व्यापा ॥ ७ ॥
वहँ निज शिशु अन गोद खिलावत । देखे गोविन्द लाड लडावत ॥ ८ ॥
गये अन्य गृह मुनि तप धारी । देखी वहँ मज्जन तैयारी ॥ ९ ॥
कहिं पर हवन करत प्रभु पाये । पञ्च यज्ञ कृत कही लखाये ॥ १० ॥

दोहा- **भोजन करवावत कहीं, विप्रन को भगवान ।**
देखे भोजन करत कहिं, अवशेषित पक्वान ॥ १६६ ॥

छन्द- **प्रभु जाप गायत्री करत, कहिं करत संध्योपासनं ।**
खड्ग चर्म गहाय कर, कहिं पैंतरा दिखलावतं ।
पाये कहीं गज पर चढे, कहि अश्व पर आरुडितं ।
जारहे असवार हो कहि, ऊपरे वर स्यन्दनं ।
पाये कहीं परयंक ऊपर, शयन कृत सुख पूर्वकम् ।
दीन बन्धू दीन निधि कहि, बन्दि वृन्दन वन्दितम् ॥
कहिं उद्धवादिक संग निज, शुभ सम्पति दरसावतम् ।
कहिं उत्मोत्तम वार वधुअन, संग जल क्रीड़ा रतम् ॥

दोहा- **कहिं उत्तम वस्तुन सहित, विप्रन कृत गौदान ।**
श्रवण करत देखे कही, हरि इतिहास पुरान ॥ १६७ ॥

चौ- हास्य व व्यङ्ग करत कहि पाये । प्रिया संग कहिं हँसत लखाये ॥ १ ॥
सेवमान कहिं धर्म अपारा । सेवत अर्थ काम उन द्वारा ॥ २ ॥
कहिं पर परम पुरुष कृत ध्याना । कहिं गुरु सेवा कृत भगवाना ॥ ३ ॥
विग्रह करत कहीं पर पाये । मैत्री करत कहीं दरसाये ॥ ४ ॥
कहिं पर राम संग यदुराजू । चिन्तन कृत साधुन शिव काजू ॥ ५ ॥
पुत्री पुत्रन करत सगाई । देखे कहिं यादव सुखदाई ॥ ६ ॥
कहि पुत्रिन को विदाकरावत । देखे श्वसुर गेह भिजवावत ॥ ७ ॥
श्वसुर गेह ते वापिस लावत । नाति व नातिन प्रति हरसावत ॥ ८ ॥
कहिं पर देवन यज्ञ रचावत । कहिं पर वापी कूप खनावत ॥ ९ ॥
कही मठादिक उपवन शाला । रचवावत देखे यदुपाला ॥ १० ॥

दोहा- **कहिं हय चढ यदुअन सहित, जावत मृगया काज ।**
देखे नारद देव रिषी, कृष्ण चन्द्र यदुराज ॥ १६८ ॥

चौ- भेष बदल कहिं पर यदुराया । जानन हित नारिन अभिप्राया ॥ १ ॥
विचरण करत अन्त पुर अन्दर । देखे नारद मुनि ने जाकर ॥ २ ॥
यों हरि की सब मानव लीला । हँसे देख नारत तपशीला ॥ ३ ॥
बोले अब नारद हे नृपवर । आत्मदेव जगपति योगेश्वर ॥ ४ ॥
तब माया दुर्दर्श अपारा । ब्रह्मादिक शिव सुरपति द्वारा ॥ ५ ॥
मायाविद जग में बड़ जेते । माया रूप न जानत वेते ॥ ६ ॥
कृपा प्राप्त कर नाथ तुम्हारी । जानी वह माया हम सारी ॥ ७ ॥
अब आज्ञा मोहिं करो प्रदाना । गावत यश तव दीन निधाना ॥ ८ ॥
विचरण करूँ त्रिलोकी अन्दर । यों सुन वचन वदत अब यदुवर ॥ ९ ॥
जानो मोहि धरम का कर्ता । अनुमोदन कर्ता अरु वक्ता ॥ १० ॥

दोहा- **इस कारण संसार को, धरम सिखावन काज ।**
करूँ आचरण धर्म का, सुनो सत्य मुनि राज ॥ १६९॥

चौ- लखकर माया खेल हमारा । मोहित होउ न किसी प्रकारा ॥ १ ॥
बोले श्री शुक सुनो नृपालू । यों वे यदुपति दीन दयालू ॥ २ ॥
सर्व गेह विच धर्म करन्ता । देखे यो नारद भगवन्ता ॥ ३ ॥
वीर्य अनन्त कृष्ण की माया । विस्मित भये देख मुनि राया ॥ ४ ॥
यों श्रीकृष्ण गृहिन की भाँती । धर्माचरण करत दिन राती ॥ ५ ॥
अब श्री कृष्ण चन्द्र के द्वारा । सत्कृत होकर भली प्रकारा ॥ ६ ॥
भगवत भजन करत मुनि नारद । गये वहाँ से ज्ञान विशारद ॥ ७ ॥
यों मानव पद जगपति पाकर । जग कल्याण करत गृह अन्दर ॥ ८ ॥
सोलह सहस नारियन संगा । करते हे नृप रमण प्रसंगा ॥ ९ ॥
गावहिं जो यह हरि की लीला । सुनहिं प्रेम से जो मति शीला ॥ १० ॥

दोहा- **विश्व पावनी पावहीं, भगवत भक्ति अपार ।**
सब पापन को जार कर, जावहिं हरि के द्वार ॥ १७० ॥

सोरठा - **लखि अरुणोदय काल, अरुण चूड़ धुनि कानसुन ।**
कोसत उसे नृपाल, हरि गृहीत गल सब तिया ॥ १ ॥

चौ- चालत पारिजात सुखदाता । मंद सुगंध सुवासित वाता ॥ १ ॥
छोड़त अति तव तान अपारा । उच्च स्वर निज हत गुँजारा ॥ २ ॥
वन्दीजन इन द्विज गुण नाना । बोध करावन रमा निधाना ॥ ३ ॥
करते कलरव मधुर अपारी । फुदक फुदक कर दरुअन डारी ॥ ४ ॥

होवत दुखित देख वह काला । प्रति भुज पाश वियोगिनि बाला ॥ ५ ॥
ब्रह्म मुहूरत विच भगवाना । उठते प्रति दिन रमा निधाना ॥ ६ ॥
करके बाद आचमन नीरा । करत ध्यान पर ब्रह्म शरीरा ॥ ७ ॥
करते पुनि निर्मल जल स्नाना । धारण करत वसन भगवाना ॥ ८ ॥
कर संध्योपासन वे पाछे । करते हवन ब्रह्म जप आछे ॥ ९ ॥
होवत उदित यदा दिनराई । उपस्थान करते बलभाई ॥ १० ॥

दोहा- **सुर मुनि पितरन का पुनि, कर तरपन भगवान ।**
करते पूजन द्विजन का, होकर मुदित महान ॥ १७१ ॥

चौ- विप्रन हेतु अलंकृत भारी । कंचन श्रृङ्गी धेनु दुधारी ॥ १ ॥
मोतिन माल गले जिन सुन्दर । यों प्रतिदिन वत्सन सह अम्बर ॥ २ ॥
करते दान लक्ष दस चारी । पाछे वे सन्तन हितकारी ॥ ३ ॥
करते वन्दन गौ गुरु विप्रन । मात पिता वृध्दन सुर वृन्दन ॥ ४ ॥
हे नृपवर पीछे यदु नन्दन । करत माँगलिक वस्तुन स्पर्शन ॥ ५ ॥
यद्यपि लोक बीच अति सुन्दर । तो भी कृष्ण चन्द्र वे यदुवर ॥ ६ ॥
धारण करत वसन वर भूषन । ऊपर भाल गंध अनुलेपन ॥ ७ ॥
आज्य बीच कर पुनि मुख दर्शन । मिलते प्रेम सहित सब लोकन ॥ ८ ॥
सेवक जे अन्तः पुर चारी । कर उन काम प्रशंसा भारी ॥ ९ ॥
दे विप्रन ताम्बूल वे लेपन । लेते बाद स्वयं यदुनन्दन ॥ १० ॥

दोहा- **सुग्रीवादिक अश्वयुत, तावत वहँ पर सूत ।**
सजवाकर अति प्रेम से ,लावत रथ मजबूत ॥ १७२ ॥

चौ- सात्यकि उद्धव सह भगवाना । उदयाचल जिमि भानु समाना ॥ १ ॥
सुन्दर रथ पर कर असवारी । प्रेम सहित मुस्कावत भारी ॥ २ ॥
देखत उन अन्तः पुर नारिन । चले भवन ते उन मनहारिन ॥ ३ ॥
जहाँ काम क्रोधादिक नाँही । पहुँचे सभा सुधर्मा माँही ॥ ४ ॥
परमासन ऊपर स्थित होकर । सोभित वृष्णिन समाँ सुधाकर ॥ ५ ॥
उपमन्त्री गण वहाँ अपारा । तोषत विभुहि हास रस द्वारा ॥ ६ ॥
वीणा उरज मृदङ्ग व ताला । वेणू शंख बजाय विशाला ॥ ७ ॥
नटाचार्य अभिनय के द्वारा । कला पूर्ण कर नृत्य अपारा ॥ ८ ॥
मागध सूत वन्दिगण भारी । गावत यश मृदु वचन उचारी ॥ ९ ॥
विप्रन के मुख ते यदुनाथा । सुनते पूर्व नृपन की गाथा ॥ १० ॥

दोहा- हरि सन्मुख जाकर तदा, खबर कीन्ह प्रतिहार ।
नाथ एक मानव खड़ा, सभा सुधर्मी द्वार ॥ १७३ ॥

चौ- प्रभु आज्ञा पाकर प्रति हारी । भेजा वह नर जहाँ मुरारी ॥ १ ॥
सभा भवन पहुँचा वह मानव । देखे कृष्ण सहित सब यादव ॥ २ ॥
कीन्ह प्रणाम तदा कर जोरी । सुनौ सत्यसँध बीनति मोरी ॥ ३ ॥
जरासंध राजा बलधारी । जीते नृप बहु युद्ध मँझारी ॥ ४ ॥
जरासंध आगे यदुराया । जे नृप आनहिं सीस झुकाया ॥ ५ ॥
जरासंध ने कर अति क्रोधा । वे गिरिव्रज बिच कियेनिरोधा ॥ ६ ॥
ऐसे बीस सहस नरपाला । पड़ै वन्दिगृह मगध विशाला ॥ ७ ॥
उनके समाचार मैं लाया । उन सबने मिल यों कहलाया ॥ ८ ॥
कृष्ण कृष्ण हे कृष्ण मुरारी । हम शरणागत नाथ तुम्हारी ॥ ९ ॥
शरणागत भय भञ्जन हारी । क्यों विसरी सुधि नाथ हमारी ॥ १० ॥

दोहा- दुष्ट कर्म रत लोक हम, अर्चन नाथ तुम्हारि ।
भूले अति उनमाद वश, जगपति जगदाधारि ॥ १७४॥

चौ- जीवन आसा राख अपारी । भटकत भव वीचे संसारी ॥ १ ॥
काल रूप बनकर सब आसा । हे जगदीश्वर करत विनासा ॥ २ ॥
काल रूप हरि चरण तुम्हारे । करें वन्दना मिलकर सारे ॥ ३ ॥
सत रक्षण निग्रह हेतू । लियो जनम वसुदेव निकेतू ॥ ४ ॥
जरासन्ध आदिक बलधारी । तव अनुमति बिन अहो खरारी ॥ ५ ॥
देवत कष्ट हमें क्यों भारी । ऊँची बात यह नहीं तुम्हारी ॥ ६ ॥
निज कर्मज दुख पावत नाना । यह भी उचित नहीं हम माना ॥ ७ ॥
जब तुम रक्षक नाथ हमारे । कर्मज दुख तुम क्यों न निवारे ॥ ८ ॥
नृप सुख यह प्रारब्ध अधीना । विषय साध्य मुकती फल हीना ॥ ९ ॥
यह सुख केवल सुपन समाना । तुच्छ असत फल दायक माना ॥ १० ॥
उस सुख का प्रभु भोगन हारा । शव समान यह देह हमारा ॥ ११ ॥

दोहा- सदा सर्वदा सहस भय, लग रहे इसके लार ।
इस तन ते हम जगत का, ढोवत केवल भार ॥ १७५ ॥

चौ- त्याग आत्म सुख नाथ तुम्हारी । माया ते हम क्लेशित भारी ॥ १ ॥
प्रणत शोक हर चरण तुम्हारे । मुनिमन मानस विचरन हारे ॥ २ ॥
मागध रूप करम के बन्धन । करो नाथ अब तो तुम मोचन ॥ ३ ॥

अयुत मतंग पराक्रम वाला । जरासंघ मागध नरपाला ॥ ४ ॥
वन्दि गृह हम किये निरोधा । मृगपति मेषी सम करि क्रोधा ॥ ५ ॥
तुम ते समर सप्तदश हारा । अव पा विजय अठारवि वारा ॥ ६ ॥
प्राप्त घमंड देत दुख हमको । करो उपाय जँचे जो तुमको ॥ ७ ॥
यों तव चरण कमल शरणागत । आये बीस सहस हम नरपत ॥ ८ ॥
हम सब का कल्याण कृपालू । करो शीघ्र अब दीन दयालू ॥ ९ ॥
बोला दूत यदा नृप वानी । तेहि समय नारद मुनि ज्ञानी ॥ १० ॥

दोहा- **सूरज सम प्रकटे वहाँ, देख उन्हें भगवान ।**
सभा सहित वन्दन किये,सबने मुनी सुजान ॥ १७६ ॥

चौ- विधिवत पूजन कर यदुनन्दन । बोले मुनि से करुणा क्रन्दन ॥ १ ॥
हैं न कुशल मंगल मुनिराया । कहीं अमंगल तो नही पाया ॥ २ ॥
आप त्रिलोकी में मुनि राई । करत पर्यटन रवि की नाँई ॥ ३ ॥
हमको तुम से लाभ अपारा । विश्व हाल मिलता तुम द्वारा ॥ ४ ॥
ऐसी कवन वात जग अन्दर । जिसे आप ना जानत मुनिवर ॥ ५ ॥
एक हाल पूछों मुनिराई । पाँडुन हाल कहो समुझाई ॥ ६ ॥
कृष्ण चन्द्र के वचन सुहाये । बोले अब नारद हर्षाये ॥ ७ ॥
माया नाथ दुरन्त तुम्हारी । जान सके ना विधि त्रिपुरारी ॥ ८ ॥
वहि माया में नाथ तुम्हारी । देखी प्रथम अनेकन वारी ॥ ९ ॥
यद्यपि तुम सब घट के वासी । मायापति जगपति अविनासी ॥ १० ॥

दोहा- **तो भी जो पूछत रहे, पाँडुसुतन के हाल ।**
इसमें कुछ अचरज नहीं, मुझको दीनदयाल ॥ १७७॥क
निज माया से करत तुम, जग रचना संहार ।
माया से ही भासता, असत सत्य संसार ॥ १७७ ॥ ख

चौ- नाथ तुम्हारे मन की बाता । जान सके ना कोई विधाता ॥ १ ॥
रूप विलक्षण प्रभो तुम्हारा । वन्दन करूँ उसे हर बारा ॥ २ ॥
फँस कर जीव विषय के अन्दर । भटकत जनम मृत्यु के चक्कर ॥ ३ ॥
इस शरीर से मोक्ष उपाई । जानत जीव नहीं यदुराई ॥ ४ ॥
उसके ही हेतू भगवाना । धर अवतार करत कल्याना ॥ ५ ॥
पावन यश निज दीप जलावत । मुकती पद पथ आप दिखावत ॥ ६ ॥
मैं यहि हित आवा शरणागत । आप स्वयं पर ब्रह्म कहावत ॥ ७ ॥

कर लीला मानव की नाँई । पूछी खबर कुन्ति सुत साँई ॥ ८ ॥
अब मैं भक्त युधिष्ठिर हाला । वरणन करता दीनदयाला ॥ ९ ॥
पूजहि राज सूय मख द्वारा । नृपति युधिष्ठिर चरण तुम्हारा ॥ १० ॥

दोहा- **उनकी तो इच्छा यही, हे प्रभु दीन दयाल ।**
इस अभिलाषा को करो ,अनुमोदन तत्काल ॥ १७८॥

चौ- तव दरसन हेतू भगवाना । आवहि देव नृपति वहँ नाना ॥ १ ॥
कर दरसन वे प्रभो तुम्हारे । हो अहि परम पुनीत अपारे ॥ २ ॥
निरमल कीरति कृष्ण तुम्हारी । छारहि दशों दिशा में भारी ॥ ३ ॥
तव चरणोदक श्रेष्ठ अपारा । होय विभक्त प्रभोत्रय धारा ॥ ४ ॥
सुरपुर में मन्दाकिनि बनकर । भोगवती बलि के घर बहकर ॥ ५ ॥
भूमी पर गंगा इति नामा । करती पूत त्रिलोकी धामा ॥ ६ ॥
बोले श्री शुक सुनो परीक्षित । यदुवंशी जो सभा उपस्थित ॥ ७ ॥
उनके बात यक मन आई । करे मगध पर प्रथम चढाई ॥ ८ ॥
इस कारण नारद की बाता । आई एक समझ ना गाता ॥ ९ ॥
हे नृप तव हरि कुछ मुस्काये । उद्धव प्रति पुनि वचन सुनाये ॥ १० ॥

दोहा- **मन्त्र अर्थ तत्वज्ञ तुम, अति प्रिय मित्र हमार ।**
करो यहाँ कर्त्तव्य जो, करे नही इस वार ॥ १७९ ॥ क
यों पूछा भगवान जब, आज्ञा शिर पर धार ।
बोले उद्धव उस समय, हे हरि जगदाधार ॥ १७९ ॥ ख

चौ- नारद ने जो वचन सुनाया । उचित नही है यादव राया ॥ १ ॥
प्रथम युधिष्ठिर पास सिधाऊ । पाछे भूपन मोक्ष कराऊ ॥ २ ॥
उन दिग्विजय प्रथम करवाऊ । राजसूय मख बाद रचाऊ ॥ ३ ॥
केवल जरासंघ के ऊपर । पावहिं विजय यदा हम यदुवर ॥ ४ ॥
तब हो पूर्ण मनोरथ सारा । विना विजय मख हो न तुम्हारा ॥ ५ ॥
पावत विजय वन्दि नृप सारे । छूटहि गावहिं सुयश तुम्हारे ॥ ६ ॥
अयुत नाग सम वह बलधारी । जरासंघ नृप सुनो खरारी ॥ ७ ॥
भीम बिना दूजा नर कोई । जीत न योग्य समर्थ न होई ॥ ८ ॥
उसके जीतन का यदुराया । द्वन्द युद्ध ही एक उपाया ॥ ९ ॥
दल बल सह यदि करें चढाई । नहिं आसान विजय यदुराई ॥ १० ॥

दोहा- कई एक अक्षौहिणी, रहती उसके लार ।
जरा संध राजा प्रभो,ब्राह्मण भक्त अपार ॥ १८० ॥

चौ- जो कोई विप्र वहाँ पर जावे । कोरा वह वापिस ना आवे ॥ १ ॥
विप्ररूप धर कर वहँ जाऊ । भीम व अरजुन संग लिवाऊ ॥ २ ॥
माँगो मल्लयुद्ध का दाना । भीमसेन संग हे भगवाना ॥ ३ ॥
तव सन्निधि में हो यह काजू । हनहिं भीमही मागध राजू ॥ ४ ॥
भीमसेन तो सिर्फ निमित्ता । वधकर्त्ता तो आप अनन्ता ॥ ५ ॥
रूप रहित तुम काल स्वरूपा । सर्व शक्तियुत प्रभो अनूपा ॥ ६ ॥
जग रचना अरु जग लयकारी । अति बलवन्ती शक्ति तुम्हारी ॥ ७ ॥
केवल निमित मात्र विधि शंकर । हालत तुम बिन एक न कंकर ॥ ८ ॥
मरहिं यदा यों मागध राजा । होहिं सकल दिगविजय सुकाजा ॥ ९ ॥
कारागार परे सब राजा । होवहि मोक्ष यदा यदुराजा ॥ १० ॥

दोहा- जरासंध वध श्रवण कर, उन नृपतिन की नार ।
निज पतियन के संग में, गावहि कर्म तुम्हारा ॥१८१॥क
वृज वनिता करती यथा, शंख चूड वध गान ।
जनक सुता गजमोक्ष को, जैसे मुनि सुजान ॥ १८१॥ख

चौ- जरासंध यदि जावहिं मारा । हो सब कारज सुलभ हमारा ॥ १ ॥
सुलभ होंहि शिशुपाल वधादिक । अड़चन रहहि न किसी नृपादिक ॥ २ ॥
श्री शुक कहे सुनो कुरुराया । यों जब उद्धव वचन सुनाया ॥ ३ ॥
यादव वृद्ध कृष्ण मुनि ज्ञानी । कीन्ह समर्थन तब उन वानी ॥ ४ ॥
अब हरि गुरुजन अनुमति लेकर । दारुक जैत्रादिकज बुलाकर ॥ ५ ॥
इन्द्रप्रस्थ प्रति जावन काजू । दिय आदेश तदा उन राजू ॥ ६ ॥
कर वसुदेवादीन प्रणामा । प्रेपित करी अग्र सब वामा ॥ ७ ॥
सूतानीत स्वयं रथ ऊपर । चढे गरुड़ ध्वज अति हरसाकर ॥ ८ ॥
चतुरंगिनि सेना ले संगा । नादित शंख व भेरि मृदङ्गा ॥ ९ ॥
पुर से जब प्रभु किये पयाना । होवत लगे शकुन शुभ नाना ॥ १० ॥

दोहा- पुत्रन सह पट रानियाँ, हो शिविका असवार ।
आस पास रक्षक चले, कर में ले तलवार ॥ १८२ ॥

चौ- रामानुज रथ अनु सब चाली । करत विनोद व बात निराली ॥ १ ॥
चाली इमि सब अनुचर नारी । वार योषिता भी सजभारी ॥ २ ॥

कट कुटि कम्वल आदि उपस्कर । लादे अश्व महिप वृष खच्चर ॥ ३ ॥
चामर छत्र ध्वजादिक द्वारा । सोभित यादव कटक अपारा ॥ ४ ॥
वस्त्राभूषण भूषित भारी । कवच किरीट वरायुद्ध धारी ॥ ५ ॥
सत्कृत हो हरि ते अव नारद । कर प्रणाम गय ज्ञान विशारद ॥ ६ ॥
नृपति दूत प्रति अव भगवाना । वोले शीघ्र होहिं कल्याना ॥ ७ ॥
कहो जाय निज भूपन दूता । कुछ दिन और रहो मजबूता ॥ ८ ॥
जरा सन्ध अव जावहिं मारा । छूटहिं कारागार तुम्हारा ॥ ९ ॥
यों सुन दूत नृपन पहँ आया । समाचार सव जाय सुनाया ॥ १० ॥

दोहा- **दूतानन ते नृपति सव, समाचार सुन कान ।**
दर्शन हित भगवान के ,उत्सुक भये महान ॥ १८३ ॥

चौ- इत आनर्त और सौ वीरा । मरु कुरु क्षेत्र पार यदुवीरा ॥ १ ॥
नगर सरित गिरि ग्राम अपारा । दृषद्वती सुरसति कर पारा ॥ २ ॥
यों नृप पार करत सव खाना । पहुँचे इन्द्र प्रस्थ भगवाना ॥ ३ ॥
कृष्ण आगमन सुन कर काना । नृपति युधिष्ठिर परम सुजाना ॥ ४ ॥
ले संग उपाध्याय परिवारी । गवने जहाँ सन्त भयहारी ॥ ५ ॥
गाये मंगल गीत अपारे । लगे वाजने ढोल नकारे ॥ ६ ॥
महिसुर वृन्द करत श्रुति गाना । पहुँचे जहाँ कृष्ण भगवाना ॥ ७ ॥
कर दरसन उन नृपति युधिष्ठिर । भये मुदित अति पुलकित होकर ॥ ८ ॥
वहु दिन वाद दरस जिन पाये । उन प्रभु को निज हृदय लगाये ॥ ९ ॥
पाप ताप सव किये निवारन । दोउ भुजते कर प्रभु आलिंगन ॥ १० ॥

दोहा- **भये मग्न नृपवर तदा, सागर परमानन्द ।**
नयन न ते आँसू गिरे,दरसन कर गोविन्द ॥ १८४ ॥क
रहा न विश्व प्रपंच का, उनको कुच भी मान ।
व्याकुल इन्द्रिय प्रेम से, मिले भीम अव आ॥१८४॥ख

चौ- मातुल पुत्र कृष्ण का भारी । किय आलिंगन भीम अपारी ॥ १ ॥
अर्जुन सहित नकुल सहदेवा । किय आलिंगन सुत वसुदेवा ॥ २ ॥
अव अर्जुन ने प्रभू दुवारा । किय आलिंगन भली प्रकारा ॥ ३ ॥
दोउ माद्रिज द्वारा अभिवादन । पाकर तदा देवकी नन्दन ॥ ४ ॥
यथा योग्य विप्रन अरु वृद्धन । कीन्हे प्रेम सहित सव वन्दन ॥ ५ ॥
कुरु सृञ्जय केकय नरपाला । किय सम्मानित कृष्ण कृपाला ॥ ६ ॥

हरि ने भी उनका सत्कारा। किया यथोचित भली प्रकारा ॥ ७ ॥
वन्दीजन मागध गंधर्वा। कीन्ही सूत प्रशंसा सर्वा ॥ ८ ॥
विप्र वृन्द भी स्तोत्र उचारी। करते स्तुति अघ नासन हारी ॥ ९ ॥
नट गंधर्व विदूषक सारे। ढोल मृदंग शंख नगारे ॥ १० ॥

दोहा- **नरसिंगे वीणा तथा, गौ मुख वाद्य बजाय।**
करत नृत्य अति प्रेम ते, हरि को खूब रिझाय ॥ १८५॥

चौ- पहुँचे इन्द्रप्रस्थ के भीतर। यों मित्रन ते आवृत यादुवर ॥ १ ॥
गजमद गंध नीर के द्वारा। सिंचित नृप पथ भली प्रकारा ॥ २ ॥
सोभित चित्र ध्वजन के द्वारा। कंचन तोरण लगे अपारा ॥ ३ ॥
पट भूषण धारे नर नारी। मंगल कलश धरे प्रति द्वारी ॥ ४ ॥
पुष्प धूप दीपादिक गेहा। सज्जित पुर देखे प्रभु येहा ॥ ५ ॥
पति गृह काज त्याग कर नारी। हरि दर्शन प्रति विह्वल भारी ॥ ६ ॥
राज मार्ग ऊपर सब आई। कैतिक भवन झरोकन छाई ॥ ७ ॥
आवत चतुरंगिनि नृप पंथा। देखे महिषिन सँग यदुकंथा ॥ ८ ॥
मन ही मन हरि हृदय लगाये। कर स्वागत पुष्पन बरसाये ॥ ९ ॥
राज मार्ग पर चन्द्र समाना। देखे महिषिन बिच भगवाना ॥ १० ॥

दोहा- **हरि पत्निन को देख के, बोली पुर की नार।**
कवन पुण्य कीन्हो इन्हे, हरि संग करत विहार ॥ १८६॥

चौ- अवलोकन अरु हास्य प्रसंगा। कर आनन्द पात हरि संगा ॥ १ ॥
पूजन साहित लेकर थारी। पुरजन पूजत कृष्ण मुरारी ॥ २ ॥
एवं अन्तः पुरजन द्वारा। सत्कृत हो भगवान अपारा ॥ ३ ॥
नृप मन्दिर पहुँचे सह राई। तजि परयङ्क कुन्ति उठ धाई ॥ ४ ॥
किय आलिंगन बारम्बारा। होकर कुन्ती मुदित अपारा ॥ ५ ॥
कर दरसन कुन्ती अति फूली। अर्चन विधी नृपति सब भूली ॥ ६ ॥
कुन्तिहिं गुरु पत्निन सिर नाइ। कीन्ह प्रणाम तदा यदुराई ॥ ७ ॥
बाद सुभद्रा द्रौपदि आई। कीन्ह प्रणाम हरिहिं सिर नाई ॥ ८ ॥
रुक्मिणि सहित तदा हरिनारी। पूछी द्रुपद सुता ने सारी ॥ ९ ॥
सैन्य सभार्थ कृष्ण सुखदाई। ठहराये सुख युत नर राई ॥ १० ॥

सौरठा- **अरजुन सह भगवान, अनल हेतु खांडव विपिन।**
करवा कर के पान, मयदानव मोचन कियो।

दोहा- सभा भवन मय ने रचा, नृपति युधिष्ठिर हेत ।
कई मास वहँ पर वसे, वे हरि नृपति निकेत ॥ १८६ ॥

चौ- सभा भवन बैठे इक वारा । मुनि युत ब्राह्मण क्षत्रिय सारा ॥ १ ॥
कुल गुरु सहित वृद्ध सव भाई । बोले तव नृप हे यदुराई ॥ २ ॥
पावन राजसूय मख द्वारा । चाहूँ अरचन चरन तुम्हारा ॥ ३ ॥
यह इच्छा मेरी तुम पूरो । तव पूजन बिन यज्ञ अधूरो ॥ ४ ॥
अघ नाशक यह चरण तुम्हारा । पूजहिं मानव निज तनु द्वारा ॥ ५ ॥
ध्यावहि जो मानव मन द्वारा । सीधा जावहिं मोक्ष दुवारा ॥ ६ ॥
पावन आत्मा वास्तव ओहू । छूटहिं आवगमन ते सोहू ॥ ७ ॥
विषयन की भी राखहिं आसा । होवहिं प्राप्त भोग तेहि खासा ॥ ८ ॥
जे नर विषयन के अभिलासी । जावहि शरण नहीं सुख रासी ॥ ९ ॥
मोक्ष व भोग मिलहिं ना तेहू । भर बन्धन उसके न नसेहू ॥ १० ॥

दोहा- देव देव यह हो रही, मोरी रूची अपारि ।
तव पद सेवा का लखे, यह प्रभाव संसारि ॥ १८८ ॥

चौ- कुरु सञ्जय वंशी नृप सारे । करत न करत जे भजन तुम्हारे ॥ १ ॥
उन सव का तुम अव हे यदुवर । दिखलादो जनता हित अन्तर ॥ २ ॥
समदर्शी सर्वात्मा साँई । निज पर भेद न तुम पर पाई ॥ ३ ॥
तदपि जे सेवा करें तुम्हारी । पावहि वह पल मंगल कारी ॥ ४ ॥
श्री भगवान कहे सुनु राजन । तव विचार सम्यक मन भावन ॥ ५ ॥
करें कर्म यह कीर्ति तुम्हारी । व्यापहिं दशो दिशा में भारी ॥ ६ ॥
यह ऋतुराज देव मुनि पितरन । अति इक्षित तोरे सब सुहृदन ॥ ७ ॥
वनो प्रथम सब नृपति विजेता । करो वस्तु संग्रह मख हेता ॥ ८ ॥
हे नृपवर यह भ्रात तुम्हारे । प्रकटे लोकप अंश सहारे ॥ ९ ॥
मैं अति दुर्जय सभी प्रकारा । जीता तदपि नृपति तुम द्वारा ॥ १० ॥

दोहा- जग में मम भक्त हैं, उन्हें पराभव काज ।
धन सेनादिक ते नहीं, हो समर्थ सुर राज ॥ १८९ ॥

चौ- पुनि नृपतिन की कहा वखाता । बोले श्री शुक हे कुरु ताता ॥ १ ॥
जब यों हरि ने वचन सुनाये । तब अजात शत्रु हरषाये ॥ २ ॥
अब निज भ्राता पास बुलाये । दिग्जय काज तुरत भिजवाये ॥ ३ ॥
याम्य दिशा सहदेव पठाये । सृञ्जय सेना साथ लिवाये ॥ ४ ॥

मत्स्यन सहित नकुल पुनि राजा। भिजवाये पश्चिम जय काजा ॥ ५ ॥
केकय सेना संग लिवाई। भेजे उत्तर अरजुन भाई ॥ ६ ॥
पूरव मद्रक लेकर संगा। पहुँचे भीमसेन रणरांगा ॥ ७ ॥
यों दिग्विजय कीन्ह सब भाई। दीन्हो द्रव्य युधिष्ठिर ताँई ॥ ८ ॥
सुनकर अजित जरासंध राया। हरि का ध्यान नृपन पहँ आया ॥ ९ ॥
उद्धव की उक्ती तब सारी। हरि ने नृप समीप विस्तारी ॥ १० ॥

दोहा- हरि अरु भीम धनञ्जय, धर पुनि ब्राह्मण भेश।
गिरि वृज में पहुँचे तुरत, बसत जहाँ मगधेश ॥ १९०॥

चौ- लखि अभ्यागत स्वागत काला। पहुँचे तीनो जहँ नरपाला ॥ १ ॥
द्विज रूपी हरि संग दोऊ भाई। बोले सुनो जरासंध राई ॥ २ ॥
हम तीनो अतिथि तव गेहा। आये बहुत दूर ते येहा ॥ ३ ॥
हे नृप हो कल्याण तुम्हारा। करो मनोरथ पूर हमारा ॥ ४ ॥
सज्जन नर सब कुछ सह सकते। मद सरिता केवल खल बहते ॥ ५ ॥
दाता पास अदेय न काहू। सम दर्शिन के अरि कोइ नाहू ॥ ६ ॥
नश्वर तन संचय यश नाँही। शौच्य निंध जानो तुम ताही ॥ ७ ॥
हरिश्चन्द्र नृप शिवि बलि व्याधू। रन्तिदेव पारावत साधू ॥ ८ ॥
ये सब नश्वर तन के द्वारा। पहुँचे ब्रह्मलोक में सारा ॥ ९ ॥
श्री शुक कहे सुनो कुरुराया। जब तीनों इमि वचन सुनाया ॥ १० ॥

दोहा- आकृति भाषण ते इन्हें, क्षत्रिय लखि मगधेश।
करने लगा विचार यों ,निज हिय बीच विशेश ॥ १९१॥

चौ- दीखत द्विज रूपी नर कोई। माँगहि मिलहिं वस्तु इन सोई ॥ १ ॥
माँगहिं तनु भी यदि ये मेरा। इन प्रति देउँ न करूँ अबेरा ॥ २ ॥
जा हरि कपट रूप बलि गेहा। कीन्हो राज्य भृष्ट सब नेहा ॥ ३ ॥
कीरति तासु दशों दिशा छाई। यद्यपि कीन्हो शुक्र मनाई ॥ ४ ॥
द्विज रूपी हरि प्रति महि दीन्ही। अमर कीरति जग में लीन्ही ॥ ५ ॥
अब निश्चल निश्चय यहि मोरा। मम शरीर तो नश्वर कोरा ॥ ६ ॥
ऐसो तनु पाकर जे कोई। अति कीरति संचय ना कोई ॥ ७ ॥
ऐसो क्षत्रिय क्षत्रिय नाँही। जो द्विज कारज काम न आही ॥ ८ ॥
इति निश्चित कर मन मगधेशा। उन तीनो प्रति कहा अदेशा ॥ ९ ॥
हे विप्रो जो रुची तुम्हारी। बोलो मम सन्मुख वह सारी ॥ १० ॥

दोहा- चाहे मेरा सीस भी, माँगो मैं तैयार । १८२
यह सुनकर बोले हरी, होकर मुदित अपार ॥ १६६ ॥

चौ- हमना अन्न अर्थी सुनु राजन । करहीं द्वंद युद्ध हम याचन ॥ १ ॥
युद्ध काज हम यहँ पर आये । अर्जुन भीम नाम इन गाये ॥ २ ॥
मातुल सुवन अरे इन दोऊ । नाम कृष्ण तव रिपु लखु मोऊ ॥ ३ ॥
सुन यों जरासन्ध नरपाला । उच्च स्वर ते हँस तत्काला ॥ ४ ॥
क्रोध युक्त हो वचन उचारे । अरे मन्द मतियों मम द्वारे ॥ ५ ॥
आये कपट रुप धर बाना । तो भी मिलहिं युद्ध वरदाना ॥ ६ ॥
मम भय ते तुम समर तजाई । भागे प्रथम भीरु की नाँई ॥ ७ ॥
लीन्ही अरे शरण तुम सागर । करूँ युद्ध तो संग नहिं कायर ॥ ८ ॥
अर्जुन भी मम वय सम नाँही । मो सम केवल भीम लखाही ॥ ९ ॥
यों कह जरासन्ध बलधारी । देकर गदा भीम प्रति भारी ॥ १० ॥

दोहा- अपर गदा लेकर स्वयं, पुर ते वाहर आय ।
दोउ रण दुर्मद वीर वे ,भिरे रणाङ्गण जाय ॥ १६३ ॥

चौ- करत परस्पर गदा प्रहारा । मंडल बाँध विचित्र प्रकारा ॥ १ ॥
नट सम सोभित दोउ बलधारी । गदा शब्द चट चट भये भारी ॥ २ ॥
प्राप्त क्रोध दोउ नाग समाना । करत प्रहार परस्पर नाना ॥ ३ ॥
टूटत अर्क शाख जिमि राजन । टूटी गदा सभी रण प्राङ्गण ॥ ४ ॥
भग्न गदा एवं दोउ वीरा । कियो मुष्ठिका युद्ध अखीरा ॥ ५ ॥
मुष्ठिक ताड़न ते उन भारी । वज्र पात सम शब्द अपारी ॥ ६ ॥
लगातार यों करत प्रहारा । भये विकल कोऊ नहीं हारा ॥ ७॥
करते दिवस बीच रण दोऊ । रहते निशा मित्र सम सोऊ ॥ ८॥
करत युद्ध उन सुनु नर राई । सात बीस दिन दिये गँवाई ॥ ९ ॥
आवा दिवस बीस वसु ऊपर । बोला हरि से तदा वृकोदर ॥ १० ॥

दोहा- जीत सकूँ माधव नहीं, मैं मागध के साथ ।
अव तो इस पर विजय का, साधन तुम्हरे हाथ ॥१६४॥

चौ- मागध जनम मरण का सारा । जानत भेद जरा कृत द्वारा ॥ १ ॥
वे भगवान कृष्ण अविनासी । पाँडव तनु निज शक्ति प्रकासी ॥ २ ॥
पुनि मागध वध हेतु उपाया । निज मन सोच बाद यदुराया ॥ ३ ॥
निज कर शाखा एक उठाई । चीरी वह संकेत दिखाई ॥ ४ ॥

पा संकेत्त भीम हरि द्वारा । चरण पकर अरि महि पर डारा ॥ ५ ॥
निज पद अरि पद एक दवाया । अपर चरण निज हाथ गहाया ॥ ६ ॥
चीरा गुद गज शाख समाना । भरकर क्रोध भीम वलवाना ॥ ७ ॥
एक हि चरण व एक हि जानू । एक वृपण कटि पीठ प्रमानू ॥ ८ ॥
स्तन वाहू अक्षि भ्रू एका । युगल शकल विच प्रजा विलोका ॥ ९ ॥
यों मागध वध सुन चहुँ ओरा । हाहाकार भयो अति घोरा ॥ १० ॥

दोहा- **हरि अरजुन पुनि भीम का, कर आलिंगन भारि ।**
करी प्रशंसा वहुत सी, होकर मुदित अपारि ॥ १६५ ॥

चौ- जरासन्ध सुत पुनि भगवन्ता । जो सहदेव नाम गुणवन्ता ॥ १ ॥
दीन्हा राज्य मगध का तेहू । पुनि मागध रुद्धित नृप जेहू ॥ २ ॥
कर मोचन उन संकट टारा । सुनौ नृपति आगे विस्तारा ॥ ३ ॥
वीस सहस अरु वसु शत जेते । निर्जित जरासन्ध नृप येते ॥ ४ ॥
रूद्धित सव गिरि द्रोणी भीतर । मलिन शुष्क मुख कर्शित आकर ॥ ५ ॥
कर दरसन हरि के हरसाये । गदगद होय नयन जल छाये ॥ ६ ॥
श्री वत्साङ्क श्याम तनु सोहा । श्रुति भुज मुदित वदन मन मोहा ॥ ७ ॥
शंख व चक्र गदाम्वुज धारी । हार किरीट कटक कर भारी ॥ ८ ॥
श्रृंखल अंगद युत वनमाला । करत नयन मनु पान नृपाला ॥ ९ ॥
जीहा से चाहहि मनु प्रभु को । कर आलिंगन मन ते विभुको ॥ १० ॥

दोहा- **शिरधर कर हरि के चरण, करत नृपाल प्रणाम ।**
त्यागे सारे क्लेश उन, कर दरसन सुखधाम ॥ १६६ ॥

चौ- दोउ कर जोरे गिरा उचारी । सभी नृपति मिल हे दुखहारी ॥ १ ॥
वन्दहिं देव देव यदुराया । घोर कष्ट ते हमें वचाया ॥ २ ॥
मागध जरासंध के ऊपर । दोष नहीं देवहिं हम यदुवर ॥ ३ ॥
राज श्री यश उन्मत राजा । चूकहिं कवहुँ न करत अकाजा ॥ ४ ॥
वह तुम्हारि माया ते मोहित । सकल सम्पदा अचलहिं मानत ॥ ५ ॥
मृग तृष्णा को यथा अनारी । मानत सदा जलाशय भारी ॥ ६ ॥
अविवेकी जन भी प्रभु त्योंही । समझत माया वस्तुन सोहीं ॥ ७ ॥
हम भी प्रथम होय मद मत्ता । जान सकै नाँही तव सत्ता ॥ ८ ॥
गत घमंड हो अव हम सारे । करते वन्दन चरण तुम्हारे ॥ ९ ॥
होवत प्रतिदिन क्षीण शरीरा । ये ही जनम भूमि अति पीरा ॥ १० ॥

दोहा- ऐसे तन ते राज्य की, हमको नहिं अभिलास ।
इस मृग तृष्ण का प्रभो, है मिथ्या आभास ॥ १६७ ॥

चौ- स्वार्गादिक सुख की भी नाँही । है अभिलास प्रभो मन माँहीं ॥ १ ॥
करो उपाय प्रभो अब ऐसो । बिसरें चरण कमल नहीं जैसो ॥ २ ॥
वन्दहिं वासुदेव जग नायक । कृष्ण व शरणागत दुख नाशक ॥ ३ ॥
हे परमात्मा हरि अघ हारी । आये गोविन्द शरण तुम्हारी ॥ ४ ॥
स्तूय मान इति नृपतिन द्वारा । स्निग्ध वचन तब कृष्ण उचारा ॥ ५ ॥
सुनो भूपगण भक्ति हमारी । रहहिं आज से सुदृढ भारी ॥ ६ ॥
मैं सर्वात्मा अरु सब स्वामी । विचरूँ सब वस्तुन निशियामी ॥ ७ ॥
जो निश्चय कीन्हा यह तुमने । मानी खुशी श्रवण कर हमने ॥ ८ ॥
मानव श्री मद के ही द्वारा । पावत बन्धन सभी प्रकारा ॥ ९ ॥
रावण नहुष व हैहय राजा । वेन नरक नृप किये अकाजा ॥ १० ॥

दोहा- अपर नृपति गण भी बहुत, श्रीमद् के ही काज ।
निजपद से गिर कर महा ,अप यश लियो समाज ॥ १६८ ॥

चौ- लेवत जनम यदा जब देही । होवत तब परिवार स्नेही ॥ १ ॥
होवत अन्तकाल उन नाशा । यहि हित उन बिच रखहु न आशा ॥ २ ॥
यों तुम बात समझ कर सारी । जीत इन्द्रियाँ मन दुख कारी ॥ ३ ॥
मख द्वारा करहू मम पूजन । पालो धर्म समेत प्रजाजन ॥ ४ ॥
प्रजा तन्तु कर कर विस्तारा । सेवउ आगत सुख दुख सारा ॥ ५ ॥
चित्त लगा कर मुझमें अपना । सेवहु तुम जीवन लखि सपना ॥ ६ ॥
देहादिक ते होय उदासी । सुमिरो हरी चरण सुख रासी ॥ ७ ॥
आश्रम योग्य व्रतों का पालन । करते रहो सदा तुम धारन ॥ ८ ॥
अन्त समय पावहु तुम मोहू । यह उपदेश दीन्ह हरि ओहू ॥ ९ ॥
पुनि मज्जन हित दास व दासी । किये नियुत उन प्रति सुखरासी ॥ १० ॥

दोहा- मागध सुत सहदेव ने, भूषण वस्त्र मँगाय ।
पूजे नाना भाँति से, वे माधव यदुराय ॥ १६९ ॥

चौ- भूप सकल कीन्हे जब स्नाना । धारे पट भूषण तनु नाना ॥ १ ॥
अब हरि वर पक्वान्न मँगाये । प्रेम समेत नृपन जिमवाये ॥ २ ॥
राजोचित दे बहुत अपारा । कीन्हा बहुत नृपन सत्कारा ॥ ३ ॥
हरि पूजित इमि सोभित सारे । प्राक्ट अन्त यथा नभ तारे ॥ ४ ॥

कर स्यन्दन वर हय आरोपित । रजत व मणि कंचन करि भूषित ॥ ५ ॥
निज निज देश सभी नरराई । प्रेपित किये बाद बलभाई ॥ ६ ॥
यो दुख से मोचित सब भूपा । गये ध्यान कृत कृष्ण स्वरूपा ॥ ७ ॥
जाय भूपति निज निज देशा । दीन्हा यथा हरी आदेशा ॥ ८ ॥
क़रने लगे प्रजाजन पालन । निशि दिन ध्यान धरे हरि चरनन ॥ ९ ॥
इत मागध सुत ते हरि पूजित । आये भीम व अर्जुन संयुत ॥ १० ॥

दोहा- **निज अरि पर यों पा विजय, होकर अति आल्हाद ।**
इन्द्र प्रस्थ पर पहुँच कर, कीन्हों शंख निनाद ॥ २०० ॥

चौ- शंख निनाद श्रवण कर काना । जरासन्ध वध पुरजन माना ॥ १ ॥
नृपति युधिष्ठिर भी सुनु राया । निज मन पूर्ण मनोरथ पाया ॥ २ ॥
अर्जुन भीम व कृष्ण समेतू । कीन्हा वन्दन निज नृप हेतू ॥ ३ ॥
सब सम्वाद नृपति पहँ गाया । सुनकर नृपति बहुत हर्षाया ॥ ४ ॥
सब अनुकम्पा हरि की लखकर । भये मुदित अति नृपति युधिष्ठिर ॥ ५ ॥
प्रेमाश्रु निज नयन बहाये । निज मुख ते कुछ वचन न आये ॥ ६ ॥
श्री शुक कहे सुनो हे कुरुवर । हरि प्रभाव इमि देख युधिष्ठिर ॥ ७ ॥
होय मुदित यों वचन उचारे । हे यादवपति कृष्ण मुरारे ॥ ८ ॥
सर्व लोक गुरु प्रथम मुनीशा । तव आज्ञा धारत निज शीशा ॥ ९ ॥
वहि तुम देव सन्त हित कारी । धरते आज्ञा सीस हमारी ॥ १० ॥

दोहा- **यद्यपि नृप श्रीमद युत, रहे सभी हम नाथ ।**
तो भीतुम सब विधि प्रभो, रहत हमारे साथ ॥ २०१ ॥

चौ- तुम सम परमात्मा नहिं कोई । रवि सम तेज वृद्धि ना तोई ॥ १ ॥
तव मम भेद बुद्धि ना कोई । तव भक्तन में भी ना होई ॥ २ ॥
श्री शुक कहे सुनो हे कुरुवर । हरि प्रेरित अब नृपति युधिष्ठिर ॥ ३ ॥
ब्राह्मण ब्रह्मवादि बुलवाये । यज्ञोचित ऋत्विज सब आये ॥ ४ ॥
द्वैपायन भरद्वाज वसिष्ठा । गौत्तम असित सुमन्तु वरिष्ठा ॥ ५ ॥
ऋतु त्रित कवष व कण्व पराशर । च्यवन व गर्ग व सुमति मुनीश्वर ॥ ६ ॥
धौम्य अथर्वा कश्यप रामा । वीतीहोत्र आसुरि तपधामा ॥ ७ ॥
भार्गव धौम्य व पैल ऋषीशा । वीरसेन मधुच्छन्द मुनीशा ॥ ८ ॥
गाधि सुवन मैत्रेय मुनीशा । वामदेव जैमिनी ऋषीशा ॥ ९ ॥
अकृतवर्णन वैशम्पायन । पिपलाद अत्रि व कात्यायन ॥ १० ॥

दोहा- भीष्म व द्रोण कृपादिक, आये यज्ञ निकेत ।
पुत्रन युत अम्बा सुवन, बड़मति विदुर समेत ॥२०२ ॥

चौ- वर्ण चारि नर नृप सब आये। दर्शन हित मख धाम सुहाये ॥ १ ॥
कंचन हल द्वारा द्विज आछे । करवाई महि शोधन पाछे ॥ २ ॥
दीक्षा संस्कार लवलीना । करवाये नृप धर्म कुलीना ॥ ३ ॥
कंचन पात्र वरुण मख जैसे । हेम उपस्कर इस मख वैसे ॥ ४ ॥
लोक पाल इन्द्रादिक सारे । ब्रह्म शिव संयुत मखद्वारे ॥ ५ ॥
उरग सिद्ध गंधर्व अपारा । गण समेत विद्याधर सारा ॥ ६ ॥
यक्ष व राक्षस सर्व मुनीशा । खग चारण किन्नर व ऋषीशा ॥ ७ ॥
सब नृप नारिन संग लिवाये । राजसूय मख देखन आये ॥ ८ ॥
दैव समान याजकन राजा । राजसूय मख विधिवत साजा ॥ ९ ॥
देवत प्रथम वरुण को जैसे । करवायो मख नृपतिहिं वैसे ॥ १० ॥

दोहा- बाद सोमरस पान दिन, विधि पूर्वक नरपाल ।
पूजे ऋत्विज सभ्य सह, प्रेम सहित मखशाल ॥ २०३॥

चौ- कीन्ह विचार सभासद सारे । अग्र पूज्य हो कवन हमारे ॥ १ ॥
जेती मति उतने मत आये । सब सम्मति निर्णय ना पाये ॥ २ ॥
तब सहदेव वदत यों वानी । सुनौ सभासद चतुर सुजानी ॥ ३ ॥
यह यदुमणि भक्तन हितकारी । हैं अग्रार्चन के अधिकारी ॥ ४ ॥
ये ही विश्व रूप भगवन्ता । देशकाल धन देव नियन्ता ॥ ५ ॥
यज्ञ आहुति अग्नि स्वरूपा । साँख्य योग तप मन्त्र अनूपा ॥ ६ ॥
इन सम अन्य जगत में नाँही । पालहिं सृजहि व विश्व नसाहीं ॥ ७ ॥
तप योगादिक करने हारे । जिन अनुग्रह पावहिं फल भारे ॥ ८ ॥
मेरा मत मानो यदि कोई । अग्रार्चन इनका ही कोई ॥ ९ ॥
करो यदि तुम इनकी पूजन । होवहिं सब प्राणिन का अर्चन ॥ १० ॥

दोहा- फल अनन्त इच्छुक नर, भेद भाव से हीन ।
परम शान्त इन कृष्ण को ,करदे निजहिं अधीन ॥२०४॥

चौ- हरि प्रभाव विद् निज मत गाई । भए चुपचाप पांडु लघु भाई ॥ १ ॥
माद्रि तनय की सुन यों वानी । साधु साधु बोले सब ज्ञानी ॥ २ ॥
साधु साधु विप्रानन नादा । सुनि के धर्म मुदित भए ज्यादा ॥ ३ ॥
जान सभासद के अभिप्राया । पूजन लगे कृष्ण यदुराया ॥ ४ ॥

प्रथम नृपति हरि चरण पखारे। सह कुटुम्ब वह जल सिर धारे ॥ ५ ॥
पीत वसन भूषण धनद्धारा। पूजे जब श्रीकृष्ण उदारा ॥ ६ ॥
तब नयनन भर आयउ नीरा। देख सके ना कृष्ण शरीरा ॥ ७ ॥
पूजित यों लखि हरि को सारे। कर जोरे जयकार उचारे ॥ ८ ॥
क़ीन्ह प्रणाम सभासद सारे। सुमन वृष्टि हरि ऊपर डारे ॥ ९ ॥
लख शिशुपाल चरित यह सारा। होकर क्रुद्धित वाद अपारा ॥ १० ॥

दोहा- **आसन से उठकर वहाँ, दोनों भुजा उठाय।**
वोला वह भगवान को, निन्दित वचन सुनाय ॥ २०५॥

चौ- सुनौ सभासद वचन हमारा। काल दुरत्यय सभी प्रकारा ॥ १ ॥
करहीं यदि कोइ कोटि उपाऊ। रोक सकै ना तासु प्रभाऊ ॥ २ ॥
कलहिं सत्य सनातन ईश्वर। वदत वचन इति श्रुति सब मिलकर ॥ ३ ॥
इसका यहँ पर सत्य प्रमाना। इन नयनन द्वारा हम जाना ॥ ४ ॥
जो शिशु वचन श्रवण कर सारे। भये वृद्ध भी अब मतवारे ॥ ५ ॥
तुम सब श्रेष्ठ पात्रविद् गाये। बाल वचन पुनि क्यों भरमाये ॥ ६ ॥
लोक पाल पूजित तपधारी। ब्रह्म निष्ठ विद्याव्रत भारी ॥ ७ ॥
त्याग सभासद ऋषि व मुनीशा। तेजवन्त वलवन्त महीशा ॥ ८ ॥
अग्र अर्चना का अधिकारी। नहिं गोचारी किसी प्रकारी ॥ ९ ॥
पुरोडास जिमि काक समाना। पूज्य पात्र यह क्यों तुम माना ॥ १० ॥

दोहा- **सर्व धर्म ते वहिष्कृत, जासु न वर्ण न वंश।**
माना तुमने कवन विधि, पूज्य पात्र अवतंश ॥ २०६॥

चौ- नृप ययाति ते यह कुल शापित। रहा सर्वदा संत वहिष्कृत ॥ १ ॥
निशिदिन आसत जो मधुपाना। पूज्य पात्र नहि योग्य बखाना ॥ २ ॥
ब्रह्म ऋषिन सेवित तजि देशन। कीन्हो दुर्ग सिन्धु विच सरजन ॥ ३ ॥
देवत दुख यह दस्यु समाना। बाहर आय प्रजा को नाना ॥ ४ ॥
निन्दित वचन कहे शिशुपाला। तदपि न बोले दीनदयाला ॥ ५ ॥
शिवा शब्द वर जिमि वनराजा। देकर ध्यान न करत अकाजा ॥ ६ ॥
इत भगवत निन्दा सुन काना। कर्ण पिधाय सभासद नाना ॥ ७ ॥
सभा भवन ते बाहर आये। चेदिप प्रति अपशब्द सुनाये ॥ ८ ॥
सुनहि जे हरि सन्तन बदनामी। सो नर होय नरक पथ गामी ॥ ९ ॥
पाण्डु पुत्र सुन कृष्ण बुराई। मत्स्य व सृञ्जय कैकय राई ॥ १० ॥

दोहा- **कुद्धित होकर उस समय, निज निज शस्त्र उठाय ।**
चेदिप वध के कारने, उठे सभी सुनु राय ॥ २०७ ॥

चौ- हरि पक्षी सारे नर पाला । क्रुद्धित देख तदा शिशुपाला ॥ १ ॥
निजकर खड्ग व वर्म उठाकर । कीन्ह भर्त्सना क्रोधित होकर ॥ २ ॥
तदा कृष्ण सब कीन्ह मनाई । निज पक्षी जे ते नर राई ॥ ३ ॥
तीक्ष्ण चक्र ले पुनि निज हाथा । काटा सीस तासु यदुनाथा ॥ ४ ॥
चेदिप मरण देखकर भारी । भयो शोर गुल वहाँ अपारी ॥ ५ ॥
चेदिप अनुयामी जे राजे । ले निज प्राण वहाँ से भाजे ॥ ६ ॥
सबके देखत एक प्रकासा । निकसा चेदिप तनु ते खासा ॥ ७ ॥
कृष्ण स्वरूप बीच वह जाकर । भयो लीन तत्क्षण हे नृपवर ॥ ८ ॥
तीन जन्म तन्मयता पाई । वैर बुद्धि वह हरि को ध्याई ॥ ९ ॥
विप्रन सहित सदस्यन हेतू । दीन्हि दक्षिणा पुनि नृपकेतू ॥ १० ॥

दोहा- **विधिवत सबको पूजि के, कीन्हो अवभृथ स्नान ।**
राजसूय मख पूर्ण यों, करवाकर भगवान ॥ २०८ ॥

चौ- मित्रन ते प्रार्थित कुछ काला । ठहरे इन्द्रप्रस्थ यदुपाला ॥ १ ॥
इच्छा रहित तदपि यदुराई । धर्मराज ते विदा गहाई ॥ २ ॥
रानिन सहित द्वारका आये । संग अमात्य सकल हर्षाये ॥ ३ ॥
उपाख्यान यह सह विस्तारा । सुना नृपति तुम मम मुखद्वारा ॥ ४ ॥
कर यों नृप अवभृथअस्नाना । भये सुशोभित शक्र समाना ॥ ५ ॥
नृप द्वारा सत्कृत अब सारे । सुर मानव गंधर्व अपारे ॥ ६ ॥
हरि अरु मख की करत बड़ाई । निज निज धाम गये हर्षाई ॥ ७ ॥
दुर्योधन देखी मख शोभा । भयो मुदित ना मन बहु क्षोभा ॥ ८ ॥
शिशूपाल वध की यह गाथा । कीन्हो नृप मोचन यदुनाथा ॥ ९ ॥
जे नर राजसूय मख गावहि । तत्क्षण वह निज दुरित नसावहिं ॥ १० ॥

दोहा- **देख महोदय यज्ञ का, सब को खुशी अपारि ।**
क्यों दुर्योधन को हुई, ग्लानि हे मुनि भारि ॥ २०९ ॥

चौ- इसका कारण हे मुनिराया । मोरी समझ नहीं कुछ आया ॥ १ ॥
यों सुन बोले तदा मुनीशा । इसका कारण सुनो महीशा ॥ २ ॥
तोर पितामह मख के अन्दर । करी बन्धु सेवा सब मिलकर ॥ ३ ॥
पाक कर्म बिच भीम वृकोदर । धनाध्यक्ष सुयोधन नृपवर ॥ ४ ॥

नाना वस्तु जुटावन काजू। भयो नियुक्त नकुल सुनु राजू ॥ ५ ॥
अर्जुन गुरु शुश्रुषा साधन। द्विज पद प्रक्षालन यदुनन्दन ॥ ६ ॥
द्रुपद सुत परिवेषण काजा। दान कर्म विच कर्ण विराजा ॥ ७ ॥
सात्यकि विदुर विकर्ण व भूरी। भये निरुपित काम जरूरी ॥ ८ ॥
यों शिशुपाल ज्योति हरि मांही। राजसूय मख बीच सिधाही ॥ ९ ॥
यों जब पूर्ण भयो मखराई। ऋत्विज आदि दक्षिणा पाई ॥ १० ॥

दोहा- **विधिवत पूजित बाद सब, कीन्हो अवभृथ स्नान।**
भेरी शंख मृदङ्ग पण, बजने लगे महान ॥ २१० ॥

चौ- करत नर्तकी नृत्य अपारा। गायक गावत मृदु स्वर द्वारा ॥ १ ॥
जासु नाद अम्बर बिच छाई। तब यदु सृञ्जयदि सब राई ॥ २ ॥
कीन्ह उन यजमान अगारी। नाना वाहन कर असवारी ॥ ३ ॥
चतुरंगी चमु ले निज संगा। निकसे वहँ ते करत प्रसंगा ॥ ४ ॥
कीन्ही ऋत्विज श्रुति ध्वनि भारी। देवन कुसुम वृष्टि तब डारी ॥ ५ ॥
नर सह नार स्वलंकृत भारी। क्रीड़ा करत परस्पर सारी ॥ ६ ॥
वार योषिता भी ले उत्तम। गौ रस तेल हरिद्रा कुंकुम ॥ ७ ॥
पुरुषन के तनु ऊपर मलहीं। नर भी सरोवार तेहिं करहीं ॥ ८ ॥
राजसूय मख देखन कारन। आई सुरवधु चढि नभ यानन ॥ ९ ॥
शिविका ऊपर कर असवारी। आई नृपति पत्नियाँ सारी ॥ १० ॥

दोहा- **मातुलेय सखियन कर, सिच्यमान नृप नार।**
भइ सुशोभित उन मुख, मृदु मुस्कान अपार ॥ २११ ॥

चौ- भीजे अम्बर उनके सारे। दीखत जासे अंग सुधारे ॥ १ ॥
भर भर के वे भी पिचकारी। देवर अरु सखियन पर डारी ॥ २ ॥
रथारूढ़ तब नृपति युधिठिर। रानिन सहित सुशोभित सुन्दर ॥ ३ ॥
क्रिया सहित मनु मूरित माना। प्रकटे वे ऋतुराज समाना ॥ ४ ॥
पत्नी संयाजन शुभ कामा। करवायो ऋत्विज गुणधामा ॥ ५ ॥
अरभृथ सम्बन्धित सुनु राया। सर्व कर्म नृपतिहिं करवाया ॥ ६ ॥
करवायो पुनि सुरसरि स्नाना। बजी दुंदुभी मानव नाना ॥ ७ ॥
देव दुंदुभी स्वर्ग बजाई। सुर नर मुनी पितर ऋषि राई ॥ ८ ॥
सुमन वृष्टि की झरी लगाई। पुनि वर्णाश्रम नर समुदाई ॥ ९ ॥
सुरसरि नीर बिच किय स्नाना। तजते अघ नर जासु महाना ॥ १० ॥

दोहा- पट भूषण धारे अब, सुन्दर धर्म नृपाल ।
देकर दान अपार पुनि, कीन्हें सभी निहाल ॥ २१२ ॥

चौ- ऋत्विज विप्रन को नर राई । पूजे पट भूषण मँगवाई ॥ १ ॥
पुनि नृप पट भूषण के द्वारा । पूजे ज्ञाति बन्धु सह दारा ॥ २ ॥
नर नारी जेते मख आये । मणि कुंडल उष्णीष धराये ॥ ३ ॥
पट्ट वसन कंचुक गल हारा । सोभित कनक मेखला द्वारा ॥ ४ ॥
द्विज क्षत्री विश शूद्र कबीला । सह सदस्य ऋत्विज मति शीला ॥ ५ ॥
पूजित नृपति देव मुनि मानव । पितक व लोकपाल तजि उच्छाव ॥ ६ ॥
जेते राजसूय मख आये । ले आज्ञा निज धाम सिधाये ॥ ७ ॥
नृप मख की सब करत बड़ाई । भये तृप्त ना सुर मुनिराई ॥ ८ ॥
करकें जैसे अमृत पाना । तप्त न हो मानव गुणवाना ॥ ९ ॥
पाछे प्रेम समेत युधिष्ठिर । ठहराये बन्धुन सह यदुवर ॥ १० ॥

दोहा- साम्बादिक यदुवीर पुनि, प्रेषित किये निकेत ।
इन्द्र प्रस्थ कुछ दिन रुके, वे हरि नृप प्रिय हेत ॥ २१३ ॥

चौ- धर्मराज यों हरि के द्वारा । कीन्ह मनोरथ पूरण सारा ॥ १ ॥
दुर्योधन देखी मख शोभा । भयो दुखी व्यापा मन क्षोभा ॥ २ ॥
सकल विभूति वहाँ सुशोभित । उस घर में मय द्वारा विरचित ॥ ३ ॥
उन विभूति सह द्रौपदि रानी । सेवत सभी पतिन गुण खानी ॥ ४ ॥
षोडश सहस कृष्ण की रानी । नृप मंदिर बीचे गुण खानी ॥ ५ ॥
भार नितम्ब सहित जब चालत । चहुँ पद भूषण का रव छावत ॥ ६ ॥
कटि प्रदेश जिनका अति सुन्दर । कुंकुम रक्त हार कुच ऊपर ॥ ७ ॥
चंचल कुंडल कानन सोहा । अलक लटकती आनन ओहा ॥ ८ ॥
ये सब शोभा देख सुयोधन । भई जलन उसके हिय राजन ॥ ९ ॥

दोहा- मय द्वारा निर्मित सभा, भवन बीच इक बार ।
बैठे धर्म नरेश संग, कृष्ण बन्धु परिवार ॥ २१४ ॥

चौ- जाम्बूनद सिंहासन ऊपर । इन्द्र समान सुशोभित नृपवर ॥ १ ॥
बन्धुन सहित तदा दुर्योधन । आवा खड्ग हस्त ले राजन ॥ २ ॥
तब वह मय माया ते मोहित । स्थल बीचे वहँ नीर विलोकित ॥ ३ ॥
तब ऊपर वह वस्त्र उठाया । पुनि आगे स्थल नीर दिखाया ॥ ४ ॥
तदा भूमि पर गिरा सुयोधन । हँसे भीम नारिन सह नृपगन ॥ ५ ॥

यद्यपि राजा कीन्ह मनाई । तदपि न माने लोग लुगाई ॥ ६ ॥
अनुमोदित वे हरि के द्वारा । देख दृश्य यह हँसे अपारा ॥ ७ ॥
दुर्योधन के मन दुख व्यापा । व्रीडित होय तदा चुपचापा ॥ ८ ॥
क्रोधित होय गजाह्वय आवा । खेल युक्त इत भूप दिखावा ॥ ९ ॥
भूमि भार हरन के काजू । रहे चुपचाप इधर यदुराजू ॥ १० ॥

दोहा- **उनकी दृष्टि मात्र से, दुर्योधन भये भ्रान्त ।**
जो तुमने पूछा अरे, मुझसे हे नरकान्त ॥ २१५ ॥ क
राज सूय मख में यथा, भई जलन अरु डाह ।
दुर्योधन की सब कही, तुम प्रति हे नरनाह ॥ २१५ ॥ख

चौ- बोले श्री शुकदेव मुनीशा । अपर चरित इक सुनौ महीशा ॥ १ ॥
चेदिप सखा शाल्व इक राया । रुक्मिणि व्याह समय वह आया ॥ २ ॥
जरासन्ध आदिक नरपाला । जीते यदुअन ने उस काला ॥ ३ ॥
सब राजन को तदा सुनाकर । बोला सौभय क्रोधित होकर ॥ ४ ॥
यादव हीन करूँ मैं अवनी । राखो संशय मन ना अपनी ॥ ५ ॥
देखो अब पौरुष तुम मोरा । कर यों शाल्व प्रतिज्ञा घोरा ॥ ६ ॥
रज मुष्टिक इक भक्षण करके । लगा अराधन विच पशुपति के ॥ ७ ॥
वर्ष एक हे जब नृप बीता । बोले शिव लह वर मन चीता ॥ ८ ॥
बोला शाल्व तदा सुर मानव । दैत्य उरग गंधर्व व दानव ॥ ९ ॥
इन अभेद्य कामग इक याना । यदुअन भयप्रद करो प्रदाना ॥ १० ॥

दोहा- **एव मस्तु कहकर तदा, मय प्रति दे आदेश ।**
भये तिरोहित उसी समय, श्री शंकर गिरिजेश ॥ २१६॥

चौ- सौभ नाम इक अय मय याना । कीन्हो मय नृप हेतु प्रदाना ॥ १ ॥
तदा शाल्व चढि कामग याना । पूर्व वैर यदुवन कर ध्याना ॥ २ ॥
द्वारवती ऊपर चढि धाया । संग सुभट ले सजे सजाया ॥ ३ ॥
घेरी पुरी कटक आ घोरा । बाग वाटिका उपवन तोरा ॥ ४ ॥
गोपुर गेह द्वार सब रूँधे । क्रीडा स्थान प्रकोट निरूँधे ॥ ५ ॥
शस्त्र वृष्टि कीन्ही चढि याना । डारे शिला अशनि द्रुमनाना ॥ ६ ॥
छाई सकल दिशा अति धूरी । बाढे चक्रवात भरपूरी ॥ ७ ॥
पीड्यमान इमि सौरभ द्वारा । पुरजन भए तब दुखी अपारा ॥ ८ ॥
बाध्यमान यों प्रजा लखाई । तब बोले स्मर डरहु न भाई ॥ ९ ॥
यों कह रथारूढ बहि आये । सात्यकि साम्ब तासु अनुधाये ॥ १० ॥

दोहा- चारुदेष्ण हार्दिक्य गद, अनुज सहित अक्रूर ।
भानु विन्द शुक सारण, क्रोधित हो भरपूर ॥ २१७ ॥

चौ- यादव अन्य महारण इंगे । धाये चतुरंगी ले संगे ॥ १ ॥
बाद शाल्व यदुअन सह भारी । भयो युद्ध कायर भयकारी ॥ २ ॥
दिव्य अस्त्र ले अब स्मर भारी । सौभय माया सकल निवारी ॥ ३ ॥
ले पुनि बीस पाँच शर भारी । सौभय सेना तुरत विदारी ॥ ४ ॥
शत शायक ले पुनि शम्बरारी । शाल्व सीस पर तजे करारी ॥ ५ ॥
एक अयोमुख ते चमु पाला । दस दक्ष ते चालक तत्काला ॥ ६ ॥
तीन तीन शर वाहन ऊपर । कनक पुँख शर तजे भयंकर ॥ ७ ॥
देखा मनसिज कर्म अपारा । किये बड़ाई सैनिक सारा ॥ ८ ॥
शाल्व नरेश तदा निज याना । कबहूँ रूप धरत वह नाना ॥ ९ ॥
कबहुँ स्वरूप एक प्रकासे । दीखे कबहुँ न कबहुँ दीसे ॥ १० ॥

दोहा- कबहूँ आवत अवनि तल, कबहूँ जात प्रकास ।
गिरि मस्तक ऊपर कबहुँ ,कबहुँ पय विच भास ॥२१८॥

चौ- भ्रमण करत इमि सौभय याना । क्षण भर एकहिं ठौर रूका ना ॥ १ ॥
जहँ जहँ दीखत सौभय याना । तहँ तँह सभी वृष्णि बलवाना ॥ २ ॥
त्यागे निज शर वहाँ भयंकर । तेजवन्त वे अनल दिवाकर ॥ ३ ॥
पीडयमान इमि अरियन द्वारा । देखा सैनिक यान अपारा ॥ ४ ॥
मूर्छित हो तब शाल्व नरेशू । गिरा भूमि व्यापा तनु क्लेशू ॥ ५ ॥
शाल्व अनीकप शस्त्र समूहा । पीडित भये तदपि यदुयूहा ॥ ६ ॥
भाजे ना वे समर तजाई । डटे रहे वहिं पर सुनुराई ॥ ७ ॥
शाल्व प्रधान तदा घूमाना । आवा जहँ मनसिज बलवाना ॥ ८ ॥

दोहा- कृष्ण सुवन का तुरत रथ, रण से लिया निकाल ।
भये काम इक मुहूर्त में, बाद सजग जिस काल ॥ २१९॥

चौ- दारुक सुत प्रति वचन कहेऊ । कीन्ह असाधु सूत तुम येहू ॥ १ ॥
जो रण से मोही यहँ लावा । मोरे सीस कलंक लगावा ॥ २ ॥
मोरे वंश सुना नहिं कोइ । समर त्याग भजा हो जोई ॥ ३ ॥
सचमुच सूत अरे तू कायर । रामकृष्ण सन्मुख मैं जाकर ॥ ४ ॥
कवन भाँति मम वदन दिखाऊँ । उन सन्मुख जावत शर्माऊँ ॥ ५ ॥
अब तो सभी कहहिं यहि बाता । त्यागा समर बचावन गाता ॥ ६ ॥

भ्रात वधू मम हँस कर पूछे । तुमते अरे नपुँसक अच्छे ॥ ७ ॥
जो रण त्याग भाज यहँ आये । यों सुन वदन मोर मुरझाये ॥ ८ ॥
बोले सूत तदा मृदु बानी । श्रेष्ठ सूत की यही निसानी ॥ ९ ॥
आवहि यथा रथी पर आफत । करहिं सूत रक्षा उस सायत ॥ १० ॥

दोहा- **परे विपरित जब सूत पर, तदा रथी सब तोर ।**
प्राण बचावे सूत का, यही धर्म शिर मोर ॥ २२० ॥

चौ- सोच सारथी धर्म हमारा । कीन्हा कृत्य यह भली प्रकारा ॥ १ ॥
मूर्छित शत्रु गदा के द्वारा । देखे जब तुम सभी प्रकारा ॥ २ ॥
तदा समर से रथ मैं लेकर । आवा तुरत यहाँ पर यदुवर ॥ ३ ॥
शम्बरादि अब कर जलपाना । धारे धनुष खड्ग तन त्राना ॥ ४ ॥
बोले वचन मदन सुन सूता । रथ सजवाय अभी मजबूता ॥ ५ ॥
शाल्व अमात्य पास पहुँचाऊ । रणबीचे मत देर लगाऊ ॥ ६ ॥
यों सुन सारथि रथ सजवाया । हरि सुत को रण में पहुँचाया ॥ ७ ॥
जँह मारहिं चमु शाल्वप्रधाना । रोक उसे मारे वसु बाना ॥ ८ ॥
चार बाण ते घोटक चारी । एक बाण अरि सूत विदारी ॥ ९ ॥

दोहा- **युग शर ते काटी ध्वजा, धनुष सीस इक बान ।**
इत गद सात्यकि साम्ब मिल,हनि अरि सैन्य महान॥२२१॥

चौ- यों दिन बीस सात पर्यन्ता । शाल्व यादवन युद्ध न अन्ता ॥ १ ॥
उत हरि इन्द्रप्रस्थ प्रिय भक्ता । भयऊ यदा मख से निवृत्ता ॥ २ ॥
चेदिप वध जब से उन कियऊ । तब दुश्चिह्न घोर उन दर्शऊ ॥ ३ ॥
एक एक ते अशुभ विशेषा । जब दुश्चिह्न घोर प्रभु देखा ॥ ४ ॥
तब कुरु वृद्धन अनुमति लेकर । आये पुरी द्वारका यदुवर ॥ ५ ॥
करत विचार प्रभु मग अन्दर । राम समेत मैं आयऊँ यहँ पर ॥ ६ ॥
वहँ चेदिप पक्षिय नृप जेते । रूँधहि पुरी हमारी वेते ॥ ७ ॥
करते यों चिन्ता हरि भारी । पहुँचे तुरत द्वारका द्वारी ॥ ८ ॥
सौभ शाल्व द्वारा वहँ अर्दित । देखे यादव बान्धव पीडित ॥ ९ ॥
पुर रक्षा हित राम लगाये । दारुक प्रति प्रभु वचन सुनाये ॥ १० ॥

दोहा- **मम रथ दारुक शीघ्र तू, शाल्व पास पहुँचाऊ ।**
इस मायावी सौभ का, मत विचार मन लाउ ॥ २२२ ॥

चौ- यों सुन दारुक ने हरि स्यन्दन । प्रेरित कियो जहाँ रण अंगन ॥ १ ॥
आवत गरुड़ध्वज रथ देखा । निज सैनिक भए मुदित विशेषा ॥ २ ॥
देखे युद्ध बीच यदुराई । दारुक पर खल शक्ति चलाई ॥ ३ ॥
हरि नभ आवत शक्ति लखाई । किये खंडशत वाण तजाई ॥ ४ ॥
वेधा सौभय सौलह बाना । शर जालन पुनि सौभ महाना ॥ ५ ॥
बाद शाल्व ने हरि भुज ऊपर । कीन्हों एक प्रहार भयंकर ॥ ६ ॥
शार्ङ्ग धनुष तब गिरा जमी पर । हाहाकार भयो यह लखकर ॥ ७ ॥
उच्च स्वर ते अब वह राया । यदुनन्दन प्रति वचन सुनाया ॥ ८ ॥
अरे मूढमति मित्र हमारा । चेदिप सभा मध्य हत डारा ॥ ९ ॥
सब के देखत हे खलराई । हरण कीन्हि तुम तासु लुगाई ॥ १० ॥

दोहा- **रण तज कर यदि आज तू, भाजि गयो ना दूर ।**
तो अवश्य निज वाण ते, वध तव करूँ जरूर ॥ २२३॥

चौ- शाल्व वचन सुन वदत कृपालू । मन्द वृथा न वजावउ गालू ॥ १ ॥
नाचत सिर पर मौत तुम्हारी । सुनौ उक्ति यह सत्य हमारी ॥ २ ॥
शूर वीर ना गाल बजावत । वे निज पौरुष समर दिखावत ॥ ३ ॥
यो कह हरि ने गदा घुमाई । खल हँसली पर तुरत चलाई ॥ ४ ॥
वापिस जब वह गदा सिधाई । उसके बाद सुनो नर राई ॥ ५ ॥
रक्त वमन कर कम्पन लागा । भयो तिरोहित बाद अभागा ॥ ६ ॥
पाछे एक मुहूरत अन्दर । आता वह मानव तनु धर कर ॥ ७ ॥
कर प्रणाम यों वचन सुनावा । मात देवकी मोहि पठावा ॥ ८ ॥
अरे कृष्ण सुन पिता तुम्हारे । बाँधे गये शाल्व के द्वारे ॥ ९ ॥
ले जावत जिमि पशुहिं कसाई । गयो शाल्व ले त्यो यदुराई ॥ १० ॥

दोहा- **यो सुनकर विपरीत वच, करुणा कर भगवान ।**
प्राकृत नर सम कुच क्षण, होय उदास महान ॥ २२४ ॥

चौ- देव दनुज मानव जग जेते । रामहिं जीत सकै ना वेते ॥ १ ॥
कर पुनि विजय शाल्व खल तेहू । क्यों कर बाँध पितहिं लेजेहू ॥ २ ॥
सचमुच भाग्य महा वलवन्ता । यों कह रहे यदा भगवन्ता ॥ ३ ॥
त्योंही शाल्व वहाँ पर आवा । माया मय वसुदेव बनावा ॥ ४ ॥
हरि से खल ने वचन उचारे । अरे कृष्ण यह पिता तुम्हारे ॥ ५ ॥
तव देखत सिर काट गिराऊँ । हो बल पौरुष इसे बचाऊ ॥ ६ ॥

यों कह खल निज खड्ग उठावा । सीस काट वसुदेव गिरावा ॥ ७ ॥
ले पुनि सीस गयउ खल अम्बर । पहुँचा तुरत सौभ के भीतर ॥ ८ ॥
यद्यपि कृष्ण चन्द्र सुनु राया । ज्ञान स्वरूप सिद्ध सब गाया ॥ ९ ॥
तो भी प्राकृत मानव नाई । छाया शोक बहुत तन माँई ॥ १० ॥

दोहा- **दो घटिका पीछे वहाँ, माया विद् भगवान ।**
जाली माया शाल्व की, मय दानव कृत दान ॥ २२५ ॥

चौ- पिता देह वहँ दूतन देखा । सुवन समा यह दृश्य विशेषा ॥ १ ॥
देखा उधर शाल्व निज याना । तब वध करन तासु भगवाना ॥ २ ॥
उद्यत भये सुनौ नृप ज्ञानी । अनुसन्धान रहित अज्ञानी ॥ ३ ॥
वदत कोइ ऋषि यो निज बानी । हरि बिच शोक व मोह बखानी ॥ ४ ॥
नसत अविद्या जिन पद सेवा । पावत मोक्ष परम नर देवा ॥ ५ ॥
उन बिच शोक मोह पुनि कैसा । यह नहि सत्य कहा उन जैसा ॥ ६ ॥
अब निज बाणन ते यदुराया । शर हनि कवच व धनुष नसाया ॥ ७ ॥
कीन्ही छिन्न भिन्न मणि सीसा । तौरा सौभ गदा हनि ईशा ॥ ८ ॥
गिरा सौभ तब सागर नीरा । तब तजि सौभ शाल्व बलवीरा ॥ ९ ॥
द्रुत गति से हरि सन्मुख आवा । कीन्ह आक्रमण गदा उठावा ॥ १० ॥

दोहा- **करत आक्रमण शाल्व को, देख तदा भगवान ।**
गदा सहित तत्क्षण भुजा, काटी हन निज बान ॥ २२६॥

चौ- शाल्व हनन हित अब भगवाना । आभ जासु लय भानु समाना ॥ १ ॥
काटा सिर ले चक सुदरशन । मुकुट किरीट समेत रणाङ्गन ॥ २ ॥
हाहाकार मचा तब भारी । सुरपुर सुरन दुन्दुभी झारी ॥ ३ ॥
गिरा शाल्व खल जब रण अंगन । हनकर गदा यदा यदुनन्दन ॥ ४ ॥
रचित सौभ मयदानव माया । छिन्न भिन्न कर सिन्धु गिराया ॥ ५ ॥
दन्तवक्त्र तब कारुष राजा । क्रोधित होय मित्र प्रिय काजा ॥ ६ ॥
ले इक सेन वहाँ पर भारी । आवा कृत महि कम्पन सारी ॥ ७ ॥
देख पदाति यदा यदुनन्दन । लेकर गदा त्याग निज स्यन्दन ॥ ८ ॥
रोका तेहि तट सिन्धु समाना । तब वह करुष अधिप बलवाना ॥ ९ ॥
दन्तवक्त्र निज गदा उठाई । कृष्ण हेतु यों वचन सुनाई ॥ १० ॥

दोहा- **भयो दृष्टि पथ आज तू, बहुत दिवस के बाद ।**
परम खुशी की बात यह, सुनी इष्ट फरियाद ॥ २२७ ॥

चौ- मातुलेय तू अरे हमारा । मुझसे योग्य न हनन तुम्हारा ॥ १ ॥
किन्तु अरे तू मारन मोहीं । चाहत अरे सुनो कुल द्रोही ॥ २ ॥
इस कारण इस गदा के द्वारा । करूँ आज वध अरे तुम्हारा ॥ ३ ॥
मित्रन के ऋण से मैं तबहीं । होऊँ उऋण जबै तू मरहीं ॥ ४ ॥
रूक्ष वचन यों हरिहिं सुनाई । प्रभुसिर पर पुनि गदा चलाई ॥ ५ ॥
लागत गदा किन्तु भगवाना । विचलित भए ना सिंह समाना ॥ ६ ॥
बाद कृष्ण ने गदा उठाई । मारी वक्षस्थल पर राई ॥ ७ ॥
भग्न हृदय तब कारुष राया । मुख ते रुधिर वमन कर पाया ॥ ८ ॥
केश बाहु दोउ अङ्घ्रि पसारी । गिरा भूमिगत प्राण सुरारी ॥ ९ ॥
तदा ज्योति इक सब अवलोकित । भई लीन हरि तनु उश उत्थित ॥ १० ॥

दोहा- **नाम विदूरथ भ्रात उस, शोक व्याप्त तत्काल ।**
हरि का वध करने वहाँ, आवा ले असि ढाल ॥ २२८ ॥

चौ- तदा कृष्ण सुदरशन द्वारा । तत्क्षण विदुरथ सीस उखारा ॥ १ ॥
सौभ युँ शाल्व सहानुज राजन । दन्तवक्त्र वध कर यदुनन्दन ॥ २ ॥
सुर मानव मुनि सिद्धन द्वारा । गीय मान जयगीत अपारा ॥ ३ ॥
अभिवर्षित शुभ पुष्पन द्वारा । यदुअन ते वृत भसी प्रकारा ॥ ४ ॥
तोरण ध्वजा अलंकृत भारी । पहुँचे निजपुर कृष्ण खरारी ॥ ५ ॥
यों योगेश कृष्ण जगदीशा । खेलत खेल अनेकनि ईशा ॥ ६ ॥
जो अविवेकी पशू समाना । निर्जित भी कबहूँ उन माना ॥ ७ ॥
कौरव पाँडुन का इक वारा । सुना राम रण उद्यम सारा ॥ ८ ॥
तीरथ यात्रा केर वहाना । गये प्रभास क्षेत्र हित स्नाना ॥ ९ ॥
कर वहँ देव रिषिन नर तरपन । पहुँचे बाद सुरसती प्राँगन ॥ १० ॥

दोहा- **बाद प्रथूदक विन्दुसर, शुभ त्रितकूप विशाल ।**
गये सुदर्शन तीर्थ विच , यदुवर राम कृपाल ॥ २२९ ॥

चौ- पहुँचे ब्रह्मतीर्थ पुनि रामा । पाछे चक्रतीर्थ शुभ धामा ॥ १ ॥
कीन्हा गंग यमुन विच स्नाना । पहुँचे नैमिष तीर्थ महाना ॥ २ ॥
ऋषि मुनि जहाँ सत्र लवलीना । आवत देखे राम कुलीना ॥ ३ ॥
कीन्ह प्रणाम बाद कर पूजन । दीन्हो राम हेतु शुभ आसन ॥ ४ ॥
पूजित राम वहाँ पर देखा । उच्चासन पर सूत विशेषा ॥ ५ ॥
ऋषि मुनि जहाँ सत्र लवलीना । आवत देखे राम कुलीना ॥ ६ ॥

अकृत वन्दन अकृत आदर । उच्चासन पर सूतहि लखकर ॥ ७ ॥
व्यापा क्रोध राम हिय भारी । यह प्रति लोमज कवन प्रकारी ॥ ८ ॥
हम सब यहाँ धरम के ज्ञाता । व्यापि न लाज देख इस गाता ॥ ९ ॥
यह दुर्बुद्धि अरे वध योगू । ना अज्ञान वदत यहि लोगू ॥ १० ॥

दोहा- **व्यास शिष्य होकर यह, धर्म सुशास्त्र पुरान ।**
ज्ञाता सब इतिहास का, तदपि बना नादान ॥ २३० ॥

चौ- यह निज को अति पंडित मानत । निज मन पर संयम ना राखत ॥ १ ॥
नट समान चेष्टा सब येहू । अभिनय मात्र लखी हम तेहू ॥ २ ॥
मिलहिं न लाभ स्वयं को येहा । अपर न लाभ उठावत जेहा ॥ ३ ॥
धारहिं चिह्न धरम के कारन । करहिं न किन्तु धरम का पालन ॥ ४ ॥
इस जग बीच धरम च्युत लोगू । मुझसे सदा अरे वध जोगू ॥ ५ ॥
मेरो जन्म भयो यहि हेतू । यों कह तदा राम यदु केतू ॥ ६ ॥
यद्यपि खल वध निवृत्त रामा । ले कुशाग्र निज हस्त ललामा ॥ ७ ॥
कीन्ह प्रहार सूत के ऊपर । गिरे रोमहर्षण मृत भूपर ॥ ८ ॥
तदा खिन्न मानस मुनि सारे । राम हेतु यों वचन उचारे ॥ ९ ॥
तुम यदुवंश शिरोमणि होकर । कीन्ह अधर्म प्रभो य भयंकर ॥ १० ॥

दोहा- **जब लों सत्र न पूर्ण हो, हे बलराम उदार ।**
तब लौं हमने सूत को, दीन्हो यह अधिकार ॥ २३१ ॥

चौ- दे आयु ब्रह्मासन ऊपर । स्थापित किये सभी ने मिलकर ॥ १ ॥
कीन्ह अजान आप वध येहा । द्विज वध सम प्रायश्चित लेहा ॥ २ ॥
तुम योगेश्वर सदा सुपावन । श्रुति का भी तुम पर नहीं शासन ॥ ३ ॥
तदपि निवेदन प्रभो हमारी । जनपावन हित तुम अवतारी ॥ ४ ॥
द्विजवध प्रायश्चित यदि करहीं । तो जग को भी शिक्षा मिलहीं ॥ ५ ॥
ऋषिन हेतु बोले बल वानी । सुनो तपो धन ऋषि मुनि ज्ञानी ॥ ६ ॥
लोक अनुग्रह हेतु तुम्हारी । मानूँ शिक्षा सभी प्रकारी ॥ ७ ॥
द्विज वध प्रायश्चित जो होई । करो कथन मुझसे तुम सोई ॥ ८ ॥
सूत हेतु जो रुचि तुम्हारी । इन्द्रिय शक्ति अवस्था भारी ॥ ९ ॥
मैं निज योग पराक्रम द्वारा । करूँ साधना सभी प्रकारा ॥ १० ॥

दोहा- **राम वचन सुन ऋषि मुनि, बोले तदा विचार ।**
अस्त्र निरर्थक हो न तव, वच ना असत हमार ॥ २३२ ॥

चौ- मुनिजन के सुनकर वच काना । बोले तदा राम भगवाना ॥ १ ॥
वदत वचन यों वेद पुराना । निज आत्मा सम पुत्र बखाना ॥ २ ॥
सूत रोम हर्षण अब आजू । कथा सुनावहि सकल समाजू ॥ ३ ॥
बल वय इन्द्रिय करूँ प्रदाना । बाँचहि यहि अब सभी पुराना ॥ ४ ॥
अन्य कामना होहिं तुम्हारी । करो कथन वह मुझसे सारी ॥ ५ ॥
भयो पाप मुझसे अनजाना । कहो निष्कृति सोच विधाना ॥ ६ ॥
बोले मुनी सुनौ बलरामा । इल्वल सुत बल्वल जिस नामा ॥ ७ ॥
पर्व पर्व पर वह यहँ आवे । कर मख दूषित धूम मचावे ॥ ८ ॥
शोणित विष्ठा मूत्र अपारा । त्यागहिं यूथ सुरादिक धारा ॥ ९ ॥
करहु राम बल्वल वध येहू । हम की यहि सेवा कर देहू ॥ १० ॥

दोहा- **दिवस तीन सौ साठ तक, भरत खंड की आय ।**
करो परिक्रमा बाद में, तीर्थ स्नान सह जाय ॥ २३३ ॥

सोरठा- करो कृच्छ व्रत चार, इस द्विज वध के पाप हित ।
मन मत करो विचार, काम पाल यादव मणि ॥ २ ॥

चौ- श्री शुक कहे सुनौ कुरुनन्दन । कुछ दिन बसै वहाँ युदनन्दन ॥ १ ॥
प्राप्त पूर्व मख ऊपर भारी । पूय गन्ध युत मांसु अपारी ॥ २ ॥
चाली हे नृप बात प्रचन्डा । मांस मेदमय वृष्टि अखण्डा ॥ ३ ॥
तदा शूलधर बल्वल दानव । आवा जहाँ खड़े प्रभु यादव ॥ ४ ॥
भीम काय कृष्णानन भारी । उग्र दंष्ट्र लखि दैत्य करारी ॥ ५ ॥
तदा राम हल मूसल लेकर । पहुँचे जहाँ गगनचर निशचर ॥ ६ ॥
हल ते खींच तुरत वह बल्वल । कीन्हा भग्न सीस हनि मूसल ॥ ७ ॥
मुखते रुधिर वमन कर भारी । गिरा भूमि पर तदा द्विजारी ॥ ८ ॥
इन्द्र वज्र हत अद्रि समाना । कर वह घोर नाद बलवाना ॥ ९ ॥
मृतक देख देहि मुनि गण सारे । होय मुदित जय राम उचारे ॥ १० ॥

दोहा- **राम हेतु आशीष दे, कीन्हो पुनि अभिषेक ।**
वैजयन्ति माला दई, भूषण वस्त्र अनेक ॥ २३४ ॥

चौ- मुनि आज्ञा ले अब यदुराई । सरित कौशिकी पहुँचे आई ॥ १ ॥
प्रकट भई सरयू जहँ सुन्दर । उस सर बीच स्नान कर यदुवर ॥ २ ॥
आ पहुँचे पुनि तीरथ राजू । करत वास जहँ सन्त समाजू ॥ ३ ॥
कर वहँ स्नान बाद कर तरपन । पहुँचे पुलहाश्रम पुनि पावन ॥ ४ ॥

सरित गंडकी गोमती सुन्दर । पहुँचे व्यास शोण पुनि यदुवर ॥ ५ ॥
पाछे वहँ ले गया सिधाये । पिण्डदान पितरन करवाये ॥ ६ ॥
वहँ ते पहुँचे गंगा सागर । स्नान दान कर वहँ ते यदुवर ॥ ७ ॥
गिरि महेन्द्र ऊपर पुनि आये । परसुराम दरसन वहँ पाये ॥ ८ ॥
कर पूजन पाछे बलरामा । गये सप्त गोदावरि धामा ॥ ९ ॥
वेणा पम्पा भीमरथी पर । कीन्ह स्कन्द के दर्शन सुन्दर ॥ १० ॥

दोहा- **गये बाद श्री शैल पर, पाछे द्रविड प्रदेश ।**
वैंकट गिरि दर्शन किये, होकर मुदित विशेष ॥ २३५ ॥

चौ- शिव अरु विष्णु काञ्चि विख्याता । पहुँचे बाद कृष्ण बड़ भ्राता ॥ १ ॥
कावेरी सरिता पर पाछे । दिये दान मज्जन कर आछे ॥ २ ॥
पहुँचे रंग क्षेत्र पुनि रामा । करत निवास विष्णु जिस धामा ॥ ३ ॥
ऋषम गिरी ते दक्षिण मथुरा । पहुँचे सेतु बन्ध यदुशरा ॥ ४ ॥
अयुत धेनु वहँ विप्रन हेतू । दीन्ह दान सुन्दर यदुकेतू ॥ ५ ॥
ताम्रपर्णि कृत माला ऊपर । होकर पहुँचे मलयाचल पर ॥ ६ ॥
देख कुलाचल को हरसाये । कुंभज रिषि के आश्रम आये ॥ ७ ॥
कर वन्दन उन अनुमति लेकर । गये राम दक्षिण सागर पर ॥ ८ ॥
पहुँचे पाछे क्षेत्र कुमारी । दर्शन किये वहाँ बल धारी ॥ ९ ॥
फागुन हो पञ्चासर आये । कृत मज्जन जहँ पाप नसाये ॥ १० ॥

दोहा- **अयुत धेनु विप्रन प्रति, देकर वहँ ते राम ।**
केरल देश त्रिगर्त में, कुछ दिन कर विश्राम ॥ २३६ ॥

चौ- शंभु क्षेत्र जहँ धूर्जटि वासा । तीर्थ नाम गोकर्ण प्रकासा ॥ १ ॥
आर्या द्वैपायनी विशाला । पहुँचे वहँ, पर राम कृपाला ॥ २ ॥
शूर्पारक पर पुनि भगवाना । दियो दान विप्रन प्रति नाना ॥ ३ ॥
तापी सरित पयोष्णी सुन्दर । किये स्नान जाकर पुनि यदुवर ॥ ४ ॥
कर निर्विन्ध्या में प्रभु मज्जन । पहुँचे वहँ ते दण्डक कानन ॥ ५ ॥
दण्डक ते रेवा पर आये । जहँ माहिष्मति पुरी सुहाये ॥ ६ ॥
वहँ मनु तीर्थ बीच कर स्नाना । गये प्रभास क्षेत्र भगवाना ॥ ७ ॥
कौरव पाण्डव रण का सारा । समाचार सुन विप्रन द्वारा ॥ ८ ॥
कीन्ह राम अनुभव मन द्वारा । उतरा भार भूमि का सारा ॥ ९ ॥
जिस दिन भीम और दुर्योधन । कीन्हो गदा युद्ध रण आङ्गन ॥ १० ॥

दोहा- **उन्हें निवारण करण को, संकर्षण भगवान ।**
रण प्राङ्गण पहुँचे तदा, कुरुक्षेत्र दरम्यान ॥ २३७ ॥

चौ- नृपति युधिष्ठिर माद्रिज दोऊ । कर वन्दन कृष्णार्जुन सोऊ ॥ १ ॥
भयवश रहे किन्तु चुपचापा । देख उन्हें यह संशय व्यापा ॥ २ ॥
इस रण हेतु राम क्या कहहीं । यो मन सोच वचन ना वदही ॥ ३ ॥
जहाँ भीम दुर्योधन दोऊ । विचरत मण्डल वद्धित सोऊ ॥ ४ ॥
देख उन्हें बोले यदुराई । सम बल अरे भीम दोउ भाई ॥ ५ ॥
अरे भीम तुम अति बलवाना । दुर्योधन शिक्षित अतिमाना ॥ ६ ॥
इस कारण रण प्राङ्गण माँही । जय व पराजय दीखत नाँही ॥ ७ ॥
रोको निष्फल युद्ध तुम्हारा । किन्तु न राम वचन उन धारा ॥ ८ ॥
तब यह दैव गति लखि रामा । गवने तुरत द्वारिका धामा ॥ ९ ॥
राम आगमन सुनकर काना । भये मुदित यदुअन सह नाना ॥ १० ॥

दोहा- **वहँ ते नैमिष तीर्थ में, गये बाद भगवान ।**
करत जहाँ पर वास सब,ऋषि मुनि तपो निधान॥२३८॥

चौ- युद्धादिक निवृत भगवाना । यज्ञादिक जिन अंग बखाना ॥ १ ॥
तदपि मुनिन हो मुदित अपारा । करवायो शुभ मख बलद्वारा ॥ २ ॥
सर्व समर्थ राम भगवाना । किय सन्तन हित ज्ञान प्रदाना ॥ ३ ॥
निज पत्नी सह अवभृथ स्नाना । कीन्हों बाद राम भगवाना ॥ ४ ॥
ज्ञाति बन्धु मित्रन सह पाछे । चन्द्र समान सुशोभित आछे ॥ ५ ॥
स्वयं अनन्त राम भगवाना । करहि न जिन मन वचन निदाना ॥ ६ ॥
यों अनन्त राम भगवाना । करहि न जिन मन वचन निदाना ॥ ७ ॥
करहि पाठ संकर्षण गाथा । हो अहिं सो नर प्रिय श्री नाथा ॥ ८ ॥
ब्रह्म पातकी सुनहि जे कोई । हो अहि तासु पाय विलगोई ॥ ९ ॥
पावहिं सो नर भक्ति अपारा ॥ मिलहि मोक्ष तेहि भली प्रकारा ॥ १० ॥

दोहा- **अपर कथा भगवान की, मुझको हे मुनि राय ।**
श्रवण करन की अति रुचि, बोले यों नरवाय ॥ २३९॥

चौ- ऐसो कौन जगत में कोई । हरि सत्कथा विमुख जो होई ॥ १ ॥
गावहिं जो भगवत गुणवानी । वही श्रेष्ठ सब सन्त बखानी ॥ २ ॥
जो हरि कर्म करहि वहि हाथा । वहिमन मन सुमिरहिं श्री नाथा ॥ ३ ॥
भगवत कथा सुनहि वहिं काना । हरि पद नमहिं जे सीस वखाना ॥ ४ ॥

जिनते श्री हरि दर्शन पावे । सोही नयन सफल कहलावे ॥ ५ ॥
विष्णु भक्त पादोदक जासू । सेवन करहिं सो अङ्ग प्रकासू ॥ ६ ॥
बोले सूत सुनो मुनि राई । यों जब प्रश्न कियो कुरुराई ॥ ७ ॥
कृष्ण भक्ति मन मग्न मुनीशा । बोले श्री शुक सुनो महीशा ॥ ८ ॥
विषय विरक्त विप्र इक कोई । सखा कृष्णका जानो सोई ॥ ९ ॥
मिलहिं भाग्यवश तासु गुजारा । करत विप्र हो तुष्ट अपारा ॥ १० ॥

दोहा- **दरिद्रता से व्यथित अति, भार्यासह द्विजराज ।**
करत वास निजगेह में, सुनो नृपति सिरताज ॥ २४०॥

चौ- अम्बर जिनके फटे पुराने । तो भी रंग फिकर ना माने ॥ १ ॥
धर्म पतिव्रत जानन हारी । शुष्क वदन भय कम्पित भारी ॥ २ ॥
पति समीप आकर इकबारा । कर जोरे इमि वचन अपारा ॥ ३ ॥
ब्रह्मन श्रीपति सखा तुम्हारे । दीन बन्धु ब्रह्मण्य अपारे ॥ ४ ॥
मानो बात एक ममस्वामी । जाउ पास उन अन्तर्यामी ॥ ५ ॥
दुःखित जान तुम्हें श्री नाथा । देवहि अतुल द्रव्य हे नाथा ॥ ६ ॥
आज काल्ह वे रमा निवासू । करत द्वारिका बीच निवासू ॥ ७ ॥
वे प्रभु ऐसे परम उदारा । ले वहि जो उन चरण सहारा ॥ ८ ॥
उन सन्तन प्रति वे भगवाना । निज आत्मा भी करहिं प्रदाना ॥ ९ ॥
अर्थ काम यदि दे यदुराई । तो ना इसमें कुछ अधिकाई ॥ १० ॥

दोहा- **भार्या ते प्रार्थित द्विज, यों वह बारम्बार ।**
परम लाभ ही कृष्ण के, दर्शन सोच विचार ॥ २४१ ॥

चौ- गमन द्वारिका कियो विचारा । पुनि भार्या ते वचन उचारा ॥ १ ॥
हे कल्याणि उपाय न कोई । देउ भेंट हित घर में जोई ॥ २ ॥
पति के वचन श्रवण कर नारी । गवनी पृथक पृथक घर चारी ॥ ३ ॥
माँगे तंडुल मुष्ठिक चारी । बाँधे वस्त्र खंड निज सारी ॥ ४ ॥
भेंट हेतु तंडुल भगवाना । कीन्हे निज पति हस्त प्रदाना ॥ ५ ॥
ले तंदुल चाले द्विज राई । सुमिरण करत कृष्ण यदुराई ॥ ६ ॥
हो मों हि दर्श रमापति कैसे । करत विचार पंत बिच ऐसे ॥ ७ ॥
जबै भानु अस्ताचल पाये । तब वह विप्र द्वारका आये ॥ ८ ॥
पुर बाहर कर कुछ विश्रामा । अब वह विप्रन संग सुदामा ॥ ९ ॥
देखत सैनिक स्थान नवीना । कर पुनि पार प्रतोली तीना ॥ १० ॥

दोहा- **अच्युत प्रिय अन्धक अरु, वृष्णिन के तजि गेह ।**
कृष्ण भवन पहुँचे द्विज, जिन हरि चरण सनेह ॥ २४२॥

चौ- सौलह सहस नारियन अयनं । जिन विच परम भवन नखि नयनं ॥ १ ॥
कीन्ह प्रवेश तासु द्विजराया । देखि दूर ते तेहि यदुराया ॥ २ ॥
उठे तुरत तिय सेज तजाई । भये प्रफुल्लित सुनु कुरुराई ॥ ३ ॥
आये जहँ पर खड़े सुदामा । लीन्हो कंठ लगा श्रीधामा ॥ ४ ॥
पुनि प्रिय अङ्ग सङ्ग ते भारी । हर्षित होय कृष्ण सुख कारी ॥ ५ ॥
निज नयनन ते अश्रु बहाये । निज शय्या पर विप्रहिं लाये ॥ ६ ॥
दीन्हि उपायन पुनि द्विज काजू । चरण तासु धोकर यदुराजू ॥ ७ ॥
जगपावन कर्ता जगदीशा । द्विज पद नीर धरा निज सीसा ॥ ८ ॥
ले पुनि अगरु व कुंकुम चन्दन । विप्र भाल चर्चा यदुनन्दन ॥ ९ ॥
कर पूजन धूपादिक द्वारा । कियो मित्र सत्कार अपारा ॥ १० ॥

दोहा- **मलिन व क्षाम कुचैल अरु, शिरागात्र अवशेष ।**
विप्रहिं लख इमि रुक्मिणी, हर्षित होय विशेष ॥ २४३ ॥

चौ- कंचन चामर व्यजन डुलाये । द्विज श्रम जासे तुरत नसाये ॥ १ ॥
लखि अवधूत कृष्ण ते सत्कृत । अन्तः पुर जन भए अति विस्मित ॥ २ ॥
पकर कृष्ण द्विज हस्त परस्पर । गुरुकुल कथा कही अब हँसकर ॥ ३ ॥
अब द्विज ते हरि वचन सुनाये । गुरु कुल त्याग यदा तुम आये ॥ ४ ॥
भयो व्याह वा ना तुम गाता । निज सम भार्या के संग भ्राता ॥ ५ ॥
निज घर बीचे चित्त तुम्हारा । होना लुब्ध मनोरथ द्वारा ॥ ६ ॥
पट धन बीचे प्रेम तुम्हारा । होय कदापि न इस संसारा ॥ ७ ॥
विषय वासना त्यागन हारा । करहि कर्म सो पर उपकारा ॥ ८ ॥
गुरु कुल बीचे वास हमारा । आवत याद मुझे हर बारा ॥ ९ ॥
गुरु समीप रह कर नर जोई । आत्म तत्व सीखहिं सब कोई ॥ १० ॥

दोहा- **भव सागर से पार हो, पावत मोक्ष महान ।**
पावत कष्ट अनेक वह,करहिं न तत्व पिछान ॥ २४४ ॥

चौ- होवत तीन गुरु संसारा । जन्म प्रदाता पिता हमारा ॥ १ ॥
अपर गुरु उपनयन दिलावे । पाछे हे द्विज वेद पढ़ावे ॥ २ ॥
सभी आश्रमिन प्रति मैं ज्ञानद । गुरु तृतीय हूँ सखे विशारद ॥ ३ ॥
गुरु रूप मम लेहि सहारा । सो नर जावहि भव के पारा ॥ ४ ॥

जैसो मैं गुरु सेवा द्वारा । होऊँ मुदित ना अन्य प्रकारा ॥ ५ ॥
गुरु कुल बीचे वास हमारा । वह वृत्तान्त विदित मोहिं सारा ॥ ६ ॥
इन्धन लेने द्विज इक वारा । प्रेपित किये विपिन गुरु द्वारा ॥ ७ ॥
तदा विपिन विच सखे अखंडा । चाली वर्षा वात प्रचंडा ॥ ८ ॥
तावत् अस्त भयो रवि भ्राता । तम से व्याप्त दिशा सब जाता ॥ ९ ॥
दीखत उच्च नीच ना स्थाना । जलमयि भइ महि पंथ न जाना ॥ १० ॥

दोहा- **तुम हम वर्षा वात से, पीड़ित होय अपार ।**
गहे परस्पर हस्त निज, धरा काष्ठ शिर भार ॥ २४५ ॥

चौ- इत उत फिरत विपिन के अन्दर । बीती सकल निशा यों दुखकर ॥ १ ॥
भानु उदय वेला जब आई । तब सान्दी पनि वे मुनिराई ॥ २ ॥
शिष्यन सँग ले खोजन आये । हम दोउ आतुर विपिन लखाये ॥ ३ ॥
बोले सान्दीपनि मुनि राया । मोरे प्रति तुम कष्ट उठाया ॥ ४ ॥
प्राणिन को निज तनु प्रिय होई । तासु अनादर कर तुम दोई ॥ ५ ॥
मम सेवा में तत्पर जाता । सत् शिष्यन गुरु प्रति यहि नाता ॥ ६ ॥
प्रत्युपकार गुरु प्रति ऐसो । करे सर्वदा तुम किय जैसो ॥ ७ ॥
शुद्ध भावना रखकर निजमन । करें देह भी गुरु प्रति अर्पन ॥ ८ ॥
तुम ऊपर मैं मुदित अपारा । होउ मनोरथ पूर्ण तुम्हारा ॥ ९ ॥
यहि आशिष तुम प्रति हमारी । हो अभिलासा पूर्ण तुम्हारी ॥ १० ॥

दोहा- **कीन्हो वेदाध्ययन तुम, मोसे भली प्रकार ।**
निष्फल कबहुँ न हो वह, इह परत्र सुख कार ॥ २४६ ॥

चौ- गुरु कुल की बातें यह सारी । आयत याद मुझे कइ वारी ॥ १ ॥
गुरु कृपा पावत नर जोई । तासु मनोरथ पूरण होई ॥ २ ॥
बोला विप्र तदा यों वानी । देव देव जगदीश सुजानी ॥ ३ ॥
कीन्हो कवन पुण्य मैं खासा । तुम संग गुरुकुल कीन्ह निवासा ॥ ४ ॥
वेद रूप प्रभु देह तुम्हारी । गुरुकुल वास आचरज कारी ॥ ५ ॥
नृप पति बोले कीर कृपाला । यों हँस कर वे दीनदयाला ॥ ६ ॥
बहुत देर तक उस द्विज संगा । करत प्रेमयुत कई प्रसंगा ॥ ७ ॥
वे हरि परम भक्त दुख नाशक । एक मात्र सब संतन रक्षक ॥ ८ ॥
प्रेम भरी दृष्टि के द्वारा । उस द्विज वदन लखत हर बारा ॥ ९ ॥
पुनि द्विज प्रति प्रभु वचन उचारा । मम हित क्या लाये उपहारा ॥ १० ॥

दोहा- प्रेम सहित मम भक्त की, स्वल्प भेट भी मोय ।
लागत हे द्विज बहुत सी, संशय करो न कोय ॥ २४७ ॥

चौ- दे अभक्त यदि बहु उपहारा । तदपि न वह स्वीकृत मुझ द्वारा ॥ १ ॥
पत्र पुष्प फल जल यदि कोई । अरपन करहिं भक्ति युत मोई ॥ २ ॥
वह वस्तु मोहिं लगे पियारी । कर तेहि प्रेम सहित स्वीकारी ॥ ३ ॥
शीघ्र तासु भोजन कर जाऊँ । सखे विलम्ब न ज़रा लगाऊँ ॥ ४ ॥
कहा कृष्ण ने जब यों राया । होय अधोमुख द्विज शरमाया ॥ ५ ॥
तंडुल मुष्टिक लेकर चारी । इन श्रीपति के अरे अगारी ॥ ६ ॥
कवन भाँति मैं देउँ उपायन । यों विचार वह द्विज राजन ॥ ७ ॥
तंडुल ग्रन्थी हरि के आगे । धरी भेट ना परम सुभागे ॥ ८ ॥
जानत किन्तु नृपति जग पाता । सब प्राणिन के हिय की बाता ॥ ९ ॥
विप्र आगमन कारण जाना । कीन्ह विचार तदा भगवाना ॥ १० ॥

दोहा- प्रथम विप्र यह मम सखा, दूसर कबहुँ न येह ।
रमा कामना से नहीं, कीन्हो मुझसे नेह ॥ २४८ ॥

चौ- आवा निज पत्नी प्रिय काजू । मोरे पास यहाँ पर आजू ॥ १ ॥
सुर दुर्लभ संपद इस काजू । देय दरिद्र हरूँ मैं आजू ॥ २ ॥
यों विचार कर वे अघहारी । उस द्विज़ प्रति इमि गिरा उचारी ॥ ३ ॥
इस पट खंड बीच हे भाई । भेजी कवन भेट भौजाई ॥ ४ ॥
यों कहकर हरि ने सुनु राई । वस्त्र ग्रन्थि जो बगल दबाई ॥ ५ ॥
जिसमें मुष्टिक चिउरा चारी । खोल ग्रन्थि निज धरी अगारी ॥ ६ ॥
यह तो अति प्रिय तुम द्विज राजू । लायड परम भेट मम काजू ॥ ७ ॥
इन तंडुल ते तो सुनु ताता । तृप्त विश्व सबहीं संजाता ॥ ८ ॥
यों कह मुष्टिक एक उठाई । धरी शीघ्र निज मुख यदुराई ॥ ९ ॥
अपर मुष्टि जब खावन लागे । लक्ष्मी हस्त गहा आ आगे ॥ १० ॥

दोहा- हे विश्वात्मा दीन निधि, इतना ही पर्याप्त ।
सब सम्पद समृद्धि द्विज, करी नाथ यह प्राप्त ॥ २४९ ॥

चौ- खाय कहीं इससे अधिकाई । करों न मोहिं प्रभो बख्साई ॥ १ ॥
इतनी ही तुम बहुत विचारी । करी कृपा द्विज पर जो भारी ॥ २ ॥
कर पुनि शायं भोजन पाना । कीन्हो अनुभव स्वर्ग समाना ॥ ३ ॥
वह रजनी हरि मंदिर अन्दर । काटी प्रेम सहित वे द्विजवर ॥ ४ ॥

सूर्य उदय वेला जब आई। हरि अनुमति लेकर द्विजराई ॥ ५ ॥
निज घर पर जब चालन लागे। थोड़ी दूर गये प्रभु सागे ॥ ६ ॥
करके विनय आदि अरु वन्दन। कीन्हो मुदित विप्र यदुनन्दन ॥ ७ ॥
वह प्रत्यक्ष रूप से राया। उन द्वारा धन कुछ ना पाया ॥ ८ ॥
निज चित की कंगाली ऊपर। आई लाज महा मन अन्दर ॥ ९ ॥
उसकी ओर दियो ना ध्याना। निज सन्मान महा उन माना ॥ १०० ॥

दोहा- **कृष्ण रूप दर्शन जनित, हो आनन्द विभोर।**
चले विप्र श्री कृष्ण से, पाय विदा घर ओर ॥ २५० ॥

चौ- चलत पंथ वह करत विचारा। देखी विप्र भक्ति हरि द्वारा ॥ १ ॥
करत वक्ष जिन रमा निवासा। विप्र जान मोहीं भुज पाशा ॥ २ ॥
लेकर अपने हृदय लगाया। निज पलंग पर मुझे सुलाया ॥ ३ ॥
प्राण प्रिया रुक्मिणि अति सुन्दर। करत शयन उनकी जिस ऊपर ॥ ४ ॥
कहाँ अरे मैं विप्र भिखारी। पापी और दरिद्रि अपारी ॥ ५ ॥
क़हाँ कृष्ण वे रमा निवासा। भर कर मोहिं अरे भुजपाशा ॥ ६ ॥
जैसे मिलहिं सहोदर भ्राता। मिले प्रेम से वे भवत्राता ॥ ७ ॥
मुझ पर रुकमणी चँवर डुलाये। उन हरि ने मम चरण दबाये ॥ ८ ॥
निज करते खिलवायउ खाना। करी सुश्रुषा देव समाना ॥ ९ ॥
स्वर्ग मोक्ष सब जग की संपत। हरि पद पूजन से नर पावत ॥ १० ॥

दोहा- **जो हरि पद पूजन करे, योग सिद्धि वहि पात।**
हरि पद पूजन ही सदा ,सबका मूल कहात ॥ २५१ ॥

चो- कर विचार यों रमा निवासा। दीन्हा मोहिं न द्रव्य जरा सा ॥ १ ॥
कहिं यह विप्र दरिद्र विचारा। पाकर द्रव्य न हो मतवारा ॥ २ ॥
कहिं यह द्विज मुझसे धन पाकर। भूल न जाय मुझे घर जाकर ॥ ३ ॥
सचमुच वे प्रभु परम दयालू। फाँसा ना धन दे भवजालू ॥ ४ ॥
मनहीं मन यों करत विचारा। जा पहुँचा द्विज गेह किनारा ॥ ५ ॥
देख वहाँ की छटा अपारी। विस्मित भयो तदा द्विज भारी ॥ ६ ॥
सूर्य अग्नि अरु चन्द्र समाना। तेजवन्त मणि जटित महाना ॥ ७ ॥
भवनन ते वेष्टित अति सुन्दर। देखा एक मनोहर मन्दिर ॥ ८ ॥
ठौर ठौर उपवन उद्याना। कलरव करत जहाँ खग नाना ॥ ९ ॥
भरे सरोवर सुन्दर सुन्दर। फूले पंकज जहाँ मनोहर ॥ १० ॥

दोहा- सुन्दर सुन्दर नार नर, बन ठन भली प्रकार।
इत उत विचरण कर रहे, उन भवनन के द्वारा ॥ २५२॥

चौ- देख विप्र वह नूतन स्थाना। लगे सोचने विस्मित नाना ॥ १ ॥
मैं क्या देख रहा निज नैनन। किसका स्थान अरे यह नूतन ॥ २ ॥
क्या यह वही गेह है मेरा। लेवत जहँ मैं सदा बसेरा ॥ ३ ॥
कवन भाँति यह नूतन जाता। कुछ भी तो न समझ मोंहि आता ॥ ४ ॥
करत विचार यहाँ द्विजराई। देवतुल्य उत लोग लुगाई ॥ ५ ॥
मंगल गान करत उत आवत। देखे सुन्दर वाद्य बजावत ॥ ६ ॥
करने उस द्विज की अगवानी। आये जहाँ खड़ा द्विज ज्ञानी ॥ ७ ॥
कान्त आगमन सुन कर काना। मुदित भई द्विज तिया महाना ॥ ८ ॥
श्री सम शीघ्र सदन के बाहर। आई पतिव्रता वह सुन्दर ॥ ९ ॥
पति दर्शन कर प्रेम सहेता। नयनन नीर बहा नृप येता ॥ १० ॥

दोहा- भीजा अंचल सकल उस, उत्कंठा के दौर।
कर वन्दन आलिंगन, हो गइ महा विभौर ॥ २५३ ॥

चौ- सुनौ परीक्षित वह द्विज नारी। कंचन हार गले विचधारी ॥ १ ॥
दासिन बीच सुशोभित कैसी। स्थित विमान में सुर तिय जैसी ॥ २ ॥
दीप्ति मान शोभायुत भारी। चकित भयो लखि द्विज श्रुति धारी ॥ ३ ॥
अब पत्नी सह महल सिधाये। सोभा जासु कही ना जाये ॥ ४ ॥
सोभित शचि पति भवन समाना। मणि निर्मित स्तंभे जहँ नाना ॥ ५ ॥
हस्ति दन्त निर्मित जिन पाये। कंचन पत्र पलंग खिचाये ॥ ६ ॥
दुग्ध फेन सम शय्या ऊपर। बिछे बिछौने कोमल सुन्दर ॥ ७ ॥
कंचन के पंखे अरु चामर। हेमासन सोमित जहँ सुन्दर ॥ ८ ॥
गादी जिन पर कोमल कोमल। बिछी हुई हे नृप अति निर्मल ॥ ९ ॥
झिलमिल करत वितान अपारा। सोमित मोतिन लडियन द्वारा ॥ १० ॥

दोहा- स्फटिक मणि की भींति पर, पन्ना पच्चीकारि।
रतन रचित तिय मूर्तियन, कर परदीप अपारि ॥ २५४ ॥

चौ- यह धन सम्पद लख कर ब्राह्मन। करत तर्कना स्थिर कर निज मन ॥ १ ॥
ये तो धन यह कैसे आयो। इसका भेद नहीं मैं पायो ॥ २ ॥
मोरे मन तो यही जँचाई। सर्व सम्पदा कृष्ण दिलाई ॥ ३ ॥
उनके दर्शन का फल ऐसा। मिला न अन्य हेतु मुझ जैसा ॥ ४ ॥

वरना मुझ दरिद्र के ऊपर । होत कृपालु कवन जग भीतर ॥ ५ ॥
वे मम सखा कृष्ण भगवाना । याचक प्रति पर्जन्य समाना ॥ ६ ॥
विना याचना के ही देवत । देवत वहुत स्वल्प तेहि मानत ॥ ७ ॥
लेकर स्वल्प भेट वे भक्तन । मानत उसे वहुत यदुनन्दन ॥ ८ ॥
देखो तन्डुल मुष्टिक कोरी । उन प्रति भेट करी मैं कोरी ॥ ९ ॥
वह भी प्रेम सहित स्वीकारी । ऐसे वे प्रभु परम उदारी ॥ १० ॥

दोहा- **मैत्री उन भगवान की, जन्म जन्म में मोय ।**
मिलहीं सेवा परम अति, और चाह ना कोय ॥ २५५ ॥

चौ- उन हरि के प्रिय भक्तन संगा । करूँ सर्वदा प्रेम प्रसंगा ॥ १ ॥
मिलही हरि पद भक्ति अथाही । धन सम्पद प्रति मम रुचि नाही ॥ २ ॥
जन्म मृत्यु वन्धन से रहिता । वे भगवान कृष्ण गोतीता ॥ ३ ॥
ज़ानत धन में दोप अथाहू । यही सोच कर मन यदुनाहू ॥ ४ ॥
कवहूँ निज भक्तन के काजू । देवत ना धन सम्पद राजू ॥ ५ ॥
धन पा नर होवत मदवन्ता । होवत पतन लहे यम अन्ता ॥ ६ ॥
कर निश्चय इमि मति अनुसारी । त्याग शील हो द्विज सह नारी ॥ ७ ॥
विष्णु प्रसाद स्वरूपिन विषयन । करने लगा ग्रहण सुनु राजन ॥ ८ ॥
अव तो द्विज की भक्ति अपारी । रही निरन्तर हरि में जारी ॥ ९ ॥
देव देव श्री कृष्ण कृपाला । अखिल भवन जे प्रतिपाला ॥ १० ॥

दोहा- **विप्रन को मानत सदा, परम इष्ट भगवान ।**
इस कारण जग में नहीं ,इन सम अन्य महान ॥ २५६ ॥

छन्द- **द्विजन सम ना अन्य जग में, अपर कोय महान है ।**
भक्तन जन से तो पराजित, सर्वदा भगवान है ॥
यद्यपि वे अजित है नहि, काहु के आधीन है ।
यों समझ उस विप्रने निज, तज दिया अभिमान है ॥
खोल के हिय ग्रन्थि भारी, तन्मय हो ध्यान में ।
जो सन्त मुनियन का सहारा, उस हरी के धाम में ॥
जाय पहुँचा कुछ दिनों, पीछे सुदामा तिय सह ।
इष्ट सम मानत सदा जो, विप्रकुल को कृष्ण वह ॥

दोहा- **उनके सह श्री दाम की, सुनहिं कथा नर प्रात ।**
पाकर भगवत भक्ति को, कर्मन वन्ध नसात ॥ २५७॥

चौ- श्री शुक कहे अरे कुरुराई । यों भगवान कृष्ण बलभाई ॥ १ ॥
करत द्वारका बीच निवासा । कीन्हे चरित अनेक प्रकासा ॥ २ ॥
सर्व ग्रास रवि का इक वारी । आवा यथा कल्प क्षय भारी ॥ ३ ॥
आकर विप्र गणक समुदाई । ग्रहण सूचना प्रथम जताई ॥ ४ ॥
तव निज श्रेय काज हर्षाये । तीर्थ स्मयन्तशरक में आये ॥ ५ ॥
क्षत्रि विहीन कीन्ह जब रामा । रचे पंच ह्रद पूरण कामा ॥ ६ ॥
नृपति रुधिर धारा के द्वारा । भरे पंच सर भली प्रकारा ॥ ७ ॥
यद्यपि पाप हीन निष्कामा । तदपि लोक शिक्षा हित रामा ॥ ८ ॥
इक साधारण मनुज समाना । कियो यज्ञ जहँ उन भगवाना ॥ ९ ॥
प्रजा भारती भी वहँ आई । श्रेय काज निज मन हरसाई ॥ १० ॥

दोहा- **सब वृष्णी अक्रूर गद, उग्रसेन नरदेव ।**
शुक सारण प्रद्युम्न सह, साम्बादिक वसुदेव ॥ २५८ ॥

चौ- ये निज पाप उतारन कारन । आये मिल इस तीरथ पावन ॥ १ ॥
कृतवर्मा अनिरुद्ध नृपासन । रहे द्वारका रक्षा कारन ॥ २ ॥
चतुरंगिनि सेना ले संगा । आये यादव करत प्रसंगा ॥ ३ ॥
उत्तम वसन महाबलशाली । अलंकार युत कंचन माली ॥ ४ ॥
भार्या संग सह विच कैसे । भये सुशोभित सुर गण जैसे ॥ ५ ॥
कर विश्राम कीन्ह वहँ स्नाना । सालंकृत धेनू किय दाना ॥ ६ ॥
पाछे विधिवत राम सरोवर । किये स्नान सब यादव मिलकर ॥ ७ ॥
कृष्ण चरण विच भक्ति हमारी । रहे निरन्तर भली प्रकारी ॥ ८ ॥
यों कर मन में सभी विचारा । दियो द्विजन प्रति अन्न अपारा ॥ ९ ॥
ले विप्रन की अनुमति पाछे । कीन्हो खान पान पुनि आछे ॥ १० ॥

दोहा- **यथा स्थान तरु मूल स्थित, कीन्हो पुनि विश्राम ।**
सखा मित्र सम्बन्धि नृप, आगत लखे तमाम ॥ २५९॥

चौ- मत्स्य उशीनर केरल राया । कुरु सृञ्जय कौसल कैकय्या ॥ १ ॥
भद्र विदर्भ व आनृत राया । कुन्ति व कम्बोजादिक आया ॥ २ ॥
निज पक्षी पर पक्षि नृपाला । आये निज ले सेन विशाला ॥ ३ ॥
मिले परस्पर मुदित अपारा । कर कर गृह आलिंगन द्वारा ॥ ४ ॥
हरि से मिलकर भये प्रफुल्लित । प्रेमाश्रु नयनन ते मुञ्चित ॥ ५ ॥
गोप व नन्दाकि वृज वासी । आये हरि दर्शन अभिलासी ॥ ६ ॥

यथा योग्य यदुवंशिन द्वारा । भेटे प्रेम सखुशी अपारा ॥ ७ ॥
हृदय कंज मुख कंज सभी के । खिले तदा दरसन कर हरि के ॥ ८ ॥
दृढ़ आलिंगन कीन्ह परस्पर । रूद्ध गिरा मन हर्षित होकर ॥ ९ ॥
मिली परस्पर पुरुष समाना । नारीगण भी मुदित महाना ॥ १० ॥

दोहा- **यादव गण वृद्धन प्रति, सादर कीन्ह प्रणाम ।**
लघुअन ते वन्दित उन, पूछी कुशल तमाम ॥ २६० ॥

चौ- करके कृष्ण कथा मुनिगायन । भयेपरस्पर प्रमुदित राजन ॥ १ ॥
पाछे कुन्ती भी वहँ आई । निज भ्रातादिक कृष्ण लखाई ॥ २ ॥
करके प्रेमालाप अपारा । त्यागा शोक प्रथा ने सारा ॥ ३ ॥
बोली प्रथा सुनो हे भ्राता । मम सब आश निरर्थक जाता ॥ ४ ॥
वार्ता आपद बीच हमारी । करते वा नहि सुमिरण सारी ॥ ५ ॥
दैव जासु अनुकूल न होई । उसको सुमिरण करहिं न कोई ॥ ६ ॥
प्रथा वचन सुनकर तव काना । बोले वासुदेव भगवाना ॥ ७ ॥
देउ न अम्ब उलहना कोई । क्योंकि लोक ईश वश होई ॥ ८ ॥
कंसासुर से हम सब तापित । रहे अम्ब हम इत उत भागत ॥ ९ ॥
भयो सहाय दैव सुख दाना । पाये अब हम निज निज स्थाना ॥ १० ॥

दोहा- **कृष्णादिक यदुवंशियन, ते पूजित नृप लोग ।**
हरि दर्शन का किन्तु नृप, सह ना सके वियोग ॥ २६१ ॥

चौ- बाद अम्बिका सुत गांधारी । द्रोण व भीष्म पिता बलधारी ॥ १ ॥
सहित प्रथा पाँडव निज नारी । विदुर विराट द्रुपद बलधारी ॥ २ ॥
कृप भीष्मक पुरुजित सह काशिप । कैकय मैथिलेय युत चेदिप ॥ ३ ॥
कुन्ति भोज नृपराज सुशर्मा । नग्नजीत ज्ञाता रण कर्मा ॥ ४ ॥
भद्र व युधामन्यु रण पंडित । शल्य व उत्तमौज कुलमंडित ॥ ५ ॥
अनुव्रत अन्य नृपाल युधिष्ठिर । हरि हिय पर श्री वत्सहि लख कर ॥ ६ ॥
निज नारिन सह सह परिवारी । भये सभी विस्मित अति भारी ॥ ७ ॥
पाछे राम कृष्ण से पूजित । भये नृपति गण सभी प्रमोदित ॥ ८ ॥
सब वृष्णिन की कीन्ह प्रशंसा । महि पर धन्य भयो यदुवंशा ॥ ९ ॥
भोज राज हे जन्म तुम्हारा । भयो सफल यह सभी प्रकारा ॥ १० ॥

दोहा- **करत निरन्तर कृष्ण का, दर्शन प्रेम समेत ।**
योगिन प्रति भी दुर्लभ, दर्शन रमा निकेत ॥ २६२ ॥

चौ- जिन पादोदक सब जग तारन । वाक्य रूप श्रुति कीरति पावन ॥ १ ॥
समय फेर ते सुनो नृपाला । दग्ध बीज महि भी इस काला ॥ २ ॥
जिन पर स्पर्शित होकर पुष्टा । करती अखिल अर्थ दे दुष्टा ॥ ३ ॥
वहि हरि स्वयं प्रकट तव गेहा । हो रहे सुख प्रद कर अति स्नेहा ॥ ४ ॥
हे नृप यादव यहँ पर आये । नन्द राय सुन अति हरसाये ॥ ५ ॥
ले गोपन संग स्वयं वहाँ पर । मिलने गये जहाँ पर यदुवर ॥ ६ ॥
आवत वृष्णिन नन्द लखाये । तब वे सब मन में हुलसाये ॥ ७ ॥
नन्दहिं कर आलिंगन भारी । पूछी कुशल क्षेम बृज सारी ॥ ८ ॥
अब वसुदेव मुदित हो भारी । पूजे नन्द सहित परिवारी ॥ ९ ॥
कंस कृत्य दारुण दुःख सोऊ । पहुँचाये गोकुल सुत दोऊ ॥ १० ॥

दोहा- **सुमिरन कर इन सबन्हि का, सूरसेन सुत भारि।**
भये प्रेम विह्वल तदा, माने नन्द अभारि ॥ २६३ ॥

चौ- आकर तदा कृष्ण बलरामा । नन्द यशोदहिं कीन्ह प्रणामा ॥ १ ॥
प्रेमाकुल होकर तब भारी । कुछ ना उन मुख वचन उचारी ॥ २ ॥
राम कृष्ण हीं नन्द यशोदा । लीन्हे गोद तदा भरि मोदा ॥ ३ ॥
कर आलिंगन बारम्बारा । तजा वियोग शोक तब सारा ॥ ४ ॥
बाद रोहिणी देवकी दोई । यशुमति से भेटी खुश होई ॥ ५ ॥
उन कृत मयत्रि सुमिर कर भारी । यशुमति प्रति दोउ गिरा उचारी ॥ ६ ॥
हे यशुदा तव बड़ उपकारा । बिसरहिं हम ना किसी प्रकारा ॥ ७ ॥
सुरपति वैभव भी यदि पावें । तदपि न प्रत्युपकार भुलावें ॥ ८ ॥
हे वृजेश्वरी तोर समीपा । पाये पोषण वृष्णि प्रदीपा ॥ ९ ॥
होन उऋण तो से यह काया । अब शुक कहे सुनौ कुरुराया ॥ १० ॥

दोहा- **वृज से आगत गोपिका, बहुत दिवस के बाद ।**
कर दर्शन श्री कृष्ण का, होकर अति आह्लाद ॥ ~~२६६~~ २६४ ॥

चौ- नयनन ते कर उन मुख पाना । हिय आलिंगन किये निशाना ॥ १ ॥
तन्मय भई तदा वे सारी । अब एकान्त उन्हें बनवारी ॥ २ ।
ले जाकर आलिंगन कीन्हा । पूछी कुशल क्षेम सुख दीन्हा ॥ ३ ॥
यादवेन्द्र अब हँस कर बोले । उन सखियन प्रति यों नृप बोले ॥ ४ ॥
सखियों स्वजन काज के खातिर । चला गया मैं वृज से बाहिर ॥ ५ ॥
यों तुम सब प्रेमिन को तजकर । उलझा मैं शत्रुन वध अन्दर ॥ ६ ॥

इसमें हम दिन बहुत गुजारे । सुमिरति वा नहिं नाम हमारे ॥ ७ ॥
अरी कृतघ्न समझ कर मोहीं । लागा बुरा अरी मन तोही ॥ ८ ॥
सो इसमें नहीं दोप हमारा । योग वियोग प्रभू के द्वारा ॥ ९ ॥
वे ही सब कुछ करने हारे । चालत जगत उन्हीं अनुसारे ॥ १० ॥

दोहा- **बात मेघ तृण तूलिका, काल प्रभू अनुसार ।**
होवत योग वियोग ज्यों, त्यों प्राणिन का संचार ॥२६७ ॥

चौ- मिला प्रेम यह तुम्हें हमारा । सो अति अच्छा भाग्य तुम्हारा ॥ १ ॥
करत जीव जो भक्ति हमारी । पावत अन्त परम पद भारी ॥ २ ॥
जैसे घट पट आदि पदास्थ । पंच तत्व उन बीच यथारथ ॥ ३ ॥
त्यों प्राणिन बिच मोर प्रकासा । आदि अन्त अन्तर वहि वासा ॥ ४ ॥
भौग्य व भोक्ता भौक्तिक रुपा । पंच तत्व सब वसत अनूपा ॥ ५ ॥
मैं सब में रहता लवलीना । नहीं किन्तु मैं काहु अधीना ॥ ६ ॥
कहे कीर सुनु नृपति उदारा । यों आध्यात्मिक शिक्षा द्वारा ॥ ७ ॥
यों वृजबाला जब समुझाई । लिंग देह उन तुरत नसाई ॥ ८ ॥
तन्मय होय तदा वृजनारी । कृष्ण चन्द्र प्रति गिरा उचारी ॥ ९ ॥
निज हिय कंज कमल पद तेरे । कमल नाभ योगीजन हेरे ॥ १० ॥

दोहा- **जगत कूप में पतित नर, उन हित चरण तुम्हार ।**
एक मात्र आश्रय प्रद, अन्य नहीं संसार ॥ २६८ ॥ क
गेह गृहस्थी में फँसी , हम सब इस संसार ।
बसे सर्वदा हृदय में ,चरण सरोज तुम्हार ॥ २६८ ॥ ख

चौ- बोले नृप से मुनी दयाला । हे राजन पुनि कृष्ण कृपाला ॥ १ ॥
पूछी कुशल वहाँ पर सबकी । धर्मराज आदिक नृपवर की ॥ २ ॥
लोकनाथ द्वारा इमि सारे । सम्मानित हो वचन उचारे ॥ ३ ॥
जो नर कर्ण पुटन के द्वारा । करहिं पान यश प्रभो तुम्हारा ॥ ४ ॥
तासु अमंगल क्यों कर होई । संकट हर नासहिं अघ सोई ॥ ५ ॥
आप एक रस ज्ञान स्वरूपा । अत्मानन्द पयोधि अनूपा ॥ ६ ॥
बुद्धि वृत्तियन उद्भव कारी । जागृत सुपन सुसुप्तिन सारी ॥ ७ ॥
जा सकती ना तुम तक कोई । नष्ट दूर से ही सब होई ॥ ८ ॥
तुम ही एक मात्र गति सन्तन । होवत वेद हास जब भगवन ॥ ९ ॥
कर मायावश नर तनु धारण । कीन्हो तदा निगम उद्धारण ॥ १० ॥

दोहा- उस स्वरूप को जगतपति, वन्दहिं वारम्वार ।
जिस स्वरूप से आपने, कियो वेद उद्धार ॥ २६९ ॥

चौ- अपर लोग जिस समय नरेशा । करत वन्दना चरण रमेशा ॥ १ ॥
यदुकुल कौरव कुल की नारी । हो एकत्र परस्पर सारी ॥ २ ॥
उन जगपति लीला का गायन । करने लगी सुनौ वह राजन ॥ ३ ॥
कर सम्बोधित द्रुपुद कुमारी । हरि नारिन प्रति गिरा उचारी ॥ ४ ॥
हे वैदर्भी ऋाक्ष कुमारी । सत्यभाम भद्रे हरि प्यारी ॥ ५ ॥
कालिन्दी सत्या इत आऊ । अरी लक्ष्मणे मत शरमाऊ ॥ ६ ॥
रोहिणि शैव्ये तुम भी आऊ । निज निज ब्याह कथा सब गाऊ ॥ ७ ॥
वदत विदर्भी कथा हमारी । चित्त देकर सुनु द्रुपदकुमारी ॥ ८ ॥
जरासंघ आदिक नरपाला । मो सह व्याह चहा शिशुपाला ॥ ९ ॥
तब ये प्रभू गये कुंडिनपुर । उन शत्रुन के सिर पद धर कर ॥ १० ॥

दोहा- लाये मुझको शीघ्र ही, हर कर ये यदुराय ।
मेष समूहन बीच ज्यों, हरि निज भाग छिनाय ॥ २७० ॥

चौ- जग में वीर अजेयी जेते । वे भी इनकी पद रज सेते ॥ १ ॥
मेरी तो सुन द्रुपदकुमारी । मन अभिलाष रहे यदि भारी ॥ २ ॥
जन्म जन्म में इन पद रज दासी । बनी रहूँ तजऊँ न अविनासी ॥ ३ ॥
वदत सत्यभामा पुनि वानी । सुनौ द्रोपदी अति गुण खानी ॥ ४ ॥
सत्राजीत पिता जो मोरे । अनुज मृत्यु सुन दुखी घनेरे ॥ ५ ॥
भ्राता वध का अनृत दोषा । थोंपा सब हरि पर कर रोषा ॥ ६ ॥
तब निज मिथ्या दोष निवारन । जाम्बवन्त गृह जा यदुनन्दन ॥ ७ ॥
पाई विजय ऋक्षपति ऊपर । दीन्हीं तदा जनक मणि लाकर ॥ ८ ॥
अब मम पिता भये भयभीता । हरि पद दोप धरेउँ मैं रीता ॥ ९ ॥
यह विचार हरि चरणन माँही । मणि सह द्रुपद सुते मोहि व्याही ॥ १० ॥

दोहा- जाम्बवती कहने लगी, जाम्बवन्त मम तात ।
समझ सके इनको नहीं, सीता पति विख्यात ॥ २७१ ॥

चौ- कीन्हो समर वीस दिन साती । पाई विजय तदा सरघाती ॥ १ ॥
जान इन्हें तब राघव रामा । पकरे चरण कंज सुखधामा ॥ २ ॥
मणि समेत इन प्रति उपहारा । की अरपित मोहिं पिता हमारा ॥ ३ ॥
अब तो मेरी यहि अभिलासा । सदा करूँ इन चरण निवासा ॥ ४ ॥

अब कालिन्दी वचन प्रकासा । हरि चरणन की अति अभिलासा ॥ ५ ॥
लाग रही मोरे मन भारी । यों मम जान रुचि गिरधारी ॥ ६ ॥
पहुँचे जहाँ धनञ्जय संगा । करत तपस्या मैं कृश अंगा ॥ ७ ॥
कर स्वीकार यमुन तट ऊपर । लाये मुझे द्वारका अंदर ॥ ८ ॥
तब से गेह बुहारन वारी । बनी सेविका मुकुट बिहारी ॥ ९ ॥
वचन मित्रविन्दा इति गाये । मोर स्वयम्वर पिता रचाये ॥ १० ॥

दोहा- **पहुँचे तब भगवान वहँ, भूपन पर जय पाय ।**
श्वान यूथ से सिंह ज्यो , निज हिस्सा ले जाय ॥ २८० ॥

चौ- वैसे मुझे द्वारका अन्दर । ले आये यादवपति हरकर ॥ १ ॥
तब से मैं मन यही विचारूँ । जन्म जन्म इन चरण पखारूँ ॥ २ ॥
अब सत्या निज वचन उचारे । रचा स्वयंम्वर जनक हमारे ॥ ३ ॥
आये वहाँ बहुत से राजा । उन बल पौरुप जानन काजा ॥ ४ ॥
राखे वृषभ सात निज संगा । अतिबल शील तीक्ष्ण जिन श्रृंगा ॥ ५ ॥
महा बलिन उन मद किय चूरा । पहुँचे वहाँ कृष्ण यदुशूरा ॥ ६ ॥
नाथे झपट वृषभ भगवाना । बाँधत अज सुत बाल समाना ॥ ७ ॥
यो निज बल पौरुप के द्वारा । कर मोहिं प्राप्त जगत भरतारा ॥ ८ ॥
चतुरंगिनि दासिन के संगा । लाये निजपुर करत प्रसंगा ॥ ९ ॥
पथ बीचे जिन क्षत्रिन द्वारा । डारा विघ्न अनेक प्रकारा ॥ १० ॥

दोहा- **चाली चाल न एक उन, यों हरि संग विवाह ।**
करूँ सदा इन चरण में, वास यही अब चाह ॥ २८१ ॥

चौ- अब भद्रा ने वचन सुनाये । ये हरि मातुलेय मम गाये ॥ १ ।
मम अनुरक्त रहा भगवाना । यह सुन तदा पिता निज काना ॥ २ ॥
तब भगवान स्वयं निज गेहा । बुलवाये करके अति स्नेहा ॥ ३ ॥
अक्षैहिणी सहित बहुत दासी । करि अरपित मोहिं पद अविनासी ॥ ४ ॥
जन्म जन्म मम यहि अभिलासा । कृष्ण चरण बिच करूँ निवासा ॥ ५ ॥
वदत लक्ष्मणा पुनि निजवानी । हे पांडव नृपवर पटरानी ॥ ६ ॥
अच्युत जन्म कर्म का गायन । सुन नारद मुख मुहु मुहु कानन ॥ ७ ॥
कृष्ण चरण में चित्र हमारा । लगा द्रोपदी अपरम्पारा ॥ ८ ॥
बृहत्सेन तब पिता हमारा । मम मत जान उपाय विचारा ॥ ९ ॥
पार्थहिं प्राप्त करन की आसा । मतस्य वेध ज्यो द्रुपद प्रकासा ॥ १० ॥

दोहा- कीन्हों मत्स्य प्रवन्ध त्यों, तात स्वयम्वर मोर ।
उसमें एक विशेषता, आच्छादित वहि ओर ।। २७४ ।।

चौ- स्तंभ मूल इक कलश रखाया । दीखत नीर बीच झष छाया ।। १ ।।
ऊपर लक्ष्य दृष्टि अध होइ । वेधहिं मीन सुता वर सोई ।। २ ।।
समाचार सुन नृप गण आये । अस्त्र शस्त्र तत्वज्ञ कहाये ।। ३ ।।
निज बल पौरुष वय अनुसारा । किये पिता नृप गण सत्कारा ।। ४ ।।
मोहीं प्राप्त करन जो आये । कैतिक केवल धनुष उठाये ।। ५ ।।
किन्तु न तांत चढ़ा वह पाये । कैतिक धनुशर हस्त लगाये ।। ६ ।।
कैतिक खींच प्रत्यञ्चा चापा । ताडित होय गिरे दुख व्यापा ।। ७ ।।
कर्ण भीम दुर्योधन वीरा । चेदिप मागध गहि धनु तीरा ।। ८ ।।
मत्स्य वेध करने में आये । किन्तु न लक्ष्य वहाँ दर्शाये ।। ९ ।।
पांडव वीर किरीटि आये । मीनाभास नीर विच पाये ।। १० ।।

दोहा- मीन अवस्थित जानि के, तजा तदा शर वीर ।
भयो किन्तु झष वेध ना, स्पर्श भयो कुछ तीर ।। २७५ ।।

चौ- भग्न मान यों सब नृप पाये । उठे कृष्ण तब धनुष सजाये ।। १ ।।
धनु ऊपर निज शर सन्धाना । नीर बिच लखि ठीक निशाना ।। २ ।।
अभिजित नाम मुहूरत आवा । बाण मार अव तुरत गिरावा ।। ३ ।।
तदा दुंदुभी सुर पुर वाजी । पुष्प वृष्टि की सुर हो राजी ।। ४ ।।
ले निज हस्त रतन वर माला । पहुँची त्वरित जहाँ रंगशाला ।। ५ ।।
मम पद नूपुर रव युत सुन्दर । पट्टाम्बर सोभित तनु ऊपर ।। ६ ।।
सोभित शिखा कुसुमयुत माला । गूँजत चँचरीक जहँ काला ।। ७ ।।
मन्द मन्द लज्जायुत हासित । रत्न माल मम हस्त प्रकाशित ।। ८ ।।
बीच बीच कंचन के कारन । चमक रही जिमि विद्युत सावन ।। ९ ।।
सुनु रानी मुख मंडल ऊपर । घुँघराली अलकावलि सुन्दर ।। १० ।।

दोहा- गोरे गोल गपोल पर, कुंडल आभ अपार ।
दमक रही थी द्रुपजे, तब मैंने इक वार ।। २७६ ।।

चौ- कर ऊँचा मुख स्थित रंग शाला । देखे चहूँ ओर नरपाला ।। १ ।।
मन्द हास्य युत मुदित अपारी । पुनि वरमाल हरीगल डारी ।। २ ।।
जब वरमाल हरीगल डारी । वाजे ढोल मृदङ्ग नकारी ।। ३ ।।
नट नर्तकि सब नाचन लागे । करत गान गायक भरि रागे ।। ४ ।।

मैने जब यों द्रुपद कुमारी । वरमाला हरि के गल डारी ॥ ५ ॥
मम सह वरण कीन्ह भगवाना । भये सन्त नृप मुदित महाना ॥ ६ ॥
खल कामातुर नृपतिन भारी । भई डाह चिड़ अपरम्पारी ॥ ७ ॥
तावत् मोहिं चतुर्भुज द्वारा । कर आलिंगन कृष्ण उदारा ॥ ८ ॥
रथ चढाय ले पुनि धनु बाना । रण हेतु ठाड़े भगवाना ॥ ९ ॥
ले कंचन सज्जित अब स्यन्दन । दारुक हाँकि दीन्ह युत अश्वन ॥ १० ॥

दोहा- मृग समूह के बीच ते, सिंह भाग निज लात ।
ले आये मुझको यहाँ, वैसे ये बल भ्रात ॥ २७० ॥ क
कैतिक खल नृपगण तदा, निजकर ले धनुबान ।
आगे जा ठाढ़े भये ,पथ रोकन भगवान ॥ २७७ ॥ ख

चौ- शर समूह ले तब भगवाना । छिन्न हस्त पद सिर नृप नाना ॥ १ ॥
गिरे भूमि ऊपर तजि प्राना । समर त्याग कइ किये पयाना ॥ २ ॥
कर यों समर कृष्ण भगवाना । अस्ताचल पर भानु समाना ॥ ३ ॥
ध्वज पट चित्र पताकन द्वारा । सज्जित तोरण भली प्रकारा ॥ ४ ॥
कीन्ह प्रवेश कुशस्थलि भीतर । अरी द्रुपद जे मो संग लेकर ॥ ५ ॥
बीच स्वयम्बर आगत जेते । सगे मित्र बान्धव गण वेते ॥ ६ ॥
पा सत्कार पिता के द्वारा । पट भूषण आदिक उपहारा ॥ ७ ॥
शाय्यासन दासी अरु दासा । गज हय सेन व आयुध खासा ॥ ८ ॥
हरि प्रति भेजे पिता हमारे । प्रेम सहित सुनु द्रुपद कुमारे ॥ ९ ॥
आत्माराम कृष्ण अविनासी । यों हम सब भइ इन गृह दासी ॥ १० ॥

दोहा- वदत वचन अब रोहिणी, सुनो द्रुपद जे मोर ।
भौमासुर का दिग्विजय ,बना नृपन शिरमौर ॥ २७८ ॥

चौ- भौमासुर अति दुष्ट नृपाला । कीन्ही रुद्ध नृपन की बाला ॥ १ ॥
देख रुद्ध तेहिं कृष्ण कृपाला । मारा भौमासुर नरपाला ॥ २ ॥
कीन्ही उन मोचन सुकुमारी । यद्यपि पूर्ण काम गिरिधारी ॥ ३ ॥
तो भी हम संग ब्याह रचाये । यों हम कृष्णचन्द्र वर पाये ॥ ४ ॥
अब हमको कुछ भी ना चाही । राज्य ब्रह्मपद की रुचि नाँही ॥ ५ ॥
प्रभु पद रज नित सिर पर धारे । हो रहि रुचि मन यही हमारे ॥ ६ ॥
जे पद रमा उरज स्थूल ऊपर । केशर गंध सुगन्धित सुन्दर ॥ ७ ॥
जे पद गाय चरावन काला । तृण वीरुध गैया वृजग्वाला ॥ ८ ॥

करत स्पर्श जिन भील कुमारी । उन चरणन पर हम बलिहारी ॥ ९ ॥
हम सब की रुचि दीन निधाना । करें पूर्ण यादव भगवाना ॥ १० ॥

दोहा- **श्री शुक बोले नृपतिवर, सुबल सुता गांधारि ।**
प्रथा द्रौपदी माधवी, तथा नृपन की नारि ॥ २७९ ॥

चौ- आगत सभी वहाँ बृजनारी । हरि पद स्नेह देख उन भारी ॥ १ ॥
निज मन विस्मित भई अपारा । प्रेमाश्रु उन नयनन डारा ॥ २ ॥
तिय ते तिय पुरुषन ते पुरुषन । वार्ता करत परस्पर राजन ॥ ३ ॥
तदा राम हरि दर्शन काजू । पहुँचे वहँ सब मुनी समाजू ॥ ४ ॥
द्वैपायन नारद भृगु रामा । देवद शतानन्द तप धामा ॥ ५ ॥
गौतम भारद्वाज वसिष्ठा । कश्यप अत्रि पुलस्त्य वरिष्ठा ॥ ६ ॥
कुंभज वामदेव तप शीला । विधि सुत जागवल्क्य मुनिशीला ॥ ७ ॥
पुत्र मृकंड देव गुरु संगा । एकत द्वित त्रित करत प्रसंगा ॥ ८ ॥
गालव असित च्यवन मुनिराई । गाधीसुत भी शिष्य लिवाई ॥ ९ ॥
आवत देखा मुनी समाजू । पांडव राम कृष्ण यदुराजू ॥ १० ॥

दोहा- **उठकर कीन्ह प्रणाम, कर सत्कार अपार ।**
राम कृष्ण कीन्ही तदा, पूजन विधि अनुसार ॥ २८० ॥

चौ- धन्य भाग्य यह आज हमारे । सन्त चरण जो यहाँ पधारे ॥ १ ॥
सुख पूर्वक बैठे मुनि सारे । वासुदेव तब वचन उचारे ॥ २ ॥
सफल जनम यह हुए हमारे । सुर दुर्लभ पा दर्श तुम्हारे ॥ ३ ॥
कियो येन तप तीरथ पूजा । मानत प्रतिमा इष्ट न दूजा ॥ ४ ॥
तुम सम योग पतिन के दरसन । पा न सकै भाषन पद स्पर्शन ॥ ५ ॥
मृतिका शिलामयी सुर मूरत । जल मय तीरथ किये न कीरत ॥ ६ ॥
करते पावन ये बहुकाला । सन्तन दर्शन तो तत्काला ॥ ७ ॥
अग्नि भानु विधु जल महितारा । वात व अम्बर भली प्रकारा ॥ ८ ॥
साधित होवत भी ये पापा । करते दूर नहीं सन्तापा ॥ ९ ॥
सत्साधुन संगत सुखदाई । मूल सहित सब पाप नसाई ॥ १० ॥

दोहा- **वात पित कफ ते रचित , शव समान यह देह ।**
स्त्री पुत्रादिक को सदा, मानत निज करि स्नेह ॥ २८१ ॥

चौ- जल को ही जो तीर्थ बतावे । साधुन संगति मन ना भावे ॥ १ ॥
सो नर होवत गर्दभ गाया । श्री शुकदेव वदत सुनु राया ॥ २ ॥

प्रभु भापण सुन मुनी समाजा । भए चुपचाप वहाँ स्थित राजा ॥ ३ ॥
परी भँवर बीचे मति उनकी । समझे तत्व न प्रभू कथन की ॥ ४ ॥
बाद सोच कुछ मुनी समाजू । प्रभू वचन जन संग्रह काजू ॥ ५ ॥
यों कह कर अब सभी मुनीश्वर । बोले हरि प्रति वच मुस्काकर ॥ ६ ॥
जिस माया द्वारा हम सारे । भये विमोहित कृष्ण अपारे ॥ ७ ॥
इस भव बीच अनीश समाना । करत आचरण दीन निधाना ॥ ८ ॥
अहो नाथ कर्त्तव्य तुम्हारा । अतर्कनीय है सभी प्रकारा ॥ ९ ॥
निज विकार ते यह महि जैसे । करती रूप ग्रहण बहु वैसे ॥ १० ॥

दोहा- **यद्यपि प्रभु तुम एक हो, तदपि बहुत वपुधार ।**
सरजन पालन जगत का, करते तुम संहार ॥ २८२ ॥

चौ- प्रकृति ते यद्यपि आप विहीना । परम ब्रह्म निज भक्त अधीना ॥ १ ॥
खल नाशन भक्तन हितकारी । सत्वात्मक वपु धृत हरवारी ॥ २ ॥
वेद विशुद्ध है हृदय तुम्हारा । द्विज कुल पूजनीय तप द्वारा ॥ ३ ॥
द्विज भक्तन बिच नाम तुम्हारा । सदा अग्रणी सभी उचारा ॥ ४ ॥
सत्साधन की तुमही सीमा । गावत संत तुम्हारी महिमा ॥ ५ ॥
दरसन करके आज तुम्हारे । जप तप विद्या सफल हमारे ॥ ६ ॥
सब के फल तुम ही भगवन्ता । परमात्मा परब्रह्म अनन्ता ॥ ७ ॥
वन्दहिं हम पद कमल तुम्हारे । जे पद रमा सदा हिय धारे ॥ ८ ॥
समझत मित्र बन्धु परिवारी । ये वृष्णि भी नहीं तुम्हारी ॥ ९ ॥
जेते आये यहाँ महीशा । जान सके महिमा तव ईशा ॥ १० ॥

दोहा- **यथा सुपन में नर नहीं, नृत वपु सके पिछान ।**
त्यों माया वश होय नर, भूल जात भगवान ॥ २८३ ॥

चौ- जिन पद ते गंगाजल निसरत । जिन पद को रिपि मुनि हिय धारत ॥ १ ॥
उन पद के दरसन कर आजू । भये सफल हम सब यदुराजू ॥ २ ॥
नासत लिंग देह कर भकती । पावन वही परम फल मुकती ॥ ३ ॥
हम सब हैं प्रभू भक्त तुम्हारे । करो अनुग्रह कृष्ण खरारे ॥ ४ ॥
बोले शुक अब सभी मुनीश्वर । ले अनुमति श्री कृष्ण युधिष्ठिर ॥ ५ ॥
निज निज आश्रम जावन कारन । कीन्ह विचार जबै मन धारन ॥ ६ ॥
तब वसुदेव नम्र अति होले । कर वन्दन ऋपियन से बोले ॥ ७ ॥
जेन कर्म ते हे मुनिराया । कर्मनाश हो कहो उपाया ॥ ८ ॥

सुन वसुदेव वचन मुनिराया । अति विस्मय उनके मन आया ॥ ९ ॥
जब सब विस्मित मुनी लखाये । तब नारद यों वचन सुनाये ॥ १० ॥

दोहा- **आनक दुंदुभि कृष्ण को, निज मन पुत्र विचार ।**
पूछा इनते कुछ नही, श्रेय मार्ग का सार ॥ २८४ ॥

चौ- अपने पास वसहिं जो कोई । होत अनादर कारण सोई ॥ १ ॥
गंगा तट के यथा निवासी । गंग नीर बिच ना विश्वासी ॥ २ ॥
शुद्धि हेतु हेरत जल दूजे । निज समीप तीरथ ना पूजे ॥ ३ ॥
जिनका ज्ञान अबाध अपारा । होवत नष्ट न किसी प्रकारा ॥ ४ ॥
जगदुत्पत्ति प्रलय के अन्दर । रहत सर्वदा सब विधि सुन्दर ॥ ५ ॥
इनते परे न दीखत दूजा । करते भक्त सदा इन पूजा ॥ ६ ॥
तो भी अज्ञ समझकर ये ही । मानत शौरि इन्हे नर देही ॥ ७ ॥
बाद राम हरि नृपतिन आगे । मुनि वसुदेव से कहने लागे ॥ ८ ॥
सुनौ शौरि राखउ विश्वासा । कर्महि कर्मन करत विनासा ॥ ९ ॥
अखिल यज्ञ पति विष्णु कहावे । मख करि हरि पूजन करवाये ॥ १० ॥

दोहा- **चित्त शमन अरु मोक्ष का, मख ही सुगम उपाय ।**
मख समान पूजा नहीं, धर्मशास्त्र बतलाय ॥ २८५ ॥

चौ- संसारी द्विज गेहिन काजा । श्रेयस्कर यहि मारग साजा ॥ १ ॥
मानव शुद्ध प्राप्त धन लेकर । पूजहिं प्रभु को यज्ञ रचाकर ॥ २ ॥
यज्ञ दान द्वारा बुध सारे । निज धन इच्छा को संहारे ॥ ३ ॥
गेहोचित भोगन के द्वारा । नासे सब रुचि पुत्रन द्वारा ॥ ४ ॥
स्वर्गादिक लोकन अभिलासा । काल कर्म ते करे विनासा ॥ ५ ॥
यों तज तीनों रुचि गृह अन्दर । जावत धीर तपोवन भीतर ॥ ६ ॥
कर्जा तीन द्विजन के ऊपर । रहता सदा जगत के अन्दर ॥ ७ ॥
वेद पठन मख संतति द्वारा । होवत इन ऋण ते छुटकारा ॥ ८ ॥
ये ऋण दूर करे विन कोई । त्यागहिं देह पतन उस होई ॥ ९ ॥
ऋषि अरु पितर करज के द्वारा । भये मुक्त तुम सभी प्रकारा ॥ १० ॥

दोहा- **अब तुम यज्ञ रचाय के, करो देव ऋण दूर ।**
इस प्रकार होकर उऋण, तन का तजो गरूर ॥ २८६ ॥

चौ- बनकर पाछे तुम सन्यासी । होउ शरण उन हरि अविनासी ॥ १ ॥
नारी भक्ति अति तुम जगदीश्वर । जो प्रभु प्रकट भये सुत बनकर ॥ २ ॥

श्री शुक कहे सुनो कुरु राया । यों जब ऋषियन वचन सुनाया ॥ ३ ॥
भये मुदित वसुदेव अपारे । उन मुनियन के चरण पखारे ॥ ४ ॥
कर प्रणाम पद पंकज तेहू । ऋत्विज रूप वरण किय येहू ॥ ५ ॥
पुण्यक्षेत्र कुरुक्षेत्र मुनीशा । करवाये उन मख जगदीशा ॥ ६ ॥
परमोत्तम साहित मँगवाई । मख दीक्षा जब उन्हें कराई ॥ ७ ॥
सब यदुवंशी कर अब स्नाना । पहिनी कंज माल पट नाना ॥ ८ ॥
आगत जेते वहँ महिराया । पट भूषण निज तन सजवाया ॥ ९ ॥
अम्बर अंगराज वर हारा । धारण कर सोमित सब दारा ॥ १० ॥

दोहा- **पाछे बड़े उछाह से, मंगल वस्तु गहाय ।**
मख शाला में आ गये, सब मानव समुदाय ॥ २८५ ॥

चौ- ढोल मृदंग शंख सहनाई । बजने लगे तदा सुनुराई ॥ १ ॥
करत नृत्य नट नर्तकि भारी । सूतादिक सब स्तोत्र उचारी ॥ २ ॥
गावत सुर गायक वर गाना । स्वर्वेश्या भी मुदित महाना ॥ ३ ॥
तारन संग चन्द्रमा जैसे । पत्निन सह वसुदेव हि वैसे ॥ ४ ॥
करवाये ऋत्विज अभिषेका । कर उच्चारण मंत्र अनेका ॥ ५ ॥
मख बीचे दीक्षित वसुदेवा । पहिने अजिन सुनौ नर देवा ॥ ६ ॥
उन पत्नी अष्टादश सुन्दर । पहने कंकन हार व अम्बर ॥ ७ ॥
नूपुर कर्णफूल के द्वारा । सज्जित वे सब विविध प्रकारा ॥ ८ ॥
वे निज पत्निन संग अपारा । भये सुशोभित भली प्रकारा ॥ ९ ॥
ऋत्विज सहित सभासद सारे । आभूषण पट्टाम्बर धारे ॥ १० ॥

दोहा- **सुरपुर में सोभित यथा, ऋत्विज सुरपति यज्ञ ।**
भये सुसोभित त्यों यहाँ, सब ऋत्विज वेदज्ञ ॥ २८६ ॥

चौ- रामकृष्ण सुत दार समेता । भये सुशोभित यज्ञ निकेता ॥ १ ॥
प्राकृत वैकृत यज्ञन द्वारा । पुजवाये हरि पद इन द्वारा ॥ २ ॥
दीन्ह दक्षिणा अब यदुकेतु । गौ भूकन्या विप्रन हेतू ॥ ३ ॥
कर पत्नी संयाजन पाछे । अवभृथ स्नान कीन्ह सब आछे ॥ ४ ॥
अब वसुदेव सहित सब नारी । निज निज भूषण वस्त्र उतारी ॥ ५ ॥
वे सब दिये वन्दिजन कारण । पहिने स्वयं नये पट भूषण ॥ ६ ॥
सभी वर्ण के पुनि नर नारी । पाये वे भोजन सुखकारी ॥ ७ ॥
श्वानन सहित जीव वहँ आये । सारमेय भोजन वे पाये ॥ ८ ॥

जेते स्त्री सुत बन्धु वहाँ पर । कैकेय कौसलादि सब नृप वर ॥ ९ ॥
ऋत्विज सहित सदस्य व चारन । देव मनुज भूतादिक पितरन ॥ १० ॥

दोहा- **इन प्रति भूषण वसन दे, कीन्हा अति सत्कार ।**
ले अनुमति पुनि कृष्ण की, ये सब गये सिधार ॥ ३८९ ॥

चौ- तेहि समय कौरव धृतराष्टर । भीम व अर्जुन विदुर युधिष्ठिर ॥ १ ॥
भीष्म व द्रौण प्रथा मुनि नारद । माद्रि सुवन दोउ व्यास विशारद ॥ २ ॥
सम्बन्धी व सखा परिवारी । विरह दुःख ते दुःखित भारी ॥ ३ ॥
सब यदुअन के गल ते मिलकर । चले देश निज अनुमति लेकर ॥ ४ ॥
कृष्ण राम यदुपति के द्वारा । पाकर वृजपति अति सत्कारा ॥ ५ ॥
कुछ दिन गोपन संग निवासा । कीन्हो वहँ हरि दर्शन आसा ॥ ६ ॥
अब वसुदेव प्रति मन होकर । बोले वचन नन्द कर गह कर ॥ ७ ॥
योगिन शूरन प्रति हे भ्राता । स्नेह पाश यह दुष्त्यज जाता ॥ ८ ॥
हम संग अनुपम अहो तुम्हारा । रहा मित्रता का व्यवहारा ॥ ९ ॥
यद्यपि हमने सखे तुम्हारा । किया कोइ भी ना उपकारा ॥१०॥

दोहा- **रहे प्रथम असमर्थ हम, वन्दीगृह के काज ।**
पूछ सके कुछ भी नहीं, कुशल तोरि वृजराज ॥ ३९० ॥

चौ- भये अन्ध अब श्रीमद द्वारा । देखत नयन न तुम्हें हमारा ॥ १ ॥
यहि हित श्रेय काम जग माँही । राज श्री कुछ भी ना चाही ॥ २ ॥
इमि वृज नाथ मयत्री सारी । सुमिरन कर वसुदेव अपारी ॥ ३ ॥
शिथिल हृदय नहीं प्रेम समाया । निज नयनन ते अश्रु बहाया ॥ ४ ॥
वृजवासिन बन्धुन सह राई । पाछे नन्दराय सुखदाई ॥ ५ ॥
स्नांन पात्र वस्त्रादिक द्वारा । पूर्णकाम हो भली प्रकारा ॥ ६ ॥
प्रेम राम हरि के लवलीना । कीन्ह निवास मास वहँ तीना ॥ ७ ॥
पाछे उग्रसेन वसुदेवा । राम कृष्ण उद्धव कृत सेवा ॥ ८ ॥
पाकर पारिवर्ह अति भारी । गये गेह निज नन्द दुखारी ॥ ९ ॥
नन्द सगोप सभी वृज नारी । जिन मन कृष्ण चरण विच जारी ॥ १० ॥

दोहा- **उस मन को हरि चरण में, तजकर सुनौ नृपाल ।**
बिन मन के ही आगये, मथुरा गोपि व ग्वाल ॥ ३९१ ॥

चौ- नन्दादिक गवने उपरन्ता । वृष्णि व राम कृष्ण भगवन्ता ॥ १ ॥
सब मिल पुरी द्वारका आये । पुरजन प्रति मख हाल सुनाये ॥ २ ॥

श्री शुक कहे सुनो कुरु राजा । माता पिता पद वन्दन काजा ॥ ३ ॥
आये राम कृष्ण इक वारा । तव हर्षित वसुदेव अपारा ॥ ४ ॥
ऋषियन मुख सुन सुतन प्रभावा । [illegible] कृष्ण प्रति वचन सुनावा ॥ ५ ॥
कृष्ण कृष्ण हे राम सुजाना । तुम दोउ माधव ईश प्रधाना ॥ ६ ॥
इस जग के तुम एक अधारा । कर्त्ता भर्त्ता लय करतार ॥ ७ ॥
इस जग के तुम ही दोउ स्वामी । यद्यपि तुम हो प्रभो अकामी ॥ ८ ॥
भोक्ता भोग्य नियामक सबके । अविकारी व अगोचर हमके ॥ ९ ॥
कीन्हो प्रथम जगत निरमाना । कियो प्रवेश स्वयं भगवाना ॥ १० ॥

दोहा- **चित्र विचित्र अधोक्षज, इस जग के करतार ।**
तुम ही अब परमात्मा, अन्य न सरजन हार ॥ २९२ ॥

चौ- वेध शक्ति शर की ना जैसे । होवत किन्तु पुरुष की वैसे ॥ १ ॥
प्राणादिक शक्ति भी स्वामी । रही शक्ति तव अन्तरयामी ॥ २ ॥
चन्द्र अग्नि रवि तेज स्वरूपा । ये शक्ति भी तोर अनूपा ॥ ३ ॥
चमकत विद्युत लता अपारा । पाकर हे प्रभु तोर सहारा ॥ ४ ॥
भूमि गंध परवत स्थिर ताई । जल रस सभी गति अनिलाई ॥ ५ ॥
बल चेष्ठा सह ओज अपारा । ये तव शक्ति जगत भरतारा ॥ ६ ॥
सर्व दिशा अरु उन अवकाशा । तुमहीं आश्रय शव्द अकाशा ॥ ७ ॥
इन्द्रिन विषय प्रकाशन हारी । तुमहीं एक शक्ति गिरिधारी ॥ ८ ॥
भूत व इन्द्रिय उन सुर कारण । त्रय विध अहंकार के धारण ॥ ९ ॥
सब के एक तुम्ही हो ताता । तुम ते अपर न अन्य विधाता ॥ १० ॥

दोहा- **रज कंचन निरमित यथा, मट घट कुंडल आदि ।**
बिगडे पर वापिस रहे , रजकण अरु कनकादि ॥ २९३ ॥

चौ- त्यों ये नष्ट पदारथ सारे । वे सब असली रूप तुम्हारे ॥ १ ॥
वृत्ति तीन गुण की हे ताता । माया कृत कल्पित तव गाता ॥ २ ॥
जन्मादिक जे भाव विकारा । उनते रहत सदा तुम न्यारा ॥ ३ ॥
सूक्ष्म रूप जो प्रभो तुम्हारा । जानत जो ना किसी प्रकारा ॥ ४ ॥
वहि देहाभिमान ते ताता । जन्म मरण चक्कर में आता ॥ ५ ॥
नर तन पाय भाग्य के द्वारा । निज स्वारथ जिस नर ने धारा ॥ ६ ॥
निज आयु वह व्यर्थ गँवाई । माया जाल बीच फँस जाई ॥ ७ ॥
यह मम सुत तिय यह तन मोरा । स्नेह रूप यह पाश कठोरा ॥ ८ ॥

फाँसी ममता रूप सनेहू । बाँधा सर्वजगत तुम येहू ॥ ९ ॥
यद्यपि मम सुत ना तुम दोऊ । प्रकृति व प्राणिन के पति होऊ ॥ १० ॥

दोहा- **खल नृपतिन के नसन हित, हरण करण महि भार ।**
लीन्हो तुमने हे प्रभो, यदु कुल में अवतार ॥ २६४ ॥

चौ- आर्तबन्धु संसृति भय हारी । शरणागत मैं चरण तुम्हारी ॥ १ ॥
इन्द्रिय लौलुपता के द्वारा । भरपाया मैं सभी प्रकारा ॥ २ ॥
मृत्यु ग्रास यह देह हमारी । यहि हित आत्म बुद्धि मैं धारी ॥ ३ ॥
तुम चर अचर रचावन हारे । विष्णु रूप तुम पुत्र हमारे ॥ ४ ॥
रक्षा करण धरम की सारी । प्रति युग होवत तुम अवतारी ॥ ५ ॥
यह सब बात प्रथम तुम गाई । सूती सदन बीच बतलाई ॥ ६ ॥
सब हिय बीच तुम्हारा वासा । तुम ही एक अनन्त प्रकासा ॥ ७ ॥
माया शक्ति हे नाथ तुम्हारी । जान सके कोइ न संसारी ॥ ८ ॥
श्री शुकदेव कहे सुन राजन । यों निज पिता कथन सुन कानन ॥ ९ ॥
हँसकर बोले श्री भगवाना । निज सुत जान सकल निज ज्ञाना ॥ १० ॥

दोहा- **बतलाया तुमने हमें, सत्य अर्थ युत तात ।**
कथन तुम्हारा सत्य है, एक न अनृत बात ॥ २६५ ॥

चौ- मैं तुम तात भ्रात यह नाना । सर्व चराचर ब्रह्म समाना ॥ १ ॥
आत्मा निर्गुण एक बखानी । गुण ते सगुण जीव बहुमानी ॥ २ ॥
यथा पंचतत्वन के द्वारा । होवत घट पट विविध प्रकारा ॥ ३ ॥
घट पट नष्ट होत जब ताता । पञ्चतत्व वापिस रह जाता ॥ ४ ॥
बोले श्री शुक सुनो नृपालू । यों जब बोले कृष्ण कृपालू ॥ ५ ॥
तब उन नाना बुद्धि विनासी । मुदित होय पुनि भये उदासी ॥ ६ ॥
मृत सुत यदा कृष्ण बलरामा । ले आये वापिस गुरुधामा ॥ ७ ॥
ये सब हाल देवकी माता । सुनकर निज मन विस्मित जाता ॥ ८ ॥
निज सुत कंस दुष्ट जे मारे । सुमिरण किये देवकी सारे ॥ ९ ॥
निज नयनन ते अश्रु बहाये । होय दीन बत वचन सुनाये ॥ १० ॥

दोहा- **लोक रमण बलराम तुव, शक्ति मोघ अपार ।**
योग पतीश्वर कृष्ण तुम, आदि पुरुष अवतार॥ २६६ ॥ क
भूमि भार के हरण हित, खल नृपातिन नासार्थ ।
लीन्हों मोरे गर्भ से ,तुम दोउ जन्म यथार्थ ॥ २६६ ॥ ख

चौ- जिन अंशाश अंश ते भगवन । होवत सकल जगत यह सरसन ॥ १ ॥
उन प्रभु की शरणागत होकर । कहती वचन सुनो चित धरकर ॥ २ ॥
गुरु आज्ञा पाकर तुम दोऊ । लायउ यम घर ते सुत सोऊ ॥ ३ ॥
वहि तुम काम करहु यह मोरा । नाशे सुवन कंस खल घोरा ॥ ४ ॥
उन पुत्र को देखन मोही । होरहि रुची अतिव खल द्रोही ॥ ५ ॥
यो जननि प्रेरित दोउ भाई । पहुँचे सुतल जहाँ वलिराई ॥ ६ ॥
आवत देख वली दोउ भ्राता । उठ कर सद्य मुदित निज गाता ॥ ७ ॥
सह परिवार वन्दना करके । दे आसन धोये पद उनके ॥ ८ ॥
सह कुटुम्ब वह जल वलिराया । हर्पित हो निज सीस चढ़ापा ॥ ६ ॥
वस्त्राभूषण वर अनुलेपन । किये समर्पित अमृत भोजन ॥ १० ॥

दोहा- **अव वलि ने भगवान के, मुहु मुहु चरण गहाय ।**
रोमाञ्चित पुलिकत तनु, नयनन अश्रु वहाय ॥ २६७॥

चौ- गदगद हो पुनि वचन उचारे । कृष्ण अनन्त हे ब्रह्म खरारे ॥ १ ॥
साँख्ययोग के जो विस्तारी । वन्दो उन पद कमल मुरारी ॥ २ ॥
तम स्वभाव हे नाथ हमारा । दुर्लभ दर्शन कृष्ण तुम्हारा ॥ ३ ॥
दैत्य सिद्ध विद्याधर सारे । राक्षस यक्ष पिशाच अपारे ॥ ४ ॥
दानव भूत प्रमथ गंधर्वा । रज तम व्याप्त शरीर ये सर्वा ॥ ५ ॥
सत्व रूप हे प्रभो तुम्हारा । वाँधत निशिदिन वैर अपारा ॥ ६ ॥
कर कर कैतिक वैर अपारा । तरते कइ कर भक्ति प्रकारा ॥ ७ ॥
निर्जर सर्व सत्व गुण धारे । तदपि न पात स्वरूप तुम्हारे ॥ ८ ॥
हे योगेश्वर अति तप धारी । जानत माया नहीं तुम्हारी ॥ ६ ॥
हे योगेश स्वरूप तुम्हारा । जानत हम पुनि कवन प्रकारा ॥ १० ॥

दोहा- **करो कृपा हे ईश तुम, होऊँ यथा निष्काम ।**
त्याग अन्ध गृह कूप को ,करूँ विपिन विश्राम ॥ २६८॥

चौ- करके गलित फलादिक भक्षण । धर तव ध्यान करूँ वहँ विचरण ॥ १ ॥
कर अव आज्ञा मुझे प्रदाना । पाप हीन कर दो भगवाना ॥ २ ॥
वलि के वचन श्रवण कर काना । वोले दीन वन्धु भगवाना ॥ ३ ॥
आवा प्रथम यदा मन्वन्तर । ऊर्णागर्भ मरीचि मुनीवर ॥ ४ ॥
जाये पुत्र षट हे राजू । निज कन्या प्रति मैथुन काजू ॥ ५ ॥
उद्यत भये यदा चतुरानन । हँसे देख उनको ये राजन ॥ ६ ॥

इन प्रति दिय तब शाप विधाता । पाई असुर योनि दुख दाता ॥ ७ ॥
पाछे कनककशिपु घर अन्दर । भयो जनम इनका तव नृपवर ॥ ८ ॥
पाछे उदर देवकी आये । हरि माया ने वहाँ पठाये ॥ ९ ॥
हे नृप कंस दुष्ट ने सारे । क्रोधित हो ये वधे विचारे ॥ १० ॥

दोहा- **उन सबके प्रति देवकी, कर रहि सोच अपार ।**
पास तुम्हारे कुशल युत, हैं नृप स्थित इस बार ॥ २९९॥

चौ- माता शोक करण हित दूरी । ले जाऊँ यह बाल जरूरी ॥ १ ॥
बाद शाप ते हो निर्मुक्ता । जावहि अमर लोक ये अन्ता ॥ २ ॥
स्मर उद्गीथ व घृणि परिष्वङ्गा । क्षुद्र भृत्त जिन नाम पतङ्गा ॥ ३ ॥
पाकर कृपा हमारी सारे । जावहि ये षट् मोक्ष दुआरे ॥ ४ ॥
अब बलि ने वे पुत्र बुलाये । राम कृष्ण प्रति त्वरित गहाये ॥ ५ ॥
वे सुत द्वारवती प्रभु लाकर । किय अर्पित माता प्रति हँसकर ॥ ६ ॥
निज पुत्रन को लखकर माता । भई स्नेह वश पुलिकत गाता ॥ ७ ॥
उन प्रति प्रेम सहित स्तन पाये । प्रेम मग्न नयनन जल छाये ॥ ८ ॥
कृष्ण पीत अवशेषित सुन्दर । मात दुग्ध अमृत मय पीकर ॥ ९ ॥
हरि तनु स्पर्शन ते वे सारे । प्राप्त ज्ञान हो अपरम्पारे ॥ १० ॥

दोहा- **कृष्ण राम पित मातही, कर वे सभी प्रणाम ।**
सब प्राणिन के देखते, तुरत गये सुरधाम ॥ ३०० ॥

चौ- मृतक आगमन निर्गम देखी । भई मात तब चकित विशेषी ॥ १ ॥
जानी सभी कृष्ण की माया । कृष्ण चरित अद्भुत इमि राया ॥ २ ॥
चरित अनेक कृष्ण के गाये । और और भी बहु विध भाये ॥ ३ ॥
बोले सूत सुनो मुनि नाथा । व्यास पुत्र वर्णित हरि गाथा ॥ ४ ॥
अघ हर सुनहिं सुनावहिं कोई । हरि प्राप्त करहि नर सोई ॥ ५ ॥
बोले नृप से महामुनि ज्ञानी । राम कृष्ण भगिनी गुण खानी ॥ ६ ॥
नाम सुभद्रा केर विवाहू । वर्णन करो मुझे मुनि नाहू ॥ ७ ॥
बोले शुक हे कुरुकुल राजन । एक बार तीरथ हित अर्जुन ॥ ८ ॥
भ्रमण करत भूमंडल सारा । आये क्षेत्र प्रभास किनारा ॥ ९ ॥
नाम सुभद्रा जो गुण खानी । रूप अपार जासु पिक बानी ॥ १० ॥

दोहा- **दुर्योधन प्रति राम का, ब्याहन हेतु विचार ।**
किन्तु कृष्ण वसुदेव को, यह मत ना स्वीकार ॥ ३०१॥

चौ- वाद सुभद्रा इच्छुक अर्जुन । धर यतिवेप त्रिदंडी तत्क्षन ॥ १ ॥
पुरी द्वारका वीच सिधाये । वहँ उन चातुर्मास विताये ॥ २ ॥
अनजाने उनको इक वारा । दीन्ह नियंत्रण राम उदारा ॥ ३ ॥
प्रेम समेत गेह निज लाये । श्रद्धा सह भोजन करवाये ॥ ४ ॥
निज स्वारथ साधक अव अर्जुन । कीन्हो प्रेम सहित वहँ भोजन ॥ ५ ॥
महा मनोहर वहँ पर अर्जुन । देखी कन्या एक विलक्षन ॥ ६ ॥
रूप अपार वीर मद मोचन । प्रेम प्रफुल्लित हो गय अर्जुन ॥ ७ ॥
भयो लुव्ध लखकर मन तेहू । कीन्ह विचार हरण हित येहू ॥ ८ ॥
उसने भी अर्जुन को देखा । तनिक हासयुत लाज विशेषा ॥ ९ ॥
निज हिय कियो समर्पित तेहू । चिन्तन करत पार्थ भी येहू ॥ १० ॥

दोहा- **अवसर हेरत हरण हित, भ्रम चित हो अव पार्थ ।**
मिली शान्ति निजमन नही, हे नृप उसे यथार्थ ॥ ~~३०२~~ ३०० ॥

चौ- सुर दर्शन हित वह इक वारा । सुन्दर रथ पर हो असवारा ॥ १ ॥
निकसी दुर्ग द्वारका वाहर । ले गए पार्थ सुभद्रहि हर कर ॥ २ ॥
माता पिता हरि की सुनु राया । अनुमति प्रथम पार्थ ले आया ॥ ३ ॥
अव रथ पर स्थित होकर अर्जुन । लीन्हो धनुष हाथ निज तत्क्षन ॥ ४ ॥
जे जे सैनिक रोकन आये । मारपीट वे तुरत भगाये ॥ ५ ॥
तत्क्षण केहरि भाग समाना । कीन्ह हरण देखत भटनाना ॥ ६ ॥
यह सुन क्रोधित राम अपारा । उमड़त जैसे सागर ज्वारा ॥ ७ ॥
कृष्ण चन्द्र ने आकर तत्क्षण । कीन्हो पद गहि कोप निवारण ॥ ८ ॥
सखा मित्र यदुवंशिन द्वारा । समझाये वल कई प्रकारा ॥ ९ ॥
अव वर वधु प्रति राम उदारा । कीन्हो प्रेषित द्रव्य अपारा ॥ १० ॥

दोहा- **गज हय स्यन्दन वहुत से, दास व दासि अपार ।**
भिजवा दिये दहेज में, सव सामग्रिन लार ॥ ~~३०३~~ ३०१ ॥

चौ- श्री शुक कहे सुनो हे राजन । शान्त अलम्पट इक द्विज सज्जन ॥ १ ॥
कृष्ण चन्द्र का सखा कहाया । नाम जासु श्रुतदेव वताया ॥ २ ॥
गेहाश्रम विच किसी प्रकारा । मिलहिं भाग्य वश करे गुजारा ॥ ३ ॥
अति सन्तुष्ट शान्त तजि आसा । मिथिलापुर में करे निवासा ॥ ४ ॥
तन निर्वाह मात्र तेहि भोजन । प्रति दिन मिलहिं अधिक ना राजन ॥ ५ ॥
निज वर्णाश्रम के अनुसारा । करत धरम पालन वह सारा ॥ ६ ॥

मिथिला राष्ट्रपाल सुनु राजन । उन बहुलाश्व नाम अति सज्जन ॥ ७ ॥
ये दोऊ अच्युत प्रिय भारी । करन मुदित इनको गिरिधारी ॥ ८ ॥
स्यन्दन स्थित ऋषि मुनि संग लेकर । चाले नगर विदेह मनोहर ॥ ९ ॥
नारद वामदेव मैं रामा । अत्रि व व्यास असित तप धामा ॥ १० ॥

दोहा- **कण्व अरुणि व सुरगुरु, मुनि मैत्रेय महान ।**
च्यवनादिक ऋषि संग ले, आवत इत भगवान ॥ ३०४ ॥

चौ- यों सुन पुरजन जनपद वासी । दर्शन करन कृष्ण सुख राशी ॥ १ ॥
लेकर भेट मार्ग में आये । कर हरि दर्शन अति सुख पाये ॥ २ ॥
ग्रहन बीच दिननाथ समाना । देखे दीनबन्धु भगवाना ॥ ३ ॥
यों आनर्त धन्व कुरु जांगल । कंक मत्स्य पांचाल व कौशल ॥ ४ ॥
कुंति व मधु केकय हरियाना । जहँ जहँ पहुँचे दीन निधाना ॥ ५ ॥
आकर वहँ के पुरजन सारे । हरि दर्शन कर भये सुखारे ॥ ६ ॥
पुरजन प्रति कर अभय प्रदाना । उन मुख ते सुन निज यश काना ॥ ७ ॥
यों भगवान कृष्ण सुनु राजन । पहुँचे देश विदेह सुहावन ॥ ८ ॥
श्याम आगमन सुन कर काना । भये नागरिक मुदित महाना ॥ ९ ॥
आये सन्मुख अर्हणपाणी । पौर व जनपद के सब प्राणी ॥ १० ॥

दोहा- **मुनियन सह श्री कृष्ण को, कर निज सीस प्रणाम ।**
भई मुदित लखि रूप उन, मिथिला प्रजा तमाम॥ ३०५ ॥

चौ- द्विज श्रुतदेव मिथिल महाराजा । आये हरि निज दर्शन काजा ॥ १ ॥
गिरे दोउ हरि के पद पावन । कर आतिथ्य व दीन्ह निमंत्रन ॥ २ ॥
कर स्वीकार प्रार्थना दोऊ । पृथक पृथक धर वपु प्रभु सोऊ ॥ ३ ॥
एक रूप ते नृप घर आये । अपर रूप द्विज गेह सिधाये ॥ ४ ॥
आगत कृष्ण संग मुनि सारे । कर वन्दन नृप चरण पखारे ॥ ५ ॥
सह कुटुम्ब नृप जल सिर धारा । कर पूजन पुनि भली प्रकारा ॥ ६ ॥
विष्णु चरण निज अंक उठाये । कर मर्दन नृप अति हर्षाये ॥ ७ ॥
हरि प्रति पुनि मृदु वचन उचारा । दीन बन्धु हे जग भरतारा ॥ ८ ॥
तुम जगदात्मा हे भगवन्ता । साक्षी स्वयं प्रकाश अनन्त ॥ ९ ॥
भार्या लक्ष्मी बन्धु अनन्ता । ब्रह्मा पुत्र तोर भगवन्ता ॥ १० ॥

दोहा- **सत्य करन निज वचन को, हे हरि यहँ पर आय ।**
दिये दरस हम सबन्हि को ,ऋषि मुनि संग लिवाय ॥ ३०६ ॥

चौ- सुन्दर चरण कमल प्रभु तोरे । ऐसो कौन पुरुष जो छोरे ॥ १ ॥
निष्किंचन जो भक्त तुम्हारे । उन प्रति निज आत्मा दे डारे ॥ २ ॥
यदुकुल वीच लीन्ह अवतारा । जग मुक्तिप्रद यश विस्तारा ॥ ३ ॥
वन्दों नारायण भगवन्ता । कृष्ण शान्त हरि जगत नियन्ता ॥ ४ ॥
मुनिन संग कुछ दिवस निवासा । करो यहाँ पर यहि मम आसा ॥ ५ ॥
तव पद पंकज रज के द्वारा । करो नाथ निमि कुल उद्धारा ॥ ६ ॥
यों नृप प्राथित यदुकुल राई । पुर वासिन प्रति करन भलाई ॥ ७ ॥
कुछ दिन कीन्हा वहाँ निवासा । उत श्रुतदेव विप्र निज पासा ॥ ८ ॥
मुनियन प्रभु पद कीन्ह प्रणामा । वस्त्र भ्रमाय मुदित निज धामा ॥ ९ ॥
करने लागा नृत्य अपारा । प्रेम मगन नयनन जल डारा ॥ १० ॥

दोहा- **दर्भादिक आसन पर, सव मुनि कृष्ण विछाय ।**
पद सरोज धोये पुनि, वह जल ले द्विज राय ॥ ३०५ ॥

चौं- कीन्ह स्नान सह निज परिवारा । कियो पवित्र गेह द्विज सारा ॥ १ ॥
कन्द मूल फल लेकर पाछे । तुलसी नीर सुवासित आछे ॥ २ ॥
देकर गंध व अक्षत माला । पूजे मुनि सह दीन दयाला ॥ ३ ॥
निज मन कीन्ह तर्क ना भारी । मुनियन सह इन कृष्ण मुरारी ॥ ४ ॥
दियो दर्श मोहिं कवन प्रकारा । अन्ध कूप गृह पतित अपारा ॥ ५ ॥
भार्या सहित कृष्ण पद सुन्दर । कर मर्दन बोला अव द्विज वर ॥ ६ ॥
दर्शन आज मुझे तुम दीन्हा । नूतन काम नहीं तुम कीन्हा ॥ ७ ॥
जव से आप शक्ति निज द्वारा । कीन्हो प्रकट प्रभो संसारा ॥ ८ ॥
निज सत्ता से कियो प्रवेशा । मिले आप मोहिं तदा सुरेशा ॥ ९ ॥
निज माया ते हे भगवाना । कर सरजन यह जगत महाना ॥ १० ॥

दोहा- **पाछे होय प्रवेश तुम, भासत रूप अपार ।**
स्वप्नावस्था वीच ज्यों, मानव वारम्वार ॥ ३०६ ॥

चौ- श्रवण कीरतन कथा तुम्हारी । अर्चन वन्दन जो नर नारी ॥ १ ॥
चर्चा सदा परस्पर करहीं । निज हिय पावन कर अघ हरहीं ॥ २ ॥
उन हिय वीच वसहु निशि यामि । वही आज हरि अन्तरयामी ॥ ३ ॥
मोरे सन्मुख दर्शन दीन्हा । महाभाग्य मैने यह चीन्हा ॥ ४ ॥
यद्यपि हिय विच वास तुम्हारा । कर्म क्षिप्त मानव के द्वारा ॥ ५ ॥

होवत दर्शन नहीं तुम्हारा । दीखत उसको दूर अपारा ॥ ६ ॥
योगिन प्रति तुम मोक्ष दिलावत । अज्ञानिन को भव भटकावत ॥ ७ ॥
वन्दों तव पद बारम्बारा । मैं सेवक हूँ नाथ तुम्हारा ॥ ८ ॥
स्वयं प्रकाश शान्त भगवाना । अनुमति मुझको करो प्रदाना ॥ ९ ॥
क्या सेवा हम करें तुम्हारी । मिटे आज सब क्लेश खरारी ॥ १० ॥

दोहा- **श्री शुक बोले हे नृप, द्विज कर ले निज हाथ ।**
होय मुदित उस विप्र से, बोले यों यदुनाथ ॥ ३०९ ॥

चौ- हे ब्रह्मन तव अनुग्रह हेतू । आवा मैं इन मुनिन समेतू ॥ १ ॥
देव तीर्थ क्षेत्रादिक जेते । करत पुनीत समय पर एते ॥ २ ॥
जप तप विद्यादिक ते ब्राह्मन । होवत सर्व बीच अति पावन ॥ ३ ॥
मैं भी करूँ सदा इन सुमिरन । निशि दिन वन्दन अरु पद पूजन ॥ ४ ॥
रूप चतुर्भुज विप्र हमारा । विप्रन ते मोहिं अधिक न प्यारा ॥ ५ ॥
सर्व वेदमय विप्र कहावे । सर्व देव मय मोहिं सब गावे ॥ ६ ॥
मानव दुष्ट बुद्धि के द्वारा । जानत भेद नहीं यह सारा ॥ ७ ॥
मूर्ति आदि में ही वह केवल । राखत अरे विप्र निज अक्कल ॥ ८ ॥
गुण बिच दोष निसारत भारी । करे द्विजन अपमान अनारी ॥ ९ ॥
कर साक्षात्कार द्विज मेरा । निज चित निश्चय करत घनेरा ॥ १० ॥

दोहा- **सर्व चराचर जगत को, जानत हरि का रूप ।**
इस कारण इन मुनिन को ,समझो प्रभू स्वरूप ॥ ३१० ॥

चौ- श्रद्धा सहित करो इन वन्दन । संभाषण अर्चव पद पूजन ॥ १ ॥
इन पूजन ते हो मम पूजन । इन बिन होय नहीं मम अर्चन ॥ २ ॥
श्री शुक वदत नृपति से वानी । हरि आदेशित यों द्विज ज्ञानी ॥ ३ ॥
पूजे कृष्ण समेत मुनीशा । मैथिल सहित तदा कुरु ईशा ॥ ४ ॥
कृपा प्राप्त कर हरि मुनि राया । पा सद्गति हरि धाम सिधाया ॥ ५ ॥
हरि भक्ति करते जिमि भक्ता । हरि भी भक्त भक्ति आशक्ता ॥ ६ ॥
दोउ भक्तन पूरन हित आसा । मिथिला कुछ दिन किये निवासा ॥ ७ ॥
नृप द्विज प्रति कर बहु उपदेशा । आये बाद प्रभू निज देशा ॥ ८ ॥
करती प्रभु का सब श्रुति वर्णन । हरि पद प्राप्त दिखावति साधन ॥ ९ ॥
पूर्ण रूप से हे नर राया । श्रुति भी अन्त जासु ना पाया ॥ १० ॥

दोहा- **बोले नृप भगवन अब, कहो मुझे समझाय ।**
कार्य व कारण से परे, परम ब्रह्म कहलाय ॥ ३११ ॥क
मन वाणी में भी प्रभो, नहीं तासु निर्देश ।
श्रुतियों का गुण विषय है, निर्गुण नहीं प्रवेश ॥ ३११॥ख

चौ- ऐसी स्थिति में कवन प्रकारा । गावत यश श्रुति ब्रह्म अपारा ॥ १ ॥
कारण निर्गुण वस्तु स्वरूपा । उनकी पहुँच परे मुनि भूपा ॥ २ ॥
सर्व शक्ति मान भगवाना । हे राजन सब गुणन निधाना ॥ ३ ॥
इन्द्रिय मन बुद्धि अरु प्राना । रचे जीव हित ही भगवाना ॥ ४ ॥
ये पुरुषार्थ सिद्ध हित सारे । सगुण निरुपण ही श्रुति धारे ॥ ५ ॥
स्वेच्छा से इनके ही द्वारा । होत पदारथ वरणन सारा ॥ ६ ॥
यों सब सगुण परम श्रुति गावे । तदपि वे निर्गुण परम कहावे ॥ ७ ॥
निर्णय ब्रह्म ये करत अनूपा । उपनिषदन का यही स्वरूपा ॥ ८ ॥
श्रृद्धा सहित करहिं यहिं धारन । पावत वह हरिपद हो पावन ॥ ९ ॥
नारायण नारद की गाथा । कहुँ सम्वाद रूप नरनाथा ॥ १० ॥

दोहा- **परम भक्त नारद मुनी, भ्रमण करत इक बार ।**
नारायण दरसन करन, गये बद्रिका द्वार ॥ ३१२ ॥

चौ- पुण्य भूमि इस भारत अन्दर । पावन परम बद्रिकाश्रम पर ॥ १ ॥
नर कल्याण हेतु भगवाना । संयम सहित धर्म अरु ज्ञाना ॥ २ ॥
करते महा तपस्या राया । कल्पारंभ जहाँ ते पाया ॥ ३ ॥
पहुँचे वहाँ महामुनी नारद । वेष्टित जहँ मुनि ज्ञान विशारद ॥ ४ ॥
नारायण को कियों प्रणाम । पूछा प्रश्न यही तप धामा ॥ ५ ॥
मुनियम व्याप्त सभा के अन्दर । दीन्हो नारायण जो उत्तर ॥ ६ ॥
नारद प्रति वहि कथा सुनाई । पूर्व काल में हे नरराई ॥ ७ ॥
भयो बाद जन लोक अपारा । ब्रह्म विचार हेतु इएक बारा ॥ ८ ॥
बोले नारायण मुनिराई । एक बात प्राचीन कहाई ॥ ९ ॥
कियो बाद जन लोक निवासी । विधि सुत शनकादिक सुखराशी ॥ १० ॥

दोहा- **यद्यपि तुम भी हे मुने, करत वहाँ ही वास ।**
किन्तु तुम्हें इस सत्र का, हुआ नहीं आभास ॥ ३१३ ॥ क
दर्शन हित अनिरुद्ध, के श्वेत द्वीप दरम्यान ।
चले गये थे तुम मुने, याते रहा न भान ॥ ३१३ ॥ ख

चौ- पूछा प्रश्न यहाँ तुम जोही । भयउ विवाद प्रश्न वहँ सोही ॥ १ ॥
तुल्य शीलतप श्रुत व्रत ज्ञाना । विधि सुत जिन अरि मित्र समाना ॥ २ ॥
तदपि सनन्दन को मुनि राया । कीन्ह प्रवक्ता उस समुदाया ॥ ३ ॥
बने शेष प्रच्छक त्रय भ्राता । वदत सनन्दन अब इमि बाता ॥ ४ ॥
यह संसार प्रलय जब होवत । शक्तिन सहित तदा हरि सोवत ॥ ५ ॥
होवत प्रलय अन्त श्रुति सारी । उन प्रति पादन वचन उचारी ॥ ६ ॥
परमेश्वर को बोध करावत । यथा वन्दि जन नृपहिं जगावत ॥ ७ ॥
वदत वचन यों श्रुति मिल सारी । जय जय हो जय अजित तुम्हारी ॥ ८ ॥
धारे दोष हेतु गुण जेहू । ऐसी तजो नींद तुम येहू ॥ ६ ॥
सब ऐश्वर्य आपने ताता । रोके निज तनु बीच विधाता ॥ १० ॥

दोहा- यह माया प्रभु आपकी, कुलटा नार समान ।
सजधज कर निज गुणन ते, पहुँचावत नुक्सा ॥ ~~३१४~~ २१२ ॥

चौ- तुम ही इसके नासन कर्ता । नही जीव में शक्ति अनन्ता ॥ १ ॥
क्रिया साधना शक्ति व ज्ञाना । इनके बोधक तुम भगवाना ॥ २ ॥
यहि हित माया नाथ तुम्हारी । मिट सकती नहिं किसी प्रकारी ॥ ३ ॥
पूछो इसमें आप सबूता । तो इसमें हम श्रुति मजबूता ॥ ४ ॥
वर्णन योग्य न रूप तुम्हारा । यद्यपि हमसे किसी प्रकारा ॥ ५ ॥
नाथ किन्तु निज प्रकृति द्वारा । धरते आप सगुण अवतारा ॥ ६ ॥
हम श्रुतियन ते ज्योति स्वरूपा । वर्णन योग्य होत तव रूपा ॥ ७ ॥
श्रुतियन के जे मंत्र हमारे । जे ऋषि मन्त्रन देखन हारे ॥ ८ ॥
सर्व जगत को ब्रह्म स्वरूपा । करते अनुभव ज्योति स्वरूपा ॥ ६ ॥
होवत जगत नष्ट जब सारा । तदपि रहत प्रभु वदन तुम्हारा ॥ १० ॥

दोहा- घट शराव वस्तु यथा, हो पुनि धूरि विलीन ।
नष्ट होय यह जगत भी, होवत तुममें लीन ॥ ~~३१५~~ २१३ ॥

चौ- लय उत्पति जगत की स्वामी । होत आपमें अन्तरयामी ॥ १ ॥
निर्विकार एक रस ताता । तुम बिच जगत प्रतीत न जाता ॥ २ ॥
घट शराव जिमि धूरि समाना । त्यों सुरादि भी तव दरम्याना ॥ ३ ॥
रिपि अरु मुनि जे सोचत बोलत । उसमें रूप तुम्हारा देखत ॥ ४ ॥
यथा भूमि पर चलने हारे । निज पद भूमि बीच कहिं धारे ॥ ५ ॥
नहीं भूमि ते वह अलगाई । चाहे पाहन काष्ट धराई ॥ ६ ॥

नाम रूप ते जगन्नियन्ता । रहते नाथ एक ही अन्ता ॥ ७ ॥
जिस जिस नाम रूप का वरणन । करती हम सब श्रुतियाँ भगवन ॥ ८ ॥
वर्णनीय वह नाम व रूपा । हैं तुम्हार सब ज्योति स्वरूपा ॥ ६ ॥
निर्मित गुण माया के द्वारा । भाव कुभाव क्रियादिक सारा ॥ १० ॥

दोहा- **उलझहि इसमें लोग जो, हो ना भव के पार ।**
इस माया नटि के तुम्हीं ,प्रभो नचावन हार ॥ ३१६ ॥

चौ- मनुज विचार शील यहि हेतू । लीला सिन्धु लगावत गोतू ॥ १ ॥
धोवत वे निज पाप व तापा । नासत तोरि कथा संतापा ॥ २ ॥
आत्म ज्ञान द्वारा भगवाना । रागादिक जिन द्वेष न जाना ॥ ३ ॥
तव स्वरूप विच रहे निमग्ना । वे नहि जरा मरण उद्विग्ना ॥ ४ ॥
जो अखंड आनन्द स्वरूपा । कीन्हे जिन निज पाप विरूपा ॥ ५ ॥
उनकी तो प्रभु बात निराली । मिलहिं सफलता तेहि न खाली ॥ ६ ॥
तुम उन बीच फरक ना होई । वदत ब्रह्मविद् यों सब कोई ॥ ७ ॥
जीव सफलता प्रभो इसी में । करत भजन ना और किसी में ॥ ८ ॥
करते जे ना भजन तुम्हारा । उन जग जन्म वृथा ही धारा ॥ ६ ॥
तासु श्वास मुइ खाल समाना । इस जग बीच वृथा ही माना ॥ १० ॥

दोहा- **भगवत भजन करे विना, इह परत्र नर कोय ।**
देखा हमने ना प्रभो, जो सुख पाया सोय ॥ ३१७ ॥

चौ- महतत्व आदिक अहँकारा । पाय अनुग्रह नाथ तुम्हारा ॥ १ ॥
रचना की ब्रह्मांड प्रदेशा । कीन्हो तुम उन बीच प्रवेशा ॥ २ ॥
पंच कोश विच पुरुष स्वरूपा । करत वास तुम ज्योति स्वरूपा ॥ ३ ॥
भजन तुम्हारा विना सुख नाँही । इस जग बीच न कहीं दिखाहीं ॥ ४ ॥
बात सर्वथा सत्य कृपालू । पंच कोश विच दीनदयालू ॥ ५ ॥
रहती सत्ता सदा तुम्हारी । होत नष्ट जब कोश मुरारी ॥ ६ ॥
अन्तिम अवधि रूप से ताता । रहती विद्यमान तव सत्ता ॥ ७ ॥
वास्तव में कुछ वृतियन द्वारा । अस्ति व नास्ति के रूप अपारा ॥ ८ ॥
होवत अनुभव यद्यपि ताता । तुम सब परे असंग विधाता ॥ ६ ॥
साक्षी सकल जीव हिय वासी । सत्य एक तुम ही अविनासी ॥ १० ॥

दोहा- **भजन विना इस जीव का, जीवन है बेकार ।**
परम सत्य से जीव यह, वञ्चित बारम्बार ॥ ३१८ ॥

चौ- प्राप्त हेतु प्रभु तुम्हें अनेकी । गाये पथ ऋषि मुनी विवेकी ॥ १ ॥
स्थूल दृष्टि राखत जो कोई । मणि पूरक बिच खोजहिं तोई ॥ २ ॥
सूक्ष्म दृष्टि के राखन हारे । हृदय पद्म बिच हेरत सारे ॥ ३ ॥
तुम को प्राप्त करन का भगवन । गावा श्रेष्ठ सुषुम्ना साधन ॥ ४ ॥
पंथ ज्योतिमय जो नर पावे । उससे ऊपर वह बढ़ जावे ॥ ५ ॥
छूटहिं जन्म मृत्यु की होनी । चार लाख चौरासी योनी ॥ ६ ॥
छाया सब में रहे तुम्हारी । कहिं उत्तम कहिं अधम पुकारी ॥ ७ ॥
न्यूनाधिक जिमि अनल समाना । होत प्रतीत सदा भगवाना ॥ ८ ॥
यहि हित मानव संत विवेकी । होत विरक्त गेह धन छेकी ॥ ९ ॥
निर्मल बुद्धि के अनुसारा । तजकर जग के सब व्यवहारा ॥ १० ॥

दोहा- **स्थित होकर समभाव से, योगीजन विख्यात ।**
करत भेंट सर्वत्र तव, सत्य रूप से तात ॥ ३१९ ॥

चौ- प्रभो जीव जिस बसे शरीरा । हो निर्मित वह कर्मन द्वारा ॥ १ ॥
बोलत तत्व ज्ञानि यों वानी । दीखत जगत बीच जे प्रानी ॥ २ ॥
वे सब स्वामी रूप तुम्हारे । निर्मित और अनिर्मित सोर ॥ ३ ॥
जीव बीच जब भीतर बाहिर । नहीं आवरण हे जगदीश्वर ॥ ४ ॥
भोक्ता पन परिछिन्न न पाया । पुनि तव बीच कहाँ ते आया ॥ ५ ॥
यों जी पर कर सूक्ष्म विचारा । तज मतिमान सकल व्यवहारा ॥ ६ ॥
करते तव पद पंकज पूजन । रख उत्कट श्रृद्धा हे भगवन ॥ ७ ॥
वैदिक कर्म समर्णपन स्थाना । ते पद मोक्ष स्वरूप प्रदाना ॥ ८ ॥
उपलब्धि इस वास्तविक रूपा । हो न भजन विन ज्योति स्वरूपा ॥ ९ ॥
मानव लोक बीच सुर राया । साधन एक यही शुभ गाया ॥ १० ॥

दोहा- **इस परमातम तत्व का, करना मुश्किल ज्ञान ।**
बोध कराने को इसे, जन्मत तुम भगवान ॥ ३२० ॥

चौ- धर कर आप विविध अवतारा । ऐसो चरित करत उस द्वारा ॥ १ ॥
अमृत सागर भी जिस आगे । निज मृदु मादकता भी त्यागे ॥ २ ॥
इस रस का जो सेवन करहीं । तासु शिथिलता वह सब हरहीं ॥ ३ ॥
प्रेमी भक्त होत कुछ ऐसे । करते श्रवण चरित वह जैसे ॥ ४ ॥
स्वर्ग मोक्ष की भी अभिलासा । रखते निज मन नहीं जरा सा ॥ ५ ॥
होवत जहँ पर कथा तुम्हारी । परम हंस तव चरण पुजारी ॥ ६ ॥

उनकी सत्संगत में आकर । इतना सुख होवत हिय अन्दर ॥ ७ ॥
तज देते निजधर धन नारी । भूल जात सुध बुध वे सारी ॥ ८ ॥
मिलहिं एक दिन रज बिच देहा । अल्प काल जीवन प्रभु येहा ॥ ६ ॥
प्रभो जीव यदि इच्छा करहीं । प्राप्ति आप की यह कर सबहीं ॥ १० ॥

दोहा- **इसके द्वारा ही प्रभो, सेवन भजन तुम्हार ।**
होसकता सब भाँति से, जग में भली प्रकार ॥ ३१६॥

चौ- नाथ जीव की रूचि विपरीता । करत काम ना तनु विपरीता ॥ १ ॥
उसकी आज्ञा के अनुसारी । आत्मा सुहृद मित्र सुत नारी ॥ २ ॥
प्रियजन सम इन से व्यवहारा । करता यह तन भली प्रकारा ॥ ३ ॥
जब शरीर ये ता अनुकूला । होन सकत पुनि तुम प्रतिकूला ॥ ४ ॥
जीव हितैषी तुम ही साँचे । प्रियतम अरु आत्मा तुम बाँचे ॥ ५ ॥
सदा सर्वदा जीवहिं ताता । अपनाने हित उद्यत जाता ॥ ६ ॥
होत सुगमता इतनी भारी । पूजन करत न तदपि तुम्हारी ॥ ७ ॥
तुम्हरे चरण कंज ना शेते । असत नष्ट तन में मन देते ॥ ८ ॥
आत्मा हनन कर येन प्रकारा । पहुँचावत वैवस्वत द्वारा ॥ ६ ॥
देहादिक में ही उन सारी । होवत वृत्ति वासना जारी ॥ १० ॥

दोहा- **धरत देह पशु पक्षि का, उनके ही अनुसार ।**
जन्म मृत्यु के जगत में, भटकत वारम्वार ॥ ३२२ ॥

चौ- नाम स्मर्ण की महिमा भारी । बड़ी विलक्षण प्रभो मुरारी ॥ १ ॥
कर कर योगाभ्यास बहूता । योगी यति व सन्त अवधूता ॥ २ ॥
पावत जो पद नाथ तुम्हारा । कर कर अर्चन भजन अपारा ॥ ३ ॥
वहि पद पावत शत्रु तुम्हारे । वैर भाव के राखन हारे ॥ ४ ॥
जो नारी वश हो अज्ञाना । मानत मर्यादित भगवाना ॥ ५ ॥
शेष नाग सम प्रभो तुम्हारी । देख पुष्ट नाजुक भुजभारी ॥ ६ ॥
काम भाव से होकर आसित । योगिन के सम वे पद पावत ॥ ७ ॥
मिलहिं परम पद जे उन ताता । वहि पद प्राप्त हमे सुख दाता ॥ ८ ॥
सदा एक रस हे खल द्रोही । अनुभव करत यद्यपि तोही ॥ ६ ॥
तव पद पंकज रस मकरन्दा । करत पान हम बाल मुकन्दा ॥ १० ॥

दोहा- **आप अनन्त अनादि हो, समदर्शी भगवान ।**
जन्म मृत्यु से बद्ध नर, कैसे सके पिछान ॥ ३२३ ॥

चौ- तुमसे प्रकटे स्वयं विधाता । निवृति लीन शनकादिक जाता ॥ १ ॥
प्रवृति परायण ऋषि व मुनीशा । प्रकटे तुमसे ही जगदीशा ॥ २ ॥

कर जब उदर बीच जग लीना । करत शयन तुम नींद अधीना ॥ ३ ॥
रहत न साधन तब कुछ ताता । जानत नहीं जीव निज त्राता ॥ ४ ॥
स्थूल व सूक्ष्म जगत तब कोई । इनते रचित शरीर न होई ॥ ५ ॥
हो क्षण मुहूरत काल विहीना । होवत सर्व शास्त्र भी लीना ॥ ६ ॥
दशा ईदृशी बीच विधाता । तव कीर्तन ही वर पथ जाता ॥ ७ ॥
वदत मनुज कुछ यों निज उकती । होवत असत जगत उत्पत्ती ॥ ८ ॥
कोई यों निज वचन प्रकासे । जब सद रूप कष्ट सब नासे ॥ ९ ॥
तब हीं परम धाम नर पावे । निज मत ऊपर लोग यों गावे ॥ १० ॥

दोहा- **आत्मा को मानत वहू, वदत वचन कई लोक ।**
कर्मन ते जो प्राप्त हो, लोक और परलोक ॥ ~~३२४~~ ३२२ ॥

चौ- सत्य रूप मानत यह सारी । किन्तु बात भ्रम मूलक भारी ॥ १ ॥
भेद भाव जो दीखत सारे । केवल ये अज्ञान सहारे ॥ २ ॥
ज्ञान स्वरूप प्रभो तुम गाये । तुम बिच भेद भाव ना पाये ॥ ३ ॥
त्रय गुण सहित सकल संसारा । सिर्फ कल्पना मात्र अपारा ॥ ४ ॥
हरि जग से जो पृथक प्रतीता । पुरुष कल्पना मात्र हि रीता ॥ ५ ॥
असत होत भी सत्य समाना । तव सत्ता से ही यह माना ॥ ६ ॥
कंचन रचित पदारथ जैसे । आखिर स्वर्ण रहत सब वैसे ॥ ७ ॥
स्वर्ण रूप का जानन हारा । तजे न भूषण किसी प्रकारा ॥ ८ ॥
यह जग भी प्रभु उसी प्रकारा । आत्मा में ही कल्पित सारा ॥ ९ ॥
आत्मा में ही व्यापक सारा । यहि हित ज्ञानी पुरुष उदारा ॥ १० ॥

दोहा- **आत्म रूप ही मानते, इसको हे भगवान ।**
अज्ञानी मानव नहीं, सकै इसे पहचान ॥ ~~३२५~~ ३२३ ॥

चौ- प्राणी और पदारथ जग के । सर्वाधार तुम्ही सब इनके ॥ १ ॥
यों समझत जो निज मन माँही । भजते वे नर तुम्हें सदाही ॥ २ ॥
मृत्यु सीस पर वे पद देकर । पावत विजय मृत्यु के ऊपर ॥ ३ ॥
जो हो विमुख आप से ताता । चाहे वह वर पंडित जाता ॥ ४ ॥
कर्मन का प्रतिपादन कर्ता । श्रुतियन से पशु सम वह बँधता ॥ ५ ॥
नाता नाथ प्रेम का जोड़त । निज पर को पावन कर देवत ॥ ६ ॥
यह सौभाग्य विमुख जन कैसे । पा न सकत प्रेमी जन जैसे ॥ ७ ॥
मन बुद्धि व इन्द्रिय आधीना । सब साधन ते प्रभो विहीना ॥ ८ ॥
बाह्य व अन्तकरण की ताता । सब शक्तिन ते युत तुम जाता ॥ ९ ॥
ज्ञानवान तुम स्वयं प्रकाशी । आत्माराम सदा सुख राशी ॥ १० ॥

दोहा- **किसी भांति की है नहीं, तुम्हे जरूरत नाथ।**
कर वसूल करके यथा, प्रजा जनों के हाथ॥ ३२६ ॥

चो– मांडलिक लघु नृप समुदाई। देवत चक्रवर्ति प्रति जाई ॥१ ॥
त्यों ब्रह्मादिक भी हे सुर वर। निज पूजन स्वीकृत करवाकर ॥२ ॥
मायावश हो नाथ तुम्हारी। करते तव पूजन हर बारी ॥ ३ ॥
जे जे कर्म करन के खातिर। किये नियुक्त आपने जे सुर ॥ ४ ॥
वे तुमसे होकर भयभीता। करते काम नही विपरीता ॥ ५ ॥
माया तीत आप हो स्वामी। नित्य मुक्त कामद निशियामी ॥ ६ ॥
जब माया संग करते क्रीड़ा। सुप्त कर्म जग जावत नीड़ा ॥ ७ ॥
उत्पत्ति तव सब की होवत। परम दयालु आप कहलावत ॥ ८ ॥
सब में अम्बर रूप समाना। रमण करत तुम दीन निधाना ॥ ९ ॥
निज अरु पर ना कोय तुम्हारा। अखिल विश्व के तुम भरतारा ॥ १० ॥

दोहा- **मन वाणी की भी नहीं, गति तुम्हारे बीच।**
कैसे पहिचाने तुम्हें, जीव ग्रसित अघ कीच॥ ३२६ ॥

चौ– कारज कारण से तुम हीना। रहते नाँहि प्रपञ्च अधीना ॥ १ ॥
बाह्य दृष्टि से शून्य समाना। जान परत तुम हे भगवाना ॥ २॥
उस दृष्टि के भी अधिष्ठाना। यहि हित परम सत्य तुम माना ॥ ३ ॥
नित्य एक रस तुम भगवन्ता। हो यदि जीव असंख्य अनन्ता ॥ ४ ॥
तो सबके सब नित्य प्रकासे। सब व्यापक एव यह भासै ॥ ५ ॥
तब तो ये सब आप समाना। उस हालत में हे भगवाना ॥ ६ ॥
हो शासित तुम शासक जाता। यह ना हाल समझ कुछ आता ॥ ७ ॥
हो न सकत अधिकार तुम्हारा। उन प्राणिन पर किसी प्रकारा ॥ ८ ॥
कर सकते तब ही अधिकारा। प्रकट होत तुमसे जब सारा ॥ ९ ॥
होवत तुमसे वे उत्पन्ना। सभी भाँति यदि हो वे न्यूना ॥ १० ॥

दोहा- **उनमें कारण रूप से, रमते रमा निकेत।**
सदा नियामक रूप हो, उन सबके यहि हेत॥ ३२८ ॥

चौ– वास्तव उन सब में सम रूपा। रहत सर्वदा ज्योति स्वरूपा ॥ १॥
तदपि न तुमको वे पहिचाने। बने रहत सब ही अनजाने ॥ २ ॥
बुद्धि विषय केवल उन जाना। जिससे पर तुम दीन निधाना ॥ ३ ॥
मति द्वारा जे चीज पिछानी। भिन्न भिन्न मति ते वह जानी ॥ ४ ॥
सब मत से पर रूप तुम्हारा। होवत जीव आपके द्वारा ॥ ५ ॥
प्रकृति पुरूष दोउ रहे अजन्मा। प्रकटत जीव सदा सब धामा ॥ ६ ॥

सत्य रूप जो प्रभो तुम्हारा । धारत कबहुँ नही अवतारा ॥ ७ ॥
देव जीव वश हो अज्ञाना । जानत प्रकृति हिं पुरूष समाना ॥ ८ ॥
जानत पुरूषहिं प्रकृति समाना । उभय योग जग उदभव माना ॥ ९ ॥
यथा वात जल के संयोगा । होवत जल बिच बुद बुद योगा ॥ १० ॥

दोहा— **प्रकृति बीच हो पुरूष का, पुरूष बीच इस तौर ।**
हो जावत अभ्यास तब, गुण अरू नाम अपार ॥ ३२९॥

चौ— सब प्राणिन का येन प्रकारा । माने जावत मूढ़न द्वारा ॥ १॥
किन्तु अन्त में हे जग त्राता । सरिता नद जिमि सागर जाता ॥ २ ॥
पुष्पन का रस पुष्पन माँही । अन्त समय में जाय समाहिं ॥ ३ ॥
त्यों सब के सब हे जग साँई । तव स्वरूप बीच मिल जाई ॥ ४ ॥
यहि हित प्राणिन की अलगाई । अरू अस्तित्व पृथक जो गाई ॥ ५ ॥
रहत नियन्त्रित तुम्हारे द्वारा । सभी भाँति हे जग भर तारा ॥ ६ ॥
सत्य यथा रथ जो नहिं जाने । सब व्यापकता वह क्यों जाने ॥ ७ ॥
सब जग के प्राणी भगवन्ता । भटकत माया भ्रम में अन्ता ॥ ८ ॥
तुम ते अलग समझकर निज को । काटत जन्म मृत्यु चक्कर को ॥ ९ ॥
समझत इस भ्रम को मति मंता । करते शरण ग्रहण भगवन्ता ॥ १० ॥

दोहा— **जन्म मृत्यु के चाक से, तुम्हीं छुडावन हार ।**
शीत ग्रीष्म वर्षा ऋतु, काल चक्र अनुसार ॥ ३३० ॥

चौ— होवत भीत जीव निज काया । भृकुटि विलास मात्र तुव गाया ॥ १ ॥
करता उनको ही भयभीता । जो न शरण तुम्हरी नर गृहिता ॥ २ ॥
शरणागत जे भक्त तुम्हारे । मृत्यु जगत की त्यागत सारे ॥ ३ ॥
प्रभो अजन्मा नाम तुम्हारा । शरणागत जन भली प्रकारा ॥ ४ ॥
इन्द्रिय प्राणन निज वश करही । गुरू पद कंज शरण नही गहहीं ॥ ५ ॥
मन तुरंग अति चंचल जाता । करत यतन निज वश हित ताता ॥ ६ ॥
हो न सफल जब साधन माँही । पात विपति तब जीव अथाही ॥ ७ ॥
केवल श्रम दुःख लागत हाथा । होत दशा उसकी इमि नाथा ॥ ८ ॥
सागर उपर बिना खिवैया । करत काम जो चढ़कर नैया ॥ ९ ॥
जे चाहत निज मन वश करना । पहुँचे कर्णधार गुरु शरना ॥ १० ॥

दोहा— **शरणागत की आतमा, तुम आनन्द स्वरूप ।**
सदा अखंड अबाध हो, भगवन ज्योति स्वरूप॥ ३३१॥क
भगवन रहते आपके, स्वजन पुत्र तिय देह ।
धन महल महि प्राण रथ, इन पर राखत नेह ॥ ३३१॥ख

चौ– ऐसी कवन वस्तु संसारी । जो कर सके सुख भय हारी ॥ १ ॥
जो सिद्धान्त सत्य यह नाँही । लख कर रमण करत इन माँही ॥ २ ॥
आवा गमन बीच वह आता । परम धाम पद कवहुँ न पाता ॥ ३ ॥
जो नयनन ते होत प्रकाशी । जग वस्तु सब सदा विनाशी ॥ ४ ॥
निज स्वरूप से होय विहीना । सार हीन अरू सत्ता हीना ॥ ५ ॥
कीरति रमा जाति मद हीना । संत पुरूष निज भजन अधीना ॥ ६ ॥
भूतल उपर सदा सुपावन । साँचे पुण्य तीर्थ मय भगवन ॥ ७ ॥
उन हिय बीच तुम्हारे चरणन । सदा विराजत करूणा क्रन्दन ॥ ८ ॥
यहि कारण सन्तन चरणामृत । पाप ताप सब दुरित निवारत ॥ ९ ॥
भगवन नित्यानन्द स्वरूपा । सब जगदात्मा तुम सुर भूपा ॥ १० ॥

दोहा- **एक बार पद कंज में, करे समर्पित देह ।**
वे नर कवहूँ फँसत ना, देह गेह के नेह ॥ ३३२ ॥

चौ- क्षमा धैर्य विराग्य विवेका । शान्ति आदि गुण नसत अनेका ॥ १ ॥
वे तो बस तुममे ही रमते । अन्य वस्तु में मन ना रखते ॥ २ ॥
भगवन रज निर्मित घट जैसे । अंत समय रज हो वत वैसे ॥ ३ ॥
सत से निर्मित यह जग सारा । सत् से रहत कवहुँ ना न्यारा ॥ ४ ॥
कारज कारण का जो वर्णन । द्योतक तासु भेद का भगवन ॥ ५ ॥
भेद निषेध करन हित ताता । कही जात ऐसी यह बाता ॥ ६ ॥
पिता पुत्र दोउ एक समाना । माने किन्तु अलग भगवाना ॥ ७ ॥
होत भान अहि रज्जु समाना । मायावश दीखत अलगाना ॥ ८ ॥
सत वस्तु व माया संयोगा । होत प्रतीत मृषा जग भोगा ॥ ९ ॥
अज्ञानी जन यही विचारे । पूर्व पूर्व भ्रम के ही सहारे ॥ १० ॥

दोहा- **सत्य लखत इस जगत को, किन्तु तुम्हारे भक्त ॥**
मानत अनृत जगत को ,जो तुम में अनुरक्त ॥ ३३३॥

चौ- उत्पत्ति से पूरव ताता । प्रलय बाद भी ना यह पाता ॥ १ ॥
होत प्रतीत मृषा तव माँही । मध्य अवस्था बीच सदा ही ॥ २ ॥
मृतिका बीचे कुंभ समाना । ज्यों कंचन विच कुंडल माना ॥ ३ ॥
लोहा बीचे शस्त्र समाना । त्यों तुव बीच मृषा जग जाना ॥ ४ ॥
माया ते मोहित हो प्रानी । जानत सत्य समाँ अज्ञानी ॥ ५ ॥
होय अविद्या वश अज्ञानी । माया को अपना वत प्रानी ॥ ६ ॥
तब आनन्दादिक गुण सारे । हो आवृत तब भली प्रकारे ॥ ७ ॥
वह गुण जन्य वृत्तियाँ सारी । फँसत इन्द्रियाँ तनु बिच भारी ॥ ८ ॥

लखकर उनका ही निज गाता । उनकी सेवा में लग जाता ॥ ९ ॥
उनकी जन्म मृत्यु में अपनी । लककर जन्म मृत्यु की जननी ॥ १० ॥

दोहा— **उनके चक्कर में फँसे, किन्तु सुनौ भगवान ।**
राखत ज्यों सम्वन्ध ना, अहि कंचुल दरम्यान ॥ ३३४ ॥

चौ— त्यों माया से नाथ तुम्हारा । है सम्बन्ध न किसी प्रकारा ॥ १ ॥
यही हेतु सम्पूर्ण तुम्हारे । परमैश्वर्य तुम्हारे द्वारे ॥ २ ॥
करत सर्वदा प्रभो निवासा । राखत नहीं अन्य अभिलासा ॥ ३ ॥
पद पंकज वे नही तुम्हारा । त्याग सकै ना किसी प्रकारा ॥ ४ ॥
अष्टसिद्धि अणिमादिक जेती । तव ऐश्वर्य बीच स्थित वेती ॥ ५ ॥
धर्म ज्ञान ऐश्वर्य तुम्हारा । श्री वैराग्य असीम अपारा ॥ ६ ॥
देश काल तस्तुन के द्वारा । है आबद्ध न किसी प्रकारा ॥ ७ ॥
योगी याती तजत ना हिय की । विषय वासन धन सुत तिय की ॥ ८ ॥
उन असाधको के लिय ताता । सभी भाँति दुर्लभ तुम जाता ॥ ९ ॥
पहिने हुए कंठ म णि जैसे । खोजत इत उत मानव वैसे ॥ १० ॥

दोहा— **जो साधक निज इन्द्रियन, में रहता लव लीन ।**
वह विरक्त माना नहीं, जो है विषय अधीन ॥ ३३५ ॥

चौ— इह पर भव ते संकट पाता । वह साधक ना दम्भी कहाता ॥ १॥
मिलत मौत से ना छुटकारा । पावत वह दुःख सभी प्रकारा ॥ २ ॥
हरि स्वरूप का करे न दर्शन ।धर्म कर्म का करें उलंघन ॥ ३ ॥
नरक यातना उसे सतावे । यम समीप जा अति भय खावे ॥ ४ ॥
जो तव वास्तविक रूप पिछाने । पुण्य पाप को जो ना जाने ॥ ५ ॥
भौग्य व भौक्तापन के भावा । त्याग तुरत उपर उठ आवा ॥ ६ ॥
विधि निषेध के तव प्रतिपादक । होत शास्त्र भी निवृत अचानक ॥ ७ ॥
तासु ओर न जावत ध्याना । तनु अभिमानि हेतु बखाना ॥८ ॥
जावत ध्यान नहीं उस ओरा । त्यागे ध्यान नही जो तोरा ॥ ९ ॥
तव स्वरूप का होय न ज्ञाना । वह भी प्रतिदिन हे भगवाना ॥ १० ॥

दोहा— **वह भी सुनकर तोर यश, हरि लीला गुण ज्ञान ।**
देवत निज हिय के विषै, प्रभो तुम्हें अस्थान ॥ ३३६ ॥

चौ— दिव्य अचिन्त्य गुणन के धामा । प्रेमी भक्त प्रभो निष्कामा ॥ १ ॥
विधि निषेध से होत अतीता । सुख दुख पुण्य फलन ते रहिता ॥ २॥
तुमहीं उनके मोक्ष स्वरूपा । सभी भाँति ते हे जग भूपा ॥ ३ ॥
इन ज्ञानी प्रेमिन को तजकर । बँधे हुये वन्धन में सव नर ॥ ४ ॥

करहीं जे उसका उल्लंघन । पावत दुख हे करूणा क्रन्द न ॥ ५ ॥
स्वर्गाधिप भी किसी प्रकारा । पावत पार न नाथ तुम्हारा ॥ ६ ॥
एक बात यह अचरज कारी । सुनौ ध्यान दे उसे खरारी ॥ ७ ॥
तुम भी उसको जानत नॉही । तासु अन्त ना कहीं लखाही ॥ ८ ॥
उड़ते रजकण अम्बर अन्दर । काल वेग ते त्यों उत्तरोत्तर ॥ ९ ॥
दशगुण सात आवरण द्वारा । फिरत कोटि ब्रह्मांड अपारा ॥ १० ॥

दोहा— **सीमा महा अपार तव, हम श्रुतियाँ इक साथ ।**
वर्णन कर सकती नहीं ,तव स्वरूप का नाथ ॥ २३७ ॥

चौ— बोले नारायण भगवाना । यों शनकादिक परम सुजाना ॥१ ॥
आत्मा ब्रह्म एकता सारी । सुनकर निज मन भये सुखारी ॥ २ ॥
हो कृत कृत्य सभी ने पाछे । पूजे मुनी शनन्दन आछे ॥ ३ ॥
हे नारद शनकादिक भ्राता । सर्व सृष्टि के पूर्वज जाता ॥ ४ ॥
यो शनकादिक मुनिन के द्वारा । वेद पुराण शास्त्र का सारा ॥ ५ ॥
कीन्हा संग्रह हे मुनि राया । तुम भी विविध मानस सुत गाया ॥६ ॥
श्रृद्धा सहित देवरिषि येहु । धारउ ब्रह्मज्ञान सह नेहू ॥ ७ ॥
विचरो बाद मही के उपर । निर्भयतायुत हे सुर रिषिवर ॥ ८ ॥
यह विद्या मानव हितकारी । सभी वासना जारन हारी ॥ ९॥
श्री शुकदेव वदत यों वानी । सुनौ परीक्षित हे नृप ज्ञानी ॥ १० ॥

दोहा— **देव रिषी नारद महा, ज्ञानी पूरण काम ।**
ब्रह्म चारि नैष्ठिक अति, इन्द्रिय जित्त तप धाम ॥ २३८ ॥

चौ— ये जो श्रवण करत सब बाता । तासु धारणा इम मन जाता ॥ १ ॥
नारायण ते पाकर ज्ञाना । बोले नारद तपोनिधाना ॥ २ ॥
आप सच्चिदानन्द स्वरूपा । भगवन् कृष्णचन्द्र जगभूपा ॥ ३ ॥
कीरति पावन परम तुम्हारी । सब प्राणिन हित तुम अवतारी ॥ ४ ॥
बन्दो बारम्बार तुम्हारा । पद सरोज जो भार्गवि प्यारा ॥ ५ ॥
यो कहकर नारद मुनिराया । शिष्यन सह प्रभु पद नाया ॥ ६॥
पाछे देवरिषी मुनि नारद । गवने आश्रम व्यास विशारद ॥ ७ ॥
कीन्ह यथोचित उन सत्कारा । बैठे आश्रम कर स्वीकारा ॥ ८ ॥
जो नारायण निज मुख गाया । सब मम जनक हेतु बतलाया ॥९ ॥
मन वाणी ते सदा अगोचर । प्राकृत गुणन रहित जो ईश्वर ॥ १० ॥

दोहा- **उन निर्गुण परब्रह्म का, श्रुतियाँ कवन प्रकार ।**
वरणन कर सकती नृप ,जो सब जगदाधार ॥ २३९ ॥

चौ— जो तुम प्रश्न कीन्ह हे राजन । कीन्हा मैं तुम प्रति सब वरणन ॥ १ ॥
आदि मध्य अरु अन्त्य विहीना । रहत नॉहि जो काहु अधीना ॥ २ ॥
माया नाथ परम पुरूषेश्वर । हे नृप प्रथम जगत सब रचकर ॥ ३ ॥
होवत बाद लीन उस अन्दर । उन बिन चलत नही जग तिल भर ॥ ४ ॥
धर कर नाना रूप अपारा । करते शासन भली प्रकारा ॥ ५ ॥
जिन प्रभु को पाकर यह प्रानी । त्यागे माया मोह निशानी ॥ ६ ॥
उन अभयद हरि हेतु प्रणामा । करो निरन्तर हो निष्कामा ॥ ७ ॥
देव असुर नर सुनौ मुनीशा । भजते जो शंभू जगदीशा ॥ ८ ॥
पावत वे धन भोग अपारा । इस जग बीचे विविध प्रकारा ॥ ९ ॥
रमानाथ के भजने हारे । रखते धन वैभव ना द्वारे ॥ १० ॥

दोहा- **मोरे मन संदेह यह, भयो मुनीश्वर आदि ।**
दोउन की विपरीत गति, लक्ष्मीपति त्रिपुरारि ॥ ३४० ॥

चौ— त्यागी एक रमापति दूजे । फल विपरीत मिलत इन पूजे ॥ १ ॥
यह सब करो मुझे मुनिशीला । अति विचित्र शिव हरि की लीला ॥ २ ॥
रहती शक्ति सदाशिव संगा । त्रिगुण वसत हे नृप उन अंगा ॥ ३ ॥
अहंकार के वे अधिष्ठाता । भेद तीन उसके यो जाता ॥ ४ ॥
वैकारिक तैजस अरु तामस । होत विकार तासु बिच षोड़स ॥ ५ ॥
पंच भूत मन इन्द्रिय आसा । करत देव इन बीच निवासा ॥ ६ ॥
इन देवन के भजने हारे । पात मनोरथ चिन्तित सारे ॥ ७ ॥
निर्गुण प्रकृति परे हरि गाये । तासु भजन निर्गुण कहलाये ॥ ८ ॥
अश्वमेध जब पूरण जाता । तोर पितामह यहि नृप बाता ॥ ९ ॥
पूछी जाकर कृष्ण समीपा । बोले तब हरि सुनौ महीपा ॥ १० ॥

दोहा— **जिस नर पर अनुग्रह करूँ, हरूँ प्रथम धन तासु ।**
अधन होत जब स्वजन गण,त्यागहि उसको आसु॥ ३४१ ॥

चौ— धन ते होत विरत वह जबहीं । करूँ अनुग्रह उस पर तबहि ॥ १॥
दुराराध्य मोहिं मनुज तजाई । भजते अन्यदेव को राई ॥ २ ॥
आशुतोष ते पाकर भारी । राज्यादिक ऐश्वर्य अपारी ॥ ३ ॥
भूलत मदयुत हो वरदाना । बोले नृप से शुक भगवाना ॥ ४ ॥
हे नृप शप प्रसाद प्रदाता । विष्णु व शंभु लोकपति धाता ॥ ५ ॥
शाप प्रसाद सद्य दोउ दाता । ब्रह्म शिव किन्तु न हरि जाता ॥ ६ ॥
कहूँ एक इतिहास पुरातन । दानव एक वृकासुर राजन ॥ ७ ॥
दे वरदान तेहि शिव शंकर । पाये संकट महा भयंकर ॥ ८ ॥

एक वार शकुनी सुत राया । नाम वृकासुर जग दुख दाया ॥ ९ ॥
आवत नारद पंथ लखाया । तीन देव बिच हे मुनि राया ॥ १० ॥

दोहा— **होवत मुदित तुरंत जो, कहो नाम उस देव ।**
नारद तव कहने लगे ,करो दैत्य शिव सेव ॥ ३४२ ॥

चौ— स्वल्प गुणन दोषन के द्वारा । होवत मुदित व कुपित अपारा ॥ १ ॥
रावण वाण काज इक वारा । देकर वे ऐश्वर्य अपारा ॥ २ ॥
पाछे पाये कष्ट भयंकर । सुनकर यों वच तदा वृकासुर ॥ ३ ॥
तज निज गेह हिमाचल उपर । आवा जहँ केदार मनोहर ॥ ४ ॥
पाछे निज तनु आमिष द्वारा । पूजे शिव कर होम करारा ॥ ५ ॥
बीते सप्त दिवस यों राया । तदपि न शिव दरसन वह पाया ॥ ६ ॥
लेकर खड्ग तदा निज सीसा । काटन लागा दानव ईसा ॥ ७ ॥
महा दया युत तब शिव शंकर । प्रकटे अग्नि कुंड के भीतर ॥ ८ ॥
कीन्हा वृक कर पकर निवारन । शिव स्पर्शन ते दानव राजन ॥ ९ ॥
भयो पूर्ववत वह सर्वाङ्गा । बोले ईश जासु सिर गंगा ॥ १० ॥

दोहा— **अभिलासा पूरण करूँ, जो हो रूचि तुम्हारी ।**
माँगो वर मोसे अरे, शकुनि सुत अमरारि ॥ ३४३ ॥

चौ— शंभु वचन सुन येन प्रकारा । वह पापी यो वचन उचारा ॥ १॥
धरूँ हस्त मैं जिसके शिर पर । हो वह भस्म सद्य सुनु शंकर ॥ २ ॥
यों सुन शिव अति हुई दुःखित जाता । सर्पन को अमृत सम ताता ॥ ३ ॥
प्राणिन को भयदायक भारी । दीन्हा वर उस हेतु पुरारी ॥ ४ ॥
शिव से पा वरदान अभागी । गौरी हरण लालसा जागी ॥ ५ ॥
वर की करन परीक्षन राया । शिव शिर हस्त धरन वह धाया ॥ ६ ॥
निज करणी पर शिव पछताये । हो भयभीत वहाँ ते धाये ॥ ७ ॥
धाये सुर पुर महि पाताला । पाया वहिं निज अनु वृक व्याला ॥ ८ ॥
देवन को भी कोई उपाया । निज मन समझ नहीं कुछ आया ॥ ९ ॥
सोच विचार भये चुप चापा । शिव के मन इत अति दुख व्यापा ॥ १० ॥

दोहा— **फिरे सभी ब्रह्मांड में , रक्षक मिला न कोय ।**
जहँ जहँ धाये धुर्जटी ,मिला असुर अनु सोय ॥ ३४४ ॥

चौ— पहुँचे अब शिव विष्णु निकेता । रहते हरि जहँ रमा समेता ॥ १॥
दुःखित देखे शंभु अपारा । शकुनि सुवन वृकासुर द्वारा ॥ २ ॥
तब शिव कष्ट हरण हित राया । दंड मेखला अजिन धराया ॥ ३ ॥
धरि वटु रूप वृकासुर आगे । कर अभिनन्दन कहने लागे ॥ ४ ॥

हे वृक बहुत दूर ते आये । दीखत तुम अति थके थकाये ॥ ५ ॥
क्षण भर करो यहाँ विश्रामा । कहो तुम्हार होय जो कामा ॥ ६ ॥
पूछा यो वृक हरि के द्वारा । यथा पूर्व निश्चित कह डारा ॥ ७ ॥
जो तुम कहा अरे वृक मोसे । सत्य वचन कहता मैं तोसे ॥ ८ ॥
शिव के वचन मृषा तुम जानो । एक बात भी सत मत मानो ॥ ९ ॥
मैं भी अरे भरोसा उन पर । करता कबहूँ नही वृकासुर ॥ १० ॥

दोहा— **कुपित होय जब दक्ष ने, दियो शाप शिव हेतु ।**
मिथ्यावादी बन गयो, तब से यह वृष केतु ॥ ३४५ ॥

चौ— हो उन्मत्त पिशाचन संगा । करत नृत्य मरघट बिच नंगा ॥ १॥
शिव पर यदि विश्वास तुम्हारा । करो परीक्षण येन प्रकारा ॥ २ ॥
निज सिर ऊपर धर निज हाथा । करो परीक्षण दानव नाथा ॥३ ॥
शंभु वचन यदि अनृत जाता । करो विजय बाँधउ इस गाता ॥ ४ ॥
यों भगवत के वचन विमोहित । वह कुबुद्धि होकर अति क्षोभित ॥ ५ ॥
धरा हस्त जब निज सिर ऊपर । भिन्न सीस त्योहि गिरा मही पर ॥ ६ ॥
जय जय शब्द तदा सुर गावा । साधु शब्द चहुँ ओर सुनावा ॥ ७ ॥
वृक वध देख देवगण सारे । कुसुम अपार विष्णु पर डारे ॥ ८ ॥
यों शिव संकट विष्णु मिटाया । मुक्त शंभु प्रति वचन सुनाया ॥ ९ ॥
महादेव यह शत्रु तुम्हारा । भयो नष्ट निज पापन द्वारा ॥ १० ॥

दोहा— **महापुरूष का जो करे, हे शिव यदि अपराध ।**
उस नर की होवे नहीं, पूरी मन की साध ॥ ३४६ ॥
यह दुख मोचन शंभु का, जो नर मुख ते गाय ।
श्रवण करहिं यदि प्रेम ते, रिपु भव दोष नसाय ॥ ३४७ ॥

चौ— एक बार नृप सुरसति तीरा । करत यज्ञ सब ऋषि मुनीधीरा ॥१॥
वहँ प्रसंगवश भई इमि बाता । कवन महान शंभु हरि धाता ॥२॥
कर विचार यों सभी मुनीशा । जाँच हेतु वहँ भृगू ऋषीशा ॥ ३ ॥
अब भृगु गवने गेह विधाता । कीन्ह प्रणाम नहीं निज ताता ॥ ४ ॥
तब भृगु पर भए कुपित विधाता । कीन्ह प्रणाम नहीं निज ताता ॥ ५ ॥
गये बाद भृगु जहँ शिव धामा । उठे मुदित तब शिव निष्कामा ॥ ६ ॥
भ्राता प्रति आलिंगन करने । फैलाये दोउ कर शिवने ॥ ७ ॥
तब भृगु ने आलिंगन करना । नहिं स्वीकार किया यों मिलना ॥ ८ ॥
लोक और वेदन की सारी । त्यागी मर्यादा त्रिपुरारी ॥ ९ ॥
इस कारन आलिंगन योंही । तुम से रुचिकर नहि श्रुति द्रोही ॥ १० ॥

दोहा— सुनकर यों भृगु के वचन, क्रोधित हो त्रिपुरारी ।
लीन्हों भृगु वध करन हित, निजकर शूल करारि ॥३४५॥

चौ— तब गिरिजा शिव चरण गहाया । यों पति क्रोध शान्त करवाया ॥ १ ॥
पहुँचे अब भृगु धाम रमेशा । सुप्त रमा उत्संग भवेशा ॥ २ ॥
देखे भृगु ने हे नर राई । हरि छाती पर लात लगाई ॥ ३ ॥
रमा सहित तब रमा निधाना । उठे त्वरित वे दीन निधाना ॥ ४ ॥
भृगु प्रति प्रभु ने सीस नवाया । हो स्वागत यों वचन सुनाया ॥ ५॥
हे ब्रह्मन बैठो इस आसन । सुध न रही मोहि प्रभो तवागमन ॥ ६ ॥
करो क्षमा अपराध हमारा । है कोमल अति चरण तुम्हारा ॥ ७ ॥
यों कह मुनि के चरण गहाये । तत्क्षण प्रेम समेत दबाये ॥ ८ ॥
चरणोदक है मुने तुम्हारे । करत पूत मोंहि सह संसारा ॥ ९ ॥
चरण स्पर्श से मुने तुम्हारा । नष्ट भये सब पाप हमारे ॥ १० ॥

दोहा— एक मात्र आश्रय बना, मैं लक्ष्मी का आज ।
तव पद से चिन्हित मम, वक्षोपरि मुनि राज ॥ ३४६ ॥

चौ— करहीं सदा रमा यह वासा । बोले नृप से अब सुत व्यासा ॥ १ ॥
सुन यों हरि के वचन मनोहर । भए चुपचाप तदा भृगु मुनिवर ॥ २ ॥
पहुँचे वहँ ते अब मख शाला । स्थानुभूत उन प्रति कह डाला ॥ ३ ॥
यह सुन मुनि गत संशय भयउ । विष्णु महत्ता निश्चित कियउ ॥ ४ ॥
अभय व शान्ति धरम जिन इष्ट कहाये । वसु ऐश्वर्य विराग महाना ॥ ५ ॥
शान्त अकिंचन सम चित जेते । परमागति उन साधुन देते ॥ ६ ॥
साधु व द्विज जिन ज्ञाना । निष्कामी जिन के यश गाये ॥ ७ ॥
गुण मयि जगदीश्वर की माया । रची असुर सुर राक्षस काया ॥ ८ ॥
मूरति सत्व मयी हे राया । हरी प्राप्ति का साधन गाया ॥ ९ ॥
वे प्रभु सब पुरूषार्थ स्वरूपा । अखिल विश्व पति ज्योति स्वरूपा ॥ १० ॥

दोहा— सुरसति तीर निवासियों, अब वे मुनी तमाम ।
कर भक्ति उन विष्णु की, पाये हरि पद धाम ॥३४७॥क
शुक मुख निर्गत विष्णु यश, करहिं कर्ण पुट पान ।
तज वह भव के कष्ट सब ,पावत पद निर्वान ॥३४८॥ख

चौ— बोले व्यास पुत्र मुनि नाथा । कहूँ नृपति मैं पुनि इक गाथा ॥ १॥
पुरी द्वारका बिच इक बारी । कीन्हो प्रसव पुत्र द्विज नारी ॥ २ ॥
स्पर्शत भूमि मृतक वह जाता । तब द्विज निजमन अति अकुलाता ॥ ३ ॥
तब द्विज ने मृत पुत्र उठाया । नृप द्वारे रख रुदन मचाया ॥ ४ ॥

अति दुःखित आतुर हो भारी । सब के सन्मुख गिरा उचारी ॥ ५ ॥
धूर्त व कृपण दुष्ट द्विज द्रोही । विषयी नृप अजितेन्द्रिय होही ॥ ६ ॥
ऐसे नृप के दोषन द्वारा । भयो मृतक मम नयनन तारा ॥ ७ ॥
हो दुःशील व हिंसक राजा । तासु प्रजा का होज अकाजा ॥ ८ ॥
ऐसे नृप को सेवन हारी । होवत सब विधि प्रजा दुखारी ॥ ९ ॥
संकट पर संकट अति भारी । उनके सन्मुख आत अपारी ॥ १० ॥

दोहा- **दूसर तीसर मृतक सुन, रख यों नृप के द्वारा ।**
आवा द्विज निज गेह में, ये ही गाथ उचार ॥ ३५० ॥

चौ- एक बार श्री कृष्ण समीपा । बैठे अर्जुन सुनो महीपा ॥ १ ॥
नवम पुत्र ले द्विज राई । नृप द्वारे यहि गाथ सुनाई ॥ २ ॥
सुन गाथा द्विज की यों सारी । कुन्ति पुत्र इमि गिरा उचारी ॥ ३ ॥
करते द्विज तुम जहाँ निवासा । कर सकतै जो पूरण आसा ॥ ४ ॥
ऐसो वहाँ कोय धनुधारी । करत निवास नहीं बलधारी ॥ ५ ॥
शायद यदुवंशी यहँ आये । क्षत्रिय नहीं विप्र ये गाये ॥ ६ ॥
जो तज प्रजा पालना निज की । दीक्षा लीन्ह अरे इन मख की ॥ ७ ॥
जिनके राज बीच धन नारी । पुत्र वियुक्त दुखित द्विज भारी ॥ ८ ॥
वास्तव वे क्षत्री नहि गाये । नृपति-भेष बिच नट कहलाये ॥ ९ ॥
करत जीविका वे संपादन । बोला अर्जुन सुन द्विज सज्जन ॥ १० ॥

दोहा- **तुम्हरे पुत्रन की करूँ, रक्षा में सब तोर ।**
करूँ प्रतिज्ञा नष्ट तो, भस्म करूँ तनु मोर ॥ ३५१ ॥

चौ- वह्नि बीच मैं करूँ प्रवेसा । यों सुन वचन वदत द्विज ऐसा ॥ १ ॥
पुत्र समेत कृष्ण बलरामा । ऋष्यकेतु जैसे बलधामा ॥ २ ॥
मम सन्तति रक्षा के कारन । भये समर्थ नही सुनु अर्जुन ॥ ३ ॥
वही कर्म तुम कवन प्रकारा । कर सकते बालक मति द्वारा ॥ ४ ॥
तुम पर नहीं भरोसा मेरा । सुनकर वचन कुन्तिसुत तेरा ॥ ५ ॥
कुन्ति पुत्र अब वचन सुनाया । मैं नही राम कृष्ण यदुराया ॥ ६ ॥
मैं गाँडीव धनुष का धर्ता । प्रबल वीर्य शिव तोषण कर्ता ॥ ७ ॥
एक बार तो द्विज मम आगे । हो भयभीत मृत्यु भी आगे ॥ ८ ॥
अब की बार यहाँ यम आवे । तदपि तुम्हार पुत्र बच जावे ॥ ९ ॥
यों अर्जुन जब धीर बँधाई । गयो गेह निज तब द्विज राई ॥ १० ॥

दोहा- **देख प्रसव का काल अब, वह ब्राह्मण तत्काल ।**
कुन्ति पुत्र के पास जा, बोला होय बिहाल ॥ ३५२ ॥

चौ- पाहि पाहि अर्जुन बलवाना । करो पुत्र का जीवन दाना ॥ १ ॥
सुन द्विज गेह गयो अब अर्जुन । कीन्ह आचमन कर शिव वन्दन ॥ २ ॥
दिव्य अस्त्र सब सुमिरण कीन्हे । निज गाँडीव धनुष कर लीन्हे ॥ ३ ॥
शर पंजर सम सूति अगारा । अगल बगल रच बाणन द्वारा ॥ ४ ॥
प्रसव गेह घेरा चहुँ ओरा । तनिक स्थान कुछ भी नहि छोरा ॥ ५ ॥
जायो पुत्र बाद द्विज नारी । रोवत बार बार शिशु भारी ॥ ६ ॥
रुदन करत वह सहित शरीरा । भयो अलक्षित किन्तु अखीरा ॥ ७ ॥
अब वह विप्र कृष्ण पहँ आवा । निन्दित वचन पार्थ प्रति गावा ॥ ८ ॥
देखो अरे मूर्खपन मेरा । क्लीव कथन ऊपर इश बेरा ॥ ९ ॥
कियो भरोसा मैं बड़ भारी । मो सम कोउ न जगत अनारी ॥ १० ॥

दोहा- नही कृष्ण प्रद्युम्न ना, अनिरुद्ध ना राम । ३२१
बचा सके ना पुत्र को, ये सोर बलधामा ॥ ~~३५३~~ ॥

चौ- इन सम कौन जगत में कोई । जो सुत रक्षक दीखत मोई ॥ १ ॥
अरजुन तुम्हें शरम ना आई । जो तुम अनृत बात बनाई ॥ २ ॥
तव बल पौरुष पर धिक्कारा । है अति धृक यह धनुष तुम्हारा ॥ ३ ॥
रे दुर्मति सुन वचन हमारा । कहाँ गया वह कथन तुम्हारा ॥ ४ ॥
छीना सुत प्रारब्ध हमारा । ला सकता तू कवन प्रकारा ॥ ५ ॥
द्विज के वचन सुनै यो काना । भयो पार्थ तब दुखित महाना ॥ ६ ॥
अब वह निज विद्या बल द्वारा । तत्क्षण प्रेतप पुरी सिधारा ॥ ७ ॥
किन्तु विप्र शिशु वहँ ना पावा । तब सीधा सुरपुरी सिधावा ॥ ८ ॥
अनल निऋति अलका पुरि आवा । अनिल वरुण पुरि बीच सिधावा ॥ ९ ॥
धृत धनु अब महि लोक रसातल । देखे अर्जुन स्थान तलातल ॥ १० ॥

दोहा- द्विज बालक पाये नहीं, कहिं पर भी सुनुराय ।
निज प्रण के अनुसार तव, पुरी द्वारका आय ॥ ~~३५४~~ ३२२ ॥

चौ- कर चैतन्य अनल द्विज आगे । कुन्ती सुत घुसने जब लागे ॥ १ ॥
कीन्ह निवारण तब यदुराई । बोले अर्जुन से बलभाई ॥ २ ॥
मैं द्विज पुत्रन का हे अर्जुन । लाकर तुझे कराऊँ दरसन ॥ ३ ॥
करत लोग निन्दा तव आजू । गावहिं वे यश तोर समाजू ॥ ४ ॥
यों कह अर्जुन संग लिवाई । चढ रथ पश्चिम में यदुराई ॥ ५ ॥
मुनि गिरि सप्त द्वीप मुनि सागर । लोका लोक पार कर यदुवर ॥ ६ ॥
आवा अंधकार अति भारी । वहाँ अश्व हरि रथ के चारी ॥ ७ ॥
शैव्य व मेघ पुष्प सुग्रीवा । नाम बलाहक जिन नर सींवा ॥ ८ ॥

भये नष्ट गति बीच अंधेरे । देखे हय जब अति तुम घेरे ॥ ९ ॥
सहस भानु सम जासु प्रकाशन । कीन्हों आगे चक्र सुदरसन ॥ १० ॥

दोहा- **निज प्रकाश ते कर दियो, अन्धकार उन दूर ।**
राम बाण ते नष्ट हो, ज्यों सेना के शूर ॥ ३५५ ॥

चौ- अनुगत चक्र तदा अब अर्जुन । प्रसृत तेज सहेउ ना नयनन ॥ १ ॥
कीन्हे बन्द पार्थ निज नैना । प्रविशे जल बिच अब यदुऐना ॥ २ ॥
देखा सलिल बीच इक मन्दिर । सोभित सहस स्तंभ मणि सुन्दर ॥ ३ ॥
ऐसे महाकाल पुर आये । महाभीम जहँ शेष लखाये ॥ ४ ॥
श्वेत कान्ति दश सत फण जासू । करत जहाँ फणमणी प्रकासू ॥ ५ ॥
शेष देह ऊपर स्थित सुन्दर । देखे पुरुषोत्तम विभु मनहर ॥ ६ ॥
पीत वसन धारी घनश्यामा । मुदितानन जिन नयन ललामा ॥ ७ ॥
मुकुट व कुंडलादिक द्युति द्वारा । सोभमान अति अपरम्पारा ॥ ८ ॥
अष्ट भुजा श्री वत्स सुसोहा । कौस्तुम वन माला मनमोहा ॥ ९ ॥
नन्द सुनन्दादिक के द्वारा । सेव्य मान वे भली प्रकारा ॥ १० ॥

दोहा- **मूर्तिमान आयुध सभी, करते जिनकी सेव ।**
किय प्रणाम उन विष्णु को, अर्जुन सह यदुदेव ॥ ३५६ ॥

चौ- तदा शेष शायी प्रभु होले । कृष्णाअर्जुन प्रति यों वच बोले ॥ १ ॥
सुनु अर्जुन हे यदु कुल पालक । तुम्हरे दरसन हित द्विज बालक ॥ २ ॥
लाये यहाँ हमारे द्वारा । कोइ न कारण और हमारा ॥ ३ ॥
अहो कला अवतार तुम्हारा । रक्षण धर्म हरण महि भारा ॥ ४ ॥
हरो भार महि पर जो होई । आउ समीप बाद मम दोई ॥ ५ ॥
नर नारायण तुम दोउ जाता । पूर्ण काम यद्यपि तुम ताता ॥ ६ ॥
मानव सीख दिलावन हारा । करते धर्माचरण अपारा ॥ ७ ॥
यों हरि अर्जुन प्रति आदेशा । दीन्हो भूमा पुरुष विशेशा ॥ ८ ॥
कर स्वीकार कृष्ण सह अर्जुन । किये बाद उन प्रति उन वन्दन ॥ ९ ॥
अर्जुन सहित कृष्ण यदु पालक । अब आनन्द सहित द्विज बालक ॥ १० ॥

दोहा- **ले आये पुनि द्वारका, पाछे विप्र सुजान ।**
बुलवाकर जिन पास में, सब सुत किये प्रदान ॥ ३५७ ॥

चौ- रुप यथा व यथा वय जासू । पाकर सुत हर्षित द्विज आसू ॥ १ ॥
वैष्णव धाम देख अति हर्षित । भयो पार्थ प्रथम मन विस्मित ॥ २ ॥
कीन्ह अनुभव वह निज मन में । बल पौरुष जै तो प्राणिन में ॥ ३ ॥
ये सब कृपा कृष्ण की मानी । कीन्ही यो लीला मन मानी ॥ ४ ॥

काम अनेक दिखाये आछे । भौगे विषय सभी उन पाछे ॥ ५ ॥
पुरजन विप्रन के उन सारे । किये मनोरथ पूर्ण अपारे ॥ ६ ॥
यथा इन्द्र वर्षा के द्वारा । करते पूर्ण मनोरथ सारा ॥ ७ ॥
जे ने नृपति अधर्मी पाये । अर्जुननदि ते घात कराये ॥ ८ ॥
धार्मिक नृपति युधिष्ठिर द्वारा । करी स्थापना धर्म अपारा ॥ ९ ॥
यों हरि की लीला मैं गाई । आगे सुनो अरे कुरु राई ॥ १० ॥

दोहा- **उसी द्वारका बीच वे, सुख युत करत निवास ।**
जिनके चरणन की सदा, करत इन्दिरा आस ॥ ३५६ ॥

चौ- पुरी द्वारिका की हे राई । छठा अलौकिक चहुँ दिखलाई ॥ १ ॥
राज मार्ग पर भीर अपारी । रथ हय गज सैनिक युत सारी ॥ २ ॥
लहराते उपवन उद्याना । वृक्षावली सुशोभित नाना ॥ ३ ॥
करत भ्रमर जिन पर गुञ्जारा । करते खग जहँ सौर अपारा ॥ ४ ॥
सव सम्पत से वह भरपूरी । करत नृत्य जहँ मोर मयूरी ॥ ५ ॥
सेवित जो यदुवंशिन द्वारा । सोभित पुरजन भवन अपारा ॥ ६ ॥
नारि वहाँ की अति मस्तानी । फूट रही जिन वीच जवानी ॥ ७ ॥
सजधज कर हरि पुर की नारी । करती क्रीडा भवन मँझारी ॥ ८ ॥
कोइ अंग यदि दीखत तासू । मानों दामिनि करत प्रकासू ॥ ९ ॥
लक्ष्मीपति की यह निज नगरी । सुर शिल्पिन ते निर्मित सगरी ॥ १० ॥

दोहा- **ऐसे पुर के वीच में, हे नृप रमा समेत ।**
करत वास सुख पूर्वक, वे वृष्णि कुल केत ॥ ३५६ ॥

चौ- भिन्न भिन्न वहँ भवनन भीतर । धर कर उतने वपु जगदीश्वर ॥ १ ॥
सोलह सहस नारियन संगा । करत विहार व हास्य प्रसंगा ॥ २ ॥
भिन्न भिन्न उन भवनन भीतर । भरे सुखद वह नीर सरोवर ॥ ३ ॥
जिन विच कमल अनेक सुसोहे । जिन सुगंध ते सव मन मोहे ॥ ४ ॥
सारस हंसादिक अति सुन्दर । करते कलरव उन सर भीतर ॥ ५ ॥
कृष्ण संग जे किये विहारा । बाँधत जव उनको भुज द्वारा ॥ ६ ॥
तव वक्षस्थल कुंकुम तासू । हरि के अंगन करत प्रकासू ॥ ७ ॥
जव भगवान कृष्ण जगदीश्वर । करते क्रीड़ा सरिता भीतर ॥ ८ ॥
उन यश गावत तव गंधर्वा । मागध सूत वन्दिजन सर्वा ॥ ९ ॥
तव मृदङ्ग वीणादिक द्वारा । करत घोष हो मुदित अपारा ॥ १० ॥

दोहा- **अच्युत द्वारा नारियाँ, सीच्य मान तव राय ।**
हँस कर उन हरि ऊपरे, रेचक नीर चलाय ॥ ३६० ॥

चौ- यक्षप यथा यक्षिणी संगा। करत विहार व हास प्रसंगा ॥ १ ॥
त्यों भगवान कृष्ण उन संगा। करते क्रीड़ा तब उन अंगा ॥ २ ॥
झलकत आद्र वसन के भीतर। गुंफित पुहुप वेणियन सुन्दर ॥ ३ ॥
खिसक खिसक वे महि पर आवत। हरि करते रेचक छिनवावत ॥ ४ ॥
इस निस निज प्रिय का आलिंगन। करती ये सब तिय आ राजन ॥ ५ ॥
कृष्ण अंग स्पर्शत हिय माँही। वृद्धि प्रेम भाव दिखलाही ॥ ६ ॥
सोभित हरि सिंचित उन सारा। करिणिन ते करि येन प्रकारा ॥ ७ ॥
पट भूषण आदिक उन सारे। क्रीड़ा करत काल उन धारे ॥ ८ ॥
नट व नर्तकी जे वहँ आये। सब उतार उनको पकराये ॥ ९ ॥
हे नृप यों लखि कृष्ण विहारा। हास्य विलोकन भाषण द्वारा ॥ १० ॥

दोहा- **हत बुद्धि उन्मत्त सम, वे सब हरि की नारि।**
चिन्तन कर उन कृष्ण का, मन में वारम्बार ॥ ३६१ ॥

चौ- जे जे भाषे वे निज आनन। मोसे सुनौ अरे तुम राजन ॥ १ ॥
हे कररी हो मण अति राता। जग में चहुँ सन्नाटा जाता ॥ २ ॥
बोध अखण्ड छिपा भगवाना। करत शयन यहँ तोहि न जाना ॥ ३ ॥
तोहे अरी नींद ना आती। करत विलाप जाग व यों राती ॥ ४ ॥
हम तो निज मन सोचति ऐसा। क्या तव पति कहिं गये विदेसा ॥ ५ ॥
हम तो समझ रही यहि कारण। करत विलाप यही हित दारुण ॥ ६ ॥
हाय हाय तू बड़ी अभागिन। सुन ले वचन किन्तु तू कानन ॥ ७ ॥
निज हिय बीचे अरी तुम्हारा। हरि पर बाढा प्रेम अपारा ॥ ८ ॥
उनके चरण कमल के ऊपर। चढी हुई माला अति सुन्दर ॥ ९ ॥
निज वेणी ऊपर हे लाली। धारण की इच्छा तोहिं आली ॥ १० ॥

दोहा- **करत गर्जना सिन्धु तुम, निज निद्रा को त्याग।**
क्या हम सम तोरी दशा, होगइ अरे अभाग ॥ ३६२ ॥

चौ- समझ गई जलपति तव बाता। किये हरण तव गुण यदुपाता ॥ १ ॥
सुनौ चन्द्र तुम बात हमारी। भयो रोग क्षय देह तुम्हारी ॥ २ ॥
हो तुम क्षीण अरे यहि कारण। जो करते तम नहीं निवारण ॥ ३ ॥
मलयानिल हम कहा बिगारा। करता हिय में काम प्रचारा ॥ ४ ॥
भयो प्रथम उन चितवन द्वारा। अरे शिथिल यह हिया हमारा ॥ ५ ॥
सुनौ मेघ तुम बात हमारी। हमरे प्रिय सम देह तुम्हारी ॥ ६ ॥
कृष्ण सखा गायउ तुम भाई। हम सब लखि उन कृष्ण जुदाई ॥ ७ ॥
हम समान कर तुम उन ध्याना। करता हिय में शोक महाना ॥ ८ ॥

यहि हित हो उत्कण्ठ अपारा । तजत निरन्तर अश्रुन धारा ॥ ९ ॥
अति मृदु कंठ कोकिला तेरा । जो बोलत मृदु स्वर इस बेरा ॥ १० ॥

दोहा- **विरहिन को तव मृदुल स्वर, देवत जीवन दान ।**
इसका प्रिय हम क्या करे,कर निज मुख से गान ॥ ३६३ ॥

चौ- चलत वदत जो नहि गिरि राया । ऐसो कवन सोच मन छाया ॥ १ ॥
उरसिज हम सम श्रृङ्ग तुम्हारे । क्या वहँ कृष्ण चरण ना धारे ॥ २ ॥
उनके प्रेम बीच गिरिराया । नारि भाव जागृत हो आया ॥ ३ ॥
जो भइ हे गिरि दशा हमारी । वही दशा यह हुई तुम्हारी ॥ ४ ॥
सिन्धु नारियों सुनो हमारी । सूखी तुम ऊष्मा की मारी ॥ ५ ॥
विकसित अरे तुम्हारे अन्दर । दीखत नही कमल वे सुन्दर ॥ ६ ॥
तुम कृश वदना जो अतिजाता । इसका कारण यहि दिखलाता ॥ ७ ॥
निज प्रिय तम को पा नहि जैसे । भई कृषित तुम भी हम वैसे ॥ ८ ॥
सागर का जल मेघन द्वारा । मिला नहीं क्या अब की बारा ॥ ९ ॥
स्वागत हंस यहाँ पर आऊ । हो आसन स्थित पय पी जाऊ ॥ १० ॥

दोहा- **अरे हंस उन श्याम की, कहो सभी करतूत ।**
हम समझत निज मन यही, तुम हो उन के दूत ॥ ३६४ ॥

चौ- है न कुशल वे यदुकुल राई । क्षण भङ्गुर अस्थिर सुनुभाई ॥ १ ॥
उनका प्रेम नहीं मजबूता । देखा हमने ना हरि दूता ॥ २ ॥
एक बार उन यों फरमाया । तुम ऊपर मम प्रेम सवाया ॥ ३ ॥
तुम हो आत्मा अरी हमारी । क्या विसरे वे वचन मुरारी ॥ ४ ॥
विनय व अनुनय अरे तुम्हारी । मानत हम ना किसी प्रकारी ॥ ५ ॥
करते वे परवा न हमारी । क्यों उन अनु हम मरें विचारी ॥ ६ ॥
क्षुद्र दूत सुनु वचन हमारा । उन समीप हम किसी प्रकारा ॥ ७ ॥
जावन योग्य समर्थ न भाई । आना चहैं यदि यहँ यदुराई ॥ ८ ॥
तो तुम अभी वहाँ कह आना । लक्ष्मी साथ यहाँ मत लाना ॥ ९ ॥
तव क्या अरे रमा को तजकर । आवत नहि वे श्याम मनोहर ॥ १० ॥

दोहा— **क्या नारिन के बीच में , लक्ष्मी ही इक नार ।**
जिनका उन भगवान पर, है जो प्रेम अपार ॥ ३६५ ॥

चौ- क्या हम बीचे एक न वैसी । राखत प्रेम रमा सम जैसी ॥ १ ॥
यों नृप कृष्ण पत्नियाँ सारी । रखकर उन पर प्रेम अपारी ॥ २ ॥
परम धाम यहि कारण पाई । यों हरि कथा अनेकनि गाई ॥ ३ ॥
वे वेती मृदु महा मनोहर । करत श्रवण जेहि तिय चित देकर ॥ ४ ॥

मन बलात उनका हरि ऊपर । हो आकर्षित हे कुरु नृपवर ॥ ५ ॥
जिन नारिन ने वे निज नैना । देखे प्रेम सहित यदु ऐना ॥ ६ ॥
उनके विषय अरे क्या कहना । सब विधि धन्य भयो उन वदना ॥ ७ ॥
जिन बड भागिनि नारिन द्वारा । पाये पति वसुदेव कुमारा ॥ ८ ॥
प्रेम सहित उन चरण दबाये । स्नान पान भोजन करवाये ॥ ९ ॥
कीन्ही अति सेवा चित लाई । वर्णन जोग न उन तपराई ॥ १० ॥

दोहा- **आश्रम प्रद भक्तन प्रति, वासुदेव भगवान ।**
कर यों धर्माचरण सब ,कीन्ही सीख प्रदान ॥ ~~३६६~~ ३६४ ॥

चौ- सोलह सहस आठ शत ऊपर । कृष्ण पत्नियाँ थी अति सुन्दर ॥ १ ॥
रुक्मिणि आदि आठ पटरानी । जिन नीचे मुखिया सब मानी ॥ २ ॥
प्रति रानी दस दस सुत जाये । जिन संख्या दस गुणित बताये ॥ ३ ॥
महारथी उन बीच अठारा । जिनके नाम सुनौ मम द्वारा ॥ ४ ॥
शम्बरारि अनिरुद्ध व भानू । साम्बस दीप्ति मान बडभानू ॥ ५ ॥
मधुनृक चित्रभानु कवि पुष्कर । अरुण व चित्रभानु अतिसुन्दर ॥ ६ ॥
देव बाहु श्रुतदेव सुनन्दा । सुत विरूप निग्रोधा मुकुन्दा ॥ ७ ॥
इन बीचे निज पिता समाना । अग्रज शम्बरारि सब माना ॥ ८ ॥
रुक्मी निज कन्या इन हेतू । ब्याही अरे सुनौ कुरुकेतू ॥ ९ ॥
इनके सुत अनिरुद्ध पुकारे । अयुथ नाग सम जिन बल धारे ॥१० ॥

दोहा- **रुक्मी पौत्रि विरोचना, अनिरुद्ध के संग ।**
परणाई राजन सुनौ, भये वज्र जिन अंग ॥ ~~३६७~~ ३६५ ॥

चौ- वज्रनाभ ही हे कुरु राया । मौसल युद्ध बीच बच पाया ॥ १ ॥
इनके सुत प्रतिबाहु कहाये । नाम सुबाहु सुवन इन जाये ॥ २ ॥
शान्त सेन इनके सुत गाये । उनके सुत शतसेन कहाये ॥ ३ ॥
अधन असंतति इस कुल माँही । अल्प वीर्य अल्पायुष नाँही ॥ ४ ॥
ऐसो अरे भयो ना कोई । करत बैर विप्रन ते जोई ॥ ५ ॥
ज़े ते भए यदुवंश प्रसूता । जिन संख्या नृप रही अकूता ॥ ६ ॥
शत वर्षन यावत जे कोई । गिनती करहिं तदपि ना होई ॥ ७ ॥
जहँ असंख्य उन यादव बालन । उपाध्याय करवावत पाठन ॥ ८ ॥
तीन कोटि अरु लक्ष अठासी । उन गुरुअन संख्या यों भासी ॥ ९ ॥
उन यदुअन की संख्या राजन । कर न सके कोई नर वर्णन ॥ १० ॥

दोहा- **एक नील सेना सहित, उग्रसेन महाराज ।**
करत राज उस पुर विषै, शिर पर धर नृप ताज ॥ ~~३६८~~ ३६६ ॥

चौ- देवासुर बीचे संग्रामा । भये मृतक दानव बल धामा ॥ १ ॥
प्रकटे अब मानव कुल अन्दर । देत प्रजा को कष्ट भयंकर ॥ २ ॥
उनके नाश हेतु हरिद्वारा । यादव कुल बिच ले अवतारा ॥ ३ ॥
इन कुल शत ऊपर इक गाया । हरि अनुवर्ती वे सब राया ॥ ४ ॥
हरि को निज स्वामी उन माना । किन्तु न परम ब्रह्म पहिचाना ॥ ५ ॥
शय्या आसन अटन अलायन । क्रीड़ा स्नानादिक सब कर्मन ॥ ६ ॥
निज तन की जिनको सुधि नाँही । यन्त्र भाँति सब क्रिया चलाही ॥ ७ ॥
यदुकुल बीच सुनौ कुरु त्राता । हरि यश रूपी तीरथ जाता ॥ ८ ॥
गंगा रूप तीर्थ जिस आगे । सब विधि स्वल्प अरे नृप लागे ॥ ९ ॥
उन महिमा कितनी बड़ भारी । शत्रु भी जिन नाम उचारी ॥ १० ॥

दोहा- **परम धाम पाये वह, भक्तनकी क्या बात ।**
जिन लक्ष्मी के कारने, तरसत सुर दिन रात ॥ ३६९ ॥

चौ- वही रमा उन हरि की सेवा । करत निरन्तर हे नर देवा ॥ १ ॥
जिनका नाम अमंगल हारी । वे भगवान कृष्ण गिरधारी ॥ २ ॥
काल स्वरूप चक्र ले हाथा । हरत भार महि वधि नर नाथा ॥ ३ ॥
सब जीवन के आश्रय स्थाना । सभी भांति कृष्ण भगवाना ॥ ४ ॥
यद्यपि सदा और सब ठामा । रहत उपस्थित सब हिय धामा ॥ ५ ॥
तदपि वे जठर देवकी आकर । लीन्हो जन्म कृष्ण जगदीश्वर ॥ ६ ॥
पार्षद रूपी यादव वीरा । करत निवास सदा उन तीरा ॥ ७ ॥
उन हरि ने निज भुजबल द्वारा । कीन्हो अन्त अधर्म अपारा ॥ ८ ॥
जगत चराचर हे नृप जेते । निज सुभाउ उन प्रभु सुख देते ॥ ९ ॥
मंद मंद युत मृदु मुस्काना । देख मुखाकृति उन भगवाना ॥ १० ॥

दोहा- **वृज तिय पुर तिय हिय विषै, करत प्रेम सञ्चार ।**
सब जग ऊपर विजयि , उन वन्दों बारम्बार ॥ ३७० ॥

चौ- प्रकृति परे उन हरि के द्वारा । लीन्हों धर्म हेतु अवतारा ॥ १ ॥
अभिनय अद्भुत चरित अपारा । करते वे इस तनु के द्वारा ॥ २ ॥
करहिं नाम सुमिरण नर तासू । कर्म बन्ध कट जावत जासू ॥ ३ ॥
उनकी सेवा का अधिकारा । लेना चाहें किसी प्रकारा ॥ ४ ॥
श्रवण करें वह उनकी लीला । सुनौ परीक्षित हे मतिशीला ॥ ५ ॥
उन गाथा चिन्तन जे करहीं । देकर चित्त निरन्तर सुनहीं ॥ ६ ॥
तब वहि भक्ति उसे भगवन्ता । परम धाम पहुँचावत अन्ता ॥ ७ ॥
काल चक्र गति जहाँ न कबहिं । पहुँचत कोटि पवन यदि करहीं ॥ ८ ।

उसी धाम के पावन काजू । तज कर राज पाट सम्राजू ॥ ९ ॥
निज कुल माया मोह तजाये । तप करने हित विपिन सिधाये ॥ १० ॥

दोहा- यही हेतु भगवान की, गाथा वारम्बार ।
श्रवण करो प्रेमी जनों, नहीं और में सार ॥ ३७१ ॥

छन्द- नहिं सार है संसार में, सब सार हे भगवान में ।
नसता भय यमराज का यह, परत गाथा कान में ॥
निज नार सुत धन धाम की, फूलो न कोरी शान में ।
कुछ भी मजा इन में नहीं, है जो मजा प्रभु ध्यान में ॥

त्रोटक छन्द - जय सिन्धु सुता, पति कृष्ण हरे ।
जिन नाम लिये, भव सिन्धु टरे ॥
चरणामृत, जो नर पान करे ।
उस घर ते यमदूत टरे ॥

इति श्री कृष्ण चरितामृते कलिमल विध्वंसने बजरंग कृत श्री मद्भागवते महापुराणे पारम हंस्या संहितायां समाप्तोऽयं दशम स्कंध उत्तरार्ध
हरिःऊँ तत्सत्

॥ श्री गणेशाय नमः ॥

श्री राधा वल्लभो विजयते

श्री मद्भागवत प्रारम्भ :

एकादश स्कंधः

दोहा- **जिनके सुमिरण करत ही, मूक होत वाचाल ।**
उन शिवनन्दन के चरण, वन्दत वजरंग लाल ॥ १ ॥ क
वैयासकि कहने लगे, आगे सुनौ नृपाल ।
निज भ्राता वलराम सह, कृष्ण चन्द्र यदुपाल ॥ १ ॥ ख

चौ- करके वहुत दैत्य संहारा । कीन्हा उन सबका उद्धारा ॥ १ ॥
कौरव पांडव कलह कराई । हरा भार महि यो यदुराई ॥ २ ॥
कौरव चाल चले कपटाई । द्रुपद सुता के केस खिंचाई ॥ ३ ॥
कपट पूर्ण जिन द्यूत रचावा । भीमसेन प्रति गरल दिलावा ॥ ४ ॥
पांडव क्रोध तदा कर पाये । उन हरि पांडव निमित बनाये ॥ ५ ॥
उभय पक्ष के नृप संहारे । यों भगवान भार महि टारे ॥ ६ ॥
यदुअन द्वारा सब नृप सेना । करवायो वध यादव ऐना ॥ ७ ॥
अब महि ऊपर भार स्वरूपा । देखे यादव ज्योति स्वरूपा ॥ ८ ॥
तब प्रभु निज मन कीन्ह विचारा । कियो निवारण मै महिभारा ॥ ९ ॥

दोहा- **अव तक भी उतरा नहीं, महि का सारा भार ।**
यादव कुल अवशेष है, जिनका भार अपार ॥ २ ॥

चौ- इन सबने मम आश्रय पावा । काहू ते ये हार न खावा ॥ १ ॥
यदुकुल अन्त न जब लगि पूरा । तब लगि भूमी भार अधूरा ॥ २ ॥
इसका सुन्दर यही उपाई । वेणु स्तंभ जिमि अनल जलाई ॥ ३ ॥
त्यों यदुकुल में कलह रचाई । करूँ नष्ट नहिं अन्य उपाई ॥ ४ ॥
मम अवतार प्रयोजन पूरा । होअहिं वरना रहहिं अधूरा ॥ ५ ॥
होकर सबसे मैं निश्चिन्ता । जाऊँ सुरभिधाम विच अन्ता ॥ ६ ॥
यों कर निश्चय निज मन सारा । शापित करवा विप्रन द्वारा ॥ ७ ॥
सब यादव कुल उन संहारा । यों अवतार प्रयोजन सारा ॥ ८ ॥
कियो पूर्ण वसुदेव कुमारा । जिनका हे नृप रूप अपारा ॥ ९ ॥
जेता रूप त्रिलोकी माँही । उनके सन्मुख कुछ भी नाँही ॥ १० ॥

दोहा- **नयनादिक की वृत्ति से, उनका सब परिवार ।**
करता उन श्रीकृष्ण में, प्रेम भाव संचार ।। ३ ।।

चौ- वे भगवान त्रिलोकी अन्दर । सबसे अति सुन्दर हे नृप वर ।। १ ।।
निज सौन्दर्य माधुरी द्वारा । किये नयन आकर्षित सारा ।। २ ।।
परम मधुर उनके उपदेशा । वाणी परम मधुर हत क्लेशा ।। ३ ।।
मन्द मन्द मृदु उन मुस्काना । करहि जो सुमिरण उन भगवाना ।। ४ ।।
छीना सबका मन उन द्वारा । पद सरोज मन हरण अपारा ।। ५ ।।
करहीं एक बार उन दरसन । तासु पाप सब करहिं पलायन ।। ६ ।।
सारे कर्म प्रपंचन ऊपर । सेवा में लग जावत उठकर ।। ७ ।।
अनायास ही उनके द्वारा । कीन्ह महि पर यश विस्तारा ।। ८ ।।
जिसका वर्णन कवियन द्वारा । सुन्दर भाषा बीच प्रसारा ।। ९ ।।
मोरे गमन करत उपरन्ता । यह कीरति गायन कर सन्ता ।। १० ।।

दोहा— **हो जावत सब पार वे, तज कर सब अज्ञान ।**
करहिं गमन निज धाम को, पाछे वे भगवान ।। ४ ।।

चौ- वदत परीक्षित कुरु अवतंशी । ब्राह्मण भक्त महा यदुवंशी ।। १ ।।
शुष्क भक्ति उनमें मुनि नाँही । अति उदारता थी उन माँही ।। २ ।।
कुल वृद्धन की नित्य निरन्तर । करते वे सेवा चितधर कर ।। ३ ।।
कृष्ण बीच जिन चित्त अपारा । क्या अपराध भयो उन द्वारा ।। ४ ।।
जो विप्रन ने क्रोधित होकर । दीन्हों उन प्रति शाप भयंकर ।। ५ ।।
सर्वात्मा प्रियतम जो सबके । स्वामी कृष्ण रहे यदुअन के ।। ६ ।।
कारण शाप कहो मुनि भूपा । तथा शाप का कहो स्वरूपा ।। ७ ।।
कृष्ण बीच जिन चित्त अपारा । भई फूट पुनि केन प्रकारा ।। ८ ।।
कुरुवर की सुनकर इमि बानी । बोले कीर महामुनि ज्ञानी ।। ९ ।।
प्राप्त काम भी वे भगवाना । जिन वपु सुन्दरता की खाना ।। १० ।।

दोहा- **मंगलमय महि ऊपरे, श्री विग्रह प्रकटाय ।**
प्राणिन के कल्याण हित, की लीला यदुराय ।। ५ ।।

चौ- नित्य धाम गोकुल वृन्दावन । मथुरा द्वारवती विच राजन ।। १ ।।
किये विहार अनेक प्रकारा । जन कल्याण करन हित सारा ।। २ ।।
निज यश जग में स्थापित कीन्हा । सब समेट यादव कुल लीन्हा ।। ३ ।।
पुण्य युक्त मंगल मय भारी । कीन्हे हरि ने कर्म अपारी ।। ४ ।।

गाकर लोग जिसे सब कोई । सब जग के कलि कल्मष धोई ॥ ५ ॥
उग्रसेन नृपवर रजधानी । पुरी द्वारका सब गुण खानी ॥ ६ ॥
काल रूप वहँ करत निवासा । कृष्ण करन यदुअन कर नासा ॥ ७ ॥
पास द्वारका के अति राजन । मिंडारक तीरथ अति पावन ॥ ८ ॥
ले निज संग शिष्य गण सारे । हरि प्रेरित वहँ मुनी पधारे ॥ ९ ॥
विश्वामित्र असित भृगु राजन । अत्रि वशिष्ठ व कश्यप पावन ॥ १० ॥

दोहा- **वामदेव कण्व तथा, दुर्वासा मुनि राया ।**
नारद गौतम अंगिरा, कियो वास वहँ आय ॥ ६ ॥

चौ- क्रीडमान कुछ यदु सुकुमारा । उन समीप पहुँचे इक बारा ॥ १ ॥
जाम्बवती सुत साम्ब कहाया । उसको नारी भेष बनाया ॥ २ ॥
कीन्ह प्रणाम विनीत समाना । कपट भाव रख निज मन माना ॥ ३ ॥
हे मुनियों यह गर्भिणी नारी । आवत लाज इसे अति भारी ॥ ४ ॥
सन्मुख पूछत यह सकुचाये । हमरे मुख यह यों पुछवाये ॥ ५ ॥
आवत प्रसव काल मुनिराऊ । जनहिं पुत्र वा सुता बताऊ ॥ ६ ॥
यों वञ्चित वे सब मुनि राया । क्रोधित हों यों वचन सुनाया ॥ ७ ॥
सुनो कुबुद्धियों वचन हमारा । यह कुल नाशक अरे तुम्हारा ॥ ८ ॥
अय मूसल जनही यह नारी । सुन यों त्रस्त भये वे भारी ॥ ९ ॥
सहसा तासू उदर उघारे । देख लोह मय मूसल सारे ॥ १० ॥

दोहा- **पछताये अब तो महा, वे यादव सुकुमार ।**
आपस में कहने लगे, दुःखित होय अपार ॥ ७ ॥

चौ- हम सब भये अभागी आजू । जो कीन्हो यह अकृत काजू ॥ १ ॥
देवहि लोग हमे सब ताने । कहहीं वचन बुरे मन माने ॥ २ ॥
यों कहके वे अति घबराये । ले मूसल रजधानी आये ॥ ३ ॥
नृपवर उग्रसेन प्रति सारे । समाचार सब जाय पुकारे ॥ ४ ॥
कृष्ण हेतु कुछ नहीं सुनाया । भयवश थरथर काँपत काया ॥ ५ ॥
सुन यों सभी द्वारका वासी । शाप अमोघ मुनिन कुलनासी ॥ ६ ॥
देख लोहमय मूसल भारी । भये भीत मन अपरम्पारी ॥ ७ ॥
अब नृप उग्रसेन के द्वारा । करवा चूरण भली प्रकारा ॥ ८ ॥
मूसल सिन्धु बीच वह डारा । अवशेषित अय के सह सारा ॥ ९ ॥
लोह खंड अवशेष नृपाला । निगल मत्स्य एक उस काला ॥ १० ॥

दोहा- **चूर्ण तरंगन के सहित, आय सिन्धु तट पास ।**
उससे कुछ दिन बाद ही, उगा एर का घास ॥ ८ ॥

चौ- लुब्धक एक सिन्धु पर आवा । मीन ग्रसन हित जाल बिछावा ॥ १ ॥
अन्य मीन सह लुब्धक द्वारा । पकरा वह झष राज विचारा ॥ २ ॥
तासु उदर स्थित ले अय लुब्धक । रचा तुरत उसने फल शायक ॥ ३ ॥
यद्यपि सर्व अर्थ परिज्ञाता । वे भगवान सर्व सुख दाता ॥ ४ ॥
होत समर्थ तदपि सुनु राया । विप्र शाप उन नहीं मिटाया ॥ ५ ॥
काल रूप उन हरि ने राजन । कीन्हा विप्र शाप अनुमोदन ॥ ६ ॥
पुरी द्वारका हरि भुज पालित । प्रति दिन नारद मुनि वहँ आवत ॥ ७ ॥
हरि दर्शन की अति अभिलासा । रहती उन मन हे नृप खासा ॥ ८ ॥
नारद मुनि सम भक्त न कोई । भक्ति निरन्तर हरि पद सोई ॥ ९ ॥
रहत समीप इन्द्रियाँ जासू । हरिपद बीच रहत मन तासू ॥ १० ॥

दोहा- **मानव कितना है विवश, मृत्यु सदा चहुँ ओर ।**
घेरे रहती है जिसे, तदपि करत ना गौर ॥ ९ ॥

चौ- हरि चरणन की सदा उपासन । करते सब सुर विधि पंचानन ॥ १ ॥
ऐसो कवन जगत में होई । करता हरि सेवन ना सोई ॥ २ ॥
एक बार नारद मुनिराई । पहुँचे कृष्ण जनक नियराई ॥ ३ ॥
निज घर आवत ज्ञान विशारद । देखे कृष्ण जनक मुनि नारद ॥ ४ ॥
सुख पूर्वक आसन पधराये । कर प्रणाम यों वचन सुनाये ॥ ५ ॥
पिता आगमन हे मुनि राजू । होंहि सुतन प्रति मंगल काजू ॥ ६ ॥
तथा आगमन मुने तुम्हारा । प्राणिन प्रतिकृत स्वस्ति अपारा ॥ ७ ॥
देव चरित प्राणिन प्रति ताता । होअत सुख अरु दुःख प्रदाता ॥ ८ ॥
तुम समान साधुन के दरसन । होत सर्वदा सुख प्रद भगवन ॥ ९ ॥
भजत देव को येन प्रकारा । सुर भी फल प्रद उस अनुसारा ॥ १० ॥

दोहा- **यथा पुरुष जैसा करे, छाया भी मुनिराज ।**
वैसा ही करती सदा, अपना सारा काज ॥ १० ॥

चौ- होत दीन वत्सल सब साधू । प्राणिन पर उन प्रेम अगाधू ॥ १ ॥
धर्म भागवत हे मुनि राऊ । भिन्न भिन्न कर सब बतलाऊ ॥ २ ॥
सुनकर जिसे अहो मुनिराई । मानव संकट से टल जाई ॥ ३ ॥
पुत्र कामना कर भगवन्ता । पूजे मुक्तिद प्रथम अनन्ता ॥ ४ ॥

मोक्ष हेतु किन्तु न मुनि राया । हरि माया वश कर नहिं पाया ॥ ५ ॥
अब उपदेश करहुँ मोहि ऐसो । मृत्यु रूप जग छूटहिं जैसो ॥ ६ ॥
यो वसुदेव प्रश्न जब कीन्हा । तब यों मुनि प्रत्युत्तर दीन्हा ॥ ७ ॥
हे यादव मणि वचन तुम्हारा । जग मंगल प्रद है यह सारा ॥ ८ ॥
सर्व जगत का शोधन कर्त्ता । धर्म भागवत सब दुःख हर्ता ॥ ९ ॥
सुनहि पढहि ध्यावहि यहि कोई । पावन होत सद्य नर सोई ॥ १० ॥

दोहा- **विश्व द्रोहि यदि होय वह, तो भी पावन होत ।**
श्रवण कीर्तन करत ही, पापी भी अब धोत ॥ ११ ॥

चौ- मंगल दत्त अमंगल नासक । वे भगवान सर्व जग पालक ॥ १ ॥
जासु नाम सुमिरण करवाकर । बड़ उपकार कीन्ह तुम मोपर ॥ २ ॥
मम आराध्य देव भगवन्ता । अखिल विश्व के जगत नियन्ता ॥ ३ ॥
सुन्दर प्रश्न किया तुम मोसे । कहुँ इतिहास एक मैं तोसे ॥ ४ ॥
मनु के सुत प्रियव्रत जिन नामा । उन आग्नीध्र पुत्र गुण धामा ॥ ५ ॥
उन सुत नाभि ऋषभ जिन गाये । ऋषभ देव हरि अंश कहाये ॥ ६ ॥
मोक्ष धर्म विस्तारन कारन । किय अवतार ग्रहण उन भगवन ॥ ७ ॥
ऋषभ देव हरि शत सुत जाये । जो सब श्रुति पारंगत गाये ॥ ८ ॥
उन बिच अग्रज भरत कहाये । परम भक्त हरि के वे गाये ॥ ९ ॥
यह अजनाभ उनहीं के द्वारा । भारत वर्ष कहावत सारा ॥ १० ॥

दोहा- **एक अलौकिक स्थान है, भारत वर्ष महान ।**
किया राज उन भरत ने ,सारी महि दरम्यान ॥ १२ ॥

चौ- राजभोग ये सभी तजाये । विपिन बीच नृप भरत सिधाये ॥ १ ॥
कर हरि भजन वहाँ वह राया । जन्म तीन अनु हरि पद पाया ॥ २ ॥
नौ सुत भये नौ द्वीप अधीपा । भूमि चन्द्र सुत ऋषभ महीपा ॥ ३ ॥
कर्म कांड के रचने हारे । भये विप्र हे यादव सारे ॥ ४ ॥
महाभाग नव सुत यदुराया । सन्यासी पद उन सब पाया ॥ ५ ॥
आत्म ज्ञान के वे सब ज्ञाता । रहत दिम्बर वे सब भ्राता ॥ ६ ॥
जिनके नाम सुनौ यदुराया । कवि हवि अन्तरिक्ष इति गाया ॥ ७ ॥
आविर्होत्र द्रुमिल पिपलायन । चमस प्रबुद्ध नवम कर भाजन ॥ ८ ॥
ये हरि रुप जगत को सारे । मानत आत्मा से नहिं न्यारे ॥ ९ ॥
करते विचरण सदा महीपर । जिन गति सदा अकुंठित यदुवर ॥ १० ॥

दोहा- सिद्ध साध्य गंर्धव सुर, किन्नर नाग व यक्ष ।
भूत नाथ चारण मुनी, विद्याधर द्विज कक्ष ॥ १३ ॥

चौ- विचरण करत रहत गौ स्थाना । वे सब जीवन्मुक्त महाना ॥ १ ॥
एक बार निमि नृपवर द्वारा । करवायो मख मुनि मिल सारा ॥ २ ॥
निज इच्छा ते ये नव भाई । आये वहाँ जहाँ निमि राई ॥ ३ ॥
भानु समान प्रभा उन देखी । महा भागवत बीच विशेषी ॥ ४ ॥
आनि विप्र सह निमि यजमाना । उठे उसी क्षण मुदित महाना ॥ ५ ॥
प्रेमी परम भक्त हरि जाने । दे आसन वे सब सन्माने ॥ ६ ॥
नृप विदेह खुश होय अपारा । कीन्ही पूजन कर सत्कारा ॥ ७ ॥
अंग विदेह खुश होय अपारा । ब्रह्म पुत्र सम ऋषभ दुलारे ॥ ८ ॥
प्रेम सहित अब निमि नरपाला । पूछत उनसे यों उस काला ॥ ९ ॥
मानत हम तुमको हरि पार्षद । हे योगिश्वर ज्ञान विशारद ॥ १० ॥

दोहा- विचरत हरि के भक्त ही, करने लोक पुनीत ।
मनुज देह दुर्लभ महा, क्षण भंगुर जगभीत ॥ १४ ॥

चौ- हरि भक्तन के दुर्लभ दरसन । बिनु हरि कृपा मिलता ना सज्जन ॥ १ ॥
क्षण भंगुर जीवन में दर्शन । भयो समागम तुम सम सन्तन ॥ २ ॥
आप त्रिलोकी पावन कारी । पूछूँ प्रश्न एक इस बारी ॥ ३ ॥
परमानन्द् स्वरूप बताऊँ । उसका सब साधन भी गाऊ ॥ ४ ॥
इसे निरुपण करने काजू । अधिक न समय तुम्हें मुनि राजू ॥ ५ ॥
तदपि जगत में क्षण सत्संगा । करत पुनीता मनुज के अंगा ॥ ६ ॥
इतने ही में तुम सब साधन । करो योगियों मो प्रति वर्णन ॥ ७ ॥
धर्म भागवत मुझे सुनाऊ । होत तुष्ट हरि येन प्रभाऊ ॥ ८ ॥
जो हरि की शरणागत जावे । उसको हरि कबहूँ न भुलावे ॥ ९ ॥
निज आत्मा भी अर्पित तासू । करहिं सदा भक्तन प्रति आसू ॥ १० ॥

दोहा- कीन्हा प्रश्न विदेह ने, उनसे येन प्रकार ।
तब विदेह प्रति प्रेम से, बोले योगि उदार ॥ १५ ॥

चौ- अब कवि योगी वचन उचारे । जो अच्युत पद निज हिय धारे ॥ १ ॥
जो जग बीच परम फल दाता । भक्ति करत सब दुःख नसाता ॥ २ ॥
नृपवर हरि ने निज मुख द्वारा । कीन्हा धर्म निरुपण सारा ॥ ३ ॥
अल्प बुद्धि भी समझत तेही । धर्म भगवत समझहु येही ॥ ४ ॥

इसी धरम का आश्रय लेकर । करत प्रमाद नहीं वह नृप वर ॥ ५ ॥
करतब से च्युत ना वह होई । धावत नयन मूँदि यदि जोई ॥ ६ ॥
गिरहिं परहिं नहि नर उस राहा । चालहिं भय तजि दुःख अथाहा ॥ ७ ॥
इन्द्रिय चित्त बुद्धि तनु वानी । इनते करत करम जो ज्ञानी ॥ ८ ॥
करहिं समर्पण हरि के चरणा । भगवत धर्म यही सब वरणा ॥ ९ ॥
होइ विमुख ईश्वर ते जोई । हरि माया ते भय तेहि होई ॥ १० ॥

दोहा- **यहि कारण जग तरण हित, ज्ञानी भली प्रकार ।**
उन ईश्वर के चरण को, भजते वारम्वार ॥ १६ ॥

चौ- कोटि जतन यदि नर करवाई । हरी भजन विन कष्ट न जाई ॥ १ ॥
जनम करम हरि की शुभ गाथा । सुनता रहे सदा नर नाथा ॥ २ ॥
गावत रहे सदा गुण गाना । लेवत रहे नाम भगवाना ॥ ३ ॥
होय असंग सदा जग विचरे । हरी नाम को यो जब सुमरे ॥ ४ ॥
हो तब उन प्रति प्रेम अपारा । रोवत हँसत प्रेम के द्वारा ॥ ५ ॥
गावत नाचत मत्त समाना । ज्ञानी परम भक्त भगवाना ॥ ६ ॥
अग्नि व नीर भूमि नभ बाता । सरिता सिन्धु आदि उन गाता ॥ ७ ॥
द्रुम अरु दिशा ज्योति पक्ष तारे । धर्म भागवत जानत हारे ॥ ८ ॥
जानत इनको विष्णु समाना । करत प्रणाम सप्रेम महाना ॥ ९ ॥
हरी भजन का करने हारा । पावत तीन वस्तु इक बारा ॥ १० ॥

दोहा- **भक्ति व भगवत रुप स्मृति, अरु वैराग्य अपार ।**
ये तीनों इक साथ ही, पावहि सुमिरन हार ॥ १७ ॥

चौ- भोजन करत यथा नर जैसे । तुष्टि व पुष्टि क्षुधा नसि वैसे ॥ १ ॥
भगवत ज्ञान व भक्ति विरागा । पावहि जिन अच्युत मन लागा ॥ २ ॥
पावत शान्ति तदा वह मानव । बोला नृपति अरे अब यादव ॥ ३ ॥
धर्म भागवत निष्ठित जोई । जासु स्वभाव यथा विधि होई ॥ ४ ॥
जिन चिह्वन ते हरि प्रिय होई । धर्म भागवत वरणउ सोई ॥ ५ ॥
बोले हरि योगीश्वर वानी । मोसे सुनौ अरे नृप ज्ञानी ॥ ६ ॥
हरी भाव सब प्राणिन अन्दर । देखहिं हरि बिच प्राणिन जे नर ॥ ७ ॥
सोई परम भागवत गाया । जो सन्तन से करहिं मिताया ॥ ८ ॥
अज्ञानिन पर कृपा रखावे । जो नर हरि से द्वेष बढावे ॥ ९ ॥
करत उपेक्षा उसकी जोई । वही भागवत मध्यम होई ॥ १० ॥

दोहा- पूजहिं श्रृद्धा के सहित, प्रतिमा को नर जोय ।
किन्तु न भक्त अभक्त का, सेवक जो नर होय ॥ १८ ॥

चौ- प्राकृत भक्त वही कहलावे । शनै शनै उत्तम बन जावै ॥ १ ॥
इन्द्रिय विषय प्राप्त कर जोई । उसमें कबहुँ लीन ना होई ॥ २ ॥
करत विरोध मुदित ना होई । गाया परम भागवत सोई ॥ ३ ॥
इन्द्रिय देह जनम अरू नासा । मन अरु प्राण व भूख पिपासा ॥ ४ ॥
इस संसार धर्म बिच जोई । हो नहिं मोहित वैष्णव सोई ॥ ५ ॥
काम व कर्म वासना जासू । चित बीचे ना करत प्रकासू ॥ ६ ॥
जो केवल हरि आश्रम पाये । वह भी परम भागवत गाये ॥ ७ ॥
जन्म कर्म वर्णाश्रम द्वारा । जिस तनु बीच न हो हंकारा ॥ ८ ॥
वह नर भी हरि का प्रिय होई । स्व पर इति धन तनु बिच जोई ॥ ९ ॥
राखत भेद कबहुँ ना राया । वह भी उत्तम वैष्णव गाया ॥ १० ॥

दोहा- हरी भजन के करत ही, काम व ताप नसात ।
जैसे विधु के उदय ते, अर्क ताप मिट जात ॥ १९ ॥

छन्द— राजन विवशता वश विषै, हरि नाम को जो लेवहीं ।
भगवान भी उस भक्त के, सब पाप तत्क्षण खोवहीं ॥
प्रेम रसना से हृदय में, चरण हरि के बाँधहीं ।
भगवान भी उसके हृदय को, एक क्षण ना त्यागहीं ॥१ ॥

दोहा- परमभक्त वैष्णव वही, इस जग में कहलाय ।
प्रेम डोर से विष्णु पद ,बाँधत निज हिय राय ॥ २० ॥

चौ- योगिन प्रति बोले निमि राया । नाम मोहिनी वैष्णव माया ॥ १ ॥
जानन हेतु उसे प्रभु मेरी । हो रहि मुझको सुरुचि घनेरी ॥ २ ॥
हरि गाथा मृत सुनकर ताता । मे मन तृप्त नहीं यह जाता ॥ ३ ॥
मैं संसार ताप संतप्ता । मे मन हरि गाथा अनुरक्ता ॥ ४ ॥
अन्तरिक्ष बोले अब बानी । विष्णु जीव हित हे नृप ज्ञानी ॥ ५ ॥
विषय भोग हित भूतन द्वारा । रचते प्राणिन को संसारा ॥ ६ ॥
यों रच पंच तत्व के द्वारा । जीव रूप हो जग भरतारा ॥ ७ ॥
उन प्राणिन के बीच शरीरा । करत प्रवेश सुनो नृप धीरा ॥ ८ ॥
मन द्वारा पुनि करत विभाजन । ज्ञान कर्म इन्द्रीयन राजन ॥ ९ ॥
भोगन लगे विषय इन द्वारा । जग बीचे वे भली प्रकारा ॥ १० ॥

दोहा- **जीव रूप से स्वयं ही, वे प्रभु करुणागार ।**
करत प्रकासित इन्द्रियन, भोगत विषय अपार ॥२१॥क
देहादिक को जीव पुनि, समझत अपना रूप ।
पाछे उसमें लीन हो, फँस जावत हे भूप ॥ २१ ॥ ख

चौ- उसके पालन पोषण कारन । करत सकाम कर्म तब राजन ॥ १ ॥
भोगत बाद कर्म फल भारी । भटकत सुख दुःख चाक अपारी ॥ २ ॥
विवश जीव यों कई प्रकारा । भोगत कर्म गतिन फल सारा ॥ ३ ॥
भटकत महा प्रलय पर्यन्ता । भटकत आवगमन में अन्ता ॥ ४ ॥
पंच तत्व नाशक जब काला । आवत तब मिथिलेश नृपाला ॥ ५ ॥
स्थूल व सूक्ष्म द्रव्य गुण रूपा । आन मिलहिं प्रभु ज्योति स्वरूपा ॥ ६ ॥
होत वृष्टि शत वर्षन भूपर । तपत प्रचंड भानु नभ ऊपर ॥ ७ ॥
तपत त्रिलोक तासु यह सारा । पाछे संकर्षण मुख द्वारा ॥ ८ ॥
निकसत अग्नि प्रचंड अपारा । पाछे वात प्रेरणा द्वारा ॥ ९ ॥
जारत अधो भुवन पर्यन्ता । प्रलय मेघ वर्षत नृप अन्ता ॥ १० ॥

दोहा- **हरित सूँड सम धार से, सम्वत शत पर्यन्त ।**
बरसत तब उस नीर में, डूबत अंड अनन्त ॥ २२ ॥

चौ- होत शमन जिमि विति विन इन्धन । त्यों विराट पुरुष भी राजन ॥ १ ॥
निज ब्रह्मांड रूप को तजकर । हो अव्यक्त लीन हे नृपवर ॥ २ ॥
भूमि गंध करषत तब वाता । तब वह नीर रूप बन जाता ॥ ३ ॥
वही वात जल रस का खेंचत । अग्नि रूप तब जल बन जावत ॥ ४ ॥
होवत बाद लीन जल वाता । वात अकाश बीच मिलि जाता ॥ ५ ॥
तामस अहंकार बिच अम्बर । बुद्धि इन्द्रिया सब हे नृप वर ॥ ६ ॥
राजस अहंकार में लीना । मन सुर सात्विक बीच विलीना ॥ ७ ॥
एवं अहंकार जो तीना । महतत्व बिच होत विलीना ॥ ८ ॥
महत्तत्व माया बिच जाकर । होत विलीन बाद हे नृपवर ॥ ९ ॥
सृष्टि की स्थिति नाशन हारी । बरणी हरि माया यह सारी ॥ १० ॥

दोहा- **कवन बात अब श्रवण की, होरहि रुची तुम्हारि ।**
यों सुनकर बोले जनक, सुनु एक विनय हमारि ॥ २३॥

चौ- स्थूल बुद्धि यह दुस्तर माया । तरहिं मुने वहि कहउ उपाया ॥ १ ॥
अब प्रबुद्ध मुनि वचन उचारे । सुनौ जनक तुम वचन हमारे ॥ २ ॥

सुख हित दुख नाशन हित काजू। करत कर्म मानव धर साजू ॥ ३ ॥
फल विपरीत मिलहिं उस नर को। पाय दुःख धन पशु सुत घर को ॥ ४ ॥
है ये जगत बीच चल सारे। इन पर प्रेम कबहुँ नहि धारे ॥ ५ ॥
कर्मन ते निर्मित सुनु राया। स्वर्गादिक भी नश्वर गाया ॥ ६ ॥
इनकी भी करहुन अभिलासा। चाहो परम श्रेय यदि आसा ॥ ७ ॥
निपुण गुरु की शरण सिधावे। गुरु आत्मा विच फर्क न लावे ॥ ८ ॥
कपट त्याग गुरु सेवा करहीं। वैष्णव भक्ति तासु मुख सुनहीं ॥ ९ ॥
भक्ति भाव साधक उपकरणा। करहिं मनुज गुरु मुख ते ग्रहणा ॥ १० ॥

दोहा- **इन सब साधन ते नृप, होत मुदित भगवान।**
निज भक्तन के कारणे, करत सर्व वे दान ॥ २४ ॥

चौ- तजकर संग सर्वतः राया। करे साधु संगति शुभ दाया ॥ १ ॥
राखहिं रंकन ऊपर दाया। रखे मित्रता सम पर राया ॥ २ ॥
रखे नम्रता वृद्धन ऊपर। शिक्षा ग्रहण करे उन सुन्दर ॥ ३ ॥
तन मन सदा रखे नर पावन। सब विधि करे धरम का साधन ॥ ४ ॥
क्षमा मौन सरलता पाठन। ब्रह्मचर्य का सब विधि साधन ॥ ५ ॥
करे अहिंसा पालन भारी। कबहुँ न मुख ते काढहिं गारी ॥ ६ ॥
सुख दुख बीचे एक समाना। सभी जगह देखहिं भगवाना ॥ ७ ॥
सदा रहे एकान्त निवासी। कबहुँ न रहे गेह अभिलासी ॥ ८ ॥
शुद्ध वसन वल्कल परिधाना। मिलहिं समय ऊपर दो दाना ॥ ९ ॥
राखहिं उस बीचे संतोषा। संचय करे कबहुँ नहिं कोषा ॥ १० ॥

दोहा- **शास्त्र भागवत में सदा, श्रद्धा रखे अपार।**
अन्य शास्त्र की ना करे, निन्दा किसी प्रकार ॥ २५ ॥

चौ- श्वास रोक मन को वश करहीं। मौन धार वाणी वश रखहीं ॥ १ ॥
करमन संयम होय अकामी। हरि गाथा अद्भुत अति नामी ॥ २ ॥
जन्म कर्म उन के गुण नाना। करहीं श्रवण कीरतन ध्याना ॥ ३ ॥
जे जे कर्म करे नर कोई। करे विष्णु प्रति अरपन सोई ॥ ४ ॥
जो कुछ यज्ञ दान तप जापा। पाले सदाचार तजि तापा ॥ ५ ॥
धन तिय पुत्र गेह निज जीवन। करें विष्णु चरणन में अरपन ॥ ६ ॥
जिन संतन हरि को हिय धारा। उन पर राखे प्रेम अपारा ॥ ७ ॥
स्थावर जंगम दोनो ऊपर। राखहिं प्रेम सर्वदा नृपवर ॥ ८ ॥

करें परस्पर हरि यश गाना । रखें परस्पर प्रेम महाना ॥ ९ ॥
आपस में संतोष अपारा । रहे प्रपंचन से नित न्यारा ॥ १० ॥

दोहा— **आध्यात्मिक मिथ शान्ति का, अनुभव करत अपार ।**
वे हरि पाप समूह को, क्षण में देत उजार ॥ २६ ॥

चौ- सुनहिं सुनावहिं हरि यश पावन । मिलहिं भक्ति का जव सब साधन ॥ १ ॥
तव हो हियविच प्रेम अपारा । रोम रोम तव पुलकित सारा ॥ २ ॥
होत विलक्षण स्थिति तव हिय की । विसरत सुध तव मानव जिय की ॥ ३ ॥
कवहुँ हरि चिन्ता बिच रोवत । कबहुँ हँसत कवहुँ वह सोचत ॥ ४ ॥
कवहुँ नृत्य कर उन्हें रिझावत । कवहुँ कथा निज मुख से गावत ॥ ५ ॥
शिक्षा ग्रहण भागवत धर्मन । करता रहे संत यों राजन ॥ ६ ॥
परंभाव को पाकर अन्ता । त्याग कामना सब विधि सन्ता ॥ ७ ॥
नारायण में हो लवलीना । माया के ना रहे अधीना ॥ ८ ॥
पूछी जनक बाद यों बाता । हरि स्वरूप के तुम परिज्ञाता ॥ ९ ॥
नारायण परब्रह्मस्वरूपा । वरणन करो मुझे मुनि भूपा ॥ १० ॥

दोहा- **नृपवर के सुन वचन यों, पिपलायन योगीश ।**
उसी समय कहने लगे,चित दे सुनौ महीश ॥ २७ ॥

चौ- स्थिति उद्भव लय हेतु जगत के । तदपि अहे तु स्वयं जो इसके ॥ १ ॥
जागृत स्वप्न सुसुप्ति बाहर । रहते सदा एक रस नृपवर ॥ २ ॥
जिनकी सत्ता से ही सारे । इन्द्रिय तन मन प्राण हमारे ॥ ३ ॥
निज निज कारज करते आये । वहि नारायण ब्रह्म कहाये ॥ ४ ॥
मन वाणी जिन तक ना पहुँचत । नेति नेति इति वेद बतावत ॥ ५ ॥
सर्व विश्व में व्यापक सोही । रहहीं विश्व विलग नृप ओही ॥ ६ ॥
जग के पूर्व एक वहि रहहीं । सृष्टि बाद भी वहि इक बचही ॥ ७ ॥
ब्रह्म शक्ति हे नृपति अनन्ता । वरणन करत थकत सब सन्ता ॥ ८ ॥
दृश्य अदृश्य व कारज कारण । सत्य असत्य वही नारायण ॥ ९ ॥
जन्मत वर्धत मरतन क्षीना । आत्मा इनते सदा विहीना ॥ १० ॥

दोहा- **अंडज स्वेदज उदभिजा, और जरायुज चार ।**
प्राण शक्ति अनुजीव के, धावत वारम्बार ॥ २८ ॥

चौ- भिन्न भिन्न होवत तनुराया । तदपि प्राण तो एकहि गाया ॥ १ ॥
सुपन अवस्था बीचे जवहीं । होवत शिथिल इन्द्रियाँ तवही ॥ २ ॥

अहंकार भी सब सो जावत । लिंग देह भी नहिं रह जावत ॥ ३ ॥
आत्मा भी न रहे नृप जबहीं । तब नर को कैसे स्मृति रहीं ॥ ४ ॥
आत्मा की सब विधि से सत्ता । निश्चित करने का यहि रस्ता ॥ ५ ॥
भगवत चरण कमल में जबहीं । तीव्र भक्ति हो जावत तबहीं ॥ ६ ॥
श्रेष्ठ भक्ति तब अग्नि समाना । जारत चित के मैल महाना ॥ ७ ॥
चित्त शुद्ध जब होवत येहू । आत्म तत्व मिल जावत तेहू ॥ ८ ॥
अमल दृष्टि से येन प्रकारा । दीखत भानु प्रकासित सारा ॥ ९ ॥
बोले जनक सुनौ ऋषिराऊ । कर्मयोग अब मो प्रति गाऊ ॥ १० ॥

दोहा- **जिसके द्वारा पुरुष यहाँ, कर्मन बन्ध नसात ।**
जन्म मृत्यु के चक्र से, छुटकारा पा जात ॥ २९ ॥

चौ- पूछा प्रश्न यही इक बारा । शनकादिक मुनियन से सारा ॥ १ ॥
उत्तर किन्तु नहीं उन गाया । इसका क्या कारण मुनि राया ॥ २ ॥
बोले आविर्होत्र मुनीशा । सुनो वचन मम वदन महीशा ॥ ३ ॥
श्रुतियन में हो जासु विधाना । सर्वश्रेष्ठ वहि कर्म बखाना ॥ ४ ॥
श्रुतियन ते हो जो अलगाया । कर्म निषिद्ध वही बतलाया ॥ ५ ॥
विहित क्रिया करता ना कोई । होत विकर्म नृपति वर सोई ॥ ६ ॥
वेद तत्व अति गहन अपारा । बन्धु समाज भी पात न पारा ॥ ७ ॥
साधारण मानव क्या जाने । ईश्वररूपी वेद बखाने ॥ ८ ॥
बाल बुद्धि लख कर तोहिं राया । शनकादिक उत्तर ना गाया ॥ ९ ॥
वेद परोक्ष बाद यह राया । बहुत तत्व इन बीच छिपाया ॥ १० ॥

दोहा- **कटु भैषज जिमि बाल को, पान करावन काज ।**
मृदु मोदक के लोभ से, फुसलावत जिमि राज ॥ ३० ॥

चौ- मुक्ता करन त्यों कर्मन बन्धन । लिखा वेद ने सब विधि साधन ॥ १ ॥
है तात्पर्य यथारथ उनका । कर्म मोक्ष के ही साधन का ॥ २ ॥
वचन वेद के जो अज्ञानी । करत आचरण जो नहि प्रानी ॥ ३ ॥
उस अधर्म के कारण सारे । जावत मानव मृत्यु दुआरे ॥ ४ ॥
आवागमन चक्र के अन्दर । भटकत रहता मनुज निरन्तर ॥ ५ ॥
वेद कथन कर्मन का कर्त्ता । निष्कर्मी सिद्धि वह गहता ॥ ६ ॥
फल श्रुति केवल रोचनकारी । पुरुष सकामी के प्रति जारी ॥ ७ ॥
हृदय ग्रन्थि यदि भेदन चाहू । तंत्र वेद विधि से हरि ध्याहू ॥ ८ ॥

समझ प्रथम पूजन का साधन। रुचि कर मूर्ति हरी का पूजन ॥ ९ ॥
करे प्रेम से हे नर राई। हरि पूजन विधि यों बतलाई ॥ १० ॥

दोहा- **पावन हो नर मूर्ति के, सन्मुख हो आसीन।**
प्राण संयमन आदि से, सोधे देह मलीन ॥ ३१ ॥

चौ- रक्षा करे न्यास के द्वारा। हरिपद अर्चहि येन प्रकारा ॥ १ ॥
जो हो यथा लब्ध उपचारा। कर पुनि स्थान शुद्धि जल द्वारा ॥ २ ॥
जल छिड़के निज आसन ऊपर। अर्घ्य पाद्य रच मनुज तदन्तर ॥ ३ ॥
करके अंगन्यास करन्यासा। मूल मंत्र में रख विश्वासा ॥ ४ ॥
साङ्गोपाङ्ग स पार्षद पाछे। इष्ट मूर्ति का हे नृप आछे ॥ ५ ॥
पाद्य व अर्घ्य आचमन द्वारा। स्नान वस्त्र भूषण उपहारा ॥ ६ ॥
गंध व अक्षत पुष्प सधूपम। दीप व भोग सपूग अनूपम ॥ ७ ॥
फल ताम्बूल दक्षिणा सुन्दर। करे भेट हरि चरणन अन्दर ॥ ८ ॥
कर पूजन इस विधि भगवाना। करे प्रणाम स्तौत्र पढ नाना ॥ ९ ॥
तन्मय हो पुनि निज हिय मंदिर। करे ध्यान नृप उन परमेश्वर ॥ १० ॥

दोहा- **शिर पर धर निर्माल्य को, मूर्तिहिं बाद उठाय।**
यथा स्थान पधराय दे, यों विधि पूर्ण कराय ॥ ३२ ॥ क
अतिथि अग्नि रवि नीर बिच, निज हिय में यों राय।
आत्म रूप हरि पूजहीं , उसके दु:ख नसाय ॥ ३२॥ख

चौ- योगीश्वरों सुनौ मम बानी। बोले जनक नृपति अति ज्ञानी ॥ १ ॥
भक्तन के वश हो भगवाना। ले अवतार यहाँ पर नाना ॥ २ ॥
कीन्हे पावन चरित अपारा। वर्णन करो मुनीश्वर सारा ॥ ३ ॥
भूत भविष्यत वर्तमान की। वर्णन करौ कथा तुम उनकी ॥ ४ ॥
जनक राज की सुन यों बानी। बोले द्रुमिल महा मुनि ज्ञानी ॥ ५ ॥
हरि अनन्त गुण तासु अनन्ता। गिनहि जो कोटि वर्ष पर्यन्ता ॥ ६ ॥

दोहा- **महि रजकण यदि गिनहिं बुध, तो पावत वह पार।**
किन्तु जगत पति गुणन का ,पाव न पारावार ॥ ३३ ॥

चौ- जो सोचत यो नर निज मन में। गिनलूँ हरिगुण मैं कुछ दिन में ॥ १ ॥
जानो तेहि मूरख अज्ञानी। मन्दबुद्धि बालक नादानी ॥ २ ॥
अब संक्षेप सहित हे राजन। तुम प्रति करूँ हरी गुण वर्णन ॥ ३ ॥
पंचतत्व द्वारा भगवन्ता। रच कर देह विराट अनन्ता ॥ ४ ॥

अंशरुप से उसके अन्दर । भये प्रवेश हे नृपति तदन्तर ॥ ५ ॥
तब वहि आदि देव भगवाना । गाये सन्तन पुरुष प्रधाना ॥ ६ ॥
यहि अवतार प्रथम कहलाया । तीन लोक उसमें स्थित राया ॥ ७ ॥
उनकी इन्द्रीयन से सारी । बनी इन्द्रियाँ सब तनुधारी ॥ ८ ॥
जिनके बल ते पावत ज्ञाना । कर्म शक्ति भी पावत नाना ॥ ९ ॥
उनके सत्वादिक गुण द्वारा । स्थिति उत्पत्ति लय संसारा ॥ १० ॥

दोहा— **जो विराट के रचयिता, नारायण वहि गाय ।**
उनके रजगुण अंश ते, परमेष्ठी प्रकटाय ॥ ३४ ॥

चौ- क्रतु पति विप्र धर्म हितकारी । भये सत्व से हरि अवतारी ॥ १ ॥
पालन हेत विश्व को राया । आदि पुरुष यह रूप गहाया ॥ २ ॥
विश्व नास हित तम के द्वारा । प्रकटे रुद्र रूप करतारा ॥ ३ ॥
मूरति नाम धर्म की नारी । सुता दक्ष की जिसे पुकारी ॥ ४ ॥
नर नारायण दो सुत जाये । ज्ञानयोग नारद प्रति गाये ॥ ५ ॥
कीन्ही स्वयं तपस्या भारी । सेवत जिन्हे महा तप धारी ॥ ६ ॥
बीच बद्रिकाश्रम में दोऊ । करत निवास आज तक सोऊ ॥ ७ ॥
छीनहिं तप द्वारा मम स्थाना । शचिपति यों अति भय मन माना ॥ ८ ॥
तासु तपस्या नासन कारन । बीच बद्रिकाश्रम उन राजन ॥ ९ ॥
सुर गणिका सह काम पठाया । माधव मन्द बात सँग लाया ॥ १० ॥

दोहा- **जाकर वहँ वे नारियाँ, नयनन बाण चलाय ।**
उन्हें बींधने की क्रिया, कीन्ही हे नर राय ॥ ३५ ॥

चौ- लखि अपराध इन्द्र के द्वारा । हँस कर प्रभु यों वचन उचारा ॥ १ ॥
कम्पित होउ अरे तुम नाँही । होउ न भीत जरा मन माँही ॥ २ ॥
तुम आतिथ्य हमारे द्वारा । आकर करो यहाँ स्वीकारा ॥ ३ ॥
वरना आश्रम शून्य हमारा । होअहिं अरे तुम्हारे द्वारा ॥ ४ ॥
यों नारायण वचन उचारे । नम्र सीस कामादिक सारे ॥ ५ ॥
दयावान नारायण हेतू । बोले वचन सुनो जगसेतू ॥ ६ ॥
माया से पर रूप तुम्हारा । है अचिन्तनिय अरु अविकारा ॥ ७ ॥
धीर पुरुष अरु आत्मारामा । करत निरन्तर तुम्हें प्रणामा ॥ ८ ॥
कितने तुम हो उच्च विचारी । दोषिन पर भी दया तुम्हारी ॥ ९ ॥
भक्त आपके भक्ति प्रभावा । सुरपुर त्याग मोक्ष पद पावा ॥ १० ॥

दोहा- **संत भजन करने लगे, यहि कारण सुर सर्व ।**
उनके साधन में करत, विघ्न जासु मन खर्व ॥ ३६ ॥

चौ- तदपि नाथ जो भक्त तुम्हारे । निज पद विघ्न सीस पर धारे ॥ १ ॥
भूख पिपास शीत तप वर्षा । मारुत जैह्य शैश्र्य तन कर्षा ॥ २ ॥
सहत इन्हें मानव बहुतेरे । तदपि क्रोध वश होत घनेरे ॥ ३ ॥
उनकी दशा ईदृशी होवत । सिंधु पार हो गौ खुद डूबत ॥ ४ ॥
कठिन तपस्या का श्रम सारा । करत नाश वे येन प्रकारा ॥ ५ ॥
काम व माधव निज मुख द्वारा । कीन्हीं यों स्तुति बारम्बारा ॥ ६ ॥
निज तप बल ते तब भगवाना । प्रकट कीन्ह रमणी वहँ नाना ॥ ७ ॥
अद्‌भुत दर्शन रूप अपारा । जो सज्जित वस्त्रालंकारा ॥ ८ ॥
देखी वे उन रमा समाना । उन सन्मुख हतश्रिय निज माना ॥ ९ ॥
उन रमणिन के तन ते भारी । निकसत दिव्य सुगंध अपारी ॥ १० ॥

दोहा- **जिन्हें देख मोहित भये, काम सहित सब नारि ।**
निज सिर नीचा कर लिया, लज्जित होय अपारि ॥३७॥

चौ- तब नारायण हँसकर होले । कामादिक प्रति यों वच बोले ॥ १ ॥
इनमें से हो रुची तुम्हारी । करो अरे स्वीकृत इक नारी ॥ २ ॥
सुरपुर की भूषण वह होकर । करहिं निवास सर्वदा सुरपुर ॥ ३ ॥
कर प्रभु की आज्ञा स्वीकारा । कर वन्दन उन बारम्बारा ॥ ४ ॥
श्रेष्ठ उर्वशी करी अगारी । पहुँचे वे सुरपुरी मँझारी ॥ ५ ॥
इन्द्र हेतु जा कीन्ह प्रणामा । किय वर्णन प्रभु तप बल कामा ॥ ६ ॥
सुन सुरपति अति विस्मित जाता । त्रस्त होय व्यापा दुख गाता ॥ ७ ॥
हंसरूप धर कर प्रभु राया । आत्म योग नारद प्रति गाया ॥ ८ ॥
दत्त कुमार व जनक हमारे । ऋषभ देव जिन नाम पुकारे ॥ ९ ॥
हयग्रीव धर कर अवतारा । कीन्हा वेदन का उद्धारा ॥ १० ॥

दोहा- **प्रलय काल में मीन हो, सुन मैथिल गुणवान ।**
कीन्ही रक्षा औषधिने, मनुमहि सह भगवान ॥ ३८ ॥

चौ- हिरण्याक्ष वध कीन्ह वराहा । महि उद्धार किये जल राहा ॥ १ ॥
अमृत मथन समय जब आवा । कच्छप मन्दर पीठ उठावा ॥ २ ॥
शरणागत गजराज उबारा । हरि अवतार ग्राह उन मारा ॥ ३ ॥
कश्यप समिधा लेन पठाये । बालखिल्य जब बन बिच आये ॥ ४ ॥

डूबे गौखुर में वे राया । तब हरि ने उन कष्ट मिटाया ॥ ५ ॥
वृत्र हनन कीन्हा सुर राया । द्विज हत्या ते उन्हें बचाया ॥ ६ ॥
दैत्य गेह रुद्धित सुर नारी । छुड़वाई हरि ने वे सारी ॥ ७ ॥
धर नरसिंह देह विकरला । कनककशिपु का वध कर डाला ॥ ८ ॥
देव दैत्य संगर जब भयऊ । दैवन हित दैत्यन वध कियऊ ॥ ९ ॥
भिन्न भिन्न मन्वन्तर अन्दर । कलावतार कई वे धरकर ॥ १० ॥

दोहा- **कर प्रयोग निज शक्ति का, आदि पुरुष भगवान ।**
की रक्षा सब भुवन की, हे नृपवर गुणवान ॥ ३९ ॥

चौ- वे प्रभु वामन रूप बनाये । महि छलने बलि गेह सिधाये ॥ १ ॥
हरी हुई महि सुरपति पाया । सुतल लोक बलि नृपति पठाया ॥ २ ॥
बनकर परसुराम अवतारी । क्षत्रि विहीन कीन्ह महि सारी ॥ ३ ॥
रघुकुलनाथ राम भगवाना । सेतु बाँध किय लंक पयाना ॥ ४ ॥
मटिया मेट करी सब लंका । मारा दशकंधर बलबंका ॥ ५ ॥
अवनि भार नासन भगवन्ता ।प्रकटहि यदुकुल सहित अनन्ता ॥ ६ ॥
दुष्कर कर्म करहिं वे भारी । जासु कीर्ति गावहिं नरनारी ॥ ७ ॥
होअहिं यज्ञ कुपात्रन द्वारा । तब धर विष्णु बुद्ध अवतारा ॥ ८ ॥
कर वे तर्क वितर्क अपारा । करहिं विमोहित कई प्रकारा ॥ ९ ॥
वधही शुद्र क्षितीशन ईश्वर । कल्किरूप धर कलियुग अंदर ॥ १० ॥

दोहा- **य़श अनन्त भगवान का, सन्तन किये बखान ।**
य़ोगिन ते पूछन लगा, जनक राज मति मान ॥ ४० ॥

चौ- तुम हो आत्म ज्ञानी योगीश्वर । बहुधा भजहिं नहीं जो ईश्वर ॥ १ ॥
भोग लालसा नहीं नसाहीं । मन इन्द्रिय जिनके व श नाँही ॥ २ ॥
हो परिणाम उन्हों का कैसा । कहो मनीश्वर होवत जैसा ॥ ३ ॥
वदत चमस अब योग निधाना । आदि पुरुष मुख सत्व प्रधाना ॥ ४ ॥
जाये द्विजयुत शीलनिधाना । सत्व रजोगुण जासु प्रधाना ॥ ५ ॥
जाये भुज क्षत्रिय बलवन्ता । रज तम जिन बिच रहे अनन्ता ॥ ६ ॥
जाये वैश्य उरु ते राजन । तम द्वारा पद ते सब शूद्रन ॥ ७ ॥
चार वर्ण संग आश्रम चारा । प्रकटाये सब इसी प्रकारा ॥ ८ ॥
हे नृप जो निज जन्म प्रदाता । उन हरी को भजहिं न निज गाता ॥ ९ ॥
बल्कि करत अनादर उनका । होवत अधोपतन उस नर का ॥ १० ॥

दोहा- **हरि गाथा हरि कीर्तन, ते जो रहते दूर ।**
उन तिय शूद्रादिक प्रति, सन्त लोग भरपूर ॥ ४१ ॥

चौ- करत अनुग्रह हे नरराई । कथा कीरतन श्रवण कराई ॥ १ ॥
द्विज नृप वैश्य पूज्य अधिकारा । पा उपनयनादिक सँस्कारा ॥ २ ॥
तदपि श्रुतिन का वे अभिप्राया । समझत शुद्ध नहीं सुनुराया ॥ ३ ॥
अर्थ वाद में होकर मोहित । रहत स्वार्थ परमारथ वञ्चित ॥ ४ ॥
सत्य बात तो यह सुनु राजन । जानत मर्म नहीं वे कर्मन ॥ ५ ॥
मूर्ख होत मानत निज पंडित । रहते दर्प बीच अति मंडित ॥ ६ ॥
बिसरत मधुर बात में ओहू । परते शब्द माधुरी मोहू ॥ ७ ॥
होत रजोगुण की अधिकाई । होत कामना अति मन राई ॥ ८ ॥
रहती नहीं कामना सीमा । गावत सदा स्वयं की महिमा ॥ ९ ॥
होत क्रोध जिन सर्प समाना । करते काहु नहीं सन्माना ॥ १० ॥

दोहा- **हरि भक्तन की दुष्टजन, हँसी उडावत भारि ।**
तज कर विष्णु उपासना, भजन करत निज नारि ॥४२॥

चौ- हो एकत्र दुष्टजन सारे । बाँधत मनसूबे अति भारे ॥ १ ॥
उनका सब सुख नारि विलासा । कबहुँ करत यदि यज्ञ प्रकासा ॥ २ ॥
करत न किन्तु अन्न का दाना । देत दक्षिणा तक नहिं आना ॥ ३ ॥
कर्म तत्व उन कबहुँ न जाना । उदर भरण ही सब कुछ माना ॥ ४ ॥
देह पुष्ठ हित वे अज्ञानी । पशु हत्या करते मनमानी ॥ ५ ॥
रमा विभूति श्रेष्ठ कुल द्वारा । विद्या रूप व कर्म अपारा ॥ ६ ॥
अन्ध बुद्धि मानत ना सन्ता । करत अवज्ञा खल भगवन्ता ॥ ७ ॥
हर प्राणिन में नाभ समाना । सदा विराजत जो भगवाना ॥ ८ ॥
ऐसे खल उनको ना मानत । वेद वचन भी वे नहिं जानत ॥ ९ ॥
करते सिर्फ मनोरथि बाता । सुनहि व करहि परस्पर नाता ॥ १० ॥

दोहा- **वेद विधि के रूप में, कर्म करन को तात ।**
आज्ञा देवत सर्वदा, जिस विच प्रवृति न जात ॥ ४३ ॥

चौ- मैथुन मद्य मांस की भारी । होवत स्वयं प्रेरणा जारी ॥ १ ॥
यह ना है नृप तासु विधाना । परिणय यज्ञादिक बिच नाना ॥ २ ॥
दीन्ह जो कुछ भी अवकासा । सीमा स्थापन हेत प्रकासा ॥ ३ ॥
धन का यह फल नही कहाया । जो कामोपभोग हित गाया ॥ ४ ॥

एकमात्र फल उसका येही । करे धरम बनकर हरि स्नेही ॥ ५ ॥
होत धर्म से ही सुनु राया । परम तत्व का ज्ञान सवाया ॥ ६ ॥
कितने दुख की है यह बाता । निज स्वारथ में ही व्यय जाता ॥ ७ ॥
वे देखत ना देह हमारी । वधहिं एक दिन कालशिकारी ॥ ८ ॥
मौत कबहुँ यह अरे हमारी । कवन प्रकार टरहि ना टारी ॥ ९ ॥
मद्य पान का कहीं विधाना । लिखा नहीं नृप वेदपुराना ॥ १० ॥

दोहा- **मद्य सूँघने का अरे, केवल लिखा विधान ।**
मख बीचे पशु आलभन, को मत हिंसा मान ॥ ४४ ॥

चौ- प्रजा हेतु केवल स्त्रीवासा । रति हेतु यह नहीं प्रकासा ॥ १ ॥
फँसहिं जे अर्थवाद के वचनन । जानों उसे विषयी हे राजन ॥ २ ॥
नहिं वे शुद्ध धरम पहिचाने । वे खल निज को ही वर माने ॥ ३ ॥
पड़कर वे धोके में सारे । करते पशुअन घात विचारे ॥ ४ ॥
मरने बाद वही पशु उनको । खावहिं जो बधहीं जीवन को ॥ ५ ॥
यह शरीर तो मृतक शरीरा । छूटहि साथी यहीं अखीरा ॥ ६ ॥
सब प्राणिन बीचे स्थित ईश्वर । करो बैर केहि काज परस्पर ॥ ७ ॥
अपर देह में स्थित जो ईश्वर । करत वैर उससे कोइ खल नर ॥ ८ ॥
होवत अधोपतन उन मूर्खन । कर जो आत्मज्ञान सम्पादन ॥ ९ ॥
कीन्ही मोक्ष प्राप्त जिन नाही । पूर्ण मूढ भी वे न लखाहीं ॥ १० ॥

दोहा- **वे नर धोबी श्वान सम, गेह घाट के नाँहि ।**
धर्म अर्थ अरु काम में, रहते लीन सदाहि ॥ ४५ ॥

चौ- पावत शान्ति न कबहुँ अनाड़ी । मारत वे निज चरण कुल्हाड़ी ॥ १ ॥
होवत ये नर आतमघाती । शान्ति कबहुँ इन नहि मिल पाती ॥ २ ॥
इनके कर्मन की सुनु राया । मिटहिं प्रथा नहि किसी उपाया ॥ ३ ॥
नासत काल मनोरथ सारे । पावत वे दुख अपरम्यारे ॥ ४ ॥
हरि से होत विमुख जो ज्यादा । मिटे न हिय की जलन विषादा ॥ ५ ॥
करके श्रम गृह सुत धन सम्पत । कर संचय दुःख में फँस जावत ॥ ६ ॥
तजकर अन्त समय यहँ सारे । जावत विवश घोर यम द्वारे ॥ ७ ॥
करते भजन हरी का नाँही । पावत दुःख महा जग माँही ॥ ८ ॥
वदन वचन अब जनक नृपाला । पूछूँ प्रश्न सुनो मुनी पाला ॥ ९ ॥
कवन वर्ण अरु कवन स्वरूपा । धारत कवन समय जग भूपा ॥ १० ॥

दोहा- **मानव किन किन नाम से, कवन नियम अनुसार ।**
पूजन और उपासना, करते जगदाधार ।। ४६ ।।

चौ- कर भाजन अब वचन सुनाये । कृत त्रैतादिक जो युग गाये ।। १ ।।
इन चारों में भगवाना । रंग नाम उन मूरति नाना ।। २ ।।
पृथक पृथक विधि से उन पूजन । करते भक्त लोग सुनु राजन ।। ३ ।।
श्वेत वर्ण सतयुग के अन्दर । भुजा चार सिर जटा मनोहर ।। ४ ।।
धारत तनुपर वल्कल अम्बर । कृष्ण अजिन उपवीत मनोहर ।। ५ ।।
माला अक्ष व दंड कमन्डल । धारण करत देह अति उज्वल ।। ६ ।।
सर्व हितैषी नर निर्वैरा । शान्त व जप तप शम दम द्वारा ।। ७ ।।
सर्व प्रकाशित उन हरि पूजन । करते कृतयुग में सुनु राजन ।। ८ ।।
हंस सुपर्ण धर्म योगेश्वर । पुरुष अमल वैकुंठ व ईश्वर ।। ९ ।।
परमात्मा अव्यक्त अपारा । इन नामन ते विविध प्रकारा ।। १० ।।

दोहा- **करते पूजन विष्णु का, सतयुग के दरम्यान ।**
गुण लीलादिक का सभी, मानव कर कर गान ।। ४७।।

चौ- रक्त वर्ण त्रैता युग माँही । कमर मेखला तीन सुहाही ।। १ ।।
भुजा चार कच हेम समाना । यज्ञपात्र धारत भगवाना ।। २ ।।
ब्रह्मवादि वेद त्रयि द्वारा । भजते हरि को विविध प्रकारा ।। ३ ।।
सर्व देव उरुक्रम उर गाई । विष्णु व यज्ञ वृषा कपि साँई ।। ४ ।।
नामोच्चार हरी का करते । गुण लीला गायन कर भजते ।। ५ ।।
श्याम वर्ण द्वापर अवतारी । पीत वसन चक्रायुध धारी ।। ६ ।।
श्री वत्सादिक सोभित अंता । वेद तन्त्र ते पूजत सन्ता ।। ७ ।।
वासुदेव संकर्षण रामा । मार व अनिरुद्ध वलधामा ।। ८ ।।
नारायण ऋषि पुरुष पुरातन । सर्वभूत विश्वेश्वर भगवन ।। ९ ।।
विश्व महात्मा सब घट वासी । वेद तन्त्र पूजहिं सुख रासी ।। १० ।।

दोहा- **कृष्णवर्ण कलियुग विषै, नीलम मणी समान ।**
कृष्ण नाम ले सन्त जन, रच कर यज्ञ विधान ।। ४८ ।।

चौ- करते उन हरि का आराधन । नाम व गुण लीला कर गायन ।। १ ।।
शरणागत रक्षक भगवाना । करत विरंचि शंभु जिन ध्याना ।। २ ।।
जे पद भक्त के परि पालक । इस संसार सिन्धु से तारक ।। ३ ।।
माया मोह निवारण हारे । सांसारिक सब दुःख निवारे ।। ४ ।।

भक्तन को जो अभय प्रदाता । घोर नरक से जे परित्राता ॥ ५ ॥
तीर्थन को भी तीर्थ बनाते । तीर्थस्वरूप परम कहलाते ॥ ६ ॥
उन चरणन को बारम्बारा । करूँ वन्दना विविध प्रकारा ॥ ७ ॥
उन चरणन की महिमा गायन । कवन प्रकार करूँ मैं भगवन ॥ ८ ॥
राम जन्म जब आप धराये । पिता वचन ते विपिन सिधाये ॥ ९ ॥
राज्य रमा दुस्त्यज तुम त्यागी । वन वन फिर बने वैरागी ॥ १० ॥

दोहा- **जनक सुता के वचन सुन, लेकर शर धनु हाथ ।**
धाये माया मृग अनु, जिन चरणन से नाथ ॥ ४९ ॥

चौ- वन्दों उन पद को भगवाना । दीनबन्धु हे दयानिधाना ॥ १ ॥
तुम्हरे नाम प्रेम की सीमा । अपरम्पार जासु अति महिमा ॥ २ ॥
वन्दों मैं उनहीं पद पंकज । विधि शिव सीस चढावत जिन राज ॥ ३ ॥
भिन्न भिन्न युग में इमि राई । पूजत नाम रूप ते साँई ॥ ४ ॥
कलियुग विषै मनोरथवाना । नही जरूरत जप तप ध्याना ॥ ५ ॥
नाम स्मर्ण ते स्वारथ सारे । होत पूर्ण जग संसृति टारे ॥ ६ ॥
श्रेष्ठ पुरुष कलियुग की भारी । करत प्रशंसा नृपति अपारी ॥ ७ ॥
यहि कारण कलियुग में राया । नाम स्मर्ण अति लाभ बताया ॥ ८ ॥
करत कीरतन जे कलि माँही । आवागमन भटकते नाँही ॥ ९ ॥
ज़न्मत अन्य युगन में जोई । चाहत जन्म सदा कलि सोई ॥ १० ॥

दोहा- **कलियुग में होवत सदा, सन्त कई भगवन्त ।**
अन्य प्रान्त में तो कहीं, कहिं पर पावत अन्त ॥ ५० ॥

चौ- द्रविड़ देश में तो अधिकाई । पावत सन्त बहुत सुनुराई ॥ १ ॥
महानदी कावेरी सरिता । पयस्विनी कृतमाल पुनीता ॥ २ ॥
तामरपर्णि प्रतीची नामा । बहती जहाँ सरित सुख धामा ॥ ३ ॥
करेमनुज इनका जलपाना । होवत भक्त वही भगवाना ॥ ४ ॥
कर्मवासना सभी नसावे । शरणागत हरि की जो आवे ॥ ५ ॥
देव मुनी भूतादिक पितरन । ऋण ते होत उऋण वह राजन ॥ ६ ॥
हरि चरणन को सेवत जोई । कर्म लोप भी यदि उस होई ॥ ७ ॥
तदपि हृदय में स्थित भगवाना । करत विनाश पाप उस नाना ॥ ८ ॥
बोले नारद इमि मिथिलेश्वर । सुन कर धरम भागवत सुन्दर ॥ ९ ॥
सब योगिन की पूजन कियऊ । अन्तरध्यान सिद्ध तब भयऊ ॥ १० ॥

दोहा- **उसी धर्म का आचरण, कर नृप निमि गुणवान ।**
परम गति पाई महा, हे वसुदेव सुजान ॥ ५१ ॥

चौ- कीन्हा धर्म भागवत वर्णन । श्रृद्धा सहित करो तुम धारन ॥ १ ॥
तज आसक्तिन तुम भी अन्ता । पावहु परमधाम भगवन्ता ॥ २ ॥
छाया यश जग वीच तुम्हारा । पुत्र रूप पा जग करतारा ॥ ३ ॥
दर्शन आलिंगन अरु भापन । करके शयन साथ कर भोजन ॥ ४ ॥
कृष्ण वीच रखकर सुत स्नेहा । भई शुद्ध तुम दोउन देहा ॥ ५ ॥
पौंड्र व शाल्व नृपति शिशुपाला । किय उन ध्यान वैर वहुपाला ॥ ६ ॥
निज सारूप्य तदपि भगवाना । दीन्हा उन प्रति भक्त समाना ॥ ७ ॥
प्रेम सहित भजते उन जोही । क्यों सारूप्य मिलहि नहि तोही ॥ ८ ॥
पुत्र वुद्धि तजकर तुम येहू । समझो मायापति प्रभु तेहू ॥ ९ ॥
यह भू भार उतारन कारन । दुष्ट असुर क्षत्रिन संहारन ॥ १० ॥

दोहा- **सन्तन रक्षा करन हित, लीन्हो यह अवतार ।**
परम शन्ति प्राणिन प्रति, देने को इस वार ॥ ५२ ॥

चौ- इसी हेतु इस जग के अन्दर । गावत यश इन सन्त मनोहर ॥ १ ॥
श्री शुक कहे सुनो हे राया । धर्म भागवत यों मुनि गाया ॥ २ ॥
यों वसुदेव देवकी ज्ञाना । सुन विस्मित त्यागा अज्ञाना ॥ ३ ॥
राजन यह इतिहास पुनीता । श्रवण करत नासत सव चिन्ता ॥ ४ ॥
मन का सारा मोह हटावे । अन्त काल हरि धाम दिलावे ॥ ५ ॥
वोले नृप से पुनि शुक वानी । एक वार शनकादिक ज्ञानी ॥ ६ ॥
व्रह्मा प्रजापतिन ते वेष्टित । तथा भूतगण ते शिव सेवित ॥ ७ ॥
इन्द्र मरुत भगवान दिवाकर । वसु ऋभु साध्य अश्विनी किन्नर ॥ ८ ॥
नाग व सिद्ध अप्सरा सारी । चारण गुह्यक मुनि तपधारी ॥ ९ ॥
विद्याधर गुह्यक पितरेश्वर । सुर गंधर्व द्वारका अन्दर ॥ १० ॥

दोहा- **दरसन हित श्रीकृष्ण का, आये सह परिवार ।**
जिस शरीर से कीर्ति का, छाया चहुँ विस्तार ॥ ५३ ॥

चौ- कर दरसन अद्भुत उन सारे। भयउ न तृप्त नयन जल धारे ॥ १ ॥
पुरी द्वारका सव विधि सुन्दर । सव सम्पत युत सोभित नृपवर ॥ २ ॥
नन्दनवन के पुष्पन द्वारा । करी वृष्टि हो मुदित अपारा ॥ ३ ॥
वाद विचित्र छन्द पद द्वारा । कर जोरे यों स्तोत्र उचारा ॥ ४ ॥

चरण कमल हे नाथ तुम्हारे । मुहु मुहु करहिं वन्दना सारे ॥ ५ ॥
निज चरणन को निज हिय माँही । सन्त मुनीजन सदा रखाहीं ॥ ६ ॥
जिन माया से तुम भगवन्ता । सृष्टि व स्थिति संहारत अन्ता ॥ ७ ॥
तदपि आप माया के माँही । होवत लिप्त न अजित कदाहीं ॥ ८ ॥
यहि कारण यह कर्म तुम्हारा । है अनिवर्चनीय प्रभु सारा ॥ ९ ॥
जिनका चित दुर्गुण दुरभावा । दुष्कर्मन बीचे अति पावा ॥ १० ॥

दोहा- **शास्त्र श्रवण विद्याध्यन, करके तप अरु दान ।**
उनके चित की शुद्धि सब, होवत हे भगवान ॥ ५४ ॥

चो– रक्षक सन्त भक्त हितकारी । होत शुद्धि तबहीं उन सारी ॥ १ ॥
लीला कथा श्रवण वे करहीं । श्रृद्धा आप बीच तब बढहीं ॥ २ ॥
कर तब सन्त मुनीशर ध्याना । परम संयमी आप समाना ॥ ३ ॥
अतुल विभूति प्राप्ति के साधन । चतुर्व्यूह की करत उपासन ॥ ४ ॥
याज्ञिक लोग वेद विधि द्वारा । करते चिन्तन विविध प्रकारा ॥ ५ ॥
मायाविद योगी जन नाना । करते हिय पद पंकज ध्याना ॥ ६ ॥
प्रेमी भक्त इन्हीं को स्वामी । मानत इष्टदेव निज नामी ॥ ७ ॥
वे पद पंकज प्रभो तुम्हारे । करें भस्म विषयन को सारे ॥ ८ ॥
पाप ताप वे अग्नि समाना । करें भस्म हे दीन निधाना ॥ ९ ॥
वक्ष स्थल पर यह वनमाला । लहराती नूतन सब काला ॥ १० ॥

दोहा- **वक्षस्थल पर आपके, लक्ष्मी करत निवास ।**
मानो सौत समान वह, उस प्रति रहत उदास ॥ ५५ ॥

चौ- वक्षः स्थल पर वसत निरन्तर । वह लक्ष्मी भी होय निछावर ॥ १ ॥
उन चरणन की करती पूजन । बड़े प्रेम से निशिदिन भगवन ॥ २ ॥
उस पूजन को मानन हारे । चरण कमल जो नाथ तुम्हारे ॥ ३ ॥
हिय की अशुभ वासना नाना । करें भस्म नित अग्नि समाना ॥ ४ ॥
लेकर तुम वामन अवतारा । पहुँचे जबै बलि के द्वारा ॥ ५ ॥
भू मापन हित चरण उठाया । सत्य लोक तक वह पहुँचाया ॥ ६ ॥
तब ऐसी शोभा उस होई । मानो महा विजय ध्वज कोई ॥ ७ ॥
लोकपिता जब चरण पखारा । उससे गिरी गंगत्रय धारा ॥ ८ ॥
मानो तीन पताका भारी । फहरा रही प्रभो बनवारी ॥ ९ ॥
देख उसे असुरन की सेना । भइ भयभीत हे करुणा ऐना ॥ १० ॥

दोहा- देव चमू निर्भय भई, लखकर उसका रूप ।
चरण कमल रह आपका, पावन परम अनूप ॥ ५६ ॥

चौ- जिस नर का हो साधु सुभाऊ । उस प्रति वे हरि धाम दिलाऊ ॥ १ ॥
कृपा न जिस पर उनकी नाँही । वह नर भटकत भव के माँही ॥ २ ॥
चवेण कमल ये नाथ तुम्हारे । धोवहिं पाप व ताप हमारे ॥ ३ ॥
ब्रह्मादिक जेते तनुधारी । पावत मृत्यु वे बारम्बारी ॥ ४ ॥
वे सब नाथे वृपभ समाना । वशीभूत तव दीन निधाना ॥ ५ ॥
काल रूप तुम प्रभो हमारे । सब प्राणी आधीन तुम्हारे ॥ ६ ॥
ऐसे वे पदकंज तुम्हारे । करें सदा कल्याण हमारे ॥ ७ ॥
प्रकृति पुरुप से भी अलगाऊ । तुम पुरुपोत्तम परम कहाऊ ॥ ८ ॥
उत्पत्ति पालन अरु नासन । सबके हेतु तुम्हीं हो भगवन ॥ ९ ॥
प्रकृति पुरुप महतत्व नियन्ता । तुमहीं एक मात्र भगवन्ता ॥ १० ॥

दोहा- शीत ग्रीष्म प्रावट ऋतु, काल रुप त्रय नाभ ।
सम्वत्सर के रूप में, नासत पंकज नाभ ॥ ५७ ॥

चौ- गति अबाध गंभीर तुम्हारी । आप स्वयं प्राणिनहितकारी ॥ १ ॥
तुम ते शक्ति प्राप्त कर ताता । पुरुप अमोघ वीर्य कहलाता ॥ २ ॥
लेकर बाद संग में माया । करत गर्भ स्थापन जग गाया ॥ ३ ॥
कर अनुसरण त्रिगुण मयि माया । रचना पुनि ब्रह्मांड निकाया ॥ ४ ॥
तत्व व अहंकार मन रूपा । परत सप्त जो हेम स्वरूपा ॥ ५ ॥
तुम ही एक मात्र हृपिकेशा । सर्व चराचर के विश्वेशा ॥ ६ ॥
भिन्न भिन्न जे माया निर्मित । उन सब वस्तुन को तुम सेवत ॥ ७ ॥
उनमें किन्तु न होवत लीना । नही नाथ तुम काहु अधीना ॥ ८ ॥
तुम अतिरिक्त दूसरा कोई । होत भीत विपयन ते सोई ॥ ९ ॥
नारी सौलह सहस्र तुम्हारी । बाण अनङ्ग चलाकर तारी ॥ १० ॥

दोहा- मन वश करने के लिये, भई समर्थ न कोय ।
तुम कर्मन ते हे प्रभो, कबहुँ लिप्त ना होय ॥ ५८ ॥

चौ- पाप राशि धोवन हित ताता । सरिता द्विविध जगत में जाता ॥ १ ॥
अमृतमयि इक कथा तुम्हारी । अपर गंग निर्मल जलवारी ॥ २ ॥
सत्संगी ज्ञानी श्रुति द्वारा । करत कथामृत पान तुम्हारा ॥ ३ ॥
अपर गंग विच गोता खाकर । नासहिं पाप ताप हे ईश्वर ॥ ४ ॥

व्यासपुत्र बोले पुनि वानी । देवन सहित शंभु विधि ज्ञानी ॥ ५ ॥
करी प्रार्थना सबने मिलकर । कीन्ह प्रणाम नाम स्थित होकर ॥ ६ ॥
अब ब्रह्मा यों गिरा उचारी । अनुनय कर स्वीकार हमारी ॥ ७ ॥
धरणी भार उतारन कारन । यह अवतार धरेउ तुम भगवन ॥ ८ ॥
वह सब काम पूर्ण तुम कीन्हा । निज सन्तन को अति सुख दीन्हा ॥ ९ ॥
सत्य परायण सन्त तुम्हारे । कीन्हो स्थापित धर्म मुरारे ॥ १० ॥

दोहा- **दशों दिशा में कीर्ति का, कीन्हा तुम विस्तार ।**
धर कर इस यदुवंश में, हे प्रभु यह अवतार ॥ ५९ ॥

चौ- जग कल्याण करन को ताता । चरित अनेक कीन्ह विक्रान्ता ॥ १ ॥
कलियुग बीचे चरित तुम्हारे । करके गायन सन्त मुरारे ॥ २ ॥
होवहिं तम से पार अनारी । सुन सुन लीला नाथ तुम्हारी ॥ ३ ॥
वाण नेत्र महि वर्ष मुरारे । गुजरे यदुकुल बीच तुम्हारे ॥ ४ ॥
देव कार्य भी शेष न रहेऊ । विप्रशाप यदुवंश नसेऊ ॥ ५ ॥
अब हो यदि रुचि प्रभो तुम्हारी । चलो धाम निज सुरहित कारी ॥ ६ ॥
विधि के वचन श्रवण कर काना । बोले दीन बन्धु भगवाना ॥ ७ ॥
जैसा तुमने कहा विधाता । यहि विचार मोरे मन आता ॥ ८ ॥
राखा ना कुछ काम अधूरा । कीन्हा भार दूर महि पूरा ॥ ९ ॥
पर यादव बल विक्रम युक्ता । शौर्य्य वीर्य धन ते उन्मता ॥ १० ॥

दोहा- **तुले हुए ये ग्रसन हित, यादव गण इस भूमि ।**
रोके मैने अब तलक, यथा सिन्धु तट उर्मि ॥ ६० ॥

चौ- यदि यदुवंशिन बिना सँहारे । चला जाँऊ वैकुंठ हमारे ॥ १ ॥
नासहिं लोकन को ये सारे । अमर्यादित दर्पित भारे ॥ २ ॥
विप्र शाप ते यदुकुल सारा । होहिं नष्ट जब भली प्रकारा ॥ ३ ॥
तब वैकुंठ बीच मैं जाऊँ । जाती वेर धाम तब आऊँ ॥ ४ ॥
कृष्ण वचन सुनकर इमिराया । देवन सह विधि सीस नवाया ॥ ५ ॥
करके वारम्वार प्रणामा । देवन सह विधि गये निज धामा ॥ ६ ॥
गये धाम निज जबै विधाता । भये द्वारका विच उत्पाता ॥ ७ ॥
लख उत्पात कृष्ण भगवाना । यदुअन प्रति कहे वचन प्रमाना ॥ ८ ॥
हे यादव गण अति उत्पाता । चारों ओर भये दुख दाता ॥ ९ ॥
विप्र शाप ते वंश हमारा । भयउ ग्रसित यह सभी प्रकारा ॥ १० ॥

दोहा- जीने की यदि हो रुचि, करहु न यहाँ निवास ।
हम सारे मिल आज ही, चालें क्षेत्र प्रभास ॥ ६१ ॥

चौ- करहु विलम्ब नहीं तुम भाई । चले वहाँ समुदाय बनाई ॥ १ ॥
दक्ष शाप को पाय निशाकर । घेरा राजयक्ष्मा आकर ॥ २ ॥
कीन्हो स्नान वहाँ पर जाकर । कला वृद्धि तब पाइ निशाकर ॥ ३ ॥
हम भी करें वहाँ पर स्नाना । देकरखूब द्विजन प्रति दाना ॥ ४ ॥
सुर पितरन का करके तरपन । करवावें विप्रन प्रति भोजन ॥ ५ ॥
दान रूप ले तरणि सहारा । तरें कष्ट सिन्धु के पारा ॥ ६ ॥
यों भगवत का पा आदेशा । जोते रथ कर गेह प्रवेशा ॥ ७ ॥
सुन भगवत के वचन सुहाये । लख उद्धव उत्पात सवाये ॥ ८ ॥
हरि समीप जाकर एकन्ता । कर प्रणाम चरणन भगवन्ता ॥ ९ ॥
दोऊ कर जोरे वचन सुनाये । देव देव तुम जगपति गाये ॥ १० ॥

दोहा- श्रवण कीरत करहिं जो, केशव चरित तुम्हार ।
होकर परम पुनीत वह, जावहिं मोक्ष दुआर ॥ ६२ ॥

चौ- विप्रन शाप निवारन काजू । तुम समर्थ यद्यपि यदुराजू ॥ १ ॥
तदपि न शाप निवारण कीन्हा । इसका अर्थ यही मैं चीन्हा ॥ २ ॥
सब यदुकुल का कर संहारा । जावहु बाद भवन करतारा ॥ ३ ॥
इस कारण पद कमल तुम्हारे । क्षण भर भी ना तजूँ मुरारे ॥ ४ ॥
जब हे नाथ धाम निज जाऊ । मुझको भी निज संग लिवाऊ ॥ ५ ॥
चरितामृत कर पान तुम्हारे । त्यागहि भक्त मनोरथ सारे ॥ ६ ॥
शय्या आसन अटन व स्थाना । क्रीडा आसनादि अरु स्नाना ॥ ७ ॥
रहे सदा हम संग तुम्हारे । आत्मा प्रियतम आप हमारे ॥ ८ ॥
त्यागहि हम तोहिं कवन प्रकारा । माला वसन व भूषण सारा ॥ ९ ॥
जो उपभुक्त तुम्हारे द्वारा । उससे सजा शरीर हमारा ॥ १० ॥

दोहा- खाई झूठन आपकी, सेवक सदा तुम्हार ।
इस कारण हम आपकी, माया पर असवार ॥ ६३ ॥

चौ- माया का भय हमको नाँही । भय केवल इक तोर जुदाई ॥ १ ॥
बड़े बड़े ऋषि मुनि तपकारी । नैष्ठिक ब्रह्मचर्य व्रतधारी ॥ २ ॥
कर कर ये सब वात अहारा । पावत हे प्रभुधाम तुम्हारा ॥ ३ ॥
वही धाम कर सन्त समागम । करके चरित तुम्हारा गायन ॥ ४ ॥

पास कते हम सन्त तुम्हारे । हो तल्लीन आप में सारे ॥ ५ ॥
इस कारण ना हमें तजाऊ । साथ तुम्हारे ही लेजाऊ ॥ ६ ॥
जब यों करी प्रार्थना उद्धव । बोले दीन बन्धु तब माधव ॥ ७ ॥
मो से कहे वचन जो तेने । इच्छा करी वही सब मैंने ॥ ८ ॥
लोकपाल ब्रह्मादिक सारे । चाहत यदि जाकर उन द्वारे ॥ ९ ॥
जाऊँ बाद अरे निज धामा । अब नहिं शेष यहाँ कुछ कामा ॥ १० ॥

दोहा- **जिस कारण लीन्हा यहाँ, आकर के अवतार ।**
देव कार्य पूरण हुआ, विधि वचनन अनुसार ॥ ६४ ॥

चौ- अब उद्धव यदुवंश हमारा । भयो दग्ध द्विज शापन द्वारा ॥ १ ॥
आवत दिवस आज से साता । डूबहिं सिन्धु द्वारका भ्राता ॥ २ ॥
त्यागऊँ में जब यह संसारा । होय अमंगल यहाँ अपारा ॥ ३ ॥
उसी समय कलियुग यहँ आवे । नर रुचि पापन बीच लगावे ॥ ४ ॥
जब मैं सखे यहाँ से जाऊँ । करउ निवास यहाँ तुम नाहूँ ॥ ५ ॥
आवत कलियुग जब हे उद्धव । रहहिं अधर्मलीन सब मानव ॥ ६ ॥
स्वजन बन्धु से प्रेम हटाऊ । निज मन मोरे बीच लगाऊ ॥ ७ ॥
सम दृष्टि रखकर महि ऊपर । करो भ्रमण निर्भय तुम होकर ॥ ८ ॥
श्रवण नयन मन वाणी द्वारा । गृह्यमाण रह नश्वर सारा ॥ ९ ॥
दिवस चार की यह उजियाली । सुपने सम जानों यहि खाली ॥ १० ॥

दोहा- **मन अशान्त विक्षिप्त अरु, असंयत नर जेहु ।**
दीखत पागल के समाँ, वस्तु अनेकनि येहु ॥ ६५ ॥

चौ- चित का भ्रम जानो तुम येहू । गुण अवगुण जाना नर जेहू ॥ १ ॥
वहि दृढ़मूल कहावत भ्राता । इस कारण तुम भी हे ताता ॥ २ ॥
सब निज करो इन्द्रियाँ वश में । राखो कसर नहीं कुछ इसमें ॥ ३ ॥
आत्मा सम जानों जग सारा । मुझसे नहीं ब्रह्म भी न्यारा ॥ ४ ॥
ऐसो अनुभव यदि तुम पाऊ । सन्मुख विघ्न नहीं कुछ आऊ ॥ ५ ॥
ऐसा निश्चय जब तुम करहू । श्रुतियन अर्थ सत्य यहि लखहू ॥ ६ ॥
ये ही एक यथारथ ज्ञाना । करो हिये में यों अनुमाना ॥ ७ ॥
जगदात्मा जब तुम बन जाऊ । सन्मुख विघ्न तदा ना पाऊ ॥ ८ ॥
दोष बुद्धि गुण मति के ऊपर । उठ जावत हे उद्धव जो नर ॥ ९ ॥
लख कर दोष कुकर्मन माँही । होवत निवृत नहीं कदाही ॥ १० ॥

दोहा- **विन्ति कर्म में प्रवृत ना, वह नर होय कदाहि।**
लाभ व गुण के ऊपरे, मोहित होवत नाँहि ॥ ६६ ॥

चौ- करत कर्म वह वाल समाना। गुण अवगुण पर धरत ना ध्याना ॥ १ ॥
निज आत्मा सम जग को जानत। वह संसार वीच ना आवत ॥ २ ॥
यों आदेश दीन्ह यदुराई। हरि प्रेमी उद्धव तव राई ॥ ३ ॥
कर प्रणाम यों वचन सुनाया। विश्वम्भर ब्रह्मांड निकाया ॥ ४ ॥
ये योगेश्वर हे योगात्मा। दीनानाथ परम परमात्मा ॥ ५ ॥
तुम ही जग के सर्वाधारा। भक्तन के तुम एक सहारा ॥ ६ ॥
जो सन्यास त्याग के लच्छन। श्रीमुख से वरणे तुम भगवन ॥ ७ ॥
अभक्तन प्रति सुनु यदुराया। विषय त्याग अति दुष्कर गाया ॥ ८ ॥
मैं भी नाथ मंदमति मूढा। समझा नहीं वचन तव गूढा ॥ ९ ॥
यह मैं यह मेरा इति भावा। तन तिय पुत्र गेह धन तावा ॥ १० ॥

दोहा- **वे सव माया रचित तव, इन सव में आसक्त।**
अनायास मैं जिस तरह, समझ सकूँ तव उक्त ॥ ६७ ॥

चौ- देउ तथा शिक्षा मोहिं स्वामी। स्वयं प्रकाशित अन्तरयामी ॥ १ ॥
सत्य एक रस काल अवाधित। तुम विन अन्य नही मोंहि दर्शित ॥ २ ॥
जो मुझको दे यह उपदेशा। शिव विरंचि अरु नहीं सुरेशा ॥ ३ ॥
शिव विरंचि इन्द्रादिक सारे। रखते यह नहिं ज्ञान मुरारे ॥ ४ ॥
माया से ये मोहित होकर। वने हुये माया के किंकर ॥ ५ ॥
करत इन्द्रियाँ अनुभव जे ते। लखकर सत्य उन्हें ये शेते ॥ ६ ॥
इस कारण हे अन्तरजामी। शिक्षा देउ मुझे तुम स्वामी ॥ ७ ॥
देश काल अरु वस्तुन सीमा। इनके परे आपकी महिमा ॥ ८ ॥
आप अनन्त सिन्धु भगवन्ता। ज्ञान अवाधक शक्ति अनन्ता ॥ ९ ॥
तुम ही हो वैकुंठ निवासी। दीन वन्धु सव हृदय प्रकासी ॥ १० ॥

दोहा- **यहि कारण नारायण, मैं दुख में अतितप्त।**
यही सोच कर आपकी, शरण गही इस वक्त ॥ ६८ ॥

चौ- वोले कृष्ण चन्द्र भगवाना। सुनो वचन मोरे धर ध्याना ॥ १ ॥
लोकन तत्व परिक्षक मानव। नासत अशुभ वासना उद्धव ॥ २ ॥
निज विवेक निज मति अनुसारा। करत दमन यों भली प्रकारा ॥ ३ ॥
हित अरु अहित सीख का दाता। निज आत्मा ही गुरु कहलाता ॥ ४ ॥

निज साक्षात तजुर्बे द्वारा । पात श्रेय महि यहि सर्व प्रकारा ॥ ५ ॥
मानव बीच संयमी धीरा । होवत प्रिय मोहिं यही अखीरा ॥ ६ ॥
नर तन ते ही खोजत मोहीं । मोरे दरसन चाहत सोही ॥ ७ ॥
ग्राह्य पदारथ वृत्तिन द्वारा । ग्राह्य विलक्षण उन में सारा ॥ ८ ॥
जानो मुझे एक तुम उंध्व । करते द्विविध खोज मम मानव ॥ ९ ॥

दोहा- **योगी दत्तात्रेय अरु, यदु का शुभ संवाद ।**
वरणों मैं इस विषय में, सुनु उद्धव वह वाद ॥ ६९ ॥

चौ- देख तरुण यदु यक अवधूता । निर्भय विचरत परम पुनीता ॥ १ ॥
जाकर उस अवधूत समीपा । कहे वचन यदु ज्ञान प्रदीपा ॥ २ ॥
करत करम तुम ना द्विजराई । बुद्धि विचक्षण तुम कहँ पाई ॥ ३ ॥
पंडित होकर भी यह ज्ञाना । करत आचरण बाल समाना ॥ ४ ॥
चाहत नर बहुधा सुख राशी । आयुष यश बन कर अभिलाषी ॥ ५ ॥
धर्म अर्थ कामादिक माँही । होत प्रवृत्त अकारण नाँही ॥ ६ ॥
तुम तो कर्मन हेतु समर्था । दीखत मोहिं निपुण सब अर्था ॥ ७ ॥
वाणी अमृत समा तुम्हारी । दमकत भाल विशाल अपारी ॥ ८ ॥
तो भी जड़ उन्मत्त समाना । करत करम नहिं जिमि अज्ञाना ॥ ९ ॥
कार्मादिक दावानल द्वारा । नहीं तप्त तुम किसी प्रकारा ॥ १० ॥

दोहा- **दावानल को देखकर, हे द्विज ज्यों गजराज ।**
निर्भय गंगानीर में, खड़ा रहे भय त्याज ॥ ७० ॥

चौ- धन तिय पुत्र गेह परिवारा । रहते इनते भी तुम न्यारा ॥ १ ॥
सदा सर्वदा हे द्विज राऊ । निज स्वरूप में स्थित दिखलाऊ ॥ २ ॥
जो आनन्द आपने पाया । इसका कारण कहु द्विज राया ॥ ३ ॥
दत्तात्रेय ब्रह्मविद् बोले । सुनौ वचन राजन मम होले ॥ ४ ॥
मैने निज बुद्धि के द्वारा । कइ गुरुजन का लिया सहारा ॥ ५ ॥
उनसे शिक्षा लेकर सुन्दर । निर्भय करूँ भ्रमण जग अन्दर ॥ ६ ॥
उन गुरुअन का नाम बताऊँ । शिक्षा प्राप्त करी सो गाऊँ ॥ ७ ॥
भू नभ अब्धि अनल जल वाता । सूरज चन्द्र पंतग कपोता ॥ ८ ॥
मधु माँखी भृङ्गी मधुहर्ता । कुरर पिंगला । अहिशर कर्ता ॥ ९ ॥
ऊर्ण नाभि मृग अजगर भारी । भ्रमर मीन गज बाल कुमारी ॥ १० ॥

दोहा- इनते मैंने जिस तरह, प्राप्त किया जो ज्ञान ।
तोरे प्रति उस प्रान का, हे यदु करूँ वखान ।। ७१ ।।

चौ- पृथ्वी से मैंने यह राई । क्षमा धैर्य की शिक्षा पाई ।। १ ।।
भूपर नर कई करत अघाता । क्या क्या करत नही उत्पाता ।। २ ।।
वदला किन्तु नहीं वह लेवत । कतर सौर अरु कवहुँ न रोवत ।। ३ ।।
निज निज पुरुपारथ अनुसारी । चेष्ठा करत सभी संसारी ।। ४ ।।
करत आक्रमण जान अजाना । समय समय ऊपर वे नाना ।। ५ ।।
धीर पुरुप वह ही कहलावे । अक्रोधी धीरज मन लावे ।। ६ ।।
परवत से सीखेउ यह ज्ञाना । करत काम वह जग के नाना ।। ७ ।।
चेष्ठा रहत सर्वदा उसकी । करूँ भलाई मैं सव जग की ।। ८ ।।
गिरि शिक्षा करके स्वीकारा । करे साधुजन पर उपकारा ।। ९ ।।
हे यदु वायू उभय प्रकारा । प्राण व बाह्य वृत्ति अनुसारा ।। १० ।।

दोहा- प्राण वात से हे नृप, सीखा जो मैं ज्ञान ।
भोजन में राखत यह, जैसे अपना ध्यान ।। ७२ ।।

चौ- होत तुष्ट जो पाय अहारा । साधक नर भी उसी प्रकारा ।। १ ।।
हो जीवन जिससे निर्वाहू । भोजन करहि नहीं अधिकाहू ।। २ ।।
इन्द्रिय तृप्त करन के काजू । विपय अधिक कवहुँ न साजू ।। ३ ।।
होन विकृत जिनते मति लोगू । सोही विपय करहिं उपयोगू ।। ४ ।।
होवत मन चञ्चल जिन द्वारा । साधक तजहिं विपय़ वह सारा ।। ५ ।।
वहि वायु से सीखेउ ज्ञाना । भ्रमत वात ज्यों कई इक स्थाना ।। ६ ।।
किन्तु न होत कहीं आसक्ता । गुण अवगुणन में नहीं अनुरक्ता ।। ७ ।।
त्यों मुनि वाहर वात समाना । कवहुँ विपय का करहिं न ध्याना ।। ८ ।।
गंधवात का गुण नहि राया । गंध भूमि का गुण वतलाया ।। ९ ।।
जव लगि साधक भौतिक गाता । त्यागहि नही तासु निज नाता ।। १० ।।

दोहा- व्याधि व भूख पिपास सव, तव तक ही दुख देत ।
रहत तासु निर्लिप्त तव, कवहुँ न रह दुख सेत ।। ७३ ।।

चौ- नभ से शिक्षा मिलहिं जो मोहीं । कहूँ सीख रह नृपवर तोहीं ।। १ ।।
घट मठ आदि अनेक प्रकारा । भिन्न भिन्न चल अचल अपारा ।। २ ।।
दीखत नभ ते भिन्न पदारथ । नभ ते किन्तु न भिन्न यथारथ ।। ३ ।।
इस जग वीच चराचर जेते । दीखत स्थूल व सूक्ष्म येते ।। ४ ।।

उनमें आत्मा रूप विराजत । ब्रह्म सभी में इस हित पावत ॥ ५ ॥
मणियन बीचे सूत समाना । ओत प्रोत सब में भगवाना ॥ ६ ॥
आत्मा बीचे नाभ समाना । करें भावना मुनी प्रधाना ॥ ७ ॥
लागत अनल व बरसत नीरा । होवत अन्त व नसत अखीरा ॥ ८ ॥
आवत जावत बादल कारा । रहत अछूत तदपि नभ सारा ॥ ९ ॥
नभ दृष्टि से यह कुछ नाँही । इह पर भूतकाल के माँही ॥ १० ॥

दोहा- **नाभ रूप की सृष्टि सब, होवत नसत व अन्त ।**
आत्मा से सम्बन्ध ना, होवत कुछ नरकन्त ॥ ७४ ॥

चौ- जल शिक्षा मैंने यो पाई । स्निग्ध मधुरता शीतलताई ॥ १ ॥
दरसन स्पर्शन पावन कारी । नाम उच्चारत सब अघहारी ॥ २ ॥
त्यों साधक भी सहज सुभाऊ । स्निग्ध मधुरभाषी कहलाऊ ॥ ३ ॥
शिक्षा अनल यथा मैं पाई । वरणों वह तव प्रति नरराई ॥ ४ ॥
यथा दीप्त तेजस्वी आगी । सर्व भक्षि अपि मल नहिं त्यागी ॥ ५ ॥
कहीं स्पष्ट दीखत कहिं नाँही । साधक भी त्यों रहे सदा ही ॥ ६ ॥
कर हवि ग्रहण अनल जिमि राया । करती भस्म पाप समुदाया ॥ ७ ॥
भिक्षा रुपी हविष समाना । जारत साधक पातक नाना ॥ ८ ॥
रहती अगनि काष्ट में जैसे । आत्मा भी प्राणिन में वैसे ॥ ९ ॥
पाई शिक्षा विधु से जैसी । सुनौ नृपति मोरे मुख वैसी ॥ १० ॥

दोहा- **वृद्धि व क्षय होवत कला, रहत चन्द्र साकार ।**
जन्म मरण पर्यन्त त्यों, आत्मा में न विकार ॥ ७५ ॥

चौ- जनम मरण प्राणिन का सारा । होवत नित्य काल अनुसारा ॥ १ ॥
तदपि न दीखत अग्नि समाना । रवि शिक्षा सुनु नृप दे ध्याना ॥ २ ॥
करता ग्रहण विषय सब साधक । देवत पाछे वह प्रति याचक ॥ ३ ॥
हो नहिं लीन किन्तु उन माँही । रश्मि नीर रवि समाँ दिखाही ॥ ४ ॥
जल घट बीचे सूर्य समाना । आत्मा भी प्राणिन में नाना ॥ ५ ॥
रहत किन्तु रवि एकहि अम्बर । त्यों आत्मा भी एक अनश्वर ॥ ६ ॥
करहु काहु संग नहि अति स्नेहा । नहि आसक्ति रखहु तनु गेहा ॥ ७ ॥
होवत वृद्धि दीन यों नाना । पावत दुःख कपोत समाना ॥ ८ ॥
कोइ कपोत विपिन कृत नीड़ा । बसत कपोति संग कृत क्रीड़ा ॥ ९ ॥
बीते अब्द कई यो राया । स्नेह वृद्धि भइ नित उन काया ॥ १० ॥

दोहा- **शय्या आसन वार्ता, क्रीड़ा असन व स्नान।**
करते दोनों प्रेम से, संग संग निज स्थान ॥ ७६ ॥

चौ- जो कुछ इच्छा करत कपोती। पारावत ते पूरण होती ॥ १ ॥
जो कुछ चाह कबूतर करता। निज कपोति द्वारा वह लहता ॥ २ ॥
कुछ दिन बाद कबूतर द्वारा। गर्भ कपोति उदर निज धारा ॥ ३ ॥
पति समीप वह आवत काला। कीन्हे अंड प्रसव तत्काला ॥ ४ ॥
हरि अचिन्य शक्ति को पाकर। फूटे अंड सभी हे नृपवर ॥ ५ ॥
कोमल केश सहित उन अन्दर। निकसे कर पद युत शिशु सुन्दर ॥ ६ ॥
पुत्र वत्सली होकर दोऊ। सुन्दर कल भापण सुन सोऊ ॥ ७ ॥
पक्ष स्पर्श कर बारम्बारा। लखि शिशु चेष्ठा मुदित अपारा ॥ ८ ॥
हरि माया ते होकर मोहित। स्नेह बद्ध शिशुअन वे पालत ॥ ६ ॥
अन्न हेतु हे नृप इक बारा। गवने दम्पत्ति विपिन अपारा ॥ १० ॥

दोहा- **उसी समय लब्धक वहाँ, आया नीड़ किनार।**
उन शिशुअन को देख निज, दीन्ही जाल पसार ॥ ७७॥क
अब वे दोऊ दम्पती, अपने शिशुअन हेत।
दाना लेकर आगये,अपने तरु निकेत ॥ ७७ ॥ ख

चौ- देखे वेष्टित आत्मज जाला। होकर दुःखित भयउ विहाला ॥ १ ॥
कर अब रुदन कपोती भारी। परी जाल बिच स्वयं विचारी ॥ २ ॥
हरि माया ते सुध बुध खोकर। दुःखित होकर इधर कबूतर ॥ ३ ॥
करने लागा बहुत विलापा। निज मन व्यापा अति संतापा ॥ ४ ॥
वह कपोत यों कहने लागा। देखो मैं हूँ महा अभागा ॥ ५ ॥
भयो आज मम सर्व विनाशा। मिली धूरि में सब मम आशा ॥ ६ ॥
जग सुख से तृप्ति व भइ पूरी। रहा काम मम आस अधूरी ॥ ७ ॥
जासु गृहस्थी यदि मिट जावे। त्रिवर्ग सिद्धि सो नर ना पावे ॥ ८ ॥
हाय हाय मम प्राण पियारी। समझत इष्ट मुझे ही भारी ॥ ६ ॥
मानति एक एक मम बाता। भयो विकल अब उस बिन गाता ॥ १० ॥

दोहा- **सदा इशारे पर अरे, चलती सभी प्रकार।**
आज वही पुत्रन सहित, जावत स्वर्ग दुआर ॥ ७८ ॥

चौ- पत्नी पुत्र बिना अब मेरा। भयो जगत बिच घोर अंधेरा ॥ १ ॥
जीवन विधुर अरे यह मेरा। गुजरहिं कवन भाँति इस बेरा ॥ २ ॥

शून्य गेह बिच किसके खातिर । धरूँ देह मैं अब यह क्यों कर ॥ ३ ॥
कर कपोत यों घोर विलापा । परा जाल बिच सह संतापा ॥ ४ ॥
पा कपोत पुत्रन सह दारा । होकर लुब्धक मुदित अपारा ॥ ५ ॥
सिद्ध मनोरथ होय कसाई । गयो गेह निज सुनु नर राई ॥ ६ ॥
रहे कुटुम्ब बीच जो लीना । भरत पेट जो विषय अधीना ॥ ७ ॥
पावत दुःख कपोत समाना । निज कुटुम्ब सहित वह नाना ॥ ८ ॥
मुक्ति द्वार मानुष तनु पाई । रहता लीन जे पुत्र लुगाई ॥ ९ ॥
उच्च शिखर पर जाकर योहूँ । करता अधोपतन निज सोहू ॥ १० ॥

दोहा- **वदत विप्र अब वचन यों, पूर्व कर्म अनुसार ।**
बिन इच्छा बिन यत्न के ,पावत कष्ट अपार ॥ ७९ ॥

चौ- इन्द्रिय सुख सम्बन्धी सारे । मिलत स्वर्ग अरु नरक दुआरे ॥ १ ॥
सुख दुख मर्म के जानन हारे । करते जतन न किसी प्रकारे ॥ २ ॥
मिलहिं ग्रास मधुर रस हीना । अधिक स्वल्प जो भाग्य अधीना ॥ ३ ॥
सेवन करे उसे मति माना । कानन अजगर सर्प समाना ॥ ४ ॥
मिले न कोइ दिवस यदि ग्रासा । निर्भोजी रहि हो न उदासा ॥ ५ ॥
मन इन्द्रिय तनुबल हो तीना । रहे तदपि नहि कर्म अधीना ॥ ६ ॥
अजगर से सीखेऊँ यह ज्ञाना । सागर सीख कहूँ सुनु काना ॥ ७ ॥
रहे मुदित मुनि अति गंभीरा । दुरविगाह्य दुरत्यय धीरा ॥ ८ ॥
भाव अथाह असीम अपारा । हो ना क्षोभित किसी प्रकारा ॥ ९ ॥
स्थिरोदक जिमि सिंधु समाना । साधक मुनि का भी यहि बाना ॥ १० ॥

दोहा- **वर्षा बिच सागर विषे, सरिता करत पयान ।**
तदपि उदधि पावन नहीं , हे नृप वृद्धि हान ॥ ८० ॥

चौ- ग्रीष्म काल बिच सरित विहीना । होवत सिंदु कदापि न छीना ॥ १ ॥
भगवत लीन मुनी भी त्योंही । होत उदास मुदित ना यों ही ॥ २ ॥
इन्द्रिय अजित पुरुष लखि नारी । होवत उस पर मोहित भारी ॥ ३ ॥
करत नास काया निज राजन । पर कर घोर नरक वश पापन ॥ ४ ॥
माया रचित नार अरु कंचन । भोग बुद्धि ते लोभित राजन ॥ ५ ॥
होवत नास पतंग समाना । भ्रमर सीख अब सुनु धर ध्याना ॥ ६ ॥
अति जिमि गंध लोभ से जाकर । करत निवास कंज के अन्दर ॥ ७ ॥

संध्या समय अस्त जब दिनकर । होवत रुद्ध कंज के भीतर ॥ ८ ॥
त्यों मुनि भी गुण लोभन द्वारा । एक ठोर पर सभी प्रकारा ॥ ९ ॥

दोहा- **फँसता राजन मोहवश, निज गृह भ्रमर समान ।**
मानव भी सब शास्त्र का, काटे सार महान ॥ ८१ ॥

चौ- भिक्षित अन्न न सायं प्राता । करे न संचय साधक ताता ॥ १ ॥
केवल उदर पूर्ति हो जेता । लेवे और अधिक ना येता ॥ २ ॥
संचय करे अधिक जो कोई । नसत मक्षिका सम मुनि सोई ॥ ३ ॥
गज शिक्षा जैसी मैं पाई । वरणन करूँ तोर प्रति राई ॥ ४ ॥
युवती काष्ठ मयी भी कोई । पद से भी स्पर्शे ना सोई ॥ ५ ॥
करहि स्पर्श वह गज सम कानन । पावत हस्तिनि संगति वन्धन ॥ ६ ॥
ज्ञानी नर जो सेवत नारी । गज सम पावत बन्धन भारी ॥ ७ ॥
मधु हन्ता से शिक्षा जैसी । वरणन करूँ प्राप्त की वैसी ॥ ८ ॥
मधु माखी संचय मधु करहीं । नहि उपभोग किन्तु वह लहही ॥ ९ ॥
एक दिवस आकर मधुहर्ता । तोरहिं तरू ऊपर ते छत्ता ॥ १० ॥

दोहा- **धन लोभी नर भी तथा, कर धन संचित भारि ।**
किन्तु दान उपभोग ना, करत न किसी प्रकारि ॥ ८२॥

चौ- मैने मृग शिक्षा यह मानी । वनवासी संन्यासी ज्ञानी ॥ १ ॥
गाना विषय सुनहिं नहि काना । सुन फँस जात कुरंग समाना ॥ २ ॥
नारिन नृत्य गीत सुनु काना । होत वशी ऋषि श्रृङ्ग समाना ॥ ३ ॥
शिक्षा मीन यथा मैं पाई । जीहा रस ते मोहित राई ॥ ४ ॥
आमिष युत कंटक ते मीना । पात मृत्यु रस स्वाद अधीना ॥ ५ ॥
बुद्धिमान नर त्याग अहारा । जीतहिं इन्द्रिय सभी प्रकारा ॥ ६ ॥
बिन जीते रसना के कोई । इन्द्रिय जीत कदापि न होई ॥ ७ ॥
भोजन क्षुधा शान्त हित करही । रस जित सर्व विजित नर कहहीं ॥ ८ ॥
सीख पिंगला ते जो पाई । वहि आख्यान कहूँ मैं राई ॥ ९ ॥
मिथिला नगर बीच इक नामी । वैश्या नाम पिंगला कामी ॥ १० ॥

दोहा- **एक वार रति स्थान में, करके नरकी चाह ।**
सजधज कर संध्या समय, लगी देखने राह ॥ ८३ ॥

चौ- पथ बीचे मानव धनवन्ता । निज संभोग योग्य वर कन्ता ॥ १ ॥
इत उत आवत लखे अनेका । बढ़कर धनी एक ते एका ॥ २ ॥

लखकर उसकी चित्त दुरासा । बढने लागी हे नृप खासा ॥ ३ ॥
बहुत देर वह खड़ी दुआरे । आवत नींद न किसी प्रकारे ॥ ४ ॥
बाहर कबहुँ कबहुँ वह भीतर । आवत जावत दुःखित होकर ॥ ५ ॥
धन अभिलाशा में हे राई । अर्ध निशा उसने बितलाई ॥ ६ ॥
सचमुच बहुत बुरी धन आशा । करत कबहुँ यह प्राण विनाशा ॥ ७ ॥
धनी बाट जोहत यों राया । शुष्क वदन चित अति घबराया ॥ ८ ॥
इस वृत्ति से अब अति भारी । भयो वैराग्य महा सुखकारी ॥ ९ ॥
भयो तासु मन अभ निर्वेदा । जो सुख प्रद निज मन दुख छेदा ॥ १० ॥

दोहा- **खेद युक्त होकर वह, गाया वह जो गान ।**
मुझसे उसको तुम सुनौ, हे यदु नृप गुणवान ॥ ८४ ॥

चौ- नासत आशा पास विरागा । छेद खड्ग समा जग रागा ॥ १ ॥
गीत पिंगला गावन लागी । हाय हाय मैं महा अभागी ॥ २ ॥
देखो विस्तृत मोह हमारा । वशीभूत भइ इन्द्रिन द्वारा ॥ ३ ॥
जो मैं तुच्छ पुरुष के द्वारा । चाहत धन सह काम करारा ॥ ४ ॥
निज हिय मध्य बसत जे ईशा । भूल गई मैं उन जगदीशा ॥ ५ ॥
रमण वित्त प्रद रति प्रद सोहा । सर्व अर्थ प्रद तज वश मोहा ॥ ६ ॥
दुःख भयादिक मोह प्रदाता । शोक अकामद जो कहलाता ॥ ७ ॥
ऐसे नर को चाहन लागी । मैं अति अज्ञ व महा अभागी ॥ ८ ॥
लेकर वैश्यावृत्ति सहारा । कई वर्ष मैं कियो गुजारा ॥ ९ ॥
करके निंध वृत्ति अघकारी । वृथा देह तापित कर डारी ॥ १० ॥

दोहा- **अस्थिन ते निर्मित यह, तनु रूपी मम गेह ।**
त्वचा रोम नख ते अरे, आच्छादि जो देह ॥ ८५ ॥

चौ- देह रूप धर के नव द्वारा । विष्ठा मूत्र पूर्ण भंडारा ॥ १ ॥
लानत मुझको इस तनु ऊपर । मुझको त्याग जगत के भीतर ॥ २ ॥
ऐसो कौन अरे नर कोई । असत देह को सेवत जोई ॥ ३ ॥
इस विदेह नगर में भारी । मै ही ऐसी एक अनारी ॥ ४ ॥
तज प्रभु हिय बिच विचरन हारे । भोगे अन्य पुरुष मतवारे ॥ ५ ॥
मेरे हृदय बीच जे ईश्वर । सर्वात्मा सब प्रिय जगदीश्वर ॥ ६ ॥
इनके कर कमलों में जाकर । विक्रय करूँ देह ये नश्वर ॥ ७ ॥
करूँ निछावर इनके ऊपर । येही एक अखिल जगदीश्वर ॥ ८ ॥

इनके संग मैं रमा समाना । करूँ विहार उचित यही माना ॥ ९ ॥
मूरख चित्त वता तू मोही । विषय भोग प्रद तो तनु द्रोही ॥ १० ॥

दोहा- **वे तो सरजन हो स्वयं, स्वयं मृत्यु को पात ।**
मैं केवल अपनी नहीं, कहुँ न नरन की बात ॥ ८६ ॥

चौ- विवुध वृन्द भी भोगन द्वारा । कर न सकें प्रिय निज निज दारा ॥ १ ॥
भटकत वे भी विषयन राहा । कालमार्ग में करत कराहा ॥ २ ॥
क़ीन्हों प्रथम कर्म मैं कैसो । उदित भाग्य जो हो गयो ऐसो ॥ ३ ॥
कीन्ही कृपा विष्णु जो ऐसी । भई विरक्त आज मुझ जैसी ॥ ४ ॥
जो यह भयो सुखद निर्वेदा । विगत भयऊ तन का सब खेदा ॥ ५ ॥
मंदभागिनी यदि मैं होती । तो निज पाप आज ना धोती ॥ ६ ॥
मनुज विराग युक्त सब क्लेशन । नासत गेहादिक के बन्धन ॥ ७ ॥
विषय त्याग ही शान्ति प्रदाता । विषय हीन कबहुँ न दुःख पाता ॥ ८ ॥
अब मैं प्रभु का यह उपकारा । सीस नवाय करूँ स्वीकारा ॥ ९ ॥
विषय दुराश त्याग अब सारी । शरण गहूँ उन भव भय हारी ॥ १० ॥

दोहा- **अब जो कुछ मिलहीं मुझे, निज किस्मत अनुसार ।**
श्रृद्धा सह संतोष धरि, करती रहूँ गुजार ॥ ८७ ॥

चौ- अब मैं अन्य पुरुष की राहा । देखूँ कवन भाँति भी नाहा ॥ १ ॥
तजकर सभी लालसा जग की । करूँ वन्दना उन हरि पग की ॥ २ ॥
इस संसार कूप में सारे । परे हुए सब जीव विचारे ॥ ३ ॥
विषयन में हो नयन विहीना । कालरूप अहि मुख आधीना ॥ ४ ॥
दीखत विष्णु विना ना कोई । अब इसका रक्षक ना होई ॥ ५ ॥
होत जीव जब विषय विहीना । होवत तासु दुरित तब छीना ॥ ६ ॥
ऐसा निश्चय कर वह मन में । त्यागी सर्व दुराशा छिन में ॥ ७ ॥
पाछे निज शय्या के ऊपर । कीन्हा शयन पिंगला सुखभर ॥ ८ ॥
सबसे बड़ा दुःख ही आशा । सुख प्रद होवत एक निराशा ॥ ९ ॥
कथा पिंगला की मैं गाई । आगे सुनौ अरे यदुराई ॥ १० ॥

दोहा- **मानव को जो वस्तुएँ, लागत प्रिय अपार ।**
उनको संचय करन हित, मिलता कष्ट कराल ॥ ८८ ॥

चौ- रहत अकिञ्चन भाव नृपाला । बुद्धिमान मानव सब काला ॥ १ ॥
मन से भी नहीं करे परिग्रह । पावत परम विष्णुपद नर वह ॥ २ ॥

शिक्षा कुरर पक्षि से जैसी । मिली मुझे वरणूँ सब वैसी ॥ ३ ॥
आमिष खंड कुरर खग लेकर । देखा अन्य पक्षि गण नभ पर ॥ ४ ॥
घेरा सबने आकर तेहू । मारन लगे चोंच निज येहू ॥ ५ ॥
माँस खंड जब उसने त्यागा । मिला तदा सुख भय सब भागा ॥ ६ ॥
परिग्रह ही सब दुःख नसावे । परिग्रह हीन मनुज सुख पावे ॥ ७ ॥
मान निरादर का कुछ नाँहीं । होवत ध्यान न मुझे कदाही ॥ ८ ॥
यह शिक्षा बालक से पाई । विचरूँ बाल समाँ मैं राई ॥ ९ ॥
चिन्ता हीन सुखी जग दोई । अज्ञ गुणज्ञ प्राप्त प्रभु सोई ॥ १० ॥

दोहा- **लीन्ही सीख कुमारि ते, उसको सुनौ नृपाल ।**
आये कन्या वरण हित, कुछ मानव जिस काल ॥ ८९॥

चौ- गवने मात पिता दोउ बाहर । आवत देख पाहुने घर पर ॥ १ ॥
कीन्ह स्वयं अतिथि सन्माना । भोजन हेतु किन्तु नहि दाना ॥ २ ॥
जा एकान्त बीच तब कन्या । लगी कूटने धान्य अधन्या ॥ ३ ॥
बजने लगी चूड़ियाँ उसकी । बड़ी जोर से दोनो कर की ॥ ४ ॥
निन्दित समझ उन्हें वह निजमन । एक एक कर लगी उतारन ॥ ५ ॥
तदपि न शब्द मिटा उन चूरिन । खोली एक एक तब गिन गिन ॥ ६ ॥
रह गइ एक एक जब चूरी । लगी कूटने धान जरूरी ॥ ७ ॥
भयो शब्द अब कुछ भी न तेहू । शुभ शिक्षा लीन्हीं मैं येहू ॥ ८ ॥
करत वास जँह नर अधिकाई । होत वहाँ पर अवशि लराई ॥ ९ ॥
दो का भी संग नीक न राई । होत वहाँ भी कबहुँ लराई ॥ १० ॥

दोहा- **कन्या कंकण के समाँ, मैं भी रहूँ अकेल ।**
जिससे जीवन में नहीं, होवत धक्का पेल ॥ ९० ॥

चौ- शरकर्त्ता से सीखेउँ ज्ञाना । मुनि जीते आसन अरु प्राना ॥ १ ॥
मन को वश में करके राई । एकहिं लक्ष्य करे स्थिर ताई ॥ २ ॥
इस प्रकार जब योगी करहीं । निश्चय कर्म वासना नसहीं ॥ ३ ॥
योगीसत्व गुणन के द्वारा । नासे रजतम भली प्रकारा ॥ ४ ॥
होवत शान्त तदा मन वैसे । इंधन बिना अनल हो जैसे ॥ ५ ॥
जब मन स्थिर हो जावत राई । बहि अन्तर नर नहीं लखाई ॥ ६ ॥
एक बार इक आशुगकारा । दत्त चित्त शर रचन प्रकारा ॥ ७ ॥
निज समीप आगत नृप सेना । देखी उसने नहिं निज नैना ॥ ८ ॥
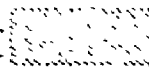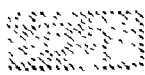
मुनि भी राजन सर्प समाना । रहें कदापि न एकहिं स्थाना ॥ ९ ॥
त्यागे संगति मानव नाना । कबहुँ प्रमाद न देवहिं स्थाना ॥ १० ॥

दोहा- **गेहादिक से भी रहे, योगी सदा विहीन ।**
रहे अलक्षित सर्वदा, काहुन मदद अधीन ॥ ६१ ॥

चौ- अल्पभाषि नहि गेह बनावे । गिरिकंदर आवास रचावे ॥ १ ॥
गृहारंभ दुःख कारण कहहीं । यहि ते अहि पर कृत गृह बसहीं ॥ २ ॥
गृहारंभ पर सर्प समाना । दीन्हा मैंने भी नहिं ध्याना ॥ ३ ॥
ऊर्णनाभि ते शिक्षा पाई । करूँ कथन उसका मैं राई ॥ ४ ॥
पूर्व कल्प विच बिना सहायक । निज माया ते वे जगनायक ॥ ५ ॥
आवत यदा कल्प कर अन्ता । रचे हुए जग को भगवन्ता ॥ ६ ॥
कालशक्ति से नशकर येहू । करत लीन पाछे निज देहू ॥ ७ ॥
रहते एक वही अवशेषा । केवल वही प्रकृति पुरुषेशा ॥ ८ ॥
केवल वहि प्रभु मोक्ष स्वरूपा । रहते परमानन्द अनूपा ॥ ९ ॥
सब उपाधि ते वे अलगाई । रहत सर्वदा हे नरराई ॥ १० ॥

दोहा- **कालशक्ति द्वारा नही, निज माया अनुसार ।**
महतत्व रचकर पुनि, रचते यह संसार ॥ ६२ ॥

चौ- ताने वाने के सम सारा । ओत प्रोत जिसमें संसारा ॥ १ ॥
जन्म मृत्यु के चक्कर माँही । परता नृप वर जीव सदाही ॥ २ ॥
ऊर्णनाभ जिमि निज मुख द्वारा । करती जाला का विस्तारा ॥ ३ ॥
करके उसमें बाद विहारा । निगलत पाछे मुख में तारा ॥ ४ ॥
मकरी ईश्वर एक समाना । करते दोउ क्रीड़ा यों नाना ॥ ५ ॥
भृङ्गी ते शिक्षा जो पाई । वह भी श्रवण करो नरराई ॥ ६ ॥
भृङ्गी नाम कीट गहि कीरा । करत रुद्ध बिल बीच अखीरा ॥ ७ ॥
भयवश करत चित्तवन तासू । हो तद्रूप देह निज आसू ॥ ८ ॥
स्नेह द्वेष करके त्यो प्रानी । जान अजान बनत यदि ध्यानी ॥ ९ ॥
पावत वह उस वस्तु स्वरूपा । त्यों मानव भी हे यदुभूपा ॥ १० ॥

दोहा- **मन ते तज कर वस्तु सब, करे सदा हरि ध्यान ।**
इन गुरुअन ते सीख यों, लीन्ही परम महान ॥ ६३ ॥

चौ- यह तन भी मेरा गुरु एका । यहि ते होत विरक्ति विवेका ॥ १ ॥
जन्म मरण तो जग के अन्दर । सदा देह का होवत नृपवर ॥ २ ॥

इस तन की स्थिति का फल येहू। दुख पर दुख भोगहिं नर तेहू ॥ ३ ॥
यद्यपि तन ते तत्व विचारा। मिलत मदद वर भली प्रकारा ॥ ४ ॥
समझूँ तदपि इसे नहि मेरा। निश्चय करूँ यही हर वेरा ॥ ५ ॥
एक दिवस यहिं श्वान सियारा। दीखत नाँहि बचावन हारा ॥ ६ ॥
यही हेतु मैं होय असंगा। विचरूँ भू पर मन रख चंगा ॥ ७ ॥
जीव देह का है प्रियकारी। करत कामना कर्म अपारी ॥ ८ ॥
तुरत मतंग द्रव्य सुत दारा। भ्रात मित्र नौकर घर द्वारा ॥ ९ ॥
इनके पालन पोषण माँही। दत्त चित्त हों मनुज सदा ही ॥ १० ॥

दोहा- **करता धन एकत्र यह, सह कर कष्ट अपार।**
मरे बाद सारा यहाँ, धरा रहे परिवार ॥ ६४ ॥

चौ- निज निज विषयन के प्रतिराया। करसत तन इन्द्रिय समुदाया ॥ १ ॥
बहु सौतन मिल गृहपति जैसे। निज समीप खेंचत वे ऐसे ॥ २ ॥
निज अचिन्त्य शक्ति के द्वारा। रचे विष्णु ने जीव अपारा ॥ ३ ॥
नहि संतोष किन्तु उन भयऊ। तब सरजन मानव का कियऊ ॥ ४ ॥
सरजन कर हरि मनुज शरीरा। भये मुदित वे हे यदुवीरा ॥ ५ ॥
सबसे मानव अति मति मत्ता। जानत ब्रह्म स्वरूप अनन्ता ॥ ६ ॥
यह शरीर नश्वर सब भाँती। लगी मौत संग इस दिन राती ॥ ७ ॥
भोगे जनम अनेकनि पाछे। पाकर दुर्लभ नर तनु आछे ॥ ८ ॥
जब लगि मौत सीस ना आवे। मोक्ष साधना प्रथम रचावे ॥ ९ ॥
विषयन हेतु न करे उपाऊ। पावत विषय जहाँ पर जाऊ ॥ १० ॥

दोहा- **विषयन का संग्रह सदा, देवत दुःख अपार।**
विषयन में इस देह को, खोउ न किसी प्रकार ॥ ६५ ॥

चौ- यहि सब सोच विचार नृपाला। भयो मुझे निर्वेद विशाला ॥ १ ॥
मम हिय बीचे ज्ञान विग्याना। जग मगात ज्योती वर नाना ॥ २ ॥
नहिं आशक्ति घमंड न मोही। विचरूँ निर्भय महि पर यों ही ॥ ३ ॥
गुरु से होत न केवल बोधा। निज बुद्धि से भी कुछ सोधा ॥ ४ ॥
एक ब्रह्म का कई प्रकारा। कीन्हा गायन ऋषियन द्वारा ॥ ५ ॥
यदि तुम करो स्वयं ना निर्णय। ब्रह्म स्वरूप करो ना निश्चय ॥ ६ ॥
सुन अवधूत दत्त उपदेशा। कीन्ही उन पूजन यदू नरेशा ॥ ७ ॥
ले अनुमति नृप की अवधूता। गये मुदित अब दत्त पुनीता ॥ ८ ॥

हम सब के पूर्वज यदुराजा । सुन अवधूत वचन तजि काजा ॥ ९ ॥
सब आशक्तिन से छुटकारा । पा समदर्शी भये अपारा ॥ १० ॥

दोहा- **सब आशक्तिन त्याग कर, तुम भी भली प्रकार ।**
समदर्शी हो जाऊ अब, यही जगत में सार ॥ ९६ ॥

चौ- बोले कृष्ण चन्द्र भगवाना । करें भक्त मम शरण पयाना ॥ १ ॥
मम उपदिष्ट धरम को भाई । सेवन करें सहित चतुराई ॥ २ ॥
निज वर्णाश्रम के अनुसारा । पालहिं कुल के सब आचारा ॥ ३ ॥
विषयी विषय बीच हो लीना । हो वह फल विपरीत अधीना ॥ ४ ॥
सुपन बीच ज्यों सभी मनोरथ । जागत निष्फल होय यथारथ ॥ ५ ॥
भेद बुद्धि जो इन्द्रिन द्वारा । होवत निष्फल इसी प्रकारा ॥ ६ ॥
जो मानव मम शरण गहावे । नित्य काम निष्काम रचावे ॥ ७ ॥
उन कर्मों को बिल्कुल त्यागे । जो सकाम आवहिं निज आगे ॥ ८ ॥
आत्म ज्ञान की रुचि जब जागे । विधि विधान कर्म भी त्यागे ॥ ९ ॥
हिंसाहीन यमों का सेवन । करहिं सशक्ति नियम का पालन ॥ १० ॥

दोहा- **यम नियमन से प्रेम तज, मम स्वरूप गुरुदेव ।**
दत्त चित्त होकर सदा, करे उन्हीं की सेव ॥ ९७ ॥

चौ- मान रहित हो दृढ़ गुरु ऊपर । रहे सर्वदा आलस तजकर ॥ १ ॥
करहिं न शिष्य कबहुँ अभिमाना । बोले वचन सदा परमाना ॥ २ ॥
परमारथ में राखहु ज्ञाना । गुण अवगुण पर दे नहिं ध्याना ॥ ३ ॥
जो जिज्ञासु जन कहलावे । आत्मा परम द्रव्य उस गावे ॥ ४ ॥
गेह व देह द्रव्य सुत नारी । आत्मा सब विच एक पुकारी ॥ ५ ॥
उदासीनता राखहिं इन में । ममता मोह रखे ना मन में ॥ ६ ॥
रहती सब में एक समाना । आत्मा कवन सुनो धर ध्याना ॥ ७ ॥
विषय बीच इस येन प्रकारा । हे उद्धव तुम करो विचारा ॥ ८ ॥
दाहक और प्रकाशक जैसे । रहती काष्ठ भिन्न विति जैसे ॥ ९ ॥
आत्मा इस तन ते अलगाई । जडवत स्थूल सूक्ष्म तन भाई ॥ १० ॥

दोहा- **रचती माया देह को, निज गुण के अनुसार ।**
उसी देह से जीव का, बसता सब संसार ॥ ९८ ॥

चौ- जीव देह से भिन्न पुकारा । इस पर ही तुम करो विचारा ॥ १ ॥
आत्मा देह बीच जो गाई । कर पहिचान तासु तुम भाई ॥ २ ॥

सत्य बुद्धि देहादिक माँही । राखो कवन भाँति भी गहीं ॥ ३ ॥
अधर अरणि उद्धव गुरु गाया । उत्तर अरणि शिष्य बतलाया ॥ ४ ॥
दोउ बिच मन्थन काष्ठ समाना । गुरु उपदेश सभी ने माना ॥ ५ ॥
विद्या तो उस अग्नि समाना । नासत विद्या माया नाना ॥ ६ ॥
काष्ठ हीन वैश्वानर जैसे । होत शमन माया भी वैसे ॥ ७ ॥
ऐसी विद्या ही के द्वारा । होवत आत्मा मुदित अपारा ॥ ८ ॥
स्वयं प्रकाश व ज्ञान स्वरूपा । यह आत्मा ही एक अनूपा ॥ ९ ॥
आत्मा के अतिरिक्त दिखावे । सब अनित्य माया मय गावे ॥ १० ॥

दोहा- **कर्त्ता भोक्ता धर्म तो, इस शरीर का जान ।**
सब प्राणिन के जन्म तो, होत काल परमान ॥ ९९ ॥

चौ- सुख अरु दुख के भोगनहारा । निज करमन का करने वारा ॥ १ ॥
नर स्वतंत्रता कबहुँ न पावे । निज पर अरथ नहीं मन लावे ॥ २ ॥
ज्ञानी जन को भी सुख नाँही । मूढ मनुज को दुख न सताही ॥ ३ ॥
कर्म कुशल हो हम सुख पावे । यह घमंड वृथा मन लावे ॥ ४ ॥
करहिं न साधन दुख नसावन । सुख प्राप्ति का करे न साधन ॥ ५ ॥
ऐसो नर भी कबहुँ न भाई । मृत्यु उपाय कबहुँ न पाई ॥ ६ ॥
मृत्यु सीस पर नाचत येहू । सब साहित्य वृथा ही तेहू ॥ ७ ॥
नीयमान वध्यहि वध स्थाना । होन सुखद संचित धन नाना ॥ ८ ॥
कहत कोय परलोक तजाई । मिलहिं यहाँ सुख वहँ नहिं पाई ॥ ९ ॥
पर लौकिक सुख भी सुनु भ्राता । इह लौकिक सम नष्ट कहाता ॥ १० ॥

दोहा- **पुण्य क्षीण होवत यदा, हो वहँ के सुख नष्ट ।**
नास करहि सब विघ्न को, धर्म जगत के कष्ट ॥१०० ॥

चौ- करहिं विजय धरम ते स्थाना । सुनौ उसे उद्धव गुणवाना ॥ १ ॥
याज्ञिक इह भव यज्ञ रचावे । कर सुर पूजन स्वर्ग सिधावे ॥ २ ॥
भोगहिं दिव्य भोग वहँ सारे । मिलहिं विमान पुण्य के द्वारे ॥ ३ ॥
वह उस पर होकर असवारा । सुर नारिन संग करे विहारा ॥ ४ ॥
करे गान गंधर्व अपारा । विचरत कामग यान सवारा ॥ ५ ॥
सुर उपवन में नारिन द्वारा । करता क्रीड़ा विविध प्रकारा ॥ ६ ॥
वह येता वेसुध हो जाता । आत्म पात को जान न पाता ॥ ७ ॥
जब लगि पुण्य रहत उस संगा । तब लगि सुरपुर करे प्रसंगा ॥ ८ ॥

पुण्य क्षीण हो जावत जवहीं । होवत अधोपतन झट तवहीं ॥ ६ ॥
हो यदि पुरुष धरम ते हीना । लोभी कृपण वे काम अधीना ॥ १० ॥

दोहा- **इन्द्रियन के होय वश, चले चाल मनमानि ।**
भूत विहिसक नारवश, सो नर पशू समान ॥ १०१ ॥

चौ- विधि विरुद्ध पशुअन वलि देहीं । प्रेत व भूत गणादि सेहीं ॥ १ ॥
नरक वीच जाकर वह आता । योनि स्थावरी वहँ पर पाता ॥ २ ॥
जेते करम सकाम अकामा । जानो तेहि सदा दुख धामा ॥ ३ ॥
अहंकार ममता जे रखहीं । जन्म मृत्यु चक्कर में फँसहीं ॥ ४ ॥
स्वारथ परमारथ से हीना । भटकत वह अज्ञान अधीना ॥ ५ ॥
रत्ती सुख मिलहीं नहि तेहू । त्यागो मनुज वात तो येहू ॥ ६ ॥
लोक व लोकपाल भी सारे । कालग्रास में फँसे विचारे ॥ ७ ॥
दोयपरार्ध आयु जिन भ्राता । सो विधि भी मुझसे घवराता ॥ ८ ॥
करते इन्द्रियन को गुण प्रेरित । करत इन्द्रियाँ कर्म अवोधित ॥ ६ ॥
मोह अधीन जीव जव होहीं । निजस्वरूप समझत उन त्योहीं ॥ १० ॥

दोहा- **जव लगि गुण की विषमता, ममपन का अभिमान ।**
सुख दुःख जो फल कर्म के, भोगत जग दरम्यान ॥१०२॥

चौ- जव लगि आत्महिं एक न जाने । जो आतमा को वहुतर माने ॥ १ ॥
तव लगि काल व कर्म सहारे । रहना पड़ता उद्धव प्यारे ॥ २ ॥
परवश होत जीव यों जव लों । मानत ईश्वर का भय तव लों ॥ ३ ॥
जो कर्मों का सेवन करते । शोक मोह से कवहुँ न छुटते ॥ ४ ॥
सत्य वात जो उद्धव ये ही । मम अतिरिक्त वस्तु तज देही ॥ ५ ॥
जड़ता वश होवत अभिमाना । माया मध्य क्षोभ हो नाना ॥ ६ ॥
सच्ची आत्मा तो सुनुभाई । मैं ही एक नहीं अलगाई ॥ ७ ॥
वोले उद्धव करुणासींवा । देहज गुण वीचे यह जीवा ॥ ८ ॥
रहता किन्तु गुणन के माँही । फिर भीगुण में वँधता नाँही ॥ ६ ॥
कोई कहे यह नाभ समाना । है अनन्त अरु वेपरमाना ॥ १० ॥

दोहा- **यह गुण सीमा से परे, वाँध सकत ना कोय ।**
तो फिर वन्धन जीव का, किस प्रकार से होय ॥ १०३॥

चौ- मुक्तहोय जो इन गुण द्वारा । कवन भाँति वह करत गुजारा ॥ १ ॥
वद्ध मुक्त किन लक्षण द्वारा । जान सकूँ मैं कवन प्रकारा ॥ २ ॥

इन प्रश्नों का उत्तर सारा । वरणों मो प्रति जगकरतारा ॥ ३ ॥
यह भ्रम मुझको होता भारी । जब आत्मा तुम एक पुकारी ॥ ४ ॥
गुण संग इसका सदा लगाऊ । नित्य बद्ध तब क्यों ना गाऊ ॥ ५ ॥
ज्ञानी जन निज अनुभव द्वारा । करें मुक्त यदि यहिं स्वीकारा ॥ ६ ॥
तब तो यह अनित्य बन जावे । नित्य मुक्त यहि कारण गावे ॥ ७ ॥
आत्मा एक जबै यह गाई । बद्ध मुक्त तब क्यों कहलाई ॥ ८ ॥
बोले अब श्रीपति भगवन्ता । मम वच सुन उद्धव गुणवन्ता ॥ ९ ॥
आत्मा बद्ध मुक्त नहि भाई । बद्ध मोक्ष व्याख्या जो गाई ॥ १० ॥

दोहा- **परमदृष्टि से है नहीं, केवल गुण अनुसार ।**
गुण सत्ता मायामयी, अनृत यह संसार ॥ १०४ ॥

चौ- इस हित मुझ आत्मा के भीतर । बन्धन मोक्ष प्रश्न ना यदुवर ॥ १ ॥
देखत जीव सुपन में भाई । स्थूल वस्तु सब सभी नसाई ॥ २ ॥
तब तो केवल मन के अन्दर । होवत मान यहाँ सब नश्वर ॥ ३ ॥
शोक मोह सुख दुख यह त्योहीं । मम माया ते अनृत होई ॥ ४ ॥
वास्तव में इसकी ना कोई । सत्ता नहीं सत्य यह होई ॥ ५ ॥
मुक्ति मार्ग अनुभव करवाती । आत्म ज्ञान विद्या कहलाती ॥ ६ ॥
बन्धन का अनुभव करवाली । वही अविद्या तो कहलाती ॥ ७ ॥
ये दोउ महाशक्ति मम गाई । जो माया ते करी रचाई ॥ ८ ॥
इनकी न कोय यथारथ सत्ता । तुम तो बुद्धिमान् गुणवन्ता ॥ ९ ॥
एकहि अंश जीव मम गाया । आत्म ज्ञान युत मुक्त कहाया ॥ १० ॥

दोहा- **आत्म ज्ञान बिन जीव यह, रहता बद्ध महान ।**
बद्ध मुक्त दोनों सदा, मम स्वरूप तुम जान ॥ १०५ ॥

चौ- बद्ध मुक्त के लक्षण सारे । वरणन करू सुनो तुम प्यारे ॥ १ ॥
तन रूपी इस तरु के ऊपर । कीन्हा नीड पक्षि दोउ मिलकर ॥ २ ॥
जीव और ईश्वर जिन नामा । करत निवास दोउ इक ठामा ॥ ३ ॥
दोउ चेतन दोउ मित्र कहाये । जो नहिं कभी बिछुडने पाये ॥ ४ ॥
जीव कर्मफल भोगन हारा । अन्य ईश इन सबते न्यारा ॥ ५ ॥
ईश्वर राखत ज्ञान अपारा । आत्मा अरु जानत संसारा ॥ ६ ॥
भोक्ता जीव नही कुछ जाने । निज पर रूप नहीं पहचाने ॥ ७ ॥
जीव अविद्या युक्त कहाया । नित्य बद्ध यहि कारण गाया ॥ ८ ॥

ईश्वर विद्या युक्त अपारा । नित्य मुक्त इस हेतु पुकारा ॥ ९ ॥
ज्ञान युक्त मानव भी भाई । जग बीचे भी मुक्त कहाई ॥ १० ॥

दोहा- **रहत न जागृत में यथा, सुपन वस्तु सम्बन्ध ।**
त्यों ज्ञानी जन भी सदा, तोरत जग अनुबन्ध ॥ १०६॥

चौ- नहि सम्पर्क देह से कोई । तदपि बद्ध तन में स्थित होई ॥ १ ॥
लखकर जैसे मानव सपना । बाँधत तन स्वाप्निक विच अपना ॥ २ ॥
करती ग्रहण इन्द्रियाँ विषयन । गुण ही गुण का करते सरजन ॥ ३ ॥
गुण अरु विषय जगत के माँही । करती ग्रहण आत्मा नाहीं ॥ ४ ॥
विषयन ग्रहण त्याग में भाई । मुक्त मनुज अभिमान न लाई ॥ ५ ॥
यह तन तो प्रारब्ध अधीना । गुण ही करते करमन रचना ॥ ६ ॥
अज्ञानी जन निज को कर्ता । समझत यहि कारण वह बँधता ॥ ७ ॥
मुक्त पुरुष के लक्षण सारे । वरणों मैं सब उद्धव प्यारे ॥ ८ ॥
ज्ञानी जन सब विषय विहीना । रहता कबहुँ न कर्म अधीना ॥ ९ ॥
आसन शयन स्नान अरु दर्शन । भोजन घ्राण व स्पर्शन भोजन ॥ १० ॥

दोहा- **ज्ञानी मानत स्वयं को, इनका कर्ता नाँहि ।**
कर्ता भोक्ता गुणन को, समझत वह मन माँही ॥१०७॥

चौ- कर्म वासना फल के माँही । यह सब सोच बँधत वह नाँही ॥१॥
रहत असंग सर्वदा ज्ञानी । यथा वात सविता नभ पानी ॥२॥
यों वैराग्य ज्ञान के द्वारा । काटत सब संशय संसारा ॥३॥
देहादिक के ढोंग तजाई । स्वप्न प्रबुद्ध मनुज की नाँई ॥४॥
प्राणादिक वृत्ति निज गाता । हो संकल्प हीन उस भ्राता ॥५॥
निज देहस्थ होत भी भाई । वह गुण मुक्त सुखी कहलाई ॥६॥
दुर्जन द्वारा पीड़ित देहा । सज्जन ते अर्चित करि स्नेहा ॥७॥
तदपि विकार नहीं मन लावे । वहि ज्ञानी पंडित कहलावे ॥८॥
साधु असाधु करत जो बाता । उनकी निन्दा स्तुति नहि गाता ॥९॥
नहि वह काहु की सुनकर बाता । करत न तासु प्रशंसा ताता ॥१०॥

दोहा **करत न जीवन मुक्त नर, भला बुरा कुछ काम ।**
रहकर आत्मा नन्द में, मग्न करत विश्राम ॥ १०८ ॥

चौ- समवृत्ति रखकर सुनु भाई। जड़वत विचरत मूरख नाँई ॥१॥
वेद ब्रह्म में निपुण कहावे । परम ब्रह्म में निपुण न पावे ॥ २ ॥

व्यर्थ होय उसका श्रम भाई । बिन पय की गौपालक नाँई ॥ ३॥
कुलटा तिय गौ दुग्ध अदाता । पराधीन तन व्यर्थ ही जाता ॥४॥
असत पात्र प्रति दान प्रदाता । दुष्ट सुवन कुल दाग लगाता ॥ ५॥
वाणी कृष्ण नाम ते हीना । रहता जो नर इन अधीना ॥ ६ ॥
पावत दुख पर दुख वह नाना । कभी सुखी उसके नहिं माना ॥ ७ ॥
मोरे जनम करम जो वानी । गावत नहिं वह व्यर्थ बखानी ॥ ८ ॥
ऐसी वाणी नहीं उचारे । निज कानन में भी ना डारे ॥ ९ ॥
यों विचार कर निज मन माँही । देहादिक अभिमान तजाहिं ॥ १० ॥

दोहा— **पूर्ण ब्रह्म मुझ अन्दर, निज निरमल मन धार ।**
हो जाते उपराम सब, संसारी व्यवहार ॥ १०९ ॥

चौ— जब लगि ब्रह्म बीच स्थिर भजना । अरपित करो काज मोहिं अपना ॥१॥
सब लोकन को पावन कारी । सुने प्रेमयुत कथा हमारी ॥ २॥
मोरे जनम करम का गायन । सुमिरे अभिनय करे सुहावन ॥ ३॥
मम आश्रित करके विश्रामा । धर्म अर्थ सेवहि अरु कामा ॥ ४॥
मिले भक्ति स्थिर उसे हमारी । मोरा पद पावत सुखकारी ॥ ५ ॥
मिले भक्ति जब हो सत्संगा । बिन सतसंग हो न मन चंगा ॥ ६ ॥
सन्तन के उपदेशन द्वारा । पालहिं सहज स्वरूप हमारा ॥ ७ ॥
बोले उद्धव हे भगवन्ता । करो कथन लक्षण शुभ सन्ता ॥ ८ ॥
करे कौनसी भक्ति तुम्हारी । वरणों वह मोसे बनवारी ॥ ९ ॥
हे लोकेश जगत के स्वामी । प्रणत पाल अनुरक्त अकामी ॥ १० ॥

दोहा— **व्योम पुरूष परब्रह्म तुम, प्रकृति परे भगवान ।**
निज इच्छा निरमित चरित, तुम से भिन्न न आन ॥११०॥

चौ— भक्त व भक्ति रहस्य बताउ । बोले कृष्ण भ्रात बलदाउ ॥ १॥
साधुन के लक्षण सुनु भाई । कृपा मूर्ति मम भक्त कहाई ॥ २ ॥
अकृत द्रोह तितिक्षु अपारा । सब जीवन पर कृत उपकारा ॥३ ॥
सत्य सार समदर्शी दीना । संग्रह परिग्रह के न अधीना ॥ ४॥
शुचि मृदु शान्त सुबुद्धि अनीहा । मितभोजी स्थिर शान्त निरीहा ॥ ५॥
मानद कल्प व मैत्र अमानी । जित षड़ गुण कवि करूणाखानी ॥ ६ ॥
गुण अवगुण के नहीं अधीना । रहता भक्त भजन में लीना ॥ ७ ॥
परम सन्त उद्धव वह गाया । करत भजन देकर दुख काया ॥ ८ ॥

दे नहि जग वस्तुन पर ध्याना । मैंने परम सन्त वहि माना ॥ ६ ॥
लच्छन भक्ति सुनौ अव भाई । नवधा भक्ति हमारी गाई ॥ १० ॥

दोहा— **जनम करम मम गुणन का, करे सदा ही गान ।**
मूरति मम मम भक्त का, रखे सर्वदा मान ॥ १११॥

चौ— सेवा पूजन स्पर्शन दरसन । स्तुति वन्दन गुण कर्मन कीर्तन ॥ १ ॥
कथा श्रवण में ध्यान अपारा । करे निरन्तर ध्यान तुम्हारा ॥ २ ॥
दास भाव से आत्म निवेदन । जो कुछ मिले करे मोहि अरपन ॥ ३ ॥
जन्म पर्व आनन्द मनावे । नृत्य गान वाजे वजवावे ॥ ४॥
मन्दिर में उत्सव करवावे । वार्षिक सब त्यौहार मनावे ॥ ५ ॥
पुष्पादिक मोंहि करें समर्पण । करे प्रेम से मम व्रत धारण ॥ ६ ॥
करे दासवत मंदिर सेवन । वैदिक तांत्रिक विधि ते पूजन ॥ ७ ॥
वाग वाटिका कर निरमाना । करे समर्पण मोरे स्थाना ॥ ८ ॥
सेवा का करहु न अभिमाना । कवहुँ न दंभ अरे मन लाना ॥ ६ ॥
अरपण करे वस्तु जो मोंहि । ले नहि कम सन्त निज सोहीं ॥ १० ॥

दोहा— **भानु अग्नि ब्राह्मण नभ, गौ जल वैष्णव वात ।**
भू आत्मा प्राणिन विषै, पूजन पद मम भ्रात ॥ ११२ ॥

चौ— त्रयि विद्या ते पूजहिं भानू । हवि करि पूजे मोहि कृशानू ॥१॥
द्विज में कर अतिथि सत्कारा । गैया बीच तृणादिक द्वारा ॥ २ ॥
वैष्णव बीचें बन्धु समाना । पूजे हृदय नाभ करि ध्याना ॥ ३ ॥
प्राण दृष्टि ते पूजहिं वाता । तर्पणादि करि जल विच ताता ॥ ४ ॥
भूमि बीच मंत्रन के द्वारा । देह बीच करि भोग अपारा ॥ ५ ॥
सब प्राणिन में राखहिं समता । पूजहिं यों मोहि जगत विधाता ॥ ६ ॥
शंख व चक्र गदाम्बुज धारे । मूरति शान्त चतुभुर्ज वारे ॥ ७ ॥
पूजहिं मम स्वरूप इन स्थाना । एक चित्त हो राखहिं ध्याना ॥ ८ ॥
कूप वापिका रचने वारा । पूजहिं पूत कर्म के द्वारा ॥ ६ ॥
मिलहिं भक्ति पद तेहि हमारा । बिना भक्ति सत्संगति द्वारा ॥ १० ॥

दोहा **जग से तरने का नहीं, उद्धव अन्य उपाय ।**
गुप्त बात इक मैं कहूँ, सुनौ उसे चित्त लाय ॥ ११३ ॥क
तुम प्रिय सेवक सहृद हो, प्रेमी सखा हमार ॥
इसे श्रवण का है तुम्हें, सब प्रकार अधिकार ॥११३॥ख

चौ– योग व साँख्य व धर्म व त्यागा । व्रत स्वाध्याय मंत्र अरू यागा ॥ १॥
यम अरू नियम तीर्थ तप सारे । मोहिं वश करन हेत ये हारे ॥ २ ॥
मैं सत्संगति ते वश होकर । पूरूँ भक्त मनोरथ यदुवर ॥ ३ ॥
सिद्ध व चारण गृह्यक सर्वा । खग मृग यातुधान गंधर्वा ॥ ४ ॥
विद्याधर राक्षस अरु मानव । वैश्य शूद्र अन्त्यज तिय उद्धव ॥ ५ ॥
रज तम प्रकृति युक्त ये सारे । काम क्रोध में दिवस गुजारे ॥ ६ ॥
सत संगति द्वारा ये सारे । हे उद्धव मम धाम सिधारे ॥ ७ ॥
बलि प्रहलाद वृत्र वृषपर्वा । वाण विभीषण मय सुग्रीवा ॥ ८ ॥
ऋक्षप तुलाधार हनुमाना । कुब्जा गीध व्याध गुणवाना ॥ ९ ॥
गजपति वृज गोपन की नारी । यज्ञ पत्नियाँ मिलकर सारी ॥ १० ॥

दोहा– **अपर लोग भी हे सखे, कर सत्संग महान ।**
मिले आनकर ये मुझे, तज कर गर्व गुमान ॥ ११४॥

चौ नहि स्वाध्याय कीन्ह इन भाई । आगम निगम न कीन्ह पढ़ाई ॥ १ ॥
की नहि महापुरूष की सेवा । पूजे चरण नहीं भूदेवा ॥ २ ॥
व्रत अरू तप कोई नहि कीन्हा । सत्संगति केवल चित्त दीन्हा ॥ ३ ॥
मिले मुझे सत्संग प्रभाऊ । कीन्हा इन नहि अन्य उपाऊ ॥ ४ ॥
नग मृग नाग गाय वृज नारी । मूढ बुद्धि रखती जो भारी ॥ ५ ॥
योग व साँख्य व व्रत तप दाना । करे जतन यदि मानव नाना ॥ ६ ॥
तदपि न मुझे प्राप्त कर सकते । सत संगति कर मम पद गहते ॥ ७ ॥
राम सहित लेकर मोहि मथुरा । रथ चढ़ाय पहुँचे अक्रूरा ॥ ८ ॥
तेहि समै सब वृज की नारी । भई वेहाल प्रेम से भारी ॥ ९ ॥
उनकी सखे वृत्तियाँ सारी । मोरे पद पंकज में जारी ॥ १० ॥

दोहा **भयो दुख उनको अतिव, मम वियोग के माँइ ।**
मम सिवाय सुख प्रद जग, वस्तु न अन्य दिखाइ ॥११५॥

चौ एक मात्र प्रियतम मैं उनका । तजा संग सव निज परिजन का ॥ १॥
मम संग निशा रास की सारी । आधे क्षण सम उन्हें गुजारी ॥ २ ॥
मोसे हीन निशा उनसारी । कल्पित कल्प समान गुजारी ॥ ३ ॥
ऋषि मुनी यथा समाधि लगाई । गंगादिक सरिता जिमि भाई ॥ ४ ॥
सिन्धु वीच मिल खोवत नामा । खोई तथा सभी वृज वामा ॥ ५ ॥
इनमें वहुत गोपियाँ ऐसी । मम स्वरूप जानत नहि वैसी ॥ ६ ॥

पावा जार बुद्धि के द्वारा । सत्संगति कर रूप हमारा ॥ ७ ॥
उद्धव तुम श्रुति स्मृतिहिं तजाऊ। विधि निषेध सब दूर भगाऊ ॥ ८ ॥
मैं ही सब प्राणिन की आत्मा । आउ शरण तुम मुझ परमात्मा ॥ ९॥
मोरी शरण जबै तुम आऊ । निर्भय हो जग भय न पाऊ ॥ १० ॥

दोहा **उद्धव तब कहने लगे, सुनकर वचन तुम्हार ।**
मिटा हृदय संशय नहीं, मेरा जगदाधार ॥११६ ॥

चौ पालन मोंहि धरम का करना । या सब त्याग शरण तव गहना ॥ १॥
मेरा मन इस दुविधा अन्दर । लटक रहा है जगदीश्वर ॥ २ ॥
करके कृपा आप अब मोहीं । भली भाँति समझावहु सोहीं ॥ ३ ॥
बोले कृष्ण चन्द भगवाना । देते हरि जग जीवन दाना ॥ ४ ॥
चक्रादिक जो मूलाधारा । प्रकटत उसमें जगदाधारा ॥ ५ ॥
नाद स्वरूप अनाहत पहले । प्राण परा वाणी को संग ले ॥ ६ ॥
मूलाधार चक्र के भीतर । करत प्रवेश अरे जगदीश्वर ॥ ७ ॥
पाछे मणि पूरक में आकर । सूक्ष्म रूप धरते वे ईश्वर ॥ ८ ॥
आवत चक्र विशुद्ध तदन्तर । स्थित जो कंठ देश के भीतर ॥ ९ ॥
गिरा मध्यमा के वहँ रूपा । होवत व्यक्त वे ज्योति स्वरूपा ॥ १० ॥

दोहा **आकर आनन बीच पुनि, मात्रा वर्ण समेत ।**
गिरा वैखरी रूप को, ग्रहण विष्णु कर लेत ॥ ११७॥

चौ यथा अनल ना प्रकट दिखाई । ऊष्म रूप रहती पर भाई ॥१॥
करहीं काष्ठ मथन जब कोई । पवन सहायक प्रकटत सोई ॥ २ ॥
अणु कण बिच आहुति जब देहीं । रूप प्रचंड अनल कर लेहीं ॥ ३ ॥
मैं भी उसी गिरा के द्वारा । उद्धव प्रकटूँ येन प्रकारा ॥ ४ ॥
भाषण हस्त पाद गुद घ्राना । स्पर्श व रस दृष्टि व मुख काना ॥ ५ ॥
मन बुद्धयादि प्रपंचन माँहि । मम स्वरूप सब ठौर दिखाहीं ॥ ६ ॥
दे जो सबको जीवनदाना । कारण अंड यही भगवाना ॥७ ॥
आदि पुरूष यहि पूरब माँही । ये अव्यक्त अन्य कुछ नाँही ॥ ८ ॥
जाकर बीच खेत में जैसे ।धारत रूप अनेकनि वैसे ॥ ९ ॥
काल शक्ति का आश्रय लेकर । रूप अनेक धरत वे ईश्वर ॥ १० ॥

दोहा **ओत प्रोत रहता यथा, पट तन्तुन दरम्यान ।**
वैसे सारे विश्व में, ओत प्रोत भगवान ॥ ११८ ॥

चौ इस संसार वृक्ष के भाई । पाप पुण्य दो बीज कहाई ॥ १॥
मूल असंख्य वासना याकी । अंकुर तीन कहे गुण जाकी ॥ २ ॥
पंचतत्व स्कंध जस गावा । विषय पंच रस जासु कहावा ॥ ३ ॥
एकादश शाखा इस गाई । जीव ईश जहँ नीड़ बनाई ॥ ४ ॥
दोनो पक्षी करे निवासा । वात पित्त कफ त्वचा प्रकासा ॥ ५ ॥
सुख दुख फल इस दोय प्रकारा । रवि मंडल यावत विस्तारा ॥ ६ ॥
खावत दुखफल ग्राम निवासी । सुखफल खावत कानन वासी ॥ ७ ॥
मेरा रूप यथारथ एकी । गुरु मुख जानत इसे विवेकी ॥ ८ ॥
वास्तव वेद अर्थ वहि जाने । गुरु सेवा बिन ना पहचाने ॥ ९ ॥
तुम भी उद्धव इसी प्रकारा । गुरु सेवा अरू भकुति द्वारा ॥१० ॥

दोहा **ज्ञान कुठारी तीक्ष्ण से, कर घमंड सब दूर ।**
निज अखंड स्वरूप में, स्थित हो जाउ जरूर ॥ ११९॥

चौ बोले कृष्ण चन्द्र भगवाना । प्रिय उद्धव अति ज्ञान निधाना ॥१ ॥
गुण सत्वादि प्रकृति के जानो । आत्मा के गुण इन मत मानो ॥ २ ॥
रज तम हनों सत्व के द्वारा । बधो सत्वहिं सत्व प्रकारा ॥ ३ ॥
सत्व वृद्धिहो जावत भ्राता । भकती रूप धर्म तब पाता ॥ ४ ॥
सात्विक वस्तु करे जब सेवन । होवत तदा सत्व का सरजन ॥५ ॥
भकती रूप धरम में लीना । होवत तदा जीव अघ हीना ॥ ६ ॥
सत्व वृद्धि हो जिसके द्वारा । वह ही श्रेष्ठ धरम संसारा ॥ ७ ॥
नष्ट करहीं वह रज तम दोई । नष्ट तदा दोनों गुण होई ॥८॥
काल व कर्म जनम जल ध्याना । मंत्र व देश व आगम नाना ॥९॥
प्रजा शुद्धि ये दश गुण द्वारा । होवत सखे उसी अनुसारा ॥ १० ॥

दोहा **करते निंदा सन्त जन, कहो तामसी तेहि ।**
निन्दा स्तुति करते नहि, कहो राजसिक जेहि ॥१२० ॥

चौ सत्व वृद्धि हित सात्विक सेवे । उससे धरम ज्ञान पुनि होवे ॥ १॥
पाकर वेणू रगड़ सहारे । दावानल सब जंगल जारे ॥ २ ॥
स्वयं अन्त में वह बुझ जावे । त्यों शरीर भी स्वयं नसावे ॥ ३ ॥
बोले उद्धव हे भगवाना । विषय विपत्ति गेह सब जाना ॥ ४॥
तो भी खर अज अश्व समाना । सेवत विषयन को नर नाना ॥ ५ ॥
इसका कारण मोहि बताऊ । बोले कृष्ण अनुज बलदाऊ ॥ ६ ॥

मत्त पुरूष देहादिक अन्दर । अहंकार मिथ्या मति रखकर ॥ ७॥
भूलत सूक्ष्म व स्थूल शरीरा । सो ही मिथ्या भ्रान्ति अखीरा ॥ ८॥
जब मन में रज गुण आ जाता । होत विचार भ्रान्ति का ताँता ॥ ९ ॥
करता जब विषयन का चिन्तन । तब वह निज दुर्मति के कारन ॥ १० ॥

दोहा **कामदेव के जाल में फँस जावत इस तोर ।**
जासु निवृत्ति हो नही, पावत दुःख तब घोर ॥ १२१ ॥

चौ कामदेव के वश अज्ञानी । करता कर्म बहुत मनमानी ॥ १॥
इन्द्रिय वश होकर भी भ्राता । जानत कर्म अन्त दुख दाता ॥२॥
करता कर्म तदपि नर सोई । वशीभूत मन तासु न होई ॥ ३ ॥
रजगुण के होकर आधीना । करत करम वह सदा नवीना ॥ ४॥
निज ऊपर कोइ न वश चलता । रज तम ते अति मोहित रहता ॥ ५ ॥
ज्ञानी जन का भी सुन भाई । कबहूँ चित्त मत हो जाई ॥ ६ ॥
तदपि विवेकी मन को रोकत । विषयन में आसक्ति होवत ॥७ ॥
मन निरोध ते अति सुख पावे । निज आलस को दूर भगावे ॥८ ॥
जीते आसन जीते श्वासा । राखे मुझ पर अति विश्वासा ॥९ ॥
करदे मन मुझमें पुनि अरपन ।धरे ध्यान नित मम पद कंजन ॥ १० ॥

दोहा **करत समय अभ्यास यों, निष्फलता दरसाय ।**
तो भी ऊबे तनिक ना, बल्कि उमंग दिखाय ॥ १२२ ॥

चौ शन कादिक जेते मुनि राया । ये ही योग रूप उन गाया ॥ १॥
निज मन कर साधक आकर्पन । मोरे बीच करे तेहि अरपन ॥ २ ॥
उद्धव यह इतिहास पुरातन । गाया इन मुनियन के कारन ॥ ३ ॥
बोले उद्धव हे नारायन । बरणा कवन समय इन कारन ॥ ४ ॥
कवन योग धर कवन स्वरूपा । गाया तुम यह ज्ञान अनूपा ॥५ ॥
वह सब योग श्रवण की मेरी । हे प्रभु हो रहि रुचि बहोरी ॥६ ॥
बोले कृष्ण देवकी नन्दन । एक बार शनकादिक मुनिजन ॥ ७ ॥
कर प्रणाम धात के आगे । योग सूक्ष्मगति पूछन लागे ॥८ ॥
विषयन से यह चित्त विधाता । छुटकारा कबहूँ नहि पाता ॥९ ॥
चित में विषय रहे लव लीना । चित भी विषयन के आधीना ॥ १० ॥

दोहा **एक दूसरे से अलग, यह दोउ कैसे होय ।**
भव सागर से पार की, करत चाहना सोय ॥ १२३ ॥

चौ यों सुनकर बोले भगवाना । प्रिय उद्धव तुम ज्ञान निधाना ॥१ ॥
सब देवन के यद्यपि धाता । सब प्राणिन के जन्म प्रदाता ॥ २॥
फिर भी सनकादिक की बाता । सुनकर समझ सके नहि धाता ॥ ३ ॥
कर्म प्रधान बुद्धिके द्वारा । भई कुंठित उन बुद्धि विचारा ॥ ४ ॥
यह प्रश्नोत्तर जानन कारन । कीन्हों उद्धव उन मम चिन्तन ॥ ५ ॥
तब मैं हंस रूप के द्वारा । उन समीप पहूँचा जिस बारा ॥ ६ ॥
तब वे शनकादिक मुनि राया । मुझे देख यों वचन सुनाया ॥७ ॥
आप कवन अरू कहँ से आये । तब मैंने यों वचन सुनाये ॥८॥
आत्मा विषय व देह विषय का । पूछत मुनियों दोउ विच किसका ॥९ ॥
आत्मा का यदि प्रश्न तुम्हारा । आत्म वस्तु तो एक प्रकारा ॥ १० ॥

दोहा **आप कवन यह प्रश्न जो, कीन्हा हे मुनि राज ।**
शब्द मात्र यह सर्वदा, रहा निरर्थक आज ॥ १२४ ॥

चौ समझो तत्व दृष्टि से मोहीं । होत प्रतीत जगत में जोही ॥ १॥
मोसे परे वस्तु न कोई । मेरो रूप सभी में होई ॥२ ॥
करता गुण में चित्त प्रवेशा । चित्त बीच गुण रहे हमेशा ॥ ३ ॥
सत्य वचन यह रहा तुम्हारा । किन्तु चित्त गुण किसी प्रकारा ॥ ४ ॥
जीव स्वरूप न जीव स्वभाऊ। सम स्वरूप यह जीव कहाऊ ॥ ५ ॥
विषय निरन्तर सेवन कारन । भयो प्रवेश चित्त इन विषयन ॥ ६ ॥
स्पष्टिकरण गुण का मुनिराया । चित्त के द्वारा ही बतलाया ॥७ ॥
इस कारन चित विषय तजाऊ। मम स्वरूप से प्रेम बढ़ाऊ ॥ ८ ॥
आत्मा से उनका मुनि राया । कुछ सम्बन्ध नहीं बतलाया ॥९ ॥
जागृत स्वप्न सुसुप्ति य तीना । बुद्धि वृत्ति के रहे अधीना ॥ १० ॥

दोहा **आया जाया करत है, ये गुण के अनुसार ।**
तीन अवस्था से परे, अद्भुत जीव प्रकार ॥ १२५ ॥

चौ साक्षी इनका यही कहावत । गुण बीचे यहि उसे फँसावत ॥१ ॥
तीन अवस्था को निज भाई । समझ इन्हीं में यह बँध जाई ॥ २॥
निज स्वरूप पर करत विचारा । तब वह समझत सभी प्रकार ॥ ३ ॥
सर्व साक्षि जो रूप हमारा । गुण सह विषय तजत तब सारा ॥ ४ ॥
यद्यपि जानत यह विद्वाना । अहंकार वश बन्धन नाना ॥ ५ ॥
होत अधर्म इसी के द्वारा । होय विरत चिन्तन संसारा ॥ ६ ॥

आत्म तत्व बीचे स्थित होकर। उनको तज दे उद्धव प्रियवर ॥ ७ ॥
जब लगि भ्रान्ति मिटे नहि नाना। जागृत मानव सुप्त समाना ॥ ८ ॥
सुपने बीचे जाग्रत अनुभव। जानो जाग्रत भी त्यों उद्धव ॥ ९ ॥
आत्मा के अतिरिक्त न कोई। अन्य वस्तु का सार न होई ॥ १० ॥

दोहा- **उलझन चित्त व गुणन की वैसी ही तुम जान।**
निज स्वरूप में स्थित विना, चित गुण अलग न मान॥१२६॥

चौ कारण कर्म देह के नाना। मिथ्या जानो सुपन समाना ॥१॥
दीखत जो इन्द्रियन द्वारा। जानो क्षणिक पदारथ सारा ॥ २ ॥
जाग्रत बीच इन्द्रियन द्वारा। होवत अनुभव आत्मा द्वारा ॥ ३ ॥
स्वप्न समय निज हिय में जागृत। आत्मा अनुभव विपयन पावत ॥४ ॥
तथा सुसुप्ति समय सव भ्राता। आत्मा लय का अनुभव पाता ॥ ५ ॥
तीन अवस्था हम यों पाई। आत्मा एक न अपर कहाई ॥६॥
स्मृति सब तीन काल की सारी। रहती वने रहे संसारी ॥७ ॥
तीन दशा की देखन हारी। है आत्मा नहिं और प्रकारी ॥८ ॥
मम माया से होत प्रतीता। ऐसा दृढ़ निश्चय कर मिन्ता ॥९ ॥
वधो घमंड ज्ञान असि द्वारा। कर हिय स्थित पुनि भजन हमारा ॥ १० ॥

दोहा- **इस जग को तुम सर्वथा, जानो मनो विलास।**
जादू के इस खेल पर, करो न दृष्टि निकास ॥ १२७ ॥

चौ जानो नाशवान यह सारा। माया मय ही है संसारा ॥१॥
निज सुख का जब होवत अनुभव। तृष्णा रहित मौन हो मानव ॥ २॥
होत प्रतीति कबहुँ जब इसकी। होवत भ्रान्ति नही तव तन की ॥ ३ ॥
तजा प्रथम अनृत लख येहा। रहता ना इस कारण स्नेहा ॥ ४ ॥
देह निपात जहाँ तक होई। होवत भान वहाँ तक कोई ॥ ५ ॥
उससे हानि नहीं हो कैसे। मद्यप नर तजकर यह जैसे ॥६ ॥
वैसे सिद्ध पुरूष भी कवहुँ। हानि न लाभ लखे निज मनहूँ ॥ ७ ॥
भाग्य कर्म जब तक रह शेषा। करत करम यह देह विशेषा ॥ ८ ॥
जब लगि योग समाधि लीना। रहत न दृश्य प्रपंच अधीना ॥९ ॥
मैने तुम प्रति जो बतलाया। योग साँख्य यह गुप्त कहाया ॥१० ॥

दोहा- **उन धरमन वरणन करन, मैं स्वयं भगवान।**
तुम सबके सन्मुख खड़ा, करने जग कल्यान ॥ १२८॥

चौ योग साँख्य ऋत सत्य व सोई । तेज श्री कीरति दम जोई ॥१॥
मैं ही परम गति इन सबकी ।अधिष्ठान परम हूँ इनकी ॥२ ॥
मैं सब गुण से रहूँ विहीना । काहू के ना रहूँ अधीना ॥ ३ ॥
सब गुण करते मेरा सेवन । रहे प्रतिष्ठित मुझमें निशिदिन ॥ ४॥
मोहीं सबका सुहृद बखानों । परम हितैषी आत्मा मानों ॥५ ॥
ऐसे उन शनकादि मुनिन का । शंसय मिटा दिया सब मन का ॥ ६ ॥
पाछे परम भक्ति के द्वारा । पूजन की मम भली प्रकारा ॥ ७ ॥
उनते मैं स्तुत पूजित भाई । देखत लोकपिता मुनिराई ॥८ ॥
ओझल हो आया निज धामा । कथा कहूँ अब कवन ललामा ॥९ ॥
बोले उद्धव हे भगवाना । वदत श्रेय साधन मुनि नाना ॥ १० ॥

दोहा- **वरणें साधन श्रेष्ठ जो, नित मति के अनुसार ।**
क्या वे सारे श्रेष्ठ वा, एक बीच ही सार ॥१२९ ॥

चौ भक्ति योग तुम अभी सुनाया । वहि स्वतंत्र साधन बतलाया ॥१॥
हो निष्काम त्याग घर वारी । छूटत तब आसक्तियाँ सारी ॥ २ ॥
वरणा भक्ति योग फल हीना । होवे मन तब तोर अधीना ॥३॥
सब साधन में सुन्दर साधन । उसको ही वरणों अब भगवन ॥४ ॥
आवत प्रलय सखे श्रुतिवानी । होत नष्ठ नही रहे निशानी ॥५ ॥
निज सुत मनु प्रति पाछे येहूँ । लोक पिता कीन्हो कर स्नेहू ॥६ ॥
मनु ते सप्त ऋषिन ने पाया । निज संतति प्रति उन बतलाया ॥७ ॥
देव दनुज गुह्यक गंधर्वा । मानव सिद्ध व चारण सर्वा ॥ ८ ॥
विद्याधर किं देव व किन्नर । नाग व किम्पुरूष व रजनीचर ॥९ ॥

दोहा- **निज पूरवज इन ऋषिन ते, पाया सबने ज्ञान ।**
सत रज तम गुण वृत्ति ते, भिन्न भिन्न किय गान ॥१३०॥

चौ इस विचित्र श्रुति वाणी द्वारा । निकसत अरथ अनेक प्रकारा ॥१॥
मानव प्रकृति विचित्र प्रकारा । मति विपरित होत उस द्वारा ॥२॥
वेद विरुद्ध सीख जे पावे । सो पाखंड मार्ग में जावे ॥ ३ ।
ये सब मम माया के द्वारा । मोहित मति होवत संसारा ॥ ४ ॥
श्रेय मार्ग नाना विधि गाये । धर्म काम वश शुभ बतलाये ॥ ५ ॥
शम दम सत्व स्वार्थ को उद्धव । सबमें श्रेष्ठ वदत कोई मानव ॥६॥
भोजन त्याग कहे कोई दाना । यज्ञ ताप व्रत्त कोई बखाना ॥७॥

केतिक यम अरू नियम बताया। केतिक श्रम को ही शुभ गाया ॥८ ॥
इन करमन ते मिलहिं जे लोका। फल समाप्ति पर होवत शोका ॥६ ॥
इन फल की उत्पत्ति विनाशक। ये सब तुच्छ नही फलदायक ॥ १० ॥

दोहा- परो नहीं इस कारणे, इन साधन के फेर।
भक्ति एक सुख प्रद सदा, नहीं मुक्ति में देर ॥ १३१॥

चौ- सब सुख प्राप्त करे नर जोही। आत्मा अरपित करहि जो मोहीं ॥१॥
जो सुख मिले भक्ति के द्वारा। विषयिन पावत किसी प्रकारा ॥ २॥
शान्त व दान्त अकिंचन सोई। सम चित मोरे बिच मन होई ॥३ ॥
सर्व दिशा उसको सुखदाई। सब तज जो मम शरण सिधाई ॥४ ॥
जो आत्मा मोहिं अरपन करहीं। वह विधिपुर सुरपुर ना चहहीं ॥ ५ ॥
चाह रसातलपति की नाहीं। राखत मोर भक्त मन माँही ॥६ ॥
सार्वभौम पद की अभिलासा। मोक्ष न योग सिद्धि नहि आसा ॥ ७ ॥
जैसे तुम मम भक्त पियारे। वैसे विधि शिव नहिं हमारी ॥८ ॥
नहिं बलराम न रमा पियारी। लागत प्रिय नहिं देह हमारी ॥६ ॥
जो निरपेक्ष शान्त निर्वेरा। समदर्शी हो वहि प्रिय मेरा ॥१० ॥

दोहा- मोरे तन पर आ गिरे, कहीं भक्त पद धूर।
यही सोच कर सर्वदा उस, अनु चलूँ जरूर ॥१३२॥

चौ- संग्रह परिग्रह ते जो हीना। तन ममता अभिमान विहीना ॥१॥
मोरे प्रेम बीच चित्त जासू। राखत सब पर दया प्रकासू ॥२॥
जासु बुद्धिका स्पर्श न भाई। कोई कामना कर नहिं पाई ॥३ ॥
मम स्वरूप का पावत ज्ञाना। जासु कोई दूजा नहि जाना ॥४॥
लेवत यह आनन्द उदासी। सत संतन की बात प्रकासी ॥५ ॥
प्राकृत भी यदि भक्त हमारा। आकर्षित हो विषयन द्वारा ॥६॥
किन्तु सखे मम भक्ति के द्वारा। दबता ना जो किसी प्रकारा ॥७ ॥
यथा प्रदीप्त अनल के द्वारा। काष्ठादिक हो भस्म अपारा ॥८॥
त्यों मोरी भकती के द्वारा। अघ समूह नस जावत सारा ॥६॥
करत भक्तिवश में मोहिं जैसे। सांख्य धर्म तप योग न वैसे ॥१०॥

दोहा- एक भक्ति से ही सखे, भक्त लोग मोहिं पात।
भक्ति निष्ठ चाण्डाल भी, अति पुनीत हो जात ॥१३३॥

चौ- धर्म सत्य तप दया अधीना । किन्तु पुनीत न भक्ति विहीना ॥१॥
जब लगि पुलकित हो नहिं गाता । नयनन ते प्रेमाश्रु न आता ॥२॥
बहता जो नहि भक्ति प्रवाहू । तब लगि चित्त शुद्ध नहि ताहू ॥ ३ ॥
गदगद होय प्रेम से वानी । पिघल चित्त भक्ति युत प्रानी ॥ ४ ॥
रोवत हँसत प्रेम युत ताता । हो विलज्ज कबहूँ वह गाता ॥ ५ ॥
ऐसा जो मम भक्त पियारा । करत पुनीत भवन वह सारा ॥ ६ ॥
तजे अनल ते जिमि मल सोना । शुद्ध रूप धर होत सलोना ॥ ७ ॥
त्यों मम भक्ति योग के द्वारा । कर्म वासना से हो न्यारा ॥ ८ ॥
मुझको प्राप्त भक्त हो जाता । मैं ही सत्य रूप उस गाता ॥ ९ ॥
लीला कथा श्रवण के द्वारा । ज्यों ज्यों होत चित्त मल न्यारा ॥ १० ॥

दोहा- **त्यों त्यों वास्तविक तत्व के, होवत दरसन तेहि ।**
अञ्जन ते ज्यों नयन के, सारे दोष मिटेहि ॥ १३४ ॥

चौ- विषय निरन्तर चिन्तन करहीं । तासु चित्त विषयन में फँसही ॥ १ ॥
जो नर मेरा सुमिरण करहीं । तासु चित्त मुझमें ही रहहीं ॥ २ ॥
इस कारण तुम दूसर साधन । तजकर नष्ट फलों का चिन्तन ॥ ३ ॥
राखो मुझमें चित्त तुम्हारा । मैं ही सबका एक सहारा ॥ ४ ॥
निज मन निज इन्द्रिय वश करके । नारिन अरु उन संगिन तजके ॥ ५ ॥
जो एकान्त स्थान हो पावन । स्थित हो वहाँ करो मम चिन्तन ॥ ६ ॥
तिय तिय संगिन ते दुःख जैसो । अन्य संग ते होत न वैसो ॥ ७ ॥
बोले उद्धव अब प्रिय वानी । कमल नयन हे शारंग पानी ॥ ८ ॥
मुक्ति चाहना राखन हारा । करे ध्यान किस भाव तुम्हारा ॥ ९ ॥
बोले कमल नयन हरि हँसके । सम आसन पर स्थित होके ॥ १० ॥

दोहा- **दोऊ कर निज गोद धर, नासा दृष्टि जमाय ।**
नाड़िन को शोधन करे, प्राणायाम उपाय ॥ १३५ ॥

चौ- कमल नाल सम सूत समाना । हिय में करे ॐ मनु ध्याना ॥ १ ॥
प्राणन से ऊपर ले आना । स्वर स्थिर घंटा नाद समाना ॥ २ ॥
तीन काल प्रतिदिन दस बारा । प्राणायाम करे मनु द्वारा ॥ ३ ॥
यों साधक करहीं अभ्यासा । प्राणानिल वश तब इक मासा ॥ ४ ॥
इसके बाद करें यों चिन्तन । मानों हिय इक पंकज कंचन ॥ ५ ॥
वह मानो स्थित यों तनु भीतर । मुख नीचे डंडी उस ऊपर ॥ ६ ॥

करे ध्यान सखे इस तोरा । विकसित मुख ऊपर की ओरा ॥ ७ ॥
तासु कर्णिका पर विधु भानू । करे न्यास यों सहित कृशानू ॥ ८ ॥
मम स्वरूप का सखे तदन्तर । सुमिरण करे अनल के अन्दर ॥ ९ ॥
शान्त व सुमुख चतुर्भुज वारा । दीप्त मान श्रुति कुंडल द्वारा ॥ १० ॥

दोहा- **चारु ग्रीव घनश्याम तनु, हेमाम्बर सुकपोल ।**
अवयव की सुन्दर गठन, मेरी बड़ी सुडौल ॥ १३६ ॥

चौ- रमा वत्स लाञ्छन हिय ऊपर । वनमाला सोभित अति सुन्दर ॥ १ ॥
शंख व चक्र गदाम्बुज धारे । पद कंजन नूपुर कनकारे ॥ २ ॥
सीस मुकुट कटि सूत्र सुतोही । बाजूबन्ध भुजा मन मोही ॥ ३ ॥
सर्व अंग सुन्दर मुदितानन । प्रेम भरी चितवन मन हारन ॥ ४ ॥
मम स्वरूप को यों तुम ध्याऊ । हर अंगन ऊपर मन लाऊ ॥ ५ ॥
सर्व विषय चित्त जब मम मुख ऊपर । पाछे स्थिर कर दे तेहि अम्बर ॥ ६ ॥
हो स्थिर चित जब मम मुख ऊपर । पाछे स्थिर कर दे तेहि अम्बर ॥ ७ ॥
तज कर सखे बाद में अम्बर । मम स्वरूप में ही हो तत्पर ॥ ८ ॥
करऊ चिन्तन येन प्रकारा । तब मन वश हो जाय तुम्हारा ॥ ९ ॥
एक ज्योति दूसर से मिलकर । होवत एक यथा हे यदुवर ॥ १० ॥

दोहा- **वैसे अपने में मुझे, अनुभव सन्त करन्त ।**
तीव्र ध्यान के योगते, मुझमें चित्त लगन्त ॥ १३७ ॥क
दृश्य न दृष्टा दर्शका, तत्सम्बन्धी ज्ञान ।
तदा शीघ्र ही हे सखे, नष्ट होत अज्ञान ॥ १३७ ॥ ख

चौ- प्रिय उद्धव बोले यदुनायक । करे जबै मन का वश साधक ॥ १ ॥
जित इन्द्रिय योगी के आगे । सभी सिद्धियाँ नाचन लागे ॥ २ ॥
कवन धारणा से भगवन्ता । पावत सिद्धि कीदृशी सन्ता ॥ ३ ॥
होवत प्रभो सिद्धियाँ केती । करो मुझे वरणन हो जैसी ॥ ४ ॥
सब सिद्धिन के तुम्ही ज्ञाता । सिद्धन के प्रति सिद्धि प्रदाता ॥ ५ ॥
अष्टादशी सिद्धि सुन भाई । पारगामि योगिन बतलाई ॥ ६ ॥
जिस पर हो मम कृपा अनन्ता । अष्ट सिद्धि पावत वहि सन्ता ॥ ७ ॥
करे सत्व गुण जबै विकासा । तबै सिद्धि दश आवत पासा ॥ ८ ॥
अणिमा महिमा लघिमा भाई । सिद्धि तीन ये तन की गाई ॥ ९ ॥
प्राप्ति सिद्धि इन्द्रिय के द्वारा । इह पर लौकिक वस्तु अपारा ॥ १० ॥

दोहा- **हो इनका अनुभव सखे, निज इच्छा अनुसार।**
कही सिद्धि प्राकाम्य वह, मैने सोच विचार ॥ १३८ ॥

चौ- संचालित करहीं जे माया। सिद्धि ईशिता लक्षण गाया ॥ १ ॥
विषयन में आसत ना होई।वसिता नाम सिद्धि है सोई ॥ २ ॥
जिस जिस सुख की इच्छा होई। उस सीमा पहुँचावत जोई ॥ ३ ॥
कामा वसायिता तेहि जानो। अष्ट सिद्धि ये मुझ में मानो ॥ ४ ॥
अन्य सिद्धियाँ इन अतिरिक्ता। भूख प्यास में नहि आसक्ता ॥ ५ ॥
दूर श्रवण अरु दर्शन दूरी। काम स्वरूप मनोजव पूरी ॥ ६ ॥
पर काया में होय प्रवेशा। निज रुचि मरण व निज रुचि देशा ॥ ७ ॥
संग अप्सरा सह सुनु भ्राता। सुर क्रीड़ा अनुभव अति जाता ॥ ८ ॥
सब संकल्प सिद्धि सब द्वारा। आज्ञा पालन सभी प्रकारा ॥ ९ ॥
हो गुण सत्व विशेष विकासा। इस सिद्धिन का होय प्रकासा ॥ १० ॥

दोहा- **हो त्रिकाल विद हे सखे, सुख दुख वश नहि होय।**
बात पराये चित्त की, जान सके जो कोय ॥ १३९ ॥

चौ- नीर कृशानू भानु विष स्तंभन। होय पराजित कबहुँ न दुर्जन ॥ १ ॥
अन्य वस्तु का करे न चिन्तन। करे सदा मेरा जो सुमिरन ॥ २ ॥
अणिमा नाम सिद्धि वह पावे। शक्ति प्रवेश शिला करवावे ॥ ३ ॥
महत्तत्व भी रूप हमारा। करे साधना इसके द्वारा ॥ ४ ॥
महिमा नाम सिद्धि वह पावे। पंचतत्व मम रूप कहावे ॥ ५ ॥
भिन्न भिन्न इनमें मन लावे। महिमा सिद्धि भी वह पावे ॥ ६ ॥
वातादिक जे श्रुति परमानू। वह भी मेरा रूप बखानू ॥ ७ ॥
इनमें चित्त लखावहि जोई। लघिमा सिद्धि पावत सोई ॥ ८ ॥
सात्विक अहंकार को भाई। मेरा रूप समझ चितलाई ॥ ९ ॥
होय इन्द्रियन का सरदारा। करहिं जो चिन्तन भक्त हमारा ॥ १० ॥

दोहा- **महत्तत्व में स्थिर करे, साधक निज चित जोय।**
नाम सिद्धि प्राकाम्य वह, पावत साधक सोय ॥ १४०॥

चौ- जिससे निज इच्छा अनुसारा। पावत साधक भोग अपारा ॥ १ ॥
त्रिगुणमयी माया के स्वामी। काल रूप जो अन्तरयामी ॥ २ ॥
उन उपेन्द्र में जे चित लाये। वह ईशित्व सिद्धि को पाये ॥ ३ ॥
उसमें प्रकटे सब गुण मेरे। वशिता नाम सिद्धि तेहि घेरे ॥ ४ ॥

मोहीं निर्गुण ब्रह्म बखानो । निर्मल चित्त मुझी में आनो ॥ ५ ॥
कामावसायिता वह पावे । पूर्ण कामना तब हो जावे ॥ ६ ॥
श्वेत द्वीप पति जो मम रूपा । शुद्ध धर्ममय ज्योति स्वरूपा ॥ ७ ॥
करे धारणा उसकी कोई । शुद्ध रूपता पावत सोई ॥ ८ ॥
मैं ही उद्धव आकाशात्मा । प्राण स्वरूप परम परमात्मा ॥ ६ ॥

दोहा- **मन द्वारा इस रुप में, चिन्तन करे जु नाद ।**
कर श्रवण सिद्धि उसे, होय सखे सब याद ॥ १४१ ॥

चौ- होवत जो उपलब्ध अकासा । श्रवण करे वह प्राणिन भासा ॥ १ ॥
रवि को नयन नयन रवि लावे । यों मन से मम ध्यान लगावे ॥ २ ॥
दूरदर्शिनी सिद्धि सुपावे । दूरहिं ते तेहि जगत दिखावे ॥ ३ ॥
मन तन ते जो प्राण समेता । करके ध्यान मोहिं जो सेता ॥ ४ ॥
सिद्धि मनोजव साधक पावे । रुचि अनुसार गमन कर जावे ॥ ५ ॥
उपादान कारण कर मन को । धारण करे सुरादिक तन को ॥ ६ ॥
तब वह जिन मन के अनुकूला । धरहिं स्वरूप सूक्ष्म अरु स्थूला ॥ ७ ॥
इसका कारण यों सुन उद्धव । लागा मो संग चित उस मानव ॥ ८ ॥
परकाया में करे प्रवेशा । करे भावना यों हिय देशा ॥ ६ ॥
समझूँ मेरा वही शरीरा । वायुभूत तज देह अखीरा ॥ १० ॥

दोहा- **पुष्पन के पुष्पन पर, जावत भृंग समान ।**
निज इच्छा ते मरण का, अब मैं करूँ बखान ॥ १४२॥

चौ- निज एड़ी से गुदा दबाये । हिय में प्राण वात पहुँचाये ॥ १ ॥
वक्ष व कंठ सीस में लाकर । ब्रह्म रंध्र में पुनि पहुँचा कर ॥ २ ॥
कर यों ब्रह्म मध्य लवलीना । त्यागे तब तनु सन्त प्रवीना ॥ ३ ॥
देवन सह क्रीड़ा रुचि जाता । शुद्ध सत्व को जो नर ध्याता ॥ ४ ॥
तब वह सुरमारिन के संगा । यान चढ़े शुभ करे प्रसंगा ॥ ५ ॥
मुझमें लीन पुरुष जो कोई । करता ध्यान उसी का सोई ॥ ६ ॥
करे विचार बुद्धि के द्वारा । पावत जगत पदारथ सारा ॥ ७ ॥
मैं स्वतन्त्र सब जगत नियन्ता । जो मुझमें लीन करे चित सन्ता ॥ ८ ॥
होत न कुंठित आज्ञा तासु । क्षुद्र सिद्धि अब करूँ प्रकासू ॥ ६ ॥
होत शुद्धि मम भक्ति प्रभावा । जन्म मृत्यु तेहि प्रथम दिखावा ॥ १० ॥

दोहा- **सभी विषय अदृष्ट का, होवत उसको ज्ञान ।**
तीन काल की बात हो, जावत तेहि भान ॥ १४३ ॥

चौ- जल जन्तुन का जिमि जल द्वारा । होत नास नहि किसी प्रकारा ॥ १ ॥
जिसने मुझ में चित्त लगाया । अनल नीर तेहि नसे न काया ॥ २ ॥
श्री वत्सादि विभूषित अंगा । मम अवतारन सुनै प्रसंगा ॥ ३ ॥
तासु पराजय कबहुँ न होहीं । होवत नष्ट सभी उस द्रोही ॥ ४ ॥
योगी योग धारणा द्वारा । करता चिन्तन ध्यान हमारा ॥ ५ ॥
सभी सिद्धियाँ बिना परिश्रम । आजावत उसके ही आश्रम ॥ ६ ॥
जित इन्द्रिय मुनि जो जित श्वासू । कोइ सिद्धि दुर्लभ नहि तासू ॥ ७ ॥
यद्यपि सिद्धि एक नहिं चाही । मानत विघ्न दायिनी ताही ॥ ८ ॥
ये परमार्थ विरोधिनि गाई । करती केवल काल नसाई ॥ ९ ॥
औषधि जनम मंत्र तप द्वारा । सिद्धी जेती इस संसारा ॥ १० ॥

दोहा- **पात सिद्धि सब योग ते, योगी भली प्रकार ।**
अन्तिम सीमा योग की, किन्तु न पहुँचत पार ॥ १४४॥

चौ- सब सिद्धिन का हेतु व स्वामी । जानो उद्धव मुझको नामी ॥ १ ॥
ब्रह्मज्ञानविद साधन गाये । साँख्य व योग धरम बतलाये ॥ २ ॥
उन सबका मैं ही परमात्मा । सब जीवन का मैं ही आत्मा ॥ ३ ॥
स्थूल पंच भूतन में जैसे । महाभूत व्यापक है वैसे ॥ ४ ॥
मैं हीं सब प्राणिन के भीतर । द्रष्टा दृश्य रूप से बाहर ॥ ५ ॥
बाहर भीतर का मुझ माँही । समझो भेद जरा भी नाँही ॥ ६ ॥
बोले उद्धव हे भगवाना । परम ब्रह्म तुम रमा निधाना ॥ ७ ॥
आदि मध्य नहि अन्त तुम्हारा । जान सकै नहि किसी प्रकारा ॥ ८ ॥
तुम ही करते सबका सरजन । रक्षा और प्रलय के कारन ॥ ९ ॥
ऊँच नीच प्राणिन के भीतर । तुम्हीं रहते स्थित परमेश्वर ॥ १० ॥

दोहा- **मन इन्द्रिय जिन बस नहीं, वे नर रूप तुम्हार ।**
जान सके नाँही प्रभो, कर कर यतन हजार ॥ १४५ ॥

चौ- ब्रह्मज्ञानविद मानव जेते । वेही पद पंकज तव सेते ॥ १ ॥
ऋषि मुनि परम भकति के द्वारा । सेवत रूप विभूति तुम्हारा ॥ २ ॥
उन विभूति का वरणन मोसे । कहो कृपा कर पूछऊँ तोसे ॥ ३ ॥
तुम प्राणिन के जीवनदाता । अन्तरात्मा जगत विधाता ॥ ४ ॥

गूढ होय तुम प्राणिन भीतर । सबको देखत तुम परमेश्वर ॥ ५ ॥
माया मोहित रूप तुम्हारा । जान सके ना किसी प्रकारा ॥ ६ ॥
भू पाताल स्वर्ग की मोहीं । जो भी नाथ विभूती होहीं ॥ ७ ॥
उनका कथन करो तुम सारा । वन्दों मैं पदकंज तुम्हारा ॥ ८ ॥
जो तीर्थन के पावनकारी । सब पापिन के पापन हारी ॥ ६ ॥
बोले अब श्री रमा निधाना । सुन प्रिय उद्धव धर कर ध्याना ॥ १० ॥

दोहा- **कौरव पाँडव युद्ध में, कुरुक्षेत्र दरम्यान ।**
यही प्रश्न मुझसे किया, प्रिय अर्जुन बलवान ॥ १४६॥

चौ- अर्जुन के मन ऐसी आई । राज्य हेतु परिवार नसाई ॥ १ ॥
निंदनीय यह बहुत अधर्मा । वध परिवार श्रेष्ठ सुकर्मा ॥ २ ॥
साधारण मानव की नाँई । करत विचार भीम लघु भाई ॥ ३ ॥
मैं इन सबका मारन हारा । काल ग्रस्त परिवार हमारा ॥ ४ ॥
सोचा निज मन जब यों अर्जुन । भयो युद्ध से उपरत तत्क्षन ॥ ५ ॥
अर्जुन तब मैंने समझाया । कई युक्ति का पाठ पढ़ाया ॥ ६ ॥
जैसा प्रश्न कियो तुम आजू । पूछा प्रश्न वहाँ कुरु राजू ॥ ७ ॥
मैं सब प्राणिन की हूँ आत्मा । सुहृद नियामक प्रभु परमात्मा ॥ ८ ॥
सर्वभूत जो इस संसारा । सरजन पालन नासन हारा ॥ ६ ॥
गति मानों में गति मोहि मानों । वशकर्ता में काल बखानो ॥ १० ॥

दोहा- **गुणवानों में गुण मुझे, महत बीच महतत्व ।**
सूक्ष्म वस्तु में जीव को; जानो मोहि उद्धव ॥ १४७ ॥

चौ- दुर्जय में मन रूप हमारा । अक्षर बीचे रूप प्रकारा ॥ १ ॥
वेदों का अध्यापक मोहीं । लखो हिरण्य गर्भ तुम योहीं ॥ २ ॥
मन्त्रन बीच प्रणव मैं भाई । छन्दों में गायत्री गाई ॥ ३ ॥
सब देवन में मैं सुरराया । वसुअन बीच अनल कहलाया ॥ ४ ॥
सर्वादित्य में विष्णु स्वरूपा । रुद्र नील लोहित मम रूपा ॥ ५ ॥
ब्रह्मरिषिन में भृगु मोहि मानो । राजरिषिन में नृप मनु जानो ॥ ६ ॥
देव ऋषिन में नारद मोहीं । कामधेनु धेनुन में योहीं ॥ ७ ॥
कपिल देव सिद्धन में माना । पक्षिन बीच गरुड़ हरियाना ॥ ८ ॥
प्रजापतिन में दक्ष कहाऊँ । पितरन बीच अर्यमा गाऊँ ॥ ६ ॥
दैत्यन में प्रहलाद कहाया । तारा बीच चन्द्रमा गाया ॥ १० ॥

दोहा— ऐरावत हस्तिन विषै, सोम औषधिन जान ।
यक्ष राक्षसों में धनद, जल में वरुण बखान ॥ १४८ ॥

चौ- भाषमान जेते जग माँही । उनमें रवि मम रूप कहाही ॥ १ ॥
मानव बीच कहाऊँ भूपा । अश्वन उच्चश्रवा मम रूपा ॥ २ ॥
धातुन में जानों मोहि कंचन । सर्प वासुकी मैं हूँ सर्पन ॥ ३ ॥
जेते जग में दंड प्रदाता । जानों उनमें यम मोंहि भ्राता ॥ ४ ॥
श्रृङ्गि व दंष्टिन केहरि मोहीं । जनु सन्यास आश्रमन योहीं ॥ ५ ॥
वर्णन में मोहिं विप्र बखानो । सब तीर्थन में सुरसरि मानो ॥ ६ ॥
सर्व सरन में सागर गाऊँ । अस्त्रन बीच धनुष कहलाऊँ ॥ ७ ॥
धनु धारिन में शंभु बखाना । हूँ सुमेरू बिच वास स्थाना ॥ ८ ॥
दुर्गम बीच हिमालय जानो। पीपल तरु तरुअन में मानो ॥ ९ ॥
जे ते धान्य जगत में गाये । उनमें यव मम रूप कहावे ॥ १० ॥

दोहा- जानो मोहिं पुरोहितन, मुनि वशिष्ठ सर्वज्ञ ।.
सेनानिन में स्कंद हूँ, जानो गुरु वेदज्ञ ॥ १४९ ॥

चौ- श्रेष्ठ मार्ग के प्रेरक भीतर । जानो कमलासन मोहिं यदुवर ॥ १ ॥
ब्रह्मयज्ञ यज्ञन में गाया । व्रत के बीच अहिंसा पाया ॥ २ ॥
जे जे वस्तु पावन कारी । उनमें वात व ज्योति तमारी ॥ ३ ॥
आत्मा अरु वैश्वानर वानी । समझत मुझको ही सब ज्ञानी ॥ ४ ॥
योगन बीच समाधी जानो । विजयिन बीचे नीति बखानो ॥ ५ ॥
आत्मा कौशल बीच कहाऊँ । ख्याति वादि में भ्रान्ति कहाऊँ ॥ ६ ॥
नारिन में जानो शतरूपा । पुरुषन में स्वायंभुव भूपा ॥ ७ ॥
ब्रह्मचारियन सनतकुमारा । नारायण के मध्य पुकारा ॥ ८ ॥
धर्मन में सन्यास बखानू । अभयन बीचे अनुसन्धानू ॥ ९ ॥
वचन मौन गुह्यन में जानो । मिथुनन मध्य प्रजापति मानो ॥ १० ॥

दोहा— सम्वत निमिष विहीन में, ऋतुअन बीच वसन्त ।
मार्गशीर्ष जानो मुझे, सब मासन के अन्त ॥ १५० ॥

चौ- जानो अभिजित नक्षत्रन में । मैं हूँ सतयुग सभी युगन में ॥ १ ॥
असित महर्षि देवल दोही । जानो सभी विवेकिन मोहीं ॥ २ ॥
व्यासन में द्वैपायन व्यासा । कवियन बीचे शुक्र प्रकासा ॥ ३ ॥
सरजन पालक जगत विनाशक । विद्या जन्म व मृत्यु प्रकाशक ॥ ४ ॥

इनमें वासुदेव मांहिं जानो । किम्पुरुषन हनुमान वखानो ॥ ५ ॥
विद्याधर में मुझे सुदरशन । जानों पद्मराग मोहि रत्नन ॥ ६ ॥
कमल कली सुन्दर वस्तुन में । मैं हूँ कुशा सभी दर्भन में ॥ ७ ॥
जेते हवन द्रव्य अति सुन्दर । मैं हूँ गोघृत उनके भीतर ॥ ८ ॥
व्यापारिन में द्रव्य पुकारा । छलियन में छल रूप हमारा ॥ ९ ॥
सहन शीलता राखन हारे । उनमें मोहीं क्षमा पुकारे ॥ १० ॥

दोहा— **सात्विक पुरुषन के विषै, सत्व जानु मम अंग ।**
वलवन्तन के वीच में, साहस और उमंग ॥ १५१ ॥

चौ- भगवत भक्तन के शुभधामा । जानों मोहि कर्म निष्कामा ॥ १॥
वैष्णव पूज्यमूर्ति नव गाई । उनमें वासुदेव मैं भाई ॥ २ ॥
विश्वावसु गंधर्वन अन्दर । पूर्वचित्ति हूँ भीतर अप्सर ॥ ३ ॥
अवनि बीच गंध अविकारी । अद्रिन में स्थिरता अति भारी ॥ ४ ॥
वैश्वानर तेजस्विन माँही । जल में दक्ष मम रूप कहाही ॥ ५ ॥
जानो प्रभा भानु विधु तारन । कीन्हो शब्द बीच नभ गायन ॥ ६ ॥
ब्राह्मण भक्तन में वलि जानो । वीरन में अर्जुन मोहिं मानो ॥ ७ ॥
अर्थ ग्रहण शक्ति सुनु भाई । मैं सब इन्द्रियनों की गाई ॥ ८ ॥
महि आकाश व तेजस नीरा । अहंकार मम तत्व समीरा ॥ ९ ॥
पंच तत्व प्राकृति अव्यक्ता । गुणत्रय जीव सकल जो व्यक्ता ॥ १० ॥

दोहा— **मैं ही ईश्वर जीव हूँ, मैं ही गुण गुणवान ।**
रहने वाला इन परे, मुझे ब्रह्म पहिचान ॥ १५२ ॥

चौ- जानो मुझे सभी की आत्मा । मै ही सब कुछ हूँ परमात्मा ॥ १ ॥
मम अतिरिक्त पदारथ माँही । दीखत कोय जगत में नाँही ॥ २ ॥
परमाणुन संख्या मुझ द्वारा । समय पाय हो किसी प्रकारा ॥ ३ ॥
उद्धव किन्तु विभूतिन मोरी । गणना करने में मति थोरी ॥ ४ ॥
रूप तेज व कीरति त्यागा । लाज पराक्रम श्री अरु भागा ॥ ५ ॥
कष्ट सहनता धन विज्ञाना । जिनमें सो मम अंश वखाना ॥ ६ ॥
थोड़े में हे उद्धव भाई । मैंने तुम्हें विभूति गाई ॥ ७ ॥
नहिं परमार्थ वस्तु ये सारी । मानो इनको मनोविकारी ॥ ८ ॥
प्राण इन्द्रिय मन अरू वानी । करहू वश में उद्धव ज्ञानी ॥ ९ ॥
मति भी आत्मवस्तु अनुसारी । निज में करहू शान्त तुम्हारी ॥ १० ॥

दोहा— **जन्म मृत्यु के चाक में, तव नहिं किसी प्रकार ।**
परहु न कबहूँ तुम सखे, इस उपाय अनुसार ॥ १५३ ॥

चौ- जो साधक बुद्धि के द्वारा । मन वाणी को किसी प्रकारा ॥ १ ॥
पूर्णतया वश करत न भाई । उसके व्रत तप दान नसाई ॥ २ ॥
काँचे घट में नीर समाना । होवत क्षीण अवेर न माना ॥ ३ ॥
इस कारण जो भक्त हमारा । भक्ति युक्त बुद्धि के द्वारा ॥ ४ ॥
जीते मन वाणी निज प्राणन । होकर मुझमें सदा परायण ॥ ५ ॥
ऐसा कर लेने पर भाई । वह कृत कृत्य मनुज हो जाई ॥ ६ ॥
बोले उद्धव हे यदुराया । भक्ति धर्म लक्षण तुम गाया ॥ ७ ॥
धर कर प्रथम हंस अवतारा। तुमने विधि प्रति धर्म उचारा ॥ ८ ॥
अब बहु समय गुजरने कारण । भयो नष्ट अब वह जग तारण ॥ ९ ॥
तुम सम नहीं भूमि पर कोई । धर्म प्रवक्ता रक्षक जोई ॥ १० ॥

दोहा- **पृथ्वी की तो बात क्या, ब्रह्म सभा के माँहि ।**
मूर्तिमान हैं वेद जहँ, वह भी दीखत नाँही ॥ १५४ ॥

चौ- पहले तुम मधु दानव मारा । सब वेदन का किय उद्धारा ॥ १ ॥
किय उद्धार श्रुतन का जैसे । रक्षा करो धरम की वैसे ॥ २ ॥
जब तुम त्याग महीतल जाऊ । तब तो धर्म लोप ही पाऊ ॥ ३ ॥
अब नहि करो धरम उपदेशा । तो फिर कौन बतावहिं ऐसा ॥ ४ ॥
तुम सब मर्म धर्म के ज्ञाता । करो कथन उसको जगभर्ता ॥ ५ ॥
प्रश्न धर्ममय सखे तुम्हारा । सुनो धरम यह मुझसे सारा ॥ ६ ॥
धर्म मानवी आश्रम चारी । वरणन करूँ सखे इस बारी ॥ ७ ॥
सतयुग प्रथम कल्प का आया । मानव वर्ण हंस कहलाया ॥ ८ ॥
सतयुग प्रजा जनम से सारी । होती सफल मनोरथ भारी ॥ ९ ॥
इस कारण तेहि कृतयुग गावा । उसमें प्रणव वेद कहलावा ॥ १० ॥

दोहा- **वृष वपु धारी धर्म था, प्रजा तपस्या शील ।**
करत भजन मुझ ईश का, हंस रूप में लीन ॥ १५५ ॥

चौ- त्रेतायुग आवा जब भाई । मम हिय ते त्रयि विद्या जाई ॥ १ ॥
होता अध्वर्यु उदगाता । मख रूपी उससे में जाता ॥ २ ॥
मम मुख बाहु जघन पद द्वारा । प्रकटे वर्ण विप्रयुत चारा ॥ ३ ॥
निज निज धरम करम अनुसारी । इन वर्णन की ज्ञापक सारी ॥ ४ ॥

जंघन ते गेहाश्रम जाता । हिय ते वानप्रस्थ सुनु भ्राता ॥ ५ ॥
जन्म व जगह प्रकृति अनुसारा । ज्ञापक इन वर्णन का सारा ॥ ६ ॥
शम दम शौच दया तप तत्पर । विद्या सत्य शीलता सुन्दर ॥ ७ ॥
सीधापन भक्ति व संतोपी । सत्य पुनीत सदा निर्दोपी ॥ ८ ॥
ये ब्राह्मण के धर्म कहाये । लच्छन छत्रिन के यो गाये ॥ ६ ॥
तेज धैर्य वल अति स्थिरताई । विप्र भक्ति मन वीच रखाई ॥ १० ॥

दोहा— **सहन शीलता वीरता, अति उदारता जोय ।**
रहे सदा उद्योग रत, जानो क्षत्रिय सोय ॥ १५६ ॥

चौ- द्विज सेवा रत दम्भ विहीना । दान शील आस्तिक्य अधीना ॥ १ ॥
धन संचय ते तुष्ट न जोई । जानो वैश्यवर्ण तुम सोई ॥ २ ॥
हो निष्कपट धेनु भूदेवन । सव विधि करे सुरन का सेवन ॥ ३ ॥
जो कुछ मिले उसी में राजी । राखे मन में नहिं नाराजी ॥ ४ ॥
ये सव शूद्र प्रकृति के लच्छन । करूँ प्रकृति अन्त्यज की वर्णन ॥ ५ ॥
अनृत चोरी तृष्णा कामा । रटहिं न जो मानव हरिनामा ॥ ६ ॥
विग्रह शुष्क कपट पथ जाये । ये अन्त्यज के लच्छन गाये ॥ ७ ॥
सत्य अहिंसा क्रोध विहीना । रहहिं न काम व क्रोध अधीना ॥ ८ ॥
चौरी कर्म कवहुँ न करहीं । सव प्राणिन को राजी रखहीं ॥ ६ ॥
चारवर्ण अरु आश्रम चारी । से सव धर्म समान पुकारी ॥ १० ॥

दोहा- **प्रथम जनम जननी जठर, अपर जनेऊ वाद ।**
गुरु कुल में जाकर वसे, करे वहाँ श्रुति याद ॥ १५७ ॥

चौ- संयम नियम सहित वहँ वासा । करें अध्ययन श्रुति गुरु पासा ॥ १ ॥
गुरु आज्ञा कवहूँ नहि टारे । जव गुरु अपने पास पुकारे ॥ २ ॥
जावे तव गुरुदेव किनारे । दंड कमंडलु माला धारे ॥ ३ ॥
अजिन मेखला जटा जनेऊ । धारे दर्भ करे गुरु सेऊ ॥ ४ ॥
भोजन हवन स्नान जप पूजन । मूत्र मुरीष करे उत्सर्गन ॥ ५ ॥
वोले कुछ नहि मौन रखावे । नख रोमन को नहीं कटावे ॥ ६ ॥
पाले ब्रह्मचर्य व्रत सारा । वीर्यपात से करे किनारा ॥ ७ ॥
कवहूँ वीर्यपात हो जावे । कर मज्जन त्रिपदि जपवावे ॥ ८ ॥
गौ द्विज गुरू वृद्धजन भानू । करे उपासन देव कृशानू ॥ ६ ॥
संध्या काल यदा दोउ आवे । जापे त्रिपदी मौन रखावे ॥ १० ॥

दोहा- हे उद्धव आचार्य को, मम स्वरूप ही जान ।
तिरस्कार उनका कभी, करे नहीं व्रतवान ॥ १५८ ॥

चौ- साधारण मानव लख उनमें । दोष निकाले नहि गुरु गुण में ॥ १ ॥
सर्वदेवमय गुरू कहावे । शायं प्रात भक्ष्य ले आवे ॥ २ ॥
करे उसे गुरु के प्रति अरपन । ले आज्ञा पावे फिर भोजन ॥ ३ ॥
शय्या आसन अरु गुरु याना । अधिक न दूर रहे व्रतवाना ॥ ४ ॥
हो अतिनम्र व दोउ कर जोरी । सेवा गुरु की करे बहोरी ॥ ५ ॥
सब भोगन से वर्जित होकर । करे गुरूकुल वास निरन्तर ॥ ६ ॥
विद्याध्ययन पूर्ण पर्य्यन्ता । राखे ब्रह्मचर्य व्रत सन्ता ॥ ७ ॥
नैष्ठिक ब्रह्मचारि के लच्छन । तुम्हरे अर्थ करूँ मैं वर्णन ॥ ८ ॥
नैष्ठिक ब्रह्मचर्य व्रतधारी । नियम समेत पढै श्रुति सारी ॥ ९ ॥
गुरु सेवा में अपना जीवन । करदे हे उद्धव तब अर्पन ॥ १० ॥

दोहा- गुरु अनल निज आतमा, प्राणी सभी समान ।
समझे सबके हिय विषै, एक रूप भगवान ॥ १५९ ॥

चौ- करे निरीक्षण कबहुँ न नारी । हाँसी स्पर्श न भाषन जारी ॥ १ ॥
जे नारिन की संगति करहीं । उनते दूर सर्वदा रहहीं ॥ २ ॥
मैथुन करत प्राणियन ऊपर । दृष्टि पात करे नहि वयों कर ॥ ३ ॥
संध्या शौच आचमन स्नाना । सेवे तीर्थ भजे भगवाना ॥ ४ ॥
नहीं अभक्ष्य वस्तु को खायें । नहिं अछूत के हाथ लगायें ॥ ५ ॥
संभाषण वर्जित जो होई । वार्तालाप करे नहि सोई ॥ ६ ॥
राखे सब प्राणिन से स्नेहू । नियम सर्व आश्रम के येहू ॥ ७ ॥
इन नियमों का पालन कर्ता । विप्र व ब्रह्मचर्य व्रतधर्ता ॥ ८ ॥
हो तेजस्वी अनल समाना । करते उसके पाप पयाना ॥ ९ ॥
उसका शुद्ध हृदय हो जाता । ऐसा भक्त मुझे ही पाता ॥ १० ॥

दोहा- नैष्ठिक विधि व्रत की सखे, इच्छा यदि नहि होय ।
गेहाश्रम में गमन की, चाह करे यदि कोय ॥ १६० ॥

चौ- पढकर सब श्रुति नियम समेतू । देकर भेट गुरू के हेतू ॥ १ ॥
उनकी अनुमति लेकर पूरन । करे समावर्तन कर मज्जन ॥ २ ॥
पाछे घर वा वन में जाये । आश्रम ते आश्रम में आये ॥ ३ ॥
गेहाश्रम की यदि रुचि होई । निज अनुरूप नार हो जोई ॥ ४ ॥

शुभ लक्षण सम्पन्न कुलीना । हो नहि वह निज वर्ण विहीना ॥ ५ ॥
उस सह व्याह रचा वह लेवे । ब्रह्मचर्य आश्रम तज देवे ॥ ६ ॥
होवे यदि जो काम अधीना । क्रम से व्याहे वर्ण विहीना ॥ ७ ॥
यज्ञ व याग अध्ययन दाना । वर्ण त्रयि अधिकार समाना ॥ ८ ॥
प्रति ग्रह अध्यापन अरु याजन । ये अधिकार विप्र के कारन ॥ ९ ॥
प्रतिग्रह वीचे दोप लखाई । अपर वृत्ति से करे कमाई ॥ १० ॥

दोहा- **उन दोउन के बीच भी, उसको दोप लखाय ।**
स्वामी द्वारा त्यक्त जो, उन खेतन में जाय ॥ १६१ ॥

चौ- पतित कणों से करे गुजारा । अन्य वृत्ति का ले न सहारा ॥ १ ॥
विप्र देह अति दुर्लभ भाई । क्षुद्र काम हित नहीं बनाई ॥ २ ॥
इसको तो जीवन पर्यन्ता । तप मख कृच्छ्र मोक्ष हित अन्ता ॥ ३ ॥
निज घर में वस कर द्विज जोई । पाले धर्म सर्वदा सोई ॥ ४ ॥
उञ्छवृत्ति से करे गुजारा । तुष्ट चित्त हो सभी प्रकारा ॥ ५ ॥
मुझ में ही मन करे समर्पित । आसक्तिन के रहे न आश्रित ॥ ६ ॥
विन सन्यास धरे ही उद्धव । पावे परम मोक्ष वह मानव ॥ ७ ॥
मुझमें लीन विप्र दुख पाये । सव प्रकार से उसे वचाये ॥ ८ ॥
ऐसा पुरुप मुझे बहु प्यारा । हरूँ कष्ट में तासु अपारा ॥ ९ ॥
नृप लक्षण अब तुम्हें सुनावे । प्रजाजनों का कष्ट मिटावे ॥ १० ॥

दोहा- **पाले पुत्रन को पिता, नृप भी उसी प्रकार ।**
करे प्रजा की पालना, रखकर सद व्यवहार ॥ १६२ ॥

चौ- करे प्रजा का पालन ऐसे । छू सकता उसको अघ कैसे ॥ १ ॥
अन्त समय वह सूर्य समाना । जावे सुरपुर चढे विमाना ॥ २ ॥
विप्र यदा दुःखित हो जावे । खड्ग व वैश्यवृत्ति अपनावे ॥ ३ ॥
सेवा नीच किन्तु नहि कीजे । श्वान वृत्ति को तो तज दीजे ॥ ४ ॥
क्षत्रिय पर जब आफत आवे । वैश्य वृत्ति से काम चलावे ॥ ५ ॥
श्वान वृत्ति का किन्तु सहारा । लेवे नहि नृप किसी प्रकारा ॥ ६ ॥
शूद्रवृत्ति का लेय सहारा । वैश्य वर्ण भी करे गुजारा ॥ ७ ॥
आफत शुद्र वर्ण पर आवे । कारु वृत्ति से गुजर चलावे ॥ ८ ॥
जब अपनी आफत टल जावे । वापिस अपना कर्म रचावे ॥ ९ ॥
ब्रह्म यज्ञ कर ऋपियन पोपे । पितृ यज्ञ कर पितरन तोपे ॥ १० ॥

दोहा— स्वाहा करके सुरन को, भूतन कर बलिदान ।
अन्नादिक ते नरन को, समझ उन्हें भगवान ॥ १६३॥

चौ- जे धन बिना यतन मिल जाये । शुद्ध वृत्ति से उसे कमाये ॥ १ ॥
जिसके द्वारा नौकर चाकर । हो नहि दुखी वंश के भीतर ॥ २ ॥
यज्ञ कार्य में उसे लगाये । उससे ही शुभ फल वह पाये ॥ ३ ॥
सावधान रहकर तज चिन्ता। निज कुल में हो नहि आसक्ता ॥ ४ ॥
दर्शित और अदर्शित जग की । देखे नष्ट वस्तु सुरपुर की ॥ ५ ॥
भाई बन्धु पुत्र निज नारी । पान्थ संग सम इन्हें पुकारी ॥ ६ ॥
सुपने सम लख करके येहू । यों विचार कर फँसे न गेहू ॥ ७ ॥
अभ्यागत सम करे निवासा । रखे न घर में मोह जरा सा ॥ ८ ॥
सदा गृहस्थ धरम के द्वारा । पूजे मुझको भली प्रकारा ॥ ९ ॥
करे सन्त जन येन प्रकारा । मिलती उसको भक्ति अपारा ॥ १० ॥

दोहा— पावे मेरी भक्ति जब, घर वा विपिन निवास ।
सन्त कहीं भी जा बसे, रखकर मेरी आस ॥ १६४ ॥

चौ- पुत्र यदि घर में हो कोई । सोंपे धन सम्पद तिय सोई ॥ १ ॥
पाछे ले लेवे सन्यासा । त्याग सर्वदा ममता आसा ॥ २ ॥
जो नर रहे गृहस्थी अन्दर । करता कर्म नही यह सुन्दर ॥ ३ ॥
घर गृहस्थ में आसत होकर । धन तिय सुत आशा में फँस कर ॥ ४ ॥
हाय हाय करता दिन राती । आयु व्यर्थ तासु नस जाती ॥ ५ ॥
होय मूढता वश नर जोई । कृपण और तिय लम्पट होई ॥ ६ ॥
पड़ जाते मम मैं के फेरे । सोचा करते साँझ सवेरे ॥ ७ ॥
मोरे वृद्ध जनक अरु माता । बालप्रजा नारी सुत भ्राता ॥ ८ ॥
मो बिन जीयहिं कवन प्रकारा । करत मूढमति येन विचारा ॥ ९ ॥
गेह वासना आसत होकर । तृप्त होत नहिं मन के भीतर ॥ १० ॥

दोहा- मृत्यु समय मानव वह, कर कर उनका ध्यान ।
दुखी होय अति मन विषे, जावत यम के स्थान ॥ १६५॥

चौ- बोले कृष्णचन्द्र बल भैया । बानप्रस्थ का सुनो रवैया ॥ १ ॥
इच्छा बानप्रस्थ की होई । सोंपे पुत्र हेतु तिय सोई ॥ २ ॥
अथवा स्वयं संग ले जावे । तीन भाग वय विपिन बितावे ॥ ३ ॥
शुष्क कन्द फल मूल लहारे । जीवन यों वन बीच गुजारे ॥ ४ ॥

धारे तृण वल्कल मृगछाला । करे स्नान जल बीच त्रिकाला ॥ ५ ॥
केश रोम नख नहीं कटावे । नहीं दशन को खूब मजावे ॥ ६ ॥
मैल देह का नही हटावे । महि उपर पड़ रात बितावे ॥ ७ ॥
रहहीं ग्रीष्मकाल जब भाई । तापे पंचानल तब ताई ॥ ८ ॥
वर्षा बीचे जल की धारा । करे सहन वह भली प्रकारा ॥ ९ ॥
मौसम शीतकाल की आवे । कंठ तलक जल में घुस जाये ॥ १० ॥

दोहा- **तप मय जीवन इस तरह, अपना करे गुजार ।**
कन्द मूल फल भूनकर, केवल करे अहार ॥ १६६॥

चौ- अथवा काल पक्व फल खाये । ऊखल पाहन ते पिसवाये ॥ १ ॥
रद ते चबा चबा कर खाये । कंद मूल फल नूतन लाये ॥ २ ॥
संचित करे पदारथ कोई । नहीं पदारथ खावे सोई ॥ ३ ॥
वन्य अन्न से चरू पकावे । उससे वैदिक कर्म रचावे ॥ ४ ॥
वेद विहित पशुअन के द्वारा । पूजे मोहिं न किसी प्रकारा ॥ ५ ॥
हवन व दर्श व पौरण मासा । करे व्रतादिक चातुर्मासा ॥ ६ ॥
शुष्क माँस हो यों तप द्वारा । कर सेवा मम तप अनुसारा ॥ ७ ॥
जाकर महर्लोक में आछे । पावे मोक्ष धाम वह आछे ॥ ८ ॥
तुच्छ कामना हित नर कोई । करता जो तप मूरख होई ॥ ९ ॥
हो असमर्थ यदा नियमन में । व्यापे कंप वृद्धता तन में ॥ १० ॥

दोहा- **आत्मा में स्थापित करे, यज्ञ अगनि उस काल ।**
पाछे मुझमें चितधर पैठे, अनल विशाल ॥ १६७ ॥

चौ- संत विरक्त नही जो माना । उस प्रति लागू यही विधाना ॥ १ ॥
जो नर विरत जगत से होहीं । पूजे वेद नियम से मोही ॥ २ ॥
ऋत्विज के प्रति सब दे डारे । आत्मा बीच अनल पुनि धारे ॥ ३ ॥
जब ब्राह्मण सन्यास धरावे । हो निरपेक्ष कहीं पर जावे ॥ ४ ॥
सुर गण तिय पुत्रादिक सारे । मिलकर विघ्न तदा बहु डारे ॥ ५ ॥
ये निज मन यों करे विचारा । त्याग हमें यह जावत पारा ॥ ६ ॥
कहूँ धरम अब यतियन बरणन । जो यति करे वस्त्र यदि धारन ॥ ७ ॥
धारे केवल वह कौपीना । रखहिं न दूसर वस्तु अधीना ॥ ८ ॥
राखे केवल दंड कमंडल । नयनन देख धरे पद भूतल ॥ ९ ॥
पीये छान वस्त्र से पानी । बोले कभी न अनृत बानी ॥ १० ॥

दोहा- करे काम सब सोच कर, बुद्धिपूर्वक भ्रात ।
दंडमात्र से ही नहीं, दंडी वह बन जात ॥ १६८ ॥

चौ- राखे मौन व प्राणायामा । करे कर्म सदा निष्कामा ॥ १ ॥
जो जातिच्युत हो गो घाती । करता नीच कर्म दिन राती ॥ २ ॥
जो द्विज मदिरा पिये अनारी । कन्या बेच द्रव्य ले भारी ॥ ३ ॥
उस घर से भिक्षा ना लाये । अन्य सभी से भिक्षण पावे ॥ ४ ॥
सात गेह से भिक्षा लावे । जितना भी उनसे मिल जावे ॥ ५ ॥
उतने से ही गुजर चलावे । अधिक गेह में कबहुँ न जावे ॥ ६ ॥
एक बात का राखे ध्याना । जिन जिन घर से भिक्षा लाना ॥ ७ ॥
निश्चित उन्हें प्रथम कर पावे । भिक्षा लेय सरोवर जावे ॥ ८ ॥
कर पद धोये वहाँ अखीरा । भिक्षा करे पुनीता नीरा ॥ ९ ॥
देवे अन्न भूत सुर कारन । शेषित अन्न करे पुनि भोजन ॥ १० ॥

दोहा— सन्यासी विचरण करे, महि पर सदा अकेल ।
त्यागे निज आसक्तियाँ, सभी इन्द्रियाँ पेल ॥ १६९ ॥

चौ- मस्त रहे वह अपने आपा । रहहीं प्रेमलीन चुप चापा ॥ १ ॥
हो प्रतिकूल परिस्थिति भाई । राखे धीरज कष्ट सहाई ॥ २ ॥
भिक्षा काज नगर वृज ग्रामा । विचरे यात्रिन के विश्रामा ॥ ३ ॥
आश्रम वन सरिता गिरि ऊपर । विचरे पुण्य देश जो सुन्दर ॥ ४ ॥
आश्रम वानप्रस्थियन जाये। भिक्षा अधिक तौर उन लाये ॥ ५ ॥
दृश्यमान जगत यह सारा । मिथ्या समझे सभी प्रकारा ॥ ६ ॥
कबहुँ न इसमें चित्त लगाये । सदा विरत याते हो जाये ॥ ७ ॥
धरम सु परमहंस का सारा । करूँ कथन सुनु वचन हमारा ॥ ८ ॥
ज्ञाननिष्ठ यति होय विरक्ता । त्यागे तब आश्रम की सत्ता ॥ ९ ॥
वेद नियम से भी रह दूरे । निर्भय होकर इत उत विचरे ॥ १० ॥

दोहा- बुध होकर भी बाल सम, इत उत खेले खेल ।
ज्ञानी होकर मत्त सम, विचरे इत उत गेल ॥ १७० ॥

चौ- वेदवाद में होय वितण्डी । त्यागे धर्म सभी पाखंडी ॥ १ ॥
रहहीं तर्क वितर्कन दूरी । ले नहि काहू पक्ष जरूरी ॥ २ ॥
राखे सबसे सद्व्यवहारा । व्याकुलता से करे किनारा ॥ ३ ॥
निन्दक निन्दा करहिं जो कोई । सो अपमान सहे खुश होई ॥ ४ ॥

इस तन के खातिर अनजाना । करे वैर नहीं पशु समाना ॥ ५ ॥
प्राणिन बीच बसत परमात्मा । जानो सबकी एकहि आत्मा ॥ ६ ॥
यथा इन्दु जल कुंभ समाना । आत्मा का भी यही प्रमाना ॥ ७ ॥
हो ना खिन्न मिले ना खाना । मिले असन तो मुदित न होना ॥ ८ ॥
मन में हर्ष विषाद विकारा । आने दे नहिं किसी प्रकारा ॥ ९ ॥
ये जानो दोउ देव अधीना । खोजे भिक्षा स्थान नवीना ॥ १० ॥

दोहा- **रक्षा होती प्राण की, भिक्षा के आधार ।**
प्राण बिना होता नहीं, तत्वन का सुविचार ॥ १७१ ॥

चौ- तत्व ज्ञान पाकर सन्यासी । मुक्ति फल पावत सुख रासी ॥ १ ॥
बिन रुचि के मिल जाये जैसा । शय्या पट अन्नादिक वैसा ॥ २ ॥
उनते ही यति काम चलावे । भाव न भला बुरा मन लावे ॥ ३ ॥
नियम व शौच आचमन स्नाना । रहे अनासत त्याग प्रयाना ॥ ४ ॥
जति को भेद रूप इस जग की । होत प्रतीति कदापिन तन की ॥ ५ ॥
मम स्वरुप को जब पहिचाने । सब प्रकार तब वह यहि जाने ॥ ६ ॥
रहता जब लगि स्थूल शरीरा । कबहूँ होत प्रतीति अखीरा ॥ ७ ॥
रहता देह यदा नहि भाई । मुझमें लीन संत हो जाई ॥ ८ ॥
तब ही उसे जगत की कोई । कुछ भी सखे प्रतीति न होई ॥ ९ ॥
जो हो पुरुष संयमी कोई । मन इन्द्रियँ जिनके वश होई ॥ १० ॥

दोहा- **भोग वासना का सखे, अन्तिम फल दुख दाय ।**
उनसे तब वह विरत हो, गुरू शरण में जाय ॥ १७२ ॥

चौ- मेरा रूप गुरु को जाने । दोष दृष्टि उनमें नहि आने ॥ १ ॥
श्रृद्धा भक्ति सहित अति आदर । रहे लीन गुरु सेव निरन्तर ॥ २ ॥
जब लगि ब्रह्म बोध ना होई । गुरु सेवा त्यागे ना सोई ॥ ३ ॥
काम क्रोध मद लोभ व मोहू । मत्सर प्रबल शत्रु षट् ओहू ॥ ४ ॥
इन पर विजय नहीं जिन पाई । जिनके हृदय ज्ञान नहिं भाई ॥ ५ ॥
नहि वैराग्य जासु मन होई । यदि सन्यास धरे नर जोई ॥ ६ ॥
वह सन्यास धरम का भारी । करता सत्यानास अनारी ॥ ७ ॥
आत्मा पूज्य सुरन को सोई । करता जतन ठगन का मोई ॥ ८ ॥
इह पर वह दोउ लोक बिगारे । नहीं वासना जती निवारे ॥ ९ ॥
धर्म अहिंसा शान्ति जती का । तप अरु भगवद्भाव वनी का ॥ १० ॥

दोहा- प्राणिन की रक्षा करे, करे दान मखयाग ।
धर्म गृहस्थी का महा, सब प्रति अति अनुराग ॥ १७३॥

चौ- तव संतोष व शौच निरासा । आवत ऋतु तिय संग विलासा ॥ १ ॥
राखे सब में ही मम भावा । धर्म गृहस्थ मुख्य यह गावा ॥ २ ॥
धर्म ब्रह्मचारी का सुन्दर । द्विज गुरु सेवा करे निरन्तर ॥ ३ ॥
करे भजन यों मनुज हमारा । पावत अविचल भक्ति अपारा ॥ ४ ॥
प्राकृत अप्राकृत इस जग का । एक मात्र स्वामी मैं सबका ॥ ५ ॥
यों निज धरम पालना द्वारा । कर पावन चित येन प्रकारा ॥ ६ ॥
मम स्वरूप को जानत जोई । करता प्राप्त मुझे नर सोई ॥ ७ ॥
हे उद्धव तव प्रति यह सारा । वर्णाश्रमियन धर्म उचारा ॥ ८ ॥
पालहि भक्ति सहित यदि येही । मिलहीं परममोक्ष पद तेहीं ॥ ९ ॥
मोसे जो पूछी तुम बाता । वरणीं सभी तोर प्रति भ्राता ॥ १० ॥

दोहा- पालहि जिन जिन धर्म को, वर्णाश्रम अनुसार ।
दर्शन मोरे रूप का, पावे येन प्रकार ॥ १७४ ॥

चौ- जो ज्ञानी अनुभव पर्यन्ता । माया का जो जानत अन्ता ॥ १ ॥
ज्ञान व उसके साधन द्वारा । मिथ्या समझे यह संसारा ॥ २ ॥
ज्ञानी का मैं एक सहारा । समझत इष्ट मुझे वह सारा ॥ ३ ॥
सुरपुर की भी उसको कोई । काहू भाँति रूचि नहिं होई ॥ ४ ॥
जो विज्ञान ज्ञान को जाने । ऐसे सन्त मुझे पहिचाने ॥ ५ ॥
जाकर सन्त वही मम धामा । पावे मोक्ष स्थान जिन नामा ॥ ६ ॥
तत्व सुज्ञान उदय जब होई । पावें परम सिद्धि शुभ सोई ॥ ७ ॥
जप तप से जो सिद्धि न पावे । उससे अधिक सिद्धि मिल जावे ॥ ८ ॥
ज्ञान सहित उद्धव इस कारन । आत्म रूप का कर तुम दरसन ॥ ९ ॥
पुनि विज्ञान ज्ञान युत होकर । करो भक्ति युत भजन निरन्तर ॥ १० ॥

दोहा- बड़े बड़े ऋषि मुनिन ने, कर मख ज्ञान विग्यान ।
अपने अन्तः करण में, लिया मुझे पहिचान ॥ १७५ ॥

चौ- सिद्धि रूप में ऋषी मुनीशा । जानत मुझको ही जगदीशा ॥ १ ॥
तीन विकार समूह शरीरा । रहती नहि यह देह अखीरा ॥ २ ॥
नहि अस्तित्व प्रथम कुछ जेहू । दीखत मध्यकाल में येहू ॥ ३ ॥
जानो जादू खेल समाना । माया मय कारण नहिं आना ॥ ४ ॥

तन के हो षट् भाव विकारा । इनते नहिं सम्बन्ध तुम्हारा ॥ ५ ॥
इस प्रतीति के तुम ही भ्राता । केवल अधिष्ठान इक जाता ॥ ६ ॥
उसके भी ये नहीं विकारा । असत वस्तु का नहीं असारा ॥ ७ ॥
प्रथम न असत वस्तु दिखलाये । पीछे भी वह कहीं न पाये ॥ ८ ॥
इसी हेतु बीचे भी कोई । विद्यमानता तासु न होई ॥ ९ ॥
तुमहीं सर्व विश्व के स्वामी । विश्व रूप हे अन्तरयामी ॥ १० ॥

दोहा- **शुद्ध ज्ञान वैराग्य युत, भक्ति योग भी मोय ।**
करो कथन समझाय के, शरण गही मैं तोय ॥ १७६ ॥

चौ- त्रिविध ताप से इस संसारा । तप्त मनुज प्रति चरण तुम्हारा ॥ १ ॥
आश्रय प्रद दीखत इक मोंई । इन अतिरिक्त नहीं जग कोई ॥ २ ॥
महिमा नाथ अनन्त तुम्हारी । भयो पतन भव कूप मँझारी ॥ ३ ॥
काल रूप सर्प के द्वारा । डसा हुआ मैं सभी प्रकारा ॥ ४ ॥
मिटे न तृष्णा तदपि न मोरी । बढ़ती जावत यह वर जोरी ॥ ५ ॥
करो कृपाकर अब उद्धारा । बरसा वचन सुधा की धारा ॥ ६ ॥
भीष्मपितामह से इक बारा । पूछा प्रश्न युधिष्ठिर द्वारा ॥ ७ ॥
भयो निवृत युद्ध जब भारत । देख सुहृद वध हो अति आरत ॥ ८ ॥
तब यों भीष्मपितामह द्वारा । सुनकर धर्म युधिष्ठिर सारा ॥ ९ ॥
मोक्ष धर्म पूछा जब भाई । बोले भीष्म तदा सुनुराई ॥ १० ॥

दोहा- **श्रवण किये जो भीष्म मुख, ज्ञानयुक्त जो धर्म ।**
तेरे प्रति वर्णन करूँ, उन सब का मैं मर्म ॥ १७७ ॥

चौ- भीष्म पितामह के मुखद्वारा । साधन मोक्ष धर्म का सारा ॥ १ ॥
श्रद्धा अरु विज्ञान व ज्ञाना । भक्ति भावयुत पूर्ण महाना ॥ २ ॥
सब प्राणिन में इनके द्वारा । तत्व चतुर्दश द्विगुण प्रकारा ॥ ३ ॥
अधिष्ठान रूप से इनमें । अनुगत आत्मतत्व का मन में ॥ ४ ॥
होवत जिनमें सन्मुख सारा । निश्चित वहि है ज्ञान हमारा ॥ ५ ॥
आत्म तत्व का हो जब अनुभव । वहि विज्ञान कहावत उद्धव ॥ ६ ॥
मह तत्वादिक जबै विनासे । रहे शेष वहि ब्रह्म प्रकासे ॥ ७ ॥
सन्मुख श्रुति ऐतिह्य अनुमाना । जानो तुम यह चार प्रमाना ॥ ८ ॥
इनते बाधित होकर संता । आत्मतत्व खोजत वह अन्ता ॥ ९ ॥
होवत विरत जगत जंजाला । खोजत मोहिं सन्त सब काला ॥ १० ॥

दोहा- **ब्रह्मलोक पर्य्यन्त की, सर्व वस्तु मतिमान ।**
उन सब को इस लोक सम, नश्वर वदत सुजान ॥ १७८॥

चौ- वरणा प्रथम भक्ति का व्योरा । सुनौ भक्ति साधन इस तोरा ॥ १ ॥
मेरी कथा कीरतन पूजन । सेवा सन्तन स्तुति अरु वन्दन ॥ २ ॥
सब में राखे भाव हमारा । मम हित करे परिश्रम सारा ॥ ३ ॥
वाणी से गुण करे सुगायन । मन में मुझको करे समर्पन ॥ ४ ॥
बने भोग सुख धन परित्यागी । ममहित दान धरम अनुरागी ॥ ५ ॥
इन धर्मो का करे सुपालन । करे मोर प्रति आत्म निवेदन ॥ ६ ॥
प्रेममयी भकति हिय तासू । प्रकट होत हे उद्धव आसू ॥ ७ ॥
आत्मा में चित रहे समरपन । पावत धर्मादिक तब सन्तन ॥ ८ ॥
जब चित देह गेह लवलीना । बढती रजगुण वाढ़ नवीना ॥ ९ ॥
लुप्त होत तब धर्म व ज्ञाना । बढता मोह अधर्म आपाना ॥ १० ॥
जासे होती भकति हमारी । सोही मुख्य धर्म संसारी ॥ ११ ॥

दोहा- **ब्रह्म आत्मा का अरे, जिससे होता भान ।**
हे उद्धव उसको सदा, जानो सच्चा ज्ञान ॥ १७९ ॥

चौ- विषयों से रहता जो दूरी । जानो वहि वैराग्य जरूरी ॥ १ ॥
बोले उद्धव हे भगवाना । कितने यम अरुनियम बखाना ॥ २ ॥
शम दम धृति व तितिक्षा दाना । सत्य शौर्य तप त्याग प्रमाना ॥ ३ ॥
ऋतु धन इष्ट दक्षिणा यागा । बल ऐश्वर्य व लाभ विभागा ॥ ४ ॥
सुख दुख श्री विद्या का वर्णन । लज्जा पण्डित मूरखन लच्छन ॥ ५ ॥
स्वर्ग नरक कहु उत्पथ पन्था । बन्धु व गेह कवन सद्ग्रन्था ॥ ६ ॥
आढ्य दरिद्र कृपण अरु ईश्वर । करो कथन इनको हे यदुवर ॥ ७ ॥
बोले कृष्णचन्द्र भगवाना । यम प्रमाण द्वादश यों माना ॥ ८ ॥
सत्य अहिंसा लाज अचौरी । संचय हीन असंगति थौरी ॥ ९ ॥
ब्रह्मचर्य आस्तिकता भाई । मौन व क्षमा अभय स्थिरताई ॥ १० ॥

दोहा- **शौच व जप तप मख अरु, अभ्यागत सत्कार ।**
श्रृद्धा मम अरचन तथा, तीर्थाटन हर बार ॥ १८० ॥

चौ- राखे चेष्टा पर उपकारा । गुरु सेवा सन्तोष अपारा ॥ १ ॥
द्वादश नियमन का इस तोरा । गाया मैंने सब इस तोरा ॥ २ ॥
यम नियमन को साधे जोई । पावत भोग मोक्ष नर सोई ॥ ३ ॥

बुद्धि का मुझमें लग जाना । उसको ही मैंने शम माना ॥ ४ ॥
इन्द्रिय संयम दम सुनुभाई । दुःखन सहन तितिक्षा गाई ॥ ५ ॥
जननेद्रिय जीहा के ऊपर । विजय प्राप्त ही धीरज प्रियवर ॥ ६ ॥
प्राणिन प्रति जो वैर तजाये । दान वही उत्तम कहलाये ॥ ७ ॥
काम त्यागही तप अति भारी । विजय वासना शौर्य पुकारी ॥ ८ ॥
सम दर्शन ही सत्य कहाये । प्रिय भाषण ऋत सन्त बताए ॥ ९ ॥
कर्म वासना पर जय पावे । साँचा शौच यही बतलाये ॥ १० ॥

दोहा- **सभी काम का त्याग ही, है साँचा सन्यास ।**
धन अभिष्ट सब नरन का, जाना धर्महि खास ॥ १८१॥

चौ- मैं ही ईश्वर यज्ञ कहाऊँ । शिक्षा दान दक्षिणा गाऊँ ॥ १ ॥
बल ही प्राणायाम बखाना । मम भक्ति ही लाभ महाना ॥ २ ॥
षड गुण मम ऐश्वर्य बताये । उसका नाम भाग्य कहलाये ॥ ३ ॥
भेद रहित दृष्टि जो भाई । सर्व श्रेष्ठ विद्या वहि गाई ॥ ४ ॥
पाप कर्म में रोक लगाये । साँची लाज वही कहलाये ॥ ५ ॥
उदासीनतादिक गुण भाई । तन की साँची सुन्दरताई ॥ ६ ॥
सुख दुख त्याग कहाँ सुख साँचा । काम सुखेच्छा ही दुख बाँचा ॥ ७ ॥
पंडित बन्ध मोक्ष जिन जाना । अहं बुद्धियुत मूरख माना ॥ ८ ॥
पंथ वही सुन्दर कहलाये । जिस उपाय ते मुझको पाये ॥ ९ ॥
प्रवृति पंथ ही उत्पथ गाया । सत्व गुणोदय स्वर्ग कहाय ॥ १० ॥

दोहा- **तम अधिकाई ही नरक, गुरू बन्धु सुनु भ्रात ।**
नर शरीर ही गेह है, गुण युत आढ्य कहात ॥ १८२ ॥

चौ- अनाशक्त विषयन से जोई । नर समर्थ जानो तुम सोई ॥ १ ॥
विषयन में आसत जो होई । नर असमर्थ कहावत सोई ॥ २ ॥
इन्द्रिय अजित कृपणता गाई । तृप्त नहीं दारिद वहि पाई ॥ ३ ॥
किये निरूपित सुन्दर मैंने । पूछे उद्धव प्रश्न जो तेने ॥ ४ ॥
इनको जो मानव पहिचाने । मोक्ष सहायक ये सब माने ॥ ५ ॥
सबका सार यहि तुम जानो । गुण दोषों पर दृष्टि न आनो ॥ ६ ॥
तव प्रति गुण दोषों के लच्छन । करूँ कहाँ तक इनका वर्णन ॥ ७ ॥
सबसे बडा दोष है येही । गुण दोषन पर जो अति स्नेही ॥ ८ ॥

सबसे गुण है यही महाना । दे नहि गुण दोषन पर ध्याना ॥ ९ ॥
बोले उद्धव पंकज नैना । विधि प्रतिवेध निगम तप वैना ॥ १० ॥

दोहा- **विधि निषेध गुण कर्म के, दोषन की पहचान ।**
वर्णाश्रम का भेद भी, हो वेदन से ज्ञान ॥ १८३ ॥

चौ- स्वर्ग नरक का भेद दयालू । हो श्रुतियन से बोध कृपालू ॥ १ ॥
श्रुति ही वाणी नाथ तुम्हारी । विधि निषेध इन बीच पुकारी ॥ २ ॥
श्रुति प्रतिपादित कारज नीका । श्रुति निषेध सब कारज फीका ॥ ३ ॥
प्रति लोम व अनुलोमज कारन । द्रव्य देश वय काल विभाजन ॥ ४ ॥
श्रुति ही श्रेष्ठ मार्ग का दर्शन । करवाती सबको प्रभु निशि दिन ॥ ५ ॥
साध्य साधना का भी निर्णय । होवत श्रुति द्वारा ही निश्चय ॥ ६ ॥
श्रुति ही प्रभो तुम्हारी वानी । काहू की न कल्पना मानी ॥ ७ ॥
किन्तु हे प्रभो तुम्हारी वानी । भेद निषेध करत भी जानी ॥ ८ ॥
यह विरोध लखकर मन मेरे । होवत भ्रम अति प्रभो घनेरे ॥ ९ ॥
करो निवारण यह भ्रम भारी । बोले कृष्ण सन्त हितकारी ॥ १० ॥

दोहा- **ज्ञान कर्म अरु भक्ति का, श्रुति व अश्रुति अनुसार ।**
गाये मैंने योग हे, उद्धव तीन प्रकार ॥ १८४ ॥

चौ- नर विरक्त जगत में जोई । भक्ति योग सिद्धि प्रद होई ॥ १ ॥
कर्म योग के वर अधिकारी । कामी जन सब लोक पुकारी ॥ २ ॥
असत विरत्त नहीं नर जोई । भक्ति योग सिद्धि प्रद सोई ॥ ३ ॥
मोरी कथा श्रवण में भ्राता । श्रृद्धा नहीं विरत्ति में जाता ॥ ४ ॥
तब लगि त्याग करम सब खोटे । केवल कर्म करहिं शुभ मोटे ॥ ५ ॥
जो निज धर्म रहहिं लवलीना । तासु पाप सब होवत छीना ॥ ६ ॥
स्वर्ग नरक दोउ लोक निवासी । इस मानव तनु के अभिलासी ॥ ७ ॥
मानव तनु अति दुर्लभ ताता । भकति व मुक्ति इसी से पाता ॥ ८ ॥
बुद्धिमान पुरुष जो कोई । स्वर्ग नरक रुचि तासु न होई ॥ ९ ॥
पावहिं शुद्ध ज्ञान अरु भकती । पावहि अन्त समय वह मुकती ॥ १० ॥

दोहा- **मृत्यु ग्रस्त लखकर इसे, हे उद्धव मतिमान ।**
करे साधना मोक्ष की, मानव तनु दरम्यान ॥ १८५ ॥

चौ- छिद्यमान तरु को खग जैसे । जावत अन्य ठौर तज वैसे ॥ १ ॥
जीव अनासत त्याग शरीरा । मोक्ष भागि बन जात अखीरा ॥ २ ॥

हे प्रिय उद्धव से दिन राती। क्षण क्षण तन की आयु नसाती ॥ ३ ॥
समझ इसे जो भय से काँपे। कबहुँ न संकट उस मन व्यापे ॥ ४ ॥
वह व्यक्ति आसक्तिन तजकर। पावत परम तत्व हे प्रियवर ॥ ५ ॥
जन्म मरण से निस्पृह होकर। पावत शान्ति मार्ग सब तजकर ॥ ६ ॥
करहिं न जतन मनुज यों कोई। तासू जनम अकारथ होई ॥ ७ ॥
मानव तन ही सब फल दाया। सत्कर्मिन प्रति सुलभ बताया ॥ ८ ॥
भवसागर से पार उतारन। नर तन ही सबसे शुभ साधन ॥ ९ ॥
कर्ण धार गुरु को जो पाकर। तरहिं नही जो नर भव सागर ॥ १० ॥

दोहा— **आत्म हनन का लागहीं, उसको पाप अपार।**
अधोपतन हो जावहीं, जाकर यम के द्वार ॥ १८६ ॥

चौ- ज्ञानयोग की यदि अभिलासा। होय विरत्त जितेन्द्रिय खासा ॥ १ ॥
राखे मन को उद्धव निश्चल। भटके मन तो मिले न कुछ फल ॥ २ ॥
मन जब इत उत भटकन लागे। कर उपाय तब मन को आगे ॥ ३ ॥
अश्वारुढ सदा नर जैसे। राखहिं निज वश अश्वहिं वैसे ॥ ४ ॥
निज वश में राखे तेहि भाई। यामे तनिक न करे ढिलाई ॥ ५ ॥
मन ऊपर निग्रह जो राखे। परम योग सन्त यहि भाखे ॥ ६ ॥
तन पर्यन्त प्रकृति से लेकर। गाया क्रम जग का जो प्रियवर ॥ ७ ॥
करे सर्वदा उन अनुसारा। सृष्टि चिन्तना भली प्रकारा ॥ ८ ॥
गुरु शिक्षा पा भली प्रकारा। निज स्वरूप चिन्ते हर बारा ॥ ९ ॥
मन चञ्चलता तासु नसावे। अन्य उपाय नहीं कुछ पावे ॥ १० ॥

दोहा- **योगमार्ग यम आदि अरु, मम पूजन अनुसार।**
करे स्मर्ण यों सर्वदा, यही जगत में सार ॥ १८७ ॥

चौ- यदि योगी वश होय प्रमादा। कर्म निषिद्ध करत भी ज्यादा ॥ १ ॥
योगी योग मार्ग के द्वारा। नासत तो भी पाप पहारा ॥ २ ॥
कृच्छ्रादिक प्रायश्चित ताता। योगिन के नहीं पाप नसाता ॥ ३ ॥
यह उपाय कर्मिन के गाये। योगिन के ये नहीं बताये ॥ ४ ॥
निज निज हक में ही अति सुन्दर। निष्ठा धारण ही अति हितकर ॥ ५ ॥
जे जे कर्म करहि यदि कोई। उसके वश कबहूँ नहीं होई ॥ ६ ॥
वेदन का एकहि अभिप्राया। राखे सबसे प्रेम सवाया ॥ ७ ॥
होय जहाँ पर कथा हमारी। राखे उसमें प्रेम अपारी ॥ ८ ॥

भोग व भोग वासना सारी । दुख रूपी जानो येहि भारी ।। ६ ।।
हो असमर्थ तजन को ये ही । तदपि मुदित हो सेवे तेहि ।। १० ।।

दोहा- **साँचे मन ते हे सखे, दुखप्रद लखकर येहु ।**
मन ही मन निन्दा करे, रखे न इनमें नेहु ।। १८८ ।।

चौ- इनमें प्रीति करे ना भाई । करे भजन मेरा सुखदाई ।। १ ।।
मेरी भकती करे निरन्तर । होऊँ स्थित उसके हिय अन्दर ।। २ ।।
सभी वासना तदा नसावे । मेरा शुभ दर्शन वह पावे ।। ३ ।।
हृदय ग्रंथि टूटे तब तासू । संशय सब नस जावत आसू ।। ४ ।।
राखे मम भकती में नेहू । नहिं वैराग्य जरूरत तेहू ।। ५ ।।
उसको तो मम भकती द्वारा । मिलहिं श्रेय सब भली प्रकारा ।। ६ ।।
दान तपस्यादिक सब धर्मा । योगाभ्यास व ज्ञान व कर्मा ।। ७ ।।
ये सब मम भकती द्वारा । पावत सब विधि भक्त हमारा ।। ८ ।।
स्वर्ग मोक्ष भी विन श्रम तेही । प्राप्त होत जो हो मम स्नेही ।। ६ ।।
किन्तु हे उद्धव भक्त हमारा । करता इनते सदा किनारा ।। १० ।।

दोहा— **मम प्रेमी साधू महा, होवत वे बड़धीर ।**
स्वर्ग मोक्ष को भी उन्हे, हो नहि रुची अखीर ।। १८६ ।।

चौ- निष्कामी निर्पेक्ष जो होई । पावत भकति सर्वदा सोई ।। १ ।।
विधि निषेध गुण दोष कहाये । ये सब कर्मिन के प्रति गाये ।। २ ।।
कर्म मार्ग पर चलने हारे । विधि निषेध के रहे सहारे ।। ३ ।।
गाया श्रेष्ठ पंथ मुझ द्वारा । चालहिं इस पर भक्त हमारा ।। ४ ।।
वह मम परम धाम को जावे । पर ब्रह्म तत्व को भी वह पावे ।। ५ ।।
भक्ति ज्ञान क्रियात्मक त्यागे । सेवे विषयन सदा अभागे ।। ६ ।।
ऐसा मानव बारम्बारा । पावत योनी कई प्रकारा ।। ७ ।।
निज निज अधिकार में रहकर । निष्ठा धर्म कर्म अति सुन्दर ।। ८ ।।
रखना ही गुण सुन्दर गाया । इन विपरीत दोष कहलाया ।। ६ ।।
प्राकृत दृष्टि से सुन भाई । सारी वस्तु समान बताई ।। १० ।।

दोहा— **शुद्धि अशुद्धि दोष गुण, का शुभ अशुभ विधान ।**
इनते वास्तविक रूप की, हो जावत पहिचान ।। १६०।।

चौ- हे उद्धव सुन इनके द्वारा । करे धर्म सम्पादन सारा ।। १ ।।
सब जग का इनते व्यवहारा । चालहिं ठीक तोर पर सारा ।। २ ।।

कर्म जड़न के ये आचारा । किये प्रदर्शित सब मम द्वारा ॥ ३ ॥
धातादिक गिरि तरु समेता । पंचतत्व ते जन्मत येता ॥ ४ ॥
देह दृष्टि से सभी समाना । सर्वात्मा भी एक बखाना ॥ ५ ॥
प्रिय उद्धव सब देह समाना । पंच भूत भी एक प्रमाना ॥ ६ ॥
नाम रूप जो वेदन द्वारा । गाये भिन्न भिन्न आचारा ॥ ७ ॥
धर्मादिक साधन के कारन । संकोचित करने हित करमन ॥ ८ ॥
देशकाल वस्तुन के सारे । मैंने ही गुण दोष उचारे ॥ ९ ॥
कृष्ण सार मृग जहाँ न पावे । देश अपावन वह कहलावे ॥ १० ॥

दोहा- **कृष्णसार मृग होत भी, कीकट अरु सौ वीर ॥**
पावन होय कदापि ना, करे लाख तदवीर ॥ १६१ ॥

चौ- विप्रभक्त हो नहीं जहाँ के । होय अपावन देश वहाँ के ॥ १ ॥
विधि विहीन जे उद्धव स्थाना । ऊपर आदि अपावन माना ॥ २ ॥
समय वही पावन कहलावे । कर्म योग्य वस्तु जहँ पावे ॥ ३ ॥
शुद्धि अशुद्धि पदार्थन भाई । द्रव्य वचन कालादिक गाई ॥ ४ ॥
शुद्धि अशुद्धि में हो शंका । मानो विप्र वचन निःशंका ॥ ५ ॥
प्रोक्षणादि ते पुष्पन शुद्धी । सूँघत होवत तासु अशुद्धि ॥ ६ ॥
माना वासी अन्न अपावन । ताजा पक्व अन्न सब पावन ॥ ७ ॥
सरिता सरवर नीर सुपावन । क्षुद्र गर्त जल रहे अपावन ॥ ८ ॥
दश दिन बाद नीर नव पावन । जानो पुरुसित अन्न अपावन ॥ ९ ॥
महानीर स्पर्शत चन्डाला । होय अपावन कोपि न काला ॥ १० ॥

दोहा- **सूतकादि अरु ग्रहण का, अन्न अपावन मान ।**
वही अशक्तन के प्रति, पावन परम महान ॥ १६२ ॥

चौ- शक्ति अशक्ति वुद्धि अनुसारा । पावन और अपावन सारा ॥ १ ॥
देश व्यवस्था के अनुसारी । सन्तन शुद्धि अशुद्धि पुकारी ॥ २ ॥
होवत निर्भय देश जहाँ पर । होवत शुद्धि अशुद्धि वहीं पर ॥ ३ ॥
रोगादिक चौरादिक जहँ पर । अन्तर होत शुद्धि में वहँ पर ॥ ४ ॥
धान्य काठ गजदंत व कंचन । तैल घृतादिक होय अपावन ॥ ५ ॥
अनिल अनल मृतिका अरु काला । इनते होत शुद्धि तत्काला ॥ ६ ॥
वस्तु अशुद्ध जबै लग जावे । पीठापात्र अशुद्ध कहावे ॥ ७ ॥
क्षार अमल अरु जल के द्वारा । धोवे उसको बारम्बारा ॥ ८ ॥

गंध लेप जब लों न तजावे । शोधन तब लगि उसे करावे ॥ ९ ॥
स्नान दान तप व्यय अनुसारा । कर मेरा सुमिरन हरबारा ॥ १० ॥

दोहा- **अपने तन की शुद्धि का, करे कर्म मतिमान ।**
गुरु मुख ते सुन मंत्र मोंहि, करे स्मर्पित आन ॥ १६३॥

चौ- कर्ता कर्म व मंत्र पदारथ । देश काल हो शुद्ध यथारथ ॥ १ ॥
सोही सुन्दर कर्म कहावा । इन अशुद्ध ते पाप बतावा ॥ २ ॥
गुण में भी कहीं आवत दोषा । होत दोष भी कहिं निर्दोषा ॥ ३ ॥
विप्र हेतु जिमि संध्या पूजन । गायत्री जप अर्चन पूजन ॥ ४ ॥
ये ही कर्म शूद्र प्रति सुन्दर । उचित न कहा शास्त्र में यदुवर ॥ ५ ॥
रस व्यापार वैश्य प्रति गाया । द्विज प्रति वहीं निषेध कहाया ॥ ६ ॥
करत पतित जो मदिरापाना । उन प्रति दोष नहीं कुछ माना ॥ ७ ॥
वह तो प्रथम पतित ही जानो । यहि हित दोष न तासु बखानो ॥ ८ ॥
जैसे शयन करत महि कोई । क्यों कर अधोपतन उस होई ॥ ९ ॥
ज्यों ज्यों इनते निवृत जाता । त्यों त्यों उनते मुक्त कहाता ॥ १० ॥

दोहा- **मनुजन के प्रति क्षेम कर, ये ही सुन्दर धर्म ।**
भय चिन्ता अरु मोह को, नासत सुन्दर कर्म ॥ १६४॥

चौ- दृश्यमान विषयन में मानव । राखे प्रेम जबै हे उद्धव ॥ १ ॥
निज समीप राखन की तासू । होत कामना निज मन आसू ॥ २ ॥
काम मूर्ति में हो जब बाधा । तब तो होवत कलह अगाधा ॥ ३ ॥
होत कलह ते क्रोध करारा । पाछे होवत मोह अपारा ॥ ४ ॥
काज अकारज की तब आसू । होवत स्मृति विस्मृति यो तासू ॥ ५ ॥
स्मृति विहीन जब नर हो जावे । मानवता उसमें ना पावे ॥ ६ ॥
वह पुरुषारथ शीघ्र नसावे । जीवन व्यर्थ तासु हो जावे ॥ ७ ॥
भस्मासम जानों तन तेहू । रहे न निज पर ज्ञान सनेहू ॥ ८ ॥
यह फल श्रुति मानव प्रति हितकर । रोचक परम श्रेयकर सुन्दर ॥ ९ ॥
मानव चित्त लुभावन हारी । शिशु प्रति मोदकादिवत सारी ॥ १० ॥

दोहा- **विषय भोग अरु प्राण में, सब नर रत परिवार ।**
आत्मोन्नति में जो सदा, बाधक इस संसार ॥ १६५ ॥

चौ- श्रुति अभिप्राय नहीं यो जाने । फल श्रुति अबुध सत्य कर मानें ॥ १ ॥
विषय वासना फँसे जो प्रानी । दीन हीन लोभी अज्ञानी ॥ २ ॥

रंग विरंगे कुसुम समाना । स्वर्गादिक सुख उन पर माना ॥ ३ ॥
जिमि तम व्याप्त नयन ते भाई । सन्मुख वस्तु न परी दिखाई ॥ ४ ॥
त्यों निज हिय बिच स्थित मोहू । काहु भाँति जानत नहि ओहू ॥ ५ ॥
यों जानत वे नहिं मत मोरे । हिंसारत होकर वे कोरे ॥ ६ ॥
स्वर्गादिक सुख पावन कारन । करके पशुवलि काजे साधन ॥ ७ ॥
पितर व भूत पतिन को पूजे । सो यह कर्म उचित ना कहिजे ॥ ८ ॥
वेदन का तो यहि अभिप्राया। करहु न हिंसा केर उपाया ॥ ९ ॥
स्वर्गादिक सुख स्वप्न समाना । वास्तव में ये असत महाना ॥ १० ॥

दोहा— **केवल उनकी वात सुन, लागत मृदु मन माँहि ।**
करत विचार सकामि नर, सुर पुर भोग सराहि ॥ १६६॥

चौ- जैसे अधिक लाभ के काजू । नसहिं मूलधन वणिक समाजू ॥ १ ॥
त्यों सकाम नर यज्ञन द्वारा । नासत निज धन अपरम्पारा ॥ २ ॥
तीनों गुण में स्थित हो मानव । सेवत इन्द्रादिक को उद्धव ॥ ३ ॥
किन्तु अरे उन वस्तुन द्वारा । सेवत मोहिं न किसी प्रकारा ॥ ४ ॥
करत विचार मनुज हिय अंदर । मख द्वारा हम सुरपुर जाकर ॥ ५ ॥
भोगहिं वहँ के भोग अपारा । जव हों महि पर जन्म हमारा ॥ ६ ॥
तव कुटुम्ब घर सुन्दर पावें । नाना भाँति सुखी कहलावें ॥ ७ ॥
किन्तु अरे उनको न हमारी । लागत कथा कदापि न प्यारी ॥ ८ ॥
तीन काँड वेदन में गाये । कर्म उपासन ज्ञान बताये ॥ ९ ॥
इन तीनों काँडों के द्वारा । आत्मा ब्रह्म न भिन्न पुकारा ॥ १० ॥

दोहा- **मनु दृष्टा ऋषि गण मनु, गुप्त भाव से गात ।**
मोहीं भी अभिलसित यों, गुप्त तोर यह बात ॥ १६७ ॥

चौ- शुद्ध हृदय जिसका ना पाया । इसका वह अधिकारि न गाया ॥ १ ॥
अन्तः करण शुद्ध हो ज़वहीं । आवत बात समझ में तवहीं ॥ २ ॥
शब्द ब्रह्म सब श्रुति कहलाया । जिसका मर्म कठिन बतलाया ॥ ३ ॥
सीमा रहित सिन्धु सम गहरे । पावत तासु न थाह अधूरे ॥ ४ ॥
समझत ना साधारण प्राणी । जानत श्रुति ही वैखरी वाणी ॥ ५ ॥
जानों मोहीं ब्रह्म अनन्ता । सर्व शक्ति शाली भगवन्ता ॥ ६ ॥
हे उद्धव मोरे ही द्वारा । वेद वचन का भए विस्तारा ॥ ७ ॥
सूक्ष्म सूत जिमि पंकज भीतर । त्यों श्रुति वचन व्यक्त हिय अन्दर ॥ ८ ॥

हिय ते ऊर्णनाभ मुख द्वारा । प्रकटावत खावत जिमि तारा ॥ ९ ॥
त्यों स्पर्शादिक व्यञ्जन द्वारा । प्रकटावत श्रुति वचन अपारा ॥ १० ॥

दोहा- **पाछे करते लीन निज, हिय में वे भगवान ।**
स्पर्शादिक द्वारा अरे, भूषित उसको जान ॥ १९८ ॥क
गायत्री उष्णिक अरु, पंक्ति व वृहतीछन्द ।
अत्यष्टि व जगती तथा, त्रिष्टुप अरु अति छन्द ॥१९८॥ख

चौ- अति जगती व अनुष्टुप भाई । छन्द विराट वेद में गाई ॥ १ ॥
श्रुति रहस्य का जानन हारा । मैं ही उद्धव एक पुकारा ॥ २ ॥
गावत सब श्रुति मोर विधाना । मोसे भिन्न अपर ना माना ॥ ३ ॥
मैं ही शेष एक रहुँ भ्राता । मुझमें लीन अन्त में जाता ॥ ४ ॥
बोले उद्धव हे जगदीशा । गाये केते तत्व मुनीशा ॥ ५ ॥
नख वसु तत्व प्रथम तनु गाये । केतिक नर छब्बीस बताये ॥ ६ ॥
कोई तत्व वदत पचीसा । सप्त व नन्द व रस श्रुति ईशा ॥ ७ ॥
कोई सतरह तत्व गिनाये । रस महितत्व अपर बतलाये ॥ ८ ॥
भिन्न भिन्न संख्या यदुराया । गावत मुनि यों किस अभिप्राया ॥ ९ ॥
गावत विप्र वेद विद जोई । जानो सर्व सत्य तुम सोई ॥ १० ॥

दोहा— **मम माया स्वीकार कर, जो कुछ भी कहि जाय ।**
जानो तेहि सुसंगत, बोले यों यदुराय ॥ १९९ ॥

चौ- तत्व सभी तत्वन के अन्दर । रहते लीन सर्वदा यदुवर ॥ १ ॥
जो तुम कहा सत्य नहि सोई । जो मैं कहूँ असत ना होई ॥ २ ॥
इस विवाद का कारण भाई । मोरी शक्ति प्रबल इक गाई ॥ ३ ॥
मम शक्तिन का मर्म न कोई । जानत हेतु समर्थ न होई ॥ ४ ॥
अपनी मनोवृत्ति के ऊपर । करत परस्पर आग्रह मिलकर ॥ ५ ॥
निज वश होत इन्द्रियाँ सारी । शान्त होत चित सभी प्रकारी ॥ ६ ॥
तब प्रपंच सब निवृत होई । वाद विवाद तबै नहिं कोई ॥ ७ ॥
वक्ता तत्व बतावत जे ते । करत प्रमाण सिद्ध वह वेते ॥ ८ ॥
जे नर तत्व बीस छह माने । जीव स्वयं को नहि पहिचाने ॥ ९ ॥
ज्ञान प्रदाता अन्य बताये । एवं तत्व बीस छैगाये ॥ १० ॥

दोहा— **करत तत्व पचीस जो, हे उद्धव स्वीकार ।**
आत्मा ईश्वर में लखे, भेद न किसी प्रकार ॥ २००॥

चौ- इन्द्रिय विषय सर्वदा त्यागी । ये सब भव भ्रम लखे विरागी ॥ १ ॥
अवमानित उपहासित ताडित । निष्ठित मूत्रित करहि जो विचलित ॥ २ ॥
खल नर द्वारा किय अपमाना । ज्ञानी तेहि बुरा नहि माना ॥ ३ ॥
प्रापित दुःख दुष्ट नर द्वारा । होवत बहुधा श्रेष्ठ अपारा ॥ ४ ॥
बोले उद्धव हे भगवाना । कृत अपराध दुष्ट मन माना ॥ ५ ॥
आत्मा बीच दुसह दुखदाई । सहन शक्ति का कहो उपाई ॥ ६ ॥
कह शुकदेव सुनौ कुरुताता । हरि गाथा ही मुक्ति प्रदाता ॥ ७ ॥
प्रार्थिन यों नृप उद्धव द्वारा । बोले वच वसुदेव कुमारा ॥ ८ ॥
साधु पुरुष जग वहि गाया । दुष्ट वचन सुन क्षुभित न काया ॥ ९ ॥
शर वेधित नर नहिं दुख पाये । निठुर वचन सुन अति तडफाये ॥ १० ॥

दोहा— **अति प्राचीन पुनीत तुम, सुनौ एक इतिहास ।**
दुष्टन ते दुःखित किसी, भिक्षुक का यह खास ॥ २०१॥

चौ- वसत अवन्ति बीच द्विज कोई । लोभी कृपण व कामी सोई ॥ १ ॥
अतिकोपी धनवन्त अपारा । कबहुँ न किये बन्धु सत्कारा ॥ २ ॥
करता धर्म हीन गृहवासा । सोवत कबहूँ भूख पिपासा ॥ ३ ॥
निज धन का करता नहिं भोगा । देख कृपणता उसकी लोगा ॥ ४ ॥
भाई बन्धु पुत्र तिय नौकर । रहते सदा दुखित सब घर पर ॥ ५ ॥
करत अनिष्ट चिन्तना तासू । कोइ न करते प्रेम प्रकासू ॥ ६ ॥
यों वह धर्महीन द्विज भारी । भयउ कुपित तब देव अपारी ॥ ७ ॥
अतिश्रम ते संचित धन तासू । भयो नष्ट हे उद्धव आसू ॥ ८ ॥
कुछ धन ज्ञातिबन्धुजन चौरा । कुछ धन गेह दाह बिच बौरा ॥ ९ ॥
नासा कुछ धन नृप नर द्वारा । भयो नष्ट धन येन प्रकारा ॥ १० ॥

दोहा— **नष्ट भयो जब सर्वधन, स्वजन कीन्ह अपमान ।**
तब उस द्विज के चित्त में, चिन्ता भई महान ॥ २०२ ॥

चौ- द्रव्य नाश ते अति दुःख पाकर । भई विरक्ति तासु हिय भीतर ॥ १ ॥
निज मन बीच विप्र पछताया । निज तन मैने यों हि सताया ॥ २ ॥
जिस धन हेतु परीश्रम कीन्हा । धर्म कर्म बिच काम न लीन्हा ॥ ३ ॥
कृपण पुरुष अपने धन द्वारा । पावत सुख नहीं किसी प्रकारा ॥ ४ ॥
इस भव बीचे अति दुख पावे । मृत्युपरान्त नरक में जावे ॥ ५ ॥

अल्प लोभ नाशत यश कैसे । स्वल्प कुष्ठ रूप को जैसे ॥ ६ ॥
अर्थ साधने कई प्रकारा । पावत मानव कष्ट अपारा ॥ ७ ॥
चौरी हिंसा झूठ अपारा । छल मद काम क्रोध हंकारा ॥ ८ ॥
वैर व भेद बुद्धि लम्पटता । नारी द्यूत व स्पर्धा कटुता ॥ ९ ॥
ये अनर्थ के कारण गाये । द्रव्य हेतु नर प्राण गँवाये ॥ १० ॥

दोहा- **तात मात भ्राता तथा, मित्रादिक परिवार ।**
एक काकिणी के लिये, होय शत्रु सुत दार ॥ २०३ ॥

चौ- त्याग मित्रता लड़े परस्पर । लेवत प्राण प्रेम निज तजकर ॥ १ ॥
रखते आशा देव अपारा । हो भारत में जन्म हमारा ॥ २ ॥
विप्र देह पाकर जो कोई । करत अनादर इसका सोई ॥ ३ ॥
निज स्वारथ परमारथ द्वारा । धोवत हस्त वे भली प्रकारा ॥ ४ ॥
आत्म श्रेय हित जतन न करते । वे नर घोर दुर्गति लहते ॥ ५ ॥
स्वर्ग मोक्ष प्रद नर तन पाकर । करहिं प्रेम कवन धन भीतर ॥ ६ ॥
सुर मुनि पितर भूत निज भाई । इनका भाग स्वयं ही खाई ॥ ७ ॥
वे नर घोर नरक में जावे । यम द्वारा पीड़ा वहँ पावे ॥ ८ ॥
भयो मत्त धन इच्छा द्वारा । वय वल तासा व्यर्थ हमारा ॥ ९ ॥
जिन साधन ते मुक्ति पाये । वे धन संचय बीच गँवाये ॥ १० ॥

दोहा— **साधन अव कैसा करूँ, भई देह मम वृद्ध ।**
तव कर निज अज्ञानता, वनूँ अरे मैं शुद्ध ॥ २०४ ॥

चौ- मोरे मन संकेत य होई । धन तृष्णा नासे ना कोई ॥ १ ॥
जोगी जति व ज्ञानी धन वन्ता । पात निरन्तर दुःख अनन्ता ॥ २ ॥
कारण इसमें यहि इक पाया । मोहित करत किसी की माया ॥ ३ ॥
मानव ग्रसित काल के द्वारा । त्यागे धर्म धनादिक सारा ॥ ४ ॥
भये अरे हरि मो पर राजी । जो यह दशा भई मम आजी ॥ ५ ॥
अरे शेष आयुष तप द्वारा । शोखों निज तनु सभी प्रकारा ॥ ६ ॥
भये कृपालु देव अव मो पर । जो यह रुचि भई मम मन भीतर ॥ ७ ॥
साधन हेतु यद्यपि मोरी । रही अवस्था अव अति थोरी ॥ ८ ॥
तदपि उपाय करों मै ऐसा । भव वन्धन कट जावत जैसा ॥ ९ ॥
अरे नृपति खट्वाङ्ग विवेकी । पावा मुक्ति मुहूरत एकी ॥ १० ॥

दोहा— कर विचार यों वह कृपण, सब ममता को त्याग ।
महि ऊपर विचरन लगा, धारण कर वैराग ।। २०५ ।।

चौ- नगर ग्राम पुर होय अलक्षित । जावत भिक्षा हेतु बुभूक्षित ।। १ ।।
दुर्जन तासु करे अपमाना । देवत दुख उसको मन माना ।। २ ।।
दंड कमन्डल छीनत कोई । खेचत वसन माल खल दोई ।। ३ ।।
लेकर पाछे उसे दिखाये । वापिस दे तेहि तुरत छिनाये ।। ४ ।।
लेभिक्षा द्विज सरिता जावे । अन्न बीच खल मूत्र तजावे ।। ५ ।।
नासा मल त्यागहिं खल कोई । धरता मौन तदपि द्विज सोई ।। ६ ।।
कोई मौन छुड़ावन हेतू । मारहि ताड़हि तेहि खलकेतू ।। ७ ।।
कोई वदत चौर यह नामी । रशना ते बाधत कल कामी ।। ८ ।।
कोई ढोंगी उसे बतावे । कोई लोक वञ्चकी गावे ।। ९ ।।
क्षीण वित्त यह अरे असाधू । करी वृत्ति अब ग्रहण अबाधू ।। १० ।।

दोहा- हृष्ट दुष्ट तनु अति बली, अहोधार अब मौन ।
बक वत् निज स्वारथ हित, करत साधना गौन ।। २०६।।

चौ- त्यागत अधोवायु उस द्विज पर । बाँधत रौंधत खल यों कहकर ।। १ ।।
दुष्टन ते पा अब दुख भारी । करत विप्रमन बीच विचारी ।। २ ।।
होत दैववश ये करतूता । धर धीरज बोला अवधूता ।। ३ ।।
सुख दुख का कारण नहिं कोई । सुर ग्रह कर्म काल नर होई ।। ४ ।।
सुख दुःख का कारण मन माना । भाषत यो सब वेद पुराना ।। ५ ।।
सात्विक राजस तामस कर्मा । ये सब गुण वृत्तिन के धर्मा ।। ६ ।।
पशु पक्षी सरिसर्प अपारा । सुर नरादि हों कर्मन द्वारा ।। ७ ।।
जनम व मरण अविद्या सारी । मन ही इनका होय प्रचारी ।। ८ ।।
बन्ध व मोक्ष जीव का होई । कबहुँ न ईश्वर का यह कोई ।। ९ ।।
नियम यमादिक धर्म व दाना । मन वश हेतु उपाय बखाना ।। १० ।।

दोहा— वशीभूत जब होय मन, परम योग फलपात ।
दानादिक सब कर्म का, फल उसको मिल जात ।।२०७।।

चौ- मन वश में जिसका नहि होई । मिलहिन दान धर्म फल सोई ।। १ ।।
वशीभूत मन होवत जासू । इन्द्रिय तत्सुर वश हो तासू ।। २ ।।
मन के ही वश इन्द्रियँ सारी । मन सम नहीं कोइ बलधारी ।। ३ ।।
मन विजयी जो होवहिं कोई । इन्द्रिय जीत कहावत सोई ।। ४ ।।

मन ही शत्रु अरे अति भारी । धावा जासु असह्य अपारी ॥ ५ ॥
मन रूपी शत्रु पर पहिले । विजय हेत करो सब हमले ॥ ६ ॥
मन जीतन का नहिं उपाई । करते फिर भी मनुज लड़ाई ॥ ७ ॥
ऐसे मानव मूढ़ कहावे । मन ही शत्रु मित्र बनावे ॥ ८ ॥
मन कल्पित तन पाकर कोई । करत ममाह मति नर सोई ॥ ९ ॥
भ्रमण करत वे इस संसारा । भ्रम फन्दे में फँसे करारा ॥ १० ॥

दोहा— **सुख दुख का कारण मनुज, तदपि नहीं यह बात ।**
आत्मा से सम्बन्ध कुछ, इनका नहीं दिखात ॥ २०८ ॥

चौ- पहुँचावत सुख दुःख जो कोई । मिट्टी का जानो तन सोई ॥ १ ॥
कबहूँ दन्त जीह को खावे । किस पर क्रोध तुम्हारा आवे ॥ २ ॥
क्या इसके कारण निज दन्ता । फेंकहु तोड़ उखाड हू अन्ता ॥ ३ ॥
यदि दुख के कारण सुर होई । आत्मा की हानि नहिं कोई ॥ ४ ॥
सुख दुख तो सब कर्म अधीना । भाषत यों सब सन्त प्रवीना ॥ ५ ॥
निज तन का कोई यदि अंगा । करहीं अपर अंग का भंगा ॥ ६ ॥
करहु क्रोध तदा तुम किस पर । देवहु दंड उसे किस बल पर ॥ ७ ॥
आत्मा ही सुख दुख का कारण । इसका भी यों करों निवारण ॥ ८ ॥
आत्मा अपने आप लखाये । आत्मा ते नहि भिन्न दिखाये ॥ ९ ॥
दीखे अपर यदि जोई कोई । जानो सदा मृषा तुम सोई ॥ १० ॥

दोहा— **सुख दुख का कारण यहि, ग्रह का करे बखान ।**
जन्म मरण से हीन है, आत्मा की नहि हान ॥ २०९ ॥

चौ- मृत्युशील तनु ऊपर एहू । परत प्रभाव कदापि न तेहू ॥ १ ॥
कर्महिं सुख दुख का यदि कारण । आत्मा का नहिं तदपि प्रयोजन ॥ २ ॥
सुख दुख हेतू काल कहावा । आत्मा पर नहि तदपि प्रभावा ॥ ३ ॥
इन बातन को जो कोइ जाने । वह काहू से भय ना माने ॥ ४ ॥
जे गुण सेवित ऋषियन द्वारा । करूँ ग्रहण तेहि भली प्रकारा ॥ ५ ॥
अब हरि चरणन सेवा द्वारा । जाऊँ बिन श्रम इस भव पारा ॥ ६ ॥
होय तिरस्कृत यों द्विज भारी । इत उत फिरत यों गिरा उचारी ॥ ७ ॥
पुरुष काज सुख दुःख प्रदाता । मित्र न शत्रु उदासी जाता ॥ ८ ॥
बोले कृष्ण चन्द्र भगवन्ता । सुन प्यारे उद्धव गुणवन्ता ॥ ९ ॥
निज मन कर अपने आधीना । मम बीचे होवहु लवलीना ॥ १० ॥

दोहा— भिक्षुक द्वारा गान कृत, ब्रह्म निष्ठ यह ज्ञान ।
धारहिं सुनहिं सुनावहीं, पावहिं पद निर्वान ॥ २१० ॥क
साँख्यशास्त्र का अब सुनौ, निर्णय भली प्रकार ।
ऋषि मुनि सन्तन ते प्रथम, निश्चित कियो विचार ॥२१०॥ख

चौ- जेहि जानि भ्रम भेद नसावे । प्रलय समये इक ब्रह्म बतावे ॥ १ ॥
उद्भव प्रलय काल जब आवा । दृष्टा दृश्य न भेद कहावा ॥ २ ॥
कृत युग बीचे मानव भारी । होत विवेक निपुण गुण धारी ॥ ३ ॥
होत विकल्प नहीं मन उनके । करते स्मर्ण ब्रह्म का डटके ॥ ४ ॥
भये ब्रह्म के तब युग रूपा । प्रकृति सहित वे पुरुष अनूपा ॥ ५ ॥
जेते गुण सत्वादिक गाये । हरि माया ते वे प्रकटाये ॥ ६ ॥
गुण ते सूत्र सूत्र के द्वारा । प्रकटे महतत्वहंकारा ॥ ७ ॥
तामस अहंकार के द्वारा । प्रकटे भूत य पंच प्रकारा ॥ ८ ॥
सर्व इन्द्रियाँ राजस द्वारा । सात्विक देव रचाये ग्यारा ॥ ९ ॥
मेरे द्वारा प्रेरित होकर । मिले परस्पर ये सब आकर ॥ १० ॥

दोहा— कारज कारण में निपुण, जो मेरा शुभ स्थान ।
ब्रह्माण्ड रूप इक अण्ड का, कीन्हा इन निर्मान ॥२११॥

चौ- जल बीचे स्थित अण्डे भीतर । भयों विराजमान मैं ईश्वर ॥ १ ॥
मम नाभि ते पंकज प्रकटा । प्रकटे उसके बीचे सृष्टा ॥ २ ॥
रजगुण युत होकर उन मेरी । पाकर कृपा करी ना देरी ॥ ३ ॥
लोक व लोकपाल प्रकटाये । स्वर बीचे सब विबुध बसाये ॥ ४ ॥
अन्तरिक्ष में भूत बसाये । मानव महि मंडल में आये ॥ ५ ॥
महर्लोक में सिद्ध निवासी । असुर नाग अतलादिक वासी ॥ ६ ॥
पावत गतियाँ विविध प्रकारी । त्रिगुण मयि कर्मन अनुसारी ॥ ७ ॥
योगी यति अरु तप बलधारी । महलोकादिक पावत भारी ॥ ८ ॥
भक्ति योग ते मम पद पावे । भक्ति बिना गति अचल न पावे ॥ ९ ॥
काल रूप कर्मन अनुसारा । फल विधान में रचूँ अपारा ॥ १० ॥

दोहा- गुण प्रवाह में जीव पड़, कबहुँ उच्च गति पाय ।
कबहूँ मज्जहिं उबरहि, कबहुँ अधोगति जाय ॥ २१२॥ क
छोटे मोटे जगत में, दीखत जिते पदार्थ ।
प्रकृति पुरुष संयोग ते, होवत सिद्ध यथार्थ ॥ २१२॥ ख

चौ- जिसका आदि अन्त्य हो जोहू। जानो सत्य मध्य में सोहू ॥ १ ॥
व्यवहारू हित होत विकारा। यथा कटक कुंडल घट गारा ॥ २ ॥
इस प्रपंच का कारण भाया। सत्य स्वरूप पुरुष कहलाया ॥ ३ ॥
जानो ब्रह्म रूप तुम मोहीं। चालत सृष्टि चक्र यह योंही ॥ ४ ॥
प्रलय काल की कहूँ मैं गाथा। बोले कृष्ण चन्द्र यदुनाथा ॥ ५ ॥
काल रूप जब मेरे द्वारा। होत उपेक्षा सभी प्रकारा ॥ ६ ॥
तब विराट भुवनों के संगा। होवत भिन्न भिन्न यह भंगा ॥ ७ ॥
होवत अन्न बीच तन लीना। अन्न बीज के रहे अधीना ॥ ८ ॥
भूमी बीच बीज मिल जावे। गन्ध तत्व में भूमि सिधावे ॥ ९ ॥
गन्ध नीर में होवत लीना। नीर स्वगुण रस में लवलीना ॥ १० ॥

दोहा— **रस ज्योति में लीन हो, ज्योति रूप में लीन।**
रूप वायु में आमिले, वायु स्पर्श लवलीन ॥ २१३ ॥

चौ- नभ में स्पर्श रहे लव लीना। अम्बर होवत शब्द अधीना ॥ १ ॥
निज प्रवर्तक देवन माँही। सर्व इन्द्रियाँ आन सिधाही ॥ २ ॥
सुर अरु मन सात्विक हंकारा। अहंकार विच शब्द सिधारा ॥ ३ ॥
अहंकार जो त्रिविध प्रकारा। महत्तत्व में जावत सारा ॥ ४ ॥
महत्तत्व में हो गुण लीना। प्रकृति के गुण रहे अधीना ॥ ५ ॥
प्रकृति काल में होवत लीना। काल जीव से हो लवलीना ॥ ६ ॥
जीव अजन्मा आतमा माँही। आत्मा हो नहि लीन कहाँही ॥ ७ ॥
अरे उपाधि रहित यहि जानों। इसका लीन कहीं मत मानो ॥ ८ ॥
यों मन बीच विचारन हारे। वैकल्पिक भ्रम मन नहिं धारे ॥ ९ ॥
भानूदय पर ज्यों तम नासे। त्यों उनके मन भ्रम न प्रकासे ॥ १० ॥

दोहा- **सृष्टि काल ते प्रलय लों, प्रलय काल पश्चात।**
साँख्य विधि वर्णन करी, सुन मन ग्रन्थि नसात ॥२१४॥क
भिन्न भिन्न गुण प्राप्त कर, कैसा होय स्वभाव।
उसका मैं वरणन करूँ, राखूँ नही दुराव ॥ २१४ ॥ ख

चौ- शम दम सत्य ज्ञान तप त्यागा। स्मृति संतोष दया अनुरागा ॥ १ ॥
दान व विनय सरलता भारी। सत्व गुणी ये वृत्ति पुकारी ॥ २ ॥
काम व मद तृष्णा अभिलासा। भेद बुद्धि यश प्रीति व हासा ॥ ३ ॥
स्तम्भ व वल उद्यम रतिकारी। रजो गुणी ये वृत्ति पुकारी ॥ ४ ॥

क्रोध कृपणता मिथ्याभापण । हिंसाश्रय कलि भय विद्वेपण ॥ ५ ॥
शोक व मोह दीनता आशा । निद्राभय पाखंड प्रकाशा ॥ ६ ॥
सत्व राजसी तामस सारी । क्रम ते तीनों वृत्ति पुकारी ॥ ७ ॥
सुनो वृत्ति अव मिश्रित ताता । मम मेरी मति ही सनिपाता ॥ ८ ॥
मन आदिक द्वारा व्यवहारा । वह भी सन्निपात पुकारा ॥ ९ ॥
धर्म व अर्थ काम लवलीना । वह भी सन्निपात अधीना ॥ १० ॥

दोहा— **काम्य धर्म में पुरुष की, निष्ठा यदि जो होय ।**
घर में ही आसक्त हो, रहे धर्म निज जोय ॥ २१५ ॥

चौ- यह भी सन्निपात ही गाया । आये सुनो अरे चित लाया ॥ १ ॥
केवल सत्य युक्त नर सोई । गुण शमादि जासु विच होई ॥ २ ॥
रजोयुक्त कामादिक द्वारा । तमोयुक्त हो क्रोध अपारा ॥ ३ ॥
हो निष्काम भक्ति के द्वारा । भजहिं मोहि नर विविध प्रकारा ॥ ४ ॥
सत्वगुणी नर जानहु तोहि । भजहिं सकाम भाव नर मोहीं ॥ ५ ॥
मानव रजोगुणी वह गाया । क्रोधित तमो गुणी कहलाया ॥ ६ ॥
हिंसादिक हेतु यदि मोहीं । भजहिं प्रकृति तामस जनु सोहीं ॥ ७ ॥
ये गुण तीन जीव के जानो । इनते भिन्न मुझे तुम मानो ॥ ८ ॥
वँधता जीव गुणों के द्वारा । इनते सदा रहूँ मैं न्यारा ॥ ९ ॥
रज तम जीत सत्व गुण वढहीं । तव नर सभी सुखादिक लहहीं ॥ १० ॥

दोहा- **रज तम जीतहिं सत्व को, तव नर अति दुखपात ।**
सत रज ही तम जीत हीं, हो हिंसादिक घात ॥ २१६ ॥

चौ- शान्त इन्द्रियाँ जव हो सारी । होय मुदित मन सत्व प्रचारी ॥ १ ॥
कर्मेन्द्रिय विच होय विकारा । हो चंचल वुद्धि के द्वारा ॥ २ ॥
मन विभ्रम तनु स्वस्थ न होंहीं । जनु उत्कृष्ट रजोगुण सोहीं ॥ ३ ॥
चित्त दुखी मन इत उत जावे । तम उत्कृष्ण वही कहलावे ॥ ४ ॥
सत्वाधिक ते सुर वल वाढै । रज आधिक्य दैत्य वलगाढे ॥ ५ ॥
राक्षस वल वाढै तम भारी । आगे गुण वय भेद पुकारी ॥ ६ ॥
जागे सत्व अधिक ते प्रानी । रज से जानो स्वप्न निशानी ॥ ७ ॥
निद्रा तम का रूप कहाया । त्रय मिश्रित तुरिया ततु गाया ॥ ८ ॥
ब्राह्मण सत्व गुणों के द्वारा । जावत ऊपर लोक अपारा ॥ ९ ॥
तप से अधो लोक में जावे । मानुष तनु राज द्वारा पावे ॥ १० ॥

चौ- जिसका आदि अन्त्य हो जोहू । जानो सत्य मध्य में सोहू ॥ १ ॥
व्यवहारू हित होत विकारा । यथा कटक कुंडल घट गारा ॥ २ ॥
इस प्रपंच का कारण भाया । सत्य स्वरूप पुरुष कहलाया ॥ ३ ॥
जानो ब्रह्म रूप तुम मोहीं । चालत सृष्टि चक्र यह योंही ॥ ४ ॥
प्रलय काल की कहूँ मैं गाथा । बोले कृष्ण चन्द्र यदुनाथा ॥ ५ ॥
काल रूप जब मेरे द्वारा । होत उपेक्षा सभी प्रकारा ॥ ६ ॥
तब विराट भुवनों के संगा । होवत भिन्न भिन्न यह भंगा ॥ ७ ॥
होवत अन्न बीच तन लीना । अन्न बीज के रहे अधीना ॥ ८ ॥
भूमी बीच बीज मिल जावे । गन्ध तत्व में भूमि सिधावे ॥ ९ ॥
गन्ध नीर में होवत लीना । नीर स्वगुण रस में लवलीना ॥ १० ॥

दोहा— **रस ज्योति में लीन हो, ज्योति रूप में लीन ।**
रूप वायु में आमिले, वायु स्पर्श लवलीन ॥ २१३ ॥

चौ- नभ में स्पर्श रहे लव लीना । अम्बर होवत शब्द अधीना ॥ १ ॥
निज प्रवर्तक देवन माँही । सर्व इन्द्रियाँ आन सिधाही ॥ २ ॥
सुर अरु मन सात्विक हंकारा । अहंकार बिच शब्द सिधारा ॥ ३ ॥
अहंकार जो त्रिविध प्रकारा । महत्तत्व में जावत सारा ॥ ४ ॥
महत्तत्व में हो गुण लीना । प्रकृति के गुण रहे अधीना ॥ ५ ॥
प्रकृति काल में होवत लीना । काल जीव से हो लवलीना ॥ ६ ॥
जीव अजन्मा आत्मा माँही । आत्मा हो नहि लीन कहाँही ॥ ७ ॥
अरे उपाधि रहित यहि जानों । इसका लीन कहीं मत मानो ॥ ८ ॥
यों मन बीच विचारन हारे । वैकल्पिक भ्रम मन नहिं धारे ॥ ९ ॥
भानूदय पर ज्यों तम नासे । त्यों उनके मन भ्रम न प्रकासे ॥ १० ॥

दोहा- **सृष्टि काल ते प्रलय लों, प्रलय काल पश्चात ।**
साँख्य विधि वर्णन करी, सुन मन ग्रन्थि नसात ॥२१४॥क
भिन्न भिन्न गुण प्राप्त कर, कैसा होय स्वभाव ।
उसका मैं वरणन करूँ, राखूँ नही दुराव ॥ २१४ ॥ ख

चौ- शम दम सत्य ज्ञान तप त्यागा । स्मृति संतोष दया अनुरागा ॥ १ ॥
दान व विनय सरलता भारी । सत्व गुणी ये वृत्ति पुकारी ॥ २ ॥
काम व मद तृष्णा अभिलासा । भेद बुद्धि यश प्रीति व हासा ॥ ३ ॥
स्तम्भ व बल उद्यम रतिकारी । रजो गुणी ये वृत्ति पुकारी ॥ ४ ॥

क्रोध कृपणता मिथ्याभाषण । हिंसाश्रय कलि भय विद्वेषण ॥ ५ ॥
शोक व मोह दीनता आशा । निद्राभय पाखंड प्रकाशा ॥ ६ ॥
सत्व राजसी तामस सारी । क्रम ते तीनों वृत्ति पुकारी ॥ ७ ॥
सुनौ वृत्ति अब मिश्रित ताता । मम मेरी मति ही सनिपाता ॥ ८ ॥
मन आदिक द्वारा व्यवहारा । वह भी सन्निपात पुकारा ॥ ९ ॥
धर्म व अर्थ काम लवलीना । वह भी सन्निपात अधीना ॥ १० ॥

दोहा— **काम्य धर्म में पुरुष की, निष्ठा यदि जो होय ।**
घर में ही आसक्त हो, रहे धर्म निज जोय ॥ २१५ ॥

चौ- यह भी सन्निपात ही गाया । आये सुनो अरे चित लाया ॥ १ ॥
केवल सत्य युक्त नर सोई । गुण शमादि जासु बिच होई ॥ २ ॥
रजोयुक्त कामादिक द्वारा । तमोयुक्त हो क्रोध अपारा ॥ ३ ॥
हो निष्काम भक्ति के द्वारा । भजहिं मोहि नर विविध प्रकारा ॥ ४ ॥
सत्वगुणी नर जानहु तोहि । भजहिं सकाम भाव नर मोहीं ॥ ५ ॥
मानव रजोगुणी वह गाया । क्रोधित तमो गुणी कहलाया ॥ ६ ॥
हिंसादिक हेतु यदि मोहीं । भजहिं प्रकृति तामस जनु सोहीं ॥ ७ ॥
ये गुण तीन जीव के जानो । इनते भिन्न मुझे तुम मानो ॥ ८ ॥
बँधता जीव गुणों के द्वारा । इनते सदा रहूँ मैं न्यारा ॥ ९ ॥
रज तम जीत सत्व गुण बढहीं । तब नर सभी सुखादिक लहहीं ॥ १० ॥

दोहा- **रज तम जीतहिं सत्व को, तब नर अति दुखपात ।**
सत रज ही तम जीत हीं, हों हिंसादिक घात ॥ २१६ ॥

चौ- शान्त इन्द्रियाँ जब हो सारी । होय मुदित मन सत्व प्रचारी ॥ १ ॥
कर्मेन्द्रिय बिच होय विकारा । हो चंचल बुद्धि के द्वारा ॥ २ ॥
मन विभ्रम तनु स्वस्थ न होहीं । जनु उत्कृष्ट रजोगुण सोहीं ॥ ३ ॥
चित्त दुखी मन इत उत जावे । तम उत्कृष्ण वही कहलावे ॥ ४ ॥
सत्वाधिक ते सुर बल बाढे । रज आधिक्य दैत्य बलगाढे ॥ ५ ॥
राक्षस बल बाढे तम भारी । आगे गुण वय भेद पुकारी ॥ ६ ॥
जागे सत्व अधिक ते प्रानी । रज से जानो स्वप्न निशानी ॥ ७ ॥
निद्रा तम का रूप कहाया । त्रय मिश्रित तुरिया ततु गाया ॥ ८ ॥
ब्राह्मण सत्व गुणों के द्वारा । जावत ऊपर लोक अपारा ॥ ९ ॥
तप से अधो लोक में जावे । मानुष तनु राज द्वारा पावे ॥ १० ॥

दोहा- सत्व गुणों की वृद्धि ते, जासु मृत्यु हो जात ।
वे नर सीधे स्वर्ग में, बिना कष्ट चलि जात ॥ २१७ ॥

चौ- रज द्वारा नर लोक सिधावे । तामस ते नरकों में जावे ॥ १ ॥
पावत मोही निर्गुणी मानव । बिना कामना के सुन उद्धव ॥ २ ॥
कर्म सात्विक जानों सोहीं । फलते हीन समर्पे मोहीं ॥ ३ ॥
राजस कर्म कहा फलवारा । तामस गुण हिंसा कृत सारा ॥ ४ ॥
आत्मा विषयक सात्विक ज्ञाना । वैकल्पिक राजस गुण माना ॥ ५ ॥
बाल व मूकादिक सम ज्ञाना । वह भी तामस ज्ञान बखाना ॥ ६ ॥
मम स्वरूप का वास्तविक ज्ञाना । कहते निर्गुण ज्ञान प्रवीना ॥ ७ ॥
जानो सात्विक विपिन निवासा । राजस वास नगर पुर खासा ॥ ८ ॥
तामस द्यूतादिक गृह वासा । निर्गुण मन्दिर बीच निवासा ॥ ९ ॥
सात्विक धर्म असंगतकारी । क्रोध अन्ध राजस गुण धारी ॥ १० ॥

दोहा— स्मृति निभृष्ट तामस तथा, निर्गुण शरण हमार ।
सत श्रृद्धा आध्यात्मिकी, राजस कर्माधार ॥ २१८ ॥

चौ- श्रद्धा तामस धर्म विहीना । निर्गुण मम सेवा लवलीना ॥ १ ॥
भोजन पत्थ्य सुसात्विक जानो । अम्ल लवण कटु राजस मानो ॥ २ ॥
अशुचि व दुःखद तामस गाया । मम अर्पित निर्गुण सुखदाया ॥ ३ ॥
सात्विक सुख जानो तुम ओहू । आत्म अनात्म विचारन सोहू ॥ ४ ॥
विषयज सुख राजस कहलाया । दुख मोहज सुख तापस गाया ॥ ५ ॥
मम आश्रय निर्गुण सुख माना । त्रय गुण युत सब भाव बखाना ॥ ६ ॥
द्रव्य देश फल काल व ज्ञाना । कर्मादिक सब त्रिगुणि बखाना ॥ ७ ॥
केवल यही नही सुनु ताता । सभी भाव गुणमयि विख्याता ॥ ८ ॥
दृष्ट व श्रुत निज मति अनुध्याता । सभी भाव त्रय गुणी कहाता ॥ ९ ॥
योनि व गतियाँ दीखत सारी । ये सब गुण करमन अनुसारी ॥ १० ॥

दोहा— सारे गुण अरु चित्त का, रहे सदा ही मेल ।
अनायास इस वास्ते, जीव इन्हें दे पेल ॥ २१९ ॥

चौ- पावत विजय जीव जो इन पर । मम समीप आवत सब तज कर ॥ १ ॥
दुर्लभ मानुष देह कहावे । तत्व ज्ञान इससे ही पावे ॥ २ ॥
पावत जीव भक्ति के द्वारा । दुर्लभ फल अपवर्ग सुखारा ॥ ३ ॥
यही हेतु मानुष तनु पाकर । गुण अरु विषय संग सब तजकर ॥ ४ ॥

करके भजन विचक्षण मेरा । काटे जनम मरण का फेरा ॥ ५ ॥
त्रैगुण जीते होय निसंगा । करे भजन मेरा हो चंगा ॥ ६ ॥
त्यागे वह फिर लिंग शरीरा । आवत मेरे धाम अखीरा ॥ ७ ॥
में ही पूरण ब्रह्म कहाऊँ । में ही उसको पूर्ण बनाऊँ ॥ ८ ॥
वाहिर भीतर विषयन माँही । रमता फेर कभी वह नाँही ॥ ९ ॥
मुझे प्राप्ति का सुन्दर साधन । करे प्रेम से हरी अराधन ॥ १० ॥

दोहा— **मानव तन को प्राप्त कर, करे भजन जो मोर ।**
नहीं दूर उससे रहूँ, सुनौ वचन कर गौर ॥ २२० ॥

चौ- योनि व गति गुण मयि सब गावे । इन्हें ज्ञानिजन सदा तजावे ॥ १ ॥
सत्वादिक गुण दीखत जेते । माया मय जानो सब वैते ॥ २ ॥
ज्ञान प्राप्त हो जावत जबहीं । ज्ञानि जन त्यागे इन तबहिं ॥ ३ ॥
असत संग कबहूँ नहीं कीजे । विषयन बीच ध्यान मत दीजे ॥ ४ ॥
असतन संग चलहिं जो कोई । घोर दुर्दशा उसकी होई ॥ ५ ॥
अन्धे संग चलहिं यदि अन्धा । भटकत घोर अन्ध गहि कन्धा ॥ ६ ॥
कहूँ एक इतिहास पुराना । नृपवर ऐल महा बलवाना ॥ ७ ॥
भयो वियोग उर्वशी द्वारा । तब वह दुःखित होय अपारा ॥ ८ ॥
नग्न होय उन्मत्त समाना । धावा उस अनु दुःखित नाना ॥ ९ ॥
ठहरु ठहरु इति वचन सुनावा । निज नयनन ते अश्रु बहावा ॥ १० ॥

दोहा— **मुझे त्याग कर क्यों अरी, भाग रही तू दूर ।**
निठर तनिक तो ठहर जा, क्यों कर भई अतिक्रूर ॥२२१॥

चौ- बारम्बार यों करे विलापा । मोह शोक संकट अति व्यापा ॥ १ ॥
जब वापिस वह वहाँ न आई । तब सब चिन्ता नृपति तजाई ॥ २ ॥
पुरुरवा यों वचन सुनाया । अरे जनम मैं वृथा गुमाया ॥ ३ ॥
कलुषित चित्त य भया हमारा । खोटी काम वासना द्वारा ॥ ४ ॥
ड़ाल उर्वशी के गल बाँही । निज अमूल्य वय वृथा गुमाही ॥ ५ ॥
वञ्चित होय उर्वशी द्वारा । उदय अस्त भी नहीं विचारा ॥ ६ ॥
मोहित होय उरवशी द्वारा । आयु खंड वृथा कर डारा ॥ ७ ॥
क्रीडा मृगवत तासु अधीना । रहा सर्वदा उसमें लीना ॥ ८ ॥
मैं सम्राट वशीनृप मोरे । चले प्रजा मरयाद न तोरे ॥ ९ ॥
तदपि त्याग वह तृण की नाँई । चली गई वापिस नहिं आई ॥ १० ॥

दोहा- सत्व गुणों की वृद्धि ते, जासु मृत्यु हो जात ।
वे नर सीधे स्वर्ग में, बिना कष्ट चलि जात ॥ २१७ ॥

चौ- रज द्वारा नर लोक सिधावे । तामस ते नरकों में जावे ॥ १ ॥
पावत मोही निर्गुणी मानव । बिना कामना के सुन उद्धव ॥ २ ॥
कर्म सात्विक जानों सोहीं । फलते हीन समर्पे मोहीं ॥ ३ ॥
राजस कर्म कहा फलवारा । तामस गुण हिंसा कृत सारा ॥ ४ ॥
आत्मा विषयक सात्विक ज्ञाना । वैकल्पिक राजस गुण माना ॥ ५ ॥
बाल व मूकादिक सम ज्ञाना । वह भी तामस ज्ञान बखाना ॥ ६ ॥
मम स्वरूप का वास्तविक ज्ञाना । कहते निर्गुण ज्ञान प्रवीना ॥ ७ ॥
जानो सात्विक विपिन निवासा । राजस वास नगर पुर खासा ॥ ८ ॥
तामस द्यूतादिक गृह वासा । निर्गुण मन्दिर बीच निवासा ॥ ९ ॥
सात्विक धर्म असंगतकारी । क्रोध अन्ध राजस गुण धारी ॥ १० ॥

दोहा— स्मृति निभृष्ट तामस तथा, निर्गुण शरण हमार ।
सत श्रृद्धा आध्यात्मिकी, राजस कर्माधार ॥ २१८ ॥

चौ- श्रद्धा तामस धर्म विहीना । निर्गुण मम सेवा लवलीना ॥ १ ॥
भोजन पत्थ्य सुसात्विक जानो । अम्ल लवण कटु राजस मानो ॥ २ ॥
अशुचि व दुःखद तामस गाया । मम अर्पित निर्गुण सुखदाया ॥ ३ ॥
सात्विक सुख जानो तुम ओहू । आत्म अनात्म विचारन सोहू ॥ ४ ॥
विषयज सुख राजस कहलाया । दुख मोहज सुख तापस गाया ॥ ५ ॥
मम आश्रय निर्गुण सुख माना । त्रय गुण युत सब भाव बखाना ॥ ६ ॥
द्रव्य देश फल काल व ज्ञाना । कर्मादिक सब त्रिगुणि बखाना ॥ ७ ॥
केवल यही नही सुनु ताता । सभी भाव गुणमयि विख्याता ॥ ८ ॥
दृष्ट व श्रुत निज मति अनुध्याता । सभी भाव त्रय गुणी कहाता ॥ ९ ॥
योनि व गतियाँ दीखत सारी । ये सब गुण करमन अनुसारी ॥ १० ॥

दोहा— सारे गुण अरु चित्त का, रहे सदा ही मेल ।
अनायास इस वास्ते, जीव इन्हें दे पेल ॥ २१९ ॥

चौ- पावत विजय जीव जो इन पर । मम समीप आवत सब तज कर ॥ १ ॥
दुर्लभ मानुप देह कहावे । तत्व ज्ञान इससे ही पावे ॥ २ ॥
पावत जीव भक्ति के द्वारा । दुर्लभ फल अपवर्ग सुखारा ॥ ३ ॥
यही हेतु मानुप तनु पाकर । गुण अरु विषय संग सब तजकर ॥ ४ ॥

करके भजन विचक्षण मेरा । काटे जनम मरण का फेरा ॥ ५ ॥
त्रैगुण जीते होय निसंगा । करे भजन मेरा हो चंगा ॥ ६ ॥
त्यागे वह फिर लिंग शरीरा । आवत मेरे धाम अखीरा ॥ ७ ॥
मैं ही पूरण ब्रह्म कहाऊँ । मैं ही उसको पूर्ण बनाऊँ ॥ ८ ॥
बाहिर भीतर विषयन माँही । रमता फेर कभी वह नाँही ॥ ९ ॥
मुझे प्राप्ति का सुन्दर साधन । करे प्रेम से हरी अराधन ॥ १० ॥

दोहा— **मानव तन को प्राप्त कर, करे भजन जो मोर ।**
नहीं दूर उससे रहूँ, सुनौ वचन कर गौर ॥ २२० ॥

चौ- योनि व गति गुण मयि सब गावे । इन्हें ज्ञानिजन सदा तजावे ॥ १ ॥
सत्वादिक गुण दीखत जेते । माया मय जानो सब वैते ॥ २ ॥
ज्ञान प्राप्त हो जावत जबहीं । ज्ञानि जन त्यागे इन तबहिं ॥ ३ ॥
असत संग कबहूँ नहीं कीजे । विषयन बीच ध्यान मत दीजे ॥ ४ ॥
असतन संग चलहिं जो कोई । घोर दुर्दशा उसकी होई ॥ ५ ॥
अन्धे संग चलहिं यदि अन्धा । भटकत घोर अन्ध गहि कन्धा ॥ ६ ॥
कहूँ एक इतिहास पुराना । नृपवर ऐल महा बलवाना ॥ ७ ॥
भयो वियोग उर्वशी द्वारा । तब वह दुःखित होय अपारा ॥ ८ ॥
नग्न होय उन्मत्त समाना । धावा उस अनु दुःखित नाना ॥ ९ ॥
ठहरु ठहरु इति वचन सुनावा । निज नयनन ते अश्रु बहावा ॥ १० ॥

दोहा— **मुझे त्याग कर क्यों अरी, भाग रही तू दूर ।**
निठुर तनिक तो ठहर जा, क्यों कर भई अतिक्रूर ॥२२१॥

चौ- बारम्बार यों करे विलापा । मोह शोक संकट अति व्यापा ॥ १ ॥
जब वापिस वह वहाँ न आई । तब सब चिन्ता नृपति तजाई ॥ २ ॥
पुरुरवा यों वचन सुनाया । अरे जनम मैं वृथा गुमाया ॥ ३ ॥
कलुषित चित्त य,भया हमारा । खोटी काम वासना द्वारा ॥ ४ ॥
ड़ाल उर्वशी के गल बाँही । निज अमूल्य वय वृथा गुमाही ॥ ५ ॥
वञ्चित होय उर्वशी द्वारा । उदय अस्त भी नहीं विचारा ॥ ६ ॥
मोहित होय उरवशी द्वारा । आयु खंड वृथा कर डारा ॥ ७ ॥
क्रीडा मृगवत तासु अधीना । रहा सर्वदा उसमें लीना ॥ ८ ॥
मैं सम्राट वशीनृप मोरे । चले प्रजा मरयाद न तोरे ॥ ९ ॥
तदपि त्याग वह तृण की नाँई । चली गई वापिस नहिं आई ॥ १० ॥

दोहा- **मैं नंगा उन्मत हो, एक नार के काज ।**
हाय हाय कर विलखता, फिरूँ अरे मैं आज ॥ २२२॥

चौ- सह दुलत्तियाँ खर की नाँई । धावा तिय अनु लाज तजाही ॥ १ ॥
स्वामीपन बल तेज प्रभावा । सब विधि मैंने वृथा गँवावा ॥ २ ॥
निसन्देह मैं मूरख भारी । जासु चुराय लिये मन नारी ॥ ३ ॥
त्याग तपस्या विद्या तासू । ज्ञान व ध्यान वृथा सन्यासू ॥ ४ ॥
नाम अरे सम्राट हमारा । कर वृषवत अब नारिन द्वारा ॥ ५ ॥
मैं ने अरे पराजय मानी । स्वारथ वश मैं अति अज्ञानी ॥ ६ ॥
उरवशि के अधरामृत द्वारा । भयो तृप्त नहि किसी प्रकारा ॥ ७ ॥
होवत तृप्त आहुति द्वारा । यथा अनल नहि किसी प्रकारा ॥ ८ ॥
उस कुलटा द्वारा चित मेरा । जीता कीन्हा नहीं अवेरा ॥ ९ ॥
मैं अति अधी महाखल कामी । धृक धृक मुझे अरे तिय गामी ॥ १० ॥

दोहा— **अब हरि बिन इस फन्द से, मुक्ति दिलावन हार ।**
दीखत नहि कोई मुझे, दूजा इस संसार ॥ २२३ ॥

चौ- उरवशि को भी दोष न देऊँ । सभी दोष अपने सिर लेऊँ ॥ १ ॥
उसने मुझे सही समझाया । किन्तु न मेरा मोह नसाया ॥ २ ॥
सभी इन्द्रियाँ वश के बाहर । तब मैं समझ सकूँ भी क्यों कर ॥ ३ ॥
सर्प समझ रस्सी से डरहीं । तब रस्सी का दोष न कहहीं ॥ ४ ॥
कहाँ मलिन यह देह अपावन । कहाँ सुगंधादिक गुण पावन ॥ ५ ॥
विद्या बीच अविद्या पाई । सुन्दर लखी असुन्दरताई ॥ ६ ॥
जानो देह नहीं यह काहू । भार्या स्वामिन मात पिताहू ॥ ७ ॥
चर्म व माँस रुधिर के द्वारा । विरचित तनु यह सभी प्रकारा ॥ ८ ॥
होवत अग्नि बीच समर्पन । खावत गीध श्वान मिल इक दिन ॥ ९ ॥
विष्ठा मूत्र पूय युत भारी । करे रमण इसमें संसारी ॥ १० ॥

दोहा- **उस मानव अरु कीट में, अन्तर नहीं दिखात ।**
दोनों रहते एक सँग, दोनो की एक जात ॥ २२४ ॥

चौ- करो न तिय तिय लम्पट संगा । होत क्षुभित मन विषयन योगा ॥ १ ॥
श्रुत अदृष्ट पदारथ द्वारा । मन में आत न कभी विकारा ॥ २ ॥
होत इन्द्रियाँ जब स्वाधीना । तब मन होत विकार न लीना ॥ ३ ॥
तिय लम्पट तिय संग न कीजे । इनते सदा दूर अति रहिजे ॥ ४ ॥

मन सह पंच इन्द्रियाँ खासा । करो नहि इन पर विश्वासा ॥ ५ ॥
ये उद्‌गार उठे जब मन में । तजी उरवशी चिन्ता छिन में ॥ ६ ॥
ज्ञानोदय होने केकारण । तजा मोह नृप ने तब तत्क्षण ॥ ७ ॥
कर दर्शन निज हिय में मेरा । गयो धाम मम कियो न वेरा ॥ ८ ॥
तजं दुसंग सत्संगत कीजे । संत वचन हिय बीच धरीजे ॥ ९ ॥
हित उपदेश सुना कर संता । विषया शक्ति मिटावत अन्ता ॥ १० ॥

दोहा— **बुद्धिमान मानव वही, तज कर सदा कुसंग ।**
सन्त जनों से प्रेम कर, हरि के सुनै प्रसंग ॥ २२५ ॥

चौ- सन्तन के लक्षण यों गाया । राखे सन्त हृदय में दाया ॥ १ ॥
समदरसी अरु निरहंकारी । राखे मुझमें प्रेम अपारी ॥ २ ॥
किसी वस्तु की चाह न करहीं । मुझमें चित्त सर्वदा रखहीं ॥ ३ ॥
ममता से वे करे किनारा । मन में आवत नहीं विकारा ॥ ४ ॥
राखत नहीं परिग्रह कोई । सदा एक रस रहते सोई ॥ ५ ॥
करते वे सब कथा हमारी । सुनते पाप पुञ्ज सब हारी ॥ ६ ॥
गावत सुनत करत अनुमोदन । श्रद्धा सहित कथा मम पावन ॥ ७ ॥
होत परायण वे सब मेरे । परम भक्ति वे पात जरूरे ॥ ८ ॥
मेरी भक्ति करे जे सन्ता । किसी वस्तु की करे न चिन्ता ॥ ९ ॥
यथा अनल आश्रित हो कोई । तम अरु सीत न व्यापे सोई ॥ १० ॥

दोहा- **कर्म जाड्यता जगतमय, होय दूर अज्ञान ।**
सन्त शरण जिनने गही, पावत सच्चा ज्ञान ॥ २२६ ॥

चौ- भव सागर में डूबत जोई । साधु रूप नौका दृढ़ होई ॥ १ ॥
रक्षा प्राण अन्त से जैसे । रक्षक दीनन का मैं वैसे ॥ २ ॥
यथा धरम ही धन पर लोकू । त्यों संसार भीत इस लोकू ॥ ३ ॥
सन्त पुरुष परमाश्रम तासू । करो सन्त जन पर विश्वासू ॥ ४ ॥
अनुग्रह शील देवता सन्ता । सन्त हितैषी सुहृद अनन्ता ॥ ५ ॥
सुनौ सन्त जन प्रिय तम आत्मा । जानो सन्त रूप परमात्मा ॥ ६ ॥
नृपति एल यों निस्पृह होकर । उर्वशि जनित शोक सब तजकर ॥ ७ ॥
मुक्त संग होकर महि ऊपर । विचरन लगा मस्त मन होकर ॥ ८ ॥
बोले उद्धव कृष्ण कृपालू । क्रिया योग वरणों सब हालू ॥ ९ ॥
जैसे भक्त करहिं तव पूजन । वह सब कहो प्रभो विधि अर्चन ॥ १० ॥

दोहा- **मैं नंगा उन्मत हो, एक नार के काज ।**
हाय हाय कर विलखता, फिरूँ अरे मैं आज ॥ २२२॥

चौ- सह दुलत्तियाँ खर की नाँई । धावा तिय अनु लाज तजाही ॥ १ ॥
स्वामीपन बल तेज प्रभावा । सब विधि मैंने वृथा गँवावा ॥ २ ॥
निसन्देह मैं मूरख भारी । जासु चुराय लिये मन नारी ॥ ३ ॥
त्याग तपस्या विद्या तासू । ज्ञान व ध्यान वृथा सन्यासू ॥ ४ ॥
नाम अरे सम्राट हमारा । कर वृषवत अब नारिन द्वारा ॥ ५ ॥
मैं ने अरे पराजय मानी । स्वारथ वश मैं अति अज्ञानी ॥ ६ ॥
उरवशि के अधरामृत द्वारा । भयो तृप्त नहि किसी प्रकारा ॥ ७ ॥
होवत तृप्त आहुति द्वारा । यथा अनल नहि किसी प्रकारा ॥ ८ ॥
उस कुलटा द्वारा चित मेरा । जीता कीन्हा नहीं अवेरा ॥ ९ ॥
मैं अति अधी महाखल कामी । धृक धृक मुझे अरे तिय गामी ॥ १० ॥

दोहा— **अब हरि विन इस फन्द से, मुक्ति दिलावन हार ।**
दीखत नहि कोई मुझे, दूजा इस संसार ॥ २२३ ॥

चौ- उरवशि को भी दोष न देऊँ । सभी दोष अपने सिर लेऊँ ॥ १ ॥
उसने मुझे सही समझाया । किन्तु न मेरा मोह नसाया ॥ २ ॥
सभी इन्द्रियाँ वश के बाहर । तब मैं समझ सकूँ भी क्यों कर ॥ ३ ॥
सर्प समझ रस्सी से डरहीं । तब रस्सी का दोष न कहहीं ॥ ४ ॥
कहाँ मलिन यह देह अपावन । कहाँ सुगंधादिक गुण पावन ॥ ५ ॥
विद्या बीच अविद्या पाई । सुन्दर लखी असुन्दरताई ॥ ६ ॥
जानो देह नहीं यह काहू । भार्या स्वामिन मात पिताहू ॥ ७ ॥
चर्म व माँस रुधिर के द्वारा । विरचित तनु यह सभी प्रकारा ॥ ८ ॥
होवत अग्नि बीच समर्पन । खावत गीध श्वान मिल इक दिन ॥ ९ ॥
विष्ठा मूत्र पूय युत भारी । करे रमण इसमें संसारी ॥ १० ॥

दोहा- **उस मानव अरु कीट में, अन्तर नहीं दिखात ।**
दोनों रहते एक सँग, दोनो की एक जात ॥ २२४ ॥

चौ- करो न तिय तिय लम्पट संगा । होत क्षुभित मन विषयन योगा ॥ १ ॥
श्रुत अदृष्ट पदारथ द्वारा । मन में आत न कभी विकारा ॥ २ ॥
होत इन्द्रियाँ जब स्वाधीना । तब मन होत विकार न लीना ॥ ३ ॥
तिय लम्पट तिय संग न कीजे । इनते सदा दूर अति रहिजे ॥ ४ ॥

मन सह पंच इन्द्रियाँ खासा । करो नहि इन पर विश्वासा ॥ ५ ॥
ये उद्‌गार उठे जब मन में । तजी उरवशी चिन्ता छिन में ॥ ६ ॥
ज्ञानोदय होने केकारण । तजा मोह नृप ने तब तत्क्षण ॥ ७ ॥
कर दर्शन निज हिय में मेरा । गयो धाम मम कियो न वेरा ॥ ८ ॥
तज दुसंग सत्संगत कीजे । संत वचन हिय बीच धरीजे ॥ ९ ॥
हित उपदेश सुना कर संता । विषया शक्ति मिटावत अन्ता ॥ १० ॥

दोहा— **बुद्धिमान मानव वही, तज कर सदा कुसंग ।**
सन्त जनों से प्रेम कर, हरि के सुनै प्रसंग ॥ २२५ ॥

चौ- सन्तन के लक्षण यों गाया । राखे सन्त हृदय में दाया ॥ १ ॥
समदरसी अरु निरहंकारी । राखे मुझमें प्रेम अपारी ॥ २ ॥
किसी वस्तु की चाह न करहीं । मुझमें चित्त सर्वदा रखहीं ॥ ३ ॥
ममता से वे करे किनारा । मन में आवत नहीं विकारा ॥ ४ ॥
राखत नहीं परिग्रह कोई । सदा एक रस रहते सोई ॥ ५ ॥
करते वे सब कथा हमारी । सुनते पाप पुञ्ज सब हारी ॥ ६ ॥
गावत सुनत करत अनुमोदन । श्रद्धा सहित कथा मम पावन ॥ ७ ॥
होत परायण वे सब मेरे । परम भक्ति वे पात जरूरे ॥ ८ ॥
मेरी भक्ति करे जे सन्ता । किसी वस्तु की करे न चिन्ता ॥ ९ ॥
यथा अनल आश्रित हो कोई । तम अरु सीत न व्यापे सोई ॥ १० ॥

दोहा- **कर्म जाड्यता जगतमय, होय दूर अज्ञान ।**
सन्त शरण जिनने गही, पावत सच्चा ज्ञान ॥ २२६ ॥

चौ- भव सागर में डूबत जोई । साधु रूप नौका दृढ़ होई ॥ १ ॥
रक्षा प्राण अन्त से जैसे । रक्षक दीनन का मैं वैसे ॥ २ ॥
यथा धरम ही धन पर लोकू । त्यों संसार भीत इस लोकू ॥ ३ ॥
सन्त पुरुष परमाश्रम तासू । करो सन्त जन पर विश्वासू ॥ ४ ॥
अनुग्रह शील देवता सन्ता । सन्त हितैषी सुहृद अनन्ता ॥ ५ ॥
सुनौ सन्त जन प्रिय तम आत्मा । जानो सन्त रूप परमात्मा ॥ ६ ॥
नृपति एल यों निस्पृह होकर । उर्वशि जनित शोक सब तजकर ॥ ७ ॥
मुक्त संग होकर महि ऊपर । विचरन लगा मस्त मन होकर ॥ ८ ॥
बोले उद्धव कृष्ण कृपालू । क्रिया योग वरणों सब हालू ॥ ९ ॥
जैसे भक्त करहिं तव पूजन । वह सब कहो प्रभो विधि अर्चन ॥ १० ॥

दोहा- नारद व्यास न सुरगुरु, कहे युँ बारम्बार ।
क्रिया योग द्वारा परम, अर्चन सुखद तुम्हार ।। २२७ ।।

चौ- तव मुख निरगत शुभ उपदेशा । सुना प्रथम यह धात सुरेशा ।। १ ।।
निज पुत्रन भृग्वादिक कारन । कीन्हो लोक पिता पुनि वरणन ।। २ ।।
पारवती प्रति पशुपति गाया । क्रिया योग सुन्दर सुखदाया ।। ३ ।।
वर्णाश्रम शूद्रन अरु नारी । ये साधन उत्तम हितकारी ।। ४ ।।
कर्म व बन्ध विमोचन करता । मोरे प्रति वरणों सुर भरता ।। ५ ।।
कर्म कांड का अन्त न भाई । तदपि कहो संक्षेप सुनाई ।। ६ ।।
मम पूजन के तीन प्रकारा । वैदिक तन्त्रिक मिश्र विचारा ।। ७ ।।
साधक की जैसी रुचि होहीं पूजे उसी विधी से मोहीं ।। ८ ।।
पूरब शास्त्र विधि के द्वारा । संस्कृत हो उपनयन द्वारा ।। ९ ।।
द्विज पन प्राप्त करे शुभकारी । तब हो मम पूजन अधिकारी ।। १० ।।

दोहा— मैं ही सबका हूँ पिता, शिक्षक हूँ सब कोय ।
मेरी पूजन करन का, करतब सब का होय ।। २२८ ।।

चौ- प्रतिमा स्तंडिल भूमि व भानू । हिय द्विज गुरुवर नीर कृशानू ।। १ ।।
करे अर्चना इनमे मेरी । मन में रखकर भक्ति घनेरी ।। २ ।।
प्रथम दन्त शुद्धि कर स्नाना । वैदिक तांत्रिक मंत्र विधाना ।। ३ ।।
मृतिका अरु भस्मी के द्वारा । करले पाछे स्नान दुबारा ।। ४ ।।
करके पाछे संध्या वन्दन । करे नित्य कर्म मम अर्चन ।। ५ ।।
कर्म के बन्ध छुडावन हारी । मेरी पूजन अति सुखकारी ।। ६ ।।
मृतिका धातु चित्र की चन्दन । शिकता मानस मणिमयि पाहन ।। ७ ।।
प्रतिमा के ये आठ प्रकारा । द्विविध चलाचल के अनुसारा ।। ८ ।।
स्थिर प्रतिमा की करे जो पूजन । आवाहन नहीं करे विसर्जन ।। ९ ।।
चल मूरत की हो यदि पूजन । आवहन अरु करे विसर्जन ।। १० ।।

दोहा- यदि मूरति वालूमयी, तो आवाहन आप ।
करो विसर्जन प्रतिदिना, तज कर सब सन्ताप ।। २२९।।

चौ- काठ व मृतिका चित्रक सुन्दर । करे मार्जन जल का इन पर ।। १ ।।
करे सकामी यदि जो पूजन । नाना द्रव्य करे मम अरपन ।। २ ।।
हो निष्कामी भक्त हमारा । पूजे यथा लब्धि के द्वारा ।। ३ ।।
यदि हिय अर्चन करे हमारा । मनोमयी सामग्री द्वारा ।। ४ ।।

स्नान व वस्त्र व भूषण द्वारा । करे अर्चना मम प्रिय सारा ॥ ५ ॥
स्तंडिल बीच करे यदि पूजन । सुर मन्त्रन का करे उचारन ॥ ६ ॥
घृत मिश्रित सुन्दर हवि द्वारा । पूजन वह्नि बीच हमारा ॥ ७ ॥
उपस्थान रवि तर्पण नीरा । पूजे श्रद्धा सहित अखीरा ॥ ८ ॥
श्रृद्धा युत भक्ति से मोहीं । खारा जल भी अति प्रिय होहीं ॥ ९ ॥
अरपित करहीं अभक्ति द्वारा । मोहिं प्रिय लागत नहि खारा ॥ १० ॥

दोहा— **कर्ता पूजन वस्तु सब, संग्रह कर शुचि होय ।**
कुश आसन पर बैठिके, पूर्वोत्तर मुख सोय ॥ २३०॥क
अंग न्यास करन्यास कर, मूर्ति न्यास करवाय ।
पूर्व समर्पित वस्तु सब, प्रतिमा से हटवाय ॥ २३० ॥ख

चौ- पूजन द्रव्य पात्र शुभ लेकर । पूजे कलश गंध जल गहिकर ॥ १ ॥
प्रोक्षण करदे प्रोक्षणि द्वारा । पूजन वस्तु व सहित शरीरा ॥ २ ॥
तीन पात्र में भरकर नीरा । पाद्यादिक सब रचे अखीरा ॥ ३ ॥
हृदय व शीर्ष शिखा मनुद्वारा । कर अभिमन्त्रित भली प्रकारा ॥ ४ ॥
करे बाद गायत्री द्वारा । अभिमन्त्रित शुभ विधि अनुसारा ॥ ५ ॥
करते भूत शुद्धि पुनि सुन्दर । हृदय पद्म स्थित निज तन भीतर ॥ ६ ॥
करे ध्यान मम येन प्रकारा । पूजे मुनि मानस उपचारा ॥ ७ ॥
तन्मय होय तदन्तर सुन्दर । करे स्थापना प्रतिमा अन्दर ॥ ८ ॥
अंग न्यास कर मन्त्रन द्वारा । प्रतिमा पूजे विधि अनुसारा ॥ ९ ॥
धर्मादिक जे तव गुण गाये । करें कल्पना आसन पाये ॥ १० ॥

दोहा- **पद्म अष्ट दल रचकर, वेद तन्त्र अनुसार ।**
गण आयुध सह पारषद, पूजे तजहिं विकार ॥ २३१ ॥

चौ- शंख सुदरशन गदा विशाला । असि धनु शर हल मूसल माला ॥ १ ॥
नन्द सुनन्द गरुड प्रचंडा । बल अरु कुमुद महा बल चंडा ॥ २ ॥
कुमुदेक्षण दुर्गागण राई । विष्वकसेन व्यास गुरु साँई ॥ ३ ॥
सुर लोकप प्रतिमा के आगे । पूजे सभी वस्तु ले सागे ॥ ४ ॥
नीर सुवासित लेकर पूरा । चन्दन केशर अगर कपूरा ॥ ५ ॥
स्नान करावे प्रतिमा ऊपर । पढ़कर पुरुषसूक्त खुश होकर ॥ ६ ॥
वस्त्र जनेऊ पत्र व भूषन । माला पुष्प विलेपन चन्दन ॥ ७ ॥
प्रेम समेत करहिं श्रृंगारा । पूजे सह षोडश उपचारा ॥ ८ ॥

दोहा- **नारद व्यास न सुरगुरु, कहे युँ बारम्बार ।**
क्रिया योग द्वारा परम, अर्चन सुखद तुम्हार ॥ २२७ ॥

चौ- तव मुख निरगत शुभ उपदेशा । सुना प्रथम यह धात सुरेशा ॥ १ ॥
निज पुत्रन भृग्वादिक कारन । कीन्हो लोक पिता पुनि वरणन ॥ २ ॥
पारवती प्रति पशुपति गाया । क्रिया योग सुन्दर सुखदाया ॥ ३ ॥
वर्णाश्रम शूद्रन अरु नारी । ये साधन उत्तम हितकारी ॥ ४ ॥
कर्म व बन्ध विमोचन करता । मोरे प्रति वरणों सुर भरता ॥ ५ ॥
कर्म कांड का अन्त न भाई । तदपि कहो संक्षेप सुनाई ॥ ६ ॥
मम पूजन के तीन प्रकारा । वैदिक तन्त्रिक मिश्र विचारा ॥ ७ ॥
साधक की जैसी रुचि होहीं पूजे उसी विधी से मोहीं ॥ ८ ॥
पूरव शास्त्र विधि के द्वारा । संस्कृत हो उपनयन द्वारा ॥ ९ ॥
द्विज पन प्राप्त करे शुभकारी । तब हो मम पूजन अधिकारी ॥ १० ॥

दोहा— **मैं ही सबका हूँ पिता, शिक्षक हूँ सब कोय ।**
मेरी पूजन करन का, करतब सब का होय ॥ २२८ ॥

चौ- प्रतिमा स्तंडिल भूमि व भानू । हिय द्विज गुरुवर नीर कृशानू ॥ १ ॥
करे अर्चना इनमे मेरी । मन में रखकर भक्ति घनेरी ॥ २ ॥
प्रथम दन्त शुद्धि कर स्नाना । वैदिक तांत्रिक मंत्र विधाना ॥ ३ ॥
मृतिका अरु भस्मी के द्वारा । करले पाछे स्नान दुबारा ॥ ४ ॥
करके पाछे संध्या वन्दन । करे नित्य कर्म मम अर्चन ॥ ५ ॥
कर्म के बन्ध छुडावन हारी । मेरी पूजन अति सुखकारी ॥ ६ ॥
मृतिका धातु चित्र की चन्दन । शिकता मानस मणिमयि पाहन ॥ ७ ॥
प्रतिमा के ये आठ प्रकारा । द्विविध चलाचल के अनुसारा ॥ ८ ॥
स्थिर प्रतिमा की करे जो पूजन । आवाहन नहीं करे विसर्जन ॥ ९ ॥
चल मूरत की हो यदि पूजन । आवहन अरु करे विसर्जन ॥ १० ॥

दोहा- **यदि मूरति वालूमयी, तो आवाहन आप ।**
करो विसर्जन प्रतिदिना, तज कर सब सन्ताप ॥ २२९॥

चौ- काष्ठ व मृतिका चित्रक सुन्दर । करे मार्जन जल का इन पर ॥ १ ॥
करे सकामी यदि जो पूजन । नाना द्रव्य करे मम अरपन ॥ २ ॥
हो निष्कामी भक्त हमारा । पूजे यथा लब्धि के द्वारा ॥ ३ ॥
यदि हिय अर्चन करे हमारा । मनोमयी सामग्री द्वारा ॥ ४ ॥

स्नान व वस्त्र व भूषण द्वारा । करे अर्चना मम प्रिय सारा ॥ ५ ॥
स्तंडिल बीच करे यदि पूजन । सुर मन्त्रन का करे उचारन ॥ ६ ॥
घृत मिश्रित सुन्दर हवि द्वारा । पूजन वह्नि बीच हमारा ॥ ७ ॥
उपस्थान रवि तर्पण नीरा । पूजे श्रद्धा सहित अखीरा ॥ ८ ॥
श्रृद्धा युत भक्ति से मोहीं । खारा जल भी अति प्रिय होहीं ॥ ९ ॥
अरपित करहीं अभक्ति द्वारा । मोहिं प्रिय लागत नहि खारा ॥ १० ॥

दोहा— **कर्ता पूजन वस्तु सब, संग्रह कर शुचि होय ।**
कुश आसन पर बैठिके, पूर्वोत्तर मुख सोय ॥ २३०॥क
अंग न्यास करन्यास कर, मूर्ति न्यास करवाय ।
पूर्व समर्पित वस्तु सब, प्रतिमा से हटवाय ॥ २३० ॥ख

चौ- पूजन द्रव्य पात्र शुभ लेकर । पूजे कलश गंध जल गहिकर ॥ १ ॥
प्रोक्षण करदे प्रोक्षणि द्वारा । पूजन वस्तु व सहित शरीरा ॥ २ ॥
तीन पात्र में भरकर नीरा । पाद्यादिक सब रचे अखीरा ॥ ३ ॥
हृदय व शीर्ष शिखा मनुद्धारा । कर अभिमन्त्रित भली प्रकारा ॥ ४ ॥
करे बाद गायत्री द्वारा । अभिमन्त्रित शुभ विधि अनुसारा ॥ ५ ॥
करते भूत शुद्धि पुनि सुन्दर । हृदय पद्म स्थित निज तन भीतर ॥ ६ ॥
करे ध्यान मम येन प्रकारा । पूजे मुनि मानस उपचारा ॥ ७ ॥
तन्मय होय तदन्तर सुन्दर । करे स्थापना प्रतिमा अन्दर ॥ ८ ॥
अंग न्यास कर मन्त्रन द्वारा । प्रतिमा पूजे विधि अनुसारा ॥ ९ ॥
धर्मादिक जे तव गुण गाये । करें कलपना आसन पाये ॥ १० ॥

दोहा- **पद्म अष्ट दल रचकर, वेद तन्त्र अनुसार ।**
गण आयुध सह पारषद, पूजे तजहिं विकार ॥ २३१ ॥

चौ- शंख सुदरशन गदा विशाला । असि धनु शर हल मूसल माला ॥ १ ॥
नन्द सुनन्द गरुड प्रचंडा । बल अरु कुमुद महा बल चंडा ॥ २ ॥
कुमुदेक्षण दुर्गागण राई । विष्वकसेन व्यास गुरु साँई ॥ ३ ॥
सुर लोकप प्रतिमा के आगे । पूजे सभी वस्तु ले सागे ॥ ४ ॥
नीर सुवासित लेकर पूरा । चन्दन केशर अगर कपूरा ॥ ५ ॥
स्नान करावे प्रतिमा ऊपर । पढ़कर पुरुषसूक्त खुश होकर ॥ ६ ॥
वस्त्र जनेऊ पत्र व भूषन । माला पुष्प विलेपन चन्दन ॥ ७ ॥
प्रेम समेत करहिं श्रृंगारा । पूजे सह षोडश उपचारा ॥ ८ ॥

गुड पायस घृत करे समर्पित । पुरि पूप मृदु मोदक अरपित ॥ ९ ॥
प्रतिदिन वा पर्वादिक आवे । नृत्य व गान तदा करवावे ॥ १० ॥

दोहा— **कुंड बनावे विधि सहित, बाद अग्नि पधराय ।**
परि समूहनादिक करे, करे ध्यान हर्षाय ॥ २३२ ॥

चौ- शंख व चक गदा युत पंकज । सोभित पीताम्बरी चतुर्भुज ॥ १ ॥
सीस मुकुट कर कंकण सुन्दर । सूत्र कटी भुजबन्ध मनोहर ॥ २ ॥
हिय ऊपर श्री वत्स विशाला । कौस्तुभमणि व गले वनमाला ॥ ३ ॥
करे ध्यान मम येन प्रकारा । कर पूजन गंधादिक द्वारा ॥ ४ ॥
पाछे घृतप्लुत समिधा लेकर । करे समर्पित अग्नि भीतर ॥ ५ ॥
आहुति आज्या भाग अधारा । देकर मूल मन्त्र के द्वारा ॥ ६ ॥
अथवा पुरुषसूक्त के द्वारा । करे हवन प्रति मनु अनुसारा ॥ ७ ॥
धर्मादिक देवन के कारन । दे आहुति कर मन्त्र उचारन ॥ ८ ॥
करे स्विष्ट कृत हवन व पूजन । नन्दादिक प्रति बलि कर अरपन ॥ ९ ॥
मूलमंत्र कर जप पुनि भ्राता । करे समर्पित हरि जग त्राता ॥ १० ॥

दोहा— **कर अरपन ताम्बूल शुभ, पुष्पाञ्जलि कर बाद ।**
सुनै सुनावे स्वएव हो, मम लीला कर याद ॥ २३३ ॥

चौ- पौराणिक प्राकृत अति सुन्दर । करे स्तोत्र उचारण सुखकर ॥ १ ॥
करे वन्दना प्रभो मुरारे । मैं शरणागत हरे तुम्हारे ॥ २ ॥
मृत्यु स्वरूपी ग्राह करारा । पीछा करता प्रभो हमारा ॥ ३ ॥
इस संसार सिन्धु के भीतर । डूब रहा मैं हे जगदीश्वर ॥ ४ ॥
अब मैं शरण तुम्हारी आया । होऊ मुदित मोपर कर दाया ॥ ५ ॥
ले निर्माल्य सीस पुनि धरहीं । इसके बाद विसर्जन करहीं ॥ ६ ॥
प्रतिमा अगनि विप्र महि भीतर । करे अर्चना श्रद्धा रखकर ॥ ७ ॥
इस प्रकार पूजन जो करहीं । इह पर लोग सिद्धि वह लहहीं ॥ ८ ॥
मन्दिर का निर्माण करावे । हरि मूरति उसमें पधरावे ॥ ९ ॥
सुन्दर पुष्पोद्यान लगावे । पूजन का सुप्रबन्ध करावे ॥ १० ॥

दोहा- **हाट ग्राम पुर खेत जो, करे समर्पित मोय ।**
पावत अति ऐश्वर्य शुभ, मम सम वह नर होय ॥ २३४॥

चौ- करे प्रतिष्ठा मानव मेरी । पावत सार्वभौम नहि देरी ॥ १ ॥
मन्दिर जे करहीं निरमाना । राज्य त्रिलोकी तासु अधीना ॥ २ ॥

करे व्यवस्था पूजन कोई । जावत ब्रह्म लोक विच सोई ॥ ३ ॥
निष्कामी जो भक्त हमारा । कर पूजन षोडश उपचारा ॥ ४ ॥
पावत भकती योग सुधीरा । आवत मोरे धाम अखीरा ॥ ५ ॥
सुर विप्रन वृत्ति जो खावे । आप दत्त पर दत्त छिनावे ॥ ६ ॥
सुन उद्धव वह वर्ष करोड़ा । होवत विष्ठा का वह क्रीड़ा ॥ ७ ॥
ऐसे कामों में हे उद्धव । होय सहायक प्रेरक मानव ॥ ८ ॥
अति अनुमोदन करने हारा । वह भी होवत भागीदारा ॥ ९ ॥
बोले श्री यदुनाथ उदारा । सुनौ प्रमाणिक वचन हमारा ॥ १० ॥

दोहा- **एकात्मक लख विश्व को, स्तुत निन्दित नहि कोय ।**
प्रकृति पुरुष के भेद से, दीखत यह जग दोय ॥ २३५॥

चौ- परस्वभाव करमन का कोई । स्तुति निन्दा करता नर जोई ॥ १ ॥
निज यथार्थ परमारथ द्वारा । हो जावत च्युत सभी प्रकारा ॥ २ ॥
होत इन्द्रियाँ निद्रित जबहीं । चेतन शून्य जीव हो तबही ॥ ३ ॥
फँस कर सुपन रूप विच माया । देखत रूप अनेक निकाया ॥ ४ ॥
त्यों द्वैताभिनिवेशी मानव । रूप भ्रंश हो जावत उद्धव ॥ ५ ॥
भद्र अभद्र न दीखत द्वैता । रहे पदारथ जग में जेता ॥ ६ ॥
मन वाणी से सोचे गाये । सर्व यथारथ अनृत गाये ॥ ७ ॥
रजत शक्ति प्रतिध्वनि पर परछाई । मिथ्या भूत तदपि भयदाई ॥ ८ ॥
देहादिक सब येन प्रकारा । मिथ्या भूत होत ये सारा ॥ ९ ॥
जब लगि ज्ञान दृष्टि के द्वारा । मिथ्यापन का होन निवारा ॥ १० ॥

दोहा- **आत्मन्तिक निवृति अरे, इनकी होवत नहिं ।**
अज्ञानिन के कारने, भय युत सदा दिखहि ॥ २३६॥ क
पर में या अपरोक्ष में दीखत वस्तु अनेक ।
सर्व शक्ति युत है वही, आत्मा भी वही एक ॥ २३६॥ ख

चौ- रक्षक रक्षित रचयित रचिता । वहि सर्वात्मा नाशक नशिता ॥ १ ॥
आत्मा ते दूजा नहि कोई । मायाकृत दीखत ये जोई ॥ २ ॥
मम वचनों का जानन हारा । निन्दा स्तुति ते करत किनारा ॥ ३ ॥
इस जग बीचे भानु समाना । विचरण करता हो मस्ताना ॥ ४ ॥
निज अनुभूति आदि अनुमाना । शास्त्रादिक प्रत्यक्ष प्रमाना ॥ ५ ॥
इनते होवत जगत विनासी । असत अनिज्य नहीं विश्वासी ॥ ६ ॥

गुड पायस घृत करे समर्पित । पुरि पूप मृदु मोदक अरपित ॥ ९ ॥
प्रतिदिन वा पर्वादिक आवे । नृत्य व गान तदा करवावे ॥ १० ॥

दोहा— **कुंड बनावे विधि सहित, बाद अग्नि पधराय ।**
परि समूहनादिक करे, करे ध्यान हर्षाय ॥ २३२ ॥

चौ- शंख व चक्र गदा युत पंकज । सोभित पीताम्बरी चतुर्भुज ॥ १ ॥
सीस मुकुट कर कंकण सुन्दर । सूत्र कटी भुजबन्ध मनोहर ॥ २ ॥
हिय ऊपर श्री वत्स विशाला । कौस्तुभमणि व गले वनमाला ॥ ३ ॥
करे ध्यान मम येन प्रकारा । कर पूजन गंधादिक द्वारा ॥ ४ ॥
पाछे घृतप्लुत समिधा लेकर । करे समर्पित अग्नि भीतर ॥ ५ ॥
आहुति आज्या भाग अधारा । देकर मूल मन्त्र के द्वारा ॥ ६ ॥
अथवा पुरुषसूक्त के द्वारा । करे हवन प्रति मनु अनुसारा ॥ ७ ॥
धर्मादिक देवन के कारन । दे आहुति कर मन्त्र उचारन ॥ ८ ॥
करे स्विष्ट कृत हवन व पूजन । नन्दादिक प्रति बलि कर अरपन ॥ ९ ॥
मूलमंत्र कर जप पुनि भ्राता । करे समर्पित हरि जग त्राता ॥ १० ॥

दोहा— **कर अरपन ताम्बूल शुभ, पुष्पाञ्जलि कर बाद ।**
सुनै सुनावे स्वएव हो, मम लीला कर याद ॥ २३३ ॥

चौ- पौराणिक प्राकृत अति सुन्दर । करे स्तोत्र उच्चारण सुखकर ॥ १ ॥
करे वन्दना प्रभो मुरारे । मैं शरणागत हरे तुम्हारे ॥ २ ॥
मृत्यु स्वरूपी ग्राह करारा । पीछा करता प्रभो हमारा ॥ ३ ॥
इस संसार सिन्धु के भीतर । डूब रहा मैं हे जगदीश्वर ॥ ४ ॥
अब मैं शरण तुम्हारी आया । होऊ मुदित मोपर कर दाया ॥ ५ ॥
ले निर्माल्य सीस पुनि धरहीं । इसके बाद विसर्जन करहीं ॥ ६ ॥
प्रतिमा अगनि विप्र महि भीतर । करे अर्चना श्रद्धा रखकर ॥ ७ ॥
इस प्रकार पूजन जो करहीं । इह पर लोग सिद्धि वह लहहीं ॥ ८ ॥
मन्दिर का निर्माण करावे । हरि मूरति उसमें पधरावे ॥ ९ ॥
सुन्दर पुष्पोद्यान लगावे । पूजन का सुप्रबन्ध करावे ॥ १० ॥

दोहा- **हाट ग्राम पुर खेत जो, करे समर्पित मोय ।**
पावत अति ऐश्वर्य शुभ, मम सम वह नर होय ॥ २३४॥

चौ- करे प्रतिष्ठा मानव मेरी । पावत सार्वभौम नहि देरी ॥ १ ॥
मन्दिर जे करहीं निरमाना । राज्य त्रिलोकी तासु अधीना ॥ २ ॥

करे व्यवस्था पूजन कोई । जावत ब्रह्म लोक विच सोई ॥ ३ ॥
निष्कामी जो भक्त हमारा । कर पूजन षोडश उपचारा ॥ ४ ॥
पावत भकती योग सुधीरा । आवत मोरे धाम अखीरा ॥ ५ ॥
सुर विप्रन वृत्ति जो खावे । आप दत्त पर दत्त छिनावे ॥ ६ ॥
सुन उद्धव वह वर्ष करोड़ा । होवत विष्ठा का वह क्रीड़ा ॥ ७ ॥
ऐसे कामों में हे उद्धव । होय सहायक प्रेरक मानव ॥ ८ ॥
अति अनुमोदन करने हारा । वह भी होवत भागीदारा ॥ ९ ॥
बोले श्री यदुनाथ उदारा । सुनो प्रमाणिक वचन हमारा ॥ १० ॥

दोहा- **एकात्मक लख विश्व को, स्तुत निन्दित नहि कोय ।**
प्रकृति पुरुष के भेद से, दीखत यह जग दोय ॥ २३५॥

चौ- परस्वभाव करमन का कोई । स्तुति निन्दा करता नर जोई ॥ १ ॥
निज यथार्थ परमारथ द्वारा । हो जावत च्युत सभी प्रकारा ॥ २ ॥
होत इन्द्रियाँ निद्रित जबहीं । चेतन शून्य जीव हो तबही ॥ ३ ॥
फँस कर सुपन रूप विच माया । देखत रूप अनेक निकाया ॥ ४ ॥
त्यों द्वैताभिनिवेशी मानव । रूप भ्रंश हो जावत उद्धव ॥ ५ ॥
भद्र अभद्र न दीखत द्वैता । रहे पदारथ जग में जेता ॥ ६ ॥
मन वाणी से सोचे गाये । सर्व यथारथ अनृत गाये ॥ ७ ॥
रजत शक्ति प्रतिध्वनि पर परछाई । मिथ्या भूत तदपि भयदाई ॥ ८ ॥
देहादिक सब येन प्रकारा । मिथ्या भूत होत ये सारा ॥ ९ ॥
जब लगि ज्ञान दृष्टि के द्वारा । मिथ्यापन का होन निवारा ॥ १० ॥

दोहा- **आत्मन्तिक निवृति अरे, इनकी होवत नहिं ।**
अज्ञानिन के कारने, भय युत सदा दिखहि ॥ २३६॥ क
पर में या अपरोक्ष में दीखत वस्तु अनेक ।
सर्व शक्ति युत है वही, आत्मा भी वही एक ॥ २३६॥ ख

चौ- रक्षक रक्षित रचयित रचिता । वहि सर्वात्मा नाशक नशिता ॥ १ ॥
आत्मा ते दूजा नहि कोई । मायाकृत दीखत ये जोई ॥ २ ॥
मम वचनों का जानन हारा । निन्दा स्तुति ते करत किनारा ॥ ३ ॥
इस जग बीचे भानु समाना । विचरण करता हो मस्ताना ॥ ४ ॥
निज अनुभूति आदि अनुमाना । शास्त्रादिक प्रत्यक्ष प्रमाना ॥ ५ ॥
इनते होवत जगत विनासी । असत अनिज्य नही विश्वासी ॥ ६ ॥

सब बातें ये जाने मानव । हो असंग विचरे सुनु उद्धव ॥ ७ ॥
यथा औषधी भक्षण द्वारा । होय रोग नहि किसी प्रकारा ॥ ८ ॥
त्यों मन इन्द्रिय जित की सारी । तृष्णा प्रीति नसत संसारी ॥ ९ ॥
जिन इन्द्रिय मन वश ना राखा । व्यर्थ तासु तप सुमिरन भाखा ॥ १० ॥

दोहा- **जब मानव मन ईश के, रहे ध्यान में लीन ।**
तब निज तन जग प्रीति के, वह ना रहे अधीना ॥२३७॥

चौ- सोवत जागत खावत पीवत । चालत फिरत प्रभू पद सुमिरन ॥ १ ॥
तम छिप जावत भानु प्रकासे । त्यों मम भगति अविद्या नासे ॥ २ ॥
तप अरु योग भंग यदि होवत । योगी शीघ्र नहीं गति पावत ॥ ३ ॥
मेरा भक्त भूल यदि करहीं । अपर जन्म बीचे गति लहहीं ॥ ४ ॥
जब लगि आत्मा तन में बसती । प्रबल इन्द्रियाँ तब तक रहती ॥ ५ ॥
जेत देव इन्द्रियन माँही । निज प्रकाश उन बीच रखाहीं ॥ ६ ॥
वहि आत्मा उन देवन भीतर । होवत अलग प्रबलता लखकर ॥ ७ ॥
योगी सन्त जगत के भीतर । फँसते नहिं माया के चक्कर ॥ ८ ॥
पूर्व पाप के कारण कोई । उन पर कष्ट यदि कुछ होई ॥ ९ ॥
करूँ निवारण उनका सारा । सुनो वचन यह सत्य हमारा ॥ १० ॥

दोहा— **नाशवान इस देह में, रखो प्रीत ना कोई ।**
इन इन्द्रीयन को कभी, उचित नहीं सुख होई ॥ २३८॥क
इतनी सुन करके कथा, दोऊ कर को जोर ।
उद्धव ने श्री कृष्ण से, कहे वचन इस तोर ॥ २३८ ॥ ख

चौ- जब लगि वश में मन ना आवे । दुष्कर योग कर्म बन जावे ॥ १ ॥
मन वश होवत जोन उपाया । मोसे कहो वही यदुराया ॥ २ ॥
तुम सम अन्य नहीं यदुराया । मन वश का जो कहे उपाया ॥ ३ ॥
यह मन चंचल अनिल समाना । इस पर महा कठिन जम पाना ॥ ४ ॥
संसारी जीवों को ऐसा । भुला दिया माया ने कैसा ॥ ५ ॥
विना दया के प्रभो तुम्हारी । माया जाल हटे ना भारी ॥ ६ ॥
सनकादिक ब्रह्मादिक नारद । भेद न जानत ज्ञान विशारद ॥ ७ ॥
हरी का चरित नहीं संसारी । जान सके फिर कवन प्रकारी ॥ ८ ॥
बोले कृष्ण चन्द्र हे उद्धव । लेकर जनम जगत में मानव ॥ ९ ॥
मोरे चरण कमल का ध्याना । कथा कीरतन सुनता काना ॥ १० ॥

दोहा- **धीरे धीरे जगत की, सारी प्रीति नसात ।**
प्रतिदिन हरि के चरण में, प्रेम अपार दिखात ॥ २३६ ॥

चौ- जहाँ तीर्थ पर भक्त व ज्ञानी । भजते निशि दिन शारंग पानी ॥ १ ॥
करे संगति उनकी उद्धव । करे भजन सुमिरन मम मानव ॥ २ ॥
पाले धरम अहिंसा सुन्दर । मम प्रकाश देखे सब अन्दर ॥ ३ ॥
मन वच और करम के द्वारा । करें सर्वदा पर उपकारा ॥ ४ ॥
किसी जीव को नहीं सतावे । मन बीचे अभिमान न लाये ॥ ५ ॥
देखे आभा हरि की सुन्दर । विप्र डोम दोनों के अन्दर ॥ ६ ॥
देव दनुज नर खग मृग अन्दर । जाने हरि का रूप निरन्तर ॥ ७ ॥
उन नर को दुख देत न कोई । वह नर मुक्त अवस कर होई ॥ ८ ॥
गुप्त ज्ञान मैंने यह गाया । अब तक नहीं कहीं बतलाया ॥ ९ ॥
याद रखोगे यदि तुम येही । मिलही मोक्ष अवश कर तेही ॥ १० ॥

दोहा- **साधु सन्त हरि भक्त प्रति, तुम भी यह शुभ ज्ञान ।**
ईश प्रेम में मगन हो, करना सभी बखान ॥ २४० ॥

चौ- लोभी मद्यप चोर जुवारी । पाखंडी लोभी परदारी ॥ १ ॥
हिंसक अरु उपकार न माने । उन प्रति नहिं यह ज्ञान बखाने ॥ २ ॥
अमृत पान करावत जेही । अपर दवा गुणकारि न तेही ॥ ३ ॥
जो समझे यह ज्ञान हमारा । वह उतरे भवसागर पारा ॥ ४ ॥
हरि की कथा सहित यह ज्ञाना । श्रवण करावे सुने जे काना ॥ ५ ॥
यम फन्दे से वह बच जाये । अन्त काल मम धाम सिधाये ॥ ६ ॥
येती कथा सुनाकर सुन्दर । बोले शुक हे नृपति धुरन्धर ॥ ७ ॥
सुनकर उद्धव यह शुभ ज्ञाना । करी विनय सन्मुख भगवाना ॥ ८ ॥
दीपक ज्ञान जला कर मेरा । दूर किया हिय घोर अँधेरा ॥ ९ ॥
माया रूपी घोर अँधेरा । हे हरि हरण किया इस बेरा ॥ १० ॥

दोहा- **कृपा तुम्हारी प्राप्त कर, भयो विरत सब तोर ।**
रहा प्रेम मेरा नहीं, अब स्त्री सुत की ओर ॥ २४१॥

चौ- कृपा तुम्हारी का प्रतिकारा । देन सके नर किसी प्रकारा ॥ १ ॥
माँगो यहि वर बारम्बारा । पद पंकज तज प्रभो तुम्हारा ॥२॥
दूजी ओर नहीं मन मेरा । जाये कहीं नहीं हर बेरा ॥ ३ ॥
यह सुन वचन पादुका लेकर । दीन्हीं प्रभु उद्धव प्रति हँसकर ॥ ४ ॥

सब बातें ये जाने मानव । हो असंग विचरे सुनु उद्धव ॥ ७ ॥
यथा औषधी भक्षण द्वारा । होय रोग नहि किसी प्रकारा ॥ ८ ॥
त्यों मन इन्द्रिय जित की सारी । तृष्णा प्रीति नसत संसारी ॥ ९ ॥
जिन इन्द्रिय मन वश ना राखा । व्यर्थ तासु तप सुमिरन भाखा ॥ १० ॥

दोहा- **जब मानव मन ईश के, रहे ध्यान में लीन ।**
तब निज तन जग प्रीति के, वह ना रहे अधीना ॥२३७॥

चौ- सोवत जागत खावत पीवत । चालत फिरत प्रभू पद सुमिरन ॥ १ ॥
तम छिप जावत भानु प्रकासे । त्यों मम भगति अविद्या नासे ॥ २ ॥
तप अरु योग भंग यदि होवत । योगी शीघ्र नहीं गति पावत ॥ ३ ॥
मेरा भक्त भूल यदि करहीं । अपर जन्म बीचे गति लहहीं ॥ ४ ॥
जब लगि आत्मा तन में बसती । प्रबल इन्द्रियाँ तब तक रहती ॥ ५ ॥
जेत देव इन्द्रियन माँही । निज प्रकाश उन बीच रखाहीं ॥ ६ ॥
वहि आत्मा उन देवन भीतर । होवत अलग प्रबलता लखकर ॥ ७ ॥
योगी सन्त जगत के भीतर । फँसते नहिं माया के चक्कर ॥ ८ ॥
पूर्व पाप के कारण कोई । उन पर कष्ट यदि कुछ होई ॥ ९ ॥
करूँ निवारण उनका सारा । सुनो वचन यह सत्य हमारा ॥ १० ॥

दोहा— **नाशवान इस देह में, रखो प्रीत ना कोई ।**
इन इन्द्रीयन को कभी, उचित नहीं सुख होई ॥ २३८॥क
इतनी सुन करके कथा, दोऊ कर को जोर ।
उद्धव ने श्री कृष्ण से, कहे वचन इस तोर ॥ २३८ ॥ ख

चौ- जब लगि वश में मन ना आवे । दुष्कर योग कर्म बन जावे ॥ १ ॥
मन वश होवत जोन उपाया । मोसे कहो वही यदुराया ॥ २ ॥
तुम सम अन्य नहीं यदुराया । मन वश का जो कहे उपाया ॥ ३ ॥
यह मन चंचल अनिल समाना । इस पर महा कठिन जम पाना ॥ ४ ॥
संसारी जीवों को ऐसा । भुला दिया माया ने कैसा ॥ ५ ॥
बिना दया के प्रभो तुम्हारी । माया जाल हटे ना भारी ॥ ६ ॥
सनकादिक ब्रह्मादिक नारद । भेद न जानत ज्ञान विशारद ॥ ७ ॥
हरी का चरित नहीं संसारी । जान सके फिर कवन प्रकारी ॥ ८ ॥
बोले कृष्ण चन्द्र हे उद्धव । लेकर जनम जगत में मानव ॥ ९ ॥
मोरे चरण कमल का ध्याना । कथा कीरतन सुनता काना ॥ १० ॥

दोहा- **धीरे धीरे जगत की, सारी प्रीति नसात ।**
प्रतिदिन हरि के चरण में, प्रेम अपार दिखात ॥ २३६ ॥

चौ- जहाँ तीर्थ पर भक्त व ज्ञानी । भजते निशि दिन शारंग पानी ॥ १ ॥
करे संगति उनकी उद्धव । करे भजन सुमिरन मम मानव ॥ २ ॥
पाले धरम अहिंसा सुन्दर । मम प्रकाश देखे सब अन्दर ॥ ३ ॥
मन वच और करम के द्वारा । करें सर्वदा पर उपकारा ॥ ४ ॥
किसी जीव को नहीं सतावे । मन बीचे अभिमान न लाये ॥ ५ ॥
देखे आभा हरि की सुन्दर । विप्र डोम दोनों के अन्दर ॥ ६ ॥
देव दनुज नर खग मृग अन्दर । जाने हरि का रूप निरन्तर ॥ ७ ॥
उन नर को दुख देत न कोई । वह नर मुक्त अवस कर होई ॥ ८ ॥
गुप्त ज्ञान मैंने यह गाया । अब तक नहीं कहीं बतलाया ॥ ९ ॥
याद रखोगे यदि तुम येही । मिलही मोक्ष अवश कर तेही ॥ १० ॥

दोहा- **साधु सन्त हरि भक्त प्रति, तुम भी यह शुभ ज्ञान ।**
ईश प्रेम में मगन हो, करना सभी बखान ॥ २४० ॥

चौ- लोभी मद्यप चोर जुवारी । पाखंडी लोभी परदारी ॥ १ ॥
हिंसक अरु उपकार न माने । उन प्रति नहिं यह ज्ञान बखाने ॥ २ ॥
अमृत पान करावत जेही । अपर दवा गुणकारि न तेही ॥ ३ ॥
जो समझे यह ज्ञान हमारा । वह उतरे भवसागर पारा ॥ ४ ॥
हरि की कथा सहित यह ज्ञाना । श्रवण करावे सुने जे काना ॥ ५ ॥
यम फन्दे से वह बच जाये । अन्त काल मम धाम सिधाये ॥ ६ ॥
येती कथा सुनाकर सुन्दर । बोले शुक हे नृपति धुरन्धर ॥ ७ ॥
सुनकर उद्धव यह शुभ ज्ञाना । करी विनय सन्मुख भगवाना ॥ ८ ॥
दीपक ज्ञान जला कर मेरा । दूर किया हिय घोर अँधेरा ॥ ९ ॥
माया रूपी घोर अँधेरा । हे हरि हरण किया इस बेरा ॥ १० ॥

दोहा- **कृपा तुम्हारी प्राप्त कर, भयो विरत सब तोर ।**
रहा प्रेम मेरा नहीं, अब स्त्री सुत की ओर ॥ २४१॥

चौ- कृपा तुम्हारी का प्रतिकारा । देन सके नर किसी प्रकारा ॥ १ ॥
माँगो यहि वर बारम्बारा । पद पंकज तज प्रभो तुम्हारा ॥२॥
दूजी ओर नहीं मन मेरा । जाये कहीं नहीं हर बेरा ॥ ३ ॥
यह सुन वचन पादुका लेकर । दीन्हीं प्रभु उद्धव प्रति हँसकर ॥ ४ ॥

अब बदरी वन करो पयाना । करो गंग का नित प्रति स्नाना ॥ ५ ॥
जाकर कंद मूल फल खाना । करो वहाँ मम चरणन ध्याना ॥ ६ ॥
होवहिं मुक्ति वहाँ तुम्हारी । उद्धव प्रति बोले बनवारी ॥ ७ ॥
ब्रह्मवाद संग्रह यह सारा । कीन्हा वरणन सह विस्तारा ॥ ८ ॥
मुक्त ज्ञान सुनकर यह काना । गत संशय हो जात प्रमाना ॥ ९ ॥
धारण करे सुधी यह ज्ञाना । ब्रह्मलोक में करे पयाना ॥ १० ॥

दोहा- **मेरे भक्तन के प्रति, यदि सुनावहिं ज्ञान ।**
उसकी सब इच्छा सदा, पूर्ण करे भगवान ॥ २४२ ॥

चौ- पढ़ें यदि यह सुन्दर ज्ञाना । करे पाप सब त्वरित पयाना ॥ १ ॥
श्रृद्धा सहित सुनहिं जे येही । कर्म न बाँध सके जग तेही ॥ २ ॥
दाम्भिक नास्तिक शठ प्रति येहू । सखे भूलकर भी न कहेहू ॥ ३ ॥
सब दोषन ते बचे निरन्तर । साधू सन्त ब्रह्मविद खातिर ॥ ४ ॥
स्त्रीजन शूद्र बीच हो भकती । उस प्रति कथन करो मम उकती ॥ ५ ॥
यों सुन वचन कृष्ण के सुन्दर । धरी पादुका उद्धव सिर पर ॥ ६ ॥
रूद्ध कंठ बद्धाञ्जलि होई । अश्रू व्याप्त नयन भए दोई ॥ ७ ॥
लेकर विदा दुखी अति होकर । कियो गमन बद्रीवन भीतर ॥ ८ ॥
कर त्रिकाल गंगाजल स्नाना । निज हिय बीच कीन्ह प्रभु ध्याना ॥ ९ ॥
पाछे योगमार्ग अपनाये । निज तन तजि हरि धाम सिधाये ॥ १० ॥

दोहा- **अमृत रूपी ज्ञान यह, सब वेदन का सार ।**
एकादशवें स्कंध में, वरणन कियो अपार ॥ २४३ ॥क
देव दानवों ने यथा, मिलकर सिन्धु अथाह ।
मन्थन कर चौदह रतन, कीन्हे वहि "नरनाह" ॥२४३॥ख
वैसे ही श्री व्यास ने, वेद व शास्त्र निचोर ।
रचा ग्रंथ यह भागवत, सुनौ नृपति शिरमौर ॥ २४३॥ग

चौ- शुक मुख ते सुनकर ये गाथा । कर अति विनय कहे नर नाथा ॥ १ ॥
शाप छुडाने को यदुराई । थे सामर्थ सुनो मुनिराई ॥ २ ॥
फिर क्यों ना द्विज शाप छुड़ाया । की यदुवन ऊपर ना दाया ॥ ३ ॥
सुन यों नृपति वचन निज काना । बोले व्यास पुत्र भगवाना ॥ ४ ॥
वासुदेव परब्रह्म कहाये । उनको माया नहीं सताये ॥ ५ ॥
इन यदुअन की सभी प्रकारा । भई पालना केशव द्वारा ॥ ६ ॥

निज करते यहि कारण राया । उन वध उचित नही उन पाया ॥ ७ ॥
शाप दिलाकर विप्रन द्वारा । करवाया वध येन प्रकारा ॥ ८ ॥
जब उद्धव बदरीवन आये । तब विचार यों कृष्ण बनाये ॥ ९ ॥
द्वारावती बीच द्विज शापा । व्यापे नही नसे सब तापा ॥ १० ॥

दोहा- **इस कारण यदुवंशियन, से बोले इस तोर ।**
चालो क्षेत्र प्रभास में, पुरी द्वारिका छोर ॥ २४४ ॥

चौ- यहाँ उत्पात होत अति भारी । रोवत सन्मुख श्वान मजारी ॥ १ ॥
घड़ी एक भी सभी यहाँ पर । ठहरो नही द्वारिका भीतर ॥ २ ॥
बालक वृद्ध युवा नर नारी । चालो शंख द्वार अघहारी ॥ ३ ॥
परा वाहिनी सुरसति सरिता । क्षेत्र प्रभास अतीव पुनीता ॥ ४ ॥
कर तीरथ ऊपर शुभ स्नाना । विप्रन प्रति देवें हम दाना ॥ ५ ॥
पाछे देव पितर अघहारी । पूजे चन्दनादि धर थारी ॥ ६ ॥
यह विधि सकल अमंगल नासे । मंगल कारक समय प्रकासे ॥ ७ ॥
हरि के सुन यों वचन सुहाये । गज तुरंग रथ सभी सजाये ॥ ८ ॥
यदुवंशी सब क्षेत्र प्रभासा । आ पहुँचे सुरसति के पासा ॥ ९ ॥
यादव सभी वहाँ पर आये । उग्रसेन वसुदेव तजाये ॥ १० ॥

दोहा— **किया दान पूजन वहाँ, हरि आज्ञा शिर धार ।**
पाछे मदिरा पान कर, हत बुद्धि अनुसार ॥ २४५ ॥

चौ- गर्दभ महिष ऊष्ट्र रथ कुंजर । इन ऊपर चढ सभी परस्पर ॥ १ ॥
लड़ने लगे परस्पर सारे । लेकर खड्ग व भल्ल करारे ॥ २ ॥
यथा विपिन के बीच अपारा । नासे गजवन दन्तन द्वारा ॥ ३ ॥
राम कृष्ण जब बरजन लागे । माने तो भी नहीं अभागे ॥ ४ ॥
उल्टे बलदाऊ के आगे । लड़ने आये वे हतभागे ॥ ५ ॥
तब बलराम कृष्ण दोऊ भाई । बैठ गये जाकर अलगाई ॥ ६ ॥
कौतुक उनका देखन लागे । लरत लरत वे मरत अभागे ॥ ७ ॥
टूटे शस्त्र गदादिक सारे । कुंजर अश्वादिक गय मारे ॥ ८ ॥
साम्ब व मीनकेतु दोउ शूरा । लरे भोज संगी अक्रूरा ॥ ९ ॥
गद सुभद्र दोउ भिरे परस्त्र । सुरथ सुमित्र सुदारुण नृपवर ॥ १० ॥

दोहा- **उषापति अरु सात्यकी, भिरे दोउ रणधीर ।**
शूरसेन माथुर मधू, भानु मुख्य बलवीर ॥ २४६ ॥

अब बदरी वन करो पयाना । करो गंग का नित प्रति स्नाना ॥ ५ ॥
जाकर कंद मूल फल खाना । करो वहाँ मम चरणन ध्याना ॥ ६ ॥
होवहिं मुक्ति वहाँ तुम्हारी । उद्धव प्रति बोले बनवारी ॥ ७ ॥
ब्रह्मवाद संग्रह यह सारा । कीन्हा वरणन सह विस्तारा ॥ ८ ॥
मुक्त ज्ञान सुनकर यह काना । गत संशय हो जात प्रमाना ॥ ९ ॥
धारण करे सुधी यह ज्ञाना । ब्रह्मलोक में करे पयाना ॥ १० ॥

दोहा- **मेरे भक्तन के प्रति, यदि सुनावहिं ज्ञान ।**
उसकी सब इच्छा सदा, पूर्ण करे भगवान ॥ २४२ ॥

चौ- पढें यदि यह सुन्दर ज्ञाना । करे पाप सब त्वरित पयाना ॥ १ ॥
श्रृद्धा सहित सुनहिं जे येही । कर्म न बाँध सके जग तेही ॥ २ ॥
दाम्भिक नास्तिक शठ प्रति येहू । सखे भूलकर भी न कहेहू ॥ ३ ॥
सब दोषन ते बचे निरन्तर । साधू सन्त ब्रह्मविद खातिर ॥ ४ ॥
स्त्रीजन शूद्र बीच हो भकती । उस प्रति कथन करो मम उकती ॥ ५ ॥
यों सुन वचन कृष्ण के सुन्दर । धरी पादुका उद्धव सिर पर ॥ ६ ॥
रूद्ध कंठ बद्धाञ्जलि होई । अश्रू व्याप्त नयन भए दोई ॥ ७ ॥
लेकर विदा दुखी अति होकर । कियो गमन बद्रीवन भीतर ॥ ८ ॥
कर त्रिकाल गंगाजल स्नाना । निज हिय बीच कीन्ह प्रभु ध्याना ॥ ९ ॥
पाछे योगमार्ग अपनाये । निज तन तजि हरि धाम सिधाये ॥ १० ॥

दोहा- **अमृत रूपी ज्ञान यह, सब वेदन का सार ।**
एकादशवें स्कंध में, वरणन कियो अपार ॥ २४३ ॥क
देव दानवों ने यथा, मिलकर सिन्धु अथाह ।
मन्थन कर चौदह रतन, कीन्हे वहि "नरनाह" ॥२४३॥ख
वैसे ही श्री व्यास ने, वेद व शास्त्र निचोर ।
रचा ग्रंथ यह भागवत, सुनौ नृपति शिरमौर ॥ २४३॥ग

चौ- शुक मुख ते सुनकर ये गाथा । कर अति विनय कहे नर नाथा ॥ १ ॥
शाप छुडाने को यदुराई । थे सामर्थ सुनो मुनिराई ॥ २ ॥
फिर क्यों ना द्विज शाप छुड़ाया । की यदुवन ऊपर ना दाया ॥ ३ ॥
सुन यों नृपति वचन निज काना । बोले व्यास पुत्र भगवाना ॥ ४ ॥
वासुदेव परब्रह्म कहाये । उनको माया नहीं सताये ॥ ५ ॥
इन यदुअन की सभी प्रकारा । भई पालना केशव द्वारा ॥ ६ ॥

निज करते यहि कारण राया। उन वध उचित नही उन पाया ॥ ७ ॥
शाप दिलाकर विप्रन द्वारा। करवाया वध येन प्रकारा ॥ ८ ॥
जब उद्धव बदरीवन आये। तब विचार यों कृष्ण बनाये ॥ ९ ॥
द्वारावती बीच द्विज शापा। व्यापे नही नसे सब तापा ॥ १० ॥

दोहा- **इस कारण यदुवंशियन, से बोले इस तोर।**
चालो क्षेत्र प्रभास में, पुरी द्वारिका छोर ॥ २४४ ॥

चौ- यहाँ उत्पात होत अति भारी। रोवत सन्मुख श्वान मजारी ॥ १ ॥
घड़ी एक भी सभी यहाँ पर। ठहरो नही द्वारिका भीतर ॥ २ ॥
बालक वृद्ध युवा नर नारी। चालो शंख द्वार अघहारी ॥ ३ ॥
परा वाहिनी सुरसति सरिता। क्षेत्र प्रभास अतीव पुनीता ॥ ४ ॥
कर तीरथ ऊपर शुभ स्नाना। विप्रन प्रति देवें हम दाना ॥ ५ ॥
पाछे देव पितर अघहारी। पूजे चन्दनादि धर थारी ॥ ६ ॥
यह विधि सकल अमंगल नासे। मंगल कारक समय प्रकासे ॥ ७ ॥
हरि के सुन यों वचन सुहाये। गज तुरंग रथ सभी सजाये ॥ ८ ॥
यदुवंशी सब क्षेत्र प्रभासा। आ पहुँचे सुरसति के पासा ॥ ९ ॥
यादव सभी वहाँ पर आये। उग्रसेन वसुदेव तजाये ॥ १० ॥

दोहा— **किया दान पूजन वहाँ, हरि आज्ञा शिर धार।**
पाछे मदिरा पान कर, हत बुद्धि अनुसार ॥ २४५ ॥

चौ- गर्दभ महिप ऊष्ट्र रथ कुंजर। इन ऊपर चढ सभी परस्पर ॥ १ ॥
लड़ने लगे परस्पर सारे। लेकर खड्ग व भल्ल करारे ॥ २ ॥
यथा विपिन के बीच अपारा। नासे गजवन दन्तन द्वारा ॥ ३ ॥
राम कृष्ण जब बरजन लागे। माने तो भी नहीं अभागे ॥ ४ ॥
उल्टे बलदाऊ के आगे। लड़ने आये वे हतभागे ॥ ५ ॥
तब बलराम कृष्ण दोऊ भाई। बैठ गये जाकर अलगाई ॥ ६ ॥
कौतुक उनका देखन लागे। लरत लरत वे मरत अभागे ॥ ७ ॥
टूटे शस्त्र गदादिक सारे। कुंजर अश्वादिक गय मारे ॥ ८ ॥
साम्ब व मीनकेतु दोउ शूरा। लरे भोज संगी अक्रूरा ॥ ९ ॥
गद सुभद्र दोउ भिरे परस्र। सुरथ सुमित्र सुदारुण नृपवर ॥ १० ॥

दोहा- **उषापति अरु सात्यकी, भिरे दोउ रणधीर।**
शूरसेन माथुर मधू, भानु मुख्य बलबीर ॥ २४६ ॥

चौ- होय विमोहित हरी के द्वारा । लरे परस्पर सब परिवारा ॥ १ ॥
पिता पुत्र भाई से भाई । कियो युद्ध उन त्याग मिताई ॥ २ ॥
शस्त्र गदा तोमर धनुवाना । भये नष्ट जब खड्ग कृपाना ॥ ३ ॥
तदा एरक्र लेकर हाथा । लगे मारने सुनु नर नाथा ॥ ४ ॥
एरा विप्र शाप के द्वारा । करने लागा घाव करारा ॥ ५ ॥
यदुवंशी अब मरने लागे । कट कट महि पर गिरे अभागे ॥ ६ ॥
कुलवन्ती नारी घर माँही । छिप जावत पर पुरुष लखाई ॥ ७ ॥
त्यों यदुवंशिन का नर नाहू । छिपा क्रोधवश ज्ञान अथाहू ॥ ८ ॥
नासे बाँस विपिन अनलाई । पिता पुत्र त्यों भाई भाई ॥ ९ ॥
यादव गण वहँ युद्ध रचाये । दुर्बुद्धि वश सभी नसाये ॥ १० ॥

दोहा- **यहाँ श्याम बलराम के, बाकी बचा न कोय ।**
उग्रसेन वसुदेव वहँ, बचे द्वारका दोय ॥ २४७ ॥

चौ- महीभार हलका यह जाता । अब वैकुंठ चले दोउ भ्राता ॥ १ ॥
यों सुन वस्त्र उतारे रामा ॥ खस कोपीन शीघ्र अभिरामा ॥ २ ॥
पहुँचे तट जहँ सिन्धु अपारा । त्यागी देह योग के द्वारा ॥ ३ ॥
बल निर्वाण देख भगवन्ता । पहुँचे पीपल पास तुरन्ता ॥ ४ ॥
श्री वत्साङ्क मेघ सम श्यामा । पीताम्बर धारे अभिरामा ॥ ५ ॥
ब्रह्मसूत्र कटि सूत सुसोहा । शुभ किरीट अंगद मन मोहा ॥ ६ ॥
कौस्तुभ सहित गले वनमाला । स्वायुध युत वपु रूप कृपाला ॥ ७ ॥
दक्षिण उरु ऊपर पद वामा । धर कर बैठ गये घनश्यामा ॥ ८ ॥
जरा नाम केवट अनजाना । मूसल शेष खंड कृत बाना ॥ ९ ॥
मृग मुख सादृश पद भगवाना । मृग शंका ते मारेउ बाना ॥ १० ॥

दोहा- **निकट व्याध आया जबै, देख चतुर्भुज रूप ।**
हरि चरणन में गिर गया, होकर भीत अनूप ॥ २४८॥

चौ- कीन्हा मैं अपराध अजाना । करो क्षमा मुझको भगवाना ॥ १ ॥
नाम लेत अघ नासत सबका । कियो असाधु कर्म मैं उनका ॥ २ ॥
इस अघ से मेरा छुटकारा । हो नहिं सकता किसी प्रकारा ॥ ३ ॥
इस कारण मुझको यदुनाथा । करदो वध अपने ही हाथा ॥ ४ ॥
ये ही दंड उचित अति होई । सत अपराध करे ना कोई ॥ ५ ॥
ब्रह्मादिक जो देव कहाये । वे तव माया जान न पाये ॥ ६ ॥

महा अधर्मी अति अज्ञानी । समझूँ नहि माया अभिमानी ॥ ७ ॥
यों कहके वह किये विलापा । पर पद पंकज अति दुख व्यापा ॥ ८ ॥
हँस कर अव वोले यदुराऊ । होऊ उदास नही पछताऊ ॥ ९ ॥
जो अपराध कियो यह भारी । भयो मोर इच्छा अनुसारी ॥ १० ॥

दोहा- **हो असत्य जग में नही, जासे द्विज का शाप ।**
धीरज धर अव तू जरा, तज दे सव संताप ॥ २४९ ॥

चौ- पूर्व जन्म कृत कर्म प्रभाऊ । भोगत अव तू स्वर्ग सिधाऊ ॥ १ ॥
जव हरि ने यो वचन सुनावा । एक विमान वहाँ पर आवा ॥ २ ॥
दिव्य रूप होकर अभिरामा । चढि विमान गयो हरिधामा ॥ ३ ॥
उसी समय दारुक वहँ आवा । कर प्रणाम रथ दिव्य सजावा ॥ ४ ॥
सव देखत रथ भयो प्रकासा । अश्व सहित उड गयो अकासा ॥ ५ ॥
रथ अनु आयुध सभी सिधाये । दारुक प्रति हरि वचन सुनाये ॥ ६ ॥
दारुक अरे द्वारका जाऊ । हाल यहाँ के सव वतलाऊ ॥ ७ ॥
ज्ञातिन नाश परस्पर जाता । राम प्रयाण भयउ मम भ्राता ॥ ८ ॥
वरणन करो दशा यह मेरी । दारुक अरे करो मत देरी ॥ ९ ॥
निज निज वस्तु सहित नर नारी । अरजुन संग त्याग घरवारी ॥ १० ॥

दोहा- **जाउ हस्तिनापुर सभी, यदुपुर रहो न कोय ।**
सात दिवस में द्वारका, सिन्धु वीच लय होय ॥ २५०॥

चौ- वोले अरजुन से इस तोरा । करें सोच मन में नहि मोरा ॥ १ ॥
नारी वालक वृद्ध अपंगा । ले जावें उनको निज संगा ॥ २ ॥
हमने गीता ज्ञान सुनाया । जानों सत्य उसे तजमाया ॥ ३ ॥
मम चरणन में ध्यान लगाऊ । सुमिरन भजन सुयश मम गाऊ ॥ ४ ॥
हे दारुक सुनु वचनु हमारा । धर्म वीच मन रखो तुम्हारा ॥ ५ ॥
सुमिरन भजन भकुति कुरु मेरी । होवहिं मुकुति सुयशप्रद तेरी ॥ ६ ॥
कृष्ण वचन सुनकर इस तोरा । दारुक गयो द्वारका ओरा ॥ ७ ॥
रोवत कल्पत पीटत छाती । दुर्मन होय चला इस भाँती ॥ ८ ॥
इत ब्रह्मा शिव संग भवानी । इन्द्रादिक सनकादिक ज्ञानी ॥ ९ ॥
यक्ष व यक्ष महोरग किन्नर । द्विज गंधर्व अप्सरा सुन्दर ॥ १० ॥

दोहा- **गरुड लोक वासी सभी, पक्षिन सहित खगेश ।**
पितर सिद्ध चारण तव, आये जहँ विश्वेश ॥ २५१ ॥

महा अधर्मी अति अज्ञानी । समझूँ नहि माया अभिमानी ॥ ७ ॥
यों कहके वह किये विलापा । पर पद पंकज अति दुख व्यापा ॥ ८ ॥
हँस कर अब बोले यदुराऊ । होऊ उदास नही पछताऊ ॥ ९ ॥
जो अपराध कियो यह भारी । भयो मोर इच्छा अनुसारी ॥ १० ॥

दोहा- **हो असत्य जग में नही, जासे द्विज का शाप ।**
धीरज धर अब तू जरा, तज दे सब संताप ॥ २४९ ॥

चौ- पूर्व जन्म कृत कर्म प्रभाऊ । भोगत अब तू स्वर्ग सिधाऊ ॥ १ ॥
जब हरि ने यो वचन सुनावा । एक विमान वहाँ पर आवा ॥ २ ॥
दिव्य रूप होकर अभिरामा । चढि विमान गयो हरिधामा ॥ ३ ॥
उसी समय दारुक वहँ आवा । कर प्रणाम रथ दिव्य सजावा ॥ ४ ॥
सब देखत रथ भयो प्रकासा । अश्व सहित उड गयो अकासा ॥ ५ ॥
रथ अनु आयुध सभी सिधाये । दारुक प्रति हरि वचन सुनाये ॥ ६ ॥
दारुक अरे द्वारका जाऊ । हाल यहाँ के सब बतलाऊ ॥ ७ ॥
ज्ञातिन नाश परस्पर जाता । राम प्रयाण भयउ मम भ्राता ॥ ८ ॥
वरणन करो दशा यह मेरी । दारुक अरे करो मत देरी ॥ ९ ॥
निज निज वस्तु सहित नर नारी । अरजुन संग त्याग घरबारी ॥ १० ॥

दोहा- **जाउ हस्तिनापुर सभी, यदुपुर रहो न कोय ।**
सात दिवस में द्वारका, सिन्धु बीच लय होय ॥ २५०॥

चौ- बोले अरजुन से इस तोरा । करें सोच मन में नहि मोरा ॥ १ ॥
नारी बालक वृद्ध अपंगा । ले जावें उनको निज संगा ॥ २ ॥
हमने गीता ज्ञान सुनाया । जानों सत्य उसे तजमाया ॥ ३ ॥
मम चरणन में ध्यान लगाऊ । सुमिरन भजन सुयश मम गाऊ ॥ ४ ॥
हे दारुक सुनु वचनु हमारा । धर्म बीच मन रखो तुम्हारा ॥ ५ ॥
सुमिरन भजन भकुति कुरु मेरी । होवहिं मुकुति सुयशप्रद तेरी ॥ ६ ॥
कृष्ण वचन सुनकर इस तोरा । दारुक गयो द्वारका ओरा ॥ ७ ॥
रोवत कल्पत पीटत छाती । दुर्मन होय चला इस भाँती ॥ ८ ॥
इत ब्रह्मा शिव संग भवानी । इन्द्रादिक सनकादिक ज्ञानी ॥ ९ ॥
यक्ष व यक्ष महोरग किन्नर । द्विज गंधर्व अप्सरा सुन्दर ॥ १० ॥

दोहा- **गरुड लोक वासी सभी, पक्षिन सहित खगेश ।**
पितर सिद्ध चारण तब,आये जहँ विश्वेश ॥ २५१ ॥

चौ- प्रभु प्रयाण देखन वे सारे । आये जय जयकार उचारे ॥ १ ॥
नभ में छाये यान अनेका । बढ़कर सभी एक से एका ॥ २ ॥
यानावलि व्यापी जब अम्बर । पुष्प वृष्टि कीन्ही प्रभु ऊपर ॥ ३ ॥
इन्द्रादिक ब्रह्मादि मुनीशा । देखे हरि ने वहाँ ऋषीशा ॥ ४ ॥
हरि दरसन कर निज तन अन्दर । कीन्हे बन्द नेत्र दोउ सुन्दर ॥ ५ ॥
चमकी आभा तडित समाना । गये धाम वैकुंठ निधाना ॥ ६ ॥
ब्रह्मादिक जेते वहँ आये । उनकी स्थिति देखन नहि पाये ॥ ७ ॥
बजी दुंदुभी नभ के ऊपर । भई कुसुम वर्षा अति सुन्दर ॥ ८ ॥
धर्म व सत्य व कीरति सारी । श्री धृति महि उन संग सिधारी ॥ ९ ॥
विश्वनाथ की महिमा भारी । क्या जानेगा नर संसारी ॥ १० ॥

दोहा- **देखो जिन भगवान ने, मारे वीर अपार ।**
गुरु पुत्र को लादिया, यम के नियम विगार ॥ २५२ ॥

चौ- अस्त्र दग्ध लखि देह मुरारी । कीन्ही रक्षा अरे तुम्हारी ॥ १ ॥
कीन्हा वाण युद्ध अति भारी । जाकर जीते वहाँ पुरारी ॥ २ ॥
तथा सदेह व्याध को राया । सीधा उन निज धाम पठाया ॥ ३ ॥
ऐसे वे भगवान दयाला । शरणागत रक्षक प्रति पाला ॥ ४ ॥
उत दारुक जब यदुपुर आवा । यदुवंशिन का हाल सुनावा ॥ ५ ॥
राम श्याम वैकुंठ सिधाये । सुन वसुदेव नृपति घबराये ॥ ६ ॥
छोटे बडे सभी नर नारी । करने लगे रुदन अति भारी ॥ ७ ॥
व्याकुल होय वहाँ सब आये । क्षेत्र प्रभास परे सब पाये ॥ ८ ॥
रण भूमी में सिन्धु किनारे । हाय हाय इति सभी पुकारे ॥ ९ ॥
राम श्याम दोनों की माता । सह वसुदेव दुखित अति जाता ॥ १० ॥

दोहा- **राम व श्याम वियोग में, तजी देह तत्काल ।**
उग्रसेन भी मर गये, होकर अतिव विहाल ॥ २५३ ॥

चौ- रुकमणि आदि सभी पटरानी । सोलह सहस एक सत रानी ॥ १ ॥
राम तिया रेवति जिन नामा । चिता रचाय गई पतिधामा ॥ २ ॥
निज निज पतियन संग लुगाई । सती भई सब चिता रचाई ॥ ३ ॥
कृष्ण वियोग दुखित अति भारी । अरजुन निज हिय भयो दुखारी ॥ ४ ॥
कृष्ण वचन गीता में गाया । समझ उसे सब दुख बिसराया ॥ ५ ॥
नष्ट गोत्र हत बन्धुन जिनके । पिंडोदक करवाये उनके ॥ ६ ॥

अव हरि व्यक्त द्वारका सुन्दर । डूवी सिन्धु वचा हरि मन्दिर ॥ ७ ॥
अव तक कभी कभी वह मन्दिर । चमकत दीखत वीच समन्दर ॥ ८ ॥
वालक वृद्ध सहित सव नारी । अव अरजुन लेकर निज लारी ॥ ९ ॥
आये इन्द्रप्रस्थ के अन्दर । समाचार सुन वहाँ युधिष्ठिर ॥ १० ॥

दोहा- **इन्द्रप्रस्थ मथुरा नगर, वज्र नाभ प्रति दीन्ह ।**
नगर हस्तिनापुर विषे, नृपति परीक्षित कीन्ह ॥ २५४॥

चौ- पाछे पाँचो पांडव भाई । हिम गिरि जाकर देह गलाई ॥ १ ॥
इतनी कथा सुनाकर कीरा । वोले सुनों अरे नृपधीरा ॥ २ ॥
जिस दिन कृष्ण चन्द्र भगवाना । तज महि किय वैकुंठ पयाना ॥ ३ ॥
सत्य व धरम जगत के सारे । उठकर उनके संग सिधारे ॥ ४ ॥
जन्म व कर्म कृष्म का गावे । उस नर के सव पाप नसावे ॥ ५ ॥
ज़ो भगवान कृष्ण अवतारी । मंगल परम पराक्रम धारी ॥ ६ ॥
ज्ञान अथाह कृष्ण फरमाया । उद्धव के प्रति जो वतलाया ॥ ७ ॥
वाल चरित हरि के यह नाना । गावहिं इसे सुने जो काना ॥ ८ ॥
परम भकति हरि की वह पावे । पाप त्याग हरिधाम सिधावे ॥ ९ ॥
सुनहिं सुनावहि चित्त लगाई । पाप समीप नही उस आई ॥ १० ॥

दोहा- **एकादश इस स्कंध का, ज्ञान अथाह अपार ।**
वजरंगी वरणन कियो, निज मति के अनुसार ॥ २५५॥

इति श्री कृष्ण चरितामृते कलिमल विध्वंसने वजरंग कृत श्री मद्भागवते
महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां समाप्तोऽयं एकादश स्कंध :
हरि ॐ तत्सत्

|| श्री गणेशाय नमः ||

|| श्री राधा वल्लभो विजयते ||

|| श्री मद्भागवत प्रारम्भ ||

|| द्वादश स्कन्धः ||

श्लोक— **वन्देऽहं म्लेच्छ हर्तारं कल्की रूपं सुरेश्वरं**
वासुदेवं जगन्नाथं देवकीनन्दनं हरिम् || १ ||
नमामीशं शिवं शंभुं अपर्णेशं महेश्वरं ।
ॐकारं च महाकालं मृत्युञ्जय जगदीश्वरम् || २||

दोहा- **गणपति शारद के सहित, वन्दौं गुरु पद कंज ।**
इन सबकी पाकर कृपा, होत सभी दुख भंज || १ ||

चौ- इतनी कथा कही मुनिराई । बोले शुक से तब नर राई || १ ||
कहा प्रथम यह आप प्रसंगा । उठ कर धर्म गयो प्रभु संगा || २ ||
उन पीछे कोई नृप ऐसो । राखे धरम भयो नहि वैसो || ३ ||
आगे राज भयो मुनि किनको । वरणन करो कथा वहि मुझको || ४ ||
जब तक कृष्ण रहे महि ऊपर । वहँ तक रहा यहाँ युग द्वापर || ५ ||
उन पीछे कलियुग के राजा । सत्य धरम तज किये अकाजा || ६ ||
धरम करम शुभ सभी तजाये । अल्पायु वश कर नहि पाये || ७ ||
ज़ब निज धाम गये यदुराई । इत पाँडव सब देह गलाई || ८ ||
उन अनु राजपाट धन माया । तुम ही सार्वभौम पद पाया || ९ ||
वज्रनाभ जन्मेजय पाछे । सार्वभौम पद पावहिं आछे || १० ||

दोहा- **जरासंघ के पुत्र का, सहदेउ जिन नाम ।**
अन्तिम नृप उस वंश में, भयो पुरुञ्जय नाम || २ ||

चौ- तासु अमात्य वधहिं नृप येहू । हेत प्रद्योत नृपति पद देहू || १ ||
तासु पुत्र पालक नृप जाता । पुत्र विशाख भूप विख्याता || २ ||
राजक नाम तासु सुत गाया । नन्दीवर्धन उन अनु आया || ३ ||
ये प्रद्योतन पाँच महीसा । करें राज शत इक अड़तीसा || ४ ||
शिशूनाग नृप होअहिं पाछे । काकवर्ण तत्सुत हो आछे || ५ ||
क्षेम धरम नृप होय तदन्तर । हों क्षेत्रज्ञ तासु सुत सुन्दर || ६ ||
विधीसार सुत का सुनु नामा । रहे अजातशत्रु बलधामा || ७ ||

दोहा- दर्भक पुत्र अजात के, अजय पुत्र हो तासु ।
नन्दी वर्धन अजय के, महानन्दि सुत जासु ॥ ३ ॥

चौ- दस शिशु नाग वंशियन काला । बरस तीन सौ साठ नृपाला ॥ १ ॥
कलियुग बीचे यह सब राजा । करहीं एक समां महि काजा ॥ २ ॥
महा नन्दि सुत अति बलवाना । शूद्री गर्भज सभी बखाना ॥ ३ ॥
महापद्मपति वह नरपाला । करहिं राज महि बीच विशाला ॥ ४ ॥
होयँ बाद नृपति महि ऊपर । शूद्र प्राय अधर्मी तस्कर ॥ ५ ॥
करहीं नहि अनुलंघित शासन । चाले एक छत्र अनुशासन ॥ ६ ॥
पुत्र सुमाल्यादिक वसु तासू । रहहिं राज सत सम्वत जासू ॥ ७ ॥
इन नव नन्दन का पुनि अन्ता । करहीं एक विप्र गुणवन्ता ॥ ८ ॥
इसके बाद मही के ऊपर । करें राज मौर्य कलि अन्दर ॥ ९ ॥
वहि द्विज चन्द्रगुप्त को लाकर । करहीं राज तिलक अति सुन्दर ॥ १० ॥

दोहा— चन्द्रगुप्त के पुत्र का, वारिसार शुभ नाम ।
सुत अशोकवर्धन भयो, वारिसार के धाम ॥ ४ ॥

चौ- आगे सुयश सुवन हो ताके । संगत नाम पुत्र पुनि याके ॥ १ ॥
शालिशुक संगत सुत जाया । पुत्र सोम शर्मा पुनि राया ॥ २ ॥
शतधन्वा सुत हो पुनि याके । होवहि सुवन वृहद रथ याके ॥ ३ ॥
मौर्य वंश के दश भूपाला । भोगें ये सब भूमि विशाला ॥ ४ ॥
वरस एक शत सेतिस ऊपर । करें राज्य कलियुग के अन्दर ॥ ५ ॥
पुष्प मित्र सेनापति शुङ्गा । कर वध अन्तिम नृपति अपंगा ॥ ६ ॥
राजासन ऊपर वह आये । अगनीमित्र पुत्र वह पाये ॥ ७ ॥
होय सुज्येष्ठ भविष्यत काला । वसूमित्र भद्रक नरपाला ॥ ८ ॥
बाद प्रलिन्द होय नृप घोषा । वज्र मित्र सुत तासु अतोषा ॥ ९ ॥
वज्र मित्र भागवत जाये । देवभूति पुनि नृप श्रुत गाये ॥ १० ॥

दोहा— शुङ्ग वंश के नृपति दस, करे शताधिक राज ।
पाछे कण्णव वंश के, करे भूमि पर काज ॥ ५ ॥

चौ- देवभूति नृपके वधकारी । कण्णव मंत्रि महा बल धारी ॥ १ ॥
महामति वसुदेवहिं पाछे । करहीं राजतिलक वह आछे ॥ २ ॥
तासु पुत्र भवमित्र कहावे । जासु सुवन नारायण गावे ॥ ३ ॥
नारायण सुत रहे सुशर्मा । तासु पुत्र विश्रुत शुभ कर्मा ॥ ४ ॥

कण्णव वंसि नृपति बलवन्ता । भोगे कलियुग बीच अनन्ता ।। ५ ।।
करें राज ये नृप बलवाना । शर सागर गुण वरस समाना ।। ६ ।।
कण्णव वंशि नृपति का अन्ता । करैं भृत्य वृषलो बलवन्ता ।। ७ ।।
कृष्ण नाम उसका इक भ्राता । होवे बाद वही भूत्राता ।। ८ ।।
श्री सहशान्त कर्ण सुत जासू । पौर्णमास नृप हो सुत जासू ।। ९ ।।
लम्बोदर उनके सुत गाये । चिबिलिक जासु सुवन बतलाये ।। १० ।।

दोहा— **चिबिलिक सुत मेधातिथी, होय तासु अरमान ।**
नृप अनिष्ट कर्मा पुनि, हाली तलक समान ।। ६ ।। क
पुनि पुरीष भीरू भये, उनते नृपति सुनन्द ।
पाछे होय चकोर नृप, शिव स्वाति व अरिन्द ।। ६ ।। ख

चौ- गोमति पुत्र बाद पुरिमाना । मेदशिरा शिव स्कंद बखाना ।। १ ।।
उन अनु यज्ञ सरी हो राया । यज्ञ श्री सुत विजय कहाया ।। २ ।।
विजय ते चन्द्र विज्ञ बलधामा । होय नृपति विक्रम गुणधामा ।। ३ ।।
पुत्र लोमधी इन सुत अन्ता । ये नृप तीस वंश परयन्ता ।। ४ ।।
अब्द चार सौ छप्पन अन्ता । करे भोग सब महि परयन्ता ।। ५ ।।
आव भृत्य पुनि सप्त अभीरा । दस गर्दभि नृप होय अखीरा ।।६ ।।
अति लोलुप सब अग्रिम काला । सोलह कंक होय भूपाला ।। ७ ।।
आठ यवन मनु तुरुक अगारी । दश गुरुण्ड बाद महि धारी ।। ८ ।।
ग्यारह वंश मौन महिधारी । वरस तीन सौ राज अगारी ।। ९ ।।
मौनो के अतिरिक्त नृपाला । दश शत राज नवाधिक काला ।। १० ।।

दोहा— **बाद किल किला पुर विषे, भूत नन्दि वङ्गीर ।**
शिशु नन्दि भ्राता उन, यशऊनन्द प्रवीरा ।। ७ ।।

चौ- ये सब राजा होय अगारी । वरस एक शत षट् अधिकारी ।। १ ।।
इनके पुत्र त्रयोदश गावे । वे सारे बाह्लीक कहावे ।। २ ।।
पुष्प मित्र दुर्मित्र अगारी । एक काल में ये बलधारी ।। ३ ।।
सात आन्ध्रपति कौशल साता । निषध व विदुरभूमि ख्याता ।। ४ ।।
मागध बीचे होय नृपाला । विश्वस्फूर्जि पुरञ्जय आला ।। ५ ।।
मेटे वरण व्यवस्था चारी । यदु मद्रक व पुलिन्दन सारी ।। ६ ।।
हो अहिं प्रजा नास्तिक सारी । बाढे दुर्मति अपरम्पारी ।। ७ ।।
वीर्यवान जे क्षत्रिय गाई । नासे उन्हें पुरञ्जय राई ।। ८ ।।

पद्मावती पुरी के अन्दर । करहीं राज पुरञ्जय नृपवर ॥ ९ ॥
गंगा भूमी बीच प्रयागी । करें सुरक्षित राज सुभागी ॥ १० ॥

दोहा- **अर्बुद मालव शूरअरु, आवन्ती आभीर ।**
सौराष्ट्री द्विज गण अरे, होवहिं व्रात्य अखीर ॥ ८ ॥

चो– होवे शूद्र प्राय महि धारी । लोभी लुब्धक तस्कर ज्वारी ॥ १ ॥
सरित चिनाव सिन्धु तट ऊपर । कास्मीर कौन्तीपुर भीतर ॥ २ ॥
होवें शूद्र व्रात्य अधिकारी । म्लेच्छ अधर्मी विप्र अनारी ॥ ३ ॥
झूठ परायण होय अधर्मी । तीव्रमन्यु फल्गुद दुष्कर्मी ॥ ४ ॥
स्त्री बालक द्विज गऊ विनासी । परदारा परधन अभिलासी ॥ ५ ॥
अल्प सत्य अल्पायुष होई । उदित अस्त जिन लखे न कोई ॥ ६ ॥
संस्कृति हीन व क्रिया विहीना । रज तम आवृत नार अधीना ॥ ७ ॥
राजा रूपी म्लेच्छ अनारी । बने प्रजाजन के आहारी ॥ ८ ॥
जब राजा हो जावहिं ऐसे । जनपद भी हो जावत वैसे ॥ ९ ॥
होवें शीलाचार विहीना । लरें परस्पर पाप अधीना ॥ १०॥

दोहा- **बोले श्री शुकदेव मुनि, सुनो परीक्षित राय ।**
कलियुग में मानव सभी, दया धरम विसराय ॥ ९ ॥

चौ- जो नर हो अनृत आधीना । सो होवे सामर्थ्य विहीना ॥ १ ॥
कलि बीचे स्वल्पायुष होई । यों शुभ कर्म बने ना कोई ॥ २ ॥
नृप रैयत को अति दुख देवे । चारों भाग अन्न का लेवे ॥ ३ ॥
स्वल्प वृष्टि कहिं कहीं अपारा । यों नहिं होय अन्न विस्तारा ॥ ४ ॥
होये जग बीचे मँहगाई । अन्न बिना सब लोग लुगाई ॥ ५ ॥
तरसे और महादुख पावे । वर्णाश्रम सब धर्म नसावे ॥ ६ ॥
पूर्णायु नर भोग न पावे । तीस बरस भीतर मर जावे ॥ ७ ॥
चक्रवर्ति नृप होय न ऐसा । सप्तद्वीप भय मानत वैसा ॥ ८ ॥
स्वल्प राज के भी अधिकारी । समझहिं अपने को नृप भारी ॥ ९ ॥
यद्यपि आयुष हो अति थोरी । छीनहि भू धन तिय वरजोरी ॥ १० ॥

दोहा— **धरम न्याय को त्याग कर, जो मानव धन देय ।**
करे पक्ष उसका सभी, झूंठ वचन कह देय ॥ १० ॥

चौ- पाप पुण्य का नहीं विचारा । कर चौरी दुष्कर्म अपारा ॥ १ ॥
सबसे झूँठे वचन उचारे । निज वय योहीं मनुज गुजारे ॥ २ ॥

दमड़ी की कौडी के खातिर । होवे शत्रु मित्र से लड़कर ॥ ३ ॥
गौ बकरी दे दूध समाना । हो अति स्वल्प न मधुर प्रमाणा ॥ ४ ॥
विप्रन में कोई नहि ऐसा । दीखे चिह्न विप्र हो जैसा ॥ ५ ॥
पूछे उनसे जब निज जाती । तब मालूम परे उन ख्याती ॥ ६ ॥
कलि बीचे सेवे धनवन्ता । पूजे नहीं कोय कुलवन्ता ॥ ७ ॥
करें न उत्तम नीच विचारा । छल अति कपट चले व्यउपारा ॥ ८ ॥
नार पुरुष का मन मिल जाये । ऊँच नीच का भेद भगाये ॥ ९ ॥
आपस में कर भोग विलासा । पूरें मन की सब अभिलासा ॥ १० ॥

दोहा- **धर्म कर्म तन विप्र गन, पहिने सिर्फ जनेव ।**
उससे ही द्विज जाति का, भान सभी कर लेव ॥ ११ ॥

चौ- सिर पर जटा बढावे भारी । वन प्रस्थी प्रथमाश्रम चारी ॥ १ ॥
त्यागे सब आचार विचारा । निज निज आश्रम के वे सारा ॥ २ ॥
उत्तम वर्ण होय धनहीना । माने मध्यम नीच मलीना ॥ ३ ॥
मध्यम वर्ण होय धनवन्ता । माने उस सभी कुलवन्ता ॥ ४ ॥
मूरख झूठी बात बनावे । सच्चा ज्ञानी वह कहलावे ॥ ५ ॥
तीन वर्ण के लोग अभागे । जप तप संध्या तरपण त्यागे ॥ ६ ॥
केवल स्नान करे उपरन्ता । भोजन करे भजन नहि अन्ता ॥ ७ ॥
समझे केवल स्नान अचारा । मन में राखे खोट अपारा ॥ ८ ॥
ऐसी बात करें संसारी । होय कीरति जिससे भारी ॥ ९ ॥
निज तन की सुन्दरता कारन । राखे सिर पर बाल अकारन ॥ १० ॥

दोहा— **करें नही पर लोक का, कुछ भी सोच विचार ।**
चौर लुटेरे जगत में, देवे दुःख अपार ॥ १२ ॥

चौ- चौर लुटेरों से मिल राजा । द्रव्य चुराले करे अकाजा ॥ १ ॥
दश वर्षों की कन्या होकर । बालक जने कली के भीतर ॥ २ ॥
बड़े घरों की नार कुलीना । चाहे मन में पुरुष नवीना ॥ ३ ॥
निज कुटुम्ब को पाले जोई । उसकी बात सुने ना कोई ॥ ४ ॥
मारग होय कंलकित सारे । दिन में दीखे नभ में तारे ॥ ५ ॥
अन्न वस्त्र का कष्ट उठाये । छोटे छोटे वृक्ष दिखायें ॥ ६ ॥
औषध बीच नहीं गुण पावे । तीन वर्ण नर शूद्र कहावे ॥ ७ ॥
थोड़ी ताकत वाले राजे । सब पृथ्वी लेने को गाजे ॥ ८ ॥

गृहस्थ लोग पितु मातु तजाई । माने साले ससुर लुगाई ॥ ६ ॥
निकट तीर्थ पर रखे न आसा । दूर तीर्थ ऊपर विश्वासा ॥ १० ॥

दोहा- **तीर्थ स्थान दरसन करे, सें जो शुभ फल होय ।**
उस पर निश्चय हो नहीं, मन की श्रृद्धा खोय ॥ १३ ॥

चौ- यज्ञ होम होय कम जग में । खोटी वस्तु मिले पग पग में ॥ १ ॥
गृहस्थ जिमावे द्विज दो चारी । समझे उसको धर्म अपारी ॥ २ ॥
दया धरम सब लोग तजावे । अतिथि को भी नहीं जिमावे ॥ ३ ॥
धरम करम सब त्याग सन्यासी । मठधारी हो बने विलासी ॥ ४ ॥
गेरु पट धारे अज्ञानी । दंडी की हो यही निशानी ॥ ५ ॥
इतनी कथा सुना कर कीरा । बोले सुनो अरे नृपवीरा ॥ ६ ॥
जब कलियुग का आवहि अन्ता । यों बढ़ जाये पाप अनन्ता ॥ ७ ॥
नारायण तब बन अवतारी । रक्षा करें धरम की भारी ॥ ८ ॥
सम्भल देश गौड़ द्विज गेहा । धर अवतार कलंकी देहा ॥ ६ ॥
नीले घोडे पर असवारी । खड्ग हाथ में धरे करारी ॥ १० ॥

दोहा– **दुष्कर्मी पापी नृपहिं, और अधर्मिन मार ।**
करें सुरक्षा धरम की, वे कलकी अवतार ॥ १४ ॥

चौ- वध किय बाद रहे अवशेसा । कर उन हरि का दर्श नरेसा ॥ १ ॥
मिलहीं उनको ज्ञान अपारा । त्यागे तब वे पाप पहारा ॥ २ ॥
निज निज धरम कर्म व्यवहारी । चाले मर्यादा अनुसारी ॥ ३ ॥
बरस आठ सौ के उपरन्ता । आये सतजुग हो कलि अन्ता ॥ ४ ॥
सत जुग बीच धर्म अनुसारी । चाले सभी प्रजा नर नारी ॥ ५ ॥
चार वर्ण का वंश बराबर । चाले योंहि सदा भूऊपर ॥ ६ ॥
चन्द्र वंशि देवापी नृपवर । करें निवास बद्रिकाश्रम पर ॥ ७ ॥
चन्द्र वंश को यही चलावे । कलि पीछे सतजुग जब आवे ॥ ८ ॥
सूरज वंशी मरु इक नृपवर । करे तपस्या मंदर गिरिपर ॥ ६ ॥
सूरज वंश यही प्रकटावे । कली बाद सतजुग जब आवे ॥ १० ॥

दोहा– **सतजुग करहिं प्रवेश जब, कलि के धर्म नसात ।**
बड़े बड़े राजा सभी, पृथ्वी बीच समात ॥ १५ ॥

चौ- नेकी और बदी में दोऊ । गइ उन संग अपर ना कोऊ ॥ १ ॥
यह शरीर मरने उपरन्ता । आये काम नहीं कुछ अन्ता ॥ २ ॥

कौवे कुत्ते इसको खाये । कीड़े पड दुर्गन्ध सतावे ॥ ३ ॥
रहहीं पास खडा ना कोई । भस्म करे तो भस्मी होई ॥ ४ ॥
जानो नासवान तन येही ॥ रहता अजर अमर नहि देही ॥ ५ ॥
इस शरीर हित जो दुष्कर्मी । करे जीव हिंसा हठधर्मी ॥ ६ ॥
समझो उनको मूर्ख अनारी । दुष्ट अधर्मी अत्याचारी ॥ ७ ॥
बडे बडे राजा तप धारी । होगए नास सभी बलधारी ॥ ८ ॥
यश अपयश केवल महि ऊपर । रहा शेष केवल हे नृपवर ॥ ९ ॥
लाखों जतन करे यदि कोई । तदपि देह यह स्थिर नहि होई ॥ १० ॥

देहा— **निज तन अरु संसार की, त्याग प्रीति अभिमान ।**
हरि चरणों में ध्यान धर, करो भजन भगवान ॥ १६ ॥

चौ- सुमिरण भजन हरी का करके । उतरो पार भक्ति कर भवके ॥ १ ॥
नर तन पाने का फल ये ही । पाछे पछतावे पुनि देही ॥ २ ॥
भाग्य वान हो तुम नर राया । अन्त समय हरि ध्यान लगाया ॥ ३ ॥
जो नृप अपर राज धन हारी । हँसे मही उन पर ये भारी ॥ ४ ॥
देखो काल कलेवा होकर । करे विचार नहीं ये नृप वर ॥ ५ ॥
पिता पुत्र अरु भाई भाई । करे परस्पर महा लड़ाई ॥ ६ ॥
देखत पिता पिता मह मरना । त्यागे नही तदपि जग तृष्ना ॥ ७ ॥
जे ता करे परीश्रम राया । भू धन दारा हेतु पराया ॥ ८ ॥
वेता करें परीश्रम इन पर । काम क्रोध लोभादिक ऊपर ॥ ९ ॥
करे सुधार नही परलोका । पाछे पछतावे कर सोका ॥ १० ॥

दोहा— **जब राजा पृथु पुरुरवा, रघु तृणविन्दु ययाति ।**
धुन्धुमार खट्वाङ्ग बलि, वृत्रा सुर सरयाति ॥ १७ ॥

चौ- सहसार्जुन नृग अति गउ दानी । हिरणकशिपु रावण जग जानी ॥ १ ॥
कुवलयाश्व हिरण्याक्ष नृपाला । नहुष भरत भौमासुर आला ॥ २ ॥
मान्धाता गय गाधि नरेशा । रहे नही कोई अवशेसा ॥ ३ ॥
ऐसे शूरवीर नृप सारे । योग रूप गुण जानन हारे ॥ ४ ॥
मेरे ऊपर रह सब राजा । मर गए त्याग मुझे सब काजा ॥ ५ ॥
तदपि न साथ गई मैं उनकी । केवल रही कहानी इनकी ॥ ६ ॥
छोटे बड़े नृपति कलिवासी । धर्म पराक्रम के न प्रकासी ॥ ७ ॥
वृथा मुझे जानत वे अपनी । लड़कर मरत परत ये धरनी ॥ ८ ॥

नर तन पाने का फल ये ही। निज मन जगते विरत रखेही ॥ ९ ॥
रह गइ नृपति तुम्हे कुछ चाहा। समझो इन नृपतिन की राहा ॥ १० ॥

दोहा- **हरि चरणन में ध्यान धर, त्याग जगत व्यवहार।**
साथ न जाये कोय भी, धन भ्राता सुत दार ॥ १८ ॥

चौ- सुनकर इतनी कथा महीसा। बोले शुक से पद धरि सीसा ॥ १ ॥
कवन धरम बरते युग चारी। बरणन करो सहित विस्तारी ॥ २ ॥
ऐसो कवन उपाय मुनीसा। बाढे हरि पद प्रेम पियूसा ॥ ३ ॥
यों सुन वचन कहे मुनि राया। पूछा प्रश्न उचित तुम राया ॥ ४ ॥
सतयुग चरण धर्म के चारी। सत्य दया तप दान पुकारी ॥ ५ ॥
निज निज धरम करम अनुसारी। रखते प्रीति परस्पर भारी ॥ ६ ॥
राखत नही शत्रुता कोई। हरि पद बीच प्रीति अति होई ॥ ७ ॥
त्रैतायुग विप्रादिक चारी। बनते यज्ञादिक अधिकारी ॥ ८ ॥
करते रमण पराई नारी। टूटा एक चरण इस वारी ॥ ९ ॥
द्वापर बीचे लोग लुगाई। करते यज्ञादिक अधिकाई ॥ १० ॥

दोहा- **हरण करत पर द्रव्य अरु, हरण करत परदार।**
याते टूटे धर्म के युगल, चरण इस वार ॥ १९ ॥

चौ- कलि में तीन अंश अघ राई। पुण्य एक अंश रह जाई ॥ १ ॥
रहहीं चरण धरम का एकी। त्रय पद खंडित वदत विवेकी ॥ २ ॥
कलि केवल नर अल्प प्रदाता। स्वल्प सत्य राखे यश ख्याता ॥ ३ ॥
आये जब कलियुग का अन्ता। बोले अनृत वचन अनन्ता ॥ ४ ॥
कामी और कुरूप अभागी। संध्या वदन जप तप त्यागी ॥ ५ ॥
एक रुपये के कारण नर को। मारे डारि धरम यह कलि को ॥ ६ ॥
निज पति को तज नार कुलीना। खोजे कलि में पुरुष नवीना ॥ ७ ॥
पति समीप धन की भरमारी। माने पति की आज्ञा नारी ॥ ८ ॥
पति ऊपर आफत जब आवे। अपर पुरुष के पास सिधावे ॥ ९ ॥
उत्तम भोजन उत्तम नारी। राखे साधू चाह अपारी ॥ १० ॥

दोहा- **सन्यासी कलियुग विषे, तजकर अपना भेश।**
सुन्दर नारी संग ले, करहीं गृही प्रवेश ॥ २० ॥

चौ- आपत्ति सिर पर जब आवे। तज सेवक निज स्वामिन जावे ॥ १ ॥
निज स्वारथ की राखहि प्रीती। बोले असत वचन नहि तीती ॥ २ ॥

सेवक वृद्ध यदा हो जावे । राजा उनको तदा तजावे ॥ ३ ॥
धन सुत की रखकर नर चाहा । पूजहिं भूत प्रेत नर नाहा ॥ ४ ॥
माता पिता को दुख दे भारी । छीने धन उनको दे गारी ॥ ५ ॥
मात पिता भी कलि के अन्दर । बेचहिं निज सुत को हे नृपवर ॥ ६ ॥
शूद्र बने सन्यासी सन्ता । लेय प्रजा से दान अनन्ता ॥ ७ ॥
विप्रन हेत मंत्र उपदेशा । देवहिं शूद्र बने द्विज भेशा ॥ ८ ॥
बैठ स्वयं उच्चासन ऊपर । बाँचे कथा शूद्र खुश होकर ॥ ९ ॥
होवहिं यो जब पाप अपारा । उठहीं हरी भजन संसारा ॥ १० ॥

दोहा— **प्रति दिन चारों युगन का, फल नर तन प्रकटाय ।**
जानो सतयुग धरम जब, मन जप ज्ञान बढाय ॥ २१ ॥

चौ- लोभ व तृष्णा की अधिकाई । त्रैता धर्म तदा प्रकटाई ॥ १ ॥
हो अभिमान काम जिस काला । जानो द्वापर धर्म विशाला ॥ २ ॥
लोभ कपट छल छिद्र अपारा । हिंसा काम क्रोध विस्तारा ॥ ३ ॥
मन में क्रोध अधिक जब आवे । कलियुग धर्म यही दरसावे ॥ ४ ॥
यों कलि लक्षण सुनकर राया । हो भयभीत अतिव घबराया ॥ ५ ॥
कलि का धर्म कहा तुम ऐसा । तो उद्धार जीव का कैसा ॥ ६ ॥
कलि में यज्ञ भजन तप योगा । कर सकते कुछ भी नहि लोगा ॥ ७ ॥
एकहि बात श्रेष्ठ कलि माँही । अपर युगन में जो न दिखाही ॥ ८ ॥
अपर युगन में नर संसारी । दयावान धर्मध्वज धारी ॥ ९ ॥
तप पूजन मख तीरथ स्नाना । होवत मुक्त करत अति दाना ॥ १० ॥

दोहा— **कलि केवल हरि नाम ले, भव के पार सिधाय ।**
श्रवण करे लीला कथा, ये ही श्रेष्ठ उपाय ॥ २२ ॥

चौ- अजामील पापी हत्यारा । नारायण निज पुत्र पुकारा ॥ १ ॥
अन्त समय नारायण नामा । लेकर गयो तुरत हरिधामा ॥ २ ॥
त्यों कलि में हरि नाम उचारण । अघ तज नर हो जावत पावन ॥ ३ ॥
स्वल्प अधर्म अन्य युग होई । करता पाप वहाँ यदि कोई ॥ ४ ॥
करता प्रायश्चित वह भारी । पर कलि बीचे पाप अपारी ॥ ५ ॥
हो न सके प्रायश्चित उसका । नसते पाप यथा कलियुग का ॥ ६ ॥
केवल हरि का नाम उचारे । इह जावत सब पाप पहारे ॥ ७ ॥

सहज मुक्ति देवत हरि तेही । बन कर उसके परम सनेही ॥ ८ ॥
तो भी कलियुग के अज्ञानी । फँसे रहत निशदिन सुख खानी ॥ ६ ॥

दोहा- **कलि केवल भगवान का, पूजन भजन व ध्यान ।**
श्रवण करत लीला कथा, छूट जात अभिमान ॥ २३ ॥

चौ- भक्ति करे हरि की जो कोई । दुःख अरु पाप सभी वह खोई ॥ १ ॥
जब हिय की जड़ता हट जावे । ज्ञान रूप दीपक जल जावे ॥ २ ॥
जब माया रूपी अंधियारा । होत निवारण उसका सारा ॥ ३ ॥
माया तम से बाहर आये । वह नर परम मुक्त हो जाये ॥ ४ ॥
सतयुग तप त्रेता मखकारी । द्वापर हरि पूजन विस्तारी ॥ ५ ॥
कलि केवल हरि नाम उचारे । होये सफल मनोरथ सारे ॥ ६ ॥
तुम भी करो नृपति हरि ध्याना । करहिं कृपा वे कृपानिधाना ॥ ७ ॥
कलि में हो कैसे उद्धारा । पूछा गया तुम्हारे द्वारा ॥ ८ ॥
ज़ो भव सागर पार उतारे । माया मोह व पाप निवारे ॥ ६ ॥
लीला कथा हरी की सुन्दर । सुनहिं पढ़हिं मानव चित देकर ॥ १० ॥

दोहा- **ब्रह्मा से नारद मुनि, सुन यह महापुरान ।**
द्वैपायन से कर दिया, नारद मुनि ने गान ॥ २४ ॥ क
द्वैपायन के पास पढ, तुमसे किया बखान ।
यही कथा श्री सूत मुनि, आगे करहिं बयान ॥ २४ ॥ख
अमृत रूपी यह कथा, कलियुग में प्रकटाय ।
श्रवण करन हारे इसे, भव के पार सिधाय ॥ २४ ॥ ग

चौ- एक दिवस में विधि के राया । इन्द्र चतुर्दश राज्य बताया ॥ १ ॥
संध्या समय प्रलय ज़ब आवे । तब सब जीव नष्ट हो जावे ॥ २ ॥
दिवस प्रमाण विधी का जेता । निशा मान भी जानो वेता ॥ ३ ॥
दिन में ब्रह्मा सृष्टि रचावे । रात्रिमान में वह सो जावे ॥ ४ ॥
जब विधि की आयु हो पूरी । महा प्रलय तब होय जरूरी ॥ ५ ॥
प्रथम अवर्षण होय अपारा । पडे काल तब घोर करारा ॥ ६ ॥
अन्न बिना सब जीव विचारे । मर जाये भूखन के मारे ॥ ७ ॥
उगलें गरल शेष पाताला । रवि नभ बीचे तपे विशाला ॥ ८ ॥
तब सब लोक नष्ट हो जावे । मेघपति पुनि पय बरसावे ॥ ६ ॥
नीर सिवाय नहीं कुछ नृपवर । दीखे चारों ओर जमीं पर ॥ १० ॥

दोहा- **अम्बर में जाकर मिले, नीर अगनि अरु वात ।**
शब्द बीच अम्बर मिले ,पंच तत्व विख्यात ।। २५ ।। क
अहंकार महतत्व में, समा जाय जिस काल ।
महतत्व माया विषे, जाकर मिले नृपाल ।। २५ ।। ख

चौ- माया हरि के रूप समाये । केवल नारायण रह जावे ।। १ ।।
नारायण केवल अविनासी । आदि मध्य व अन्त प्रकासी ।। २ ।।
मन अरु शब्द तीन गुण राया । उनके पास पहुँच नहि पाया ।। ३ ।।
जागृत स्वप्न सुसुप्ति सारी । माया से प्रकटे संसारी ।। ४ ।।
ज्ञान रूप नयनन के द्वारा । देखो हरि को बारम्बारा ।। ५ ।।
तब माया रूपी संसारा । दीखे तब अनृत यह सारा ।। ६ ।।
पट बीचे ज्यों सूत समाना । व्याप्त हरि की शक्ति महाना ।। ७ ।।
रवि रूपी समझा जिन ज्ञाना । मिट जावत हिय का अज्ञाना ।। ८ ।।
काम क्रोध मद लोभ व मोहा । व्यापे नहीं करे नहि द्रोहा ।। ९ ।।
देव दनुज नर पशुअन माँही । मित्र शत्रुता बरते नाँही ।। १० ।।

दोहा- **वाती जलने से यथा, दीप तेल घटि जाय ।**
किन्तु जलना तेल का, नयनन नहीं दिखाय ।। २६ ।।

चौ- वैसे काल पुरुष निशि वासर । करता क्षीण आयु बल नृप वर ।। १ ।।
करदे बाद देह का अन्ता । बचा सकै न उपाय अनन्ता ।। २ ।।
निज मरना लखकर अज्ञानी । तदपि न चेत करे अभिमानी ।। ३ ।।
कालपुरुष से चाहे बचना । त्याग कपट छल कर हरि भजना ।। ४ ।।
सच्चे मन हरि नाम उचारे । वे नर भव के पार सिधारे ।। ५ ।।
श्री शुकदेव कहे नृप शीला । शास्त्र भागवत में सब लीला ।। ६ ।।
चरित लिखा हरि का जो सारा । वरणन किया यथा मति द्वारा ।। ७ ।।
जानो यहि पर ब्रह्म स्वरूपा । महा पुराण भागवत भूपा ।। ८ ।।
नाभि कंज से निज विधि जाये । उनही ने शंकर प्रकटाये ।। ९ ।।
तक्षक नाग डसे यदि तुमको । नहि भयभीत करो इस मन को ।। १० ।।

दोहा- **उस परमात्मा पुरुष को, देखो चारों ओर ।**
आदि मध्य अरु अन्त से, हीन रहे सब तोर ।। २७ ।। क
जन्म मरण से हीन है, सत्य रूप अविनासि ।
झूँठा सब संसार का, यह व्यवहार उदासि ।। २७ ।। ख

चौ- इसता कौन किसे इस काया। ये सब समझ परहिं तोहि राया ॥ १ ॥
जीवन मरण लोग संसारी। समझत माया वश हर बारी ॥ २ ॥
सत्य बात तो एकहि गाई। आतमा सदा अमर यह राई ॥ ३ ॥
ये सब माया के गुण द्वारा। बिगरत बनत जगत निशिवारा ॥ ४ ॥
नीर पात्र बिच भानु समाना। दीखत बिम्ब जीव के नाना ॥ ५ ॥
भग्न होत पात्र जब नीरा। मिलै भानु में बिम्ब अखीरा ॥ ६ ॥
करदे भग्न पात्र यदि कोई। तदपि भानु का नाश न होई ॥ ७ ॥
जब उत्पन्न होत यह काया। उसका नाम जन्म सब गाया ॥ ८ ॥
होवत नाश यदा यह काया। उसका नाम मरण कहलाया ॥ ९ ॥
जानो हरि को सूर्य समाना। यह तन पात्र समान बखाना ॥ १० ॥

दोहा- **मन मति तत्व व इन्द्रिया, मिलकर रचत शरीर।**
मति रूपी रथ अश्व मन, समझो इसे अखीर ॥ २८ ॥

चौ- मिलहिं प्रकाश हरी का मन में। तब सामर्थ्य आत इस तन में ॥ १ ॥
जब प्रकाश तन ते बिलगाया। गल सड जावत तब यह काया ॥ २ ॥
योनी लाख कही चौरासी। हरि शक्ति सब बीच प्रकासी ॥ ३ ॥
काल रूप होकर भगवन्ता। करत विनास सभी का अन्ता ॥ ४ ॥
माया रचित समझ इस तन को। तन ते अलग लखो तुम हरि को ॥ ५ ॥
इसहीं विप्रशाप अनुसारी। तक्षक नाग महा विष धारी ॥ ६ ॥
होवहि तब यह नष्ट शरीरा। मरहि जीव नहि किन्तु अखीरा ॥ ७ ॥
मृत्यु काल अब निकट तुम्हारा। आ पहुँचा यह कुरु कुलबीरा ॥ ८ ॥
यही हेत अब हरि पद ध्याऊ। सब विधि ममता मोह तजाऊ ॥ ९ ॥
राखो मन में यह विश्वासा। सुमिरे नाम कटे अध खासा ॥ १० ॥

दोहा- **नारायण के नाम ते, नसते पाप पहार।**
श्रवण करे जो भागवत, मुक्त होत संसार ॥ २९ ॥

चौ- जब तुम ध्यान धरो हृषिकेशा। होउ तदा उन ज्योति प्रवेशा ॥ १ ॥
तब तन तजने का नहि ज्ञाना। रहे नहीं किंचित तोहि भाना ॥ २॥
मूल मन्त्र यह तुम्हें सुनाया। सब गुण हरि के जिसमें गाया ॥ ३ ॥
तोरे हेत सुनो कुरुराया। यह सब मैंने तुम्हें सुनाया ॥ ४ ॥
इससे कौन वस्तु जो सुन्दर। जिसकी चाह करो हे नृपवर ॥ ५ ॥
अमृत रूपी कथा पुनीता। सच्चे मन से इसे अधीता ॥ ६ ॥

प्रेम समेत सुनहि नो कोई । मुकती फल पावत नर सोई ।। ७ ।।
इतनी कथा कहे उपरन्ता । बोले सूत मुनी गुण वन्ता ।। ८ ।।
सात दिवस में सुन यह गाथा । सब अज्ञान त्याग कुरु नाथा ।। ९ ।।
निज तन ते कर हरि अलगाई । तब निज तन की प्रीति तजाई ।। १० ।।

दोहा- **शुक मुनि की विधिवत करी, पूजन अब कुरु नाथ ।**
चरणों पर गिर कर विनय, करी जोर दोउ हाथ ।। ३०।।

चौ- संशय शोक छुड़ा कर मेरा । कियो मुक्त नाथ इस वेरा ।। १ ।।
साधू सन्त महा उपकारी । अज्ञानी जन प्रति हित कारी ।। २ ।।
ज्ञान रूप रसना थमवाकर । पार उतारत झटभवसागर ।। ३ ।।
महापुराण भागवन्त सुन्दर । हरिगाथा वर्णित जिस भीतर ।। ४ ।।
सुन यह कथा मुनीश्वर सुन्दर । भयो लीन मन हरिपद भीतर ।। ५ ।।
तक्षक नाग डसै यदि आकर । तदपि न भय व्यापे मन अन्दर ।। ६ ।।
सप्तम दिवस रहा यह आजू । तक्षक नाग क॰।ई निज काजू ।। ७ ।।
तजूँ देह आज यह मोरा । वार्तालाप त्याग सब ओरा ।। ८ ।।
हपि पद पंकज ध्यान लगाऊँ । यह आज्ञा मैं तुमसे चाऊँ ।। ९ ।।

दोहा- **सुनकर के यह वचन नृप, नयन वन्द कर दोय ।**
ध्यान कियो पुनि कृष्ण का, मन में अति खुश होय ।। ३१ ।।

चौ- पाछे श्री शुकदेव मुनीशा । गये स्थान निज सर्व ऋषीशा ।। १ ।।
रहा दिवस पहर इक बाकी । द्विज वपुधर तक्षक एकाकी ।। २ ।।
चलेऊ परीक्षित को अब डसने । जावत देखे कश्यप उसने ।। ३ ।।
द्विज रुपी तक्षक पथ ऊपर । बोला कश्यप से हे द्विजवर ।। ४ ।।
जावत कहाँ शीघ्र इस वेला । बोले कश्यप रख निज थैला ।। ५ ।।
आज हस्तिना पुर में भाई । तक्षक डसहिं परीक्षित ताई ।। ६ ।।
नृप के प्राण बचाकर आऊँ । वहँ ते द्रव्य बहुत सा पाऊँ ।। ७ ।।
तक्षक नाग सुनी यों बाता । बोला कश्यप से सुनु भ्राता ।। ८ ।।
तक्षक नाग डसेगा जिसको । अच्छा कर सकते तुम उसको ।। ९ ।।

दोहा- **तक्षक की तो बात क्या, कैसा भी अहि होय ।**
मैं उसको अच्छा करूँ, सत्य वचन कहुँ तोय ।। ३२ ।।

चौ- बोला तक्षक द्विज से भाई । मै ही हूँ तक्षक अहिराई ।। १ ।।
सन्मुख दीखत वृक्ष विशाला । इसको काटों मैं इस काला ।।२ ।।

जो यदि ठीक करो तुम येहू । तो नृप को भी बचा सकेहू ॥ ३ ॥
तरुवर को डसते ही ज्योंही । भस्मीभूत भया तरु त्योहीं ॥ ४ ॥
तरु पर लकड़ी काटन वाला । वह भी भस्म भयो उस काला ॥ ५ ॥
अब कश्यप द्विज मन्त्र उचारा । मंत्रित जल भस्मी पर डारा ॥ ६ ॥
भयो पूर्व वत दो घटि अन्दर । डाल पान फल युत तरु सुन्दर ॥ ७ ॥
लकड़ी का भी काटन हारा । जीवित भयो मंत्र जलद्वारा ॥ ८ ॥
हाल देख तक्षक यह सारा । कश्यप प्रति यों वचन उचारा ॥ ९ ॥
कवन वस्तु की रखकर चाहा । जात समीप परीक्षित पाहा ॥ १० ॥

दोहा- **धर्म रुप राजा यह, करे जगत प्रतिपाल ।**
बोले तक्षक नाग से, यों कश्यप उस काल ॥ ३३ ॥

चौ- ऐसे नृप को जीवन दाना । देकर प्राप्त करू धन माना ॥ १ ॥
तक्षक कहे सुनो द्विज राया । वया क्या जानों अन्य उपाया ॥ २ ॥
जानत मैं सुनु हे विषधारी । तीन काल की बातें सारी ॥ ३ ॥
यों सुन तक्षक वचन उचारा । प्रथम करो द्विज एक विचारा ॥ ४ ॥
नृपति परीक्षित की वय जेती । सोच समझ कर कहु वह केती ॥ ५ ॥
अब निज विद्या बल अनुसारी । कर विचार द्विज वचन उचारी ॥ ६ ॥
पूर्ण भई नृप की वय सारी । रहि वय स्वल्प शेष इस बारी ॥ ७ ॥
यों सुन तक्षक वचन सुनाये । तोर मंत्र अब काम न आवे ॥ ८ ॥
आगे यदि नृप की वय होवत । तोर मंत्र तब नृपहि जिवावत ॥ ९ ॥
धन की यदि हो इच्छा तोरी । मुझसे ले जाऊ घर ओरी ॥ १० ॥

दोहा- **एक वृक्ष नीचे तभी, तक्षक ने वहँ खूब ।**
बतलाया उस विप्र को, जाकर धन गज डूब ॥ ३४ ॥

चौ- उठा विप्र से अब धन जेता । लेकर चला गेह निज वेता ॥ १ ॥
पहुँचा तक्षक अब नृप मन्दिर । देख फूल वहँ इक अति सुन्दर ॥ २ ॥
जाकर बैठि गयो कलि भीतर । तक्षक नाग रूप कृमि धर कर ॥ ३ ॥
इत विप्रन वह पुष्प उठावा । नृपति परिक्षित हस्त गहावा ॥ ४ ॥
कृमि स्वरूप तक्षक अहि ज्योहीं । निकल पुष्प से बाहर त्योंही ॥ ५ ॥
डसा परीक्षित नृप को ज्योहीं । भस्मीभूत भयो वह त्योहीं ॥ ६ ॥
जीवात्मा नृपवर की सुन्दर । बैठि विमान गई हरि मन्दिर ॥ ७ ॥
अब वह तक्षक नाग कराला । पहुँचा इन्द्र लोक तत्काला ॥ ८ ॥

हाल देख यह पुर नर नारी । करने लगे रुदन अति भारी ॥ ६ ॥
सुन यह समाचार चहुँ ओरा । छाया शोक वहाँ अति घोरा ॥ १० ॥

दोहा- **पिता परीक्षित का किया, दाह शास्त्र अनुसार ।**
क्रिया कर्म इस गात्र का, द्विज आज्ञा सिर धार ॥ ३५ ॥ क
परिजन पुरजन मंत्रिजन, की सम्मति अनुसार ।
जनमेजय को दे दिया, राज कार्य का भार ॥ ३५ ॥ ख

चौ- नृप पद जन्मेजय जब पावा । काष्ठ कर्तकी वह तँह आवा ॥ १ ॥
भस्मी भूत भयो जो तरु पर । जीवित हो पहुँचा नृप मन्दिर ॥ २ ॥
उसने सारा हाल सुनाया । तक्षक ने कश्यप से गाया ॥ ३ ॥
समाचार सुनकर ये सारा । जन्मेजय कर क्रोध अपारा ॥ ४ ॥
विप्र ऋषि सब वहाँ बुलाये । उन प्रति समाचार सब गाये ॥ ५ ॥
ऐसो यज्ञ करावहु मोहीं । तक्षक भस्म होय वह सोही ॥ ६ ॥
सर्प सत्र उन यज्ञ रचावा । मन्त्र प्रभाव तुरत दिखलावा ॥ ७ ॥
कीन्हा मन्त्र उचारण ज्योहीं । भस्मीभूत भये अहि त्योहीं ॥ ८ ॥
सर्प अनेक वहाँ पर आये । अगनि कुंड गिर प्राण गँवाये ॥ ६ ॥
किन्तु न तक्षक वहाँ दिखावा । नृप विप्रन प्रति वचन सुनावा ॥ १० ॥

दोहा— **सुनो विप्रगण सर्प सब, भस्म होत मख माँहि ।**
अब तक तक्षक नाग क्यों, यह पर नही दिखाहिं ॥३६॥

चौ- बोले विप्र सुनो अवनीपा । तक्षक पहुँचा इन्द्र समीपा ॥ १ ॥
इस कारण वह यहाँ न आवा । तब नृप यों निज वचन सुनावा ॥ २ ॥
मोरे अरि के जेते रक्षक । आये सुरपति के सह तक्षक ॥ ३ ॥
करो मन्त्र उचारण ऐसो । होहिं शत्रु भस्म मम जैसो ॥ ४ ॥
ऋषि बोले तब सुना नृपाला । मंत्र बीच सामर्थ्य विशाला ॥ ५ ॥
सुनकर वचन तुम्हारा राजन । करहि वहि हम मंत्र उचारन ॥ ६ ॥
यों कह विप्रन मंत्र उचारा । घृत शाकल्य अग्नि में डारा ॥ ७ ॥
सुरपति का सिंहासन सुन्दर । तक्षक सहित उडा नभ ऊपर ॥ ८ ॥
हाल देख यह तक्षक घाती । मुनि आस्तीक वासुकी नाती ॥ ६ ॥
देवगुरु के गये समीपा । बोले उनसे वचन अहीपा ॥ १० ॥

दोहा- **इन्द्र व तक्षक नाग की, जाकर करो सहाय ।**
वरना अग्नी कुंड में, भस्म दोउ हो जाय ॥ ३७ ॥

चौ- यों सुनकर गुरुदेव कृपाला । रे आस्तीक संग मखशाला ॥ १ ॥
आङ्गीरस गौत्रिन से जाकर । जो उनके कुल में थे द्विजवर ॥ २ ॥
बोले सुनो वचन ये मोरा । करो उपाय यहाँ इस तोरा ॥ ३ ॥
जासे बचे इन्द्र अरु तक्षक । तुम बिन अन्य नहीं इन रक्षक ॥ ४ ॥
तेहि समै द्विज मन्त्र प्रभावा । इन्द्रासन तक्षक वहँ आवा ॥ ५ ॥
तब गुरु अरु आस्तीक मुनीशा । बोले नृप से सुनो महीशा ॥ ६ ॥
विप्र शाप ते पिता तुम्हारा । पायो मरण लिखा विधि द्वारा ॥ ७ ॥
तक्षक का नहिं दोष जरासा । राखो ये मन में विश्वासा ॥ ८ ॥
तक्षक सब सर्पन का राजा । कर सकता नहि कोइ अकाजा ॥ ९ ॥
अमृत पान कियो अहि येहू । यहि कारण यह मर न सकेहूँ ॥ १० ॥

दोहा- **तुम मन में यह समझते, तक्षक अहि के काज ।**
भई मृत्यु मम तात की, सो न सत्य महाराज ॥ ३८ ॥क
हानि लाभ जीवन मरण, सुख दुख विधि के हाथ ।
चले दोष किसका नहीं, इसमें हे नरनाथ ॥ ३८ ॥ ख

चौ- कोइ मरत अग्नि के द्वारा । कोई डूबत नीर अपारा ॥ १ ॥
कैतिक मरत गरल को खाकर । कोई उच्च शिखर से गिरकर ॥ २ ॥
कोई सर्प सिंह के द्वारा । कोई पाकर रोग अपारा ॥ ३ ॥
लिखा भाग्य में विधि ने जैसा । पावत मरण जीव यह वैसा ॥ ४ ॥
होत मौत का एक बहाना । विधि विधान काहु नहि नाना ॥ ५ ॥
होय भाग्य वश पिता तुम्हारा । पायो मरण नाग के द्वारा ॥ ६ ॥
तुमने एक सर्प के कारण । कीन्हो कर्म बहुत यह दारुण ॥ ७ ॥
कोटि सर्प जो बिना पराधा । जला मार डारे बिन बाधा ॥ ८ ॥
ज्ञानि अरु धर्मात्मा नृप को । उचित कर्म नही यह सब तुमको ॥ ९ ॥
करो क्षमा अब क्रोध तुम्हारा । कर दो यज्ञ बन्द विधि द्वारा ॥ १० ॥

दोहा— **नृपति परीक्षित का मरण, समझ भाग्य अनुसार ।**
इन सर्पन के ऊपरे उचित न क्रोध तुम्हार ॥ ३९ ॥

चौ- यो नहि मरण पात जग कोई । पावत मरण भाग्य वश होई ॥ १ ॥
जिनकी माया ते अभिमाना । होत प्रकट निज अरि प्रतिनाना ॥ २ ॥
उन प्रभु का करके अब वन्दन । त्यागो क्रोध परीक्षित नन्दन ॥ ३ ॥
जीवन मरण जगत का सारा । होत सर्वदा हरि के द्वारा ॥ ४ ॥

नहि सामर्थ्य अपर की कोई । सोच सके इसमें जो सोई ॥ ५ ॥
अहि आस्तीक अंगिरसि द्वारा । यो सुन वच नृप परम उदारा ॥ ६ ॥
बोले विप्रन ते अब राजा । कर दो बन्द सभी मख काजा ॥ ७ ॥
अब नृप से तक्षक खुश होकर । बोला वचन सुनो हे नृपवर ॥ ८ ॥
जो नर मेरा और तुम्हारा । सुमिरन करहिं जीह के द्वारा ॥ ९ ॥
कोई सर्प न काटहिं तेहूँ । यह वरदान तुम्हें मैं देहूँ ॥ १० ॥
द्विज अरु ऋषि नृप ने बुलवाये । देकर भेंट विदा करवाये ॥ ११ ॥

दोहा- **इन्द्र व तक्षक नाग को, नृप से विदा कराय ।**
चले गये निज धाम को, सुर गुरु संग लिवाय ॥ ४० ॥

चौ- सूत मुनी यह कथा सुनाई । करके ध्यान बाद यदुराई ॥ १ ॥
शौनकादि प्रति वचन उचारा । अमृत रूप भागवत सारा ॥ २ ॥
श्रवण कियो मोरे मुख द्वारा । इसके श्रवण करेते सारा ॥ ३ ॥
नासे नर निज पाप अपारा । जावत बाद हरि के द्वारा ॥ ४ ॥
इन्द्रादिक जे देव कहाये । उन प्रति हरि ने वचन बताये ॥ ५ ॥
दान व पुण्य जाप तप जैसा । करे जगत में मानव वैसा ॥ ६ ॥
उसके प्रति तुम शुभ फल देऊ । पाप करे शुभ फल नहि तेऊ ॥ ७ ॥
स्वर्ग लोक जावत शुभ कर्ता । जावत अशुभ लोक शुभ हर्ता ॥ ८ ॥
हरि का भजन करत नर जोई । ब्रह्म लोक में जावत सोई ॥ ९ ॥
नारायण की निर्गुण पूजा । करते भजन काम नहि दूजा ॥ १० ॥

दोहा- **जावत वे वैकुंठ में, महा प्रलय परयन्त ।**
भोगत सुख सारा वहाँ, जिसका होय न अन्त ॥ ४१॥क
कथा भागवत श्रवण कर, होय लीन भगवान ।
हरीधाम कीन्हा गमन, कुरुवर नृपति सुजान ॥ ४१॥ख

चौ- मख तप भजन करत संसारी । सगुण व निर्गुण दोय प्रकारी ॥ १ ॥
कहा भागवत में यह सारा । वरणा मैने मति अनुसारा ॥ २ ॥
सर्व पुराण अठारह अन्दर । कथा भागवत की अति सुन्दर ॥ ३ ॥
शौनक सहित ऋषीगण सारे । सूत मुनी से वचन उचारे ॥ ४ ॥
सर्व पुराण अठारह गाये । किन्तु न नाम नहीं बतलाये ॥ ५ ॥
सूत मुनी बोले मुसुकाई । नाम पुराण सुनौ सुखदाई ॥ ६ ॥
ब्रह्म पद्म शिव विष्णु पुराना । नारद गरुड़ व लिंग बखाना ॥ ७ ॥

अग्नि व स्कन्द नृसिंह पुराणा । मत्स्य कूर्म वाराह बखाना ॥ ८
विधि वैवर्त भविष्य पुराना । सुत मृकंड ब्रह्माण्ड बखाना ॥ ९
महापुराण भागवत सुन्दर । भक्ति व ज्ञान भरा जिस अन्दर ॥ १०

दोहा- **काहू में गुण तामसी, कहीं राजसी ज्ञान ।**
काहू में गुण सात्विकी, लिखा व्यास भगवान ॥ ४२ ॥

चौ- कथा भागवत में अति सुन्दर । लिखा सात्विकी धर्म धुरन्धर ॥ १ ॥
हे मुनीश्वरों कथा ये सारी । वरणन करी सभी अघ हारी ॥ २ ॥
आगे और कौन सी लीला । श्रवण करन चाहो मति शीला ॥ ३ ॥
शौनकादिक अब सभी ऋषीश्वर । बोले सुत मुनी से हँसकर ॥ ४ ॥
गुण अरु चरित हरी का सुन्दर । भये कृतारथ हम सब सुनकर ॥ ५ ॥
चिरंजीव रहु सूत मुनीसा । बोले सभी नवा निज शीशा ॥ ६ ॥
श्रवण करन की एक हमारी । होरहि इच्छा हिय बिच भारी ॥ ७ ॥
मुनि मृकंड सुत ने हरिमाया । देखी कवन भाँति मुनिराया ॥ ८ ॥
सब श्रुतियन का कवन प्रकारा । वरणन किया व्यास के द्वारा ॥ ९ ॥
पौराणिक श्री सूत मुनीशा । बोले बच तुम सुनो ऋषीशा ॥ १० ॥

दोहा- **ब्रह्मा ने देखा यदा, नर स्वल्पायुष होय ।**
पढ न सकेंगे वेद को, इस कलियुग में कोय ॥ ४३ ॥

चौ- हरी की विनय कीन्ह विधि भारी । प्रकटे वेद व्यास अवतारी ॥ १ ॥
सब श्रुतियन की लेकर छाया । भिन्न भिन्न पउरान रचाया ॥ २ ॥
सब शिष्यन को पास बुलाया । उनके प्रति सब पाठ पढाया ॥ ३ ॥
सूत मुनी की यों सुनबानी । बोले सभी ऋषीश्वर ज्ञानी ॥ ४ ॥
ऋषि मृकण्ड सुवन मुनिराई । कवन भाँति ऐसी वय पाई ॥ ५ ॥
ऋषीश्वरों की सुनकर बानी । बोले तदा सूत मुनि ज्ञानी ॥ ६ ॥
नाम मृकण्ड मुनीश्वर एकी । परम तपस्वी महा विवेकी ॥ ७ ॥
कीन्हा जप तप होम अपारा । तदपि न भयो पुत्र उन द्वारा ॥ ८ ॥
उनकी देख तपस्या भारी । आये देववृन्द उन द्वारे ॥ ९ ॥
बोले देववृन्द सुनु भ्राता । लिखा तोर नहि पुत्र विधाता ॥ १० ॥

दोहा- **पर तुम कीन्हा कर्म शुभ, यहि कारण तव गेह ।**
एक पुत्र होवे अरे, त्याग किन्तु वह नेह ॥ ४४ ॥

चौ- द्वादश वरस अवस्था आवे । तव बालक मृत्यु वह पावे ॥ १ ॥
यों सुन मुनिवर वह होय उदासी । मैं तो संतति का अभिलासी ॥ २ ॥
बारह वरस होय उपरन्ता । यदि हो जाय पुत्र का अन्ता ॥ ३ ॥
तो भी होय तुष्टि सब मोरी । यो कह विनय करी कर जोरी ॥ ४ ॥
अब देवों की आशिस पाकर । पायो पुत्र मृकंड मुनीवर ॥ ५ ॥
सुत का नाम करण करवाया । मारकंडे इति नाम रखाया ॥ ६ ॥
बालक की वय देख इग्यारा । तात मात किय रुदन अपारा ॥ ७ ॥
मात पिता रोते लख बालक । क्यों यह रुदन करो दुखदायक ॥ ८ ॥
माता पिता अब वचन सुनाया । सुत तव काल निकट अब आया ॥ ९ ॥

दोहा- **मात पिता के वचन सुन, बोला सुत तत्काल ।**
ऐसा साधन कौन सा, जो नासे मम काल ॥ ४५ ॥

चौ- मात पिता बोले हे बालक । साधन एक महा सुख दायक ॥ १ ॥
नारायण का नाम पुकारे । होत मनोरथ पूरण सारे ॥ २ ॥
मात पिता की सुन यों वानी । गयो विपिन बीचे सुत ज्ञानी ॥ ३ ॥
जप तप कर हरि ध्यान अपारा । षट् मनवन्तर समय गुजारा ॥ ४ ॥
देख तपस्या मुनि की सारी । भयो भीत सुरपति अति भारी ॥ ५ ॥
छीनहिं कहिं सिंहासन मोरा । यों विचार काम वहँ टेरा ॥ ६ ॥
ले गंधर्व अप्सरा संगा । आया माधव सहित अनंगा ॥ ७ ॥
पहुँचा जहाँ हिमालय ऊपर । बैठे मुनि भद्रा के तट पर ॥ ८ ॥
घने घने वृक्षों की छाया । रंग बिरंगे फूल फुलाया ॥ ९ ॥
जहँ पर पक्षी कोकिल मोरा । मधुर ध्वनी होरहि चहुँ ओरा ॥ १० ॥

दोहा- **यह सब शोभा देखकर, भयो विमोहित काम ।**
हाव भाव बतलाय के, लगी नाचने वाम ॥ ४६ ॥

चौ- गंधर्वों ने वाद्य बजाये । राग रागिनी छत्तीस गाये ॥ १ ॥
मन्थय कोकिल रूप बनाया । काम रूप उन बाण चलाया ॥ २ ॥
ऋतु वसन्त की महिमा द्वारा । सुन्दर बाग भयो तैयारा ॥ ३ ॥
शीतल मन्द सुगन्ध अपारा । चालन लागी वहाँ बयारा ॥ ४ ॥
नाचन लगि वहाँ सुर गनिका । उड़कर पवन गिरा पट तनका ॥ ५ ॥
नंगे वदन वहाँ चलि आई । गेन्द उछालत जहँ मुनिराई ॥ ६ ॥
कीन्हे साधन मुनि प्रति अतुलित । तो भी मुनि मन भयो न विचलित ॥७॥

कामदेव की सेना सारी । हार खाय जहँ गई असुरारी ॥ ८ ॥
यह सब हाल इन्द्र से बोले । कवन भाँति नहि मुनि मन डोले ॥ ९ ॥
सुना हाल इन्द्रादिक सारा । मन में विस्मित भये अपारा ॥ १० ॥

दोहा- **मार्कंडय के दरस हित, देव वृन्द वहँ आय ।**
कर विनती मुनि को बहुत, वापिस गेह सिधाय ॥ ४७॥

चौ- इसी भाँति कुछ दिन उपरन्ता । तप करते लख जगत नियन्ता ॥ १ ॥
नारायण खगपति पर चढकर । पहुँचे वहाँ जहाँ पर मुनिवर ॥ २ ॥
निज स्वरूप का दरसन देकर । बोले वचन सुनो हे मुनिवर ॥ ३ ॥
जैसी इच्छा होय तुम्हारी । वहि वरदान करो स्वीकारी ॥ ४ ॥
जगदीश्वर को देख मुनीसा । बोले वचन नवा निज सीसा ॥ ५ ॥
चाहूँ यहि आशीस तुम्हारी । लम्बी वय हो जाय हमारी ॥ ६ ॥
एक कल्प वय होय तुम्हारी । यों कह गये वैकुंठ विहारी ॥ ७ ॥
बोले सूत ज्ञान गुणवाना । पाय अब समा कल्प प्रमाना ॥ ८ ॥
तदपि प्रथम वत जप तप ध्याना । करत रहे वे मुनी सुजाना ॥ ९ ॥
अब कुछ दिवस गये उपरन्ता । दे दरसन वे जगत नियन्ता ॥ १० ॥

दोहा- **बोले मुनिवर क्या रही, अब इच्छा अवशेष ।**
दोउ कर जोरे कहत मुनी, रही न इच्छा शेष ॥ ४८ ॥

चौ- रही एक इच्छा प्रभु मोरी । देखन चहुँ माया मैं तोरी ॥ १ ॥
जिस माया के द्वारा भगवन । करो सभी जीवों का सरजन ॥ २ ॥
करो बाद तुम उनका नासा । वहि माया देखन का आसा ॥ ३ ॥
बोले दीन बन्धु दुखहारी । देखो माया मुने हमारी ॥ ४ ॥
सप्तम दिवस आज से आवे । तब माया हम तुम्हें दिखावें ॥ ५ ॥
तुम चैतन्य रहो मुनि राऊ । पर मोहिं भूल कदापि न जाऊ ॥ ६ ॥
बिसर जाउगे यदि तुम मोहीं । तो फिर पता लगे ना तोहीं ॥ ७ ॥
कीन्ही विनय मुनी कर जोई । बिसरूँ प्रभो कदापिन तोई ॥ ८ ॥
नारायण यों सुनकर बाता । गये धाम निज वे जगधाता ॥ ९ ॥
उत वैकुंठ गये उपरन्ता । निज आश्रम आये इत संता ॥ १० ॥

दोहा- **दिवस सातवें जब मुनी, बैठे नदी किनार ।**
उसी समय अन्धी उठी, भयो घोर अंधियार ॥ ४९ ॥

चौ- देख हाल यह वे तपधारी । आज तलक ऐसी अंधियारी ॥ १ ॥
देखी नहिं देखन में आये । उसी समय बादल चहुँ छाये ॥ २ ॥
नभते वर्षा भई अति घोरा । उमड़ पड़ा पानी चहुँ ओरा ॥ ३ ॥
जहाँ पर बैठे मुनिवर ज्ञानी । भयो अथाह वहाँ पर पानी ॥ ४ ॥
कबहूँ गोता खावत नीरा । डूबे जात कबहुँ मुनिधीरा ॥ ५ ॥
कबहूँ नीर वेग ते ऊपर । कबहूँ चले जात वे तल पर ॥ ६ ॥
कबहूँ मकर झषादिक जलचर । निगले जात पेट के अन्दर ॥ ७ ॥
कबहूँ उगल देत मुख द्वारा । विगत देख यों वर्ष हजारा ॥ ८ ॥
तब मुनि निज मन लज्जित होकर । मोसे चूक गई हे ईश्वर ॥ ९ ॥
जो मैं मांगेउ वरदाना । हाल नही ऐसा मैं जाना ॥ १० ॥

दोहा- **हे नारायण अब करूँ, विनय दोउ कर जोर ।**
मुझे निकालो नीर से, जीवित बाहर ओर ॥ ५० ॥

चौ- जब यो मुनि ने ध्यान लगाया । जल बिच टापू एक लखाया ॥ १ ॥
देख उसे वे राजी होकर । बोले मन में हे परमेश्वर ॥ २ ॥
किसी तौर टापू तक स्वामी । पहुँच सकूँ मैं अन्तरयामी ॥ ३ ॥
पकडूँ जाय वहाँ वट डाली । प्राण बचाय बनूं खुशहाली ॥ ४ ॥
अब परमेश्वर की पा दाया । वट समीप पहुँचे मुनिराया ॥ ५ ॥
पत्र रचित देखा वहँ दोना । शयन किये शिशु एक सलोना ॥ ६ ॥
श्यामल अंग मनोहर सुन्दर । कमल नयन छवि अतिव मनोहर ॥ ७ ॥
कर गहि निज पद कंज अंगूठा । डार रखा मुखकंज अनूठा ॥ ८ ॥
अब वे मुनी निकट चलि आये । बाल रूप छवि लखि हर्षाये ॥ ९ ॥
श्वास लियो जब शिशु भगवन्ता । उदर बीच गये मुनी तुरन्ता ॥ १० ॥

दोहा- **रवि विधु तारे नभ गही, सप्त द्वीप नवखंड ।**
लोकपाल सारी दिशा, सर वर तरु वन खंड ॥ ५१ ॥ क
ग्राम नगर सागर गिरी, कनक रजत की खान ।
जिन आश्रम जग वस्तुएं, ऋषि मुनियन के स्थान ॥ ५१॥ ख

चौ- उस स्वरूप में लखकर सारा । कियो आचरज मुनी अवारा ॥ १ ॥
जब शिशु बाहर श्वास निकाला । आये तब वे वहि तत्काला ॥ २ ॥
अब उस शिशु को देख मुनीश्वर । करों प्यार सहि गोद उठाकर ॥ ३ ॥
कर विचार वह यों मन मन्दिर । पहुँचे बाल समीप मुनीन्दर ॥ ४ ॥

शिशु को ज्योहिं उठावन आये । वट शिशु नीर तिरोहित पाये ॥ ५ ॥
कोटि वर्ष यावत मुनिराया । देखत रहे प्रभू की माया ॥ ६ ॥
जब चैतन्य भये मुनि राया । दो घटि से ज्यादा नहि पाया ॥ ७ ॥
सरिता तीरे प्रथम समाना । अब अपने को स्थित उन जाना ॥ ८ ॥
माया रूपी प्रलय अपारा । कौतुक देख मुनीश्वर द्वारा ॥ ९ ॥
करके ध्यान संत हित कारी । कर विनति मुनि गिरा उचारी ॥ १० ॥

दोहा- **माया दरसन का प्रभो, माँगा मैं वरदान ।**
कियो महा अपराध यह, भुवन पति भगवान ॥ ५२ ॥

चौ- ब्रह्मादिक सुर बीच न कोई । जान सके माया तव जोई ॥ १ ॥
महा ऋषीश्वर मुनि विज्ञानी । माया बीच फँसे सुर ज्ञानी ॥ २ ॥
मेरी क्या सामर्थ्य है वैसी । जान सकूँ माया तव जैसी ॥ ३ ॥
मसक उठा नहि सके पहारा । हे भगवन मैं उसी प्रकारा ॥ ४ ॥
यह वरदान माँग कर भारी । मैं अति लज्जित भयो मुरारी ॥ ५ ॥
मैं शरणागत नाथ तुम्हारी । करो क्षमा अपराध बिसारी ॥ ६ ॥
यों कह वचन मृकंड कुमारा । भे हरि ध्यान में लीन अपारा ॥ ७ ॥
दरसत हेतु विष्णु की माया । करत परिश्रम ऋषि मुनिराया ॥ ८ ॥
तदपि भेद उन नही गहाये । माया मर्म पकड़ना पाये ॥ ९ ॥
भेद हेत जिन गोत लगाये । अब तक निकल नही वे पाये ॥ १० ॥

दोहा— **मुनि मृकंड सुत का कहूँ, एक हाल में और ।**
शौनकादि हे मुनि गणो, सुनौ इसे कर गौर ॥ ५३ ॥

चौ- एक समै शिव संग भवानी । चले वृषभ चढकर दोउ प्रानी ॥ १ ॥
पुत्र मृकंड करे तप भारी । आये वहँ गिरिजा त्रिपुरारी ॥ २ ॥
मुनि की देख तपस्या भारी । पारवती यों गिरा उचारी ॥ ३ ॥
हे शिवशंकर हे त्रिपुरारी । करता ये तापस तप भारी ॥ ४ ॥
नाथ इसे तप का फल देहू । बोले तब शिव गिरिजे पेहू ॥ ५ ॥
किसी वस्तु की चाह न कोई । देवी सत्य कहूँ मैं तोंई ॥ ६ ॥
भक्ति व ध्यान सिवा नहि कोई । अपर वस्तु की चाहत होई ॥ ७ ॥
विष्णु भक्ति हरि ध्यान विराई । समझत मुझको भी कुछ नाई ॥ ८ ॥
गिरिजे हम दोऊ संग मिलके । चलें समीप वहाँ मुनिवर के ॥ ९ ॥
साधु संगति सदा सुखारी । सत्संगत सारे अघहारी ॥ १० ॥

दोहा— पहुँचे मुनि के पास अब, गिरिजा सहित गिरीश ।
वह परमेश्वर ध्यान में, देखे लीन मुनीश ॥ ५४ ॥

चौ- इनके आवन का कुछ हाला । नहि मालूम परा मुनिपाला ॥ १ ॥
तब शिव हिय में किये प्रवेशा । दिखलाया निज रूप विशेसा ॥ २ ॥
निज हिय बीचे ज्योति स्वरूपा । करत ध्यान जो मुनी अनूपा ॥ ३ ॥
भई तिरोहित ज्योति अनूपा । प्रकट भये वहँ शंभू स्वरूपा ॥ ४ ॥
जब मुनि ने निज हिय के अन्दर । लखा रुप नहि वह अति सुन्दर ॥ ५ ॥
श्वेत वरण इक पुरुष विशेषा । नयन तीन दश भुजयुत भेषा ॥ ६ ॥
बाघम्बर गल मुंडन माला । गल अहि डमरू शूल विशाला ॥ ७ ॥
ध्यान बीच लख तेहि मुनीशा । खोले नयन सामने ईशा ॥ ८ ॥
गिरिजा सहित देख गण साथा । किये प्रणाम उन्हें मुनिनाथा ॥ ९ ॥
सादर आसन पर पधराये । विनय कीन्ह दोउ हाथ गहावे ॥ १० ॥

दोहा— हे महेश मृड शंभु शिव, शंकर दीनदयाल ।
सृष्टा तुमही जगत के, नसत करत प्रतिपाल ॥ ५५ ॥

चौ- हे प्रभु यह जग रूप तुम्हारा । तुमसे परे एक नहि न्यारा ॥ १ ॥
तुम ही सर्वगुणों की खानी । कवि कोविद श्रुति शास्त्र बखानी ॥ २ ॥
मेरी नहि सामर्थ्य पुरारी । जो विनती कर सकूँ तुम्हारी ॥ ३ ॥
दरसन देकर मुझे कृपालू । कियो कृतारथ दीनदयालू ॥ ४ ॥
यहँ अपने आने का कारण । मोसे कहो जगत उद्धारण ॥ ५ ॥
बोले भोले नाथ पुरारी । सुनो मुनीश्वर बात हमारी ॥ ६ ॥
मुनिवर महाप्रलय जब आये । सारे लोक नष्ट हो जायें ॥ ७ ॥
देखा महा प्रलय वहि तुमने । आवा मैं तव दरसन करने ॥ ८ ॥
ब्राह्मण विष्णु भक्त सब साधु । ये अतिप्रिय मोहिं नहीं असाधू ॥ ९ ॥
इन्द्रादिक देवन के माँही । इतनी प्रीति रखूँ मै नाँही ॥ १० ॥

दोहा- मुझको मेरा भक्त प्रिय, वैसे ही हरि भक्त ।
सदा पियारे है मुझे, हे मुनिराज विरक्त ॥ ५६ ॥

चौ- नारायण शंकर में कोई । ज्ञानी भेद लखे नहिं दोई ॥ १ ॥
तुम सम हरि भक्तन से जैसा । होत अपावन पावन वैसा ॥ २ ॥
तीरथ सुर दरसन के द्वारा । होत पुनीत नही संसारा ॥ ३ ॥
जो कुछ रुचि हो मुनी तुम्हारी । करूँ कामना पूरण सारी ॥ ४ ॥

यों सुन वचन मुनी तप धामा । शिव गिरिजा को किये प्रणामा ॥ ५ ॥
मुनिवर दोउ कर जोरी । सुनो विनय शिव शंकर मोरी॥ ६ ॥
तुम परमेश्वर अन्तरयामी । मैं हूँ अति अज्ञानी कामी ॥ ७ ॥
मुझे बडाई इतनी देकर । करो न लज्जित हे परमेश्वर ॥ ८ ॥
जावत कल्पवृक्ष के द्वारे । होवत पूर्ण मनोरथ सारे ॥ ६ ॥
वैसे कर शिव दर्श तुम्हारा । पायो प्रभो पदारथ सारा ॥ १० ॥

दोहा— **मागूँ मैं तो एक ही, तुम से यह वरदान ।**
हरि हर पद पंकज विषै, रहे सदा मम ध्यान ॥ ५७ ॥

चौ- इनमें भकुति रहे शिव मोरी । माँगो यहि वर दोउ कर जोरी ॥ १ ॥
यों सुन बोले शंभु दयाला । कल्प एक तक हे मुनि पाला ॥ २ ॥
चिरंजीव रहु वृद्ध न होऊ । हरि हर भक्ति बनी रह तोऊ ॥ ३ ॥
व्यास रचित पउरान अठारा । प्रकटहिं उनमें एक तुम्हारा ॥ ४ ॥
यों वरदान देय शिवशंकर । गिरिजा सहित गये निज गिरि पर ॥ ५ ॥
मुनि मृकंड सुत का सब हाला । उत्पत्ति तप कियो विशाला ॥ ६ ॥
शिव से प्राप्त कियो वरदाना । गिरिजा से शिव कियो बखाना ॥ ७ ॥
ये सब श्रवण करा कर गाथा । बोले सूत सुनौ मुनि नाथा ॥ ८ ॥
मार्कण्डेय मुनी का सारा । वरणा चरित सहित विस्तारा ॥ ६ ॥
शैनकादि सब मुनिवर ज्ञानी । सूत प्रति बोले यो बानी ॥ १० ॥

दोहा- **हरि के पूजन की विधि, वरणों सूत सुजान ।**
शंख चक्र अम्बुज गदा, इनका करो बखान ॥ ५८ ॥

चौ- पीताम्बर वैजन्ती माला । धारण करे हरी सब काला ॥ १ ॥
ये सब वस्तु कवन मुनिराई । बोले सूत सुनों ऋषि राई ॥ २ ॥
गुप्त बात पूछी यह भारी । वरणों इसे सहित विस्तारी ॥ ३ ॥
प्रथम गुरू को करू प्रणामा । वरणों पाछे कथा ललामा ॥ ४ ॥
दीखत जो ब्रह्मांड अनूपा । जानो यहि भगवान स्वरूपा ॥ ५ ॥
भू पद पंकज सीस अकासा । सूरज नयन वात उन नासा ॥ ६ ॥
दसों दिशा जानो उन काना । लोकपाल भुज विधु मन माना ॥ ७ ॥
तरु तन की रोमावलि जानो । मेघ घटा सिर केश बखानो ॥ ८ ॥
तन की अस्थिय जानु पहारू । भानुज जानो दशन करारू ॥ ६ ॥
सारी सरिता नसे बखानी । सागर उदर कहे सब ज्ञानी ॥ १० ॥

दोहा- **समझो रूप विराट में, सब जग का व्यवहार ।**
जो मानव इस रुप का, ध्यान करे हरवार ।। ५९ ।।

चौ- सब प्राणिन में प्रभु की छाया । लखे बराबर तज जग माया ।। १ ।।
जीतहिं काम क्रोध मद लोभा । अरि प्रति त्याग करे सब क्षोभा ।। २ ।।
माला वैजयन्ति उन माया । पीताम्बर सब वेद बताया ।। ३ ।।
सांख्यग्रन्थ श्रुति कुंडल गाये । योग ग्रन्थ उन मुकुट बताये ।। ४ ।।
मानो प्रणव मंत्र उपवीता । हरि सिंहासन शेष पुनीता ।। ५ ।।
माया सदा सतोगुण पंकज । नीर तत्व समझो उन नीरज ।। ६ ।।
अग्नि सुदरसन खड्ग अकासू । काल रूप हरि धनुष प्रकासू ।। ७ ।।
सब जीवन का कर्म मुनीशा । तरकस बीच भरे जगदीशा ।। ८ ।।
हरि का छत्र कहा गउलोका । खगपति वेद स्वरूप बिलोका ।।९ ।।
लक्ष्मी शक्ति पारषद सारे । हरि कीरति का गान उचारे ।। १० ।।

दोहा- **नारायण निज भक्त पर, राजी हो जिस काल ।**
शंख चक्र अम्बुज गदा, गले धार वनमाल ।। ६० ।।

चौ- जाकर निज भक्तन के द्वारे । दर्शन देते बिना पुकारे ।। १ ।।
नारायण की ये सब महिमा । जान सके कोई नहि गरिमा ।। २ ।।
गुरु की कृपा महा हम पाई । यह सब गाथा तुम्हें सुनाई ।। ३ ।।
प्रात काल उठ कर नर जोई । नाम लेत नारायण कोई ।। ४ ।।
शंख चन्द्र गद कंज समेता । करता नारायण से हेता ।। ५ ।।
मुदित तुरन्त होय उस ऊपर । देत उसे सब विधि फल सुन्दर ।। ६ ।।
सुनकर इतनी कथा मुनीश्वर । बोले सूत प्रति सब हँस कर ।। ७ ।।
द्वादश मास भानु तप धामा । भिन्न भिन्न धर कर निज नामा ।। ८ ।।
करत प्रकाश जगत के अन्दर । इसका क्या कारण हे मुनिवर ।। ९ ।।
ऋषियन से कहे सूत विवेकी । सूर्य स्वरूप सर्वदा एकी ।। १० ।।

दोहा- **क्षण घटि पल अरु प्रहर की, रवि से हो पहचान ।।**
सब का जीवन एक ही, यही सूर्य भगवान ।। ६१ ।।

चौ- चैत्र महीने करे प्रकासा । धाता नामक भानु अकासा ।। १ ।।
करती नृत्य कृतस्थलि आगे । तुम्बरु गावत सुन्दर रागे ।। २ ।।
हेति ढकेलति उनका स्यन्दन । वासुकि नाग रहे रथ बन्धन ।। ३ ।।
कृत नामक जो यक्ष कहावे । मरमत हेत संग उन जावे ।। ४ ।।

मुनि पुलस्त्य महा गुणवन्ता । चालत आगे स्तोत्र रटन्ता ॥ ५ ॥
नाम अर्यमा माधव मासा । पुलह ऋषी सह करें प्रकासा ॥ ६ ॥
पुंजस्थली अप्सरा सुन्दर । उरजा यच्छ प्रहेत निशाचर ॥ ७ ॥
कूंख नीर नाग सह सर्वा । करत गान नारद गंधर्वा ॥ ८ ॥
निज निज काम करत उन संगा । चले जात ये करत प्रसंगा ॥ ९ ॥
ज्येष्ठ मास में तपे जु भानू । उस नाम मित्र तुम जानू ॥ १० ॥

दोहा- **पौरुषेय राक्षस अहि, तक्षक यक्ष रथस्व ।**
अत्रि ऋषीश्वर मेनका, हाहा पति गंधर्व ॥ ६२ ॥

चौ- उनके संग सदा वे रहते । निज निज काम सभी ये करते ॥ १ ॥
षाढ़ मास में भानु तपायें । नाम वरुण उनका सब गायें ॥ २ ॥
ऋषि वशिष्ठ अप्सरा रंभा । हुहु गंधर्व यक्ष सह जंभा ॥ ३ ॥
चित्रसेन राक्षस सह सारे । अहि सर्वज्ञ रहें उन लारे ॥ ४ ॥
श्रावण मास तपे रवि जोई । इन्द्र नाम जानो सब कोई ॥ ५ ॥
परम लोचना परी मनोहर । श्रोता यक्ष ववर्य निशाचर ॥ ६ ॥
विश्वावसु नामक गंधर्वा । रहते संग रवि के सर्वा ॥ ७ ॥
भादों बीच तपे रवि जोई । विवश्वान नाम उन होई ॥ ८ ॥
उग्रसेन नामक गंधर्वा । व्याघ्र नाम राक्षस यह सर्वा ॥ ९ ॥
शंख पाल नामक मणिधारी । निम्लोचा नामक सुर नारी ॥ १० ॥

दोहा- **नाम असारण यच्छपति, भृगु ऋषि वर ले संग ।**
जावत रवि के साथ में, करते सभी प्रसंग ॥ ६३ ॥

चौ- आश्विन मास तपे रवि जोई । त्वष्टा नाम कहे सब कोई ॥ १ ॥
कामल नाग ऋषी जमदग्नी । तिलोतमा सुरतिय मन हरनी ॥ २ ॥
धृतराष्ट्र नाम गायक गुणवन्ता । राक्षस वृहद्धती बलवन्ता ॥ ३ ॥
यक्ष सत्यजित मिल कर सारे । त्वष्टा रवि के जावत लारे ॥ ४ ॥
कार्तिक मास तपे रवि जोई । विष्णु नाम जानो सब कोई ॥ ५ ॥
रंभा नामक जो सुरनारी । विश्वामित्र महा तप धारी ॥ ६ ॥
सूवर्चा नामक गंधर्वा । यक्ष सत्यजित मिलकर सर्वा ॥ ७ ॥
नाग अश्वतर दैत्य धृतापी । रहते रवि संग सभी प्रतापी ॥ ८ ॥
अंशुमान अगहन में गाये । कश्यप नाम ऋषी उन पाये ॥ ९ ॥
नाम उरवसी सुन्दर नारी । विन्दाछत्र नाम असुरारी ॥ १० ॥

दोहा- **महा शंख नामक अहि, ऋतूसेन गंधर्व ।**
अंशुमान के साथ में, जावत मिल कर सर्व ।। ६४ ।।

चौ- पौष बीच भग नाम कहावें । राक्षस नाम सुवर्चस गावे ।। १ ।।
नाम अरिष्टनेमि शुभ गायक । परण यक्ष कर्कोटक नायक ।। २ ।।
पूख चित्ति अप्सरा आके । करत नृत्य रवि सन्मुख जाके ।। ३ ।।
माघ मास बीचे रवि तयही । पुरुष नाम उनका सब कहही ।। ४ ।।
नाग धनञ्जय अति विख्याता । सुख गंधर्व निशाचर जाता ।। ५ ।।
सुरुचि यज्ञ, धृताची सुन्दर । रहते गौतम संग दिवाकर ।। ६ ।।
फागुन बीच सुनो मुनिराया । रवि पर्जन्य नाम इति पाया ।। ७ ।।
ऋषि क्रतु नाम महा तपकारी । असुर सुवर्चा अति बलधारी ।। ८ ।।
विश्व नाम गायक गुणवन्ता । यक्ष इरावत अति बलवन्ता ।। ९ ।।
सेन जिता नामक सुर नारी । करती रवि के नृत्य अगारी ।। १० ।।

दोहा- **प्रात व संध्या काल में, रवि का यह आख्यान ।**
पढहिं सुनहिं यहि प्रेम ते, पावे मोक्ष महान ।। ६५ ।।

चौ- महापुराण भागवत सारा । तुमने सुना हमारे द्वारा ।। १ ।।
अमृत रूपी कथा मनोहर । वरणन करी सभी अति सुन्दर ।। २ ।।
आदि से अन्त तलक सब लीला । वरणन करी महामुनि शीला ।। ३ ।।
प्रथम व्यास नारद की सारी । वरणी गाथा मति अनुसारी ।। ४ ।।
पाछे नृपति परीक्षित गाथा । दीनो शाप यथा मुनि नाथा ।। ५ ।।
नारद अरु ब्रह्मा की सारी । वरणीं कथा सहित विस्तारी ।। ६ ।।
अवतारों की कथा सुनाई । उद्धव विदुर सुभेंट बताई ।। ७ ।।
रिषि मैत्रेय विदुर का सारा । वरणन किया सहित विस्तारा ।। ८ ।।
उत्पति ब्रह्माण्ड बताई । कौल जन्म की कथा सुनाई ।। ९ ।।
जय अरु विजय कथा सब गाई । दीन्हों शाप यथा मुनिराई ।। १० ।।

दोहा- **दियो कपिल अवतार धर, देवहूति प्रति ज्ञान ।**
सती देह के त्याग की, कीन्हीं कथा बखान ।। ६६ ।।

चौ- ध्रुव प्रथु नृपति पुरंजन गाथा । वरणी प्रियव्रत की मुनि नाथा ।। १ ।।
द्वीप सप्त सागर नव खंडा । वृत्रासुर वध कियो उदंडा ।। २ ।।
नरहरि का लेकर अवतारा । यथा भक्त प्रहलाद उबारा ।। ३ ।।
कथा गजेन्द्र मोक्ष की गाई । सागर मंथन गाथ सुनाई ।। ४ ।।

चौदह रत्न निकाले बाहर । सागर में कच्छप वपुधर कर ॥ ५ ॥
बलि वामन की कथा सुनाई । उरवसि पुरुखा नर राई ॥ ६ ॥
सूरज विधुवंशी नरपाला । कियो काम जिन महा निराला ॥ ७ ॥
परसराम राम अवतारा । वरणन किया चरित इन सारा ॥ ८ ॥
नृप दुष्यन्त शकुन्तला रानी । नृपति ययाति महा गुण खानी ॥ ९ ॥
यदु नामक उन सुत गुणवन्ता । जिन कुल प्रकट भये भगवन्ता ॥ १० ॥

दोहा- **वसूदेव के गेह में, धरकर के अवतार ।**
आये सह बलराम के, कृष्ण चन्द्र इस बार ॥ ६७ ॥

चौ- गोकुल बीच गये हरि जैसे । लीला करी अनेकनि वैसे ॥ १ ॥
नन्द यशोदादिक वृजवासी । दीन्हा सुख उनको सुखरासी ॥ २ ॥
पाछे मथुरापुरी सिधाये । कंसराज को मार गिराये ॥ ३ ॥
जरासंध संग युद्ध रचावा । कालयवन मथुरा चढि आवा ॥ ४ ॥
नृपति मुकुन्द कथा सब गाई । जाय द्वारका पुरी बसाई ॥ ५ ॥
रुक्मिणि आदि सबै पटरानी । सभी व्याह की कथा बखानी ॥ ६ ॥
भौमासुर बाणासुर गाथा । गाई प्रथम सभी मुनिनाथा ॥ ७ ॥
दैत्य अधर्मी नृप संहारे । विप्र सुदामा के दुख टारे ॥ ८ ॥
कौरव पांडव युद्ध कराया । पृथ्वी का सब भार हटाया ॥ ९ ॥
छप्पन कोटी यादव सारे । विप्र शाप द्वारा संहारे ॥ १० ॥

दोहा- **गये यथा वैकुंठ में, राम कृष्ण भगवान ।**
सभी कथा श्री भागवत, तुम प्रति करी बखान ॥ ६८॥

चौ- मार्कंडेय ऋषी का सारा । वरणन किया हमारे द्वारा ॥ १ ॥
सूर्यदेव की कथा सुहाई । मुनियों मैनें तुम्हें सुनाई ॥ २ ॥
आठों पहर जीह के द्वारे । मानव हरि का नाम उचारे ॥ ३ ॥
कानों से उनकी सब लीला । करे पान मानव मति शीला ॥ ४ ॥
उन हरि की गुण महिमा गावे । हरि चरणों में ध्यान लगावे ॥ ५ ॥
मनसा वचन कर्म के द्वारा । करें सदा सबका उपकारा ॥ ६ ॥
सब जीवों पर राखे दाया । नर तन का फल यही बताया ॥ ७ ॥
परमेश्वर की निर्मल गाथा । लिखी भागवत में मुनिनाथा ॥ ८ ॥
अपर पुराणों में नहि ऐसा । लिखा भागवत में यश जैसा ॥ ९ ॥
पाय दया शुकदेव गुसाई । मैने अमृत कथा सुनाई ॥ १० ॥

दोहा- **व्यास पुत्र शुकदेव को, वन्दों वारम्वार ।**
उन मुख ते निर्गत कथा, सुनकर हों भवपार ॥ ६६ ॥

चौ- पढहिं भागवत को द्विज कोई । मिलता वेद पाठ फल सोई ॥ १ ॥
पढहिं सुनहि क्षत्रिय यदि कोई । विजय लाभ फल पावत तोई ॥ २ ॥
वणिक पात फल निज व्यउपारा । मरे बाद जावहिं हरि द्वारा ॥ ३ ॥
शूद्र श्रवण कर पाप नसावे । मरे बाद मुकती फल पावे ॥ ४ ॥
ब्रह्मा शिव सुरपति सुर सर्वा । मरुत कुबेर वरुण गंधर्वा ॥ ५ ॥
रिषि मुनि योगी निज हिय अन्दर । निशिदिन खोजत जिन्हें बराबर ॥ ६ ॥
जिनका आदि अन्त नहि पावे । किस विध हम उनका यश गावें ॥ ७ ॥
ऐसे प्रभु का पावन नामा । हिय में धरकर करो प्रणामा ॥ ८ ॥
देवन दुःख मिटावन कारन । धर कर कच्छप रूप अपावन ॥ ९ ॥
सागर से जिन रतन निकारे । बन्दौ उन पद बारम्बारे ॥ १० ॥

दोहा- **अष्टादश पउरान में, जितने जितने श्लोक ।**
वरणन मैं उनका करूँ, दे हरि चरणन ढोक ॥ ७० ॥

चौ- सहस अभ्र महि ब्रह्म पुराना । पचपन सहस पदम परिमाना ॥ १ ॥
विष्णु पुराण बीच लखु तीसा । शिव पउरान बीच चौईसा ॥ २ ॥
ब्रह्म व वामन एक समाना । मीन पुराण सहस मनु माना ॥ ३ ॥
कूर्म सात दस लिंग इग्यारा । रहे भागवत सहस अठारा ॥ ४ ॥
चौदह सहस पंच शत ऊपर । लिखे पुराण भविष्यत भीतर ॥ ५ ॥
स्कन्द एक शत सहस इकासी । गाये व्यास देव सुखरासी ॥ ६ ॥
खगपति बीचे सहस उनीसा । नारद बीचे सहस पचीसा ॥ ७ ॥
पंद्रह सहस चार सौ ऊपर । गाय पुरान कृशानू भीतर ॥ ८ ॥
मारकंडेय बीच मुनिराई । नव हजार संख्या बतलाई ॥ ९ ॥
वाराहू ब्रह्मांड पुराना । चोइस बारह सहस प्रमाना ॥ १० ॥

दोहा- **सहस ब्रह्म वैवर्त की, संख्या दो कम बीस ।**
पुराण अठारह की सही, संख्या कही मुनीशा ॥ ~~६६~~ ७१ ॥

चौ- चार लाख अरु सात हजारा । गणना कही व्यास मुखद्वारा ॥ १ ॥
सार भागवत का ले सारा । चार श्लोक नारायण द्वारा ॥ २ ॥
भव जल निधि के पार उतारन । कीन्हा विधि के प्रति ये वरणन ॥ ३ ॥
विधि ने नारद का बतलाया । नारद व्यास हेत यह गाया ॥ ४ ॥

वेद व्यास ने श्लोक अठारा । रचकर किया इसे विस्तारा ॥ ५ ॥
कीन्ह्य [illegible]करण मुनिराया । वही पुराण भागवत गाया ॥ ६ ॥
[illegible]के सभी चरित्रा । वरणन कीन्हा परम पवित्रा ॥ ७ ॥
[illegible] शुक्ल पूर्णिमा आवे । कंचन सिंहासन बनवाये ॥ ८ ॥
महापुराण भागवत सुन्दर । पधरावे सिंहासन ऊपर ॥ ९ ॥
वेद पुराण शास्त्र का ज्ञाता । विष्णु भक्ति लीन अति जाता ॥ १० ॥

दोहा- **पूजन कर उस विप्र की, करे ग्रंथ यह दान ।**
परमधाम देवत उसे, नारायण भगवान ॥ ७२ ॥

चौ- सभी पुराणों में ये ऊपर । महापुराण भागवत सुन्दर ॥ १ ॥
चारो श्रुतियों का सब सारा । लिखा हुआ सुन्दर विस्तारा ॥ २ ॥
सब सरितन में अति गुण खानी । गंगा भागीरथी बखानी ॥ ३ ॥
देवन में नारायण ऊपर । तपस्वियों में यथा महेश्वर ॥ ४ ॥
वैसे सर्व पुराणन अन्दर । महापुराण भागवत सुन्दर ॥ ५ ॥
इस पुराण के पाठक सारे । कर्ण पुटों से सुनने वारे ॥ ६ ॥
उन दोनों की गति हो सुन्दर । देवहिं परमधाम जगदीश्वर ॥ ७ ॥
लेवत ही जिनका शुभ नामा । करत दण्डवत जिन्हे प्रणामा ॥ ८ ॥
होवत नष्ट पाप दुख सारे । जावत कभी नही यम द्वारे ॥ ९ ॥
वेद व्यास परमेश्वर रूपा । वन्दों मैं शुकदेव अनूपा ॥ १० ॥

दोहा- **अमरपुरी में अमरगण, करते अमृत पान ।**
उसी तरह तुम भी सदा, पीवों महा पुरान ॥ ७३ ॥ क
रोगादिक दुख दूर हो, भूत न प्रेत सताय ।
अशुभ ग्रहों का फल उसे, शुभ फल में मिल जाय ॥ ७३॥ ख

इति श्री कृष्ण चरितामृते कलिमल विध्वंसने बजरंग कृत श्री मद्भागवते महापुराणे पारम[illegible]संहितायां समाप्तोऽयं द्वादश स्कंधः